

हिन्दी

विश्वकोष

श्री ब्रह्मचर्यीय शास्त्र मन्दिर, बरपुर

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीमन्मन्मथनाथ वसु प्राच्यविद्यामहाराज

विद्यालयाधीन, लखनऊ, एन. एन. एन. एन.

तथा हिन्दीके विद्यापीठ द्वारा सहजित ।

चतुर्थ भाग

[अक्षर—कुम्भ]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL IV

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

MAHENDRANATH VASU Prāchyavidyāmahārāja.

Siddhānta-vārdhī, Śabda-ratnākara M. F. A. S.,

Member of the Bengal Encyclopedia, the late Editor of Bangla Sahitya Parishad
and Khyashtā Patrikā; author of Cases & Sects of Bengal, Mayura-

khanda, Archeological Survey Reports and Modern Buddhism;

Honorary Archeological Secretary Indian Research Society;

Member of the Philological Committee, Asiatic

Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by H. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Maṅglandranath Vasu and Visvanath Vasu

3 Visvakosha Lane Baghbanar Calcutta.

1922.

हिन्दी

विश्वकोष

(चतुर्थ भाग)

कपिल (स० त्रि०) कम्-कृत्वाच् पाठेभ्यः । अने: २२।
 १५१६। १ पिङ्गकपयं, मूरा, लामड़ा मठमेला ।
 (पु०) २ पम्कि, धाम । ३ कर्कशिविप, मठमेला रंग ।
 ४ कुङ्कुर, कुत्ता । ५ गितारस कोबान् । ६ महा
 शिव । ७ विष्णु । ८ सर्पविशेष, एक सर्प । ९ दानव
 विधिय, एक राक्षस । १० बहूपल्लव, एक पीड़ ।
 ११ पिपल पोतम् । १२ भूविक्रमेह किशो किष्काका
 ब्रह्मा । इसके काठनेसे मयखोब, खर और मग्न्युद्भव
 होता है । (उत्तर) १३ कुम्भोपका पर्यंतविधिय एक
 पहाड़ । (अमर ३१२५) १४ सूर्य, चाफताब ।
 १५ बिलपके सुत । १६ बसुदेवके सुत । मराठोके
 समंसे यह कृत्पत्र हुये है । १७ मुनिविधिय । इनके
 पिताका नाम कर्दम और माताका नाम दिव्यति
 रदा । इन्होंने चाण्डमयल बनाया है ।

साध्याचार्य कपिल एक प्रति माचौल कपि है ।
 द्विदके उपनिषद्वाच्यमें इनका नाम मिश्रता है० । यह
 मिश्रपियोमें सर्वश्रेष्ठ रहे । इसीसे भगवान्ने नीतामें
 कहा है—

“कर्मोर्ना विवरतः विवर्ता कर्मिणी मुनिः ।” (गीता १।१६)

इस गम्भीरिं विवरत और विवर्ति कपिल
 मुनि हैं ।

भागवतमें लिखित—कपिल भगवान्का पक्षम
 पत्रतार रहे । इन्होंने महायोगो कर्दमके औरस और
 देवज्ञतिके गर्भसे जन्म लिया था । उनके जन्मकाल
 पाश्चात्यमें ब्रह्मगोल भिषके मानाविश्र वाय बने गम्भीर
 नाचने लये, चाण्डरोंने भानन्दगीत पारम्भ किये,
 पदियों द्वारा प्रथ्य बरसाये गये और दिक्, जल पर्य
 सर्वमापीके मन प्रसन्न हुये । कर्दम ब्रह्मा कर्दमके
 पाचम पाये है । इन्होंने कर्दमको और देखकर
 कहा—हे मुने । तुम्हारे यह बालक साक्षात् ईश्वर
 हैं । यह विद्वेके परशुमर हो जायेंगे और माध्या
 चार्य कर्दम पूजित हो जगत्में ‘कपिल’ नाम पावेंगे ।
 इन्होंने ज्ञानसाधन सांख्यशास्त्र उपदेश करनेको ही
 यह पत्रतार लिया है ।

कपिलने अपने पिता कर्दम और माता दिव्य-
 ज्ञतिको ज्ञान उपदेश किया था । देवज्ञतिने स्त्री
 शक्ति भी पुत्रसे तत्त्वकथा सुन ज्ञान और मोक्ष पाया ।

भागवतमें दिव्यज्ञतिके उपदेशकृत्से कपिलकृत्यं
 चाण्डमत वर्तित है—

“जो सबल इन्द्रिय प्रकाशक रहेसे और जिनके
 द्वारा मन्त्र्यार्थोदि विषय प्रसुम्भ करते मन्त्रमूर्ति
 भगवान्के प्रति उनको आभासिक छत्तिको हो
 निम्नामा भागवती भक्ति कहते हैं । यहपक्ष प्रत्यक्ष
 किये यह सुविधि श्रेष्ठ है । किन्तु इन्द्रियमें यह

* “कपि इत्यं कर्मिणं कर्तव्यं कर्मिण्यसि ।” (शांख्य ३।१)
 मल कर्मिण कर्मिणो किन्हीं सर्वव्यय प्रालम्भा दीरघ विद्या।

हृत्ति स्वतः नहीं आती, वेदविहित क्रममें प्रवृत्ति जगनेसे उत्पन्न हो जाती है। ऐसी भक्ति होनेपर क्रमसे सुक्ति भी मिलती है। जो ईश्वरको आत्मवत् प्रिय, पुत्रवत् स्नेहपात्र, सखा-जैसा विश्वासभाजन, गुरुकी भांति उपदेष्टा, वस्तुकी तरह हितकारी और इष्टदेव सदृश पुण्य समभक्ता अर्थात् जो सर्वतोभावसे भगवान्‌का भजन करता, उसका काल कुछ बना नहीं सकता।

“प्रतिलोम बुद्धिविशिष्ट आत्मा ही पुरुष है। वह पुरुष अनादि, निर्गुण और प्रकृतिसे भिन्न है। पुरुष केवल साचीस्वरूप होता है। वह स्वयं प्रकाश पाता और यह विश्व उसके साथ मिलजुल प्रकाशित हो जाता है। वही पुरुष अपने निकट विष्णुकी शक्तिरूपा अव्यक्तगुणमयी प्रकृतिकी खोलावशतः पहुँचने पर अवज्ञाक्रमसे ग्रहण कर लेता है। प्रकृति अपने गुणसे समानरूप विचित्र प्रजासृष्टि करती है। निजमें अविशेष सबच विशेषका जो आश्रय प्रधान आता, वही प्रकृति कहता है। फिर प्रधान त्रिगुण रहता, अतएव अव्यक्त अर्थात् अकार्य ठहरता है। सुतरां वह न तो महत्तत्त्व और न जीवनस्वरूप मित्य अर्थात् जीवकी ही प्रकृति है। प्रधानके कार्यस्वरूप चतुर्विंशति पदार्थ हैं। यथा—भूमि, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश पञ्च महाभूत, गन्धतन्मात्र, रसतन्मात्र, रूपतन्मात्र, स्पर्श-तन्मात्र तथा शब्दतन्मात्र पञ्चतन्मात्र, चक्षु, कर्ण, जिह्वा, घ्राण, त्वक्, वाक्, पाणि, पाद, पायु एवं उपस्थ दश इन्द्रिय, मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्त चार अन्तरिन्द्रिय। अन्तःकरणके अन्तरिन्द्रिय ठहरते भी हृत्तिमेदसे उक्त चार प्रकारका प्रसेद पड़ जाता है। यह चतुर्विंशति तत्त्व सगुण ब्रह्मके सन्नि-वेशका स्थान हैं। एतद्विन्न काल पञ्चविंश तत्त्व है।

“निष्काम धर्म, निर्मल मनः, भक्तियोग, तत्त्व-दर्शिज्ञान, प्रबल वैराग्य, तपोयुक्त योग एवं दृढतर आत्मसमाधि द्वारा पुरुषकी प्रकृति क्रमशः काष्ठकी भांति जल शेषको तिरोहित हो सकती है। पुरुषकी प्रकृति इसप्रकार एकतार जन जानेसे

फिर उभरने नहीं पाती। उस समय पुरुष समभक्ता—इसका भोग भुक्त हो गया। पुरुषकी जन्मजन्मान्तरमें अध्यात्मरत ही जब ब्रह्मभोकप्राप्तिके विषयमें भी वैराग्य आता और भगवान्‌के प्रति ऐकान्तिक भक्तिमान् बननेसे आत्मतत्त्व देखाता, तब वह कैवल्यधाममें देहातिरिक्त सदाशयस्वरूप परमानन्द पाता है। फिर लिङ्गशरीर नाश हो जानेसे आनन्दलाभ कर पुनर्বার उसको निवृत्तना नहीं पड़ता। आत्मज्ञानके वशसे सकल मिथ्या ज्ञान विनष्ट हो जाता है।”

कपिल मुनिने अपने साख्यसूत्रमें भी देखाया है—
वस्तुमात्र सत् है अर्थात् किसी वस्तुका उद्भव किंवा विनाश नहीं। वस्तुको आविर्भाव होनेसे हम देख पाते और तिरोभाव होनेसे उसकी लिये पछताते हैं। आविर्भावके पूर्व भी वस्तुकी सत्ता स्वीकार करना पड़ती है। ऐसा न मानने पर एकमात्र उपादानसे सकल कार्य उत्पन्न हो सकते हैं। असत्कार्यवादि-मतमें उपादान सृत्तिकाके साथ घटके सम्बन्धकी भांति पटका भी सम्बन्ध नहीं लगता। सम्बन्ध न रहते भी जैसे सृत्तिकासे घट बनता, वैशे ही पट भी बन सकता है। किन्तु उत्पत्तिके पूर्व कार्यको सत् स्वीकार करते सृत्तिकासे पटोत्-पत्तिकी प्राप्ति पड़ नहीं सकती। क्योंकि सृत्तिकासे पटका कोई सम्बन्ध नहीं। जिसके साथ जिसका कोई विशिष्ट सम्बन्ध नहीं रहता, उससे वह कैसे उपजता है। घटके साथ उत्पत्तिसे पूर्व भी सृत्तिकाका सम्बन्ध होता है। इसीसे सृत्तिकासे घट बन जाता है। यदि उत्पत्तिसे पूर्व कार्य असत् ठहरे, तो सृत्तिका-रूप सत्कारणके साथ असत् घटरूप कार्यका सम्बन्ध बंध न सके। सुतरां असत्कार्यवादियोंके मतमें घटसंसर्गशून्य सृत्तिकासे घटोत्पत्ति होनेकी भांति असम्बन्ध सृत्तिकासे पटकी उत्पत्ति होनेमें क्या बाधा है? अथवा संसर्ग न रहते सृत्तिकासे पटोत्पत्ति न होनेकी भांति घट भी कैसे बन सकता है! उक्त दोनों विषय सत्कार्यवादके स्थापनकी प्रधानतम युक्ति है।

पायाहा केसे या कहतो है—उत्पत्तिसे पूर्व कार्यको सत्ता लोकार करते उत्पत्तिसे पूर्व कार्यका प्रत्यक्ष ज्ञो नहीं होता। कारण महर्षि कथितके मतानुसार कार्यमात्र उत्पत्तिसे पहले कारकमें प्रकृष्टा नक्याके द्विभक्षित सर्वकी मति प्रकृष्टान करता है। द्विभक्षि मिश्रकमेके पहले जेसे सर्व देख नहीं पड़ता, तेसे ही कारकसे पमिष्यक्त होनेके पहले कार्य भी द्विभक्षि नहीं पड़ता।

पदार्थों की सख्या ठहरानेसे ही इनका बनाया दर्शनसुख साध्य कहता है। वाक्यको। कथितके जेसे पद्योको पदार्थ यह है—१ महत्त्व २ पदहार, ३ मन, ४ मन्दतन्मात्र, ५ स्यातन्मात्र, ६ रूपतन्मात्र, ७ रसतन्मात्र, ८ गन्धतन्मात्र, ९ चक्षुः, १० श्रवण, ११ नासिका, १२ जिह्वा, १३ जह्व, १४ वाक्, १५ पापि, १६ पाद, १७ पाहु, १८ तपस्व १९ आकाश, २० बाहु, २१ शिरः, २२ जल, २३ चिति, २४ पाप्मा पीर २५ प्रकृति। कार्यकारिता रहित सत्त्व, रसा पीर तमः त्रिगुणको प्रकृति कहते हैं। इस प्रकृतिका प्रथम कार्य बुधितत्व है। बुधितत्व ही महत्त्व कहता है। बुधितत्वसे पदहार पीर पदहारके मन्द प्रकृति तन्मात्र तथा चक्षुः प्रकृति इन्द्रियको उत्पत्ति हुये है। फिर पक्षतन्मात्रसे पक्ष महाभूत निकले हैं। पश्चात् मन्दतन्मात्रसे पाकाय, अग्नि वायु, रूपसे शिर, रससे जल पीर गन्धसे प्रथिवीको उत्पत्ति है। आत्मा मिश्र क्षमकाय पीर निर्भिकार है। सुख दुःख प्रकृति सुख मो लसे शर्म नहीं करता। जब पन्तःकरकसे बुधितत्वका सुख एव दुःखाकार माय उठता, तब पन्तःकरकसे साव आत्माका अमेद ज्ञान समनेसे पन्तःकरकसा सुख तथा दुःखादि आत्मासे माहस पड़ता है। बिसे ही छदमें क्षम पड़नेसे मनुष्यका जप मरुत्कादि देखायो देनेकी मति अमेद ज्ञानसे पन्तःकरकसा बर्न सुखदुःपादि आत्मासे मरुत्कता है।

कथितने तीन प्रमाण माने हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान पीर मन्द। इन्द्रियसे ही ज्ञान पाता, जसका कारण प्रत्यक्ष प्रमाण कहता है। बटादि विषयसे धाय

इन्द्रियका सम्बन्ध मनसे प्रकृतःकरकमें विषयाकार परिपाम उत्पन्न होता है। वह परिपाम प्रत्यक्ष निम्ब रहता है। फिर छदमें क्षमकाय आत्मा प्रतिविम्बित होनेसे सखल विषय अनुमान करता है। आत्माज्ञानके लिये ज्ञानको अनुमिति कहते हैं। अनुमितिका कारण ही अनुमान प्रमाण है। जो हेतु साध्यका प्रत्यक्षकारी रहता (साध्यस्य ज्ञान नहीं होता), लसेमें साध्यके सामान्याधिकारण्य (साध्याधिकारकमें लसे हेतुके पक्षिक)को व्याप्ति कहते हैं। फिर साधन लिये जानिवासेका नाम साध्य है। जेसे 'पर्वतो पश्चिमान् भूमात्' पद्योत् 'भूमसे पर्वत पश्चिमान् है' ज्ञानपर पर्वतमें साधन लिये जानिसे पश्चि साध्य ठहरता है। जिसके द्वारा साध्यका साधन करते, लसेको हेतु कहते हैं। जेसे घूम है। कारण घूम देखकर ही पर्वतमें पश्चिका साधन किया जाता है। पश्चिम्य ज्ञानमें भूम नहीं रहता। किन्तु पश्चिके पधिकारकमें घूमका पक्षिक होता है। पतएव घूममें पश्चिकी व्याप्ति पड़ते कोई विरोध नहीं पाता। मन्धसे होनेवाले ज्ञानके कारणको ही मन्धप्रमाण कहते हैं। कथित वेदान्तिकको मति एक बीजवादी नहीं। इनके कथनानुसार सखलका एक बीजवादा माननेसे रामको सुख मिश्रणपर ज्ञान मो लसे अनुमान कर सखता है। नैपायिकादिको मति साध्य पक्षित आत्मासे दुःख पीर सुखका ज्ञान नहीं मानते। वह विषयमें ही सुख पीर दुःख लोकार करते हैं। यदि विषयमें सुख एव दुःख न रहता, तो पमिष्यक्त विषय मिश्रते ही सुख पीर पममिष्यक्त विषयसे दुःख न पड़ता। पमिष्यक्त विषयमें सखलस्यसे उठवसे सुख पीर रजोगुणसे उठवसे दुःख होता है।

कथितने साध्यत्वमें वेदका प्राधान्य लोकार किया है। किन्तु ईश्वरका पक्षिक इनेने नहीं माना। साध्यत्वसे मतेसे पक्षिक माननेपर ईश्वर को जनतुका कर्ता कहना पड़ेगा। ईसा होनेसे विषय सुखिकारी ईश्वर मनुष्यकी मति पक्षपाती ठहरता है। बिसे मतेसे ईश्वरके लिये एकको सुखो पीर घूरेको दुःखो करना उचित नहीं। क्योंकि

ईश्वर सकलके निकट समान है। अथस्कान्त मणिमें चेतन-सम्बन्ध न रहते भी लोह आकर्षण करनेवाली प्रकृतिकी भांति चैतन्यमय ईश्वर अचेतन प्रकृतिकी सृष्टि रचनेमें लग सकता है। कपिलके कथनानुसार अन्तःकरण जब प्रकृतिमें लीन हो जाता, तब पुरुष सुखि पाता है। अन्तःकरण बना रहनेसे पुरुषकी सुखि नहीं मिलती।

कपिलके ही कोपानलमें सगरराजाका वंश धंस हुआ था। कोई सगरनाथक कपिलको स्वतन्त्र बताता है।

१७ ब्राह्मण-सम्प्रदायविशेष। यह अपनेकी कपिल-वंशीयत्व बताते हैं। सूरत, भडौंघ और जम्बसरमें कपिलब्राह्मण रहते हैं।

कपिलक (सं० द्वि०) कप-इरन् सार्धं क, रस्य लः। १ क्षम्यान्वित, कंपनेवाला। २ कपिल, भूरा, तामड़ा। (पु०) ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग।

कपिलक्षेत्र—नर्मदा और महीसागरका मध्यवर्ती उप-कूल। खन्दपुराणोक्त रेवाखण्डके मतसे यह प्रति पुरुषस्वत है। कपिलासङ्ग देवी।

कपिलगङ्गा (सं० स्त्री०) कपिलगङ्गा, काम-रूपकी एक नदी। (कपिलगङ्गा ८४१२८) इसका वर्तमान नाम कपिली है।

कपिलच्छाया (सं० स्त्री०) सृगनाभि, कस्तूरी, मुक्क। कपिलता (सं० स्त्री०) १ शुकशिव्नी, केवांच। २ भूरापन।

कपिलदेव (सं० पु०) किसी अतिशक्तिप्रणेता।

कपिलद्युति (सं० पु०) कपिला रक्षा पिङ्गलवर्णा वा द्युतिरस्य, बहुव्री०। सूर्य, सूरज।

कपिलद्राक्षा (सं० स्त्री०) कपिला कपिलवर्णा द्राक्षा, कर्मघा०। कपिलवर्ण बृहद् द्राक्षाविशेष, एक बड़ा और तामला फल। इसका संस्कृत पर्याय—सुधीका, गोस्तनी, कपिलफला, अमृतरसा, दीर्घफला, मधुवल्ली, मधुफला, मधुनी, हरिता, हारहारा, सुफला, सृष्टी, हिमोत्तरा, पथिका, हिमवती, शतवीर्या और काश्मरी है। यह मधुर, शीतल, हृद्य तथा मदहर्षट और दाह मूर्च्छा, स्त्र, श्वास, तृष्णा एवं हृत्तास (वमनवेग) निवारक होती है। (शकटिषट्)

कपिलदामोदर—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

(सुभाषितान्तरी)

कपिलद्रुम (सं० पु०) कपिलः कपिलवर्णो द्रुमः, मध्यपदलो०। काशीनाम सुगन्धकाष्ठ, एक खुगवृक्षार लकड़ी।

कपिलद्वीप—एक पवित्र तीर्थ। यहा भगवान्की अनन्तमूर्ति विराजती है।

कपिलधारा (सं० स्त्री०) कपिलानां धारा दुग्धधारा इव यहा धारा यस्याः कपिलानां दुग्धधाराभिः सम्भूता निर्मला धारा यस्याः इति वा, आकारस्य सप्तत्वम्। श्लो०: मन्ना एवमिदं ब्रह्मम्। वा १११२१। १ गङ्गा। २ तीर्थे-विशेष। (शाली० १२५०) ३ कपिला गायके दुग्धकी धारा।

कपिलफला (सं० स्त्री०) कपिलं फलमस्याः, बहुव्री०। कपिलद्राक्षा, अद्रूर।

कपिलमत (सं० स्त्री०) कपिलस्य सुनिर्मतम्, इ-तत्। कपिलमुनि वा सांख्यदर्शनका मत।

कपिलमुनि (सं० पु०) वज्रान प्रान्तके खुनमा जिल्लाका एक याम। यह कपोताक्ष (कवदक) नदीके तटपर अवस्थित है। पूर्वकाल कपिल नामक किसी साधुने यहां कपिलेश्वरी देवमूर्ति स्थापन की थी। उन्हींके नामानुसार यह स्थान कपिलमुनि कहाया। चैत्रमासमें वारुणीके दिन कपिलेश्वरी देवीका महोत्सव होता है। फिर उसी समय मेला भी लगा करता है। वारुणीको यहां कपोताक्ष नदीमें स्नान और देवीदर्शन करनेसे अग्रेय पुण्य मिलता है। इसके उपलक्षमें नाना स्थानसे तीर्थयात्री आते हैं। लाफर अली नामक किसी सुसज्जमान पीरकी यहां सुन्दर मसजिद बनी है। यह ग्राम अक्षा० २२° ४१' ७०" और देशा० ८६° २१' पू०पर पड़ता है।

कपिलरुद्र—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (सुभाषितान्तरी) कपिललिङ्ग—लिङ्गविशेष। यह मेघना नदीके पूर्वतट प्रायः दो हजार हाथ दूर नरपालके निकट अवस्थित है। (सं० ब्रह्मवर्ष १४४२)

कपिललोह (सं० स्त्री०) पित्तल, पीतल।

कपिलवस्तु (सं० स्त्री०) प्राचीन नगरविषय एक पुराणा ग्रन्थः। यह माक्य राजाओंको राजधानी रहा। शाक्यनिर्जने यहाँ कल्पवृक्ष किया था। बौद्धधर्म पढ़नेसे समझ पड़ता—बुद्धदेवके समय कपिलवस्तुमें विष्णु मूर्तियोंका बाध रहा। सुन्दर राजासाहब मनोहर लघान चीर चर्मपत्र सुरम्य जर्मी स्थान स्थान पर स्थापित थे। फिर यहाँ नामा देवीय भोग घाति जाये रहे। राज वीरः।

प्रसिद्ध चीन परित्रासक फाहजियान् चीर विष्णुएन सिद्ध कपिलवस्तु देखने चाये थे। उन्होंने कर्मान्ध्रसे 'विष्णो को को श' चीर 'कि पि नो फ-खे ति' नाम पर इस स्थानका उल्लेख किया है।

हिन्दुएन सिद्धको चर्चामाये समझते—कपिल वस्तु एक सुदूरस्थ चीर परित्रासका फल माय ६०० मील (६००० मि) है। उमय परित्रासकोंके समय कपिलवस्तुको चबक्या मितान्त घोषनोय को यही था। पूर्व को जो स्थान मन्थरियाको रहे, वही उनको जनमानवगुण्य मन्थरिया देख पड़े। यहाँ तक, कि उम समय शाक्य-राजधानी कपिलवस्तु नगरको पूर्वको देखनेमें पाती न थी। नगरका प्राचीन इष्टकनिर्मित मासाह टटा फूटा पड़ा रहा। लघोके निवृत्त चीनयान मत्तारकमिडोका एक सङ्घाराम था। सिवा इसके हिन्दुकोके दो मन्दिर भी रहे। प्रासादके मध्यस्थलमें शिवोदन राजाको मन्दिरमूर्ति थी। उससे छोटी धूरपर बुद्धजन्मनी मायादेवीका चालःपुर रहा। फिर नगरके दक्षर उधर चर्मेक स्तूप देख पड़ते थे।

वर्तमान जेजाहादके बचरा एके गण्डको नदीके मध्यवर्ती स्थान चीर दीनों नदीके बङ्गम पयल चीनपरित्रासक बचित कपिलवस्तु राज्य समझ पड़ता है। यजाहादसे २५ मील दक्षर पूर्व अवस्थित बली जिनाके चालगत मन्थर परगनेका सामोक सुदूर स्थान ही प्राचीन कपिलवस्तु नगर माना गया है। पाकवन सभलाग लघे 'सुरना तान' कहते हैं। (Census of the Arch. Survey of India, Vol. XII. p. 83-172.)

कपिलवस्तु (सं० स्त्री०) कपिला विष्णुवर्षा

शिवया चर्मका०। शिवया वृक्षविषय, भूरी सोसम। इसका संश्रुत पर्याय—कपिला पोता, सारिषी, कपिलाद्यो, मन्थरमाँ चीर कुर्मिशया है। राज निष्पत्त ६ मन्थे यह तिष्ठ एव शीतवेर्षे चीर चामकात पित्त, ल्वर वसन तथा विज्ञानामक है।

कपिलस द्विता (सं० स्त्री०) एक उपपुराण। इसमें उल्लेख देवके तीर्थों का साहाय्य वर्णित है।

कपिलकृति (सं० स्त्री०) कपिलवचोता कृति मध्य-पदको०। सांख्यशास्त्र। शैलेके पयका चतुस्रव रहने चीर मुनिप्रबोध ठहरनेसे सांख्यशास्त्रका कृतित्व माना जाता है। "कपिलस्य शैलेन चारणैरनन्दा कापरदि-कल्पनामन्थरान्दीयान् शोचन्तं कल्पकल्पान्" "कल्पवचोतीर इवह रचयि शोचः। (शंकरशास्त्र)

कपिला (सं० स्त्री०) कपिलो वर्षों स्थापित कपिल चर्मापाटित्वात् चर्च टापू। १ पुष्पतीच नामक दिव्यव्रको पत्नी। २ मन्थरमाँ शिवयाहच, भूरी सोसम। ३ ऐतुका नामक गम्भूष्य, एक युगवृद्धा चीर। ४ चर्चवर्षे माय। ५ दचकत्या। ६ म्थकत्या। ७ कामधेनु। ८ शिवया सोसम। ९ राजरोति, बिषी किष्णकी पीतम। १० कामरूपका नदीविषय। (कपिलचर्च ५: ५) ११ मध्यवर्षके चालगत एक नदी। यह नर्मदा नदीसे मिल गयी है।

"चालगत कपिला नाम कुवा चर्चके शैलेः। नर्मदा चर्चकच चालगतं चर्चोः १०३" (शंकर १५: ५)

कपिला चीर नर्मदा नदीका मन्थरस्थान बद्धान्त कहाता है। शैवाहण्डके मतमें यहाँ स्थानस्थानपूर्वक मन्थरको पुत्रा करनेपर पचय एव चाम जाता है। ११ तोर्षविषय। १२ गजामनता। १३ शिवयान देवका एक चाम। (न मन्थर २०: ८) १४ निर्दिष्टनायुका, बीक। १५ लक्ष्मसाध्य कर्मानेद मुनिव्रमि चाराम जनिशानो मन्थरः। १६ कपिलवर्षा भूरी। कपिलाद्यो (सं० स्त्री०) कपिलकपिलवर्षे चर्च इव पुष्प यष्ठाः। १ म्थरमाँ द्विषी किष्णका म्थरद्विष्टम। इसको चर्चें भूरी जाती है। २ कपिल शिवया, भूरी सोसम।

कपिलाचार्य (सं० पु०) कपिलनामा आचार्य;
कमघा० । १ अष्टि कृत् २ विष्णु ।

“मन्त्रिः कपिलाचार्यः अन्त्या नैतिनीपतिः ।” (विष्णु०)

कपिलाक्षर (सं० पु०) कपिलं अक्षरं यत्र, बहुव्री० ।
शिव, महादे

कपिलातीर्थ (सं० पु०) तीर्थविशेषः, इस तीर्थमें
मध्यचाने के दान से ही देवताकी
पूजा करा जाती है। कपिलना गौदानका फल
मिलता है । (भारत १०११४५)

कपिलादान (सं० पु०) कपिलाया दानम्, इ-तत् ।
कपिलागौदान । मत्स्यपुराणमें कपिलाके दानका यह
मन्त्र लिखा है —

“कपिलि मर्त्यानां पूजयेथासि रेहिणे ।

तीर्थदेवमया यथात् पत्त शान्ति प्रयच्छ मे ॥”

घण्टा, चांभर, काङ्कणी, दिव्य वस्त्र एवं हिसदपंथ
भूषित, पयस्वी, सुगौर, तरुण और वत्सयुक्त कपिला
देना चाहिये । इस दानसे अर्गलाभ होता है ।

कपिलाधिका (सं० स्त्री०) तेजपिपौलि-का, तिलचटा ।
कपिलापुर—दक्षिणाप्रदेश का एक नगर । (विवाह १०६)
यह सम्भवतः नर्मदा किनारे अवस्थित है ।

कपिलार्जक (सं० पु०) कपिलवर्ण-तुलसीवृक्ष, भूरी
तुलसीका पेड़ ।

कपिलावट (सं० पु०) कपिलया कृतो ऽवटः गतेः ।
तीर्थविशेषः । (भारत, वन ८११८)

कपिलावते—अश्वदेवान्तके भड़ोच जिलेमें नर्मदा और
कपिला नदीका सङ्गमस्थान । स्कन्दपुराणके रेवा-
खण्डमें इसका नाम सद्गवत लिखा है ।

कपिलाश्व (सं० पु०) कपिलाः कपिलवर्णा घोडा यस्य,
बहुव्री० । १ इन्द्र । २ एक राजा । ३ सूर्यवशोय
कुवलयशङ्खके पुत्र ।

कपिलासङ्गम कपिला और नर्मदा नदीके सङ्गमका
स्थान । यहां खान खनने से अश्वि फलनाभ होता
है, इसके निम्न स्थान पवित्रमोर्छे हैं । (विवाह ११५०)
यह अश्वदेव के वतमान भड़ोच जिलेके
दक्षिण-पूर्व में है ।

कपिल-कृत् (सं० पु०) कपिलविशेषः । (भारत, वन ८१५०)

कपिलिका (सं० स्त्री०) कपिना संज्ञायां कन्-टाप्
अतइत्वम् । १ शतपदीभेद, किमी किस्मकी कनसलाई ।
“शतपद्यु पद्यदा कृपा विना कपिलिका पीनिका रक्षा देता अपिमसा
इवत् ।” (इत्युत) २ पिपौलिकाविशेष, एक चीटो ।

कपिली—नदीविशेष, एक दरया । इसका प्राचीन
नाम कपिना वा कपिलगङ्गिका है ।

कपिलीकृत (सं० त्रि०) अकपिलं कपिलं कृतम्,
कपिल अभूत तद्भावे चि-कृ-क्त । कपिल बनाया
हुवा, जो भूरा किया गया हो ।

कपिलेन्द्रदेव—उत्कलके एक राजा । वाक्यकाल यह
किसी ब्राह्मणके मवेशी चराते थे । फिर इन्होंने
उत्कलराज नैत्रवासुदेवके निकट जा नौकरी की ।
कार्यक्षमता गुणसे यह नैत्रवासुदेवके अत्यन्त प्रियपात्र
बन गये । वासुदेवके मरने पर इन्होंने अपने साहस-
बलसे उत्कलका राजसिंहासन पाया था । इनके
राजत्वका काल २७ वर्ष (१४५२—१४७९ ई०)
रहा ।

कपिलेग (सं० स्त्री०) कपिलेन प्रतिष्ठापितं ईशं
निर्जम्, मध्यपदना० । काशोख शिवलिङ्गविशेष ।

“कपिलेयं महाशक्ति कपिलेन प्रतिष्ठितम् ।

तुयन्ते कृपयाऽन्वय दर्शनात् किञ्च मानवाः ॥” (काशोख)

कपिलेश्वर—१ एक प्राचीन नगर । २ मन्दाज प्रान्तवाले
गादावरी जिलेका रामचन्द्रपुर तहसीलका एक ग्राम ।
यह अक्षा० १६° ४६' उ० और देशा० ८१° ५७' २०"
पू० पर अवस्थित है । यहांकी लोकसंख्या पांच
हजारसे अधिक है ।

कपिलोमफला (सं० स्त्री०) कपौनां लोम इव
लोमाहतं फलं यस्याः, बहुव्री० । कपिकच्छु, केवाच ।
कपिलोमा (सं० स्त्री०) कपौनां लोम इव लोम-
सञ्जरो यस्याः, बहुव्री० । रेणुका नामक गन्ध द्रव्य,
एक खुशबूदार चीज ।

कपिलोह (सं० स्त्री०) कपिवत् पिङ्गलं लोहम् ।
१ पिचल, पीतल । २ राजरोति, बटिया पीतल ।

पिचल देखो ।

कपिलक (सं० पु०) कम्पिलक, नारङ्गीका चूरन ।
कपिलिका (वै० स्त्री०) कपिवर्णा वस्त्रिका पृषोदरा-

दितात् बबोयः । गत्रपिप्यसो, मत्रपोपरः ।

बलिप्यो ईषीः ।

अपिबक्ष्य (सं० पु०) कपिर्वातरस्य पञ्चमिब यक्ष्य
यस्य बह्वुसो० । १ देवर्षिं नारदः । मन्नामारतमि
नारदसि वातरसुख मन्त्रस्यपर इय प्रकार लिप्या,—
बिसो बमय देवर्षिं नारद और उनसे भागिनेय परंत
श्रुतिने इस कोकर्म या मनुष्योके माय एकत्र रहने
को बिचार किया । फिर दोनों दोनोंको प्रमाणम
यावतौय मनोभाव बता देनेको प्रतिज्ञाकर छप्पन
राज्याके राज्यमें बस गये । राज्याने उभय श्रुतिषी
परिचयाके लिये शीघ्र लम्बाको नियुक्त किया था ।
कुछ दिन पीछे नारद उस लम्बाके प्रति पात्यक्त पासल
हुये किन्तु लम्बावयत' यह मनोभाव भागिनेय परंत
से बता न सके । परंतको पाकार दहित द्वारा उनका
मनोभाव खबरगत हुआ था । लक्ष्मिने पतिगय ल ह
को नारदको प्रतिज्ञामुह करनेपर पतिगय दिया —
'यह राजकन्या तुम्हारी भार्या बनीये । फिर तुम
वातरका मुख धारण कर इस मन्त्रमूनिपर ब्रूमते
किरोमि ।' (मध्य अर्ध १५०) (छो०) २ वातरका
मुख बन्दरका तु ह ।

कपिवक्ष्य (सं० पु०) पाघातकृत्तय, पासदेका
पिङ्ग ।

कपिविह्वला, बलिप्यो ईषीः ।

कपिवक्षी (सं० श्लो०) कपिरिब कपिभोम इव बक्षी,
मध्यपदभो० । गत्रपिप्यसौ गत्रवीपरः । २ कपिरि
पुत्र, केरेका पिङ्ग ।

कपिवास (सं० पु०) पारिमायतःपुत्र, बिसो कृष्णके
पोपलका पिङ्ग ।

कपिविरोचन (सं० छो०) सरिय, मिच ।

कपिविरोचि, बलिप्यो ईषीः ।

कपिवोत्र (सं० छो०) मन्त्रमोत्रोस, केवाचका
तुष्टम ।

कपिपुत्र (सं० पु०) पारिमायत, बिसो कृष्णका
पोपल ।

कपिय (सं० पु०) कपि बर्षविमिय कपिल नाम वा
काशय, कपि म ।

शुपा० । १ याममवर्षे मटमेका रंग । यह लक्ष्य पर
पीत उभय वर्षे मिश्रवैषि बनता है । २ सिकक नाम
गन्धद्रव्य, सोबाग । ३ द्वाचामय, पक्षुरी यराव ।
"दन्ता न पश्यन् बलिं विद्यन्तः ।" (श्लो०)

३ शिव । ५ जनपदविमिय एक बसती । बलिप्यो ईषीः
(श्लो०) ६ कपियवर्षकुल, मटमेका ।

कपिया (सं० श्लो०) कपिय टापू । १ सुरा,
यराव । २ मात्रवीसता, बमिषो । ३ नदीविमिय
एक दरया । रघुराजा इसी नदीको पारकर उत्कल
पहुँचे थे । (पर्व) इसका वर्तमान नाम बसई
है । यह मेदिनोपुरके दक्षिणामे वसविन वा बङ्गाप
सागर्भे जा निरो है । ४ विमाषोको माना । यह
कश्यपको एक श्लो रहीं ।

कपियाधन (सं० पु०) कपियं पञ्चमं कपियकुल
वा पञ्चमं यत्र, बह्वुसो० । शिव ।

कपियापुत्र (सं० पु०) कपियाया' मदीकालाया'
विमाया' सुत्र, ६-तत् । विमाच, यैतान् ।

कपियावन (सं० पु०) १ देवता । २ मध्यविमिय,
बिसो कृष्णको यराव । यह कपिय देवमें पक्षुरी
बनायो जाती है ।

कपिशिखा, बलिप्यो ईषीः ।

कपियोषा (सं० श्लो०) कपिय क्षार्ये बाहुलकात्
ईकन् टापू च । मध्यविमिय, बिसो कृष्णको यराव ।

कपियोर्व (सं० छो०) कपोनां विर्व योव प्राका
राहोनां पथपदेय, मध्यपदभो० । प्राचोरादिका
पथभाग, दोवारका शिरा ।

कपियोर्व (सं० छो०) कपोनां योर्वचं वन् कावति
प्रकायते, कपियोर्व-के च । १ हिङ्गुल, मिहूरय,
ईशुर । २ प्राचोरादिका पथभाग, दोवारका
शिरा ।

कपियोर्वी (सं० श्लो०) वादिकविमिय, बिसो कृष्णका
बात्रा ।

कपिष्ठल (सं० पु०) कपिविमिय । बलिप्यो ईषीः ।

कपिष्ठल्य (सं० पु०) कपोनां श्लथ इव श्लथो यत्र,
मध्यपदभो० । दानविमिय । (पर्व)
कपिष्ठल्य (सं० छो०) कपोनां कर्णं पाशकम्, ६ तत् ।

१ वानरोंके निवासका स्थान, बन्दरोंके रहनेका सुकाम। २ पञ्चावका एक प्राचीन जनपट। वर्तमान नाम कैथल है। यहाँ अश्वनाका मन्दिर विद्यमान है। कपिस्वर (सं० त्रि०) कपीनां स्वर इव श्वरो यम्य, बहुव्री०। वारनकी भांति श्वरविशिष्ट, जो बन्दरकी तरह आवाज ग्वता हो।

कपिहस्तक (सं० पु०) कपिकच्छ, केवांच।

कपी (हिं० स्त्री०) घिरनी, चरनी, रस्सी कपेटनीका चीजार।

कपीकच्छ (सं० स्त्री०) कपिकच्छ, संत्राया वा दीर्घः। कपिकच्छुलता, देवाच।

कपोल्य (सं० पु०) कपिभिर्वानरैरिच्छते पुज्यते, कपि-यज्-कषप्। १ रामचन्द्र। २ चौरिकाह्वच, खिरनी। ३ सुग्रीव। ४ हनुमान्।

कपीत (सं० पु०) कपिभिरितः प्राप्तः प्रियत्वेनेति शेषः। श्वेतसुह्राह्वच, एक वेल।

कपीतक (सं० पु०) मृदाह्वच, पाकुर, सहोरा।

कपीतन (सं० पु०) कपीनां ईं लक्ष्मीं तनोति, कपि-ई-तन् पवाद्यच्। १ आम्रगतक, आमडा। २ गर्द-माण्डह्वच, पाकर, सहोरा। ३ शिरीष, सरसो। ४ अश्वत्थ, पीपल। ५ शुवाकह्वच, सुपारोका पेठ। ६ विष्वह्वच, वेसका पेठ। ७ गण्डमुण्ड। ८ उदुम्बर-ह्वच, गूलर।

कपीन्द्र (सं० पु०) कपिरिन्द्र इव कपिपु इन्द्रः श्रेष्ठो वा। १ हनुमान्। २ यामि। ३ सुग्रीव। ४ विष्णु।

“शरीरमुद्देहदमोहाः कपीन्दो मूर्ध्दिपिप।” (भारत ११।१०२।११)
५ जाम्बवान्।

कपीवह (सं० स्त्री०) कपिष्व दीर्घः। स्त्री २६ श्लोकोः। ७ १।१।२२। शरीवरविशेष, एक तालाव।

कपीवान् (सं० पु०) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। यह चतुर्थ मन्वन्तरके सप्तमिंशोमिं रक्षे।

कपीवान् (सं० पु०) वशिष्ठ ऋषिके एक पुत्र। (परिवंश)

कपीश (सं० पु०) कपियोंके राजा, बन्दरोंके मालिक। बालि, सुग्रीव, हनुमान् प्रकृतिको कपीश कहते हैं।

कपीष्ठ (सं० पु०) कपीनां इष्ठः प्रियः, ६-तत्। १ राजादनीह्वच, खिरनी। २ कपिलह्वच, केया।

कपुच्छल (सं० स्त्री०) कप्य गिरमः पुच्छमित्य भाति, क-पुच्छ ला-क। १ कैमचूडा। २ त्रुक्का त्रयभाग। “इदमेव कपुच्छवर्गो दग्धः स्वादाहारः।” (मत्तपदभाष्य २।३।१०)

कपुष्टिका (सं० स्त्री०) कप्य गिरमः पुष्टौ पोषणाय कायति, कपुष्टि-कै-क-टाप्, कप्य गिरमः पुष्टौ पोषणाय कितं, क-पुष्टि-कन् टाप् वा। कैमनी चूडाके संस्कारका कार्य।

“पदाङ्गुलीये वर्गं चूडाहारप कपुष्टिका।” (नीमिष)

कपुत (हिं० पु०) कुपुव, सुराव मरुका, का पुव अपने कुलका धर्म छोड़ असदाचरण करता हो।

कपूती (हिं० स्त्री०) पुत्रका असदाचरण, बुरे नरकेकी शानत।

कपूय (सं० त्रि०) कुपितं पूयता, कु पूय अच् एयो-दरादित्वात् उनोपः। दुग्न्वि, बटदूदार, सुराव।

कपूर (हिं० पु०) कपूर्, काफूर। यह एक जमा हुआ सुगन्धदार मसाला है। कपूर दवा लगनेसे उडता और आगकी लपट छू जानेसे जलता है। शूर्प देखो।

कपूरकषरी (हिं० स्त्री०) गन्धपनार्था, गंधोक्षी। यह एक प्रकारको लता है। इसके मूलसे सुगन्ध निकलता है। आसामके हाड़ी इसके पत्रसे पापोग निर्माण करते हैं। कपूरकषरी देखो।

कपूरकाट (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किसका लडहन धान। यह सूक्ष्म होता है। इसका तण्डुल सुगन्ध और स्वादु है।

कपूरा (हिं० पु०) मेघ छाग प्रकृति पशुका कण्ट-कोय, भेड़ वकरी वर्ग, रह चौपायोंके वेजोंका घेला।

कपूरी (हिं० त्रि०) १ कपूर्विशिष्ट, काफूरी, जो कपूर्से तैयार किया गया हो। २ कपूर्वर्णविशिष्ट, काफूरका रङ्ग रखनेवाला, इसका पाला। (पु०)

३ वर्णविशेष, एक रङ्ग। यह कुक्कुट पीतवर्ण रहता है। केसर, फिटकरी और हरसिंगारके फलसे इसे तैयार करते हैं। ४ ताम्बूलविशेष, किसी किसका पाल। यह अति दीर्घ एवं कटु होता है। इसका प्रान्त भङ्गुर रहता है। इसको बम्बईको और लोग अधिक खाते हैं। सुननेसे आता—कपूरी पान खानेसे

पुत्रव मनु सक हो जाता है। (ओ०) ३ शोषवि-
बिगीय। इसका पत्र/दोर्घ होता है। पत्रके मध्य
भायमें एक खेत रेखा पड़ी रहती है। मूल कपूरकी
भांति सुगन्ध देता है।

कपूय (वे० पु०) कुत्सित प्रचयति, कु प्रयि क्षिप्
वेदिभत्तात् निधानेन सिद्धम्। १ सुहृत्पत्र, मर्दानगो।
(सि०) २ कुत्सित प्रकायम्।

कपोत (सं० पु०) को वायु पोत गोरिवाष्प, कब
पोतश्च इत्ययं। ११०००० ११। १२। १५१। १ पयो,
बिड़िया। २ शायोकी एक पनोकी ज्मिति।
३ पक्षिबिगीय, हुगु। ४ भूविद्युत्, एक पूहा।
५ कपोतसमूह, कपूतरीका सुष्ठ। ६ पारद, पारा।
७ सर्बिंधार, लम्बीकार। ८ पारोमहृत्त पकाय
पीपक। ९ मूरा रङ्ग। १० दूरमेकी सफ़ेदी।
११ पारावतपयो, कुमरी, कपूतर। साटिन मायामें
कपोतप्रतिष्ठा नाम कोलम्बिडो (Columbidæ) है।

इसका संस्कृतपर्याय-वृहत्कपोत, पारावत,
पारावत, कसरव शिख और वृहत्कपोत है। जड़की
कपूतरकी वनकपोत, बिहत्कपोत, कोकदेव दहन,
पूसर, मीयक, भूम्यसोचन, यन्त्रिध्वज और वृह
मायन कहती है।

पूर्वबोपर सर्वत्र कपोत दीप पठता है। बिन्दु
चङ्कनिया और भारत महासागरके उपकूलवर्ती
प्रदेशमें इसकी सप्या पक्षिक है। अमेरिकामें घण्ट
कपोत होती भी विभिन्न प्रकारका नहीं मिलता।
भारतवर्ष पूर्व मलयदोषमें कभी इसकी सप्या पक्षिक
पाती बेशे ही विभिन्न प्रकारकी खेकी दिखाती है।
युरोप और उत्तर एशियामें इसकी सप्या सर्वविधा
पश्य है।

पगतत्ववेत्तावेनि भात्रतक प्रायः तीन सोस भी
पक्षिक कपोतकेको पाविष्कार की है। उक्त सबन
विभिन्न खेचिगेमें पक्षिकीय प्रति सुन्दर देख पड़त
है। पनेक कपोतीका नाम मिथमिथ वर्षमें बितित
रहनेसे बहुत ही मनोहर मान्य देता है। प्रायः
सकल पक्षिकीका पङ्गीकृत मध्य्य सुगठित और
सुदृश्य है। कपोतकी पक्षिकीय खेचियां मनुष्यका

उपयोगो प्राय है; फिर पनेक सभमें यह प्राय-
रूपसे प्रचुर व्यवहृत होती है।

कपोतीके मध्य दाम्पत्य प्रेम प्रति सुन्दर है।
एक बार को जोडो मिल जाते, वह जीवन रहते
खमी छूटते नहीं देखाती। इनके इस पक्षिकीय
प्रेमकी कथा सबक देयोंके काव्यमें विविध प्रबिह है।

कपोत और कपोती दोनों घर बना लेने, पछे
देने और बच्चे देनेमें एक दूसरेकी साहाय्य करती है।
यह किसी स्थानकी तोड़ फोड़ अपना बौंसला बना
नहीं सकता। इससे ऊपर, पर्यंतके गाजरमें, इटकाजयकी
आसिधके गोषे या देवाकबने नामपर गर्तकी निहाल
कपोत पनग घोसला तैयार करता है। एकबार
दो खेतवर्ष हिम्न होती है। कोई कोई खेको
एकमात्र हिम्न देती है। बिन्दु दीपे पक्षिक बिद्योधि
नहीं रहती। कपोत प्रति मास हिम्न दिया करती है।
फिर हिम्न फूटनेमें १३ दिन लगती है। यह १३
दिन ताप पङ्कचानेके है। कपोती हिम्न दे प्रथम
३ दिन एकमात्र दिवाराय बराबर ताप लगती,
केवल एक बार खानेकी उठ जाती है। प्रथम ३ दिन
पक्षिक चय वह कपोतकी ताप पङ्कचानेके रोबती
पक्षका चयमात्र भी हिम्नकी खाने नहीं छोड़ती।
कपोती वह खानेकी जाती, तब ताप पङ्कचानेकी
कपोतकी बारी पाती है। कपोतकी निबट त दिव
वह पक्षिक सुवातुर होती भी हिम्नकी पनाइत जोड
केषि उठेगी। कपोत निबट न रहनेसे सुवा लगने
पर कपोती उसे सुवाकी गंधार मन्द करती है।
कपोत दूर होती भी उक्त मन्द सुगते ही बौंसलेमें
या पङ्कचता है। प्रथम तीन दिन बौंसलमें वह
हिम्नकी जोड उठ जाती है। दिनको पक्षिक चय
कपोत ताप पङ्कचता और रातको कपोतीके कायं
करनेका समय पाता है। १३ दिन पेशे हिम्न
फूटनेके प्रायःक निवृत्तता है। यह प्रायःक प्रमाच्छादिन
मांसपिष्टमात्र खाता है। इससे मायन पायकका कोई
निष्ठ देख नहीं पड़ता और चपुहय बन्द रहता है।
हिम्न फूटनेसे कपोती फिर ३ दिन ताप देनेकी
बैठती है। प्रथम ३ दिनकी भांति यह बार भी वह

आहार तथा निद्रा त्याग करती है। कपोत और कपोती दोनों शावकको खिलाते हैं। प्रथमतः यह जो खाते, उसीको अपने उदरस्थ खाद्यके आहारमें रख और दुग्धयत् तरल पदार्थमें परिणत कर शावकके मुखमें पहुँचाते हैं। कुछ दिन बीतने पर वही पदार्थ मण्डवत् कर और शेषको अर्धगमित रख खिलाया जाता है। इसी प्रकार वयोवृद्धिके साथ खाद्यकी अवस्था बदल क्रमशः कठिन द्रव्य खिलाना सिखाते हैं।

डिम्ब फूटनेसे ३५ दिन पीछे पालककी रेखा देव पड़ती है। एक मासके मध्य शावकका सर्वाङ्ग पालकसे आच्छादित हो जाता, किन्तु उसे चुगना नहीं आता। फिर भी इस समय वह पितामाताके साथ उड़ भूमिपर उतरना और घोंसलेपर चढ़ना सीखता है। इतने दिन उसे खिला देना पड़ता है। मास वा दो मासका होनेपर शावक चुगने लगता है।

कपोत-पक्षके शेष भागमें ३४ बड़े पालक रहते हैं। प्रथम उनसे पक्षमें उड़नेके उपयुक्त १० पालक निकलते हैं। जिस प्रकार सात बत्सुरके वयसमें मनुष्यके कर्चे दाँत गिर फिर आते, वैसे ही उड़ना आरम्भ करनेवाले कपोतके पक्षस्थित पालक झड़कर पुनः प्रकाश पाते हैं। सर्वांग पक्षके उड़नेयोग्य भौतरो पर प्रथमसे आरम्भ ही झडा करती है। एक जवतक झड़कर भर नहीं जाता, तवतक दूसरेका गिरना असम्भव आता है। इसी प्रकार पक्षम पालक गिरनेपर कपोतका वयस बदलता है। फिर दशम पालक झड़ जानेसे यह युवावस्थाको प्राप्त होता है।

कपोत फल शय्यादि खा जीवनधारण करता है। यह किसी प्रकारके कौटादि नहीं खाता। किन्तु किसी त्रैणिका कपोत छुद्र-छुद्र शम्बूक खा जाता है। हिन्दूस्नानका कवृत्तर 'गुटरगू' बोलता है। यह हर्षके समय जो शब्द करता, पीडित होनेपर मौनी रहता है। कपोत अपनी त्रैणिकी कपोतीको मनोनीत करता, किन्तु गृहपालित मनुष्यके वशीभूत हो जानेसे भिन्न त्रैणिकीके साथ भी रहता है।

कपोतमें स्त्रीजाति ही यथेच्छ-व्यवहार चलाती है। अनेक स्थलमें एक कपोतके भिन्ने दो कपोत लड़ते देखे गये हैं। फिर कपोती नूतन कपोतकी ओर झुक पडी है। इसी प्रकार दो दम्पतीके मध्य विवाद बढ़नेपर परस्पर स्त्रीपरिवर्तन हुआ है। सन्ध्याकाल कपोत प्रति यौघ्न शोघ्न गृहप्रवेश करता, किन्तु अन्यान्य पक्षियोंकी भांति प्रातःकाल ही उसे छोड़ नहीं चलता। सूर्यका किरण कुछ अधिक पच्छा लगता है। इसकी दृष्टिशक्ति और श्रवणशक्ति प्रति तीक्ष्ण है। कपोतके दोनों पक्ष प्रति सधन और सवु हाते हैं। इसीसे यह बहुत द्रुत उड़ सकता है।

साधारणतः कपोत देखनेमें प्रति सुन्दर लगता है। इसका वर्ण और आकार नानाप्रकार है। पक्षु अधिक दीर्घ नहीं रहता, प्रायः १ इंचसे भी अल्प पड़ता है। उसके दोनों भाग सरल एवं ईपत् सद्बुचित होते हैं। किसी पक्षुका अग्रभाग अन्य और किसीका अधिक झुक जाता है। ऊपरो पक्षके मूलमें ईपत् मास उभरता है। यह मास प्रति कोमल और समान होता है। इसी मांसपर विलकुल कपालके नीचे दोनों सरल नासाविवर रहते हैं। कपालसे ऊपर मस्तक गोल ही पद्यात् दिक्कां टल जाता है। मुखका विवर अत्यन्त छुद्र या प्रति हृष्टत् नहीं होता। दोनों पक्षु पक्षुसे विस्तर पद्यात् मस्तकके दोनों पार्श्वपर समसूत्र-पातसे प्रवस्थान करते हैं। पक्ष अधिक दीर्घ होते हैं। किसी-किसी त्रैणिकी कपोतका पक्ष लपेट लिया जानेसे शेष प्रान्त सूक्ष्म पड़ता और किसीका ईपत् गोलाकार बनता है। पुच्छके पालक भी इसी प्रकार भिन्न-भिन्न आकार धारण करते हैं। पुच्छमें प्रायः १२से १४ तक पालक रहते हैं। वह अन्यान्य स्थानके पालकसे यथेष्ट दोष होते हैं। फिर किसी-किसी त्रैणिकी कपोतके पुच्छमें सोलह या दश मात्र पालक होते हैं। साधारणतः इसके पेर सुटनेके ऊपरो भाग पर्यन्त पालकसे आच्छादित रहते हैं। अङ्गुलि नातिदीर्घ होती है। पैरमें तीन अङ्गुलि भागे और एक पीछे पाते हैं। पद्यात्को पक्षु लि

सधुसुखाको पशुहिको भाति समसुखापतके पबध्मान खरतो है। मन्त्र दण्डोपवैगी पचीबी भाति मन्त्र रहति है। फिर पशुहिक मी दण्डोपवैगी पचोबी भाति घनिक होतो है। बिषी बिषो नेपोनाके अपीतके समस्त पादपर पासक निरुक्त पाति है।

हिन्दुध्यानमें कबूतर खैरके बिये पासा जाता है। इसीसे इसका व्यवसाय बसा करता है। सेवक हिन्दुध्यानमें हो नहीं, पूजिकोके समस्त कालपर अपीत मनुष्यके पासयमें पबता है।

शाहुनयापके पशुसार पासक वा व्यवसायो इसको खोके थाकार, कायं एवं गुणादि देव विमान करति है। इसको प्राय हो जाति है—गोमा पीर गिरहबाज। इन दो जातिके अपीत फिर पनीक विभागमें बंटते है। गोनावेमें सन्का, गुहो, गोरको, कोडियापन, बुगदादी, सुक्का, पाखूता, कहरा भू गिया, सोदन प्रमति प्रवान है।

हिन्दुध्यानो सोमके वरें पीर मठोंमें एक प्रकारका गोमा म्ब पदावित रूपसे रखा करता है। लने कङ्कली कबूतर खरति है। यह माना बर्बका होता है। इसका मूल्य पति पब है।

गिरहबाजोंमें कागुबी, सन्का, मोका स्याङ, पबकहा, सुर्बा, सादा, लहा, भूरा, मण्डेदार, दोबाज, पयैरद पच्छे समझि जाति है।

गाला पीर दोबाज देखते हो पबवान पड़ता है। मोसेने गिरहबाजको खोब छाङ्ग होती है। फिर मोसेके सधुमें सर्वदा शान्त माव रहता, बिन्दु गिरहबाज पपनो पांख हुमापा करता है।

गिरहबाज पेरमें वर पानके भबरा पीर मत्सेपर बोटी बड़ जानके चोटियाला बडाता है। फिर पेरमें वर पीर मत्सेपर बोटी दोनी जेनेके इसको भबरा-चोटियाला खरते है।

पहरे हिन्दुध्यानमें अपीतके सर्वप्य मेद रहे। बिन्दु पासककको खेबिगोंके देव प्राचीन नामोंके निर्णय करनेका खीर उपाय नहीं। प्राचीन कवियों के काव्यमें प्रमाथ पाता, कि पुराने समय मी हिन्दु ध्यानमें अपीत पासा जाता था। राजा मन्नाराज

पीर बैठे साङ्गकार रहे पपेट परसे क्रीडादिके लिये रख जेत। उस समय सोम अपीतको बहुत पच्छा समझते पीर लड़ा पानोद करति है।

हिन्दुध्यानमें बासक रहे कड़ा खेसा खरते है। अपीत लड़ानिके लिये दइके संधेदिवा बय प्राचोर वा सिषी घुचको लखं गाथापर बन्नी गाङ्गा वा बांभना पड़तो है। इस बजौर एक पोकोन खतरो समतो है। अपीत लड़नेके इसी खतरी पर पाकर बैठता है। खतरीमें कपड़ेका आब रहता है। इस आबमें एक छोरी समती को मूमिपर अटका करतो है। छोरी मोचेके खींबनेपर खतरोका आब चारो पीरके अपरको समर बन्द हो जाता है। ख खीर बाइये कबूतर मूलके पा खतरीपर बैठता, तब पिताको मोचेके छोरी खैपता है। इसी खतरीका आब बन्द होवे हो कबूतर फंसता है। फिर खतरीको बरारी ठोके कर उतार देते पीर मन्नामत खपातको पबड़ लेते है। यह पपना ज्ञान पृथ पबवानता है। कलकसेके कबूतर मिर्जापुर पीर पकाडाबादके छटते मो पपने ध्यानपर या पड़ते है। खतमान बुतोसोय महा धमरमें इनके इकरके लहर पय पड़वानेमें बड़ा साहाय्य बिवा है। पूर समय मो कबूतर इरकारिका काम करति है। कटूके बिषी कविने कहा है—

“कबूतर बिबरण के बने पानेवार नर।
 नर बतानेको बने है खेबिने” शोकर वर १”

काठ या बांसके बिज खरमें रहे रखते, उसको बासक खरति है। इसमें एक एक काड़ा कबूतर रहनेको दररे बने जाते हैं। लनोंमें पिताको रहे पिता पिता सभ्याका बन्द कर देते है। हिन्दु ध्यानमें प्राय कबूतरको पकरा पिखाया जाता है।

हिन्दुध्यानमें रहे गीतना, घण्टा, घेखा वा मोय रीय पबिक नमता है। गीतना निबलनके खपातको अकमें मोयने देना न जाडिये। फिर तारपीनका तिल पुपड़नेके लख रोम पारोख होता है। प्राय कङ्करीपर रहे रोदमें रखते पीर लड़कनका एक मोम खिनावा करति है। उखापर मो यको पोपब बनता है। यखा जानेब खरलोके देवका पबोता बसा म्ब पिखाया

जाता है। होमियोपथिके मतका कोई कोई औषध इसके लिये विविध उपकारी है।

गिरहवाज कवृतर प्राक्तागने उड़ते या भूमिपर उतरते समय उलट-पुलट गिरह लगता है। यह पक्षी जातिशास्त्रभावसिद्ध कार्य है। इस कामकी गिरहवाजी कहते हैं। कोई कोई कवृतर वही गिरहवाजी करता है। गिरहवाज एकवार उड़नेमें बहुत लंबे चढ़ता, इसीसे अनेक समय श्रेण (शिकरा) पक्षी द्वारा मारे पड़ता है। फिर कोई कोई एक-द्वारगी ही दोनों और गिरह लगा उड़ सकता है। एक प्रकारका गिरहवाज वांसी चढ़ता है। किन्तु पड़ा पक्षी पृथे तौरपर गिरहवाजी कर नहीं सकता, घोडा-बहुत घूम फिर सीधे चढ़ने लगता है। जो गिरहवाज अति चतुर दूर जा गिरहवाजी करता, उसे गरमाया सम्भना पड़ता है। गर्म होनेसे अधिक दूर उड़ना असम्भव है।

क्या गोना, क्या गिरहवाज—सब तरहके कवृतरोंकी रूप अच्छी लगती और उनके लिये फ्रायदेमन्द भी ठहरती है। विविधतः गिरहवाज मली भांति घूम न मिलनेसे घबरा जाता है। आतपहीन स्थान इसके लिये विषम अनिष्टकर है। गिरहवाज व्याकुल होनेसे पुच्छके पानक उमड़ने या कटनेपर आराम पाता है। यह देखनेमें अधिक बड़ा नहीं पड़ता, सधारणतः १२से १५ इंच पर्यन्त रहता है। इसकी अंगरेजीमें टम्बलर-पिजन (Tumbler-pigeon) कहते हैं।

गोला कवृतर देखनेमें अति सुन्दर लगता है। इसके भिन्न भिन्न परिवारकी आकृतिमें जो विविध देखसख आता, वह नोचे लिखा जाता है—

यन्गीदा—इस कपोतकी देखीका विविध लक्षण—मस्तकके पचाहेससे चक्रेके पार्श्वकी राह पक्षके ऊपरी भाग पर्यन्त दो स्तर उच्च पालकीका होना है। इसका एक स्तर वक्र और अपर स्तर घुटकी और मुक्त पड़ता, मध्यस्थल सीमन्तकी भांति रहता है। कैकोविन सुख, साह, सफेद और लट्टे रङ्गका होता है। घुट, पुच्छ, वक्षस्थल और मस्तक

पायः श्वेत रहता, केवल पक्षके वर्णमें ही भेद पड़ता है। फिर जो चिन्न मृदुग लगता, यह इंटक-के रङ्गमें ईपत् पीत मिला देनेके वर्णमें मिनता है। साहिका रंग निदायत काला रहता, लिभमें कुछ कुछ नीलापन भलकता है। दोनों पक्षीपर ही उल्ल वर्ण होता है। फिर गलटेगवाले पूर्वोक्त दोनों स्तरोंमें पानककी शिखायें इन्हीं उन्ही वर्णोंकी उभय पड़ती है। विनकुल सफेद और कुछ बेंजने नगनेवाले खाकी रंगका कैकोविन (कलगीटार) भी कहीं कहीं मिला जाता है। इसका चट्टु ईपत् जुट्ट प्रार चक्रेके मणिका चतुष्पार्श्व अमित होता है। पक्षके ग्रेप बडे पानक तीन ही रहते हैं। यह अति भोर होता है। अंगरेजीमें इस वर्णोंकी कैकीवाइन और जाक (Jacobine and Jack) कहते हैं।

म्या—सुट्ट अणोका कपोत है। नन्हेका विविध चिन्न पुच्छके पानकीका मयूर-पक्षी भांति सर्वथा छत्राकार रहना है। ऐसे कवृतरकी पुरानका कहते हैं। साधारणतः जिनके पुच्छमें पानकपूर्व छत्राकार नहीं आते, वह पावे लका कहते हैं। पूरे लकेका वर्ण समस्त श्वेत होता है। फिर वर्ण अधिक उज्ज्वल सफेद रंगकी भांति रहते इसकी रंगनी लका कहते हैं। कोई कोई पूरा लका विनकुल काता भी रहता, जो देखनेमें अधिक मनोहर नहीं लगता। पाधा लका सफेद, काला नीर विसुनकालाके रङ्गका होता है। जो लका देखनेमें गानावर्णविशिष्ट और सुन्दर रहता, उसका नाम नकूदा पड़ता है। पूरा लका भूमिपर सुगते समय बहुत पच्छा लगता है। यह बंट जाते या चलनेकी पेर उठाते अपना गलटेग कुछ झुका ऐसे सुन्दर भावसे झिन्ताता, कि देखते ही हृदयमें आनन्द उमड़ आता है। दो-एक अणोवाले लकीके मस्तकपर चोटो नहीं रहता। किन्तु सकलके ही पैरोंमें पर हाते हैं। अंगरेजीमें इसकी फैन-टेन-पिजन (Fantail pigeon) यानी लमपरा कवृतर कहते हैं।

मैरको—साह, सुख, लट्टे, गहरा लका और

आज़ीरो पगौरह तरह तरहके रङ्गोंका होता है। इसके विषय विज्ञानमें बहुतके मूलधे बहुतसे पद्यात् पचट (गुहो), घट एवं पचको राह पुष्पके मूल पर्यन्त एकमात्र वर्ण रहता और निम्न चक्षुषी नौधे मलदेय, बघजल, पचका निजामय तथा पुष्पका पाकक श्रेत देख पड़ता है। फिर बघोवृद्धिसे साय जयनदेय चक्षुषिके प्रत्ये पठक पाककसे उंच जाता है। इस जातिका अपोत बहुत बड़ा होता है। योराओ देखनेमें प्रति सुन्दर समता बिन्दु गम्भीर भीमकाय और बलगामो रहता है। कुछ योराओका रङ्ग बिलकुल काक नहीं होता। इसमें बिन्दुके बर्णपर ईपत् छप्याम पोतका भाग हो पबिक देख पड़ता है। आइ योराओका वर्ण बार नोकबचकुल छप्य जगता है। उटं योराओ हरिताम बिजय जाता है। योराओ योराओ देखनेमें सुन्दर और आइये नभमजात रहता है। आज़ीरो आओहोते मो पाकक, बघ, घट, पच तथा पचट (गुहो)का वर्ण श्रेत समता और बेलनो मिका बूद बूद दाम पड़ता है। एकरी योराओको बघ एवं उदरमें मिय बर्णका एक सुद पाकक रहनेसे गुलदार कहते हैं। गुलदार योराओ देखनेमें प्रति सुन्दर समता है।

हन्ना—प्रधानत दो श्रेणिका होता है—आइ और बन्धेदार। यह देखनेमें प्रति सुन्दर रहता है। इसके विषय विज्ञानमें बहुतके अथर बहुतके उपरिमानसे शिषाके कोक पर्यन्त मस्टक बन्धेदार सफ़ेद जगता और दामो पच तथा समस्त देखका अन्य बर्ण पड़ता है। यह प्रति सुद जातिका अपोत है। फिर मुक्ता जितना ही सुद रहता, जतना ही सुदम्य जयता है। यह मो नन्धेका तरह गर्दन चिक्ता और पचट (गुहो) उठावे समय सुन्दर एवं शीतबसम्यक देपाता है। आइ मुक्तामें उल्लयकता पबिक होती है। इसका मो मलदेय नागार्धमिषित बिजय रहता है। मिया आइके सुदरे रङ्गके मुक्ताको ही बिधुके समान बन्धेदार कहते हैं। प्रसुर बिज सुदय बचविशित मुक्ता बहुतविशयकर होता है। इसके पेरमें पर नहीं रहता। बिन्दु मस्टक पर मिया निजल

पातो है। मस्टकका श्रेतवर्ण बहुतके मधे या मल देयमें देख जानेसे इसको दामी मुक्ता कहते हैं। दामी मुक्ताका मूल्य एवं पादर पथ रहता और रूप भी ईपत् बिधो जयता है। बिहापतो मुक्ताके मस्टक तथा म्यचवासी तीन बड़े पाकक और पुष्पका बर्ण जाता होता है। मिया कुछ बड़ मस्टकके सम्पुच कुछ पातो है। गामका बर्ण श्रेत रहता है। यहाँ तीन प्रकारका मुक्ता होता है। इन तीनों श्रेणिकासे अपोतके मस्टकका बर्ण यथाक्रम छप्य, पोत और रज समता है। फिर मस्टकका पच, पच एवं पुष्पके बड़े पाककीमें भी रहता है। पगरीओमें इधे नग पिजल (nan pigeon) यामो बेरागन कहते हैं।

श्रीरामना—बहु खोड़ी मधे होती है। बहुतके चतुष्पाखं और नासिकाके मूलमें बचके अथर ईपत् रङ्गम मोमक भापके बड़े बड़े फूल पड़ जाते हैं।

श्रीरामना—विषयत्यये मस्टकपर मिया और पादमें पाककका बिकाम दिखाता है। पेरमें पड़के पाक को पर रहते, बघ बहुत बड़े समते हैं। आडियाका देखनेमें पबिक सुदम्य नहीं होता। योराओको तरह यह मो प्रति सुद एवं भीमकाय रहता बिन्दु माहुपपूर्व गम्भीर माबके बढेसे चपनेमें कुछ मोम दर्यनस रहता है। आडियाका मिय बिधो बिधो श्रेणिका चक्षु ईपत् छप्याम जयता है। इनमें सुधेका मध्या ही पबिक है। फिर सफ़ेद जाका चोटियाका भी होता है। यह कोटरमें बेट सुदरन् मस्ट निजाका करता है। उक्त मस्ट खरते समय मलदेयका पच्यनाररु आधावार फल उठता है। उक्त आधावार या आब को चंगरीओमें जय (Crop) और इस श्रेणिका अपोतको छपार (Cropper) कहते हैं। पेरके पराओ देख कोई इधे फ्लाइट पिजल (Fly-bighed pigeon) भी बघ देते हैं।

मज्जा—दो प्रकारका है—आइ और सफ़ेद। यह प्रति सुदकाय जाता है। इसके चक्षुषी मोये बघाप्यक पर्यन्त समस्त आन देओको तरह फूल

उठता है। अंगरेजीमें इसे पोउटर पिजन (Pouter pigeon) कहते हैं।

नोटन—एक प्रकारका चूड़जातीय श्वेतवर्ण गोला है। यह मछोमें लोट सकता है। इसीसे इसको लोटन कहा करते हैं। लोटानेके लिये लोटनको दक्षिण इन्डसे ऐसे पकड़ते, जिसमें हवाङ्गुठ द्वारा एक और अनामिका तथा कनिष्ठा द्वारा अपर पक्ष दवा रखते हैं। तर्जनी एवं मध्यमा गलदेशके दोनों पार्श्वसे वक्षःस्थलके दोनों पार्श्वपर पहुँच जाती है। फिर दक्षिण एवं वाम लोटनको इसप्रकार हिलाते, जिसमें घाट (गुद्दी)को एकवार दाहने और बायें हिलता पाते हैं। कोई एक मिनट ऐसे ही हिलाना मछोपर छोड़ देनेसे यह लोटा करता है। - ४१५ लोटा लगाने पर इसे पकड़ उठा देना चाहिये। नतुवा कड़ौ मछोसे टकरा मत्वा फट जाना सम्भव है। इसको अंगरेजीमें खतन्ध नाम न रहते भी टम्बलर (Tumbler) कह सकते हैं। जो एकवारगी हो बहुत लोटा सकता, उसे कवृतर वाज वैदम-लोटेन कहता है।

पाटल—(सुरघू) के पनेक भेद हैं। इसका चक्षु अधिक चूड़ होता है। गलदेशके पालक वक्षके ऊपर उत्तरामिसुखो हो नहीं रहते, दोनों पार्श्वको फुक वीचमें वालोंकी विणुनीसदृश लगते हैं। इसका समस्त गलदेश भर नहीं जाता, वक्षके ऊर्ध्व देशमें अर्ध अद्रुलि परिमित स्थान वैसा देखाता है। इस जातिका कपोत सुगठित और दृढ़काय होता है। इसको मस्तक पर गिखा रहनेसे 'टारपेट' कहते हैं।

पावरा—वर्णमें क्षणकी अधिकता लिये धूसर रहता है। चक्षु रक्तकमलकी भांति लाल होते हैं। चक्षु, चूड़ और क्षणवर्ण लगता है। गलदेश मयूरकी भांति विक्रम देख पड़ता है। चक्षुमें फूल नहीं पाते। चक्षुको भावरणी क्षणवर्ण रहती है।

बरा—मस्तकसे गलदेश पर्यन्त क्षणका अधिक लिये धूसर रहता है। फिर शृष्ठ और वक्षस्थल पाटल तथा श्वेत विन्दुयुक्त होता है।

ब्रूगिया—रक्त एवं पीतमिश्रित होता है। फिर चक्षु रक्तवर्ण रहता और चक्षुके पार्श्वपर फूल पड़ता है।

दर्याणो—देखनेमें खर्वाकार लगता है। इसका चक्षु चूड़ होता है। इस कपोतका गलदेश पर्यन्त मस्तक और मुच्छ एकवर्ण रहता, मध्यस्थल श्वेत पड़ता है। जिसके मध्यस्थलमें गुल निकलता, उसको कवृतरवाज गुल-टरयायी कहता है। यह क्षण, रक्त और पीतवर्ण होता है।

वगशरी—देखनेमें काशा होता है। इसका चक्षु प्रायः डेढ़ इंच लम्बा और उसका पश्चिम भाग टेढ़ा रहता है। बड़े बड़े चक्षुकी पार्श्वमें फूल पड़ जाता है। यह एक इन्ड पर्यन्त दीर्घ होता है। किसी किसीके कथनानुसार यह कपोत तुर्कीके बुगदाद नगरसे इस देशमें आया है।

उलूक-जातीय—प्रवादानुसार उलूक और कपोतके सङ्गमसे उत्पन्न है। यह देखनेमें श्वेत और खर्वाकार होता है। फिर कोई कोई उलूक सदृश भी देख पड़ता है। यह उलूककी भांति वोलता है।

गिरहवाजोंमें नीचे लिखे कवृतर अच्छे होते हैं—
पशका—देखनेमें सफेद लगता है। चक्षुके पार्श्वपर सरसों-जैसा एक चूड़ चिह्न अथवा पक्षपर कलङ्क रहता है। संप-सदृश क्षण चिह्नविशिष्ट अक्षुका अधिक चिह्नयुक्त गावक उत्कृष्ट जातीय समझा जाता है।

उदा—पीताधिक्य रक्तवर्ण देख पड़ता है। पक्षपर रेखा रहती है। फिर चक्षुके मध्य दो गोलाकार दाग होते हैं।

कागरी—सफेद होता है। इसको चक्षुमें वर्णविशिष्ट कलङ्क रहनेसे मोतीचूर कहते हैं।

शतनी—ईपत् पिङ्गल रहता और चक्षुमें गोलाकार कलङ्क लगता है। इसमें स्त्रीजातिकी संख्या अति अल्प प्राती है।

इस परिवारवाले दोवाजके पक्षमें पनेक पालक श्वेत होते हैं। जिसके पक्षमें केवल एकमात्र पासक श्वेत प्राता, वह एकवाज कहाता है।

पाकनी—द्वेषनिर्मित तरल घृसरण्य होता है।
रसका चक्षु र्धत रजता है।

ध्रुव—प्लाहा, चीना और मामूखी तीन ये चीनी
विभक्त है। प्लाहको पूरु काको या कास होती है।
नलेमें कयो जपटे और पांशुमें मोर दाग्र रहती है।
चीनाके मसिमें कितनो ही कान कोंटि पड़ जातो है।
पांशु रङ्गीन रहतो है। फिर लसमें दो मोर दाग्र भी
होते हैं। प्लाहा और चीना दोनों देखनेमें बहुत
पक्के लगते हैं। मामूखी सफेदेके पङ्क, गलदेय
और पुष्कमें लफट रहता है।

रूप—इस कपोतके बसदेय, इह एव पुष्कमें सखेद
और काको कोंट रहतो है। फिर कियोके किलक पङ्क
और लसमें जो कलक देख पड़ता है।

रचना—देखनेमें माड़ घृसरण्य होता है। पचपर
ही दो रखा रहती है। यह कपोत काकी, लबर और
कङ्कानके हिस्साके मन्ना सुरा समझा जाता है।

पंजीय जगतत्ववेत्ताकोके मतके कपोत और
समुद्रका वाधारक नाम कोलम्बिडो (Columbidae)
है। यह प्रधानतः मध्य या औशन धारक करती है।
फिर इन्में भूमिपर भूम भूम पुनना पक्का समता
है। इनमें पक्षिवायका बर्ष मोर रहता है।
एवं और समानके पशुधार कपोतकी तीन श्रेणो
उहरायो गयो है। १म कपोकोमिनो (Lopholo-
mbus) पर्यात् कङ्कगीदार, (Crested pigeons)
२य कोलम्बिनो (Columbinae) पर्यात् लक (Wood
pigeons) और ३य कोलम्बिनो (Columbinae)
पर्यात् पार्वक्य (Rock pigeons) कपोत।

प्रथम श्रेणीको एकमात्र कालि याजकलक चङ्गे-
कियामें देख पड़ती है। इय कपोतके मध्यकपर
म्यरको चूहाके समान दिगुष गिषा रहतो है।
पंजीको समतलमें इयोकी काकोकोमध पाप्यटिंजस
(Lopholaimus antarcticus) पर्यात् दक्षिण महा
सागरीय दिगुष गिषातुल्य कपोत कहते हैं। २य
श्रेणीमें एक प्रकार केकोम जमक लिये पतली पाप्याको
रहता कङ्कुर होता है। यह मध्य भारतके पूर्वा र्धके
असुदीयकूलपर्यन्त सबल कानमें मिलता है। पाप्याम,

पाराधान पोर समये कोपमें मो इसको बंजा यपीट
है। हिमालयके मध्यपदेयमें एको कालिका एकप्रकार
गिषातुल्य कपोत होता है। रसका चक्षु र्धत मनो-
हर समता है। दारबिन्दुके निकट इह कालिके
को एक प्रकार कपोत रहते, इन्में निपाको 'नामपुष्को'
कहते हैं। फिर नीलगिरि पर्यन्तमें इयो कालिके
कोमिवाके एकप्रकार कपोत राजकपोत कहते हैं।
यह देष्में पुष्कके पासल समेत प्राय २२ इह
पड़ता है। हिन्दुस्थानके लङ्को गोरी पोर गिरिबानक
इह श्रेणीमें था कहते हैं। इय श्रेणीके पार्वक्य
कपोत कुमायू पदेयके लस, लबर एगिया और
वापानके समस्त सुरोपपुष्क पयस देख पड़ते हैं।
इनका बर्ष पक्षि मोर नहीं रहता, नीलका
पाकिष्क लिये भ्रुसर समता है। कम्पोर पङ्कमें
हिमालय पर एकप्रकार श्वेतचक्षु कपोत होती है।
यह देखनेमें पतिसुन्दर समझ पड़ते हैं।

इन सबके एवं पन्थान्य कालि वा कपोत प्रेदके
पंजीको समतलमें लिये लक्ष्यानपच पतिसुष्क
क्येय बता देना एकप्रकार पसपच है। कारक ठस
कालीय पयो न देय केवल कबिको पर्यन्तके सङ्कारे
कीरि पाकलि कल्पना कर लिखना क्येय सुकिसिद
को कहता है। इयोके पंगरीको जगतत्वके पशुधार
समस्त कालिके लक्षणाचक्षु नहो निषे।

कपोत पति सुखे प्रायो है। पति सामान्य
पशुच पोर विपक्षे इसको समूह पति हो जाती
है। हिन्दुस्थानमें कपोतको लक्ष्मीका वरपुत्र मानते
हैं। पनेकको विश्वास रहता—इये पासनेके चङ्कलका
मङ्कल बटना, दरिद्रक बटना और लक्ष्मीका दर्शन
मिलता है। फिर इसके परका बाहु मनुष्यके शरोरमें
लनमेंके शर्वरोग दूर होता है। इयोके कितने ही
योग कपोत पासते हैं। वन्य कपोतको धङ्कमें था
बसने पर कीरि नहीं उहता। कलकलेमें कङ्कुरो
पोर हिन्दुस्थानो महाजन अपने अपने व्यवसायके
स्वाममें सपन्न कपोत प्रतिपासक करते हैं।

मनुष्यके पक्षाधारक पञ्चबहायने राजकपोतका
एक पर्यूर्णुष पाकिष्कत कृषा है। यह पक्षिनि

पर दूर देशसे लिपि आ सकता है। इसका पक्ष अत्यन्त सबल होता है। आश्चर्यका विषय देखाता—इस योणीके कपोतमें जिसका पक्ष जितना सबल आता, वह उतना ही अधिक ली जाता है। यह स्वभावतः दीर्घकाय और बलिष्ठ रहता, किन्तु देखनेमें अति सुन्दर लगता है। राजकपोत हिन्दु-स्थानी कौटिल्यालेके अन्तर्गत है। आजकल इसके द्वारा लिपि प्रेरणकी बात अधिक सुन नहीं पड़ती। पहले तुर्की राज्यमें उक्त प्रथा बहुत चलती थी। आज भी वहां कहीं कहीं धनियोंके पास दो-एक लिपिवाही कपोत विद्यमान हैं। ११४७ ई०को बुगदादके सम्राट् नूरुद्दीन सुहम्बदने यह प्रथा चलायी थी। फिर १२५८ ई०को बुगदाद नगर मङ्गोलियोंके हाथ पडनेसे यह प्रथा रहित हुयी। फ्राङ्को-रूसिया युद्धमें भी यह कपोत देख पड़े थे। थोड़े ही दिन हुये कनकत्तेकी बडी अदालतमें एक पत्रवाही कपोत आ गया था। अगरेजीमें इसे कारियर पिजन (Carrier pigeon) अर्थात् चिट्ठे पहुँचानेवाला कवृत्तर कहते हैं। वर्तमान युरोपीय समरमें इसने कुछ कम काम नहीं किया।

लिपिवाही कपोतको सिखानेमें बहुत यत्न, आधीस और समय लगता है। शावक परिणत होनेपर एक स्त्री और एक पुरुष निकाल एकत्र रखना और यद्येष्ट प्रणय उपजानेकी यत्न करना पडता है। फिर पत्र लानेके स्थानको इन्हे पिंजडेमें डाल भेज देते हैं। इनमें एकको पृथक् कर कहीं ले जानेपर दूसरा भी उड़ उसके पास निश्चय पहुँच जाता है। बहुत पतले और कडे कागज़पर पत्र लिख किसी पक्षके पालकमें आलपीनसे नली कर देते हैं। आलपीनका सूक्ष्माग्रभाग शरीरकी बाहरी ओर रहता है। फिर उडा देने पर यह उसी घरमें जा पहुँचता, जिसमें इसका खोडा रहता है। वासस्थानके प्रति अत्यन्त ममता बटनेसे एकमात्र कपोत पालनेसे भी काम चला सकता है। इसी प्रकार शिचित कपोत जहा संवाद लेना आवश्यक आता, वहां किसीके हाथ सौंप भेज दिया जाता है। पूर्वोक्त

रूपसे लिपि लगा देनेपर कपोत प्राणपणसे उड प्रतिपानकके गृह आ पहुँचता है। इसको सिखानेमें प्रथमतः घर भूल न जाने और बडी दूरसे लौट आनेके लिये पाव कोस दूर ले जाकर हीडना पडता है। पाव कोस अभ्यस्त होनेपर आधकोस, धीरे-धीरे एक, दो, तीन, चार, पांच कोस पर ले जाकर इसे छोड़ते हैं। पीछे आमान्तर और अवशेषको देगान्तर ले जा इसे सिखाना पडता है। यह अति शीघ्र सीखता है। शेषको इतनी समता पाता, कि यह समुद्र पार भी आता-जाता है। शिचित कपोत एक घण्टेमें २० कोस उड सकता है। अधिक दूरसे पत्र मंगानेको इसे उडानेके पहले आठ घण्टे अनाहार किसे अभ्यकार गृहमें बन्द कर देते हैं। शेषको छोड़ने पर एकवारगो हो अति ऊर्ध्व देगसे उडते उड़ते चुधाकी ज्वालामिं प्रभुके निकट आ पहुँचता है। सुनमें आया, कि समुद्र पार करनेमें कितने ही कपोतोंने पानी पर गिर अपना प्राण गंवाया है। कुहरा पडने या पानीकी भड लगनेसे यह सहज और स्वल्पायासमें उड नहीं सकता। सुतरा ऐसे समय उडाने या राहमें ऐसा समय आ जानेसे इसपर अत्यन्त विपट् पडती है।

यह प्रथा केवल तुर्कीमें ही न रही, पीछे युरोपके माना स्थानोंमें चल पडो। पहले मिसर, पालेस्ताइन, तुर्की, अरबस्थान और ईरानमें युद्धके समय जय-पराजय, सैन्य आनयन, खाय अम्राचुर्य प्रवृत्तिका संवाद इस कपोत द्वारा सहजमें सम्पन्न होता था। इङ्ग्लैण्डके विलासो धनी लोग भी उस समय इनके द्वारा प्रणयिनी और वन्धुबान्धवके निकट संवादादि भेजते रहे।

अनुमान लगा सकते—रामायण महाभारतादिके समय भी भारतमें पक्षीके मुखसे संवाद भेजनेकी प्रथा चलती थी। महाभारतमें एक गल्प लिखा है—गृहमें ऋतुमती और कामातुर पत्नी छोड़ चेदि-देशाधिपति महाराज उपरिचर पिताके निदेशसे रुगयाकी गये थे। वहां वृक्षको छायामें श्रान्ति दूर करते-समय पत्नीकी स्मरण पर लाते हो उनका रतः

मिर पड़ा। महाराजने उद्विग्न हो उस रीतको पक्षेकी दोनहीं भर धोर बिची झेन पक्षीको धौपकर पक्षीके निबट भेवा था। झेनने बह दोगा सुखमें दबा बेदिराजधानीके धर्मसुख जाते जाते बिची दूसरे झेनके भ्रगङ्ग कि क दिया। इससे मत्पक्षके उदरमें व्यासको जननी मत्पक्षमन्वाका लक्ष हुआ। लक्ष लपाख्यानसे समझ पड़ेता—झेनपक्षी भी विधित होनेसे विपिबहलका कार्य कर सकता है। एतद्विषय नक्षदमयन्त्रीमें 'इसपूर्व' को कहा मिश्रती है। दमयन्त्रीका पोषित इस पाकर नक्षसे उनके रूपका उत्कर्ष बता गया था। यह लपाख्यान इतने दिन कबिकी कल्पना मान उपेक्षित होते रहे। किन्तु जब कपोतके इस प्रभावको बात सुनी, तब लक्ष पाराचिक लपाख्यामिसे धर्मसुख होनेको अज्ञा घटी।

इस देखते—प्रायः सबस धी देगोमें लोग कपोतको पवित्र पक्षी समझते हैं। भारतवासी इपे लक्ष्मीका वरपात्र कहते हैं। फिर महा नगरमें कपोतेश्वर नामक मिरसिद्ध धोर कपोतेशो नामी मन्वाको मूर्ति विद्यमान है। प्राचीन पार्श्वतोया देगके राजा इसको परम भक्ति करते थे। परब देगके इहवृक्षाय नील कपोतको मन्वासखान मिश्रता है। सुसलमानीके धर्मदन्तमें इसे 'अर्गपूर्व' कहा है। सुसलमान् बताते—सुसल्यद जब लुख खानना चाहते, तब जयसे कपोत या उनके खानमें सब बात सुनाते थे। मन्वेके खानमें यह प्रति यज्ञसे पाले जाते धोर सुसलमान् इन्ने खानेको सुमरो समझ खमी नहीं खाते। यहही पंगरैव भी कपोतको होली बर्ड (Holy bird) पर्यान् पवित्र पक्षी समझ पाहर करते थे।

इसारे सुराधर्म भी लिखते—मिषि राजाको दान शीलता देखनेको धर्मि कपोत धोर इन्द्र झेनका रूप बना उनके निबट लपयित हुये। कपोतने झेनके भक्षसे भीत हो मिषिके कोङ्गमें पक्ष पात्रय मांगा था। मिषिके मरवागतको बचा धोर झेनको तुष्ट करनेके बिधे धर्म देहका समस्त मांस यथा मन्वालय पावा। इसीसे कपोतका नाम धर्मि मूर्ति पड़ा है।

इसारे पाहुवेद माध्वमें इसके मांसका मुपाहुव

लिखा है। महर्षि परबसे मतसे कपोतका मांस खपाय, महुद, शीतल धोर रक्षपित्तनायक है। शरीत लये इहवृ, बलकर, वातपित्तनायक, उद्विगर, यक्षबधक, इषिकर धोर मानवको हितकर बताते हैं। फिर मावमिषने कपोतके मांसको शुद्ध, लिण्ठ, रक्षपित्त एवं वाहुनायक, संघाशी, शीतल, लक्ष्मी हितकर धोर शौर्यबर्धक कहा है। सुश्रुत तथा वामदेके मतमें कपोतका मांस शुद्ध, लक्ष्ण-शुद्ध, आट्ट धोर पर्यदोषकर होता है। इन्नेकी।

(श्लो०) शीवीराध्वन, सुरमा। २ कपोताध्वन, मूरा सुरमा।

कपोतक (स० श्लो०) कपोत इव कपोतवर्षवत् कायति प्रक्षामसे, कपोत श्ले-क। १ शीवीराध्वन, सुरमा। २ कपोताध्वन, मूरा सुरमा। (पु०) १ सुश्र-कपोत, जोडा कवृतर। ३ शाय कोङ्गमिषी एक रीति। कपोतकनिवादी (स० पु०) पक्षका एक वातव्याधि, पीडेको होनेवाली बाईकी एक बीमारी। कठिनतासे लठाने पर भी जो जोडा भूमिपर मिर पड़ता, बह इस रोगसे पोषित ठहरता है। कपोतनिवादी होनेपर पक्ष सुनिबलसि होता है। (बल्लव)

कपोतकीय (स० श्लो०) कपोतोऽस्त्वप्य, कपोत-ह-लुक् च। नगतोऽह्, न गतर। कपोतशुद्ध, कवृ-तरसे भरा हुआ।

कपोतकीया (धं० श्लो०) कपोतशुद्ध देय, कवृतरसे भरा हुआ शुद्ध।

कपोतकम् (सं० पु०) कषाटकम् इत्य, केंटुवा।

कपोतचरवा (ल० श्लो०) कपोतक चरचरचवत् पाबातेऽस्त्वप्याः, कपोत-चरच पर्यं पादित्वात् पच्-टाप्। १ नलीनामक यन्त्रक, एक प्यगुहार चोत्र। २ धौरिका, धिरनी।

कपोतपर्षी (धं० श्लो०) एका, इलायचीका पीङ्ग।

कपोतपाक (सं० पु०) कपोतक पाक शिष्यः, ६ तत्। १ कपोतमिष, कवृतरका बचा। २ पार्ष्वम आतिमद, एक पहाड़ी कीम।

कपोतपाद (सं० श्लो०) कपोतक पादाविव पादो यच्च, इरवादिनात् नाम्यकीयं। चरक कीदृश्यादि-। क

शमः १८। कपोतकी भांति पादयुक्त, जो कवूतरकी तरह पैर रखता है।

कपोतपालिका (सं० स्त्री०) कपोतान् पाक्षयति, कपोत-पाल-णिच्-खुल् स्वार्थे कन्-टाप् पत इत्वम्। मिट्ट, काबुक, दर्भा, आशियाना, विडियाखाना।

कपोतपाली (सं० स्त्री०) कपोतान् पालयति, कपोत-पाल-णिच्-णञ्-ढीप्। कपोतपालिका, काबुक, दर्भा, कवूतरकी छतरी।

“विश्वं मया हृदिमदविषं” : कपोतवाचीषु निदिशकानाम्।” (भाष)

कपोतपुट (सं० स्त्री०) औषधपुटभेद, दवाको एक तह। जो पुट प्रष्टसंज्ञक वनोपलमे खातमें दिया जाता, वही कपोतपुट कहता है। (मारप्रहाय)

कपोतपुरीष (सं० पुं०) पारायतविष्टा, कवूतरका बौट। यह व्रणदारण होता है।

कपोतराज (सं० पुं०) पारायतप्रभु, कवूतरकी राजा या सरदार।

कपोतरैतस् (सं० पुं०) प्रवरसुनि विशेष।

कपोतरोमा (सं० पुं०) १ राजा रघीनरकी पुत्र।

कपोतरूपी अन्निके वरसे इनका जन्म हुआ था। (भागव, वन १८६ पं०) २ यष्टुवंशीय कुकुट नृपतिके पौत्र। (सत्य श ३८ पं०)

कपोतलुब्धकीय (सं० स्त्री०) कपोतं लुब्धकश्च अघि-हृत्वा हती अन्धः, कपोतलुब्धक-ह। महाभारतके पान्तर्गत आख्यायिका विशेष। इसमें कपोत और लुब्धकके मध्यच्छलने उपदेश दिया है—गृहस्थकी प्राण टेकर भी अतिविमत्कार करना चाहिये।

कपोतवक्षा (सं० स्त्री०) काकमाची, किवैया।

कपोतवक्त्रा, कपोतवक्त्रा देखो।

कपोतवद्वा (सं० स्त्री०) कपोतो वद्धते प्रतापंते जनया, कपोत-वन्च् करणे धक् कुल्वं टाप् घ। ब्राह्मी, एक वृत्ती। ब्राह्मी देखो।

कपोतवर्ष (सं० त्रि०) धूसर, चमकीला भूरा, कवूतरका रङ्ग रखनेवाला।

कपोतवर्षा, कपोतवर्ष देखो।

कपोतवर्षी (सं० स्त्री०) कपोतस्य वर्षं इव वर्षी यस्याः, भौरादित्वात् ङीप्। घुसैसा, छोटो इलायची।

कपोतवह्नी (सं० स्त्री०) कपोतवर्षा वह्नी, मध्यपदकी०। ब्राह्मी, एक वृत्ती। युक्तप्रदेशमें यह वस्त्रा किनारे होती है।

कपोतवाण (सं० स्त्री०) कपोतपाट इव यो वाणस्तद्वत् आकारा यस्य। गलिका नामक गम्भद्रथ, एक सुगवूदार घोड़ा।

कपोतविष्टा (सं० स्त्री०) / कपोतपुरीष देखो।

कपोतवृत्ति (सं० त्रि०) कपोतानां वेगो वृत्तिरिव वृत्तियस्य वृद्धी०। १ मध्ययज्ञान, दूरदृष्टा न करनेदाना, जो कवूतरकी तरह रोज़ कमाता-खाता है। (स्त्री०) २ मध्ययग्न्य जीविका, जिस रोज़गारमें कुछ जोड़ न सके।

कपोतवेगा (सं० स्त्री०) कपोतानां वेगो गतिरिव वेगः द्रुत-वृत्तियस्याः, मध्यपदकी०। ब्राह्मीनामक मद्यानुष, एक भांड।

कपोतव्रत (सं० त्रि०) १ कपोतकी भांति कष्ट पतने भी मौनधारण करनेवाला, जो सताया जावे भी कवूतरकी तरह धोखता न है। (पुं०) २ कपोतका अन्न, कवूतरका अष्ट। मौनधारणपूर्वक ताड़नादि मष्टन करना कपोतव्रत कहता है।

कपोतघार (सं० स्त्री०) कपोतवर्ण इव मारः क्षण-वर्षी यस्य, वृद्धी०। स्रोतोऽखन, सुरमा।

कपोतहस्त (सं० स्त्री०) उपासनाके समय हाथ जोड़नेकी एक रीति।

कपोतहस्तक, कपोतहस्त देखो।

कपोताचनदो—बद्रानकी एक नदी। चत्तिस भाषामें इस कपोतक कहते हैं। नदिया जिनमें चन्द्रपुरके निकट मायाभागा नदोमें यह निकली है। उत्पत्ति-स्थलसे थोड़ी दूर पूर्वकी ओर घन नदिया और यगोरके मध्य यह दक्षिणामिसुग्री हो गयी है। इस स्थानपर वही नदी नदिया, चौबोसपरगना और यगोर जिलेकी सीमाको निर्देश करती है। चौबोसपरगनेके प्राशासनासे ५ मील पूर्व 'मरीहाय गढ़ा'में कपोताच नदी जा गिरी है। गढ़ामें कच्छकत्तेसे नौका आया-जाया करती है। उक्त गढ़ाके सहस्रस्थानसे २ मील दक्षिण इससे पूर्वसुख यगोर

जिसेका 'चांदखानो' नामका निबन्धा है। चांदखानो
नामके सुपथे पद्या० २२ ११' ३० ७० चौर देगा०
८८ २०' पू० पर रहने कोक पटुवा नदी था मिसी
है। इन दोनों संयुक्त नदियोंके सहस्रमस्यरूपे दक्षिण
कर्णों इषे पांगासो, कर्णों बाङ्ग, कर्णों पांगा, कर्णों
नामगाट चौर कर्णों समुद्र कर्णों हैं। सागरके निकट-
वर्ती स्थानपर इसका नाम मारुह है। यह पर्वतीयको
मास्य नामसे ही शङ्खोपसागरमें प्रविष्ट हुयी है।

यशोर जिलेमें इस नदीके तीरे सागरटाँड़ी नामक
एक सुंदर पाम है। १८२८ ई०को इसी पाममें
बहासके प्रसिद्ध कवि चौर भिखनादयब तथा
प्रभाङ्गनादि काव्यके प्रथिता मारुहेल महसुदनने कथ-
पद्य लिखा था।

कपोताक्षि (सं० स्त्री०) कपोतक्य चक्षुः इव, 'उपमि०।
नमिषा नामक गन्धद्रव्य, एक क्षुद्रद्वार चीन्हा।

कपोताक्षन (सं० स्त्री०) कपोतवर्णं पञ्चमम् मध्य
पदमी०। स्त्रोतोक्षन, सुरमा।

कपोताक्षीपमफल (सं० स्त्री०) निम्बमेद द्विषो
द्विष्याका कायत्री मूत्र।

कपोताम (सं० पु०) कपोतस्य पामा इव पामा यथ,
सम्भवदसो०। १ कपोतवर्णं, पोखा या मैला मूत्र
रङ्ग। २ मूत्रिकविशेष, किमो द्विष्याका चूड़ा।
इसके काटनेसे दृष्टिस्थान पर पथि, पिङ्गवा चौर
गोयकी उत्पत्ति होती है। फिर उससे पात्रु विरल,
काय चौर रङ्ग चारी विगङ्ग जाते हैं। (इहण्)
(त्रि०) ३ कपोतसदृश वर्षाविशेष, चमकोना मूत्र,
यो कबूतरका रङ्ग रचता है।

कपोतारि (सं० पु०) कपोतानां परिमार्हणः, इ तत्।
श्रेणपयो, बाहू चित्रिया।

कपोतिका (सं० स्त्री०) कपोत पाटो कञ् टाप् यत्
इत्तम्। १ कपोती, कबूतर। २ चापवन्मूल जिमो
किष्की मूत्रो।

कपोती (सं० स्त्री०) कपोत-स्त्रीम्। १ कपोतजातिकी
स्त्री कबूतर। २ यज्ञोप यूपविशेष। ३ पिङ्गुकी,
कायुता। (त्रि०) ४ कपोतपुत्र कबूतर रचने-
वाला। ५ कपोतसदृश पाचारुद्रुह, जो कबूतरको

यज्ञ रचता है। ६ कपोतवर्णं, कबूतरका रङ्ग
रचनेवाला।

कपोतीश्री (सं० स्त्री०) कपोतीश्वर-स्त्रीम्। पार्वती,
दुर्गा।

कपोल (सं० पु०) कपि पांसुत् लक्षोपः। चरक-
वृत्तिप्रतिभिन चीनम्। ७७ १५९। १ मण्डक, मत्सा।
२ मण्डकस्य, गाल। यह कस्यासे सिद्धता भयसे
उत्पन्ना, प्रीयसे क्वयता, इयसे शिथला, धामाविह
भावसे मन रहता, कठसे मध्य पङ्कता चौर उत्साहसे
पूषं लगता है।

कपोलकल्पना (सं० स्त्री०) पञ्चलक कल्पना, मठ बात।

कपोलकल्पित (सं० त्रि०) पञ्चल भूट।

कपोलकवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

कपोलकाय (सं० पु०) कपोलानां काय (कल्पने
पनिन इति काय) कर्षणसामम्। १ इक्षिगण्डकाय,
हाडोको बनपटो। २ सुधादिना प्लव्यकान, दायोके
पपनी बनपटो रमङ्गिका मुकाम, पिङ्गवा पत्रा।

“नीचमिः इरकरीका चरेचकाणः” (कारि)

कपोलमोदुवा (सं० पु०) मण्डकसोपधान, गलतकिया।

कपोलफलक (सं० पु०) कपोलः फलक इव। प्रयत्न
गण्डकान्, चपटा मास। सम्प्रतः कपोलाक्षिका ही
कपोलफलक कहते हैं।

कपोलमिति (सं० स्त्री०) कपोला मितश्च इव, उपमि०।
विश्रुतकपोल कम्पा-चोड़ा मास।

कपोलराम (सं० पु०) मण्डकलको रजता, नामकी
चमक।

कपोली (सं० स्त्री०) लावणमग घुटनेका पत्रला
द्विष्या।

कपोला (सं० पु०) वैद्यजातिविशेष, बनिषोकी
एक बीम।

कप्तान (सं० पु० = Captain) १ सेनाको, विपक्ष-
सकार। २ पोतापक्ष, कजाङ्गका सुशाक्तिम्। ३ नावक,
पगुवा।

कप्तानी (सं० स्त्री०) १ पक्ष्यकता, घरदारी। (वि०)
पक्ष्यचक्षुस्योप, घरदारसे सरोकार रचनेवाला।

कपूर (सं० पु०) कर्पट, कपड़ा।

कफ (हिं० पु०) १ अक्षिफेनस्त्रेद, प्रफीमका अर्क । इसमें वस्त्र आर्द्रकर मद्दक प्रस्तुत करनेकी शक्त करती है । २ चालनी, गिरवाचा, साफा । यह एक प्रकारका वस्त्र होता है । किसी पात्रके मुखमें लपेट इसपर प्रफीमकी शक्त करती है ।

कष्याख्य (सं० पु०) कषिराख्या यस्य, बहुव्री० । १ वानर, बन्दर । २ सित्तुक, लोवान् ।

कष्यास (सं० पु०) कपोनां आसः (आस्यते अनेन इति आसः), इ-तत् । वानरगुद, बन्दरकी पोठके सामनेका हिस्सा ।

कफ (सं० पु०) केन जलेन फलति, क-फल-ड । अदेदसि ह्यकते । पा ३५१०१ । शरीरस्य धातुविशेष, श्लेष्मा, बलगुम् । “क” शब्दका अर्थ देह और “फल्” धातुका अर्थ गति है । सुतरां इससे स्पष्ट समझ पड़ता—प्राणियोंके देहमें सर्वत्र गमन करनेवालेकी विद्वान् कफ कहता है । यह शरीरस्य सौम्यं (जलीय, क्षिप्र-गुणविशिष्ट) धातु है । हिन्दूमें भी इसे प्रायः कफ ही कहते हैं । इसका संस्कृत पर्याय—क्लेदन, सहात, सौम्यधातु, श्लेष्मा, घन और वक्षी है । कफ देहको धारण करनेसे ‘धातु’, समस्त देहकी दूषित करनेसे ‘दोष’ और क्लेद द्वारा सर्वशरीरकी मलिन करनेसे ‘मल’ कहलाता है । यह नाम, स्थान और कार्यभेदसे पांच भागमें विभक्त है—

“क्लेदये तानि शक्तानि क्लेदनयावस्यन् ।

रसनः खेदनापि श्रेष्ठः स्थानभेदेवः ॥” (सुश्रुत)

१ क्लेदन, २ अवलम्बन, ३ रसन, ४ खेदन और ५ श्लेषण कफके पांच नाम हैं ।

“पात्राद्ये ऽयं हृदये बन्धे मिरसि सन्निधु ।

स्थानिद्ये सुमुष्णापां श्रेष्ठा तिष्ठत्युदकमात् ॥” (सुश्रुत)

१ आमाशय, २ हृदय, ३ कण्ठ, ४ मस्त्रक, और सन्निस्थान—शरीरके पांच स्थानोंमें श्लेष्मा प्रधानतः रहता है । क्लेदन नामक श्लेष्माका आमाशय, अवलम्बनका हृदय, रसनका कण्ठ, खेदनका मस्त्रक और श्लेषणका आत्रयस्थल सन्निस्थान है । सर्वशरीर-ज्यापी होते भी जब यह अविच्छिन्न अवस्थामें रहता, तब वैश्वमात्र पूर्वोक्त आमाशयादि पक्षस्थानमें ही ठहरता

है । श्लेष्माके जो रक्षिग्नित पञ्चविध कार्य क्लेदनादि पृथक् पृथक् पडते, उन्हें भी इस स्थानपर लिखते हैं—

“क्लेदनं ह्येदयद्रमाशयस्य आत्रयपरान्तरि ।

अनुपपत्तिश्च श्रेष्ठास्थानात्कृत्वात्तन्पा ॥

रसमुष्णापावोर्ध्वे हृदयस्थानात्कृत्वात्तन्पा ॥

त्रिकस्य आत्रयानि विदधाधददपत्तः ।

रसनास्थानात्तन्पा रसनी रसबोधनात् ।

खेदनं खेदनापि मनसो द्वियतपत्तः ।

श्रेष्ठः सर्वशरीरां यं श्रेष्ठं विदधाधदमी ॥” (सुश्रुत)

१म—क्लेदन नामक श्लेष्मा अपनी शक्तिसे मुक्त द्रव्यको भिगाता और पित्ताकृति सकल आहारोय वस्तुको गलाता है । फिर यह भिन्न (गला हुआ) अन्न देहके अन्यान्य सकल स्थानोंमें पहुँच छदयावनम्बन, त्रिक (मेरुदण्डके निम्न एवं उपरिस्थ सन्निस्थान पर्यात् गुच्छके सन्निकट श्लेष्मास्थि तथा घाट), सम्भारण, रसग्रहण एवं इन्द्रियसमूहको शैत्यगुणसे सन्तुष्टिकरण तथा सन्निर्घोषण प्रकृति उदककर्म द्वारा प्राणुकृत्य पहुँचाता है । २य—वक्षःस्थलस्थित अवलम्बन नामक श्लेष्मा रसके सहयोग स्वीय शक्ति द्वारा हृदयको अवलम्बन और त्रिक-दिशको धारण करता है । ३य—रसन नामक रसनास्थ कफ आहारोय वस्तुसमूहके रसका घन उपजाता है । ४य—खेदन नामक श्लेष्मा श्लेषणकार्य प्रदानपूर्वक समस्त इन्द्रियकी तृप्ति लाता है । ५म—श्लेषण नामका कफ सन्निधिसमूहका संघोष (निच) विधान करता है । वाभटके मतसे—

“कफघाघाघ श्लेषापां यत् करोत्यवस्यन्तम् ।

अतोऽवलम्बकः श्रेष्ठा यत्तु आशयस्य स्थितः ।

हृदे रसः श्लेषमाश्रित्ये दनात् रसबोधनात् ।

बोधको रसनाश्रयो गिरसं स्थोऽद्विधपत्तात् ।

तर्पकः सन्निधु श्रेष्ठा श्लेषकः सन्निधु स्थितः ॥” (वाभट)

अवलम्बक, क्लेदक, श्लेषक, बोधक एवं तर्पक—पांच नामसे कफ ५ भागमें विभक्त है । अवलम्बक, श्लेष्मा पूर्वोक्त अवलम्बन कफोक्त क्रियाशील एवं स्थानगत, क्लेदक श्लेष्मा क्लेदनकी भांति कार्यकारी तथा स्थानगत, श्लेषक पूर्वोक्त श्लेषणके सहस्र क्रिया-

विमिश्र एव स्नातगत बोधक रसमन्वी भाति कार्यकारी तथा स्नातगत घोर तपंशुष्या सुदृढतोऽहं कं मनसो घट्टय द्विवाकारी एवं स्नाताद्ययो है ।

“इ वा भं दी इतः विभक्त विविक्तः शीत रस च ।
महुरसविभक्तः क्वालिगो तरुण कः ॥” (इष्ये)

घोषा श्लेत्, गुह (मारी), घिग्व, विविक्त, शीतल, महुर रसात्मक घोर विगङ्गने से लवण रस विमिश्र होता है ।

कफके श्लेष्मका कलघ घोर कल-गुहवायी, महुररस विमिश्र, पञ्चमल शिग्व, द्रव (तरल) तथा पिष्टक पक्ष सुतसंज्ञक द्रव्य, दुग्ध तथा महुररस घाने, दिनको छो जाने, घोर वायुकाक, शीतकाक, वसन्तकाक, रात्रिका प्रथमकाक, प्रमात तथा मोहनका पन्त समय पानेसे कफ प्रकृषित होता है । कफ समरमेधे प्रतिमितमात्र महुररस, शीतता, शोक्क, प्रवेक, मज प्रापुयं, क्षिरता, कवकाकता कच्छू, चासक, चिर कारिता, कठिनता, शोथ, पदधि शिग्वता, तन्द्रा, दन्ति, उपदेह, काक घोर गुहता-विमिश्रितकार लकव देह पड़ता है । कफक रोगमें कल द्रव्य चार द्रव्य, कवाय द्रव्य, तिञ्ज द्रव्य एवं कटु द्रव्यका शकन, म्याकाम, निशीवन (पचारकर युक्तता) घमपान, लण्य शिरोविषक द्रव्य (नप्पादि)का कवचार, वमनकारक द्रव्यका प्रयोग, खेद (मर्म कर्मसे पमिविक्त क्वालेन पादि कफदारा कं प्रदान) उपवास, मंशुन, पमपयंन गुह, कामरस कवक्रीडा घोर पटादि द्वारा पापात समाना कवकारी है । ऐमि हो पाहार विहार घोर शोवकादिसे प्रकृषित कफ दह जाता है । उन्न रस द्रव्यादिका कफ शंभमगवने कहते हैं ।

कलक्रीडा (कम्बरस) घोर शीतल द्विया द्वारा जिस प्रकार कफ प्रममित होता है-प्रयुके उत्तरमें कहा जाता, कि कलक्रीडाकति शीतलतासे शारीरिक ताप कमने नहीं पाता । सुतरां कृत्तुदिक कर्दम लेपन कर देनेसे पाकात्मिक प्रसर पड़ने पर उत्तर पाकद्विया पच्यक होनेकी भाति शारीरिक पन्नि कलक्रीडादिसे पचन प्रसर हं कफकी सुपाता है । कफ बढ़नेसे

पन्निमास्य, नाशिकादिसे कफप्रसार एवं चासक पाता, देह गुह तथा श्लेत्कव दिखाता, पद्मादि शीतल एवं मिथिल पङ्क जाता घोर म्मास, कास तथा निद्राका पाकिव्य घताता है । फिर कफ घटनेसे पान्ति जगतो, हृदयादि श्लेष्मायको शृभ्रता मज्ज कतो, ह्रवत्यको पच्यता पड़ती घोर शारीरिक सन्धि कम्बूको मिथिलता बढ़तो है । जिस प्यक्षिधे शरीरमें कफ पचिक परिमावसे रहता, वह कफसे गुच द्वियादि विमिश्र हो कफात्मक प्रकृतिको पङ्क घता है । ऐमि प्यक्षिधो कफप्रकृतिव कहते हैं । घेष-प्रकृतिका कफच-मन्धोर बुधि, श्मामकष एवं शिग्व शैथ, चमाशोभता, शोयवता, क्म सुदेह, समकिक बलवता घोर निद्रावस्थामें क्मप्रयोगसे क्वालय-दग्म है । फिर घेषप्रकृति विगङ्गनेसे खेद, कम् (कहता), शिरता, मोरक, हृपकी भाति कल चमा, घृति घोर पक्षोम कचित होता है । (इष्ये)

सुदृढक मतमे घेषप्रकृतिका कफच-श्लेष्मपचं शैथ, शोमाप्यवता, शैथ एवं सुदृढको भाति खर, निद्रावस्थामें क्मप्रयोगसे प्रपङ्क पक्ष क्मुदादि विविक्त गुथ, कलरसशोभ कंष क्मकाकादि कलक्रीडाक पक्षो तथा हरिण मनोहर घटंवरदि क्वालय दर्शन, रकान्तमेद, सुविमकृमाम, क्मवायव, शिग्वदेह, कल गुचयुग क्मयवद्विगुता घोर गुहकी मास्यकारिता है ।

मानवसे शरीरमें दो प्रकारका कफ होता है-साम घोर निधम । साम (पचक)-रस मिथिल रहने-वाले कफका नाम साम है । फिर पचक रस विहीन कफ निराम कहाता है । निराम कफ पचिकत घोर निर्दोष जाता है । उससे बिशेषकार पनिष्ट पानिको श्वावना नहीं । बिन्तु घाम कफ विकृत घोर दूषित है । वह आनायकार पङ्कित क्त्वपक करता है । रशेसे उससे ककल कफच विघे मधे है-

“आत्मकपादावर्ततेइहोपचयकवर्ततेइहोपचयकवर्तते ।
इहोपचयकवर्ततेइहोपचयकवर्ततेइहोपचयकवर्तते ॥” (अनुराग)
पाकच, तन्द्रा, हृदयको पचिकवता (कफःपच्यमे कपकवर्तक वावावाच), दोषको कप्रगति (काय न

होना), सूयकी वायुता (मेवापन), उठरमें
मात्रबोध, कसुचि और निद्रानुता—मात्र कफका
मक्षण है।

प्रथम ही प्रकृति प्रत्यय निर्देशक उत्पत्ति द्वारा
प्रतिपक्ष चिन्ता—कफ मर्धगरीरमें जन्मता-फिरता है।
किर यह भी कथा या युका—एविलत चमत्कार
हृदय, कण्ठ, सामान्य मसृक एवं मर्मिण्यमने रहता
और पिछत होनेपर कफ रसवान होय गरीरके मर्ध-
म्यात्ममें वष्टंनानामकार रोग उत्पत्पादन करता है।
किन्तु यह मसृक हृदयमें प्रसरणमोन रहते भी पापुके
साहाय्य व्यतीत हृदयादि साम्यामने चन्दय देमि ला
सकता है। यथा—

“दिनं च, दनं च, पापे मरणात् ।
रज्जुना दनं नोदने तदं चर्चति विरज्जुः” (अर्थः)

पित्त, कफ, विष्टाम्वादि मल और रस रसादि
पातु समस्त पदुयत् दधन है। यह स्वयं गरीरमें
कदाच जन्मफिर नहीं सकते। किर वायुवर्त्यक निम
स्थानमें वष्टंवाधि जाते, वही उक्त पातु रोग वर्धनकी
भाति बपनी क्रिया देवाने है। चर्दीय कफ विमहने,
हमरने वा बढने पर वायुद्वारा गरीरके नासा स्थानमें
पष्टंनानामकार व्याधि उत्पत्पादन करता है। जैसे—
वधःस्य कुसकुममें गाम तथा कासरोग, मसृकमें
गिरःपीडा और नामिणामें वा कफ प्रसिञ्जाय रोग
सगा देता है।

एव—वमन, उपवास, नेतापान, मेदुन, गरीर-
मार्जन, एवा जमादिके मेट, चिन्ता, जागरण,
परियम, चन्दधिक पचवर्धन, हृषाके रोगधारण,
गण्डूषधारण, प्रतिमारण (टन, सिद्धा एव मुपुमें
वर्षंय द्रव्यके प्रयोग), गिरोविरेचक जस्य, हस्तो
पम्पादि यानारोहण, धूमपान, गरीरच्छादन, युव,
मनोदुःख उत्पत्पादन, रुचद्रव्य, घण्टद्रव्य, पुरातन तथा
पष्टिक धान्य, मिश्रिक, हृदधान्य, बचक, मुद्ग, कुण्ट,
माय, यव, चार, सर्षपतेन, उण्डजन, धन्ददेगज मांस,
राजमर्षप, वेताय, पटान, कारवेक, वातांको, उदुम्बर,
कूर्कोटक, मोवा, रसुन, निम्ब, चाम सूचक, कटुको,
बद्धर, मधु, ताम्बूल, पुरातन मय, विकट, विफला,

मोसूक, पापे, कटारण्ड, कलगाय, ईसदुवा मसृ, कीज,
पौन, मुवा, मर्धुंरसमुक मिहिन मर्धं नपाय द्रव्य
और चर्धोगमर्धं वाधर, दान वा पादागदिमें
एक मसृ होता है।

एव—मिहिनयाम, मेवापन, उपवेगण, दिग-
निद्रा, ग्रास, गतन एव, दृगन मण्डूक, मटर, मण्डूक,
मांस, गुवादि सिटद्रव्य, देमि वा भागे, हृदि प्रसृति
दृगविहिन दृम, जमरन, घण्ट उदय, एव, मण्डूक,
दृम, चन्देवण, चापिरेव, मिणय, मण्डूक,
पण्डूक, मुसुका और हिन—मसृकका वाधर,
वाधर वा निहागदि कफर विधि बलव उत्तरका
वर्धन्य वष रनिष्ट मण्डूक रसना, उमरना तथा
बढता है।

कफ (म० पु० म०) १ दिव्यवायुव, वायुमर्धु
पुवटार मण्डूक। यह एव दोनो परीरकमो,
वा कुरने वा रसमर्धुका वर्धने वाधर वास वर्धने
है। वर्धने कर्द वा, कर्द मोग और कर्द एव बढन
तक रंजाय है। दृगदर कुरनेमें इमकी पादा
रगने है। वर्धनमें कफ मसृक रहता है। २ मृति
पधार, पीप, एवण, गताया। ३ मसृविरेच, एव
वायुन, नान। यह वाधरवा होता है। इमकी
मार-मार चनरमें चाम निजाना पाता है।

कफ (म० पु०) विन, धाम।
वफवर (म० दि०) एवं वराति, हज-न-एण् ।
१ वफवदिकारक, एवमम रज्जुनेवाना। २ एवका
उत्पत्पादन करनेवाना, वा वृदान जाता ही। वष्टयि
पुत्रतने ममम कावानो, वायवाकानो, औदक, जय-
भर, मुवपुने, भावपुने, भेदा, मणामेडा, टिचहला,
ककोटहरो, तुवाधारा, वफक, प्रदीपरीक, वादि,
हृदि, नृदिवा, वायुनी और मपुत्र—जायोवादि-
गपाल सकत द्रव्य कफहर है।

एवण दन वष मसृके देवो।

कफजुविधा । मं० दि०) वफं कूर्धति विहृतं करोति,
कफ कूर्धं-वृन्-टाए वत इवम् ॥ माना, वार ।
कफसेतु (म० पु०) कफरोगाधिकारका औषध,
वसरनकी एक दवा। टहण, मागधी, मङ्ग एव

बलनाथ बराबर बराबर से पादच्छिन्न स्तम्भों में लोम
मात्रा देनेसे यह रस बनता है। मात्रा गुण्यमात्र है।
(देवनागरी)

कफपत्र (सं० पु०) कफनां पत्र. इत्यु०। शरीरका
आमाशिक कफका नाथ, जिससे कृदरती बलगुणका
विगाड।

कफगण्ड (सं० पु०) गन्धरोम गन्धेको एक बीमारो।
यह स्मिर, मूत्र, गुह, लघुपत्र, शीत, महानुबन्धासह,
पादपत्रुष चौर चिरवृद्धिपात्र होता है। स्मिर रस
रोमके प्रभावसे रोगोका सुख वैरव्य पत्रुषता चौर
तांतु तथा गह धुपने बनता है। (सामन्त)

कफगौर (पा० पु०) कम्पा, करबी छोटी। इसका
पपमाग करतकको भाति पपटा रहता चौर दण्ड
कम्पा कम्पा है। कफगौरसे दाब, मात, पिचकी,
धो बर्गुरका सेन उतारने चौर पूरी कबीरी लो
निष्कारती है। हिन्दुस्तानमें इसे प्रायः बनबुस
करते हैं।

कफगुग्गु (सं० पु०) रोषत्र गुग्गु, बनगुग्गुके विगाडके
पेटमें पड़नेवालो निगटो या गांठ। इसका द्यप-
रामिन्, मोतस्वर मासघात, ब्रह्मस, कास, पक्षि,
वीर्य, सेव्य चौर कठिनीकतल है। (चर)

कफग्र (सं० हि०) कर्षं तद्विहारण इति, कफ
इन् उक्त्। प्रथमायक वा कफप्रमित पीडनायक,
बनगुग्गु या बनगुग्गुको बीमारो दूर करनेवाला।
सुन्दरीक पात्रमूषादि, इक्षुादि, मासघारादि,
लोहादि, पक्षादि, सुरमादि, सिप्यनादि, पक्षादि,
उक्षुादि, पटोनादि लघुकादि तथा सुप्रादि मन्त्रो
चौर विषय, सिप्यता, पक्षमूल पर्व दममूष प्रथति
मन्त्र द्रव्य कफनायक है।

चरान्त चरत्र इव चर मन्त्रे ईषी।

कफप्रो (सं० श्री०) कफप्र-होपु। १ गुहकाय,
केर्षा। २ इनुपापेट, एक पीड।

कफत्र (सं० हि०) पदाभ्याधत् कफ-जन इ। सुप्राधि
उत्पन्न, बनगुग्गुके पेट।

कफन्तर (सं० पु०) कफनिमित्तो ल्वरः, मध्यपदको।
कोषमन्त्र ल्वर, बनममो मुखार। ल्वर ईषी।

कफपि (सं० पु०-श्री०) श्वेन कृपेन पक्षति धना-
गामैव मङ्गोच विशोषमर्ल प्राप्नोति, क-प-प-रम्,
श्वेन पनायासेन स्व रति, क-स्व र-रम् सुवीदरादिजापु
मापुः। कफोपि, मिरफङ्ग, बीडनी, बाईके मोषकी
गांठ।

कफशो (सं० श्री०) कफसे ईषी।

कफद (सं० सि०) कर्षं ददाति, कफ-दा-ह। प्रेष
कारक, बनगुग्गु पेटा करनीवाला।

कफन (सं० पु०) यथाभ्यादनवस्य, सुदं पर छाता
कानिवाला कफका।

कफनकषोट (हिं० सि०) १ मन्त्रे पाच्छादनका
पक्ष मोष सेनेवाला, जो सुदं पर छाता कानिवाला कफका
पाडु होता हो। पक्षसे श्वेन श्रमयामने सुदंका कफका
उतार पापसमें पाडु सेने से। २ कफप, कफपुष।
३ दरिद्रका बन इत्य करनीवाला, जो गुरीवका मास
उका होता हो।

कफनकषोटो (हिं० श्री०) १ यथाभ्यादनवस्यको
चौरपाडु सुदं पर छाते कानिवाले कफकेको मोष-
कषोट। यह कोमोका कर है। २ कतिविधिय, इयया
कामनीको एक कास। पयोव्य रोतिसे दरिद्रका बन
इत्य करना कफनकषोटो कहाता है। ३ कफपता,
कफपुषी।

कफनचोर (हिं० पु०) १ प्रधान तपसर, बड़ा चौर।
जो गङ्गे सुदंको लघुत् कफन सुपता, पक्षी कफनचोर
कहाता है। २ दुह, बदमाय लक्ष्मी। पुत्र इत्य
चोराने चौर विषोको देवमें न पानिवासेका नाम
कफनचोर है।

कफनाको (सं० श्री०) दन्तमूलगत रोमविधिय, दांताको
शङ्कमें होनेवालो एक बीमारो।

कफनाता (हिं० हि०) यवको शब्दे पाच्छादन
करना, सुदंको कफका चोडाना।

कफनामन (सं० सि०) कर्षं भायपति, कफ-मन्-
चिपु कट। कफको नाथ करनीवाला ना बनगुग्गु
मिटाता हो।

कफनी (हिं० श्री०) १ मन्त्रे कफमें पड़नेवाला
बद, जो कफका सुदंके मधमें छाता जाता हो।

२ परिच्छेदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। इसे साधु धारण करते हैं। कफनी सिन्धाई नहीं जाता। इसमें शिर निकालनेको एक छिद्र रहता है। इसका दूसरा नाम चोलना है।

कफप्रकृति (सं० स्त्री०) स्थिरचित्तता स्निग्धकेशत्व आदि, दिनका ठहराव और वालोंका विकनानापन वगैरह।

कफप्राय (सं० त्रि०) कफः प्रायः बाहुव्येन यत्, बहुव्री०।

कफघडुल, जो बहुत बलगुम रखता हो।

कफमन्दिर (सं० पु०-स्त्री०) मण्डभेद, माड़, भाग।

कफरुहा (सं० स्त्री०) नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कफरोग (सं० पु०) कफजन्य रोगमात्र, बलगुमसे पैदा होनेवाली कोई बीमारी।

कफरोहिणी (सं० स्त्री०) कफजन्य गलरोगविशेष, बलगुमसे गलेमें होनेवाली एक बीमारी। गलरोहिणी देखो।

यह स्त्रोतनिरोधन, मन्दपाक, स्थिराङ्गुर और कफ-सम्भव होती है। (माधवनिदान)

कफल (सं० त्रि०) कफः साध्यत्वेन प्रस्त्यस्य, कफ-लच्। कफविशेष, बलगुमी।

कफवर्धक (सं० त्रि०) कफं वर्धयति, कफ-वृध-पिच्-स्युल्। स्त्रेष्वाकी वृद्धि करनेवाला, जो बलगुम बढ़ाता हो।

कफवर्धन (सं० पु०) कफं कफजनितं विकारं वा वर्धयति, कफ-वृध-पिच्-स्युल्। १ पिण्डोत्तर वृद्धि, किमी किष्कन्के तगरका पेड़। (त्रि०) २ कफवर्धक, बलगुम बढ़ानेवाला।

कफविरोधि (सं० स्त्री०) कफं विशेषेण रुणधि, कफ-वि रुध-णिनि। १ मरिच, मिर्च। (त्रि०) २ श्लेष्म-रोधक, बलगुम रोकनेवाला।

कफविरोधी (सं० त्रि०) श्लेष्मरोधक, बलगुम रोकनेवाला।

कफस (सं० पु०) १ पिप्पलर, पिंजरा। २ बन्दोण्ड, कौदखाना। ३ कटहरा। ४ सङ्घुचित स्थान, तट्ट जगह। त्रिसमें वायु और प्रकाश नहीं रहता, उस स्थानका नाम कफस पड़ता है।

कफसंशमनवर्ग (सं० पु०) कफशान्तिकर द्रव्यगण, बलगुम ठण्डा करनेवाली चीजोंका जूथीरा। कफ देखो।

कफसम्भव (सं० त्रि०) कफात् सम्भवः उत्पत्तिर्यस्य, ५ तत्। कफजात, बलगुमसे निकलनेवाला।

कफस्थान (सं० स्त्री०) कफाशय, बलगुमका सुकाम। आमाशय, वक्षःस्थान, कण्ठ, शिर और सन्धिकी कफ-स्थान कहते हैं।

कफस्ताव (सं० पु०) नेत्रसन्निगत रोगविशेष, आँखके जोड़में पैदा होनेवाली एक बीमारी। इसमें नेत्रका सन्धि पकता और उससे खेत, सान्द्र एवं पिच्छिल पूय पड़ता है। (माधवनिदान)

कफहर (सं० त्रि०) कफं हरति नाशयति, कफ-हृ-अच्। कफनाशक, बलगुम दूर करनेवाला।

कफहृत् (सं० स्त्री०) कफं हरति, कफ-हृ-क्विप्। श्लेष्मनाशक, बलगुम दूर करनेवाला।

कफातिसार (सं० पु०) कफजन्य अतिसार, बलगुमो दस्त। इसमें प्रथम लक्षण और पाचन हितकर है।

फिर आमातिसारघ्न दीपगण प्रयोग करना चाहिये। कफातिसारमें मनुष्य शुक्ल, सान्द्र, सकफ, श्लेष्मयुक्त, प्रीतिगन्ध, शीत और छटरोमा हो जाता है। (माधवनिदान)

कफाम्बक (सं० त्रि०) कफ पाप्वा यस्य, कफाम्बन्-कन्। १ कफमय, बलगुमी। २ कफरूपी, बलगुमकी सूरत रखनेवाला।

कफान्तक (सं० पु०) कफस्य भन्तको नाशकः। वर्धूरक वृद्ध, बलगुमका पेड़।

कफावन्द (सं० पु०) कण्ठके पद्यादभागकी फाँस कर किया जानेवाला एक पेंच। कुश्तीमें जब एक पहलवान् नोचे आ जाता, तब ऊपरवाला दाढ़नी और बैठ अपना वाम हस्त उसकी कटिमें बुझेड़ दक्षिण हस्त तथा पादसे उसका कण्ठ दबाता और वामहस्तसे लंगोट पकड़ उसे उलटाता है। इसका नाम कफा-वन्द है। फारसीमें 'कफा' कण्ठके पद्यादभागको कहते हैं।

कफारि (सं० पु०) कफस्य अरिः शत्रुः, १ कफो १ आर्द्रक, अदरक। २ शण्डो, सोंठ।

कफालत (सं० पु०) बन्धकता, जमानत। प्रतिभू-पत्रको कफालतनामा कहते हैं।

कफाशय (सं० पु०) कफस्थान, बलगुमका सुकाम।

पात्र, लकड़ीका बड़ा पोपा। ११ राक्षसविशेष। रामायणमें लिखा—दनु नामक किसी दानवको उपतपस्या द्वारा तृष्ट करनेपर ब्रह्मसे दीर्घ जीवनका वर मिला था। वरके प्रभावसे पत्यन्त गर्वित हो किसी समय वह इन्द्रसे युद्ध करनेको जा पहुँचा। इन्द्रने वन्धावातसे उसका हस्त और मस्तक गरीरमें हुसेड़ दिया था। किन्तु ब्रह्मवरके कारण उससे भी प्राण-विद्योग न हुआ। इसीप्रकार विह्वत शरीरमें दिन दिन क्लिष्ट हो दनु बारम्बार इन्द्रसे अनुग्रह प्रार्थना करने लगा। फिर इन्द्रने भी उसके प्रति सदैव जो योजन-परिमित हस्तद्वय और वचःस्थलके उपरिभागमें एक वदन बना दिया था। दनु उसी मूर्तिसे वन-वन जा और दीर्घबाहू द्वारा वन्यजन्तु खा भवस्थान करने लगा। फिर एकटा पिताकी आज्ञा प्रतिपालन करनेको राम लक्ष्मण और सीताके साथ उसी वनमें जा पहुँचे। इस राजसने दीर्घ बाहुद्वारा उन्हें पकड़ लिया था। रामने वीर्यभरमें लघु हस्तसे स्त्रीय खुद्ग द्वारा दनुका प्राण-विनाश किया। रामहस्तसे मरने पर ऋदन्ध दिव्यमूर्ति धारण कर स्वर्गको चला गया।

महाभारतके मतसे यह राजस पहले विश्वावसु नामक गन्धर्व रहा, पीछे किसी ब्राह्मणके अभिशाप से राक्षसयोनिको प्राप्त हुआ।

कवच्यता (सं० स्त्री०) मस्तकहीनता, कृत्स्न, शिर फट जानेकी दानत।

कवच्यी (वै० पु०) १ ऋषिविशेष। 'पय कवच्यी कात्यायन उच्यते कवच्यः' (प्रदीपनिघण्टु) (त्रि०) कं जलं पस्यास्ति, क-वन्ध इति। जलयुक्त, आवदार।

कवच, अक्षर देखो।

कवचस्थान, - कवचान देखो।

कवरा (हिं० वि०) कवुर, भवत्क, सफ़ेद रङ्गपर काले, नान, पोले या किसी दूसरे रंगके भयवा काले, पीले, लाल या किसी दूसरे रंगपर सफ़ेद चब्बे रखनेवाला।

कवरीस्थान, अक्षर देखो।

कवरी—जातिविशेष, एक कौम। मन्द्राजपदेगमें इस जातिके लोग रहते हैं। यह प्रायः १८ शाखाओं

विभक्त हैं। उनमें वल्लिगि और तोत्तियार शाखा जो प्रधान है।

पहले कवरो खेतोवारीके लिये ज़मीन रखते थे। उसी ज़मीनकी अपर निष्कृष्ट जाति द्वारा जोता-बोवा जो आय मिलता, उसमें इनकी जीविकाका काम चलता। आजकल इनमें वह पूर्वप्रथा रहते भी कितने ही लोग स्वयं कृषिकार्य करते हैं। फिर कोई नाव चलाता और कोई बलियेकी दुकान चलाता है।

तोत्तियार शाखा किसी किसी स्थानमें तोत्तियान वा कञ्चलत्तार नामसे भी प्रसिद्ध है। यह परिचामी और बड़े उत्साही है। कृषिकार्यमें लगा अनेक उच्च काय पर्यन्त इनके द्वारा सम्पन्न होते हैं। मन्द्राज नगरमें तोत्तियार अनेक उत्तम उत्तम कार्य चलाते हैं।

तोत्तियार ६ त्रेणोमें विभक्त हैं। प्रत्येक त्रेणो अपर त्रेणोसे सतन्त्र रहती है। प्रायः पाँच सौ वर्ष पहले कितने ही तोत्तियारोंने मद्रा जिल्लेमें जाकर उपनिवेश किया था।

यह सकल ही विष्णुके उपासक हैं। विष्णुकी अस्त्रो-किक लांला-क्रीडामें यह आन्तरिक विश्वास रखते हैं। किसीके विष्णुकी निन्दा करनेपर इनके प्र एमें बड़ा आघात लगता है। फिर निन्दाकारीको यथाचित यास्त्रि देनेसे कोई पीछे नहीं हटता। इनमें बहुतसे लोग इन्द्रज्ञान जानते हैं। इसीसे साधारण इनको भय भक्ति देखाते हैं। सुनते—यह इन्द्रज्ञानके वचसे सांपके काटिका विष उतार सकते हैं। पुरुष मस्तक पर पगड़ी बांधते हैं। स्त्रियाँ नानाविध अलंकार पहनती हैं। उनका वचःस्थान कितना ही अनाहत रहता है। किन्तु उससे उन्हें लज्जा नहीं आती।

तोत्तियारोंमें बहुविधाइकी प्रथा प्रचलित है। किन्तु प्रायः सकल ही एकवार विधाइ करते हैं। एक पत्नीके मरनेपर अपर पत्नी ग्रहण की जाती है। इनके विधाइ वा धर्मकर्ममें ब्राह्मणोंको भावश्यकता नहीं पड़ती। कोडाङ्गिनायकन नामक इनका एक प्रधान रहता है। वही विधाइदि सम्पन्न करता है। जन्मकुण्डली बनाना भी उसीका काम है।

कवरो प्रधानतः तेलङ्ग होते हैं। यह प्रधानतः तेलङ्ग भाषा ही व्यवहार करते हैं। किन्तु अनेक छोड़ चम्प आसम में रहनेवालोंकी बात अलग है।

कवा (प० पु०) परिच्छदविमिय, पद्मनीका एक कपड़ा। यह लाजुपर्यन्त होता एवं ईपत्तु मिथिल होता है। इसका अथमाग सुख और वायु चकित रहता है।

कवाड़ (हि० पु०) १ निष्पु योजन पशु, मैकाम चीज। २ निरर्थक कार्य वैद्वदा काम।

कवाडा (हि० पु०) निरर्थक व्यापार, भगवा मन्वन्त।

कवाडिया, कवारी ईकी।

कवाड़ो (हि० पु०) १ निरर्थक वस्तुविज्ञेता, मैकाम चीज विपनिवाका। २ सुदृग् व्यवसायो, जो गन्ध छोटा मोटा राजपार करता हो। (वि०) १ नीच कर्मोका, छोटा।

कवाव (प० पु०) मर्मभेद जिसे विप्रका गोष्ठ। पक्षी मांसको भली भाँति काटकूट बारीक बनाते, फिर उसमें बैसन, नमक और मसाला मिलाते हैं। यन्त्रको रसको गोलियां बना कोड़ेकी छीखमें मोदते और बाँधी सुरवे कोवनेको पंचपर धी करते हैं। इहाँ से को हुई गोबिंदोका नाम कवाव है। इसे पाक सुपकमान् ही खाते हैं।

कवावचोनी (हि० स्त्री०) गीतलचोनी। इसे संस्कृतमें कबोल वा कदोब, नेपालीमें तिब्बट् कद्रोरोमें सुरममजुं मागवाड़ोमें शिमसीमीर, गुज रातोमें तदामरी, दक्षिणमें दुमको, तामिलमें बाम मिनलु तिनगुमं तोबमिरियाणु, कनारीमें वासमिमलु मलयमें कोचुपकुम, ब्राह्मीमें मिनबनकरय, सिङ्गोमें बलपुनदमिध परकीमें कवावा और पारसीमें कवा वैद कहते हैं; (Piper cubeba)

यह भांडो यवरोप और मोरकास हीपमें अमावतः उत्पन्न होते हैं। भारतमें भी कहीं कहीं इसकी खपि को जाती है। भारतवासी इसके पत्रको बाहर से अनाते हैं। इसके दाँदकी रास जिनो बड़े काममें नहीं लगती। पर वैरक पत्रोसे मिलते हैं। किन्तु उनमें सुकोबापन कुछ पत्रिक रहता है। पत्रोको

कवो मसे खपरको कठ पातो है। फल सुच्छोमें रहता और मोम मिश्रं सेवा दिए पड़ता है। इसे भी कवावचोनी ही कहते हैं। यह आसम में भरिबसे पशु कठ एवं तिब्र लगती है। पक्षी यवरोप-वासी इसे किमो विदेमोपके दाब बैचनेमें दिवसते थे। यह भय रक्षी—काई जमारे इस पशुपं पत्रको अपने टैममें आकर लगा न सी। परवसे प्राचीन वेदांको निर्दिष्ट था—कवावचोनी मूत्रपवाहके मार्गको अक्षर भिन्नाको बड़ा नाम पड़ पातो है। किन्तु कोन इसे वादुनायक गन्ध द्रव्यकी भाँति ही व्यवहार करी पाये है। कवावचोनी जातुदोषंय और प्रमिह-का मकोवच है। यह दोषन, पाचन और मूत्रवर्धक होते हैं। बल्यैके वेद्य इसे धोवधोमें पत्रिक व्यवहार करते हैं। कवावचोनी कच्छके खरको भी सुधारती है। गाने बजानेवाले इसे प्रायः सु इनमें खाते रहते हैं। कवोच ईकी।

कवाधो (प० वि०) १ कवाव बैचनेवाका। २ कवाव खानेवाका।

कवाध (हि०) कवा ईकी।

कवार (हि० पु०) १ व्यवसाय, कामकाज। २ द्रव विज्ञेक, एक पौध।

कवाम (हि० स्त्री०) ध्वजंरिवातन्तु, यदुरका रिया। इसे बटकर रखी तैवार को जाती है।

कवाना (प० पु०) सेष्यभेद एक दस्तावेज। इसके द्वारा एकको न्यायि दूषरके पत्रिहारमें जाती है।

कवाना निवनेवासे मुहरिदलो 'कवाकानचोस', और आददः बैचनेवासेको थोरसे यरोइनेवासेको दो जानेवाको मनदको 'कवासा-नीनाम' कहते हैं।

कवावट (हि०) पचन ईकी।

कवावत (प० स्त्री०) १ अमद्वता, कुरारै; २ कठि मता दिबल, पदुवन।

कविल (प० पु०) अपिस्तत्रक, केषिका पौध।

कविल (प० वि०) कपिल मूत्र, ताँबड़ा। (पु०) २ कपिलपत्र मूत्र या ताँबड़ा रस।

कवोड (हि० पु०) १ कविज्यह्वय, कसेवा पौध। २ कविज्यह्वय, कसेवा मिठा।

कवीर (अ० वि०) नव्यप्रतिष्ठ, बहा। बहुत बड़े आदर्मीयो अमीर-कवीर कहते हैं। (हि० स्त्री०) फ़ारसी गीत, फीझ गाना। यह होलीमें गायी जाती है। कोई कवीर कहनेसे पहले लोग 'दरदर कवीर' पद लगा लिया करते हैं।

कवीर—कवीरपत्नी नामक सस्प्टायक प्रवर्तक। ठीक एक नही मकत—कवीर किसके पुत्र अथवा किस जातिके व्यक्ति रहे। इनकी जाति, मन्तति और उत्पत्तिके विषयसे नाया विवरण मिलते हैं। सुप्रसन्नान् इन्हें अपनी जातिके व्यक्ति बताते हैं। किन्तु महामानसे चिन्ता है—

रामानन्द-गिष्म किर्मी ब्राह्मणके एक बालविधवा बन्दा रहे। किसी दिन वह ब्राह्मण अग्या साध से गुरुद्वन्द्वकी पहुंचे। फिर रामानन्दने उस ब्राह्मण-बन्दाकी भक्ति देख महमा पुत्रवती होनेकी आगोवांट दिया था। आगोवांट मी ठूटा न गया, बालविधवा बन्दाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसी पुत्रका नाम कवीर है। मूमिठ होने ही अमागिरी वर्तनी नोक्षापवादके भयसे गुप्तभावसे गिरुकी स्थानान्तरपर छोड़ आयी थी। फिर किसी जीनाइ और उसकी स्त्रीने देखात् गिरुकी पाकर निज पुत्रकी भांति माननपालन किया।

कवीरपत्नी महामानके प्रथम अंगकी विलक्षण नहीं मानते। उनके मतमें कवीर एकदिन कागीके निकट 'नहर तानाव' नामक सरोवरके पक्षपत्र पर तेरते थे। उसी स्थानसे नूरी लीलाइ अपनी पत्नी मीमाके साथ विवाहनिमन्त्रणमें जाता रहा। नीमा इस गिरुकी देख अपने स्त्रीके निकट ले आयी। फिर गिरुने उससे पुकार कर कहा—इसे कागी ले लनी। नूरी अथोजात गिरुकी बात सुन पति-भय विस्त्रयापन्न हुआ और मोचने लगा—कोई उपदेशता मानवदेश धारणकर आ गया। अन्तही उसने प्राणके भयसे डर और गिरुकी फेंक पलायन किया। किन्तु गिरु उसके पीछे पड़ा था। कोई पाष कोम जाकर नूरीने देखा, कि गिरु उसके पक्षपत्र रहा। उस समय वह भयसे जड़ीभूत हो

गया। गिरुने उसका भय निवारणकर कहा था—तुम इसे प्रतिपालन करो और किसी बातसे न डरो। इसीप्रकार गिरुकी कवीर जीनाइके साथ लानित पानित हुये।

कवीरके जीवनका प्रथमांग वैसा कौमुद्यावह जाता, वैसा ही अवनित अंग भी देखता है। मशि-माहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है—

पूर्वकाल वेदालाभ्यामनिरत एक ब्राह्मण रहे। यह स्त्री-पुत्रके लिये गिरुकी अर्थसे जीविका चलाते थे। एकदिन स्व नेनेकी उठते तन्तुयादके भवन जाना पडा। यहासे अपने घर लौटनेपर वह ज्वर रोगसे आक्रान्त हुये और वैद्योगसे उसी ज्वरमें मर गये। मृत्युकालकी अरण्य स्थिति ही तन्तुयादके घर उनका जन्म हुआ। तन्तुयादके घर जन्म ले ब्राह्मणने प्रथम वस्त्रादि निर्माण करना सोचा था। किन्तु पूर्वसंस्कार-वगत; उनसे ब्रह्मदान भी उत्पन्न हुआ। वह संवेदा कहा करते थे—संसार असार और यह जीवन पद्म-पत्रपर उनके समान है! इस कारीग्राममें कौन हमारा गुरु होगा? कौन हमें इस संसार-सागरसे बचावेगा? कर्णधार न मिलने पर यह देखतरी कैसे चलेगो?

किर्मी दिन उन्होंने कितने ही साधुओंके निकट उपस्थित हो अपना मनोभाव प्रकट किया। वष्य-साधुओंने उनसे पूछा,—तुम कौन और क्या चाहते हो। उन्होंने कहा—इस जातिके तन्तुवाय और रामानन्दके गिष्म होना चाहते हैं। वैश्य उपहास कर कहने लगे—तुम स्नेच्छ हो, तुम्हारा गुरु कौन होगा!

फिर तन्तुवायरूपी कवीर भक्तमनोरथ धरकी लौटे थे। उनका मन अस्थिर हो गया। उन्होंने फिर साधुओंके निकट जा अपने मनका दुःख देखाया था। किन्तु इस बार भी उनकी मनस्सामना पूर्ण न हुयो। फिर वह अस्थिर चित्तसे वाराणसीमें धूमने लगे। वह जिसकी देखते, उसीसे पूछते थे—क्या आप बता सकते, गुरु रामानन्द कहाँ हैं। इसीप्रकार बहुदिन बीत गये। किसी दिन एक वैश्यने उनसे दयाकर कहा था—गुरु रामानन्द समुक्त स्थानपर रहते हैं।

रात्रि-बोतलेंपर बह बहिराँर मोल प्रस्यह गहा
 खालको निबलनते हैं। तुम रातको उनके बहिराँरके
 मन्धल आकर सो रहो। जब बह दार प्योन बाहर
 पायेगी, तब उनके पद तुम्हारे चङ्गमें डू जायेंगी। तब
 समय उनके सुलभ निबली नामका तुम गुरुमन्त्र
 समझ पाइय कर सेना। सिवा इसके रामानन्दके
 शिष्य जिनका दूसरा कोई उपाय नहीं।

कबीर बेधायको बातसे पायस्य दृष्टी पौर धम-
 टिनका रात्रि-बोतलेंसे रामानन्दके दारपर सीट मथे।
 रात्रि शिव-बोतलेंपर रामानन्द प्रातःकृत्यादि निबटा पौर
 क्रम तिल लटा जैसे ही बाहर निकले, जैसे ही कबीरके
 चङ्गमें उनके पद डू गये। कबीरने भी महाप्रसादसे
 गुरुके पद चूम लिये थे। रामानन्द श्लेषके आत्ममें
 पद लपने देख बोल बडे—राम। राम। तुम बोल।
 इसप्रकार कबीरका मनोरथ पूरा हुआ। उन्होंने
 रामानन्दको गुरु कह श्राद्ध प्रविष्टात किया।*

उसी दिनसे कबीरने 'राम नामको चार माना
 या। यह स्मरण मुक्ति कुञ्ज न करती, केवल 'राम'
 नामको ही मुक्तिका सोपान समझते रहें। फिर
 कबीर तिलक माना चारप कर चपरापर बेधबीकी
 प्राति-साधोपाममें रहने लगे।

कबीरका पाचार व्यवहार दिन-बेधाव बिमरुं धी।
 एकदिन उन्होंने कबीरको बोलाकर कहा—दे रं प्लु
 ब्रम। नू बिम बाइसथे तिलकमाना चारप करता है।
 तुमको यह कुहुं हि बिचने दी है।

कबीरने आत्मविष्ट माधमे उत्तर दिया—मैं सब
 कहता हूँ, गुरु रामानन्दने मुझे राममन्त्र दिया और
 रबीसे मैंने ऐसा कार्य किया है।

फिर मर्दाने आकर रामानन्दके कबीरकी खया
 कही थी। रामानन्दने धम्यन्त प्रुह हो बनें बोला
 भेजा। उन्होंने गुरुके निकट जा ज्ञानानुनिपुटसे
 चोरमाधमे कहा—है नाथ। क्या पाव भूख यथे ?
 जब दिन रात्रिद्वय पर मैं पावके द्वारपर जाकर सीटा

वा। थापने मेरे चङ्गपर पद रख राम नाम उच्चारण
 किया। उसी दिन मैंने राममन्त्र धाम किया था।
 उसी दिनसे मैं नियत राम नाम धयता हूँ। प्रभो।
 इसमें ग्रंथि मेरा दोष मान भोजिये तो दयाकर
 धाम भोजिये।

रामानन्दका कबीरका परिचय सिवा पौर उन्होंने
 क्रोध परित्रागकर इसने इसने पायोर्षाद दिया।
 उसी दिनसे सब लोग कबीरको एक मन्त्र समझने
 लगे। यह नहीं—कबीर केवल मन्त्र ही रहें। उनका
 हृदय दरिद्रके दुःखसे पिचन उठता था। बिपों
 दिन बह एक यक्ष बैचने आते रहें। एकमें कोई
 ह्र मिन गया। तब समय योतवान रहा। दरिद्र
 इनमें योतार्त हो उनसे बख मांगा था। कबीरने
 दरिद्रको दुर्दृष्टा देख पञ्चानवदन रख दे डाला।
 दान किया तो सबो किन्तु परकुहर्त उनके मनमें
 संधारका उपास्यान निबलन पड़ा—हाय। पात्र मेरे
 लमें यह नहीं, माता राजमें येही मेरे पानेकी लक
 लपाये होगी; मैं रिश हय्य जैसे हर बापस
 काऊ गा। फिर उन्होंने मन ही मन सोचा—पात्र
 दरिद्रको यह बख दे मुझे ही सुख मिला, बख धैर
 कर पर्यं से बचका सोना कहाँ था, मेरे चङ्गमें जो
 पाये, वही पड़ जायेगा। कबीर हर जो कोट पाये।
 पाकर उन्होंने चुना था—माता पचम्यन्त बना बंटे
 राह देख रही हैं। कबीरने मातासे पूछा—माता।
 पात्र जमारा संघार कैसे बना, पात्र तो जमारे कोई
 संझान न था। माताने उत्तर दिया—कबीर। यह
 था, तुम्होंने तो पादमी भैर जमारे पास पर्यं
 पड़बाया है। कबीर पापर्यंमें पा गये और पानेग
 गद्गद्माधमे मातासे कहने लगे—माता। तुम बन्ध
 वा। साधात् मन्त्रवत्सुन भगवान् पाकर तुम्हें पर्यं
 दे गये हैं। माता। दीनदुखीका मन बितार करो।
 हमें धनका क्या प्रयोजन है ?

कबीरकी माताने दीन-दरिद्रको बन बंटा था।
 चारों पौर राष्ट्र जो गया—'कबीर बड़े टाला हैं।
 जो जाता वही पाता, कोई हवा चूम नहीं पाता।'
 यह बढाव्यता तुम एक दिन चारों पौरके बहूतने

* 'देवकी लगे कबीरने रामानन्दके लीलाको कर्तव्य ही ही—
 "रामके लीलाका बीजा। कबीरने कर्तव्य वत्त न बीजा।
 रामन दूर हीका है। दरिद्र बहूत बनो है।"
 Col. 11 8

लोग इनके घर आकर प्रतिष्ठा दिये। इन्होंने देखा,—
'बड़ा ही विभवाट है। मैं दरिद्र, निर्धन हूँ। मुझमें
एकका संभ्रान नहीं। जैसे इतने लोगोंकी मनमूढि
की जयिगी।' इनका मन अस्थिर पड़ गया था।
यह मुझाल्तरमें ना मोड़ने लगे। उधर भगवान्ने
कवीरका रूप बना और प्रतिष्ठितकी घनरूपमें मजा
विदा कर दिया। इन्होंने घर आकर यह प्रपूर्व
घटना सुनी। फिर कवीर क्या स्थिर रह सकते थे!
प्राय छोड़ छोड़ यह केवल इट्टेवको पुकारने लगे।

किसी दिन इन्होंने राजसभामें पहुँच एक
अच्छुनि जल भर पूर्वमुख फेंका था। राजा इन्हे
पागल समझ हंस पड़े। उस समय इन्होंने निर्भय
राजाकी सम्बोधन कर कहा था,—राजन् ! इंसनेका
कीर् कारण नहीं। जगन्नाथपुरीमें किसी पूनक
त्राश्रुके पैरपर उष्ण फोटन गिर पड़ा है। मैंने
उसीके पैरपर शीतल जल डाला।

कवीरकी बातसे राजाको बड़ा कीटूहल लगा था।
उन्होंने जगन्नाथपुरीको दूत भेजा। चरने लौट
कवीरकी बात समझाय ली थी। फिर राजाने
कवीरको एक सिद्धपुरुष उठगा लिया। साक्षात्
करनेकी दृष्ट स्वयं इनके घर जा पहुँचे। कवीर
राजाकी अपने छुट्ट कुटोरमें देख प्रतिगय आनन्ददिन
हुये और हाव जोड़ कहने लगे,—'महाराज ! आपके
आगमनसे यह काम कृतार्थ हुआ। किवरकी कुछ
करनेके लिये आदेश दीजिये।' राजाने इन्हें
आनिहन कर कहा,—'हे वैष्णव ! प्राय हमारा दोष
यह न शीजिये। हमने विममके आपका उपहास
किया है। वतनायिये, क्षमा करनेसे प्राय सुधी श्रेणि।
घनरूप जो चाहिये, हम प्रमो देनेको प्रस्तुत हैं।

इन्होंने महाप्रमुख उत्तर दिया था,—'राजन् !
घनरूपका क्या प्रयाजन है। जोधन और मरग—
उभय समान ज्ञानि हैं। मैं मूर्ख हूँ। इस तुच्छ
कीविक्रानिर्वाहके लिये धन नहीं चाहता। जो टोन
दरिद्र, लुधासुर और पर्येके लिये जालायित है, अपनी
इच्छाके अनुसार उसे धन दीजिये। आपकी महापुण्ड्र
होगा।' राजा इट्टबिस निज प्रासादको लौटे थे।

उसी दिन इन्होंने राज्यमय घोषणा की—कवीर
हमकी प्रति प्रिय है।

कुछ दिन पछे यह तीर्थयात्राको निकले और
मथुरा दर्शन कर दिखी पहुँचे थे। उस समय
दिक्षीमें सुषनमानराज मिश्रकर लोटोका राजत्व
रहा। दुटानि जाकर सुनतानसे कह दिया—एक
दानिक जोनाहा आकर अनिर्णकी बदना करता
है। ऐसे व्यक्तिको राजदण्ड मिलना उचित है।

मिश्रकरने कवीरको पकड़नेके लिये आदेश
लगाया था। यथासमय राजपुरुषाने भा इन्हें पकड़
लिया। फिर इन्होंने उनके मुख प्राणदण्ड मिलनेकी
बात सुनी। मिश्रकरके समीप पहुँचने पर पारि-
पदेने इनसे नमस्कार करनेको कहा था। किन्तु
इन्होंने उनको वातपर कर्णपात न किया और हंसने
इंसते सुना दिया—किसकी प्रणाम किया जाये, इस
संसारमें कौन यथ नहीं।

फिर सुनतानने प्रति कुछ ही पार इन्हें मुझना-
वह कर यमुनाके त्रगाव मनिनमें डालनेका आदेश
निकाला था। राजपुरुषाने तत्त्वपात् कवीरको
यमुनाके जलमें निक्षेप किया। कानिन्दीके लक्ष्य
नीरमें इनका डेह घट्टर हो गया। किन्तु परप्रय
ही सकलने यमुनाके परपार इन्हे महाप्य मुख वृमते
देखा। दुट नागोंने सुनतानसे जाकर कह दिया—
'कवीर ऐन्द्रशानिक है। सामान्य इन्द्रशाल-विद्याके
प्रदावसे लिये उन्हे रजा मिथी है। इसवार अग्निके
सम्भ्र निक्षेप करगिये।' दिक्षीखरने दुष्टोंकी बातोंमें
पह राजपुरुष बोला कर इन्हे महाननमें जना
डालनेकी कजा था। किन्तु केशा आसर्व। ज्वलन्त
चनलमें इनका एक क्षण नष्ट न हुआ।

कवीरकी इस प्रसादुप घटनासे भी दिक्षीखरकी
चेतन्य प्राया न था। उन्होंने झाषसे उन्नत और
दुजनोंकी बातके धयीभूत हो हाथीके पैर नीचे इन्हें
दवा मार डालनेको आदेश दिया। किन्तु भगवान्
जिमपर मदय रहते, हजार शायी भी उसका क्या
कर सकते हैं ! आज मतवाला हाथी भी इनका
सिंहरूप देख भयसे भाग गया।

सिद्धन्दर कबीरको भूयसो प्रशंसा करनि लगे ।
उपचार सुखतानका मल मो सुख पढ़ाया । लक्ष्मि
रखे सोहा सादर सन्ध्याबधे कहा—साधु । हमारा
दोष क्षमा कौनिये । पाप महाबल है । पात्र पापको
महिमा हम समझ सके है ।

यह दिहोखरखे विदाय हो कायोबाम पङ्क्ति और
संसारको पनित्यता देख भावप्रानके कामको यद्वान्
हुये । कायोमें भी जाते पोर इनके विपक्ष बूमने थे ।
एक दिन कोई बूढ़ कबीरके नामसे कायोबासो
समस्त मातृपौको निमन्त्रण दे पाया । बटनाक्रमसे
उसो दिन बह खानान्तर गये थे, कुठोरमें शिवक कुछ
मिथ रहे । निमन्त्रण मिस्मेंसे कायोके लखल पङ्क्ति
सातु इनके वासप्रान पर उपनौत हुये । लखसाबिक
पतिविधोको चुकात देख मिथोंका प्राय सूख गया ।
सबल हो सोचने थे—इतने कोमोको पिता पिता
केसे विदा करेगे । परचष हो महत्त्वस मगवान्
कबीरकपसे भक्त भोग्य का सर्वसमक्ष देख पड़े पोर
खदखदये मातृपौको भोजन करा चन दिये । प्रकाय
कर नहो सकते—सातु बिनने परिग्रह हुये थे । यह
खदको मोट महासमारोह देखकर पत्कन्द विजयमें
पाये । बिडो गिन्धको पुकार इन्होंने पूजा का—बत्स ।
यह क्या व्यापार है, बिज बिये इतने लोग पाये हैं ।
गिन्ध पाएवं हो कहने लया—पाप का कह रहे
है, पापमें जिन लखसाबिक व्यक्तियोंको खिचाया
पिनाया, लक्ष्मि पाकर यह मरौत्सव मचाया है ।

कबीर समझ गये—यह सकल हरिको सोला
है । इन्होंने मनोभाव बिपा मिथसे कहा था—
बत्स । मैं चुकाये पतिभय ज्ञानर हो गया हूँ,
सुखे साहबोंका प्रसाद सा हो ।

द्वि को कबीरके नियत पनित्यको चेष्टा करती,
बह दुर्जन मो महत्त्वके गुणके बयोमूल होनि लरी ।
बह बह इनके निजट निज निज दोष खीकार कर
बिनतो ही चमा मांगते, तब सातु कबीर ससक्तको
पानिजनकर राम नाम पुकारते थे ।

कायोबासो भास इनके गुणके पचपातो बन लये ।
बिडो दिन एक उपवती भेखाने कबीरके निजट पा

कहा था—महात्मन् । मैं सुखमोतादि नामाप्रकार
उपमोय द्वारा पापको समुह करना चाहतो हूँ ।

उपनोन्वैर्याबिनो पोर सुखमोतादि-निपुका मत
कीको देख यह सहाय होन ठठे,—मैं सुखमोय पोर
सुखमोत नहीं समझता । द्वि में खी पोर पुदब दोमें
एक मो नहीं । सुभसे पापको मनछामना केसे
पूय होगी । नर्तकोमें पति काकृतिमिति माबमें
इतने प्रायंगन को—मैं बड़ो पापये पाबो हूँ । मुमें
क्या इताय हो खोटना पड़ेगा ।

इन्होंने और भावसे उत्तर दिया—देखो । भरे
खदमें खद महत्त्वस करि विराजते हैं । बह
पति रागो पोर महाप्रायो है । उनके सामने नाच
गा पाप चपको भोगपियासा मिठा सज्जते हैं ।

नर्तको महा पानन्दित हुयो—भैरा ऐसा मीमाय
बि में खद मयवान्को मृष्यमोत द्वारा रिभाय् तो ।
उसो दिनसे बह भेखा कबीरके खदमें रह प्रखड
भाचने माने लयो । इसो प्रकार कुछ दिन बीते थे ।
मनको मन भेखा कबीरको चाहतो थी । एक दिन
यमोर खनोको सन खोय मो लये । किन्तु भेखाको
पाँच न भयको । कबीरके सन्धानको काकृतासे लखका
बिज पखिर हुया था । बह बिडो प्रकार पाम्बस वम
कर न सको पोर कबीरके सोनेको बमझ मनसे पाधिगमें
पा पङ्क्ति । लक्ष्मि कबीर पमारकनोको बड़ा कबीर
के बहरी न्योतिमैय हरिको मूर्ति देखी ली ।

द्वि लक्ष्मि कामपियासा न जानि कहां पन्दहित
हुयो ! लखसे प्रेमानुको जारा बहो ली । लखसे
लिये संसार चसार समझ पड़ा । भेखा उसो
पमानियाको पकाकी खद खोड़ निबिड़ परपाकी
पोर चको गयो ।

इन्होंने प्रत्येक ठठ भेखाको हरमें न देखा । लक्ष्मि
पबहार बफादि सकल पड़े थे । कबीरने भावना
लगायो—इतने दिनमें सन्धनत भेखाने सद्बनति पायो
है । इन्होंने मिथोंको सोलाकर कहा—भैरे चनने
का समय पा पङ्क्ति है । बत्स ! तुम कायोबासि
योको संवाद दो—सबिर्कियेकाघाट पर सब लोग
कबीरके काकर सिडो ।

शिव्योने चारो और गुरुकी आज्ञा घोषणा की थी। दल दल लोग आ-आ पुष्पसज्जिलाके तटपर समवेत हुये। सकल हो कवीरकी बात सुननेकी उत्कण्ठित थे। यह अपने प्रियजनोंकी उपस्थित देख मिष्ट भावसे कहने लगे—मैं परपार जावूंगा। मेरे इह-जौवनकी लीला समाप्त हो गयी है। भायियो! मैं अन्यज स्नेच्छके घरमें जन्म ले कर्मसूत्रसे वैष्य वना हूँ। इस मिथ्या अपवित्र देहको रखनेसे क्या फल मिलेगा। मगरराज्यधर्म मेरा मोच हीगा।

कवीरकी बात सुन सकल ही हाहाकार करने लगे। इन्होंने मधुर भाषामें देहकी अनित्यता देखा सर्वसाधारणकी मान्यता दी।

पनन्तर यह सकलको साथ ले मणिकर्णिकाके परपार पहुँचे थे। वहीं जाकर इनका निद्राकर्षण लगा। कवीर भूमिमें लेट गये। शिव्योने इनके शरीर पर वस्त्राच्छादन किया था। फिर दो घण्टे बीतते भी यह न उठे। इससे सधलका मन अस्थिर हुआ था। शिव्योने भी कीर्ति माहस कर इनके अङ्गका आवरण खोल न सका। दो घण्टे अपेक्षा कर सबके मनमें विजातीय भाव उदय हुआ था। सभीने वारस्वान इन्हें जगानेकी कहा। फिर अगत्या शिव्योने गुरुका आवरणधस्त्र खींच लिया। किन्तु वस्त्रके मध्य कवीरका दर्शन मिमा न था। सबने वस्त्र और धरासन पडा पाया। इसी प्रकार भक्त कवीरने परमपद प्राप्त किया। (महिमापान्ना)

* महिमापान्नाका जो पुनक सिना, उसमें 'मगर'के स्थानमें 'मदध' मल लिखा है। किन्तु 'मगर' ही गुणिसुत्रत समझा जाता है। इसीमें यह पाठ उद्धृत किया गया।

सुना जाता—सत्यु, जीसँ कवीरके शवदेहपर हिन्दुधरो और सुसन्-नातो'में विवाद छटा था। उसी समय कबीर स्वयं आ यह बात बह कर बसाईस हुये—मेरे शवदेहका आवरण खोलकर देखिये। आवरण खोलनेपर शवके अभावमें सबकी कुछ फूल देख पडे। काशीके राजा गोरसि'दने वहाँ आये फूल ला आयाये थे। फिर फूलोंका मस काशीके 'कबीर चौरा' नामक स्थानमें समाहित किया गया। उधर प्यारराज बिजसोवानुं आये फूल गोरसपुरके निकट मगर नामक नाममें भी आकर गवाये थे। उन्हां'में वहाँ एक सुन्दर समाधिस्थान भी बना दिया। उद्द 'कबीरचौरा' और 'मगरका समाधिदेव' कबीर-पदिकोंका प्रथम तीर्थ स्थान सिना जाता है।

वस्तुतः कौन न मानेगा—कवीर एक महत् व्यक्ति रहें। यह कोई जाति कौन न हों, इनके निकट हिन्दू-सुसलमानोंसकल ही समान थे। यह अकुतोभयसे शास्त्र और कुरानुका प्रतिपाद कर गये हैं। कवीर कहते—'हिन्दुधोके राम और सुसलमानोंके रहोम खतन्त्र नहीं, अनुसन्धान करनेसे हृदयमें मिलेंगे। यह विश्व जिनका संसार और प्रभो एवं राम जिनके सन्तान टहरते, उन्हींकी हृम पीर समझते हैं।' कवीर जप पृजाटि मानते न थे। इसकी सखन्त्रमें यह कहा करते—

"मनका फेरत युग गयी गयी न जगजा फेर।

हरका मनका होइ कर मनका मनका फेर ह॥"

जपके मानाकां गुरिया सरकाते-सरकाते युग बीत गया, किन्तु मनका इन्द्र न मिटा। इसीसे कहते—हाथकी गुरिया छोट मनकी गुरिया सरकाया कीजिये।

यह आतिभेद भी मानते न थे।* इनके वचनमें मिसला है—

"एकसे लिखिये सबसे मिलिये सबका मिलिये नांन।

हाजी हाजी सबसे किछिये बसिये अपने गांन॥"

सबके साथी बनो, सबसे मिलो और सबका नाम-ग्रहण करो। फिर सबसे 'हाजी हाजी' भी कहो, किन्तु अपने ही स्थानपर रहो।

कवीर संसारकारणकी देख दुःखमें कहते थे—

"बाह्यन टाहन मूरख मथे शूर पडे रोता।

ठग ठगर बद चखा खरि दुःख पावे पयोता॥

माथिको मारे लडा ज्ञान श्रमत् पिताय॥

गोरस गलियनमें फिरे बौटे सुरा बिकाय॥

सतीको मा धोती मिले रक्षा परदे घासा।

रुहे कबोरा टीखी माई दुनियाकेर तमासा॥"

जातिकुलकी भाति इनके समयपर भी कवीरपत्नी गडबड डाला करते हैं। उनके कथनानुसार कवीरने संवत् १२०५ की टकसार-शास्त्र प्रकाश किया और

* जाति पाति कुछ कापरा थक सोमा दिन चारि।

बडे कबीर सुनहु रामानुद धेहु नडे भक्तमारि॥

जाति हमारी बानिया कुल करता घर माहि।

कुटुंब हमारे सना ही मूरख समझत माहि॥

संवत् १२०१ को मगर नगरमें इहलोक छोड़ दिया।
 शिवा जोसेबे प्राय ३ यातवर्ष इनका परमायु थाता
 है। यह का सभाष है। बिन्दु मझिमाकाभा पीर
 कई सुसलमानो इतिहासके पत्र पढ़नेके हम
 समझते—कबीर सिखन्दर सोदीके बससामयिक रहे।
 १३३३ संवत् सिखन्दरने राज्य पाया था। पतएव
 सभाषपर मानते उस समय कबीर विद्यमान रहे।

सिखोंके बसंगुह नामकने कबीरका मत अपने
 धर्ममें बहुत किया है। एतद्विषय सत्तामियों, साधुओं
 योगारणियों और शूद्रादिदियोंके पुस्तकमें भी
 इनका मत मिलता है। इससे समझ पड़ा—इस
 सम्प्रदायप्रवर्तकोंने इनका मत से पाब पाब अपना धर्म
 प्रचार किया है। अन्त निररथ कबीरकी मन्त्र देवो।

कबीर उद्-दोम—तात्र उद् होन इरलोकियुतः दिवो
 गाले बाइयाह पला उद् दोमके समय यह कबीरित रहे।
 इन्होंने जन्मे पमिभवपर एक पुत्रक लिया था।

कबीरपत्नी—सम्प्रदाय विधिय। इन्होंने महात्मा
 कबीरका प्रवर्तित धर्ममत प्रकल्पन किया है।

कबीरपत्नी सकल देवताओंको पपेया बिन्दुके
 प्रति पबिक मझि देधाते हैं। रामानन्दो प्रधति
 वैष्णव सम्प्रदायके साथ यह अनुभाव रखते और
 पाचार व्यवहारमें भी मिचते चुकते हैं। इसीसे
 कितने ही लोग इन्हें वैष्णव कहते हैं। कबीरपत्नी
 पपरापर वैष्णवीको भाति तिलक बनाये, नासिका
 पर चन्दन वा गोपीचन्दनको रेखा बनाये, कण्ठमें
 तुङ्गरोमाका कटकात और हाथमें भी कपडको माला
 लुकाते हैं। बिन्दु यह रूप तिलकसुदाको हवा
 पाङ्कमरमात्र समझते हैं। बाष्पविक इनको विदे
 बनाने याश्रीक देवदेवीका पूजन पपवा किया
 कथापका अनुष्ठान प्रयोगनीय नहीं ठहरता।

कबीरपत्नीमें प्रधानतः दो दम होती हैं—एक
 और प्रमाथी। यहलक्ष क पत्र भातिगत और वर्धगत
 पाचार व्यवहार प्रकल्पन करती हैं। फिर कोई
 नित्र धर्मको छोड़ बिन्दुके लपात्र देवताओंको भी
 पूजता है। कबीरपत्नी प्रमाथी एकमत नगरके
 पसीपर शिवक कबीरदेवका भी भजन करती हैं। इन्हें

गुरुके निकट मन्त्र सीना नहीं पढ़ता। यह शिवक
 विद्वक जो प्राचमर धर्मगत करनेको ही लपासना
 बसभते और पपनी इच्छाके अनुसार विद्यभूषा रखते
 हैं। फिर कोई नम्रप्राय ही कर भी पय पय
 भुमते फिरता है। सभाषियोंके मङ्गल मङ्गल पर
 टोपी बनाते हैं। उक्त दोमी दस प्राय १२ यात्रामें
 विमल हैं। इन १२ यात्राप्रवर्तकोंके नाम नीचे
 लिखते हैं,—

(१) श्रुत गोपालदास—सुधनिवाकके प्रयेता रहे।
 इनके मित्र परम्परासे हारकाके पयाङ्के, नाराचहोके
 कबीर-पौर, मगरके समाधि और जगदायके पयाङ्के
 पर कर्त्तव्य रखते हैं।

(२) भन्वोदास—शेखरके रचयिता थे। इनके
 पत्न्यामी मित्र प्रमिष बनौती नामक ज्ञानमें
 रहते हैं।

(३) नारायण दास और (४) शुकामणि दास—
 धर्मदास नामक बचिकके पुत्र तथा यहलक्ष रहे।
 इसीसे सब लोग इन्हें 'धर्मगुरु'की भाति सम्बोधन
 करते थे। पाञ्चकल शुकामणिका भय समात्र यह
 और नापायपका रथ नष्ट हो गया है।

(५) जीवनदास—सत्तामो सम्प्रदायके प्रवर्तक थे।
 पत्न्यामी देवो।

(६) जगद्गुरुको नहीं कटकमें है।

(७) कमलको लोग कबीरका पुत्र बताते हैं।
 बिन्दु यह पपपर कोई विवेक प्रमात्र नहीं मिलता।
 यह धर्ममें रहते थे। इनके मतावनयो योग्याथी
 होते हैं।

(८) टकलाको—बरदासगी से।

(९) ज्ञानी—सङ्गरामके निकट मङ्गने धाममें
 रहते थे।

(१०) साङ्गदास—कटकनिवासी और मूकपत्नी
 नामक बन्धुदायके प्रवर्तक थे। पत्न्यामी देवो।

(११) निवागन्द और (१२) बसकानन्द—दासि
 बाबुशासी से।

शिवा इनके दाम-कबीरी, संयरीक-कबीरी, ईह
 कबीरी प्रधति दूसरी यात्रा भी विद्यमान हैं।

यह पूर्वीक स्थानोंमें वाराणसीके 'कवीरचौरा'की ही सर्वप्रधान तीर्थ समझते हैं।

कवीरपन्थियोंका प्रकृत धर्ममत सहजमें मालूम नहीं पड़ता। किन्तु सम्प्रदायका ग्रन्थ पढ़नेसे अनेक अर्थमें माना गया—हिन्दूधर्मसे ही यह मत निकला है। कवीरपन्थी एकमात्र अपने मतकी छोड़ अपरापर सकल धर्म दूषित वताते हैं। इनके मतमें कवीर-प्रवर्तित धर्मव्यतीत दूसरे सकल सम्प्रदाय भ्रमपूर्ण हैं।

कवीरपन्थी एक ईश्वरकी मानते हैं। वह साकार और सगुण है। उसके पाश्चमैतिक शरीर और विगुण-विशिष्ट अन्तःकरण विद्यमान है। वह सर्व-शक्तिमान् एवं सर्वदोष-विवर्जित रहता और खेच्छानु-सार सर्वप्रकार आकार बना सकता, किन्तु अपरापर सकल विषयमें मनुष्यसे पार्थक्य नहीं पड़ता। यह अपने सम्प्रदायके साधुओंकी ईश्वरानुरूप वताते, जो परलोकमें उसके समान रह एकत्र परम सुख पाते हैं। ईश्वर आद्यान्तहीन और नित्यस्वरूप है। बीजमें हृद्यके शास्त्रापत्रकी भांति सकल वस्तु व्यक्त होनेसे पूर्व ईश्वरके शरीरमें अव्यक्तभावसे अन्तर्निहित रहते हैं।

फिर इनके कथनानुसार परमपुत्र्य परमेश्वरने प्रलयान्तकी ७२ युग पर्यन्त एकाकी रह विश्व-सृष्टिकी इच्छा की थी। अवशेषकी उसकी इच्छाने एक स्त्रीमूर्ति बनायी। उसी स्त्रीका नाम माया है। माया आद्याशक्ति वा प्रकृति कहती है। परमेश्वरने मायाके साथ सम्भोग किया था। उससे ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी उत्पत्ति हुई। फिर परमपुरुष ह्वि गये। क्रमशः माया अपने पुत्रोंके निकट पधुंचने लगी। उन्होंने उसका परिचय पूछा था। मायाने उत्तरमें कहा—'मैं निराकार, अगोचर और आदिपुरुषकी सहचारिणी हूँ। इस समय तुम्हारी सहचर्याके लिये आयी हूँ।' किन्तु ब्रह्मा, विष्णु और शिवने सहसा उसकी बात मानी न थी। विशेषतः विष्णु ऐसे वैसे व्यक्ति न रहे, मायासे कठिन प्रश्न करने लगे। फिर अत्यन्त क्रुद्ध हो माया अपने पुत्रोंको हरानेके लिये दुर्गामूर्तिमें आविर्भूत हुई। उस महामहदुरी मूर्तिकी देख

ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश्वर वहुत डरे और आत्मविस्मृत हो मायाको मनोवाञ्छा पूर्ण करते गये। इससे तीन कन्या हुई—सरस्वती, लक्ष्मी और उमा। माया ब्रह्मादिके साथ तीनों कन्याओंका विवाह कर स्वाम्ना-सुखी प्रदेशमें रहने लगी। उसने उक्त छहों पर विगत बनाने और नानाविध भ्रमात्मक ज्ञान एवं भ्रमूलक क्रियाकाण्ड चमानेका भार डाला था। ब्रह्मादि सकल मायाके अधीन है। इसीसे उनका पूजनादि करनेकी विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल कवीरके स्वल्पज्ञानको लाभ करना ही सर्वधर्मका मूल अभिप्राय है। फिर भी सकल देवता और उपासक उस दुर्लभ ज्ञानको पा नहीं सकते।

सकल जोषोंका आत्मा समान है। यह पापमुक्त होनेसे मनमाना रूप परिग्रह कर सकता है। वीवात्मा जवतक पापसे नहीं कटूता, तवतक नाना योनि घूमता है। सत्त्वापात होनेसे यह किसी प्रहके शरीरमें प्रवेश करता है। स्वर्ग और नरक—उभय मायाके कार्य हैं। वास्तविक स्वर्ग और नरक कहीं नहीं होता। पृथिवीका सुख हो स्वर्ग और पृथिवीका दुःख ही नरक है।

कवीरपन्थी संसारके त्यागकी ही सत् परामर्ग वताते हैं। कारण—संसारमें रहते प्राणा, भय, लोभ प्रसृति द्वारा चित्तको शुद्ध नहीं होती। सुतरां शान्तिके लाभमें भी नाना विघ्न पड़ते हैं। गुरुकी भक्ति ही प्रधान धर्म है। दोष करने पर गुरु शिष्यको भर्त्सना कर सकता, किन्तु दण्ड देनेका अधिकार नहीं रखता। कवीर देखो।

युद्धप्रदेश और मध्यभारतमें अनेक कवीरपन्थी रहते हैं। इनमें कोई विषयी और कोई धर्मव्रताव-सम्बन्धी है। यह अत्यन्त सत्यप्रिय, उपद्रवशून्य और क्षुभीत होते हैं। इनके उदासीन अपरापर सत्याभिव्यक्ति की भांति न तो दुरन्तभाव रहते और न भिक्षा मांगते ही फिरते हैं।

काशीधाममें कवीरचौरा नामक स्थानपर अनेक कवीरपन्थी पधुंच वास करते हैं। पूर्व काशीराज बलवन्धसिंहने इनके आचारादिकी वृत्ति बांध दी थी।

उभके पुत्र 'वितथि' वनी रनको व वना निरूपण करनीको कायोकि निरुट एक मिका जगाया। उभमें प्राय ३३०० बबोरपत्नी समायी पड़ुवे धी।

बबोर-बड़ (वि० पु०) विद्यान पट्टरुच बरपदका बड़ा पड़। यह मजोबकि निरुट नर्मदा बिनारे पबलित है। इसका परोबाद बतुदंग सडस बडर परिमित पाता है। बबोरबड़की कायामें सप्त सडस व्यक्ति विद्यान कर सकती है।

बबोबा (व० खी०) पडा, जोड़ू।

बबोबा (वि० पु०) इचविमिय एक पड़। यह बडासके पि इमूम, कडोपिबे सुरी, बुझमदेयके मडबास तथा कुमायु और पञ्चाबके भांगड़े बिलेमें उत्पन्न होता है। मध्यप्रदेय, दक्षिणाब्, काप्रमोर तथा मीपाबकी तराईमें भी इसका प्रभाव नहीं। बबोबा एक सुदु हच है। परम पमरुदधी मिबते है। पखोबा गुच्छ बनता, जो रजवचं ब्रुलिये पाच्छादित रहता है। इस ब्रुलिये रैयमको रंगती है। पछसी एक और रैयमको पाबधेर सोडा काब अलमें बबालती है। सुलायम पड़मिये रैयम निबाब सेते है। फिर १ पाव बबोबा (रजवचं ब्रुबि), पाबकटाक तिलतेल, १ पाब बिडबरी और सोडा जोड़ु बडी बब पाबबच्छे उबाका जाता है। पोडे रैयम काब जोडे १३ मिमड और उबाकना पड़ता है। इससे रैयम गारुकोबे रंगकी हो जाती है। बबोबाके मरचम भी बनता, जो पोडे पुन्तोपर बड़ता है। बबोबा लण्य, रैबब और विपाज रहता है। इसको पबिबधे पबिब मात्रा ३ रतो है। कहुलबाना, बडपना ऐकी।

बबुबाना (वि० वि०) खीकार या बबुब कराना, सु हथे बडाना।

बबुलि (व० खी०) जन्मुके देहका पबानु भाव, जानवरके बिबाका पिबका दिव्या।

बबुतर (फ्रा० पु०) कपोत, परैवा। ५०० ऐकी।

बबुतरका झाड़ (वि० पु०) एक पितपापड़ा। यह इच दक्षिण-पचिम भारत और सिंधुलमें उत्पन्न होता है। फिर दक्षिण कोइर, मध्य और पड़ुबियामें भी इसका प्रभाव नहीं। बबुदे प्रायमें नहीं नहीं

इसे लोक आहारमें व्यवहार करती है। यह इच सुखा कर पितपापड़ेकी मति चौबबमें डाबा जाता है। किन्तु इसका पासाद उससे कुछ बडु और पमिय लगता है।

बबुतरका फूल (वि० पु०) सुपविमिय, एक फूल।

बबुतरकी बड़ (वि० खी०) मूकनिर्मल, एक बड़ो।

बबुतरकाब (फ्रा० पु०) कपोतपालक, कबुतर पालने या बडुबिबाका।

बबुतरकाजी (फ्रा० खी०) कपोतपालका कायें, कबुतर पालने या उकानेका काम।

बबुतरा (फ्रा० खी०) १ कपोतिका, मादा कबुतर। २ वैइम, गांबकी नाचनेगानिबाकी रण्डो।

बबुद (फ्रा० वि०) १ मौल, खाम, पासमानो, मोबा। (पु०) २ मोबा बंगकोचन, मौलकछो।

बबुदो (फ्रा० वि०) लण्य, खाम, पासमानो, मोबा।

बबुल (व० पु०) १ खीकार, मच्छर। २ सप्यति, रज, एकमत। ३ पतुल्ल सडस, सुबाकिब पड़ुब। ४ प्रतिपति, इकरार। ५ तात्रक खोतियोड योत्र विमिय।

बबुलना (वि० वि०) खीकार करना, बड देना, मानना।

बबुलसूरत (व० वि०) सुन्दर, बबुसूरत।

बबुलियत (व० खी०) १ प्रतिपति, मच्छरी, धकार। २ परोबिकाकी प्रतिमूर्ति, पड़ुबी मबब।

बबुलो (फ्रा० खी०) तबुल एक बयब वेदकका एक सभियव, बाबल और बनेकी दाबडे बनी हुयो बिबडो।

बब (व० पु०) १ मलाबरोड, ब्रुजियत, पड़, दख साप्र न पानेको हासत। २ पबिबार, दम्बुल। ३ नियमविमिय, एक कापदा। यह सुसजमानु बाद गार्डेबि समय बलता रहा। इसके पबिबार पर सेनानी पयमा वितन जमीनुहारसे शिता और लिया हुवा बन शूमिबि करमें सुबरे शिता बा। बबवरने यह नियम रचित बिवा, किन्तु पबबके नवाबोंमें फिर बका दिया। बब दो प्रकारका होता बा— काबकाभी और प्रमानो या बडुबी। काबकाभीके

अनुसार सेनानी अपना वेतन पहले ही जमीन्दारसे पाता, पीछे भूमिके करसे उतना धन आता या न आता। अमानी या बच्चीके अनुसार सेनानी यदा-शक्ति धन ग्रहण करता था। फिर वह मैकड़े पीछे ३) रु० कमीशन भी पाता रहा। ४ आन्नापत्रविशेष, एक हुकनामा। इसीके अधिकार पर सुसन्मान् बादमाहोके समय सेनानी अपना वेतन जमीन्दारसे ग्रहण करता था। बलपूर्वक अधिकार करनेको 'कल्ल-बिल-उन्न' और पूर्ण अधिकारको 'कल्ल-ओ-दखूल' कहते हैं।

कक्षा (अ० पु०) १ मुठि, गिरफ्त, चुहन, पञ्जा। २ दण्ड, दस्त्रा, बेट। ३ द्वारपन्नि, नरमादगी, कड़ा। यह लोह पिचल प्रकृति धातुसे बनता है। कछोमें दो चतुष्कोण खण्ड संयुक्त रहते, जो सूचीपर चन सकते हैं। यह कपाट एवं पेटिकादिमें सन्निस्वान् घुमानेको सगावां जाता है। ४ ग्रहण, दखूल। ५ उपरिस्थ बाहु, ऊपरला बाजू, मुजदखल। ६ मस्युबुष्का कूटो-पायाविशेष, गडा, पडुंघा, कुशतीका एक पेंच। कुशतीमें एक पहलवान्की दूसरका गटा पकड़ते, उरुके हाथपर चोट चम्पाने, भटका सगाने और अपने हाथकी छोड़ा नानेका नाम कक्षा है।

कक्षादार (फा० वि०) १ अधिकारी। २ कक्षा सगा हुआ, जो क्लेशमें जुड़ा हो।

कक्षियत (अ० स्त्री०) मन्त्रावरोध, कल्ल, दस्त साफ न उतरनेकी हालत।

कक्षुन्दवसूल (फा० पु०) पत्रविशेष, एक कागज़। इसपर वेतन लेनेवाला अपने हस्ताक्षर करता है।

कल्ल—महिमुर राज्यका एक कोषाकार गिरि। यह मासवहो तहसीलमें सिङ्गसा और अर्कवती नदीके मध्य अक्षा० १२° ३०' उ० तथा देशा० ८६° २२' पू०पर अवस्थित है। पहले महिमुरके हिन्दू और सुसन्मान् राजा टोपी व्यक्तिको इसी गिरि पर ले जा कर बन्दी बनाते थे। इस स्थानका वायु अस्वास्थ्यकर है। इसीसे अपराधीका जीवन यौन्न निःशेष हो जाता था।

कल्ल (अ० स्त्री०) शयस्थान, समाधि, तुलबत, मन्त्रार।

कल्लस्नान (फा० पु०) उतावाष, गोरिस्नान, बहृतमी कल्लोकी जगह।

कमी (हिं० क्रि०-वि०) १ पुष्ट, एकदा, पेरतर, किसी समय। २ क्वचित्, कदाचित्, गाह-गाह, वाञ्छीकाव्। ३ कदापि, कश्चित्, किसी वह।

कमी कमी (हिं० क्रि० वि०) कदा कदा, गाह, लवतव।

कम्, कमी इका।

कम् (सं० अव्य०) १ जस, पानी। २ मस्तक, मत्वा। ३ सुन्द, आराम। ४ मद्रक, मन्दि। ५ पाटपूरपार्थ निरर्थक शब्द।

कम (फा० वि०) १ अल्प, छोड़ा। २ गर्ह, खराब। यह शब्द उपरोक्त दोनों अर्थमें क्रियाविशेषणकी भांति भी आता है।

कम-असन (फा० वि०) अकुलौन, वर्षमहर, हरामी, कुसूल, घटियन।

कमक (सं० वि०) कम्-पिड् भावे अच्-स्वावे अक्। १ कामुक, खाहिशमन्, चाहनेवाला। (पु०) २ गौत-प्रवर्तक एक शक्ति।

कम-कम (फा० क्रि०-वि०) अल्प-अल्प, थोड़ा थोड़ा।

कमकस (हिं० वि०) अल्प, सुन्द, जोरने काम न करनेवाला।

कमस्वाव (फा० पु०) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह गाढ़ एवं सून्न रहता और कीटसूत्रसे बनता है। फिर इसपर सुवर्ण एवं रजतके सूत्रसे प्रसून भी बना देते हैं। किसी कमस्वाव पर एक और और किसी पर दोनों और कलावत्तके बेलवूटे रहते हैं। यह बहुमूल्य वस्त्र है। इसका खण्ड (यान) चार या साढ़े चार गज पड़ता है। काशीमें कमस्वाव बहुत तैयार होता है।

कमखीरा (फा० पु०) पशुरोगविशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। यह रोग पशुके मुखमें होता है। इसके प्रभावसे पशु अपना मुख चला नहीं सकते और सूखे रहते हैं।

कमझर (हिं० पु०) १ कासुककार, कामानुगर, चाप बनानेवाला। २ अस्त्रयोजयिता, इच्छियां जोड़ने वा

भठनिवाहा । ३ चित्रकार, सुबोहर । (वि०) ३ कृष्ण, शोमियार ।

शमहरा (हि० शो०) १ शामुंशकरथ, शमानदरी, चाप बनायेका काम । २ पक्षिकोशमविद्या, इच्छिपोंके कोढ़ने या बांधनेका हुनर ।

शमया (हि० पु०) १ सुदृढ कानुंश, शमानवा, छोटी शमान् । २ शारङ्गे, शीतारा, बिंगरी । ३ क्लिप्त-प्रायकलविमिह चित्रावस पदांश, शीङ्गीको शमानो । इस शब्दको तयक व्यवहार करते हैं । यहसे शमयेमें एक रज्जु बांध पासरोटनोको पातल कर लेते, जोके मुमा देते हैं । ३ क्लिप्त पटल निहारवादार शत । ४ शना-शाका, प्यास शमरा । ५ शिष्ट वा भाव प्रकृतिको शाम एवं शमनयोग शाखा, बांध या श्वाशको पतली घोर लथोली शाल । इससे मज्जु वा शमती है । ७ शिष्टका शाम तथा शमनयोग शिष्ट, पतली घोर लथोली शङ्गे । ८ शाहादिका शामकण्ठ, शकड़ी बगैरइका नाशक टुकड़ा ।

शमघो (तु० शो०) १ शक्तिवा, बांसको शाल । २ यद्विविध नाशक शङ्गे । ३ शाहादिका शाम पण्ड, शकड़ी बगैरइका नाशक टुकड़ा ।

शमण्या (हि०) शमण्या शोकी ।

शमबोर (प्सा० वि०) निर्भीय, नाताकत, लघर ।

शमबोरी (प्सा० शो०) पशामर्थ, नातवागो, शिचर मिचर ।

शमवा (हि० पु०) क्लिप्तप्रायकलविमिह, चित्रावस पदायंविशेष, शीङ्गीको शमानो । शमवा शोकी ।

शमटा (हि० पु०) इच्छविशेष, एक पिट्ट । यह कण्ठकाशीर्ष एवं सुदृढ होता है ।

शमटो (हि०) शमती शोकी ।

शमठ (सं० पु०-शो०) शम पठ । शमठः । १२५ । १ । १ कण्ठय, कहुवा । शमठ शोकी । २ शिष्टका द्वितीय शवतार । ३ शय, बांध । ४ शैलविशेष, एक राशक । ५ शङ्गीको, शारमुयत, शिष्ट । ६ शाम्बोजराशविशेष, एक राजा । (शार० ७५१२) ७ माण्डविशेष, एक बरतन । 'शमानत' तुम्बी वा शारिजेसको शोलकर

को पात्र सुमिषोके शिबे बनाया जाता, बड़ो शमठ कहाता है । ८ सुमिषविशेष, एक श्ववि । ९ शारिजेसविशेष, एक राजा । यह एक शर्मोद्धत प्राचीन वाद्य है ।

शमठपति (सं० पु०) शक्यपराज, कहुवोके राजा ।

शमठा (हि० पु०) १ चाय शमान् । २ एक शैल मन्नामा । इसमें शय तयप्या करके शकाम मिर्जरा पायी गी ।

शमठाशुरशय (सं० पु०) शयिपपुराशका एक शय । इसमें शमठ देखके बरसी कृष्ण शिखी है ।

शमंठी (सं० शो०) शमठ-शोम् । १ सुदृढकण्ठय शक्ति, शोटे-शोटे कहुवोका शिरोह । २ शक्यपी कहुयो । ३ शङ्गीको, शारमुय, शिष्ट ।

शमण्डल (हि०) शक्यप शोकी ।

शमण्डली (हि० वि०) १ शमण्डलसुमुञ्ज, जो शमण्डल रहता हो । २ पापण्ड पुर शितरत, शङ्गीविवा । (पु०) ३ शङ्गा ।

शमण्डल (सं० पु०-शो०) शक्य शक्य शमानपतिवर्ग शार तं शक्ति शङ्गाति, शक्य शक्य-शु । शक्यपी शिष्ट-शित शक्य शक्य । ४ शक्यपी शक्य । १ शक्तिवा, शक्य, तुम्बी वा शारिजेस द्वारा निर्मित शमानपिषोका एक पात्र, शमण्डल शोका । इसका संस्कृत पर्याय— क्लिप्तोय शार शक्य है । २ शङ्गीशय, पाकरका पिट्ट । ३ शङ्गीशय, पारस-शोपल ।

शमण्डलसु (सं० पु०) शङ्गीशय, पाकरका पिट्ट ।

शमण्डलशर (सं० पु०) शिव शमण्डल शारक करके बांधे मन्नादेव ।

शमतो (हि० शो०) १ शक्यल, शमी, शटो । (वि०) २ शक्य शम, शोका, जो शक्य न हो ।

शमयु (सं० शो०) शोविशेष, शिनसुतो ।

“शमयुः शिवशोचयुः शमयुः” (शर० १५५१२)

शमन (सं० शि०) शमनशक्य भावें शुक्य । १ शमन-शक्य, शक्य शक्य । २ शामुंश, शारिजेसमन्, शारिजेस शक्य । (पु०) ३ शयकोशकण्ठ । ४ शक्य शमानदेव । ५ शङ्गा ।

शमनवा (हि० पु०) शमानवा, शमवा, बड़ईका एक शोकार । यह शरमा शमानिर्भ शाम देता है ।

कमगच्छद (सं० पु०) कमनः कमनोयः छदः पक्षो यस्य, वहुव्री० । कङ्कपक्षी, वगला, वृटीमार ।

कमना (हिं० क्रि०) न्यून पडना, घटना, उतरना, टलना, नीचेको चनना ।

कमनीय (सं० त्रि०) काम्यते यत्, कम् कर्मणि अनी-यत् । १ स्मृष्टणीय, कामना करने योग्य, चाहने काविल । २ सुन्दर, खूबसूरत । इसका संस्कृत-पर्याय—चारु, हारि, रुचिर, मनोहर, वनगु, कान्त, अभिराम, वन्दुर, वाम, रुच्य, सुपम, शोभन, मधु, मञ्जुल, मनोरम, साधु, रस्य, मनोज्ञ, पेयल, हृद्य, सुन्दर, काम्य, कास्त्र, सौम्य, मधुर और प्रिय है ।

कमनीयता (सं० स्त्री०) कमनीयस्य भावः, कमनीय-तल्-टाप् । कम्य भावस्तनी । पा ३।१।१८ । १ सौन्दर्य, खूबसूरती । २ कमनोयत्व, मरगूवी, टिनखाड़ी ।

कमनैत (हिं० पु०) १ धनुर्वर, कामानवरदार, जो कामान रखता हो ।

कमनैती (हिं० स्त्री०) धनुर्विद्या, कामानवरदारी, कामान इसैमाल करनेका इत्थम ।

कमन्द (फ्रा० स्त्री०) १ पाग, जाल । २ अस्थिर-ग्रन्थि, मरकफन्दा । ३ रज्जुकी तुलाधिरोहणी, रस्त्रीकी तुली हुयी सीढ़ी । इससे तस्कर उच्च भयनों पर चढ़ जाते हैं । ४ पाशवन्ध, जालका फन्दा ।

कमन्द (हिं०) कर्मण्ये शब्द ।

कमन्ध (सं० स्त्री०) कं शिरः ग्रन्थं शून्यं यस्य । १ कवन्ध, सरकटा धड । कर्म दीप्तिं जीवनं वा दधाति, कम-धा-उ ष्टपोदगादित्वात् । २ जल, पानी । हिन्दीमें लडायी-भगड़े और सरफन्द को भी कमन्ध कहते हैं ।

कमवधूत (फ्रा० वि०) देवोपहत, वटनसीध, अभागो ।

कमवधूती (फ्रा० स्त्री०) मन्दभाग्य, वदनमीचो ।

कमयाव (फ्रा० वि०) विरल, अजीव, सुप्रिकल्पसे मिलनेवाला ।

कमर (सं० त्रि०) कम-अर-चित् । अर्धकामिषमिषमिर्दन्वि-न्विषिण् । उ० ३।१।३१ । कामुक, खादिशमन्द, चाहने-वाला ।

कमर (फ्रा० स्त्री०) १ ओषी, कटि, सुख, कूना ।

रुटि श्वो । २ मध्य, दरमियान, वीच । ३ मेखना, मिनतका, पट्टा । ४ मङ्गयुहका एक हस्तनाधिव, कुम्भीका कोयी पेंच । यह कटिप्रदेशमें चलता है । इसी प्रकार 'कमरको टंगड़ी' भी होती है । एक पहलवान् जब दूसरेकी पीठपर आता और अपना बायां हाथ उसकी कमर पर पड़वाता, तब नीचेवाला अपना बायां हाथ वगलसे निकाल उसकी कमर पर चढाता और बायीं टांग लडा कमरके ऊपरसे उसकी सामने घुमा लाता है ।

कमरंग (हिं० पु०) कमरङ्ग, कमरख । कमरग शब्द । कमरकटा (हिं० पु०) प्राकार, बचोदध, मोनापनाह, कंगूरेदार ऊंचो टीवार ।

कमरकस (हिं० पु०) पनागनिर्यास, टाकको गोंद । इसे जुनिया-गोंद भी कहते हैं । यह रक्तवर्ण एवं मासुर होता है । इसका पाष्वाट कपाय है । कमर-कंस संग्रहणी और कामग्वासका महोपध है ।

कमरकसायो (हिं०) कमरुगायो शब्द ।

कमर-कुगायी (फ्रा० स्त्री०) अपराधोसे निया जान-वाना एक नर, प्रसामोसे बचल होनेवाला रूपया । यह प्रथा पूर्वकाल प्रचलित रही । जब कोयी अप्रसामो सिपार्शीसे खूबपूरीपके न्यिये पयकाग लेता, तब उसे करस्वरूप कुछ धन देता था । इसीका नाम 'कमर-कुगायी' है । २ मेखलोह(टन, कमरवन्दकी खोलायो । कमरकोट, कमरकटा शब्द ।

कमरकोठा (हिं० पु०) स्य णाका एक भाग, गड़नीर लठ्ठे या कडीका एक हिस्सा । यह भित्तिसे बहिर्वर्ती रहता है ।

कमरख (हिं० पु०) कर्मरङ्ग, एक पेड़ । (Averrhoë Carambola) इसे बंगलामें कामरंगा, पासासोमें करटथी, गुजरातीमें तमरक, मराठोंमें करमर, ताम्रिनमें तमर्त, तेलगुमें करोमोंग, मसयमें तमरत्तुक और ब्राह्मोंमें जौनसी कहते हैं । कमरखमें अस्त्रत्व, उष्यत्व, वातहरत्व एवं पिच्छजनकत्व रहता, किन्तु पकनेसे मधुरास्त्रत्व तथा वन-पुष्टि-रुचिकरत्व बढ़ता है । (राजनिष्य) यह कटुपाक, अस्त्र-पित्तकर और तीक्ष्ण गुणविशिष्ट है । (राजवज्र) कमरखका

पाम-पत्र प्राई, पक्क, बातनामन, उष्य एवं पित्त कर रहता, किन्तु एक क्षणमें मधुर तथा पक्क-सगता और बस, पुष्टि एवं रुचिकी उच्च करता है। (शुद्धि-पत्र) यह हिम प्राई, पक्क और उष्य तथा बातनामन है। (नाम-पत्र)

कमरप एक सुदृग् प्रथ है। इसकी एक एक पङ्कन प्रायश्च, हा पङ्कन दीर्घ तथा ईष्य तीव्र्याप रहती और सुपिरमें सगती है। उ वायोमें यह १५२०-पोटिई पधिक लकी बनता। भारतमें कमरपकी उच्च बहुत होती है। एक उषोइनेई पति स्यादु समती है। यह उत्तरमें साहोरतक सिक्ता है।

बसे पसोका रस रगनमें अटायोको तरह छोड़ा जाता और मध्यवता काटका काम देखाता है। इसका पत्र, मूल और पत्रन शीतक भोपबकी मति व्यपहृत जाता है। युवा पत्रन अरमें पिक्ता सकती है।

कमरप दो प्रकारका होता है—मोटा और पछा। मोटा कमरप अरके लिये उपयोगी है। किन्तु कथा पानिई अर पाता और बस-पान दुःख पाता है। पछा पत्र चटमो और तरकारोंमें मो पकता है।

कमरप पर्यामें प्लता और शीतकामको पकता है। एक प्राय १ इंच लम्बा होता है। पामोच इमें कथा मो खाते हैं। इसका मध्य अदु, परत और पा-हादन है। इसको इमोत्र और योडो दारकोनो ज्ञान मर्कत बनाती है। यह मर्कत पोमिमें बहुत पक्का लगता है। कमरपका सुबबन्द भी समुदा होता है।

इसका काष्ठ इनका काम कडा और दानेदार रहता है। सुन्दरपमें इने मकान् और माल-सामान् बनानेमें व्यवहार करती है।

कमरको (हिं वि) १ कर्मरहाकार कमरप-वेधा, पक्षिदार। (खो०) २ कर्मरहाकार रचना, पक्षिदार कटाव।

कमरपपत्रो (हिं प्र०) पङ्क, तलवार।

कमरपट्टा (हिं वि०) १ वकपट्ट, प्मोटापुगत कुबड़ा। २ नपु मक, नामद, कमरका ठीका।

कमरतीका (हिं पु०) मकसुबका एक इष्टकावत, कुम्तीका कोई पेश।

कमरतोड़, बनतीया ईकी।

कमर दिबाह (हिं पु०) कमरपका कमरेका पत्र। इसमें पक्षी पक्षपर पर्याच कथा खाता है।

कमरपत्रो (हिं खो०) कटिबन्ध, कमरकी पञ्जी। इसे चपकन बगैरइमें कमरके उपर लगाती है।

कमरपेटा (हिं पु०) १ प्यायामविशेष, एक कसरत। इने मास पक्षपर लगाती है। यह कमरमें बैठ कपट और काको हाव—दो प्रकार किया जाता है। 'कमरपेटेकी उकटों' मो एक कसरत है। २ मक सुबका एक इष्टकावत, कुम्तीका एक पेश। एक पक्षवान् मोचे पानिई दूधरा चपनो दादनी टांग मोचेबासिकी कमरमें कास चपनी बाये पेरकी जाव और पिंङ्कनोके बोच खाता तथा बाये हावका पछा उसके बाई हावके सुटनीपर मोतरसे दखाता है। फिर दाइने हावसे उषका दाइना बाजू बाँव इला चकता और उसको पासमान देखाता है।

कमरबन्द (प्रा० पु०) १ मीखका इनका, पेट। २ कटिको चारो और नपेटा हुआ बस, कमरकी चारो और कथा लानिबाना कपड़ा। (वि०) ३ बर कटि, तैयार, कमर बसि हुआ।

कमरबन्दी (प्रा० खो०) १ सुबसव्या कड़ायोको योगाव। २ सुबके पर्यं सज्जोकरव कड़ाकी तैयारी।

कमरबन्ध (प्रा० पु०) मकसुबका एक इष्टकावत कुम्तीका कोई पेश। यह पत्र-बन्ध और कड़ाके बन् होता है।

कमरबन्ना (हिं पु०) काठपत्रविशेष, एक लकड़ो। यह पत्रके पत्रमें दोषेय खाते मोचे तड़कपर चपता है।

कमरबन्ना (प्रा० वि०) १ पक्ष, इष्यत, तैयार कमर लकी हुआ। (पु०) २ कमरबन्ना, पत्रकेलमें कमनेबानो एक लकड़ी।

कमरा (पो० पु०=Camera) १ कोठ पागार, कोठरो, कोठा। २ पालोबसिइय यन्त्रविशेष, पक्षमके तकीर उतारनेके यन्त्रका एक जोहार। यह सम्य उ पइय बनता और सुखपर प्रतिबिम्ब ऐमिका मोलाकार प्वटिक बनता है। इसको पवीत्रन पइनेके कटा

बटा सकते हैं। उक्त स्फटिक (Lens) के सम्मुख एक निराधार काच (Ground glass) पडता है। उसीपर प्रथम केन्द्र (Focus) किया जाता है। पीछे निराधार काच हटा खलन (Slide) लगाते हैं। उसीके अन्तर्गत पट्ट होता है। खलनका आच्छादन चठानेसे पट्ट खुलता और स्फटिक निकलनेसे प्रतिबिम्ब पडता है। यह दो प्रकारका होता है—लूसिडा (Lucida) अर्थात् सुप्रभ और अवस्करा (Obscura) अर्थात् निष्प्रभ। सुप्रभ यन्त्र असाधारण आकारके क्रकचायत वा दर्पण-विन्यास द्वारा प्रतिबिम्बपर चित्र प्रदान करता है। उक्त चित्रको यथासुख देखनेके लिये पत्र वा स्थूल पट्टपर उतार सकते हैं। निष्प्रभ उपकरण द्विगुण कूर्मपृष्ठाकार स्फटिक द्वारा प्राप्त वाह्य द्रव्यकी प्रतिमा काच वा समुद्रके केन्द्रमें रखे शक्य पृष्ठपर उतारता है। (हिं०) २ कम्बल। ३ कीटविशेष, एक कीड़ा।

कमरिया (हिं० स्त्री०) १ छोटा कम्बल। “सूर ग्यामक कागी कमरिया चट न दूजी रङ्ग।” (सर) २ कटि, कमर। (पु०) हस्तिविशेष, एक हाथी। इसका देह छुद्र, शण्ड दीर्घ और पद स्थूल रहता है। कमरिया अति प्रबल हस्ती है।

कमरी (फ्रा० वि०) १ दुर्बलकटि, कमजोर कमर-वाला। यह शब्द प्रायः अश्वके विशेषणमें आता है। (स्त्री०) २ छुद्रकण्ठुक, मिरजयी। ३ कमली, छोटा कम्बल। ४ काष्ठखण्डविशेष, एक लकड़ी। यह साधं किष्कुपरिमित दीर्घ रहती और चक्रके शीर्षपर लगती है। (पु०) ५ भग्नमौका, छपड़ा जहाज। ६ अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। इसके कारण अश्व अपने पृष्ठपर भार वा आरौहीकी अधिक क्षण रख नहीं सकता।

कमरिंगा (हिं० पु०) मिष्टान्नविशेष, एक मिठायी। यह बङ्गालमें बहुत बनता है।

कमरुद्दीन खान्—एतमाद्-उद्-दौला मुहम्मद आमिन खान् वजीरके खडके। इनका प्रधान नाम और मुहम्मद फाजिल था। १७२४ ई०की निज़ाम-उल्-मुल्क असफ़ जाहके पदत्याग करने पर बादशाह मुहम्मद

गाहने ‘एतमाद्-उद्-दौला नवाब कमरुद्दीन खान् बहादुर नसरतजद्’ उपाधि दे इन्हें स्वयं वजीर बनाया। अहमदशाह भवदानीके प्रथम आक्रमण करते ही यह गाहजादे अहमदके साथ लड़नेकी भेजे गये थे। किन्तु १७४८ ई०की ११ वीं मार्चकी सरहिन्दके युद्धपर अपने डेरेमें नमान पड़ते समय तोपका गोला लगनेसे इनका देहान्त हुआ।

कमरुद्दीन मीर—एक सुप्रसिद्ध सुसलमान् कवि। इनका उपनाम मिन्नत रहा। यह दिल्लीके अधिवासी थे। वारन इंद्रिप्लसने मुरशिदाबादके नवाबकी सिफारिश पर ‘मलिक-उश-शबारा’ अर्थात् कविराजका उपाधि इन्हें प्रदान किया। यह टचिण हैदराबाद निज़ामने मिलने गये थे। वहां इन्होंने उनकी प्रशंसामें एक ‘कसीदा’ लिखा, जिसके लिये ५०००) रु० नकद पुरस्कार मिला। यह १७६३ ई०की कलकत्तेमें उर्दू और फ़ारसीके डेट नायब शेर छोड मरे थे। इनका बनाया ‘धमनिस्तान’ और ‘शकरिस्तान’ ग्रन्थ छप गया है।

कमल (सं० पु०-स्त्री०) कम-पिड् भावे वृषादित्वात् कलच्, कं जलं भलति भलइरोति, कम्-अल्-अच् वा। १ पद्म, कंबल। उत्पन्न और पत्र देखो। यह श्वेत, नील और रक्त—त्रिविध होता है। कमल शीतल, वर्षणकर एवं मधुर, और पित्त, कफ, तृष्णा, दाह, रक्त, विस्फोटक, विष तथा विसर्पहर है। खेत शीतल एवं मधुर और कफ तथा पित्तघ्न होता है। किन्तु रक्त एवं नीलमें श्वेत कमलसे अल्प गुण रहता है। (भावप्रकाश)

२ जल, पानी। ३ ताम्र, तांबा। ४ लोम, जहरा, तलखा। ५ शीपध, दवा। ६ चारसपत्ती। ७ मृगविशेष, एक हिरन। ८ पाटलवर्ण, एक रंग। ९ आकाश, आसमान्। १० चातकपत्ती, एक चिडिया। ११ भुषक, एक ताल।

“उन्नी मलयताविन अश्वमेधे ऋ २८ गुः।

अमदशाचर्युक्तः कमरुद्दीनं भयानकं॥” (सद्योतदात्मोदर)

१२ पद्मकाष्ठ। १३ कुडुम, रोरी। १४ मूलाशय, मसाना। १५ ब्रह्मा। १६ कमलाका वसाया एक

नगर। १० इन्दीविय। इधरि तीन तीन कुक
 बर्षके चार पद होते हैं। एकमात्रिक इन्द्र पौर
 इष्य मो कमल कहता है। १८ पश्चिमोत्तर,
 वायव्य। १९ गर्भाग्रयवा उपभाग, वरुण,
 पक्ष। २० दीपक रागका द्वितीय पुत्र धीर इय
 बदयोका पति। २१ वासपात्रविश्व, योयोका एक
 दिक्ता। इसकी प्राकृति कमलकी मिश्रती है। यह
 मोम बत्ती ब्रह्मानेके नाम प्राता है। २२ योगविश्व,
 एक बोमारी। इससे बहुत पोसे हो जाती है। बहुधा
 लोग इसे 'बाबर' कहते हैं। (त्रि०) २३ वासुध,
 आश्रममन्त्र, आश्रमेवासा। २४ पाठसपर्यन्तुह।

कमल चण्डा (सं० पु०) पद्मवीज, कमल महा।
 कमलक (सं० श्लो०) कमल काँच कम्। १ कमल
 काँच। २ काशीरस नगरविश्व। (एनव ३१११)
 कमलकन्द (सं० पु०) गान्धक, कमलकी जड़।
 यह अट, तुवर, मधुर, सुह, मज्ज्दीयकर, हृद्य,
 म्रैत्र्य, इष्य, शीतल, दुर्लभ एवं पाण्डव पौर रक्षयित,
 दाह, क्षया, क्षय विरु, वात, गुण्ड, कास, क्षमि,
 सुषुरोग तथा रक्तदीपनायक होता है। (चिकित्सक)
 कमलकचिंसा (सं० श्लो०) पद्मवीजबीज, कमल
 गहरेको चोस। यह मधुर, तुवर, शीतल कहु तिष्ठ,
 सुषुण्णकर पौर रक्तदीप तथा क्षयाहर होती है।

(चिकित्सक)

कमलकोट (सं० पु०) कमलकचर्प कोट। १ कोट
 विश्व, कोरि कोड़ा। २ सामविश्व, कोरि नाव।
 कमलकंधर (सं० पु०-श्लो०) पद्मविश्वक कमलका
 धृत। यह शीतल, पाहो मधुर, अट, हृद्य गर्भ
 कोपहर पौर हृद्य होता है। (चिकित्सक)

कमलकारक (सं० पु०) कमलक कारक, १-तत्।
 पद्मविश्व, कमलकी लक्ष्मी।

कमलकोप (सं० पु०) कमलक कोप, १-तत्।
 कमलकारक, कमलकी लक्ष्मी।

कमलकण्ड (सं० श्लो०) कमल कण्ड। वनवातः
 कण्ड। स नुपः। (वर्तक) पद्मकण्ड कमलकी
 मज्जमा।

कमलकण्डा (सं० पु०) पद्मवीज, काँचका तुल्य म।

यह इयकरी बहिर्मत होता है। बल्लक कठोर पड़ता
 है। कमलकण्डा श्वेतवर्ण सारभूत हृद्यके मज्जाम
 रहता है। वनवातः लक्ष्मी।

कमलकर्म (सं० पु०) पद्मकण्ड, काँचका जाता।
 कमलकर्मम (सं० श्लो०) कमलकर्मम नामा इव
 नामा वप, मध्यपहलो०। पद्मके मध्यकण्डकी भांति
 कान्तिविशिष्ट, काँचके लक्ष्मीकी तरह पद्मकर्मनामा।
 कमलकण्ड—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (चिकित्सक)
 कमलकण्ड (सं० पु०) कमलक; कमलकण्ड इन्द्र
 पक्षी यक्ष, बहुलो०। १ बहुपक्षी वनका, रूढीमार।
 २ पद्मकण्ड, काँचका पता।

कमलकण (सं० पु०) कमलकात् विद्योर्नामिकमलकात्,
 जायते, कमलक जन्म क। ब्रह्मा।

कमलकेश—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। इनका
 निवासकान पन्डुर रथा। कमलकेश निम्बकेशके
 पिता पौर मणितमक्षेप-रचयिता लक्ष्मीधर तथा
 पद्म्यासिधि-रचयिता नायनाक्षके पितामह थे।

कमलकेशी (सं० श्लो०) काशीराराज कलितादिश्वकी
 पत्नी पौर राजा कुबजयापोडकी माता।
 (एनवर्षीकी ३१००)

कमलकण्य (सं० श्लो०) कमलकण्य सुन्दर निवसुय,
 जिसके काँचकी तरह म्बुधरत पाँच रहे। (पु०)
 १ विष्णु। २ रामकण्ड। ३ इष्य।

कमलकण्य—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। देवराजके
 निम्बकण्य, प्राचीन इनका कथन उद्धृत किया है।

कमलकण्यदोषित—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्।
 कवीन्द्र इनका उल्लेख किया है।

कमलकाम (सं० पु०) कामिने कमल रचनेवाले
 विष्णु।

कमलकाम (सं० श्लो०) कृपान, काँचकी लक्ष्मी।

"कमलकण्य इव पाल कण्डु।
 यत्र शीतल वनय के पाल इ" (वृत्ती)

कमलकण्य (सं० श्लो०) कमलकण्यक पदविश्व।
 कमलकण्यकी भांति चतुर्विध, जिसके काँचकी
 पल्लुकी लक्ष्मी पाँच रहे।

कमलकण्य (सं० पु०) चित्रकाण्यविश्व, विश्वी

द्विष्टको प्रायरी। इसके अक्षर नियमपूर्वक लिखनेसे कमलका चित्र उत्तर आता है।

कमलवन्धु (सं० पु०) कमलका बन्धु सूर्य।
कमलवायी (हिं० स्त्री०) रोगविशेष, एक बीमारी।

इससे शरीर पीला पड़ जाता है।

कमलभव (सं० पु०) कमलान् भवतीति, कमल-
भू-भण् । १ कमलज, ब्रह्मा । २ एक जैन ग्रन्थकार।
इन्होंने कर्णाटी भाषामें शान्तिनाथपुराण बनाया है।

कमलभू (सं० पु०) ब्रह्मा।

कमलमूल (सं० स्त्री०) कमलकन्द, कंवलकी जड़।

कमलयोनि (सं० पु०) कमलं विष्णुनामिकमलं
योनिस्तत्पत्तिस्थान यस्य, बहुव्री० । १ ब्रह्मा। (स्त्री०)
पद्मको उत्पत्तिको स्थान, कंवल पैदा होनेकी जगह।

कमलयोनि—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। नृसिंहने
सूर्यसिंहास्तवासनाभाष्यमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कमलमोचन—सद्गीतचिन्तामणि और सद्गीतानुत्तनामक
संस्कृत ग्रन्थरचयिता।

कमलवती, बमवदेशी देवी।

कमलवीज (सं० स्त्री०) पद्मबीज, कंवलका तुल्य म,
कमलगुह्य। भावप्रकाशके मतसे यह स्वादु, कपाय
एवं तिक्ततरस, शीतल, गुरु, विष्टमि, शुक्रवर्धक, रुच्य,
बलकारक, संप्रादक, गर्भसंस्थापक और कफ, वायु,
पित्त, रक्त तथा दाहनाशक है।

कमलवदन (सं० त्रि०) कमलमिध वदनं यच्च,
बहुव्री०। पद्मकी भांति मुखकान्तिविशिष्ट, जो कमल-
की तरह खूबसूरत मुँह रखता हो।

कमलवर्धन—एक कम्पनराज। यह काश्मीरराजके
प्रबन्ध शत्रु रहे। बालक शूरवर्माके राजा होने पर
इन्होंने सूर्योदय देख काश्मीरराज्य आक्रमण किया।
एकाङ्क और तन्वीमपने इनसे हार मानी थी।
फिर इनके भयसे काश्मीरराज सिंहासनकी प्राया
कोड गुप्त भाषमें भाग खड़े हुये। इन्हें काश्मीरके राजा
बननेकी बड़ी प्राया थी। किन्तु ब्राह्मणोंने इन्हें किसी
प्रकार सिंहासनपर बैठने न दिया और इनके बदले
यशस्वर नामक किसी सामान्य व्यक्तिकी अभिषिक्त
किया। कमलवर्धन ८१६ शककी विद्यमान थे।

कमल वसु—बङ्गालके एक विख्यात व्यक्ति। साधारणतः
लोग इन्हें 'फिरङ्गी कमलवसु' कहते हैं। किन्तु
इस विजातीय उपाधिके संयुक्त होनेका कारण बहुतसे
लोग नहीं जानते।

कमल वसुका असली नाम रामकमल वसु था।
१०६० ई०की इन्होंने गोवाहांगीके निकटवर्ती गोईपुर
नामक ग्राममें जन्म लिया। इनके पिता माणिकचन्द्र
वसु चन्दननगरवासी फ्रांसोमिथ्रियोंके अधीन तहसिलदार
थे। उसी समय गोईपुरमें कगल कानरूपी गीतना
रोगका प्रादुर्भाव हुआ। अधिवासी प्राणके भयसे
स्थानांतरकी भाग रहे थे। माणिकचन्द्र स्त्री और
अपने चार पुत्र चन्दन-नगर में आये। फिर वह
सन्धभूमिको लोटे न थे। रामकमल गुप्तकी पाठ-
शालामें यत्सामान्य बंगला और फ्रांसीसी पढ़ने लगे।

यह अपने पिताके व्येष्ट पुत्र थे। पिताको
अवस्था अच्छी न रहनेसे इन्हें पर्यापार्जनकी चेष्टा
करना पड़ी। २० वर्षके वयःकमकाल यह पोर्तगोनीके
सरकारी जहाजी कार्यमें नियुक्त हुये। जहाजी
कपतानोंके साथ संस्व रहनेसे इन्होंने पन्ध्र दिनमें
सामान्य चरित पोर्तगोनी भाषा सीखी थी। किन्तु
कोई उन्नति न हुयी। इन्हें कलपचसे कुछ रूपया
ऋण लेना पड़ा था। उसी रूपयेके लिये यह छोटे
दिन कारागृहमें भी रहे। फिर गोपीभोजन ठाकुरके
यत्न और साहाय्यसे इन्होंने छुटकारा पाया।

रामकमलने जेम्से लौट आया तथा नया व्यव-
साय आरम्भ किया था। इस वार इनका भाग्य क्रिया,
हिं' गुहा प्रवृत्ति प्रधान प्रधान वयिकोंके साथ कारखार
चलने लगा। पोर्तगोनी वयिकोंके साथ कामकाज कर
यह सम्यक् सम्पत्तिवासी बन गये। फिर रामकमल
चन्दननगरके लुनाहॉसे एक प्रकारकी छोट तैयार करा
अमेरिका भेजने लगे। उसमें इन्हें विनक्षण लाभ
हुवा था। कहते—प्रत्येक जहाजमें ५००००) ६०
मिले। इसीप्रकार इन्होंने दस बार लाभ उठाया था।
पोर्तगोनी (फिरङ्गियों)के संस्वसे बड़े आदमी बननेपर
साग इन्हें 'फिरङ्गी कमल वसु' कहने लगे। वास्तविक
यह एक कष्टर हिन्दू थे। रामकमल दोष-दुर्गाक्षवादि

बहुत पूजा महासमारोहमें सम्पन्न करते। विरोधता काय्य पक्षितों पर एवं विलक्षण चमत्कारों। दीनदरिद्रोंको यह यथैव शाहाय्य पशु करते। फिर शाह्य पक्षितोंको भी यह कितनी ही जमीन मायी दे गयी है। कहते—रामकमलके वरसे जमी पतिव्रि विस्तृत फिरते न ही।

११ बत्सरके बरधमें १ पुत्र, बरबसते एवं चन्दन-जवरमें भूमिसम्पत्ति और बहुतसा लक्ष्मण रूपया जोड़ दृढसंभारमें रामकमल चल बसे।

मध्य मध्य बरबसने पा पवने भवनमें यह ठहरते थे। सर्वप्रथम उद्यो भवनमें द्विविद् द्वैयमें द्वन्द्व-कासीकको स्थापना की। फिर राममोहन रायनी भी उद्यो भवनमें प्रथम पपना मृत बसाया और उष्य बाइबने पाकर बङ्गालको चारो ओर मियनरी मेकनीका बीडा कठाया था। बरबसनेमें पादि ब्राह्म-समाजके निरुद्ध दो तीन सभान् जोड़ कमल वसुका बनी प्रसिद्ध भवन विद्यमान है। इसमें संघचरोंके भविष्यमें उच्च भवन करीद किया है। पात्र मो-कनिक इह वरी 'किरहो कमल कोसका घर' कहते हैं। कमलवपुत्र (सं- पु०) कमलानां वपुः समूहः, १ तत्। पद्मसमूह संघर्षीका मजमा।

कमलसंघ (सं- पु०) कमलानां संघः उत्पत्तिर्घ्नः, बहुव्री०। कमलके उत्पत्त होनेवाले ब्रह्मा।

कमलसिंह—तत्कालसंगीय एक प्राचीन विद्वान् नरीय। १११३ ई०की यह राज्य करते थे। कमलसिंह देववर्मा (११३० ई०)के पिता और बोरसिंहके पितामह रहे।

कमला (सं- स्त्री०) कमल-टापू। १ लक्ष्मी। यह विन्दुको पत्नी है। १ सुन्दरकी, ए बन्दुते धोत। १ निम्बुबन्धिय, नारङ्गो। इस इष्टको संस्कृत भाषामें

कमला नारङ्ग, नागरङ्ग, सुरङ्ग त्वगाम्य, त्वकसुगम्य, मन्दाद्य गम्यपय एवं सुप्रमिय; द्वन्द्वीमें नारङ्गी, ईगलामें कमला र्मिन् सेवानोमें सुन्दाका, पञ्चाशोमें अन्तर, सुकरातोमें नाङ्गी, बन्धेयामें नारिङ्गवान मारवाडोमें यङ्गुडिमा, दक्षिणोमें नारिङ्गी, तामिळमें बिचिण, सिङ्गुमें मङ्गनिन्द, कर्नाटीमें कित्तोरपुदे, मलयमें माङ्गलारवा, मङ्गिपुरीमें लीदक, परबीमें

नारङ्ग, पारबोमें नारङ्ग, ब्राह्मोमें बरबस और सिङ्गीमें दोदङ्ग कहते हैं। (Citrin Aurantia)

इसको चंगरीको पारिष्, पुष्प पारिष्कार, पोर्तमीन् करकिरा (Larangeira de fructo dolce), इषो नारङ्गस, अनीय नारङ्ग जर्मन औरङ्गेन बीम (Orangen baum) इटलीय परमसिपो (Arancio) और आटिन परकि्या (Arangia) है। चंगरीको 'पारिष्' शब्द परबी 'नारङ्ग'का अर्थक्य है। फिर परबी 'नारङ्ग' संस्कृत 'नारङ्ग' शब्दका अपान्तर मात्र बनता है।

इस बातपर भी गद्गद पड़ता—नारङ्गका नाम कमला क्यों चलता है। किसी किसीके कहनानुसार पाषाणमें कमला लगी है। उसमें निरुद्ध विष्कार उत्पन्न होनेसे इसको कमला कहते हैं। फिर कोई बताता—पक्षी सिपुराकी राजधानी कुमिहायि बर नोन् पाता था। इसीके कुमिहायि प्राचीन नाम कमलाकुके बदल कमला नाम पड़ गया। किन्तु हमारी विवेचनामें यह दोनों बातें ठीक नहीं। क्योंकि बहुत दिनके तैलङ्ग देशमें इधे 'कमलापन्तु' कहते पाये हैं। फिर कमला नाम भी पश्चात् ११३३ ईत वर्षका प्राचीन है। अष्टानन्दने तन्त्राचारमें इसका उल्लेख किया है—

“एकलक्षं द्विविधं कमलं नगरकचम् ।
कमलेयानि बीजानि तन्त्रोपनिषत्तिरन्वयेत् ॥”

इसको उचित भारतके पनेक पान्थमें जोतो है। विरोधता चापिया पहाड़ोके दक्षिण सुष्पको उपजका और मध्यपदेशके नागपुर जिलेमें इधे बहुत जगती है। कुछ कुछ नारङ्गी मियाल द्विबिम् और विमा-कयके दो एक स्थानमें भी जगयो जाती है। मङ्ग-देशमें यह बहुत कम जोतो है। निम्बुबन्धमें या तो फल ही नहीं पाता या फोका पड़ जाता है। भारतवर्षमें जलवायुके अनुसार दिङ्गपर और मार्च मासके मध्य फल उत्तरता है। नागपुरको नारङ्गी वर्षमें दो बार जोतो है।

उल्लिखितका हि कण्ठोचने लिपा,—‘दो यहय वर्ष पूर्व भारतवर्षमें कमला लीन् न था। यदि इसका अस्तित्व रहता, तो संस्कृत भाषामें अवश्य उल्लेख

मिलता और श्लोक वर्णनामें भी नाम निकलता । नारङ्गी चीनसे भारत आयी है । किन्तु डाक्टर बोनेविया इसे भारतका ही द्रव्य बताते हैं ।

यह चार प्रकारकी होती है—(१) मन्तरा, (२) नारङ्गी, (३) मलता और (४) मन्दारिन ।

(१) मन्तरेका छिलका चिकना, पीला और नारङ्गी रहता है । त्वक् पृथक् पड़ती है । इस जातिकी कमला नागपुर, टिप्प्री, फलवर, गुडगांव, साहोर, मूलताम, पूने, मन्द्राज, कुर्ग, सिलहट, भोटान, नेपाल और सिङ्गलमें लगायी जाती है । फ्रव्रहायण वा पीप मास इसका फल पकता है ।

(२) नारङ्गी मन्तरेसे अधिक उत्पन्न होती है । नगानसे यह भारतमें सब जगह उपज सकती है । इसका छिलका मन्तरेसे कड़ा और पतला रहता है । फिर त्वक् भी पृथक् नहीं पड़ती । यह माघ मास फल देती और घृष मह लेती है । इसका रस मन्तरेसे फीका निकलता है ।

(३) मलता या सुवुं नारङ्गी कई प्रकारकी होती है । आजकल हिमालय और दारजिलिङ्गमें जो हरी और बड़ी नारङ्गी उपजती, वह इसीकी अवन्ति मात्र समझ पड़ती है । ब्रह्मदेशमें विलकुल इसी प्रकारकी एक नारङ्गी मिलती है । पूनेकी छोटी नान 'मुमेस्वी' जख्सीवारसे इस देशमें आयी है । लखनऊमें सिपाही विद्रोहसे पहले सुवुं नारङ्गी बहुत लगायी जाती थी । यह कंक्रोली समीपमें मूव होती है । इस अमृततुल्य स्वाद रहती है । गुजरानवालेकी सुवुं नारङ्गी अंगरेजोंकी बहुत पच्छी लगती और सबसे उम्दा समझ पड़ती है ।

(४) मन्दारिन देशनेमें छुद्राकार और रक्तवर्ण होती है । यह नगानमें सुखादु लगती है । सकल प्रकार कमलाकी अपेक्षा इसके पत्र और फलमें सद्गन्ध अधिक रहता है । प्रधानतः यह पर्वतोंपर उपजती है । भारतवर्षमें प्रकृत मन्दारिन नहीं मिलती, सिङ्गलमें देख पड़ती है ।

पहले युरोपमें कमला उपजती न थी । इसे पोर्तुगोस भारतवर्षसे बर्षों ले गये हैं ।

नारङ्गीका व्यवसाय प्रधानतः दो नगानमें होता है—सिलहट (श्रीहट) और नागपुर । इसके लगानेमें मूलपर भार्दता रहना आवश्यक है । किन्तु जन नियम होना न चाहिये । श्रीहटमें इस बातकी सुविधा है । भूमि टाल रहनेमें नदीकी महर आती और हर्षोंको सींचकर घनी जाती है । बर्षां कमसे कम १००० एकरमें नारङ्गी लगती है । पथिक घण्टे दो घण्टे इस बागमें घूम सकता है । टिमस्वर और जनवरी मास नारङ्गीसे लदे हुए देख हृदय फून उठता है । ऐसा बाग युरोपमें भी कहीं देख नहीं पड़ता ।

हरि—बीज जनवरी और फरवरी मास प्रायः ६ इंच भूमिके सम्प्टमें मघनरूपसे बोया जाता है । उक्त सम्प्ट इतने लंबे रहते, कि गूकर अपना टांत लगा नहीं सकते । फिर चूँ और गिनहरियोंको दूर रखनेके लिये जाल भी डाल देते हैं । टुटि होनेसे बीजादुर मित्र किये जाने हैं । किन्तु इस कार्यमें सम्प्ट तोड़ मूलसे सृष्टिकाकी इस प्रकार भटकते, लिममें कोई शक्ति न पड़े । पीछे उन्हें उद्यानके पोषणस्थानमें लगाते हैं । बीजादुर पोषणस्थानमें तदतक रहते, जबतक उद्यानमें अपने इंसित खलपर फिर नहीं पहुंचते । किन्तु यह नियम सदीप प्रतीत होता है । कारण पोषणस्थान वर्षमें केवल एकवार पक्षोधर मास निराया जाता है । कृमम लगाना किसीका मामल नहीं । फिर बीज चुननेमें भी प्रत्य ही चेष्टा करते हैं ।

संपरप एवं निरुलन—प्रत्येक संग्राहकके पास २० फोट जंचो वांसकी सिद्धी होती है । उनकी पोठपर एक मोटा जामीदार टैला नटकता, जिसका सुंघ वेतके छेमे खुला रहता है । इसी टैलेमें वह नारङ्गी तोड़ तोड़ डालता है । फिर वह उतरनेसे पहले सुरभायो पत्तियां और सूखे डालिया भी गिरा देता है । सिवा इसके नारङ्गीके हृषमें दूसरा हाथ नहीं लगाते । लड़के गुलेल लिये कौवे उड़ाया करते हैं । प्रांभोमें गिरी नारङ्गियां सुवुं और कुत्तोंको ब्रिनायो जाती हैं । इसको गणना गण्डेके हिमावम बनती है । २५० गण्डे (३०००)का एक मोन जाता है । इसकी नारङ्गियां ६) ६० सोन बिकती हैं ।

नागपुर और कामठोमें भी नारङ्गीके बहुतसे बाग हैं। मध्यप्रदेसमें इसको छवि बढ़ रही है। नागपुरका मन्तरा बम्बई पधिक जाता है। बुद्धप्रदेसमें निपाण, दिन्नी और कुञ्ज नामपुरसे भी नारङ्गी पाती है।

नारङ्ग—मधुप्रदेस, पश्चिमप्रदेसके और बातनायक है। फिर दूसरी नारङ्गी पञ्चाला पञ्चरस, छत्तारोपें दुपय, बाबुनायक और सारक होती है। (नागबन्ध)

रात्रनिष्कण्डके मतसे यह मधुर एवं पच्य, सुख, रोचन, कषा रस्य और वात, पाम क्षमि, शूल तथा ज्वरनायक है।

इन्दीमें नारङ्गीके जिससे और पूनको मम और सुशुभ समझते हैं। इसका शूदा तर रहता है। ठण्डकमें पानी पाने या सोपार चढ़ कामसे नारङ्गी बिलाने है। इसका पकै सफेद और सफेदके दन्तको दूर करता है। पीड़े या कौको रोहनके बिये इसे बहुत काममें लाते हैं। नारङ्गीका पकै भी निहायत ताकतवर है। इसके हिलके और फूलसे रस बनता, जो मांसमें दवाके तौर पर चलता है।

कारर ऐन्समी लिपते,—“विन्दू चिबित्तुसकोके मतामुदार नाट्ट रसगोचक ज्वरमें विपाकानिवारक पौनसरीसहर और सुहावर्षक है। योषके समय पत्र पको नारङ्गीका गर्भत रंगरेकोके लिये बहुत उपार्देव होता है। इसका हिलका बातनायक और पत्रोपें रोमके लिये हितकर है।

भारतवर्षोय पामाकोविपार्थ मतसे नारङ्गी बन कर और पञ्चिर्षक है। पत्रोपें राग और साधा रस दुर्बलता पर यह बढ़ा उपकार करती है। इसके पत्रको चूनामेंसे जो जल निकलता, यह पाच हटाके छादपीय पथ मुहारागपर प्रयोग करनेसे पासेप मिटता है।

मुपपर रूप होनेमें कोरे कोरे नारङ्गीका गुणा हिलका बिषहर लगाता है। फिर सूनि ही हिलके को जलमें रसदु चमरोगपर व्यवहार करनेसे पाद पन मिळता है।

भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही नारङ्गी सुधादु पनको धर्मि बनाहते होती है। इसका रूप बहुदिन पर्यन्त

होता जायता है। सुननेमें पाया—एक एक छप ३।५ ग्रम वर्षसे नहीं सुरमाया। इसका रूप १० फीट पर्यन्त तक विस्तृत होता है। प्रत्येक छपमें १००से १००० पर्यन्त पत्र उत्तरते हैं।

नारङ्गका पत्र जलमें चूनेपर एक प्रकार तन निकलता है। जलका गन्ध पति तोम पयष दमिहर होता है। पत्रोपें लथे ‘निरोली पायिन कहते हैं। यह पत्र बनानेमें काम पाता है। बिलापतनासे सेवेपटर, धातुन प्रधति इत्यम्बिं लथे मिलाने हैं।

नारङ्गीके फूलसे जो तैलबद्दु निर्वास निकलता, उसका पत्र पति लच्छट रहता है।

जिसो बिचो वेप्रानिकने देसमान नारङ्गीके तैलसे कपूर निकाला है। उस कपूरको ‘निरोली काण्डर’ कहते हैं।

३ मद्रा। “बनप कलनतिहा कानो कपूरपेको।” (कालेक १०४३) ३ नरुंको बिरोप, एक नाचने-गानेवाली रच्यो। यह पीड़े राजा जयापीडकी पत्नी बनो यो। ३ कामोरेस्य पुरोबिरोप, कामोरेका एक महर। (पञ्चनिषे ३४२२) ७ हन्दोबिरोप। इसमें टा लग्य और एक सगक रहता पवार्त् ८ लनु कचके पक्षे एक सुखवर्ष ममता है।

“तिदुष नरक बहिः नरक एव ति तिदुषः।
बन्दिनि एति विपत्ति विदुषि नरति कल्पे ३” (इतिहासक)

८ कामपुपमें प्रवाहित एक नदी। इस नदीके तौरको मूसि पधिक लंबरा है। (म नरकण १०११)

९ उत्तर बिहारको एक नदी। यह नदी निपाण राज्यमें हिमालयसे निकली है। इसके दक्षिण पयका शूदो हलका कहते हैं। मद्राचण्डमें इनको तैर धुनको पुत्रमनिका कमला नदी बताया है। इसके तौरपर बिलायाय पाम है। जसो पाममें मिलायाय नामक मन्हादेवको विदुमूर्ति प्रतिष्ठित है।

(म नरकण १०११८)
१० बिमासराण्यका एक माचोन घाम। (म नरकण १०११)
कमला (हि० पु०) १ कल्प, भांझा, सुदी। यह प्ये दार कोड़ा है। मनुष्यका देह इनके कपसे सुखधानि बनता है। १ क्षमिबिरोप, डोका लट,

एक लम्बा और सफ़ेद कीड़ा। यह अन्न और चीय-
माष फनादिमें पड़ता है।

कमलाकर (सं० पु०) कमलानां भाकरः उत्पत्ति-
स्थानम्, ६-तत्। सरोवरविशेष, एक तालाव। जिस
सरोवर वा तडागमें अधिक कमल रहते, उसे ही
कमलाकर कहते हैं। २ पद्मचमूह, कवलोंका
मञ्जमा। ३ कमलाकरभट्टनिर्मित स्मृतिशास्त्रका
एक ग्रन्थ। ४ गोदावरी-तौरवती देवगिरिनिवासी
वृत्सिंहके पुत्र। इन्होंने सिद्धान्ततत्त्वविवेक और
जातकतिलक नामक संस्कृत ग्रन्थ बनाया था।

कमलाकर भट्ट—विरघ्यात स्मृतिर्मग्रहकार। यह राम-
छण्डभट्टके पुत्र, नारायणभट्टके पौत्र और दिनकर
भट्टके सहोदर थे। इन महाकान्ति अपनेक स्मृतिशास्त्र
बनाये। इनके निम्नलिखित ग्रन्थ प्रधान हैं—१ तत्त्व-
कमलाकर, २ पूतकमलाकर, ३ तीर्थकमलाकर,
४ सस्कारप्रयोग वा संस्कारपद्धति, ५ कार्तवीर्याञ्जुन-
दीपदानप्रयोग, ६ शान्तिरत्न, ७ शूद्रधर्मतत्त्व, ८ सहस्र
चण्डादि विधि, ९ निर्णयसिन्धु, १० विवादताण्डव।
इनके ग्रन्थ पढ़नेसे समझ सकते—कमलाकर भट्ट
१५३८ शककी विद्यमान रहे।

कमलाकान्त (सं० पु०) १ लक्ष्मीपति विष्णु।
२ राम। ३ छण्ड।

कमलाकान्त भट्टाचार्य—१ बङ्गालके एक दिग्गजपण्डित।
यह नवहोषाधिपति महाराज छण्डचन्द्रके समसाम-
यिक रहे। किसी किसी श्लोकमें इनका नाम आया
है—“श्रीकान्तकमलाकान्त यदरामय गदरः।” किन्तु अन्य कोई
परिचय नहीं मिलता। कहते—श्रीकान्त, कमलाकान्त,
वल्लराम और गदर चारों पण्डितोंके एकत्र एकपक्ष ही
विचारपर बैठनेसे स्वयं सरस्रतो भी ऊपर पक्ष ध्व-
न्यन कर कौत सकता न थीं। महाराज छण्डचन्द्रने
इन्हें स्वीय समामे रखनेके लिये बड़ी चेष्टा की। किन्तु
किसी विशेष कारणसे यह विरक्त हो और राजसभा
छोड़ अपने ग्राममें आकर रहने लगे। धीवीस-परगनेके
पन्तर्गत 'पूँडा' ग्राममें इनका वास था। पण्डित-
मण्डलीका वास रहनेसे पूँडा छोटे भवहोषके नामसे
विख्यात हुआ। आज भी वहाँ इनके धंशधर रहते हैं।

२ एक प्रसिद्ध सावक और वर्धमानको राजप्रभाके
पण्डित। १८०६ ई०को अखिकाकालनासे वर्धमान
आ इन्होंने तत्कालीन वर्धमानाधिपति तेजचन्द्रकी
रिभाया और सभाके पण्डितका पद पाया था।

कमलाकान्त सात्त्विक, अभिमानशून्य और देवीके
परम भक्त रहे। इष्टकी निष्ठासे मुग्ध हो तेजचन्द्रने
इन्हें अपने गुरुपदपर वरण किया और निवासार्थ
वर्धमानके निकट कीटालहाट ग्राममें सुन्दर भवन
बनवा दिया। उक्त भवनमें कमलाकान्त महासमा-
रोहसे त्रीश्यामापूजा मनाते। इस पूजाके दिन शत्रु
मित्र सकल एकत्र हो इन्हें क्षतार्थ करते और इनकी
भक्तिगाथा सुनते थे।

जैसी पदावलीसे रामप्रसादने देवीको रिभाया और
जैसी पदावलीने आजतक बङ्गालियोंके हृदयमें अमृत
बहाया, कमलाकान्तने वैसी ही पदावली गा कर
किसी समय वर्धमानवासियोंको उत्सन्न बनाया। क्या
बालक, क्या युवक, क्या वृद्ध—जो लोग अनुरोध
लगाते, उन्हींको यह किसी न किसी माल-स्वरमें एक
श्यामाविषयक पद स्वयं बना, गा एवं सुनाकर
रिभाते थे।

यह निर्भीक और सरलचित्त रहे। लोगोंसे सुन
पाते,—एक दिन कमलाकान्त रात्रिकालको थोड़-
गांवके मैदानसे चले जाते थे। हठात् कतिपय
टसूने भीमरवसे उनपर आक्रमण किया। उन्हींने
देखा, कि उसवार उनका अन्तिमकाल उपस्थित था।
फिर वह निर्भय परमानस्वसे रामप्रसादके स्वरमें
श्यामा माताको पुकारने लगे। उक्त गान सुन दृश्य
मोहित हुये थे। उन्हींने वैरभाव छोड़ और उनके
पदपर लोट क्षमा मांगी। कमलाकान्त उन्हें सन्तुष्ट
कर वर्धमान लौट गये।

यह विवेकके स्रोतमें डूब रहते, संसारकी कुछ
भी ममता रखते न थे। सुननेमें चाया—स्त्रीको
जलानेके लिये चिता प्रज्वलित होते कमलाकान्तने
नाच नाच श्यामामाताका नाम गाया।

कुमार प्रतापचन्द्रभी इनके शिष्य हो गये थे।
कहते—मृत्युकाश महाराज तेजचन्द्र स्वयं कमला-

कालसे भवन पङ्क्ति। उन्नेनि नङ्गातीर जातिसे
लिसे बङ्गुत पनुनव विनय विद्या, जिस्पर कमला
कालने एक पदायको मा कर मत जिहा दिया।

पलन्तर इन्नेनि इहसंसार झोडा बा। प्रवादात्
सार कमलाकालका भवदेह धायसको उचयग्या
भेदकर भोगवतीके स्त्रीतथैयमें बह गया।

कमलाकान्त विद्यालङ्कार—बङ्गावके एक सुप्रसिद्ध
पण्डित। प्राक्कक पंगरीन् प्राय विपयमें प्राग काम
कर पीर जोदित निवि, प्राचोन इत्याचर प्रभृति पद
को तख दू दुर्गमें लयी, लसके भूल पण्डित कमलाकान्त
विद्यालङ्कार हो रई। १८०० ई०के मध्यभाग यह
पुस्तिकाको लोपाइटीके पण्डितपदपर प्रतिष्ठित थे।
फिर लयी समय भिन्नेप साइब छत्र समाधि सम्पादक
रई। प्राचोन शिक्षालेख, ताम्रपत्रक पीर इत्याचर
प्रभृतिका मर्मोद्धार करना को पण्डित कमलाकान्तका
कार्य बा। दिहो पीर इसाहाबादमें दो लोहपत्रोंपर
प्राचीन पत्रबन्धित मायाधि कोई विषय पण्डित रहा।
उसको पनुसिद्धि पूर्व ही प्रचारित हो चुको लो। किन्तु
कर बिलियम जोन्स, जोरहुब पीर जोरिप-रैनिन
विस्तृत प्रभृति संस्कृतविन्तु साइब बसका धर्म जया
या लस जातिके पचरोका विन्तु विषय' लो बता न
सके। शिपको कमलाकान्त छत्र लिपिका मर्मोद्धार
करनेपर इहप्रतिष्ठ हुये पीर पचर ठहरानेको चेष्टा
चकामे लये। फिर दिहलो, लोको पीर गिरनार
प्रभृति स्थानोंकी जोदितशिक्षालेखका साइय्य पा
तया बङ्गाचगे एक दिवनाभराचगेसे भिना इन्नेनि
एक एक पचर बता दिया। सर्वाय 'द' पीर 'न'
स्विर हुवा वा। पत्र दोनो पचर पके पङ्क्तिसे काम
जितना ही लोहा पङ्क गया। तत्पर '१', '१' पीर
'१' पादिका कमलाकान्तने स्मिर किया वा। कामयः
अन्त्याय बर्षो पीर यन्नेोका निबन्ध इन्नेनि
दोनो निविद्या प्राचोन पाको मायामें जोदित
शोना ठहराया। प्राचीन पाकी बचमाकाके छत्रा
बनबा भूल बङ्गीय पण्डित कमलाकान्त विद्या-
लङ्कार हा थे।

पौके रजामे लत्र दोनो लिपिका पयोद्धार पीर

माय किया। १८१० ई०को लयी पत्र पीर माय
साधारणमें प्रचारित हुवा बा। विद्वयन समाजमें
बङ्गी पचरको पङ्को। मारतेतिहासके लमयाप्यब
अध्यायपर नूतन पाखोब पङ्का वा। किन्तु जिनके
द्वारा इतना काष्ठ हुवा, उनको कोई पत्र न भिना।
पत्र सम्पादक भिन्नेप साइबने पाया वा। अमेरिका
पीर युरोपके विद्याभुरायो भिन्नेप साइबको धन्य
बन्ध बङ्गने लगे। किन्तु भिन्नेप साइब पत्रतत्र न
थे। बह अपने प्रभन्वायसीमें कमलाकान्तको ही
मर्मोद्देश पीर टोकाकार लिख गये हैं।

बरेनोमें भिन्ने एक कृटिक लिपिको समाप्तोवनाके
समय इन्नेनि सुन्ध हो बताया—दिहा सुन्ध माय पीर
मायच हमने पन्ध जिसे निविमें प्राचनक लहो
पाया। कमलाकान्तने ही प्रथम यह बात बङ्गी—
इको लिपिके बङ्गोय बर्षमाना निङ्गनो वा भिन्ने है।
यह दूसरा भी विषय कार्य कर पुगतत्व को पाको
पनामें समधिक उचति देखा गये हैं। दिहो पीर
इसाहाबादको पूर्वोक्त लिपिके अवतंथि संज्ञाबाब
बल प्रतिपादित होता था। गाना संज्ञान पत्र दिव
कमलाकान्तने ठहराया—जोन पचर बिब संज्ञाधि
लिपे पाया है। इव पत्रपर लसके दो एक लदा
हरण देते हैं—“अनुगण्यविचरुनेरी विवर्षव।” (बाल्य)

४ (पार)का पङ्क लोके प्लनहुव पीर विषयकी
प्राकृति रचता है। कालन्ध व्याकरणमें कमलाकान्तने
छत्र सूत्र दिव निबंध किया—विहर्ष () वष' (४)
चारके पङ्कका लोचक माना गया है। इको प्रचार
विद्वसजत प्राज्ञत व्याकरणका सूत्र ६ (बह) संज्ञा-
को बतानेवाका ठहरा है।

इसके पूर्व पीर पर भिन्नेप साइब कमलाकान्त
पण्डितके साहाय्यपर गाना विपयमें ज्ञतकार्य हुये।
बह स्वयं विविधपथसे संस्कृत मायाधि परिष्कृत न रहे।
पण्डित कमलाकान्त को लसके बङ्गु बन गये। हम
अच्छी तरह समझते—कमलाकान्त यमोसिपुत्र न
थे। कारण किन्तु मात्र लो यमोसिपुत्रा रजते यह
नित्र ज्ञत पत्रिके लार्डोंमें एक न एक अपने नामपर
बकावे पीर काम पत्र जोति' बडावे। फिर काष्ठर

शलेन्द्रनाम मितकी भाति द्रुमका नाम श्योषिके सकल स्थानेनि विघोषित हो जाता ।

कमलाकार (सं० पु०) १ एक छप्पय । इममें २० गुण एवं ३८ मधु चर्यात् १२५ वर्ग और १५२ माताका समावेश होता है । (त्रि०) २ कमलका चायार रखनेवाला, जो कमल जैसा हो ।

कमलावैशय (सं० पु०) पुष्पस्थानविशेष, एक परस्मिन्-गाह । इसे कमलपत्तनी बनवाया था । (५-१०)

कमलाक्ष (सं० त्रि०) कमलमिव पक्षि यम्, बहुव्री० । १ पक्षकी भाति सुन्दर चणुविशिष्ट, जो कमलकी तरह पाये रक्ता हो । (पु०) २ पक्षबीज, कमलगडा । यह स्वादु, रूप, पाषण, कटुष, शीतल, तुषर, तिक्त, गुण, विष्टभाकारय, गर्भस्मिति कर, रुच, हृष्य, यातणर, बल्य, प्राप्ती, एककृत एवं लेखन और पित्त, रक्त, यमि तथा दाहनागक है । (रेवट्त्रिपट्ट) ३ स्थानविशेष, किसी जगहका नाम ।

कमलाग्रजा (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी ।

कमलादेवी—१ कादम्बरराज नियचित्तयोरेप्रसादिदेवकी पटरानी । दाक्षिणात्यकी गिलानिपि पदनेमे समभते—कमलादेवीके पति गोपकपुरी (गोवा)मे राजत्व करते थे । यह अपने पतिकी प्रियतमा मछिपी रहीं । देवद्विजपर इन्हें बढी भक्ति आता थी । अपने दानशीलता और परोपकारिताके गुणसे यह अष्ट रमणीके मध्य परिगणित रही । इन्हींके वेद-वेदाङ्ग-पारदर्शी ब्राह्मणोंकी अनेक ग्राम दे डाले । फिर इन्हींके प्रसुरीषसे ११७४ ई०की कादम्बरराजने साष्टाणकी देगम्य ग्राम प्रदान किया । कमलादेवी उमाको पूजती थीं ।

इतिहासमें दूसरी कमलादेवीका नाम भी मिलता है । नीचे उनका विवरण लिखा है,—

२ गुजरातके राजा करणरायकी परमासुन्दरी पत्नी । १२६० ई०की सम्राट् अला-उद्-दीन् पिल्लौनी गुजरात जय किया था । उस समय बन्धियोंके साथ कमलादेवी भी दिल्ली पहुँचायी गयीं । कुछ दिनों पीछे अला-उद्-दीन्की कुशलता और प्ररोचनासे इन्होंने सम्राट्की गले लगाया था । फिर १३६६

ई०की कमलादेवीके गर्भमें उत्पन्न गुजरातके राजकन्या देवमदेवी भी दिल्ली पहुँच गयीं । अला-उद्-दीन्के पुत्र शाहशुद्धि मित्र की छतरे अपने हुए थे । देवमदेवी देवमदेवी और शाहशुद्धि मित्रप्राप्तकी भी विवाह हो गया । सुधारिक गार्हम सम्राट् तल अपने शाता मित्र शाहशुद्धि मित्रके निवृत्त कष्ट कर मारा और देवमदेवीकी गर्भमें जाला था । मित्रप्राप्त और देवमदेवीकी प्रत्येक उपावर अलादीनने राजपति अमीर सुमरी तल कष्टर प्रार्थी शाह मित्र गये है । इतिहासलेखक कमलादेवीके कमलादेवीको 'कमला देवी' कहा है ।

कमलावैशय—कमलादेव पुत्र दिग्दर्शक मित्र ।

कमलाविद्या (सं० पु०) अस्त्रीया वामस्या, कमल ।

कमलापति (सं० पु०) कमलायाः पतिः । १-मर्त्य । अस्त्रीके स्वामी, मित्र ।

कमलापता (सं० त्रि०) कमलके समान देवी, पुत्र रणदेवता, विमर्के कमलपतेः ताल बढी भांग रहे ।

कमलापुत्र (सं० पु०) १ मंगलके एक प्राणिक करि । २ काश्यपुत्रके एक प्राणिक उपति ।

कमलापय (सं० स्त्री०) मन्त्राङ्गप्रार्थीय तत्रैर त्रितीके त्रिपुत्र नगरा पर पतित भेटे । यहां महादेवीकी विद्मसूर्ति प्रियमान है ।

कमलापया (सं० स्त्री०) कमल पालनी कथा । कमलमें रहनेवाली अस्त्री ।

कमलासग (सं० पु०) कमलायाः सगा, टप् । सगाद-विशेष, व-श-य । अस्त्रीके सगा दिग् ।

कमलासन (सं० पु०) कमलके पादने यम्, बहुव्री० । १ कमलपर बैठनेवाली कथा । "कमलासनं कमलासना" (५-१०) (स्त्री०) कमलायाः सनाता । अपने छिपके दानमित्यर्थः । २ अस्त्रीका दान । ३ पञ्चासन । यह दो प्रकार होना है—एक और मुल । मुलमें वामपट पहले दक्षिण पटकी ऊपर चढाया जाता, फिर दक्षिणपट वामपटकी ऊपर आता है । अन्तकी दोना चायकी छिपी जायपर सुनी रखते है ।

इसी प्रकार निरुपद्रव्यको सीधा कर बैठनेका नाम सुप्त पद्यासन है। यह पद्यासनमें पदोंके बहुमिथ्या निवृत्त तो ऐसा ही रहता है। किन्तु काम इत्यादी पीठके पीछे हुमा काम पदका और दक्षिण इत्यादी पीठके पीछे हुमा दक्षिण पदका प्रकृत अवस्था हैं। फिर बिभुषण वस्त्रासनपर कामा और मामाके अथभागपर दृष्टि लगा लीये बैठा जाता है। यह पद्यासन पति उत्तम रहता और अच्छे चाय अच्छे भक्ष्यका जोनिपर सावधानी सब रोग रहता है।

कमलासनस्य (म० पु०) कमलं विष्णोर्नाभिकमर्म तद्रूपि चासनि तिष्ठति, कमल-पासन म्ना च। विष्णुके नाभिकमर्मपर रहनेवाले ब्रह्मा।

कमलाहट (म० पु०) कामोरका एक बाजार। कामोरको रामो कमलावतीने हने लगाया था।

(राजतरङ्गिणी अ० ८)

कमलाहास (स० पु०) पद्मका खुलना या सुदना अथवा फूलने या बंद होनेकी कालत।

कमलाकर—संस्कृतके एक प्राचीन पत्रकार। यह मुसिहने पुत्र, कृष्णके पीठ और दिवाकरके प्रयोग रहे। इन्होंने पद्मभावनोपनिषत् कातकतिलक, अतोपनिषत्, त्रिपथी, मनोरमापद्मभावनोपनिषत्, वीणादयना, निहामनास्यविषय (यह १३०३ ई०की बना रामने लिखा गया) और सुवर्णनामटीका और कामना पत्र लिखा है।

कमलाकर देव—पान्द्रविनास नामक पत्रके रचयिता।

कमलाकर भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत पत्रकार।

१५१६ ई०की इन्होंने 'निरुपद्रव्य' बनाया था। इनके लिखे पत्र यह हैं—पद्मिनिरुपद्रव, पाचार्योपना या पाचार्योपनिषत्, पात्रकायनयाथा प्रादुर्भावयोग, आर्द्रकविधि उत्तरपाद, शिखीमहायामि सञ्चित रात्रिमिषययोग, अर्धविपाकरत्न अल्पनाशोचन प्रयोग, कामप्रकाश व्याख्या, त्रिपापाद, मयाकल्प गीतमोविन्दमाधरप्रमाणा, गोब्रवर निरुपद्रव या मोक्ष प्रवरदंष्ट, पद्मपत्र अष्टोविधानपरति, जनायगोत्तमनिधि लोकोद्धारविधि तन्वार्थनिष्कटीका, निज गंधदानप्रयोग तोरिवाता, तुनापहरति, त्रिपद्मदान

विधि, त्रिस्त्रयोविध, दानकमलाकर, दायविभाग, धर्म तत्त्व, नारायणवलिप्रयोग, निरुपद्रव्य, नीतिकमलाकर, पद्मपत्र, पद्मकाङ्क्षदानविधि, विद्वत्कृतितरङ्गिनो पूतकमलाकर, प्रतिहाविधि, प्रवरदंष्ट, प्रायश्चित्त-रत्न, पद्मचारित्रक, मन्त्रिरत्न मावापाद, मन्त्रकमलाकर, रत्नदानप्रयोग, रवदानविधि रामकल्पद्रुम, राम लोचकमहाकाव्य लक्ष्मोमविधि, सिद्धार्थपतिहाविधि, विद्यैदानविधि, विद्यादत्ताष्टव, विद्यारत्नदानविधि, व्याघ्रार, व्रतकमलाकर, व्रताक, यतवत्प्रीतवस्त्रवल्ली प्रयोग, यतमान-दानविधि शान्तिरत्न वा शान्तिरत्न-कर, याज्ञदीपिकाशोक याज्ञमासा, यिष्यप्रतिहा मुद्रधर्मतत्त्व, आरुणिक्य, आहसार, चायचौप्रयोग श्लोकादानविधि, पौड्यसंस्कार, संस्कारपरति, समय कमलाकर, मरुत्तरीदानविधि, सर्वयाथायैनिर्धय, सुहृत्प्रवृत्तादिप्रयोगपरति, सुहृत्प्रवृत्तिरीदानविधि स्नानीपात्रप्रयोग, द्विरप्यगर्भदानविधि और कमलाकरमहोप। मुसिहने अर्धसंध्यागर, मुसोत्तमने द्रव्यविदीपिका और कामकृष्णने अर्धदेवताप्रम नामक पत्रमें इनका बचन उद्धृत किया है।

कमलाकरमिषु—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। पाचव दशमें सुबन्तुने इनका बहोप किया है।

कमलिनो (स० अ०) कमलानि पत्ति पत्र, कमल इति। उक्तपत्रके हैं: १) १५१६। २) पद्मिनो अंजन का पीडा। यह गीतम सुद, महर, लवण, दध, पित्त, परक तथा कपफ और वात एवं विद्वन्धर होती है। कमलिनोका छंद यौत, तुवर, महर, तिङ्, पाठमें पति कटु, कण्ठ, प्राइक, वातजत्त और कफ एवं पित्तनाशक है। (३) कल्पित) २) पद्याकर कवलीका पूजागा। जिस सुरोहर का छंदमें बहुतके काम रहते, उसे ही कमलिनो कहते हैं। ३) गणा।

"इत्युही कमलिनो इत्येव कलिनकलिनो" (कल्पित १०१)

कमलो (स० पु०) ब्रह्मा।

कमलो (वि० अ०) छोटा कमल कमरो।

कमनेपत्र (स० वि०) कमलमिष ईश्वर मन्त्र, ब्रह्मो०। पद्म चन्द्र, अंजनको तरह पद्मपत्र चर्चित रहनेवाला।

कमलेश (सं० पु०) कमलेश्वर ईश्वर विष्णु ।
 कमलेश्वर (सं० स्त्री०) एक शीत । (सं० पु० १२०)
 निर्भीक शिरो पुष्पक में कमलेश्वर के आन्तर 'कामलेश्वर' नाम देव प्रकृत है ।
 कमान (हि० पु०) टुक, टाँट, माँडिया ।
 कमाना (सं० स्त्री०) कमानसिंह छतार' यंत्रं कमाना-
 पुष्पक कमानसिंह का । कमानपुष्प, कमानका पुष्प ।
 कमाना (हि० स्त्री०) १ यथा परवाण, दिन्दवाना ।
 २ कमाना पदवाण, माक, करवाण । ३ मुण्डन
 करवाण, शत्रु पदवाण । ४ मन्त्रार करवाण, मुण्डनवाण ।
 कमाना (हि० स्त्री०) मन्त्रमतिता, शकृष्मी,
 केशकुली ।
 कमाना (सं० पु०) (कमाना) सेनाका
 एक विभाग, जोयथा कोई महकमा । यह सेनाकी
 आशादि सामग्री पहरता है ।
 कमान (सं० वि०) कल्पयन्क, जो उम्में
 होता है ।
 कमाना (सं० स्त्री०) गैराय, नकपपन ।
 कमान (हि० स्त्री०) गायंदायी, कामकात्री ।
 कमाना (सं० स्त्री०) भीरुपदव, डरणोक ।
 कमाना (सं० स्त्री०) भीरुता, बुद्धिनी,
 करीका ।
 कमान (सं० स्त्री०) कमाना, भावे प-टाप ।
 कमान, कमाना, कमान ।
 कमान, कमान ।
 कमाना (हि० स्त्री०) १ कमाना, कमाना । २ कमान-
 कमाना कमाना कमाना ।
 कमाना (सं० पु०) (कमाना) सेनाभ्रष्ट,
 कमाना, कमाना । यह कमाना कमाना कमाना-
 कमाना कमाना कमाना कमाना ।
 कमाना (सं० पु०) (कमाना) कमाना-
 कमाना कमाना कमाना कमाना ।
 कमान (सं० स्त्री०) १ कमाना, कमाना, कमाना,
 कमाना । २ कमाना, कमाना, कमाना । ३ कमाना-

धनुः, इन्द्रायुध, कौस-कुजा । ४ कौशनाडी, शम्यक,
 तीप, तुपक, चटुक । ५ व्यायामविगीष, एक कसरत ।
 इसमें मानवशरीर कसरत करनेवाला कमानकी तरह
 टेढा पड जाता है । ६ यन्त्रविगीष, एक शौजार ।
 इसमें आन्तरण हुना जाता है । ७ यन्त्रभेद, कौथी
 शौजार । इसमें दो पटाद्योके मध्यका चन्तर निर्धा-
 रित होता है । (वि०) ८ कश्चनीय, नमनशील,
 नवीना । ९ एक, टेढा, झुका हुआ ।
 कमान (हि० स्त्री०) १ आदिग, हुकन । २ अधिकार,
 इज्जतिवार । यह अंगरेजोके कमाण्ड (Command)
 शब्दका अपभ्रंश है ।
 कमान-प्रफसर (हि० पु०) आशापक पुरुष, हुकन
 देनेवाला सरदार । यह अंगरेजोके कमाण्डर
 आफिसर (Commanding officer) शब्दका अप-
 भ्रग है ।
 कमानगर (सं० पु०) १ कार्मुककार, कमान
 बनानेवाला । २ अस्थि योजयिता, हड्डी जोडनेवाला ।
 कमानगरी (सं० स्त्री०) १ कार्मुक विधान, कमान
 बनानेका काम । २ अस्थियोजना, हड्डीकी जोडायी ।
 कमानवा (सं० पु०) १ सुदृ कार्मुक, छोटी कमान,
 कमटा । २ मारही, चोतारा, किंगरी । ३ सार-
 मोहजा ग्यतिस्थापकत्वविगीष पदार्थ, मोहकी
 कमाना । ४ खण्डमण्डनाकार पटन, मेहरावदार
 कत । ५ विविक्त भयन, पीगीटा कसरत ।
 कमानदार (सं० वि०) १ खण्डमण्डनाकार, मेह-
 रावदार । (पु०) २ धनुर्धर, कमान लिये हुआ ।
 कमानदार (हि० पु०) आशापक, सेनापति, सर-
 दार, सरगिरी ।
 कमाना (हि० स्त्री०) १ उपायन करना, घर भरना ।
 ० परिचय करना, मरना मिटना । २ अभ्यास बढ़ाना,
 मरुत्पर जाना । ३ परिष्कार करना, मलासे
 भरना । ४ समभूव घटाना, भाडू लगाना । ५ भूमि
 प्रस्तुत करना, दरजे, जमी भरना । ६ पौषण्यसे
 निर्वाह करना, दिनानेमें घेठ मरना । ७ धनोपाजन
 करना, कपडेकी पैदामें पड़ना । ८ चुर चलाना,
 काम बनाना । ९ न्यून बनाना, घटाना ।

कमानिया (हिं० पु०) शानुष्य, कमानदार ।
 कमानो (फ्रा० खी०) १ स्थिति-स्वापकत्व-विशिष्ट पदार्थ, बोधो कबोभो बोध । केवे—तोखायस दण्ड पात्र वा ध्यावर्तन, भारतीय धर्मक पिण्ड, अङ्कत समोरपका समबाय । यह द्रव्य नाना प्रकार यन्त्र विषयक कार्यमें कमाना है । कमानोमें बस पाते या पड़ जाते, यतिको नियमपर जाते, गुदल वा पन्थ यकि नपावे धोर सङ्घट्ट करताई । यन्त्र धामरीमें इसके को प्रथम भेद चलते, उन्हे मोषि लिखते हैं— १ सङ्घट्ट (पेचदार) २ व्यावर्तित (मचोको या बालकमानो), ३ बिलोक (मण्योक) ४ पण्डाकार (बेज्जामो), ५ धर्माण्डाकृति (निरुद्ध बेज्जामो), ६ प्रथान (बङ्को), ७ घाटोप (घेठवार) । यह कोह वा पिण्डकडे बनतो है । भारतीय धर्मक (रबरको) तथा धायक (इबायो) कमानो धर्माण्डाकार रहतो धोर चलनयोस (चलते) द्रव्यपर कमतो है । यह बङ्को या पन्था बसतो, भ्रटका बचातो, तौल ठहरातो धोर चला कमातो है । दबानेसे इह जाते भी कमानो धपने धाप खपर लठ पातो है ।
 २ यन्त्र एवं नमनयोस कोइमकाका, कोइको भुको हुयो सपकदार तोको । यह जाते धोर यन्त्रो बने-रहमें लगतो है । ३ पिण्डनाविशेष, एक पैटी । यह यमैमय होतो है । इस कमानोके भीतर कोइमय एवं नमनयोस पट्ट रहता है । फिर लम्ब प्रान्तपर उपाधान सया देते हैं । जिस रोमीका पन्थ लतरता, वह कटिमें कमानो कसता है । इससे पन्थ लतरने नहीं पाता । ४ धनुषाकार काठविशेष, भुको हुयो कोई ककडो । इसके दोनो प्रान्त रक्त कोइसूख वा कृत्तकसे बंधे रहते हैं । ५ वयकण्डविशेष बांसकी एक पत्रो । यह सूख रहतो धोर दरो दुमनेके बन्धमें लगतो है । ६ कोइनाडोके तासकका विशेर्ब स्थितिस्वापकत्व विशिष्ट पदार्थ बन्धुके तासेको सुखो कमानो ।
 कमानोदार (फ्रा० वि०) स्थितिस्वापकत्वविशिष्ट पदार्थपुञ्ज, को कमानो रचना हो ।
 कमानय (हिं० खी०) कमानवा, सारङ्गोका गज ।
 कमानो (हिं० खी०) १ उपार्थित, लम्बाय, लज

रत, पामदनी । २ साम, फावदा । ३ लम्ब, कामकाज ।
 कामाठ (फ० पु०) १ सिद्धि, तक्षमीन, पूरापन । २ भावार्थ, ताकत, पचथा । ३ कोयल होमियारो । ४ नमुष्क कारोगरी । ५ कबोरके मुत्र । यह भी एक पशुके साधु है । कबीरकी बात काट काटना रनका लक्ष रहता । (वि०) ६ सिद्ध, पूरा । ७ पचम्य, बहुत ल्यादा ।
 कामातू (हिं० वि०) उपार्थित करनेवाला, जो पैदा करता हो ।
 कामासुन (हिं० वि०) अनोपालन करनेवाला जो बचया कमाता हो ।
 कामिता (स० पु०) काम-विष्क भाषि लक्ष् । कामुष्क, मष्क, चाहनेवाला ।
 कामिश्चर (फ० पु० = Commissioner) १ निधीमी, मुख्य तारकार । २ बन्धिकारो, पमीन । मास धोर पुबिसके बड़े पत्रसरको भी कामिश्चर कहते हैं ।
 कामी (फ्रा० फ्रो०) १ ग्यूनता, कोताडो, घाटा । २ प्रशान्ति कसयाको लङ्गो । ३ इन्नि, मुज्जसाम् । ४ झाड, तख्तकोल लतार । ५ पचपय गबन, बाब बप । ६ लपयम तख्तोप, लरमी ।
 कामीज (हिं० खी०) सुतख, पचोबसन, पङ्कनका एक बपका । यह एक प्रकारका कुता है । इसमें कसो धोर कोबमला नहीं लगति । पीठ पर जुबड पहतो है । फिर हाबमें बख धोर लसेमें कासर भी रहता है । भारतोबानि पचरेकोसे कामीज पहनना सोका है । परबीमें इसे कामीस कहते हैं ।
 कामीनगाह (फ० खी०) निम्नत स्नान, बातको लगह ।
 कामीना (फ्रा० वि०) पचम, बचम्य, काम पत्त, रठीय पाङ्को, धोका ।
 कामीनापन (हिं० पु०) लचम्यता काम घरी, पोहापन ।
 कामीनो बाह (हिं० खी०) करविशेष, बिलोबिष्कको बगाहो । यह कर यांवेमें धेती न करनेवाली मोच मोय जमीन्दारको देते हैं ।
 कामीसा, कनीकरी ।

कमीशन (अ० स्त्री० = Commission) १ आचरण, इरतिकाव, करमव । २ समर्पण, सुपुर्दगी । ३ अधि-कार, इहृत्तियार । ४ आदेश, हुक्म । ५ परार्थ-विक्रय, दस्त्राली । ६ नियुक्तजन, जमात, जया ।

कमीस (अ० स्त्री०) कमीस, किसी किस्मका कुरता ।

कमुकन्दर (हिं० पु०) घनु भञ्जनकारी रामचन्द्र ।

कमुवा (हिं० पु०) नौदण्डका मुष्टि, नाव चलानिके डांडका कन्ना ।

कसून (अ० पु०) जीरक, जोरा ।

कसूनी (फ्रा० वि०) १ जीरक-सम्बन्धीय, जीरके तालु क् रखनेवाला । जीरकके अवलेहको 'जवारिश कसूनी' कहते हैं । (स्त्री०) २ औषधविशेष, एक दवा । इसमें जीरा बहुत पड़ता है ।

कसूल, कसवार देखो ।

कमेटी (अ० स्त्री० = Committee) कार्यसम्पादिका सभा, पञ्चायत ।

कमेडी (हिं० स्त्री०) कु.मरी, कपोतिका ।

कमेरा (हिं० पु०) कर्मकर, मजदूर, नौकर । प्रधानतः खेतीके काम करनेवाले नौकरको 'कमेरा' कहते हैं ।

कमेला (हिं० पु०) १ शूना, वधस्थान, कत्तलगाह । २ कमीला, एक पौदा ।

कमेहरा (हिं० पु०) संस्थानविशेष, एक सांघा । यह महीका होता है । इसमें कसकुटकी चूडियां टाली जाती हैं ।

कमोटन (हिं० स्त्री०) कुमुदिनी, कोकावेली ।

कमोटपुष्प (सं० स्त्री०) जलपुष्पविशेष, पानीमें होने-वाला एक फूल ।

कमोटिक (हिं० पु०) १ कमोटराग गानेवाला । २ गायक, गवैया ।

कमोटिन (हिं० स्त्री०) कुमुदिनी, कोकावेली ।

कमोन—युक्तप्रदेशके वृसन्देशहर जिलेका एक ग्राम । यह काली नदीके दक्षिण तटसे थोड़ी दूर अवस्थित है । यहाँ एक सुप्रसिद्ध दुर्ग विद्यमान है ।

कमोरा (हिं० पु०) १ नृत्यावलिशेष, महीका एक वरतन । इसका मुख प्रशस्त रहता है । इसमें दुग्ध

दूहते और रखते हैं । यह दही जमानिके काम भी आता है । २ घट, घड़ा ।

कमोरी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र नृत्यावलिशेष, महीका एक छोटा वरतन । इसका मुख प्रशस्त रहता है । यह दुग्ध दूधने तथा रखने और दही जमानिके काम आती है ।

कम्प (सं० पु०) कपि भावे घञ् इदित्वात् सुम् । १ स्फुरण, लरजिग, थरथराहट, कपकपी । इसका संस्कृत पर्याय—वेपथु, वेपन, वेप और कम्पन है । २ उच्चारणविशेष, एक तलफू.फु.ज । यह स्वरितका एक संस्कार है । स्वरितके आगे उदात्त स्वर आनेसे इस स्फुरणकी आवश्यकता पड़ती है । ३ वेपथु, बुद्धारकी कंपकपी । ४ अनुभावविशेष । यह नृङ्गार-रसका सात्विक अनुभाव है । इसमें शीत, कोप, भय प्रभृतिसे अकस्मात् शरीर कंपने लगता है । ५ कांगनी, उभरा हुआ दीवारका किनारा । यह मन्दिरों श्रौत्-स्तम्भोंके नीचे रहती है ।

कम्प (अ० पु० = Camp) १ शिविर, डेरा, खेमा । २ सैन्यनिवास, पडाव, छावनी । ३ सेना, फौज, लयकर ।

कम्पज्वर (सं० पु०) कम्पयुक्तो ज्वरः, मध्यपदलो० । शीतज्वर, विषम, तपलरजा, जूडी । यह ज्वर वायुसे उत्पन्न होता है । ज़र देखो ।

कम्पति (सं० पु०) समुद्र, बहर ।

कम्पन (सं० वि०) कपि-युच् इदित्वात् सुम् । १ कम्पयुक्त, कापनेवाला, जिसको कपकपी लगी हो या जो कांपता हो । इसका संस्कृत पर्याय—चलन, क्रम्प, चल, लोल, चलाचल, चञ्चल, तरल, पारिप्लव, परिप्लव, चपल और चटुल है । २ कम्पकारक, कांपानेवाला । (पु०-स्त्री०) ३ कम्प, कपकपी । ४ शीतनृत्य, जाड़ेका मौसम । ५ एक राजा ।

“काम्पोजरतः कमठः कम्पनस्तु महाबलः ।

सततः कम्पयामास यवशानिक एव यः ॥” (महाभारत २।४।१२)

६ अस्त्रविशेष, एक हथियार । ७ सन्निपातजन्य ज्वर-विशेष, एक बुद्धार । भावमिश्रने कफोत्सर्जन सन्नि-पात ज्वरको हो कम्पन कहा है,—

“अथानुं श्रेयसा शान्तेः शान्तेः शान्तेः ।
 शान्तेः शान्तेः शान्तेः शान्तेः ।
 शान्तेः शान्तेः शान्तेः शान्तेः ।
 शान्तेः शान्तेः शान्तेः शान्तेः ।” (भाष्यकर्म)

कर्मणोः सविधातमं शरीरं लक्ष्मणा पातो, वायो
 मनुमद् पदं शान्ते रात्रिषो निद्रा शब्दित मताती,
 वाक् सुधातो शौर सुपमं मिठास देधातो है। सुनि
 दोनि इमी उव्वरसा नाम कर्मण रक्षा है। क कर्म्योर
 निरुटवर्ती एव जगर। ए उवात्पविशिय, एव तत्रपु-
 पुत्र। १- कवादी विजने कुकनेको हाहत।

कर्मणा (सं० प्रो०) कर्मण टाप् । १ शरीरविशेष,
 एव दरवा। २ शिवा, प्रोज।

कर्मणीय (सं० त्रि०) कर्मण ठक् । चलनगीत
 मुलपरिच को विम लम मकता हो।

कर्ममाण (सं० त्रि०) कर्मि मानिष इदित्वात् सुम् ।
 कर्म्युत्, को कांवाता हो।

कर्म्ययत् (सं० त्रि०) कर्मणेशाना, को विजाता
 कर्माता हो।

कर्म्यलक्षणा (सं० पु०) कर्म्यः चलन लक्ष्य मत्तय
 टक्, बहुमी० । वायु इवा।

कर्म्यवायु (सं० पु०) कर्म्य कर्मकर वायु । वात
 शीमविशिय, शारीको एव शीमारो । इसमें श शरीर
 कर्मण मगता है। एकादि हैको।

कर्म्या (सं० प्रो०) कर्मि माई य टाप् । कर्मण
 कर्मणो।

कर्म्याह (सं० पु०) कर्म्या कर्मनेन वायति प्रका
 यते, कर्म्य के क । वायु, इवा।

कर्म्यामित (सं० त्रि०) कर्म्युत् कर्मणेशाना, को
 कहराया ही।

कर्म्यत (सं० प्रो०) कर्मि माई क । १ कर्मण,
 कर्मणो। (त्रि०) २ कर्म्युत् कर्मणेशाना ।
 ३ कर्मणा का विजाया एकाया गया हो।

कर्म्यत (सं० पु०) कर्म्य इत्यत् । १ शीको, मर्मि ट
 नोसादर। इकाया य एत पर्याय—कर्म्यिह, कर्म्यिण
 कर्म्योर कर्म्यिह, रक्षा, ईश, ईश्वरक रम्यक
 कर्मिणात् शौर रक्षयत्त है। राजनिष्पृष्टि मगद

यह विरिचक कटु, श्या पूर्व कहु शौर मय, कर्म,
 काम तथा तन्मुक्तमिनायक है। फिर सुशुत इसके
 तैलको तिह्र कटु, कषायरस एवं त्रपयोग्य शौर
 पयोगत दीप, छमि, कष, कुठ तथा वायुनायक बताये
 है। २ कुठपदेयके पक्षपादाद त्रिषीको कायमगघ
 तक्षुलका एव पात। महाभारतमें इसका नाम
 कर्म्यिह निर्या है। कर्मण ईको।

कर्म्यिना (सं० प्रो०) घृतकुमारो घोडुवार।
 कर्म्यिह (सं० पु०) कर्म्य-रक्ष। श्रेतविश्व् सफेद
 नोसादर।

कर्म्यिहक (सं० पु०) कर्म्यिह साधे कर्म । श्रत
 विश्वत्, सफेद नोसादर।

कर्म्यिहमासक (सं० पु०) बहुलमेव किमो कर्म्यिहो
 मोकसरो।

कर्म्यिह्य, कर्मिह ईको।

कर्म्यो (सं० त्रि०) कर्म्यो अप्याप्ति कर्म्य इति ।
 १ कर्म्युत् कर्मणेशाना । २ कर्म्यिणा का
 कर्मणा वा । शीको शोको विरिचको तथा विरिचकटव ।

कर्म्योः कर्म्यकर्म्ये कर्म्ये इति (त्रि० ११)

कर्म्य (सं० त्रि०) कर्मि विष् कर्मिच यत् । १ चलन
 शोके, सुतहरिच को विजाया एकाया का मकता हो।
 २ कर्म्यके साथ उचारित होनेवाला, को पाशात्रयो
 विना कुला कर कोया जाता हो।

कर्म्य (सं० त्रि०) कर्म्य र । कर्मिहवि कर्म्यकर्म्ये क
 ईको ट । वा ११११११ कर्म्यामित कर्मणेशाना ।

“कर्म्यकर्म्ये कर्म्ये कर्म्ये इति” (त्रि० १११)

कर्म्या (सं० प्रो०) कर्म्य शिर्या टाप् । याथा
 हात।

कर्म्य—दादिपात्रके प्रसिद्ध नामिन कर्मि। मन्दात्र
 प्राणोय शिरुर त्रिषुके वैशेइ निरुर नामक घामने
 इकोनि त्रय शिर्या था। यह पत्राल मूर्द्धगीय रहै।
 इकोनि शरद कयक कयनसे शान्तेकि रामायकका
 नामिक भावामे यनुवाद पारथ्य किया शौर पदास
 कर्म्ये कर्म्यकर्म्यकर्म्ये कर्म्ये उतार दिया। शान्तिप
 कर्मिण नाम कर्मिहके मुखसे मुख हा इकोनी
 यमा करती है। फिर शान्ति-कोलेने इको यमो

सभामें बोला राजकविका उपाधि दिया। यह ८०७
ग्रहको विद्यमान रहे। इनका बनाया तामिल रामा-
यण 'कम्बनपादन', 'काञ्चिवरम् पिस्रतामन', 'शोश-
कुर्वङ्ग' (करियाम्ब चोलका इतिहास) और 'कम्बन
अगराधि' नामक तामिल अभिधान दक्षिणात्यमें
प्रसिद्ध है। इन्होंने मदुरा नगरमें ६० वर्षके वयस्क-
काल इच्छोक छोड़ा था। (Wilson's Mackenzie
Collection.)

कोई कोई इनका नाम कम्बर और कम्बस्थान
तखौर जिलेका कम्ब नाडू नामक ग्राम बताता है।
इन्होंने रामायणका अपना तामिल अनुवाद राजेन्द्र
चोलके समयमें पारम्भ कर कुञ्जोत्तुङ्ग चोलके राज्य-
काल पूरे उतारा था। (Caldwell's Dravidian
Grammar, p. 134.)

कम्बम्—मन्द्राजप्रान्तके कर्णाल जिलेका एक नगर।
कम्बर (सं० पु०) कम्ब-भरन्। विविधवर्ण, चित्र-
वर्ण, गूनागून् रंग। (त्रि०) २ नामाविध वर्ण-
विधिष्ट, रंग-व-रंग।

कम्बर—सिन्धुप्रदेशकी एक तहसील। यह अक्षा० २७°
२८' एवं २७° ५६' ३०" ८० और देशा० ६७° ३५'
४५" तथा ६८° १०' पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका
परिमाण ६७७ वर्गमील पडता है। यहां प्रायः एक
लक्ष मनुष्य रहते हैं। इसका अपर नाम शहादतपुर
है। गिकारपुर जिलेसे यहां तहशील उठ आयी है।
इसके प्रधान नगरका नाम भी कम्बर ही है। व.ह
अक्षा० ७३° ३५' ८० और देशा० ६८° २' ४५" पू०पर
अवस्थित है। १८४४ ई०को बलुचियोंने उक्त नगर
लूटा था। फिर दूसरे ही वर्ष अग्निप्रयोगसे कम्बर
एककाल ध्वंस हो गया।

कम्बल (सं० पु०-क्ली०) कम्ब वृक्षादित्वत् कलच्।
१ शिपादिके लोमसे निर्मित एक वस्त्र, भेड़ वगैरहके
बालसे बना एक कपड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—रत्नक,
वेद्यक, रोमयोनि, रणुका और प्रावार है। इस देशमें
कितने ही कम्बल व्यवहार करते हैं। पूर्व कम्बल
कवचका कार्य देता था। किसी किसीके कथनानु-
सार कम्बलकी रथी मरा पञ्चमनेसे बन्दूककी गोली-

तक शरीरमें घुस नहीं सकती। २ सर्पविशेष, कोई
सांप। ३ गो प्रभृतिके गल्लका रोम, भवेशियोंकी
गर्दनका बाल। ४ उत्तरीय, जनी चादर। ५ मृग-
विशेष, एक हिरन। ६ नागहय, सांपका जोड़ा।
इसमें एक पाताल और एक वरुण देवके सभास्थलमें
रहता है। ७ छमिविशेष, एक कोड़ा। ८ तीर्थविशेष।

“प्रवार” सुमतिठाल” कम्बनाश्वरो वपा।

तीर्थं भोगवतो चेव विदिरपा प्रजापते ३” (भारत, व. ८५ पं०)

६ जल, पानी। १० लोणिकागाक, सौनिया। ११ साखा।
कम्बलक (सं० पु०) कम्बल स्वार्थे कन्। कम्बल,
जनी कपड़ा, जनी पोशाक।

कम्बलकारक (सं० पु०) कम्बलं करोति, कम्बल-
क-ख ल्। कम्बलनिर्माता, जनी कपड़ा-बनानेवाला।
कम्बलधारक (सं० पु०) कम्बल-धृ-ग्लु ल्। कम्बल-
धारो, जनी कपड़ा ओढनेवाला।

कम्बलधाषक (सं० पु०) कम्बल परिष्कार करने-
वाला, जो जनी कपड़ा धोता हो।

कम्बलवर्हिष (सं० पु०) १ अन्धकाराजके एक
पुत्र। (भागवत १।२५।११)

कम्बलवान् (सं० त्रि०) कम्बलो ऽस्यास्ति, कम्बल-
मतुप् मस्य वः। १ कम्बलविधिष्ट, जनी कपड़ा
रखनेवाला। २ प्रयुक्त गजकम्बलविधिष्ट, गर्दनपर
खू व बाल रखनेवाला।

कम्बलवाद्य (सं० पु०) रथविशेष, एक गाड़ी। इस
पर मोटा कम्बल ढका रहता है। इस गाड़ीमें बैस
ही लुतते हैं।

कम्बलवाद्यक, कम्बलवाद्य देवो।

कम्बलहार (सं० पु०) कम्बलं हरति, कम्बल-हृ-
षण्। १ कम्बलहारक, जनी कपड़ा चोरानेवाला।
२ ऋषिविशेष।

कम्बलार्थ (सं० क्ली०) कम्बलरूपं ऋणम्, कम्बल-ऋण
वृद्धिः। प्रवत्पतरकम्बलवचनापं दमाभाषत्। पा १।१।८६। (शान्ति)
कम्बलरूप ऋण, जनी कपड़ेका कर्ज।

कम्बलिका (सं० स्त्री०) कम्बल-ई-स्वार्थे कन् झस्तः
टाप् च। १ छुद्र कम्बल, कमली। २ कम्बल-
मृयकी स्त्री।

किन्तु वीरि वीरि खम्भातको 'कम्बोज' कहता है।
रघुवंश देखते—महाराज रघुने पारसीकों, सिन्धुनद-
तीरवासियों और झणोंको हरा कम्बोजदेशीय राजाओं-
को जीता था। काब्योजीने उनके निकट अवनत हो
उत्कृष्ट अस्त्र और राशीकृत सुवर्ण उपहारकन-स्वरूप
प्रदान किया। फिर रघु अश्वके साहाय्यसे गौरीगुह
पर्वतपर चढ़ गये।* (रघुवंश ४५ सर्ग)

रघुवंशकी उक्त वर्णनासे समझ पड़ा—कम्बोज
देश सिन्धुनदके उत्तर और गौरीगुह† पर्वतके निकट
रहा। मार्कण्डेयपुराणमें गौरीगुह और महाभारतमें
सुवासु नदीके साथ गौरीनदीका उल्लेख मिलता है।
यह सुवासु और गौरीनदी वर्तमान पंजाबके उत्तरस्थ
स्वात प्रदेशके उत्तर अर्वास्थित है।

सुतरा रघुवंशका मत मानते वर्तमान सिन्धु और
लन्दई नदीके उत्तरांशमें पूर्वकाल कम्बोज नामक जन-
पद रहा। पड़ले कम्बोजवासी संस्कृत भाषा बोलते
थे। (विहल २२) यकी देखो।

(त्रि०) ४ कम्बोजदेशवासी, खम्भातका रहनेवाला।
कम्बोज (कम्बोजियाँ)—जनपदविशेष, एक मुल्ल।
यह अक्षा० ८° ४७' से १५° २०' पर्यन्त विस्तृत है।
इससे उत्तर लियस देश, पूर्व कोचिन-चीन, दक्षिण

* "विनीताभयमानस्य सिन्धुसौर विवेकम्।"

तत्र इषावरोषामां भव्यं युष्मद्विक्रमम्।

काब्योजाः समरं सोढुं तस्य वीर्यमगौरया।

गजाजानपरिहितैश्चोढे, सार्धमागताः।

तथा मदयमुषिणास्तुष्टा द्रविष्पराश्वः।

उपदा विविध शयसोत्सुकेका कोणशेयरम्।

ततो गौरीगुहं गेहमादरीहायवाचनः।" (रघु ४५ सर्ग)

† महिनायसे 'गौरीगुह'का अर्थ हिमालय उगया है। किन्तु इस

स्थलपर गौरीगुह एक खतल पर्यंत समझ पड़ता है। पायाय प्राचीन
भौगोलिक टिप्पणिने 'गौरिया' (Goryaia) नामक एक जनपदका
उल्लेख किया है। (Ptolemy, BK VII ch I.) इसी जनपदके
अर्थ गौरीनदी प्रवादित है। यह नदी वर्तमान काबुल नदीमें जा गिरी
है। फिर उसे स्वच्छन्दता और महाभारतमें भी गौरीनदी ही लिखा
है। उसकी बापे और परतमाया खड़ी है। कालिदासने इसी पर्वत-
मायाको गौरीगुह कहा है। विवेकत, इस पर्वतसे ही गौरीनदी निकली
है। उक्त पार्श्वीय प्रदेशकी ही टिप्पणिने 'गौरिया' बताया है।

श्यामीपसागर एवं चीनसागर और पश्चिम श्यामदेश
पडता है।

पहले स्वाधीन रहते समय कम्बोज राज्य बहुदूर
पर्यन्त विस्तृत रहा। धर्मप्राण भारतीय राजा इस
दूरदेश पर राजत्व करते थे। उनका कीर्तिकलाप,
धर्मानुराग, देवद्विजभक्तिभाव और असाधारण शौर्य-
वीर्यका गौरव बहुशतवर्ष गत होते भी आज कम्बोजके
नगर, कानन, पर्वतगङ्गर, शिलाफलक तथा प्रकाण्ड
प्रकाण्ड देवमन्दिरादिके भग्नावशेषपर दैदीप्यमान
है। इस देशके प्राचीन भारतीय राजाओंका इतिहास
इतने दिन खनिगर्भमें मणिकी भाति छिपा था।
किन्तु अन्तको फरासीसो पण्डितोंने अपनो गभीर
गवेषणाके प्रभावसे उसे साधारणके समझ खोल दिया।
भारतीयोंके लिये यह न्यून गौरवका विषय नहीं।
दीन दरिद्र धर्मभीरु भारतीय अपने प्राचीन राजाओं
द्वारा सुदूरवर्ती कम्बोज राज्यमें स्थापित अतुलनीय
कीर्तिको अत्र समझ सकते हैं। जिसे हम भारत-
वर्षमें भी टूट नहीं पाते, उसीके अनेक उदाहरण इस
सामान्य देशमें देखाते हैं।

उदात्त—वर्तमान कम्बोजके वकु, वकङ्ग, खोडि,
प्रे, चमनम, फनेम, चिसौर पर्वत, वोम्बङ्ग जिले (आज-
कल यह श्याम राज्यके अन्तर्गत है), फिमनके, कैदि-
चर और अङ्गचमनिक नामक स्थानसे प्राचीन कर्णाटी
अक्षरके अनेक संस्कृत शिलालेख मिले हैं। उक्त
शिलालेख पढ़नेसे समझ पड़ा—पूर्वकालको कम्बोज
राज्य पश्चिम श्यामदेशसे पूर्व अनामके दक्षिणांश
पर्यन्त विस्तृत रहा। इसके प्राचीन अधिवासी
'कम्बूज' वा 'काब्योज' कहाते थे। उक्त काब्योज
वर्तमान कम्बोज राज्यके आदिम अधिवासी न रहे।
प्रवाद है—

"तच्चशिलासे अनतिदूर रोमविषयपर एक धर्म-
निष्ठ विचक्षण नृपति राजत्व करते थे। उनके पुत्र
युवराज 'फ्रुखङ्ग' किसी गहिँत कामके लिये राज्यसे
निर्वासित हुये। उन्हीं राजकुमारने नाना स्थान
घूमफिर इस कम्बोज राज्यमें आ उपनिवेश स्थापन
कर दिया।"

उक्त प्रवाद प्रकृत होमिने मानना पड़ेगा—वह राजकुमार पञ्चाब और आनुसन्धि उत्तरक कम्बोज नामक प्राचीन जनपदों से इस देशमें पाये थे। बाह्य सिद्ध कम्बोजके वर्तमान काष्ठीयोंके साथ काष्ठीयों और कम्बोजोंका बहुत कुछ सौसाम्य संचित होता है। फिर यद्यपि प्राचीन देवमन्दिरादिकि निर्माणको प्रजापती भी काष्ठीयोंके मन्दिरोंसे मिलती है। सुतरां हीकार करना पड़ा—इस कम्बोज राज्यका नाम भारतीय शास्त्रोंके सिन्धु नदके उत्तर पर्यन्त 'कम्बोज'से हुआ है।

समस्त न पाये—विषय समय इस देशमें वह राजकुमार पाये थे। किन्तु किन्हींके पशुमानसे काष्ठीयों के तुङ्गिने राजसूत्राल (३१८ ई०) भारतके पश्चिम प्रदेशमें जानास्य चलसक पड़ी। सञ्चयत' लक्षी समय इस देशमें भारतीय जननिवेश स्थापित हुआ होगा। किन्तु निश्चय यह नहीं सकरी—यह विषय कदांतक सत्य है।

साम्प्रतिक सिन्धुक्षेत्रमें 'बिरात' जातिका नाम मिश्रता है। सञ्चयत; वही इस देशके पाकिम पश्चिमी हैं। विष्णु, शूर्म, वामन मङ्ग, ब्रह्माण्ड प्रकृति पुराणोंके अनुसार भी भारतवर्षके पूर्वसीमान्तवासी बिरात कहारि हैं।

कम्बोज और पानाम (पञ्चम्) देश ब्रह्माण्ड पुराणोंके पञ्चद्वीप ही समस्त पड़ता है। उक्त द्वीपके विवरणमें लिखा है,—

"वहीने विदेवक नमोवहृवकाङ्गम् ।
नामक चक्रवादीने वीर्यं गृह्णितम् ॥
देवतुल्यकर्मै रत्नमग्राय विरी ।
शरीरैरुपवित्रं वृत्रिने नरपानथा ॥
एव चन्द्रवर्तिनीने-वर्तिनककपूर ।
यस्य कान्तरी चक्र मानसकवापरा ॥
वसने नन्दैकक शैवही नरपतिः ।
वादिन । नमनिर्वा शर्म नरकपीमरे ॥"

(ब्रह्माण्ड ३३ पृ०)

द्वीपीय ऐतिहासिकोंके कथा—०३६ ई०को चीनपति मित्र होयाङ्गलीने दक्षिणमें 'पञ्चम्' नामक

एक सामरिक जिन्हा संज्ञापन किया था। लक्षोके पशुसार समस्त देशका नाम पञ्चम् या पानाम हुआ। किन्तु हमारी विवेचनामें 'पञ्चम्' 'पञ्चम्' शब्दका अपभ्रंश है। भारतवर्षमें जैसे पञ्च-राज्य ही राजधानी जम्मा कहातो वैसे ही पञ्चम् देशको 'राजधानी भी जम्मा नामसे पुकारते जाते हैं। इसलिये पूर्वकास (सिन्धुक्षेत्रके पशुसार) उक्त पञ्चम् देशको जम्मा राज्य भी कह देते थे। वर्तमान कम्बोजके जिस स्थानसे सर्वप्राचीन संस्कृत सिन्धुक्षेत्र निकला, उसका नाम 'पञ्च-वमनिष्क' हुआ है। यह नाम भी 'पञ्च-वमियक' या 'पञ्चवम्या' शब्दका अपभ्रंश समस्त पड़ता है। इन कई प्रमाणोंसे उक्त स्थानको एक अतन्त्र पञ्चदेश या पञ्चद्वीप मान सकरी हैं। कम्बोज और पञ्चम्का सम्बन्धता वर्तत ही सञ्चयत' ब्रह्माण्ड पुराणोंके चन्द्रमिरी है। जम्मा शब्दने जम्मा विवरण देही।

ऐतिहासिक—कम्बोजके भारतीय राजाओंका इतिहास पञ्चकाराण्डक है। पात्र भी समस्त सिन्धुक्षेत्र पयथा स्थानोय प्राचीन पुष्टकादि सङ्ग होत नहीं हुये, जिनके द्वारा और पञ्चकारके ऐतिहासिक सत्य निष्काधा जा सके।

पञ्चगतन कम्बोजके सिन्धुनेवासे सर्वप्राचीन सिन्धुक्षेत्रका समय ३२६ शक है। किन्तु उसमें किन्हीं राजाका नाम नहीं। सिन्धुक्षेत्रमें जिन राजाकाके नाम निष्कमे, इनमें 'भववर्मा' स्पष्टि ही सर्वप्रथम उद्धर है। भववर्माके पीछे सिन्धुक्षेत्रमें निष्कविहित राजाओंके नाम मिलते हैं,—

राजाका नाम	समय
भववर्मा	३३८ शक
महेन्द्रवर्मा, ईमानवर्मा	
जयवर्मा	३८६ ३८८ "
भववर्मा	३८८ "
पृथिवीवर्मा	
ब्रह्मवर्मा (पृथिवीवर्माके पुत्र)	४८८ शक
जयोवर्मा (ब्रह्मवर्माके पुत्र)	५११ "
जयवर्मा (जयोवर्माके ज्येष्ठपुत्र)	
ईमानवर्मा २य, (जयोवर्माके २य पुत्र)	५२२ "

राजाका नाम	समय
जयवर्मा (इन्द्रवर्माके २य पुत्र)	८५० शक
हर्षवर्मा २य, (जयवर्माके कनिष्ठ भ्राता)	८६४ ,,
राजेन्द्रवर्मा (हर्षवर्माके ज्येष्ठभ्राता)	८६६ ,,
जयवर्मा (राजेन्द्रवर्माके पुत्र)	८८० ,,
उदयादित्यवर्मा १म	८२३ ,,
जयवीरवर्मा	८२४ ,,
सूर्यवर्मा	८३८-८५० ,,
उदयादित्यवर्मा २य,	८५१ ,,
हर्षवर्मा ३य, (उदयके कनिष्ठभ्राता)	
उदयाकर वर्मा	८८८ ,,
जयवर्मा	...
धरणीधर वर्मा	१०३१ ,,
सूर्यवर्मा	१०३४ ,,
जयवर्मा (परम वैष्णव)	११०८ ,,

उपरोक्त राजाओंमें पृथिवीचन्द्रके पुत्र हर्षवर्माने बलु नामक स्थानपर ८०० शकको पृथिवीचन्द्रेश्वर नामसे एक वृहत् शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। उसके मरने पर पुत्र यशोवर्मा भी शिवमन्दिर प्रतिष्ठा कर पिताके अनुवर्ती बने। यशोवर्माके भ्राता जयवर्माके समयसे यहां बौद्धधर्म प्रुष्टा था। उससे पहले कम्बोजमें कहीं बौद्ध न रहे। किन्तु प्रचारित होते भी उस समय किसी भारतीय राजाने बौद्धधर्म ग्रहण न किया। जयवर्मा परम वैष्णव रहे। सम्भवतः ११०० शकको उन्होंने स्थानीय अज्ञोचटका देवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उक्त जयवर्माके पीछे शिलालेखमें किसी दूसरे भारतीय राजाका नाम प्राप्तक नहीं मिलता। किन्तु अनुसन्धान हो रहा है। कौन कछ सकता—कहाँतक फल मिलेगा।

चीनका इतिहास पढ़नेसे सतभ पडा—ई०के ६ठ शताब्द कम्बोजराजने चीनराजके निकट अपना दूत भेजा था।

सम्भवतः ई०के सातवें शताब्दसे इस राज्यमें बौद्धधर्म बढ़ने लगा। कारण उसी समयसे फिर भारतीय राजाओंका नाम सुननेमें न आया। किन्तु कम्बोजके बौद्धोंका इतिहास भी गाढ़ तिमिराच्छन्न है। मालूम

पडता—श्यामदेशीय बौद्ध राजाओंके प्रबल होनेसे कम्बोज उनके अधीन हुआ।

ई०के सप्तदश शताब्द फ़रासीसी वाणिज्यके अभिप्रायसे कम्बोजमें घुसे थे। १७८७ ई०को आनामके राजा विद्यालङ्कने फ़रासीसके अधिपति जोडय लुयीसे सन्धि स्थापन की। उसके अनुसार फ़रासीसी युद्धकाल आनामके राजाको साहाय्य पहुँचाने थे। उन्हींके साहाय्यसे विद्यालङ्कने उस समय टनकिङ्ग और कम्बोज अधिकार किया। १८३१ ई०को आनामके राजा मर गये। फिर १८४१ ई०को उनके पौत्र तियेनफ़्री राजा हुये। उन्होंने कयी फ़रासीसी और स्पेनी खुष्टान धर्मप्रचारकोंको मार डालनेका आदेश दिया था। उससे समस्त फ़रासीसी और स्पेनी विगड उठे। १८४७ ई०को कप्तान रिगल डि-गिनोत्रो १७८७ ई०का सन्धिपत्र निष्पत्ति करनेको समैय्य भेजे गये। किन्तु आनामके राजाने फ़रासीसका आदेश सुना न था। फिर फ़रासीसी सेनापतिने युद्ध घोषणा की। बनेक वार युद्ध चलते भी आनामके राजा फ़रासीसियोंसे न दवे। किन्तु आनाममें गडबड देख १८५८ ई०को कम्बोजके ईसायियोंने मिलजुल विद्रोह लगाया था। नौसेनापति गिनोली उन्हें साहाय्य करनेको सैगन नदीको राह कम्बोजमें घुस पड़े। फिर फ़रासीसी जी छोड़ कले थे। उनके पुनः पुनः आक्रमण मारनेपर कम्बोजराज डोन उठे। १८६२ ई०की ३६ वीं मयीकी आनामराजने सन्धि करनेकी कम्बोजकी राजधानी सैगन नगर दूत भेजा था। १५ वीं जूनको सन्धिपत्र साचरित हुआ। फ़रासीसियोंने अपने युद्धका ब्यादादि और पूर्व सन्धिपत्रके अनुसार प्राय्य अर्थ ले लिया। पीछे खुष्टान-धर्मप्रचारकोंको प्रवाह धर्मप्रचार करनेको छमता मिली।

उस समय कम्बोज आनाम और श्यामके अधीन करद राज्य-भुक्त रहा। एक राजप्रतिनिधि द्वारा यह शासित होता था। फ़रासीसी कम्बोजराज्यमें पहुँचे और मिकङ्ग नदी तीरवर्ती प्रदेशकी उर्वरता एवं शस्यशासिता देख विमोहित हुये। उन्होंने उक्त स्थान हस्तगत करना चाहा था। अन्यतम नौसेना-

आजकाल काठेदार लकड़ों का राजप्रतिनिधिके निबट सेजे
 जड़े। राजप्रतिनिधिके फरासीसियोंका मनोभाव समझ
 थानामराजका मतामत सेनेके समय सोयां या ।
 किन्तु फरासीसी हुतने धनकी बात न सुनी। फिर
 उक्त समय अशोकके राजप्रतिनिधिके फरासीसियोंके
 विषय शोक मतप्रकाश करनेकी समता आई थी ।
 हुतदां पाण्डु हो लम्बे मन्त्रि बनना पड़े। इस सम्बन्धि
 अनुसार समय एककी शक्ति बनानेकी पूर्ण समता
 मिली थी। अशोकके फरासीसी भावका भी महत्त्व
 देना पड़ता, वह छूट गया और अशोकके उत्पन्न
 द्रव्यादि पर आ कर समता, वह भी न रहा।
 फरासीसियोंका अशोकके नामा स्थानमें अपना एक
 एक प्रतिनिधि (रसीइष्ट) रखनेका आदेश मिला
 था। फिर लक्ष्मी उदङ्ग नामक नगरमें अपने
 शासकत्वका विपुलार मन्त्रानु कारणाणा और गुदाम
 बनानेकी भूमि पायी। उषी अश्विपक्षमें यह भी
 उदर गया था—फरासीसियोंकी अनुमतिसे व्यतीत
 दूसरा कोई वैदेशिक प्रतिनिधि उदङ्ग नगरमें रह
 न सकैगा।

पक्ष अशोकपति एक सामान्य राजप्रतिनिधि हो
 रहे, जोकि फरासीसियोंके शाखाएके राजाका उपाधि
 पा गये, किन्तु पूर्वकासके अनुसार शासनराजको कर
 देने रहे।

१८६६ ई०को सिन्धु और बेका नदीकी मध्यवर्ती
 कश्मीर भूमिके दोगेय दक्षिण राजविद्रोही बने
 थे। फिर वह फरासीसियोंपर पञ्चावार बनाने और
 उनके शासकके द्रव्यादिकी छूट मशाने लगे। उषी
 समय अशोकके सिद्धो नामस्थाने विद्रोहियोंके सिद्ध
 अशोकराज नरोदनके विरुद्ध पञ्चावार किया था।
 उषर फरासीसियोंने भी अशोकराजके सिद्ध विद्रोहि
 बने दशानेकी यथासाध्य शिष्टा करनायी। किन्तु अशोकके
 सिद्धीने बगलना मानो न थी। उक्त सुदमें दो तीन
 फरासीसी सेनापति मर गये।

१८६६ ई० को १६ वीं पगलकी विद्रोही शासनने
 अपने दक्षिणके भाग प्रकट दिग्धे रावधानी पर
 शासन मारा था। उस समय राजपरिवार पर

दास्य विपद् पड़ी। फरासीसियोंकी प्रायः दो ही
 स्वतन्त्र उदङ्ग नगरमें उदर धरनेकी यथासाध्य शिष्ट
 रही थीं। किन्तु १० वीं दिग्धपर भा पड़ गये। वह
 अशोकके इतिहासका एक भयङ्कर दिन था। राज-
 विद्रोही अशोकपति अपने अतीवता बचानेकी
 पशुतोमवधि की छोड़ फरासीसी और अशोकराजकी
 सेनासे लड़ने लगे। यत पक्ष अशोकके जन्मभूमिके
 नामपर अपने मारे गये। फिर उक्त सुदमें फरासीसी
 और अशोकराजकी सेनाके भी अनेक प्रधान प्रधान
 सेनिक पुत्रपति प्राचलान किया था। अशोकके बहु
 यत्न, अनेक बहू और विष्टार सेन्यस्यके जोकि
 विद्रोहियोंके शरास बसके अशोककी राजधानी
 उदङ्ग नगर रचित हुआ।

इस बार अशोकपति फरासीसियोंके शाखाएके
 श्रापीन राजा बने थे। अशोकराज नरोदनने अपने
 नामसे राजधानी स्थापन की। फरासीसियोंकी भी
 सिन्धुनदीके मुक्तपर उपनिवेश स्थापनेकी समता
 मिली।

पानकस अशोकका प्रधान नगर सेनन और
 सिद्धे बन्दर है।

शापीन की—प्रथम ही सिद्ध पुत्रे—अशोकराजके
 श्रापीन भारतीय राजाशने कीर्तिस्थ स्थापन किये
 थे। बहु वय व्यतीत होने भी उनका सिद्ध शासन
 बना है। अशोकके महान बन और मानके पगल
 स्थानमें उस पञ्चावार कीर्तिके राय परिलक्षित
 होता है। उत्साहो फरासीसी महत्त्वविदोंके यत्नके
 बने पुराकीर्तिवस्तु के अन्तर्धे समस्त पुत्र गया है।
 जितना उदङ्ग हो गया नीचे उदङ्का संचित विर
 रण दिया है—

अशोकके नामा स्थानमें अनेक पुराकीर्ति पावि
 ष्य त हुये हैं। वह स्थानमें दोषे तीन भागमें विभक्त
 हैं। १म पञ्चावार, २म बहु एक कीर्ति और उत्तम
 अशोकका दक्षिण तथा मध्यम पंथ है।

पट्टण—श्रावणशिवियोंके निबट 'नपलवट पर्वत'
 नगर मन्दिर नामसे परिकृत है। यह महामन्दिर
 अशोक नगरसे प्रायः दो कोस दक्षिण बनता है।

इसका कैशा हृदय मन्दिर प्रति अस्य ही देख पड़ता है। मन्दिरका आयतन कौयो आध कोस होगा। इसका परिवेष्टक प्राचोर १०८० × ११०० फीट पड़ता, जो चारो ओर २३० फीट विस्तृत खात द्वारा घिरता है। खातके ऊपर मन्दिर जानेके लिये सुदृढ़ सुरभ्य स्तम्भ परिशोभित सेतु बंधा है। सेतुके आगे गोपुर है। उसके मध्यसे मन्दिरके वहिर्प्राङ्गणको जाना पड़ता है।

नैऋतकोणसे मन्दिरमें प्रवेष्टनपर वाम दिक् अपूर्व दृश्य नयनगोचर होता है। यहां भीष्मकी शरशय्या बनी है। मध्यस्थलमें कुरुपितामह भीष्म शरशय्यापर याचित है। उनकी दोनों ओर सुकुट एवं किरीट गोभित कुरु तथा पाण्डवपत्नीय वीर खड़े और गज एवं रथपर तेजःपुञ्ज महारथी खड़े हैं। पितामह भीष्मसे अनतिदूर गजके ऊपर राजा दुर्योधन स्नान-वटन अपेक्षा कर रहे हैं। गत गत वर्ष गत होते भी इन मूर्तियोंमें कौयो वैलक्षण्य नहीं पडा। यह प्रस्तर-खोदित मङ्गल मूर्ति दूरसे देखनेपर जीवन्त बोध होती है।

मन्दिरके मध्य पश्चिमोत्तर रामायणका दृश्य है। राक्षस और धानर घोरतर युद्ध कर रहे हैं। विकट मूर्तिधारी राक्षसवीर रथपर बैठ वाण बरसाते हैं। मध्यस्थलमें राम हनुमान् पर चढ रावणके प्रति वाण निक्षेप करते हैं। उनके दोनों पाश्र्व लक्ष्मण और विभीषण दण्डायमान हैं। सिंङ्गयोजित रथपर रावण रामके शरपाहमसे जर्जरित हो बैठा है।

उत्तर-पश्चिम भागमें देवासुरके समरका दृश्य है। विविध मूर्तिधारी सुकुटगोभित देव अश्वयोजित रथपर चढ वाण फेंकते हैं। विकट मूर्तिधारी असुर भी जो छोड़ लड़ रहे हैं। यहां कौ मूर्तियोंमें सूर्य और अश्वदेवकी ज्योतिर्मय मूर्ति प्रति सुन्दर है। देव स्व स्व वाहनपर प्राकट्ट हैं।

उत्तर-पश्चिम—यहां भी देवासुरका युद्ध है। चतुरा-नन, पञ्चानन, पड़ानन और गरुडोपरि शङ्ख-चक्र-गदा-पशुधारी विष्णु असुरदलन करते हैं। बहु सुख एवं बहु हस्तविशिष्ट देव अश्व, गज, सिंङ्ग वा गेंडेपर-चढ

धनुर्वाण लिये युद्धमें व्यापृत हैं। युद्धम्यलसे चक्र-जटाकूटविलम्बित महादेवकी मूर्ति है। विश्ववि-यांगो पुष्पकरसे उनकी अर्चना कर रहे हैं।

उत्तरभागमें ईपत् पूर्व दूररा मण्ड है। यहांका गिष्पनेपुख्य और ध्यापत्व क्षार्थादि चभोतक शेष नहीं हुआ। सकन ही मानी प्रसम्पूर्ण पड़ा है। यहां भी पौराणिक दृश्य है। विष्णु गरुडोपरि आरोहण कर किष्ठी गजारोही असुरकी मार रहे हैं। दूमरी भी अनेक देवासुरमूर्ति प्रसम्पूर्ण प्रवस्थामें पड़ी हैं।

पूर्वदक्षिण भागमें समुद्रके मन्थनका दृश्य है। क्या गिष्पशार्थ, क्या चित्रकाय, क्या स्थापत्यविद्या—सर्व विषयमें इस मन्थन पराकाठा पार्यो है। बोध होता—समुद्रके मन्थनका ऐसा शीवस्त दृश्य दूरसे स्थानपर कहीं नहीं। मध्यस्थलमें कूर्मके ऊपर मन्दराचल स्थापित है। उसके ऊपर विष्णु बैठे हैं। मन्दर वासुकी द्वारा वेष्टित है। नागराजके सुखकी चोर प्रायः एक गत विकटाकार दैत्य और पुच्छभागमें एक गत देवमूर्ति है। दैत्य खर्ब, वलिष्ठ, शिरस्त्राप एवं कवचाष्ठत, कर्षोंमें कुण्डल पहने और लम्बी दाटी रहे हैं। देवोंके मस्तकपर सुकुट, कण्डमें हार, हस्तमें बलय, टी-दो अश्वद और यज्ञसूत्र गोभित है। यह दोनों ही मूर्ति एक भावसे खड़ी हैं।

जहां समुद्र मथा जाता, उसके उपरिभागका दृश्य प्रति चमत्कार देखाता है। मानों गत गत स्वर्ग-विद्याधरी और असुरा प्राकाशके पदमें नृत्य करती हैं। फिर अधोभागमें सागरका दृश्य है। नाना प्रकार सामुद्रिक जीवजन्तु मत्स्यादि इस कल्पित समुद्रमें खेलते फिरते हैं। खच्छ सलिलमें कैसे घोर घोर स्रोत चल रहा है।

दक्षिणपूर्व भागमें दूररा मण्ड है। यहां यना-लयका दृश्य विद्यमान है। पापका निग्रह और पुख्यका पुरस्तार देख पड़ता है। स्वर्ग एवं नरक और सुख तथा दुःखका दृश्य प्रदर्शित हुआ है। नरक यन्त्रणाकी ३६ मूर्तियां खोदी गयी हैं। प्रत्येक मूर्तिके नीचे खोदित लिपिमें लिखते—इस प्रकार पाप कर्मानपर मनुष्य ऐसे ही नरकभोग करते हैं।

उक्त मन्त्रको छोड़ छोड़ी दूर पश्चिम चलनेपर
दूररा सुदृश्य मन्त्र मिलता है। यहाँ कम्बोजकी
राजाकी पीर उनके परिवारवालोंकी मूर्ति खुदी है।
इस बादकार्यका परिपाद्य देव चमत्कृत होना
पड़ता है। ऐसा मन्त्रकीसा दृश्य कम्बोजमें दूसरे
जानपर यहाँ देख सकते हैं। यहाँ योनीकृत पञ्चो-
त्ररा सुचादशासिनो राजमहिषा विधिष पञ्चद्वारये
विष्णुवित हो एक रघुपर बैठे कमारोइके साथ बीचमें
बसी का रहे हैं। ऊपर चित्रविचित्र चमत्कृत
दोपुष्पमान है। फिर उर्ध्वकि पञ्चात् दिग्बदपभारिचो
मनोमोहिनी राजकन्या नरपासित रघुपर चतु मानो
किसी ज्ञानको गमन करती हैं। उनके साथ सखी
पुष्पचवनकर उपहार देती हैं। दाएँ पीर दासो दोनों
निष्ठवर्ती पञ्चमाकी इच्छे पञ्च साक्षर छोटे छोटे
बच्चोंकी बैठती हैं। राजकन्याओंके पादोंपर सह
चरित्रोंकी घोड़ी चामर डोलाने छोड़े मण्डलपर जाता
क्याती पीर बोयी सुधादु पल किये भयनी ज्ञानिनी-
को देखाती है। उषोषे पदूर निर्गम उपवनका
दृश्य है। मिरिमाकाके मन्त्र तदराको खड़ी है।
तदके तदपर घुगवा गिष्ट खेस रहा है। फिर तदकी
याच्चापर नामाविष पसी बैठे हैं।

मन्त्रके उपरिभागमें क्वचपात्रत राजपुष्प, नर्तक
पीर जानुका दृष्टावमान है। इनकी वैशभूया मी
राजसनाके किये कयोमी है। समुच्च हो राजसभा
है। कुच्छनकारी जटाभूट विलम्बित माद्यच यन्त्रो
भाषके समारोहण है। राजा पीर राजकुमार पदोचित
वैशभूया बना यथावोय पासत्रपर कपणित है।
पञ्चबाग बोद्धा राजसभाको उच्छल कर रहे हैं।
उक्त दृश्य देखनेसे चारका पड़तो—प्राचीन भारतीय
राजसभा किस भावके लगती थी। परम वैष्णव
कवयर्मा पद्मोरवटको उक्त मन्त्राकीर्ति व्यापन कर
गये हैं।

पद्मोरवट नामक मन्दिरके दक्षिणपूर्व जाड़े पाँच
कोस दूर दूसरे भी तीन पवित्र ज्ञान विद्यमान हैं।
उनके नाम बहङ्ग बङ्ग पीर कोन हैं।

बहङ्गका मन्दिर पति प्राचीन है। वह देखनेमें

तिहायाकार पीर बह तक्षमें विमल है। प्रत्येक
तक्षमें निर्गम विद्यमान है। ऊपर हो ऊपर स्थापित
हो पञ्चको १८ हाथ ऊँचे त्रिभुजनी मन्दिरद्वय
चारक शिवा है। प्रत्येक मन्त्रमन्त्रमें सिद्धो है।
उत्तमें जो सिंहमूर्ति खोदित रही, वह पात्रकस प्रायः
देख नहीं पड़तो। निर्गमके प्रत्येक बीचमें मन्त्रमूर्ति
विद्यमान है। मन्दिरकी चारो पीर दृढकनिर्मित
सुदृ सुदृ पाठ मन्दिर हैं। स्थानीय लोगोंके कथनानु-
सार महातक्ष प्रधान मन्दिरकी सोमा बनी गयी है।
पाठो मन्त्रके तोरण प्राचीरमें संस्कृत भाषासे ८१०
पङ्क्ति लिपि खुदी हैं। इससे मन्दिरके निर्माताका
कुछ परिचय मिलता है। कम्बोजके राजा इन्द्रवर्माने
हरमौरीपूजाके किये उक्त मन्दिर बनवाया था।

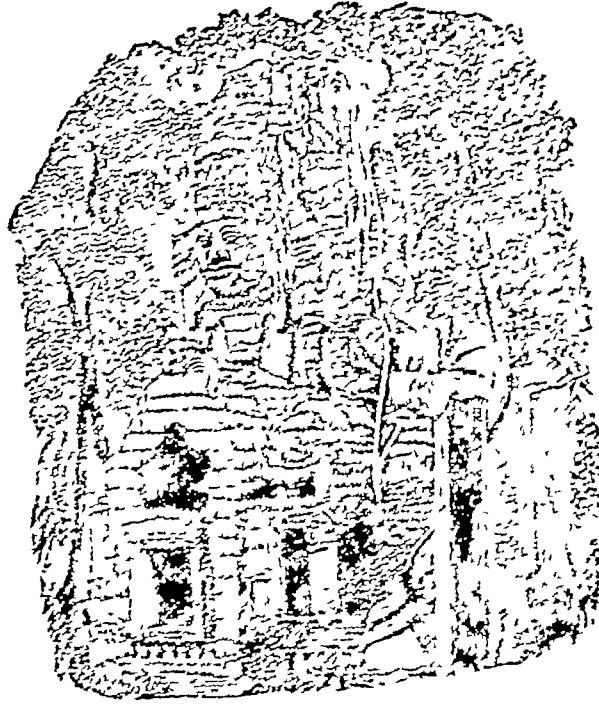
बहु नामक स्थानमें पास हो पास बह शिवमन्दिर
बनी हैं। प्रत्येक प्रविशहारके प्राचीरपर दक्षके
मन्दिरकी भांति संस्कृत भाषामें लिपि खोदित है।
दक्षके मन्दिरके बीच संस्कृत भाषाकी लिपि निबली,
किन्तु बहुके मन्दिरमें संस्कृत एवं कम्बोज प्रचलित
सम भाषाकी लिपि भी मिली है। गिलासेखके
धनुषार परमेश्वर पीर इन्द्रेश्वर नामपर उक्त शिव
मन्दिर उन्नत किये गये हैं। बहुमें तीन शक्तिमन्दिर
हैं। मन्दिरका बादकार्य पति सुन्दर है।

बहुके छोरे पाव कोस उत्तर चकने पर कोलि
नामक स्थान मिलता है। वहाँ दृढकनिर्मित चार
देवमन्दिर हैं। स्थान स्थानपर मन्त्र स्थाप पड़े हैं।
उन्में देखती हो समझ पड़ता—यहाँ कोई इच्छा
देनाक्य रहा। पात्रकल मन्त्रका पीर मितिका
सामान्य ध्व सावयेव मात्र पड़ा है। प्रत्येक मन्दिरमें
बामदिक् धनुषासनलिपि खोदित है। उसको पढ़नेसे
समझ पाये—कम्बोजराज यमोवर्माने ८११ मन्त्रको
शिव एवं महातीके सेवार्थ उक्त मन्दिर बनवाये थे।
बह अपने उत्तरदिक्कारिणोंको देखनेमें किये
मनोबोध करनेके किये पुष्प पुन' प्रादेग दे गये हैं।

ऊपर किन्तुके सप्तम विवरक किये, उनको छोड़
दूसरे भी पनेक मन्दिर बनी हैं। इनमें वैशो, नगरका
बहुमन्दिर की सर्वप्रधान, है। गिलायापुत्रिव्

पण्डितोंके मतमें मंदिरवटके मन्दिरमें कस्वोजके ब्रह्म-
मन्दिर सर्वप्रकार श्रेष्ठ हैं। क्या मित्पनैपुण्य, क्या
कारुकार्य पार क्या स्थापत्यकर्म—सबमें ब्रह्ममन्दिरके

निर्माता अपना अपना प्राधान्य देखा गये हैं। विनि-
पतः समस्त भारतमें जो दृष्टे नहीं मिलता, यही शतु-
सुख ब्रह्माका मन्दिर कस्वोजमें देख पड़ता है।



ब्रह्ममन्दिर।

उक्तब्रह्ममन्दिर देखनेसे मनमें कथी वार्ते उठती
हैं। हमारे आराध्य वेदके गिरोभाग उपनिषद् ग्रन्थमें
सर्वप्रथम ब्रह्माकी उपासना देख पड़ती है। ब्रह्मा
भारतीयोंके सर्वप्रथम उपास्य देवता हैं। उपनिषद्में
गिराकार परब्रह्म और पुराणमें चतुर्मुख ब्रह्मा ही
कहे गये हैं। पुराणमें अनेक ब्रह्मतीर्थोंके नाम भी
मिलते हैं। किन्तु देखने या सुननेमें नहीं आया—
भारतवर्षमें किसने कहां ब्रह्माका मन्दिर बनाया है।
फिर इस प्रश्नका उत्तर देना भी कठिन है—कस्वोजके
भारतीयोंने कहांसे ब्रह्ममन्दिरका तत्त्व पाया। समस्त
पड़ता—जब भारतके उत्तरस्थ कस्वोजदेशवासी
कस्वोज जम्भभूमि छोड़ इस सुदूर प्रदेशमें आते,
तब उन्हीं आदिकस्वोज देशमें ब्रह्मोपासनाके साथ
ब्रह्ममन्दिर भी बनाते थे। कथी गत वर्ष गुजरात
और विघर्मियोंका पुनः पुनः आक्रमण पड़नेसे

उसका चिह्नभाव विलुप्त हो गया। नहीं समझने—
मविष्यत्के गर्भमें क्या निहित है। सम्भवतः हिमा-
लयके दुर्गम नुपारवेष्टित गहरमें ब्रह्ममन्दिरका गूढ
तत्त्व निकला जागा।

किसी किसी पाश्चात्य पण्डितके कथनानुसार पड़ने
मध्य एशियामें ब्रह्ममन्दिर रहा। प्राचीन कस्वोजोंने
यहां या उन्हींके अनुसार ब्रह्मानय बनाया। भगवान्
जानें—यह बात कहांतक मत्य है।

कस्वोजके ब्रह्ममन्दिरोंका यही विनिपत पाते—
प्रत्येक पड़पर चतुर्मुख गोभा देखाते हैं। फिर एक
बृहत् मन्दिर पड़ारवटके समकक्ष हो सकता है।
पति सुदूरका भी प्रायतन और गठन सामान्य नहीं।
पूर्व पृष्ठमें किसी सुदूर ब्रह्ममन्दिरका चित्र खींचा है।
किन्तु चित्र उतारकर देखाया जा न सका—मन्दिरका
अभ्यन्तर किस प्रणाली और कैसे कौगच्छे बना है।

वास्तविक स्थितियोंमें मन्त्री मति अपनी अपनी सम-
ताका परिचय दिया है।

बड़े मन्दिरके निचले दो दूसरे भी खमी छोटे छोटे
ब्रह्ममन्दिर देख पड़ते हैं।

बैरोन नगरके पूर्व पांच कोस दूर पतन ता कुम्भ
नामक एक प्रबल खेतीका एक मन्दिर है। उसका
संस्कृत नाम ब्रह्मपतन ठहरता है। एक मन्दिर
चतुरस्र है। प्रति दिक् प्रायः ३०० खोटे विस्तृत है।
पूर्वदिक् मन्दिरका बहिर्दृश्य जितना नयनप्रोतिकर
रहा, प्रायःकाल 'कचका कचामास मी गर्भो' कहनेसे
का हिमड़ा। कम्बलि मन्दिरकी चारो ओर बल बढ़-
नया है। मिति तोड़ खोड़ मजोरक मर्याद ठठाने
कड़ है। एकर एकर रट फूट जानेसे मन्दिर बन्द
बोवजन्तुका बापकाल बना है। पूर्वको चर्चा यह
बयना ध्वनिसे प्रायः प्रमुह हो जाते प्रायःकाल चर्चा
दिवाभागमें भी नृगाल अपनी एक कर सुनाते हैं।
भारतीयोंके भारतीयत्व कोप होवे होवे दिखी भारतीय
पचपचा पायो है। बैरोन मन्दिरके ही गर्भो—
कम्बोजके शोमि नामक पर्यतसे भी पक्षक ब्रह्ममूर्ति
निचली हैं। कायोमि शिवबिम्ब पक्षिक देख पड़ने
की मति एक पर्यतमें पर्यप्य ब्रह्ममूर्ति मिलती है।

कम्बोजराज मो ब्रह्मापर पतिमय मन्त्रि और
जहा रहते थे। स्थानीय प्राचीन लोगोंके कहनानुसार
एक राजाने किन्ही नामराजको कम्बोजके विवाह
किया। उसपर नामराजके उत्पातसे बह म्यतिव्यष्ट
की मने। मेषको कम्बोजे नामद्वारमें एक ब्रह्ममूर्ति
स्थापन की। उससे जनका लक्ष्य भय हुआ था।
नागराज नगर स्थापक भागी। वह ब्रह्ममूर्ति प्राय
मी नामद्वारमें विद्यमान है। एक चीन-परिभाषक
१२८३ ई०के यहां पाये थे। कम्बोज देखकर एचको
पञ्चालन बुद्धदेवकी मूर्ति बताया है। किन्तु कम्बोज
अस मानना पड़ेगा। यद्यपि चीन परिभाषक लोगोंके
रीजनुसार जो देख पाने, उसे बीजवर्म संज्ञान्त हो
बताते थे।

कम्बोजके नामा ज्ञानमें बीहोके देखने योग्य
दृश्य भी विद्यमान है। चर्चों इन्हें प्रायःचर्चमें खीदित

धानी बुद्ध, चर्चों प्रबल बुद्ध और चर्चों बुद्धनिर्वाणका
प्राध्यायिक दृश्य है। प्रायः मी चतुस्रख्यान हो रहा
है। कम्बोजका पुरातन ज्ञाननेके लिये प्ररापीसी
पण्डित बहपरिकर हैं। मयिचतुर्में नूतन नूतन
विषय प्राविधृत होना सम्भव है।

कम्बोज—कम्बोजका जलवायु वहुदेयसे मिलता है।
श्वेतसे मासूमापतक चर्चाका समय रहता और उत्तर
पूर्व वायु बहता है। दक्षिण-पश्चिम वायु चर्चनेसे
मूमि सुखती है। यहां तापमान (थर्मामीटर)
यन्त्रमें १०३ डिग्रीसे पक्षिक कम्बोजे उत्ताप नहीं
होता। फिर पक्षिक मोत पड़नेसे प्रायः ३० डिग्री-
तक उत्तर जाता है। दिग्भेद और तुरीपीय—दोनोंके
लिये यह ज्ञान पतिमनोरम और साम्यकर है।
कम्बोजदेय समतल लगता है। नदीके तटको भूमि
पतिमय चर्चरा प्राती और जलसे हृद्यकी माथा भर
जाती है।

कम्बोज—कम्बोजमें धान, पान, सुपारी, चन्दन
काष्ठ प्रायः एकद्वेषीको उत्पत्ति बहिष्ट होती है।
बीह, रीज और इतिहन्त मी पक्षिक मिलता है।
ई०के नवम यताम्ब दो परत कम्बोजकारी यहां पाये
थे। कम्बोजके लिये,—“कम्बोजका सर्वोत्तम मसमल
कम्बोजमें मिलता है। फिर यहां प्रसृत हो यह
द्वितीयपर चर्चसे मेजा जाता है।”

चीन—इष्टी, मन्त्रि, रज और मोमेवादि वनमें
दृक दृक देख पड़ते हैं।

कम्बोज—कम्बोजमें धान और पानामकी माया प्रब-
लित है। किन्तु प्रायःकाल कम्बोज प्रजापत कम्बोजकी
भाषामें बात करते हैं। यही कम्बोजको प्रादिभाषा
पसमी जाती है।

कम्बोज देवका विषय विस्तृत देवकी निचलिखित रूप वर्णन
करते हैं—

Hearn monbot's Travels in Indo-China,
Cambodia, and Laos.

Die Volker der Oestlichen Asien von
Dr. A. Bastian.

J Garnier's Voyage d'Exploration en
Indo-China.

A bai Remusat's Nouveaux Melanges
Asiatiques—Croizier's.

L, Art Khmer; Legends Indo-Chinoises
relatives aux monuments de pierre de
Pancien Combodge Aymonier's.

Notice sur le Combodge, Geographie du
Combodge.

Journal Asiatique 1882-83-84, Journal
of the Indo-China Society of Paris 1877-78,
Journal of the Anthropological Society of
Bombay, Vol. I. P. 505-552.

कम्वातायी (सं० पु०) गणविज्ञ, किमी० किष्मकी
चीन ।

कम्भ (सं० त्रि०) कं जलं सुत्र वा अस्यास्ति, कम्भ-भ ।
कम्भा' कम्भ' इत्युत्पत्तम् । पा ३।३।३।३। १ जलसुत्र, पार्श्वे
भरा हवा । २ सुषी, खुग, जिसे भाराम रई ।

कम्भारी (सं० स्त्री०) कं जलं विमर्ति धारयति, कम्-
भ-भ-अ-डोष्-डोष् वा । गम्भारी इह, गंभारि ।
कम्भारी देवी ।

कम्भु (सं० स्त्री०) कं जलं तत्सुखं गैत्रं विमर्ति,
कम्-भ-ड । सगौर, सुस ।

कम्भन (हिं० पु०) कम्भ देवी ।

कम्भा (हिं० पु०) ताडपत्रपर लिखित लेख, जो
सज्जन्तु साहके पत्रेपर लिखा हो ।

कम्भ (सं० त्रि०) कामयति, कम्-भ । गम्भ' इत्युत्पत्तम्-
हिन्दोके । पा ३।३।३।३ । १ कामुक, मैथुनच्छायुक्त,
वाहनेवान्ना । २ कम्भीय, मनोहर, खुबधूरत,
वाहने प्रायक ।

कम्भा (सं० स्त्री०) कम्भ-टाप् । १ कम्भीया,
मनोरमा, लिखकी लोभानिवाली । २ कामुकी, वाहने-
वाली । ३ गद्गा ।

"कम्भयन्ना कथा इति सुखं गी" (शालोखन्य २७४२)

कय (वै० त्रि०) किम् पृषोदरादित्वात् वेदे क्रया-
देगः । १ कथा, कौन । (पु०) की वायु इव याति
गच्छति अथवा कं जलमिव याति, क-या-ड ।
२ वयः, वयःक्रम, उम्र । ३ देवविगीय । इसका
दृमरा नाम कामार था । इसने बालखिलसे वेदकी
एक संहिता पढी । (मत्स्य)

कयपूती (हिं० स्त्री०) वृक्षविगीय, एक पेड़ । यह
सततहरित है । इसका उत्पत्तिस्थान सुमात्रा, यव-
द्वीप प्रकृति पूर्विय द्वीपपुञ्ज है । कयपूतीके पत्रमे
तेल निकालते हैं । उक्त तेल कपूरकी भांति चम्पायी,
अति परिष्कार और चास्वादमें तीक्ष्ण होता है । कय-
पूतीके तेलको अङ्गमें पीडा उठनेमें नगते हैं ।

कयम्बा (सं० स्त्री०) की वायु इव याति गच्छति,
किंवा कं जलमिव याति, क-या-ड-स्या-क-टाप् ।
पानी इत्युत्पत्तम् । पा ३।३।३। १ काकोनी, एक देवा । २ हरीतकी, हर । ३ सुष्मैना,
छोटी इलायची ।

कया, कथा देवी ।

कया (वै० अथ०) किस रातिमे, किस तीरपर ।

कयाट (वै० त्रि०) गरीरको व्यय करनेवाला, जो
लिखकी खपाता हो ।

कयाधृ (सं० स्त्री०) जम्भासुरको कन्या । यह
हिरण्यकशिपुकी स्त्री और प्रह्लादकी माता रई ।
हिरण्यकशिपुके शीरस और कयाधृके गर्भसे मंडाट,
अयुजाट, प्रह्लाद तथा ज्ञाट—चार पुत्रने जन्म लिया ।

कयाम (अ० पु०) १ स्थिति, ठहराव । २ जीवन,
किन्दगी । ३ स्थिरता, पोटाई । ४ प्राद्वेना करते
समय खुडे होनेकी शान्त । गान्तिरचाको 'कयाम-
असन' और स्थिर रहनेवालेकी 'कयाम-पिनीर'
कहते हैं ।

कयामत (अ० स्त्री०) १ प्रलय, आविरो टिन ।
इंसार्थी, सुसन्मान और यज्ञदी प्रलयके अन्तिम
दिवसको कयामत कहते हैं । इसी दिन यावतीय
चत व्यष्टि मृत्युकी गहरी निद्रासे उठते और ईश्वरके
सम्मुख अपने-अपने कर्मका शुभाशुभ फल पानेकी
पहुँचते हैं । २ विपट, सुधीवत । ३ सन्ताप, दुःख,
रोषापीटी । ४ उत्पात, बखिड़ा, खुलवली ।

कयारी (हिं० स्त्री०) शष्कलष, सूखी घाम ।

कयाम (अ० पु०) १ विचार, ख्याल, राय । २ अनु-
मान, अन्दाज ।

कयासन (अ० स्त्री०-वि) अनुमानतः, अन्दाज्ज-
अटकलसे ।

कथासी (च० वि०) १ मानव, कथासी। २ साक्य
निष्ठ, चन्दासी, पटवली। ३ पातुवण्डिक, सुपाविक,
एकसी। कथित विषयको 'धरर कथासी' और
साक्यनिक प्रमाचका 'सुसुत कथासी' कहते हैं।

कथाय (स० पु०) पलतास बहय वच' पय जो
कोड़ा पके कुडाने जैसे रंगका हो।

कथ्य—एक राजा। इकोने श्रीकथ्यकामो नामक मठ
और कथ्यविहार नामक विहार बनवाया जा। (उप्य)

कर (स० पु०) कोर्पति विधिप्यते पसी पनेल वा
कर्मचि वा करवे पय। १ इष्ट, डाय। २ इष्टा-
दण्ड, हाथीकी सूड। ३ विरय, रजि। ४ वरीं
पक, पोका। ५ प्रज्य। ६ विषय, काम। ७ कर्ता,
करनेवाला। ८ एक कारक। यह पूर्वकी उपपद
पार्मिके जगता और इष्टके जनक भादि समझ पड़ता
ह, जैसे—सुखकर इत्यादि। ९ दुख, मङ्गल।
१० बोधीस चक्रुसको भाप। ११ पाहुण्यपय, एक
भ्राड। काजोरमें इवे तपवड कहते हैं। १२ राकष,
मावगुणारी, टिकर। यह कृतिका माय्य पंथ होता
है। इकका संज्ञात पर्याय—मागवेध, बकि, कार और
प्रत्याय है।

"अतिशयमान जनक कथितकरम्।
वीनवेकचुर्धे वा रजिना वलवेतु कपठम्।
वना कथेन इमेव राजा वरीं च कर्तव्यम्।
कलतेय इति पाठे कथवेतु वरम् कराम्।" (मनु)

कृतिको कथ विषय प्रथतिका सामासाम देव
कर र्थपद करना चाडिये। राजा पिसी विवेचनाके
कर लगाने जिहमें कर्मकर्ता और वह कोनी फसका
भाय पाये।

"विकराम कथीरो एता वरतिरकथीः।
पलपयवटी मन्तः वरी वरप वर मा इ"

राजाको पय एवं सुवर्षादिके पचास और भूमि
बन्धनीय कृत्यार्थ तथा पयुक्तार्थकी विवेचनाके
चाडके बाद पाठ वा बारच भावमें एक मान लेना
चाडिये।

"अपरीशय वर माल इमामनुवर्तिरम्।
कथीवीरकथमाव पुष्करकणन च।

पयवाक्यवमाव कर्मा रितक च।
सुकरताव कथामां वरंकावमव च ॥"

इय, प्रपार, मङ्ग, सुत, गम्बदक, रक, पुष्प, मूल,
पक, पत्र, माक, डक, चर्म, पिष्टक, सुत्पात्र और
प्रपारपाम प्रकृतिका चर्हाय राजाकी माय्य है।

"विजयवी इत्यरौत न राजा श्रीमिताम् करम्।
न च इत्यव व दीवेथीको विवे वरम् ॥" (मनु ० च०)

पञ्चम बनहीन होते भी राजाकी श्रोत्रियका धन
पदक करना उचित नहीं। बिशु धरसायी कोनेके
श्रोत्रियको रावकर देना पड़ता है।

निष्कथित कतुदय देव माक वचिबुधे विषय
इत्याका मूल निर्धारण करना चाडिये,—

पसुव वरु कथ करमें क्ता मूल्य जगा है, कतुव
वरु विचनेके जितना काम होया, पसुव वरु रखा
करमें पयवा औरादिके निरापद रकमेंमें वचिबुको
क्ता पय्य पड़ा है, पय कथे विचनेमें जितना काम
निष्कथेमा। राजा देवक पयमें रावको रखा करमेंमें
हुये कथ वा परिवमादिको देव एकदेवदर्मी रूपके
कर निर्धारण नहीं करती। कर्ने कथक वचिब प्रथतिका
समस्त कार्य पर्यासीजनाकर कर लगाना होता है।
वस एवं अमरके पय वरु और तथा मङ्ग मचक
करनेको मांति राजाकी भी वचिबुका मूल्यजन
कथुदे न कर कर लेना उचित है। यदि सर्वकाप-
डाये राजा द्वारा श्रोत्रियको सुवाये पयपक होना
पड़ता, तो कथका राष्ट्र कथिरात् महीमें मिलता है।
पतयव राजा माक एवं पानामुदानमें प्रकृत हो
पयय्य वह कार्य करें जिसे कोय कर्मविद्व न करें
और जिनमें श्रोत्रिय औरादिके मकथे निहरेम रह
पके। रामकर्मक कथचित श्रोत्रिय को कर्मानुदान
ठठाते, वह कृतिका पाहु एवं जन और राष्ट्रका
वेमक वड़ाते हैं। (मनु)

कररत (वि० पु०) कर्मविषय, एक कोड़ा। यह
माय्य कथ चक्रुषिपरिमित दीर्घ रहता और बाहुमें
बड़ा करता है।

कररे (वि० क्री०) १ पात्रनिरीय, एक वरतन।
यह मात कथ रकमेंके काम आता है। कररेमें नाकी

भी लगती है। २ पक्षविशेष, एक चिडिया। यह चूट रहती और गोधूमके कोमल तर बंधुसे काट काट भक्षण करती है।

करंगा (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किसस का धान। यह सान्द्र और ईपत् क्षण्यवर्ण तुपविशिष्ट रहता है। आश्विन मास इसके पाकोन्मुख होनेका समय है।

करंगी (स्त्री०) करंगा देखो।

करंजा - (हिं० पु०) - १ कंजा। २ वृक्षविशेष, एक पेड़। ३ कोई आतिथवाली। (वि०) ४ घूसरवर्ण नेत्रविशिष्ट, जो भूरो भ्रांख रखता हो।

करंजुवा - (हिं० पु०) १ कंजा। २ करंज, एक पेड़। ३ कोई आतिथवाली। ४ अहुरविशेष, एक कोपल। -इसे घमोड़े भी कहते हैं। यह बंध, इच्छा प्रसूति जातीय हर्षोमें फूटता है। करंजुवा जिस वृक्षमें निकलता, उसको नाश करता है। ५ यवरोग-विशेष, जोके पीठेकी एक बीमारी। यह-क्षपिको हानि पहुंचाता है। ६ वर्षविशेष, एक रंग। यह ख्वाकी होता है। -माल, कसीस, फिटकिरी और नासपान मिला इस रंगको बनाते हैं। (वि०) ७ घूसरवर्ण नेत्रविशिष्ट, भूरी भ्रांख रखनेवाला। ८ घूसर, खाकी।

करंड (हिं० पु०) प्रस्तरविशेष, एक पत्थर। इसे कुकुर भी कहते हैं। करंड-अस्त्रशस्त्र पैनानेके काम आता है।

करंडी (हिं० स्त्री०) खंडी, कच्चे रेशमकी चादर।

करंड़ी (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक श्रीजार। यह १ छद्म दीर्घ, २ अङ्गुलि प्रशस्त और ३ अङ्गुलि सान्द्र होती है। चमार इगपर लूता सीते हैं।

करक (सं० पु०-स्त्री०) किरति विधिपति जल-सम्प्राप्त करोति जलमत्वा, कृ वा छ-दुनु। कृवादिना। चकार्यं दुनु। छप, शश्रु। १ करक, कमण्डलु, करवा। २ दाडिख्वहच, अनारका पेड़। ३ करकहच, करींदे-का पेड़। ४ पन्नाशहच, टेसूका पेड़, टाक। ५ कर-वरहच, कनैर। ६ वकुलहच, मौलसिरी। ७ कोवि-दार, कचनार। ८ कुसुमहच, कुसुमका पेड़। ९ नारि-केसका अस्थि, नारियलका-खोपडा। १० गोमयच्छद,

गोवरपर जगनेवाला छाता। ११ करक, ठठरी। १२ पक्षविशेष, एक चिडिया। १३ राजस, माल-गुजारी, टिकस। १४ दाडिख्वफल, अनार। १५ करका, श्रीला, पत्थर।

करक (हिं० स्त्री०) १ पीडाविशेष, एक दर्द। जो वेदना रह रहके उठती, उसको संज्ञा 'करक' पडती है। २ सूत्ररोगविशेष, पेयावकी एक बीमारी। इसमें पेयाव साफ नहीं उतरता और बीच बीच दर्द उठता है। ३ चिह्नविशेष, एक निशान। यह किसी वस्तुके आघात, संघर्षण वा मारसे शरीरपर पडती है।

करकहणन्याय (सं० पु०) न्यायविशेष, एक व्यायदा। कर शब्द कहनेसे जैसे कहणादि अलङ्कारयुक्त-कर समझा जाता, वैसेही इससे न्यायसूचक-दृष्टान्तका भावाये आता है।

करकच (सं० पु०) १ सामुद्रिक लवणविशेष, समुद्रके पानीसे निकाला जानेवाला एक नमक। -कश्कच देखो। २ नख, नाखून। ३ ज्योतिषोक्त संज्ञाविशेष। शनिकी घडी, शुक्रकी सप्तमी, बृहस्पतिकी अष्टमी, बुधकी नवमी, मङ्गलकी दशमी, चन्द्रकी एका-दशी और रविवारकी द्वादशी तिथिको करकच कहते हैं।

“शनिमार्गवज्रीवशुक्रशुभोमार्कवाचरे।
पठ्यादितियथ सप्त क्रमात् करकचाः कृताः॥” (श्रीतिलक)

करकच्छपिका (सं० स्त्री०) कच्छपस्तदाक्षतिरस्ति अस्या सुद्रायाः, ठन्। कूर्मसुद्रा। सद्रा देखो।-तान्त्रिक-अर्चनाकाल-भरस्यकूर्मादि अनेक प्रकार सुद्रा बनाते हैं।-उनमें कूर्म अर्थात् कच्छपाकार व्यवहृत होनेवाली सुद्राको ही करकच्छपिका वा कूर्मसुद्रा कहते हैं।

करकज (सं० स्त्री०) करपद्म, हाथका कमल।

करकट (सं० पु०) भरहाज पक्षी, एक चिडिया।

करकट - (हिं०-पु०) असार, मल, कूडा, भाडम।

करकटिया - (हिं० स्त्री०) करंरट, एक चिडिया। यह एक प्रकारका सारस है। इसका उदर एवं अधोभाग क्षण्यवर्ण रहता है। मस्तकपर शिखा होती है। फिर कण्ठ भी श्याम ही रहता है। शरीरका

पदको०। करकलस, अक्षलि, पानी लेनेको दानों
हाथ मिसा अंगुलीका घनाव।

करकोष्ठी (सं० स्त्री०) करस्थिता कोष्ठी। करस्थिता
रेखा, हाथकी रेखा।

करखा (हिं० पु०) १ युद्धसङ्गीत, लड़ाईका गाना।
२ छन्दोविशेष। करखेमें प्रत्येक पाद ३० मात्रा रखता
और अन्तको यगण पड़ता है। ३ उत्कर्ष, उत्तेजना,
लागडांट। ४ कलङ्क, कालिख।

करगता (हिं० पु०) सुवर्ण रौप्य वा सूत्रकी मीखला,
सोने चांदी सूत वगैरहकी करधनी।

करगह (हिं० पु०) १ निम्नस्थानविशेष, एक नौची
जगह। यह तन्तुवायकी कर्मशालामें होता है।
जुसाई पैर सटका करगहपर बैठते और वस्त्र बुनते
हैं। २ यन्त्रविशेष, एक औजार। इससे तन्तुवाय
वस्त्र प्रस्तुत करते हैं। ३ तन्तुवायकर्मशाला, लुला-
होंका कारखाना।

करगहना (हिं० पु०) प्रस्तर वा काष्ठखण्डविशेष,
एक पत्थर या लकड़ी। इसे मरेठा भी कहते हैं।
करगहना द्वार निर्माण करते समय चौखटपर जोड़ाई
करनेके लिये रखा जाता है।

करगही (हिं० स्त्री०) धान्यविशेष, एक धान।
यह अग्रहायण मास कटती और एक प्रकारका मोटा
जड़हन धान ठहरती है।

करगी (हिं० स्त्री०) मार्गनीविशेष, एक खुरधनी।
इससे कर्मशालामें परिष्कार की हुयी शर्करा बटोरी
जाती है।

करग्रह (सं० पु०) करी-गृह्यते यत्र, आधारे अप्।
१ विवाह, शादी, परनावा। २ हस्तधारण, हाथकी
पकड़। ३ प्रजासे प्राप्य राजसूक्त ग्रहण, प्रदा माल-
गुजारी, टिकस वसूल करनेका काम।

करग्रहण (सं० स्त्री०) करस्य ग्रहणं यत्र, बहुव्री०।
करग्रह देखो।

करग्रहारम्भ (सं० पु०) करग्रहस्य आरम्भ प्रकृति-
पुच्छेभ्यो यत्र। वार्षिक करके ग्रहणारम्भका दिन, सालाना
मालगुजारी वसूल करनेका आगम। इसे पुख्साई
और पुखा भी कहते हैं। अश्लेषा, आर्द्रा, ज्येष्ठा,

मूला, पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वभाद्रपद, मघा, भरणी
एवं कृत्तिका भिन्न अन्य नक्षत्र, मियुग, सिंह, कन्या,
तुला, वृश्चिक, तथा मीनसन्त और रवि, शनि, बुध, बृह-
स्पति एवं शुक्रवारकी करग्रह आरम्भ करना चाहिये।

“वीज्योपबन्धीतरमेयु लप्रे शीर्षोदधे मातुदिके यमाहे।

कुर्यादनुक्तानि समीहितानि करग्रहणमपि प्रणामः ॥”

ऐसेही समय भारतीय जमीन्दार देवतादिकी अर्चना-
कर नया खाता बनाते और अपने अपने साध्यानुसार
ब्राह्मण तथा आक्षीय वन्धु प्रभृतिको खिलाते हैं।

करग्राम (सं० पु०) गोण्डवन प्रदेशस्य नगरविशेष।
यह नगर गोंड जातिकी राजधानी रहा। उक्त
प्रदेशके अन्तर्गत रत्नपुरसे ६४ कास उत्तर करग्राम
अवस्थित है।

करग्राह (सं० पु०) करं गृह्णाति यः, ग्रह-ण।
पिताया पत्नः। पा ३।१।२३। १ राजा, बादशाह। २ राजसूक्त
आदायकारी, गुमास्ता, मालगुजारी या टिकस वसूल
करनेवाला। ३ साधारणतः हस्तग्रहणकारीमात्र, जो
हाथ पकड़ता हो।

करग्राहक (सं० पु०) करं गृह्णाति, ग्रह खं, लु।
पु. ल. वृषी। पा ३।१।२३। १ पति, मालिक, मालगुजारी
पानेवाला। २ राजसूक्त आदायकारी, मालगुजारी वसूल
करनेवाला, गुमास्ता। ३ हस्तग्रहणकारी, हाथ-
पकड़नेवाला।

करग्राही (सं० पु०) करं गृह्णाति, ग्रह खं, लु।
गिलिनि युग्। पा ३।१।२३। करग्राह। करग्राह देखो।

करघर्षण (सं० पु०) कराभ्यं घृथ्यते ऽसां, घृथ कर्मणि
लुगट्। १ दक्षिमन्वगदण्ड, मथानी। इसका संस्कृत
पर्याय—वैशाख, दक्षिण और तक्राट है। (स्त्री०)
२ हस्तघर्षण, हाथोंका मलना।

करघर्षो (सं० पु०) कराभ्यां करयो वा घर्षणं
विद्यते यस्य यत्र वा, कर-घर्ष-इनि। सुद्र मन्वगदण्ड,
छोटी मथानी।

करघा (हिं० पु०) वस्त्र प्रस्तुत करनेका एक यन्त्र,
कपड़े बुननेकी एक चरखी। करघ देखो।

करघाट (सं० पु०) विपठवविशेष, एक जहरीला पेड़।
इसके वस्त्र और मिर्यासमें विष रहता है। (वृषत)

हरहर (सं० पु०) "हरहर मन्त्रकर्म रह हर । २ मन्त्रकर्म, मन्त्रा । २ कपाय शोषका । ३ नारिकेलकर्म, नारिकेलका शोषका । २ कर्मण्युत् । ३ शरीरकर्म, निष्काशो हस्ती । ३ पात्रविधिय एक भरतन । ४ मिथ्या पात्र मोक्ष मांसेका भरतन । ५ हस्तविधिय किरी शिककी लय ।

हरहरवायन (सं० स्त्री०) तामी नदीके उत्तरप्रदेश एक तीर्थ । (लोककथन)

हरहरमात्रि (सं० पु०) "हरहर इति नाया। शोमरी, हरहर यावद् । हस्तविधिय एक कथ । यह मनुष्य शीतल, पचिष्ठान् सद्, पित्तघ्न, दाहहर, हृष्य शीर तैलशोषकवर्धन होता है । (रघुविधयु)

हरहरीमृत (सं० स्त्री०) पश्चिमाम्ने स्थित, हस्ती बना हुआ ।

हरहरय (सं० स्त्री०) विपनि, हाट, बाजारया भिन्ना ।

हरहरुति—मन्त्राजमाश्वीय चैत्रपक्ष त्रिदशे—अन्तर्गत महाराष्ट्रक तहसीलका एक नगर । यह चघाना १२ १२ ७० एच रेखा ७८ १६ ४० पू० पर मन्त्राजसे २३ मील दूर हाइरोड बिनाई अवस्थित है । यहाँका कब्रवाडू पश्चिम पच्छा नहीं । १०८२ ई० १८२३ ई० तक हरहरुतिमें याता-यात—इसका दुर्ग विख्यात है । दुर्गका आयतन १२०० मज है । चारा-शोर मजका चिम पडा है । दुर्गका प्राकार टूट गया है ।

उसीके पठारसे स्थानीय पूर्णवार्ध होता है । चंगरीकी शीर परासीशिवोंके मुहकाल इस दुर्गमें पीन रहती थी । १०१२ ई०को दुर्ग चंगरीकोके पश्चिमाम्ने रह, किन्तु १०१० ई०को परासीशिवोंके से बिद्या । फिर चंगरीकोने दुर्ग पश्चिमाम्ने करनीकी बड़ी बिद्या कपायी की—पश्चिम सेन्धवय जोरें भी वह दुर्ग पठार पर न पडे । १०१८ ई०की करनक बूटने बड़े शोरसे आक्रमण मारा था । उस समयके पात्र तक दुर्गपर चंगरीकोका पश्चिमाम्ने बना है ।

हरहरग (सं० पु०) कायविधिक, एक मात्र । यह एक प्रकारका छोटा कर्म है । प्यास या काबली । नारिकेली इन्धपर ताले बनाते हैं ।

हरहरिमाका (सं० पु०) हस्तविधिय, एक पीड ।

(*Bridelia lanceifolia*) यह बड़ाहीमें उपजाता शीर बहुत बड़ा लगता है ।

हरहरुती—विदियम । चंगरीको ।

हरहरुद (सं० पु०) हर हरः पापररुवापो हृदो यज । शाश्वतहृष, शशीरेका पीड । शशीरेको ।

हरहरुदा (सं० स्त्री०) हरहरिहरवत् शोधितवर्षे हट्टे पुष्य पञ्चा । १ शिशुरसुप्ती, शिशुदुःखिया । २ याकतव, सगुनका पीड ।

हरहरा (सं० पु०) १ पत्राका, बड़ी करवा । २ पचि विधिय, एक पडाड़ी चिड़िया । यह हिमालय, बागरी, मेगाल प्रकृति प्रदेशोंमें लखके निकट रहता है । करवा शीतकालको वर्षासे समतल भूमिपर पा-जखके निकट ठहरता है । लक्षमें; समरच-शोर विनाशन करना । इसी पच्छा लगता है । करलेके सनचपाद; पाके पाके लक्ष्मी पाहत रहते हैं । यह अपने पादके दूष्य पदक कर रहता है । शीग करलेका पाथेट टिडकी है । किन्तु देवका मांस पच्छा नहीं होता ।

हरहराज (सं० स्त्री०) उत्पत्तन, कबाब, बूटपाद ।

हरहरिया (सं० स्त्री०) पश्चिमिय, एक चिड़िया ।

हरहरी (सं० स्त्री०) पत्राका, लक्ष्मी ।

हरहरुत, कररी शी ।

हरहरुती, कररी शी ।

हरहरुता (सं० स्त्री०) १ पत्राका, करहरी । २ पत्राका विधिय, एक बड़ी लक्ष्मी । ३ मङ्गुली चगेना मूतने शीर चपड़ोमें भाङ्गकी लथ रेशुका काबनीकी लयहार करती है । हरहरुतीमें एक सुदीर्घ काठसुटि बना रहता है ।

हरहर (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हरहरिग (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हरहरिग (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हरहरिग (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हरहरिग (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हरहरिग (सं० पु०-स्त्री०) हरि नायते, हर जन ह । १ ध्यात्रिनक नामक गन्धद्रव्य, एक कुपदुदार बीज । २ करहरहृष, शरीरेका पीड । ३ लय, शापुन ।

हजार निकलेगी। इसी विभागके मध्य पूर्वसे पश्चिम वरदमदी प्रवाहित है।

करजास्य (सं० पु०-ली०) करजस्य नखस्येव प्रास्या यस्य । नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

करञ्चोड़ि (सं० पु०) करं जोड़यति, जड़ वन्धे इत् । १ हस्तच्योडि महाकन्दशाक, हाताजोड़ी।

२ काष्ठपापाणभेद ।

करञ्चोड़िकन्द (सं० पु०) करञ्चोड़ि नामक कन्द-वृक्ष, हाताजोड़ी हल्लिका पौदा। यह रसदन्धकृत और वज्रघ्नत् होता है। (गणपिवध्)

करञ्ज (सं० पु०) कं सुखं शिरोसुखं वा रञ्जयति, करञ्ज-पिच्छ-भण् । १ खनामस्यात् वृक्षविशेष, करौदा। वैद्यकमतसे यह चार प्रकारका होता है,—

१ नक्षमाल, पूतिक, चिरविल्लुक, पूतिपर्ण, ब्रह्मक्ष, रोचन, करज, करञ्जक, चिरविल्लु वा उदकौर्यं।

२ प्रकीर्यं, पूतिकरञ्ज, पूतिक, कलिकारक, पूतिकरञ्ज, सकण्टक, सुमना, रजनीपुष्प, प्रकीर्यं, कलि-मालक, कलहनाशक, कैंडर्यं, कलिमाल और पूतिकरज।

३ यड़प्रत्या, महाकरञ्ज, विपत्री, हस्तिचारिणी, रासायिनी, काष्ठघ्नी, मदहस्तिनी, हस्तिकरञ्जक, काकभाण्डी वा मधुमती।

४ करमर्दक, क्षणपाकफल, अशिरन, सुषेण, क्षण्य-पाक, पाकफले, क्षण्यफल, पाकक्षण्यफल, क्षण्य-फलपाक, पाकक्षण, फलक्षण, पाकफलक्षण्य, वना-लय, वलासक, केरासुक, वील, वण, भाविन्द, कर-मर्दी, वनेच्छुद्रा, केरासु, करमर्द वा पापिमर्दं।

१ नक्षमालको हिन्दीमें करंज या किरमाल, महाराष्ट्रीमें करञ्ज, पञ्जाबमें सुकचन, तामिलमें युङ्गम्, तैलङ्गीमें कणुग वा कग्गिरा, सिंहलीमें मोगुल करन्द, कर्णाटीमें कोङ्गय और ब्राह्मीमें ख-वेन कहते हैं। इसका अंगरेजों वैज्ञानिक नाम पोङ्गेमिया ग्लबरा (*Pongamia glabra*) है।

यह एक सीधा वृक्ष है। मध्य एवं पूर्व हिमा-लयसे सिंहल तथा मलाका पर्यन्त भारतवर्षमें सब जगह करञ्ज मिलता है। वृक्ष प्रायः ४०-५० फीट

उंचा होता है। छोटे नागपुरमें इसके काष्ठका भस्म रंगमें पड़ता है।

वैद्यकमतसे यह कटु, उष्णवीर्य, रक्तपित्तजनक, क्षमिनाशक और ईषत् पित्तघ्नक है। फिर करञ्ज चक्षुरोग, वातव्याधि, कुष्ठ, कण्डू, क्षत, चर्मरोग और विशूचिकाको दूर करता है। यह खाने और लगाने—दोनों कामोंमें चलता है। ५ विन्दुकी मात्रा होती है। युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें इसकी पत्तों पीस क्षतरोगपर लगानेसे विशेष उपकार होता है। डाक्टर ऐन्सलीके कथनानुसार करञ्जके तन्तुमय मूलका रस क्षतस्थान-परिष्कारक और नशीके घावका सुख वन्द करनेवाला है। फिर डाक्टर गिवसन इसके तैलकी सर्धप्रकार चर्मरोगके पक्षमें विशेष उपकारक समझते हैं। तैल निकालनेके लिये इसका बीज अग्रहायण मास अंग्रहकर घानीमें पीरना पड़ता है। एक मन बीजसे कोई साठे छह सेर तैल निकलता और ५१ उष्णमें जम सकता है। दक्षिणदेशमें इसे जलाया करते हैं। छोटे नागपुरमें लोग इसके फल खाते हैं। पत्तियोंका अच्छा चारा बनता, जिसके खानेसे गायोंका दुग्ध बढ़ता है। इसका काष्ठ स्वल्प कठोर, श्वेत, प्रदर्शनसे पीत पड़ जानेवाला, दुर्मेय, तन्तुमय, अविरल, समक्षणविशिष्ट, अनायास कार्यमें न आनेवाला; अस्थिर और अनायास-कर्मसे आक्रान्त होनेवाला है। किन्तु जलमें रख मसाला लगानेसे यह सुधर जाता है। निम्न ब्रह्मालमें करञ्जका काष्ठ तैलके कारखाने बनाने और भाग जलानेमें लगता है। किन्तु दक्षिण भारतमें उससे रथके स्थूल चक्र बनते हैं।

२ प्रकीर्यंको हिन्दीमें कटकरञ्ज, महाराष्ट्रीमें सागरगोता, दक्षिणाम गच्छ, तामिलमें कलिचिमरम् वा गच्छचेत्तु और सिन्धुमें किरमत कहते हैं। इसका अंगरेजों वैज्ञानिक नाम सीसलपिनिया बोण्डु-सेना (*Gaulandina Bonduc.*) है।

यह समग्र भारत प्रधानतः ब्रह्माल, ब्रह्मदेश और दक्षिणात्यमें होता है। वृक्षमें कण्टक रहते और हरिद्वर्ण पुष्प जगते हैं।

१ वैद्यकशास्त्रे यद् बद्ध, तिक्, कृष्णवीर्यं, विषरोग
हर, वाताग्निनाशक, पीर कुष्ठं, बर्भरीय तथा जत
रोधमं उपकारक है। इसका फल व्यवहार करनीके
योग्य कर बद्ध जाता है।

बद्धकरणाके बीजको पंचमूल बण्डकण्ड (Bonduc
root) कहते हैं। यह देवनिर्मि श्रेतवर्ष, प्रतिमास
कठिन पीर पानिमें पक्कना तिक् होता है। परोक्षा
करनीपर इससे तेक, मण्ड, मर्कप पीर निवांस
निष्कानती हैं। मारतमें पसारी इसका बीज देखते हैं।
सविराम स्वरपर इसे प्रयोग करनीके सद्य सद्य उर-
कार होता है। करणाके बीजका तेक संघोम पीर
पचावातके लिये दितकर है। इसको बगानिसे
मरीरको कानि बढ़तो, लक् चतु पड़ती पीर जुगसी
मिटती है।

२ बद्धकरणाके पतले मी तेक निष्कावा जाता है।
बीजके बड़े सिक्केसे बड़ी, हार पीर मासो जपनीको
गुरिया बनाते हैं। बद्धकरणाको मासो कास रोगमें
पिरीकर पचनी पर बर्भरीय पीर गर्मपातके बजती
है। बालक बीजके गोली देवते हैं।

करणा (सं. सु.) १ करण करोदा। यह सप
कामकारका होता है। पक्षीको चिरविलक, नरमास,
दूसरेकी प्रकीर्य, पूतिकरणा, पूतिक, कलिकारक,
मिरीरको कृष्णिक, पीरीको मर्कटे, पांचवेकी पङ्क
बर्भरी पीर कठिको करमर्द, बनिहृदा करणा तथा
करमर्दक कहते हैं। करणाक बद्ध, मीर्य तथा बीर्यिय,
पीर पनिक कुष्ठ उदावर्त, सुष्य, पर्य, मय, क्कमि
एवं कर्मप्र है। इसका पत्र कप, वात, पर्य, क्कमि
एवं योग्यर पीर भिदन, पाककट्ट, बीर्यिय, पित्तक
तथा मंठ होता है। फल कप, वात, मीह, पर्य,
क्कमि पीर कुष्ठ रोग मिटाता है। चिर वृत्तपूर्व
करण मी रिस बी सुष्य रकता है। (बलनयाम) इसका
सुष्य लक्ष्मीय पीर पित्त, वात तथा कपप्र है। वृत्त-
पूर्व करणाका चतुर, चंदिमोपन, रस एवं पाकमें
बद्ध, पांचन पीर कप, वात, पर्य, कुष्ठ, क्कमि विप
तथा मीहकर होता है। बिरी बिरीने करणाके
मिदमें मवाकरणा, वृत्तकरणा, पूतिकारण, सुष्करणा,

करणाकादिना नाम लिया है। २ अर्थ नयन इव देवी।
३ घृहराज, धमिरा। ४ करणापत।

करणातेक (सं. झी.) करीदेका मेल। यह लोचक,
उष्य एवं मीह, वात, कुष्ठ, कण्डू तथा सपसे नानाविध
बमराम दूर करता है। (पञ्चमूल)

करणाव (सं. झी.) करणावृत्त, रोगों करोदे। इसमें
एक चिरविलक पीर दूसरा कण्डूविटपकरणा
होता है।

करणागर—१ बरार नामके धमरावती जिलेका एक
प्राचीन नगर। यह बर्षा २० २६ ७० पीर देशा-
७० ३२ पूर पर पनिकित है। कोकलक्ष्मा प्राय
एक सप है। करणा नामके किसी क्कमिने नामपर
इसका नाम मी करणागर पड़ा है। प्रवादासुधार
करणा क्कमिने कठोर रोमसे धामान्त की मवासावाको
धाराकना को बी। देवीने लनपर समुद्र को यहाँ एक
सरोवर बना दिया। करणा ठक सरोवरमें नवा
रोमसुष्ठ हुये। सको समये यह कान सुष्कतीर्य
समझा जाता है। बिहृपुराणमें करणातीर्यका नाम
पिद्यमान है। यहाँ गोलकोहित मवादेव प्रतिष्ठित है।
(विष्णुपुत्र ७६०) प्राग् मी पनिक प्राचीन मन्िर देव
पड़ते हैं। उनके निर्मापको प्रवाची प्रदंसनीय है।
करणागरमें वाचिक्य मवावाके लिये पनिक पविष्
रते हैं।

२ मध्यप्रदेशके बरवा जिलेका एक नगर। यह
बरवा नगरसे १० कोसपर पनिकित है। चारी पीर
मिदिमाका बड़ी है। प्राय ३०० वर्ष पूर्व नवाव
सुष्कन्द क्कमिने इसे बसाया था। यहाँ इस पीर
पविडेन कृष्ण होता है।

करणाधन (सं. सु.) करणाधनवत् पत्रं परं मय।
कपित्त इत्य, केषिका पिट्।

करणाकक (सं. सु.) करणाकक स्यात् कम्।
२१ मिकी। १ ७५२६। कपित्तइत्य, केषिका पिट्।

करणावृत्त, करणा देवी।

करणावेद (सं. सु.) करणावे देवी।

करणाव (सं. सि.) करणावनामक, करोदेकी
मिटानेवाका ७२ २० ५२

करञ्जाद्यघृत (सं० लो०) करौदि वगैरह चीजोंके वना हुआ घी। करञ्ज, निम्ब, अर्जुन, शाल, कम्बु एवं दटकी त्वक् ४ शरावक, तथा इन्हीं द्रव्योंका कक्क १ शरावक, घृत ४ शरावक और ४ शरावक जल डाल डाल सबको एक बरतनमें पकाते हैं। फिर १६ शरावक गेय रहनेसे यह घृत बनता है। करञ्जाद्यघृत दाहपाक और त्रुतिरागयुक्त उपदंशके दोषको दूर करता है। (चक्रपादिक)

करञ्जिका (सं० स्त्री०) १ कंटोला करौदा। यह पाकमें कटु, त्वर, प्राणक, उष्णवीर्य एवं तिक्त और मेह, कुष्ठ, अर्श, ब्रण, वात तथा क्षमिमाशक है। इसका पुष्प वीर्यमें उष्ण, तिक्त और वात तथा कफहर होता है। (विषकल्पित्) २ नक्तमालफल, बडा करौदा।

करञ्जी (सं० स्त्री०) १ महाकरञ्ज, बड़ा करौदा। यह स्तम्भन, तिक्त, त्वर, कटुपाक एवं वीर्योष्ण और पिच, अर्श, बमि, क्षमि, कुष्ठ तथा प्रमेहघ्न है। (भास्करादि) २ करञ्जवल्ली, करौदिकी वेल।

करट (सं० पु०) कं कुलितं वा रटति रवं करोति, करट्-भञ्। पञ्चदशो लुपिष्कः। पा १।१।१७। १ काक, कौवा। २ हस्तिगण्ड, हाथीकी कनपटी।

“कट् हि मिश्रकरटं पश्चिमं वंशमीशरम्।

उपप्रायः सदाभारं करिष्यः शुद्धं सृष्टुं च” (भारत)

३ कुसुमप्रसन्न, कुसुमका पेड़। ४ घृष्ट्य जीवनधारी, खुराव आदमी, बुरा पैशा करनेवाला। ५ एकादशह आड। ६ दुर्दुर्घट, कष्टरनास्तिक। ७ वाद्यभेद, एक वाजा।

करटक (सं० पु०) करट स्वार्थे कन्। १ चौरशास्त्र प्रवर्तक कर्षिक पुत्र। २ हितोपदेश वर्णित एक शृगाल। रट देवो।

करटा (सं० स्त्री०) करट-टाप्। १ दुःखदोह गाय, मुद्रिकलसे लगनेवाली गाय। २ हस्तिगण्डखल, हाथीकी कनपटी।

करटिनी (सं० स्त्री०) हस्तिनी, हथिनी।

करटो (सं० पु०) करटो विद्यतेऽस्य, प्रायस्ते इन्। हस्ती, हाथी।

करटु (सं० पु०) छ-घटु। कर्करटु, पक्षी, खाकी

सारस। इसकी गर्दन काची होती है। कानोंके पर प्रागे बट दो सुन्दर सफेद गुच्छे बना देते हैं। यह एगिया और पफरीकाके कयी भागोंमें पाया जाता है।

करड़ करड़ (हिं० पु०) १ शब्दविशेष, एक आवाज। जब कौयी चीज बार-बार टूटती फूटती या चटखती, तब यह आवाज निकलती है। प्रायः दन्तसे कठिन वस्तु भङ्ग करते जो शब्द पुनः पुनः आता, वही करड़-करड़ कहता है। (हिं० वि०) २ शब्दके साथ तोड़फोड़।

करण (सं० लो०) क्रियते प्रनेन, कृत्युट्। १ व्याकरणीय कारकविशेष। क्रियानिष्पत्तिके कारणसमूहमें कारणान्तरका व्यवधान न पड़ते जो वस्तु क्रियाकी निष्पत्तिका कारण माना जाता, वही करणकारक कहता है। इसके द्वारा कर्ता क्रियाको सिद्ध करता है। जैसे—रामने रावणको वाणसे मार डाला। यहां हस्तादि मारनेका निष्पन्न कारक ठहरते भी संयोगके प्राधान्यसे वाण ही कारणकारक होता है। हिन्दीमें इस कारकका चिह्न ‘से’ है।

“क्रियायाः परिनिष्पत्तिर्दत्तापादादकारणम्।

विशेष्यते यथा पुनः तत् करणमुदाहृतम् ॥” (हरिवारिका)

२ चक्षुरादि इन्द्रिय। ३ देह, जिह्वा। ४ क्रिया, काम। ५ स्थान, जगह। ६ हेतु, सबब। ७ हस्त-तेज, हाथकी लिपायी-पोतायी। ८ नृत्यका प्रकार, नाचका तर्ज-। ९ गीतविशेष, एक गाना। १० क्रिया-भेद, एक काम। ११ संवेदन, वेठाव। १२ ज्योतिषके गणितकी एक क्रिया। वव, वासव, कौन्वव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि, शकुनि, चतुष्पद, किन्तुष और नाग—ग्यारह करण होते हैं। इनके अधिष्ठा-देवता यथाक्रम यह हैं—इन्द्र, कामलज, मित्र, अर्यमा, भू, ज्ञा, यम, कवि, हय, फणी और मासत। ववादि सात करण शुक्लप्रतिपदके शेषार्धसे ह्यण्यचतुर्दशीके प्रथमार्ध और अधशिष्ट-चार ह्यण्यचतुर्दशीके शुक्लप्रतिपदके प्रथमार्ध तक रहते हैं। १३ विष्णु।

१४ जातिविशेष, एक कौम। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें लिखते—वैश्वके औरस तथा शुद्धाकी गर्भसे करण

निबन्धे १। (अथर्व २२ व) "यद्-भारतवर्षे
नामा ज्ञानिनि रहति ॥" एतन्ना भाष्ये व्यवहार
ब्राह्मणेय मिश्रता-सुबता ॥ ११ वायव्य जातिवो
एक येषोः पत्न्यस्यैवोः दक्षिणाभिर्नि कर्षो कर्षो
कर्षसु नाम मी प्रसिद्ध ॥ १६ क्षतिमाश्रये मन्थे
एव ब्राह्मणप्रिय जाति ।

"मती मन्थर पत्न्याय मन्थरीभरिरेव ॥

"यद्-भारतवर्षे कर्षवर्षे एव ॥" (वद १०११) -

१० अथर्व्य अथर्वानि पतित एक जाति । आराम-
के पूर्वीय पार्वतीय 'प्रदेश' एवं ब्रह्म पीर म्दाम देयमें
यद् लोग रहते हैं । सकल ज्ञानोंके अरव देखनेमें
एक प्रकार नहीं समते । देयमेंदेषे आकारमें मी
बेहदका था गया है । यह ब्रह्माको- जाइसो
पीर मीमन्थाव होति हैं । सुखपर- गोदा एतनेके
आरव श्रीसुखय दूरेके अथर्व देख पड़ते हैं । अथर्व्य
होने मी अरव पति करव, अथर्व्यादी पीर गिरोह हैं ।
सुखविषय किमोको अथर्व्या नहीं समता । सब ज्योय
मान्तिमिय होति हैं । किन्तु किसेके अतिष्ठ करने
या दोसी ठहरनेके एतन्ना वीरवर्षे ममक उठता है ।
१० ब्रह्मवर्षी ब्रह्मवर्षेयें एक अरवके समकथ पड़ते
हैं । ब्रह्माको होते मी यह लड़ने मिङ्गनेके अथर्व्य
रहते हैं । किन्तु इत्ये अरव अथर्व नहीं ठहरते ।
यद् अर्षा वाच करते, बर्षा अपने अपरिचोम परिवस
पीर यन्के भूमिको प्रभुत यथ्यमाश्रितो बना रहते
हैं । फिर मी इन्के एकबाल निर्दोष कह नहीं
सकते । अरव यह मया बहुत पोते हैं । अरव
मन्थके बिये आकाशित रहने पीर अथे पामेपर अर्षको
मी सुख समझते हैं ।

यद् विष्णु-पद्मना ब्रह्म नहीं जानते पीर न
किसे वर्ममाश्रको हो मानते हैं । मूर्च्छताका अरव
पूजने पर एतके सुपथे सुनमें पाया, किसे समय
इत्यने मन्थिवर्षपर अपना पादिय पीर वर्ममाश्र
निय प्रभुथोको बुलाया था । मनुष्यमें सब लोय
इत्यरका पादिय पीर वर्ममाश्र अथर्व करनीको पढ़ने,
किन्तु समय न मिथनेके देवक अरव जान सके,
इतना चिरवाकको वर्ममाश्रकोन हो गयी ।

१० अथर्व्य अथर्वानि पतित एक जाति । आराम-
के पूर्वीय पार्वतीय 'प्रदेश' एवं ब्रह्म पीर म्दाम देयमें
यद् लोग रहते हैं । सकल ज्ञानोंके अरव देखनेमें
एक प्रकार नहीं समते । देयमेंदेषे आकारमें मी
बेहदका था गया है । यह ब्रह्माको- जाइसो
पीर मीमन्थाव होति हैं । सुखपर- गोदा एतनेके
आरव श्रीसुखय दूरेके अथर्व देख पड़ते हैं । अथर्व्य
होने मी अरव पति करव, अथर्व्यादी पीर गिरोह हैं ।
सुखविषय किमोको अथर्व्या नहीं समता । सब ज्योय
मान्तिमिय होति हैं । किन्तु किसेके अतिष्ठ करने
या दोसी ठहरनेके एतन्ना वीरवर्षे ममक उठता है ।
१० ब्रह्मवर्षी ब्रह्मवर्षेयें एक अरवके समकथ पड़ते
हैं । ब्रह्माको होते मी यह लड़ने मिङ्गनेके अथर्व्य
रहते हैं । किन्तु इत्ये अरव अथर्व नहीं ठहरते ।
यद् अर्षा वाच करते, बर्षा अपने अपरिचोम परिवस
पीर यन्के भूमिको प्रभुत यथ्यमाश्रितो बना रहते
हैं । फिर मी इन्के एकबाल निर्दोष कह नहीं
सकते । अरव यह मया बहुत पोते हैं । अरव
मन्थके बिये आकाशित रहने पीर अथे पामेपर अर्षको
मी सुख समझते हैं ।

अरवपाठ—सुखप्रदेशके सुखप्रदेशकर जिसेका—एक
नगर । यह सुखप्रदेशके १० मील इधियपूर्व
बनप महरको तहसीलमें मन्थके दक्षिण तीर अथर्वित
है । प्रायः समस्त अधिवासी विन्तु पीर ज्योन्दार
केस रामपूत हैं । दमहरको यहां एक मीला लगता
है । इतना बड़ा मीका सुखप्रदेश, जिसेमें बूधरा
नहीं होता । मीतलाका एक प्रतिमाभोग, मन्दिर
विद्यमान है । प्रति सोमवारको उन्न मन्दिरमें जिवां
अपक्षित हो पूजा चढ़ाया करती हैं । दिवाकोके
अथर्वपाठ तक सड़क समी है ।

अथर्वनिबन्ध (अ० पु०) अथर्वका नियम, तत्त्व-
पु नका तरीका ।

अथर्वज्ञानवेद (अ० पु०) इन्द्रियका पाठ, अथर्व,
ब्रह्मा पद ।

अथर्व (अ० जो०) वाचयन्त्रविषये, एक वाक्ता ।
यद् इहत् पीर अथर्व यन्थ है । भारतवर्ष पीर
पारश्वने रहने व्यवहार करते हैं । अग्नि अथर्वेदी
है । एतन्ना देव ११ पीठ होता है ।

अथर्वधिय (अ० पु०) अथर्वानां धियः, इत्य ।
१ जीव यद् । २ इन्द्रियाधिष्ठाय देवता । अथर्वके
दिक्, सुखके वासु, मन्थके अथर्व, एतन्नाके अथर्वेता
नाथिकाके अधिभोग्यमारव्य, वाक्के बर्ष, पाथिके
इन्, पाथिके अथर्व, वाक्के मन्थ, अथर्वके अथर्वपति,

मनके बन्द, बुद्धिके चतुर्मुख, ब्रह्महारके ब्रह्म और मनके षडिप आश्रित हैं। ३ वयादिके स्वामी।

करषिक (सं० पु०) करणव्यवहारके कायस्थ।

करषी (सं० स्त्री०) क्रियते क्रियाविशेषोद्भूत, क-करषे लुगट्-ङीप्। १ गणितशास्त्रोक्त क्रियाविशेष। अति सूक्ष्मरूपसे जिस राशिका सूत्र निकाल नहीं सकते, उसे करषी कहते हैं। (Surds) २ करणकी स्त्री।

करषीय (सं० त्रि०) क्रियते यत् यत्र वा, कर्मणि आधारे च क-अनीयर्। इत्यहात्ते इत्यन्। पा ३।१।१।१। कार्य, करने लायक।

करषीसुता (सं० स्त्री०) पोष्यपुत्रीरूपसे ग्रहण की जानेवाली सुता, जो लड़की पालनेके लिये बेटोकी तरह रखी जाती हो।

करण्ड (सं० पु०) क्रियते, क कर्मणि अण्डन्। अण्डन् इत्यण्डन्। अण्डन् १। १ मधुकोष, शहदका छत्ता। २ अग्नि, तलवार। ३ कारण्डव पक्षी, एक हंस। ४ दलाठक, इजारा चमेली। ५ वंशादिरचित पुष्पपात्रविशेष, फूलकी डाली या पेटारी। ६ कालखण्ड, यज्ञत्। ७ शैवालविशेष, किसी किसका सेवार। हिन्दीमें करण्ड भाकू, हाथियार वगैरह टेनेके कुरुर पत्थरको कहते हैं।

करण्डक (सं० पु०) वंशादिरचित पुष्पपात्रविशेष, वांसकी डलिया या पेटारी।

करण्डकनिवाप (सं० पु०) बौद्धग्रन्थोक्त एक पुष्प-स्थान। यह राजगृहके समीप अवस्थित है।

करण्डफल (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

करण्डफलक, करण्डव देखो।

करण्डा (सं० स्त्री०) करण्ड-टाप। १ पुष्पभाण्ड, फूल रखनेकी पेटारी। २ यज्ञत्।

करण्डिक (सं० पु०) करण्डः विद्यते यस्य, करण्ड-इकन्। करण्डवत् चर्ममय स्थली रखनेवाला जीव, जिस जानवरके मुँहकी तरह चमड़ेकी थैली रहै।

करण्डी (सं० पु०) करण्डवत् आकारोऽस्ति अस्य, इति। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ पुष्पपात्र-विशेष, फूलकी पेटारी। हिन्दीमें करण्डी अण्डी यानी कच्चे रेशमसे बनी चादरकी कहते हैं।

करण्य (सं० पु०) करण्य-भय यत्। करषिक, कायस्थजाति।

करतव (हिं० पु०) १ कर्तव्य, फर्ज, काम। २ काना, हुनर। ३ जादू। ४ चाखाकी।

करतविया (हिं० वि०) करतव करनेवाला।

करतवी, करतविया देखो।

करतरी (हिं०) करतरो देखो।

करतल (सं० पु०) करस्य तलः, इ-तत्। १ इन्द्र-तल, हथेली। २ उगण, चार मात्राका एक गण। इसमें प्रथम दो मात्रा लघु और अन्तको एक मात्र दीर्घ आती है। ३ एक प्रकारका छप्पय।

करतलगत (सं० त्रि०) हथेलीमें पहुँचा हुआ, जो हाथ आ गया हो।

करतलघृत (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ, जो हाथमें पकड़कर रखा गया हो।

करतलस्य (सं० त्रि०) हथेलीमें रखा हुआ।

करतली (हिं० स्त्री०) १ गाडीबानूके बैठनेकी जगह। २ हथेली। ३ ताली।

करतथ्य (हिं०) कर्तव्य देखो।

करता (हिं० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। कर्ता देखो। २ वृत्तविशेष, एक छंद। इसमें एक नगण, एक लघु और एक गुरु—सब पाँच अक्षर आते हैं। ३ गोलीका टप्पा।

करतार (हिं० पु०) १ कर्तार, विधाता। २ करताल।

करतारी (हिं० स्त्री०) ताली, इथेलियोंकी भावाज्ञ। २ वाद्यविशेष, एक बाजा।

करताल (सं० स्त्री०) करार्यां दीयमानस्तालो यत्र, बहुव्री०। १ मल्लक, एक बाजा। यह यन्त्र कांस्य धातुसे बनता है। २ शब्दविशेष, एक भावाज्ञ। यह दोनों हथेलियों वजानसे निकलता है। ३ मंजीरा, भांग।

करतालक (सं० स्त्री०) करताल स्वार्थे कन्।

करताल देखो।

करतालधनि (सं० पु०) करतालस्य धनिः, इ-तत्। करतालका वाद्य; मंजीरा वगैरह बाजा।

करताली (सं० स्त्री०) करताल गौरादित्वात् ङीप्। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। २ करतलइयके

अभिवातके उत्पादित शब्द, इतिविधां वक्रामिको
वावाह।

कारतो (हिं० जो०) घटवक्रका चर्म, सर बहनेका
चमड़ा। इसमें मूला भर जोम बहड़ा जेसा बना दिते
धीर उधे देखा मायको सम लेते हैं।

कार्तू (हिं० स्त्री०) काठखण्डविधिय सक्कोका एक
टुकड़ा। यह घेत धीचनेको बेंडीको रखीके
धिरपर समती धीर जावमें रहती है। कार्तूके धी
सहारे देडी पानीमें डुबायो धीर ऊपर उठायी
जाती है।

कारतूत (हिं० जो०) १ बट्टा, काम, करमे।
२ बखार, हुनर, कारतार। ३ हुकूम, हुग काम।

कारतूति, बण्डा देवी।

कारख (सं० स्त्री०) घेतकेतक, पखेद धियका।

कारतीय (सं० स्त्री०) वर्षीपलकक, पोखीका पानी।

कारतोया (सं० स्त्री०) काराध्यां श्रुतं इरपारंती-
परिचयकाशीन इरकारायां अरितं तोर्यं बर्षं विचये
यत्, पर्यादित्वाद्पुं। अनामकाल नदीविधिय, एक
दरया। नौरुके विवाह समय यिवके पापविधित
करके यह नदी निकली थी। कारतोया पतियय
पवित्र है। वर्षाकाब समय नदीका जल मासमें
पयधि कहा है। हिन्दु इस नदीका जल कियो
समय नहीं बिगड़ता। यह तीर्थकसीके मन्त्र पचमेय
है। इस तीर्थमें पञ्च विराह 'सपवास कारमेके
पयधिय यत्रका जल मिलता है। (गणक धरक)

पूर्वकारको कारतोया बहू धीर कामरूपके मन्त्र
श्रीमा निर्देयक रही। अन्तर देवी। हिन्दु पाककल
इसको गति सम्पर्क बदल गयो है। पक्षी यह रङ्ग-
सुरमें पवित्रके बहती थी। सम्पति जलपाइशुको
किसीके उत्तर पवित्र वेङ्गपुत्रके अङ्गुली निकल
कराकर इतिपको पानी धीर रङ्गपुरके मन्त्रके बगुड़ा
किसीके दक्षिण बकालिया नदीके सामे मिक जाती
है। इसी कालके कारतोयाकी मतिमें बड़ा मङ्गल
पड़ता है। 'निर्घंय कारना सरल नर्षी—माना। याका
'कारो धीर हो बर्षा मयी है। विधियतः घत मयी
'घतवर्षके त्रिकोटा नदी इस मन्त्रमें मिक भाषये

निर्दिष्ट मतिको जोड़ बयो, उससे प्राचीन कारतोयाकी
पूर्वमति निर्घंय कारनेमें बड़ी अहुविवा पड़ी है।

कञ्ज खानके यह धानी बड़ पुकनरके नाम बाये ती
नदीके मिक गयो है। जनिक सोय इस पुकनरको
श्री प्राचीन कारतोया नदी किन्हे है। फिर किसीके
मतमें मङ्गलनदी धीर त्रिकोटाकी मन्त्रवर्ती 'कारतो'
प्राचीन कारतोयाको अर्धगति धीर बगुड़ा कियोको
यसुना मन्त्रपति है।

पात्रकल पञ्चम सुद्र धाकार बनती भी पीठाबिक
धमय कारतोया मन्त्राक्षोतकतोपधे चली जाती थी।

कारयप (हिं० पु०) पर्यंतविधिय, एक पहाड़। यह
सिन्धुनदके कन्यार सिन्धुपदेय धीर बलूचिखानके
मन्त्र धरकितं है।

कारद (सं० स्त्री०) कर ददाति, कर दान-क। १ रामक
प्रदानकारी, विराह देविवासा। २ परिव्रापार्थ इत्य
प्रदानकारी, मददके किये हाथ पेकामेबाहा।

कारदक (सं० स्त्री०) कहुइत्य, निपुण, दसबाह,
कारीयर।

कारदम (हिं० पु०) वन देवी।

कारदक, बण्डा देवी।

कारदका (हिं० पु०) इक्षुविधिय, एक पीठा। इस
सुद्र हथको लक्ष विवाह एवं पीठाम होती है।
उन्हाके पन्तमें कहु पक्षके शुभक लागते हैं। यरदू कीतमें
पर पक्ष निकलनेसे पूर्व पीठकच मुख पाते धीर उनके
मन्त्र को दो बीज पड़ जाते हैं। मार्च एवं अग्रेसे माघ
इसके विचधित होनिका समय है। कारदका विनासय
पर पांच बजार जोड लिये जगता है। बीज बाध
रूपसे व्यवहृत होते हैं।

कारदा (हिं० पु०) १ गर्द, मूड़ा, कारकट। यह
पनाक बन्देख बीजमें मिको बूचका नाम है। इसके
परिवर्तनमें दिया जानेवाला इन्ध वा सूय भी
'कारदा' हो कहाता है। यस्तुतः बह मर्दे यम्बका
अपमर्ग है। २ बड़, बड़कायो। ३ कटौती।

कारदायी (सं० स्त्री०) कर ददाति, कर दान कियि।

नित्यविद्युत्काली कृत्विचय। न ४४११। अरप्रदानकारी
'विप्राय देविवासा।

करदीकृत (सं० त्रि०) अकरदं करदं क्रियते येन,
चि। कर देनेकी बाध किया हुआ, जो खिराज
भदा करनेको मजबूर बनाया गया हो।

करदीना (हिं० पु०) दीना।

करदुम (सं० पु०) किरति विक्षिपति समन्तात्
शाखाः, क-भच्, करयासी दुमयेति, नित्य-समा०।
कारस्कारवृत्त, कुचिका।

करद्विप् (सं० पु०) करं द्वेष्टि, कर-द्विप्-क्षिप्।
१ गोत्रभेद। २ वेदशाखाभेद।

करधनी (हिं० स्त्री०) १ किङ्किणी, कमरका एक
गहना। यह स्वर्ण वा रौप्यमय होती है। बालकीकी
करधनीमें घुंघरू लगती है। फिर स्त्रियोंके पहनने-
की करधनी सादी ही रहती है। २ कटिमें धारण
किया जानेवाला एक सूत्र, कमरमें पहननेका लडदार
सूत। (पु०) ३ धान्यविशेष, किसी किष्कका धान।
इसकी सूधी काशी होती है। किन्तु चावस रक्षाभ
निकलता है।

करधर (हिं० पु०) १ खाद्यविशेष, महुवेकी रोटी।
इसे महुवरी भी कहते हैं। २ मेघ, बादल।

करधृत (सं० त्रि०) हस्तद्वारा धारण किया हुआ,
जो हाथसे पकड़ लिया गया हो।

करन (हिं० पु०) श्रोत्रविशेष, जरिशक, एक
जड़ी-बूटी। यह खानमें अस्त्रमधुर होता है। इसे
चटनी-आदिमें व्यवहार करते हैं। करनको सेवन
करनेसे दस्त साफ उतरता है। यह रचक भी है।

करनधार (हिं०) कर्षणश्नो।

करनफूल (हिं० पु०) अलहारविशेष, एक गहना।
यह स्वर्ण वा रौप्यमय होता है। स्त्रियां इसे कर्णमें
धारण करती हैं। करनफूल पुष्पाकार बनता है।
इसे पहनेकी कानकी ली छेदायी और वारीक-वारीक
सींकीके कई टुकड़े, डाल डाल बढ़ायी जाती है।
यह दो-प्रकारका होता है—साधारण एवं जड़ाज।
करनफूलमें स्त्रियां भूमकी भी सुटका लिया करती हैं।

करनवेष (हिं०) कर्षणश्नो।

करना (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, एक पौदा। इसके
पत्र केतककी भांति दीर्घ एवं कण्टकरहित रहते

हैं। पुष्प श्लेथवर्ण प्राते हैं। सौरभ किञ्चित् मिष्ट
सगता है। इस वृक्षकी कर्ण और सुदर्शन भी कहते
हैं। २ निम्बुक विशेष, एक नीवू। यह बिगोरेकी
भांती दीर्घ होता है। अपर नाम पहाडी नीवू है।
३ कार्य, काम। (कि०) ४ समाप्तिपर खाना,
भुगताना, निघटाना। ५ पकाना, बनाना। ६ मेकना,
पहुंचाना। ७ प्रणय लगाना, सुहृन्वत् बढ़ाना।
८ व्यवसाय चलाना, काम लगाना। ९ सवारी खाना,
माड़ा ठहराना। १० बुझाना, उठाना। ११ रूप
बदलना। १२ उठाना। १३ रंगना। १४ मारना।
१५ मजा लेना।

यह क्रिया सर्वप्रधान है। इससे सब क्रियावोका
अर्थ निकल सकता है। फिर किसी संज्ञाके पोछे-
लगा देनेसे यह उस संज्ञाके अर्थकी क्रिया बना देती है।
करनादं (हिं० स्त्री०) करनाय, तुरदी।

करनाटक (हिं०) कर्णाटक देश।

करनाटकी (हिं० पु०) १ कर्णाटक, करनाटकका
वासिन्दा। २ नट, कला खेलनेवाला। ३ वाजीगर,
इन्द्रबाल देखानेवाला।

करनाल (हिं० पु०) १ करनाय, नरसिंहा। २ बड़ा
ढोल। यह गाडीपर लद कर चलता है। ३ किसी
किष्ककी तोप।

करनाल—१ पञ्जावप्रान्तका एक जिला। यह अक्षा०
२८° २' एवं ३०° ११' उ० और देशा० ७६° १३'
तथा ७७° १५' ३०" पूर्व मध्य अवस्थित है। इसके
उत्तर अम्बाला जिला तथा पटियाला राज्य, पश्चिम
पटियाला एवं भीर, दक्षिण दिल्ली तथा रोहतक जिला
और पूर्व यमुना नदी पड़ती है। करनाल जिलेमें
तीन तहसीलें हैं—पानीपत, करनाल और कैथल।
भूमिका परिमाण २३२६ वर्गमील प्राता है। लोक-
संख्या प्रायः सवा लड़ लाख है। भूमि दो प्रकारकी
है—बांगर और खादर। जंघे मैदानकी 'बांगर' और
नीची जगहकी 'खादर' कहते हैं। यमुना, घाघरा,
सरस्वती, बडा नदी, चौतङ्ग और नायी नदी प्रधान
नदी हैं। खेत सींचनेकी कयी नहरें भी निकली हैं।
भीर और दसदस बहुत-देख पड़ते हैं। पञ्जावके दूसरे

बिबीको बपिया रथ जिलेमें हथ बधिक है।
 भातुमें नमक पीर नौसादर होता है। केवल
 तहसीलमें नौसादर बनाया जाता है। हरनाथ
 पिबारेके बिटे प्रसिद्ध है। हरिय, नौबगाय पीर
 दूसरे छम बहुतायतमें मिश्री है। नहरोंके निचट
 पनेक प्रकारके पत्थे बिद्यमान है। यमुना, दमदल
 पीर यामके ताकाबमें मजलिबां मरी पड़ी है।

नामक—हरनाथ नगरको बर्षमें बसाया था। कुद
 सेवका पबिह बंध इसे बिलेमें था मया है। पानी
 पतके मेदानमें तीन बार बीर तुड हुआ। १५२६
 ई०को बाबरने इनाबीम बीदीको बराया था। फिर
 १५५६ ई०में पबबटने मियाहको यशसि मार मयाया।
 १०६१ ई०को ०बीं बनवरोका पबमदयाह पुरानोमें
 मराठोंको नौबा देखा दिहीका सिंहासन पाया।
 १०६८ ई०में नादिरशाहने सुहन्दयाहको प्रोजको
 पयाया बिया था। १०६० ई०को बिब सिधसिंहने
 सेवकका बिबा कूट लिया। फिर भींदके राजाके
 हरनाथका निचटके देम पबिहार बिया था, बिन्तु
 मराठोंने १०८५ ई०में लमसे बोन बाक डोमसको
 से दिया। राजा गुरदिन सिंघने डोमसको बटा बर्ष
 पबिहार बनाया पीर १८०५ ई०तक पयना राज्य
 बसाया। पनाको बंधरेजोंने लसे इनसे बोन पयने
 राज्यमें मिला लिया। १८३५ ई०को केवल पंन-
 रेकोके बाब लया था। १८३० को बानियर बिबीसे
 बटा। यमुनाके लब बिनारे ऐलने लयो है। हरनाथमें
 ब्रापकार्य पीर ब्यपचायकी बीयो बमो लही। यहां
 मीन बहुत होता है। खुरेपमें बाबक, लयी, लख,
 प्नार पीर दाक से डेते है। खेत खूब खेजे जाते
 है। खाद बाबनेकी पाक से बह पड़ी है।

पन्नाला, दिनी पीर बिबारेको हरनाथसे पनाम
 तया बका माल सेका जाता है। यामको गुड़की
 मन्थी है। बाहरसे बिबायतो बपड़ा, नमक, लन
 पीर सेलहन पाता है। लयो बपड़ा मुननेमें बगती
 है। केवल पीर गूबकी महीसे बजारों बपसेका
 नौसादर सेवार जाता है। हरनाथमें कबल, बूट
 तथा मीमेंके नक्यदार बरतन पीर पानीपतमें

बामनेके कुप्ये बनते है। पाखड़क रोड हरनाथके
 बीच दिहीसे पन्नासे तक बमो है। नदी पीर नहरमें
 नाम बहतो है।

हरनाथमें बिपटो बमियनर, पबिहण्य-बमियनर
 पीर तहसीलदार प्रबन्धकर्ता है। पुबिपके १० याने
 बने है। हरनाथमें एक सेक है। यहां पयनोंकी
 बीरो पबिह होती है। सानसिधे, बसूको पीर तामू
 पीर समसे जाते है। हरनाथमें पिधा बड़ रही है।
 पानीपतमें बरबोका बड़ा मदरसा है। बीग बिन्दी
 बीका बरती है।

प्राय हरनाथमें २८ रथ इडि होती है। बिन्तु
 बर्षों बर्षों १८ रथसे भी कम पानी पड़ता है। नहर
 बिनारे ल्वर, रंधबकी पीर बदरप्याबिका प्राबन्ध
 रहता है। समय समय पर गीतला पीर बिगुबिका
 से पट पड़ती है। रथ बिसेमें ६ दातक पीपचाकय
 प्रतिष्ठित है।

२ हरनाथ बिसेकी तहसील। सेवकक ८२२
 बर्गमील है। सोबलप्या सवा से बाबसे पबिह
 लगी है। ० पीबदायो पीर ६ बीवानो पादासते है।

३ हरनाथ बिसेका प्रबोन नगर। यड पंचा०
 २८ ३२' १०" ल० पीर देया० ०३' १' ३५" पू०पर
 पबस्थित है। हरनाथ पबन्ध प्राचीन नगर है।
 स्याभीय दुर्गमें बहुत दिन तक बंधरेजोंकी बाबनी
 रही। सन् १८३१ ई०को फिर बंधरेजोंने यड दुर्ग
 बोक दिया था। १८३० ई०को बाबुलके बमीर दोष्ट
 सुहन्दय यहां बड महीनेतक बन्दी रही।

हरनाथ लबभूमि पर बसा है। नोबे यमुनाकी
 नहर बहतो है। नगरको चारो चार १२ पीट लंबा
 प्रापीर बड़ा है। सोबसंप्या प्राय २५ इन्चर है।
 नहर पीर दमदलके बाबक लवका प्रबोय रहनेसे बसतो
 कुक बबड़ मयो है। सड़के पत्थे बीने से तह है।

हरनाथ—बम्बरे प्राबके याना बिलेका एक दुर्ग तथा
 पर्यंत। यड पचा० १८ ३५' ७०" पीर देया० ०३'
 १०" पू०पर बेगबतो नदीसे कुक मील पबिम पबस्थित
 है। रथमें एक बथ पीर एक निब दुर्ग बिद्यमान
 है। लब दुर्गपर १२५ पीटका एक बूममार्ग बना

है। जोग उसे पाण्डुका षष्ठ कहते और चढ़नेसे दूर रहते हैं। उत्तर कोइय पर आक्रमण करनेकी पहिले यहाँ सुमलमानोंकी सेना सन्निवेशित थी। १५४० ई०को अहमदनगरके सिपाहियोंने इसे अधिकार किया। फिर पोर्तुगीजोंने करनानु लिया, किन्तु कई हज़ार रुपया पानेपर छोड़ दिया। १६७० ई०को शिवाजीने सुगर्जीको मिकान इसे छीना था। शिवाजीके मरनेपर औरंगजेबके सेनापतियोंने इसे फिर से १७३५ ई०तक अपने अधिकारमें रखा। अन्तकी १८१८ ई०को यह अंगरेजोंके हाथ आया।

कारनिहित (सं० त्रि०) हाथमें रखा हुआ।

कारनी (हिं० स्त्री०) १ कर्म, करनूल। २ अन्योक्ति-क्रिया, मरनेपर किया जानेवाला कामकाज। ३ कनौ, एक चौजार। यह स्त्रीकेही होती है। राजमिन्त्री इससे मकान बनानेमें ईंटपर गारा लगा दूसरी ईंट रखते हैं।

करनूल—मन्द्रान् प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १४° ५४' एवं १६° १४' उ० और देशा० ७७° ४६' तथा ७९° १५' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर तुङ्गभद्रा तथा छप्यानदी, दक्षिण कड़प्पा एवं बहारी जिला, पूर्व नेल्लर तथा छप्या और पश्चिम बहारी जिला है। क्षेत्रफल ७७८८ वर्गमील निकलता है। लोकसंख्या ७ लाखसे ऊपर है। बहूपपल्लोका चूद्रराज्य इसी जिलेमें पड़ता है।

करनूलके केन्द्रस्थानसे नल्लमलय और यल्लमलय दो पर्वतमाला दक्षिण तथा उत्तर समानान्तर गयी हैं। नल्लमलय प्रायः ७० मील लम्बा और कहीं कहीं २५ मीलतक चौड़ा है। विरमकोंड, गुन्दुन्नन्नश्वरम् और दुर्गपूकोंड ३००० फीटसे ऊँची चोटियां हैं। इस पर्वतकी पांच अधित्वकामे गुन्दुन्नन्नश्वरम्की उपत्यका प्रधान है। ऊपर चढ़नेकी दो आडण्डियां लगी हैं। पूर्वीय विभाग कामवममें पर्वत अधिक है। इस अधित्वकाकी पूर्वमीमापर वेलीकोंड पर्वतमाला खड़ी है। नल्लमलयके समानान्तर अनेक चूद्र पर्वतमाला हैं। देशीय नृपतियोंने वाटियोंमें दाम बांध भूमि सीधनेकी सरोवर बनाये थे। कुन्दकक्य

नदीके दामसे सुप्रसिद्ध कामवम सरोवर मरा है। यह प्रायः १५ वर्गमील परिमित है। ६००० एकर भूमि इसमें सीधी जाती है। दक्षिण विभागमें सगिलेरु और उत्तर विभागमें गुन्दुन्नन्न नदी बहती है।

कामवम अधित्वकामे नन्दोक्रानम् तथा मन्तरान सदृष्टमार्ग द्वारा मध्य विभागमें पहुँचते हैं। यह अधित्वका अतिशय प्रशस्त और समान है। काली सटीमें रुथी बहुत होती है। उत्तरको भवनागी और दक्षिणको कुन्देरु नदी प्रवाहित है। ग्रीष्म ऋतुमें यह प्रान्त शुष्क पड़ जाता है। किन्तु पर्वतके पार्श्वपर हरिभर जङ्गल तथा बाग भिन्नते और नालि एवं भरने-बलते हैं। ठीक इसी अधित्वकाके नौचे मन्द्राज-शरिगीयन-कम्पनीकी नहर लगी है। कुछ दिन डूबे, पर्वतके पार्श्वान्तरमें भूतत्वज्ञोंने पत्थरके यन्त्र पाये थे। कहते—उक्त यन्त्रोंसे वह जोग कार्य करते, जो अधित्वकाके पानीमें डूबते भी विद्यमान रहे।

पश्चिम विभाग दूसरे विभागसे विभिन्न देख पड़ता है। इसके पर्वत हृत्परहित हैं। दक्षिणके उत्तरकी हिन्दुरो नदी बहती और करनूलके निकट तुङ्गभद्रामें गिरती है। १८६० ई०को सद्देसजमें तुङ्गभद्राका बाध भूमि सीधने और नाव खींचनेके लिये नहर निकालेनेकी पड़ा था। बाढ़ टूटनेपर रेतमें बढ़िया तरबूज होता है। सद्देसखरम्में छप्या और भवनाथा दोनो मिन गयी हैं। इसी सद्देसके नौचे चक्रतीर्थम् विद्यमान है।

कुन्देरु अधित्वकामे चूर्णखण्डकी जिला भरी है। यह सकान् बनानेका अच्छा मसाला है। करनूलका चूर्णखण्ड (Lithograph) लिथोमें लगता है। इस जिलेमें हीरक, लौह, मिन्दूर और ताम्रकी खनि विद्यमान हैं। नल्लमलय और यल्लमलयसे अनेक उष्यप्रपात भी निकलते हैं।

नल्लमलयका प्रायः २००० वर्गमील परिमित वन सुप्रसिद्ध है। इसमें हज़ारों रुपयेकी बढ़िया लकड़ी होती है। पश्चिमके वन सघन और पूर्वके वन विरल हैं। उत्तरके जङ्गलोंमें गोधर-भूमि बहुत है। परमलयके पर्वत हृत्परहित हैं। किन्तु अवसर्पिणी

भूमिपर पनेक वकार गुणम देख पड़ते हैं। वनमें बहुत
पुष्पफल, मधु, मधुच्छिद्र (मोम) बिन्धा (इमली),
लासा घीर बंगतपुत्रुनको उत्पत्ति पचिक है।

नक्षत्रकव पर्यंतपर व्यात्र चर्य है। बिन्दु बह
मनुष्यपर पाय टूटा करते हैं। चौरी, भिक्षुये, ज्ञायनि,
लोमङ्गियां घीर गीदड़ वृक्षर चिंछा जीव है। भास्
वर्षों देख नहीं पड़ता। पर्यंतपर पितृमृत्यु घीर
पनेक प्रकारके हरिच करते फिरते हैं। उत्तर
नक्षत्रकवमें लड्डुको भेषा मिलता है। छिद्र घीर
द्वार भी कङ्कलमें बहुत है। नानामकार पक्षी कङ्का
करते हैं। यहाँ मङ्गनी मारनेका व्यवसाय नहीं
बनता। पत्रपर राव भर पड़े हैं। व्यात्र पर्यं मृग
पत्र घीर हरिचन्द्र हृष हृष बिबता है।

रुच त्रिलोमें रंठावी बहुत रहते हैं। रिलगु भाषा
बहती है। बिन्दु पत्तोकोड़में बहुतसे लोग कानारी
कोसी कहते हैं। नक्षत्रकव पर बन्धजातिके बेंचु बिध
मान है। छपिकार्यं बन्धे पञ्चा नहीं बनता। पर्यंतमें
उत्पन्नके समय बह यात्रियोंके कर लिया करते हैं।
हरनूतके प्रधान नगर यह हैं,—हरनूत, नन्दियाल,
कमबम, गुहूर, महीखेरा घीर दीपसी।

यहाँ व्यात्र, दान, क्यो, रेल घीर नीचकी छपि
पचिक होती है। लख घीर दानको घोंच छींच
बढ़ाते हैं। गीह घीर सन कचनेको बोधा जाता
है। तम्बासू मिर्च, बेसे घीर पञ्चरीटकी घामके
निबट समाने हैं। कोनों का प्रधान व्यापक लुवार है।
यह प्रधानतः दो प्रकारकी होती है—घोसी घीर
छपुंदा। घोसी लुवार छन मास काक या कासी भूमिमें
बो दो जाता है। बिन्दु घोसी लुवार सितम्बर या
पञ्चोबर मास खेतमें पड़ती घीर फरवरी तथा मार्च
मास बटती है। नक्षत्रकवको बिबतनी ही छपिभूमि
पत्र जोती बोवो न जानिके बन्ध बन मयो है। यड़े
पत्रके कड़वा तब १८८ मीस छम्बी नहर लमी है।
हरनूत त्रिलोमें रथको कम्पायो १७० मीस है। यह
६० गज चौड़े घीर ८ पीट महरती बहती है।

हरनूतमें कपड़े दुननेका काम पचिक होता है।
नक्षत्रकव पर्यंतके नीचे जोहा भी निबता है।

यहमहायथे वीर निबालते हैं। पत्तर काटनेमें बहुतसे
पादमी लगी रहते हैं। नीस घीर गुड़ भी तेयार
होता है। पनेक नगरों घीर घामोंमें सामाजिक बाट
लगते हैं। यहसे पनात्र बाहर मेका नहीं जाता घीर
पूर्वतदेय नमक पाता है। बिन्दु हरनूतमें महीका
नमक बहुत बनता है। छपो, मोब, तम्बासू पत्रका
घीर फ्यीके कपड़े तथा काकोमका बाधान होता है।
बाहरसे पानिबोसी द्रव्यमें बिबालयतो पञ्च, सुपारी,
नारियस घीर सुषा मघासा प्रधान है। हरनूतमें
कोयो ६०० मीस छड़क बनते हैं।

हरनूत हरङ्कके प्राचीन तैकङ्क राजका बिभास
है। उक्त राज्यके पञ्चपतनसे यह सम्भवतः स्तन्य
ही गया था। ईश्वर राव राजा रहे। उनके पुत्र
नरसिंह रावको बिबहमनगरके महाराजके मोद लिया
था। फिर बह उक्त बिभास राज्यके राजा बन गये।
बिबयनमराठिपि कथ्यतदेवरायके समय हरनूतका
दुर्ग निमित्त हुआ। फिर बह भास् रामराजाको
जायीरमें मिला था। १९६७ ई०को तांबिकोट नुहमें
वीजापुर, मोसकुपडा तथा पञ्चमदनगरके नवाबोंने
बिबयनगरके राजाको जराया घीर हरनूतको बीजा
पुरके एक भास्में लगाया। पञ्चसे सूईदार पत्र
कीनियाबाके पत्रदुख बड़ा रहें। उन्होंने मन्दिरोको
मसबिद बना काता।

१९११ ई०को घोरङ्कनेबने वीजापुर बीत पठान
बिबीर पान्को सेनिक-सेवाके पुरस्कारमें दिया था।
उनके पुत्र दाऊद पान्ने बन्धे मार काता। दाऊद
पान्के मनेपर उनके भाई इजाबीम पान् घीर
पसिपु पान्ने मिहकर राज्य पचाबा। उक्त दोनों
माहर्योंका उत्तराधिकार पसिपु पान्के पुत्र इजाबीम
पान्को मिला था। उन्होंने दुर्ग बनाया घीर छछका
बस बढ़ाया। फिर उनके पुत्र घीर पोसने राज्य
दिया था। पोसका नाम बिब्यत पान् रहा।
कर्वाटकको बढ़ावो पर निबाम नजोरलङ्को घोरने
कड़वा घीर सननुरवासी नवाबोंके बाब बिब्यत पान्
भी मडे थे। यहाँ कड़वाके नवाबमें कोसेथे नबीर
कङ्को मारा। निबामके मतोमें दधिबके-सूईदार

बने। किन्तु पठान-नवाब उनसे घबराए रहें। राकोटीने हिम्मत खान् बहादुरने उन्हें मार डाला। उल्लेखित सेनिकोंने हिम्मत खान्के भी टुकड़े चड़ाये थे। फिर नजीरजङ्गके दूसरे भतीजे सलायत खान् सूवेदार हुये। १०५२ ई०को ऐदराबाद लौटते उन्होंने आक्रमण मार करनूल प्रधिकार किया था, किन्तु कुछ समय ले हिम्मतखान्के भाई सुनवर खान्को सौंप दिया। घोड़े ही दिन बाद ऐदर खान्ने करनूल आक्रमण कर दो लाख (गडवान) रूपया पाया था।

१८०० ई०को यह जिला कड़प्पा और बल्लारीके साथ अंगरेजोंको दिया गया। उस समयसे नवाब अलिफ् खान् एक लाख (गडवान) रूपया प्रतिवर्ष सरकारको पहुँचाते रहे। १८१५ ई०को अलिफ् खान्के मरने पर उनके भाई सुजफ्फर जङ्गने सिंहासन और दुर्ग अधिकार किया। अलिफ् खान्के ज्येष्ठपुत्र सुनावर खान्ने अंगरेजोंसे साहाय्य मांगा था। फिर बल्लारीसे करनूल मरियट फौज लेकर पहुँचे। सुजफ्फर खान् करनूलसे निकाले और सुनवर खान् मसमद पर बैठाले गये थे। १८२३ ई०को सुनवर खान् मरे। उनके भाई सुजफ्फर करनूल सिंहासनारुढ़ होने पा रहे थे। किन्तु उन्होंने बल्लारीके निकट अपनी पत्नीको मार डाला। इसीसे वह बल्लारीके किलेमें कैद हुये और १८७८ ई०को मर गये।

१८३८ ई०की समाचार मिला—करनूलके नवाब गवरनमेण्टके विरुद्ध युद्धकी तैयारी करनेमें लगे हैं। अन्वेषण करने पर मालूम हुआ—दुर्ग तथा प्रासादमें अस्त्रगस्त्र और गोली वास्तुका ढेर किया गया है। फिर अंगरेजोंने तौच्छ युद्धके पीछे दुर्ग और नगर अधिकार किया। नवाब हिन्द्री नदीके बामतट पर जोरापुर ग्रामको भागे थे। अन्तकी उन्होंने आत्मसमर्पण किया। वह त्रिचनापलीके किलेमें बन्दी रहे। यहाँ उनके एक भ्रातृपुत्र उन्हें मार डाला। उनका राज्य जूबतु हुवा और उनकी दंगलोंकी पैनथम मिला। १८५८ ई०को करनूल जिला बनाया गया।

यहाँ शिक्षाका सुधार नहीं। अल्पवायु स्वास्थ्यकर है। पयिम और उत्तर-पूर्वमें अधिक वायु पाता है। जूगसे सितम्बर मासतक ठण्डि रहती है। नवम्बरमें पर्यंतके नीचे ज्वरका प्रकीर्ण रहता है। मैदानमें गोबरभूमि नहीं। पग पर्यंत पर चरते हैं। किन्तु घीस जटुमें पर्यंतकी वास जन जानिसे पग मूत्रों मरते हैं। करनूल, कमवम और नन्दियालमें दातघ घोषधानय विद्यमान हैं।

२ करनूल जिलेके रमसकोट परगनेका प्रधान नगर। यह अक्षा० १५' ४८' ५८" उ० और देशा० ७८' ५' २८" पू०पर अवस्थित है। लोकसंख्या २० सड़स्रसे अधिक पाती है। यह करनूल जिलेका हेड क्वार्टर है। हिन्द्री और सुद्रमट्टा नदीके मध्यम पर बसती पड़ी है। भूमि पार्यत्व है। म्यानीय दुर्ग गोपान राबने बनाया था। १८६५ ई०को इसका सामान उतारा गया। पावरपट्टके गिराये जाते भी चार बर (वर्ष) और तीन द्वार विद्यमान हैं। इसमें नवाबका प्रासाद था। १८७१ ई०तक दुर्गमें सेना रही। किसी समय करनूलमें विगुचिडा अधिक देस पड़ती थी। किन्तु न्युनिमपमिटाने कितना ही धन व्यय कर इसका स्वास्थ्य सुधारा है। फिर भी नहर निकलनेसे ज्वरका देग बहुत बढ़ जाता है। १८७७-७८ ई०की दुर्भिक्ष पड़नेसे करनूल पर बड़ी विपद् आयी थी। रेलका गूठी देगन ३० कोस दूर है। इसमें पाधे हिन्दू और पाधे मुसलमान रहते हैं।

करनूल (अ० पु० = Colonel) सेन्यदनाध्यक्ष, फौज-का अफसर। यह त्रिगेडियर-जनरलके नीचे रहता है। करन्यम (अं० पु०) कर धमति अग्निप्रयोग करीति, कर-ध्या-अग्नि सुम्ब। ७७ पन्ने १८८२ दि. भाग। प. १५२०। सुवर्चा, इच्छाजुषंगीय अनीनेत्र नामक राजाके पुत्र। सत्ययुगके समय मनु-धर्ममें अनीनेत्र राजाने जन्म लिया था। यह प्रतिशय उद्यत रहे। उन्होंने खोय आठ और प्रजावर्गको निरन्तर चलाया। उद्यतप्रकृतिवगतः प्रजाको रिक्ता वह श्रेय पूर्वपुरुषो-चित यय पा न सके थे। परिशेषमें दिग्विजयी नृपा

होति मी प्रजामि उन्हे सिंहासनते उतारे परच्छको भनावा और उन्हे पुत्र सुवर्चाको राजा बनावा ।

सुवर्चा पिताको विषय जियापल रजमिसे राज्यपुरत और निर्वासित होति रह्य उतत संवत बितति प्रजाके चित्तबाधमसि मी छे । प्रजा मी उनको ब्रह्मनिष्ठ, सत्यमत, बुद्धि, ब्रह्मदमादि शुचमूर्तिग, मनसो और धार्मिक या चतुस्य अनुरुद्ध हुयो । बालवय सदा बर्म निरत सुवर्चाको परब्रह्म होमिसे सामन्त सतानि छरी ।

एन बर्माजा सुपतिनि कोष एव वाचलादि विज्ञेन हो सामन्तमण्डले भयसे पपनि अनुरुद्ध धर्माके साथ अनुपरीको बचावा बा । बलहोन होति मी नियत धर्म परायण रहमिसे उतुपीडक सामन्त उन्हे विनष्ट कर न छे । शक्यमसि कर राजाको सामन्तमण्डले निदा द्य कपसे उताय, तब उन्हेमि भयना कर पनससि बनावा बा । उचपर अग्निसे एनका मीमपराक्रम सेव्यसमूह निष्कष पाया । फिर बनीयान् सुपतिनि पर्युषण पाबिभूत सेव्यसमूहके परिहण हो कीय बीमाके पन्नामसि सुपतिवचकी मोवा देखावा बा । कीय कर अग्निसे जलानियर उठ दिवधि सुवर्चाका नाम 'हरम्यम पड़ मवा ।

हरम्यय (सं० दि०) हर अति सीद्धि, हर जे-काम्, सुम् । इष्टसेइक, हाय बमने या पाठमेवाका ।

हरम्यस्यपोसाला (सं० पद्य०) इष्टहत कपोलके चलापर, हायपर रखे हुये माकके धिरे ।

हरम्यास (सं० पु०) हरि करामयसे व्याप, ०-तत् । तन्मोक्ष व्यापधियेव । तन्मोक्ष मन्त्र उच्चारणपूर्वक पङ्कत इत्यति पङ्किसमूहके तब और पङ्कदेवपर को ग्रास बिद्या जाता, वही हरम्यास कहाता है ।

हरपद्य (सं० पु०) करी पद्यवत् पद्य, बहुमी० । बीमगोदक बनौरह ।

हरपद्युक्त (सं० पु०) हरः पद्यकमिव । पद्मइष्ट, कवक-केसा हाय ।

हरपद्य (सं० स्त्री०) करार्थं राजसार्थं पद्यम्, मध्यपद्योः । राजस्यके चिये दिया कामिवाका चिन्नेक वस्तु को बीज चिराजके चिये दी जाती हो ।

हरपद्य (सं० स्त्री०) हरमयकम्य पतति, कर-पत

हुम् । एतोरुपपङ्कतुत्तमिनिवर्तिनः क शप्यः । ए क्वच-चाप्य, करीत । यद्य सुपुत्रमि कमिते सिंगति पञ्चोका पक्षयकार भेद है । इससे जेदन और सेवन बर्म होता है । २ खामके समय जलका इकर उकर कटान, मचाति बल पागोको पपनि इकर उकर हावसे प्रकोल-मेका काम ।

हरपद्यक (सं० स्त्री०) क्वचप, करीत ।

हरपद्यवान् (सं० पु०) हरपद्यवत् पत्रे यद्य तत् पञ्चास्ति, हरपद्य मतुप्, मध्य क । परजाप्यविधिति म् । य पपद्य ताकप्य ताक्या पीड ।

हरपद्यिका (सं० स्त्री०) करी पत्र सामिब यज्जा, कर पत्र क्य-टाप पत इत्यम् । १ जलक्रीडा पागोका खेल । २ तिष्ठपर्यो ।

हरपर (वि० पु०) १ कर्पर कोपडा । (वि०) २ क्वच, क्वचुच ।

हरपरी (वि० स्त्री०) करी सुगोरो-मिमीरी ।

हरपर्य (सं० पु०) करपत् पर्यं क्वच । १ तिष्ठ। क्वच, तिष्ठीका पीड । २ उचोरक, काच ईड । ३ क ईकी ।

हरपसवी (वि०) करपती ईकी ।

हरपद्यव (सं० पु०) करप्य पद्यवत् । १ पङ्कित, उ गतो । २ इष्ट, हाय । ३ पङ्कितके सहेतये क्य नोपकसन करमेको बिद्या, उंयसिदोके इयारीसे वात करमेका हुनर ।

"परिचय कल्प एव इतरः । तद र्थम लील मयतः ।
५ इति परः पद्यमि म्यः । एन कर्मे कवचकी एव ॥"

हावसे पद्यिका पद्य बनानियर पञ्कारादि कर, कामक बनानियर कञ्कारादि, वक्तु र्द्वानियर कञ्कारादि, उच्चार लगानियर उच्चारदि, तब बनानियर तञ्कारादि, यंत्रत बनानियर पञ्कारादि, योगन र्द्वानियर यञ्कारादि और गृहण सुमानियर मञ्कारादि बर्चका बीज होता है । फिर पञ्कारादिमसि पङ्कित र्द्वानियर पद्यर और पुटकी बनानियर मात्रा ठहराये है ।

हरपसवी (सं० स्त्री०) इष्टके सहेतये क्वचनोपकसन, हायके इयारीको वातचोत । परपर ईकी ।

हरया (वि० पु०) हाटि, सेइना । यनामके बाब शर उचको हरया कहति है । ११

करपाठ (सं० स्त्री०) करः पाठयत् यत् । १ जल-
क्रीडा, पानीका खेल । २ हस्तकृप पाठ, करतनका
काम देनेवाला हाथ । योगी अपने करका पाठ और
सदरकी भीनी रखते हैं ।

करपात्रिका (सं० स्त्री०) करपात्रिका ।

करपान (हिं० पु०) रोगविशेष, एक बीमारी । यह
एकप्रकारका घर्मरोग है । इसमें घामकीनि गर्भरपर
रक्तवर्ण दाने उभरते हैं ।

करपान (सं० पु०) करं पालयति, कर-पाल-पण् ।
कर्मणः । वा शया । मृग, तनवार । इसमें एक ही
और धार रहती है ।

करपात्रिकाः (सं० स्त्री०) करं पालयति, कर पाल
यन्-टाप् । मृग यशो । वा शया । १ मृग हय
यष्टि, चायकी छोटी छड़ी । २ दुरा । ३ सुदगर ।

करपाली (सं० स्त्री०) करं पालयति, कर पाल
यिनि-छीप् । मृगिच्छिकादि कृत्विच् । वा शया ।
१-सुद्वहस्तयष्टि, चायकी छोटी छड़ी । २ दुरा ।
३ सुदगर ।

करपीडन (सं० स्त्री०) करस्य मयूरस्य पीडनं
खरेण यज्ञ, वृष्टी० । विवाह, पाणिप्रक्षाल ।

करपुट (सं० पु०) करयोः पुटः, क-तत् । पाण्डुलि,
मंजुरी ।

करपृष्ठ (सं० स्त्री०) हस्तका पृष्ठाद् भाग, चायका
पिछला हिस्सा ।

करप्रवेद्य (सं० वि०) १ हस्तद्वारा पदप क्रिया
जानिबाला, जो हाथसे पकड़ा जाता हो । २ करद्वारा
इच्छा क्रिया जानिबाला, जो टिकामसे लिया जाता हो ।

करप्रद (सं० वि०) कर प्रददाति, कर-मा-दा षड् ।
ःप्रातःशेषणे । वा शया । १-करदाता, मधुसूत या
टिकाम देनेवाला । २ हस्तप्रदान करनेवाला, जो हाथ
सगाता हो ।

करप्राप्त (सं० वि०) हस्तगत, पाया हुआ, जो हाथमें
आ गया हो ।

करफु (वीषण्य्) फोपी विशेष ऊँच संख्या, बहुत
बड़ी-बदद ।

करफूल (हिं० पु०) दीना ।

करवय (हिं० स्त्री०) गौम, गुरजा । यह एक
प्रकारकी टोहरी जेला रहती और मखर कहती है ।

करवटावही (सं० स्त्री०) करवटारही, जर्सीपुरम ।

करवना (सं० स्त्री०) १ चाब टेमकी एक समतल
भूमि । यह पत्तल निर्माण स्थान है । मूलमामीके
हुंमहा यहीं का हुआ था । २ ताशिये माइनेके
जगह । करवनेका भेला सुदरमर् १०में दिन होता
है । ३ निर्माण स्थान, यानो न मिलने की जगह ।

करवस (हिं० पु०) जगामेट, किसी दिक्कत का हल ।
यह दवायाँ यादेंने नामसे चम्पे चम्पेकाई विना
नगरमें कतता है । मित्र देवर्से इयथा व्यवहार
वधि है ।

करवाल (सं० पु०) करस्य बालः मुन इव । १ मग,
माजुन । करं पायित्वा प्रहते दिनसि, देव चण ।
२-मग, तनवार । इसका मन्त्रत पर्याय अग्नि, सुदग,
तीरुधर्म, दुहासट, विनास, योगम, विणद, प्रमेला
या भर्मेला, जिज्ञीग, चन्द्रहाथ, भंघिप्रक, मण्डवाप,
हरपाल, तरवार और रिदा है । मंडगके पाकारानु
सार इसके दूतके भी कयो नाम लिखते हैं ।

अति पूर्वकाल यदात् भेदित्त मतपक्ष भारतवर्षीय
और करवाल व्यवहार करते पाये हैं । वैशम्पायनेके
धनुर्वेद, योगनिश्चामदि, मोहाणव, तृष्टिचपत,
सुप्रसंक्षिता मन्त्रि पाषोम संगत मन्त्रों करवाल का
गडुमका विवरण कबिष्ट मिलता है ।

गौरगितामदिने मतके मण्डु निर्माच कर्मकी
दो प्रकारका मोह उपयुक्त है—निश्च और पण्ड
फिर गार्हपत्यदि मन्त्रों प्रधान मन्त्रोके उप
प्रकारका कहा है । यथा—१ रोहिणी २ मण्डुकेव,
३ मयूरवय, ४ सुप्रवेद्य, ५ नीपनयय, ६ पण्ड,
७ पन्धिवय, ८ शैबानमाभान, ९ नीपपिण्ड और
१० त्रिचिगड ।

१ रोहिणी छोटे कण्डु जेमी, पत्तल कठिन और
अल्प नीलवर्ण मोह है । इसमें चत पानेपर पहा
वेदना बढती है ।

२ जो नीह मयूरके कण्डकी भांति वर्षादिदिष्ट
देखाता, यही मयूरकण्ड कहाता है ।

खटो और खट्टेर देगलात करवाल पत्यन्त सुदृश्य आता है। ऋषिक देशका खड्ग गुरुमार रहता और अत्यायाससे ही शरीर ह्वेदन करता है। वह देगका करवाल प्रति तोष्ण होता है। इसमें छेद भेद करनेमें देर नहीं लगती। शूर्पाक देशीय खड्ग प्रति-शय कठिन लगता है। विदेहका करवाल असह्य वेजस्वी और प्रभावशाली है। मध्यमपामका खड्ग सधु और प्रति तीक्ष्ण रहता है। चेदिदेगका करवाल हृषका और तीक्ष्ण लगता, किन्तु सारहीन ठहरता है। सहग्रामका खड्ग प्रति तीक्ष्ण और बहुत हलका होता है। चीनदेशीय करवाल तीक्ष्ण और अधिक निर्मल निकलता है। कासपूरके निकट जो खड्ग बनता, वह दीर्घकाच स्यायी, तीक्ष्ण और सुसज्जयुक्त रहता है।

करवालकी अष्टाङ्ग भी कहते हैं। कारण इसकी परीक्षा ८ प्रकार करना पड़ती है—१ अङ्ग, २ रूप, ३ जाति, ४ नेत्र, ५ परिष्ठ, ६ भूमि, ७ ध्वनि और ८ परिमाण।

१ प्रस्तुत होनेपर खड्गके शरीरमें जो गाना प्रकार चिह्न रहते, उन्हींकी अङ्ग कहते हैं। अङ्ग प्रायः १०० प्रकार हो सकते हैं।

२ करवालका रङ्ग ही रूप कहाता है। प्रधानतः रूप चार प्रकार होता है—नीलरूप, कृष्णरूप, पिङ्गल रूप और धूम्ररूप। सिवा इसके मिश्ररूप भी देखनेमें आता है।

३ खड्गकी जाति चारप्रकार है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। फिर जातिसद्वर भी हुवा करता है। सर्व विषयमें श्रेष्ठ गिना जानेवाला करवाल ब्राह्मण है। इसके द्वारा अल्प क्षत प्राते भी सर्वाङ्ग दुखता और शोथ उठता है। मूर्छा, पिपासा, दाह और अवरका वेग बटनेसे शीघ्र प्राय निकल जाता है। ह्वर, चाबला और बहेड़ा—तीनों द्रव्य कूट पीष एक दिन लगा कर रखते भी यह मस्तिन नहीं पडता, वरं अधिक परिष्कार निकलता है। हिमालय और कुय-क्षीपमें कमी कमी ब्राह्मण करवाल मिल जाता है।

धमवर्ण, तीक्ष्णघार, ककमध्वनियुक्त और आघात-

सह खड्गकी क्षत्रिय कहते हैं। यह संस्कार न करने भी बहुत दिन परिष्कार रहता और प्राण यन्त्रपर चढ़ते बहुत अन्निकषा निकालता करता है। इसका क्षत होनेसे टप्या, दाह, मलसूयरोध, अवर, तथा मूर्छा रोग बढ़ता और किसी समय मृत्यु पर्यन्त या पड़ता है।

वैश्य जातीय करवाल नील तथा कृष्णवर्ण होता है। संस्कार करनेसे यह प्रति उच्चम निकलता है। किन्तु इसमें तीक्ष्णता प्राण पर चढ़ानेसे ही आती है।

जा खड्ग देखनेमें भेदशर्ण लगता, मोटी घार रखता, नृदुध्वनि करता और प्राणपर चढ़ते भी तीक्ष्ण नहीं पडता, उसे विद्वान् शूद्र कहता है।

बहु जातिके लक्षण अत्रनेवाला करवाल आति-सद्वर कहाता है।

४ मिश्र मिश्र चिह्नका नाम नेत्र है। खड्ग-वेत्तावोंके मतमें नेत्रचिह्न तीससे अधिक नहीं होते। यथा—अक्र, पक्ष, गदा, गङ्ग, उमरु, घनुः, पङ्गु, क्व, पताका, धीषा, मत्स्य, शिव, ध्वज, अर्धचन्द्र, कस्य, शून, व्याघ्रनेत्र, सिंह, सिंहासन, गज, हंस, मयूर, पुत्रिका, जिह्वा, दण्ड, खड्ग, घामर, शिखा, पुष्पमाला और सर्पाकार चिह्न।

५ करवालके अमङ्गलजनक चिह्नका ही नाम अरिष्ठ है। यह १० प्रकार होता है। यथा—बिन्दु, रेखा, भिन्न, काकपद, भेकगिर, विहासवस्तु, इन्दुर, गकरा, नौला, मधक, अमरपद, सूची, विन्दु, कपोतक, निम्नत्रिविन्दु, खर्पर, शकन, शूकर, कुम्पक, जाल, कराल, कङ्कपत्र, खर्जुर, शूद्र, गोपुच्छ, खन्ता, साङ्गल और बडिग। अरिष्ठ लक्षणाक्रान्त खड्ग घारण करनेवालेपर गाना विपद् पड़ती है।

६ खड्गकी भूमि दो प्रकारके अर्थोंमें ध्यवहत होती है—प्रथम क्षेत्र वा काया और द्वितीय जन्म-स्थान। करवालकी मलायी वुपायी देखनेको जन्म-स्थानका विषय समझ लेना चाहिये। इसका जन्म-स्थान (भूमि) द्विविध रहता है—दिव्य और मौम। स्वर्गमें जो लोह उपजता, उसका नाम दिव्य पड़ता है। फिर भारतवर्षमें उत्पन्न होनेवाला लोह मौम है।

बुद्धिबलतः नामक संस्कृत 'पञ्चमि' शिवा—
पुराणादयो 'प्रथमतः देवापुर सुदमि चतुस्र निबला
वा । तदनुसूय करवाक विषो विषो स्थानमि रये वै ।
जनमि एष कषार, पति मनु निर्मल, सुन्दरमेव परिष्ट
शोभ, सुमि च उत्तम भनिवुक्त संस्कार न करती मी
निर्मल रचनेबाबि पौर दृष्टमिषी दो बारा न सुदमिबाबि
दिक्क वै । दिव्य चतुस्रका पायात पानिषि दाह थीर
पञ्चपाक उत्पन्न होता वै । मन्त्रवत-हस्ताधि-वीहृष्टि
मि करवानको मी दिव्य चह चबते वै ।

- भीम चतुस्रका उत्पन्न देवमिषो प्रथम वीहृतल
उत्तम लोना उचित वै । नीच देको । यह दो प्रकारका
होता वै—बसत थीर-विजयका । एक प्राचीन
विबदयोषि चतुस्रार पूर्वकासको देवादिदेवमि विवपान
बिया बा । बह वीत विव कामय विन्दु विन्दु नागा
देवमि गिर पड़ा । चर्मी विवविन्दुषि कासावय (ईस
मात) बन विवबका कदाया वै । देवगर्भमि लङ्क-
मन्त्रमीक्षित पञ्चत पान बिया बा । बह वीत पञ्चोत
वा विन्दु महां मिरा, चर्मी एव थीर बना । यह
कोहको वी पञ्चतबका बबते वै । यह थीर बारा
चली, मन्त्र सिंहा, नेपाक, पाइटेय, सुराइ प्रभति
ज्ञानमि-उत्पन्न होता वै ।- शोइ, बलिइ, मद्र,
पाण्ड, पञ्चकाल थीर बज्र प्रभति विविच एव थीर
मिसता वै । इत थीरका चतुस्र हो उत्पन्न बनता वै ।

० भनि पर्यात् मन्त्र सुनकर, करवाकको मन्त्रावो
पुरायो पर्यंजानी जातो वै । भनि प्रथमत दो प्रकार
होता वै—थोर थीर मार । ईंठ, कांफ, लडा थीर
शिववा भनि थोर बजाता वै । थोर-भनिवुक्त चतुस्रको
उत्तम कसमते वै । काब, बीबा, चर थीर प्रष्टरो
लित भनि मार होता वै । मारभनिवुक्त करवाक
पुरा ठकरता वै ।

८ चतुस्रका मान उत्तम थीर प्रथम मेदधि विविध
वै । विमान एवं पञ्चमारको उत्तम थीर सुष्ट लका
मारवाकको प्रथम बबते वै ।- विर इसमि उत्तम,
मन्त्रम थीर प्रथम तीन-मिद पड़ते वै । नागाकुंनकी
मार्ति बितमि सुष्टि दोर्ष 'उत्तमो वी चतुस्रिके चतुर्ष
भाग विद्युत थीर एकपरिमित करवान उत्तम 'होता

वै-। मन्त्रम चतुस्र बितमि सुष्टि दोर्ष रचता, विद्युतमि
उत्तमो 'पथे चतुस्रिके तीन भागमि एक भाग थीर
परिमाथमि धर्म एक पड़ता वै । प्रथम करवाके
बितमि सुष्टि दोर्ष उत्तमो वी चतुस्रिके चार भागमि
एक भाग विद्युत थीर उत्तमो पथे वा पंचिक एक
परिमित होता वै ।

- पूर्वकाकको राजा बड़े यक्षे पंचिकाकना सोयते
(शि) वैश्यामयोक्त चतुर्षेदमि ३२ प्रकारकी पंचि
चानन-शिवाका नाम 'मिसता' वै । यथा—श्वान्त,
उद्गान्त, पाविह, पाहुत, विभ्रत, लत, शंयान्त,
शमुदोर्षे, निप्रह, प्रपह, पदाहकवैच, लभ्यात, मस्तक-
भ्यामय, सुत्रभ्यामय पाय, पाद, विबन्ध, मूमि
चतुस्रमच, मति, प्रजागति, पासेप पातेन, उत्तानक,
भुति, सहुता, शौडय, मोम, श्वेर्ष, हृष्टुष्टिता, तिर्यक-
प्रचार थीर-उर्ध्वप्रचार ।

करवाशिका (स० श्यो०) एक बाराकभियेय, एक
थोटी लकपार ।

करवी (शि० श्यो०) पयथापानियेक, कटिण, चरी,
बीपायीका एक पाना । श्वार वा मन्त्रयोषि 'चरी मरे
पिड़ 'करवी' बबते वै । यह महांतये 'पहुटि धर-
शरीक काट काट गाय मेष प्रभति पड़को शिवायी
जातो वै ।

करवीका (शि० शि०) चरीवाका, जो करवोषि भरा हो ।
करपुर (शि०) चर देको ।

करवुत (शि० पु०) चम वा सुत्ररम्ब, एक रथो या
लकमा । बह पयथि 'पर्याच (बीन)मि पयथाय
रथमिषो टांक दिया जातो वै ।

करम (स० पु०) १ मविचम्ये भनिह चतुस्रि
पर्यन्त चतुस्रका बहिर्भाग, मन्त्ररुष्ट, श्वलायोषि उभक्षिणी
की बहृतक चाबका दिव्या । २ करिण्डक, चायोकी
सूक । ३ गजगिय, चायोका बका । ४ चह, ल ट ।
५ चतुस्रका कटिवा बिलो सुदरे जानवरका बका ।
६ नवी-नामक गन्धद्रव्य, एक 'सुगन्धदार बीज ।
० सुर्वावर्त । ८ एक दोहा । 'रमि' १६ 'गुह' थीर
१६ लह लगते वै ।

करमक (सं० पु०) अनुकथित, करम करमका,

करभ-कनु। वदुकरभन्। १ प्रियतम
 हृदिगायक वा उदुगायक। २ करभ। करभ-कनी।
 करभकागिडका (सं० स्त्री०) करभस्य प्रियं काण्डं
 यस्याः, वदुत्री०। करभकाण्ड-कप-टाप् इत्वम्।
 उदुकाण्डी, कंटकटारिका पेड।
 करभक (सं० वि०) करं मनसि, कर-भन्ज-उन्।
 कर्त्तव्यः। ना ३।१।१९। १ करभकरारी, हाथ तोड़ने-
 वाला। (पु०) २ प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी
 बसती। (न्याय-कोश ४२)
 करभस्त्रिका (सं० स्त्री०) करभस्त-टाप् इत्वम्।
 १ करभकरारी, हाथ तोड़नेवाली। २ महाकरभ,
 बड़ा करौंदा। ३ ननाकरभ, बसका करौंदा।
 करभस्तन (सं० वि०) करं मनसि, मन्त्र-स्त-ट्।
 करभकरारी, हाथ तोड़नेवाला।
 करभस्त्रिका, करभका देवी।
 करभप्रिय (सं० पु०) छुट्ट पोनुइच, छोटे पोनुका पेड।
 करभप्रिया (सं० स्त्री०) करभस्य उदुस्य करियावकस्य
 वा प्रिया, इ-तत्। १ छुट्ट दुगलमा, छोटा जवामा।
 २ दुगलमा, जवामा। ३ उदु वा करियावकाटिको
 स्त्री, छोटे हृदिनी या उंटनी।
 करभवकम (सं० पु०) करभस्य वकमः, इ-तत्। १ उदु-
 प्रिय पोनुइच, छोटा पोनु। २ कपित्त इच, कैदा।
 करभवारपी (सं० स्त्री०) उदुकरभकगुक्कोत्थित वाक्पी,
 कंटकटारिकी बराव।
 करभादनिका, करभदने देवी।
 करभादनी (सं० स्त्री०) करभेन उदुन अद्यति, करभ-
 पद कर्मणि ऋट्-ह्रीप्, छुट्ट दुगलमा, छोटा जवामा।
 करमी (सं० पु०) करभः इन्द्रस्य प्रथममेतस्मिन् इत्
 प्राकारो इन्द्रि मण्डे यस्य प्रथवा कर्णे प्रसू इव माति,
 कर-भ-ड; करभः गुण्डुटस्ति यस्य, वदुत्री०।
 १ हस्ती, हाथी। (स्त्री०) करभस्य स्त्री, करभ-डीप्।
 करभेति-वदु-इ-वदु-। ना ३।१।१९। २ स्त्रीकरभ, हृदिनी
 या उंटनी। ३ इन्द्रमेवदु-ह्री, छोटी मेटासींगी।
 ३ खेतापपाजिता, एक वृष्टी।
 करभीय (सं० वि०) करभ-टञ्। इस्ती या उदु-
 कभन्वीय, हाथी या ऊंटके सुताजिक।

करभीर (सं० पु०) करभिनं करिणं इरयति प्रेरयति
 चत्वमुपवम्, करभ इर-भण्। सिंघ, गेर।
 करभृ (सं० स्त्री०) करात् भवति, कर भू-क्तिण।
 नाव, नावून।
 करभृषण (सं० स्त्री०) करो भूयते पनेत्र, कर-भूष-
 ण्यट्। १ कट्टण, वृष्टी। २ इस्लानदार माव, हाथका
 कौथो गहना।
 करभीक (सं० स्त्री०) करभ-वत् ऊरुयस्याः ऊट्।
 प्रगम्न ऊरुविगिष्टा स्त्री, चौडी जाववानी घोरत।
 करभ (हिं० पु०) १ कर, काम। २ माय,
 किम्पत। ३ वृक्षविशेष, एक पेड। यह अत्यन्त
 पत्र हृद्य है। करभ गीतन भूमिमें उत्पन्न होती है।
 इसकी लकड़नेतवर्ण एवं प्रथम निकलती घोर पाथ
 इस मोटी पड़ती है। काष्ठ पातवर्ण तथा सुदृढ
 रहता है। करभ मकानु निज घोर प्रथमारी बनानिमें
 सगता है। (अ० पु०) ४ रुपा, मेहरवाणी। ५ नियाम-
 विशेष, एक गीट। यह परव घोर प्रफरीकामें
 होता है।
 करभई (हिं० स्त्री०) हृद्यविशेष, एक पेड। यह
 कचनारसे मिलती घोर दक्षिणात्यमें उपलता है।
 बगाल, आसाम घोर ब्रह्मदेगमें भी करभयी होती है।
 इसके कट्ट पत्र बदाने घोर गाक बनानिमें काम आते हैं।
 करभकवा (हिं० पु०) गांठ गोभी, पत्तोका एक
 फूल। इसमें प्रनेक पत्र एकत्र ही पुष्पाकार बन
 जाते हैं। यह माकने व्ययहन होता है। गातकाल-
 की गोभी पट जानिपर करभकवा पाता है। चैत्र
 मास इसके पत्र फूट पड़ते हैं। बीसके उत्पन्नमें
 सर्पकी भांति बीज घोर पत्र निकलने है। इसकी
 फलामें छोटे छोटे बीज रहते हैं। पचले इसकी तर-
 कारी उच्च वर्णके लोग खाते न थे। किन्तु अब लोग
 बहुत कम परहेज करते हैं।
 करभद्रस—वारङ-मइलके मध्यका एक प्राचीन ग्राम।
 पादकस यहां जट्टल हो गया है। किन्तु इसमें
 थोड़ी दूर पर्वतपर देवमन्दिर घोर राजगृहादि बने
 हैं। करभद्रन राजकोटसे २१ कोस दक्षिणपूर्व
 अवस्थित है।

हरमण्ड (हि० पु०) धर्म, काम, मायि, विप्रत ।
हरमण्ड (स० पु०) हरं वृष्टिपण्डं पठति पति-
कामवति, हर पद ख सुम् । १ शुभाशुभ, शुभा
शोभा पैङ्ग ।

हरमण्ड (हि० वि०) सपच, मण्डप ।

हरमण्ड (हि०) वंश रेखी ।

हरमण्डल—भारतवर्षके दक्षिण पूर्वका उपभुक्त । इस
नामकी उत्पत्तिपर कुछ मद्दबड़ खबता है। -किशो
किशोके 'कथनानुसार पुस्तक' निबन्धक माथीन
'हरमण्डल' धामसे यह नाम निकला है। पूर्वकी
'हरमण्डलमें पीतंगीलोका अजापु सनता थोर पठ-
तिबोका हाथ रचता बा। फिर कोई कहता—
तामिल 'हरमण्डल'की संस्कृतमें बिनाइ 'हर
मण्डल' नाम बनाया है। शिषोत्र मत बुद्धिबद्धत
है। तामिल 'हरमण्डल'की संस्कृतमें 'हरमण्डल'
कहते हैं। 'माथीन बोल राजाथीके समबधि यह नाम
निकला है। 'भेन रेखी। प्राचीन पाश्चात्य भौगोलिक
टोलेमिने यह ज्ञानका नाम सोरैते (Soretai)
लिखा है। (Ptolemy, Geog. Bk. VII. ch. I)

हरमण्ड (स० ली०) कर्म, २ तीर्थका वृक्ष ।

हरमण्डिया (हि० ली०) यान्त्रि, पामन, भेन । असुद्र
में बाहु मण्ड पदमेंसे तरङ्गका रैन घटना हरमण्डिया
नशाता है। यह मण्ड पीतंगीनू मापावे लिया गया है।

हरमणी (स० पु०) बिरति विधिपति दण्डादीन्
पञ्च, छ पवित्ररथि चच अट आरागाः तत्र मः
शुक्लवन् छेयि पञ्च, बाहुककात् रनि पयवा करे
खियरी, कर य रनि । बन्दी, बंदी ।

हरमण्ड (स० पु०) हर वृष्टाति, हर अट पच ।
हरमण्डल वृक्ष, करोटिका पैङ्ग । मानवकायमें रहके
पपल कलकी पञ्च गुह, व्यापामाण्ड, कण्डः एवं
दक्षिणर पीर पित रत्न तथा अण्ड-वृष्टिधारक अजा
है। यह हरमण्ड महुार, दक्षिणमण्ड एवं अण्ड पीर
पितृत्वा बाहुनामक है। वरच रेखी ।

हरमण्ड (स० पु०) हरं वृष्टाति, हर अट-सुक्
का हरमण्ड पच, जावें अण्ड । १ हरमण्ड, करीदा ।
२ अताविदीन एक पैङ्ग ।

हरमण्ड (स० ली०) वरलं व रेखी ।

हरमण्ड—एक नदी वा दरवा। यह नदी नर्मदाके
मिल गयी है। इसका सङ्गमस्थान पुष्पकोई माना
जाता है। उक्त ज्ञानपर हरमण्डल-विधिविज्ञ प्रति
ठिन है। क्लृप्तपुराणोप विद्यापण्डके मतानुसार हर
मण्डो सङ्गममें नहा करमण्डलरका दर्शन करनेसे पुन
कर्म नहीं होता ।

हरमण्डिका (स० ली०) करौटो। यह पर्वत
प्रायःके सङ्ग होती है। (मण्डपार)

हरमण्ड (स० पु० ली०) करं वृष्टाति, अट विधि ।
१ हरमण्डल, करौटा । २ हरमण्डल, करीस ।
हरमण्डोचि—हरमण्डके अन्तत धामविधि दरमण्डाका
एक गाँव । हरमण्डराधाके मन्त्री करमण्डोचिने दधि
बहाया था । (मण्ड-वृक्षक मण्ड-वृक्ष)

हरमण्डेक (हि० पु०) १ पञ्चापती वृक्ष । २ पञ्च
पुतरी से का हुआ पराठा । यह बड़ी सुगन्धके
आनेमें पाता है ।

हरमा (हि०) रेखा रेखी ।

हरमा वार्ड—एक पञ्चाधारण अज्ञितती श्राद्धकवन्धा ।
दक्षिणाम्न प्रदेशके वायव्य पाममें इनका मन्थ हुआ
बा । पिताका नाम परधराम पण्डित रहा । यह
ज्ञानीय राजाके पुरोहित थे। राजा और राजपुरो
हित—दोनों परमवैश्याह रङ्गे। जब समय समयाखका
मूक इहेय अममनेको खिया मो बिदा पकतो बी ।
हरमा बायो येमवकात जो बिदावती बन गयीं ।
बिद्यामिद्याके शाह-शाह इन्हें वैश्यावर्मपरमी पण्डित
तर मजि बङ्गे। पण्डित परधरामने वकाकाल हरमा
वार्डको सत्पात्रके शाह सीया था। सत्पूर्व पण्डित्या
रहते मी पिताके पुरोहिते इन्हींके बिनाइ कर निदा ।
किन्तु जामोकी पबेख्य एवं विद्यो देख यह सङ्काल
बा इष्टकाली करनेसे पयवत हुयो। इनके सखन
कायोसे पाकारपको विष्णु था जाम । फिर हरमा
वार्ड लंबदा निर्जन स्थानमें बैठ रहदेवके पादपुत्रको
बिन्दा करतो, पानककी भांति जमो ईवतो जमी वा
चठतो पीर जमी 'वा नाय' पुकारकर बिजाने लगती
थीं। कुछ काक पोके पुनर्वा इन्हें जामोके पद पङ्

जानिकी विशेष यत्न हुआ। कृष्णके डेमरसका आस्वाद पानसे करमा वार्द्धको संसार विषयवत् घृष्य लमता था। सुतरां स्वामीके गृह जानिकी अत्यन्त अनिष्टकार समझ यह सर्वदा रोते रहीं। अन्तकी किसीसे कुछ न कह इन्होंने चुपके चुपके हन्दावन जाना स्थिर किया। रात्रिकामकी यह अपनी कीठरीसे बाहर निकली। घरके सकल द्वार बन्द थे। बाहर जानेकी कोई राह न देख करमा वार्द्ध मनके पावेगमें घटारीमें नीचे कूद पड़ीं। किन्तु यह कभी घरसे बाहर निकलती न थीं। इन्हें क्या मानम—कहाँ हन्दावन और कहा पथ रहा। फिर भी इन्होंने कङ्कालकी तरह झकेले ऊर्ध्वश्वाससे हन्दावनके उद्देश्य यात्रा आरम्भ की।

प्रभान होनेपर परशुराम पण्डित गृहमें कन्याको न देख अत्यन्त व्यस्त हुये और राजाके निकट पहुँच सकन कथा कहने लगे। राजाने उन्हें आश्वास दे चारों ओर करमा वार्द्धको टूटनेके लिये आदमी भेजे थे। इन्होंने राहमें जाते जाते पीछे घूमकर देखा—सुभी टूटनेकी लीग आती है। इससे यह अत्यन्त व्यथित हुईं। चारों ओर खुला मैदान था। छिपनेकी कहीं उपयुक्त स्थान न मिला। समग्र उद्रका वेषन एक नृतदेह पड़ा रहा। शृगाली और कुकुरोंने उसका नासादि प्रायः खा डाला था। मीपण-दुर्गन्ध उठता, निकट पहुँचना दुःसाध्य रहा। भक्तिमती करमा वार्द्धी उद्रदेहके उदरमें छिप गयीं। उद्देश्य भी सिद्ध हुआ। अन्वेषणकारी उसकी दूसरी दिक्कत न दिये। अनाहार केवल कृष्णचिन्ता करते इन्होंने इस भयने तीन दिन उषी उद्रदेहमें काटे थे—फिर कीर्क कहीं भान पहुँचे। तीन दिन पीछे वहासे बाहर आ और नदीमें नहा करमा वार्द्धने शरीरको निमल किया। इसीप्रकार पथमें बहु लेश उठा यह हन्दावन पहुँची थीं। पवित्र हन्दावनके दर्शनसे बहु दिनका अभिलाष पूर्ण हुआ और मन एयं प्राण आनन्दसे फूल उठा। फिर यह ब्रह्मकुण्डके तीर बनमें कृष्णदर्शन पानिकी ध्यानयोगसे बैठ गयीं।

उधर परशुराम पण्डित कन्याके विरहसे अत्यन्त

घबरा देगदेगान्तर घुमते घुमते हन्दावन पहुँचे थे। उन्हें बहु बन और बहु स्थान टूटते भी कन्याका कोई सन्धान न मिला। अन्तकी वह एक दिन किसी विशाल वृक्षकी उच्च शाखापर घट चारी और देखने लगे। देखते देखते उन्होंने हठात् ब्रह्मकुण्डके तीर निविड बनमें करमा वार्द्धकी बैठे पाया। वह घबराकर वृक्षसे उतरे और माधियोंकी ले कन्याके निकट पहुँचे। किन्तु उन्होंने अपनी कन्या विभिन्न पायी थी। संसारकी अनिष्टता करमा वार्द्धके देहमें न रही। समुदाय शरीरमें तपःप्रभा चमकती थी। सुखमण्डल एक आययं ज्योतिसे] पवित्र रहा। फिर यह शास्त्रज्ञान न रख ध्यानमें मग्न थीं। वस्तुस्थितिसे प्रेमानुको धारा बहते रहीं। कन्याकी ऐसी अवस्था देख परशुरामका हृदय फटने लगा। फिर वह करमा वार्द्धको कन्या समझ न सके। अन्तकी अत्यन्त घबरा परशुरामने इन्हें साष्टाङ्ग प्रणिपात किया।

बहुषण पीछे इन्होंने वस्तु खोले थे। समग्र पिताकी देख करमावार्द्धने नीरव प्रणाम किया। फिर यह नीरव ही बैठ रहीं, मानो पिताकी कहीं देखा नहीं। पण्डित परशुरामने विनयपूर्वक इनसे नौटनेकी कथा और घरमें बैठ कृष्णचिन्तामें मगनेकी अनुरोध किया। किन्तु यह किसीप्रकार उसपर स्वीकृत न हुयीं। इन्होंने पिताकी उच्च आया छाड़ने पर अनुरोध किया और सर्वदा कृष्ण-कृष्ण रटनेकी उपदेश दिया। कृष्णनाम सेनेकी उपदेश देते समय यह प्रेमसे मूर्च्छित हुयीं एव पुनर्वां अपने आप मानो चेत उठीं।

परशुराम पण्डित कन्याकी ऐसी प्रसाधारण भक्तिसे चौंक पड़े थे। वारंवार अनुरोध करते भी वह इन्हें वापस नाना न सके। अन्ततः परशुराम रोते-पीटते घर लौट पाये और राजाको जाकर सब हाल सुनाये। राजा भी विशेष भगवत् प्रेमिक रहते। वह करमा वार्द्धकी देखने हन्दावन पहुँचे थे। वहा साक्षात्कार होनेपर राजाने इनकी अनिच्छा रहते भी एक कुटीर बनवा दिया। इस कुटीरका ध्वंसावशेष आज भी हन्दावनमें विद्यमान है। किसी करमा

बाईका पुरीमें भी एक मन्दिर लड़ा है। इस मन्दिरमें जगन्नाथजीकी खिचड़ीका भोग लगता है।

हरमाल (हिं० पु०) कर्म, नदीक। यह मन्द् कीरल पक्षमें पड़ता है।

हरमाक (स० पु०) हरिगुण्ड तदाकृतवत् मासा समूहो यन्म। १ भूम च्वा। २ शिव बादल।

हरमासा (सं० स्त्री०) हर हरगुण्डि-पर्यं मासा एव अपसंख्या ईदुत्वात्। हरपर्यंक्ष्य मासा, सग निर्वेदि पोराकी जपनी। यनामिकाये मध्यदि अनि-छादि काम पर तर्जनींश्च मूलपर्यं पर्यंक्त कामय दय बार लप करमेकी हरमासा कहती है। इसमें मध्यमासा मूल पीर मन्म पर छूट जाता है।

“हरमालपरमिहकालं दक्षिणपर्यंतीनाम्।
स्यंतीवपर्यंक्तं हरमाला मवीरिमा ॥” (अथवा)

हरमासी (सं० पु०) सूर्य, पाऊताव।

हरमो (हिं० वि०) कामकारी काम करनीवाला।

हरसुहा (हिं० वि०) १ कृष्णवर्ण सुखविशिष्ट काका दहन रथनीवाला। २ कलहकुल, बदनाम।

हरसुख (सं० स्त्री०) करेक मन्दीला पराति प्रति सुखी, कर सुखल। विजा. य. ४५५. १. १ पक्षमिद, बरबा। (सि०) २ इन्द्रपुत्र, कामदे बड़ा हुआ। ३ मिश्र, कायिराम।

हरसुखा, परतम देवी।

हरमूल (सं० स्त्री०) मन्त्रिबन्ध कलासी।

हरमूसी (हिं० स्त्री०) इक्षु विमिय, एक पिक। यह एक पारस्य वृक्ष है। क्रुमायु पीर गङ्गाकर्म इषि पवित्र दिवसी है। काठ कठोर तथा रक्षाम पुसुरवर्ण होता है, यह वृक्ष एवं क्विपयन् निर्मापमें लगती है। हरमूसीके छोटे छोटे पात्र भी लगते हैं।

हरमिस (हिं० पु०) काठपण्ड विमिय, परमेर कुल बायो। यह हरगर्भमें लपर मन्त्रता है। हरमिसकी मन्त्रियाँ परेदि दबानि पर सुत पड़ता लतरता है।

हरमेतो चला पर देवी।

हरमोह (हिं० पु०) धान्वविमिय, एक धान। यह मार्मैशिय मासमें बढता है।

हरमोहा (सं० स्त्री०) नदीविमिय, एक दरया।

(विष्. मार्ग पीर मन्मन्व)

हरम्भ (स० जि०) क्षियति, ल-भम्भच्। इक्षुविमिय

विमो लम्भ। कन् मन्म। १ मियित, मिलावटी। (स्त्री०)

२ मिम्भक, मिलावट। (पु०) ३ दक्षिमिन्धित चाय, दही मिला पाना।

हरम्भक, चाय देवी।

हरम्भित (सं० जि०) हरम्भमिन्धयं जातो, एष हरम्भ-

इत्तच्। १ मियित मिला हुआ। २ पवित्र, खड़ा हुआ।

“मन्मन्तियर हरम्भित पीरिभन्मिन् इक्षुदरीरे।” (वीरटीपिच)

हरम्भी (स० पु०) बलम्भी माक, एक सब्जी।

बलम्भी देवी।

हरम्भ (स० पु०) केल लसेल रम्भते एकतीक्षियति बद्रुनामनेकायैत्यात् ल-रम्भ षण। चरतेरि च चरके

ईजम्भ। वा १५५। २। म्नेजन् विटी। वा ४५। १। १ दक्षि-

मियित सन्नु, दहीदार सन्नु। २ दम्भ यवमात्र,

बकेला, बहुरी। ३ पविरल पिठ यक, दरा हुआ

दाना। ४ मिन्मन्मन्, मिलावटी वू। ५ मियवृ, फल।

६ मतमूखी, सतावर। ७ मङ्गलिषे पुत्र पीर देवरातसे

पिता। ८ रम्भिषे म्भता। ९ लकसार निर्यासविष्,

एक लहर। १०, इक्षुविमिय एक फल।

हरम्भक (स० स्त्री०) हरम्भ जाये कन्। १ दक्षिमि-

यित सन्नु, दहीदार सन्नु। इसका पपर नाम कर्क

धार है। “मन्मन्तियदि मन्मन्तियन्मन् चरकवन्।” (लम्भ-

५। २) २ म्भेतविषिणी एक दरवृत्त। ३ पविरल

पिठ यक, दरा हुआ दाना।

हरम्भा (सं० स्त्री) केल लसेल बायुना रम्भते सिन्धते

विमोयंते वा, क रम लम्भ-त्याप्। १ यतापरी। २ मिन्मन्

इक्षु। ३ इन्दीवरा। ४ क्विष्णु देगीय लनामस्यात

एक रमबी। सुखमयीय पञ्चोचन रूपतिने इनके विवाह

बिया बा। हरम्भाषि भी गर्भमें देवातिबिया बन्ध

हुवा। (मन्म, पर्व २४१२)

हरम्भाद (बे० जि०) हरम्भ मन्मन् हरमेबासी। यह

पूजाका एक उपाधि है।

हरम्भि (सं० पु०) यकुन्वीय एक राका। इनके

पिताका नाम मङ्गलि पीर पुत्रका नाम देवरात बा।

करर (हि० पु०) १ विपलमिषिष, कोरि, अङ्ग-रीला कीडा । इसका शरीर यन्त्रिविशिष्ट होता है । २ अश्वविषिष, किसी रंगका एक घोडा । ३ हस्त विषिष, एक पेड । इसे जङ्गली कसुम कहते हैं । यह भारतके उत्तर-पश्चिम पञ्जाब प्रभृति देशमें अधिक उत्पन्न होता है । पोलोका तेल इसीके बीजसे निकलता है । अफ्रीकी अथवा सोमनामा उक्त तैलसे प्रस्तुत करते हैं । कररमें पुष्प बहुत आते हैं । काष्ठ सृष्टु रहता है । शाखा एवं पत्र पशुका श्राव्य है ।

कररना, कररना शब्द ।

कररान (हि० स्त्री०) धतुःके आकर्षणका शब्द, कामान् चदानेकी भावाञ्ज ।

करराना (हि० स्त्री०) १ मरराना, चरराना, टूट फूट जाना । २ कठोर शब्द कहना, कडे पडना ।

कररी (सं० स्त्री०) करिदन्तमूल, हाथीके दांतकी जड़ ।

कररो (हि० स्त्री०) गन्धशटी, वनतुलसी ।

कररुह (सं० त्रि०) करे कारागारि हस्तो न वा रुहः । १ कारागारमें भावद्व, कैद खानेमें पड़ा हुआ । २ हस्त द्वारा पाषड, हाथसे रुका हुआ ।

कररुह (सं० पु०) करान् रोहति उत्पद्यते, कररुहक । १ गण्ड । पा ११११२५ । १ नख, नाखून । २ अङ्गुलि, अंगुली । ३ कपाण, तलवार । ४ नखी नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज । ५ अगर्वादि धूप ।

कररिखा (सं० स्त्री०) कररिखा, हाथकी लकीर । सासुद्रिककी मतानुसार यह शुभाशुभ फल देती है ।

कररिचक्र रत्न (सं० स्त्री०) तल्यसुद्राविषिष, नाचमें हाथका एक घुमाव । यह अत्यन्त कठिन होता है । इसमें दोनों कर कटिपर रख स्वस्तिकके सहारे सस्तक पर्यन्त पहुँचाते और मण्डलाकार बनाते हैं । पुनर्वा एक कर नितम्ब पर लाया और अপর कर चक्रकी भांति घुमाया जाता है । इसी प्रकार दोनों कर झुका करते हैं । इसकी पीछे लपेट लगा और फेला दोनों कर स्वस्थके निकट घुमाना पडते हैं ।

कररिह (सं० स्त्री०) कररिह ऋषिः । १ करसम्पत्, हाथकी दौलत । २ करतानी, हथेलियोंकी भावाञ्ज । ३ करतान, एक वाजा ।

करन (सं० पु०) अपित्य हस्त, कौवेका पेड ।

करन (हि० पु०) कटाह, कडाह ।

करना (हि० पु०) अङ्कुर, किमा ।

करनी (स्त्री०) करना शब्द ।

करलुरा (हि० पु०) जताविषिष, एक वेल । यह कण्टकाकीर्ण होता है । पुष्प जेत एवं पाटन निकलते हैं । भारतवर्षमें करलुरा सर्वत्र मिलता है । फर-घरीसे मयी तक पुष्प आते और अगस्त मितभरको फल लग जाते हैं । पुष्पीका अचार बनता है । शाखा-पत्र आदिमें हाथीको बहुत पच्छे आते हैं ।

करवंठ (हि० स्त्री०) सताविषिष, एक वेल । यह युक्त प्रदेश, बङ्गाल, टाचिणाल्य और सिंदलमें होती है ।

पत्र ४।५ इह दोर्घ गोर पुष्प पीतवर्ण लगते हैं । कर-वंठकी कोमल शाखासे छाजन छाते या टौरी बनाते हैं ।

करवट (हि० स्त्री०) १ करवत, दक्षिण वा वाम पार्श्व लेटनेकी स्थिति । (पु०) २ करपत्र, करवत, भारा ।

करवत (हि० पु०) करपत्र, भारा ।

करवर (हि० स्त्री०) विपद्, आफत, प्रौञ्च ।

करवरना (हि० स्त्री०) कलरव करना, चहकना ।

करवल (हि० स्त्री०) कास्यमिश्रित रोष्य, जस्तामिनी चांदी । करवल रूपमें दो आने कांस्य धातु रखती है ।

करवा (हि० पु०) १ पात्रविषिष, एक जोटा-जैसा बरतन । यह मट्टोसे टाँटीदार बनाया जाता है ।

२ जोनिया, घोड़िया । यह नाहेमें बनती और जहाज-में लगती है । ३ मत्स्यविषिष, एक मछली । यह पञ्जाव, बङ्गाल और दक्षिणमें मिलती है ।

करवा-गौर (हि० स्त्री०) कातिक क्षणचतुर्थी, कातिक भस्त्रोके प्रथमे पाशकी चौथ । भारतवर्षमें उस दिन सौभाग्यवती स्त्रिया गौरीका व्रत रहती हैं । साय-कान्त मट्टोके करवेसे चन्द्रमाको अर्घ्य दिया जाता है । पक्कान्गुह करवेका दान भी होता है ।

करवाचौथ, करवागौर शब्द ।

करवाना (हि० स्त्री०) करवाना, काममें लगाना ।

करवार (सं० पु०) करं वृणोति वारयति आक्रमणकारिभ्यो वा, कर-व-वण् । कर्मवण् । पा ४।१।४ कपाण, तलवार ।

कषाय, कटु और उष्णवीर्य होता है। ब्रण, चक्षुरोग, कुष्ठ, घत, क्षमि और कण्डु प्रभृति रोगपर इसका मूल नगया जाता है। करवीरका मूल विपाक है। (अष्टांग, भावप्रकाश, गण्डर्ष) इकीमी किताबोंमें इसका नाम खरज्जुरा लिखा है। यह प्रदाह और स्फोटक निवारक होता है। यह लगानेमें ही आता, खानेमें क्या आटमी क्या खानवर सबके लिये जड़रका काम कर जाता है। मीर मुहम्मद हुसेन नामक मुसलमान इकीमने कहा,—कि कनेरका मूल अपर सकल स्थानमें विषमय पड़ते भी सर्पके काटनेपर विष-निवारक ठहरा है। कोडामकोडा मारनेको इसका मूल प्रयोगमें आता है।

स्त्रिया अनिक समय करवीरका मूल खा आत्म-हत्या करती हैं। इसीसे दक्षिणदेशमें स्त्रियोंके मध्य विवाद उपस्थित होनेपर कहा जाता है—कनेरके पास जावो। डाक्टर डाइसकके कथनानुसार करवीरके मूलमें तीव्र हृदयि होता है। इसका ००००१६ ग्रैन मात्र एक मेंडककी विचाराया गया था। १४ मिनट पीछे ही उसकी हृदयगति रुक गयी। इसका मूल खानेसे दिलका चक्कर और पसनिंका निरुद्धना बन्द हो जाता है।

करवीरपुष्प हिन्दू देवताओंको प्रति प्रिय है। फिर इसका पत्र एवं बल्लक सुखा बाटकर लगानेसे सर्वप्रकार चर्मरोगको उपकार पहुँचाता है।

करवीरक (सं० स्त्री०) करवीरवत् कायति प्रकाशते, कै-क वा करं वीरयति, वीर विक्रान्तौ श्वुल् । १ अर्जुन वृक्ष । २ करवीर, कनेर । ३ खड्ग, तनवार । ४ करवीर मूलरूप विष, जड़रीली कनेरकी जड़ ।

करवीरकन्दसंघ (सं० पुं०) करवीर कन्द इति संज्ञा यस्य । तैलकन्द ।

करवीरका (सं० स्त्री०) मनः-गिला ।

करवीरशी (सं० स्त्री०) पुष्पवृक्ष विशेष, एक फूलदार पेड़। कोदण्ड देशमें इसे 'ककर-खिरनी' कहते हैं। यह शीघ्र फलते होती है। पुष्प रक्त लगते हैं। करवीरशी तिक्त, उष्ण एवं कटु रहती और कफ, वात, विष, आघानवात, हृदि, कर्ष्य ग्राह्य तथा क्षमिको दूर करती है। (वैद्यकविषय)

करवीरतैल, करवीरवत् देवोः ।

करवीरपुर (सं० स्त्री०) करवीर देवोः ।

करवीरभुजा (सं० स्त्री०) करवीरभुजः गात्रा इव भुजः गात्रा यस्याः, वदुत्री० । आटकी वृक्ष, अडहरका पेड़ ।

करवीरभूया (सं० स्त्री०) करवीरस्य भूषेय भूषा यस्याः । आटकी, अडहर ।

करवीराद्य (सं० पुं०) खर राजसका सेनापति ।

करवीराद्यतैल (सं० स्त्री०) करवीरं प्रायं प्रधानं यत्र, वदुत्री० । तैल विशेष, कनेरका तैल । श्वेतकरवीरके मूलका रस, गोमूत्र, चिक्क और विडङ्ग डाल यथाविधि तैल पक्षानेमें यह शीघ्र प्रस्तुत होता है। इसमें तिनतैल ४ शरावक, करवीरादिककन्द १ शरावक और जल १६ शरावक पड़ता है। करवीराद्य तैल कुष्ठरोग और भगन्दरको दूर करता है ।

श्वेत करवीरका मूल और विष समभाग कृत्पीप गोमूत्र एवं तैलमें यथाविधि पाक करनेसे श्वेत करवीराद्यतैल प्रस्तुत होता है। इसके लगानेसे चर्मदन्, सिध, पामा, विष्मोट प्रभृति रोग मिटते हैं ।

रक्त करवीर, जाती, पीतमान्त एवं मसिकाका पुष्प समभाग और मक्के बराबर तैल यथाविधि डालकर पकानेसे जो तैल बनता, वह नासारोगको दूर करता है ।

करवीरानुजा (सं० स्त्री०) आटकी, अडहर ।

करीवीरिका (सं० स्त्री०) मनः-गिला ।

करवीरी (सं० स्त्री०) किरति विक्षिपति दानवराक्ष-साटीन्, क अच् करः वीरः पुत्रो ऽस्याः । १ अदिति । २ पुत्रवती, जिस औरतके बहादुर सड़का रहे । ३ श्रेष्ठगवी, अच्छी गाय ।

करवीर्य (सं० पुं०) करवीरपुत्र भवः, करवीर-यत् ।

१ घन्वन्तरिके प्रति आयुर्वेद प्रत्यक्षात् ऋषि विशेष, एक पुराने इकीम । २ बाहुबल, हायका जोर ।

करवील (हिं० पुं०) करोल, करीर, कचड़ा ।

करवीया (हिं० वि०) कर्ता, करनेवाला ।

करवीटी (हिं० स्त्री०) पक्षिविषेय, एक चिडिया ।

इसे करचीटिया भी कहते हैं ।

करभाषा (सं० श्लो०) करस्य भाषा इव । १ चतुःश्लो ।
इषभा संज्ञकत पर्याय पचय, पयसा, चिय, त्रिय,
ग्रयं रचना, शीति, पचयं, त्रिय, चयसा, पचयि हरिण
पचमार, कामि, रनामि, योक्त योचन, पूर याजा
पयोमु, दौबिति चौर गमयति ई । (११११७ २७)

करगोकर (सं० पु०) करान् करिमुष्णान् निःसृजन्
गोकरं करस्य गोकरो वा । १ इन्द्रिमुष्णनिघण्टे
अनकचा ज्ञायोको मुहमे जेजा बुवा पागो । इषभा
पपर संज्ञकत नाम वमद्यु ई ।

“इषामन्दि मन्वन्तु रना निरिणः करगोकरिच ।” (११)

२ वमन, कौ इति ।

करगुह्रि (सं० श्लो०) करस्य गुह्रि, इ-तत् । इषगो
वन हाय को सपारि । ‘पञ्च मन्व पञ्च गन्धपुत्र द्वारा
इन्द्रायोचन करते हैं । “अनपचयिचयसा” करगुह्रिच
मन् । (मन्वार) वृक्षादि कार्येण चयसादि न्यासके पीठे
श्री करगुह्रि पातो ई ।

करगु (सं० पु०) इषयिभिय, एक पेड़ । यह विमाल
पुत्र लब्धा हरिद्वयं बना रहता है । पचयानिष्ठानसे
भुटान्तक करगु पाया जाता है । काष्ठ सुहृद् होता
है । पञ्जार (बीयसा) पति उत्तम निष्कन्ता है । पत्र
पदपाय है । बीजापकका कीट करगुपर प्रति
पाकित होता है ।

करगूक (सं० पु०) करस्य करे वा गूकं स्रग्माय
स्रग्माय इव वा । नक्ष मायुन ।

करगोच (सं० पु०) इषगोच, कजायोको सूत्रन ।
करगता (का० पु०) पाचयं कर्मं यमोषा काम
कागू वाजाको ।

करव (सं० श्लो०) करं ईको ।

करवक (सं० श्लो०) करव ईको ।

करवना, करवना ईको ।

करम (सं० श्लो०) त्रियते यत् क-पञ्चन् । कर्म काम ।

“इति श्लोके करवन्दि निरा निरा मन्व निरुते करदि ।”

(पच १११००)

करन (सं० पु०) कर्येण चुर । यह चांग सुनमानेसे
काम जाता है ।

करसना (सं० श्लो०) १ पाचयं चरना, चोचना,
चरीटना । २ सुधान, सुराता । ३ एकस्य करना, समिटना ।

करसनी (सं० श्लो०) मताविभिय एक शिला । यह
उत्तर भारतमें उत्पन्न होती है । पत्र ३।६ रस्य शीर्ष
चौर इसरवर्ष रोमसे पाच्यकृत रहता है । चरचरी
चौर माघ माघ पुष्य पारि है । पत्र पचषड रंगसे बैयनी
प्राप्ती तैयार होती है । मूल एवं पत्र औषधमें पड़ता
है । करसनीका चरर नाम चौर है ।

करसना (सं० श्लो०) चरना ईको ।

करसम्भव (सं० श्लो०) रोमकनपच, चामर नमक ।

करसा, करव ईको ।

करसाइस करवमच ईको ।

करसाद (सं० पु०) करस्य सादं पचयकता, कर
सद भाई वम । १ इन्द्रोदौर्ध्व, हायको कमजोरी ।

२ तिरचको पचयकता, शुभावोका कुर्मिस्तार ।

करसाधन (सं० पु०) कसाच, चिसान ।

करसायत, करवमच ईको ।

करसायल (सं० पु०) कसायत, काका हरिण ।

“नमो इषगो जीवु ई मने रते श्री जीव ।

करवकवके इमिची ईई वमनन चीन ।”

करसो (सं० श्लो०) १ करच कण्ठेका चूरवार ।
२ लपका, लपरी ।

करसुत्र (सं० श्लो०) कर् चित्तं सुत्रम् क-तत् ।
१ दण्डका सुत्र सुत्र, हायका मारीक सुत्र । २ विधा
हादिकासीन मङ्गलायं इषाहृत सुत्र, रषिया, कर्मन ।

करस्योको (सं० पु०) करं क्वासीन पचय । महादिय ।
केसे क्वासा (इषो) में पाच पड़ता, वैने को प्रलय
काल महाकासकप महादेवसे हाय सनुदाय मृत
मरता है ।

“अपचय करसनी का वचनने वसान् ।” (नारक चतु १०५)

करस्य (सं० पु०) करं प्पाति करोति चानुमानेका
यंसात्, क चय या क । कर्मकर मादू काम करने
वाला मादू ।

“इत्तु वना चरका चरुने मुदि ।” (पच १११२)

करस्यान (सं० श्लो०) सुसोतगत करचविभिय,
माचका एक रंग । इसमें प्रोवा लचकर रजानो प्रातो

है। फिर नतंका पुथिवी पर पड़ता और कुक्कुटासन बना उभय हस्त उलटा करता है।

करस्मा (हिं) कर्प्मा देखो।

करस्त्रन (सं० पु०) हस्तध्वनि, हाथकी आवाज, ताल।

करह (हिं० पु०) १ करम, ऊंट। २ पुष्पकमिका, फूलकी कली।

करहंस, करहञ्ज, करहञ्ज, करहन्त (हिं०) करहञ्ज देखो।

करहकटङ्ग (हिं० पु०) गठकरङ्ग, मानवके सूखेकी एक सरकार। यह अकबरके समय बनी थी।

करहञ्जा (सं० स्त्री०) समाचर कन्दोविशेष, सात घरफकी एक बहर।

करहनी (हिं० पु०) धान्य विशेष, एक भ्रगहनी धान। यह अग्रहायण मास कटता है। इसका तण्डुल बहुदिन पर्यन्त चलता है।

करहा (हिं० पु०) श्वेतगिरीय वृक्ष, सफेद सरिसका पेड़।

करहाई (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक वेल।

करहाट (सं० पु०) करेण विकिरणेन हाथ्यते दीप्यते, कर-हट-णिच्-घण्। १ पद्मादिका मूल, कंवलकी जड़। इसे सुरार और भसोड भी कहते हैं। २ मदन-वृक्ष, मैनफल। ३ महापिण्डीतक, बड़ी खजूरका पेड़। ४ अकर्करा। ५ देगविशेष, एक सुक्त।

करहाटक (सं० पु०-स्त्री०) करहाट इव स्वार्थे कन्। अथवा करं हटयति, कर-हट-णिच्-ग्वल्। १ मदन वृक्ष, मैनफल। २ कमलकन्द, सुगर। ३ कमल-पलान्तर्गत छत्र, कमलका भीतरी छाता। यह प्रथम पोतवर्ण रहता, किन्तु बटनेसे दरिद्वर्ण निकलता है।

४ जनपदविशेष, एक बसती। (भारत, चमा०) पाज-कल इसे कराट कहते हैं। कण्ठ देखो। ५ स्वर्णका हस्तालङ्कार, हाथमें पहननेको सोनिका गहना।

करही (हिं० स्त्री०) बालका बचा हुआ दाना। जो दाना कूटने पीटनेपर भी बालमें लगा रह जाता, वही करही कहाता है।

करा (हिं०) कर्त्ता देखो।

कराहत (हिं० पु०) हाथसर्पविशेष, एक काला सांप। यह अत्यन्त विषमय होता है।

कराहन (हिं० स्त्री०) छप्परके ऊपरकी घास।

कराई (हिं० स्त्री०) हिदलत्वक, दानका छिनका।

कराङ्गुन (हिं०) कणापुर देखो।

करांत (हिं० पु०) करपत्र, करौत, पारा।

करांती (हिं० पु०) करपत्र बनानेवाला, पाराकग, जो आग्ने लकड़ी घेरता हो।

करागार (सं० पु०) करम्य पागारः। राजस्वके आयका स्थान, खिराज आनेकी जगह।

कराय (सं० पु०) करिपुष्कर, हाथकी सूंडका मिरा।

करायपल्लव (सं० पु०) पद्मलि, उंगनो।

कराघात (सं० पु०) करेण भाषानः, ह-तत्।

१ हस्ताघात, हाथकी मार। ठूंसे, वृंसे, घप्यड़ वगैरहको कराघात कहते हैं। २ वृक्षाङ्गलि, अंगूठा।

कराङ्गण (सं० स्त्री०) करम्य पद्मनम्, ह-तत्।

१ राजस्व भादायका स्थान, महसून पहनेकी जगह। २ छाट, बान्जर।

कराङ्गलि (सं० पु०) करम्य अङ्गलिः, ह-तत्। हस्ताङ्गलि, हाथकी उंगली।

कराची—भारतके सर्वपश्चिम प्रदेशस्थ सिन्धुदेशका एक जिला और नगर। इससे उत्तर शिकारपुर, पूर्व हैदराबाद जिला तथा सिन्धु नद, पश्चिम सागर एवं बलूचिस्तान और दक्षिण कोरी नदो तथा सागर है। कराची जिले और बलूचिस्तानके बीच बहुत दूर तक छाव नदी सीमास्वरूप प्रवाहित है। यह जिला उत्तर-दक्षिण प्रायः २०० मील टीघं और पूर्व-पश्चिम ११० मील विस्तृत है। परिमाणफल १४११५ वर्गमील है। कराची शहर जिलेका मटर सुकाम है। सिन्धु नदके मुहानेसे बलूचिस्तानकी पूर्व सीमा पर्यन्त कराचीका भूमिभाग सकल स्थल पर समान उच्च नहीं आता। पश्चिमांगमें कोहिस्तान नामक उपविभागके मध्य कितना हो पावंत्य प्रदेश पड़ता है। बलूचिस्तानके पूर्वांशस्थित हाला पर्वतसे कुछ पर्वतशिखर निकले हैं। इस पावंत्य प्रदेशके मध्य मध्य उर्वर उपत्यका आ गयी है। भूमिभाग साधारणतः दक्षिणपूर्वमुख नीचा है। उपकूल भागमें बड़े संख्यक चुट्ट सागरशाखाने प्रवेश किया है। देशके

अम्बनारने नदी किनारे वहुबन्ना बन गयी है। सिन्धु नद ही खानोब प्रवान नदी है। सिन्धु नद नदीधि इस जिलेके पश्चिमाय खलमि कल पाता है। बरा चीमे सिन्धु नद प्राय १२५ मील विस्तृत है। दक्षिण प्रायको सिन्धु बहु शाखामे विभक्त हो सागरमे जा सिमा है। इस शाखाको मति पत्यन्त परिवर्तनशील है। पक्षे सीता पीर बाबियार शाखा बहुत विस्तृत हो। लक्षण खल्लन्द प्राति-जाते है। सिन्धु १८३० ई० मे बाबियार नदीका बल निच पक्षमे पकड़ बहता है। प्राचीन झोत समया बन्द हो गया। बागना नामक शाखाके तीर बराची जिलेका सुरागा माह बन्दर प्रवर्जित था। यह स्थान बहु दिन पूर्वतक कलहोरा राजबन्धका जहाजे बन्दर रहा। फिर यहां कुछे जहाज भी ठहरते थे। सिन्धु पानकल इस स्थानमे नदी प्राय १० मील बट गयो है। पर जना मरो शाखा भी सिन्धुका प्रवान सुख माने जाती है। १८३३ ई० को यह शाखा पति सुदूर रही। छोटी नौका भी पति कहते पाते जाती थी। इस जिलेके बीच, ऊपरी भाग शिवदानमे 'मन्जर नामक एक ठहड़ ऊद भरा है। इतना बड़ा ऊद सिन्धु प्रदेशमे दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। बराचो नगरमे ७८ मील उत्तर पार्वय प्रदेशमे 'पीरमाचो' नामक स्थानपर कितने ही उष्य प्रखरक विद्यमान है। इस स्थानको प्राकृतिक गोमा पति सुन्दर है। भ्रमरकचारी प्राय इस स्थानको गोमा देखने पाया करते हैं। यहां एक दकदक भी है। इस दसदसमे परमद्व्य कुशोर रहते हैं। परपत्र जन्तुमे चीता, बाबना मेड़िया, शृगाल उल्लासुयो, जन्तु क हरिक पीर बन्धनेव प्रवान है। पश्चिमिमे यज्जुनिको सप्या बघिह पाते है। कोहिलानमे नामा जातीय तरी सय देख पड़ते हैं।

बराचो जिलेमे सुसज्जमानोबी जो सप्या धर्मा पेसा प्रविष्ट है। फिर सिन्धुको पीर दूसरे कोसीको गरना खगती है। सिन्धुकोमे ज्ञाप्य, राजपूत पीर कोहामे प्रविष्ट देख पड़ते है। पन्थाय जातिमे जेन, ईरानी, यज्जरी पीर बीह है। बच किता बराचो,

शिवदान, शोबक पीर माहबन्दर नामक चार उपनि भागमे विभक्त है। बराचो, शोस्टो, शिवदान, तुबक, कदु, डाठा, शिती बन्दर, मसहन्द, पीर मोरपुर बतौरा नगर प्रवान समझा जाता है। बराची, शिती पीर शिवमख (शोमख) तीन बन्दर हैं।

खानोब कोनीके सपनानुसार डाठा नगरमे शोक सघाट् पञ्चवन्दर (शिवन्दर)-के शिनापति निशान कस पारपत्र सागरको मने है। शिवदान नगरमे शिती पति प्राचीन पुर्नका मन्त्राधिपिय विद्यमान है। पनेक शोक कहते कि ठहड़ दुर्गके निर्माता भी पञ्चवन्दर हो रहे। बराची जिलेका पति पञ्च स्थान हो बोया जाता है। हठि, नूप पीर निर्भरके कल पर हो लपिजायं पचता है। मखोरमे ज्वार बापरा, यह पीर रहुकी उपन है। शीबक पीर माहबन्दरमे निकटवर्ती स्थानमे चाबक, गीझ, लख, मकर, कई तथा तम्बाकू पोते हैं। कोहिलानके पार्वय क्षेत्रमे शिती प्रकारका मय्य नहीं होता। यहांके लोग प्राय हवाहारो हैं। पद्यमाचो हो जीवन वारध करती है। यहां तीन पसके होती है। एक ज्येष्ठ-पायाकुमे शोरो पीर कार्तिक पपहावपमे बाटो जाती है। दूसरी कार्तिक-पपहावपमे पड़ती पीर वैशाख ज्येष्ठ कहती है। तीसरोको पाक्युन-जेठमे हाक पायाठ वारध मास काट लेते है। बराची जिलेका प्रवान पञ्च इय्य कई, गीझ पीर लन है।

माहबन्दरके निकट शोमण्ड खानोमे बघिह कवच निचकता है। कपतान बार्बमे १८४० ई०को खानोब लवकनार दिख बहा था 'इस लवकमे ज्ञमार्गित ४० पत्थर समस्त इधियोका निर्वाह हो सकता है।' सिन्धु लवकके दुस्तका परिमाव विद्युप रहनेके शोई व्यवसाय पसा नहीं सकता। सधुद्रमे मख्य पकड़नेका काम भी होता है। मुहाने लुचक मान यह व्यवसाय करती है। डाठा नमरो कुती नामक शीतलक पीर इबक नगर खानोबके शिथि विद्यता है। बराची जिलेके पश्चिमाय नगर सिन्धु के इतिहासके विषय में प्रसिद्ध हैं। पन् ६५०।

बराची नगरमे सिन्धु प्रदेशका शिनावास स्थान

है। इसी नगरसे विलकुल दक्षिण कराची उपसागर है। उपसागरके एक पार्श्वपर मानोरा अन्तरीप पड़ता है। मानोरा अन्तरीप और क्लिकटन नामक स्वास्थ्यनिवासके बीच कराची उपसागर प्रायः माट्टे तीन मील विस्तृत है। किन्तु प्रवेशका सुष्ठु शैविकी पर्वत (सुष्ठु सुष्ठु पार्वत्य द्वीप) और कियामारी नामक द्वीपसे रुका है। मानोरा अन्तरीपमें एक शालोकस्तम्भ है। इस शालोकस्तम्भके पश्चात् एक सुष्ठु दुर्ग भी खड़ा है।

१७२५ ई०की सहां हाव नदी सागरसे मिली, वहां खड़क नामक एक नगरी रही। उस समय खडकका व्यवसाय वाणिज्य बहुत विस्तृत था। क्रमशः कालान्तरपर खड़क बन्दरके प्रवेशका पथ बालूने रुक गया। फिर थोड़ी दूर दक्षिण वर्तमान कराची नगरके स्थानपर 'कलाचीकूप' नामक दूसरा सुष्ठु नगर रहा। इसी स्थानसे कराचीकी चारो ओर व्यवसाय वाणिज्यका नेतनदिन बढ़ा। क्रमशः यहां दुर्ग बना था। फिर मसकट नगरसे तोप मंगा दुर्गकी रक्षा की गयी। अन्तकी शाहबन्दरका व्यवसाय विलकुल बन्द हो जानेसे यह स्थान मच्छदियानी हुवा। जोगोर्कि विश्वासानुसार उक्त कलाची नामसे ही 'कराची' शब्द निकला है।

कराचीन (सं० पु०) सुष्ठुम, खडरैचा।

कराट (सं० स्त्री०) कराय विज्ञेयाय अटति, अट-अच्।
अपड, तमाचा।

अपरतग्राम काशी जिलेका एक ग्राम।

(मसि० अष्टाध्याय ३११४)

कराट (हि० पु०) १ अथ करनेवाना, महाजन, जो मान खरीदता हो। २ वणिक् जालिविशेष। यह वनिये पञ्चावमें उत्तरपश्चिम रहते हैं। महाजनी इनका धम्मा है। ३ नदीके ऊपरका हिस्सा, टीला। मध्यक् उध नदीतटको कराट कहते हैं।

कराट—१ बम्बईप्रायस्के सतारा जिलेका एक विभाग। इसकी भूमिका परिमाण ३६५ वर्ग मील है। महा-भारतमें मच्छदयन्ती नगरीके साथ 'करहाटक' नामसे इस स्थानका उल्लेख प्राया है।

“नगरी मच्छदकीच पपणं करहाटकम्।

दुर्तेरेव वधे चक्रे करचे नामदापयत् ॥” (ममा १६१०)

दाक्षिणात्यवाले बनवासी प्रभृति प्राचीन स्थानके किसी किसी गिलाफलकमें भी कराटका नाम करहाटक लिखा है। स्कन्दपुराणके मच्छाद्रिखण्डमें यह भूभाग काराट्ट नामसे उक्त है। मच्छाद्रिखण्डके मतसे काराट्ट कोयनासङ्गमके दक्षिण और वेदवती नदीके उत्तर मय मिलाकर १० योजन पड़ता है।

“वेदवतीकोरु तु कोयनासङ्गदक्षिणे।

काराट्टनाम देश्य दुष्टदेश्य प्रकीर्तितः ॥” (वसपार्श्व २।३)

यहां नृचाधिक हिन्दू रहते हैं। उनमें कराट्ट ब्राह्मणोंकी ही संख्या अधिक है। कराट्ट-ब्राह्मण देखो।

२ कराट्ट विभागका प्रधान नगर। यह कृष्णा एवं कोयना नदीके सङ्गम स्थान, अक्षा० १७° ६६' ४०" तथा देशा० ७४° १३' ३०" पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ११ लक्ष है। उसमें ८ हजार हिन्दू निकलते हैं। सब-जनकी भदामत, डाकघर, औपधास्य प्रभृति विद्यमान है।

कराट्ट-ब्राह्मण (काराट्ट ब्राह्मण) महाराष्ट्र ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। जन्मभूमिके अनुसार यह ब्राह्मण भी कराट्ट कहते हैं। स्कन्दपुराणमें इन्हें अतिनिम्नित और दुष्ट सिखा है—

“काराट्टो नाम देश्य दुष्टदेश्यः प्रकीर्तितः ॥३॥

सर्वं लोकाय कठिमा दुर्गा पापकर्मिणः।

तद्देश्ये यत्रासु काराट्टा इति नामतः ॥४॥

पापकर्मरता मद्याभिवारिसमुद्रभाः।

अरस्य ह्यस्थियोगिन रतः चित्त विभावकम् ॥५॥

तेन तेषां समुत्पत्तिर्जाता ये पापकर्मिणाम्।

तद्देश्ये माळवदेशी महादुष्टा ह्युपिपी ॥६॥

तस्मा पूजा यदापि च ब्राह्मणो दीयते त्वयिः।

ते षष्टिगोवशा मद्या ब्रह्महत्यां करोति च ॥७॥

न ह्यवा येन सा हत्या कुर्म सद्य चर्यं त्रयित्।

एव पुरा तथा देश्या वरी दत्तो विश्वा क्विल ॥८॥

तेषां संसर्गमात्रे च सचेतं ज्ञानभाषरेत्।

तेषां देश्यानरे यापुनं प्राप्ते योजनमधम् ॥९॥

केवल विपनाप्रति पातर्कं अविदुषरम् ॥” (मच्छाद्रिखण्ड २।१६ ५०)

कराट्ट ब्राह्मण सकल ही शाक्त होते हैं। लोग कहते—पहले इनमें प्रति वर्ष देवी शक्तिके उद्देश्य एक

ब्राह्मणवर्षिय-बलि चढ़ानेकी प्रथा रही। १८२८ ई०
 पीछे यह प्रथा एक बालक मर गयी है। इनका पाचार
 व्यवहार अनेक अंगमें परम महाराष्ट्रके मिलता है।
 सुप्रसिद्ध महाराष्ट्र बलि सोरोपत्य कराड़ ब्राह्मण हो
 से। इनमें सिद्ध गौत्र और अनेक कर देख पड़ते हैं।

यथा—

गौत्र	५२
ब्राह्मण गौत्र	७२
पतिगौत्र	७३
महाराजगौत्र	७७
कमदस्त्रिमोत्र	७९
वशिष्ठगौत्र	८०
श्रीगणेशमोत्र	८७
नेत्रुवमौत्र	२४
श्रीतममौत्र	११
भार्यगौत्र	१३
सुब्रह्मगौत्र	८
विष्णुमिश्रमौत्र	१
बाहरावपगौत्र	१
श्रीपिण्डमौत्र	१
कपलमौत्र	१
पाण्डुरसमौत्र	१
सोदितानमौत्र	१
वेणुमौत्र	३
शाण्डिल्यमौत्र	३
कुचमौत्र	३
वासुदेवमौत्र	३
भार्यमौत्र	३
पार्ष्णिमौत्र	३

नरणा देवी।

कर्णाटक प्रदेशमें कराड़ ब्राह्मण मिलते हैं।
 यह चित्तदाबनोधि मिलते सुलते हैं। वर्ष कुच
 पत्रिक बाला रहता है। द्विपौत्री पाण्ड भूरी
 या मोरी नहीं होते। विजयपुरा, भार्यपुरा और
 महालक्ष्मी इनही कुलदेवता हैं। महिपुर राज्यके
 महाराजस्य सुद माने जाते हैं। यह प्रतादि और

ब्रह्मवादि दूसरे ब्राह्मणोंकी भांति नम्यव विद्या करते
 करते हैं। बालक विद्यासर्वोमें पढ़ते हैं। कराड़
 यह व्यवस्था, पतिविधेयी धोर पाशाकारो होते हैं।
 इनमें कोई व्यवसायो, कोई ज्योतिषी और कोई मिह्वक
 हैं। अष्टमेद इनका प्रधान वेद है।

कपल (वि० पु०) कोराय, ३ ओकी तील। इससे
 कर्च, रीज या पोचक तैलते हैं।

कराना (वि० वि०) कार्यमें समाना, करवाना।
 करावत (प० श्री०) १ भासवता, इतिपाठ, नम-
 दीवी। २ सम्पन्न पपनावत।

करावतदायी (पा० श्री०) सम्बन्धिमात्र, रिखतेहारी।
 कुरावा (प० पु०) काचपात्र विधिय, मीमिका एक
 वरतन। इसका पाचार उचत् और सुच सुद
 रहता है।

करामर्द (प० पु०) कर या ब्रह्मन् मर्याति कर-
 या सुद-पत्र; करमर्दुच करदेका पिड़।

करामात (प० श्री०) पापयन्त्रापार, सिद्धि, करमा,
 धनहीनी। यह यन्त्र 'करामत' का बहुवचन
 है। करामात दिवानेवासेको करामातो (विध)
 कहते हैं।

कराम्युच (स० पु०) चीयंति विविप्यति पम्ब
 यन्मात् कृ कर्मणि अप्-अप। कर्मदाकर्म उच,
 करदेका पिड़।

कराण्ड, करण्ड देवी।

कराण्डक (स० पु०) कर कीवमाचं पम्ब यन्मात्,
 कर-पम्ब अप्। करमदक उच, करदेका पिड़।

करायजा (वि० पु०) १ कुट्टक कोरेया। २ इन्द्रयव।

करायन (वि० पु०) १ कसौत्री, मंगरेका। २ तेल
 या दूतने विद्या कृपा वैलवार, तेल या ची-में पकाया
 दूध मूग या इड़दबी दासका भोज। प्राण तर
 कारीरे भोजको सो करायन कह दिया करते हैं।

करायिका (न० श्री०) करारिव पाचरति कर्मवचन
 कासे करवचनमानत्वात्, कर क्यच्-स्य क टाप।
 कर्मवचनान्तरे। वा ११११। २ कलाकाययी छोटा वचना।
 ३ पथिमेद, एक विद्विवा।

करार (वि० पु०) १ नदीका एक तट, दरवाका

ऊंचा किनारा । यह पानीके काटसे निकल जाता है । २ ठौर ठीक ।

करार (अ० पु०) १ स्वैर्य, मजबूती । २ धैर्य, धीरज । ३ सुख, पाराम । ४ प्रतिज्ञा, कौल ।

करारना (हिं० कि०) कां कां करना, श्रुतिकट् शब्द निकालना । यह क्रिया काकपचीका बोलना बताती है ।

करारवीर—काशीका एक ग्राम । यह काशीसे ४ योजन दूर वायुकोणमें अवस्थित है । यवनपुर यहांमें बहुत मजबूतीक पहता है । करारवीरमें एक प्राचीन दुर्ग विद्यमान है । (मवि० ब्रह्मवल् १०१०१)

करारा (हिं० पु०) १ नदीका सञ्च तट, दरयाका ऊंचा किनारा । २ टीला, टूट । ३ करट, क्रीडा । ४ मिथान्न विशेष, एक मिठाई । (वि०) ५ कठोर, कडा । ६ सुदृढ, मजबूत, दिल्का कडा । ७ कडा सेका हुवा, सुरसुरा । ८ तीक्ष्ण, तेज । ९ चतम, अच्छा । १० बडा, भारी । ११ बलवान्, ताकतवर ।

करारापन (हिं० पु०) कठोरभाव, कडाई ।

करारी (हिं० पु०) इकरार करनेवाला, जो वचन दे चुका हो । २ उपासक सम्प्रदायविशेष । यह कानी, चासुण्डा प्रभृति देवीकी भयङ्कर मूर्ति पूजते हैं । भारतके नाना स्थानमें जो शलाकादि द्वारा अपना मांस छेद मिथा मांगते फिरते हैं, उन्हींको बहुतसे लोग करारी कहते हैं ।

करारोट (सं० पु०) करे आरोटते भाति, कर-आ-रुट-अच् । अङ्गुरीयक, अंगूठी, हाथका छप्पा ।

करारिपत (सं० वि०) हस्तसे अर्पण क्रिया हुवा, जो हाथमें दिया गया हो ।

कराल (सं० स्त्री०) कराय चक्षुरोगादिविधिपाय भलति शक्नोति, कर-अल्-अच् । १ पर्णस, काली तुलसी । २ घृतादि अष्ट वैशवार, करायल । (पु०) करं प्राप्नोति गृह्णाति अथवा भयप्रदर्शनाय भलति पर्याप्नोति, कर-प्रा-ला-क । १ सर्जरसयुक्त तैल । ४ दन्तरोग भेद, दातकी एक बीमारी । कुपित वायु दन्तका पात्रय पकड क्रम क्रम सब दांतोंको विहृत और भयानक भावसे उठा देता है । इसीको कराल रोग कहते हैं । यह असाध्य होता है । (भाष्यनिदान)

५ कम्पूरमृग, एक हिरन । ६ दैत्यविशेष, एक राजस । ७ गन्धर्वविशेष । ८ मत्स्यविशेष, एक मछली । ९ क्षप्यार्जक, कामा बवूस । (वि०) १० तुङ्ग, ऊंचा । दन्तुर, ऊंचे दांतवाला । ११ भयानक, डरावना । १२ प्रगस्त, खुना हुवा ।

करालक, रूप देखो ।

करालकर (सं० वि०) १ बलवान् इन्द्रविशिष्ट, ताकत-वर हाथ रखनेवाला । २ बलवान् गुण्डयुद्ध, जोरदार मूंड रखनेवाला ।

करालकनिक (सं० पु०) कुन्दपुष्पवृक्ष, कुन्दके फूल-का पेड़ ।

करालकेशर (सं० पु०) करालः केशरो यस्य । सिंह, गेर ।

करालविपुटा (सं० स्त्री०) करालानि वीणि पुटानि यस्याः । लहना नामक शिम्बी धान्य, किमी किम्पका पनाज ।

करालदंष्ट्र (सं० वि०) भयङ्करदंष्ट्राविशिष्ट, खूंखार दाट रखनेवाला ।

करालदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) करालाः दंष्ट्रा यस्याः । १ काली । २ भयानकदन्तविशिष्टा स्त्री, खीफनाक दांतवाली औरत ।

करालमञ्च (सं० पु०) सङ्गीततालविशेष, गानका एक ताल । इसमें तीन खाली और दो भरे ताल लगते हैं । मृदङ्गमें करालमञ्च इस प्रकार बोलता है—घा केटे खन्ता केटेताग गदिवेने नागदेते धा ।

करालम्ब (सं० स्त्री०) करं प्रात्तम्बते शरणाधिं गृह्णाति, लम्ब-अच् । १ करग्रहणकारी, हाथ पकडनेवाला ।

(पु०) २ हस्त द्वारा माहाय्य प्रदान, हाथकौ पकड ।

कराललोचन (सं० वि०) कराले लोचने यस्य । भयानक चक्षुविशिष्ट, डरावनी पाखोंवाला ।

करालवदना (सं० स्त्री०) करालं वदनं यस्याः । १ काली । २ भयङ्करमुखी स्त्री ।

कराला (सं० स्त्री०) कराल-टाप् । १ शारिका, अनन्तमूल । २ विडङ्ग ।

करालाङ्ग (सं० स्त्री०) विडङ्ग ।

करालानन (सं० वि०) करालं भ्राननं यस्य । भयङ्कर मुखविशिष्ट, डरावनी सूरतवाला ।

हरामात्र (स० सि०) दम्भुरवदन, शोषनात्र इति वासा ।

हरासिक (स० पु०) हरार्चा हरसङ्गयाद्यानां प्राणि चोर्ध्वम हरालक्ष्मणम् । १ इय पीड । २ हरबाह, तलवार ।

हरासिका (स० स्त्री०) दुर्गा देवी ।

हरासित (स० सि०) हरारु इतत् । भयबुद्ध हरारुवा । २ भयहर किया हुआ, जो शोषनात्र बना किया गया हो । ३ बड़ाया हुआ ।

हरासो (स० स्त्री०) हरारु-स्त्रीपू । १ पम्बो धातु विज्ञाने पन्तगत विज्ञानविधेय, प्राग्वही धातु बीभर्षि एक श्लोक ।

- "कसी हरसी न मनोरमा न कुशीरिका वा न इव हरर्षी ।
पू विविधी विवरणी न देवी शोषनात्रा एभि चर विज्ञा ॥"
(लघुश्रीपरिचय)

(पु०) २ महादीर्घान्वित पञ्च, मिश्रायत विषदार चोका । त्रिसुधे मेधि वा ऊपर एक बड़ा दांत निरुद्ध पात, यह चोका हरासो कहता है । (अरण्य)

हराय (सि० पु०) हर्म, कामकाज । यह यन्त्र मातः विद्यावादि हर्मके सिधे व्यवहृत होता है ।

हरावा, हारवैशो ।

हराखोट (स० पु०) हरैव खालोटः शब्दो यत् । १ बच-काशपर एक प्राय सङ्घित भावै रथ पन्थ चन्द्र द्वारा ताड़न, ताकटोकाव । २ हरावात, हाथ को मार ।

हराह (स० पु०) १ वैदनाद्युक्त हार, तन्मोष्य भी पावाह । शरीरमें पीड़ा होनेमें महत्त्व हराहता है । २ बड़ाह, शोईकी बड़ी अड़ाहो ।

हराहना (सि० सि०) पौकित हारके मोलाना, काँचना, हाथ हाथ करना ।

हराहा (सि० पु०) बड़ाह, बड़ी बड़ाहो ।

हराहो (सि० स्त्री०) बड़ाहो ।

हरि (सि० पु०) हरी, हाथो ।

हरिक (सं० पु०) हरी विधेनोऽपि पञ्च, वन् । विदुषदिर, एक धेर ।

हरिकचवडो (स० स्त्री०) हरिचवः मन्त्रपिप्लव वयव इव वडो । हरिका वता ।

हरिकचा (स० स्त्री०) गजपिप्लवो, बड़ी पीपल ।

हरिकचावडो (स० स्त्री०) हरिकचायावर वडो । हरिका वृक्ष, वयवका पीड ।

हरिकार (सं० पु०) हरिच-हरः, इतत् ।—इति-ग्रन्थ, शम्भोकी सूक्त ।

हरिकर्षपलाग (स० पु०) इति-कर्षपलाग, बड़ा टाक ।

हरिकचव (स० पु०) विज्ञान, व्यवस्था तत्रचोड ।

हरिका (स० स्त्री०) हरी विधेनोऽपि पञ्च, पर्याहिलादत् । १ चापेडव, कटेवा । २ नक्ष-यत नाशुवृक्षा दाम् वा लुम्ब ।

हरियाह—हर्षाटकवा एक नगर । यह पचा० १० ३३' ७" और दिया० ७० ३३' ५०" पर तिहवाहोड नगरके ३ कोस इत्थिच परवित है । हरिकाल पति प्राचीन नगर है । १०३० से १०६१ ई० तक चलनेवासी कर्षाटक वमरके समय यह नगर सुडड़ किया गया था । यहां चंगरीलोके परासोली लड़ मरे । हरिकाल नदी कावेरी नदीकी शाखा है । इसकी पारो पीर परप्रांत यन्त्र लक्ष्य होता है । लक्ष्य दक्षिण वाहर दिक्ते है ।

हरिकाहचोल—एक विख्यात चोलराज । यह परा म्बक चोलके ल्नेड पुत्र रहे । इकानि पाण्ड्यराज वीरपाण्ड्यको हूडमें हराया था । फिर हरिकाल चोलने कावेरीके बचप्रायनके तन्वीर किला बचानेका एक बौध बनावाव । ८०० यकमें यह विषयमान थे ।

हरिकुम्भ (स० स्त्री०) हरिच-कुम्भ इतत् । १ नमकुम्भ, शम्भोके मन्त्रके चड़े मेसो जनह । २ मन्त्रकुम्भ ।

हरिकुम्भक (सं० पु०) नामकेसरचूर्ण ।

हरिकुसुम्भ (सं० पु०) हरी नामकेसरचूर्ण कुसुम्भ । १ नामकेसरकुम्भ । २ नामकेसरचूर्ण ।

हरिकुम्भ्या (सं० स्त्री०) गजपिप्लवो, बड़ी पीपल ।

हरिकेशर (स० स्त्री०) नामकेसर ।

हरिकई (सि० स्त्री०) १ मोहता, कालिह । २ जनह, बदनानी ।

करिखा (हिं० पु०) १ नौकता, कान्तिवत् । २ कलङ्क, वदनामी ।

करिगर्जित (सं० स्त्री०) करिणः गर्जितं गर्जनम्, भावे क्त । हंघित, हाथीका चिह्नार ।

करिगह, कर्गईक्षो ।

करिङ्ग—मन्द्राज प्रान्तके राजमहेन्द्री जिल्लाका एक बन्दर । यह समुद्रके तटपर राजमहेन्द्री नगरसे १५ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है । नाना स्थानोंमें यहाँ जहाज आ लगा करते हैं । वाणिज्य-व्यवसाय भी खूब होता है । पहले यह नगर अधिक सन्धु-शाली रहा । किन्तु अब यह बात देख नहीं पड़ती ।

१७८४ ई०को समुद्रके तरङ्ग आनेपर करिङ्ग डूब गया था । उससे बहुत लोग मरे और मकान गिरे पड़े । इसके पार्श्वस्थ समुद्रकी करिङ्गसागर कहते हैं । 'करिङ्ग' कलिङ्ग शब्दका अपभ्रंश है । कृष्टि ईक्षो ।

करिचर्म (सं० स्त्री०) गजचर्म, हाथीका चमड़ा ।

करिज (सं० पु०) करिणो जायते, करि-जन्-ङ । पद्यभाङ्गात् । पा ३।४।८८ । गजभावक, हाथीका वज्रा ।

करिजा (सं० स्त्री०) गजमुखा ।

करिणी (सं० स्त्री०) करिन् स्त्रियां ङीप् । १ इन्द्रिनी, हाथिनी । २ देवताविशेष, एक देवी । ३ वैश्वके औरस और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न होनेवाली कन्या ।

करिणीसहाय (सं० पु०) गज, हाथिनीका जोड़ा हाथी ।

करिदन्त (सं० पु०) गजदन्त, हाथीका दाँत ।

करिदन्ताभ (सं० स्त्री०) मूलक, मृत्ती ।

करिदमन (सं० पु०) नागदमन, नागढीना ।

करिदारका (सं० पु०) करिणं दारयति, करि-दृ-खुल् । सिंह, गिर ।

करिनासिका (सं० स्त्री०) करिणः नासिका । १ गजनासिका, हाथीकी नाक । २ यन्त्रविशेष, एक वाजा ।

करिनी (हिं०) करिणी ईक्षो ।

करिप (सं० पु०) करिणं पालि रक्षति, करि-पा-क । इन्द्रिपालक, मछावत ।

करिपत्र (सं० स्त्री०) तान्नीशपत्र ।

करिपत्रक, करिपत्र ईक्षो ।

करिपय (सं० पु०) करिणः पय, इ-तत् । १ गजके

गमनयोग्य पय, हाथीके चलने लायक राह । २ देवपय, हाथीकी राह । ३ जनपदविशेष, एक बमती ।

करिपिपनी (सं० स्त्री०) करिसंज्ञका पिपनी, मध्यपदलो० । गजपिपनी, बही पीपन ।

करिपोत (सं० पु०) करिणं वध्नाति यत्र, वन्ध आधारे घञ् । १ इन्द्रिवन्धनम्, हाथी बांधनेका खूंट । (स्त्री०) भावे घञ् । भारि । पा ३।३।८ ।

२ गजवन्धन, हाथीका बंधाव ।

करिवर (सं० पु०) करिणां वरः । त्रैष्ट गज, बटिया हाथी ।

करिवू (हिं० पु०) हरिणविशेष, एक बारहसिद्धा । यह अमेरिकाके उत्तरीय भूप्रदेशमें पाया जाता है । इससे लोहोंका बड़ा काम निकलता है । मांस खानेमें आता है । चर्म वस्त्ररूपमें व्यवहृत होता है । फिर उसका तसू और जूता भी बनता है । अस्थिसे छुरी प्रस्तुत करते हैं ।

करिम (सं० स्त्री०) करीव भाति, भा-क । प्रखत्य वृत्त, पीपनका पेट ।

करिमवर (सं० पु०) काल्पनिक राजस, झूठा देव ।

करिमाचल (सं० पु०) करिणं चतुं मावं शब्दं लाति विश्वायति, करि माच ला क । सिंह, गिर ।

करिसुख (सं० पु०) करिणो मुखमिव सुखं यस्य ।

१ गणेश । ब्रह्मवैवर्तके गणेशखण्डमें लिखते—पावती-नन्दन गणेशके जन्म होनेपर सकल देव सुन्दरमूर्ति देखने पहुँचे थे । भगवतीने क्रमशः सकल देवकी आ लीटते देखा । किन्तु उस देवमण्डलीमें शनिको न देख उन्हेने अपने प्राण-प्यारे सुन्दर पुत्रको आकर देखनेके लिये उनसे वारंवार अनुरोध किया था । शनि इस भयसे गणपतिको देखने न गये—मेरी दृष्टिसे समुदय भस्म हो जाता है । अन्ततः भगवतीके आदेशसे उन्हे जाना पडा । शनिने आकर भगवतीसे कहा था—मैं जिसे देख पाता, वही भस्म हो जाता है । वारंवार ऐसा कहनेपर भी भगवतीने उनसे गणेशको देखनेके लिये आग्रह प्रकाश किया । उस समय शनिने निरुपाय हो गणेशको देखनेके लिये अपने सुखवस्त्रका एक प्रान्त खोला था । उनकी दृष्टि

प्रथम मद्यपतिके मद्यकवर पड़ो। उधरे मद्यक
 बल गया बा। मद्यक बिगड होत दिख यानि
 पपनी पाँच पर फिर परदा बासा। पाँचो भी
 मिश्रपुत्रको मद्यकहीन देख गोबधे बबरा मयो।
 उधो समय देबबाओ हुँ वी, 'उधरको धोर मिर
 धिये एक जायो पोता है। जयोबा मुष्ट गधियबा
 मद्यक बनिगा।' देवमयने पतुधम्यानको निघल
 देखा या—इन्द्रका इधो दिसावत रही प्रकार भोता
 है। उध समय पगला देवताने उधो करिका मुष्ट
 होट गधियबे देबमें बोड़ दिया। रही प्रकार गप
 पतिका करिमुष्ट बना या। १ गजमुष्ट, जायोबा मुष्ट।
 करिया (विं० पु०) १ कर्ष, पतवार। २ कर्षधार,
 मसाध, नाव बचानिवाधा। ३ सप, बाधा सांघ।
 ४ इधुरीगधिय लखको एक बोमारो। इधरी उध
 सुयने जगता धोर पोदा बाबा पड़ता है। (वि०)
 ५ इष्यवर्ष, बासा।
 करियाई (विं० शो०) १ नीरता, आओ जासापन।
 २ कासिच।
 करियाद (सं० शो०) अकइली, दरयाओ बोड़ा।
 यह एक दूब पेनिबासा बन्य है। अइयो सुअरबे
 करियाद मिल जाता है। इहका मिर मोटा धोर
 बर्माकार होता है। घुबल बहुत बड़ा रहता है।
 अचु एवं कर्ष सुअर धोर गरीर मोटा तथा भारी
 बनता है। पैर छोटे रहते हैं। पैरमें चार उंग
 लिवाँ जेतो हैं। घूब छोटी पड़तो है। घिठमें दो
 दन बसते हैं। बाहपर बाक नहीं बनते। यह
 प्राय इधुरीकामि सब जगह रहता है। लम्बाई १०
 फीट पानी है। पानीमें रहना इहे बहुत पच्छा
 लगता है। बिन्दु भूमिपर बाहपात या यह
 पपना बौरन बसाता है। करियाद पमेक प्रकारका
 होता है।
 करियारो (विं० शो०) १ कलिधारो, कलियारो,
 एक नृधर। २ लयाम।
 करि (सं० पु० शो०) करिनि विधपति, कर्षघ्रायो
 इरन्। १ ब्याहार, बांधका बिजा। पदुअगुन्ध,
 एक झाड़। २ घट, पड़ा।

करिरत (सं० शो०) करियो रतनिव रतम्, संजघद
 शो०। १ कामयाखीअ एक प्रकार रति।
 "सुरसभुगमनकचमुअदा कररनीइको करिन्।
 बागनि ककरइइकेनेरि एअककरिन् पपुअरे॥" (रत्नवि)
 २ गजहा रसक जायोबा भोग।
 करिरा (सं० शो०) इस्त्रिदन्तका मूल, जायोबे
 दांतको झड़।
 करिरी, करिप शीको।
 करिव (सं० सि०) करिधं पाति विनष्टि, करि-बा क।
 करिको मार बालनिबास, जो जायोको मोतके सुअने
 पड़ जाता हो।
 करियर, करिरर शीको।
 करिवेधयन्ती (सं० शो०) मद्यपताका जायोबा
 नियान या भ्रष्टा।
 करिमावक (सं० पु०) करिबाँ मारक। इति-
 मिय, जायोबा बधा। पाँच या दम बर्षबासे बसेको
 मारक कहते हैं। इहका संस्कार पर्याय—कडम,
 करन, करियोत, करिक, विह धीर विह है।
 करियण्ड (सं० शो०) करिण्ड मण्डने। गजपण्ड,
 जायोको सूड।
 करिह (सं० सि०) पतिमयैग जता, इठम्। कर्तु-
 तम बड़ाकाम करनिबासा।
 "पुर बडिन पाहनि करिण।" (च० अ० ७००)
 करिण्ड (सं० पु०) ल इण्डु। करपमील, करनि
 पाका।
 करिण्ट (सं० सि०) करमेको इण्डु, करलेबाधा।
 करिण्माय (सं० सि०) करमेको मसुल, जो करमे
 जाता हो।
 करिसुत (सं० पु०) करिण्ड इत, १ तम्। इति-
 मावक जायोबा बधा।
 करिइन्द्रिका (सं० शो०) करीव सुन्दरो, करि
 सुन्दरो संघ्रायो बनू टाप जडय। १ नागवडि।
 २ बध मण्ड करमेका मन्त्रविसेय, कपड़ा सुपामिको
 एक पक। (रत्नको)
 करिस्त्रम् (सं० शो०) करिबाँ लमूड, करिन्
 म्बम्बम्। १ मजसमूड, जायिबीबा भुष्ट। करिण-

स्त्रम्, ६-तत् । २ गजका स्त्रम्, हाथीका कम्बा ।
(त्रि०) करि स्त्रम्मिव स्त्रम् यम् । ३ करिकी माति
स्त्रम्विगिट, हाथीकी तरह कम्बा रखनेवाला ।

करिहस्ताधार (सं० पु०) लृत्वमेद, किसी विष्मका
गात्र । यह एक टेगी मूमिवार है । इसमें हंस-
स्थानक बना उभय पद तिर्यक् रखते और मूमिपर
मदंन करते हैं ।

करिहां (हिं० स्त्री०) करिहां श्लो ।

करिहांव (हिं० पु०) कटि, कमर । २ कोन्डका
मध्य भाग । यह गहारीदार होता है । इसीमें कनेठा
और मुजेला चक्र खाया करता है ।

करिहारी (हिं० स्त्री०) कन्दियारी, करियारी ।

करी (सं० पु०) करः गुण्डः अन्नि रुच्य, कर-इति ।
१ इन्दी, हाथी । २ अष्ट संख्या, आठकी श्रद्ध ।

करी (हिं० स्त्री०) १ कड़ी, धरन, काठका लम्बा
और पतला गहतीर । यह छत पाटनेमें लगती है ।
२ कलिका, कनी । ३ हृद्योविशेष, चौपैया । इसमें
१५ मात्रा लगती हैं ।

करीति- (सं० पु०) महामारतोह जनपदविशेष,
एक बसती । (माल, मी०)

करीना (हिं० पु०) १ डेनी, टांको । इससे पत्थर
गढ़ा जाता है । २ मसाना, केराना ।

करीना (अ० पु०) १ नियम, तरीका । २ प्रथा,
चात्र । ३ क्रम, सिद्धिका । ४ श्रवहार, कायदा ।
५ नैषिका एक हिस्सा । यह दन्तसे आच्छादित
रहता है । कराना फरसीके सुंहर पर जमकर बैठता है ।

करीन्द्र (सं० पु०) करिहां इन्द्रः, ६-तत् । १ करि-
चेठ, बढ़िया हाथी । २ ऐरावत, इन्द्रका हाथी ।

करीव (अ० क्रि० वि०) १ निरुद्ध, नर-दीक, पास ।
२ प्रायः, लगभग ।

करीम (अ० पु०) १ ईश्वर । (वि०) २ कर्षण-
मय, मेहरवान् ।

करीमखान्—१ एक पठान-टलपति । यह ई० शता-
दश शताब्दके शेषभाग चीतूसे मिक ग्वाञ्चिवरका
राज्य लूटने लगे । अन्तको सेधियाने इन्हें पकड़
लिया था । किन्तु उन्होंने बहूतसा रूपया ले

इन्हें छोड़ दिया । छूटनेपर यह अधिक प्रयत्न पड़े
थे । टेगके जोग करीमका नाम सुनते ही कंपनी
लगने । अनेक छूटने यह फिर इन्दीमें पकड़े गये ।
कुछ दिन पीछे छूटनेपर इन्होंने अंग्रेजोंके विरुद्ध
भ्रम्य उठाये थे । १८१८ ई०की फरवैल आदमने
इनके विपक्ष लेन भेजा । इन्होंने उस समय यगो-
वन्त रायका आग्रह लेना चाहा था । किन्तु
१५ वीं फरवरीको इन्हें बाध्य हो मानकोमके निकट
बग्नना मानना पड़ी । करीमखानको जीविका निर्वा-
हसे लिये गोरखपुर जिलेमें बुरहियापार सिना था ।
इनके मन्तान १८५० ई०के विद्रोह पर्यन्त उक्त स्थानका
प्राय उपभोग करते रहे ।

२ ईरानी उन्त जातिके एक सरदार । इन्होंने
जर्नी और मादियोंकी फौज जुटा पारसमें अफगा-
नोंकी मगाया था । १७५८ से १७६८ ई०तक करीम
खानने ईरानमें अिष्कण्टक राज्य किया । १७७८ ई०की
२री मार्चकी ८० बल्दरके बधसपर यह मर गये ।

करीममाट (हिं० पु०) बन्धुत्वविशेष, एक बड़ली
घाम । यह पशुका प्राय है ।

करीर (सं० पु०-स्त्री०) शिरति विजिपति प्राक्-
रगान्, कृ-इरन् । कृष्णकटिपत्रिंशति ईरन् । एप् ६०३ ।
१ वंगोदुर, वांसका कम्बा । यह कटु, तिक्त, अम्ल,
कषाय, लघु, ग्रीतक, रुचिकर और पित्त, रक्त, दाह
तथा छन्दुर्न होता है । इसका-पर्यं निर्गुण है ।
(पञ्चगव्य) २ बट, बड़ा । ३ इन्दुरमात्र, कोई
अंशुवा ।

“दिनां रंयन करीरने मं शिरान् शिरादि पन्ने गतिरहा ।” (मेघ)

४ मरुभूमिजात उद्भिप्रिय कण्टकवृक्ष विशेष,
करीर, कचडा । इसे हिन्दुस्थान तथा बङ्गालमें
जंठकटारा, अरब एवं बम्बईमें कबर, सीरियामें कवार,
तुरुष्कमें कवरिग, और पारसमें कबर या कुरक
कहते हैं । (Capparis aphylla) संस्कृत पर्याय—
क्रुकर, अन्विन, क्रुक्क, निष्पविका, करिर, गूटपत्र,
करक और तीक्ष्णकण्टक है । यह हृष्य भागतवर्षमें
सचरापर उत्पन्न होता है । फल व्यवहारमें प्राया
करता है । यह कटु, तिक्त, खेदजनक, उष्ण और

सिद्ध है। धर्म, कष्ट, पाप, काम, विषय योच पीर
त्रयको करीर नाय करता है। कर्म बगामिं बसतो
है। मात्रा २ भाषे है। (नायकाय)

मन्वन्तं कर्म-पदविधा नामक जमीमो पन्थके
मतानुसार इसके मूलको लक्ष पदचौद है। यह
कष्टपुत्र, कष्ट, परिष्कारक पीर पचाघात तथा सफल
प्रकार नातरोगके बिये उपकारक है। इसका पर्व
आत्मके आचरने छोड़ा मर जाता है।

पैशमी साधन दूधित जलका इसे महीवप
बताये है।

यह बना पीर हाकदार भाड़ है। प्रमानत
करीरको कर्ममिं करीर उपपत्ता है। परब, जलित
(निब) पीर नुबियामें भी बह पाया जाता है।
बसन्त ऋतुके प्रादिमिं फूल पीर परेल भास फल
पाते है। फल खट्या जाता है। करीरका पचार
भी लोय बना सिते है। इसमें पत्र नहीं लगते।
इष्टन इस पीर फल-गुणको होता है। बाठ
इसका पीला रङ्गता पीर खुना रङ्गके मूला निबल
पड़ता है। इसमें चमक, कड़ाई पीर दामेदारो
पन्थी होते है। परिमाण प्रस्येक सन-पुद्धमिं कोर
२१ पीर बैठता है। इसमें जलको छोटी कड़ियां,
जरी पीर भावको कोनियां तैयार करतै है। यह
सिक्तकी चको पीर चितोके पीपारोमिं भी समता है।
करीरको लक्षको कड़ियो रङ्गे पीर डीमक न लयमिं
मूलकान् समझो जातो है। यह कसामिं भी
पन्थी रहतो है। कालें हरी वी मसालको तरह
जका करतो है।

अधितामिं भी करीरका यमिद बहोच है। माणतो
इसपर अमरको जाति देख लड़तो पीर बसतो है।
पत्र न धानिपर अमि इसीके पद्धको बुरा बताये,
बसन्तपर कोर दोय नहीं लगामिं।

करीरक (सं० लो०) करीर पद आर्ये कम् । १ बंया
दुर बांधका रंछुका । २ दुह, कड़ाई ।
करीरकृच (सं० लो०) करीरकृ पाकः, करीर
कृचम् । कच कचके रिजकेचामिं उपपत्तये । प ४५४३ ।

१ करीरका, करीरको तरहको । २- करीरक
का, करीरके पदमिका लयम् ।

करीरकृच (सं० पु०) नवरविमिय, एक पहर ।
करीरकृच भी एक पाठ है।

करीरकृच (सं० लो०) करीरको, करीरका तुल्यम् ।
करीर (सं० लो०) करीर टाय । १ चौरिका
भींगुर । २ इष्टिदन्तमूच, हाथीके दांतको कड़ ।
१ सनगिका ।

करीरिका (सं० लो०) करीरमिय पाहलियंका,
करीर ठन् टाय् । १ इष्टिदन्तमूच, हाथीके दांतको
कड़ । १ मित्रो, भींगुर ।

करीरो (सं० लो०) किरति, कु-ईरन् मोरादित्वात्
लोप् । १ इष्टिदन्तमूच, हाथीके दांतको कड़ ।
१ चौरिका, भींगुर ।

करीर (सं० पु०) इयविमिय, एक पहर । करीरको
करीर (सं० पु०-लो०) कौर्यते विचिच्यते, कु ईरन् ।
दुन्तापीय् । प ३३५ । १ दुष्टगोमय, सूखा गोबर ।
१ पदका पुरोपमात्र, गोबर । १ पत्रमय गोमय,
"कड़को गोबर, विनुवां कण्डा । ईडका अमि अति
लगत होता है। ३ पर्वतविमिय, एक पहाड़ ।

करीरक (सं० पु०) करीर पद आर्ये कम् । १ करीर ।
करीरको । १ अमरकृचिय, एक लुख । (नाय, भीच)
करीरकृचि (सं० लि०) करीरकृ लय् इव मन्थो
यज् । दुष्ट गोमयको भाति गम्यबुद्ध, सूखे गोबरको
तरह मन्वन्तिकाका ।

करीरकृच (सं० लि०) गोमय म्हाङ्गिकाका, जो गोबर
कटाता हो ।

करीरकृपा (सं० लो०) करीरं क्वचति द्विगच्छि,
करीर कच-कृच् सम् । कर्णधनकरोरुं क्व । क ४५४२ ।
बाहु, हवा ।

करीरकृचि (सं० पु०) करीरकृचो ल्चि । दुष्ट-
गोमयकृचि सूखे गोबरको पाण ।

करियो (सं० लो०) करीरिन् चिदां लोप ।
गोमयाचिदां लक्ष्मी देवी ।

"नवपर्व इत्यार्यां निबन्धनं करीरिणीम्" (वीर्य)

करौषी (सं० पु०) करीपः विद्यते यत्र, करीप-इति ।

करीपयुक्त देश, सूखे गोबर का सुकल ।

करौषी (हिं० क्र० वि०) तिर्यक् दृष्टि द्वारा, तिरछी नजरसे ।

करुण (सं० पु०) करोति मनः आनुकूल्याय, क-
उन्नन् । इहदारिद्र्य उन्मत्तः ७७ ३३३ । १ स्वनामख्यात निम्बुक
वृक्ष, किसी किस्मके नींबूका पेड़ । (Citrus decu-
mana) इसे हिन्दीमें मछानीबू, चकीतरा, वातापी नीबू
या सदाफल, बंगलामें बतोर या वातापी नीबू, सिन्धीमें
विजोरा, गुजरातीमें श्रवकोतर, मराठीमें पपनस,
मारवाडीमें प्या, तालिममें बोम्बलिनस, तेलगुमें पाद-
पन्दू, कनाडीमें सकोतराहन्नू, मलयमें बोम्बेलिमरुड्ड,
महिशूरीमें पृमपलेमूस, ब्रह्मीमें शङ्खतोनेस और सिंघली-
में जमबुल कहते हैं । यह मलयद्वीपगुल्ल, फ्रेण्डली और
फिजीमें स्वभावतः उत्पन्न होता है । करुण जवहीपसे
भारतमें आया है । उष्णप्रधान देशमें अधिकान्श इसे
संगते हैं । भारत तथा ब्रह्ममें यह अधिक होता है ।
किन्तु दार्द्रिणात्य तथा बङ्गदेशकी अपेक्षा आर्यावर्तमें
यह कम मिलता है । बतारियासे आने कारण ही
इसे बतारपी कहते हैं । इसका फल बहुत बड़ा
रहता और तौलनेपर कभी कभी पाँचसे दश सेरतक
मिलता है । यह देखनेमें गोलाकार होता है ।
त्वक् चिकनी और पीली देख पड़ती है । गूदा सफेद
या गुलाबी लगता है । गोंद किसी काम नहीं आता ।
यह छत्र सदा फला करता है । बम्बईके बाजारमें जो
करुण दिस्वर या जनवरी मास आता, वह सबसे
अच्छा कहा जाता है ।

राजवल्लभने इसके फलको कफ, वायु, आम तथा
हेटोनाशक और पित्त-प्रकोपक बताया है ।

२ शृङ्गारादि अष्टरसके अन्तर्गत तृतीय रस ।
साहित्यदर्पण इसका लक्षणदि इस प्रकार लिखता—
वन्धुबान्धवादिके विशेषसे करुण रस उठता है । इसका
कपोतवर्ण होता है । अधिष्ठात्री देवता यम हैं ।
करुणरसका स्थायिभाव शोक, आसम्बन्ध-भाव शोच्य जन
(जिसका विशेष पड गया ही) और उसके दाहान्दि-
की अवस्था ही उद्दीपनभाव है । इसका अनुभाव

देवनिन्दा, भूतलपर पतन, क्रन्दन, विध्वंसता, ऊर्ध्व-
श्लास, निर्वातस्य प्रदीपकी भाँति निर्जीवयत् निम्नासकी
रोक और प्रलाप है । करुण रसका व्यभिचार भाव
वैराग्य, जडता और विन्ता प्रकृति है । देवनिन्दाका
उदाहरण नीचे देते हैं,—

“विदिने क ऋटानिबन्धनं तव धेदं क मतोदरं ययुः ।

यमयो घंटना विधेः ऋटं ययुः सद्यः शिन निरीत्रकं नमः ॥”

(साहित्यदर्पणप्रथम राघवविभाष)

सङ्गीतशास्त्रमें यह रागरागिनी करुणरसमें गीय
है,—भैरव, भैरवी, रामकली, खट, गान्धार,
जोगिया, विभास, कुकुम, देवकरी, अक्षेया, यिला-
यस, सिंदूरा, सिन्धु, मुलतानी, पूर्वा, टोड़ी, गौरी,
केदारा, ईमन कल्याण, जयजयस्ती, हमोर, भूपाली,
कान्दडा, खम्माच, भंभीटी, विहाग, वागेश्वरी, सूरत,
गद्धरा, मोहिनी, मालकीप, बल्लाली, मलार और
नलित ।

१ दया, मेहरवानी, दूसरका दुःख दूर करनेकी
इच्छा । ४ करुणाका विषय, मेहरवानीकी बात ।
“चतुरोदितो वरुषेण पविदा विदनेन ॥” (माघ) ५ बुद्धदेव,
किसी बुद्धदेवका नाम । ६ परमेस्वर । ७ प्राणियोंके
अभयजनक परिव्राजक । ८ तीर्थविशेष । (बालिकापुराण)
९ फलितवृक्ष, मेवाटार पेड़ । १० मल्लिका वृक्ष,
चमेली । ११ असुरविशेष । (त्रि०) १२ दयायुक्त,
मेहरवान् । १३ शोकार्त, रञ्जीदा । (अ०) १४ शोकसे
रो रो कर । (क्ली०) १५ पावन कर्म, पकीजा
काम ।

करुणध्वनि (पु० सं०) करुणासूचकः ध्वनिः । दुःख
वा शोकमें मानव मुखसे निर्गत शब्द, अफसोसकी
आवाज ।

करुणमल्ली (सं० स्त्री०) करुणा करुणयोग्या मल्ली ।
नवमल्लिका, मोतिया । (Jasminum sambac)
इसे हिन्दीमें मोतिया, वेला, वनमल्लिका या मोगरा,
बंगलामें मल्लिक, पञ्जाबीमें चम्ब, मराठीमें मोगरी,
मारवाडीमें मोगरा, गुजरातीमें मोगरी, तालिममें
मल्लिष्, तेलगुमें बोडु मल्ले, कनाडीमें मल्लिगे, मलयमें

पुन सुत्र, ब्रह्मोर्मि मणि, सिंहलीमं विजिमल, परशोर्मिं समन धीर फारसीमं गुणे सुपेद कवरी हैं।

अरुणमन्त्री एक सुमन्त्रिता है भारत, ब्रह्मदेय धीर सिंहलीमं सर्वस २००० पीठ लक्षे स्थानमं वरुण होती है। दोनों मोक्षार्थके लक्ष्यप्रदान देयमं रसे समावा करते हैं।

इसका पुत्र पति सुमन्त्रि होता है। भारतवर्षमें अरुणमन्त्रीका विल अत्रिभ अचवारमं धाता है। सुमन्त्री बांठकर स्नानपर लगानेसे सुत्र्य बहुत उत्तरता है। माधुरपर पत्नीका पुत्रदिव्य चकता है। पञ्जा-वर्मि यत्र पामलपन, भांशकी कमजोरी धीर सुत्रकी बीमारोपर चकती है।

पूर्ववि रोगमं सुमन्त्रिके आरुण इसके सुत्र्यका बड़ा प्यार है। अरुणी, फारसी धीर संस्कारके कवि प्राय इच्छेका लक्षेण किया करते हैं।

अरुणविमलम् (सं० पु०) अरुणसुतो विमलम् ।
 अरुणरसका एक मेद। नायक नायिकाके मन्त्र परके परकीक जाने पर पुनर्नार मिलनको प्रागासि कोवित स्थिति जिस प्रकार अरुण जीवन विताता, वही अरुणविमलम् अजाता है। जेधे—
 कादम्बरीके पुत्ररुके धीर महाधेता ठाण्णामं पुन-
 र्नार पुत्ररुकेके नाम विषयपर अरुण रस ही पठकता है। विष्णु देवकाको सुननेपर पुत्ररुकेके मिलनको प्रागा अरुणरसका लक्षेण है।

अरुणवेदिल (सं० स्त्री०) अरुण इवो विंति कामानि विद विनि माधे ज। इयावान्का चरै, मीहरवान्का पूर्व।

अरुणवेदी (सं० स्त्री०) अरुण इवो विंति परदुःखं अनुभवति, विद विनि। इयावान् मीहरवान्।

अरुणा (सं० स्त्री०) करोति चित्तं परदुःखहरकाय, स लनन् टाय । १ अथरुके पुत्रविनायको इच्छा, दया तर्पे। इसका संस्कृत पर्याय—कादम्ब भूषा, कप, इवा अनुकम्पा, अनुक्रीय धीर शूत्र है।
 २ मोक्ष, रक्ष, अक्षीक। ३ गहाका एक नाम।
 "इच्छा अरुण काया कर्मणा चकारोत्" (वागीक १०१)
 ४ सुलक्ष्य सुमित्री कनिष्ठा कन्या। ५ जनकाय।

अरुणाकर (सं० स्त्री०) अरुणाया आकारः, १ तत् ।
 यमन्त दयासु, निहायत मीहरवान्। (पु०) २ अरु-
 नामके पिता।

अरुणात्मक (सं० स्त्री०) अरुण अरुणास पाप्मा यत्र बहुव्री०। अरुणरसविमल, रक्षमदिव, अक्ष-
 धीरसे मरा हुआ।

अरुणात्मा (सं० पु०) अरुणो इयाई पाप्मा यत्र, बहुव्री०। इयावान्, मीहरवान्।

अरुणादृष्टि (सं० स्त्री०) इयाको दृष्टि, मीहरवानो ।
 २ दृष्टि विधिय, एक लक्ष्म। यह सुत्रकी एक दृष्टि है। इसमें अथरे एकत्र इयायो धीर पांसु विरं गांधी मोक्षपर लक्ष्म लायी जाती है।

अरुणाविद्या (सं० स्त्री०) अरुणा निदोषये निश्चिन्ना दोषये वीह, अरुणा-नि-दा-अ-ट। इयासु, मीहरवानो करमेकासा।

अरुणाविद्या अरुणाविद्या वीही।

अरुणाविधि (सं० स्त्री०) अरुणा निदोषयेति, अरुणा-
 नि का वि। अरुणरसके वी ४१५२९। इयावान्, मीहरवान्।

अरुणावित (सं० स्त्री०) अरुणाया अमितः, १ तत् ।
 अरुणासुत्र, मीहरवान्।

अरुणावर, अरुणावित वीही।

अरुणावय (सं० स्त्री०) अरुणा पापुर्वेण अरुणा-
 अरुणा मयद। इयावम मीहरवान्।

अरुणावमो, अरुणावो वीही।

अरुणासुत्र (सं० स्त्री०) अरुणाया सुत्रः, १ तत् ।
 इयावान् मीहरवान्।

अरुणास्य (सं० स्त्री०) अरुण अरुणास्य धारणो वन, बहुव्री०। १ अरुणास्ये धारण कर विहित, अक्षीरसे शूत्र कर किया हुआ। (पु०) २ अरुणा-
 रसका धारण, अक्षीरका प्रागान्।

अरुणाई (सं० पु०) अरुणाया आईः, १ तत् ।
 यमन्त दयासु रक्षमदिव।

अरुणाईवित (सं० पु०) अरुणाया आई वितं यत्र बहुव्री०। इयासुत्रस्य, रक्षमदिव।

अरुणावान् (सं० स्त्री०) योवार्त, रक्षमेण लायक।

करुणाविप्रलम्भ, करुणविप्रलम्भ देखो।

करुणावृत्ति, करुणद्रे देखो।

करुणावेदिता (सं० स्त्री०) करुणवेदिन देखो।

करुणासागर (सं० पु०) करुणायां सागर इव, उपमि०। दयाका समुद्ररूप, निहायत मेहरवान्।

करुणी (सं० पु०) करुणा प्रत्यय, करुणा-इनि।
सुवादिभ्यः। पा३।१।११। १ करुणायुक्त, दयावान्, मेहर-
वान्। २ शोकार्ति, पुर-अफसोस। (स्त्री०) शीष-
पुष्पी, गरमीमें फूलनेवाला एक पेड़। इसे कोइलमें
ककरखिरुली कहते हैं। करुणीका संस्कृत पर्याय—
शीषपुष्पी, रक्तपुष्पी, चारिणी, राजप्रिया, राजपुष्पी,
सूक्ष्मा और ब्रह्मचारिणी है। यह कटु, तिक्त, उष्ण
और कफ, वायु, आक्षान (पेट फूलना), विषवमन
तथा अर्धश्यामनागक होती है। (गजनिपट्ट)

करुत्याम (सं० पु०) तुर्वसुवंगीय दुष्मन्त राजाके एक
पुत्र। (हरिवंश ११ प०)

करुना (हिं०) करुणा देखो।

करुन्वक (सं० पु०) सूरके पुत्र और वसुदेवके भ्राता।

करुन्वम (सं० पु०) तुर्वसुवंगीय वंशजके एक
पुत्र। (हरिवंश ११ प०)

करुम (वै० पु०) अथर्ववेदीक पिशाच विग्रेय।

“ये शान्ताः परिश्रुन्ति साय रदमनादिनः।

उदया दी च कुचिषाः उडमाः रुचनाः शिलाः।

तानीपथे त्वं गन्तेन विपुत्रोऽन् विनामय इ” (बदरं प० ११०)

करुर (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं०) कटु देखो।

करुवा (हिं० पु०) हृत्तविग्रेय, एक पेड़। यह दार-
चीनीसे मिलता लुनता है। दाक्षिणात्यके उत्तर
कनाड़ेमें कडुवा उत्पन्न होता है। इसके सुगन्धि
वस्त्र तथा पत्रका तेल शिरःपीड़ादि रोगपर व्यव-
हार किया जाता है। फल दारचीनीकी अपेक्षा
हृत्त भाता और कान्धो दारचीनी कहाता है।

करुवायी (हिं० स्त्री०) कटुता, तीखापन।

करुवार (हिं० पु०) १ नौदण्डविग्रेय, नावका एक
ठांड। पक्षिका वांस अधिक लम्बा लगता है। वेपत-
वारकी नाव इसीसे चषायी जाती है। २ लोहेका

एक वस्तु। इसके नोकदार किनारे मुंडे रहते हैं।
इससे काठ या पत्थर जोड़ा जाता है।

करु (हिं०) कटु देखो।

करु (सं० स्त्री०) छ-ऊ। १ कतन, काट-फांक।
२ कृत्त, कटा हुआ।

करुकुर (वै० स्त्री०) शोषा तथा कगेरुकाका यन्त्र,
गट्टन और रीढ़का जोड़।

करुन्तती (वै० स्त्री०) नटदन्त, दंतटुटा।

करुचा (हिं० पु०) १ कङ्कणविग्रेय, हाथका कडा।
२ स्वर्णविग्रेय, एक सोना। इसमें तोले पाँच ४ रत्ती
चांदी रहती है। ३ कुत्ता।

करुप (सं० पु०) छ-ऊपन्। जनपदविग्रेय, एक मुक्त।
दन्तवक्र इस देशके अधिपति थे। (भारत, उभा १ प०)
वर्तमान शाहाबाद जिल्लाका ही नाम करुप है।
रामायणने इसका भवस्थान गङ्गातट पर मिला
है। पहले करुपमें वन अधिक था। ताडका
राजसी यहीं बसते रही।

करुपक (सं० पु०) १ वैषखत मनुके पुत्र। २ फल-
विग्रेय, फालसा।

करुपज (सं० पु०) करुपदेशे जायते, करुप-जन-ह।
दन्तवक्र।

“ताविद्याय पुत्रगोती सिद्धपानकरुपगो।” (भारत, चादि)

करुपाधिपति (सं० पु०) करुपस्य तन्नामकजन-
पदस्य अधिपतिः, इ-तत्। १ करुप देशके राजा।
२ दन्तवक्र।

करुसो (सं० स्त्री० = Currency) १ प्रचार, रिवाज,
चलन। २ प्रचलित मुद्रा, धिका, चन्दा तथा
सरकारी नोट।

करुजा (हिं० पु०) यज्ञतृ, कलेजा, दिव्य।

करुजी (हिं० स्त्री०) पशुकी यज्ञतृका मांस,
छानवरके कलेजेका गोश्त। चटानोंको तइमें जो
सोधी पपडी रहती, उसे जनता ‘पत्थरकी करुजी’
कहती है।

करेट (सं० पु०) कर् करारुलिपु, अटति उत्पद्यते,
करे-अट-अच् अलुक्समा०। नख, नाखून।

करेटव्या (सं० पु०) करे अटं अटनं व्ययति, करे-

पट्ठे इ टाय पतुक्त्तमा०। वनिक्त्तु पत्तो, वनिक्त्तु चिक्त्तिया। इसका सिद्ध गठिवेकी पक्त्तोर दवा है।

ऋट्ट (सं० पु०) के जरी बायीं ना रैटति, ऋट्ट कु।
१ पश्चिमिय, जिसे किष्मिका बारास। इसका संस्कृत पर्याय—ऋट्ट, ऋट्ट और ऋट्टादुक् है।

ऋट्ट, ऋट्टीको।

ऋट्टुक् (सं० पु०) १ ऋट्ट पत्तो, एक सारस।
२ ऋट्ट, ऋट्टा।

ऋट्ट (सं० पु०-स्त्री०) ऋट्ट। ऋट्टमैट्टः ऋट्टः।
१ गज, बायो। २ इक्षिमी, इक्षिमी। वेदाक मतसे इक्षिमीका दुग्ध विक्षिप्त्तु कषायदुग्ध, महुररस, इष्य, गुह, जिम्ब, ज्यैर्षकर, यौतस, बह्वक्षी चित्तकर पीर बह्वकारक होता है। ३ ऋट्टिकार इष्य, ऋट्टिका पीड़। ४ महीषविषिय, एक वृद्धी। ५ सघोर यथाकार ऋट्टिय, एक वृद्धिका इला। इससे ऋट्टमै दूध बहुत होता है। धाकार मन्थे मिलता है। इसमें इक्षिक्त्तुपलाय केहि दो पत्र निबद्धते हैं। गुष्मै यह क्षेमरसके तुल्य है। (इट्ट)

ऋट्टक (सं० स्त्री०) ऋट्टिकारका विषमय फल।

ऋट्टका (सं० स्त्री०) ऋट्टु कायें कन् टाय।
इक्षिमी, इक्षिमी।

ऋट्टुपाक (सं० पु०) ऋट्टु पाकयति रसति,
ऋट्टु पाक विष् पष्। इक्षिमी-पाकक, इक्षिमीका मन्दावत।

ऋट्टुम् (सं० पु०) ऋट्टी ऋट्टुविषये भवति इक्षि
माक्षप्रवर्तनाय प्रभवति, ऋट्टु-म् इक्षि। १ पाककाय
नामक सुनि। यद्ये इक्षिमाकाके प्रवर्तक से।

(सि०) २ इक्षिमीके उत्पन्न, इक्षिमीके पेदा।

ऋट्टमती (सं० स्त्री०) नकुक्ष्मी पत्ती। यह वैदि
राजकी कन्दा थी। (मत्स्य, पक्ष २१५०)

ऋट्टपठ (सं० पु०) सुविपाक वा बह्वक्षान् इक्षी
बद्धा या ताकृतवर बायीं।

ऋट्टुसत (सं० पु०) १ पाककाय सुनि। २ गज-
यावक हाथीका दवा।

ऋट्ट (सं० पु०-स्त्री०) ऋट्टु। १ गज, बायीं।
२ इक्षिमी, इक्षिमी।

ऋटा (सिं० पु०) बला, बरियारा।

ऋवर (सं० पु०) १ तुल्य नामक मन्थ द्रव्य,
मिशारक सोबाग। २ मूषिक, चूड़ा।

ऋट्टुक् (सं० पु०) ऋट्टु रमिना इन्दुरिक्त्तु कायति
शोभते, ऋट्टु के क। मूषक, मन्थक, चाँदनी
तरङ्ग चमकनीकाको घास। मन्थक ईको।

ऋट्टुक् (सिं० स्त्री०) इष्यनिष्प, काको या मोठी
नीम।

ऋट्ट (सिं० स्त्री०) वक्त्तियेय, एक कपड़ा। यह
रैयमसे बनती और काको तथा पतकी रहती है।
पश्चिमिमें इसे ज्यै (Grape) कहते हैं।

ऋट्टु (सिं० पु) कण्डु, एक घास। यह कर्तमें
उत्पन्न होता है। कर्त्त पर ऋट्टु फेक पड़ता है।
इष्यक पीका पीर पतला रहता है। इष्यककी
गांठसे दो सुदीर्घ पत्र पड़ते हैं। बालक इष्यकको
खाय इससे व्याधकारमें कति है। ऋट्टुका घास भी
बनता है। यह पश्चिमिमें विषका महीयक है।
इसका रस निबालकर पिशानिमें पचौम कतर जाती
है। मन्थक ईको।

ऋट्ट (सिं० वि०) कठोर कड़ा।

ऋट्टा (सिं० पु०) कर्ताविषिय एक बैल। इसमें
कण्डक रहते पीर पत्र निम्नकी पत्रसे मिलते हैं।
पैर वेमाथ मास यह पृष्णता है। इससे पटोकरत्
पत्रमें दोष बधिक हीमें है। ऋट्टा प्रति ऋट्टु
कमता है। पत्रका माक बनता है। शोभेके बिना
शामुधार पार्श्व नयनके प्रथम दिक्क ऋट्टा मन्थ
करनेसे बहार पदंन विषका नहीं होती। इसका पत्र
सतप्याल पर प्रयोग किया जाता है।

ऋट्ट (सिं० पु०) १ तुल्यविषिय। यह एक इष्य
सुद्ध है। इसे समय करके बुझाते हैं। परिमाणमें
ऋट्ट दो सुद्धसे कम नहीं पड़ता। पादपेय गोला
कार होनिसे इसे भूमिपर रख नहीं सकते।
२ ऋट्ट मानिकी कधरत।

ऋट्टो (सिं० स्त्री०) एक पत्ती। इससे इष्यको
एक कर डेर लगाया जाता है।

ऋटा (सिं० पु०) १ कारक, एक बैल। यह

लता क्षुद्र होती है। इसके पत्र नोकदार और पांच मागमें विभक्त रहते हैं। फल लम्बा तथा गुप्ती-जैसा आता और अपने त्वक् पर छोटा-बड़ा दाना लाता है। करैलीकी तरकारी बहुत अच्छी होती है। यह कच्चे आमका कुचला और मसाला भर तेलमें पकाया जाता है। भली भाँति भूँजा करैला कई दिन तक नहीं बिगड़ता। इसका छोलन भी तेलमें तलकर खाते हैं। करैलीका प्रचार बाजारमें बिका करता है। इसे शीष और वर्षा ऋतुमें बोते हैं। शीष ऋतुका करैला फाल्गुन मास कारियोंमें लगाया जाता है। इसकी लता भूमि पर फैल पड़ती और तीन-चार मास चलती है। फल पोला निकलता और कलौंजी वनानेमें लगता है। वर्षा ऋतुका करैला किसी पेड़ या लकड़ीके ठाट पर चढ़ाया जाता है। यह कई वर्ष तक फूला फला करता है। फल सूझ एवं भरा रहता है। जङ्गली करैलीका नाम करैली है।

इसका अङ्गरेजी वैज्ञानिक नाम मोमोर्डिका चारान्थिया (*Momordica Charantia*) है। इसे बंगनामें करन्ता, उडियामें करेन, आसामीमें काकरन, पञ्जाबीमें करिन्ता, सिन्धीमें करैली, मराठीमें कारन्ता, मारवाडीमें कारली, गुजरातीमें करेलु, तामिलमें पायकाचेटि, तेलगुमें तेल्लकाकर, कनाडीमें कागपलकाइ, मल्लयमें क्यक, ब्रह्मीमें केहिनगाविन, सिंघलीमें करविन्त और प्रचीमें किसानलवरी कहते हैं। यह समग्र भारतमें लगाया और मलय, चीन तथा अफ्रीकामें भी पाया जाता है। करैला नामा प्रकारका होता है। इसे फरवरी-मार्च मास उत्तम भूमिमें बोना चाहिये। कारियों और उनमें बोये जानेवाले बीजोंके बीच दो-दो फीटका अन्तर रहता है। पहले इसे प्रति सप्ताह दो बार सींचते हैं। लता फल पड़ने पर सप्ताहमें एक ही बार पानी देना पड़ता है। १८७७-७८ ई०को दुर्भिक्षके समय खान्देश जिलेके लोगोंने करैलीकी पत्तियाँ घषा जीवन धारण किया था।

२ शरकी गुटिका। यह दीर्घ रहता और सालामें

वही गुटिका या कोढ़दार सुद्राके मध्य पड़ता है। ३ अग्निक्रोडाविशेष, एक श्रोतगघाजी। काररेल देखा। करैली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल, छोटा करैला। इसका फल प्रतिक्षुद्र और कट्टा होता है। करैवर (सं० पु०) कीर्षते घिष्यते पापाणः कपिभिरिति यावत् करस्तस्मिन् घियते उत्पद्यते, करे ह-अच्। सिद्धक, लोवान्।

करैत (हिं० पु०) सर्पविशेष, एक साप। यह काला और जङ्गरीला होता है। करैल (हिं० स्त्री०) १ मृत्तिकाविशेष, कचिला मट्टो। यह काली होती है। शीष ऋतुमें तडागका जल स्रवण पर करैल निकलती है। यह अपने कठोरताके लिये प्रसिद्ध है। इसकी दीवार बहुत मजबूत बनती है। पानीमें घोलनेसे करैल लपलसानेसे लगती है। यह गिर मलनेके भी काम आती है। कुन्हार इसे चाक पर चढ़ा खिलौने वगैरह तैयार करते हैं। २ भूमिविशेष, एक जमीन्। इसकी मिट्टी काली और चिकनी रहती है। यह भूमि मानव देशमें अधिक देख पड़ती है। (पु०) ३ करोर, वासका अंशुवा।

करैला (हिं० पु०) कारवेल, करैला। करैली (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल, छोटा करैला। करैलो (हिं० स्त्री०) कचिला मट्टो। करोट (सं० पु०) के मस्तके रोटी दीप्यते, क-रुट्-अच्। गिरास्थि, मस्केको हड्डो, खोपड़ा। (*Cranium*) करोट (हिं० स्त्री०) करवट, दाहने या बायें दाहके बल लेटनेको हालत।

करोटक (सं० पु०) सर्पविशेष, एक साप। करोटन (अ० पु० = *Croton*) हृद्य जालिविशेष, पीदेकी एक क्रिष्ण। यह गुल्मधत् (भाडदार) होता है। त्वण आर्द्र और रस कटु दुग्धवत् निकलता है। किसी किसी करोटनमें कण्टक भी रहते हैं। यह हृद्य पनेक प्रकारके देखे जाते हैं। प्रत्येक करोटनमें मध्वरी आती है। फलमें घोज रहते हैं। एरण्डादि इसी श्रेणीके हृद्य हैं। करोटनका तैल और अन्न शीषघमें व्यवहृत होता है।

करोटि (सं० क्री०) क-इट्, रुम् । गिरौलि, खोपड़ी ।
 कज्जल देवी ।
 करोटिका, कपीट देवी ।
 करोटी (सं० क्री०) करोट गोरादिकाम् क्रीप् ।
 गिरौलि, खोपड़ी ।
 करोड़ (हिं० वि०) एक सौटी एक मत लक्ष, बी
 लाख, १०००००० ।
 करोड़मुख (हिं० वि०) मिथ्यावादी, झूठा, धौंसिया,
 लज्जोभयङ्ग ।
 करोड़पती (हिं० वि०) कौटि कौटि रूपयेका पंचोय,
 करोड़ों रुपये रखनेवाला ।
 करोड़ी (हिं० पु०) टट्टाबीय, प्यसाची, रोचड़िया ।
 करोत (हिं० पु०) करपत्र पारा ।
 करोत्तर (सं० पु०) करार्थां कत्तर समूहः । १ कर
 समूह बिचौका डेर । २ सुबकर, भारी मजदूर ।
 करोत्पल (सं० क्री०) करपत्रक अंशक-केका दाय ।
 करोदक (सं० क्री०) इष्टात लक्ष, चाबमि रखा या
 पड़ा हुआ पानी ।
 करालना, कपीट देवी ।
 करोद्वेज (सं० पु०) लक्षसंपन्न, बाबा करली ।
 करोध (हिं०) नीर देवी ।
 करोना (हिं० लि०) बिबी पेने बीजने रमकना,
 पुरपना ।
 करोनी (हिं० क्री०) १ पुरपन करोचन । एक
 दुग्ध वा दधिवा बी च द्य पात्रमें चिपका रहनेसे पुर
 चकर उतारा जाता, वही करोनी कहाता है । प्रवा-
 दानुसार करोनी या करोचन यानिधे बालकोंकी सुधि
 मन्द पड़ जाती है । इसीसे जियां प्रायः पपने
 बाबुओंकी करोचन नहीं खिचार्ते । २ यन्त्रविशेष,
 एक बीमार । यह पित्त वा सौहृदके बनती पीर
 एक मुख वा दक्षिणे पात्रमें बिपथे हुये अंशको
 पुरचनेमें चलतो है ।
 करोर (हिं० वि०) कौटि, करोड़ ।
 करोसा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष गड़वा ।
 २ मज्जक, रोह ।
 करीबा (हिं० वि०) लक्ष, प्राम, चाबका ।

करीबी (हिं० क्री०) १ लक्षबीरक, बाबा बीरा ।
 करोट (हिं० क्री०) करबट, दाढ़ने या बाघे ज्ञापके
 बल सेटनेकी हालत । बावीं करोट सेटनेसे खाभा
 जख इज्जत होता है ।
 करोदा (हिं० पु०) १ करमदंष्टक, एक अंडोहा
 झाड़ । इसके पत्र सुदूर रहते पीर निम्नवर्षके पत्रसे
 मिलते हैं । सुष्य युषिकाकी भांति घेत एवं सुगन्धि
 बनते पीर देखनेमें बहुत सुन्दर लंघते हैं । वर्षा
 ऋतुमें एक पाति पीर पत्र हीनिधे बटनी तथा पचार
 बनानिधे काममें लाये-जाते । करोदिधे साधा निच
 लते पीर पत्रको रहमें हालते हैं । माथा बीसनेसे
 साधा प्राप्त होता है । दाघिबायमें करोदिधे बाहसे
 केयमारनी पीर प्यसाका बनायो जाता है । कर देवी ।
 २ मुखविशेष, एक झाड़ । यह लक्षबाबीर्य
 रहता पीर बनमें लपकता है । एक सुदूर एवं मिह
 होता है । ३ करैरोगविशेष, जानकी एक बीमारी ।
 अर्धके निचट जो मिलतो निचल पातो यही करोदा
 कहलातो है ।
 करोदिया (हिं० वि०) लक्ष रहस्यविशेष, करो-
 दिबा रह रहनेवाला । (पु०) २ अर्धविशेष, एक
 रह । यह वर्षे रक रहता, बिन्दु अर्धमें मोलतोका
 लक्ष पय भलकता है । यह प्यसाकी रहकी तरह
 एक पात्र महावर्षे एक, पात्र हटाके पत्रपर पीर
 पाठ भांति मोल मिचानिधे तैयार होता है ।
 करोत (हिं० पु०) १ करपत्र, पारा । (क्री०)
 २ कड़री पीरत ।
 करोता (हिं० पु०) १ करोत, पारा । २ करेक,
 कचिसा मही । ३ करावा, बड़ी मीमी । (क्री०)
 ४ कड़री पीरत ।
 करोती (हिं० क्री०) १ सुदूर करपत्र पारो ।
 २ करावा, संभोकी मीमी । ३ मीमेकी मही ।
 करोना (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक बीमार । यह
 एक जेनी या लक्षम है । अरेर रहने पात्रों पर
 बाइबाय बनाते है ।
 करोला (हिं० पु०) बिबेबासा पादमे, जो यए
 मिचारेको हडा मया उठाता हो ।

करीली (हिं० स्त्री०) खड्ग, तलवार। यह सीधी रहती और भोकनेमें चसती है।

करीली—१ राजपूतानिका एक देशीय राज्य। यह पचा० २६° ३' एवं २६° ४८' उ० और देशा० ७६° ३५' तथा ७७° २६' पू०के मध्य अवस्थित है। यहां भरतपुर और करीली एजेन्सीका तत्त्वावधान चलता है। इसके उत्तर एवं उत्तरपूर्व भरतपुर तथा धवलपुर, दक्षिणपश्चिम जयपुर और दक्षिण-पूर्व चम्बल नदी है। चम्बल नदी ही इसे ग्वालियरसे पृथक् करती है। भूमिका परिमाण १२०८ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १५ लाख है।

करीली राज्य उच्च, निम्न और पर्वतमय है। उत्तर और गिरिमाला सीमाके प्राचीररूपसे मस्तक उठाने खड़ी है। गिरिका शृङ्खला उच्चतामें १४०० फीटसे अधिक नहीं। यहां चम्बल नदी ही प्रधान है। इस नदीसे पांच शाखा निकल करीलीमें बही हैं। नाम पञ्चनद है। पञ्चनद उत्तरमुखी है वाणगङ्गासे मिल गया है। करीली नगरके दक्षिण-पश्चिम दिशि और जिरौते नामसे दो क्षुद्र नदी बहती हैं। इन दोनों नदीमें वर्षाकाल भिन्न अथवा समय अति-सामान्य जल रहता है। यहां पर्वतोंके कुण्डोंका जल उष्णप्रधान और पस्त्रास्थकर है।

पर्वतमें प्रधानतः दो प्रकारका प्रस्तर है—एक विन्ध्य और अथवा मणिप्रस्तर। जहां मणिप्रस्तर रहता, उसीकी चारों ओर अधिक परिमाणसे विन्ध्य भी देख पड़ता है। स्थानीय चूनेका पत्थर नीलाभ, कपिल अथवा हरिहरणविशिष्ट होता है। बढ़िया विस्फोरी पत्थर भी पाया जाता है। ताजमहलका प्रायः अनिकांश करीलीके पत्थरसे ही बना है। यहांका एक पत्थर अनेक स्थानमें चूनेके लिये फूँका जाता है। करीलीके अधिकांश ग्राम प्रस्तरनिर्मित है। यहांसे उत्तरपूर्व पर्वतपर लौह-खनि निकली है।

जीवजल—चम्बल नदीके निकट धनमें सिंह, भालुका, हरिण, सांभर, और नीलगाय बहते हैं। नगरके पास शगक, उहिड़ाल, चक्रवाक, कुल्लुट, एवं जलाशयवादिमें बक, हंस, कारण्डव प्रभृति नाना:

प्रकार पक्षी देख पड़ते हैं। मत्स्यादि भी बहुत हैं। करीलीके पश्चिमांशमें विस्तर सय, कुम्भीर प्रभृति सरोत्प रहते हैं।

उद्योग—करीलीका उच्च गिरिमात्रामें बड़ा कोयों उद्योग नहीं। चम्बलनदीके ऊर्ध्वभागमें घातकी, पलाग, खदिर, कार्पास, शाल, गर्जन, और निम्नवृक्ष होता है। यहां कृषिमें गव, गीह, चना, तम्बाकू, धान्य, ज्वार, बाजरा, इन्तु और सनकी उत्पत्ति है। स्थानीय जलाशय, कुण्ड और चम्बल नदीके तरङ्गमें कृषिकार्य चलता है।

वाणिज्य—यहां वस्त्र, लवण, इन्तु, तुला, मद्यिप एवं छप मंगाया और धान्य, कार्पास तथा छाग वाहर भेजा जाता है।

जलवायु—स्थानीय जलवायु अधिक मन्द नहीं। प्वर, अतिसार और वातरोग खग जाता है। किन्तु दूररी बीमारी इस राज्यमें नहीं होती।

इतिहास—सुकजीकी कारिकाके अनुसार करीलीके प्रथम राजा धर्मपाल थे। नीचे उक्त कारिका दी जाती है—

सुकजीकी कारिका।	वर्षानुसारका विवरण।	समय।
धर्मपाल		
सिंहपाल		
जगपाल		
नरपालदेव		
संयामपाल		
कुण्डपाल		
सीधपाल		
पोषपाल		
विरामपाल		
शेष्ठपाल		
विजयपाल	विजयपाल	१०१० ई०।
विजयपाल	विजयपाल	१०६० ”
धर्मपाल	चित्तपाल	१०८० ”
कुमार (कुंवर) पाल	धर्मपाल	११२० ”
अजयपाल	कुंवरपाल	११५० ”
हरिपाल	अजयपाल	११८० ”
सीधपाल	हरिपाल	११८६ ”
अनूपपाल	सीधपाल	१२१० ”

सुरभी की करिया ।

कमर ।

इरीया	१९११
राजापन	१९१०
मिनीरफन	१९०८
विजयपन	१९०८
बहादुरपन	१९११
कुम्हारपन	१९१८
पतु नरपन (१४)	१९०७
मिथुनविजयपन	१९१८
बनबनारपन	१९१८
	१९११
बनबनारपन	१९१९
बागरीपन	१९१३
वीनारपन	१९१६
बनबनारपन	१९१८
	१९११
कुम्हार	१९१९
पुष्परीपन	१९१३
बनबनार (१४)	१९१६
रामपन	१९१८
बनबनार	१९१०
बनबनार (१४)	१९१९
बनबनार	१९०९
पुष्परीपन	१९०६
बनबनार (१४)	१९०८
पुष्परीपन	१९०९
बनबनार	१९१३
बनबनार (१४)	१९१६
बनबनार	१९१६
बनबनार	१९१६

करोलीके राजा अर्जुनराज अपनेको जन्मके अक्षर और सुदुर्लभ मानते थे। पक्षी यह अर्थ जन्मदात्रके निम्न अक्षराममें वाच करता था। किसी समय बरसानमें भी इसका राजत्व रहा। १०११ ई०को सुलतमानोंने यह ज्ञान अधिकार किया था। -उक्त समयसे इस अर्थमें करोलीमें या अपना राज्य बनाया। १३१३ ई०को मालनपाल महमूद खिलजेने करोली आक्रमण किया था। अक्षर बादशाहने माल

अर्थसे पीछे इस राज्यको दिल्लीमें मिला लिया। सुम जोके औरवका रवि कम कम गया, तब महापादोंने इस ज्ञानको अधिकार कर १५००) १० बार्थिक कर दिया। १८१० ई०को विजयाने करोलीका उपसल अर्थकोको छोड़ा था। अर्थकोने करोलीके राजासे यह जन्मदात्र नामा—विजय पक्षसे करोलीके राजा अर्थकोके हाथ अर्थकोको यथाचाय साहाय्य देगी। फिर करोलीका राज्य अर्थकोके पासित हुआ।

१८१२ ई०को महापाल नरसिंहने इसको छोड़ा था। उसने पुत्रादि न रहनेसे करोलीको अर्थकोके राज्यमें मिलानेकी बात कही। सिन्धु अर्थके अर्थ नामके पीछे राजाके नामको मदनपालको राज्यका अधिकार छोड़ा गया। मदनपालने १८१३ ई०की विद्रोहके समय जोडाके विद्रोहियोंके विपक्ष अन्य श्रेष्ठ अर्थकोको अर्थके साहाय्य दिया था। इसीसे अर्थकोने उनको बि, धी, एध, पार्थिक अर्थके विनूयित किया। १८१६ ज्ञानमें १० तोपोंको सहायो मी हो गयो थी। १८१७ ई०को मदनपालका भ्रूलु भोमपर दो राजाओंके पीछे १८०८ ई०में अर्जुन पालको करोलीका अधिकार मिला।

करोली राज्यके महसूबके बितना हो कर दिया जाता है। यहां रीतिके अहुपर सुविध नहीं। राजाके सिपाहो की सुविधका काम करते हैं। करोलीमें १६० घना, १७०० पैदल, १२ मोठ्याय घोर ४० तोपें हैं। सिपाही निम्नलिखित १२ दुर्गमें रहते हैं—करोली नगर, लंडनपुर, मन्देश, नाटोको, सपोतर, बीसतपुर, बाबी, जन्पुर, निम्दा, लूदा, उन्द घोर जोदाई। करोलीकी टकसाक पक्षक है। उसमें बासीका अपना बनाता है।

१ करोली राज्यका प्रधान नगर। यह अथा० २६ १०' उ० और देशा० ७७° १' पू०पर मजुदाके ११ कोस दूर अवस्थित है। किसे किसीके मता उचार अर्जुनदेवके प्रतिष्ठित अक्षरकोनाके मन्दिरके भी इस मतका नाम करोली पड़ा। १९४८ ई०का अर्जुनदेवके अर्थ नगर बनाया था। किसी समय

वदते भी पार्वतीय मीना जातिके उत्पातसे इसकी संवृद्धि मिट गयी। १५०६ ई०को राजा गोपालदासके शासनकाल इस नगरने पूर्वथी पायी थी। उसी समय यहाँ बहु सुरम्य दृश्य बने। नगर प्रायः एक कीस है। इसकी चारो ओर विल्लीरी पत्थरका प्राचीर खड़ा है। नगरमें घुसनेकी ६ सिंघद्वार और ११ गुप्तद्वार है। करौलीके मध्य गोपालदासके समयका एक सुदृष्ट राजप्रासाद बना है। प्रासादकी चारो ओर पत्थर प्राचीर है। सिंघद्वार दो हैं। प्रासादके मध्य राजमहल और दावान-भ्राम नामक गृह देखने योग्य है। इन दोनों गृहोंका चित्र विचित्र कारुकार्य और गिल्प-नेपथ्य देखनेसे निर्माणकारियोंकी यथेष्ट प्रशंसा करना पडती है। यहाँ शिकारगच्छ, शिकारमहल और भ्राममहल नामक तीन मनोरम उद्यान बने हैं।

कर्क (सं० पु०) कृ-क। वृदाधार्षिकविभाः कः। ७५. १००।
१ श्वेत भ्रू, सफेद घोड़ा। २ कुलीर, केकड़ा। इसका शरीर वस्त्रसदृश गद्दास्थिसे आच्छादित रहता है। पाद दश होते हैं। उनमें अगला जोड़ा चुड़ल बन जाता है। ३ दर्पण, भायीना। ४ घट, घडा। ५ कर्कट राशि। पुनर्वसुके अन्तिम चरण, पुष्या और अश्लेषा नक्षत्रपर यह राशि रहता है। ६ अग्नि, आग। ७ तिल। ८ सौन्दर्य, खूबसूरती। ९ कण्टक, काटा। १० कर्कटवृक्ष, ककड़ासींगी। ११ कडूर, किसी किस्रका पत्थर। १२ बदरी वृक्ष, बेरका पेड़, बेरी। १३ विस्ववृक्ष, बेलका पेड़। १४ गन्धक। १५ काक, कौवा। १६ कष्टपत्ती, एक चिड़िया। १७ मानमेद, एक तौल। १८ वृक्ष-विशेष, एक पेड़। १९ आत्वायनश्रौतसूत्रके एक भाष्यकार। (त्रि०) २० शत्रुवर्ष, सफेद। २१ अँध, बडा। २२ उत्तम, अच्छा।

कर्क—राष्ट्रकूटाधिपति गोविन्दराजके पुत्र। खोदित शिलालेखके अनुसार यही प्रथम कर्क रहे। इनके दो पुत्र थे—इन्द्रराज और कृष्णराज। कर्कके मरने-पर राष्ट्रकूटराज्य दो भागमें बंट गया। ६८५ ई०को कर्क राज्य करते थे। राष्ट्रकूटके।

राष्ट्रकूट-वंशीय २य कर्क—गुजरातराज ३य इन्द्रके पुत्र रहे। उनका अपर नाम सुवर्णवर्ष था। वह गुजरातमें राजत्व चलाते थे। २य ध्रुवराज उनके पुत्र रहे। वरदा और अपर स्थानके ताम्रशासन और शिलालेखमें उनका समय ७३४ और ७४९ तक निर्दिष्ट है। उक्त उभय राष्ट्रकूटराज प्रबल पराक्रान्त थे। इस वंशमें एक ३य कर्क भी रहे। उनका अपर नाम यमोदवर्ष वा वल्लभनरेन्द्र था। पिता ४र्थ कृष्णराज रहे। समय ९७२-७३ ई० बताया जाता है। कर्क उपाध्याय—कात्यायनश्रौतसूत्र और पारस्कर-गृह्य-सूत्रके भाष्यकार। सायणाचार्यसे पहले यह विद्वान मान रहे। सायणने अपने वेदभाष्यमें कर्कका मत उद्धृत किया है।

कर्कखण्ड (सं० पु०) कर्कः खण्डः भूमिभागो यत्, बहुव्री०। जनपदविशेष, एक सुक्त। (भारत, वन १११-०२) कर्कचिर्मिटिका, कर्कचिर्मिटो श्लो। कर्कचिर्मिटी (सं० म्नी०) कर्कवर्णा शक्ता चिर्मिटी, मध्यपदन्तो०। १ चिर्मिटी, छोटी ककड़ी। २ कर्कटी भेद, किसी किस्रकी ककड़ी।

कर्कट (सं० पु०) कर्क-भटन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कर्क, चूडमात्री, चूडामलक और कर्कफल है। फल छोटे भाँवलेके बराबर होता है। यह रुच्य, कपाय, पतिदीपन, कफपित्तकर, ग्राही, चक्षुष्य, लघु और शीतल है। (राजनिघण्टु) २ जलजन्तुविशेष, केकड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—कर्कटक, कुलीर, कुलीरक, संदंशक, पङ्कवास और तिर्यकगामौ है। इसको बंगलामें काकडा, मराठीमें दरजाका केकड़ा, तामिलमें कहलनांदु, तेलगुमें समुद्रपु, मलयमें कपित्थ, फारसीमें पञ्जपा, अरबीमें खिरचिह, लाटिनमें कानसर (Cancer) और अंगरेजीमें क्राब (Crab) कहते हैं। युरोपीय प्राणितत्वविदोंने कर्कट जातिकी वृदा-वर्षविशिष्ट दशपादौ जीवज्योषी (Crustaceans of the order Decapoda)के मध्य माना है।

इसके वचःस्थलनिःसृत पाँव जोड़े प्रत्यक्ष होते हैं। इसीसे फारसीमें इसे 'पञ्जपा' अर्थात् पञ्चपद-

विग्रह बना है। वचनेयके प्रयोग पाठ्यमें आसि-
न्द्य वैदित है।

कॉन्ट पुत्रिबोधे नामा ज्ञानमें रहता है। फिर
यह कथो प्रकारका है। समुद्रमें रहनेवाला कॉन्ट
जमावतः बहुत बढ़ा होता है। विन्दु जो नदीमें
वास करता, वह सासुद्रिक कॉन्टको पचिया हुए
पड़ता है। फिर जलामयमें रहनेवाला नदीके कॉन्ट-
के जो छोटा निक्षलता है। सखल प्रकार कॉन्टका
प्रकारके देखनेमें समान नहीं लगता। देय
मेह पीर बलवाहुके पचस्वामिदेके नामा ज्ञानपर
कथो प्रकारका कॉन्ट होता है। यह पच्छिम जीव
है। प्रथमावस्था पर भाउवचनेमें कॉन्ट पति हुए
हिम्माकार रहता है। समय पानिसे हिम्ब पदनेपर
यह निक्षल पड़ता है। उस परस्वामि रहको बिधी
प्रकारका छोड़ा समझनेके ज्ञान कल्पक होता है।
यह हिम्बके निक्षलते ही जलमें तेरने समता है।
यह समय रचको पनिक विपद् मिथना पड़ता
है। जलकर जीव पचना पाहार समझ सखो
जात कॉन्ट पकड़कर खा जाती हैं। यह क्रितना
ही बढ़ता, लतना ही रचका रूप भी बढ़सता है।
प्रथमावस्थाके पांच प्रकार रूप बढ़नेपर मज्जत
कॉन्ट रूप देख पड़ता है।

यह समुद्रके पतल सखिच, जलके तट पड़वा
सखिच निक्षलक पर्यंतके यतमें रहता है। फिर उस
वचनेमें जो कॉन्ट मर्त बना वास करता जहां समुद्र
पचवा नदीका जल पचय-पचय पड़ता है।
दो एक जालिबो छोड़ सखल प्रकार कॉन्ट पद द्वारा
तेर नहीं सखता, वर जलपर भूमा करता है।

इसके बराबर भ्रमङ्गान् पीर सुसुद्ध जलकर जीव
दूधरा नहीं होता। बहुत कॉन्ट एकत्र होते ही
हुए चर पड़ता है। बलवान् विजय पाता पीर जलि-
भोच मारा जाता है। मोतकाचको यह गमीर जलमें
रहता, फिर पोच लनेपर तटके निक्षल प्या पड़ता
है। वृद्धिबोका सखल प्रकार कखट मानवजातिके
पानि कायक होता है। राजनिक्षलके मतके यह
मलमूलपरिष्कारक, मन्मथन्यागकारी (भङ्गजानको

थोड़ लक्ष्मिवाका) पीर बाहुपित्तनायक है। जल-
कॉन्ट पर्याप्त काका किचड़ा बककारक, ईश्वर तथा
पीर बाहुनायक होता है।

१ कङ्कपयो, बरकर, एक विदिया। २ पद्मसूत्र,
नदीक, बंधकको मोटो जड़। ३ तुम्बी, लौकी।
४ देवादि हादय राजिमें पतुर्षं रामि। यह रामि
मुनरुं नक्षत्रके शिव पादके पुत्रा पीर पसेवा नक्षत्र
तक रहता है। इसके देवता ह्यौराहति है। इनका
प्रथम उक्त होता है। यह ज्योतर्ष, कपडकृति,
जिन्ध, जलकर, विप्रबर्ष, जलर दिग्पाच, बहुरोवह
पीर बहु जलानयायी है। कॉन्ट रामिमें जल सीनेके
मनुष्य कपटचित्त, जदुमाभो, मानवाहुमल, पचवायो
पीर पचको निक्षलता है। फिर जलकाचोन चन्द्र
रच रामिमें रहनेके मानव मुञ्जगीतादि बहु कथा
मिष्ट, निर्मलकृति, ज्ञय, सुगन्धमिय, जलकेसिमिय,
जलवान्, वृद्धिमान् पीर हाता होता है। जो कॉन्ट
जलमें जल पड़य करता, वह भोगो सर्वजनमिय,
मिष्टापचानमोयो पीर पाकोपमिय रहता है।

७ सर्पविधिय, एक लांप। ८ कङ्कग, बढ़ा।
९ जीलक, बीस। १० कपडक, कांटा। ११ रोग
विधिय, एक बीमारी (Cancer)। यह पचदक्षत-
रोग पचाम्य होता है। १२ तुसादक्षका धामुम्ब
प्राप्त तराबुको लफ्फोका टिका सिरा। रघोमें पच
कुंको रघो बंधती है। १३ मच्छको जीवा, हाय
रिका निष्क हुतर। १४ गार्भमकोषच सेमरका पीड़।
१५ बिल्लक, देलका पीड़। १६ कॉन्टपुड़, कचड़ा
वींगो। १७ सड़का। १८ दम्बहस्तकविधिय, नाचको
एक विद्या। रघमें जलपचको पङ्कमि बाह्य एवं
पच्यन्तर रूपके मिखा चटकायो जाती है। यह
जासलके भावको बताता है।

कॉन्टक (सं० पु० जो०) कॉन्ट एवं जालें जन्।
१ जलोर, किचड़ा। २ कॉन्टरायि। ३ हचविधिय,
एक पीड़। ४ काण्ड मन्म नायक पञ्जिमविधिय,
जम्बो टूटनेकी बीमारी। ५ विपविधिय, एक जहर।
यह जलबोदयविच जलपरकन्द विषमें पच्यतम है।
६ जीलक, बीस। यह किचड़ेके पचको मांति

टेढा रहता है। ७ इक्षुमेद, किसी विस्फकी कख।
 ८ इक्षु, कख। ९ काष्ठामलक, कङ्कली भाँवला।
 १० सनिपातचर विशेष, एक बुखार। यह मध्यहीन-
 प्रवृद्ध वातादिसे उत्पन्न होता है। इससे ध्या, वैपथु,
 लृष्या, दाह, गौरव, अग्निमान्य प्रभृति रोग लग जाते
 हैं। फिर अन्तर्दाह और वाक्यनिरोध भी हुवा करता
 है। (भावप्रकाश) ११ कर्कटशृङ्ग, ककड़ासींगी।

कर्कटकरञ्ज (सं० पु०) रज्जुविशेष, एक रस्सी।
 इसमें केकड़ेके पत्ते-जैसी एक कौल लगी रहती है।
 कर्कटकास्थि (सं० स्त्री०) कुलीरकास्थि, केकड़ेकी
 खोल।

कर्कटकी (सं० स्त्री०) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।
 २ कर्कटस्त्री, मादा केकड़ा।

कर्कटक्रान्ति (सं० स्त्री०) मिरचरेखासे साठे तेरह
 कोस उत्तरस्थित अक्ष-रेखा, अक्ष-सरतान् (Tropic
 of cancer)।

कर्कटचरण (सं० पु०) कुलीरकपाद, केकड़ेका पैर।
 कर्कटच्छुदा (सं० स्त्री०) १ पीतघोषा, पीले फूलकी
 तरौयी।

कर्कटवन्दी (सं० स्त्री०) १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल।
 २ शुकशिव्दी, खजोहरा। ३ अयामार्ग, लटकीरा।

कर्कटशृङ्गिका (सं० स्त्री०) कर्कटतुष्यं शृङ्गमस्याः,
 कर्कटशृङ्ग स्वार्थे कन्-टाप् इत्वम्। कर्कटशृङ्गी,
 ककड़ासींगी।

कर्कटशृङ्गी (सं० स्त्री०) कर्कटस्य शृङ्गमिव शृङ्गमग्र-
 भागो यस्याः, बहुव्री०। खनामख्यात कर्कटदंशा
 कार भौषधि, ककड़ासींगी। इसे नेपालीमें रनीवसुथी
 और पञ्जाबीमें भरखर कहते हैं। (Bhus succe-
 danea) यह वृक्ष कोयी ३० फीट ऊंचा होता है।
 हिमानयपर काश्मीरसे सिक्किम और भूटानतक कर्कट-
 शृङ्गी मिलती है। यह खसिया-पहाड़ और जापान-
 में भी पायी जाती है। जापानमें इसकी छालकी
 खोटकर रस निकालते हैं। इस रससे रङ्ग (धार्मिण)
 तैयार होता है। फिर फलको कुचल कर एक दूसरे
 फलके साथ उबानूते और मोम निकालते हैं। इस
 बनती है। कभी कभी यह 'जापानी

मोम'के नामसे विलायत भी बिकनेकी भेजा जाता है।
 इसका दुग्ध प्रति तीक्ष्ण होता है। फल एक वाष्पक
 चीज है। काश्मीरमें इसे चयरोगपर प्रयोग करते हैं।

भल्लुक कर्कटशृङ्गीका वल्कल खाता है। काष्ठ
 श्वेत, प्रभायुक तथा नृदु रहता, किन्तु अभ्यन्तरमें
 कुछ कृष्य निकलता है। इसका संस्कृत पर्याय—
 कर्कटारव्या, महाघोषा, शृङ्गी, कुलीरशृङ्गी, चक्राङ्गी,
 कुलिङ्गी, कासनायिनो, घोषा, वनमूर्धंजा, चक्रा,
 शिखरी, कर्कटाङ्गा, कर्कटी, विपाणिका कीनोरा,
 चन्द्राखटा और वालाङ्गा है। यह कपाय एवं तिक्त-
 रस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, शय, ज्वर, ऊर्ध्व वायु,
 लृष्या, कास, चिक्का, अरुचि तथा वमिनागक होती
 है। (रात्रि०)

कर्कटा (सं० स्त्री०) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।
 २ खिखसा। यह एक लता है। इसमें कारवेक मटग
 चूद्र फल आते हैं। कर्कटाके फलका शक बनाया
 जाता है।

कर्कटाक्ष (सं० पु०) कर्कट इव अक्षि ग्रन्थिभेदोऽप्य,
 बहुव्री०। कर्कटिकालता, ककड़ीकी बेल।

कर्कटास्थ, कर्कटाक्ष दिवा।

कर्कटाख्या (सं० स्त्री०) कर्कटस्य आख्या एव आख्या
 यस्याः, बहुव्री०। १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ कर्क-
 टिका, ककड़ो।

कर्कटाङ्गा (सं० स्त्री०) कर्कटस्य अङ्गं शृङ्गमिव शृङ्ग-
 मग्रभागमस्याः, कर्कटाङ्ग-टाप्। कर्कटाखा दिवा।

कर्कटादिलिह (सं० पु०) लिहविशेष, एक चटनी।
 कर्कटशृङ्गी, प्रतिविषा (अतीस), शृण्ठी, घातकी
 (धायक फूल), विल्व, बालक - (वाला), मुद्गा तथा
 कोलमल्ला (बेरकी गुठलीकी मींगी) बराबर बराबर
 कूटपीस और छानकर मधुके साथ बालकको चटानेसे
 ज्वर अतीसार एवं ग्रहणीरोग दूर हो जाता है।
 (रघुदास)

कर्कटास्थि (सं० स्त्री०) कर्कटस्य अस्थि, इ-तत्।
 कुलीरका अस्थि, केकड़ेकी खोल।

कर्कटाह (सं० पु०) कर्कटमाहयते स्पर्धते कण्टक-
 मयत्वात्, कर्कट-भा-ह-क। विखडक, बेलका पेड़।

कर्वटाङ्गा (सं० फ्री०) कर्वटाङ्ग टाप ।- कर्वटन्तुनी,
कर्वटाङ्गीनी ।

कर्वटि (सं० फ्री०) कर्व कर्तति प्राप्नोति, - कर्व कर्त्-
इन् मन्वादिङ्गाप् पञ्चोप । कर्वटो, कर्वटो ।

कर्वटिका (सं० फ्री०) कर्वटो कासे कर्त् टाप उभय ।
कर्वटो, कर्वटो ।

कर्वटिकस्य (सं० फ्री०) कामरूपको एक प्रोम ।
यावत्तौ पौष्टे एष प्रोमका प्रशस्तिय कारणा पङ्कतो है ।

"उपपन्नं यदा एव याव इत्या विधानम् ।

निरास कर्वटिकस्य प्रोमकास्य कर्वटिकम्" (शौमिनीयम्)

कर्वटिको (सं० फ्री०) कर्वटवत् भाकारो र्श्लक्ष्णः,
कर्वट इन् लोप । दावहरिद्रा दावहरद्वो ।

कर्वटो (सं० फ्री०) कर्व कर्त्तव्य पङ्कति गच्छति,
कर्व-पट् इन्-लोप मन्वादिङ्गाप् पञ्चोप वा कर्व
कर्तति, कर्व-कट् इन् लोम् । १ मालवलीङ्गक विमरका
पेङ्क । २ सर्पविषिक, एक साय । ३ देवदासो कता,
एक विल । ४ कर्वटन्तुनी, कर्वटाङ्गीनी । ५ पर्वा
पट्ट । ६ वोटिका इव, एक पेङ्क । ७ बदरी, वीरो ।
८ बोमक लोपक । ९ सट मन्त्री । १० तरोयो ।
११ पलकताविषिक, कर्वटो । (Cucumis Utilis-
simus) एषका संस्कृत पर्याय—कटुमूत्रो कर्षापनिष्ठा,
वीनस, मूलमक, मधुपा, इक्षिपर्षी, बोममहापञ्जा,
मूलसा, बहुमन्दा, कर्वटाङ्ग, यान्तु, विमट्टी,
वास्तुको, एषांश्च पीर इत्युचो है ।

एषे पचिमोत्तर प्रदेश, बङ्गाल, पीर पञ्जाबमें वीरि
है । फल घोषा या लुका होता है । यह कच्ची पकी
खायी जाती है । कच्ची कर्वटो लोबकर लसक पीर
कासी मिश्रक साब पानेसे बहुत पक्की बगती है ।
बोर्ड कोई एषको तरकारी भी बना कावते है ।

कर्वटोका कर्व १५ पीट लम्बा होता है । गर्म
कर्वटिबोपर मुलायम मूरे कर्ते रहते है । पहले यह
पीकी हरी लगती, बिन्तु पकनेसे लारखी पड़ती है ।
कर्वटो दोध मरुहा पक है । तुल्यप्रदेशमें दूसरे
कमय कर्व जो गर्मी चलती । एषके बिसे भूमि लुको,
बीसी पीर लुको रहना पाचिये । बाद काककर

खितमें खायो बनाते पीर तीन चार बीजो १ पीटके
पन्ना कराते है । इस दिनमें खेत खींचना पड़ता है ।

कर्वटोके बोजका रोक मोठा होता है ।- यह खानि
पीर बसामिमें बगता है ।- - - - -

सावप्रकाशके मत्तके कर्वटो मधुर, पीतस, कर्व
महरोबक, गुड, एचिकर पीर पित्तनायक है । पल
कर्वटो टाखा पन्नि एव पित्त बढ़ाती पीर मूत्रोप
बढातो है । तिष्ठ कर्वटो रज्जुपित्तनायक पीर
कर्वटोपकारक होती है । एषका पाक एष प्रकार
बनता है—परिपुष्ट कर्वटोको कर्वक तथा लोब
मिवाक मोकाकर कर्वक कर्वक काटते है । फिर तप्त
तेलमें तलकर हुन, गुण्य पीर मर्वरके खाब एव पानो
जातो है । पन्नात सूष्य एषाका कूर्च सुषाहित लर
निषो पड़ता है । यह पाक खानिमें पति प्लाडु पीर
आप्यके सिवे कामदायक है ।

कर्वटोबोव (सं० फ्री०) कर्वटोके पलका पीर
कर्वटोका बोका ।- एषे ठण्णारिमें कावते है ।

कर्वटु (सं० पु०) कर्वट कु । कर्वटुबो, पक
चिड़िया ।

कर्वट (सं० पु०) कर्वटका, कर्वटिया मही ।
कर्वट—एककथ पामविषिक , कर्त्त मन्वच (१११९)

कर्वन्तु, कर्वन्तु वीको ।
कर्वन्तु - (सं० पु० फ्री०) कर्व कर्त्तव्य कर्त्तति
कर्व भ-ङ्ग तुम् । कर्वटकरक, कर्वटोका पेङ्क ।

(Zasyphus jujuba) यह समथ माण्ड, बिङ्ग,
मन्वा, ब्रह्मदेश प्रफुल्लान्दान, पञ्चपीका, मलय
डोपपुष्प भोन पीर पड़ेसियामें होता है । भारतमें
एषका पादि उत्पत्तिज्ञान है । यहसे कर्वन्तु पन्व
देशमें फेला है । कर्वति—पहले साङ्गुमन्व कर्वटिकाकम
में एषोका पल का लोबनायात्रा निर्वाह करते थे ।

एषका कर्वक पीर पक चमड़ा रंजनेमें बनता है ।
ब्रह्मदेशमें कर्वन्तुके पलके रेशम मो रंगा जाता है ।
प्रतिष्ठ पलको पचिक खाया करते है । कर्वो कर्वो
पलको कूट पीर रोटी मो बना लेते है ।-पल पकका
खाय है । तकरके कोड़े भी एषके पलपर पकते है ।
मावप्रकाशके मत्तके यह पन्व, कर्त्तव्य तथा ईपु

मधुररस, स्निग्ध, तिक्त, गुरु और वातपित्तनाशक है। शुष्क ककंभ्रु मेदक, भस्मिकारक, सधु और लप्या, क्लान्ति तथा रक्तनाशक होता है।

कहीं कहीं ककंभ्रु शब्द क्लीवलिङ्ग भी कहा गया है। २ ककंभ्रुफल, भङ्गवेरी।

ककंभ्रुक (सं० क्ली०) बदरी फल, छोटा बेर। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु और पित्तानिल तथा वातपित्तहर होता है। (मदनपाठ)

ककंभ्रुकी (सं० स्त्री०) १ बदरीभेद, किसी किष्कि की बेरी। २ क्षुद्रबदरहल, भङ्गवेरी।

ककंभ्रुकुण (सं० पु०) ककंभ्रुणां पाकः, ककंभ्रुकुणप्। ककंभ्रुके पाकका समय, बेर पकनेका मौसम।

ककंभ्रुमती (सं० स्त्री०) ककंभ्रुरम्यत्र भूमौ इति शेषः, ककंभ्रु-मत्तुप्-डीप्। ककंभ्रुयुक्त भूमि, भङ्गवेरीकी जमीन।

ककंभ्रुरोहित (सं० स्त्री०) ककंभ्रुफलसदृश रक्तवर्ण, भङ्गवेरीके बेरकी तरह सुर्धामुर्ध।

ककंभ्रु (सं० पु० स्त्री०) ककं वण्टकं दधाति, ककं-घा-कु ततो निपातनात् सिद्धम्। ककंभ्रुहल, भङ्गवेरीका पेड़। ककंभ्रु टोकी।

ककंफल (सं० क्ली०) ककंभ्रुस्य ककंभ्रुफलम्, इ-तत्। १ ककंभ्रुफल, ककीड़ा। २ क्षुद्र आमकी, छोटा आमला।

ककंर (सं० पु० क्ली०) ककं-रा-क। १ चूर्ण खण्ड, चुनेका कण्ड। २ कहर, काकर। ३ दर्पण, चायीना।

४ सर्पविशेष, एक साप। (भाग ११४११६) ५ सुहर, जयीड़ा। ६ अस्त्रि, इल्ली। ७ तरुण पशु, नया जानवर। ८ चर्मखण्ड विशेष, चमडेका तसमा। (त्रि०)

ककंभ्रु-परन्। ९ कठोर, कडा। १० हठ, मजबूत।

ककंभ्रुट (सं० पु०) पश्चिमविशेष, एक चिड़िया।

ककंभ्रुश (सं० त्रि०) ककंभ्रुं ककंभ्रुं पश्चि यस्य, बहुव्री०। १ ककंभ्रु चक्षु, कडी आंखवाला। (पु०)

२ खञ्जनपत्नी, ममीला, भांपी, घोवन।

ककंभ्रुह (सं० पु०) ककंभ्रुटतुल्यं अङ्गं यस्य, बहुव्री०। कालकण्ठ, खञ्जन, घोवन।

ककंभ्रुट (सं० पु०) ककंभ्रुं शसं रटति प्रकाशयति, ककंभ्रु-ट-कु कुञ् वा। १ कटाघ, तिरछी नजर।

२ ककंभ्रुट पत्नी, एक चिड़िया।

ककंभ्रुटक (सं० पु०) ककंभ्रुं ककंभ्रुं रटति रौति, ककंभ्रु-ट-उकञ् स्त्रायं कन्। १ ककंभ्रुट पत्नी, एक चिड़िया। इसकी बोनी बहुत कडी होती है।

२ कटाघ, तिरछी नजर।

ककंभ्रुस्यक, ककंभ्रुस्य टोकी।

ककंभ्रुस्यक (सं० पु०) ककंभ्रुः कठोर भ्रुवः स्त्रायं कन्, कर्मधा०। भ्रुवकृप, चंधया कृवां। इसका मुख लणादिसे आच्छादित हो छिप जाता है।

ककंभ्रुस्यरान (सं० पु०) ककंभ्रुः सन् भ्रुवति प्राप्नोति, ककंभ्रु-रान्-भ्रु-भ्रु-च्। चूर्णकुन्तल, चुन्फ, छत्ता, घुंगर।

ककंभ्रुटि (वै० स्त्री०) वायविशेष, किसी किष्किका वाजा।

ककंभ्रुटिका (सं० स्त्री०) चक्षुखण्डं, आंखकी खुजला या किरकिराहट। ककंभ्रु टोकी।

ककंभ्रुरी (सं० स्त्री०) ककंभ्रुं हासवत् निर्मलं मलिनं राति, ककंभ्रु-रा-क गौरादित्वात् डोप्। १ सनास जनपात्र, गड्ढा। इसका संस्कृत पर्याय—भ्रातु, गलन्तिका, भ्रु और भाक है। २ तण्डुलधावनपात्र, चावल घोनेका वरतन। ३ गलन्तिका, भङ्गभर।

४ भाण्डविशेष, एक वरतन। ५ दर्पण, चायीना।

(वै०) ८ वायविशेष, एक वाजा।

ककंभ्रुरीका (सं० स्त्री०) ककंभ्रुरी स्त्रायं कन् न क्लृप्तः। क्षुद्र सनास जनपात्र, छोटा गड्ढा।

ककंभ्रुरे (सं० क्ली०) ककंभ्रुं ककंभ्रुं रटते यत्र, ककंभ्रु-रे-उकञ्। नखरवत् सङ्कुचित इन्द्र, पत्नीकी तरह सिकोड़ा हुआ हाथ। इसकी यह स्थिति किसीका कण्ठ पकड़ते समय होती है।

ककंभ्रुरे (सं० पु०) ककंभ्रुं ककंभ्रुं रटते भाष्यते रौति वा, मृगयादित्वात् साधुः। करेटु पत्नी, करकरा, करकटिया। यह एक प्रकारका सारस है।

ककंभ्रुश (सं० पु०) ककंभ्रुं रचोऽस्त्यस्य, ककंभ्रु-श। १ काम्पिलहल, कमीलेका पेड़। २ कासमर्द, कसींदी। ३ पटोल, परवल। ४ इक्षुभेद, एक जख।

ककंभ्रुश (सं० पु०) ककंभ्रुं रचोऽस्त्यस्य, ककंभ्रु-श। १ काम्पिलहल, कमीलेका पेड़। २ कासमर्द, कसींदी। ३ पटोल, परवल। ४ इक्षुभेद, एक जख।

ककंभ्रुश (सं० पु०) ककंभ्रुं रचोऽस्त्यस्य, ककंभ्रु-श। १ काम्पिलहल, कमीलेका पेड़। २ कासमर्द, कसींदी। ३ पटोल, परवल। ४ इक्षुभेद, एक जख।

१ गुडकम् दाक्षयोमो । २ चक्रग, तक्षवार । (सि०)
 ० धमद्वय, सुरसुदा । ८ निर्देव, वैरवम । ८ मूर,
 पात्रो । १० सुबोध, समग्रमे सुत्रिकवधि धानेशाका,
 चक्रा । ११ लपच कच्छुप । १२ साहसी, विद्यत
 वर । १३ कठोर, सप्त ।

कर्मगण्ड (सं० पु०) कर्मगः क्व पत्रमण
 बहुभो० । १ पटोच, परवस । २ पाटलद्वय, सुसतान
 चम्पा । ३ माषोट हय सरोरिका पेड़ । ४ माषहय,
 सागोनका पेड़ । ५ श्यामदुषाण्य काका कुम्हड़ा ।

कर्मगण्डा (सं० स्त्री०) कर्मगं भमसुचं कदो
 यजाः कर्मगण्डय टाप । १ शोपा, तरोयो । २ इम्हा
 द्वय बंदास । योद्धयसि रये कश्चो कश्चि ई ।

कर्मगता (स्त्री०) कर्मग ईको ।
 कर्मगत्र (सं० स्त्री०) कर्मगत्र भागः, कर्मगत्र ।
 कर्मगता, कर्मापन, सप्तो । कर्मग ईको ।

कर्मगदस (सं० पु०) कर्मगं दसं पत्रमण्य, बहुभो० ।
 १ पटोच, परवस । २ यदोरिका पेड़ ।
 कर्मगदसा (सं० स्त्री०) कर्मगं दसं यजाः, कर्मग
 दस-टाप । १ दलिका, बंदास । २ शोयातको, तरोयो ।

कर्मगावस्य (सं० स्त्री०) कर्मगं तत् वाक्यशेति,
 कर्मगा० । १ मिहुर वचन, कर्मा वात । २ मोरस
 वाक्य, कथा बोल ।

कर्मगा (सं० स्त्री०) कर्मग-टाप । १ अग्निचारिको
 स्त्री जिनास पौरत । २ इविषाको द्वय, विदुषा ।
 ३ कर्मभियन्त्रो कोटो भिदासीनी । ४ वनवहर,
 भद्रवैरी ।

कर्मगिदा (सं० स्त्री०) कर्मग-कन् टाप पत इजम् ।
 वनकोटो, भद्रवैरी ।

कर्मगार (सं० स्त्री०) कर्म कर्मगं गारो यम,
 बहुभो० । दधियसु, दक्षोका सप्त ।

कर्मग (सं० पु०) कर्मगिदा, कर्मगो ।

कर्मग (सं० पु०) कर्म गणवत् शोकरं कण्डति
 प्राप्नोति, कर्म ग इप् । १ कुष्माण्डमेड, कुम्हड़ा,
 पेडा । भावप्रवाशके मतके यह शोतस, गुह, मन्
 वदकारक, चारकुत थोर क्वय तथा बाहुनायक है ।
 २ कलिहकता, कर्लीदा, तरबुज । ३ पतिपुत्रकुष्माण्ड,

बहुत बोटा कुम्हड़ा, कुम्हड़ी । (स्त्री०) ४ कुष्माण्डो
 कता, कुम्हड़ेकी बेल ।

कर्मगव (सं० पु०) कर्म गवं वित्तधारितात्
 कण्डति जनयति, कर्म ग इजम् । १ कालिन्दस्य,
 कर्लीदा पेड़ । सुभुतके मतके रसका फल गुह,
 निहयो, शोतस, फासु, कपकारक, मन्मूल परि
 ध्यारक, चारकुत थोर मन्वरस जाता है । २ कुष्माण्ड,
 कुम्हड़ा ।

कर्मग (सं० स्त्री०) कुष्माण्डो कता कुम्हड़ेकी बेल ।
 कर्मि (सं० पु०) कर्म इन् । १ कर्मट रागि, कुर्
 सरतान् । २ थोरकावादाका पूर्व नाम ।

कर्मि (सं० स्त्री०) कर्म पञ्च-दोह । १ कर्मटो
 कर्मगो । (पु०) कर्म-इन् । २ कर्मट रागि, कुर्
 सरतान् ।

कर्मिण्य (सं० पु०) नवरविद्येय, एक पुरातन गहर ।

कर्मिण (सं० पु०-स्त्री०) कर्मि जाजादो तनोति,
 कर्मि तन-पञ्च पञ्चुसमा० । रक्षविद्येय, एक कवा-
 हर । इति विन्दीमें तथा फारसीमें सुसुन्द, हिन्दी
 डारघिस चौधरी बैरसस काटिमिं नारगहाघ
 (Sinaragdu) पोसप्येसिं नमरगद, क्सीमें इसुमरद,
 पोसन्दाजमें धरगदु वा पसमरदु, दिनेमार एवं जिरमिं
 सगरद, रोमकर्मिं समरसदो, पोर्तुगीजमें रिसमरकद,
 बारबैस तथा पदाकोसीमें बैरिस (Beril) थोर चंग
 र्गोसिं बैरिस या डिभोबैरिस (Beryl or Ohryso-
 beryl) कहते हैं ।

कर्मिपुराणमें लिखा है—बाहुनि द्रष्टवित देवपतिके
 सकल मय ठठा चतुर्विंशत् सेकमें पर कर्मतन नामक
 पूष्पतम रज प्रथिवीषे उत्पन्न हुआ । जिम्ब, विद्वह,
 कर्म समवय, परिमाणमें गुह, विचित्र थोर ज्ञास-
 ज्वादि दीपवर्जित कर्मतन पति कृत्वाह होता है ।
 रक्षको भांति बोधित, चन्द्रको तरह पाण्डुर मङ्गको
 भांति वैपत् पोत, ताम्रको तरह पक्क रक्त पोत, थोर
 पन्थिको भांति कर्जल, मोस तथा श्वेत कर्मतन
 पापनायक है । चंस्कारकके दोषके यह पथिक
 ज्योतिर्मय नहीं होता । कर्मिण कर्मपर जड़ कण्ड
 वा इत्यर्थे पञ्चननेसे पति सुन्दर लगता है । इति

आयु, वंश तथा सुख वटता और रोग एवं क्लिदोष कृष्ट पड़ता है। निर्दीप कर्केतन पहननेवाला सर्वत्र पूजित, अनेक धनशाली, बहुवाम्भव, दीप्तिमान् और नित्यद्वय रहता है। यह मणि जितना उज्ज्वल तथा गुरु मिलता, उतना ही मूल्य भी अधिक लगता है। (०५ च०)

कर्केतन भारतवर्ष, सिंहल, उत्तर-अमेरिका, मिसर, रूसके यूराल पर्वतस्थ तजीवाजनदीगर्भ, ब्रेजिल, मोरविया और पेगुमें होता है।

दक्षिण भारतमें कोयम्बतूरसे २० कोस ईशान कोण पर कर्केतनकी खानि है। यह माना स्थानपर मरकत, इन्द्रनील प्रभृतिके साथ देख पड़ता है।

यह हरित्, नील प्रभृति नानावर्णविशिष्ट होता है। उत्कृष्ट कर्केतन अल्प हरित् वा दूर्वा लणके वर्ण सद्गृह रहता है। इसमें औज्ज्वल्य भी अधिक देख पड़ता है। आपेक्षिक गुरुत्व ३.६से ३.८ पर्यन्त लगता है। इससे स्फटिक काटते हैं। फिर कर्केतनको काटने छाटनेमें इन्द्रनील और माणिक्य भावश्यक है। इसको रगड़नेसे वैद्युतिक ज्योतिः निकलता, जो गुणके अनुसार कयी घण्टे रह सकता है। अर्धस्वच्छ कर्केतन विडालाची (समुनिया) नामसे बाजारमें विकता है।

अति उज्ज्वल स्वच्छ कर्केतनका मूल्य अधिक है। यह १०००से ३०००) ५० तक आता है।

कर्कीतर, कर्केतन देखो।

कर्केधुकी (सं० स्त्री०) भूवदरी, भद्रवेर।

कर्कीट (सं० पु०) कर्क-घोट। नागराजविशेष, सांपोंका एक राजा। "अनन्तो वासुकिः पद्मो महापद्मो ऽपि तपकः। कर्कीटः कृलिकः शङ्ख इत्यष्टौ नागनायकाः ॥" (त्रिकाण्डशेष)

कर्कीटक (सं० पु०) कर्क कण्टकमयत्वात् कठोरं अटति प्राप्नोति तद्वत् कायति प्रकाशते, कर्क-अट्-अच्-कन् प्रथोदरादित्वात् षोकारादेशः। १ विश्व हृत्, वैलका पेड़। कद्रुपुत्र नागराज। ३ इक्षु, काख। ४ फलशाकलताविशेष, ककोडा, खेखसा। इसका फल ख्यावर विषके अन्तर्गत है। फलविष देखो।

५ महाभारत तथा पुराणीक जनपदविशेष। (मालखेयपु०

५८८, महाभा० शीष, हज्जमंदिता ११।२) इसका वर्तमान नाम कारा है। यह जयपुर राज्यमें पड़ता है।

कर्कीटकविष (सं० स्त्री०) कर्कीटकल विष, कर्कीडेका जड़र।

कर्कीटका, कर्कीटकी श्लो।

कर्कीटकी (सं० स्त्री०) कर्कीटक गौरादित्वात् डोप्।

१ पीतघोषा, वनतरोयी। इसका संस्कृत पर्याय—कटुफला, महाजालिनी, धामार्ग्य और राजकीपातकी है। धामार्ग्य श्लो। २ कीपातकी, तरोयी। ३ फल-शाकविशेष, गोल कुम्हड़ा। यह सूवाघात, प्रमेह, श्रोत्रक, कृच्छ्र, अशरी तथा तृणाहर, पुष्टिकर, द्रव्य, स्वादु और वल्य होती है। (राजनिघण्टु)

कर्कीटकीफल (सं० स्त्री०) १ घोषाफल, तरोयी।

२ तृत्तकुष्माण्ड, गोलकुम्हड़ा। ३ भिक्षाफल, ककोडा।

कर्कीटपत्र (सं० स्त्री०) कर्कीटपत्र, ककोडेका पत्ता। यह वमनमें घोटकर पिलानेसे रोगीका हितसाधन करता है।

कर्कीटमूल (सं० स्त्री०) कर्कीटकमूल, ककोडेकी जड़।

कर्कीटवापी (सं० स्त्री०) कर्कीटनाम नागिक कृता वापी, मध्यपदस्त्री०। काशीस्थ तीर्थविशेष।

"कर्कीटवापा ईगण्डे मरीचे कृष्णमूलम् ॥" (कामोदण्ड)

कर्कीटिका (सं० स्त्री०) कर्कीट स्त्रायें कन्-टाप् प्रत इत्वम्। १ कुष्माण्डो लता, पेटेको वेत। २ कर्कीटक, ककोडा।

कर्कीटिकाकन्दरज (सं० स्त्री०) कर्कीटमूलचूर्ण, ककोडेकी जड़का चूरन। कण्डुरोगमें यह सूंघा जाता है।

कर्कीटी (सं० स्त्री०) १ कर्कीटिका, ककोडा। २ देवताड हृत्।

कर्कील (सं० स्त्री०) कडोस, शीतलचीनी।

कर्कीरिका (सं० स्त्री०) कं सुखं यथा तथा चयंते उपयुज्यते, क-चर-कन् प्रथोदरादित्वात् साधुः। पिष्टक विशेष, कचौरी, दालपुरी। यह उदकको पीसो दाल गेहूँके आटेमें भर और घीमें तलकर बनायो जाती है।

कर्कीरी (सं० स्त्री०) कं जल चुर्यते अत्र, क-चुर-डोप् प्रथोदरादित्वात् साधुः। कर्कीरिका देखो।

कर्की (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कचूर (सं० क्री०) १ कचूर, सोना । २ इरिनास विरीय, बिषी बिषका करताक ।

कचूर (सं० पु० क्री०) कर्ण-कार, सुयोहरादिस्नातु प्राणु । १ कचूर, करताक । २ कर्ण, सोना । ३ पकाडो नाम बरिय द्रव्य, कचूर । बह कटु, तिक्त, कषय सुख परिष्कारक थीर कषय, कास तथा मलमण्डनायक है । (राजनिघण्टु) बरकने लख गूख कचूरको बरि कारक अग्निबर्धक, सुमग्नि, कषय एवं वायुनाशक थीर खास, हिजा तथा पर्योरीयके सिधे हितकर कषा है । ४ पामहरिद्रा पामाहकरी । ५ यडी, कचुरी पदरक ।

कचूरक (सं० पु०) कचूर कर्णमिष कायति प्रका यरी, कचूर के क । कचूरकेको ।

कर्ण (सं० पु०) श्रव, कर्णार ।

कर्णदार (प्रा० वि०) श्रव, देनदार, उचार क्षिपिका ।

कर्ण, कर्णकेको ।

कर्णो (हि० वि०) पञ्चमर्ष, कर्णदार, जो उचार क्षिपुका हो ।

कर्ण (सं० पु०) कौर्षे सिध्दति वायुना मण्डो यत, कृ-न निरु कर्णति पाककर्णति पमिन, कर्ण करके अपू वा । पुञ्जविद्वान्पतिरभिो निन । कर्ण १ । १ कर्णेश्चिद्रिय, शीघ्र, ज्ञान । इसका संस्कृत पर्याय—मण्डपक, श्रोत्र, श्रुति, श्रवण, शर, शीघ्र थीर पकोपक है । कर्णेश्चिद्रियके बाह्याम्भार ससुहाय पत्रपत्रके सिधे 'कर्ण' शब्द व्यव हृत होता है । किन्तु मङ्गरके पात्राव्यञ्जानमें जो कर्णेश्चिद्रियका कार्य चलता है । सुतरां उभो पात्रा मणो 'कर्णेश्चिद्रिय' कहते हैं । इल र्चिद्रियकी पत्रि ठाठ देवता दिव्य है । शब्द कर्णका विषय ठहरता है ।

पात्रककके धारीरतत्त्वविदु पङ्कित मनुष्य थीर याक-तीय श्वाभ्यापी शीघ्रकाकर्ण तोन भागमें विमल्ल करति है—१ कर्ण-कर्ण, २ ठका (Tympanum) थीर कर्णा म्भारक विवर (Labyrinth) । विर कर्ण-कर्णके दा पंय होति है—कर्णशब्दको (Auricle) थीर कर्ण म्भारकी वा कर्ण बहिर्हार (Auditory canal or external meatus) ।

कर्णशब्दको उपाधिक सङ्गठनके पनुसार उच्च थीर निम्नमात्रो है । एषके गभीर एवं प्रमदा मध्यजानको कर्णकाशी (Concha) थीर निचतम दोनायमान पंगको कर्णपाशी (Lobe) कहति है । कर्णकाशीके मोक्ष बिद्रु मोषि बने यये है । भारतमें कर्णेश्चिद्रिय प्रमय कर्णपाशी क्षेदी जाती है । कर्ण-कर्णमें एक कपाकि-कोता है । उसमें कर्ण बिद्रु रचये है । कर्णो बिद्रु पत्राकार सारो मित्रोमें पुर जाति है । कर्ण शब्दकोके एक मागके पपर मागको कर्ण पेशिया पत्रुवी है । पेशिया कुल तोन है । यह पार्श्वीय शिराल्क (Scalp)के कर्णमें पकी है । मनुष्यके सिधे पेशिया पत्रिष पात्रमयक नहीं । किन्तु श्वाभ्यापी शीघ्रके पक्षमें पेशिया पत्रमय रचना बादिने ।

कर्णप्रकाशी पात्र इच्छ परिसर होतो है । यह कर्णकाशीके पत्रमयारको गयी है । उसमें उभय पार्श्वको पपेसा मध्य माय पत्रिष सोबा रहता है । इसीके कर्णके पत्रमयार कोर्षे शोत्र हुस जाने पर निज-कर्ममें कष्ट पड़ता है । पत्रोभाग ऊपरी भागको कपिका सङ्कर्षण रचने कारक कर्णप्रकाशीके सिरेके मध्य कर्णको मित्रो तिर्यङ्मार्गपर पत्रमयित है । कर्ण म्भारकी पञ्जिनमें थीर उपाकिमुक्त है । पञ्जिनम मागके मध्य मित्रोके सिपटा सुष्प म्भूय होता है । बिषी बिषी प्राचोके यह कर्णमय मात्रकेकेषक पत्रिषी मति रहता है ।

कर्णेश्चिद्रियके बहिर्भागमें सुखामिसुषी स्नानका नाम कर्णपत्रक (Tingula) । कर्णके रन्ध्रमें शोबदार पत्रि रहता है । इसो पत्रिषके कारक बीट वा मसादि कर्णमें प्रवेय कर नहीं चलता ।

कर्णके बहिर्हार थीर विवरके मध्यवर्ती मङ्गर को मध्यकर्ण वा ठका (Tympanum) कहति है । यह स्नान वायुपूर्ण है । वायु गककोपके यङ्गिबिद्यान मणो शोबर ठकामें बुधता है । ठकाकी मित्रो थीर कर्णविवरके ठाठ सफल पक्षिषेथो संकुल है ।

ठकाका मङ्गर देखनेमें अचमान थीर शोबो शोषी सुष्प शोमबत् उपलब्धि पञ्जित है । यह कर्णक

गलकोपसे निकल यूट्रिकियान नली द्वारा कर्णमण्ड-
लमें पहुँची है।

ढक्कामें तीन चूद्रास्त्रि होते हैं। वह अपने आका-
रानुसार सुद्रास्त्रि (Malleus), पताकास्त्रि
(Incus), और पादधारस्त्रि कहते हैं। ढक्काकी
भित्ती उक्त गद्दरके वहिः-प्राचीर रूपसे सङ्गठित है।
वह डिम्बाकृति देख पड़ती है। उसी भित्तीके
ऊपरी और अधोदिकके बीचोबीच चूद्र त्र्योणीका प्रथम
अस्त्रि सुद्ररकी सुठियाके आकर संलित है। उसीकी
सुद्ररास्त्रि कहते हैं।

ढक्का गद्दरमें कर्णाभ्यन्तरके साथ रंस्त्रव रखनेको
दो गवाच हैं। वह कोमल भित्तीसे ढावद्ध रहते हैं।
उनमें एककी डिम्बाकार (Fenestra ovalis) और
अपरकी गोष्ठ गवाच (Fenestra rotunda) कहते
हैं। प्रथम कर्णविवरके प्रवेशद्वारका प्रदशक है।
वह अपने भित्तीके जुरिये चूद्र त्र्योणीके अन्तरास्त्रि
(पादधारस्त्रि)से दृढ रूपमें संयुक्त है। द्वितीय
गवाच कर्णविवरके शम्बुकाकार गद्दर (Cochlea)की
और अवस्थित है।

ढक्केके सुद्ररास्त्रिसे एकाधिक पेशी लित हैं। उनमें
एक करोटीवाले कौलकास्त्रिके सञ्जावत् स्थानसे उत्पन्न
हुयी है। उसका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम लाक्षाटोर
टिम्पनी (Laxator tympani) है। फिर दूसरी श्वा-
स्त्रिके प्रस्तरवत् कठिन स्थानसे निकली है। उसे
वैज्ञानिक अंगरेजीमें टेनसोर टिम्पनी (Tensor
tympani) कहते हैं। शेषोक्त पेशी सुद्ररास्त्रिकी
सूत्रसे मन्निविष्ट है। शरीरतलविट्टमें अनेककी
प्रथम त्र्योणीके अस्तित्व पर सन्देह है। उनकी
समझमें उसे—पेशी नहीं—बन्धनी कह सकते हैं।

ध्वजके आकारका अस्त्रि पताकास्त्रि कहता है।
किन्तु यह वात देख नहीं पड़ती। वह पेषण-
दन्तकी तरह रहता है। चूद्र अग पीछे चल ढक्का-
गद्दरके पश्चाद्भागमें चुबुकाकार कोप (Mastoid
cells) पर झुका और हृद्द अंग अधोगामी हो
पन्तकी पादधारणी-अस्त्रिके मध्ये पर गोलाकार
तया समान पडा है।

पादधारणी-अस्त्रि अग्वारीदीके पद रखनेको
रकाव-जैसा होता है। वह मस्तक, श्रोत्र, दो शान्ता
और भूमि रखता है। उसके कोणाकार उच्चांगसे
एक सूत्र पेशी (Stapedius) निकल डिम्बाकार गवा-
चके पश्चाद्भागमें श्रोत्रादेगपर मन्निवेगित है। श्रोत्र-
देशका पश्चाद्भाग खींचनेसे वह कर्णविवरके द्वारको
सिकोड़ती है।

पहले लिखा—यूट्रिकियान नलीमें ढक्काका गद्दर
रखता है। यूट्रिकियान एक शरीरविन् रहै। उन्हींमें
पहले उक्त नलीको आविष्कार किया था। इससे
उसको भी यूट्रिकियान कहते हैं। यह प्रायः डेढ
इञ्च लम्बी है। अल्प भाग अस्त्रिमय और अधिकांग
उपास्त्रियुक्त होता है। उक्त नलीके मध्यमें वायु
चल ढक्काके ऊपर और बीच पहुँचता है। उसी
पथसे गद्दरस्य सञ्चित श्लेषादि भी निकलता है।

कर्णाभ्यन्तरस्य विवर अथगण्डियका मूल अंग है।
यहां कर्णान्द्रिय वायुके सन्दर्जनक सूत्र पडे हैं। यह
तीन अंगमें विभक्त है—विवरद्वार (Vestibule),
अर्धगोलाकार नलीसमूह (Semi-circular canals)
और शम्बुकाकार गद्दर (Cochlea)। उक्त तीनों
गताकार कर्णाभ्यन्तरस्य विवरकी तरह निपट गद्दा-
स्त्रिके प्रस्तरवत् अति कठिनांगमें अवस्थित हैं। ढक्काके
गोल तथा डिम्बाकार गवाचसे उनका वाहरी और
कर्णाभ्यन्तरकी श्रोत्रनलीसे भीतरी सम्बन्ध है। श्रोत्र-
नली ही करोटीके गद्दरसे कर्णविवर तक श्रोत्र सम्ब-
न्धीय स्नायु (Auditory nerve) को बहन करती है।

उपरोक्त गर्नेके चारो पार्श्व अस्त्रिमय कर्णाभ्यन्त-
रस्य विवर (Osseous labyrinth) है। उसमें फिर
भित्तीका कर्णाभ्यन्तरस्य विवर (Membranous
labyrinth) भक्तकता है।

विवरद्वार कर्णाभ्यन्तरके मध्यगद्दररूपसे अव-
स्थित है। उसी स्थानमें अर्धगोलाकार नलीसमूह
और शम्बुकाकार गद्दर निकलता है। उक्त द्वार
उच्चतामें इञ्चका पश्चम भाग पड़ता है। उसके वहि-
र्गतमें पांच छिद्र होते हैं। उन्हीं छिद्रसे अर्ध-
गोलाकार नलीसकल निकलता है। पश्चात् दिक्को

यन्त्रकाकार गड्ढर है। उसकी बहिर्भागमें डिम्बाकार गवाच धीर पल्पन्तरमें छद्म छद्म गोलाकार बिन्दु रहती है। उसी धीरे सन्ध्याधीन आयुका पल्पन्तरगठ एक सखक मोतरकी सरकता है।

उक्त गोलाकार नवीं तोन है। उसकी अग्रय पाखीमें छोटे-बड़े द्वार होते हैं।

ग्रन्थुकाकार गड्ढर देखनेमें ग्रन्थुव जेसा लगता है। यह कर्ण विवरका अग्रवर्ती है।

पश्चिमय कोमल विवरद्वार धीर पार्श्वगोलाकार नवींके मध्यका कोमल अंग 'कान्था पहर' (Membranous labyrinth) कह्यता है। पश्चिमय पहर मिड्लीके पहरमें आकार प्रकारमें मिलता है। फिर भी उभयकी आयतनमें भन्तर है। दोनों पहरोंमें पेरिलिम्फ (Perilymph) नामक एक तरल पदार्थ रहता है। मिड्लीके पहरमें एण्डोलिम्फ (Endolymph) नामक एक द्रवरा तरल पदार्थ भी है। फिर उभयके बिंदो बिंदो आन विद्येयत विवरद्वारवासी आहुके ग्रन्थामागमें क्या मनुष्य क्या निरुद्ध पण्डे चुनि जेसा एक पदार्थ दिख पकता है। भागय स्थान पायीं जन्तु, पक्षी धीर सरीसृपके मध्य जूना मिनी एक बुबनो (Otoconia) रहती है।

विवरके द्वाराग्रमें दो परदे होते हैं। अपरवाना बिचिन्तु दीर्घ धीर डिम्बाकार है। अंगरेकीमें जवे युटिकुलस या कामनलिनस (Utriculus or common canal) कहती है। अपर दिक्नेमें प्रथमके बिचिन्तु छद्म धीर योनाकार है। यह तीसरे रहता है। उसका नाम सोक्यु (Sacculus) है।

सुश्रुतकी मतमें प्रत्येक कर्णमें एक एक गूहाटज सन्धि होती है। पश्चि दी रहती बिन्धे तरल कहती है। फिर कर्णमें २ पैये, १० शिरा धीर ६ अमनो हैं। उक्त छद्म अमनोमें २ बाहुवाङ्गनो, २ शब्दशक्तिनो धीर २ शब्दकारिणो होती हैं। परबर्ण कर्णकी आन्तरीय पदार्थ माना है।

"धर्तारवचने परानि पल्पुषि व धीर्वादि वचनार्थे शब्द धीरवत् ।"
(अरब नातीरकाल ० ५)

शरीरका बिन्दुसमूह, उद्यत् पत्रं स्युष आतपचक्र, शब्द धीर कर्ण आन्तरिय पदार्थ है।

कर्णके अग्रय अमनो एक एक कर बिच दिये हैं। अग्र देखना चाहिये—कर्णके जेसे सुनते धीर कर्णके शब्द जेसे चकते हैं।

बुरोपीय वैज्ञानिकोंके मध्य किसी किसीके मतानुसार शब्द कथमोचर होनेसे पूर्व प्रथम बाहुद्वारा कर्णशब्दकोमें पहुँचता है। उसी सब बाहुके प्रभावसे उद्यते तरल पदार्थका आन्वयिक सम्पन होने लगता है। शब्द सञ्चालित होती ही वायु द्वारा उड्याकी मिड्ली दिसती है। बाहुसे शब्द जितने बार उबर उबर चलता, उड्येकी मिड्लीका भी उतने ही बार उड्यसम्पन उठता है। फिर सुद्वारापि दिसदुल पताकपि धीर डिम्बाकार गवाचको मिड्लीको जगा देता है। तत्पश्चात् उड्याको पेयोषी मिड्लीका चितान कापता है। उड्याके मन्त्रमें बाहु दो प्रकार काय सम्पादन करता है। प्रथमतः यह मशचकी मिड्लीके बहिर्भागमें रोम्बनुसार ताव पड्य जाता है। उसी मिड्लीको क्षितिकापयता नहीं विगड़ती। द्वितीयतः उड्याके गड्ढरमें बाहु उद्यते सुद्राक्षिमाका चकने लगती है। शब्दविज्ञानके पद्य धार बाहुबंधार्थके सुद्राक्षिमें शब्द उठता है।

दर्शान्तरस्य विवरमें तोन प्रकार शब्द पड्य चता है—प्रथमतः पश्चिकीकेचो द्वितीयत उड्यामन्त्रके बाहु धीर द्वितीयत मद्रकाक्षिके मध्यधे।

कर्णके भीतरी विवरद्वारका दो यथेन्द्रियका मुख्यक कहते हैं। पश्चादिके कर्णमें अग्रय न रहते भी उक्त अंग ता होता हो है।

उद्यत्काव जन्तुमें कर्णके मध्यभागपर एक विवर द्वार देख पडता है। वहाँ कानका बुबनो मिलनेसे शब्दको विशेष सुविधा मिलती है। उभये पास पड्ये ही शब्द अग्रभङ्गनीं जयता है। उक्त शब्द विवर द्वारकी मिड्ली धीर अग्रमोलाकार नवींके प्रसारित अंग (Ampulla) तथा आश्रुमें सञ्चारित होता है।

पार्श्वगोलाकार नवींसमूहको अर्चतः, बिन्दु ति धीर उद्यता द्रव्य है। उसीसे शब्दको जति समझ

पढ़ती है। शब्द बन्द हो जाते भी उसका भाव एककाल कर्णसे नहीं निकलता। बाद देखो।

२ नौकादण्ड, नावका डांड। ३ सुवर्णानि वृक्ष। ४ चार बाहु और तीन हाथ कोटिका चैत्र। (त्रि०) ५ कुटिल, टेढ़ा। ६ दीर्घकर्ण, लम्बे कानवाला। (इण्वयुः १४।३०)

कर्ण—युधिष्ठिरके भ्राजल। मोक्षरानकी दुहिता कुन्ती अविवाहितावस्थासे पिढ्यष्टपर अतिघिसेवासे नगी रहती थीं। एकदा दुर्वासा ऋषि उनके अतिथि देने। उन्होंने अतिथ्यत्रसे उनकी सुन्या पठायी थी। मुनिने उससे परिहृत हो कुन्तीको एक मन्त्र देकर कहा— इस मन्त्रसे कोई देवता बोझानेपर या तुमसे सहवास करेगा। कुन्तीने आश्चर्य प्रभावमानो मन्त्र पा कौतूहलवश सूर्यदेवको बोलाया था। सूर्यने उसी क्षण उपस्थित हो उनसे सहवास किया। सहवास मात्रसे कवचकुण्डलधारी सूर्यसम तेजस्वी एक नवकुमार निकल पड़े। कुन्ती लोकललाके भयसे उन्हें अश्रमद्वीके जलमें वहा आयीं। कुमार कर्ण स्त्रोतमें बहते जाते थे। उसी समय अधिरथ नामक किसी सूतने उन्हें देख लिया। अधिरथ अपुत्रक थे। उन्होंने ऐसा सुन्दर शिशु देख नदीसे उठाया और परमानन्दमें निज पत्नी राधाके हाथ पुत्रनिर्विशेषसे खिलाया पिनाया। कवचकुण्डलरूप बभ्रु (घन) देख उन्होंने कर्णका नाम 'बभ्रुपेण' रख दिया।

कर्णने प्रथम द्रोणके निकट पन्न शिखा पायी थी। धनुर्वेदशिखाके समय अर्जुनसे उन्हें ईर्ष्या उत्पन्न हुयी। किसी दिन रङ्गभूमिमें द्रोणाचार्यने शिष्योंकी परीक्षा ली थी। उसमें अलौकिक कार्य देवानेपर उन्होंने अर्जुनकी वही प्रशंसा की। वह कर्णसे सही न गयी। रङ्गस्थलमें सर्वसमक्ष उपस्थित ही अर्जुनको ललकार उन्होंने कहा था—'अर्जुन! तुम्हारा वह कौशल हम भी सबको देखा सकते हैं। तुम्हें कोई आश्चर्य मानना न चाहिये।' फिर कर्णने सर्वसमक्ष अर्जुनकी भांति अलौकिकी धनुर्विद्याका परिचय दिया। उस समय दुर्योधन उनकी कार्यप्रणाली देख मोहित हुये थे। उन्होंने वन्तुत्व

स्थापन कर मान बटानिके लिये कर्णको अङ्गराज्य दे डाला।

कर्ण मर्यादा दुर्योधनके निकट ही रहते थे। उनके भिन्ननेसे दुर्योधनका पाण्डवभय कितना बढ़ा छूट गया।

एक दिन कर्णने द्रोणाचार्यसे कहा था,—'गुरु! अनुपहकर हमें ब्रह्मास्त्र दे दीजिये। आपसे हमको आशानुष्ण प्रायः मकल अस्त्र मिले हैं। केवल ब्रह्मास्त्र बाकी है। उसको दे हमारी मनस्कामना पूर्ण करवा चाहिये।' द्रोण समझने थे, कि कर्ण अर्जुनसे बड़ा द्वेष रखते हैं। उसीसे उन्होंने कहा,—'जो नित्य गुरु व्रताचारी ब्राह्मण भयवा तपःस्वाध्यायनिरत क्षत्रिय रहता, वही व्यक्ति ब्रह्मास्त्रके उपयुक्त ठहरता है। तुम्हें ब्रह्मास्त्र मिल नहीं सकता।'

फिर कर्ण ब्रह्मास्त्रके हेतु महिन्त पर्वतपर पहुँचे। वहाँ अपनेको ब्राह्मण बना उन्होंने परशुरामसे नानाविध अस्त्रशिखा पायी। फिर कर्ण परशुरामके अतिप्रिय पात्र बन गये। किसी दिन वह समुद्रतीर जा शरकीडा करते थे। घटनाक्रम उनके शरप्रवाहमें किसी ब्राह्मणका शोमघेनु पक्षत्वप्राप्त हुआ। कर्णने ब्राह्मणके पैरों पड घनेक अनुनय विनय करते अपने अज्ञान दोषके लिये क्षमा मांगी। ब्राह्मणने क्रोधमें उन्हें अभिशाप दिया—कि 'जिमके लिये इतनी सजा (हरानिके लिये सवदा चेटा) किया करते, उमोकि हाथ तुम मार जाओगे।' कर्ण भुङ्गमन आश्रमको लौट आये। कुछ दिन रहते रहते उन्होंने परशुरामसे ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया।

एक दिन परशुराम कर्णकी ऊरुपर मस्तक रख सेते थे। उसी समय अलक जातीय अटपाद कीट आकर कर्णके ऊरुदेशको एक दिक् भेद अपर पार निकल गया। कर्ण गुरुकी निद्रा टूटनेके भय वह अश्रय यन्त्रणा सहते रहे। किन्तु सम दारुण दंशनमें ऊरु विदोष्य होते रुधिरका स्रोत बह चला। गात्रमें रक्त लगाते ही परशुराम जागे। उनके प्रांग्र खीनते ही कीट मर गया। फिर परशुरामने कर्णसे कहा,—'वन्त! तुमने इस कीटका असह्य दंशन

कथं सदा? ब्राह्मण कमी इतदन्वार नह नहो
 सक्तता। पतएव योष सख नह नहो, तुम कोन हो।

कथंने पवगत हो विनोत भावसे उत्तर दिया,—
 'पुरो। सुमि कमा करो। मिन मिन्दा कइ पापके
 निकट बड़ा हो पपराव किया है। मैं ब्राह्मण नहीं,
 सामान्य प्लतपुत्र हूँ। प्लतकथा राधा मेरी माता
 होती है। मेरा नाम कथं है।' इस समय
 परशुरामने कइ हो कथा था,—'देखो कथं। तुमने
 ब्रह्माज्ञ सेमको हमसे प्रतारक की है। इसलिये तुम
 काल उस पण्डित परच तुम्हें न रहिया। अब योत्र
 हमारे लक्ष्यसे चल दो।'

कथं इक्षिणाकी भौट पाये। कुछ दिन पीछे
 वह दुर्वाहनसे साह कहिए गये। वहाँ कश्मिष्ठराव
 पिमाहृदमी कम्पाका सखन्वर था। कदम्बरसममि
 दुर्वाहनने अपने बौरोंके साहाय्यसे राक्षसकाको डरक
 किया। उस समय कथंके साह करासम्पका पीर दुख
 हुआ था। उन्को सुधमें करासम्पने बोरल दयानसे
 सन्तुष्ट हो कथंको माझिनी नररो पीप ही। पतएव
 कथंका विवाह हुआ। पत्नीका नाम पद्मावती था।

कथं पाण्डनोंकी मार डालनेके लिये सर्वदा दुर्वा
 हनसे ह्यपरामर्श किया करते, किन्तु कृतकार्य हो
 न सकेते थे। भीष्म कथंके पापरावसे पदन्तुष्ट हो
 कमी कमी मिन्दा कर डरते। वह कथंको पल्लव
 होती थी। उन्कोने सोचबामाकी सुचटना पीछे एक
 दिन दुर्वाहनसे कहा,—'मित्र! हमारो एक बात
 पापको सुनना पड़ेगी। भीष्म सर्वदा हम कोनोंको
 मिन्दा पीर पल्लुनको प्रथंका किया करते हैं। विदे
 वतः पापके घाममें वह हमारी पवडा करते हैं।
 अब हमें पनुमति दीजिये। हम पक्षिसे ही समस्त
 इक्षिणी भौत हों।'

दुर्वाहनकी पल्लुमतिसे कथं दिम्बिजय करनी
 निकली थी। वह हुपव, मनदत्त एवं बड़, कश्मिष्ठ,
 मन्थिक, मिथिला, मगध कथंकाण्ड, पवन्तीपुर, पश्चि
 म्पुत्र, बाल, वैरक, कश्मिष्वावती, मोहन, त्रिपुर,
 कोयल, दम्भी, विदि, पवन्ति, क्थंका, मद्रक रोहि
 तक पाम्पय, माकष, ययक, पाठविषय प्रकृति नामा

दीवीय राक्षस पीर पपराव सख तथा प्रसम्भ
 जातिको भौत पति पल्लुकावते हो इक्षिणा भौट
 पाये। दुर्वाहनके पल्लुपातिवोंने कथंको घत घत कथं-
 वाद दिया था। फिर दुर्वाहनने कथंका पल्लु
 डाल किया। उस समय कथंने लनसे कहा था,—
 'पात्रसे सुंइमांगो बीक, हम याचकको देंगे। यही
 हमारी प्रतिज्ञा है। अब तक हम पल्लुनको मार
 न सकेंगे, तब तक इसी प्रतको पालन करेंगे।

हृवकेतु नामक लनसे एक पुत्रने कथं किया।
 एक दिन योक्षन्ने हानपरीक्षा करनीको हइ ब्राह्मण-
 के शैय कथंसे साचाप नर कहा—'हम तुम्हारे
 हवकेतु पुत्रका मांस खाना चाहते हैं। कथंने
 कही किया था। लनको जोने हृवकेतुका मांस रांभ
 कथंके सन्तुष्ट पानेको रथ दिया। कथंने कथंके
 पापरावसे पल्लव सन्तुष्ट हो पतपक्षीवने विद्याके
 प्रमात्रसे हृवकेतुको फिर जिहाया। इसी पक्षीविषय
 नामके लिये 'दाताकथं' नाम पड़ गया।

एक दिन मिथिलापञ्चामे कथंने लक्ष्मी देखा,—सुं
 सामने खड़े कइ रहे हैं—'कथं। इन्द्र पाण्डवमकके
 वितसावनको ब्राह्मणके शैय तुमसे कथं पीर कुच्छल
 मानने पायेंगे। पतएव लनको कथं कच्छल देनेसे
 साचवान। किन्तु उन्कोने लक्ष्मी उत्तर दिया,—
 'माच जाति मो हम पपनी पतिहान न छोड़ेंगे। फिर
 सुंने लनसे कथं कच्छलके बदले इन्द्रकी यज्ञि से
 सेमके पल्लुरोव किया। प्रमात हाँसे इन्द्रने ब्राह्मणके
 शैय या कथंसे कथं कच्छल मंमि से। कथंने कहा
 'देवराज। हम पापको पल्लुवानते हैं। पाप कथं
 कच्छल सोजिये, किन्तु पपनी घतपुमर्दिनी यज्ञि से
 होजिये।' इन्द्र इस पर सन्तुष्ट हुये। पल्लुको
 जाते समय इन्द्र बोले लठे—'कथं! इस यज्ञिसे हम
 घत घत घत, मार कावते थे। किन्तु पापके हावसे
 पृथ्वी पर एक घतको मार यइ हमारे पाप कही
 थायेंगे।

इतर पाण्डनोंका प्रदानवास पूरा हुआ। उन्कोने
 पावाकपाक सुरोहितको सन्धिसे लिये हतराहके निकट
 भेजा था। भीष्म पाण्डनोंका कृपक संवाद पूरा कइने

नगे,—‘पाण्डव परम धार्मिक है। इमीसे युद्धमें पात्माय कुटुम्बकी न मिटा उहोंने सन्धिका प्रस्ताव ठाया है। वास्तविक अर्जुनकी भांति दूसरा योद्धा पृथिवी पर देख नहीं पड़ता। कौरव पक्षमें उनके सम्मुख जानीबानी कौन वीर है!’ यह बात कर्ण सह न सके। उन्होंने भीष्मकी बडी निन्दा उठायी। अन्तकी कर्ण और शकुनिके परामर्शसे सन्धि रह गयी।

कुरुक्षेत्रके महासमरमें प्रथम भीष्म कौरव-सेनापति बने थे। उन्होंने अपनी सेनाका सुप्रबन्ध बांध दुर्घो-घनसे कहा,—‘देखो। कर्ण नीच जाति और दुष्ट प्रकृति है। वह परशुरामके निकट अभिसप्त हुवा और कवचकुण्डल खो चुका है। ऐसे सामान्य व्यक्तिको अर्धरथी ही विवेचना करना उचित है।’ यह बात सुन कर्णका मर्वाङ्गल उठा। उभी समय उन्होंने प्रतिज्ञा की,—‘जितने दिन भीष्म जीवित रहेंगे, उतने दिन हम कभी युद्धमें अस्त्रधारण न करेंगे।’ यही कहकर उन्होंने रथसे उछोटा था।

दस दिन युद्ध होने पीछे कुरुपितामह भीष्म गर-शय्यापर सो गये। कर्णने एक दिन रात्रिकालकी उनसे मिल कहा था,—‘आप सर्वदा जिसकी निन्दा करते रहें, मैं वही कर्ण हूँ।’ भीष्मने इन्हे देख रक्षकोंको इटाया, पीछे मस्त्रेण वज्र कहते कर्णकी गद्दे लगाया,—‘हमने नारद और व्यासके सुख तुमकी कुन्तीका पुत्र चुना है। पाण्डवगणसे द्वेष रखने पर ही हम तुम्हें कुछ कडी बात बोल देते थे। वास्तविक तुम्हारी तरह दाता और ब्रह्मनिष्ठापर दूसरा देख नहीं पड़ता था। तुमसे हमारा पूर्व भाव दूर हो गया है। अब तुम हमारी मानो, तो अपने सहीदर पाण्डवोंकी ओरसे युद्ध ठानी।’

तेजस्वी कर्णने उत्तर दिया,—‘आपके कहनेसे अब मेरे कुन्तीपुत्र होनेमें वीडे सन्देह नहीं। किन्तु पितामह! इतने दिन मैं दुर्योधनके ऐश्वर्यमें ही प्रतिपालित हुवा हूँ। फिर उनको मैंने एक बार आश्लास भी दिया था। अब मैं कैसे उहोंने प्रिय वन्धु दुर्योधनसे लड़ूँ। प्राण जाना अच्छा है। मैं अपनी

प्रतिज्ञा न तोड़ूंगा।’ भीष्मने कहा,—‘तौ स्वर्गकाम हीकर लड़ो। कृत युद्धमें अलग रहो।’

भीष्मके पीछे द्रोणाचार्य कौरवोंके सेनापति हुये। कर्णने उनके अधीन अनेक बार युद्ध किया था। उभी समय उन्होंने यानक समिमन्यकी फुट युद्धमें मारनेका परामर्श उठाया और हम काठमें यथेष्ट माहाय्य पधुँचाया।

कर्ण एकान्तो गति द्वारा अर्जुनको मारना चाहते थे। किन्तु उनके मनकी आगा मनमें ही रह गयी। भीमनन्दन घटोत्कच कुरुमैत्र्यके दमनमें टोड़ कर्णके सामने आये थे। उन्होंने अपने बचानिके लिये एकान्तो गति छोड घटोत्कचको मार डाला। द्रोणके निश्चय होने पर कर्ण कुरुमैत्र्यके सेनापति बने। उनके सारथी गन्ध रहें। यथा समय महावार कर्ण समेन्य समरक्षेत्रमें उतर पड़े। उनकी युद्धनीति और वीरता देख पाण्डवपक्षमें हाहाकार पडा। किन्तु कर्णसे सारथी गन्ध विमुख थे। कर्ण अर्जुनके मारनेकी जितना आम्कान्त लगाते, गन्ध उतना ही प्रति-पाद कर अर्जुनकी प्रशंसा सुनाते और उनका निन्दा करते थे। किन्तु कर्णने निज बाहुबलसे ७० प्रभद्रक, २५ पाशाल, भानुदेष, चिखमेन, सेना-दिन्दु, तपन, सूर्यमेन चेदि और अपरापर प्यानके प्रसंख्य सैन्यको मार गिराया। फिर उन्होंने अर्जुन व्यकीत युधिष्ठिरादि पाण्डवकी भी हराया। कर्णने कुन्तीके निकट अर्जुनको छोड अपर जिनो पाण्डवके न मारनेकी प्रतिज्ञा की थी। इमीसे युधिष्ठिरादि पाण्डव हार कर भी जीते रहे।

अन्तकी अर्जुनने माथ कर्णका घोरतर मुझ हुवा। उस युद्धमें श्रीकृष्णके कोशिके यह अन्तिम गव्यापर सो गये। (महानगर)

कर्णका प्रथम नाम वसुधेण रहा। पानक पिता सुतने उनका यही नाम रक्ता था। पीछे पृथक् पृथक् कार्यके अनुचार बाप, वेकतेन, प्रकानन्दन, अद्राक, अद्रेश्वर, चम्पेश, चम्पाधिर, अद्राधिप और घटोत्कचान्तक प्रकृति नाम हुआ। प्रतिपालक पिता तथा पानिका माताके परिघर्षानुसार कर्णकी खोग सुतपुत्र,

राधिव, राधापुत्र प्रकृति भी कहते थे। २ छतराङ्गि एक पुत्र। (नन्द, पन् ११५२)

कर्म—मैवाङ्गि एक राधा। यह राजपूत वीरधियरां प्रतापसिंहके यौव्व वीर राधा चमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र थे। पिछिनदिगपर विजयीं कवकके कर्मभूमिको कर्मानिके बिये दनोंनि कर्नक बार सुमल बम्बादके पुत्र थिया।

इसके समय मैवाङ्ग बहुत विनडा बा। पुनः पुनः कर्ननपर मैवाङ्गका राजकीय शून्य हुआ वीर मैवाङ्गके प्रबाल प्रबाल वीरका प्राप गया। एतेो पवकामेँ राज-पूत-वीर खितने दिन सुयबवाजिनोके विरह पछ कबा सखते थे। पम्बको राजकीय शून्य होनेके कर्षं एत नमर कूट धर्मरुपह करकेपर बाध हुये। १६२१ ई०को यह कर्ननोरके पुत्र कृतम (माइजहाउ)-के वार मये। फिर मैवाङ्गके राधा चमरको सुमल बम्बादके कर्नका पडा बा। सभ्य होनेपर कर्षं कुर मके पाय चकमर का कर्ननोर बादमाइके मिले। बादमाइने यथेष्ट पाइर पम्बर्नानके काज रन पपने रुचिक पार्थके ठेठनेको आसन दिवा। इस समय प्रति दिन बादमाइ कर्षंके मिलते वीर बहुमूख बजोप-वार तथा विविध द्रव्य-खामपी के उपालनवर्जन करति थे। कर्ननोर पपने कौरनोनें विच नुके थे—

‘माइभूमिको प्राकृतिक पवकामेँ पतुसार कर्षं कृषीक द्रव्यखामपी पपने कववार्नें खाना खानति न थे। यह पतिग्रय कालुष्य वीर पतिपक्षमावी रहे। फिर इसमे बहुत मिलने कुननेको इच्छा मी यह रखति न थी। पपने प्रति विचार्य कर्मानिके बिये इस लनको सामननागकके पाखास दिया करति। इस एक दिन कर्षं नूरकवकि निवट से मये। मरिहोने कर्षं इठी, पम्ब, कर्नग प्रकृति नामा प्रकार पारितोबिख दिया बा।’

बापुबिख कर्ननोर कर्षंके विधिताको तरह व्यर वार करति न थी। यह सर्वथा कर्षंका सक्षम कर्ननेको लखेइ रखते। १६२१ ई०में मैवाङ्गके पन्दिम काशीन राधा महाराधा चमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र कर्षंके पिशाचन के डाका।

कर्षंके राधा वननपर मैवाङ्गमें ग्रान्तिका राजल

कबा बा। सुगुंकोके पाकमपके मैवाङ्गके मन्त्र वीर गठ रंमीका इकोनि पुन, उल्लार करवा। राक खानोके चतुपासक माकार परिखा वारा चेरे मये। पीयोकाका कर्षकोचक बांध मी कडा बा। १६२६ ई० (१६८७ संवत्)को प्रियपुत्र कर्नतुंदिङ्गके बाप राक्य-मार खोप इकोनि परकोचक ममन किया।

२ पार्थवर्तके एक कम्पाट्। यह कर्षंकेदि नामके प्रसिद्ध थे। कर्षंके देको।

कर्षं (सं० पु०) कर्षयति विभिद्य जावते, कर्षं क्त्वात्। १ उय प्रकृतिका माथापमादि, पेङ्ग बनेरइको फोङ्कर निवकनिकाला पत्ता बनेरइ। २ मन्त्रविशेष, एक मन्त्रको। ३ लक्षिपालविशेष। इस रोमनें दोषहयके कर्षंमूलपर शोष कडता वीर तीक्ष्ण वार कर्नता है। फिर कष्टपक्ष, कर्षिता शासन, प्रकाय, प्रसेद, मोक्ष वीर इहनका प्रावण्य मी देख पकर्ता है। ४ उपादिका एक शोष, पेङ्ग बनेरइको एक शोमापो। ५ कर्षंवार, मानी। (वे०) ६ मोकाके पार्थका कर्षं, नाव का कर्नानका कर्षको वमार। ७ तन्त्र, विश्वय, एत, बिद्या। ८ प्रपाति पद, जेले हुये पेर। (त्रि०) ९ मिष्टक, मीष माननेवाला।

कर्षंकरान् (० त्रि०) कर्षंकरिदिष्ट, बिद्यमें बगुंको काले रणे।

कर्षंकरु (सं० त्रि०) अप्रिय, खानमें कटवनेवाला, को सुननेमें कुरा खजता हो।

कर्षंकरु (सं० पु० श्लो०) कर्षंकरु कर्षं जातो वा कर्षु। कर्षंकोतोमत रोमविशेष, खानके गहुंको सुनको। कर्षंकरुका सात यह रोग लमा होता है। (परच्यनन) कर्षनायक विविधमूत्र को कर्षंकरुका प्रबाल शोषक है।

कर्षंकरु (सं० श्लो०) कर्षंकरु देको।

कर्षंकरु कर्षिपाल, कर्षंके देको।

कर्षंकरु (सं० श्लो०) कर्षंकरु, खानका सेक।

कर्षंकोटा (सं० श्लो०) कर्षंकरु कर्षंकरु मिहका कोट, कर्षंकोट टापू मध्यपक्षको। १ कर्षं करीका, कनसकायो। २ मतपक्षे, कर्नारवा, कन-कान्ना। (Julus cornifex)

कर्णकोटी (सं० स्त्री०) कर्ण स्थिता कर्णस्य भेदिका
कोटी, कुट्टायें स्त्री मध्यपदलो० । कर्णजननीका,
कनसर्लायो । इसका संस्कृत पर्याय—कर्णजननीका,
शतपदी, पित्राह्वी, पृथिका और कर्णन्दुमि है ।

कर्णकुञ्ज (सं० स्त्री०) नगरविशेष, एक ग्रहर । यह
वर्तमान गुजरात प्रदेशके जूनागढ़का पौराणिक नाम
है । देखें देखी ।

कर्णकुहर (सं० स्त्री०) कर्णगतं कुहरम्, मध्यपदलो० ।
कर्णगतं छिद्र, कानका छेद ।

कर्णकूपकश्वसेक (सं० पु०) जीवविशेष, किसी किष्कका
जानवर । यह जलके मध्य अधोगण्ड द्वारा श्वास
ग्रहण करता है । शामुकादि इसी श्रेणीके जीव हैं ।

कर्णक्षमि (सं० पु०) कर्णगतः सन् कर्णभेदकः
क्षमिः, मध्यपदलो० । शतपदी, कनखजूरा ।

कर्णक्षेड (सं० पु०) कर्णस्य कर्णे जातो वा क्षेडः ।
कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी । पित्तादिसे युक्त
वायु कानमें वेणुघोषके समान शब्द किया करता है ।
इसीको कर्णक्षेड कहते हैं । (भाष्यवि०) कर्णके
मध्य सर्पपतेन डालनेसे यह रोग विनष्ट होता है ।

कर्णखरिक (सं० पु०) वैश्व जाति, वनियोंकी एक
कौम । देखें देखी ।

कर्णग (सं० पु०) कर्णे गच्छति, कर्ण-गम-ड ।
१ शब्द, आवाज़ । (त्रि०) २ कर्णस्थित, कानमें
पडा हुआ । ३ आर्कण, कानतक फैला हुआ ।

कर्णगढ—विहारप्रान्तके भागलपुर जिलेकी एक
पार्वत्य भूमि । यह अक्षा० २५° १४' ४५" ३० और
देशा० ८६° ५८' ३०" पूर्व पर अवस्थित है ।

टेगावली और भविष्य-ब्रह्मखण्डमें इसका नाम
कर्णदुर्ग लिखा है । 'पहले यहां ब्राह्मणभूमिकी
राजधानी थी । संवत् १६७८ की कर्णदुर्गमें समा-
सिंह राजत्व करते थे । उन्हें राजा कीर्तिचन्द्रने मार
डाला । समासिंहके पीछे हेमन्तसिंहने यहां राजत्व
किया । इसी कर्णगढसे आधकीस पूर्व गिलावती
नदी बहती है । उससे सवा कोस पश्चिम विशालाची
नाची महाभायाका मन्दिर है ।'

(विश्वमहासागर तट देशावलीवर्ति)

कर्णगढ़का शिवमन्दिर विख्यात है । सब मिना-
कर-चार मठ वने हैं । एकमें बृहदाकार शिव-
मन्दिर है । यह शिवमन्दिर प्रायः ५५६ गत वर्षका
प्राचीन है । सकल पविषासी जैव न रहते भी
कार्तिक-संक्रान्तिके दिवस बड़े समारोहसे शिवका
पूजा होती है । प्रवादानुसार इस स्थान पर कुम्भी-
पुत्र कर्णका राजत्व था । उन्होंने एक दुर्ग निर्माण
कराया, जिसके अनुसार यह कर्णदुर्ग वा कर्णगढ़
कहाया । प्राचीन प्रष्टान्तिकाका भंगनावशेष नाना
स्थान पर पडा है ।

पहले यहां पहाड़ी बडा उत्पन्न उठते थे ।
इससे १७८० ई०को भागलपुर जिलेके तहसील-
दार क्लेवनेण्ड ग्राहवने यहा एक दन देगीय सैन्य
स्थापन किया ।

कर्णगूय (सं० स्त्री०) कर्णस्य कर्णजातं वा गूयम् ।
कर्णमल, कानका मैल ।

कर्णगूयक (सं० पु०) कर्णगूय संज्ञायां कन् । कर्ण-
रोगविशेष, कानकी एक बीमारी । कर्णकुहरमें पित्तके
सन्तापसे रूपा सुखनेपर यह रोग घटना है । (चरक)
तेल वा खेदप्रयोगमें ठीका कर शलाका द्वारा कर्णका
मल निकाल डालना चाहिये । (चरकपाणि)

कर्णगृहीत (सं० स्त्री०) कर्ण न गृहीतः, इ-तत् ।
१ गृह्यत, सुना हुआ । २ कर्णकर्त्तक घृत, जो अपने
कान पकडा चुका हो ।

कर्णगोचर (सं० स्त्री०) कर्णस्य गोचरः विषयोभूतः,
इ-तत् । कर्णके विषयोभूत, सुन पडनेवाला, जो
कानमें आ सकता हो ।

कर्णग्राम—१ भागीरथीतीरवर्ती बङ्गका एक ग्राम ।

(भविष्य ब्रह्मसंह्य ७।३४)

कर्णग्राह (सं० पु०) कर्णमरित्रं गृह्णाति, कर्णग्रह-
अण् । कर्णघार, मलाह, मांभी ।

कर्णग्राहवत् (सं० त्रि०) कर्णघारयुक्त, जिसमें
मांभी रहें ।

कर्णच्छिद्र (सं० स्त्री०) कर्णस्य छिद्रम्, इ-तत् ।
कर्णरन्ध्र, कानका छेद ।

कर्णजप (सं० पु०) गुप्तसंवाददाता, सुखविर, भेदिया ।

सर्वङ्गलुका, (सं० स्त्री०) सर्वङ्ग सर्व वा बहुधा इव उपसिं। सर्वङ्गोटा, लक्षणरुपा।

सर्वङ्गलोका (सं० स्त्री०) सर्व लोकोक्ति। सर्व कोटी, लक्षणसायी।

सर्वङ्गव्यय (सं० पु०) ग्रन्थसम्बन्ध, नामाङ्गसौ।

सर्वङ्गव्याय (सं० स्त्री०) सर्वङ्गों रोग, क्षान्ती एक बीमारो। प्रकृति दोष श्लेष्म, पित्त, घ्राण धीर बदलमें सख्ख क्षान् देते हैं। इनसे क्षान् पक्ष धीर रोगी बन्धिर पङ्ग जाता है। (१४१)

सर्वङ्गवाङ् (सं० स्त्री०) सर्वाङ्ग मूलम्, सर्व वाङ्म्। सर्वङ्गमूल क्षान्ती यङ्।

सर्वङ्गिन् (सं० पु०) सर्व जितनाम्, सर्व वि क्षिप्। पयान्। इकोने सर्व को जीता था।

सर्वङ्गोरथ (सं० स्त्री०) एत गोरथ, जोटा जोरा।

सर्वङ्गोक्ति (सं० स्त्री०) सर्वङ्गोटा, क्षान्ती सुम्बो।

सर्वङ्गत् (सं० पञ्च०) सर्वङ्गै प्रकृ, क्षान्ती दूर।

सर्वङ्गात् (सं० पु०) सर्वङ्गात् ताङ्मा, ० तत्। क्षय ताङ्मा, क्षान्ती फटकार।

सर्वङ्गोर्ध्व (सं० स्त्री०) तीर्थवियेय। (१४११११)

सर्वङ्गव्यय (सं० पु०) सर्व व्यय इव उपसिं। ताङ्मा नामक सर्वभूयववियेय, क्षान्ती पञ्चमनेको एक भाषो।

सर्वङ्गुत्तमि (सं० स्त्री०) सर्व सर्वाङ्गन्तरि दुःखमिच्छित तन्तुत्तम ध्वनिजन्मवलात्। यतपदो, लक्षणरुपा।

सर्वदेव—वेदिराज्यमये एक पश्चिमीय महापौर धीर दिम्बिजको राजा। यह कच्छपुरि राजा माङ्गवेदेवके पुत्र धीर उत्तपश्चिकारी थे। इन्हें राजकुमारो पावक दीनेसे इकोने विवाह किया। इकोने सर्वाङ्गोत्तमगर बसाया, धीर पाण्ड्य, सुरल, कुङ्ग बङ्ग, ललिङ्ग धीर धीर इन्हें राजारोको बगोमूल किया था।

सर्वदेवके पिता माङ्गवेदेवने कुंठेक्ष्यचम्पे पश्चिम कन्नोक्तक राज्य किया। उकोके समय इकोने प्रथम मयवपर पावकमय मारा था। किन्तु दोपहर पत्नीय के यज्ञसे सन्धि हो गयी। १०८ ई०को प्रयागके सुप्रसिद्ध पञ्चमयङ्ग मूलपर माङ्गवेदेवने प्राञ्च जोड़ा था। (Memoirs, A. S. B. Vol. III. Vol. p. 11)

उसके पीछे ही सर्वदेव सुविद्यत ऐह्यराज्य वा कर दिम्बिजको उत्थापयि निकल पड़े। इकोने पुत्र रातसे बङ्गाङ्गतक समय देम जोता। सर्वदेवकी समामि बङ्गाङ्ग करिबा बङ्गा पादर था। फिर षोड कुङ्ग इव, षोड्ग गुर्धर धीर कीरके राजा इनको क्षान्तीरोंसे रक्षते थे। नागपुर प्रयत्निये पंतु क्षार जिधे देयके प्रथ्य राजाकोने-सतावा धीर सर्वने पवने पक्षोत्त बनाया था, उसे माहकके उदयादिङ्गने जोड़ावा। इत्यमियके प्रभोबन्धोदय-धीर प्रथ्य मिषासीयने लिखा है—“अप्तेह कीर्तवर्माके सेनापति गोपालने सर्वको पराजय किया था। कुमारकी मरनामुत्तर यह पनलिङ्गकाङ्गके इय भीमदेवसे कर मये। फिर विष्णुने मो बिजन्माङ्गवेदवर्तितने पश्चिमीय पानुका १म सोमदेवसे इनके क्षान्तीको वात लियो है।

सर्वदेव (सं० पु०) एत पश्चिमाङ्गुत्तरात्। यह पनलिङ्गकाङ्गविपति भीमदेवसे पुत्र थे। राज्यका संवत् ११२० १११० रहा। इनके पुत्रका नाम कच्छिङ्ग लिङ्गका था। इसो संवत्में दूरर्से सर्वदेव सी हुये। यह साराङ्गदेवसे पुत्र थे। उकोने संवत् ११२२ ११२० तक गुञ्जरातके पनलिङ्गकाङ्गमें राज्य किया।

सर्वदेवता (सं० पु०) शोकेन्द्रके पवित्रित वाहु।

सर्वधार (सं० पु०) सर्वमरिज धारयति, सर्व छ यत् श्रमात् पञ्च वा। १ नाश्चि मनाह। (सि०)

२ दुःखादि मिषारथ, तक्षकोङ्ग समेह मिटानेवाला।

“सर्वधारा इतिवै इत्येव रक्तिकादि।
अथे इत्येव सर्वे एते पानकपतिने इ” (गणपत् ११५१०)

सर्वधारता (सं० स्त्री०) नाविकका व्याज मलाको।

सर्वधारिणी (सं० स्त्री०) सर्व प्रथ्यभोजयित्वावा विपुल चरति, सर्व-इ बिभिःशोय। इच्छितो, इजितो।

इसके क्षान् दूरर्से कोवको पविषा बड़े होवे हैं।

सर्वनाद (सं० पु०) सर्वक्षोत्तमगत रोग क्षान्ती एक बीमारो। यह वायु नोकोके मार्गसे बट जाता, तब सर्वमें पङ्गु सेरो, अद्ग धीर मङ्गवेत् नाद समताता है। (अपर्वलक, इण्ड) सर्वपतैल पञ्चश प्यामारं कचा धीर क्लृप्तके सख्ख निकलेक पञ्चा

कानमें डालनेसे कर्षणादरोग आरोग्य होता है।
(चक्रदत्त)

कर्षणासा (सं० स्त्री०) श्रोत्रेन्द्रिय तथा प्राणैन्द्रिय,
कान और नाक।

कर्षण्डु (सं० स्त्री०) स्त्रीके कानकी दान्ती, तरौना, पात।

कर्षणपत्रक (सं० पुं०) कर्षणपत्रमिथ कायति शोभति,
कर्षणपत्र-के-क। कर्षणपाली, बाहरी कानका हिस्सा।

कर्षणपथ (सं० पुं०) कर्षणपथपन्थाः, भ्रूः। कर्षण-
च्छिद्र, कानका छेद। कर्षणकुण्डर ही शब्दके प्रवेशका
पथ है।

कर्षणपर (सं० पुं०) कर्षणलङ्कार, कानका जेवर।

कर्षणपरम्परा (सं० स्त्री०) कर्षणानां परम्परा, इ-तत्।
श्रोत्रेन्द्रियकी प्राचीन प्रथा, कानको पुरानो चाल।
एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे कानमें क्रमशः
विषयकी विसृति होनेका नाम कर्षणपरम्परा है।

कर्षणपराक्रम (सं० पुं०) अपभ्रंशयोग्य विविध क्रन्दो
युक्त काव्यविशेष, किसी किम्बकी शायरी।

कर्षणपर्व (सं० स्त्री०) महाभारतका अष्टम पर्व।
इस पर्वमें कर्षणके सेनापतित्व ग्रहण करनेके पीछे
होनेवाली सकल घटना वर्णित है। वचंश्चो।

कर्षणपाक (सं० पुं०) कर्षणरोगविशेष, कानकी एक
बीमारी। अत, अभिघात, पिङ्गका वा वातादि तीन
दोष कुंपित होनेपर रक्त प्रथवा पीतवर्ण साव निक-
लता और कर्षणका मध्य अतिशय उष्ण पद जलने
लगता है। इसीकी कर्षणपाक रोग कहते हैं। (सुश्रु)
मासती-पत्रका रस प्रथवा मधुके साथ गोमूत्र कर्षणमें
डालनेसे कर्षणपाकरोग विनष्ट होता है। फिर इरि-
ताल तथा गोमूत्र मिला प्रथवा जासुन और आमके
नूतन पत्र एवं कपित्थ तथा कार्पासके वीज समभाग
कूट पीस और रस निकाल कानमें भरनेसे भी कर्षण-
पाक मिट जाता है। (चक्रदत्त)

कर्षणपालि (सं० स्त्री०) कर्षणपालयति शोभयति,
कर्षणपाल-इन्। कर्षणसतिका, दिनागोग, कानकी
बी। (Lobe)

कर्षणपाली (सं० स्त्री०) कर्षणपालयति शोभयति,
कर्षणपाल-अच्-डीप्। १ कर्षणसतिका, कानकी बी।

२ कर्षणभूषणविशेष, कानकी दान्ती। ३ कर्षणपाली-
गत रोग, कानकी बीमें होनेवाली एक बीमारी। यह
पञ्चविध होती है—परिपोट, उत्पात, उन्मत्त, दुःख-
वर्धन और परिलेही। (सुश्रु)

कर्षणपाय (सं० पुं०) सुन्दर कर्षण, खूबसूरत कान।
कर्षणपिगाची (सं० स्त्री०) कर्षणस्वरूपं पिनष्टि, कर्षण-
पिट् भावयति नागयति स्वरूपदर्शनेन, कर्षण-पिष्-
क्षिप्-भा-धि-बिष्-अच्-डीप्। टैवोविशेष, एक
शक्ति। इसका ध्यान है—

“कर्षणं रक्तलिखितं दिनयनां खर्वाकृतिं लम्बोदरीं,
बन्धुकारपत्रिष्ठिकां वरामपामोपुष्करासुख्योन्मत्तं।
वृषार्थवर्णित्यां वृषार्थविसृत्तं पादिरयां वृषार्थं,
सर्वथां सर्वथां कर्ताधिवर्णो रोगाधिको तां गुणः॥”

रक्तवर्णं, रक्तवस्तु, त्रिनयना, खर्वाकृति, लम्बो-
दरी, बन्धु कपुष्पवत् रक्तजिह्वा, वर तथा अभयदानसे
उभयकर व्यापृता, ऊर्ध्वमुखी, धूम्रवर्णा, जटामालिनी,
अपर हस्त द्वयमें नरसुखदृष्टता, चञ्चला, शबलदण्ड-
वासिनी और सर्वथा पैमाचिकीकी नमस्कार है।

निगाकाश वा पर्वरात्रको उक्त ध्यान लगा पूजा
करना चाहिये। दग्ध मस्यका वलि निम्नलिखित-
मन्त्र पढ़कर चढ़ाया जाता है—“ओ बर्षणियाचि दग्धमो-
रविं दग्ध यद्ग मन विविं इव इव साहा॥”

पूजाके दिन प्रातःकाल कुछ जप कर मध्याह्न की-
एकवार निरासिय खाना चाहिये। प्रातःकालकी
ही बराबर रातकी भी जप करना पड़ता है। ताम्बू-
लादि मित्र रातकी अन्य भोजन नहीं पाते। जपका
दशमांश तर्पण करना चाहिये। निम्नलिखित मन्त्र-
एक सप्त पुरस्करण कर दशमांश होम होता है—

“ओ बर्षणियाचो तर्षणानि ओ साहा॥”

अभावमें दशभाग तर्पण कर वर मांगना चाहिये।
यन्त्रपर चन्दनसे मूलबीज बना इष्टदेवताकी पूजा
करना पड़ती है। आकाशमें हुङ्गरादिकी भाति शब्द
उठने और दीर्घ प्रणिश्रिखा भूलकने पर साधकका
कार्य सिद्ध होता है।

कर्षणपुट (सं० स्त्री०) कर्षणपुटम्, इ-तत्। कर्षण-
च्छिद्र, कानका छेद।

अर्चमुद्रिका (सं० खी०) अर्चयन्त्रुको, आनको सार ।
अर्चपुर (सं० खी०) अर्चय पूरम्, ६ तत् । अर्चको राज
जागो चन्दागरी । पात्रकस्य हरेर्भिमागबपुर अर्चते ।
अर्चपुरी (सं० खी०) अर्चय पुरी, ६ तत् । चम्पा
नगरी, मागलपुर ।

अर्चमुद्र (सं० पु०) अर्चय् अर्चकारं अर्चय्प
योय मुद्र वा यन्त्र । १ मोरटबता एक दिन ।
२ मोरभ्रिये, जानो भाङ्गो ।

अर्चपूर (सं० खी०) अर्चय पूरम्, ६ तत् । अर्चके
राज्यको पुरी, भावलपुर । इषवा संज्ञत पर्याय—
चम्पा माङ्गिकी थीर जोमपादपुः ।

अर्चपूर (सं० पु०) अर्च पूरपति अर्चयुरीति, अर्च
पूर पच । १ गिरीपट्ट, विरिषवा पीड । २ मोर
पत्र, बासा अर्चक । ३ अयोअर्चय । ४ अर्चमुद्र,
अरनयन्त्र । ५ अर्चय । यह अर्चन्दादि सार रचते थीर
नासकीको पोडा करते हैं । ६ नदीअर्च एक पोपक ।

अर्चपूरक (सं० पु०) अर्च पूरकति भूचकति, अर्च-
पुर लुक् अर्चपूर आवे क्त् वा । १ अर्चयन्त्र,
अर्चयका पीड । २ अयोअर्चय । ३ तिअक, तिअ ।

अर्चपूरक (सं० खी०) अर्चय पूरकम्, ६ तत् । तेजा-
दिवे अर्चका पूरक, शैल नगरइति आनका अयव ।
अर्चदिनी माङ्गिकी भिअकको अर्चो मति अर्च अरना
वाङ्गिये । निअ अर्चपूरकते मनुअ न तो अर्चका सुनता
थीर न अरना पङ्कता है । रथायथे मोअनके पङ्कते
थीर तेजायथे लुगायथे पीठे अर्चको अरना पङ्कता
है । (१०५) २ अर्चपूरकय् आनके आनकेची शोङ्ग ।

अर्चप्रवाद (सं० पु०) अर्चं पञ्चसिपिहितअर्चं प्रवाद-
यन्त्रविशेष, ०-तत् । अर्चप्रवादनामक रोगविशेष ।
अर्चय ६को ।

अर्चप्रतिनाह (सं० पु०) अर्चं आतः प्रतिनाह-
रोगविशेष, मज्जपदको० । अर्चरोगविशेष आनको
एक बीमारी । अर्चका मज्ज विअक नाप थीर लुप
नक था पङ्क अर्चके अर्चप्रतिनाह रोग समझा जाता
है । इष रोगके मज्जकके पर्ये मायमे वेदना हुवा
करती है । (मज्जपक) अर्चप्रतिनाह रोगमें खेड
थीर खेड इबीनअर नखादि शैना वाङ्गिये । (५५५)

अर्चप्रतीनाह (सं० पु०) अर्चरोगविशेष आनको
एक बीमारी । अर्चप्रतिनाह बीको ।

अर्चप्रयाग—सुअ प्रदेयके मङ्गवाक भिसेवा एक घाम ।
यह विष्णार तथा अरबानन्दा नदीके सङ्गमआन
(पचा० ३० १३'००" थीर देया० ०८ १३'३०" पु०)
पर अवस्थित है । अर्चप्रयाग पतिपूर्वके एक महातीर्थ
माना जाता है । यहां मङ्गवाके सङ्गममें नहानेके फयेव
पुङ्क सिद्धता है । हिमालयको आवे समय घामो रर
तीर्थका इयंन करते हैं । यहां हिमाचलन्दिने कामाका
मन्दिर है । आनयेव पञ्चागेके अर्चनासुअर मय-
वाग् मङ्गराचार्यने यह देवीमन्दिर बनाया था ।
पङ्कसे यहां विष्णार अरनेके सिद्धे रखीवा भूला
रवा । बिन्दु पर खीडवा धेतु बन गया है ।

अर्चप्रयागके एक मन्दिरमें अर्चकी प्रतिमूर्ति है ।
बिसेवा बिसेके मतासुअर अर्चके नामपर हो रर
अर्चप्रयाग कहते हैं । यह समुद्रतलके २३६० फीट
अर्च है ।

अर्चप्रान्त (सं० पु०) अर्चय प्रान्त सोमादेय,
६ तत् । अर्चकी शिव सोमा, आनका थीर ।

अर्चप्रय (सं० पु०) देवविशेष, एक सुल्ल । यह
देव मेखंत दिक्में अवस्थित है । (अण० १५५)

अर्चप्रावरण—अनपदविशेष, एक सुल्ल । महाभारतमें
यह अनपद दक्षिणदेवीव आङ्कमुअ, बोअगिरि, निवाड
अर्चतिथे साङ्क अङ्क है । (अनत १५)

देयावलीके मतमें अर्चप्रावरण माङ्क देवके
पश्चिम पङ्कता है । अरअपुराअमें एक अवर अर्च
प्रावरणका नाम है । अर्चो अनपदके पावने नदी
प्रवाहित है । (अथा १५०२५) यह अरअरतः हिमा-
अवथे उत्तर अजता है ।

अर्चप्रावरण अर्चके पश्चिमपश्चिमकी मो बीअक है ।
पायाअ भिअङ्कनिअने भारतमुअअर्चमें अर्चप्रावरणको
एनोटोकोले (Enotokoloi) अिआ है ।

अर्चप्रस (सं० पु०) अर्चं प्रसमिष यन्त्र । अरअ
विशेष, एक मङ्गकी । (Ophiocephalus kurrawey)
राजबहमके मतमें यह अर्चके थीर अरअर है ।

अर्चमुद्रिका—अर्चप्रान्तकी एक नदी । यह अथा० १३

५५'८० और टेगा० ८२' ४४' ५० पर अवस्थित है। कर्णफुली जयन्ताद्रिसे निकल दक्षिणमुख बङ्गोपसागरमें जा गिरी है। इसके दक्षिण कूलपर चट्टग्राम नगर और बन्दर है। प्रधान शाखा चार हैं—कासालङ्ग, चिङ्गडो, कपताई और रङ्गियाङ्ग।

कर्णफुलीके उत्पत्तिस्थान पर नीलकण्ठ नामक शिवलिंग प्रतिष्ठित है। इस नदीमें नहानसे पुख्य हाता है। (भारत मद्रास १५६)

कर्णवन्धनाकृति (सं० स्त्री०) कर्णवेधके अनन्तर कर्णके बन्धनकी पाकृति। यह पञ्चदश विध होती है— १ नेमिसन्धानक, २ उत्पलभेद्यक, ३ बहुरक, ४ आस-हिस, ५ गण्डकर्ण, ६ आहार्य, ७ निर्बन्धिम, ८ व्यायो-जिम, ९ कपाटसन्धिक, १० अर्धकपाटसन्धिक, ११ संक्षिप्त, १२ हीमकर्ण, १३ बल्लोकर्ण, १४ यष्टिकर्ण और १५ काकौटक।

कर्णभूषण (सं० स्त्री०) कर्ण भूषयति, कर्ण-भूष-ण्य। १ कर्णालङ्कार, कानका जेवर। २ अशोकहृत्। ३ नागकेशर।

कर्णभूषा (सं० स्त्री०) कर्ण भूषयति, कर्ण-भूष-ण्य-टाप्। कर्णभूषण, कानका जेवर।

कर्णमङ्गुर (सं० पुं०) मत्स्यभेद, एक मछली। (Silurus unitus)

कर्णमल (सं० स्त्री०) कर्णस्य मलम्, क्ष-तत्। कर्ण-गूथ, खूंट, कानका मैल।

कर्णसुकुर (सं० पुं०) कर्ण सुकुरः दर्पण इव, उपमि०। कर्णालङ्कार विशेष, कानका बाला।

कर्णमुख (सं० त्रि०) कर्णके अधीनस्थ, कर्णके पीछे रहनेवाले।

कर्णमूल (सं० स्त्री०) कर्णस्य मूलम्, क्ष-तत्। कर्णका मूलदेश, कानकी जड़। २ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। इसमें कानकी जड़ सूजती है।

कर्णमूलोय (सं० त्रि०) कर्णमूल-ठन्। कर्णमूल सम्बन्धीय, कानकी जड़के सुताङ्गिक।

कर्णन्दङ्ग (सं० पुं०) कानकी भोतरौ भिक्षी। यह अस्थि-पर चढ़ा रहता है। इसी पर जब कम्पित वायुका आघात लगता, तब जीवकी शब्दका ज्ञान उपजता है।

कर्णमोचक (सं० पुं०) कर्णस्फोटा, कानकी ली।

कर्णमोटा (सं० स्त्री०) बवूरुहत्त, बवूनका पेड़।

कर्णमोटि, कर्णमोटो देखो।

कर्णमोटी (सं० स्त्री०) कर्ण कर्णोपलक्षितं रोगविशेषं मोटयति नागयति, कर्ण-सुट्-इन् डोप्। चासुण्डा देखी।

कर्णमोरट (सं० पुं०) कर्णस्फोटा, एक दिन।

कर्णयुग्मप्रकोर्ण (सं० स्त्री०) नृत्यचालकविशेष, नाचकी एक चाल। इसमें हस्ताद्वयकी घुमा पार्श्वके सम्मुख जाते हैं।

कर्णयोनि (सं० त्रि०) कर्णः योनिः स्थानमप्य, बहुव्री०। १ कर्णआध, कानमें पड़ने लायक। २ कर्णसे उत्पन्न, कानसे पैदा।

कर्णरन्ध्र (सं० पुं०) कर्णस्य रन्ध्रः, क्ष-तत्। कर्ण-गत छिद्र, कानका छेद।

कर्णराज—गुजरातके अनहिलवाडवाले एक राजा। यह भोमराजके एक पुत्र थे। १००३ ई०को भोमके स्वर्गाभिषेक करनेसे इनपर राज्यका भार पड़ा। शासन-नीतिके गुणसे ईराकके सामन्त और पार्श्ववर्ती राजा कर्णराजके बगीभूत हुये। इन्होंने रूपमें विमुक्त हो कदम्बरराज जयकेशीकी कन्या मयानलदेवीसे विवाह किया। प्रथम पुत्र न होनेसे इन्होंने लक्ष्मीदेवीका ध्यान लगाया था। फिर लक्ष्मीके वरसे मयानलदेवी पुत्रवती हुईं (१०८३ ई०)। हठावस्थामें इन्होंने अपने पुत्र जयसिंहको राज्य छीप वानप्रस्थ भवलम्बन किया।

कर्णरोग (सं० पुं०) कर्णस्य कर्णजातो रोगः। कर्ण-व्याधि, कानकी बीमारी। यह २८ प्रकारका होता है—कर्णशूल, कर्णनाद, वाधियं, कर्णक्षेड, कर्णस्नाय, कर्णकण्डु, कर्णगूथ, कर्णप्रतीनाह, जन्तुकर्णं, कर्ण-पाक, पूतिकर्णं, ४ प्रकार अर्शं, ७ प्रकार अर्बुद, ४ प्रकार शय और २ प्रकार विद्रधि। (देवक निबन्ध) कर्णरोगप्रतिषेध (सं० पुं०) कर्णरोगाणां प्रतिषेधः शमनोपाया यत्र, बहुव्री०। १ कर्णरोगचिकित्सा, कानकी बीमारीका इलाज। २ सुश्रुतसंहिताका एक अध्याय।

कर्णरोगविज्ञान (सं० स्त्री०) कर्णगत व्याधिका निदान, कानमें होनेवाली बीमारीकी जाच।

कर्चल (सं० सि०) कर्च कर्चवालिसपर कर्च-
ल । प्रयुक्त कर्चवालिसविहित, पक्षी तरह सुन
सकनेवाला, जिसके जान रहे ।

कर्चलम्पलम्प (सं० पु०) स्वरभङ्गितमेद, कर्चके
रङ्गिनीको एक जात । कर्चमें लम्पको सरल बना पीर
उठा कर्चके निम्नत लानेके यह स्थिति को जानते है ।

कर्चलता (सं० लो०) कर्चल लता एक, उपनि० ।
कर्चपासो, जानकी सी ।

कर्चलतिहा (सं० लो०) कर्चल लता एक, कर्च-
लता काये कर्च टापू पत इलम् । कर्चपासो, जानकी
सी । (Lobe of the ear)

कर्चबंग (सं० पु०) कर्च कर्चलतिवत् बंगी यत्,
बहुप्रो० । मन्त्र, बसिका लंका ठाट ।

कर्चवत् (सं० सि०) कर्च प्रयुक्तेन पक्ष्यादि, कर्च-
मत्तुपू मन्त्र कः । १ दीर्घकर्चविहित, बड़े जानवाला ।
२ कर्चमुक्त, मानवाया । ३ कोमलवाया या कोमल
विहित बड़े या कोमलवाला । ४ परिशुद्ध, जिसके
पतवार रहे ।

कर्चवर्तित (सं० पु०) कर्चल कर्चलियेय वर्तित
हीनः । १ कर्च, कर्च । इसके प्रयुक्त कर्चलियेय नहीं
होता । (सि०) २ कर्चहीन, जानकटा । ३ कर्चल,
बहुप्र ।

कर्चवय (सं० पु०) मन्त्रविशेष, एक मन्त्रही । यह
हर, मोन, कर्च पीर मन्त्रवान् होता है । मांस
दीपन, पावन, पय, हय पीर मन्त्रपुष्टिकर है ।

कर्चवालिस—भारतके एक भूतपूज गवरनर जनरल ।
१०२८ ई०को ११वीं दिवसको इन्कोने कर्च किया ।
नाम कर्चल कर्चवालिस वा । यही कर्चवालिस
प्रदेशके द्वितीय पाल पीर प्रथम मारकण्ड बने ।
विताके रहने कर्चवालिस काई लस कहाते से ।
१०३१ ई०को इनके पिता मरे । विद्यपदके पत्रि
आरो होनेपर यह इच्छेलेखरके विरुध प्रियपाल
हुये । माघनके कर्चमें इच्छे सर्वतोमुखी समता पीर
काचीन मत प्रकाय करनेको यज्ञि सी । जब पत्नी
रिवा कानिकोने काचीनताके क्रिये सुद किया, तब
इन्कोने पति उष्णक तथा विधिय कोयलके साध

काच, बसिनिया, कामडिग, प्यारप्य, कामकट प्रसुति
प्लानको जोत लिया । किन्तु एक मदीने तोर इच्छे
ही नामक मगरके सुद्धमें फरासीसी पीर पत्नीरका
बाकी द्वारा एक बार पाञ्चान्त जानेपर चार कर मनुष्य
हाथ पदन इच्छे पाञ्च समर्पण करना पड़ा । (१०८१
ई०) इन्कोने पराक्रमके चंगरेक छोले हुये । १०८२ ई०
को चंगरेकोने पत्नी मर कर्चवालिस को छोड़ाया वा ।
राजाके प्रियपाल रहनेके पराभव पाले से यह विधिय
तिरस्कृत न हुये ।

१०८३ ई०को काई कर्चवालिस भारतके मन्त्र-
नर जनरल बनाये गये पीर उषी वर्ष चितम्बर
मास कलकत्ते वा पड़ु से । यह गान्धक्षमाद, मन्त्रो
बुद्धि, सुविचारकाम लोकाविय मजान् इदय पीर
लोकाहितेयो है । इनके पासे समय भारतमें सुद विप
वादि कुल न रहा । किन्तु वारन वेदिकुलके यावन
काचको दुर्नीतिसे देय मरा पड़ा वा । पञ्चाचार
पविचारके प्रापामर साधारण चररा गये पीर पत्नी-
कारिक देसो राजा विजयल हुके । सुतरां ऐसी धवस्थाके
काई कर्चवालिस था पीर कोय लमाके सुद्धके नामा
हितकर कार्य कटा भारतीय प्रजाके विधिय पिय बने ।
जस समय बड़े बड़े चंगरेक कर्मचारी तथा सेनिक इस
देशके कोमोके पाचिन्व व्यवसाय बसाते पीर राजा-
वोके निकट उपडोशन पाते है । सेनिक ज्ञानाविष
उपायके सुखकार से क्षेते । यातिरपाके क्रिये क्षितना
को सेन्ध रखा जाता था । काई कर्चवालिसने यह
सकल कुप्रथा उठाये । इन्कोने सेनिक पीर पक्ष
विप कर्मचारीके निये बेतनका प्रबन्ध बांधा वा ।

कलकत्तेके मन्त्राके को सन्धि हुयो, लमें पत्नीके
पत्नीति पीर पसङ्गत रीति रहने । इन्कोने पुनर्चार
उक्त विपबन्धो विवेचना समायो पीर यह बात
ठहराओ—सोमान्त प्रदेशमें सेन्धव्ययके निये नवाव
प्रतिरय ०४ साकके बन्दे १० साक हो रुपये देगे ।
पिर लन्के दूतके विषयपर लिया जानेवाला यह रूपका
बन्द कर दिया गया । नवावको पत्नी राज्यमें काचीन
भावके याचनकार्य बसानेको समता मिली ।

पहले हैदराबाद राज्यमें निजामके मूख्यर सर

कारके अंगरेजोंके अधीन रहनेकी बात ठहरी थी। बहुत दिन तक अधिकार न पाने पर १७८८ ई०की इन्होंने कपतान कनवयेको दूतस्वरूप भेज दिया। किन्तु निजामने कुछ न सुना। लाड कर्णवालिसने अन्तकी युष्का भय देखा सैन्य प्रेरण किया। निजामने शान्त भावसे वश्यता मानी और टीपू सुलतानके आससे कितना ही राज्य छोड़ा लेनेकी अंगरेजोंसे सहायता मांगी। फिर इन्होंने टीपूको डरानेके लिये एक कुरान भेज कहलाया था—‘प्रभूत विक्रम अंगरेजोंसे विवाद भावश्यक नहीं लंचता। एक धर्मावलम्बी रहते हम दोनोंके विवाद मिटानेकी दूसरेकी मध्यस्थता मानना क्या अच्छा है।’ टीपूने उत्तर दिया, ‘यदि आप अपनी कन्यासे हमारा विवाह कर दें, तो हम भी आपकी बात मान लें।’ निजाम इस पर बहुत विगड़े थे। फिर उभयका युष् रुक न सका। मसूलोपहनकी सन्धिके अनुसार अंगरेज निजाम पक्षमें टीपूसे लड़नेपर स्वीकृत हुये। टीपूके साथ विवादका दूसरा भी कारण था। मङ्गलूरके सन्धिपत्रानुसार त्रिवाङ्कोड़ अंगरेजोंका रक्षित राज्य निर्दिष्ट हुआ। त्रिवाङ्कोड़के राजाने चोलन्दाकोंसे करझानूर और भायकोटा नामक दो नगर खरीदे। टीपूने यह क्रय न माना और कोचिनराजका पक्ष ले त्रिवाङ्कोड़से युष् ठाना था। लाड कर्णवालिसने त्रिवाङ्कोड़के साहाय्यार्थ परिकर वांछा।

युष् होने लगा। १७८८ ई०की जनरल आवरने उपकूलस्थ काननका एक प्रदेश अधिकार किया। प्रथम महिसुरयुष् इससे बन्द हो गया। द्वितीय बार (१७८१ ई०) लाड कर्णवालिस स्वयं सेनापति बन लड़ने चले। इस युष्में टीपू हारे थे। किन्तु इन्हें भी खायके अभावसे सम्पूर्ण जय न मिला और ससैन्य पीछे झौटना पड़ा। अन्तकी मराठोंके साहाय्यसे फिर युष् चला। टीपूने बाध्य हो सन्धि कर ली।

महिसुरमें कृतकार्य हो इन्होंने शासनविधिके संस्कारपर मन लगाया। उस समय कर लेनेका प्रबन्ध बहुत विशुद्ध था। अकबरने पैमायश करा भूमिका जो कर ठहराया, वही बराबर चला आया। कर लेनेवासे कार्य अंशानुक्रम चला नाना प्रकार

अत्याचार देखाते थे। लाड कर्णवालिस इन सब विपर्योका अनुसन्धान लेने लगे। अन्तकी ताकतदारोंसे इन्होंने एक नियम किया था। यह दशमाला बन्दोबस्त कहाता है। किन्तु इस नियममें भी असुविधा देख लाड कर्णवालिसने जमोन्दारोंकी घिरकानके लिये भूस्वामित्व दिया और गवरनमेण्टके साथ करका प्रबन्ध किया। यही घिरस्थायो बन्दोबस्त कहाता है। १७८१ ई०की २२वीं मार्चकी यह बन्दोबस्त हुआ था।

पहले विचारक और तहसीलदार या कलेक्टरका काम एक ही व्यक्ति करता था। इन्होंने इन दोनों कार्यपर दो स्वतन्त्र व्यक्ति रखनेकी व्यवस्था वांछी। लाड कर्णवालिसने ही जिले जिले दीवानो अदा-लत खोली थी। फिर दीवानो अदालतकी अपील सुननेकी दूसरी चार अदालतें बनीं। अपीलो अदालतोंके विचार जांचनेका भार कलकत्तेकी सदर दीवानो अदालतपर आया। फिर निजामतकी अदालतके प्राइनकानून भी बहुत कुछ बदल गये।

१७८१ ई०के अक्टोबर मास यह सन्देशकी चले थे। इनके पीछे दश-साला और घिरस्थायो बन्दोबस्त की प्रथा स्थिर करनेवाले सर जान सीरने भारतके शासनका भार उठाया।

देशमें जाकर लाड कर्णवालिसने महासम्मान और मार्किंस उपाधि पाया था। १७८८ ई०की यह प्रायलेण्टके शासनकर्ता बने। वहां भी लाड कर्णवालिस शान्त भावसे विद्रोहादि मिटाने पर लोकप्रिय हो गये। १८०१ ई०की राजदूत बन यह फ्रान्स (फ्रांसीस) पहुँचे थे। इन्होंने मध्यस्थतासे एसिम्सकी सन्धि स्थापित हुयी।

१८०५ ई०की यह फिर भारतके राजप्रतिनिधि बने थे। यहां अगस्त मास पहुँचते ही लाड कर्णवालिस एक दल सैन्यके अधिनायक हो पश्चिमोत्तर प्रदेशकी चले और अक्टोबर मास गाजीपुर पीडित पड़े। उसी मासकी पूर्वी तारीखकी इनका सत्य हुआ। गाजीपुरमें लाड कर्णवालिसकी कब्र बनी है। कर्णविट् (सं० स्त्री०) कर्णस्य कर्ण जाता वा विट्। कर्णमल, कानका मेल।

“नकारकवद्वक्तृत्वमन्वृत्तिश्च कर्मविद्।

उं वाच्यं कर्मविद्वाच्यं वाच्यं वाच्यं वाच्यं” (मनु)

कर्मविद् (सं. त्रि.) कर्मविद्भिर्मिष्ट, त्रिसुखे य उ रई।

कर्मविद्भि (सं. पु.) कर्मज्ञोत्तोगत स्तोत्रक कालका भौतरी फोडा। यह दोपत्र और पागनुज— विविध होता है।

कर्मविधि (सं. पु.) कर्मज्ञेदनादि, काममें सेन मगे रर कालिका तरीका।

कर्मविधर (सं. स्त्री.) कर्मविद्ध, कामका जेद।

कर्मविध (सं. पु.) कर्मयोः, कर्मन्व वा विद्, ६-तत्।

संस्कारविशेष, कर्मविदन। इसमें मास्त्रोत्र विधानके

पसुसार काम जेदना पढ़ते हैं। कर्मके मासके ६ठे,

७ठे, ८ठे १२ठे या १६ठे महीने बुध, इन्द्रकालि, शुक्र

या सोमवार, द्वितीया, तृतीया, पंचमी पछी, सप्तमी,

द्वादशी पञ्चमा अष्टमिदशीको ब्राह्मण तथा वैष्णवा रीत्य,

रात्रियका कर्मके और शुद्धका मौडमलाका द्वारा कर्म-

विध किया जाता है। कर्ममास चैत्र एवं वीथ, सुग-

वत्स्र, चरिक्के मयनकाय, सूपित स्य, कल्पयप,

कर्मनचत्र दिवसके पूर्व भाग और रात्रिकासमें कर्म-

विध करना न चाहिये। (वचनाय) उत्तरायण सूर्यका

समय कर्म विधके लिये अच्छा है। दक्षिणायनमें यह

संस्कार करना न चाहिये। (नरं) एक पित्तके दो

पुत्रका कर्मविध संस्कार न होये पुनवार पुत्रीपतिभी

सन्धावना पानिसे दीनोंमें यह कर्मवाहीका कर्मविध

कर्तव्य है। विसै समय क्वेठ कालिका विचार पात्र

शुद्ध नहीं। कारक कर्मविधरहित तीन पुत्र जो

जानेसे कर्मपरक होय जगत, जो पत्नीय कुलित

ठहरता है। (लक्षणगत) ब्राह्मणके कर्ममें पशुठके

यन प्रमाथ प्रयत्न छिद्र रहना चाहिये।

“यत्र कर्मविधितरी कर्मो न कर्मो विधि।

कर्मो वाच्य न वाच्यं कर्मो वाच्यं कर्मो वाच्यं” (नित्यविभु)

कर्ममें पशुठके यह प्रमाथ छिद्र न रहते जोवी केसे याहका पक्षिदारो जो सभता है। उधके करनसे यात्र पशुठका भाव्य बन जाता है।

“कर्मन रवैरुचला न विधिरनकम्।

न इत्। विधरं कर्मि इच्छीयथ इत्यमत् ६” (विश्वविद्यान विनयनम्)

जिच ब्राह्मणके कर्मरन्ध्रमें सूर्यका क्षिरप नहीं ब्रुसता, उधका देवनेसे प्राचीन पुण्यगौर क्यजि भी नरक पहुचता है। कर्मपरधिर रीको।

कर्मविधनिका (सं. स्त्री.) विधरत इनया, कर्म विध करये क्युट् कारये क्यु टाप् पत इत्यम्। १ करिकर्म विधनाय, वासीके काम जेदनेका पौमार। २ कर्मविधनाय, काम जेदनेका पौजार।

कर्मविधनी (सं. स्त्री.) विधरति इनया कर्म विध करये क्युट्-कोप। कर्मविधको सूची, काम जेद नैकी सूची।

कर्मविष्ट (सं. पु.) कर्मो विष्टयति, कर्म विष्ट पच। १ कुण्डक, बाबी, पात। २ हायर बुगके एक राजा। (भाय, पथि ६०५०)

कर्मविष्टक (सं. स्त्री.) कर्मो विष्टयति, कर्म विष्ट क्युत्। १ कुण्डक बाका। २ गिरफ्तारका प्रासन, टोपीका दामन। इसके काम बधि जाती है।

कर्मविष्टकोष (सं. त्रि.) कर्मविष्टक ठल। कर्म-विष्टक सम्बन्धीय बासी का टोपीके दामनके सरोकार रखनिका।

कर्मवेष्टन (सं. स्त्री.) कर्मो वेष्टयति जेन कर्म वेष्ट-क्युत्। १ कुण्डन बाका। २ गिरफ्तारका प्रासन टोपीका दामन। ३ कर्मका वेष्टन, काम कपिटनेका काम।

कर्मव्यवधि (सं. पु.) कर्मविधन, कर्मविदन।

कर्मव्यवधि (सं. पु.) कर्मव्यवधि कर्मवेष्टन विधि, ६ तत्। १ कर्मविधका नियम, कर्मवेदनका तरीका। २ रक्षाभूषणको बासकके कर्मवेधका सुशु-तोन्न नियम। यह वा सप्तम भास प्रयत्न तिजि करक सुभतं तथा नचत्रबुध दिवस मङ्गल कार्बे एवं अस्ति-बाचन कर बासीके ओड़में बासकको बैठाना पौर

विविध स्त्रीकाद्वय द्वारा सन्धना दिसाना चाहिये। जिच मियक् कामइत्तु द्वारा कर्मविधर पञ्चक और सूर्य

क्षिरपमें देवकृत जिन् नक्षत्रकर दक्षिण ज्येष्ठ सूर्य सूचीके सरस भाग पर काम जेदता है। पुत्रका दक्षिण और कर्मका नाम कर्म जेदा जाता है। विधके बाद

उसमें रुयीकी बत्ती बनाकर डलाना और अपक तैल मगाना चाहिये। अधिक रुधिर गिरने या वेदना बढनेसे अन्य स्थानका वेध समझते हैं। यद्यारीति कर्णवेध होनेसे किसीप्रकार उपद्रव उठनेकी आगइ। नहीं आती। किन्तु अन्न भिषक् द्वारा कोयी दूसरी शिरा छिद जानेसे विविध उपद्रव उठते हैं। कालिका शिरा छिद होनेसे त्वर, दाह, शोथ और दुःख बढता है। फिर मसूरिका वेधसे वेदना, च्वर एवं ग्रन्थि और चोहितिका वेधसे मन्यास्तम्भ, अपतानक, शिरोग्रह और कर्णशूलरोग लगता है।

कष्टकर जिह्वा, प्रशस्त सूषीके वेध, गाढतर वर्ती प्रवेश अथवा टीपके प्रकोपसे वेदना तथा शोथ होने पर यष्टिमधु, एरण्डमूल, मञ्जिष्ठा, यव एवं तिन बांट और मधु घृत डाल प्रलेप चढाते हैं। इस प्रलेपसे अच्छा हो जानेपर फिर पूर्वाङ्ग नियमसे कर्णवेध करना पडता है। छिद्र बढानेकी तीन दिन पीछे क्रमशः सूक्ष्मवर्ती डाल लेसे सेंक देना चाहिये। (सुप्त)

कर्णशष्कुली (सं० स्त्री०) कर्णयोः कर्णस्य वा शष्कुली इव, उपसि०। १ कर्णगोलक, कानका परदा। (Auricle or external ear)

कर्णशिरौप (सं० पु०) कर्णगतः शिरौपः, मध्यपद-नो०। कर्णपर अलङ्कारवत् धारण किया हुआ शिरौप पुष्प, जो सिरिसका फूल कानपर जे धरकी तरह रखा हो। प्रवादानुसार कानमें फूल खोसना न चाहिये।

कर्णशूल (सं० पु०) कर्णस्य शूलः शूलवत् यन्त्रणा-प्रदो रोगः। कर्णस्त्रोतोगत रोगविशेष, कानका दर्द। दूषित कफ, पित्त एवं रक्तसे पथ रकते वायु कर्णमें घारो शोर चलता और अत्यन्त वेदना उत्पन्न करता है। इसी पीडाका नाम कर्णशूल है। कर्णशूल कष्ट-साध्य होता है। कपित्थ, निम्बुक एवं भाद्रकका रस अथवा शण्ठी, मधु, सैन्धव तथा तैल वा रसुन, आद्रक, शोभाञ्जना, रक्त शोभाञ्जनाके मूल और कदलीका रस किञ्चित् उष्ण कर कानमें डालनेसे कर्णशूल निवारित होता है। केवल समुद्रफेनको भी कूटपीस कानमें भरा करते हैं। गोमूत्र, इस्तिमूत्र, उद्गमूत्र अथवा गर्दभमूत्र उष्णकर कर्णपूरण करनेसे

कर्णशूल मिट जाता है। प्रकंपत्रके पुटमें जना सेहुण्टपत्रका उष्ण रस कर्णमें डालनेसे उक्त रोग आरोग्य होता है। फिर वी लगा प्रकंपका पत्रपत्र पत्रिण वा रौद्रमें तपाने और हाथसे दबा कानमें रस टपकानेसे भी कर्णशूल बढता है। (अष्टांग)

कर्णशूलो (सं० त्रि०) कर्णशूलोऽस्यास्ति, कर्णशूल-इन्। कर्णशूलविशिष्ट, जिसके कानमें दर्द रहै।

कर्णशेखर (सं० पु०) शालवृक्ष, शालका पेड। कर्णशोथ (सं० पु०) कर्णस्त्रोतोगत रोगविशेष, कानकी सूजन। इस रोगसे कर्णमें अर्घट और अर्घ उत्पन्न होते हैं। (माधवनिदान) फिर कर्णशोपसे कान बढने और रोगी बढना पडने लगता है। (अष्टांग) कर्णशोथक, कर्णशोथे।

कर्णशोभन (सं० त्रि०) कर्णशोभयति, कर्ण-शुभ-पिच्-त्युट्। कर्णभूषण, कानका गहना।

कर्णश्रव (सं० वि०) कर्णश्रवः श्रवणयोग्यः शब्दो यत्र, कर्ण-श्रु-पच्-बहुव्री०। श्रवणके योग्य, सुन पडने नायक।

“कर्णश्रवे श्रिते रावो दिवानः श्रवणम्” (मट)

कर्णसंस्त्राव (सं० पु०) कर्णस्य कर्णयो वा संस्त्रावः पूयशोषितादेः निस्त्रावणं यत्र रोगी, बहुव्री०। कर्ण-स्त्रोतोगत रोगविशेष, कानको एक बीमारी। मसूकने कोई आघात लगने, लजमें डूब पडने अथवा आन्तरिक कोई विद्रुधि पकनेसे वायुके कर्णद्वार द्वारा पृथ बढानेपर कर्णसंस्त्रावरोग समझा जाता है।

(माधवनिदान)

लासुन, सेमर, कांगई, मोलसिरी और बेरीकी डालका चूर्ण कंधेके रसमें मिला शहदके साथ कानमें डालनेसे कर्णसंस्त्राव रोग अच्छा हो जाता है। अथवा पुटपाकसे सिद्ध हाथीकी विठाका रस निकालते और तैल तथा सैन्धव मिला कर्णसंस्त्राव रोगके कानमें डालते हैं। (अष्टांग)

कर्णसमीप (सं० पु०) शब्ददेश, कनपटी, गुल्गुली।

कर्णसुवर्ण—भारतवर्षका एक प्राचीन जनपद। प्रसिद्ध चीनपरिव्राजक युएन-चुयङ्गने ‘किए-लो-न-सु-फ-ल-न’ नामसे जिस जनपदका वृत्तान्त लिखिवह किया, पाश्चात्य

पुरातनखविद्वान्नी उद्योका नाम 'कचंसुवच' रथ किया है। उक्त चीन-परिभाषकके कचंनानुसार—बह जन पद देख्यं प्रथमं प्रायः १४०० या १५०० मि (१२५ कोइसे पश्चिम) है। इसका राजधानी कोयो २० डि (डेकडोस) नगरी है। यहाँ बहुत लोग रहते हैं। सभी शास्त्र सिद्ध चीन सम्प्रतिपात्रो हैं। निम्नमूमि उर्वरा है। निरमित कृषिकार्यं चकता है। जाला विश्व महाबलं चीन उपादेय सुसुमभूयचधि बह जनपद पसहुत है। अलगाहु मनोरम है। अजिमासी विद्यो कासी देख पढते हैं। (इय समय) यहाँ दय सद्धाराम बने जिनमें २००० बीह प्रति बसे हैं। सभी उद्यतोय चीनवानप्रताबकम्बो हैं। नगरके पाखं रकविटि (की तो विह बि) नामक एक सद्धाराम खडा है। इसका शासकदेम सुविस्तत चीर प्राकार प्रति उच है। पढते यहाँ कोयी बीह न था। राजाके पादेय में एक बमच प्राये। उनको ज्ञानबर्म कथायें सुख हो राजानि बोह बर्म प्रचय किया। उयो समयसे यहाँ बीह बर्मका पादर बढ गया। इसी सद्धारामसे अगतिकूर पयोक राजाने एक श्लुप बनावा था।

यह कचंसुवच जनपद कहाँ का ? इसके वर्तमान ज्ञान पर गड़बड़ पड़ता है। बिसे-बिसेकी मतानुसार मुर्घिदाबादेके ६ कोष उत्तर 'कुइसोनका-मङ्ग' नामक प्राचीन नगर कचंसुवच हो सकता है। (J. A. S. Soc. Bengal Vol. XXII 281ff J. B. A. S. (n. s.) Vol. VI. 248 Ind. Ant. Vol. VII 197) फिर कोयी भादसपुरके निकटस्थ कचंसडको कचंसुवच समझता है। (Beal's Record, Vol. II p. 20) वस्तुतः कचंसुवचका प्रकृत स्थान पात्र भी ठीक नहीं ठहरा। किन्तु चीन परिभाषकको बर्चका देखते यह जनपद तास्खितिये ७०० मि (प्रायः ५० कोसमें पश्चिम) उत्तर पश्चिम पवस्थित है। वर्तमान राठु चीर मपरमक्ष पूर्व कचंसुवच राज्यका अंग था।

कचंसू (स० स्त्री०) कचंसू-सू-क्षिपु । कचंसूको जनगो सुम्तो। कचंसूची (स० स्त्री०) कचंसूकेनामके सूची, मध्यपद-शी० । कचंसूके अरमकी सूची, ज्ञान क्षिदनेकी ससार्।

कचंसूटो (स० स्त्री०) बीटबियेय, एक बीड़ा। कचंसूखोट (स० स्त्री०) कचंसूख खोटोव खोटो बिदारयं यष्मः। खताबियेय, एक विस। इनका संस्कृत पर्याय—सूतिखोट, मिपुटा, क्षप्यतखका, चित्रपथी कोपखता चन्द्रिका, चीर परचन्द्रिका है। राक्षनिषष्टुक्षि मतेषु बह कट्टु, तिब्र, मोतन चीर सर्व प्रकार विपरोम पचदोय, भूतादिबावा तथा पोड़ा नामक होती है।

कचंसूख (स० पु०) कचंसूख कचंसूखी ज्ञान-पूयादि निःस्वरम् ३ तत्। कचंसूखेय बियेय ज्ञान या ज्ञानोपे पीह बगो रथ बहनेको बीमापो। कचंसूख इको। कचंसूखोमन (स० पु०) कचंसूखोसे विष्णुकचंसू-विबरायु मवति, कचंसूखोतष्ठ-भू पच्। १ महु नामक पचुर। २ खैतम नामक पचुर। ३ महु इको। कचंसूखीन (न० पु०) १ सपं, साप। सापके ज्ञान नहीं होती। (भाट्ट. पत्र ६१५) (त्रि०) २ पश्चिम बहारा, बिधि सुन न पड़े।

कचंसूखिं (स० पद्य०) कचंसू खचंसू खचंसूखीला प्रकृत कचनम्, व्यतिहार इव पूर्वेषु दीर्घय। कचंसूखिं कचंसू पर्यन्त, ज्ञानो ज्ञान, ज्ञानाफलोपे। "कचंसूखिं वि कचंसू कचंसूखिं न कचंसूखिं।" (उत्तर १११११२)

कचंसूख्य (स० पु०) खेतभिक्ष्यो सफुदे भ्राह्म। कचंसूख्यति (स० पु०) कचंसू पञ्चद्विचिब, उपमि०। कचंसूख्यको, ज्ञानका क्षिद। पञ्चद्विचिबे द्रव्यप्रचयकी भाति यह गण्यप्रचयकी योव्यता रचता है। इसीसे पञ्चद्विचिबे छात्र उपमा दी गयी है।

कचंसूट (स० पु०) दासिपाम्यका एक प्राचीन जनपद। यक्षिसङ्गमतवर्धे भिक्षा।—

"रत्नतां वनतच चीरजाल" विहीनरे।
कचंसूटोनी देवेति कचंसूकोरत्नच ।"

रामनाथके निहार चीरको कोमा तक सामान्य सोवदायक कचंसूटिय है।

रामनाथका वर्तमान नाम रामनाथ है। बह भारत के दक्षिण समुद्रके निकट पवस्थित है। योरु मिथिरा पयोके निकट काथीरी चीर कोइबच नदीके मध्य पड़ता है। देवा हावे यक्षिसङ्गमतवर्धे मतानुसार

भारतका सर्वदक्षिण अंग रामेश्वरसे कावेरी नदी पर्यन्त कर्णाट देश ठहरता है। किन्तु महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट अर्थात् दक्षिण कर्णाटकी साथ उक्त है। यथा

“भवन्त्येव दक्षिणामध्यां कश्चिमी जगत् ।

महाभारतः नकापांटा गीर्वाणं विवृणुत्कथा ॥” (मार्कण्डेय पृ० ५८५०)

“कर्णाटमहाटविचित्रकृतः ।” (बृहत्संहिता १४।१९)

शक्तिमङ्गलतन्त्रमें भी एक स्थानपर कहा है—

“माशरतोयं राजेन्द्रं क्रीडापुरनिवासिनी ।

तावद्देशी महाराष्ट्रः कर्णाटस्वामिगोचरः ॥”

यहां महाराष्ट्रकी निकट कर्णाटस्वामीका उल्लेख मिलता है ।

एतद्विन्न कर्णाटके राजावैके खोदित शिलालेखमें पढ़ते, कि वह वर्तमान मद्रिसुरकी उत्तरांगसे विजयपुर पर्यन्त समुदाय भूभागमें राजत्व रखते थे। सम्भवतः इसी भूखण्डकी महाभारत, मार्कण्डेयपुराण और बृहत्संहितामें कर्णाट कहा है। आजकल कितने ही लोग कानाडा और कर्णाटक प्रदेशको कर्णाट समझते हैं। किन्तु यह उनका भ्रम है। हम जिसे कर्णाटक कहते, उसमें कोई प्राचीन कर्णाटराज रहते न थे। सुसलमानोंके आनेसे मद्रिसुरका दक्षिण अंग कर्णाटक कहाया है। कर्णाटक देखो। श्रीमद्भागवतमें दक्षिण कर्णाटका नाम है। यह स्थान कौङ्ग, वेङ्गट और कूटक नामक जनपदके साथ उक्त है। (भागवत १।६।८) वर्तमान कर्णाटकका कावेरीकूलस्थ स्थान उक्त दक्षिणकर्णाट हो सकता है।

कानाडा कर्णाट शब्दका ही अपभ्रंश है। किन्तु कानाडा प्राचीन कर्णाट राज्यके भीतर नहीं पड़ता। सुसलमानोंके मद्रिसुरके दक्षिणांगकी कर्णाटक कहनेकी तरह अंगरेजोंने भी गोवाके दक्षिणस्थित समुद्रकूलवर्ती विस्तीर्ण भूभागका नाम कानाडा रख लिया। प्राचीन काल समुद्रकूलवर्ती उक्त विस्तीर्ण भूभाग मद्रिद्विखण्डके अन्तर्भूत था। कानाडा देखो।

कर्णाटप्रदेशमें चालुक्य, चेर, गङ्ग, पल्लव और कलचुरि वंशने राजत्व किया। चालुक्य प्रथम प्रत्येक शब्द देखो।

ई० दशम शताब्दको कर्णाटका दक्षिणांग चीन राजा-वोके हाथ लगा। उस समय उत्तर अंगमें कलचुरी वंश राजत्व रखता था।

वज्जालदेव मद्रिसुरके तोत्र रमें जाकर रहें। उस समय वह और उनके वंशधर विजयनगरके कलचुरी राजाकी कर देते थे। कलचुरीके अधःपतनसे वज्जाल-वंशका अस्तित्व हुआ। १३३६ ई०की वज्जालवंशने प्रवल हो तुङ्गभद्राके दक्षिण कर्णाट प्रदेश अधिकार किया। १५६५ ई० पर्यन्त उसका प्रभाव अच्युत रहा। सुसलमानोंसे हार वह प्रथम पेन्नाकोडा, फिर चन्द्रगिरिमें जाकर बसे। उनको एक शाखा आनगुण्डीमें भी थी। उसी समय कर्णाटक नाम निकला। प्राचीन कर्णाटसे कर्णाटकको स्वतन्त्र देखानेके लिये एकको ‘कर्णाटपयान-घाट’ अर्थात् कर्णाटकी निम्न भूमि और उसके उत्तर पार्वतीय स्थानको ‘कर्णाट वालाघाट’ कहते थे।

सुसलमानोंने विजयनगरके हिन्दू राजा भग कर्णाटकी दो भागमें बांट लिया—कर्णाटक हैदराबाद या गोलकुण्डा और कर्णाटक वीजापुर। फिर उभय विभाग पयानघाट और वालाघाट दो विभागमें विभक्त हुये।

शुनपनि—भारतके संस्कृतज्ञ पण्डित कर्णाट शब्दकी कर्ण-अट्-पच्-सकन्वादि व्युत्पत्ति लगाते हैं। किन्तु शब्दशास्त्रविद् पण्डितोंके कथनानुसार द्राविडी कर्णाटु (कर्-कण्थ + नाटु स्थान) अर्थात् कण्थप्रदेश वा कण्थकार्पासोत्पादक क्षेत्रसे कर्णाट बना है। मार्कण्डेयपुराण, महाभारत और ब्राह्मिन्दिरकी बृहत्संहिता पठनेसे कर्णाट नाम बहु प्राचीन मालूम पड़ता है।

कर्णाट शब्द स्थानवाचक श्रोते भी वह दिनके स्वतन्त्र जाति और भाषाका बोधक है।

कर्णाट—द्राविड ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। भारतके उत्तराञ्चलमें पञ्चगौड कहनेसे जैसे कान्यकुब्ज, सारस्वत, गौड, मैथिल तथा उत्कल, वैसेही दक्षिणात्यमें द्राविड शब्दसे महाराष्ट्र, तैलङ्ग, द्राविड, कर्णाट और गुर्जर ब्राह्मण समझ पड़ते हैं।

द्राविड ब्राह्मणोंकी धर्म श्रेणी कर्णाट है। यह

पपर द्राविड़ोके मिश्रत आमिवाक्य और मर्वादांमि
कुत्र हीन हैं। पपर थोचोके ब्राह्मण इन्हें पपनो कव्या
नहीं देते। विष्णु खाना पोना एक ही मी-पनता है।

अनाड़ा वा कर्चाटिक प्रदेशमें यह रहती है। अना-
टुके सबस पधिसासो प्रायः लिङ्गायतु है। सन्धान
प्रदानको बात जोड़ बड़ समस समय इनको निम्ना
उदाहा करती है। फिर भी किसी कर्चाटके लनके
सर पतिमि होमिपर बादर पधरंजाको परिहीमा
नहीं रहतो। यह कायसन वाक्यसे सेवा उठा उठको
यष्टि लम्बुड करती है।

कर्चाट इस प्रान्तके ब्राह्मणोंकी भांति यजमान
द्वारा परिपोषित न होते बौध्वादिनिर्वाहके सिधे अरु अ
कर्म जोड़ नानाप्रकार कार्य करता है। किसी
किसीको पेटकी अन्नसे खेतो भी करना पड़तो है।

यह नरक धरवा यजुर्वेदो होते हैं। इनको प्रधा
नतः पष्ट माका है—१ ईग २ ज्ञात, ३ चौबिसरी,
४ बर्गिगर, ५ कन्दाक, ६ कर्चाटक, ७ मञ्जिसुर-कर्चा
टक और ८ मोरनाद (चोनाय)। वासखानामुखार
कर्चाट ब्राह्मणोंके मिश्र मिश्र नाम मिलती हैं—

मोस	उपाधि	कुत्र
अन्नर	नारकर्चाटक	मञ्जिसुर।
गैल	कचकड	कचकड।
करदास	सुविगत	कचरी।
दंड	कचकड	वीरकचन।
विपलिन	कर्चाकमुड	ईल्लहाली।
मञ्जिस	सुविगत	वीरकचनवीर।
मई	मरीन कर्चाटक	मारी।
पञ्जिर	वीरकचन	सुवुगवड।
कल	ईरक	मन्दीर।
अरवाक	कचकड	कचकड।
अरवाक	मार्हीनकर्चाटक	अन्नतामनकचन।
अरवाक	वीरकचन	कचकड।
अरवाक	मार्हीनकर्चाटक	अन्नतामन।
गैल	सुविगत	विपलिन।
अरवाक	सुविगत	विपलिन।

सिवा इसके कुछो लम्बमगुड प्रकृति घुसरे भी कई
सर हैं।

कर्चाट ब्राह्मण उत्तर पश्चिम अनाड़ा, सुवुड,

मनवार, कोपिन और मञ्जिसुरमें रहती है। इनको
संख्या १० लाखके पधिक है। यह देशके गठनको
दुको और आकृतिसे उत्तराखण्डके ब्राह्मणोंकी भांति
कगती है।

कर्चाट (म. पु.) राजविगीय। यह मधुरागका
हितोप पुत्र है। इसको राजके प्रथम प्रहर माने हैं।
कर्चाटको प्रो कर्चाटी, एण्णाको, मलावाटी मञ्जिसा
और मोरही है।

कर्चाटक—१ द्राविडवाक्यकी एक भाषा। यह प्रधा
नतः तोन भागमें विभक्त है—तल्लु (तेल्लु) तामिळ
(द्राविड़ो) और कर्चाटक (कर्चाटो)। तल्लु उत्तर,
तामिळ दक्षिण और कर्चाटक भाषा मन्दाकके पश्चि
मार्गके पधिमोपगुड पर्यंत समस्त प्रदेशमें प्रकृत
है। यही तोन द्राविडवाक्यकी प्रधा भाषा है। इनमें
अनाड़ा, दक्षिण मन्दाकड, मञ्जिसुर, निजाम राज्यके
पश्चिमोय और बिहारमें कर्चाटक भाषाका पधिक
चलन है। मोसगिरिमें रहनेवाको बड़गजाति भी
मायड प्राचीन कर्चाटी भाषा ही बोलती है। प्राचीन
कर्चाटोको प्रायःकत 'इल्लकचड' कहते हैं। मन्दाकड
और मञ्जिसुरमें जो बोलित गिञ्जाकसक मिसै इनमें
पनेक प्राचीन कर्चाटी पत्रसे लिखे हैं।

मन्दाक वा कन्दा देसिडैलीके सिविलियन और
पञ्चाग्य गहरनीष्ट कर्मचारोको यह प्रकृत देवीय
भाषा बोलना पड़तो है। इनको गिञ्जा देसीको प्रथम
बांके समस्त कर्चाटो भाषाके सम्बन्धमें पनेक विपक
संप्रदय लिखे और लिखे गये। इसीसे ई० प्रथम
शताब्दको श्रेयमपपिठतर्न 'गणरकदपैय' नामक एक
शातु सम्बन्धीय पुस्तक बनाया, जो इस भाषाका
मूलभाषाकरण कहाया है।

कर्चाटी भाषा लम्बतादिको भांति नाम दिक्के
दक्षिणको चिह्नो आतो है। इससे मन्दाक लिखनेमें जिस
जिस कर्चे वा बुझावरका प्रयोगन पड़ता, वह पास ही
पास बनता है। दो मन्दी वा पदोंके मध्य प्रायःकत
श्रेय अन्ननेको न तो कोवो व्यवस्था और न वाक्य वा
वाक्यांमके पीछे किसी चिह्नका व्यवहार है। कर्चाटी
कर्चमासामें यह ११ पत्रर होते हैं। उनमें १६ अरु,

२ अर्धस्वर और ३८ व्यञ्जन हैं। किन्तु विशुद्ध कर्णाटकीके ४७ ही वर्ण रहते हैं। बाकी ६ वर्ण संस्कृत शब्दोंका उच्चारण निकालनेकी वने हैं। संस्कृतादि भाषाकी भांति कर्णाटकीमें भी यथेष्ट भिन्नरूप युक्ताक्षर विद्यमान हैं।

इसके समुदाय शब्द पांच श्रेणीमें विभक्त हैं—१ म मूल कर्णाटकी, २ य कर्णाटकी प्रत्ययादि युक्त संस्कृत, ३ य संस्कृत-परिवर्तित, ४ य अर्धभ्रंश एवं अर्धभाषा और ५ म अन्यान्य भाषाके शब्द। फिर कर्णाटकी भाषामें विशेष्य शब्दके चार भाग हैं—वस्तुवाचक, विशिष्ट, क्रियावाचक और यौगिक। इसमें देवता तथा मनुष्यकी पुंलिङ्ग, देवी और मानवीकी स्त्रीलिङ्ग और समस्त पशुपक्षी कीटपतङ्गादि एवं अचेतन उद्भिद् पदार्थको स्त्रीलिङ्ग माना है। वचन दो ही हैं—एकवचन और बहुवचन। सर्वनामको ८ भागमें बांटा है—व्यक्तिवाचक, पूरणवाचक, अनिश्चयात्मक, संख्यावाचक, स्थानवाचक, समयपरिमाणवाचक और प्रत्यक्षक। क्रिया सकर्मक और द्विकर्मक होती है। काल आठ प्रकारका है। द्वितीय पुरुषके अनुज्ञाकालका रूप ही धातुका मूलरूप रहता है।

इसमें उपसर्गादि अव्यय, क्रियाविशेषण, समुच्चयादि अव्यय और विस्मयादि अव्यय भी होते हैं। किन्तु भाषामें जो विशेषत्व रहता, उसको लिखकर देवानिका कोड़े उपाय नहीं ठहरता। शून्यके योगसे दशगुणोत्तर संख्या समझी जाती है।

कर्णाटकी भाषाके सम्बन्धमें विशेष विवरण समझनेकी Dr. Mc Kerrell's Grammar of the Carnataka language और Caldwell's Dravidian Grammar देखना आवश्यक है।

२ नेपालका एक राजवंश। पार्वतीय वंशावली पढ़नेसे समझ पडा, कि कर्णाटक राजवंशने नेपाली सवत् ६से २२८ (८६० से ११०६ ई०) तक २१६ वर्ष राजत्व किया था। निम्नलिखित नेपालाधिप कर्णाटकीका नाम मिलता है—

नाम

१ शम्भुदेव

राज्यकाल

५० वर्ष।

० गण्डदेव (शम्भुदेव)

४१ वर्ष।

१ नरसिंहदेव (गण्डके पुत्र)

२१ ”

४ शक्तिदेव (नरसिंहके पुत्र)

५६ ”

५ रामसिंहदेव (शक्तिके पुत्र)

५८ ”

६ हरिदेव।

मिथिला देवी।

कर्णाटकदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटक भट्ट—एक प्राचीन संस्कृत कवि। (समाधिताम्रको)

कर्णाटक भाषा (सं० स्त्री०) कर्णाटदेशकी भाषा।

कर्णाटदेव—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। (शक्तिकर्णाटके)

कर्णाटदेश, कर्णाट देखो।

कर्णाटशिखर (सं० स्त्री०) महाराष्ट्र प्रदेशके चित्रकूटादि पर्वतका चूडादेश।

कर्णाटिक—मन्द्राजप्रान्तका एक प्रदेश। हुमारी अन्तरीपसे उत्तर सरकार-पर्यन्त पूर्ववाट और करमण्डन उपकूल अर्थात् समस्त तामिल प्रदेशका भ्रमक्रमसे युरोपीयोंने यह नाम रखा है। कर्णाटिक कहनेसे कर्णाट सम्बन्धीयका बोध होता है। किन्तु उक्त विस्तीर्ण भूखण्ड प्राचीन कर्णाट राज्यके अन्तर्गत न रहा। कर्णाट देखो। वर इसके उत्तराग त्रिचनापल्ली और कावेरी नदीका उपकूलके भूमिखण्ड किसी समय दक्षिण कर्णाट कहाता था। आजकल अंगरेज जिसे कर्णाटिक बताते, वर्तमान आर्कोट (अरकोट), मदुरा और तञ्जौर राज्य उसीके अन्तर्गत प्राते हैं।

पलासी-युद्धके समय कर्णाटिकमें अंगरेज कई बार लड़े थे। इसीसे दाक्षिणात्यमें अंगरेजोंके प्रभुत्वकी भित्ति दृढ़ पड़ गयी। नीचे उक्त युद्धका विवरण देते हैं—

जिस समय क्लाइव कलकत्तेके अंगरेजोंकी विपद् सुन एडमिरल वाटसनके साथ बङ्गालकी ओर बढ़े, उसी समय (अप्रैल १७५६ ई०) कप्तान कालियड नामक मन्द्राजके एक अंगरेज-सेनानी वाको राजस्व लेनेकी मदुरापर चढ़े। कप्तान कालियड त्रिचनापल्लीके शासनकर्ता थे। उनके मदुरा जोतनेको त्रिचनापल्ली छोड़ते ही अंगरेजोंके तदानीन्तन शत्रु फरासीसियोंने त्रिचनापल्ली आक्रमण करनेको एक दल सेन्य भेज दिया। फरासीसी सेन्यने त्रिचनापल्ली पहुँच अंगरेजोंका दुर्ग अधिकार किया था। कप्तान कालियड यह संवाद सुनते ही त्रिचनापल्लीको ओर लौट पड़े।

मदुराके सुद्धमें उनका पराजय हुआ। बिन्दु उन्नीस
त्रिचनापञ्ची पञ्च वती ही फरासीसी सेन्थको चञ्चाक
छाका। फरासीसी सेन्थान्धमनि चार कर त्रिचनापञ्ची
प गरीजोंको सोयी। इसी बीच बन्दोबास नामक
खानके शासनकर्मनि प गरीजोंको राजस्व देना पक्षी
कार किया। कारणक पाकडार कृम उनसे बिद्व
बड़े पौर नगर सेर पड़े थे। बिन्दु फरासीसी बन्धी
बासके शासनकर्मनि प गरीजोंको राजस्व देना पक्षी
पपसर हुये, जिससे कस्तान पाकडार कृम पपना
पवरोध उठा चली गये। फिर मराठोंने बहाई
नवाबके राजस्वको चौधका बाकी उ पाछ रुपये
माँया था। बिन्दु नवाब उस समय इतना रुपये
कहाँ पाते। वह नाना पतुनय विपय करने लगे।
पन्तकी मजहाराद्वये भाड़े चार साध रुपयेमें समस्त
क्षय निबटानेपर सञ्चल हुये। इस समय पठान
नवाब दाकिबाबके सुदैदार पौर मराठा-नायक
सुरारी रावको पञ्चानता पवित्र माभवे न थे। सुरारी
उन्नीस प गरीजोंसे कइला सेवा—इस मराठोंके
विद्व पापको साहाय्य देनेपर प्रभुत्वं है। बिन्दु
प गरीज उनसे बेसी सन्धि स्थापन कर न सके। कारण
उस समय मजहाराद्व प गरीजोंसे कइय रूप्यहार रखते
थे। इसी प्रकार एक मास बीतनेपर दूधरे मास (जून
१७१० ई०) कस्तान कात्तियकने फिर मदुरापर चढ़ने
को उद्योग किया। सुद्धमें प गरीजोंकी बिष्टर
पति हुयो पौर प्रथम पाकडारके कोई बात न बनी।
बिन्दु कानियक इनकी पति उठा भी सुद्धसे पान्त न
हुये पौर उन्नीस प गरीजोंको नगरमें बुस पड़े। फिर
उन्नीस शासनकर्मनि (१००००) २० बाकी राजस्व
पावा था। इससे पौढे भी प गरीज मदुरा राष्ट्रके
पुत्र सुद्ध सुग् पाकडार करते रहें। बिन्दु किसी
पक्षपर जय पराजय फिर न हुआ।

इसी समय फिर बुरोपमें प गरीज-फरासीसी लड़
पड़े। फरासीसियोंन काठपुट्टि के काकी नामक एक
जन बिज्जात से निरक्षकी सेनाका नायक बना एक हक
नी-सेनाके साथ भारत मिया। काकीके साथ निरक्षकी भी
एक लड़क्य पारैरिय सेन्थ था। १७१८ ई०के पत्रेक

मास वह पक्षको पपने माय से भारत पा पड़ से।
उन्नीस पति जो प गरीजोंका शिष्ट डेविड सुग् पाक
मय किया था। एडमिरल रिमेसकी पपोनक्ष चहुँर
सेनाके उन्ने रोखनीको किया बिन्दु उसका कोई फल
न हुआ। सामोने सुग् पविहार कर मद्रासपर चढ़ना
चाहा था। बिन्दु पाकडारक पपे न मिननेसे वह सङ्घट्ट
सेविका तेसा ही बना रहा। फिर पक्षे स पक्षके निचे
उन्नीस तखोरराज प्रदत्त १६ लाख रुपयेका तम
भूक सुकानकी दौड़ रूप लयायी, बिन्दु उनमें भी
कोई सिद्धि न पायी। तखोरके राजमनि प गरीजोंकी
मन्थकामें पड़ बजवा देनेपर तया विभक्त्य छाका था।
इसी पक्षकाममें प गरीजोंकी भी सेना पा पड़ थी।
कालीने बाबु हा शिष्ट डेविड सुग्का पवरोध छाड़ा
था। कालीने द्विपूरका एक प्राचीन बिन्दु मन्दिर
तोड़ पुनक ब्राह्मणोंको तोपसे उठा दिया। इसी
मय फरासीसी सेनाको बुयो निजाम राजममें महा-
समादरके रखते थे। कालीने उन्ने जाना सेवा। बुनीके
सालोके निरक्षक पड़ वती ही उन्ने सलारके फरासीसी
पविहारमें गड़बड़ पड़ा था। बिगाडरतनके राजा
पानन्दराजने फरासीसी पविहार पाकडारक किया।
बिन्दु भविष्यतमें फरासीसी पाकडारके राष्ट्रकाकी
बिन्तापर वह सबरा उठे। पन्तको पन्थ डवाय न देख
उन्नीस ब्रह्मन्थे छाडरका साहाय्य माँया था। ला इरने
पापडारक सन्धि उइरा कतर सलारके पवारोसिदोका
भगनिके निचे करनक पौडको २ लड़ार सिगहो,
१०० नोरे पीर ६ तोपोंके साथ राजमईन्द्रोकी पार
भेजा। राजम फरासीसी सेनाको कनकसाङ्गने इतनेको
सेन्थके साथ उन्ने जरा पत्र तोपें बीन थीं। बिन्दु पौड
उत्तके सुञ्चित न हो कनकसाङ्गने कोटके ही पक्षे दौड़
पड़े। राजमईन्द्रोका उन्नीस वहाँ किसीको पाया
न था। सुरारा वह समन्थ मन्थकीपत्तनको पौर बड़े।
कोषमें थनिक फल पर पानन्दराजने बाबा डालनीकी
पेटा लगायो थी। बिन्दु पन्तकी (उठौं मार्च १७१८
ई०) पौड पपने इन्नेके साथ मन्थकीपत्तन पड़ ब
गये। कनकसाङ्गने निजामसे साहाय्य माँया। निजाम
ने भी साहाय्य देना कोकार किया। इकर पौडके

गोरे सिपाही बाकी वेतन और मछलीपत्तनकी लूटका अंश न पानेसे विगड पड़े। किन्तु निज़ामकी फौज टग कीस दूर रह जाते सुन वह निरस्त हुये। फोर्ड मछलीपत्तन दुर्ग अधिकार कर बैठे। निज़ाम फरासीसी फौज आनेकी राह देखते थे। फरासीसी रणतरी कूलपर आयी। किन्तु फौज उतरनेकी खबर किसीने न पायी। निज़ामने फरासीसियोंसे चिट अपना स्वायें बनानेकी अंगरेजोंके साथ सन्धि कर ली। उससे अंगरेजोंको चिरकाल चार लाख रुपये आयके उपयुक्त भूसम्पत्ति सह मछलीपत्तन नगर मिलने, मदियत्तम हृष्णा नदीके उत्तर फरासीसियोंकी कोई कीठी न रहने या चलने और सूविदारकी अपने काममें कीयी फरासीसी न रखनेकी बात ठहरी।

लाली सेण्ट डेविडका अवरोध छोड चल दिये। अंगरेजोंके आडमिरल पोकोक और फरासीसियोंके वाउण्ट डि आसि करमण्डल उपकूलमें स्त्र नौसेनाके साथ उपस्थित थे। पोकोकने अपनी ओरसे दो बार आसिको आक्रमण किया। आसि डर कर पुंदिचेरी भाग गये। फिर वहाँ लालीसे फटकारे जानेपर उन्हें मरिच शहरकी राह लेना पड़ी। लालीका वल इससे घटा था। किन्तु कर्णाटिकके नवाब बाद साहबका मृत्यु हुआ। फरासीसी उनके ज्येष्ठपुत्र राजा साहबकी वर्णाटिकका नवाब मान गद्दीपर बैठानेकी चेष्टामें लगे। लाली इससे व्यस्त हुये। मुहम्मद अली आर्कोटके गामनकर्ता थे। उन्हें इस्लमत करनेकी लालीने प्रतारणापूर्वक कहा—१००००) रु० में हम आर्कोट लेनेकी सन्धत है। मुहम्मद अली उसीमें मान गये। लालीने हनुसे वुस नगर देखल किया। आर्कोट लेने पीछे वह डिडलिपट दुर्ग पानेके आयोजनमें लगे। किन्तु अंगरेज मन्द्राजके निकट फरासीसी राज्य कहा होने होते थे। उन्होंने डिडलिपट दुर्ग सैन्यादि मेज सुरक्षित किया। लालीने मन्द्राज अधिकार कर सकनेको दृष्टि धन न पाया। फिर भी वह साहसपूर्वक सिर्फ २४ हजार रुपयेके सहारे दिसम्बर मास मन्द्राज घेरनेकी आगे बढ़े। मन्द्राज यह आक्रमण सङ्गनेको प्रसूत था। किन्तु सैन्यसंख्या अधिक न

रही। ८ सप्ताह फरासीसी सेनाका अवरोध बना। १७५६ ई०की १५वीं फरवरीको मन्द्राज जाता जाता देखा गया। किन्तु उसी समय अंगरेजोंकी नौसेना आ पहुँची। फरासीसी भी खाद्यादिके अभावसे आर्कोटको लौट पड़े।

अङ्गरेजोंको समुद्रपथसे खाद्य और सैन्यका साहाय्य मिलता था। किन्तु फरासीसी पुंदिचेरीसे कोई साहाय्य न पानेपर विलकुल बैठ रहे। १०वीं सितम्बरको फरासीसी नौसेनाके कुछ अंशको तिनकमलीके निकट आते ही अङ्गरेज सेनानी पोकोकने छत्रमङ्ग किया। फिर फरासीसी नौसेनाका एक दल काउण्ट आसिके अघेन चार लाख रुपयेके रत्नादि और सैन्यादि ले पहुँचा, किन्तु भारतवर्षमें उतरनेका आदेश न पाते अन्त चल गया। इसी बीच वन्देवास अङ्गरेजोंने आक्रमण किया और १७६० ई०को कुटने फरासीसियोंसे छेन लिया। फरासीसी यहींसे हारने लगे। वन्देवासके युद्धमें वुसि वन्दे बने थे। कुटने फिर आर्कोट जीत अन्य स्थान अधिकार किये। फरासीसी कुछ भी विगड न सके। मार्च मासके मध्य उपकूल पर काधिकट और पुंदिचेरीको छोड़ फरासीसीयोंका दूसरा कीयी अधिकार न रहा। लाली अर्थ वा सैन्यसाहाय्य न पा महा व्यतिव्यस्त हुये और अन्तको मद्दिपुरके हैदर अलीसे मदद मागने लगे। हैदर अपनी स्वीकृत हुये, किन्तु हठात् किसी कारण वश शीघ्र स्वराज्यको सैन्य चल दिये। सुतरां फरासीसियोंका कीयी उपकार न उठा। इधर मेजर मनसनने फरासिसियोंको सम्पूर्ण रूप हराया था। किन्तु लालीने हठात् ४थी सितम्बरको अङ्गरेजोंका शिविर आक्रमणकर मनसनको सुस्तर रूपसे आहत किया, किन्तु कुटसे सम्पूर्ण पराजित होना पडा। कुटने फिर पुंदिचेरीको घेरा था। क्रमशः दुर्गमें खाद्यका अभाव आया। दो दिनसे अधिक खाद्य न चलते देख लालीने दुर्ग छोड मन्द्राजके राजा साहबके निकट आश्रय पकडा।

इसी प्रकार फरासीसी प्रादुर्भाव भारतसे उठा था। कर्णाटिकके मध्यका केवल तियागर और गिष्णु नामक

स्नान परासोपिबोधि चर्चकारिं रच गया। कुत्र दिन
येहि चङ्गैकोहि यष्ट मी चष्टनत हुवा।

कर्णाटिका (सं० स्त्री०) कर्नाटी स्नात्रे कर्नाटाय
उच्यते। कर्नाटी स्त्रीः।

कर्नाटी (सं० स्त्री०) कर्नाट स्त्रीप्। १ कोटिराशिमौ।
यष्ट मासत्र राग वा कर्णाटस्त्री स्त्री है। इसके गानेका
समय रात्रिके द्वितीय प्रहरको द्वितीया चटिका है।
२ अष्टपदीसुप्त, एक भेस। ३ कर्णाटदेशको स्त्री।
४ अनुप्रास विधेय। गन्दासङ्कारिं कर्नाटका अनुप्रास
कर्णाटी कर्नाता है। ५ कर्णाटको भाषा।

कर्णाट (सं० स्त्री०) कर्षं तिर्येष्वाकारान् इव पठन्।
एङ्विधिये, बिभो बिष्वाद्या मन्वान्। यष्ट तिर्यक्-
वान्को मति पाषापादि प्रेक्षाकर बनाया जाता है।

“तिर्यक्त्वे त्रिष्वान् कर्णाटिके च।” (भाट्ट २५, २६२ व)

कर्णाटय (सं० पुं०) कर्णासङ्कार विधेय, जानका एक
मथना।

कर्णाटुज (सं० पुं०) कर्षेज पशुजः, कर्षे-पशु कर्ण
ज। कर्षेके छोटे माईं कुबिठिर।

कर्णात्मिक (सं० त्रि०) कर्षेसमीपज, जानके पास
पडमीकासा।

कर्णाटु (सं० स्त्री०) कर्षेया पामुरिव। १ कर्षे
पानो, जानकी स्त्री। २ उत्पत्तिका, वासी।

कर्णाटू (सं० स्त्री०) कर्णाटु-सङ्कार। १ कर्षे पासी,
जानकी स्त्री। २ सुरको, वासी।

कर्षारमय (सं० स्त्री०) कर्षेज कर्षे शयें वा पामर
वम्। कर्षानङ्कार जानका गङ्गा।

कर्षारचक्र (सं० पुं०) कर्षारचक्रिच मुच्ये
कारति कर्षारये, कर्षारमय के-क। पारम्बर इत्य,
पमकतासका पीङ्ग।

कर्षारा (सं० स्त्री०) कर्षे चयैरि विधेय पनय, कर्षे
ज सज् टाप्। कर्षेविधो, जान केरनेकी सहायी।

कर्षारि (सं० पुं०) कर्षेज परिः ३ तत्। १ कर्षेके
ग्रन्, प्रकृत। २ पारमप्रत्यय। ३ नदीसर्षङ्ग, एक पीङ्ग।

कर्षारिच (सं० स्त्री०) कर्षेज कर्षेवीर्ये चर्षेचं। मुक्ति-
योग्यविषयमें कर्षेका चर्षेच, जानकी सहाई।

कर्षारिण्य (सं० पुं०) कर्षेस्त्रोतोमत रोम विधेय, जानका
कीडा वा मथना।

कर्षारिण्ये, कर्षारिण्ये।

कर्षारिङ्कार (सं० पुं०) कर्षे चर्षेस्त्रीयते चित्, कर्षे-
चर्षेज इत्य। कर्षेसूच्य, जानका गङ्गा।

कर्षारिङ्गति (सं० स्त्री०) कर्षेवीरसङ्कृतिरङ्कारचम्,
३ तत्। कर्षेसूच्य, जानका गङ्गा। २ कर्षेयोमा,
जानकी सजावट।

कर्षारिङ्गिया (सं० स्त्री०) कर्षेवीरसङ्किया चङ्कार-
यम् ३-तत्। कर्षेयोमा, जानकी सजावट।

कर्षारिङ्गल (सं० पुं०) कर्षेयोपाङ्गल पारङ्गलम्।
उत्पत्तिसत्तिका कर्षेसङ्कालन, शमी वने रचके जानकी
पटकार।

कर्षे (सं० पुं०) कर्षे इत्। १ यर विधेय, बिसे
बिष्वाद्या तीर। भाषे इत्। २ मेदकार्ये द्वेदार्।

कर्षेज (सं० पुं०) १ गविचारिका कोरि पीङ्ग।
२ पदाशोक, कनकको खोल। ३ सविपातस्वरविधेय,
एक तुकार। इसमें होयजयके तोत्र स्वर पाता और
कर्षेके मूलपर मोड चङ्ग जाता है। फिर कण्ठ
बजता, जानकी सुन नहीं पड़ता, खास बजता, प्रकाप
बड़ता, प्रखेद बजता, मोड समता और देह जल
उठता है। (भाष्यजम्)

कर्षिका (सं० स्त्री०) कर्षे इत्कृन् टाप्। कर्षेकाम्यम्
कनकारि। पामर। १ कर्षेसूच्य विधेय, जानका एक
क्षेवर। इसका संकलन पर्याय—तासपत्र, ताङ्गु और
दन्तपत्र है। २ कर्षिकपत्रपामरकपाङ्गलि शमीकी
सङ्कषे चयते द्विषेकी च गवीयेपी बीज। ३ पद्य
कोजकोप कर्षेका सहा। ४ कर्षेको मध्यम पङ्कलि,
हाथके कोचकी च गली। ५ कर्षेकादिपङ्कटीय कर्षेज।
६ सेचनी, कृषम। ७ पार्ष्णिमन्त्रज। ८ पत्रपङ्कटी,
मैङ्गारोगी। ९ चर्षेको विधेय, एक परी। “कनका
कनका च कर्षिका इत्येकम्।” (भाट्ट, कर्षे ११५६१)
१० क्षेत्री, यथे द गुमाव। इसका संकलन पर्याय—
यत्रपत्री, तद्वचो, चारकेयरा, महाकुमारो गन्धाद्या,
कचपुष्या और पतिमन्त्रका है। मावमन्त्रायके मतसे
यह पाङ्गाद्वर, मोतक संघाही एतद्वचक कर्षे

त्रिदोष तथा रक्तनाशक, वर्णकर, तिक्त, कटु और परिपाककारक होती है। ११ यान्त्रिकविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। इससे योनिपर कर्णिकाकार मांसग्रन्थि पड़ जाता है। प्रसवसे पूर्व अनुपयुक्त समय ज़ीरमें कांखनेपर गर्भके द्वारा वायु रुक ज़ेया तथा रक्तमें मिलता, जिससे यह रोग लगता है। (चरक)

इस रोगमें सर्वप्रकार कफनाशक औषध व्यवस्थेय है। कुष्ठ, पिप्पली, अर्कहृषकी कोमल शाखा पर्याप्त अग्रभाग और सैन्धव लवण कागके मूत्रमें पीस वत्तो बनाने और योनिमें प्रविष्टकर लगानेसे कर्णिकारोग निवारित होता है। (चक्रदान)

१२ दारुणपीडा, ददं-शदीद ।

कर्णिकाचल (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितः अचलः । सुमेरु पर्वत । “यथा नाथामवस्थित पर्वत शीवर्षं कुम्भगिरिराजो मरुदोपायामसमुद्राद् कर्णिकाभूत् कुम्भलपकमलयः ।” (भागवत ३।१।४०)

कर्णिकाद्रि (सं० पु०) कर्णिकायां स्थितः अद्रिः । सुमेरुपर्वत । कर्णिकापर्वत, कर्णिकाचल देखो ।

कर्णिकार (सं० पु०-स्त्री०) कर्णि मेदनं करोति, कर्णि-क-अण् । १ हृत्त्रिविध, कनियार, कनकचम्पा । इसका संस्कृत पर्याय—द्रुमोत्पन्न, परिव्यध और हृत्त्रोत्पल है। २ कर्णिकारपुष्प, कनकचम्पाका फूल । “वर्षप्रकर्षं सति कर्णिकारम् ।” (कुमारसं०) ३ आरग्वध विशेष, छोटा असलतास । इसका संस्कृत पर्याय—राजतरु, प्रग्रह, कर्ममालक, सुफल, चक्र, परिव्याध, व्याधिरिपु, पित्तबीजक और लघ्वारग्वध है। यह एक विशाल वृक्ष है। फल दीर्घ और आरग्वध सदृश होता है। इसका गूदा जुन्नावर्मे लगता है। राजनिघण्टुके मतानुसार कर्णिकार सारक, तिक्त, कटु, उष्ण और कफ, शूल, च्दरकमि, मेह, व्रण तथा गुल्मनाशक है। कर्णिकारक, कर्णिकार देखो ।

कर्णिकारप्रिय (सं० पु०) शिव । शिवकी कर्णिकार अत्यन्त प्रिय है ।

कर्णिकारिका (सं० स्त्री०) हरिद्रावृक्ष, हल्दीका पेड़ । कर्णिकी (सं० पु०) कर्णिका शुष्काभाङ्गलिः

अप्यास्ति, कर्षिका इति । हस्ती, सूंडकी उंगली रखनेवाला हाथी ।

कर्णिन् (सं० त्रि०) विवृद्धकर्णं, बड़े कानोंवाला । कर्णिनी (सं० स्त्री०) योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Discharge of the uterus or Polypus uteri) । कर्णिका देखो ।

कर्णिक (सं० त्रि०) कर्णं प्राशब्देन अप्यास्ति, कर्ण-इणच् । गुल्मदिग् ३८५ । ३।१।१० । दीर्घकर्णं, बड़े कानोंवाला ।

कर्णिकार (सं० पु०) शरविशेष, किम्बो किम्बका तीर । कर्णी (सं० पु०) कर्णो पक्षो अस्त्यस्य, कर्ण-इति ।

१ सप्तवर्षं पर्वतके मध्य पर्वत विशेष, एक पहाड़ ।

“द्विसप्तद् रेणुदृष्टय द्विधा मरुतः च ।

येव कर्णो च प्रदो च मरुते वरुदंताः ॥” (भागवत)

२ वाणविशेष, किम्बो किम्बका तीर ।

“हरोति कर्णिनी यत्नं यत्नं सख्युदि हृदर ।

प्रयति ते विगमने तत्रे धरु दाहदः ॥” (विष्णु० १।१।१२)

‘कर्णिनी वाणविशेषः ।’ (शोधर)

३ आरग्वधवृक्ष, अमनतासका पेड़ । ४ मणिकारिका, कोई पेड़ । ५ कर्णपार्व, कनपट्टी । ६ कर्णधार, मांझी, मसाह । (त्रि०) ७ प्रग्रस्तकर्ण, बड़े कानोंवाला । ८ कर्णयुक्त, जिसके कान रुद्धे । ९ कानमें कोई चीज रखे हुआ । १० टीली चटकती बीजधाना, दामनदार । ११ अत्रियुक्त, गंडोला । १२ पतवारवाला ।

कर्णी (सं० स्त्री०) कर्ण-डोप् । १ वाणविशेष, किम्बो किम्बका तीर । २ मूनटवकी माता । मन्देश देखो ।

कर्णीमान् (सं० पु०) कर्णी वाणविशेषाकारः फन्तो इत्यस्य, कर्णिन्-मत्तुप्, संज्ञायां दीर्घः । आरग्वध, अमनतास ।

कर्णीरथ (सं० पु०) कर्णः मामीष्यात् स्तन्धः अस्यास्ति वाहनत्वेन, कर्ण-इति; कर्णी चासी रथयेति दीर्घश्च, कर्मधा० । १ क्रीडारथ, खेपनेकी गाड़ी । २ मनुष्यके वहन करने योग्य रथ, पाटमीके चला सकने लायक गाड़ी । ३ स्त्रीवहनार्थं वस्त्राच्छादित यान विशेष, परदेदार डोलो । इसका संस्कृत पर्याय—

प्रवहन, हयन, प्रहरण और डयन है ।

कर्णिवान्, कर्णीमान् देखो ।

लग्न क्रूर अर्थात् प्रथम, द्वितीय, पञ्चम, सप्तम, नवम और एकादश राशिके मध्य आनेसे कर्तरी योग होता है। यह रोग कन्धाकी मार डालता है।

कर्तरीय (सं० पु०) वृचविशेष, एक षेड। इस वृचका वक्त्रल, सार और निर्यास विषमय होता है। २ त्वक-सार-निर्यास-विषमैद, छाल हीर और दूधका चहर।

“वृषपाशककर्तरीयसीरीयकरकाटकरभ्रमधुनवराटकानि सत त्वक-सारनिर्यासविषमिपि ।” (सूदन)

कर्तरीयुग (सं० स्त्री०) सिन्धुवारइय, संभालूका जोडा। कर्तव्य (सं० त्रि०) कर्तुं योग्यम्, क्त योग्याद्यर्थे तव्यः। १ करनेकी उपयुक्त, किये जाने लायक।

“हीनसेवा न कर्तव्या कर्तव्यो महदायय ।” (हितोपदेश)

२ लगाया जानेवाला। ३ फेरा जानेवाला। ४ दिया जानेवाला। (स्त्री०) ५ कार्य, फर्ज, करने लायक काम। ६ हेय, काटने लायक चीज।

कर्तव्यता (सं० स्त्री०) कर्तव्यस्य भावः, कर्तव्य-तन्-टाप्। १ विधेयता, बद्धव, जरूरत। २ औचित्य, मौजूबियत, दुकस्ती। ३ उपयुक्त उपाय, मानूल तदवीर।

कर्तव्यविमूढ़ (सं० त्रि०) अपना कर्तव्य न देखने-वाला, जिसे अपना फर्ज न सुझ पड़े।

कर्तव्याकर्तव्य (सं० स्त्री०) करने एवं न करने योग्य कार्य, भला-बुरा काम।

कर्ता (सं० पु०) करोति सृजति सम्पादयति वा, कृ-लृच्। लृच्-लृच्। पा ३।१।११। १ ब्रह्मा। २ कर्मसम्पा-दक, काम बनानेवाला। यह कर्ता चार प्रकारका होता है—१ हेतुकर्ता, २ प्रयोजककर्ता, ३ अनुमन्ता-कर्ता और ४ गृहीताकर्ता।

न्यायमतानुसार क्रियाकृति जिसमें समवाय मुख्यभू-से रहती उसीको विद्वन्मण्डनी कर्ता कहती है। वेदान्तपरिभाषामें उपादानविषयक अपरोक्षज्ञान-चिकीर्षा तथा कृतिमानको कर्ता माना है। फिर भामतीके मतानुसार इतर कारक द्वारा प्रेरित न होते सकल कारकका प्रयोजक (प्रेरक) कर्ता है।

गुणके अनुसार कर्ता त्रिविध होता है—सात्विक, राजस और तामस। सुतसङ्ग, निरहङ्गारी, धैर्यशाली,

उत्साही और सिद्धि तथा असिद्धिमें निर्विकार रहने-वाला पुरुष सात्विक कर्ता है। रागो, कर्मफला-काङ्क्षी, लुब्ध, हिंस्र, अशुचि और हर्षशोकादियुक्त पुरुष राजस कर्ता ब्रह्माता है। फिर आत्मज्ञानके नाममें निषेध, गठ, प्रतारक, अलस, विषमोजी, दीर्घसूत्री और स्वल्पकृति पुरुषकी तामस कर्ता कहते हैं।

३ प्रभु, मानिक। ४ अध्वज, अफसर। ५ महादेव।

“श्रीवृषा शोधयन् कर्ता विषवाहुर्महोदरः ।” (भारत ११।१४४०)

६ व्याकरणका एक कारक, फायल। क्रियाके करनेवालेको कर्ता कहते हैं। यह हिन्दी भाषा तथा संस्कृतदिमें सर्व प्रथम कारक माना गया है। इसका चिह्न ‘ने’ है। जैसे—रामने रावणको मारा। यहां मारनेकी क्रिया रामद्वारा सम्पादित हुयी। इसीसे राम कर्ता कारक ठहरा और उसमें ‘ने’ चिह्न लगा। किन्तु अकर्मक क्रिया रहते कर्तामें कोई चिह्न लगाया नहीं जाता। जैसे—रावण मर गया। अंगरेजीमें इसे नमिनेटिव केस (Nominative case) कहते हैं।

कर्ताभजा (कर्ताभजनी)—बङ्गालका एक उपासक सम्प्रदाय। इस सम्प्रदायके लोगोकी ध्याख्याके अनुसार वही कर्ताभजनो हो सकता, जो कर्ता अर्थात् परमेश्वर-का पूर्ण रूपसे भजन करता है। कर्ताभजनी सम्प्रदायके प्रवर्तक, प्रथम मतप्रतिष्ठाता और प्रचारक श्रीलिया-चांद थे। इस सम्प्रदायवाले उनको एकवाक्यसे ईश्वरका अवतार मानते हैं। प्रवादानुसार माधवेन्द्रपुरी नामक एक बालक गोपीनाथ-विग्रहके श्रीमन्दिरमें एक दिन प्रतिधि हुये। उन्होंने वैकालिक जलपानका और पीना चाहा था। भक्तवत्सल गोपीनाथने शोकके बालसे एक कटोरा और चोरा रखा और पीछे पूजकोसे उन्हें देनेकी कहा। इसी घटनाके पीछे शचीनन्दन श्रीचैतन्य-देव गोपीनाथके मन्दिरसे अप्रकट हो अलक्ष्य सञ्चासीके वेश आनोरपुरी परगनेके घोला-दुबलो नामक स्थानमें पहुंच कुछ समय तक प्रच्छन्न भावसे रहे। पीछे वह उलासाम गये और महादेव-तंबोलीकी भौटमें बालक वेश देख पड़े। महादेवके कोई सन्तान न था। उन्होंने उक्त अज्ञातकुलशील बालककी पा पुत्रनिर्देशसे पासन किया। बारह बत्सरकाल श्रीलिया चांद महादेव

तबोकीं कर रहे। इससे लक्ष्मी जोड़ कुछ दिन किसी गन्धर्वबिचारी पास सी बच टिके थे। फिर चौबिया-बाद एक भूखानेमें भजन बैठ करै ठहरै। वहाँसे बहने पर बहानेकी पूर्णार्थमें कोई कोई ज्ञान कुछ दिन हम फिर २० बरबर बयासमके समय वैशङ्गा नामक धाममें बह कर रहै। उक्त धाममें २२ दिवस तक पशुचर बने। फिर चौबिया बाँद बाबदके निकट परारो नामक ज्ञानमें बहुत दिन टिके और १६६१ मासको बधानमें मर गये। पाठ प्रधान सिद्धिमें लक्ष्मी कन्या कबी ज्ञान पर गाढ़ दिवकी परारो धाममें से आकर समाहित किया।

बहरी—मराठीके इहामिमें किसी सेन्याय्यबने चौबिया-बाँदको बेमार पकड़ा था। किन्तु वह जि बेबीके निकट बहुराटी बाँदके अपने कमरुदुर्गमें मन्नाको हाल बहजुब्य पहिल गद्दानमें पार कर गये। लक्ष्मी कमरुदुर्गका मन्नाबह पाक भी घोषपाड़ेमें पाकींके कर रहा है। कर्तामबने विद्याल जाते, कि हम जलसे बोग सकल पतिसाक और मोघ पाते हैं।

चौबिया-बाँदके १२ दिव्योमें राममरप्यपाल एक श्रुमोप जातीय घटका से। जहाँमें एक मतको पेक्षाया है। चौबियाबाँद पतिदीर्घकाय और धाबातु कर्मित बाहु रहै। वह पकमूल का लतापत्र ही आकर अपना जीवन बचाते थे। लक्ष्मी पम्बको जयन, पङ्को बरच, पङ्कको शुभ, दरिद्रको धन तथा अतको जीवन दे अपने मताबलम्बियोंको विमोहित किया और बहुतसे कोनोंको पशुपायी बना किया। उनके प्रसादसे राममरच भी पशुविक्रम शक्तिपम्बप हुये।

राममरचके मरनेपर उनके पुत्र रामदुसासने इस मतका बड़ो कर्ताम की। वह फारसी पूब पड़े थे। लक्ष्मी सब कोनोंके भगभने घोष पात-पाठ से गीत सामान्य भाषामें बनावे। उनमें कोयो प्राचीन हिन्दू गान्धातुगत, कोयो सुसजमान सूखी सन्धदाय किष्ट और कोयो गीतरबजिताका पमिप्रेत है। कर्तामबने रामदुसासके पञ्च मोमेंको शास्त्र धम भते हैं। प्रति पाठकारको प्रातः और सायंकाल की समाप्त लगते उद्यम बोग वड़ो गीत गाते हैं।

रामदुसासके समय पनेक लनी, मानो घोर ज्ञानो श्रद्धिपेने यह मत पबसम्पन्न किया था। १८२१ ई०के फेस मासकी ज्ञान पक्षादमीको लक्ष्मीने एक कोत्रसे पमसर किया।

पौष्टि रामदुसासको पत्नी सरकतोने 'कर्तामा' घोर 'सती मा' के नाम गद्दो पर बैठ इस पम्बदायको नीतिरि की।

कर्ता-भगनी सन्धदायके बीजमन्त्रका मूलसूत्र 'शुभ यम्' है। यही सबको पक्षी सिखाया जाता है। फिर निम्नलिखित मन्त्र तीन बार चुनाते हैं—

"बर्ता चौबिया मरामह। हुन कनारि और इन कनारि है। कनारि ही हुनके इन कनारि है। इन हुनके शिवाय भी कनन नहीं। इन कनारि ही कन है। बीसके मरामह।"

कर्ता मन्त्रबिचोके मतमें परधीममन, परदुष्पहरच, परदुष्कावाचन, मिष्याकचन, इधामाव और प्रसाप-मावका निवेश चौबिया-बाँदको पात्रा है। इनमें जातिविचार नहीं होता। मनुष्य मनुष्यका मिय घोर पूज्य है। दूसरे देवदेवीकी उपासना पाबम्बक नहीं।

कर्तामजनिपेके कर्तमानुसार घृषिनीका वृत्तरा सन्प्रकार हमें समस्त पशुमान घोर श्रेय्य बर्तन उक्त पधान है। ज्ञानसाधन हाथ मनुष्य अपने रहदेवको प्रमथ कर सकता है। किन्तु प्रमथकरच शिवा करके नहीं बनती। चौबियाकेमें मन्त्रको गद्दो है। फाल्गुनको पूर्वमासको दोलका मिला समया है। फिर रघयात्रा प्रकति दूसरे भी मन्त्रोत्थन होते हैं।

कर्ता (५० पु०) १ कर्ता, करनेवाला। यह संस्कृत 'कर्तु' मन्त्रको प्रथमा विभक्तिका बहुवचन है। किन्तु हिन्दोमें एकवचनको ही भाँति पाता है। २ विधाता, परमेश्वर, पुनियाकी बनानेवाला।

कर्तित (५० जि०) कर्त क-र-ए० कर्तन किया हुआ, कडा, बडा जो कडा गया हो।

कर्तिभ्यत् (५० जि०) कर्तन करनेकी रण्ठा रचने-वाला जो काटना चाहता हो।

कर्तिभसाच, कर्त्तव्य ऐसी।

कर्तुं काम (५० जि०) कर्तुं काम पमिजायो यत्न, बहुवी०। करनेका इच्छुक, जो करना चाहता हो।

कर्तृ, कर्ता शब्दो।

कर्तृक (सं० त्रि०) प्रतिदृष्टा, प्रतिनिधि, कारगुजार, करनेवाला।

कर्तृका (सं० स्त्री०) कृतति छिन्नति, छत्-छप्-स्वर्णाद्यै कन्-टाप् । सुद्रसृग्, कटारी।

“इत्युक्ता विधेताप कर्तात्तत् काडरात् ।” (एतवार, गणमाजल)

कर्तृत्व (सं० क्लो०) कर्तृभावः, कर्तृ-त्व । कर्ताका धर्म, कारगुजारी, करनेवालेकी माकू,नियत।

“न कर्तृत्वं न कर्तृवि लोकाय शक्ति मयः ।” (गोवा ४।११)

कर्तृपुर (सं० क्लो०) नगरविशेष, एक गहर। यह भारतके उत्तरपूर्व अंचलमें अवस्थित है। मसुद्रगुप्तने यह स्थान जय किया था। मसुद्रगुप्त शब्दो।

कर्तृवाचक, कर्तृवाच्य शब्दो।

कर्तृवाची, कर्तृवाच्य शब्दो।

कर्तृवाच्य (सं० पु०) कर्तावाच्यो यत्र, यदुर्गो० । क्रियापद द्वारा कर्ताको लक्षित करनेवाला वाच्य, जिस चुमलेमें फेलसे फायलको समझ सकें। (Active voice) इसमें कर्ता प्रधान रहता और कर्ममें 'को' चिह्न जगता है जैसे—रामने रावणको मारा। प्रत्येक क्रियाका प्रकृत रूप कर्तृवाच्य ही होता है। जैसे—निष्पत्ता, पढ़ना, मडना, संभना, खेलना, कूदना। किन्तु कर्मवाच्यमें प्रधान क्रिया भूतकालमें आती और उसमें 'जाना' क्रिया पीछे जोड़ दी जाती है। जैसे—निष्पा या पढ़ा जाना। फिर कर्तृवाच्यसे कर्मवाच्य बनानेमें कर्मको कर्ता और कर्ताको करण ठहराते हैं। जैसे—'रामने रावणको मारा' कर्तृवाच्यका 'रावण रामसे मारा गया' कर्मवाच्य हुआ।

कर्तृवाच्यक्रिया (सं० स्त्री०) कर्तृवाच्य शब्दो।

कर्तृस्थ (सं० त्रि०) कर्तरि कर्तृसम्पादनयोग्ये तिष्ठति, कर्तृ-स्था-ड । कर्तृस्थानीय, कर्ताका प्रतिनिधि, करनेवालेकी जगह रहनेवाला।

कर्तृस्थक्रियक (सं० त्रि०) कर्तामें अपने कार्यको भुगानेवाला, जो अपना काम फायदसे रखता हो।

कर्तृस्थभावक (सं० त्रि०) कर्तामें अपना भाव रखनेवाला।

कर्तृका (सं० स्त्री०) सुद्रसृग्, कटारी, गिकारीकी छुरी।

कर्त्तिका, कर्त्तिका शब्दो।

कर्त्ती (सं० स्त्री०) कतरनी, कौशो।

कर्त्तृ (सं० त्रि०) कर्तृम किया जानेवाला, जो करनेवाला हो।

कर्त्ती (सं० स्त्री०) करोति या, छ छत्-डोप् । १ कायं-सम्पादन-कारिणी, काम बनानेवाली। २ प्रभुपत्नी, सान्निहिकी बीबी।

कर्त्तृ (सं० क्लो०) कर्तृत्वं । कर्तृत्वं शब्दो । कर्तृत्वं । कृत, घी।

कर्तृ (सं० पु०) कर्तृ-पच् । कर्तृम, कौषड।

कर्तृद—पद्मावके कागडा जिनका मध्यवर्ती एक घाम। यह भागनदीसे यामुनपर अवस्थित है। कर्तृदमें पच्छे पच्छे मकान् बने हैं।

कर्तृट (सं० पु०) कर्तृ कर्तृसं पठति कारणत्वेन प्राप्नोति, कर्तृ-पट्-पच् । १ पद, कौषड। २ करहाट, कंबलकी लह। ३ मृपान, कंबलकी छप्पी। ४ कलक-टदमात्र, पणिशा घास। (त्रि०) ५ पहाड, कौषडमें बननेवाला।

कर्तृन (सं० क्लो०) कर्तृत्वं, कर्तृ भाये प्यट् । कृत्ति गच्छ, पेटकी पावाज, गुडगुहाडट।

कर्तृम (सं० पु०-स्त्री०) कर्तृ-पम । कर्तृम शब्दो । कर्तृम । १ पद, कौषड, बहना। इसका संस्कृत पर्याय—निपदर, कम्पान, पद और गाद है। राजवदमके मतसे कर्तृम शीतल, पद्म शीत विषरोग, वेदना, टाड तथा शोथनाशक होता है। २ स्वायम्भुव मन्वन्तारके प्रजापति विशेष। इनके पिताका नाम क्रोतिमान् और पुत्रका नाम अनङ्ग था। (भाग, मालि) यह ब्रह्माकी छायामें उत्पन्न हुये। फिर इन्होंने सरस्वतीतीर विन्दुसरतीर्षमें दग सहस्र वक्त्र तपस्या की। स्वायम्भुवमनुकी कन्या देवहृति इनकी पत्नी थीं। पुत्रका नाम कपिलदेव रहा। इनके कनादि नव कन्या भी थीं। कर्त्तृ शीत रक्षा शब्दो। ३ पाप, गुणाह। ४ छाया, परछाई। “बिंदु कर्तृक मयस्वावाणे बतने छुट्म् ।” (ब्रह्मे-प्रश्न २१ पं०) ५ नागविशेष, एक सांप। “बर्तृक कर्तापति नाग्य बहुलकः ।” (भाग १।१४।१६) ६ नृत्तिका, मही। ७ मत्त, कूड़ा। ८ प्रजापति पुत्रहके एक पुत्र।

८ जन्मराज ; ९ साँध, मोर । १० ज्योदयविष
 कर्तविक्रम एक विष । कर्पणिको । ११ वम कर्टमाक्य
 त्रिवरोय, पाँचको एक मोमारी । १२ वरंन दो । (त्रि०)
 १३ कर्टममुठ कोचकुधि मरा हुआ ।
 कर्टम—१ विन्म्यायर्षके पन्मयंत एक पाम । २ चायो
 प्रदेयके मन्मका एक घाम ; (न मउच०)
 कर्टमक (सं० पु०) कर्टमे कायति मकायते, कर्टम
 को क । १ कायविमिय, एक पनाक । मरि दो ।
 २ पद, कोचकु । ३ राकिमत् सर्पविदेय एक साँप ।
 चंरे दो । ४ चम, पनाम ।
 कर्टमराज (सं० पु०) कायमोरके एक राजा । इनके
 पिताका नाम सेम या सेमगुम था । (एम०)
 कर्टमविद्ययं (सं० पु०) विद्यपरीगमेद, किरी विषमका
 कोड़ । माचवनिदानके मतमें यह कर्पयित् ज्वरमे
 प्पथ, मिद्रा, तन्द्रा, शिरोबन्ध, पङ्काषाद, विषिय,
 प्रसाप, परोचक भ्रम, मूर्च्छा, पम्बिहानि, पक्षि
 मेह, विषाषिन्द्रियका गौरव बढ़ाता थीर पीत,
 कोहित, पाण्ड र, स्निग्ध पणित, मलिन, शोषवान्,
 शुद्ध तथा मथोरपाक देखाता है । मयगमो विद्ययंको
 कर्टम कहते हैं ।
 कर्टमाटक (सं० पु०) कर्टमो मकादि पत्तये निचियते
 यत्र, कर्टमय मकादि पाटो निवेयोऽत्र इति वा ।
 विहादि पेंकेनेका प्यान, मूकोवर कालनेको जमह ।
 कर्टमित (सं० त्रि०) कर्टम रतत् । कर्टमकपमे
 परिचत, कोचकु बना हुआ, मेला ।
 कर्टमिमी (सं० स्त्री०) कर्टमाना दिग्गः, कर्टम इनि
 शीम् । प्रपुर कर्टमहुज्ज देय, कोचकुका सुख ।
 कर्टमिन (सं० स्त्री०) कर्टम इनि । इन्मचरत्नके
 निरन्तु कर्पत्त् विन्म्यचरको परिचरत्नमर्दि । वा ४५५० ।
 कर्मपदविदेय, एक सुख ।
 "इत्तु कर्त्तन्नि नाम मरणाकारिणं कर्त्तुम् ।" (ममत्, वन)
 कर्टमो (सं० स्त्री०) सुहराज्य, मन्मराजका पिड़ ।
 कर्मपुत्री, कर्मपुत्री दो ।
 कर्मक, कर्नेच दो ।
 कर्मता (हि० पु०) पम्बिमिय किलो रंगका कोड़ा ।
 कर्पट (सं० पु०) कोर्येति चियन्ने, क विच; कर्पु चाठी

पदच ति । १ कोर्येवच्छ, पुराना कपड़ा, विचका,
 मुदक, कता । इसका संस्कृत पर्याय—कर्मक धोर
 मन्मक है । २ पर्येतविमिय, एक पहाड़ । यह माभि-
 मण्डलके पूर्व थीर मण्डलुटके दक्षिण पश्चिम्यत है ।
 यहाँ धमन रहती है । (कर्त्तव्यगुण ५१ ५०) १ मलिन
 वस्त्र, मेला कपडा । ३ कर्मकण्ड, कपड़ेका टुकड़ा ।
 ४ कर्पाय रज्जवन्, मूरा कान कपड़ा ।
 कर्पटक, कर्म दो ।
 कर्पटकारो (सं० पु०) कर्पट धरति, कर्पट ह विनि ।
 मनिन कोर्येवच्छकण्डकारो भिण्डुश्च, कटापुराना कपड़ा
 पङ्कनेवाका कर्पटोर ।
 कर्पटिक (सं० त्रि०) कर्पटा इच्छन्, कर्पट-ठन् ।
 कर्पटकारी, कटापुराना कपड़ा पङ्कनेवाका ।
 कर्पटिना (सं० स्त्री०) कर्पटिन्-स्त्रिये । कर्पटकारिके,
 कटापुराना कपड़ा पङ्कनेवाको ।
 कर्पटो (सं० त्रि०) कर्पटो इच्छन्, कर्पट इनि ।
 कर्पटकारी, कटा पुराना कपड़ा पङ्कनेवाका ।
 कर्पव (सं० पु०) कर्प-कृत । कोडयस्त्रियेय सान ।
 "कर्मकवचरकर्मकावरीमहापरीमर्दि कर्पवकापुत्रुडाव ।"
 (कर्मकण्ड)
 कर्पर (सं० पु०) कर्प वाहुनकात् परन् सज्जामाव ।
 १ कपान, कोपड़ा । २ पक्षमेद एक इधियार ।
 ३ कटाच, कड़ाह । ४ उदुम्वरुय गूकरका पिड़ ।
 ५ कर्पुपके पृथका धारण्य, कर्पुकेकी जम्मी । ६ कर्पर,
 कपड़ा । ७ क्वासाततकपान गर्भे प्यर । ८ कर्पोस
 काल । ९ कर्मरा, कोनी ।
 कर्पराय (सं० पु०) कर्परय चंय ६ तत् । कर्प-
 कपानकण्ड मरीके कपड़ेका टुकड़ा ।
 कर्पराल (सं० पु०) कर्पर इह पक्षति पर्याशेति,
 कर्पर यत् पक्ष् । पचोटुय, पचरोटका पिड़ । यह
 पहाड़ो पीम् है ।
 कर्परायो (सं० पु०) कर्पर पचोति, कर्पर पम्-
 दिनि । कटुधर्मरेव ।
 "कर्मकाकी मंकाकी कर्परयो मका इन् ।" (उदुम्वर)
 कर्परिका (सं० स्त्री०) कर्परी पार्से कर्त्तु टाम् क्कः ।
 कर्म दो ।

कर्पूरिकातुल्य (सं० स्त्री०) कर्पूरिकैव तुल्यम् । १ तुल्य-
विशेष, एक तुल्यिया ।

कर्पूरी (सं० स्त्री०) कृष्ण बाहुलकात् भरट् लत्वाभावः
स्त्रीप् । काथीद्रव तुल्य, खपरिया, दारुहल्दीके काट्टेका
तुल्यिया । इसका संस्कृत पर्याय—दाविंका और
तुल्यपन्न है ।

कर्पास (सं० पुं०-स्त्री०) कृ-पास । कृष्ण पासः । उप् । ३३५ ।
कर्पास वृक्ष, कपासका पौदा । कर्पास देखो ।

कर्पासक, कर्पास देखो ।

कर्पासफल (सं० स्त्री०) कर्पासस्य फलम् इति ।
कर्पासवोज, विनोसा, कपासका वीज । यह स्तन्य-
वर्धक, हृष्य, स्निग्ध, गुरु और कफकारक है । (भावप्रकाश)

कर्पासी (सं० स्त्री०) कर्पासजातित्वात् गौरादित्वात्
या स्त्रीप् । कर्पास वृक्ष, कपासका पेड़ । इसका
संस्कृत पर्याय—कर्पासी, तुण्डिकेरी और समुद्रान्ता
है । भावमित्रने इसे लघु, ईषत् उष्णवीर्य, मधुररस
और वायुनाशक कहा है । कर्पासीका पत्र वायु-
नाशक, रक्त तथा मूत्रवर्धक और कर्णपीडका, कर्णमाद
और पूयन्त्राव शान्तिकारक है ।

कर्पूर (सं० पुं०-स्त्री०) कृष्ण-ऊर् । कर्मिपिचादिषु उरीवची ।
उप् । ३४० । सुगन्धित द्रव्यविशेष, एक रुशुवृदार चीज ।
इसे फारसीमें काफूर, हिन्दीमें कपूर, तामिलमें करुपू-
रम, सिंहलीमें कपूर और भंगरेवी भाषामें काम्फर
(Camphor) कहते हैं । इसका संस्कृत पर्याय—
घनसार, चन्द्रसंघ, सिताग्र, हिमवालुका, हिमकर,
शीतप्रभ, सिताभ, घनसारक, सितकर, शीत, शशाङ्क,
शीला, शीतांश, शाश्वत, शशांश, स्फटिकाभ, कारमि-
ष्टिका, ताराभ्र, चन्द्रार्क, चन्द्र, लोकतुषार, गौर,
कुसुद, इन्द्र, हिमाद्रय, चन्द्रमन्थ, वेधक और रेणु-
सारक है । कर्पूर त्रयोदश प्रकार होता है,—पोतास,
भौमसेन, सितकर, शहरवास, पांश, पिष्ट, अहसार,
हिमवालुका, सुतिका, तुषार, हिम, शीतल और
पत्रिकाख्य । भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, हृष्य,
चक्षुःहितकर, लेखन, लघु, सुगन्धि, मधुर, तिक्त
रस, और कफ, पित्त, विषदोष, दाह, ज्वर, सुख-
विरसता, मेदः तथा दुर्गन्धनाशक है । चीना कपूर

कफनाशक, तिक्तारस और कुष्ठ, कण्ठ, तथा त्रि-
निवारक होता है ।

यह उद्भिदजात, दृढीभूत, गन्धयुक्त और चञ्चल
उदायुगुणविशिष्ट (उड जानेवाला) एक श्वेत पदार्थ
है । रसायनशास्त्रज्ञ इसे उद्भिदके उदायुगुणयुक्त
तेलकी द्वितीय भवस्था बताते हैं । नानाप्रकार उद्भिद-
से ही कर्पूर मिलता है ।

कर्पूरका इतिहास—इस बात पर बड़ा गडबड़ पडा—
किस समयसे कर्पूर मानव जातिके व्यवहारमें लगा
और गुणागुण निर्णय हो सका । युरोपीय पण्डितोंके
निर्णयानुसार ई० पष्ठ शताब्दसे प्राचीन ग्रन्थोंमें
इसका उल्लेख मिलता है । इटलीके किन्दा राज-
वंशीय अमरु कौस नामक किसी राजपुत्रने षष्ठ
शताब्द अरबीमें एक कविता लिखी थी । उसमें
कर्पूरका उल्लेख आया है ।

किन्तु हमारी समझमें उससे बहुत पूर्व भारत-
वासियोंको इसका सन्धान लगा था । सुन्तत, चरक,
वाभट, हारीत प्रभृति प्राचीन आयुर्वेदपचारक कर्पूरका
नाम और गुणागुण पर्यन्त लिख गये हैं ।

इशाक-इबन्-अमन नामक किसी अरबी चिकित्-
सक और इबन् खुर्ददुवा नामक एक अरबी भौगो-
लिकने ई० पष्ठ शताब्दको लिखा था—'मलय
प्रायद्वीपसे कर्पूर बाहर भेजा जाता है ।' फिर ई०
त्रयोदश शताब्दको प्रसिद्ध अरमणकारी मार्कपोलीने
लिखा,—'फनसूर नामक स्थानमें सर्वोत्कृष्ट कर्पूर
उत्पन्न होता है ।' फनसूर स्थान सुमात्रा द्वीपके मध्य
है । आजकल, वहाँका कर्पूर 'बरस' कहाता है ।
पहले युरोपमें इसे कोई जानता न था । चीनसे यह
युरोपमें पहुँचा । इसी प्रकार १५६३ ई०से युरोपी-
योंको इसका सन्धान मिला ।

प्राचीन काल भारतवर्षके लोग कर्पूरको पक्क और
अपक्क दो भागमें बाँटते थे ।

डाक्टर उदयचन्द्रके कथनानुसार पक्क कर्पूर
(Cinnamomum Camphora) किसी चीनदेशीय
वृक्षके काष्ठसे निकलता और रौद्रके तापमें पकता है ।
अपक्क कर्पूरकी उत्पत्ति बीरनिवी द्वीपके एक वृक्ष-

कम्य (Dryobalanops aromatica)से है। यही खपूर सर्वोत्कृष्ट होता है। हिन्दुओं इसे 'मोमसमी खपूर' कहते हैं। दक्षिणपूर्वमें चार प्रकारका खपूर चलता है—बेसरी, सूरती, चीना और बटाई।

दुरोपीय डाक्टरोंमें ज्ञान और शुद्धमेदये इसे चार-चौकी बिलकूल दिया है—प्रथम फारसीका या चीन जापानका खपूर है। फारसीका हीय और चीनके मध्य राज्यमें 'साम्पर करेस (Cinnamodum Camphora)' नामक एक वृक्ष होता है। भारतमें एदिर वृक्षसे जैसे खेर निकलता, वैसे ही वृक्ष वृक्ष काठके वृक्षसे निर्गमये एक वृक्ष जापके उद्यय खपूर उत्तरता है। फिर उसका सार ही दिया जाता है। उक्त वृक्षका खपूरमात्र चीनमें खपूर कहाता है। यद्यपि बिजावत और भारतमें यह खपूर बहुत बिक्रता है। किन्तु अब इसको फामदनी कम पड़ गयी।

जापानमें उक्त वृक्ष अधिक उत्पन्न होता है। मद्रुद्रका शीतल बाहु उससे किये प्रति उपकारी है। सत्त्वमा और बहो जिलेमें खपूरका काम चलता है।

हितीयको मोमसेनी खपूर कहते हैं। इसका प्रकृत नाम 'बरस' है। सुमात्रा द्वीपके बरस नामक स्थानमें मास उद्यय एक वृक्ष (Dryobalanops aromatica) होता है। इससे कापड़में कापके समान एक प्रकार पदार्थ कम जाता है। एदिरमें खेर और चन्दनमें पगुवकी तरह कापके चम्बलार तथा वृक्षके वृक्षमें मोमसमी खपूर देव पड़ता है। उक्त वृक्ष जितना बढ़ा जगता खपूर भी उतना ही अधिक निकलता है। किन्तु लोग उसे बहुत बरनी नहीं देते। खपूरके मोमसे शतमान वृक्ष काट जाते जाते हैं। ७।८ वर्षका वृक्ष न हीनेसे खपूर कम निकलता है।

बोबन्दा-पश्चिम सुमात्रा द्वीपके उत्तर-पश्चिम उपकूल पयार बाबीके बरस और लिडेल नामक नगर पयस सुमुदाय स्थान औरनिबो द्वीपके उत्तरार्ग और सेनुयामद्वीपमें खपूरका वृक्ष होता है।

जनीयका नाम जनीका खपूर है। चंमरेज इसे ब्लूमिका साम्पर (Blumen Camphor) कहते हैं। चीन देशके कापड़न नगरमें यह खपूर बनता है। इसका

वृक्ष बहुत बढ़ा होता है। इस वृक्षका वृक्ष बिमा-कयके पूर्वांचल, कविया गिरि चडवाय, पेरू, ब्रह्म और चीनके दक्षिणार्गमें उपजता है। किन्तु ब्रह्मदेशमें ही इसको अधिक उत्पत्ति है। ब्रह्मदेशीय खपूरवृक्षके विषयमें किसीका वक्तव्य है—यदि सन उद्योधि खपूर निकलनी पाये तो एदिरके चर्मायका कार्य बन जाये।

डाक्टर डारमबको बम्बई पञ्चसमें उक्त जातीय एक प्रकार खपूरतोलाएक वृक्ष मिला था। बम्बईवासी कच्छु (सुन्नको) मिठानीको उसे व्यवहार करते हैं।

चतुर्थको सुमन्त्रि द्रव्यमें पड़नेवाका खपूर कहते हैं। यह नामा जातीय वृक्षसे उत्पन्न होता है। इसे तम्बाकूका पत्ता, किका पार्थिक परिमाचमें बिमस (Thymus) तेकका सार टपका निकालते या पाणुसी वृक्षसे बनाते हैं। शिपोक वृक्षसे निकलनेवाका खपूर फनेक स्थानमें 'पाणुसी खपूर' कहाता है। नारङ्गोके को खपूर बनता उसका चंमरेजोमें निरोको साम्पर (Neroli Camphor) नाम पड़ता है। बङ्गालमें मो एक वृक्ष (Ximnophila gratuloides)से खपूर निकलता है। भारतवर्षमें साठों स्थानका खपूर पाता जाता है।

देशीय वैद्य इसे कामोद्वीपक और सुसकमान काम-यन्त्रिजापकारक बताते हैं। हिन्दू और सुसकमान दोनोके मतासुसार पच्छुको प्रदाह पयसाममें पयक पर खपूर मगानिये विविध फल मिलता है।

आसरीग पश्चिम बङ्गालपर खपूर और हिन्दु चार चार घेन मोनी बनाकर १।३ चप्ये पीके विधानिये बढ़ा उपहार होता है। इसीके साथ जातीयार तारपोनका तेल मसना बाँधिये। पुरातन पातरोगमें ३ घेन खपूर १ घेन चकोमके साथ जोते समय विधानिये पयोना निकलता और व्यायाका आधन जयता है। खपूर और हिन्दु एकत्र विधानिये वृक्षीय दूर होता है।

बाबककास कड़कोंको बाँधी धानेपर एक लतेमें खपूर लमा और तथा रात्रिकास बचपर रखनेसे बढ़ा काम पड़ जाता है।

अप्रदीय और यरुचय प्रकृति रोगमें रात्रिकास सीधे समय ३ घेन खपूरके साथ पाह घेन चकोम

देनेसे रोगका प्रतिकार पड़ता है। मेहादि रोगमें लिङ्गोद्घास घटते उक्त औषधके साथ अफीम अधिक देनेऔर लिङ्गपर कपूरका लिनिसेण्ट लगा लेनेसे आश फल मिलता है।

स्त्रियोंके जरायुमें इसी प्रकार नाना रोगके कारण प्रदाह चठने पर अवस्थानुसार ५।६ ग्रैनकी मात्रामें कपूरकी एक एक गोली बना दिनको २।३ बार खिलानेसे विशेष उपकार होता है। किन्तु ऐसे स्थलमें रोगिणीका अन्न खाओ रखना पड़ेगा।

प्रसवकाल पीड़ा चठते कपूर और कालोमेल पांच-पांच ग्रैन मधु डाल दो गोली बनाते और एक खिलाने हैं। इससे बड़ा लाभ पड़ता है। कोई एक घण्टे पीछे चुन्नाव भी देना पड़ता है।

यौनस रोगमें कपूरका वाष्प बड़ा उपकार करता है। फिर स्यायुशूलमें ३।४ ग्रैन कपूर आध ग्रैन वेलोडोनाके साथ लगानेसे अधिक लाभ होता है।

हृत्में कभी कपूर उपकारी और कभी अनुपकारी है। गर्भवतीको अधिक मात्रामें कपूर खिलानेसे गर्भस्त्राव होता है।

वस्त्रादिमें कपूर डाल रखनेसे कौड़ा नहीं लगता। भारतवर्षमें यह पूज्य द्रव्य समझा जाता है। प्रत्येक देवदेवीकी आरती इससे हुवा करती है। फिर सुगन्धके लिये पञ्चान्त और पक्वान्त्रमें भी यह पड़ता है। कपूर—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान् ग्रन्थकार। यह गजमल्लके पिता और मेघदूत-टीकाकार कल्याणमल्लके पितामह थे।

कपूरक (सं० पु०) कपूर इव कायति प्रकाशते, कपूर-कै-क। १ कर्पूरक, कच्चो हल्दी। २ कर्चूरक, कचूर। कपूर कवि—संस्कृतके एक प्राचीन कवि। भोजप्रबन्धमें इनका उल्लेख है।

कपूरखण्ड (सं० पु०) कपूरस्य खण्डः, ६-तत्। कपूरका खण्ड, कपूरका डंठा।

कपूरगौर (सं० द्वि०) कपूरवत् गौरः शुभ्रः। कपूरकी भांति शुभ्रवर्ण, कपूरकी तरह गौर।

कपूरगौरी (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसमें ज्योतिः, खम्बावती, अयतत्री, टङ्क और बराटोके स्वर लगते हैं।

कपूरतिलक (सं० पु०) कपूर इव शुक्लं तिलकं जलाटचिह्नं यस्य, बहुव्री०। हस्तिविशेष, एक हाथी। कपूरतुलसी (सं० स्त्री०) कपूरगन्धिका तुलसी, कपूरकी तरह महकनेवाली तुलसी।

कपूरतैल (सं० स्त्री०) कपूरस्य तैलमिव स्नेहः। कपूरस्नेह, कपूरका तैल। इसका संस्कृत पर्याय—द्विसतैल और सुघांशुतैल है। यह कटु, उष्ण, दन्त-दार्यकर और वात, कफ, पित्त तथा आमहर होता है। (राजनिघण्टु)

कपूरनालिका (सं० स्त्री०) पक्वान्त्रविशेष, एक मिठायी। मोवन मिली मैदाकी एक लम्बी नली बना लवङ्ग, मरिच, कपूर और शर्करा भरते हैं। फिर सुख वन्द कर घृतमें भूनेसे कपूरनालिका बनती है। यह शरीरवर्धक, बलकारक, सुमिष्ट, गुरु, पित्त तथा वायुनाशक, रुचिजनक और दीप्तानि मानवके लिये अत्यन्त लाभदायक है। (माधवदाय) हिन्दीमें इसे कपूरकी गोभिया कह सकते हैं।

कपूरमणि (सं० पु०) कपूरवर्णी मणिः। पाषाण-भेद, कपूरकी तरह एक सफेद पत्थर। यह तिक्त, कटु, उष्ण और ब्रण तथा त्वक् एवं वातदोषनाशक होता है। (राजनिघण्टु)

कपूररस (सं० पु०) १ अतिसाराधिकारका रसविशेष, दस्तकी एक दवा। यह हिङ्गुल, अहिफेन, मुस्तक, इन्द्रयव, जालीफल और कपूर यत्रसे घोटनेपर बनता है। दो गुञ्जापरिमित वाटिका जलसे बाधो जाती है। (भैषज्यरत्नावली)

२ रसकपूर, रसकपूर। इसमें प्रथम सामान्य रूपसे पारद सोधा जाता है। गूढ पारदके परिमित गैरिक, पुष्टिका, स्फटिका, सैन्धव, बल्मीक, चारुलवण और भाण्डरश्मक सृत्तिका एक प्रहर घोटते हैं। फिर रक्त चूर्णके साथ शुद्ध पारद एक हांडीमें रख ऊपर दूसरी हांडी लगा मट्टीसे ढार बन्द करना पड़ता है। क्रमशः तीन वार मट्टीका लेप सुखनेपर हांडी अग्निमें फंकी जाती है। चार दिन बराबर आंच देने पीछे पांचवें दिन हांडी अद्धार पर रहती है। अन्तको अति सावधानतासे ऊपरकी हांडी खोलते हैं। उसमें कपूरकी भांति जो पारद लग जाता, वही

कपूर् ररस वा ररकपूर् कथाता है। कुटुम, चन्दन, ककरो तथा कुटुमकुटु ररकपूर् रीनन करमेवे विरह रोप इत्यादी और अन्ध एक बसनेमें कृता है। (मन) कपूर् ररस (सं० स्त्री०) सरोवर विधिय, एक ताबाव। कपूर् ररविहः (सं० स्त्री०) कनामक्यात प्रथ, कपूर् ररसदो। यह झील, वातक, महर, तिल और पित्त तथा सर्वकपुत्र होती है।

कपूर् रा (सं० स्त्री०) हाप रर टाप। तरटो, पामा कसदी। कपूर् रादितैल (सं० स्त्री०) तैलविधिय, एक तैल। कपूर्, मन्नातक, महर, यवधार तथा मन्नामिका चार चार तोषे तैलमें मन्नी मति पका २० तोषे हरिताक मिष्ठानसे यह बनता है। इससे प्रयोगसे सबल योगिनीन भारोप्य होती है।

कपूर् राध्या (सं० पु०) उपरसविधिय, एक औमती पत्तर। २ कटिक, जिज्ञोरो पत्तर।

कपूर् रिष (सं० स्त्री०) कपूर् री अ्यापि, कपूर् र काया-दिस्नात् इत्। कपूर् ररदीर्घदि। क कप्य। कपूर् र-कुत्र, काय रो, कपुरो।

कर्मर (सं० पु०) कर्मरि विपरी, क-विष् पक्षति यह पक्षप र, कर्मरमाय पक्ष प्रतिविधो यम, कृत्रो। रपंथ, पायोना।

कर्म (सं० पु०) मृगिष्ठ कृत्।

कर्मर (सं० पु० स्त्री०) १ पुष्पकृष्ट, पीडा। २ कर्ष, सोना। ३ हृत्पूररथ कर्षका पीडा। ४ व्याधु, वाध।

कर्मरी (सं० स्त्री०) १ नृणाभी माया गीदृङ्। २ व्याधी, वाधन।

कर्तुं (सं० स्त्री०) मियितकथं, कवर, कर्षदार।

कर्मदार (सं० पु०) कर्तुरि कर्मं सन् वा दोषार्थं मरुत वा दारयति, कर्तुं इ विष् पक्ष। १ कर्मिदारहथ, कर्षोद्वेका पीड। २ जेतकाचन, सखि इकचनार। यह पादो और ररुपित्तमें इतकर है। (पञ्चमथ) ३ कौशिकिणी, तैल। इसीसे भ्रान्तक निवसता है।

कर्मदारक (सं० पु०) कर्तुं दारक्यं वायति, कर्तुं दार-के-क यथा कर्मरिष दोषार्थं दारयति, कर्तुं इ विष् कम्। कर्मदानक इव कालतेका पीड।

कर्तुर (सं० पु० स्त्री०) कर्षति कर्षति पद्यात् पनेन

वा, कर्षे इये ररत्। नर पत्तन। कर्ष। १ कर्म विधि। २ हृत्पूररथ, कर्षका पीडा। ३ कर्मगटो, कर्षर। ४ भामहरिद्रा, कर्षो कसदो। ५ जक, पायो। ६ राचस। ७ पाय, मुनाह। ८ नदीजात मिष्याव भाव, कर्षन कान। ९ कर्ष, सोना। १० हरिताक, हरताक। (सि०) १० नागाकर्ष, कर्षरा।

कर्तुरक (सं० पु०) १ भामहरिद्रा कर्षो कसदो। २ कर्मगटो, कर्षर। ३ मिष्यावभावा, कर्षन कान। कर्तुरकस (सं० पु०) कर्तुर विज्ञवर्ष पक्षं यत्, कर्षो। साकुचकथय, एक पीड।

कर्तुरा (सं० स्त्री०) कर्तुर टाप। १ कर्षतुलसो। २ कर्षो। ३ सविध कर्षाकृता मीद, एक कर्षरीमी कौक। ४ पाटलाकथ, पाङ्गीका पीड।

कर्तुरित (सं० स्त्री०) कर्तुरो एव कान, कर्तुर-रतत्। चिजित, वितकवर।

कर्तुरी (सं० स्त्री०) कर्तुर गौरादिस्नात् क्रीत्। दुर्गा।

कर्तुर (सं० पु०-स्त्री०) कर्षति कर्षे भाञ्जति पद्यात्, कर्ष-रर। १ कर्ष, सोना। २ हरिताक। ३ गटो, कर्षर। ४ राचस। ५ द्राविडक, कर्षो कसदो। ६ नागा-कर्ष, वितकवर रंग।

कर्तुरक (सं० पु०) कर्तुर कर्षे कम्। १ हरिद्राम पुत्र। २ कर्ष हरिद्रा, कर्षो कसदो। ३ कर्तुरहरिद्रा, भामाकसदो।

कर्तुरित (सं० स्त्री०) कर्तुरो एव कथान, कर्तुर-रतत्। नागाकर्षविधि, वितकवर।

कर्म (सं० पु० स्त्री०) कर्मरि मन्दिन् पक्षं वादि। कर्म काय। कौ किया जाता यह कर्म कथाता है। वेदाकरक पण्डित कथति है,—

“कर्मिस्तान्कर्मं सति यद्विद्यमानकथयति” कर्मन्।

कौ कियाका वाच्य न होति कौ कियाकथ फल विधि इत्या, कौ कियाका कर्म ठहरण है। कौ— यह भोजन बनाता है। यथा कर्तुंसमयैत पाककियाका पनायय भोजन पाककथ विहिति क्य पक्षविधि होता है। इससे कर्म भोजन कर्म कथकथा नथ कगता है। यह कर्म तीन प्रकारका है—निर्बन्ध विचार्य और प्राय। कौ पक्षिमान कर्ष कथति

द्वारा प्रकाश पाता, वह निर्वर्त्य कहाता है। जैसे—वह चटाई बनाता है। यद्वा चटाई पहले न रही, पीछे उत्पत्ति द्वारा आत्मसामकर प्रकाशित हुई। सुतरा चटाईकी निर्वर्त्य कर्म कहते हैं। जो वस्तु पहले सत् रहते पीछे अवस्थान्तर पाता, वह विकार्य कहाता है। जैसे—वह चावल सिभाता है। यहां चावल पहले सत् रहा, पीछे केवलमात्र अवस्थान्तरकी प्राप्त हुआ। इसलिये चावल विकार्य कर्म समझा गया। फिर विकार्य कर्म द्विविध है—प्रकृति-नाश-सम्भूत और गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तरविशिष्ट। जैसे—वह काष्ठको भस्म करता है। यहां काष्ठ जलने पर भस्म बननेसे प्रकृतिनाशसम्भूत कर्मका उदाहरण ठहरा। 'सुवर्णको कुण्डल बनाता है' स्वल्पसे सुवर्णसे गुणान्तरविशिष्ट कुण्डलकी उत्पत्ति हुई और गुणान्तरोत्पत्तिसे सुवर्णकी ही कुण्डल संज्ञा पडी। इसीसे यह गुणान्तरोत्पत्ति द्वारा नामान्तर-विशिष्ट कर्मका उदाहरण है। फिर निर्वर्त्य और विकार्य भिन्न कर्म प्राप्य है। जैसे—वह सूर्यको देखता है।

मीमांसक दो प्रकारका कर्म बताते हैं—अर्थकर्म और गुणकर्म। जिस कर्मसे किसी प्रकारका अष्ट उठता, उसे विद्वान् अर्थकर्म कहता है। जैसे अग्निहोत्र याग। यह यज्ञ करनेसे याज्ञिकके आत्मामें स्वर्गजनक अष्ट जगता और उसी अष्टसे पीछे यज्ञकर्ताको स्वर्ग मिलता है। फिर जिस कर्मसे वस्तु संस्कृत बनता, उसका नाम गुणकर्म पड़ता है। जैसे वह ब्रीहि प्रोक्षण करता है। यद्वा प्रोक्षणसे ब्रीहि संस्कृत होता है। इसीसे प्रोक्षण गुणकर्म है।

अर्थकर्म नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेदसे तीन प्रकार है। जिसको न करनेसे पाप पड़ता, वह नित्य कर्म ठहरता है। अग्निहोत्रादि यज्ञ न करनेसे ब्राह्मणको पाप लगता है। इसीसे अग्निहोत्र प्रभृति ब्राह्मणका नित्यकर्म है। किसी निमित्तके उपलब्ध किया जानेवाला कर्म नैमित्तिक कहाता है। गोवधादि पापक्षयार्थ प्रायश्चित्त गोवधादि निमित्तके उपलब्ध किया जाता है। इसीसे यह नैमित्तिक कर्मके मध्य परिगणित है। नित्य तथा नैमित्तिक कर्म न करनेसे

पाप लगने और करनेसे कोई फल न मिलनेका मत कोई कोई पण्डित मानते हैं। किन्तु वास्तविक उक्त विषय असूलक है। कारण नित्य और नैमित्तिक कर्मसे पापक्षय होनेका मत स्मृतिमें कहा है,—

“मित्यनैमित्तिकैरेव कृवांशो दुरितक्षयम्।” (मीमांसा परिभाषा)

फलकी कामनासे किया जानेवाला कर्म काम्य कहाता है। जैसे—कारौरि याग। यह वृष्टि कामना-शील पुरुष द्वारा अनुष्ठित होता है। इसीसे इसको काम्य कहते हैं। काम्य कर्म तीन प्रकारका होता है—ऐहिक फलक, आसुप्तिक फलक और ऐहिकानुप्तिक-फलक। जिस कर्मसे इहलोकमें फल मिलता, उसका नाम ऐहिक पड़ता है। इहलोकमें वृष्टिरूप फल देने कारण कारौरियाग ऐहिकफलक है। परलोकमें फलोत्पादक कर्म आसुप्तिकफलक होता है। अग्निहोत्रादि याग इहकाल किसीकी स्वर्गप्रदान नहीं करता। उसका फल परकालको ही मिलता है। सुतरा अग्निहोत्रयाग आसुप्तिकफलक है। इहकाल और परकाल फलप्रद कर्म ऐहिकानुप्तिक-फलक होता है।

वीधायनाचार्य ज्ञानसहकारसे इस कर्मको मुक्तिका कारण बनाते हैं। किन्तु अद्वैतवादी शङ्कराचार्यका दूसरा मत है। उनके कथनानुसार ब्रह्म भिन्न सकल विषय मिथ्या है। जब चित्तक्षेत्रमें एकमात्र ब्रह्म सत्य होनेका ज्ञान उठता, तब ज्ञानी पुरुष कर्म तथा तत्साधनको मिथ्या समझता और परब्रह्मसे पृथक् अपना अस्तित्व मी स्वीकार नहीं करता। सुतरा कर्मकर्ता और साधनके मिथ्यात्व प्रयुक्त ज्ञानके समय कर्म रहनेको सम्भावना कैसी। इसीसे ज्ञान-सहकारसे कर्म मुक्तिका कारण हो नहीं सकता। केवल मात्र ज्ञान ही मुक्तिका कारण है। फलाकाङ्क्षा परित्यागपूर्वक कर्म करनेसे चित्त परिशुद्ध होकर अद्वितीय ब्रह्मके तत्त्वज्ञानकी चमत्ता प्राप्ती है। फिर विशुद्ध चित्तमें कूटस्थ ब्रह्मका प्रतिबिम्ब पडनेसे मुक्ति मिल जाती है।

जैन-मतसे कर्म दो प्रकारका होता है—घाति और अघाति। मुक्तिके लिये विघ्नकर कर्म घाति कहाता

है। फिर ज्ञाति कर्म चार प्रकारका है—प्राणावर
वीह, इन्द्रावरणोप, मोहनोप और आत्म्यं। तत्त्वज्ञान
द्वारा सुक्ति न मित्रमिका ज्ञान प्राणावरणोप कर्म है।
पार्ष्णत इयं पदुमिसे सुक्ति न होमिका ज्ञान इन्द्रावर
णोप कर्म कहता है। शास्त्रमि सुक्ति परस्पर विद्व
पनेक पक्ष प्रदर्शित हुये हैं। किन्तु उनमें सुक्तिसे
प्रवृत्त कारणका उपपत्कारण मोहनोप कर्म है। मोहसे
पक्षमि प्रवृत्तिका विद्व कालनिपाका कर्म आत्म्यं कहता
है। फिर पञ्चाति कर्म भी चार प्रकारका है—विद्वोप,
नामिक, गोमिक और पाण्डु। ईश्वरतत्त्वको उपपत्ता
ज्ञानक माननीकाका अस्मिमान विद्वोप कर्म है। पशु
नामविशिष्ट होमिका अस्मिमान नामिक कर्म कहता
है। पशुक बंधमि कर्म प्रवृत्त करनेका अस्मिमान
गोमिक कर्म है। फिर शरीररक्षासे लिये बिद्या
जानेकाका कर्म पाण्डुक माना गया है। उक्त चारो
प्रकारका कर्म सुक्तिसे लिये विद्वकरी न रक्षनेसे पञ्चाति
कहता है।

वैद्यायिक शिष्याको कर्म बताते और उषसे पाँच
विभाग लगते हैं। यथा—उत्प्रेषण, चक्षुषेण,
पाण्डुचन, प्रसारण और ममन। जिस शिष्या द्वारा
कोई बीह उठायी जाती, वह उत्प्रेषण कहता
है। पशोदियको किसी वस्तुका उद्योग करानेकाको
क्रिया चक्षुषेण है। जिस शिष्या द्वारा प्रवृत्तित वस्तु
सुक्ति पड़तो, उसे विद्वकरीको पाण्डुचन कहते हैं।
सुक्ति वस्तुको प्रवृत्तित करनेकाको क्रिया प्रसारण
है। ममनक्रिया द्वारा एक ज्ञानसे अन्य ज्ञान पड़ती
है। फिर ममन पाँच प्रकारका होता है—अमन,
रचन, अन्धन, उष्यं चन और तिर्गुममन। यथा—
“उत्प्रेषणोपपत्तौ चक्षुषेणोपपत्तौ च ।
प्रसारणं चक्षुषेणोपपत्तौ चक्षुषेण च ।
अमनं रचनं उष्यं चनं चक्षुषेणोपपत्तौ च ।” (भाष्यारीचं ६)

पृथग्विद्वान् कर्म ज्ञान धर्मिका कर्मका प्राणावरणोपकार
करते, किन्तु वैद्यायिक कहते—‘कर्मसे ज्ञान उत्प
है। चारण ज्ञान न होमिसे सुक्तिसे मित्र पड़ती है।’
उक्त मतवैद्यमि सिद्धान्तको महायोगेश्वर श्रीहृष्यने

भगवद्गीतामि अतिप्रसङ्गार महोक्त्युक्त मत सिद्धाया
Vol. IV 39

धीर बुद्धयं कर्म तत्त्व प्रति मनोहर तथा विस्तारित
कर्मसे सुबोधमय बना बताया है।

गीताके छतोयाध्यायसे पताचलाक तक, तथा
तयोद्ययाध्यायमें कर्मसंज्ञस्योय पनेक विषय और
पञ्चायाध्यायमें कर्मसंज्ञात्तु बीयो न कोई महत्
प्रपञ्च विवृत है। किन्तु छतोय अध्यायसेक कर्मसंज्ञक
है। इसीसे उषयो कर्मसंज्ञोयाध्याय कहते हैं।
योह्यस्यसे मतसे शरीरिह व्यापारका नाम कर्म है।
कर्मका प्रभाव प्रकर्म कहता है। फिर कर्म याह
विधय और प्रकर्म याह्यनिविह होता है। सिवा उषसे
कर्मसे प्रकर्म और प्रकर्मसे कर्म मो बन पड़ता है।
कर्मका विभाव नामा प्रकार है। वैद्यिक विविह
सुधात्मिकाय लक्षि वा कर्मसे पुष्पप्रसक्तिको
कामनासे बिद्या जानिवाका कर्म काम्य कहता है।
वैद्यिक कामना न उष पर्यज्ञान परिखागपूर्वक उष-
व्यापक ईश्वरको एक मात्र सत्तासे ज्ञानसे पनव्यचित
उषको मन्त्रिमि उषसे प्रोत्पत्तौ जो कर्म करती, उसे
निष्काम कहते हैं। फिर वित्तस्यसे लिये निवर्तित
कर्म निष्काम है। शरीर, वाक्, मन प्रवृत्तिका
प्रवृत्तक पक्षविह कारण शरीर, अर्थात् (अर्थात् वित्त
एवं चक्षुषः), चक्षु, कर्ण, इन्द्रियादि, प्राणादिके
विविह वस्तुका व्यापार और वस्तुवर्षादिवा पाण्डुचन
कारो उष्यंवातु इत्यादि है। ईश्वरको जो सत्तामि
बुद्धयं मायाको सत्ता रहते है। सत्त्व, रजः और तमः
त्रिविध गुणमायसे निवृत्ता है। इन्द्रियादिमें ऐसा कोई
उष नही, जो त्रिगुणसे मुक्त हो। अतः सभी त्रिगुणसे
प्राकुर्मावसेदसे मित्र मित्र कर्म करती और कर्मसे
सात्त्विक, राजसिह तथा तामसिह त्रिविध विभाव
बनते हैं। विधिय कर्मसे विधिय विधिय फल और पाप
पुष्पादिका नियन्ता ईश्वर नहीं। प्राज्ञातिह प्रवृत्त-
नोय नियमसे वह हुवा करता है। प्रवृत्तमा पर्यात्
कृत्यामिमानशून्य, पालोयसे प्रति चोह तथा शत्रु
प्रति उष्यवर्तित और पञ्चायाध्याय-रहित हो जो
निवृत्त कर्म सिवा जाता, वह सात्त्विक कहता है।
पञ्चायाध्याय और चक्षुषारसे अतिप्रवृत्त प्राणावर्त
होनेकाका कर्म राजसिहक है। उपपत्तौ भविष्यत् यथायासे

विषयान्तरों विषयी विद्यावस्तुपथा प्रयोजन नहीं रहता। किन्तु काम की विधि चाहेनीचाहीको बचका प्रयोजन बना रहता है। फिर एतद पुत्रप कोठके कार्यका पदुमासी होता है। इससे विषय पुत्रप जनचित्तार्थ तत्पत्तु काम कर रहता है। विधिसे सर्वोच्च मोक्षान पर चढ़ने पर्याप्त ईश्वरके तत्त्वमें मन्त्रि निबिष्ट रहनेको कामपक्षस्यासो बन निष्काम भावन करना आवश्यक है। एनी प्रकार काममें प्रवृत्तिसे क्रिये निष्कर्षकोही कीर्तियों सक्षम काम मो करना चाहिये। किन्तु निष्कर्षकोही कोनोंको सतत प्राकार्य उपदेय देनेके लिये तत्त्वज्ञानको विद्याका प्रयोजन पड़ता है। कामके मुख्य उद्देश्य ईश्वरज्ञान और ईश्वरमन्त्रिको चित्तगुणिको मूक शिबक कामपरावप को कीर्तयताया निर्वाह करना हुआ है।

ईश्वरमें सर्व काम समर्पण करनी पर्याप्त यज्ञ, तपस्या, दान तथा अथान्या अतुल्यार्थसे कहीका करण, कहीको मन्त्रिमाका कोर्तन और कहीको विभूतिका दर्शन रखनेसे मोक्षप्राप्त होता है। ईश्वरका विषयपुत्र और कहीको सोम्यमूर्ति देखना चाहिये। फिर प्राणी कामनिष्ठ परब्रह्मको छोड़ कोर्तनाप पकड़ता है। किन्तु ऐसी परासिधि साधकको मिथ्या दुर्गम है। इसलिये शेषकामान ईश्वरपरावप को क्य सायाजि का मुक्ति कोर्तना पड़ती है। फिर इसमें सत कार्य न होते मो कोयो क्षति नहीं आते। यह काम जितना सजता, उतना ही कल्याणकर रहता है। वेप विषय अक्षिचित्कर सुख और विधि न मिलने मो सुख कोही होगा। कोकि इतदकार कामसमर्पण द्वारा ईश्वर मय बननेपर पबिन्न सुखको इयत्ता नहीं रहती। फिर परमिर्बन्धनीय पानम्द मिलने क्यता है। इह अथमं योमभवह को कति पर्याप्त परम विधि न पावे कियत् परिमाच कार्यके बल परब्रह्म उक्त कामके साधनसे पबिन्न सामर्थ्य पाता है। कोई परमक कल्याणर और कोई पूर्ववर्तित कामके बल मीत्र विज्ञ को जाता है। इह यथादि वास्तवीय कामसे ईश्वर परावपताफलरूप ज्ञान ही को है। ज्ञानपक्षका प्रधान फल विधिक माध प्राप्त होना है। इसमें सर्वमूर्तिके प्रति समदृष्टि

और सौहार्थ परिगणित है। सुतरां जो सर्वमूर्तिके जितमें रत रहता यज्ञमिन्न पर समान प्रीति तथा इया रहता और सौय दृष्टानिष्ठ मूल सर्वकाम ईश्वरको समर्पण करता, कहीको विद्यान् परम योगी कहता है।

इस जगत्में मत्ता दुरा काम कीर्त नहीं समझता। किन्तु सोग विधिक आर्षविधिके लिये पशुचित काम किया करती है। ऐसी परब्रह्मार्थि परावपक है—कोई मन्त्रापुरण यम कामका साम और अथम कामका दोष देखाता रहे। भारतवर्ष कामसिद्ध है। यहाँ का बिसो कथमें दुरा काम करना न चाहिये।

कामं कर (सं० वि०) कामं करोति मूत्रेण, कामं नृ-
क ट। कामं करोती। अ १०८११ । १ वीतन पर कार्य करनी-
वाका, मोहक, मज्जूर। इयथा संस्तत पर्याच—सतक,
अतिसुख, वेतनिक वेतनोपकोषी, मरकसुख और
कर्मकासुख है। २ कामंकारक, काम करनेवाका।

“विनामन्त्रं परब्रह्मवचनतुर्लभं कर्मम् । एते कर्मं चरा बंधनम्”
(निन्दकप)

(पु०) कामं चिंसा करोति क इजादो ट। १ यम ।
कामं करो (सं० श्री०) कामं नृ क ट, श्रीप् । १ दातो,
कीरी। २ सूचं सता मरुचको वैक । ३ विम्विका
कता एक वैक ।

कामं कर्ता (सं० पु०) कामं क कर्ता सम्पादका, १-तत् ।
१ कायकारक, काम करनेवाका। कामं क कर्ता ।
२ व्याकरबोध वाच्य विधि (Pasava vacca) इसमें
कर्तृत्वको विवचायि कामं को कता होता है।

“विनामन्त्रं क्य कामं कर्तव्यं तद्विचरि ।
इत्येव बंधनं चतुर् कर्मवर्णितं त्रिभिः” (कावचकवरीका)

कर्ताका कर्म परम निन्न सुखसे कत सम्पन्न होने पर कामकर्ता कहाता है। किन्तु ऐके क्यपर कियेमें कर्ताका प्रकृत चिद्ध 'मि' कर्मो नहीं क्यता।

कामकर्ता (सं० श्री०) कामका कर्तृत्व, मरुचको कारगुजारो। जैसे—रोटी बनती है। यहाँ राटो अथम पाप बन नहीं सजते। उसका बननेवाका कार्यो परब्रह्म रहता है। इसलिये रोटी काम ठहरने मा क्य क्यको प्राप्त होती है।

कामं वाच्य (सं० श्री०) कामका कर्तृत्वतायतिवाच्य

काण्डम्, मध्यपदलो० । १ कर्मका कर्तव्यता-प्रति-
पादक वेदाद्य । कर्मदेखी । २ धर्मसम्बन्धीय कर्म
यज्ञादि ।

कर्मकाण्डौ (सं० पु०) १ यज्ञादि कर्म विधिवत् करने-
वाला, जो कर्म का कर्तव्यताप्रतिपादक वेदाद्य पटा ही ।
कर्मकार (सं० त्रि०) कर्म करोति मृतिं विना इति
शेषः । १ वेतन व्यतिरेक कार्यकारक, वेगार, जो विला
उत्तरत काम करता हा । २ कार्यकारक, काम
बनानेवाला । (पु०) ३ हृप, बैल । ४ जातिविशेष,
लोहार । लोहार देखी । यह विश्वकर्माके औरस और
शूद्राके गर्भमें उत्पन्न हुआ है ।

“हरिपाणि उवाचेप चाकामकवलीकथ ।

महि वपुते विजगति कर्मकारं मकारपम् ॥” (उष्ट)

कर्मकारक (सं० त्रि०) कर्म-क-गुल् । १ कार्यकारक,
काम करनेवाला । (पु०) व्याकरणोक्त कारक विशेष ।
कर्म देखी ।

कर्मकारी (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्म-क पिनि ।
कर्मकारक, काम करनेवाला ।

“ता विदिया मृषरिते गृहे सन् कर्मकारिणि ।” (मनु २।१६१)

कर्मकामुं क (सं० पु०-क्ती०) सृष्ट चाप, वटियाकमान् ।
कर्मकीलक (सं० पु०) कर्मणा कोलक इव वस्त्र-
जालनादिना गृहस्थानां मानरक्षाकपाटकीलक-
स्वरूपः । रजक, धोवी ।

कर्मकुशल (सं० त्रि०) कर्मणि कुशलः, ७-तत् ।
कर्ममें निपुण्य, काममें छोशियार ।

कर्मकृत् (सं० त्रि०) कर्म करोति, कर्मन्-कृ-क्तिप् ।
कर्मकारक, काम करनेवाला ।

“कर्माणि विविधं प्रेयस्यमं यममेव च ।

अयमं दासकर्मोक्तं यमं कर्मकृता मृतम् ॥” (मितारवा)

कर्मकृतवान् (सं० पु०) धर्मसम्बन्धीय कृत्य कराने-
वाला ।

कर्मकृत्य (द्वे० क्ली०) व्यवसाय, उत्साह, फुरती ।

कर्मक्षम (सं० त्रि०) कर्मणि क्षमः समर्थः, ७-तत् ।

कर्म करनेको समर्थ, काम कर सकनेवाला ।

“पापकर्मक्षमं दीर्घं चातो धर्म इवायितः ।” (१४)

कर्मक्षेत्र (सं० क्ली०) कर्मणां क्रियानुष्ठानानां क्षेत्रम्,

क्षेत्रम् । १ कर्म करनेकी भूमि, काम बनानेकी
जगह । २ भारतवर्ष । इस स्थानपर कर्म करनेसे
फलानुसार अन्यान्य वर्णमें जन्म मिलता है ।

“अथापि भारतदेशे वर्णं कर्मक्षेत्रम् । अथाप्यत्र वर्णापि मर्त्यानां पुत्र-
शेषोपभोगव्याप्तानि भौममर्गनादानि व्यपदिशति ।” (भागवत १।१०।११)

कथित वर्षसमूहके मध्य भारतवर्ष ही कर्मक्षेत्र
है । अन्यान्य षष्ट वर्ष स्वर्गवासियोंके अवगिष्ट पुत्र-
भोगका स्थान होते हैं । इसीसे उनको भौमस्वर्ग
कहते हैं ।

कर्मग्रन्थि (सं० पु०) कर्मणां ग्रन्थिवन्धनमध्यात्, बहुव्री० ।
पञ्चानजन्य वासनारूप दोष । यही वासना सकल
प्रवृत्ति और बन्धनका हेतु है ।

कर्मघात (सं० पु०) कर्मका विनाश, काम छोड़
देठनेकी हासत ।

कर्मचण्डाल (सं० पु०) कर्मणा चण्डाल इव ।
१ असूयक, हिंस्रक, मारकाट करनेवाला । २ पिशुन,
खल, जुगलखोर । ३ छतन्न, एहसान-फरासीय ।
४ अत्यन्त क्रोधी, निहायत गुस्सावर ।

“असूयकः विषमप इतन्नी दीर्घरीषकः ।

अनार कर्मचण्डाला उन्मत्तयापि पचकः ॥” (अरिह)

५ राहु ।

“अतिष्ठ मयतां रोषो मयतां अमृतमन्नम् ।

कर्मचण्डाल्यो गीत्य नम पातस्य इव ॥” (एहपुत्रि विद्या-मन्त्र)

कर्मचन्द्र (सं० पु०) १ मानव देखके एक राजा ।
हिन्दीमें कर्मचन्द्र भाग्यको कहते हैं ।

कर्मचारी (सं० त्रि०) कर्मणि चरति, कर्म-चर्-चिनि ।
वेतन पर कार्य करनेवाला, जो तनखाह पर काम
करता ही ।

कर्मचित् (सं० त्रि०) कर्म-चि भूते क्तिप् । १ कृतकर्म,
किया हुआ काम । (द्वे०) २ कर्म द्वारा सञ्चित,
कामसे बना हुआ ।

“कर्ममयान् कर्मचितसे कर्म-चो वा धीयन्ते । कर्मचा धीयन्ते ।’

(गतपथभा० १।१।१६)

कर्मचित (व० त्रि०) कर्मणा चितः, कर्म-चि-क्त । कर्म-
निष्पाद्य, कर्म द्वारा सम्पादन किया जानेवाला ।

“तयर्थे च कर्मचितो लोकः धीयते एवमस्य प्रप्यचितः ।” (वेदपरि०) .

कर्मवेदा (सं० श्लो०) कर्मवि वेदा, ०-तत् ।
 ज्ञिवासे धनुष्टानका लघोः, कामको जोगिय ।

“कर्मवेदा कर्मवेदा एवास्या कर्मवेद इति ।
 इतिवेदा कर्मवेदा वेदान्तो ज्ञिवा कर्मवेदः” (मनु)

कर्मवेदना (सं० श्लो०) कर्मवि कर्मवेदोक्तं वेदना
 विधिः । १ कर्मविषयस्य प्रेरणाकारक विधिः । कर्म
 वेदोपे प्रवर्तते एवा, ए त्वात् । २ कर्मसिं प्रवृत्तिता हेतुः ।
 “कर्म वेदं वेदोक्तं विधिना कर्मवेदना ।” (श्रीधर)
 ३ कर्मविधिः ।

“वेदना वेदोक्तं विधिः कर्मवेदना इत्येव एव कर्मवेदं विदु-
 र्वाच्यं कर्मवेदनाकर्मवेदं कर्मविधिः प्रवर्तते ।” (श्रीधरभाष्ये)

कर्मवे (सं० पु०) कर्मवे कर्मवेदनाद्व्याख्याते,
 कर्म-कर्म-वे । १ कर्मवेदनाद्वे रोमादि । यद्द रोग
 याज्यानुसार निर्वर्तित औषधयोगसि मी नहीं दबता ।
 वेदवे कर्मवे चयसि ही एवको मान्ति होती है ।
 २ कर्मवेदपरिचयः । कायिक, बाणिक और मानसिक
 कर्मविधिवे फलसि योगिविधियसि कर्म सेना पकृता है ।
 ३ पापमुखादि । ४ ज्ञिवाकर्म संयोगविभागादि ।
 ५ वेगनामक संस्कारः । “कर्मवेदं इत्ये त्वात् कर्म वेद-
 वेदिवः” (भाष्ये) ६ कर्मवेदः । कर्मवेो जात विप-
 मोर्यवासनाभावमात् कर्मयो मन्त्रिनोवमानइतिभिर्जात
 इत्यर्थे । ७ कर्मवेदुग । (त्रि०) ८ ज्ञिवाकर्म, कामवे
 वना वृषा ।

“एवा इति वेदः कर्मवे वेदकर्मवे ।” (मनु १०१)

कर्मवेगुच (सं० पु०) कर्मवेो जायते यो गुचः,
 कर्मवेो । ज्ञिवाकर्म संयोग, विभाग और वेग गुच ।
 “इतिवेद विचारक वेदवेो तु कर्मवेदः ।” (भाष्ये)

कर्मवेदु (सं० पु०) १ कर्मवेदुसर्वयोग मगवधि एव
 ः उपति । २ कर्मवेदुसि कोर्द राजा । इत्यसि ०८ सि
 १३३ ई० तक राजत्व किया ।

कर्मवे (सं० त्रि०) कर्म जानाति, कर्मन्-प्रा क ।
 कर्मवेोचक विताजित और समय देव कर्म विधिय
 करमेका ज्ञान रखमेवासा ।

कर्मवे (सं० त्रि०) कर्मवि कर्मवे, कर्मन् पठत् । कर्मवे
 पठोत् । ३ ५५१३ । १ कर्मवेदुमन कामसि जोगियार ।
 “कर्मवेदुच कर्म वेदोत् । कर्मवेः कर्मवेदुगुचि ।” (वेद १११)

कर्मवे (सं० पद्य०) कर्मवे, ज्ञिवा द्वारा, कामवे लाय ।
 कर्मवेकाय (सं० पु०) व्याकरकोच वाच्यविधिय ।
 एव वाच्यसि कर्मवेकर्ता वन जाता है । फिर कर्म
 और गुच मी कर्मवेदका ही विधि होता है ।

कर्मवे (सं० श्लो०) कर्मवि पाठु कर्मन् यत् ।
 १ कर्मवेोच्य काम कर सकमेवासा । २ कर्म वेदियसि
 पावकक, कियो कामवे कियो कुरुते । ३ कर्म-
 कुयक, काम करमेसि जोगियार ।

कर्मवेदा (सं० श्लो०) कर्मवेदुच माव । कर्म
 कुयकता, तत्परता सुष्टेदी ।

कर्मवेदुसु (सं० त्रि०) कर्मवे वेतनं सुष्टुवे, कर्मवे-
 सुष्टु छिपु । वेतनोपकोवे, मोकर ।

कर्मवे (सं० श्लो०) कर्मवेा सम्यायते, कर्मन् यत्-
 टात् । १ वेतन, मनकाव । २ भूच, बीमत ।

कर्मवे (सं० पद्य०) कार्यानुसार, कामके सुवाफिक ।
 कर्मवेा (सं० पु०) कर्मवे त्यागः, ३ तत् । १ वेत
 निक कर्मवेा त्याग, मोहरीका इत्येका । २ संसारिक
 कर्मवेा त्याग, दुनवायो काम छोड़ बैठमेको ज्ञासत ।

कर्मवे (सं० श्लो०) कर्मवेो जिति, कर्मवे पदा
 करमेको ज्ञासत ।

कर्मवे (सं० त्रि०) कर्मवे इवः, ०-तत् । कर्मवे
 पटु, काम करमेसि जोगियार ।

कर्मवे (सं० त्रि०) कर्मवेा पुष्टः, ३ तत् । १ कर्म
 वेदियसि पतित, कियो कामवे किरा वृषा । २ पापी,
 गुनाइवार ।

कर्मवे (सं० पु०) कर्मवेा देव प्राप्तवेवमान । देव-
 विधिय । अष्टवसु, एकादश वसु, दादुग पादिक, इन्द्र
 और प्रजापति—तेतीस कर्मवे हैं । पश्चिमोक्तादि
 वेदिक कर्मवे फलसि इवे देवकोक मिखा है । इनसि
 इन्द्र प्रभु और इन्द्रकति पाचार्य हैं । वेववेोमिसि कर्म
 सेमेवासेको पावानदेव कहते हैं ।

कर्मवे (सं० श्लो०) वेवाकके राजा समरसिंहको
 पको । इनके पुत्रका नाम राहुव का । ५५१३ ई० ।
 कर्मवेता (सं० श्लो०) कर्मवे, यत्रादि कर्मवे वने
 वृये देव ।

कर्मवे (सं० पु०) कर्मवे दोष कर्मवेतुदोषो वा ।

१ दुष्ट कर्म, पापजनक हिंसादि, गुनाह, इजावका काम। २ कर्मजन्य पापादि, कामका इजाव। ३ कर्म विषयक दोष, गलती, भूल। ४ कर्मके मूल कारणस्वरूप मिथ्याज्ञानकी वासनाका दोष, बुरा चालचलन।

कर्मधारय (सं० पु०) व्याकरणोक्त समानाधिकरण पदघटित समास विशेष। समानाधिकरणपदपुरुषः कर्मधारयः। पा १।२।३२। इसमें विशेषण और विशेष्यका समान अधिकरण होता है। जैसे—रक्तसता। हिन्दीमें यह समास नहीं लगता, क्योंकि विशेषण और विशेष्य अलग रहता है। फिर संस्कृतकी भांति विशेषणमें विभक्ति भी सगयी नहीं जाती।

कर्मध्वंश (सं० पु०) कर्मणो ध्वंशः, १-तत्। कर्मघति, मज्जहवी कामके फायदेका नुकसान, नाउम्मेदी।

कर्मना (हिं०) कर्मना देखो।

कर्मनाम (सं० स्त्री०) क्रियासे बना हुआ नाम, इक्ष्मफायल।

कर्मनाशा (सं० स्त्री०) कर्म नाशयति, कर्मन् नश-णिच्-अण-टाप। एक प्रसिद्ध नदी। यह (अक्षा० २४° ३८' ३०" ३०" उ० तथा देशा० ८३° ४१' ३०" पू०) विहार प्रदेशस्थ शाहाबाद जिलेके कैमोर पर्वतसे निकली है। इसने उत्तरपश्चिम मुख पड़ुच दरिहार ग्रामके निकट शाहाबाद और मिर्जापुर जिले दोनों और रख विहार एवं युक्तप्रदेशको स्वतन्त्र कर दिया है। फिर चौसा ग्रामके निकट यह गङ्गा नदीसे जा मिली है। इसकी दो शाखा हैं—धर्मावती और दुर्गावती। पर्वत पर जहाँ कर्मनाशा बहती, वहाँ नदीगर्भकी भूमि प्रस्तरमय पड़ती है। किन्तु सृष्टिका मिलनेसे नदीगर्भ कर्दमयुक्त और गभीर रहता है। माघ फाल्गुन मास यह नदी सूख जाती है। किन्तु वर्षाकाल इसके वेगका कीर्षी ठिकाना नहीं। उस समय अल्प जलमें भी उतरना कठिन पड़ता है। द्रव्य सामग्रीसे भरी बड़ी नौका अनायास इस पर चला करती हैं। मिर्जापुर जिलेके छानपाथर नामक स्थानमें यह नदी १०० फीट नीचे गिरती है। अधिक ठण्डके समय उक्त जलप्रपात अतिदुन्दर देख पड़ता है। अनेक लोगोंके कथना-

नुसार इस नदीको छूनेसे महापाप लगता है। कारण रावणके प्रस्त्रावसे इसकी उत्पत्ति है। देवनाग देखो। किसी किसीके मतानुसार सूर्यवंशीय त्रिशङ्क राजाने ब्रह्महत्याका पाप किया था। वह अपना पाप छोड़ाने पृथिवीकी यावतीय पुण्यतोया नदीका जल लाये और उसमें नहा ब्रह्महत्याके पापसे छूट पाये। आजकल जो कर्मनाशा बहती, उसकी विदग्धखण्डतो त्रिशङ्क-राजाका गात्रघात अपवित्र जल कहती है। फिर कोई उस समयसे अपवित्र बताया, जिस समय युक्त-प्रदेशका निष्ठावान् प्राचीन ब्राह्मण इसकी पार कर कीकट अथवा वङ्गदेश आता न था। किन्तु नदीकूलके अधिवासी कर्मनाशाको अपवित्र नहीं समझते और जलसे सायंसन्ध्याकार्य किया करते हैं। भविष्य ब्रह्म-खण्डके लेखानुसार गङ्गा और कर्मनाशाके सङ्गममें नहानेसे अश्रेय पुण्य मिलता है—

“सागोरया समं तप कर्मनामा नदी विज्ञः।

सङ्गति पुपादां प्राप्ता लोकात्तारपईतवे ॥” (३८०)

उक्त ब्रह्मखण्डमें ही लिखा, कि कर्मनाशाके कूल पर ताडका राक्षसीका वन था।

कर्मनिवन्ध (सं० पु०) कर्मका आवश्यक फल, कामका चरुरी नतीजा।

कर्मनिर्हार (सं० पु०) असत्कर्म वा फलका दूरी कारण, बुरे काम या उसके नतीजेका हटाव।

कर्मनिष्ठ (सं० त्रि०) कर्मणि निष्ठा यस्य, बहुव्री०। यागादि कर्मासक्त, नित्य नैमित्तिक कर्म करनेवाला।

“आननिष्ठा विज्ञा केचित् तपोनिष्ठानपापरे।

तपसाध्यायनिष्ठाप हर्मनिष्ठासपा परे ॥” (मनु)

कर्मनिष्ठा (सं० स्त्री०) कर्मणि निष्ठा आसक्तिः, ७-तत्। कर्ममें आसक्ति, काममें लगे रहनेकी शक्त। कर्मन्द्—भिच्छुसूत्रकार एक ऋषि।

कर्मन्दी (सं० पु०) कर्मन्देन भिच्छुसूत्रकारकेन ऋषि-विशेषण प्रोक्तं भिच्छुसूत्रमधीते, कर्मन्द्-इति। कर्मन्द्-हत्यादिनिः। पा ४।१।११। भिच्छु, सत्यासो।

कर्मन्यास (सं० पु०) कर्मणां विहितकर्मणां विधिना न्यासः त्यागः। १ कर्मत्याग, सत्यास। २ कर्मफल-त्याग, कामके नतीजेको छोड़ देनेकी शक्त।

वर्षका नाम भारत है। यहां भारती सन्तति होती है। विस्तार नौ हजार योजन है। इसीको कर्मभूमि कहते हैं। यहां पुण्यकर्म करनेसे स्वर्ग भ्रमण मिलता है।

कर्मभोग (सं० पु०) कर्मणः कर्मजन्य सुखदुःखादेर्भोगः, ६-तत्। कर्मफलानुसार सुखदुःखादिका भोग, कामके नतीजेसे आराम तकलीफ, मिलनेकी हालत।

कर्ममन्त्री (सं० पु०) कर्म मन्त्रयति, कर्मन्-मन्त्र-णिच्-णिनि। कर्मके सम्बन्धमें मन्त्रणादाता, कामकी सन्नाह देनेवाला।

कर्ममय (सं० त्रि०) कर्मसे बना हुआ, कामसे निकलनेवाला।

कर्मसागं (सं० पु०) १ कर्मका नियम, कामका तरीक। २ भिक्षि प्रभृति तोडनेकी दस्यु द्वारा व्यवहार किया जानेवाला एक शब्द, दीवार वगैरहमें सेंघ लगनेकी एक इशारेका लफ्ज।

कर्ममीमांसा (सं० स्त्री०) कर्मणि मीमांसा। कर्म सम्बन्धमें निश्चयकारक शास्त्रविशेष। मीमांसा शब्द।

कर्ममूल (सं० स्त्री०) कर्मणो मूलमिव मूलमस्य यद्वा कर्मणि यच्चाटि क्रियाजन्य सत्कर्मार्थं मूलं यस्य। १ कुग। २ शरद्वण।

कर्मयुग (सं० स्त्री०) कृणाति हिनस्ति भन्त्योऽन्त्यं यद्वा, क्त-मनिन्; कर्म हिंसाप्रधानं युगम्, कर्मधारय। हिंसाप्रधान कलियुग।

कर्मयोग (सं० पु०) कर्मसु योगस्तस् कौशलम्, ७-तत्। १ धित्तशुद्धिजनक वैदिक कर्म।

“अथनेव क्रियायोगी ज्ञानयोग्य साधकः।

कर्मयोगं विना ज्ञान कदाचिद्रेव दृश्यते ॥” (मलमासतत्त्व)

कर्मयोगका ही क्रियायोग कहते हैं। विना इसके किसीको ज्ञान प्राप्त नहीं होता। कर्म देखो।

२ परिश्रम, मेहनत। ३ यच्चादिसे सम्बन्ध।

कर्मयोगी (सं० पु०) कर्म योगो ऽस्यास्ति, कर्म-योग-इनि। कर्मयोगमें रत, ईश्वरकी प्राप्तिके प्रभिल्लाप यच्च ध्यानादि वैदिक कर्म करनेवाला।

कर्मयोनि (सं० पु०) कर्मणो योनिः आदिकारणम्, ६-तत्। कर्मका मूलकारण, कामका असली सवव।

कर्मर (सं० पु०) कर्महिंसां राति, कर्मन्-रा-क। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरक (सं० पु०) कर्मर स्वार्थे कन्। कर्मरङ्ग, कमरख।

कर्मरङ्ग (सं० पु० स्त्री०) कर्मणि हिंसायै रन्त्यते रोगादिजनकत्वादिति भावः, कर्मन्-रञ्ज घञ्। स्वनामख्यात वृक्ष, कमरखका पेड। (Averrhoa carambola) इसका संस्कृत पर्याय—गिराल, वृहदन्त, रुजाकर, कर्मार, कर्मरक, पीतफल, कर्मर, सुहरक, सुहर, धराफल और कर्मारक है। मराठीमें इसे करमल, तामिलमें तमतंमुखरम्, तेलगुमें तमतंचेतु, मलयमें वृन्दिङ्गविद्ध मनिंस, ब्रह्मीमें जुगया और पोर्तुगोज भाषामें करम्बोल कहते हैं।

कर्मरङ्ग अम्ल, उष्ण, वायुनाशक, तीक्ष्ण, कटुपाकी और पक्वपित्तकारक होता है। इसका पक्वफल मधुर, पक्वतर और वल्ल, पुष्टि तथा रुचिकारक है। (राजनि०)

भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, मत्तवदकारक और कफ एवं वायुनाशक होता है।

कर्मरङ्ग दो प्रकारका होता है—मिष्ट और अम्ल। किन्तु पक्व अम्ल फल ही लोगोंको अच्छा लगता है। कारण खानेमें यह अधिक सुखरोषक है। वृक्ष १४से ३६ फीट तक बढता है। युरोपीयोंके मतानुसार यह प्रथम भारत-महासागरके मलका द्वीपमें उत्पन्न होता था। वहांसे कर्मरङ्ग सिंहल गया और सिंहलसे भारत आ पहुँचा। किन्तु हमारी विवेचनामें यह बात ठीक नहीं। बहुत प्राचीन कालसे कर्मरङ्ग भारतमें उपजता, जिसका प्रमाण रामायणमें मिलता है। आजकल भारतमें प्रायः सर्वत्र यह वृक्ष होता है।

कर्मराष्ट्र—दाक्षिणात्यका एक प्राचीन उपविभाग। (Ind. Ant. VII. 189.)

कर्मरौ (सं० स्त्री०) कर्म भैषज्योपयोगक्रिया राति ददाति, कर्म-र-क गौरादित्वात् ङीप्। वंशलोचना।

कर्मरेख (सं० पु०) कर्मकी रेखा, मत्येका लिखा, ह्योनहार।

कर्मर्घ (सं० पु०) अथर्ववेदो एक प्राचीन ऋषि।

कर्मवचन (स० जो०) कर्मवाक्य, बोद्धमतानुपायी
द्विधाभाष्य ।

कर्मवच (स० पु०) कर्म श्रोतापयुक्तानं वचमिव
यत्न, वहुशो० । गृह्य । गृह्यका श्रोतादि पयुक्तान
वचनौ मति बहोरु जगता है ।

कर्मवच् (स० सि०) कर्मं प्राप्स्यसि कर्म-मत्पु
मप्य व । कर्मविशिष्ट, कामकात्री ।

कर्मवच (सं० लि०) कर्मचो वचः, ३ तत् । १ कर्मके
पथोन, कामका मारा । (पु०) पूर्वकर्मके कर्मका
पनय्यन्नाथो फच, कामका कृप्री मतीका । यत्र गन्ध
द्विन्दोमिं क्रियाविधीयचौ मति भो पाता है । किन्तु
उच पचकामिं करचकारकका चिह्न विं द्विधा रहता है ।

कर्मवचिता (सं० श्री०) कर्मवचिनो माव कर्म
वचिन् तत्क टाप । कर्मचोनका भाव, काममिं दधि
रचनेको ज्ञातत । यत्र बोधिलका एव रूप है ।

कर्मवचो (सं० पु०) कर्मचो वचः वच्यता पञ्जाष्टि,
कर्म वच-वनि । कर्मचोन कामका मारा ।

कर्मवच्यता (सं० श्री०) कर्मचो वच्यता पथोनता
३-तत् । कर्मचो पथोनता कामका दवाव ।
कर्मवाचक्रिया, कर्मवचनक्रिया इती ।

कर्मवाटी (सं० श्री०) कर्मवां याकोञ्च तिवि
निमित्तीभूतक्रियावां चन्द्रकलाक्रियावां वा वाटीव ।
तिवि, चान्द्र मालका तीसवां विभाग ।

कर्मवाद (सं० पु०) मीमांसामात्र । इत्थं कर्मचो
चो प्रधानता कोष्ठत हुयी है ।

कर्मवादी (सं० पु०) मीमांसक, कर्मचो पचप्रधान
श्रीकार करनेवाला ।

कर्मवान्, कर्मव इती ।

कर्मविन्न (सं० पु०) कर्मका पन्तराय, कामचो
तुनाहितत वा चङ् ।

कर्मविधि (सं० पु०) कर्मचो विधि नियमः, ३ तत् ।
कर्मका नियम, कामका कायदा ।

कर्मविपर्यय (सं० पु०) १ कायका पयुक्तम, कामका
विचरिका । २ कर्मका व्यतिहम कामका वच्य विर ।

कर्मविपाक (सं० पु०) कर्मचं कर्मकर्मभूककच
विपाक परिचामः, ३ तत् । यमायम कर्मका पल
मसे हुने कामका मतीका । सुदि, अर्थ, परवचमिं

शुभवादिवा उपकरण वा सुख प्रकृति यमकर्मका पीर
रोग तथा नरकादि पयुक्त कर्मका प्रसमोग है । जमार

शास्त्रके मतसे पचमके अनाधिक्य पयुक्त प्रथम नरक
भोग कर पीछे पापयोगि विविधमें उत्पत्ति होती है ।

गण्डपुराकर्म केसे पापके कौसां योगिमें कर्मकेमौ पात
विधो है—पतित अत्रिका दानप्रदच करनेसे नरकाल
पर पावो क्षमि, लपाज्वाकका मारने-पीठनेसे कुङ्कुर गुव-

पयो वा सुवहृषके कोमवे यदैन, माता प्रकृति पच्य
गृहजनको पाकमच करनेसे धारिका, माता पिताको
वज्राका देनेसे अक्षय्य, प्रसुदत आहार छोड़ पच्य द्रव्य

कामिके वानर कच्छित्त वन मारनेसे क्षमि, किलीषे गुचमें
दोप कमानेसे राघव, विप्रासघातकतासे मरुद्ध यत्र काव्य
प्रकृति मय्य चोरानेसे इन्दुर, परशोममनसे व्याज इव

प्रकृति, अाडकावाचरचसे बोधिक, गुव प्रकृतिसे पयो
हरचसे शूकर, यज्ञदानविवाह प्रकृतिमें विद्व ज्ञातनेसे
क्षमि, देवता पित्रकोच एवं ब्राह्मणको नदें मोचन कर-

नेसे कायच अ्नेठ अनाताको पयमानना करनेसे कोच,
गृह्य हो ब्राह्मणो ममन करनेसे क्षमि, ब्राह्मणो-गर्मसे
पुत्र निवारके साठनायक कोट, जतप्रतापे क्षमिचोट

पतङ्ग वा इक्षिक, याज्ञचोन अत्रिको मारनेसे खर,
को तवा यिदुवच करनेसे क्षमि, बिलोका मोक्षपच
चोरानेसे मञ्जिका, पचकरच करनेसे विज्ञाच, तिच

हरचसे सुविच, वृत्त हरचसे नङ्गल, मद्गुर मरुद्ध
हरचसे काच, महु हरचसे मयक, पिहक हरचसे
पिपोबिका, अक हरचसे वायस, कांस हरचसे हारीत

वा कथोन, कर्ममात्र चोरानेसे क्षमि, वज्रादि हरचसे
श्लोथ, पञ्चिहरचसे वच, वचक एवं याक पनादि
चोरानेसे मयूर, राजवका हरचसे लकोर, कुमन्त्रि वसु

चोरानेसे अङ्कुर, रथ हरचसे यमच, मयूरका पुच्छ
चोरानेसे पच, बाहहरचसे बाहकोट, फल चोरानेसे
पातक पीर घडहरच करनेसे रीरवादि नरक भोग

ह्य सुख्य कता इवादि रूपमें जन्म लेना पड़ता है ।
मो सुवर्नादि हरचसे भी पीसा हो पच मिचता है ।

जिर मनुच विद्या चोरानेसे वहुनरक भोग पाके
भूच चोर इत्यनमूय अन्निमें चाङ्गुति जाकनेसे
मन्दाग्नि हो जन्म लेता है । (१२१३-१२२ ५०)

पापकार्यं विशेषसे इहजन्म वा परजन्ममें रोग-विशेष भी भोगना पड़ता है। शातातप ऋषिने जिस पापसे जिस रोगका विधान किया, नीचे वह लिख दिया है। पापसे जो रोग लगता, उसका प्रायश्चित्त करना पड़ता है। प्रायश्चित्त न करनेसे वही रोग पर-जन्ममें भी मनुष्यको कष्ट देता है। महापातकसे सात, उपपातकसे पांच और पापसे तीन जन्म तक रोग पीछा नहीं छोड़ता। महापातक, उपपातक और पातकके प्रायश्चित्तका भी न्यूनधिक्य रहता है। महापातकमें पूर्ण, उपपातकमें अर्ध और पातकमें षष्ठांग प्रायश्चित्त करना पड़ता है। फिर अतिपातकमें दानादि साधारण विधान द्वारा मुक्त हो सकते हैं।

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
हागइत्या	अधिकार	विचित्रगुल्ल हागदान।
अशइत्या	बहुसुख	शतपल चन्दन दान।
दीपइत्या	पाण्डुरोग	ब्राह्मणको एक पल कल रो दान।
उद्वइत्या	विह्वलस्वर	कपूरक फलदान।
काकइत्या,	कपटोक्तता	रूपवर्ष गोदान।
खरइत्या	कर्मशरीर	तीन सुत्रा परिमित स्वर्णप्रकृति दान।
इतिइत्या	सर्वकार्यमें असिद्धि	मन्दिर बना गणेशमूर्ति प्रतिष्ठा अथवा कुलत्व शाक तथा पिटक द्वारा गणेशमूर्तिका शान्ति विधान और एक लक्ष गणेशमन्त्र जप।
तरणइत्या	किङ्कराचि	गुणममयी धेनुका दान।
गोइत्या	कुष्ठ	पञ्च पल्लव सगुल्ल, पञ्चवर्ष विशिष्ट, रक्तचन्दनलिष्ठ, रक्तप्रण्य एवं रक्तवन्न आच्छादित एक रक्तकुम्भ दक्षिण दिक् स्थापित कर, तिलचूर्ण- पूर्ण तासपात्र उसपर रख उसमें १०८ माया परिमित स्वर्णकी यममूर्ति जना पुरुषसूक्त मन्त्रसे पूजा और उसमें अपने पापकी शान्ति प्रार्थना करना चाहिये। इसके पीछे सामवेदी ब्राह्मण कलस मानपरायण करेंगे। फिर २५ माग स्यंप द्वारा पात्र मास्यका अभिसेवन होता है। असकी निवृत्तिजन्य भन्न द्वारा यम-

पाप	रोग	प्रायश्चित्त
नहिपइत्या नाजोरइत्या	रूपगुल्ल इसतल पीतवर्ष	मूर्ति विमर्शन कर मङ्गलसङ्कारसे आघातको निवेदन करना चाहिये,— “यमोऽपि सद्विपादतो दृष्टपापि- भंयागकः। दक्षिणाशा पतिटोको मम पाथं व्यपोहसु ह” १०८ माया स्वर्णकी प्रकृतिका दान। १०८ माया परिमित स्वर्णकी बने पारावतका दान।
बकइत्या गुह्यशारिकइत्या	दीर्घनासिका खलितवाक्	रूपवर्ष गोदान। ब्राह्मणको दक्षिणा सहित कीर् शास्त्रपत्र दान। दक्षिणा सहित घृतकुम्भदान। एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान। एकपल परिमित स्वर्ण अश्वदान।
शूकरइत्या शृगालइत्या इरिणइत्या पित्तइत्या	दन्तुर पदशून्यता खड्ग शेतनामाश	३० मात्रापत्र बना एक पणपरि मित स्वर्णकी शौका पर ताम्रपात्रमें रौप्यमय कुम्भ रख १०८ माया परिमित स्वर्णका विरुविग्रह गढ़ पद्मस्र पद्मना यथा विधि पूजा करना चाहिये। पीछे यह समस्त द्रव्य ब्राह्मणको देते हैं।
मावइत्या	अन्ध	पित्तइत्याका ही प्रायश्चित्त इसमें नहीं करना पड़ता है।
वाटइत्या	मूक	चान्द्रायण मत कर ‘सरस्वति जगन्मात’ शब्दत्रयादिदेवते। दुष्कर्म- करणात् पापात् पाहि मां परमेश्वरि ह’ मन्त्र पढ़ पल परिमित स्वर्ण सह ब्राह्मणको पुलक दे।
स्त्रीइत्या	अतीसार	१० अश्वत्थ वृक्ष रोपण, शर्करा तथा घेनुदान और गत ब्राह्मणभोजन।
वालकइत्या	मृतवत्ता	ब्राह्मणको विवाहदान, इतिश अवय, महाबद्रका जप, अयुत संख्याक दूर्वा आहुति है दक्षिणासह १०८ माया परिमित ११ खण्ड स्वर्ण अथवा ११ पल स्वर्ण ११ ब्राह्मणको देना चाहिये। फिर अन्यान्य ब्राह्मणको भी दक्षिणा दान करना कर्तव्य है। अवशेषमें आचार्य वरुणदेवतमन्त्र द्वारा

पाप	रोग	प्रायश्चित	पाप	रोग	प्रायश्चित
कांस्यहरण	पुष्परीक	ब्राह्मणको अलङ्कृत कर गतपक्ष कांस्य देना उचित है।	माताविध द्रव्यहरण	यक्ष्णी	यथाशक्ति जल, वस्त्र और स्वर्णदान।
गुरुपद्मीगमन	मूत्रकण्डू	नील मालायुक्त एवं नीलवस्त्र- बाष्पादित घट पश्चिम और रख उस पर तावपायमें छह निष्क स्वर्ण निर्मित वक्ष्यमूर्ति पुरुषशुद्धि पूजना चाहिये। किर सामवेदी ब्राह्मणको छठी समय सामवेद पढ़ना उचित है। पीछे २० निष्क परिमित स्वर्ण पुत्रालिका 'निष्पापोऽहं' कहके ब्राह्मणको और उक्त वक्ष्यमूर्ति आचार्यको प्रदान करना चाहिये। वक्ष्यमूर्ति देने समय यह मन्त्र पढ़ना पड़ता है,— “यादसामधिपो देवो विश्वे शामधिपो वरः। स सारणीकर्षधरो वक्ष्यः पावनी इमु मे ॥”	यज्ञाग्न हरण	जिह्वारोग	सब बार गायत्री मंत्र और तिल धारा उसका दगाग इवन। धेनुदान। दो तिलपात दान। यथाशक्ति कागदान। कन्यागमनके प्रायश्चितसे आधा प्रायश्चित और द्रव्ययुक्त तिलधारा दश्यां होम करना चाहिये। ब्राह्मणको अयुतसंख्यक माता-विध फलदान। कन्यागमनके प्रायश्चितसे आधा प्रायश्चित और द्रव्ययुक्त तिलसे दश्यां होम कर्तव्य है। उपवासी रश् सधु और धेनुदान करना चाहिये। अप्यगमनं दान।
अज्ञानीगमन	होमसुक्ष्मा	साह्यागनीको भांति प्रायश्चित्त करना चाहिये।	फलहरण	शङ्खुलिम्रण	ब्राह्मणको अयुतसंख्यक माता-विध फलदान। कन्यागमनके प्रायश्चितसे आधा प्रायश्चित और द्रव्ययुक्त तिलसे दश्यां होम कर्तव्य है। उपवासी रश् सधु और धेनुदान करना चाहिये। अप्यगमनं दान।
तपस्विनीसङ्ग	प्रमेह	एक मास बद्रका जप और यथाशक्ति स्वर्णदान।	घाह्यजायागमन	गुग्गु और कुठ	उत्तर दिक् कृष्णमालायुक्त कुम्भ बलाहत रख उसकी ऊपर कांस्यपात्रमें छह निष्क परिमित स्वर्ण निर्मित नर वाहन कुर्वरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुष सुक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदवित् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदीकृत कार्य करता रहे। अन्नको भिक्षाति निष्क परिमित स्वर्ण को पुत्रलो ब्राह्मणको 'निष्पापोऽहं' कहकर और उक्त कुर्वरमूर्ति ब्राह्मणको दे जाये। कुर्वरकी मूर्ति देने समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,— “निष्पी- गामधिपो देव शङ्करस मिय सखा। सो ग्याधिपतिः नोमान् नम पापं व्यपीडत ॥”
तपस्विनीसङ्गम	अग्निरी	मधु, धेनु और स्वर्ण सह जल द्रोणपरिमित तिलदान।	मधुहरण	नेत्ररोग	उत्तर दिक् कृष्णमालायुक्त कुम्भ बलाहत रख उसकी ऊपर कांस्यपात्रमें छह निष्क परिमित स्वर्ण निर्मित नर वाहन कुर्वरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुष सुक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदवित् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदीकृत कार्य करता रहे। अन्नको भिक्षाति निष्क परिमित स्वर्ण को पुत्रलो ब्राह्मणको 'निष्पापोऽहं' कहकर और उक्त कुर्वरमूर्ति ब्राह्मणको दे जाये। कुर्वरकी मूर्ति देने समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,— “निष्पी- गामधिपो देव शङ्करस मिय सखा। सो ग्याधिपतिः नोमान् नम पापं व्यपीडत ॥”
गान्धर्वहरण	शैथिल्यता	दक्षिणा सह उत्तम प्रणालय देना चाहिये।	साह्यगमन	कुष्ठता	उत्तर दिक् कृष्णमालायुक्त कुम्भ बलाहत रख उसकी ऊपर कांस्यपात्रमें छह निष्क परिमित स्वर्ण निर्मित नर वाहन कुर्वरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुष सुक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदवित् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदीकृत कार्य करता रहे। अन्नको भिक्षाति निष्क परिमित स्वर्ण को पुत्रलो ब्राह्मणको 'निष्पापोऽहं' कहकर और उक्त कुर्वरमूर्ति ब्राह्मणको दे जाये। कुर्वरकी मूर्ति देने समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,— “निष्पी- गामधिपो देव शङ्करस मिय सखा। सो ग्याधिपतिः नोमान् नम पापं व्यपीडत ॥”
वास्यहरण	शौक्यस्वर कुष्ठ	प्राजापत्य ऋत और शतपथ परि- मित ताम्रदान।	साह्यसागमन	खिन्नहोमता	उत्तर दिक् कृष्णमालायुक्त कुम्भ बलाहत रख उसकी ऊपर कांस्यपात्रमें छह निष्क परिमित स्वर्ण निर्मित नर वाहन कुर्वरकी मूर्ति स्थापनकर पुरुष सुक्तसे यज्ञ करे। अथर्ववेदवित् ब्राह्मण उसी समय अथर्ववेदीकृत कार्य करता रहे। अन्नको भिक्षाति निष्क परिमित स्वर्ण को पुत्रलो ब्राह्मणको 'निष्पापोऽहं' कहकर और उक्त कुर्वरमूर्ति ब्राह्मणको दे जाये। कुर्वरकी मूर्ति देने समय यह मन्त्र पढ़ना चाहिये,— “निष्पी- गामधिपो देव शङ्करस मिय सखा। सो ग्याधिपतिः नोमान् नम पापं व्यपीडत ॥”
शैलहरण	कष्टु प्रभृति	उपवासी रश् ब्राह्मणको दो लोटे तिलदान करे।	साह्यसागमन	सर्वाङ्गप्रण	दास दान और अगम्यागमनका प्रायश्चित्त करे। एक ब्राह्मणको विवाह दे। मयि और वस्त्रसह सन्धि देना। एकदिन उपवास रख शतपथ लीह दान करे।
सपु (शोभा) हरण	नेत्ररोग	उपवास रख यथाविधि ब्राह्मणको द्रव्य और धेनु देना चाहिये। ब्राह्मणको दधि और धेनुदान। ब्राह्मणको दो पल कुष्ठुम दान। दो प्राजापत्य करना चाहिये।	साह्यसागमन	सर्वाङ्गप्रण	दास दान और अगम्यागमनका प्रायश्चित्त करे। एक ब्राह्मणको विवाह दे। मयि और वस्त्रसह सन्धि देना। एकदिन उपवास रख शतपथ लीह दान करे।
दधिहरण	मत्तता	ब्राह्मणको यथाविधि द्रव्य धेनुदान।	घटमार्यागमन	घटमार्या	मयि और वस्त्रसह सन्धि देना। एकदिन उपवास रख शतपथ लीह दान करे।
काष्ठहरण	इलाखेद	स्वर्ण रश्, सङ्कास्वरमें सङ्काघट, रौद्रस्वरमें अतिरीद्र और वैश्वस्वरमें सङ्काघट तथा अतिरीद्रका जप करे।	रक्षवस्त्र और प्रवालहरण	वातरक्त	मयि और वस्त्रसह सन्धि देना। एकदिन उपवास रख शतपथ लीह दान करे।
दुग्धहरण	बहुसूत्र	ब्राह्मणको यथाविधि द्रव्य धेनुदान।	लोहहरण	चित्तिताह	मयि और वस्त्रसह सन्धि देना। एकदिन उपवास रख शतपथ लीह दान करे।
देवताहरण	विविध स्वर	स्वर्ण रश्, सङ्कास्वरमें सङ्काघट, रौद्रस्वरमें अतिरीद्र और वैश्वस्वरमें सङ्काघट तथा अतिरीद्रका जप करे।			

भगतिका साधारण प्रायश्चित्त—फल एवं सप्त धान्यपर पञ्चपल्लव तथा सर्वोपघिसंयुक्त क्षुण्यवस्त्र भाच्छादित अकान्तमूल कलस रस्य उसके ऊपर निष्कपरिमित स्वर्णनिर्मित महिषारुद्र चतुर्भुज दण्डहस्त और स्वर्ण-कुण्डलधारी प्रेतरूपी पुरुष स्थापनकर पूजना चाहिये । प्रत्यह पुरुषसूक्त तथा दुग्धसे कलसमें तर्पण और षड्भुज नाम जप करे । यमसूक्त द्वारा यमपूजा प्रकृति, आत्मविशुद्धिकी लिये गायत्रीजप और गृह-शान्तिपूर्वक दशम्य तिलहोमकर ब्राह्मणकी तिलोदक दाम करते हैं ।

“रम” तिलमय पिण्डं मधुमर्षिः समन्वितम् ।

दद्यात्त तस्मै प्रेताय यः शीर्षं कुर्वते नमः ॥”

उक्त मन्त्र द्वारा मधु तथा शर्करामिश्रित क्षुण्य तिल-पिण्ड प्रेतरूपको दे यजमान प्रेतके उद्देश तिलपात्र-संयुक्त द्वादश क्षुण्य कलस और विष्णुकी उद्देश एक कलस प्रदान करे । आचार्य वरायुधधारी वरुण-दैवतका मन्त्र पठ और कलसमें जल लेकर दम्पतीको अभिषेक करे । यजमान उन्हें दक्षिणा दे और नारायण-वलि कर ले । नारायणवलि देखो ।

उक्त प्रायश्चित्त द्वारा प्रेत प्रेतत्वसे छूट पुत्र-पौत्रादिकी आरोग्य सम्पद देता है ।

प्रायश्चित्तके दण्डका अनुष्ठान—४, ५, ८ वा १० संख्यक ब्राह्मण वेडा उनके आज्ञानुसार प्रायश्चित्तका उप-क्रम लगाना पडता है । इसके पीछे विष्णुकी पूजा एवं कामनाके अनुसार सहस्रकर ब्राह्मणोंकी यथा-शक्ति धेनु, वस्त्र, अलङ्कार तथा दक्षिणा दे साष्टाङ्गप्रणाम-पूर्वक प्रायश्चित्त समापनकर ब्राह्मणकी पूजे और अन्तकी ब्राह्मण खिन्ना वस्तुगणके साथ स्वयं भोजन करे ।

दासका साधारण विधि—केवलमात्र गोदानका विधान रहते सुशीला सवत्सा दुग्धवती गाम्भी, हृषदानमें शुकवस्त्र तथा काञ्चन सह हृष, भूमिदानमें दश निवर्तन परिमित भूमि, स्वर्णदानमें शतनिष्क अथवा पञ्चाशत् निष्क स्वर्ण, अश्वदानमें उपकरणसह सुशील अश्व, महिषदानमें स्वर्णायुधयुक्त महिषी, गजमहा-दानमें सुवर्ण फल सहित गज, देवताके अर्चनमें लक्ष मन्त्र द्वारा पुण्यदान ब्राह्मण-भोजनमें सहस्र ब्राह्मणोंकी

मिष्टान्न दान, रुद्रजपमें लक्षसंख्यक पुण्यद्वारा शिव-पूजा चढा एकादश रुद्र नामका जप, हृन, गुग्गुलु सह तद्दयाश होम तथा वरुण मन्त्रसे अभिषेक, धान्यदानमें ७६८ मन धान्य और वस्त्रदानमें कर्पूर-मिश्रित पट्टवस्त्रद्वय देना पडता है ।

विविध पुराणके मतसे भी निम्नोक्त रोग निम्नोक्त पापसे उत्पन्न होता है,—

१ क्लीवता—निरपराधिनी पतिव्रता युवती स्त्रीकी छोड़ने, किसीका अण्डकोप छेदने अथवा ऋतुसाता स्त्रीसे सहवास न करनेपर मनुष्य नपुंसक हो जन्म लेता है ।

२ अल्प वयसमें ही सन्तान नाश—दृष्टान्त जीवके जन्मपानमें वाधा डालनेवालीका सन्तान अल्पायुः होता है ।

३ दरिद्रता—जो व्यक्ति प्रभूत धनवान् होते भी धर्ममिन्दक रहता और देवता, अग्नि, ब्राह्मण तथा दरिद्रको कुछ दान नहीं करता, वह मृत्युके पीछे विविध नरक यन्त्रणा भोग प्रतिदरिद्र वन जन्म लेता और लीर्ण-वस्त्र पहन निरतिशय क्लेशसे जीवन बिता देता है ।

४ वियोग—दुष्ट, दुराचार, दुष्टबुद्धि और स्नेह-भेदकारी व्यक्ति परजन्ममें वियोग यन्त्रणा उठाता है ।

५ नेत्ररोग—गृहस्थका दीप चोराने, सती पर-नारीकी प्रति सकाम दृष्टि लगाने अथवा दूसरेका सम्भोग देख ललचानेसे काना या पन्था होकर जन्म लेना पडता है ।

६ कुलता—देवता प्रतिमा, ब्राह्मण, गुरु, श्रेष्ठ व्यक्ति, ब्रह्मचारी और तपस्वीको देख अभिवादन न करनेसे मृत्युके पीछे श्मशान हल वन बहुकाल विताने पर कुल रूप जन्म होता है ।

७ खल्ल और छिन्नपादता—जूता या खडाक चोरानेसे बहुविध नरकयन्त्रणाके पीछे खल्ल वा छिन्न-पाद होकर मनुष्य जन्मग्रहण करता है ।

८ छिन्नहस्तता और छिन्नपादता—पिता, माता, गुरु वा हलकी ताड़ना देनेसे विविध यमयन्त्रणा भोग छिन्नहस्त वा छिन्नपाद होकर जन्म लेते हैं ।

९ छिन्न नासिकता—श्रुतिस्मृतिकी कथामें विघ्न

हासने या देवनिन्दा करनेसे अथवा वेदों के अर्थ एवं पहिले विद्वान् विद्वत्ता नामक नगरमें विद्यापीठके प्रायः बहुधाक रश्च मनुष्य जिन नाथिक होकर अथवा काम करता है।

१० शिवकर्मता—मिया पपवाह द्वारा किसीको सतानेसे शिवकर्म होता पड़ता है।

११ अष्टपदहीनता—उभय संधिसे वादय संयाम अर्धमें शीघ्र पशुको छोड़ भगानेसे अथवा वेदोंके पुपुष्य नरक भोग मनुष्य अष्टपद हीन होकर अथवा होता है।

१२ पचाघात—पक्ष होकर निरख्य यज्ञको मारनेसे बहुकर्म पश्योनि पानिपर मनुष्य अर्धमें पचाघात रोग लगता है।

१३ वैश्व—जो जो यौवनके गर्भ शीघ्र पशुमत पतिको विरूप बना दिवधर्म निन्दा करती, राजिको अथवा मिया नहीं होती पीर पतिको पाप्राथि अथवा बह रहती, वह परलक्षमें वैश्व अथवा रहती है।

१४ बन्धता—पिपाधार्थ बन्धके अक्षपानमें बाधा लगाने अथवा मृत्यु मृत ठठामे, मिष्टाकारि देवताको निरिह न कर खाने पीर किसीको मधनका अथवा मोक्ष अथवा मनेसे बन्धता धाती है।

१५ अर्धस्त्राव—जो जो विवाहय सपत्नी वा अथवा मारोका सन्तान पुत्र शीघ्र वा कुट्ट मन्दादिसे मार जाता, वह नरकान्तमें मनुष्योनि या किसी अथवा पुत्रपत्तसे शिष्ययथासिने जोसे भी गर्भस्त्रावकी पीड़ा उठती है।

१६ अतमावृत्ता—ज्येष्ठ अता अविवाहित रहने अनिष्ट विवाह करनेपर अतमावृत्ता होता है। सप्तमी तिथिको तेज करनेसे भी अथवा जो मर जाती है।

१७ बहुपुत्रता पीर अपुत्रता—यादके मुखसे मोक्ष अथवा शीघ्र दूर होनेपर अथवा वेदोंके तीन मन्वन्तर काट निर्रम मन्वन्तरमें रश्च परलक्षको बहुपुत्रक वा अपुत्रक होता पड़ता है।

१८ शीर्षावृत्ता—अतोया तिथिको तेज करनेसे शीर्षावृत्ता धाती है।

१९ वापस्य—जो जो मिथ्यावाक्य प्रयोग द्वारा

विवाद बढ़ाती पीर परलक्ष अथवा वेदम्य लगती, वह परलक्षमें सपत्नीसे सतायी जाती है।

२० आत्मन्तर—अपवित्र पत्र वति प्रकृति मिथ्याक-को देनेसे आत्मन्तरमें अथवा होता है।

२१ भूकना—किसी कृष्णगीतादिद्वारीको सनेसे परलक्षमें भूकता धाती है।

२२ गद्वन्तुवाक्य—अगोवासे जो अथवा विवाद बढ़ाता अथवा भूकतासे शुद्धको निन्दा उठता, वह अथवा वेदोंके बहुविध अथवा उठा परलक्षमें गद्वन्तु भाषी बन जाता है।

२३ सुखरोग—पिडनिन्दा, शुद्धनिन्दा एवं देव निन्दाकारो, मिथ्यावादी पीर अथवा अथवा अथवा नरकान्तमें अथवा से सुखरोगान्त होता है।

२४ अर्धरोग—अथवा अथवा पापवाक्य सुननेसे परलक्षमें अर्धरोग लगता है।

२५ दुर्गम्यागतता—सुगम्य अथवा चोरानेसे मनुष्य भूक तथा विद्याभुक्त नरक भोग परलक्षमें दुर्गम्यागत होता है।

२६ दरिद्र पीर विरूपता—दानकार्यमें विद्वत्तासनेसे परलक्ष दरिद्र पीर विरूप बनना पड़ता है।

२७ शिखदादपासिता—अथवा चोरानेसे अथवा वेदोंके चारामि नामक नरकको अथवा उठा परलक्षमें अष्टपद अथवा रहते है।

२८ दाहन्तर—अथवा द्वारा अथवा, धाम, शिव प्रकृति अथवा मिथ्यावाक्यको रोच नरक भोग परलक्षमें मनुष्य दाहन्तरका अथवा उठता है।

२९ अन्धमान्य—आश्विनके पाकवाक्य विद्वत्तासनेसे अथवा नामक नरक भोग परलक्षमें अन्धमान्य रोगप्रकृति होता है।

३० अर्धरोग—पाक बना पाकान्ध अथवा पुत्रानेपर अर्धरोग रोग अथवा है।

३१ अतीसार—अथवा विद्याकृति पीर दान शिष्या या चोरसे कृष्णका अथवा मार हासनेसे नरकान्तमें तीन अथवा मन्वन्तरोंको मनुष्योनिसे अतीसार रोगका अथवा उठाना पड़ता है।

३२ अर्धरोग—जो अथवा अथवा

समस्त परित्याग कर केवलमात्र अर्थ जोडता, जो गो तथा भूमि दवा बैठता, जो निष्ठुर पडता और जो सरल एवं सञ्चरित युवती भार्याको छोडता, वरु व्यक्ति नरकान्तमें ग्रहणीरोगग्रस्त हो जन्म लेता तथा पशु द्रव्य धन प्रभृतिसे मुंह मोडता है।

३३ पाण्डु—परभार्या वा नीच जातिकी स्त्रीसे सङ्गत होनेपर वङ्गकाष्ठ पर्यन्त विविध यमदण्ड मिल मनुष्य-जन्ममें पाण्डुरोगग्रस्त और क्षीणचैता रहते हैं।

३४ कामला—अन्नादि चोरानेसे जीवनान्तमें त्रिविध नरकभोग अष्टादशवर्ष पर्यन्त काककङ्क प्रभृति तिर्यक् योनि पाते और मनुष्यजन्ममें कामला रोगका कष्ट उठते हैं।

३५ कास—कर्मभेदके अनुसार पांचो प्रकारका कास उत्पन्न होता है। १ अतिकठोर सिध्यावाक्यसे किसीको सतानेपर पित्तप्रवल कासरोग लगता है। २ ब्राह्मण-का स्थान विनाश करनेसे वातजन्य कास आता है। ३ जलाशय ध्वंस करनेसे श्लेष्मजन्य कास उठता है। ४ ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी विभिन्न माननेसे सन्निपात-जन्य कास होता है। ५ यज्ञको छोड पशु मार कर खानेसे सर्वदोषजन्य कासरोगका क्रोश उठाना पडता है।

३६ श्वासकास—यह रोग भी कर्मविशेषसे महा, ऊर्ध्व, क्षिन्न, तमक और क्षुद्र भेदमें पांच प्रकारसे होता है। १ यज्ञ व्यतीत श्वासरोधपूर्वक पशुको मार मांस खानेसे महाश्वास चलता है। २ पुराणकथाके समय दूसरी बात छेडनेसे ऊर्ध्वश्वास उठता है। ३ निषिद्ध दान लेनेसे क्षिन्नश्वास आता है। ४ शास्त्रार्थ में वृथा दोष लगानेसे तमकश्वास बढ़ता है। ५ पाक-कालकी विघ्न डालनेसे क्षुद्रश्वासरोग होता है।

३७ यक्ष्मा—विप्रहत्या, गच्छितधनहरण, वृत्ति-च्छेद, प्रसापीडन तथा गुरुद्रोह करनेसे जीवनान्तमें विविध दुःसह यन्त्रणा उठा कुछ कालतक कृमियोनिमें रहना और मनुष्य जन्म मिलनेपर यक्ष्मारोगका दुःख सहना पडता है।

३८ रक्तपित्त—अत्यन्त दुर्व्यवहार, परद्रव्य अभि-लाष, परभार्या कामना और पिष्टव्यवधू गमन करनेसे रक्तपित्त रोगान्त होतै है।

३९ गुल्म—एकाकी मिष्ट वस्तु भोजन तथा नीच-जातीय स्त्री-गमन करनेसे जीवनान्तमें कृमिपूयपूर्ण काकोल नामक नरकभोग मनुष्य ४ वत्सर पिपी-लिकायोनिमें रहता और मानवयोनिमें गुल्मरोगका क्रोश सहता है।

४० शून—निरपराध किसीको शूल मारने अथवा शूलसम कष्टदायक वाक्य कह डालने और दम्पतीमें स्नेहभेद निकालनेसे ४ मन्वन्तर यमयन्त्रणा उठानेपर पक्षियोनिमें वियोगका दुःख होता है। फिर मनुष्य जन्ममें शूलरोग लग जाता है।

४१ अर्शरोग—साध्वी ऋतुस्राता स्त्रीसे सहवास न रखने और आत्महत्या, भ्रूणहत्या वा गोहत्या करने पर ३५१६००००० वत्सर नरक भोग मनुष्यजन्ममें अर्शरोग होता है।

४२ भगन्दर—आचार्यकी भार्याके साथ गमन अथवा स्त्री, वासक तथा वृहका धन हरण करनेसे नरकान्त-में फिर जन्म ले मनुष्य भगन्दररोगका दुःख उठता है।

४३ हृदि—गोके मुखसे कोयी वस्तु खींच फेंक देनेपर परजन्ममें वायुजन्य हृदिरोग होता है। फिर पिष्टलोककी तर्पण न कर स्वयं जल पीनेसे पित्तजन्य हृदिरोग लगता है।

४४ हिक्का—किसी योगीकी तपस्या विगाडनेसे हिक्कारोग होता है।

४५ अरोचक—पिता, माता और अतिथिकी अन्न न दे स्वयं खा लेनेसे परजन्मपर हीन जातिमें उत्पन्न हो अरोचक रोगका कष्ट उठते हैं।

४६ स्वरभङ्ग—गानकी समाप्ति न आते गायककी वाधा पङ्कानेसे जन्मान्तरमें स्वरभङ्ग रोगग्रस्त होना पडता है।

४७ अतिदृष्ट्या—दृषित गोसमूहके जलपानमें वाधा डालने अथवा जल निकालनेसे असंख्यकाल मरु-भूमिपर कीटयोनि रह मनुष्यजन्म पा कर अति-दृष्ट्या लगती है।

४८ विस्फोट—चण्डालके जलाशयमें नहाने और जल पी जानेसे नरकान्तकी विस्फोट रोग होता है।

४९ भ्रम और सूर्क्षा—जो कुटिल व्यक्ति सभास्थल-

पर कोमोको आत्मिनि हाथ पन्थ प्रचार कया कहने लगता है नरकान्तको धम वा मूर्खा रोयाकान्त जो कय सेना पड़ता है ।

१० ब्रह्मो—भोम वा होपे बिसेको सताने या मर्मास्थि विदना पडुवाने पर परजन्मने ब्रह्मो उठता है ।

११ धामबात—पद्मकी दक्षिणा पचवा लक्ष्मी किय हुवा मनु ब्राह्मणको न देने पोर पचमाचरकने धन कमा कोड़ सेने पर कथान्तरमें धामबात सताता है ।

१२ सर्वाङ्गबातव्याधि—सुरा पोकर उठाव् छो सङ्घवासके सिने को चल जानि पचवा परजोका बख चोरानिसे नरकान्तको तिर्यकबोनि भूम मनुष्यजन्ममें सर्वाङ्गबात वातरोग लगता है ।

१३ तुन्दरोग—ब्राह्मणका बट चोरा सेने पचवा यज्ञकास सहस्यकर दक्षिणादि न देनेके निद सञ्चित पोकर तुम् पर्याव् कोक रोग उठता है ।

१४ पञ्चपित्त—कोमके निविद द्रव्य खानिपर बीवगान्तको काक कुबुर पोर यज्ञ योनि पाकर परजन्ममें मनुष्य देह धारण करना पोर पञ्चपित्त रोग मिथना पड़ता है ।

१५ शोबीहर—कोम, मोह वा होपे पचमाचरक करनेपर नरकान्तमें जन्म ही मनुष्य शोषोहरी होता है ।

१६ लखोदर—ब्रह्मा, विष्णु पोर महेश्वरको मित्र समझनेसे कथान्तरमें लखोदर रोग लगता है ।

१७ घोष—विना पपराध वेद प्रमृतिसे बिकोको मारनेपर कथान्तरमें घोषरोग उठता है ।

१८ मूत्रकण्डू—विषवागमन वा अथपान करनेसे नरकान्तमें लय ही मूत्रकण्डू रोग भोग करते हैं ।

१९ मूत्रावात—इत्यतोके संयुक्त विद वाकनेसे कथान्तरकी मूत्रावात रोग होता है ।

२० पद्मरी—पयोति वा कोहसे कटुकाता फोके पाष न जानिपर कण्डू के पोके पूरकोचितपूर्व नरक भोग परजन्मकी पद्मरी रोग होइता है ।

२१ मीह—वर्मातुवार विंयति प्रचार मीह होता है । १ शूकरयोनिमें सैद्यन करनेसे लक्ष्मी मीह पचता है । २ माहममने महमिहको उत्पत्ति है । ३ रजको

के गमनसे चार मीह हो जाता है । ४ पतौलहरपसे चान्द्रमिह पड़ता है । ५ रोगिणोपमने माच्छिठमिह बढ़ता है । ६ मित्रफोके गमनसे शुक्रमिह बढ़ता है । ७ चतुस्यदयमने सिक्कामिह खाने लगता है । ८ कर्कहरपसे घोरमिह निकलता है । ९ सुरापानसे सितमिह उठता है । १० कटुमतीपमने काष्ठमिह होता है । ११ रजकवापमने रश्मिमिह चकता है । १२ नोचवातोय खीममने मध्वमिह खाता है । १३ विषवाडङ्गमसे दहूमिह उठता है । १४ ब्राह्मणो नमने इष्टिमिह उभरता है । १५ पञ्चतपोनिगमने चरित्रमिह मडकता है । चिर मात, भगिने, कथा, यज्ञ, पचतबोनि, व्याजवावा, मातुखाने, शुषपयो, राक्षको मित्रपण्डो प्रमृति पन्थान् कुटुम्बिकीके गमन

से बीवगान्तको लक्ष्मी कोइकाय मचक प्रमृति दहू-विष यमयन्त्रका उठा पाष कसर शूकरयोनि, दय कसर कुबुरबोनि, तोन मास विपेक्षिकायोनि तथा एक कसर इक्षिकयोनिमें उत्पन्न हो मोक्षक सेना पोर सर्वस्येय मनुष्य बन पनेकप्रकार मिह्रोग मिथना पड़ता है ।

२२ सुस्वनाय—वर्मपण्डोको कोड़ पन्थ कोके साथ सखीम करनेसे पुण्य नष्ट होता है ।

२३ सुखप्रति—कुम्बके साथ मिथताकर सर्वदा वनमें व्याजकी माति घमादि मार हुमनेसे नरकान्तको पुनर्जन्म पानिपर सुखप्रतिरोग लगता है ।

२४ लप्ताह—वेपथु पितामाता तथा ब्राह्मण प्रमृति सध्यागार्ह ऋषिको न पूजने पचवा निष्ठा करने, किंवा ब्राह्मण शुभ प्रमृतिके प्रति इष्टाचरक रखने पोर उनको क तिभ्रमकारो कोवी इत्ये देनेसे कथान्तरमें लप्ताह खाता है ।

२५ पपकार—छोप बड़ने, उपकारीके निकट पञ्चतय बनने, पचम मानवके साथ ब्राह्मणका पाष रीक रखने पचवा रज्य द्वारा गोसुख ककड़नेसे नर कान्तमें व्याध, व्याज पोर शूकरयोनि भोग मनुष्य होनेपर पपकार रोग मिथना पड़ता है ।

२६ पञ्चशूबादि—बागी तिलसेठ, कोहनमें, तिखाबिन, मज, सातुक, महु, तेक, अरक एवं मज्जा-दान सेने किंवा कामवय पचमाचरक पूर्वक संयुक्त

करने अथवा परस्त्री तथा गो प्रभृति पर रेतः डालने, ब्राह्मण वा राजाका द्रव्य चोराने और अश्रित व्यक्ति वा विवाहिता पत्नीको छोडनेसे इस्ती, व्याघ्र, सिंह, नखी, वा दस्युके हाथ मृत्यु होता है। मरने पीछे बहुकाल लोभजनक योनि घूम मनुष्यजन्ममें अस्थि शूलादि रोग लग जाता है।

६७ मूत्रकृमि—विना मन्त्र अग्निमें घृत डालनेसे नरकान्तको मनुष्य जन्म ले मूत्रकृमि रोगसे आक्रान्त होते हैं।

६८ विद्रधि—फल अपहरण करनेसे नरकान्तमें वानरजन्म मिलता है। फिर मनुष्यजन्ममें विद्रधि रोग उठता है।

६९ अपची और घातग्रन्थि—विशाल वृक्ष, पर्वत, नदीतीर, वल्मीकाश्र, गोष्ठस्थल, गोष्ठ वा देवालयमें, मूत्रत्याग और निष्ठोवनादि निक्षेप करनेसे बहुविध नरक यन्त्रणा उठा परजन्मको अपची तथा ग्रन्थिरोग भोगते हैं।

७० शिरोरोग—तीर्थस्थानमें विहित कार्यादि और गुरु ब्राह्मण प्रभृतिको देख प्रणाम न करनेसे नरकान्तपर दश वत्सर भङ्गकयोनि तथा तीन वर्ष मेषयोनि भोग मनुष्य जन्म मिलते शिरोरोगाक्रान्त होना पडता है।

७१ नेत्रहीनता—परस्त्रीके प्रति कुटिल दृष्टि डालने अथवा गुरु वा ब्राह्मणके चक्षुमें आघात मारनेसे प्राणान्तकी विविध नरकयन्त्रणा उठा जन्मान्तरमें नेत्रहीन रहते हैं।

७२ रात्रभ्रमता—कामबुद्धिसे परस्त्रीके प्रति दृष्टि डालने, नग्न स्त्रीको देखने किंवा गोहिंसा तथा विप्र हिंसा दर्शन करनेसे रात्रभ्रम, दृष्टि क्षीणता, दिवाभ्रमता और भ्रवददृष्टिरोग लगता है।

७३ दृष्टिक्षीणता—उदय, अस्त और मध्य समय सूर्यके प्रति दृष्टि चलाने अथवा अशुचि अस्थानों, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, ब्राह्मण, अग्नि एवं गोकुली और देखनेसे परजन्मका दृष्टिक्षीणतारोग होता है।

७४ विषमाक्षिता और विरुपाक्षिता—पुत्रीके प्रति जार दृष्टि लगानेसे मनुष्य परजन्ममें विरुपाक्षी होता

है। पुरुष परस्त्री और स्त्री परपुरुषकी कुटिल भावसे देखनेपर परजन्ममें विषमाक्षिरोग लगता है।

७५ गलगण्ड और गण्डमाना—गुरुपत्नीका कण्ठ देखनेसे नरकान्तमें गलगण्ड वा गण्डमाना रोग उठता है।

७६ नासारोग—कामाविष्ट चित्तसे ब्राह्मणकर्म परित्यागपूर्वक सुगन्धि कुसुमादि ब्राह्मण देवता प्रभृतिको न दे स्वयं आघ्राण करनेपर परजन्ममें नासारोग होता है।

७७ दुग्धहीनता—अपर वानकके लिये दुग्ध लाते भी जो स्त्री उसको नहीं देती, वह प्राणान्तमें ४ वत्सर सर्पिणी और ४ वर्ष कच्छुपौ रह पीछे मनुष्यजन्म लेनेपर दुग्धहीन निकलती है।

७८ स्तनविस्फोट—अन्य पुरुषको जो स्त्री स्वीय स्तन देखाती, वह नरकान्तको पूनर्जन्म ले स्तनविस्फोट रोगसे दुःख पाती है।

७९ वेष्ट्यात्व—स्वामीके मरनेपर जो स्त्री परपुरुषसे दृष्टि लगाती, प्राणान्तको वह तप्त लौहमय पुरुष भालिङ्गन प्रभृति यमयन्त्रणा उठा परजन्ममें वेष्ट्या बन जाती है।

८० वाधिर्य—धर्मचिन्तासे मुख फेर पितामाता, ब्राह्मण और तीर्थ प्रभृतिको निन्दा उडानेसे परजन्ममें वाधिर्य रोग लगता अर्थात् कुछ सुन नहीं पडता।

८१ श्लेष्मरोग—नित्य क्रियासे वहिर्भूत ही भोजन करने पर प्राणान्तको काष्ठोपजीवी और वायस जन्म ले परजन्ममें श्लेष्मरोगाक्रान्त होते हैं।

८२ इस्तशूल—सन्ध्यादिविहीन ब्राह्मण जीवनान्तको एक वत्सरकाल कष्ट और पारावतयोनि भोग मनुष्यजन्म होने पर इस्तशूल रोगकी वेदना उठता है।

८३ योनिरोग—जो स्त्री रमणकाल पतिको सन्तोष नहीं पहुंचाती अथवा अन्यका भोग्य वस्तु चोराती, ३३-३४ वत्सर उद्भयोनि भोग मनुष्यजन्ममें योनिरोगका दुःख पाती है।

८४ प्रदर—सुघात पतिको न खिला जो स्त्री भागी खाती, किंवा हत्या पशुहत्या लगाती अथवा भोग्य वस्तु चोराती, प्राणान्तको वह मद्यपानोक्त नरक भोग दश

बन्धर वायसमीनि पौर शुभयोगिनि १४ मनुष्यत्रय होमे
 शी प्रदर रोगको बन्धना उठातो है। (नलस्यैव कर्मविषय)

कर्मविशेष (सं० पु०) कर्मको विशेषः पन्थक्यात्
 पाठेक्यम्. ६ तत्। साधारण कार्ये विविध कार्ये,
 सामूहिक कामसे निरासा काम।

कर्मवीर (सं० स्त्री०) कर्मको वीरं मूलकारणम्,
 ६ तत्। कर्मका मूल कारण कामका पसंको सब।
 कर्मव्यतिहार (सं० पु०) कर्मका व्यतिहार १ तत्।
 परस्पर एक जातीय कार्य करनेको क्षिति, जिस
 जासतमें एक ही तरहका काम साव-साव करे।

कर्मशाखा (सं० स्त्री०) कर्मका शिखादे शाखा,
 ६-तत्। शिखादि कार्यका पृथ, कारणाना।

कर्मयोग (सं० स्त्री०) कर्मयोगं कर्मकारणफलमापो
 यत्न, बहुश्रो० कर्मयोगयति वा। १ कर्म करनेके शौ
 कामाधवाका जो नतीशिकी पौर न देख दिखसे काम
 करता हो। २ लघुमी कोटिय करनेवाला।

कर्मयधि (सं० स्त्री०) कर्मसु यधि ० तत्। पवित्र
 कर्म, पाप काम करनेवाला।

कर्मयुध (सं० स्त्री०) कर्मसु युध, ०-तत्। पवित्र
 कर्म, साध काम करनेवाला।

कर्मयूर (सं० स्त्री०) कर्मसि यूर, इव ॥ १ कार्य
 कारण, मूलनती सुखेदीके साव काम करनेवाला।
 २ कार्यदेव कोटियार, लागीबर।

कर्मयोग (सं० स्त्री०) कर्मसु योगं दोषबोधता।
 कर्म विषयमें निर्दिष्टता, कामकी सफ़ाई।

कर्मयुद्ध (सं० पु०) १ युद्धके युद्धविशेष। इनको
 माताका नाम यति या। (भाष्यन ११११)

कर्मय (सं० स्त्री०) कर्मसु यमकर्म फलति नामयति,
 कर्म शो क निपातनात् यत्नम्। कल्पय पाप, गुनाइ।

कर्मस (सं० पु०) युद्धके एक युध। इनको
 माताका नाम यमा वा।

कर्मसङ्घ (सं० पु०) कर्मसि सङ्घ पापसि, कर्मसु
 लम्ब-बल। कर्ममें पापसि, काममें कर्म करनेको
 जासत।

कर्मसंपद (सं० पु०) कर्मसु संपद, ६-तत्। कर्म
 समुदाय, कामका बृहत्।

कर्मसचिव (सं० पु०) कर्मसु सचिव सहाय। कार्यमें
 साहाय्य देनेवाला, जो काममें मदद पहुंचाता हो।

कर्मसमाप्त (सं० पु०) कर्मका संपन्नता परततो
 वा सज्जासम्पन्नम्, ६ तत्। १ कर्मकाय काम जोड़
 बैठनेको जासत। २ कर्मप्रसम्पन्न, कामका नतीका
 न देखनेको जासत।

कर्मसमाप्तिक (सं० पु०) कर्मका सज्जासोऽप्यय,
 कर्मसु सज्जाडठन्। प्रसम्पन्नमिच्छक, दुनवाको
 काम न करनेवाका प्रयोर।

कर्मसमाप्तो (सं० पु०) कर्मसमाप्तोऽप्यय, कर्मसु
 सज्जाडठन्। १ यथा-विधान कर्मकायो मियुक्त,
 कार्यदेके दुनवाको काम जोड़नेवाका प्रयोर। २ कर्म-
 परतवाको, कामका नतीका न देखनेवाका।

कर्मसमाप्ति (सं० स्त्री०) कर्मसु समाप्तिः परि
 समाप्तिः। १ कर्मका शेष, कामका प्रयोर। २ सुखि,
 सुखकार।

कर्मसम्पन्न (सं० स्त्री०) कर्मसु सम्पन्न इत्यतिरिष्ण,
 बहुश्रो०। १ कर्मकाय, कामसे निबन्धा हुआ। (पु०)
 २ कर्मको उत्पत्ति, कामका निबन्ध।

कर्मसाधो (सं० पु०) कर्मसाधो प्रत्ययकारो,
 ६ तत्। १ कर्मको प्रत्यय करनेवाका सूर्य, पापुताइ।
 २ चन्द्र, चाँद। ३ यम। ४ वाक। ५ बुद्धिमी,
 ज्योती। ६ जल पानी। ७ वीर, पाग। ८ बाहु,
 ब्रवा। ९ आवाय, पासमान।

‘इदं लोको यदी वापी वरान्कर्मणि वच न।
 इति वरान्कर्मणि वच की वर इत्यन्तः १’ (शिव विरलवर्ण)

सूर्य, यम, वाक पौर पञ्च महामूल यमायम
 कर्मके साधो हैं।

कर्मसाधक (सं० स्त्री०) कर्मसाधयति निष्पादयति,
 कर्मसाध-क्यत्। कार्यनिष्पादक, काम बनायेवाका।

कर्मसाधन (सं० स्त्री०) कर्मसाधनं सम्पादनम्,
 ६ तत्। १ कार्यको सिद्धि, कामकी तकमील।
 २ यथादिके सिद्धे पावम्बक इव, बिद्यो मज्जवी
 कामकी कटरी बीज।

कर्मसिद्धि (सं० स्त्री०) कर्मसाध सिद्धिः, ६ तत्।
 कर्मके इष्ट वा फलित परकी प्राप्ति कामवाको।

कर्मसूत्र (सं० स्त्री०) कर्म एव सूत्रम् । कर्मरूप
सूत्र, कामका सिद्धिसिला ।

कर्मस्य (सं० त्रि०) कर्मणि तिष्ठति, कर्मन्-स्या क ।
कर्ममें नियुक्त, काममें रहनेवाला ।

कर्मस्वक्रियक (सं० त्रि०) विषयमें अपने कर्मको
रखनेवाला (धातु), जो (मसदर) अपना काम
सुद्धेमें रखता हो ।

कर्मस्वभावक (सं० त्रि०) अपना भाव कर्ममें रखने-
वाला (धातु), जिस (मसदर) की हालत सुद्धेमें रहे ।

कर्मस्थान (सं० स्त्री०) कर्मणः स्थानम्, ६-तत् ।
१ कर्मक्षेत्र, कारखाना, कामकी जगह । २ ज्योतिष-
शास्त्रोक्त जन्म अवधि दशमस्थान ।

कर्महीन (सं० त्रि०) १ शुभकर्म न करनेवाला,
जो अच्छा काम करता न हो । २ मन्दभाग्य, कम-
वस्तु, अभागा ।

कर्महेतु (सं० त्रि०) कर्मसे उत्पन्न, कामसे निकलनेवाला ।

कर्मा—१ भक्तिमती पतिपुत्रहीना कीर्ति ब्राह्मणकन्या ।
करकार्ण देखो ।

२ युक्तप्रदेशके इलाहाबाद जिलेकी करखाना
तहसीलका एक नगर । यह प्रयागसे ६ कोस दक्षिण
भवस्थित है । यहां महल तथा शुक्रवारको बाजार
लगता, जिसमें पश्चादि, शस्य, तुला और धातुका पात्र
प्रभृति विक्रता है ।

कर्माजम (सं० त्रि०) कर्मसु अजमः असमर्थः,
७-तत् । कार्य करनेमें असमर्थ, निकम्मा, काम न
कर सकनेवाला ।

कर्माङ्ग (सं० स्त्री०) कर्मणो अङ्गम्, ६-तत् । विहित
यज्ञादि कर्मका अङ्ग, कामका हिस्सा ।

कर्मजीव (सं० पुं०) कर्मणा आजीवः जीवनम्,
३-तत् । शिल्पादि कार्यसे जीवनयापन, कामकी संहारे
दिन्दगीका वसर ।

कर्मात्मा (सं० पुं०) कर्मणा आत्मा आत्मभावो
यस्य, बहुव्री० । १ प्राणी, जानवर ।

“तद्धिन् सपति तु सख्ये कर्मात्मानः शरीरिणः ।” (मनु)

(त्रि०) कर्मणि आत्मा मनो यस्य । २ कर्मासक्त-
चित्त, काममें दिवकी लगानेवाला ।

कर्मादान (सं० पुं०) जैनशास्त्रानुसार व्यापारविशेष ।
यह १५ प्रकारका होता है—१ इन्द्रनाकर्म, २ वनकर्म,
३ साकटकर्म, ४ भाडीकर्म, ५ भ्कोटिककर्म, ६ दन्त-
कुवाणिक्य, ७ लाक्षाकुवाणिक्य, ८ रसकुवाणिक्य,
९ केशकुवाणिक्य, १० विषकुवाणिक्य, ११ यन्त्रपीडन,
१२ निर्लाञ्छन, १३ दावाग्निदानकर्म १४ शोषणकर्म
और १५ असती पाचन । चायकको कर्मादान करना
न चाहिए ।

कर्मादि (सं० पुं०) कर्मण आदिः, ६ तत् । कार्यका
प्रारम्भकाल, कामका आगाज ।

कर्माधिकार (सं० पुं०) कर्मका स्वत्व, कामका हक ।

कर्माधिकारी (सं० पुं०) कर्मणि अधिकारोऽस्यस्य,
कर्मन्-अधिकार-इति । कर्मका अधिकार रखनेवाला,
जिसे कामका इस्तिहार रहे ।

कर्माध्यक्ष (सं० पुं०) कर्मसु अध्यक्षः, ७-तत् ।
कार्यका अध्यक्ष, जो काम कारनेवालेका काम
जांचता हो ।

कर्मानुबन्ध (सं० पुं०) कर्मणः अनुबन्धः संयोगः
लेशो वा, ६-तत् । कर्मका संयोग, कामका लगाव ।

कर्मानुबन्धी (सं० त्रि०) कर्मका संयोग रखनेवाला,
काममें लगा हुआ ।

कर्मानुरूप (सं० त्रि०) कर्मणः अनुरूपः, ६-तत् ।
१ कर्मसदृश, कामसे मिलताजुलता । २ कर्मोपयोगी,
कामके लिये अच्छा ।

कर्मानुरूपतः (सं० अव्य०) कर्मके अनुसार, कामके
सुताधिक ।

कर्मानुष्ठान (सं० स्त्री०) कर्मणः अनुष्ठानम् ६-तत् ।
कर्मका अनुष्ठान, कामका इनसिराम ।

कर्मानुसार (सं० पुं०) कर्म अनुसरति, कर्मन्-अनु-
सृ-धञ् । कर्मका फल, कामका मिलाव ।

कर्मानुसारतः (सं० अव्य०) कर्मके फलसे, कामके
मिलावमें ।

कर्मान्त (सं० पुं०) कर्मणः लोबकृत सुकृत-दुष्कृत-
क्रियायाः यदा कर्मणः कृपिकार्यस्य तत् फलस्य
धान्यादिसंग्रहरूपक्रियायाः अन्तो यत्र, बहुव्री० ।
१ कर्मस्थान, कामको जगह । २ कर्मका अन्त,

उत्पन्नः । १ कृषि, खेती, । २ जीविका, रोजगार ।
३ करीषाग्नि, सूखे गोबरकी आग । (स्त्री०)
४ कृत्रिम छुद्र जलाशय, छोटा बनाया हुआ तालाब ।
५ नदीमात्र, दरया । ६ इटिखाल, पक्का गड्ढा । इसमें
यज्ञीय अग्नि स्थापन करते हैं । ७ नहर ।

कपर्देद (सं० पु०) खेदविशेष, किसी किष्मका
पसेव । स्थानकी देख एक गड्ढा खोद लेते और उसे
द्वैत अधुम अन्नारसे पूर देते हैं । फिर उस पर पलंग
विच्छाकर सोनेसे पसीना आता और शरीर इनका पड़
जाता है । (वृहत्)

कर्हिं (सं० अव्य०) किम्-हिंल् कादेशः । वनयतने
हिंलभतरस्याम् । पा ५।३।२। किस समय, कद ।

कर्हिंवित् (सं० अव्य०) कर्हिं च चिच्च, इन्द्र । किसी
समय, कभी न कभी ।

कल (सं० पु०-स्त्री०) कर्द्धति मायति अनेन, कर्द्ध-
घञ् डस्योरिकत्वम् । इत्य । पा ३।३।२। १ शूक्र,
वीर्य । २ शालवृक्ष, सालका पेड़ । ३ वदरीगुल्म,
वेरका भाड़ । ४ मधुरास्फट ध्वनि, मीठी और समझ
न पड़नेवाली आवाज । ५ चार मात्राका अवकाश ।
(त्रि०) ६ अजीर्ण, कच्चा । ७ अव्यक्त, समझ न
पड़नेवाला । ८ मधुर वा निम्नस्वरयुक्त, मीठी या
नीची आवाजवाला । ९ दुर्बल, कमजोर ।

कल (हिं० स्त्री०) १ कल्पिता, सेहत, पाराम ।
२ सुख, चैन । ३ सम्तोष, तसल्ली । ४ आगामी
दिवस, आनेवाला दिन । ५ गत दिवस, गया हुआ
दिन । ६ भविष्यत् काल, आयिन्दा वक्त । ७ पार्श्व,
पहलु, और । ८ अङ्ग, पुरजा । ९ कला, टङ्ग ।
१० यन्त्र, औजार । ११ बन्दूकका घोड़ा । (वि०)
१२ काला, स्याह । यह शब्द विशेष्यके पहले यौगिक
रूपसे आता है । यथा—कलमुंहा ।

कलदया (हिं० स्त्री०) १ कलावाली, कलैया । २ करती,
काट कूट, तोड़मरोड़ ।

कलई (प्र० स्त्री०) १ रङ्ग, रांगा । २ रङ्गलेपन,
रांगेकी पीत । यह वरतनपर कसाव न लगनेकी
षट्पायी जाती है । ३ वर्णक, रंग, वारनिश । ४ आवरण,
चमक, देखाव । ५ चूर्णखण्ड, चूना ।

कलईगर (फ़ा० पु०) रङ्गलेपन चटानेवाला, जो
कलई करता हो ।

कलईदार (फ़ा० वि०) रङ्गलेपनविशिष्ठ, कलई
किया हुआ ।

कलक (सं० पु०) कलत्, कल्-ग्वल् स्वार्थे कन् ।
१ शकुलमत्स्य, एक मछली । २ वैतसट्टव, वैतका
पेड़, किलक ।

कलक (प्र० पु०) १ दुःख, रज्ज, सीच । २ व्याकुलता,
घबराहट ।

कलक (हिं० पु०) कल्क, चूरन । कल्क देखो ।

कलकण्ठ (सं० पु०) कनप्रधानः कण्ठो यस्य ।
१ कोकिल, कोयल । २ हंस । ३ पारावत, कबूतर ।
४ शुकपत्नी, तोता । ५ कलध्वनि, मीठी आवाज ।
(त्रि०) ६ कलध्वनिकारी, मीठी आवाज निकालनेवाला ।

कलकत्ता—भारतका सर्वप्रधान नगर । यह अक्षा०
२२° २४' उ० अर देशा० ८८° २४' पू०में भागीरथी
नदीके पूर्व तट पर अवस्थित है । इसकी भूमिका
परिमाण २७२६७ एकर और लोकसंख्या प्रायः
१० लाख है । पहले यह भारतकी राजधानी रहा ।
किन्तु १८१२ ई०के दिसम्बर मास राजधानी दिल्ली
चली गयी ।

वर्ष १५८६ ई०की सम्राट् अकबरके प्रधान
सचिव अबुलफज्जलके वनाये आईन-इ-अकबरी ग्रन्थमें
कलकत्तेका प्रथम ऐतिहासिक उल्लेख मिलता है ।
इससे पूर्व अन्य किसी ऐतिहासिक ग्रन्थवा प्रामाणिक
ग्रन्थमें कलकत्तेका नाम नहीं आया । अकबरके राजस्व-
सचिव टोडरमलकी वनायी तालिका बङ्गदेशको कई-
भागों या सरकारोंमें बांटती है । कलकत्ता सातगांव
सरकारमें रहा, कलकत्ते, बारवाकपुर और बकुया
तीनों महालोंसे २३४०५) ६० राजस्वरूप वादशाही
कोषमें जमा होता था ।

आईन इ-अकबरी बननेके पीछे और बङ्गदेशमें
युरोपीयोंका संस्त्रव लगनेसे पहले किसी मुसलमान-
इतिहास-लेखकके विरचित पुस्तकमें कलकत्ता शब्द-
देख नहीं पड़ता । किन्तु बङ्गकवि कविकवच्य सुकुन्द-

राम चन्द्रवर्माके चण्डीमठके बसवत्सेका बनेक है । सभ्यवत् १८६६ याकको सबाद पञ्चवर्षके सिंहासना कट्ट बनिदे बारह वर्ष पाहसे बन्न पन्व बना बा । बचिक बनपति पीर उनके पुत्र श्रीमन्त सीदागारके समुद्रयात्राको बसवत्से पट्ट बनिबो कया है । पतएव पञ्चवर्षके भी पनेक पूर्व बसवत्ता बर्तमान बा । किन्तु नाममें छुन्न मङ्गलक पहता है । फाइन र पञ्चवरोमें बसवत्ता मङ्गलके घामोका नाम नहो । फिर उषी समयके सस्कृत पञ्चकारमें बसवत्सेको बिलकिला लिखा है । मगधाधिप बेजलराजको समके पण्डित कविरामने 'द्विचित्रयथायाम' नामक पुस्तकमें बिलकिलाका विवरण दिया है । उनके मतसे भी बिलकिलामें पनेक घाम बसते हैं । भीके कविरामका विवरण लहत है,—

पश्चिम बरकती पीर पूर्व यमुना नदीके मध्य २१ योजन परिमित बिलकिला भूमि है । यह दो भागमें विभक्त है । दानगली नदीके पश्चिम बङ्गाके निम्नट भाङ्गेश्वरी देवी निरावती है । यहां बपवास करनेपर छुटादि दाब रोग देवोको लवासे पारोय्य होते हैं । माईय पीर बङ्गबराह (बहुदा) घामके मध्य दीर्घमङ्गा (बुङ्गे गङ्गा)के निम्नट कुबपाक नामक राजा रहते हैं । किसी किसीके बचनासार मङ्गा नदी बिनाई पण्ड्यदेय समूहके मध्य बेहतम बर्ताभूमि है । बर्ता बहलो, पन्निपको, पूगपल (सुपारी) प्रभृति लघु लतक होते हैं । पीठमाभातम्बके मतसे भागीरथी-तौर सती देवोके घरीरसे नामबन्धुको पञ्चुनि बिर पडो बो । बाबो देवोके पसादेके बिलकिलाबायो बन्धान्यबान् रहते हैं । सबक प्रकार मण्डादि लपकनेके लोग इधे बहदेय कडा करते हैं । बर्ता सबक बर्षके लोग निपत रूपसे बसते हैं । बिलकिला पण्ड्य मन्ड है । लोग नालामकार बसुका पय घगाते हैं । स्थानीय देववासिदेके मतसे ससुद्र मयते समय भूमिहलकित सुन्दर पर्यतके मारके बबरा देवोके मोहनको पनन्त देवने निश्चास झाड़ा था । उसी निश्चासका बङ्गोल बर्ता तक पञ्चब, बर्ता तक बिलकिला देम हुआ । सती देवोके बरुके मङ्गाबबान् कुबपाक पीर देव-

पासका नाम भागीरथीके पश्चिम तौर बसा बा । कुब पाकके दो पुत्र रहे—हरिपाल पीर पश्चिपाल । ज्येष्ठ हरिपालने सिङ्गुरदे पश्चिम पयने नामवर बहवायीयुक्त एक मङ्गाघाम स्थापन किया । फिर बर्ता ब्राह्मण, तन्मुभाय पीर साङ्गायि बसा बह राजा बने । पश्चिपाल माईममें त्रिपेकोके निम्नट बङ्गहोप (बाबदा) पीर बसुरहोप (बसुरह)के मध्य जाकर बसे । पश्चिपालके तोन पुत्र थे—हृतभङ्ग, विमाण्य पीर मङ्गाबक शैमिभङ्ग । बह बिलकिलाके पश्चिम योजनान्तर घस-घामके मध्य राजा हो वैव जातिको पालने लये । हृत-भङ्गके पुत्र मङ्गाबक बिरकि सुगन्धि नामक घाममें रहते थे । विमाण्य पूर्वपारको बाब राजाके मन्त्री हुये । उनके बंधवर बङ्गुलने बाघ बरते थे । .. यधोरपाक प्रतापादिब्य भागीरथीके समय पार्थक्य देय समूहके राजा रहे । राजा शैमिभङ्गके चान्दोके में नाना खानके ब्राह्मण बोका राजत्व चलाया । पाक बह दाबो नदीतीर शैमिभङ्गके बंधोद्वय कायल राजा हैं । शिवपुर पीर बासुब (बाबी) घामके मध्य तथा मङ्गेश्वरके निम्नट श्रीरामपुरमें ब्राह्मण रहते हैं । हुगलीके निम्नट बंधवाडी (बांसवैङ्गिया) प्रभृति घाम हैं । बर्ता बलापि नदी दामोदरके निम्नट गङ्गामें या गिरो है । बबयानि घाममें शौर राजाका राजत्व है । पाककक मङ्गा पीर यमुना नदीके मध्य पाटखिघाम कायल्य पश्चि-बिपेके पबोल है । गोविन्दपुरादि घाम, मङ्गबिकक, बाबो देवीके निम्नटय नगाकदाह (सियालदा) पीर वारपबिने मो कायलकोका कायल बबता है । सब मिलाकर ३००० घाम बिलकिलामें बसते हैं । बिजसारातम्बके प्रथम पटनमें बिलकिलाके शिव बङ्गुका विषय लिप्यपित है । इसो तन्बके मतसे बिलकिला देवामन्त्रांत मङ्गहोप नगरके ब्राह्मणबर्षमें मङ्गोघन (नेतन्वदेव) पीर बहमद घामक बाङ्गायि पण्डितके घर निवान्म बन्न बोने । १७

* "बनिने बरकतीजीका पूर्व बर्ताबिकला मन्ड । एतके नदीतीरके चण्डी विषयलिप्यपित । १८६६

होनेकी आशङ्का पर सूवेदारीकी चारो ओर सैन्य संग्रह करने लगे। यह सैन्यदल फौजदारके अधीन रहनेकी हुगली भेजा गया। इधर सन्धिकी बात चलती ही थी। किन्तु १६८६ ई०की २८ वीं अक्तोबरकी हुगलीके बाजारमें अंगरेज, पक्षीय कई सैनिकोंसे नवाबके कुछ सैनिक लड़ पड़े। इसमें तीन अंगरेज मरे थे। फिर एक कुछ युद्ध होने लगा। कई घण्टे लड़ने पीछे नवाबके सिपाही विस्तृतलता वग अंगरेजोंसे हारे। सर्व प्रथम अङ्गरेज इसी युद्धमें नवाबसे लड़े थे। फिर अङ्गरेजोंने हुगली नगर आक्रमण किया। जहाजी वेड़ेके अध्यक्ष भाडमिरन निकलससन जहाजसे नगरपर गोले मारने लगे। इससे हुगलीके कोई ५०० घर गिरे थे। अंगरेजोंने नगर लटनेकी आशङ्का प्रकाश किया, किन्तु जव-चारनकने रोक दिया। अन्तकी लटने न देने कारण डाइरेक्टोंने जव-चारनकका तिरस्कार किया था। उन्होंने कहा— यदि अङ्गरेजोंको आप नगर लूटने देते, तो नवाबके सिपाही और देशी लोग हमारा प्रभाव समझ लेते।*

अङ्गरेज जीतकर युद्धसे हट गये। फौजदारने हर कर सन्धिका प्रस्ताव उठाया था। सन्धि होनेपर स्थिर हुआ,—जव तक सन्ध्याके निकटसे नया फरमान न निकलेगा, तब तक पहली सनदके अनुसार अङ्गरेजोंका वाणिज्य चलेगा और नवाबको क्षतिपूर्णके लिये ४६ लाख रुपया देना पड़ेगा। सन्धि करने पीछे सुसलमान भीतर ही भीतर युद्धका आयोजन लगाने लगे। नवाबने टाका, मालदह, पटना और कासिम-बाजारकी कोठियां लूट अङ्गरेजोंको बन्दी बनाया था। फिर १६८६ ई०के दिसम्बर मास नवाबने सैन्य लूटा हुगलीको भेज दिया।

अङ्गरेजोंने यह सैन्य संग्रह देख परामर्श किया— हुगलीमें रह इस प्रकार नित्य उत्पीडित और क्षतिग्रस्त होनेसे वही कोठी उठा लेना युक्तिमङ्गल है।

अन्तकी हुगलीसे कई कोस दक्षिण गङ्गाके पूर्व पार सूतानूटी जाना ठहर गया। यह स्थान अनेक कारणसे सुविधाजनक देख पड़ा। उस समय गङ्गाके पश्चिमी तीर चन्दननगरमें फरासीसी और चंभुडामें शोनन्दाज कोठी चला समुद्रके नैकस्थ वग अपना वाणिज्यव्यवसाय बढ़ाये थे। इसीसे अङ्गरेजोंने भी सोचा,—गङ्गाके दक्षिण किसे स्थल पर वाणिज्यको प्रधान कोठी बना समुद्रसे आने-जानेकी सुविधा लगनेपर हमारा वाणिज्य भी अधिक चलेगा। वाणिज्यका केन्द्र होते भी सागरसे दूर पडने पर हुगली विदेशीय वाणिज्यके लिये विशेष लाभदायक न थी। नवाबी अत्याचार, वाणिज्यतरीके गमनागमनकी विग्रहपुसुविधा और मराठोंके आक्रमणसे सुकू रहनेके लिये अङ्गरेजोंने एकवारगी ही गङ्गाका पश्चिम कूल छोडना चाहा।[†]

सूतानूटी स्थानकी अङ्गरेज बहुत पहलेसे जानते थे। बङ्गोपसागरसे हुगली जातेआते समय गङ्गाके उभय कूलस्य सकल स्थान अङ्गरेजोंने खूब देखे-सुने। हुगली छोडनेका परामर्श स्थिर होते स्थानानुसन्धानके समय उन्हें वाणिज्यकी बडी कोठी चलानेको सूतानूटी सबसे बढकर स्थान समझ पड़ा।

प्रथमतः हुगलीके फौजदारसे सर्वेदा महर्षेण न रहनेकी बात थी। द्वितीय भागीरथोका गर्भ दिन दिन सृत्तिकासे पूरते जाता था। उससे कुछ समय पीछे हुगलीके नीचे जहाज लग न सकते। सूतानूटीमें वह आशङ्का विलङ्घन न थी। तृतीय फरासीसियोंसे अङ्गरेजोंकी शत्रुता बढी। चन्दननगरसे वही बडी वाणिज्यतरी हुगली ले जानेके विषय भय था। चंभुडा और चन्दननगरसे दक्षिण पडते सूतानूटीमें उस भयकी सम्भावना न रही। चतुर्थ समुद्र निकट था। पञ्चम गङ्गा नदीके पूर्व पार रहते सूतानूटीमें मराठोंके उपद्रवका भय न लगा। पठ जहाजमें ही पर्यटन चढ़ाया उतारा जा सकता था। समझ—गङ्गाको आ न सकनेवाले जहाज बङ्गोपसागरमें ही लङ्घन डाल

* Vide (a) Stewart's History of Bengal, (b) Broom's History of the Rise and Progress of the Bengal Army and (c) Cook's Monthly Mail and Indian Advertiser, Vol. I, or VIII.

† Vide "Some Observations and Remarks on a late publication entitled Travels in Europe, Asia and Africa" by J Price

हिन्दके अजाबमें रहें। उक्त ६ कोसोंके प्रायको पामगुडा
रहति भी हिन्दने येना मामला बडा बासिखर पाक्रमक
बिया। बासिखर पाक्रमकके दिन ही ठाकुराके पुनर्नि
धाकर सनाद दिया—नवाबको पीछ पङ्करीकोके पचीन
पाराकान पधिकार करी। हिन्द यहपाम सेनिको
सम्भावना देख उक्त प्रस्तावमें सन्तत हुये। १६८२ ई०को
१३ वीं दिवसको बह बासिखर जोड़ यहपामको
धोर चले धी। यहपाम सुरक्षित देख पाराकानके
राजाको चक्षुगत कर उन्होंने कार्याहारको रेटा
बगयो। किन्तु राजाके बतार देनेमें विकल्प हुआ।
इसके हिन्दने यहपाम पाक्रमक करनेको ठहरायो।
उन्नेमें पूर्वोक्त हुटे सोम बङ्गालमें जा जोड़ पन्थ सकलको
सम्प्राप्त पङ्कुराके बिये १३ वीं परवरीको यात्रा की।

धीरहले बने इस संवाहसे विगड़ देससे पङ्करीकोको
निकासनेका आदेश दिया था। फिर नाभा सखाचार
हुये। शाबदा-खान्नि उक्त बयसमें पावर जाकर प्राय
जोड़ा। परवरी-खान्नि पुत्र इजाबोम खान् नवाब
बने। बह बड़े सयासुध। उन्होंने नवाब होते ही
सब बन्धो पङ्करीकोको जोड़ दिया धोर सखाटका
आदेश मंगा बयसमें पङ्करीके नामके सिये चारनकको
पत्र लिखा।

१६८० ई०को १३वीं परवरीको पङ्करीके सुता-
सुदोमें पावर कायो रूपसे रहने लगी। बाइगाही
कोपमें शास्त्रिक (१०००) ५० बमा से पूर्वकी मति
बङ्गालके नागा कानोमें कोठो बनाने धोर अचलाय
वाचिन्ध नवानिको (१६८१ ई० डिसेम्बर १००२) बह
चारनकने नवाब इजाबोम खान्से सखाटका दिया
आदेश पाया। पङ्करीकोको सुतासुदोमें अपनिवेश कापन
करनेको अनुमति मिलने भी पूर्वकी बनानेको आशा
न हुयो। फिर १६८२ ई०को १०वीं जनवरीको
चारनक मर गये। डिसेम्बरमें पात्रा रफी धी,—
चारनकके औपनकाय पर्यन्त बङ्गालमें सम्प्राप्तसे पृथक्

अचलाय कायें चलेया किन्तु उनके मरनेपर फिर
जोर्ट सिध्द बाई (सम्प्राप्त)के पचीन रहिगा।

चारनकके मरनेपर सखाट पुनर्बाँर सम्प्राप्तके
पचीन हुआ धीर उक्तका पङ्कुराके सखाटको मिला।
किन्तु इतिहास कमिसारोमिनरक धोर सुपरवाइजर सर
भी मोक्षधरको उन्मुट करन सके। इतिहासे उनके पङ्कुरा
पर ठाकुरी कोठीके पञ्चद पावार पाचक निपुण हुये।

१६८२ ई०को डिसेम्बरमें पात्रासुदो सुतासुदो
बङ्गालके प्रधान एक्स्पेडिटर वासखान ठहरायो गयी।
उस वर्ष सुतासुदोमें २०००) ५० यत्न रवा था।

१६८३ ई०में एक घटना बम तुरोवीय बचिकोंको
विधिय सुचिवा हुयो। योमासिङ नामक पचमानके
बिधी ताहु, कदारने उक्त कानके राजाको मार उक्के-
केबाके पठान सरदारके साहाय्यसे बङ्गालराके सूधे
दारके विपयमें विद्रोहका पन्थ मङ्कवाया था। यह
उक्तप्रोह दवानेको तयोर्थ जोरदार नुबुद्धा पर मार
पङ्क। किन्तु बह मोहता बम हुयकोके बिधिये मान
गये। विद्रोहियोंमें सुचिवा देख हुनकी पधिकार
बिया। योमासिङ बने बङ्गालके पचीनकर बननेका भी
बड़ा उद्योग लगाया था। इसी सुशोभमें पङ्करीके
पोरुम्पान, परासीवी प्रकृति तुरोवीय बचिकोंको
पने अपनिवेश सुरक्षित रखनेके सिये नवाबको अनु-
मति मिला। परन्तु अचलायमें पङ्करीकोका पुनर्
बनने लगा। इतिहासके तत्कालीन राजा विधि-
यमके नामसे पुनर् खड़ा बिया गया।

उपरोक्त घटनासे सम्प्राद धोरुजिब बङ्गालके
सुधेदार इजाबोम खान्पर पचसुट हुये। उन्होंने उनके
सङ्घके पाकिम-उस यानको बङ्गालका सुधेदार बनाकर
मेला था। १८८८ ई०को पङ्करीके बचिकोंमें सुहा
तया विविध उपडोबनादि प्रदानपूषक प्रीति बड़ा
पाकिम-उस-यानसे सुतासुदो, अचलाय धोर योमिन्ध-
पुर तीन पाम प्रद बिये।

• Vide Bruce's Annals of the East India Coy Vol. III, p 143-4
+ Vide Historical and Topographical Sketch of Calcutta, by James Ralphy

उक्त तीनों ग्राम क्रय करनीका विशेष कारण रहा । उस समय अङ्गरेज सूतानुटोमें अपना वाणिज्य स्यान जमानेको आयोजन लगाते, किन्तु उपयोगी भूमि पाते न थे । जमीन्दारको महसूल टे बहु विस्तृत व्यवसाय फैलानेमें असुविधा पडी । फिर नवाबको आज्ञा न होनेसे भूमि कैसे खरीदी जाती । इसनिये अङ्गरेज लोभी अमीम-उम-गानकी चर्घसे मिला कार्योंहारकी चेष्टामें लगे । उस समय अजीम वर्धमानमें थे । मोसन्दालोंने भी अङ्गरेजोंकी भांति विना शुद्ध वाणिज्य चलानेकी आशासे उनके पास दूत भेजा । अङ्गरेजोंने उसीका प्रतिवाद, भूमिक्रय और क्षतिपूरणादिका प्रवन्ध करको मिष्टर वेल्स नामक एक विचक्षण कर्मचारी रवाना किया ।

१६८८ ई०के जनवरी मास वेल्स अजीमके शिविरमें पहुँचे और जुलाई मासके मध्य ही नानाविध अय दे अपना कार्य बना सके । अनुमतिपत्र उषी समय सूतानुटी भेजा गया । किन्तु सूतानुटी, कनकत्त और गोविन्दपुरके जमीन्दार उसमें दीवान्को सही न देख विक्रयसे असम्मत हुये । अन्तको १७०० ई०के जनवरी मास अङ्गरेज दीवान्से अनुमतिपत्र ले पाये । फिर जमीन्दार कोई आपत्ति उठा न सके ।

* सूतानुटीसे दक्षिण कलकत्ता और कलकत्तेसे दक्षिण गोविन्दपुर दो ग्राम गङ्गातीर रहे । आइल इ-चकबरीमें जहाँ सातगांव सरकारमें कलकत्ता मद्रास मिश्रता, वहाँ सूतानुटा या गोविन्दपुरका नाम देख नहीं पड़ता । किन्तु कलकत्तेके साथ एक दशमीमें बारिकपुर और बहुया नामक दूसरे दो मद्रासोंका उल्लेख पाया है । यह निश्चित नहीं—बारिकपुर और बहुया क्या सूतानुटी या गोविन्दपुरके ही परिवर्तित नाम हैं । पदवी आसन्दाज वासिष्ठाइन साहबके मानचित्रकी बात कही जा चुकी है । उसमें गोविन्दपुरके स्थान पर गोरखपुर लिखा है । सिवा आइल-इ-चकबरीके दूसरा प्राञ्चाल अन्य भविष्य ब्रह्मचण्ड है । उस ब्रह्मचण्डमें गोविन्दपुरका नाम देख पड़ता है—

“तावलिप्रर्द्धम च अमीमोसा विराजते ।

गोविन्दपुरप्रान्ते च यानी सुरधर्मोत्तरे ॥”

इसमें स्पष्ट नहीं—वह गोविन्दपुर भागोरखीके नीचे या नीचे स्थित है ।

एतद्व्यतिरिक्त सरलेस यक्ष बनाई और पयाय (१६७५ ई)

‘इतिहास वास्तुशास्त्रा प्रथम ३ दृष्ट यात्रियोंका मानचित्र’ नामक पुनः संस्कारके पार्श्व पर गोविन्दपुर नाम लिखा है ।

बिवारली साहबके लेखानुसार इस तीनों स्थानोंको विस्तृति नदी (भागोरखी) किनारे तीन मील लम्बी और एक मील चौड़ी होगी । किन्तु वॉन्टन कहा—‘यह समस्त स्यान टेर्घ्य प्रथममें डेट मोलम अधिक नहीं ।’ इसका वास्तविक कर (११८४) रु० बङ्गालके नवाबको देना पड़ता था । किन्तु नवाब अजीम-उम-गानने उसे अपने प्रायमें लगा लिया । फिर क्रयसम्बन्धीय सनद पानेपर सूतानुटीके प्रधान वाणिज्य प्रतिनिधिने नन्दनगरके कोर्ट-अप-वाट्सको समाचार दिया । उन्होंने प्रत्युत्तरमें कनकत्तको प्रेसिडेन्सी बना प्रथम खांदा,—प्रेसिडेण्टको २००) रु० मासिक वेतन और १००) मासिक भत्ता मिला । उनके अधीन एक सभा रहेगी । सभामें चार सभ्य बैठेंगे । परामर्श आदि टे वह प्रेसिडेण्टको साहाय्य करेंगे । सभ्योंमें प्रथम हिमाव करनियाना (Accountant), द्वितीय गुदामका रक्षक (Warehouse keeper), तृतीय सामुद्रिक कोषाध्यक्ष (Marine purser) और चतुर्थ राजस्व-ग्राहक (Receiver of Revenues) होगा ।

आयार साहबके विनायत जाने पर बियार्ड साहब कोठीके प्रधान हुये । १६८९ ई०को जब मद्रास एक विभिन्न प्रेसिडेन्सी बना, तब जोहन बियार्ड साहबको ही प्रेसिडेण्टका पद मिला था । किन्तु अल्प दिनमें ही सर चार्ल्स आयार विनायतसे प्रेसिडेण्ट हो वापस आ गये । उस समय बियार्ड साहबको हिमाव करनियाने द्वितीय पद पर लाना पड़ा । फिर हालसे वाणिज्यद्वयाटि (गुदाम)के रक्षक, इवाइट सामुद्रिक कोषाध्यक्ष और राफसेमडन राजस्व-ग्राहक थे । किन्तु आयार साहबके कार्यग्रहण न करनेसे बियार्ड साहब ही प्रेसिडेण्ट बने रहे ।

- Vide Report on the Census of the Town of Calcutta taken on the 2nd April 1876, by Beverly, C. S.

+ Vide Bolt's Consideration on Indian Affairs, 2 ed. 1772 I 60

‡ Vide Orme, Vol II p-17.

§ History of the Rise and Progress of the Bengal Army, by Arthur Broomé, I. 81.

इसके पहले जो बलक पत्र पादि बलकके कोर्ट
 पत्र लिखेहुंको पत्रका प्रचार किया गया, इस पर
 'सुतानुदो' नाम पड़ा था कि 'प्रिंसिपल' नाम पत्र
 कोर्ट 'बिलियम' लिखने लगे। शिवोज नाम पत्रापि
 पत्र रहा है। किन्तु यह निर्णय करना कठिन है—
 सुतानुदो, बलकपत्रा और गोविन्दपुर तीनों पत्रों
 बलकपत्रा नामसे अब प्रसिद्ध हुए। किसे
 किसके मतमें ई० १० में यतानुदो बलकपत्रा नाम
 लिखला था। किन्तु यह मत अज्ञात है। क्योंकि
 १००१ ई०को जो विद्यार्थी पहरेख बलिष्-
 समितिमें (अर्थात् इङ्ग्लिश कम्पनी और ईस्ट इण्डिया
 कम्पनी)के सम्बन्धित होनेको समझ बनो, उस पर
 सुतानुदो लिखी गयी। बलकपत्रेका नाम कहीं नहीं
 लिखता। फिर भी उपरोक्त तीनों पत्रों परी प्रचार
 प्रसिद्धि मिल चुके। [असोनासे (तत्कालीन गोविन्द
 मुन्शी)का जो या आदिनामा]के पारम्परिक रूप
 मान किये तक गोविन्दपुर रहा। यह पत्र कुछ
 काले मराठोंका सम्प्रदाय था। सम्प्रदाय बनने
 परिपूर्ण रहा।

उत्तर बिलतपुरका नाम, (मराठा पाल), पश्चिम
 आसोनाको, इतिहास वर्तमान टकसाल तथा बड़ा बाजार
 और पूर्व कार्यालयिकता कुछ अलग एवं अलग
 रोडका घोड़ा पश्चिमांग सुतानुदो नामके प्रसिद्ध था।
 गोविन्दपुर और सुतानुदोके सम्बन्धों अज्ञानको बल
 कता कहते हैं। ठीक ठीक निर्णय किया नहीं
 जाना, आसोनाको तीसरे पूर्व किछ अज्ञान तक बलकपत्रा
 विस्तृत था। बड़ा बाजार, पयरीया सिर्वा, पीठ
 पश्चिम बलक हाइस प्रसिद्ध स्थान किन्ती बल
 कपत्रेमें रहे। फलतः अब तीनों पत्रों और कई सामान्य
 पत्रियाँ मिल कर यह "सोबमयो नगरी" (City of
 Palaces) बनी है।

१००१ ई०को ज्ञान विद्याके साहजके "सन्निहित

• Historical Notices concerning Calcutta in the days
 of Job Charnock (in Indian and Colonial Magazine)

† यह कल्पिते की प्रतीति किं ई बलकके, कि पञ्जाब, इण्डिया, विद्वान्
 विद्वान् प्रतीति किं बलक पत्र इतकी प्रतीति पत्र है।

पूर्वभारत बलिष्समिति" (United Company of
 Merchants trading in the East India)को
 कहीय समाजे समापति हुई। कोर्ट बिलियम प्रेसि-
 डेन्सीके इलाकेका कार्यसमूह बनानेको समने पचीन
 पाठ समिपनर रहे गये। इस विषयको बलिष्
 समितिसे सम्बन्धित पत्र होनेको सम्पनिर्णिके काम
 पारिष्कोका विवाद न बटा।

इङ्ग्लैण्डके राजागि सन्नाट् पञ्चरके निकट सर
 बिलियम निवासको दूतस्वरूप मेका था, किन्तु इनका
 कार्य निरस्त हुआ। सन्नाट्ने अपने राज्यके मध्य
 समस्त युरोपीयोंका बन्दो बनानेकी आज्ञा निवासी
 थी। पटना और राजबहालका पञ्चरेख सम्पिनेय
 बूटा गया। फिर बलकपत्रेको कूटनेके विषये भी
 दूतस्त्रीके धीरदारने पञ्चरेखोंको भय देखाया था।
 किन्तु विवाद साहजके बलकपत्रेका उत्तमरूपके
 सुरक्षित कर लोखदारके मयपर्यन्तको लपिका थी।
 लोखदारने भी पत्रकाको समस्त बून् विधिप यहइइ
 काटा न था।

१००१ ई०को प्रेसिडेण्ट विद्याके साहज मर गये।
 उनमें पदपर होनेको सम्पनिर्णिके विचार काफ़ करनेको
 इतिहास और शिष्टन साहज नियुक्त हुए। इस समय
 पञ्च ही तोषिके पात्र ११० तुरोपीय विद्याके कोर्ट
 बिलियमको रखा करते हैं। बलकपत्रेको अथवा दिन
 दिन अथरनेपर निर्दिष्ट व्यवसाय प्राप्तिप्य पञ्चानेकी
 पत्रो औरके लोग पाकर रहने लगे। महानगरी
 बलकपत्रेका इसी प्रकार प्रथम प्रथम बना।

पौरुषकेबकी समदके ठहराया—वास्तविक १०००
 १००० दिनपर पञ्चरेखोंका सर्वप्रकार दल्लके प्रत्यावृति
 मिलेगी। किन्तु नवाब सुरमिद कुषोपार्थने पत्राव्य
 व्यवसायियोंकी प्रति अगरेषीके भी डेकेके पोके ११५०
 दल्ल सेनेका पाठा हो। बलकपत्रेके तत्कालीन मयपर
 इतिहास साहजके पञ्चरेखोंके प्रति यथा व्यवहारके प्रति
 विधानकी आगामी दूत मन्त्रके विधि १०११ ई०को
 कोर्ट-पत्र लिखेहुंके पत्रमति की। एक दोस
 कार्यकी कीर्तन-समने तथा ऐतिहासिक नामक हो पत्रि
 कोठीवाक जोका अरबन्द् पुमाविद्या और काखर

दि। उन्होंने बिधा,—'नदी किनारे दक्षिण मोविन्दपुर और उत्तर बराहमरती जम्पनीके उपनिवेशका एक सीमाबिन्दु रखा। इन दोनों बिन्दुका व्यवधान तीन बौंस होमा। भूमिकी धार बापि या खोने किस तक सीमा हो।' पश्चात् निषय कर नहीं सकते—उस समय कलकत्तेको प्रकृत सीमा क्या रही।

१७८२ ई०को माघहर पश्चिमी परिचासनायोग मराठे उद्दीष्टके मैदिनीपुर तथा बर्धमानको राज राज महसुलतक नगर एवं पड़ोषाम बमरुठ रुटने लगी। फिर उन्होंने कलकत्तेके सन्निकट मन्नीरकोषे पार पार टाना बिधा जोन हुयसी कटी। उस समय मन्नीरकोषे पश्चिमपारकाके पश्चिमसिधोने कलकत्तेमें पा थायद सिधा था। मराठोंके शासनपक्षे रखा करनेको पट्टेजोने पूर्व पार करते मो कलकत्तेको बापि धार बिधीको एक गहरी खाई खोदनेके सिधे नवाब पञ्चोददीं ज्ञानुपे पनुमति मंगावो। पुरापुरोके उत्तर पक्षके मोविन्दपुरके दक्षिण पक्ष पर्यन्त खाई खोदनेको बात थी। यह माघमें शुरु होय (तीन मील) भूमि खुवो। किन्तु पञ्चोददींके पञ्चवसाय में मराठे कलकत्तेके १० बौंस दूर ही रहे। इस सिधे खाई खोदना रुक गया। इस खाईको "मराठा खात" (Mahratta Ditch) कहते हैं। म्हामबाजारके निकट दमदमे जाते समय इस खात (खाई)का स्थान मिलता है। परमों साइबके मतातुसार पश्चिमसिधोके दो पतुरोत्र और प्ययने यह खाई खोदी गयी।*

दक्षिण बाइबका कलकत्ता—१७९२ ई०को भी विमुक्तिवा मजुडा, सिर्कापुर (कलकत्तेके एक मजुडे) और हुबनकुडिगामि हुब १०२० बौंधे भूमि को। यह चारी स्थान उपनिवेशको सीमामें न रहने जम्पनीके खोदनेको विधिय शैला जगावो, किन्तु पश्चिमसिधोको बिधो प्रकार सन्धि न पावो।* सुतरां यह कई स्थान कलकत्तेको सीमाधे बाइर से। किन्तु बनिगावोकर, पटलहाया, टांनरा और जलन्द् मिसकर १८८ बौंधे

भूमि कलकत्तेके पक्षमें परिचयत रही। दो वर्ष पोछे पञ्चांग १७९४ ई०को दक्षिण साइबने जम्पनीके बिधि दक्षिण मजिब और नवायय मजिबके १२८)४० भूमिमें विमुक्तिवा खरीद को।*

१७९६ ई०को सितापुरोकाके कलकत्ता पाक्षमय धोर पश्चिम बिधा था। उस समय तकके पादियके (पक्षमयके सिधे) इसका नाम 'पञ्चोनगर रखा गया। फिर पञ्चनूपवन्धा हुयो। दूसरे वर्ष ही जनवरी माघ छारन धोर बाटवने कलकत्ता से लिया। जनवरी, जनवरी और जनवरी १७९७ ई०को ८वीं फरवरीको सितापुरोकाके सिधे चलो। सिधेमें ठहर गया,—"जम्पनीको सन्धि सिधे एक धामोका पश्चिम देना पड़ेगा और शेषमें जमो म्दारीको कोई पञ्चय न रहिया।"

पलायो हुइके पोछे नवाब मीरजाफर नये सूरे धार हुवे। उन्होंने बिधो सिधे द्वारा पट्टेजोको कलकत्तेका मीठको जमोन्धार बना दिया।*

चारी और मीरजाफर देवी।

उस सिधे द्वारा मजबुत मायको छोड़ मीरजाफरने जम्पनीको कलकत्तेको सीमाधे बाइर ११० इयद परिमित भूमि छोयो थी। फिर उन्होंने कलकत्तेके दक्षिण हुइयो तक जम्पनीको जमोन्दारी ठहरायो। मीरजाफरको पाला को—इस पक्षके समस्त जमंधारी जम्पनीके पञ्चोन रहेये धोर दूसरे जमोन्दारीको भाति पट्टेजु मो राजन दे डेगी।*

दूसरे वष १७८२ ई०के दिवम्बर मास परदे सहासतथे ताजुबु या जामोरको तोर पर कलकत्ता जम्पनीके हाय पाया। पञ्चांग पट्टेजु दक्षिणकोमें पपनी कोठो सुरक्षित रखनेका पश्चिम पाया। म्दारीको शिखमाज भी उन्होंने पञ्चोन रहनेके मीरजाफरने ८८१)४० रिहा कर जम्पनीको कलकत्ता,

* Selections from the Unpublished Records of the Government, p. 58.

† Bots & Indian Affairs p. 81.

‡ Rise, Progress and State of the English Government in Bengal, by Henry Verelst, 1772. App. p. 154.

* Orme's History of India, Vol II, p. 15.

† Halwail's Ind. as Tracts, 2nd ed. 1784 p. 140

पाइकाम, मानपुर तथा भमीरावाद चार परगनोंके बीच २० मील और दो बाजार दे लाले। फौजदारीका काम भी इन्हें ही करते थे। मौजोंके नाम यह हैं,—१ गोविन्दपुर, २ मिर्जापुर, ३ चौरङ्गी, ४ धरुन्द, ५ जेलिकोलन्द, ६ बेल्लेडांगा, ७ भानघाटी ८ सियालदह, ९ बाहरविर्जा, १० किसपुर पाडा, ११ बाहर श्रीरामपुर, १२ सूतानुटी, १३ हुगलकुडिया, १४ ग्रिमला, १५ माखन्द, १६ भाडिङ्गी, १७, डिही कलकत्ता। १८ दक्षिण पाइकपाडा, १९ श्रीरामपुर और २० मल्हा खारुकेका मध्यवर्ती गणेशपुर। दोनों बाजार—१ सूतानुटी बाजार और २ गोविन्दपुर बाजार थे।

उपरोक्त ग्रामसे कई मराठा-खातकी सीमामें और कई उससे १२०० हाथके बीच रहे। किन्तु उस समय लोग साधारण बातचीतमें मराठा-खातकी ही कलकत्तेकी सीमा ठहराते थे। फिर भी कम्पनीके २४ परगना लेते समय मराठा-खातसे बाहर पड़नेवाले उक्त स्थान कलकत्तेकी ही सीमामें रहे। उक्त सकल स्थान और दूसरी कितनी ही भूमिको कलकत्ते तथा २४ परगनेसे विभिन्न रख डिही पञ्चान्नग्राम बनाया गया। आजकल जो ग्राम कलकत्ते शहरके महङ्गे समझे जाते, वही पहले डिही पञ्चान्नग्राम कहते थे। १८५७ ई०की २१वें आर्डिनके अनुसार पञ्चान्नग्रामकी समस्त भूमि कलकत्तेमें लगा ली गयी। फिर उसका प्रति सामान्य द्रष्टा था * इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—किस समय कलकत्ते और पञ्चान्नग्रामके मध्य सीमा निर्धारित हुयी। किन्तु प्रथम उठनेपर १८६४ ई०की १० वीं सितम्बरको गवर्नर जनरलने व्यवस्थापक-रुभासे एक आर्डिन^१ निकाल घोषणापत्र द्वारा कलकत्तेकी सीमा ठहरायी थी। संक्षेपमें उसका मर्म नीचे उद्धृत है,—

उत्तर सीमा—भागीरथीके पश्चिम तीर बागुबाजारवाले खालके मुखसे पुराने पावडेके मिल बाजार हो

कर दमदमे जानकी राह पोल (श्यामबाजार पोल)के पाददेश पर्यन्त। पूर्व सीमा—मराठा खातके पश्चिम किनारे अथवा उसके पार्श्वस्थ मार्गके पूर्व किनारे होकर हानसी-बगानके उत्तरकोणसे उक्त खातके दक्षिण किनारेके पूर्वसुख, वहासे खातके उत्तर किनारे पश्चिम सुख, उक्त स्थानसे खातके पश्चिम एवं वैठकखाना राहके पूर्व किनारे दक्षिण और मराठा खातकी शेष सीमा होकर राजा रामलोचन बाजारकी कोने अथवा नारायण चाटुर्यी सड़ककी ठोक विपरीत और बेल्लेघाटाको सड़क जाने तक। फिर मिर्जापुरके बीच वैठकखाना सड़कके पूर्व किनारे होकर और पोतुंगीजोंके गोरस्थानकी पूर्वदिक् छोड़ वैठकखानेके प्राचीन सुविख्यात बृक्ष तक, अर्थात् बह्मबाजाररोड और वैठकखाना बाजारकी विपरीत और सड़कके दोनों पार्श्व वैठकखाना राहके पूर्व किनारेसे गोपो-वाटके बाजार और वहासे सीधे चल उक्त राहकी पश्चिम मोड़ तक। वहां डिही श्रीरामपुर पूर्व तथा दक्षिण पूर्व छोड़ कुछ दूर आगे बढने पर पूर्व सीमा शेष हुयी है। कलकत्ते शहरके प्रोटेस्टाण्टोंका तत्कालीन गोरस्थान, चौरङ्गी और डिही विर्जा इन्ही सीमाके अन्तर्भूत थी। दक्षिण सीमा—उक्त स्थानसे वाम दिक् घूम डिही विर्जाके अन्तर्गत बनियापोखर या एंग्लियापोखर सीमारेखाके मध्य छोड़ पश्चिमामिसुख चौरङ्गीके बड़े मार्गसे विपरीतदिक् रसापागला सड़कसे लेकर पुलिष थाने और साधारण अस्पतालके मध्य मामूली सड़ककी दक्षिण ओर थोड़ी दूर चल पुनर्वार पश्चिमसुख साधारण अस्पताल, पागलागारद तथा डिही भवानीपुरके अस्पतालका गोरस्थान छोड़ अलीपुरके पाददेश पर्यन्त। यहासे कलीपुर पुलके दक्षिण होकर टाली नाले (आदिगङ्गा)की उच्च जलरेखाके पार तक। फिर क्रमान्वयसे आगे बढ़ खिदिरपुरके पुल होकर विटनजा डक छोड़ आदिगङ्गाके मुख तक (जहां भागीरथीसे आदिगङ्गा मिली है)। उक्त स्थानसे ठोक सामने चल नदीके अपर वा पश्चिम पार मेजर किडवाले बागके दक्षिण-पूर्वकोण (उक्त बाग और शिवपुरकी छोड़) पर

* Census Report of Calcutta, 1876 by Mr. Beverly.
+ 159th Section Cap. 52 of the Act passed in the
23 year of His Majesty's reign

केब सीमाका अन्त है। पश्चिम सीमा—शीघोख नामके लडाखर भागोरकोषके पश्चिम तीर निम्न अन्त भागके विन्ड हो नामका रामकृष्णपुर, हावड़ा और लखिबाबाट रोड चितपुरबासी पुनकि निम्नट (जहोकि बिम तीर) पूर्वीक आधरपुरमें बरनेस राबर्टसनके गणके उत्तर कोण होकर गेप हुको है।

पूर्वकबित बिबि (Act 56)के अन्तसार खानोय बरनेसके सीमा बहबनेको सभम यो। बिन्नु कल सेको सीमामें फिर कुछ औरचेर न हुआ। बिन्नु अन्त नहीँ—बिस समय बहबकते और पद्दाबपाम मयको सीमा ठहराको सको। १८८३ ई०को चोपचा न निम्नकनेके इस सीमाके सम्बन्धमें कुछ मद्रक हुआ। ज्योकि एहमें पूर्व सीमाके सिधे सिधा बा— जहाँ तक मराठा घात देल पड़ता, वहीँ बहबकतेको सीमाका अन्त मिकता है। बिन्नु न तो यह बात सम्बन्ध छोदा गया और न मङ्गुराबाफार पड़बके सिधे इसका कोई विन्ड देल पड़ा। यधेधे पागि रङ्गुराबर रोड (एह समय इसको बेटकथाना रोड कहते थे) और सरङ्गुराबर रोडके पादिगङ्गाके दक्षिण तट सीमा लगी है। अह समय नहीँ सको १८८३ ई०को जहाँ तक पूर्वदक्षिण सीमा रही। १८७० ई०को अहबकोका को मानचित्र बना, एहको नापमें सभ्यतः अन्त था। अहका बहबकतेको सीमा एह समय सम्बन्ध अन्त थी। एह मानचित्रमें एहकेनेकेकी मूमिडा रिमाय पदको नापके बिसकुछ पाबा बना है। फिर १८८२ ई०को 'बोबर जसपिटाक बामिरी'के समय अहबकदानमें आठर निम्नकोसग पाहबने कहा था,— १० यधर पूर्व आधरप तथा सामरिक पधतकके गण मोड दक्षिण एह अन्त मानित बा। एहमें केधा रहा—यहाँ पोर्ट बिबियमका एहकेनेके गेप हुआ है। एह अन्त यह निम्न बरना पतोब सुकठिन है—बिस समय बहबकतेको का सीमा को।

पादिगङ्गा और भागोरको सङ्गमके सुध पर एक धेतु है। यह सारसिध पत्र शिङ्गुराके प्रायग बाक साधारण अन्धेरी बना था। इसीके लडाका नाम 'हेटिङ्गम त्रिभ' पड़ा। लिरिपुरके अन्त धेतु पार कर कुबोडाबाबर जाना पड़ता है। जहाँ गबरनेसके कामसियटके सुदाम है। १८०१ ई०को १ मी पयध को आह्वय बंधके महाराज मन्डकुमारने यहाँ पायी पायो यो। अन्तकार हैको।

बतेमान पकोपुरके धेतुके कोडो दूर दो लव रई। एहके नीचे बरनेस हेटिङ्गम और सर बिबिय प्राण सिधु का अहबहुक हुआ। पकोपुरके सामरिक पधताक में पदसे सदर दीगामी या पकोको पदानत लयती थी। जहाँ पदाकतधे मिल जानेपर एह भवनमें सामरिक पधताक (Military Hospital) को मया। भवनके पूर्व गगरके सामने पागका नारद और साधारण बिबिसाखन (General Hospital) रहा। शीघोख भवन पदके बिबो जनीडा नाम था। योके १८८६ ई०को गबरनेसकेने कडे मोड से साधारण बिबिसाखन स्थापन किया।

एह बिबिसाखनके कुछ पूर्वदिक् पानिपर बोरङ्गी नामक मार्य है। यह चितपुरके कासीबाट तट बिधुत है। पदने यामो चितपुरमें बिनेसरोका दर्शन कर कासीबाट जाती थी। बोरङ्गीके पश्चिम बिबिबा मेदान और पूब सध्यान्त पङ्कुरेजेके एहकेका स्थान है। पूर्व-बासको यह स्थान और मेदान बिबिङ्ग पनये पाण्डुव था। बन्ध बराब स्थान प्रधति बिन्धक अन्त एहमें अरे रई। एहके मध्य दुदानत काङ्गुकोका पछा था। पङ्गुयन्त न सेकर इस पधमें बनना कठिन रहा। बिबो बिबोके बहबानुसार एह समय यहाँ कोले नाकके एक सिधे बास करते थे। एहका नाम बोरङ्गी हठयोमी रहा। इसीके खोग इस राहको बोरङ्गी कहते हैं। परन्तु बोरङ्गी नाम पश्चिम दिग्नाका प्राचीन समय नहीँ पड़ता। १८७८ ई०का मत्राब मौज्यावरके पुम मोरनेके एक सनके दी को। एहके एक पधमें एहके पदके बोरङ्गी मोमेका नाम लिखा गया। एह समय यह स्थान कुछ परगने बहबकत और कुछ परगने पार

• Selections from the Calcutta Gazette, Vol. II by V B Selan Karr, O S p 122.
 † Census Report of Calcutta, 1876, by H, Beverly Esqr O, S p, 84

कानमें लगता था। १७५७ ई०की यहाँ वन परिष्कार होने लगा। चौरङ्गीकी वर्तमान समस्त सीधमाला प्राधुनिक है। तत्सामयिक आपजान साहबका मानचित्र देखतेही समझ सकते—१७८४ ई०की यहाँ कुल २४ मकान थे। उस समय यहाँ (वर्तमान मिडलटन रो नामक गलीके 'लोरेटी हाउस' नामक मकानमें) सर इलाइजा इम्पो रहे। उनके मकानके निकट पुष्करिणी (भील) थी। यह भील पूरते समय साङ्घातिक विशूचिका रोगका सूत्रपात हुआ। इसीसे वर्तमान 'मिडलटन रो' नामक मार्ग कुछ दिन 'कालरा ट्रीट' या विशूचिकामार्ग (डिजे की राह) कहा गया। यह समस्त स्थान इम्पीके उद्यानमें रहे।

कलकत्ता नामकी उत्पत्ति।

कलकत्ते नामके सम्बन्ध पर लोग अनेक कथा कहते हैं। उनमें दो एक बात हम सुनाते हैं।

१ प्रवाद है—सर्व प्रथम एक अङ्गरेज यहाँ आये थे। उन्होंने किसी दूसरेको न देख एक छाषकसे इस स्थानका नाम पूछा। वह अङ्गरेजी बोली समझ न सका। उसने अपने मनमें सोचा—साहबने मेरे धान्यके विषयमें प्रश्न किया। इसीसे वह कह उठा—'कल काटा' अर्थात् कल धान्य काटा था। वस साहबने इस स्थानका नाम 'काल काटा' ठहरा लिया।

२ लङ्ग साहबके कथनानुसार सम्भवतः मराठा खात अर्थात् 'खाल काटा'से कलकत्ता नाम निकला है।

३ किसी किसी विचक्षण अङ्गरेजके मतमें 'कलिचूण'से कलकत्ता नामकी उत्पत्ति है।

४ कोई कालीघाट शब्दको कलकत्ते नामका आदिरूप बताता है।

ऊपर लिखी सब बातें हमारी विवेचनाने युक्तियुक्त वा प्रामाणिक मानौ जा नहीं सकतीं।

अङ्गरेजोंके आगमन और मराठा-खातके खननसे पहले कलकत्ता विद्यमान था। क्योंकि यह बात अबुल फजलके फार्देन-इ-अकबरकी ग्रन्थमें देख पड़ती है। सुतरा 'काल काटा' प्रवाद और खाल काटा'से कलकत्ता नाम बसाना अत्यन्त उष्ण मस्तिष्ककी कथा है।

कालीघाट शब्दसे भी कलकत्ता नाम नहीं निकला। क्योंकि भारतीय नाना स्थानके प्राचीन तथा प्राधुनिक जनपद नगरादिका नाम मनोयोगपूर्वक देखनेसे समझा जा सकता—कालीके स्थानमें 'कल' और घाटके स्थानमें 'कत्ता'की तरह अपभ्रंश वा नाम परिवर्तन कभी नहीं पड़ता। विशेषतः कालीघाटके स्थानमें कलकत्ता वनना शब्द शास्त्रके नियमसे सम्पूर्ण बहिर्भूत है। भारतमें जिस स्थानके नामसे पहले 'काली' शब्द आता, वह भारतवासियों क्या सुसलमानोंके द्वारा भी विभिन्न बोला नहीं जाता। सुतरा यह अर्थोक्तिक सिद्धान्त एककाल ही छोड़ना उचित जंचता, कि कालीघाट नामसे 'कलकत्ता' वनता है। कालीघाट देखो।

इस नगरकी देहाती बङ्गाली 'कोल्काता' और हिन्दुस्थानी 'कलकत्ता' कहते हैं। बंगला भाषामें 'कलिकाता' लिखते भी 'कोनिकाता' बोला जाता है। हमारे एक विश्वस्त बन्धुने 'कोल्का हाता' या 'कोलिका हाता' नामसे 'कलकत्ता'की उत्पत्ति मानी है। उनके अनुमानानुसार प्राचीन कालको कोल अथवा कोलि जातिके लोग यहा नदी किनारे रहते थे। सम्भवतः उन्हींके वास करनेसे कोल्काता या कोलिकाता नाम पडा गया। संस्कृत, प्राकृत, पालि और द्राविड़ भाषामें 'कोल' शब्दका अर्थ शूकर मिलता है। फिर सुन्दरवनमें परिणत रहते समय कलकत्ता भी विस्तर शूकरोंसे भरा था। अनुमानमें उसी समयसे इस स्थानका नाम 'कोल्काता' चला है। अकबरके समय (सम्भवतः उसके भी पूर्व) कलकत्ता महालके प्रान्तवर्ती नीच लोग शूकर पकड़नेका व्यवसाय करते थे। वराहनगर* इस व्यवसायका प्रधान स्थल था। ओलन्दाजों और फरासीसियोंकी ईष्ट इण्डिया कम्पनीका इतिहास पढ़नेसे अनेक स्थलमें इस बातका प्रमाण मिलता है। फिर भी निःसन्देह कहा जा नहीं सकता—शूकर अथवा

* वराहनगर नाम प्राधुनिक नहीं। प्राचीन ओलन्दाजों तथा फरासीसियोंके पुस्तक और अङ्कुर बादशाहकी समसामयिक कवि साधवाचार्यके चण्डीग्रन्थमें वराहनगरका उल्लेख विद्यमान है।

कीज्जातिसे नामसे कलकत्ता यह लिखता है।
 कहते हैं यह विवेचना करना चाहिये—कैसे कलकत्ता
 नाम पड़ा था।

प्रायःकलकत्ताको कलिजाता और हिन्दुखानो
 कलकत्ता कहा करते हैं। हिन्दु प्रायःकलकत्ता इस बात
 पर बड़ा सन्देह है—कलकत्ताके समयमें एवं यह
 ऐसीके नामसे पहली इन खानको क्या प्रकृतकप
 कलिजाता प्रथम कलकत्ता कहते थे। इस पूर्व
 कलकत्ता—पार्लेन इ. कलकत्ताके 'कलकत्ते महाल'
 और कलिजातके सुदृष्टि बज्जीयन्तमें 'कलिजाता'
 नामका उल्लेख मिलता है। हिन्दु दूसरा विषय बिन्दाट
 यह उपस्थित हुआ—एशियाटिक सोसाइटीके प्रथम
 प्रकाशित पार्लेन-इ. कलकत्ताके प्रथम सातमास सर
 कारके बीच कलकत्ता महालके उल्लेखसे नीचे
 'कलका', कलका' 'तकवा' आदि पाठान्तर पड़ा है।
 फिर सुदृष्टि पुष्पकमें रक्षी भी कलिजात-रचित
 'कलकत्ताको कई प्राचीन गोविन्दोंमें 'कलिकाता' नाम
 नहीं मिलता। जिवा इ.के कलकत्ताके समयमें कलि
 कलि माहावाचावके चलो प्रथम कलकत्ता एवं
 श्रीमन्तको समुद्रप्रायके वर्षान्तर कलकत्ता,
 कलकत्ता, कलकत्ता प्रकृति पाञ्चम खानोंका उल्लेख
 पाया है। हिन्दु कलकत्ता नाम उसमें भी दिख नहीं
 पड़ता। ई.इ. इ.के कलकत्ताके प्रथमि उल्लेख
 सर्व प्रथम १६८८ ई.के १६वें भगवन्तको कलकत्ता
 (Calcutta) नामका उल्लेख मिलता है। इसलिये
 बड़ा सन्देह उपस्थित हुआ है—ई. १६ के प्रथमके
 पूर्व कलिजाता या 'कलकत्ता' नाम प्रथम का या
 नहीं। कारण पोल्कन्दास बाशिष्ठाइनके मानचित्रमें
 प्राचीन कलकत्ता प्रथमके समय पाञ्चम बिन्दाटो
 (वा सुगाटो) और गोवर्धपुर (वा गोविन्दपुर)का
 उल्लेख पड़ा है। हिन्दु कलकत्ताका नाम नहीं नहीं।
 फिरभी दूसरे खान पर बाशिष्ठाइनने किसी एक
 कत्ता (Calcuta) प्रथमके बात लिखी है। कलकत्ता
 यह पाञ्चम एक खानको 'शोकपावो' प्रथम
 करते हैं। कलकत्ताके समय किसी प्रतिप्राचीन समुद्र
 यात्रीके मानचित्रमें 'कलकत्ता'के खान पर कलकत्ता

(Calcutta) लिखा दिख पड़ता है। फिर टामस
 किलेन नामक किसी भौतिकीके कलकत्ता (Calcutta)
 को बगइ 'कलकत्ता' (Calcuta) नाम व्यवहार किया
 है। दूसरे कलकत्ताको 'शोकपावो' मानते भी
 पाण्डित्य प्रथमके समय पड़ता—किसी समय
 कलकत्ताको कोई कोई 'कलकत्ता' भी कहता था।
 वास्तविक १६८८ ई.के पहली किसी प्रकाशित छतः
 कलकत्ताका उल्लेख नहीं पाया। फिर १६९६ ई.के
 पोल्कन्दास मानचित्रमें सुगाटो और गोविन्दपुरका
 नाम मिलते भी कलकत्ता लिखा है। हाँ एक छत
 पर उसमें 'कलकत्ता' नाम लिखा है। इससे प्रथम
 कलकत्ता का सत्ता कि कलकत्ताका प्राचीन नाम
 'कलकत्ता' था।

राजा राधाकान्तदेवने अपनी विचारणाको उन्दा
 बनानमें एक रचना पदावली बनायी थी। उन्होंने
 अपनी सुदृष्टि पदावलीके प्रथममें 'कलिजाता' खान
 पर 'कलिजाता' नाम दिया है। इससे समझ पड़ता,
 कि राजा राधाकान्तको कलकत्ताका प्रथम नाम कलि
 कलि प्रथम प्रथम था। राजा प्रतापसिंहके समय
 कलिजात कलकत्ताके प्रथम कलकत्ताके प्रथम
 'कलिजाता भूमिका विवरण लिखा है। उसे इस
 पद्धति से यथाखान वर्णन कर चुके हैं। इसमें सन्देह
 नहीं, कि कल भूमि को पार्लेन-इ. कलकत्ताका 'महाल
 कलकत्ता' रही। यह प्रथम के ही 'को सत्ता, कि
 उसे कलिजाताको बिगाड़ कर पोल्कन्दास भौगो-
 लिङ्गने 'कलकत्ता' लिखा था। कलकत्ताके द्वितीय
 प्रकाशमें एक छत पर कलिजाताका वर्णन मिलता
 है। उससे कलिजाता भूमिके प्रथम कलिजाता
 नामक प्रथम भी समझ सकते हैं,—

'कलिजाता कलिजाते शीमन्तकान्तः ।
 कलकत्ता पदा कि कलकत्ता कि कलिजाते इ'

(कलिजाता विवरण १६० पृष्ठा)

उक्त कलिजाता प्राचीन कलकत्ता प्रथम को मालूम

• यह प्रथम कलकत्ता ही नहीं कलकत्ता। कलकत्ता प्रथमके
 प्रथम के ही कलकत्ता कलकत्ताके प्रथम कलकत्ताके प्रथम कलकत्ता
 एक कलकत्ता का प्रथम था।

होता है। मन्मथतः किलकिला ही कलकत्तेका प्रति प्राचीन नाम है। किलकिलाके अपभ्रंशसे ही आईन-इ-अकवरी प्रसूति ग्रन्थमें कल्कता, कल्ता, कल्मा, कल्कत्ता, कलकत्ता, कलिकता आदि शब्दकी उत्पत्ति है। मानूस पद्यमा, कि भाषासे लिखे भिन्न भिन्न आईन-इ-अकवरी ग्रन्थमें पाठान्तर चलता है। सुतरां किलाकिला शब्द भाषान्तरसे लिखते कल्कला, कल्कता, कलकत्ता हो सकता है।

गोविन्दपुर नामकी उत्पत्ति।

कलकत्तेके भूतपूर्व कलकट्ट एंर्ण्डेल साहबके मतमें गोविन्दगम मित्रके नामसे गोविन्दपुर बना है। फिर बड़े बाजारके सैठ बसाकोंके कथनानुसार यहां उनके इष्टदेव गोविन्दजीका मन्दिर था। उर्मीसे इस स्थानका नाम गोविन्दपुर पड़ गया। यह दोनों मत विरोध युक्तिसङ्गत मालूम नहीं होते। प्रथमतः गोविन्दराम मित्रके बहुत पहले गोविन्दपुर नाम विद्यमान था। द्वितीयतः यटि गोविन्दजीके नामसे गोविन्दपुर निकलता, तो सकल प्राचीन ग्रन्थोंमें गोविन्दपुरके साथ गोविन्दजीका उल्लेख अवश्य मिलता। कविराम विरचित दिग्विजयप्रकाश नामक ग्रन्थमें गोविन्दपुरके नामकरण सम्बन्ध पर जो विवरण मिला, उसे नीचे लिखा है,—

“इदानीं दत्तात्रेयं चरन्तौ कथा यत् ।
 काशीदेव्याः सन्निधिं च गन्तव्यं प्रायुक्तं ॥ १०११
 गोविन्ददत्तौ राजा च वृद्धिदेशान्तरुद्देश्ये ।
 विष्णुसङ्ग मतीर्थयात्राकारणात् समागतः ॥ १०१२
 गोविन्ददत्तमुपास्यं शीघ्रान् प्रयागत यत्नम् ।
 काशीदेवो सुप्रसन्नो नौकादान्तरुवाच ॥ १०१३
 कल्पयस्वितुं राजन् चतुष्टयं हि समागतः ।
 वादरसा सुप्रियाव हेतुयिन्ता वपादिभ्यम् ॥ १०१४
 पुरं... ..सप्तौ सत्सकामिनः ।
 प्राप्स्यन्ति यत् सुगतं नै कालात् न वेदयि ॥ १०१५
 काशीदेव्या वचो वाचा गङ्गापाय वटावरे ।
 यत्सिं सप्तौ तव चकार हि सुशान्तिवः ॥ १०१६
 पारोत्र दामान् सर्वादिं प्रविशन्ति मरीचिभिः ।
 पारयिन्ता च यत्सिं हतवाद् सुरवरिण्यैः ॥ १०१७
 साङ्गो रिक्तसुतं देवाः पठे च वर्तते ।
 यदादेवतं तन्मृते..... ॥ १०१८

माना तदेव मूर्ति न सृष्टिशाधन्तरे निगि ।
 कावचकण्ठं पुरितादान्तरुः ईशान्तरिणि ॥ १०१९
 रोपिं प्रविशन्ति च प्रायः गोविन्दमुपनिः ।
 चतुःप्रतिभं व्यञ्जय वरिणिः पूजनं हवन् ॥ १०२०
 गोवन्दगा विरुद्रया जेभोहदा हि मूमिप ।
 वमूव गोविन्ददत्तौ वरिं टप्रवरो महात् ॥ १०२१
 भागीरथीपुत्रं तटे पुरोवदन् देवते ।
 वानुयागं रिशान् नौता चकार वापदेवते ॥ १०२२

हे नृपत्येठ ! अब चरभूमि की कथा सुनिये। काली देवीके निकट गङ्गाके पूर्वं तट पर ४४०० कल्पशुक्रों सिन्धुसङ्गम (गङ्गासागर) तीर्थ यात्रा करने गोविन्द-दत्त राजा आये थे। वह सकुमार तीर्थसे लौट पड़े। फिर स्रजके छलने काली देवीने उन्हें नौकामें ही आदेश दिया,—“ हे राजन् ! मेरे भाञ्जसे तुम अर्घ्यपुरीकी चलो और वादरसा पृथिवीमें दया-दिक कटा मेरे निकट एक बड़ी पुरी स्थापन करो। नहीं तो तुम्हारा अमङ्गल हीगा।” काली देवीकी बात मान राजाने गङ्गातटके अन्तर पर बड़ी बसती बनायी। पारोन्द्र ग्रामसे सब धनरत्न संग चुरसरित्के तटपर लोग बसाये गये। देवीके घुट पर दो इन्द्र रखे थे। उनके आदेशसे जलोंके नीचे खोदने पर नृत्तिकाके अन्तरमें काञ्चनका ढेर देख पडा, जो देवी और असुरोंको भी चमत्कृत था। मूरि मूरि द्रव्य पानेसे प्रसन्न हो गोविन्द भूपने चतुःप्रति बलि द्वारा पूजन किया। गोत्र, विपत्त और वीज वटुनेसे गोविन्ददत्त महान् वरिष्ठ प्रवर भूमिप बन गये। फिर उन्होंने पुरीके वर्धन हेतु भागीरथीके पूर्वं तट पर दाम्नाणोंको बोझाकर वास्तुयाग किया।

कविरामकी उक्त वर्णनासे समझ पड़ा, कि राजा गोविन्ददत्तसे इस स्थानका नाम 'गोविन्दपुर' चला था।

दत्तात्रेयी ।

पहले सूतानुटीके सम्बन्धमें बहुत सी बातें कह चुके हैं। यहां इन्द्रजैत्रोंके जानेसे पहले तन्तुवाय (जुनाई) सतका गोला (नुटी वा लुटी) बना (उस समयकी सूतानुटीके) बाजारमें (वर्तमान इष्टहोनेके पास) बेचते थे। इसी वाजारका नाम सूतानुटीका हाट रहा। बाजारके सामनेही सूतानुटी वाट था। यहां

पट्टरीज् बचिक् बतर तन्ववायोके छत (वा छतको तुटो पचाव् मोडो) ऋक् करते रहे । एडो बाजारके पाखेमी दूसरा बड़ा बाजार था । मासम पड़ता,— बुरोपीय बचिक्मी छतातुटीडाटकं लिब्टरतीं ससु हाय खानका नाम छतातुटी रखा है । बारक पट्टरीको पबका पपरापर बुरोपीकोके पागमनके पडली बिचो देसोय पत्रमें 'छतातुटी' नाम नहीं मिलता । पट्टरीकोके पबिबार कासके १७७८ ई० पर्यंत यह खान ईष्ट इण्डिया कम्पनीके पबिबारमें रहा फिर उसी वर्षकी १६वीं जनवरीको महापाके मोक्षिके परिवर्तनमें महा राज नवछप्पके राज गया । ईष्ट इण्डिया कम्पनीके महाराज नवछप्पको को पत्र (सन८) दिया, उसमें इन कई खानोंका नाम बिखा है,—१ महान छतातुटी (१११० बीवा), २ डाट छतातुटी ३ बाजार छतातुटी, ४ छ्वा बाजार, ५ पाखंड बाजार, ६ बागुबाजार (१०० बीवा) पीर ७ बृगकडुडिया (२८७) बीवा । इसके बिचे महाराज नवछप्पको प्रतिभयें १२१७, ६० पीर कुज पाने महत्त्व समता का । ७ पात्र मी मोमाबाजारके राजभयोय छक खानोंको ताहुक दारोका सख मोय करी है ।

विगत—कलकत्तमें ४ सरकारी (गवरनमेंट्), ५ मिशनरी पीर सोमोंके वल्ले स्थापित ३ देसोय कासिक (विद्यालय) विद्यमान हैं । छात्रो (बचिक्छा- विद्या) सिखानिका मैट्रिकलकासिक, कार्मोइकेकालोत्र तथा काम्यवैत मैट्रिकल स्कूल पीर मिश्रविद्याके सिधे पार्ट स्कूल वा मिश्रविद्यालय (Government School of Art) खुला है । सिधा इसके १०० परर विद्यालय बचती है । इनमें १११ बालको पीर १७३ विद्यालय कालिकासिके सिधे हैं । फिर ८२ में बालकोडा

* बचबच, मैट्रिकल पीर कलकत्तेके कार्मो मोट्रिकल कालिकासिक एडमोन्स एंड एडिवाइजिड विद्यालयके कलकती सिधे मैट्रिकल बाल कालिकासिक करता गतिरि । एडर मैट्रिक, कलकती वा मैट्रिक कालिकासिक कलकती, कलकतीके इन्फे कालिकासिक, कलकतीके इन्फे कालिकासिक पीर सिधे कालिकासिक (पट्टरीके पबकन क) के इन्फे कालिकासिक (कलकत्त) विद्यमान है । इनमें ६३केके कलिकासिके सिधे कालिकासिक कलिकासिक को बचके है ।

पट्टरीकी तथा ७२ में बंगला पीर १२० विद्यालयोंमें कालिकासिकोंको बंगला पट्टरी जाती है । पुरवों पीर कलिकासिकोंके सिधेकता सिधेकते सिधे ३ नामेंल स्कूल भी विद्यमान हैं । एडर हिन्दुस्थानी बालक श्री- विद्यालय एडरकती विद्यालयमें बंखन, हिन्दो पीर पट्टरीको पड़ते हैं ।

पबकन—कलकत्तामें ८ बडे पबकनल खुसि हैं, मैट्रिकल कासिक पबकनल, सिधे पबकनल, कम्पैरल पबकनल, खानोय पुलिस पबकनल बेनगलिवा पबकनल पीर सिधेका कपारिन तथा ईकेन पबकनल । इरोसनरोडपर मारकाडिकोका भयशाण्डास बागका पबकनल विद्यमान है ।

बर्षभक्त—कलकत्तेमें नागा जातियोंके रहनेके पनेक बर्षभक्तल देख पड़ते हैं । हिन्दुकी, मुसलमानों पीर ईमायिबके बर्षभक्तल छोड १६ इरिसना पीर ३ ब्राह्मणमात्र भी हैं । काखेंबचिक् डोटपर पार्य बर्षभक्त लयता है ।

न्य—बहुपक्षके पपर खानोंको माति यका पुच्छ रिचो (ताखान)का सन बिचोका पोना नहीं पड़ता । खनिबिपाकिटो कलका बच पर्यंत पड़ जाती है । यह बल पबता नामक खानके पाता पीर कारखानोंमें पच्छो तरफ मोचित हो लसके चारो पीर जाता है । पात्रकल पात्र प्रत्येक पट्टरीके कलके कल बलकी एक एक बच बनो है । फिर साधारणको दुर्बकाके बिचे राइकी मोक्षों पर भी बड़ी बच पड़ो को गयो है । बोच बोच खानावार बनि हैं । पडके हिन्दुस्थानी सोन कलकत्तेमें पाकर बीमार पड़ जाते ये । बिन्दु कलका पानो पोनेका मिखनेके पर बड बात नहीं रहो । अनेक बर्षभक्त पुरवों पीर बिषका सिधेके कलकारमें पपरिख जानेके कलका बच बम पाता है । इसलिडे उन्हें मानोरकोका बल संसाधार पोना पड़ता है । बिन्दु मानोरकोका बल सतुद्रको कहर पनेके पार कसता पीर साधारणतः भारपके सिधे ठोड नहीं पड़ता । पात्रकासके पार्यकास पर्यंत मानोरकोके तट पर खल खनिवाचोंको भी डूढ़ रहतो है ।

३६ पीर सिधे—बन्धा समय सिधे कलकत्तकी

वही वही राहों और छोटीमोटो गलियोंमें बिल्लो तथा गैसकी रोशनी होती है। इसलिये दिनकी भांति रातकी चलने फिरनेमें कोई कष्ट नहीं पड़ता। फिर बिल्लीसे ट्राम, आठा पीसनेकी चक्की और कापेकी कल भी चलती है। घर घर बिजलीके पड़े लगे हैं।

३. न—कुछ दिन पहले कलकत्तेकी राहोंके इधर उधर गन्दा नाना था। किन्तु अब यह बात नहीं रही। प्रायः सर्वत्र भूमिके भीतर ड्रेन चलता है। सब जगहका मैला उसमें गिर धाँके बिल पड़वा करता है। कलकत्तेके रहनेवालोंकी नालिका दुर्गन्ध भोगना नहीं पड़ता।

बन्दर और व्यवसाय—कलकत्ता बन्दर भागीरथी किनारे ५ कोस विस्तृत है। १८७० ई०से पोर्ट कमिश्नरोंका तत्त्वावधान चलता है। १८७१ ई०की २२ मार्च रुपये खर्चकर कलकत्तेसे हावडे तक वर्तमान बड़ा पुल बना था। पोर्टकमिश्नर ही इसकी देख भाल रखते हैं। फिर पोर्ट कमिश्नरोंका प्रधानकार्य भागीरथी किनारे जहाज, नाव तथा मात्स रखनेकी जेटी एवं गुदाम बनाना, नदी पर रोगनी कराना और नौकादिका अनिष्ट बचाना है। कलकत्तेका वाणिज्य जहाज और रेलसे नाना देशोंके साथ होता है। प्रति वर्ष करोड़ों रुपयेका मात्स आया जाता है। मारवाडियोंने इसमें पड़ भपनी भच्छी सन्नति देखायी है। यहाँ पाट (सन)का बड़ा कारखाना है।

कलकत्तेमें अजायब घर, चिड़ियाखाना, बोटानिकल गार्डन और सेठ दुखीचन्द तथा राय बदरीदास बहादुरका उद्यान देखने योग्य है। सन्ध्याकी एहन गार्डन (लेडी बाग) में वैण्ड बाजा बजता है।

कलकना (हिं० क्रि०) १ चौत्कार करना, चिह्नाना। २ दुःख करना, रक्ष मानना।

कलकफल (सं० पु०) दाडिमवृक्ष, अनारका पेड़।

कलकस (सं० पु०) कलादपि कसः, कलशब्दे घञ्, कलः प्रकारः, प्रकारार्थे हित्वा वा। १ कोलाहल, शोर, हल्ला। २ सर्जनियास, लोभान, धुना। ३ शिव।

४ जलप्रपातध्वनि, भारतीकी आवाज। ५ विवाद, चकपक, भगड़ा।

कलकल (हिं० स्त्री०) कण्ठ, गुञ्जनी, कलाहट।

कलकलयान् (सं० त्रि०) कलकलो इत्यादि, कल-कल-मत्तुप मन्थयः। कलकनप्रिगिट, चकपक मगानेवाला।

कलकलो (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुम्मा।

कलकानि (हिं० स्त्री०) कोलाहल, शोर, हल्ला।

कलकि, कलकी (हिं०) कलिका।

कलकीट (सं० पु०) कलप्रधामः कोटः, मध्यपदनो०।

सद्भोतका धामविशेष, गानेका एक धाम।

कलकृत्तिका (सं० स्त्री०) कर्म कृजयति उच्चारयति, कल-कृज क्वन्टाप् प्रत इत्त्वम्। मधुरध्वनिकारिणी, मीठी आवाज निकालनेवाली। २ विनामिनी, फुडिया, बिनाप।

कलकृत्तिका, कलकृत्तिका स्त्री।

कलकूट (सं० पु०) सत्रिय जाति विशेष तथा उसके रहनेका देश।

कलकृत्तिका, कलकृत्तिका स्त्री।

कलक्टर (सं० पु० = Collector) १ संपादक, जमा करनेवाला, वटीर। २ करपादक, उगाइनेवाला, जो तहसील करता हो। ३ जिलेदार, जिलेका बड़ा हाकिम। यह मानगुजारी बसूल कराता और मानके सुकहमे भी निषटाता है।

कलकटरी (हिं० स्त्री०) १ जिलेदारी, कलक्टरका ओहदा। २ मानके महकमे की प्रदालत। (वि०)

३ कलक्टर-सम्बन्धीय, कलक्टरके सुतासिक।

कलकट (हिं० पु०) तहर, कुल्हाड़ा।

कलगा (हिं० पु०) हचविशेष, एक पेड़। इसे सुर्गकेश और जटाधारी भी कहते हैं। कनगीका फूल सुर्गकी चोटी-जैसा लाल और चपटा लगता है। मरसेमे यह मिलता है। वर्षा ऋतु इसकी उत्पत्तिका समय है। पाश्चिम वा कार्तिक मास कलगा फूलता है।

कलगी (तु० स्त्री०) १ बहुमुख्य पालक, कीमती पर। यह राजावोंकी पगड़ीमें लगती है। कभी कभी इसमें मोती भी पिरो देते हैं। शतरुर्ग घग्गरहः चिड़ियोंके

कलसूरत परोक्षी श्री कलसी होती है । २ गिरोमूवक-
विग्रह, मन्त्रोका एक गणना । यह मुखा पीर सुवर्षे
प्रसृत होती है । ३ पञ्चियोंको लष गिखा, चिह्नियोंको
कलसी होती । ४ प्राचादिगण, कलसी इमारतकी
होती । ५ बिलो जिनको सावनी । इधको गानेवाला
कलसीनाम कलसाता है ।

कलषष्टिका (सं० स्त्री०) कल्पकारिका, काशी वैश ।

कलषोप (सं० पु०) कलसी मङ्गरी पोषो धनियज,
बहुनी । कौञ्ज, कोयल ।

कलह (सं० पु०) कलु पावो पल्लवति, कल छिप्
कर्मणा । १ चिह्न, निगान्, बन्ना । २ पपवाद,
बदनामी । ३ दोष, विष । ४ लौहमन्त्र, कोड़िका
कोट । ५ झोड़, मोद । ६ मन्त्रमैद, एक मन्त्रसी ।

कलहकर (सं० स्त्री०) कलह करति कलवति, कलह-
क-ट । १ कलहजनक बदनामी कानिवाला । २ चिह्न
कानिवाला, बी निगान् कालता से ।

कलहकला (सं० स्त्री०) कलुको कायामि रश्मिवाको
कला, वादका पंथिरा विद्या ।

कलहकर (सं० पु०) कलु, वाद ।

कलहमय (सं० स्त्री०) १ चिह्नित बन्नेदार । २ पपवाद
विग्रह, बदनाम ।

कलहप (सं० पु०) कलैव कपति दिनष्टि, कल-कप
कलु-मुन् । सिंघ, पञ्चैसे मारनेवाला शेर ।

कलहपा (सं० स्त्री०) कलहप टाप । करताल,
इषिहियोंको थावाज ।

कलहहृत् (सं० पु०) कलह हरति नागवति, कलह-
हृ-क्षिप् । कलह मिटानेवासी गिय ।

कलहहाह (सं० पु०) कलुका पञ्जित चिह्न वादका
काका बन्ना ।

कलहहित (सं० स्त्री०) कलहो इव जातः, कलह-
हतम् । १ चिह्नमुद्र, बन्नेदार । २ कलहविग्रह,
बदनाम ।

कलहो (सं० स्त्री०) कलहो इवज्ज, कलह इति ।
१ कलहित बदनाम । २ चिह्नमुद्र, बन्नेदार ।
३ लौहमन्त्रक, कलु लगा हुआ । (पु०) ४ कलु, वाद ।

कलहो (सं० स्त्री०) कलु-कौ ।

कलहुर (सं० पु०) कल कल कलवति गमवति धामवति
इत्यन्तः, कलवि विष उरम् । पावर्त, गिरदाव,
पानोका मंवर ।

कलहडा (सं० पु०) १ कलह कलौटा, तरबुन् ।
२ मञ्जित मैद एक नाम ।

कलहडा (सं० पु०) १ यन्त्रविद्य, कोड़िको एक शिरो ।
इसी ठठेरें काल पर मन्त्रायो करी है । २ कोपिबोका
एक ठप्पा । इधमें पहारक लूक पड़ती है । ३ इन्-
विद्य, एक लोहा । कलप ईको ।

कलहो (सं० स्त्री०) कलु-कौ ।

कलविद्यो (सं० स्त्री०) पञ्चविद्यय एक विद्यिका ।
इधका उदर कलवर्षे पड़ धूकर पीर कलु कोहित
होता है । यह मन्त्र धननिषी कोलतो है ।

कलषुरि—मारतपवका एक प्राचीन राजवंश । वेदि,
काहकमण्डल पीर कलौटमें विद्यो समय कलषुरिवीनि
प्रकल प्रतापसे राजत्व किया था । कलौट पीर वेदि ईको ।
मारतपवंशके नामा कलौटके इधके कोहित मिशासेज
पीर ताम्ब्यासन निवसी है ।

मिशासेजों पीर ताम्ब्यासनमें कलषुरी का
कलषुरी नाम मिलता है । बिलो बिलो पञ्जतकामित्से
मतामुधार इल बंगके राजा मिनापञ्जकोमें 'कलषुरि
का 'कलषुर' नामसे मो परिचित हुई है ।

गुहारावादीके पूर्वप्रताप खोने पीर लौहकल तथा
वीनाबल जोमिपर कलषुरि कालखर जोत पपना
पानिपल पेकामि ली । १०० ई०को नर्मदातटके
काहकमण्डल जोत पड़ती इधोने कलौटपद पीर
पौडे कलौट राज्य प्रमाणपसे पञ्चिकार कलौटको
कपीन किया ।

उस समय कलषुरि बंगीय मोदावरीके लौरपर गुद
गुद राज्य बना राजत्व रचती थी । इधमें कोई कलद
राजा, कोई धामना पीर कोई मन्त्रनेखर बना ।
बिन्तु वेदि (वर्तमान बंदिनकण्ड पीर बंदिनकण्ड)के
राजावेनि राजकलवती उपाधि लिया पीर पालीवती
तथा पपरापर नर्मदेको पपने बय किया ।

कलषुरका कालुक बंग प्रकल पड़नेपर सुविधा
पपमें कलषुरि राजाओंका पूर्वसिद्ध बट गया । ई० बह

मताब्दको (५६७ ६१० ई०) चालुक्यराज मङ्गलीगने किसी किसी कलचुरि राजाको हरा करद बनाया था ।

फिर भी डाडल और कर्णाटके उत्तरांगमें इस वंशके राजावोंने ई० द्वादश मताब्द पर्यन्त निविवाद राजत्व चलाया । *आर्यभट्ट* देखो ।

इस वंशने प्रायः नौ सौ वर्षकाल उत्तर त्रेपुर वा चेदि, पश्चिम भेनसा (विदिगा), पूर्व कृत्तीसगढ़ और दक्षिण गोदावरीतट पर्यन्त विस्तोर्ण भूमिखण्ड उपभोग किया ।

यह सब शैव वा शक्तिके सेवक थे। चेदिवासे कलचुरिराज कर्णदेवके अनुगासनमें सुवर्ण हृषभध्वज और चतुर्हस्तापरिशोभिता हस्तिपरिहता कमलाको मूर्ति अर्पित है। इनके पुत्र गाङ्गेयदेवकी स्तूपसुद्धामें भी चतुर्हस्ता पार्वतीमूर्ति मिलती है ।

देशावली नामक संस्कृतग्रन्थमें 'करचुलि' राजपुत्रोंका नाम लिखा है,—

"कोशाग्र्य दक्षिणतय रिकोषारगतः परम् ।

करचुलि, परिहाये चाम्देखाख्ये द्योचमः ॥

वाधेयी वयसी भूयः कडूया राजपुत्रकम् ।

राजोरी रत्नगण्य सापाक्षरचदुर्जयः ॥

विशेषः प्रकथो दुर्गे रादगाः परिकीर्तिताः ।" (रत्नसभ विवरण)

यह करचुलि राजपुत्र किसी समय वचेतखण्ड (प्राचीन चेदिराज्य)में रहे। देवासे ५ कोस उत्तरपूर्व अनेक सम्भ्रान्त राजपुत्र वास करते और अपनेको 'कारचुलि राजपुत्र' कहते हैं। यह बताते,—“हम देहय दंशीय सहस्रार्जुनके वंशधर हैं। हमारे पूर्व पुरुष रायपुर-रतनपुरसे आकर इस प्रदेशमें बसे थे।”

करचुलि वा कारचुलि राजपुत्र ही सम्भवतः प्राचीन शिलान्तिपिषणित कलचुरि वा कालचुरि होने। प्रहलतत्त्वविद् फ़ोर्टने इन्हीं कलचुरिवंशियोंको आर्जुनायन माना है। (*Fleets' Inscriptionum Indicarum, Vol. III, p. 10*) किन्तु इस स्थल पर हम फ़्लोट साहबका मत कैसे युक्तिसङ्गत कह सकते हैं। कार्तवीर्यार्जुनके वंशधर देहय नामसे परिचित हैं। वह किसी पुराण वा प्राचीन ग्रन्थमें आर्जुनायन लिखे नहीं गये। किसी किसी पुराण,

हृदत्संहिता तथा पाणिनिके अग्नादिगणमें आर्जुनायन शब्द एक जनपद और उसी जनपदवासीके लिये आया है। बराहमिहिरने उक्त जनपदको भारतके उत्तरपश्चिम पश्चिममें अवस्थित अपरापर जनपदोंके साथ उल्लेख किया है। उनका मत माननेसे आर्जुनायन पाणिनि-गणोक्त अग्र (अग्रक) जनपदके निकट पड़ता है। आर्जुनायन तथा आर्जुनायन देखो। वर्तमान जलानावाट जाते समय उक्त स्थानको लोग 'आळुन' कहा करते हैं। प्राचीन कालको उसी प्रदेश और तञ्जणपदवासीका नाम आर्जुनायन था। कलचुरिवंश समुद्रगुप्तके अनुसागन-स्तम्भका वर्णित आर्जुनायन ही नहीं सकता ।

पूर्वकालको कलचुरिराज एक स्वतन्त्र संवत् व्यवहार करते थे। इनके अनुगासन तथा खोदित-शिलालेखमें उक्त संवत् व्यवहार हुआ है।

कलचुरि संवत्का आरम्भकाल निर्णय करना मुकटिन है। प्रहलतत्त्वविद् कनिङ्गमके मतमें कलचुरिराजकटक कालचुरि अधिकारके समयसे उक्त संवत् चला है। वह २४८-५० ई०को उसका आरम्भकाल बताते हैं। फिर अध्यापक किङ्गहोरनके मतानुसार २४८-३६को उक्त संवत् चलाया गया। (*Cunningham's Indian Eras, p. 60; Archaeological Survey of India, Vol. IX, p. 9; Academy, December 1887, p. 391; B. Sewell's Sketch of the Dynasties of Southern India, p. 286.*)

कलछा (हि० पु०) हृददाकार चमस, बड़ा चम्पस ।
कलछी (हि० स्त्री०) चूद्वचमस, छोटा चम्पस ।
कलछुल (हि० स्त्री०) खजाका, करछो । यह लोहे या पोतलको होती है। लस्वी लण्ड्रीके सिरे पर हथेली जैसा एक चौड़ा हिस्सा लगा रहता है। यह तरकारी टालने या पूरी कचौरी निकालनेमें काम आता है ।
कलछुना (हि० पु०) १ हृददाकार चमस विशेषतः बड़ी कलछुल । २ चवेना मूननेको एक छड । यह लोहेका होता है। इसके सिरेपर एक कटारा लगा देते हैं। मडभूँके चवेना या बड़ो भूनते समय भाङ्गसे

अरुण शाल इवमं अरुणर निवावते पौर अक्षरीमं
वावते वै ।

कलहसूची (चिं० खी०) सोच वा पित्तकपात्रविशेष,
कोड़े या-वीथकला एक वस्तुन । अक्षर १६० ।

कलह (स० पु०) कुट्ट, सुरगा ।

कलहवात (स० पु०) कलहमण्डि, कलहमी वात ।

कलहविद्या (चिं० जि०) १ अक्षरवर्ष 'विद्याविशिष्ट,
वाक्यो कौमवाचा । २ अणित विषयवा सत्यवादा,
'निकरुषे कु इषे निकलो बुरो वात मूठ न ठहरे ।

कलहोवा (चिं० वि०) १ कलहविद्या । अक्षरेण १६० ।
(पु०) इतिविशेष, वाक्यो कौमवा चायी । यह
सूचित होता है ।

कलहवर्ष (चिं० वि०) श्यामवर्ष, सांवला ।

कलहवर्ष (स० पु०) क कलहपति, क अजि-अक्ष । १ विद्या
अक्षत अक्ष वा पक्षी, अक्षरीसे अक्षिवासे मारा हुआ
। आनवर या परिन्द । २ ताम्रकुट, ताम्राक्ष । ३ परि
भाषविशेष, एक ठीक । यह १० पक्षवा होता है ।
४ श्वेतता, जेतनी रेश । (खी०) ५ विद्याअक्षत
अक्षपक्षीमांस, अक्षरीसे अक्षिवासे मारे हुये जानवर
या परिन्दवा मोक्ष ।

कलहवाविशेष (सं० खी०) पञ्चावयव व्यायविशेष
। एक मन्त्रिक् । इवमं 'कलह न वाता वाहिये' मक्षति
वाक्य अक्षरमन विद्ये जाती वै ।

कलह (सं० खी०) क कलहं लटति पाठ्योति, क
लह पत् । अक्षरि निर्मित अक्षरवादन, अक्षर ।
इसका संस्कृत नामान्तर कुट्टक है ।

कलहोरा (चिं० पु०) अक्षरीविशेष, एक अक्षर ।
इसका सम्य मरीर अक्षर पौर अक्षरवर्ष होता है ।
अक्षर अक्षर १६० ।

कलह (सं० पु० = Calendar) पञ्चिका, तक्षणीम,
पत्रा ।

कलह (२० जि०) अक्षर, अक्षर, अक्षरि अक्षर
शाल न अक्षर ।

कलहता (सं० खी०) अक्षर माक्ष, कलह-तक्षटापु ।
अक्षर मक्षता, अक्षरवाक्यो, अक्षरमं न अक्षरिवाक्यो
वावाक्यो मिठाव ।

कलहवा (सं० खी०) क कलहं विषयलेन कालि
प्युवाति कलं वासं सूक्ष्यति पूरयति, कल-सू-सू-
टापु पत इवम् । १ अक्षरवर्ष, अक्षरि अक्षरिवाक्यो ।
२ आसुषी, अक्षर । इसका संस्कृत पर्याय—अक्षरि
पौर अक्षरिवा है ।

कलह (सं० खी०) गङ्गा श्वेती पत्रम् अक्षरवर्ष
अक्षर । अक्षर १६० । १ खी, पौर ।
२ मार्य, वीथो । ३ अक्षर अक्षर । ४ मग ।
५ दुर्गाक्षर, अक्षर ।

कलहवा (सं० पु०) अक्षरमण्डि, कलह मण्डु
मक्ष व । अक्षर, अक्षरवा ।

कलहो (सं० पु०) कलहमण्डल, कलह इति ।
अक्षर १६० ।

कलहार (चिं० वि०) १ अक्षरविशिष्ट, पेंचदार ।
(पु०) २ अक्षरिवा अक्षर ।

कलहसूची (चिं० वि०) १ अक्षरवर्ष अक्षरविशिष्ट, वाक्यो
पूक्ष वावा । (पु०) २ अक्षरीविशेष, एक अक्षर ।
इसका अक्षर अक्षरवर्ष होता है ।

कलह (सं० खी०) अक्षर अक्षरमण्डल अक्षर
१-तत् । १ रीष, चादी । (जि०) अक्षर अक्षर-
मण्डलमण्डल अक्षर अक्षरमण्डल । २ अक्षर अक्षर
कुक्ष, अक्षर न अक्षरिवाक्यो मीठो पावाक्यो मरा हुआ ।
कलहोत (सं० खी०) अक्षर अक्षरमण्डल अक्षर
१ अक्षर, मोना । २ रीष, चादी ।

"अक्षरि अक्षर अक्षरमण्डल अक्षरमण्डल अक्षर ।" (अक्षर)
१ अक्षर अक्षर अक्षर, मीठो मीठो मोक्षो ।

कलह (सं० पु०) कलह अक्षरमण्डल अक्षरमण्डल,
अक्षरि । १ अक्षर, अक्षर । २ अक्षर, अक्षर ।
३ अक्षर, मीठ । ४ अक्षर अक्षर अक्षर, मीठो मीठो मोक्षो ।

"अक्षरमण्डल अक्षरमण्डल अक्षरमण्डल" (अक्षरमण्डल)

कलह (सं० खी०) अक्षर अक्षर अक्षर अक्षर वा, अक्षर-
अक्षर । १ अक्षर, अक्षर । २ अक्षर, अक्षर । अक्षर अक्षर
मोक्षिवाक्यो अक्षरमण्डल अक्षरमण्डल । ३ अक्षरमण्डल अक्षर
अक्षरमण्डल अक्षर अक्षर, अक्षरमण्डल अक्षर पौर
अक्षर अक्षर अक्षर । अक्षर १६० । ४ अक्षरमण्डल,

हमसका लिपटाव । ५ एकमासिक गर्भ, एक महीनिका हमस ।

“कलनं त्वे करामे ष पचरामे ष उदुदम् ।

दशदिन तु कर्कशुः पेष्यथं वा ततः परम् ॥” (भागवत १।१।२)

६ प्रहण, लेबायी । ७ घास, कौर । ८ ज्ञान, समझ, पढ़धान ।

“लोकानामन्तकत् कालः कालोऽन्यः कलनात्मकः ।” (ह्यंसिदान्त)

‘कलनात्मकः ज्ञानविषयस्वरूपः जातुं शक्य इत्यर्थः ।’ (रङ्गाय)

(पु०) कं जलं ज्ञाति, क-ज्ञा-क; कलः सन् नमति, कल-नम-ड । ९ वेतस, बेंत ।

कलना (सं० स्त्री०) कल भावे युच्-टाप् । १ वशी-भूतता, ताबेदारी ।

“करारं यत्चेष्टं कथयिष्यतः कालकलना ।” (भानन्दलक्षरी)

२ जल्पना, कहासुनी, कलकल । ३ प्रवमोषन ।

“विष्वावधूषा कलनामिवीरः ।” (माघ)

कलनाद (सं० पु०) कलो नादोऽस्य, बहुरी० । १ कलहंस । २ कलध्वनि, मीठी मीठी बोली । (त्रि०) ३ कलध्वनियुक्त, गानेवाला ।

कलनाक (सं० पु०) पक्षिविशेष, किसी किसकी चिड़िया ।

कलनाक (सं० पु०) १ गोत्रप्रवरसुनिविशेष, किसी ऋषिका नाम । २ कलनाक, एक चिड़िया ।

कलन्दर (सं० पु०) कलं यास्त्रविहितं वाक्यं शिष्टा-चारं वा दृषाति, कल-दृ-खच्-सुम् । वर्षसञ्चरजाति विशेष, एक दोगुची क्रीम । लैट पुरुषके भीरस और तीवर स्त्रीके गर्भसे कलन्दर निकले हैं ।

कलन्दर (अ० पु०) सुसज्जमान साधुविशेष, किसी किसका फकीर । यह संसारसे विरक्त रहते हैं । २ मदारी । यह भाल और बान्दर नचाते हैं ।

कलन्दर देखो ।

कलन्दर, कलण्डर देखो ।

कलन्दरा (अ० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा । यह रूयी, रेशम और टसरसे बनता है । २ कांटा, खं टी । यह खीममें कपड़ा या रेशम सपेट कोई चीज टांगनेके लिये लगाया जाता है ।

कलन्दरी (हिं० स्त्री०) कलन्दर जगा हुआ सोमा, खूंटीदार झोलदारी ।

कलन्दिका (सं० स्त्री०) कलं कामं सर्वाभोष्टं ददाति, कल-दा-क संज्ञायां कन्-टाप् भत इत्वम् षष्ठीदरादि-त्वात् सुम् ष । सर्वविद्या, इत्थ, सब काम निकालने वाली समझ ।

कलन्धु (सं० पु०) कलायाः मात्राया प्रभुरिव, यक-न्धादित्वादस्योपः । घोसीशाक, एक सब्जी ।

कलप (हिं० पु०) १ कलफ, कपड़े पर चढ़ाया जानेवाले एक लेप । २ खिजाव, बाल काले करनेका रीगून । ३ कल्प । कल्प देखो ।

कलपत्तर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़ । यह शिमले और जींसरमें अधिक उपजता है । इसका काष्ठ श्वेतवर्णं तथा सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माण एवं क्रापिके यन्त्रादिमें लगता है ।

कलपना (हिं० क्लि०) १ दुःख करना, विसपना, रह रहके रोना । २ कलप चढ़ाना, इसतिरो लगाना । ३ कल्पना करना, प्रत्याज लगाना ।

कलपना (हिं०) कल्पना देखो ।

कलपनी (हिं०) कल्पना देखो ।

कलपाना (हिं० क्लि०) दुःख देखाना, तरसाना, बलाना ।

कलपून (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़ । यह वृक्ष उत्तर एवं पूर्व बङ्गालमें उपजता और सतत हरित रहता है । काष्ठ रक्तवर्णं तथा सुदृढ़ निकलता, बहुमूल्य पड़ता और गृहके निर्माण कार्योंमें लगता है ।

कलपोटिया (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया । इसका पोटा कण्ठवर्णं होता है ।

कलप्या (हिं० पु०) द्रव्यविशेष, एक चीज । यह कठोर तथा श्वेत वर्णं रहता और कभी कभी नारिकेलके अभ्यन्तरमें मिलता है । चीना लोग इसे बहु-मूल्य समझते और ‘नारियलका मोतो’ कहते हैं ।

कलफ (हिं० पु०) तण्डुल वा प्यारारोटका तरल लेप, चावल या प्यारारोटकी पतली लेयी । इसे माहो भी कहते हैं । यह वस्त्रका पास्तरण कठिन तथा समान बनानेमें सजता है । २ सुखका कण्ठवर्णं विद्ध, भाई, चेहरेका कासापन ।

बाल्या (हि० स्त्री०) द्वितीय द्वारबीनीकी लक्ष्य वा बाल । यह मन्त्रवर्ति कल्पक होती है । बीनबी द्वार बीनीकी ब्रह्म ब्रह्मिणीके लिये इधे मित्रा देते हैं ।

बाल्य (हि० पु०) एक रंग । यह टैल्के पुन कवा- बालर बनाया जाता है । फिर इधेमें बन्ना, बोब और चूना काक भगवई रंग तैयार करते हैं ।

बाल्यक (हि० पु०) १ उपयोगकपाव जोड़ तीड़, हाँवपेच । (स्त्री०) २ बोकाकल, ब्रह्म-गुहा । (मि०) ३ अस्त्र, काय समझ न पढ़नेवाला ।

बाल्यवीर (हि० पु०) हृद्यविशेष, एक पीड़ । यह हिमालय पर कल्पक होता है । इसका मूत्र रैयम पर पीत बर्षे चकानिमें जयता है । बाल्यवीर मांसके पीदेके मित्रता-सुकता रचता है ।

बाल्यत (हि० पु०) १ कपटक, काठबुट, चाँचा । २ कता सोनेका टाँचा । यह काठमय होता है । ३ बीनीमिया या चठनीमिया डोरी बनानिका टाँचा । यह मछो, बालको या डोनाका होता है । इधे गोबालर और ब्राह्मि भी करते हैं ।

बालम (सं० पु०) कसेन कदर सुखेन, भाति बाल भाक यहा बाल-धमम् । ब्रह्मविभक्तिर्वाच्ये इत्य् । ११११ । १ पञ्चवर्षपर्यन्त करियावक पाँचवर्ष तक बालीका बन्ना । इसका संकृत त पर्याय—करियावक, बाल्य और दुर्दान्य है । २ इष्टि मात्र बालो । "इत एवमे बन्ना विचरतिः" (मन्) ३ छत्र, छ ड । ४ तुषूराक, बूँदका पीड़ ।

बालमब्रह्म (सं० पु०) बालमज्ज इष्टियावकज्ज ब्रह्मः मियः, ३ तत् । पौसुहच, पीलूका पीड़ । इधे बालीका बन्ना बको बरिषे जाता है ।

बालमब्रह्मा (सं० स्त्री०) पिबो, बोबिका ।

बालमाच (सं० स्त्री०) बालाकाय, बालीकी पावागोपी या बालकोत ।

बालमी (सं० स्त्री०) बं बलं पाययतया समते, ब बाल-पञ्च नौरादिकात् कोब । बबु ब्युप, बेंबका पीदा ।

बालमेरव (सं० पु०) बर्षे मेरवक, बर्षेबाः । १ मयहर बन्नाक यन्त्र, ब्रह्मभ न पढ़नेवाली बौद्धनाक बाल्याः । "महावर्तिः बनेरः" (मन्) २ तासी

वीर नर्मदा नदीके मन्त्रवर्ति परंतका एक नवीर बन्धु या नाका ।

बालम (सं० पु०) बालयति बालरं जनपति, बाल विष्णु पम । बलिचर्षीः । १११११ । १ सेखनी, बिबनेका बीभार । इसका संकृत पर्याय—सीखनी, बर्षंतुकी और पञ्चतुखिका है । २ मासिबाल्य विधिय, किसी बिबका बाल । राजब्रह्मके मतके यह बवापरक, पञ्चके बिधे इतकर और रज्ज दोय तथा बिदोबनायक होता है । बाल्योरेमें इधे महातपक ब्रह्मि है । ३ बाययन्त्रविधिय, एक बाला । पाकारमें सेखनीके मित्रनेके कारण बी यह बालम ब्रह्मकाता है । ईपम, पञ्चमासिष्ठान और सुमान प्रवृत्ति देयमें इधका नाम बालम ही ब्रह्मता है । एक मुक ब्रह्मकी भाति कर्तित और अपर मुक पञ्चान्य बंधोकी भाति पनावक रचता है । देव्यं पपिबालत पञ्च जगता है । तारके इन्ध छात जोते हैं । बालम हरक भावके बनाया जाता है । पञ्चनेकी जयक चकनावीकी भाति एक ब्रह्म नक बनता है ।

बालम (सं० पु० स्त्री०) १ सेखने, बिबनेका एक बीभार । यह सरबन्नेकी बड़ काठ कर बनायो जाती है । धर्मदेवी कबल लकड़ीके दूधेमें कोड़ीकी बीम समानिसे तैयार होती है । २ छत्रकी एक पाख, पीड़की कोपी काक । यह काठ कर दूधरी जगड जमायो या दूधरे पीड़में मिलायो जाती है । ३ बालमी पीदा । ४ बाल्यविधिय, ब्रह्मभ । इधे पदके किसी छितमें बी देते, फिर ब्रह्माक कर दूधरे जयक बना लेते हैं । ५ जनपटीके बाल । यह बनानेमें जोड़ दिसे जाते हैं । ६ बायविधिय, किसी बिबकी बंधुती । इधेमें छात बिह्न रहते हैं । ७ यन्त्रविधिय, बालोकी बूँची । यह चित बनानि या रंम चकानेके काम पातो है । ८ बालबाल्यविधिय, बीनीका एक टुकड़ा । यह सन्धी रचतो और ब्राह्मिमें जयतो है । ९ मोरे मौ पादर बर्गुरका बन्ना बूबा बन्ना टुकड़ा । यह रवादार होता है । १० तुषूराकी । ११ बालबाल्यका यन्त्रविधिय, बारीक नज्जामी बरनेका एक बीभार । इधे बीभार या ब्रह्मनायक्यकार करते हैं । १२ पञ्च

खोदनेका यन्त्रविशेष, हरफ खोदनेका एक औजार। इससे सुइय बनती है। ११ काटने, खोदने और नक़्शी कारनेका यन्त्रमात्र या कोई औजार।

कलमक, कलमक देखो।

कलमकार (फ़ा० पु०) १ चित्रकार, सुसव्वर। यह कलमसे तसवीरमें रंग भरता है। २ लेखनीसे कारुकार्य करनेवाला, जो कलमसे कीयी दस्तकारी करता हो। ३ वस्त्रविशेष, एक बाफ़ता कपडा। इसमें तरह तरहके बेल बूटे रहते हैं।

कलमकारी (फ़ा० स्त्री०) लेखनीका कारुकार्य, कलमकी कारीगरी।

कलमकीली (हिं० स्त्री०) मङ्गयुद्धकीशलविशेष, कुस्तीका एक पेश। इसमें खिलाड़ी अपने दाहने हाथका पश्चा दूसरेके बायें पक्षसे फंसता और अपना दाहना हाथ खींच उसका बायां हाथ अपनी गरदन पर लाता है। फिर खिलाड़ी अपनी दाहनी कीहनी उसकी बायीं कलाई पर पड़ना और नीचेकी दबा उसे चित मारता है।

कलमक (फ़ा० पु०) किसी किस्मका अङ्गर। यह बलचिस्तानमें अधिक उत्पन्न होता है।

कलमख (हिं०) कलम देखो।

कलमताराथ (फ़ा० पु०) १ कलम बनानेका चाकू, तेल कुरी। २ अरहरकी खूटी। यह कहारों और हाथीबानोंकी बीली है।

कलमदान (फ़ा० पु०) सम्पुटविशेष, कलम वगैरह रखनेका एक छोटा सन्दूक। यह पतला और लम्बा होता है। इसमें कलम, दवात, चाकू वगैरह रखनेकी खाने बने रहते हैं।

कलमना (हिं० क्रि०) कलम काटना, टुकड़े उडाना। कलमरिया (पोर्त० स्त्री०), वायुके प्रवाहका प्रतिबन्ध, डवाका रुकावट।

कलमलना (हिं० क्रि०) सङ्घुचित स्थानमें अङ्ग इत-स्ततः हिलाना उलाना, कुलबुलाना।

कलमलाना, कलमलना देखो।

कलमा (सं० स्त्री०) शालिधान्य, एक धान।

कलमा (अ० पु०) १ वाक्य, सुमत्ता। २ सुसप्त-मानोंके धर्मका मूलमन्त्र।

कलमास (हिं०) कलमास देखो।

कलमी (हिं०) कलमी देखो।

कलमी (फ़ा० वि०) १ लिखित, लिखा-हुवा। २ कलमसे पैदा, जो डाल काट कर लगानेसे उपजा हो। ३ कलम या रवा रखनेवाला।

कलमी शोरा (हिं० पु०) खेदार शोरा। कलमी शोरा भिगो देने और मैल उतार लेनेपर जमाकर बनाया जाता है। यह मामूली शोरेसे अच्छा रहता है।

कलसुइय (हिं० वि०) काली सुइयाला। २ कलङ्कित, बदनाम।

कलमोत्तम (सं० पु०) कलमेभ्यः कलमेपु वा उत्तमः। सुगन्धशालि, एक खुशबूदार धान।

कलमोत्तमा (सं० स्त्री०) कलमोत्तम देखो।

कलम्ब (सं० पु०) कल्पते चिप्यते शत्रुं प्रति, कल-भ्रम्वच्। १ शर, तीर। २ शाकनालिका, सलीका उगठल। ३ कदम्ब वृक्ष, कदमका पेड। ४ सर्पप, सरसों। ५ धाराकदम्ब, हलदू।

कलम्ब (Colombo) सिंहलका एक जनानीय नगर। यह आजकल सिंहलकी राजधानी है। सिंहलवासियोंके प्राचीन पुस्तकमें इसका नाम 'कूलम्' (समुद्रतट) लिखा है। १५०५ ई०की पहले यहां पोर्तगीज आये थे। फिर १७८६ ई०की अङ्गरेजोंने इसे अधिकार किया। कलम्बमें मान्दार उपसागरके निकट हिन्दुओंके बहुतसे देवमन्दिर बने हैं।

कलम्बक (सं०) कलम्ब देखो।

कलम्बकुलक (सं० स्त्री०) एक तीर्थ। (इन्द्रोत्तम)

कलम्बशालि (सं० पु०) शालिधान्यविशेष, कड़हन।

कलम्बिक (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिडिया।

कलम्बिका (सं० स्त्री०) कलम्ब टापू भूत इत्वम्।

१ कलम्बीशाक, करेम्। कलम्बीव कायते प्रकाशते, कलम्बी-के-क-टापू इत्वश्च प्रयोदरादित्वात् झलः।

२ श्रीवापसान्नाडी, गरदनकी पिछली रंग। इसका अपर संस्कृत नाम मन्दा है।

कलम्बियन (अ० पु०) सुदृषयन्त्रविशेष, क्षापकी।

एक बस। इसमें दो सड़क लगती हैं—एक ऊपर और एक नीचे। ऊपरी सड़क पत्तो (चिड़िया)के पाकारका रहता है। इसमें बसानी नहीं बढ़ती। बसन्तियनको हिन्दीमें चिड़ियाबस कहते हैं।

बसन्ती (सं० स्त्री०) के बसे बसन्ति, कवि यंसेमें पद-कोट्। १ लज्जत कताविद्यम भरिम्। इसका संस्कृत पर्याय—बड़न्ती, बसन्तु और बसन्तिका है। (Convolvulus repens) राजबन्धनमें इसे मसुर एवं कपायस्क, गुह और शम्भुदुग्ध यन्त्र तथा भोजनकारक कहा है। २ लपोदकोष्ठत, पोय।

बसन्तु (सं० स्त्री०) के बसे लम्बे, क लम्ब डब्। बसन्तीयाक, भरिम्।

बसन्तका, बसन्ती बनी। बसन्तुट (सं० स्त्री०) के बसे लम्बते मासते, क-लम्ब कटन्। १ ईषुब्रह्मण, तामि पूषका सो। २ नवनीत, मन्त्रण।

बसन्तु (सं० स्त्री०) के बसे लम्बते, कम्ब बाहुलकात् लज्। बसन्तीयाक, भरिम्।

बसन्तक (सं० पुं०) सभंस पना।

बसन्त (सं० पुं०) कल महुराफ्त डो रक धनियंथ, बहुरो०। १ कपोत बहुरतर। "श्रीरत्नश्रीरत्न शिवीरत्न बन्त बन्धि" (पद्मपुराण १११) २ कोविल, कोयक। ३ बलकपोत, बहुरो बहुरतर। ४ कलध्वनि, मीठी पावान्।

बसन्ति (सं० स्त्री०) कबीका जगानेवाको स्त्री, जो पीरत कोक जगती हो। इसे कञ्चन मी कहते हैं।

बसन्त (सं० पुं०-स्त्री०) कफते विद्यति इति कल हपादिभ्य बसन्त्। १ क्राड्, मर्षविद्यनधर्म, इमकके कपिठको मित्रो। २ यन्त्र और योचितका इवम विचार। गर्भके प्रथम भाग कबल उठता है। अतु खाता स्त्रीके कर्षमें मेहुन पावरप कर्षिणे मर्म रज जाता है। किन्तु इस मर्ममें धक्का पड़ति पेहक गुह नहीं होता। इसीसे बसन्तमान निश्चल पड़ता है। (इवम्)

बसन्तक (सं० पुं०) बसन्तमिध जायते, बस जन ड। १ राक, भूय। २ मर्म, इमक।

बसन्तकोट्टक (सं० पुं०) बसन्तमज्ज उट्टक; उट्टवति पञ्चानु, इ तत्। घासउट्टक, माकका पेड़।

बसन्तरिया (सं० स्त्री०) मध्यपञ्चामार, बसन्तारको दुत्तान।

बसन्तार (सं० पुं०) जातिविशेष, एक नीम। यह हिन्दुजान और बिहारके बनिबोसे उत्पन्न है। बसन्तार घासका व्यवसाय करती है। कोई कोई सम-भ्रता, कि पहिर बगानेवाको 'खेरवार' नामक बन्ध जातिसे बसन्तार मन्त्र निश्चय है। फिर कोई 'बसन्तार' मन्त्रसे बसन्तार नामको उत्पत्ति बताता है। किन्तु इन बातोंमें कोई समीचीन मासूम नहीं पड़ती।

इस जातिके लोग प्रधानतः बड़ भोजियोंमें निरक्षर हैं,—बनौबिया, बियाहुतिया या भोजपुरी, देववार, जेठवास, पदोन्नाशो, बालसा और खरिदवा। सिवा इसके बसन्तारोंमें बहुतसे सुबहमान भी हैं। उन्हें 'राबो' या 'कचाल' कहते हैं। बनौबिधे सुसल-मान कलाओंको रायबरीकीसे रचनेवासे बताते हैं।

इस जातिमें बिबवाविवाह प्रचलित है। बिया हुतियोंके बयनानुसार पड़ते बिबवाविवाह प्रचलित न था, किन्तु पोछे होमे लगा। फिर यह क जातिको उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहते—चादि पुत्रपत्ने सन बसन्तार निश्चय है। चादि पुत्रपत्ने दो पत्नी रहतीं। 'बियाची' और 'समाई'। बियाची पत्नीके यर्मजात सन्तान बियाहुत और सगाई पत्नीके यर्मजात सन्तान पञ्चामार नामसे परिचित हैं। बियाहुत मध्यका व्यवसाय मध्यमान और अपनी जाबसे मोहोहन वा उपमका "पण्ड्ये" नहीं करती। यह काल ताड़ीला नाम बसाते हैं। खरिदवा अपनी खेतीका नामकरप गाड़ीपुर मित्राके कियो घामपर ठहराते हैं। उन्हें बिबाहुतोंको भति निश्चयत मोहोहन और उपमके पण्ड्येहनसे पलग रहते भी मध्यमान वा मध्य मध्य सम्मने कोई पापति नहीं। कूटरे बसन्तारकधवालोंको पारबन्धन पुकारते हैं। किसी बसन्तारके 'बियाची' नामी एक लपटकी रहो। उसीके गर्भजात सन्तानके जेठवार निश्चय है। किन्तु जेठवारोंके बयनानु-सार 'जेठपुर' नामक घामसे इस खेतीका नामकरप

हुवा है। इसी प्रकार पूर्वोक्त कई निषिद्ध विषयोंके तागतम्यसे अन्यान्य श्रेणियोंका विभाग कल्पना किया जाता है। विद्याहुत और खरिदहा अपने वंश, माता-महकी गोष्ठी, पिढमातामहकी गोष्ठी वा पितामहकी मातामहकी गोष्ठीमें विवाह नहीं करते। यही चाल जेसवारोंमें भी देख पडती है।

विद्याहुत तथा खरिदहा पूसे १४, जेसवार पूसे १०, और वनौधिये ७से १४ वत्सर तक कन्याको विवाह देते हैं। किन्तु कन्याकी अपेक्षा वरका वयस कयी वत्सर अधिक रहना आवश्यक है। पुरुषका विवाह सब श्रेणियोंमें ८से १४ वर्ष तक ही जाता है। विवाहमें हिन्दुस्थानी बनियोंकी रीति रहती है। "सिन्दूरदान"के पीछे विवाह सम्पूर्ण होता है।

विवाहसे पहले 'घर देखो' 'घर देखी' और 'पानवांटी' तीन कुत्ताचार हैं। केवल वनौधियोंमें यह तीनों आचार देख नहीं पडते। वरके पिताको मर्यादाकी रक्षाके लिये कुछ नकट रुपया देना पडता है। इस प्रथाको 'तिलक' कहते हैं। २१) ४०से अधिक तिलक नहीं चढ़ता। कलवार एकसे चार तक विवाह कर सकते हैं। प्रथमा पत्नीके वन्ध्या होने पर ही ऐसा परन्त्यन्तर पडता है। सभी श्रेणियोंमें विधवाविवाह चलता है। व्यभिचारिणी होनेसे यह पत्नीको छोड़ देते हैं।

धर्म—प्रायः कलवार वैष्णव होते हैं। फिर भी अन्यान्य ग्रामदेवताओंकी पूजा किया करते हैं। विद्याहुत और खरिदहा आषण शुक्लके दो सोमवारोंकी शोखानामक देवतापर चावल और दूध चढाते हैं। फिर उसी समय (आषण शुक्ल) बुध तथा बृहस्पतिवारके दिन 'काली' एवं 'वन्दे'की छागल तथा मिष्टान्न और महुल वारके दिन 'गौरैया' देवताकी स्नानपायी शूकर शायक एवं मय उल्लगं किया जाता है। आषण शुक्ल शनिवारके दिन जेसवार 'पांचपीर' पर और भाद्र कृष्ण एकादशी तथा माघ शुक्ला एकादशी एवं त्रयोदशीकी वनौधिये 'ब्रह्मदेव' पर पिष्टक एवं मिष्टान्न चढाते हैं। उक्त सकल निवेदित द्रव्य कलवार स्वयं भोजन

करते हैं। केवल उल्लगित स्नानपायी शूकरशायक खाया नहीं—मृत्तिकामें गाड़ा जाता है। पांचपीरोंका प्रसाद सुसलमानोंको भी बांट देते हैं।

पूजादि और पौरोहित्यादिका कार्य एक श्रेणीके ब्राह्मण करते हैं। वनौधियोंके पुरोहित कनौजिये ब्राह्मणोंकी भांति सन्मानार्ह हैं। कलवार शवको जलाते हैं। त्रयोदश दिन आह होता है। वनौधिये ७म वर्षसे न्यून मृत सन्तानका शव गाड़ देते हैं।

जीविका और पशुपत्या—शराव वनानेका व्यवसाय ही इनकी मूल जीविका है। वनौधियों, देशवारों और खालसावोंको छोड़ अन्यान्य श्रेणीके कलवार दूसरा व्यवसाय भी चलाते हैं। अधिकांश कृषिकार्य किया करते हैं। बाणिज्यादि चलानेवाले लोगोंकी ही कलवारोंमें सम्भ्रम मिलता है। छोटे-नागपुरमें भक्त श्रेणीके कलवार व्यवसाय करनेसे समधिक सम्भ्रान्त हैं। किन्तु उनमें विश्वासिता देख नहीं पडती। सामान्य मजदूरोंकी भांति वह भी खाते पीते हैं।

यह अनाचरणीय हैं। ब्राह्मणादि कलवारोंका स्पृष्ट जल व्यवहार नहीं करते। भाजकल अधिक खोग खेतीवारीमें लगे रहते हैं। कारण गवरनमेष्टने इनका जातिगत व्यवसाय अपने हाथमें ले लिया है।

सर्वापेक्षा चम्पारन और मुजफ्फरपुर जिलेमें कलवार अधिक रहते हैं।

कलविद्ध (सं० पु०) कलं मधुरासूटं वद्धते रीति, कल-वकि-भच् पृषोदरादित्वात् अत इत्वम्। १ चटक-पत्नी, गौरवा। इसका संस्कृत पर्याय—कुलिङ्ग और कालकण्ठक है। भावप्रकाशने कलविद्धको शीतल, स्निग्ध, स्वादु, शुक्र एवं कफकारक और सन्निपात नाशक कहा है। गृहचटक अतिशय शुक्रकारक है। २ कलिङ्गक वृक्ष, कर्षोदिका पेड़। ३ कसबू, धव्वा। ४ श्वेतचामर, सफेद चंवर। ५ त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपका एक मस्तक। भागवतमें लिखा है,—

किसी समय इन्द्रने ऐश्वर्यके मदमें मत्त हो सुराचार्य बृहस्पतिकी भवमानना की थी। इससे बृहस्पति अन्तर्हित हुये। फिर असुरोंने देवताओंकी बहुत सताया। ब्रह्मानी त्वष्टुपुत्र विश्वरूपको पौरोहित्यमें

ज्या पशुर अंशामसि उत्तरमिदि तियो वपदिय दिया ।
 देवगह भी तदनुसार लन्ने सुरोचित बना कायं लम्बा
 इन करने लगी । किन्तु विग्रहप्य पितामह वगैरे
 प्रति आमाविक खेचवयत विपकार पशुरोंको यत्र
 भाय दि देसि सि । अमय इन्को यह बात पचवत
 हुयो । इन्होंने क्रोधमें विग्रहपयि मस्तक धाट डाले ।
 लम्बे तीन मस्तक थे—ब्रह्मिन्कार, ब्रह्मविद् और
 तिलिार । जिस सुखसे यह सुरापान करते लखे
 ब्रह्मविद् कहते सि । (०८५) ३ तोर्षविधिय ।
 ० पारावत, बबूतर । ८ धामचटक, पावका गौरवा ।
 ८ अष्टचटक, भासा गौरवा ।

ब्रह्मविद्ब्रह्मिनोद् (सं० पु०) सुखको एक बाल
 लावका एक डंभ । इन्होंने मस्तकपर दोनों हाथ ली
 जाकर बुभाये जाते हैं । फिर लन्ने पशुको पर
 बसाकर गोथे ऊपर बसाते हैं ।

अमय (सं० पु०) वर्ष मङ्गुलाव्ययम् यवति अह
 पूरव्यसमये प्राञ्चोति ब्रह्म-य गतो ह । अन्वाचार
 विधिय, बड़ा । इसका अर्थवत पर्याय—घट, छट, निय,
 ब्रह्मस, ब्रह्मिन् ब्रह्मसो, ब्रह्मिन्, ब्रह्मगो, कुम्भ और
 करीर हैं । तन्मयारोह ब्रह्मब्रह्मिन्ने शीघ्राभरकरभने
 ब्रह्मसका परिमाण इस प्रकार विद्या है,—“ब्रह्म
 व्यासमें ४० पशुलि और ब्रह्मतामें सोचव पशुलि रहना
 चाहिये । सुख पाठ पशुलि होता है । फिर ३६
 पशुलि विष्टार और ब्रह्मताविधि ब्रह्मसको कुम्भ
 कहते हैं । यह सोमह या बारह पशुलिसे कम रहना
 चाहिये ।” २ द्वीपपरिमाण, ८ घेरकी तीक्ष्ण ।

ब्रह्मपद्भिर् (सं० पु०) ब्रह्मयज् शीर्षरश्मन्, ब्रह्मयद्
 भाथि ब्रह्मि । यात्रिक ब्रह्मस विष्टारव्, पूजादि ब्रह्मकी
 तोड़ फोड़ ।

ब्रह्मयपोतव (सं० पु०) लर्षविधिय, ब्रह्मसो नागका नाम ।

“ब्रह्मविद्ब्रह्मिनोद् ब्रह्मसो नागस्य” (गणप, पर्व १६ ५०)

ब्रह्मसि (सं० श्री०) ब्रह्मं यदोरमासिन्धं ध्वति
 नायवति, अह गो-धनि । १ इन्द्रिपथो, पिठवन ।
 ब्रह्म-धु डि । २ घट, बड़ा ।

“ब्रह्मविद्ब्रह्मिनोद् ब्रह्मसो नागस्य” (गणप)

ब्रह्मसो (सं० श्री०) ब्रह्मिन्कोप । १ ब्रह्मप्राविधिय,
 यपनी । २ इन्द्रिपथो, पिठवन । ३ तोर्षविधिय ।

ब्रह्मसोबण्ड (सं० त्रि०) ब्रह्मस्य बण्डव्य बण्ड
 पञ्च, बबूको । १ ब्रह्मसोके बण्डकी भांति बण्डबुद्ध
 सुराहीदार गरदननामा । (पु०) २ अविधिय ।

ब्रह्मसोपदो (सं० श्री०) ब्रह्मसोको भांति पद रखने-
 वाली, जिसके बड़े-भेसा घेर रहें ।

ब्रह्मसोमुच (सं० पु०) ब्राह्मव्य विधिय, एक राजा ।
 इसका सुख ब्रह्मसोको भांति होता है ।

ब्रह्मसोसुत (सं० पु०) ब्रह्मस्य सुत इव ब्रह्मसोत्
 ब्रह्मव्यवसात् । भगवत् सुनि । पत्न्या देवी ।

ब्रह्मसोदर (सं० पु०) ब्रह्मस इव ब्रह्मसज्ज, बबूको ।
 १ दानविधिय । (इन्द्रिप १०० ५) (त्रि०) ब्रह्मसोकी
 भांति उदरविधि, जिसके बड़े-भेसा घेर रहें ।

ब्रह्मस (सं० पु०) क्षिन् ब्रह्मस लक्षति योमते व सव्-
 पन् । १ ब्रह्मस, बड़ा । २ त्रोच परिमाण ८ घेरकी
 तीक्ष्ण । ३ कुम्भ । बाबिकापुराणमें लिखा है—
 पशुतलहडको देवाशुके जाकर मन्वते समय विष्णु-
 लार्मि देवोंको ब्रह्मसो नो घट पूवब् इवब् बनाये
 थे । इसीसे ब्रह्मका नाम ब्रह्मस पड़ा । निर्वाचनस्थमें
 भी कहा है,—

“ब्रह्मो ब्रह्मं यद्विद्य इ वैश्वानं विवर्षव्या ।
 ल्पिन्धो इत्थं व वैश्वानं पचवत्थं न पचये ३”

३ नामविधिय एक साथ । (गणपारव) ३ मन्दिर-
 का विष्टारमण्डल, इमारतकी चौटीका अंगूठा ।
 ३ बाओरके एक राजा । इनका उपरनाम रपादिज
 या । यह तुलसी पुत्र रहें । ८८३ यक्षके व्याव
 मास तुलसी इन्हें राजा बनावा । राजा होते हो यह
 पिताको कुट्टिक इष्टिये देखने लगी । फिर इन्होंने
 तुल पर बड़ा पत्न्याचार किया था । किन्तु मन्त्री उल
 पत्न्याचार सह न सके । पत्न्याः प्रधान मन्त्री हुल
 करने पिताको विज्ञासन पर बैठवा । फिर ब्रह्मस
 पिताके यज्ञोत्तर रहने लये । अन्ध कम्पट इनके सहव
 थे । अमय लम्बे सहवाससे अरिज इतना बिनहुल,
 कि इन्होंने पपनी भगिनी और तनहाका सतोख मड
 किया । इह राजा इनके धाचरके पत्न्या व्यति

हुये और समस्त धनरत्न वांट राज्य छोड़ कर चल दिये। फिर यह पिताको मारनेकी खोजमें लगे थे। किन्तु अपनी माताके कातर वाक्यसे इन्होंने उक्त दुरभिसन्धि छोड़ी। तुकने मनकी दुःखसे आत्मघात किया। यह भी कुछ दिन अपनी सौला देखा मर गये। इनके पीछे उत्कर्ष काश्मीरके राजा हुये।

(राजतरङ्गिणी, ७म तरङ्ग)

कलसचेद्व—कर्णाटकके अन्तर्गत एक पवित्र तीर्थ स्थान।

(स्कन्दपुराणके कलसचेद्वमाहात्म्य)

कलसरी (हिं० स्त्री०) १ पञ्चविंश, एक चिड़िया। इसका शिर कण्ठवर्ण रहता है। २ मलयुद्धकौशल विशेष, कुशीका एक पेंच। इसमें बिल्लाडी अपनी जोड़की नीचे दबा मुखकी धोर बैठ जाता और अपना दाहना हाथ उसकी बांहमें डाल पीठ पर लाता है। फिर उसके दूसरे हाथकी कलाई पकड़ बांधी धोर और नगाना और उलटाना पडता है।

कलसा (हिं०) कलस देखो।

कलसि (सं० पु०) केन जलेन लसति, क-लस्-इन्। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। २ जलपात्रविशेष, गगरी।

कलसिरी (हिं० स्त्री०) विवाद करनेवाली स्त्री, भगडाल औरत। कलसरी देखो।

कलसो (सं० स्त्री०) कलस-डोप्। १ कलस, घड़ा। २ पृश्निपर्णी, पिठवन। ३ शिखर, कंगूरा।

कलसोका (सं० स्त्री०) कलसी स्वार्थे कन्। कलस, घड़ा।

“अवलम्बित कर्पूरशुली कलसोका रघयप्रवीचता।” (नैषध २८)

कलसीसुत (सं० पु०) कलस्यां जातः सुतः, मध्य-पदलो०। कलसीसे उत्पन्न होनेवाले अगस्त्य मुनि।

कलसोदधि (सं० पु०) कलस इव उदधिः-मन्यनाधार-त्वात्। समुद्र। मन्यनका आधार होनेसे समुद्रकी उपमा कलससे दी गयी है।

कलसोदरी (सं० स्त्री०) कलस इव उदरं यस्याः, बहुव्री०। कलसकी भांति उदर रखनेवाली स्त्री, जिस औरतके घडेकी तरह पेट रहे।

कलसवन (सं० वि०) मनोहर शब्द करनेवाला, जो दिनकथ आवाज लगाता हो।

कलसर (सं० पु०) कलसासौ स्वरश्चेति, कर्मधा०।

कलरव, मधुर अव्यक्त शब्द, गानेकी मीठी और बारीक आवाज।

कलह (सं० पु०-स्त्री०) कलं कामं हन्ति अत्र, कल-हन् पघिकरणे ड। १ विवाद, भगडा। इसका संस्कृत पर्याय—युद्ध, आयोधन, जन्ध, प्रधन, प्रविदारण, मृध, आस्तन्दन, सख्या, समीक, साम्परायिक, समर, अनीक, रण, विग्रह, सम्पहार, अभिसम्प्रात, कलि, संस्कोट, संयुग, अभ्यामर्द, समाघात, संग्राम, अभ्यागम, आहव, समुदाय, संयत्, समिति, आजि, समित्, युध, शमीक, साम्परायक, संस्कोट और युत् है। २ पथ, राह। ३ खड्गकोप, तलवारका म्यान। ४ प्रतारण, भिड़की। ५ कल, धोका। ६ मुण्डी।

कलहंस (सं० पु०) कलेन मधुरास्फुटध्वनिना विशिष्टो हंसः, मध्यपदलो०। १ कादम्ब, एक हंस। इसका संस्कृत पर्याय—कादम्ब, कलनाद और मरालक है। २ राजहंस। “कुन्दावदाता. कलहंसमानाः प्रतीविरि शोवसुदेनिं मादेः।” (मद्दि) ३ पीतवर्ण हंस, पीला हंस। ४ जलकुक्कुट, सुर्गाशी। ५ राजश्रेष्ठ, बड़ा राजा। ६ परमात्मा। ७ ब्रह्म। ८ ब्राह्मण। ९ एक रागिणी। यह मधु, शङ्करविजय और श्रीमतीकी योगसे निकलता है। १० छन्दोविशेष। यह अतिजगतीके अन्तर्भूत और त्रयोदश अक्षरविशिष्ट होता है। इस छन्दमें १म, २य, ४र्थ, ६ठ, ७म, ८म, १०म एवं ११श अक्षर लघु और ३य, ५म, ९म, १२य तथा १३श अक्षर गुरु लगता है।

उदाहरण नीचे देखिये—

“यमुना विहार कुतुके कलहंसी ब्रजकाशिनौ कमलिनौ क्लृपकेनिः।

जगन्निचकारिकलकण्ठनिनादः भ्रमदं तनोतु तव मन्दतनूत् ॥”

(छन्दोमञ्जरी)

कोई कोई इसको ‘सिंहनाद’ भी कहता है।

कलहंसक (सं० स्त्री०) अरोचकाधिकारका कवल मात्र, भोजन अच्छा न लगने पर दवाके पानीका कुत्ता। कलहकार (सं० वि०) कलहं करोति, कलह-क-ण्वल्। विवादकारी, भगडाल।

“इन्द्र कलहकारोऽसौ शब्दकारः पपात खन्।” (मद्दि)

कलहकारक, कलहकार देखो।

कलहकारी (सं० त्रि०) कलह क्त चिति । विवाद कारक, भयङ्काल ।

कलहकारी (सं० स्त्री०) विद्वान्महच्छब्दो स्त्री ।

कलहनाशन (इ० पु०) कलहं नाशयति कलह नय-पिच्-ञ् । १ कुट्टन इत्य । २ पूति करण, करण् ।

१ कलह मिटानेवासा, जो भयङ्का निवडता हो ।

कलहनी (हि०) कर्त्तव्ये स्त्री ।

कलहकारिता (हि०) कलहकारिणी स्त्री ।

कलहप्रिय (सं० पु०) कलह प्रियो यत्न, बहुश्लो० ।

१ मारक । मारकको कलह बहुत पच्छा समता है ।

(त्रि०) २ विवादप्रिय, भ्रगक्षेपे च्छु, य इहमेवासा ।

कलहप्रिया (न० स्त्री०) कलहप्रिय कलह प्रिया,

३ वा ० तत् । मारिका, मेना ।

कलहर—मध्यप्रदेशभाषां एक क्विचि ज्ञाति । कलहर

पवित्राय दुकानदार है । मध्यप्रदेशमें इनको सध्या

पवित्र देख पड़तो है । पक्षिही वैमग्ना प्रदेशमें ही

३ कलह पवित्र कलहर रहते हैं । यह जाति प्रधानत

तोन म्याकर्म विमल है—सिंहोरा, परदेशी और जैन

कलहर । सिंहोरे पहले मुन्देलखलमें रहते थे ।

किर वहींके भाकर यह मध्यप्रदेशमें बसे । पहले

सिंहोरे पयमीको जमर बगिया कहते थे ।

परदेशी ही मध्यप्रदेशके प्रादि कलहर हैं । यह

कहते हैं—हम भारतके उत्तराखण्डके भाकर मध्य

प्रदेशमें बसे हैं । जैन कलहर समालख्यत पौरधर्मभङ्ग

होनेके दूरके कलहरीमें जोटे समझे जाते हैं ।

कलहङ्काना (सं० स्त्री०) मारिका मेना ।

कलहकारिता (सं० स्त्री०) कलहात् कर्त्तरिता पक्षात्

परितापमाहा इति शेष । नायिका विधेय एक पौरत ।

इसका कवच यह है—

“कदु कलहनि मयलनं दीपकलन वा ।

कलाधारकपदोन्नि कलहकारिता तु वा ॥” (वहीवर्णन)

जो नायिका प्रथम पतुरोहकारी नायकको छोडके

छोड पीके पबतातो, वह कलहकारिता कहातो है ।

उदाहरण यथा—

“ना पतुरवर्णं हर्षं न व इमासी इति च वीरिणं

कलह निवर्तये विद्वच्छोभासोऽपि दूरीकृतः ।

यताने विविच्यन्तु पचमही कलहयथा बुद्ध्या

एतिसमस्तस्य एव वदथा कथं च वदथि ॥” (वहीवर्णन)

“कारो यत्तु वृत्तिर्भवेत्तु यत्तु वृत्तिर्भवेत्तु वृत्तिर्भवेत्तु

मनी वही न वृत्तिमनी वदु कथं वृत्ति मति कथं व वृत्ति ॥

एव पचमे मने कलहो मति कथं वृत्ति मति कथं वृत्ति ॥

वही न वृत्ति मनी वृत्ति मति कथं वृत्ति मति कथं वृत्ति ॥ १ ॥

स्वामि, कल्याण सभोद, विद्यास, ज्वर पौर

प्रकाशदि कलहकारिताको क्लिया है । (रत्नवती)

कलहापहृत (सं० त्रि०) कलहिन पपहृतम् । विवाहमे

पपहृत मगक्षेपे मिया हुआ ।

कलहास (सं० पु०) हासविधेय एक ईंसी । मधुर

एवं पक्षुः ३ भनिपुत्र हासको कलहास कहते हैं ।

कलहनी (सं० स्त्री०) १ मनीको पक्षी । २ विवाद

कारिवाको स्त्री, भयङ्काल पौरत ।

कलहो (सं० त्रि०) कलह इति । कलहहृत भगङ्काल ।

कलह—कचित्तोत्र सध संध्याविधेय द्विसावको हास

बहुं यद्यः । इसका प्रधान नाम ‘करणु’ है ।

कला (न० स्त्री०) कलयति क्लितो वर्न सचिनोति

कल यत्तु टाप । १ मूलकणठि, सूद, म्याज ।

२ शिखादि, कारीगरी बने रह । ३ पय, विद्या ।

४ तोड काठा परिमित समय । ५ समय हातुके

मिस्वच्छालका पवकाय दो भातुपोंके मिलनिकी

बगडका मोका । इसीके द्वारा रस रखादि भातु पूरक

रह सकते हैं । ६ खोका रज । ७ मीका, नाव ।

८ कपट, कुरैव । ९ रायिके पयका एक भाग ।

रायिका १० वां पय भाव पौर मावका १० वां खण्ड

कला कलहाता है ।

“कलहनी कला कला इत्तु कला कल कलति ।

इत्तु विद्वत्तु कलहकारिता कलहनी ॥” (वहीवर्णन)

१० कलहा पौड्य माग । इनका नाम कलहा,

मानवा, पूवा, रुद्रि, रुद्रि, रति, इति, मयिनी, कन्दिका

कान्ति, क्योत्का, नी, मोतिरत्ना, पूर्य, पूर्वायता पौर

वरका है । कलहो यह कलायें पञ्चि पञ्चि दिव

कल कल पोते हैं । इसीके दिन दिन कलमे पर

पयमावका जोतो है । पञ्चिके प्रथम सूर्यके द्वितीय,

त्रिथेदेवाके तृतीय कलहके चतुर्थ, वदकारके पञ्चम,

इन्द्रके पट, देवर्षिके सप्तम, अक्षयपादके अष्टम, यमके नवम, वायुके दशम, उमाके एकादश, पितृ-लोकके द्वादश, कुवेरके त्रयोदश, पशुपतिके चतुर्दश और प्रजापतिके पञ्चदश कला पीने पर षोडश कला जलमें घुस कर ओषधिके शरीरपर पहुंचती है। गो सकलके जल तथा ओषधि प्रविष्ट कला पीने पर अमृत स्वरूप और होकर निकलती है। इस चौर-जात घृतको मन्त्रपूत बना अन्नमें आहुति देनेसे चन्द्र फिर दिन दिन प्राप्यायत होते हैं।

११ सूर्यका द्वादश भाग। इनका नाम तपिनो, तापिनो, धूम्रा, मराचि, ज्वालनी, रुचि, सुपद्मा, भोगदा, विश्वा, बोधिनो, धारियो और चमा है।

१२ अग्नि-मण्डलका दशम भाग। इन्हें धूम्रा, अर्चि, उष्मा, ज्वालनी, ज्वालनी, विस्फ, लिङ्गनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला और दृश्यकव्यवहा कहते हैं।

१३ चतुःषष्टि (६४) कला। शिवतन्त्रमें इन सकल कलाओंका नाम मिलता है, यथा—गीतशाय, नृत्य, नाय, चित्र, भूषण, निर्माण, तण्डुल तथा कुसु-मादिसे पूजाके उपहारकी सजा, पुष्पशय्या, दन्त-वसन-अङ्गराग, मणिभूमिकाका कर्म, शय्यारचना, सदकवाद्य, चित्रायोग, मालाग्रन्थन, चूडानिर्माण, वेशभूषाकरण, कर्णपत्रभङ्ग, गन्धलेपन, भूषणयोजना, इन्द्रजाल, कौमारयोग, हस्तलाघव, विविध शाकपूपादि भक्ष्य प्रस्तुतकरण, पानकरस-रागासवादि, योजना, सूचीवापकर्म, सूतक्रीडा, प्रहेलिका, प्रतिमाज्ञा, दुर्व-चक योग, पुस्तक पाठ, नाटिका एवं आख्यायिका दर्शन, काव्य समस्यापूरण, पट्टिकाधैत्रवाणविकल्प, तर्ककर्म, तक्षण, वास्तुविद्या, रीत्यरत्नादि परीक्षा, घातुवाद, मणिरागज्ञान, आकरज्ञान, हृत्वायुर्वेद योग, मेघ कुक्कुट एवं लावक युद्धविधि, शकशारिका प्रज्ञापन, उत्सादन, केसमाञ्जन कौशल, अक्षर सृष्टिका कथन, स्तौच्छित कविकल्प, देशभाषाज्ञान, पुष्पशकटिका निमित्तज्ञान, यन्त्रमाटका, धारण-माटका, सम्पाद्य, मानसा काव्य क्रिया, क्रियाविकल्प, क्लितक योग, अभिधान-कोष-कन्दोज्ञान, वस्त्रगोपन, अतविशेष, आकर्षण क्रीडा, बालक्रीडनक, वैनायिकी

विद्याज्ञान, वैजयिकी विद्याज्ञान और वैतालिकी विद्याज्ञान। किसी किसी पुस्तकमें सूचीवाप कर्म तथा सूत्र क्रीडाको एक पद बना षोडशमरुक् वायु अधिक सन्निवेश और वैतालिकीके स्थान पर वैद्या-सिकी पाठ देख पड़ता है। १४ जिह्वा, जीम।

“कला पराच सुखो कृता विषये परियोगयेत्।” (चतुःषष्टिके)

१५ शिव। १६ लेश। १७ अल्प समय। १८ विभूति। १९ सामर्थ्य, ताकत। २० संख्या, गणना। २१ शौर्यादि गुण, बहादुरी वगैरह सिद्धत। २२ फलन। २३ विमोक्षणक्री च्येष्टा कन्या। यह मरीचिकी पत्नी थीं। २४ जीव देहस्य षोडशकला। इन्हें प्राण, अहा, ध्योम, वायु, जल, पृथिवी, इन्द्रिय, मन, अक्ष, वीर्य, तपः, मन्त्र, कर्म, लोका और नाम कहते हैं। २५ मात्रायुक्त एक लघु वर्ण।

“षड्विपरीश्री मने कलामाय मने सुचो निरुत्तराः।

न सनात पराशिता कला वैतानोयोक्तो रानी गुरुः ॥” (हत्तरनाहर)

२६ ठाट, बनाव। २७ कदनी, किला। पहले भारतमें किलाकी भाव बना जलपथसे आते-जाते थे। बड़े बड़े किलेके द्वार काट वांससे बंधने पर यह भाव बनती है।

कलाई (हिं० स्त्री०) १ कलाची, पड़वा। हथेलीके ऊपरी जोड़को कलाई कहते हैं। पुरुषके रक्षा बांधने और स्त्रीके चूड़ी चढानेका स्थान कलाई ही है। कवितामें यह शब्द प्रायः आता है। २ व्यायामविशेष, एक कसरत। इसे दो मनुष्य मिलकर करते हैं। एक दूसरेकी कलाई बलपूर्वक पकडता और दूसरा अपनी कलाई सुमा उंगलियोंके सहारे उसकी कलाईपर चढ़ाया करता है। ३ कनायी, पूजा। यह पार्वत्य प्रदेशमें फसल आने पर होती है। फसल कटनेसे पहले दश-वारह बालका पूजा बांधकर कुल देवताको अर्पण करते हैं। ५ कुकरी, सूतकी लच्छी। ६ कलावा। यह हाथीके कण्ठमें बंधती है। पालक इसीमें पद डाल हाथीको शांतते हैं। ७ पलान, अंहुई। ८ माघ, उड़द।

कलाकन्द—अतिजगती नामक कन्दका एक भेद।

ब्रह्माब्ज (का० पु०) मिडल्ल विमिष, बिडो
बिडलको बरयो। यह बोया पीर मिडो मिडालर
बनाया जाता है।

ब्रह्माब्ज (वि० पु०) उच्चविमिष, एक दिङ्ग। (Unona
longiflora) यह पत्रोबकी भाति ईन्डनेमं प्रति सुन्दर
लगता है। इस देवदारो मो बरति है। ब्रह्माब्ज
भारतवर्ष पीर सबहोपरमं उत्पन्न होता है। बिन्दु
मन्त्रात्रमं इसको उपज पवित्र है। दाहिनाबने
पयोक न जोमिथे लोग ब्रह्माब्जको जो पयोक ब्रह्मा
करति है।

ब्रह्माब्ज (सं० स्त्री०) विष, कडूर।
ब्रह्माब्ज (स० स्त्री०) ब्रह्माग्ं गोतादि चतुर्बटि
ब्रह्माविष्ये कुम्भक मिपुत्र, ७-तत्पु। गोतादि चोत्त
ब्रह्ममं मिपुत्र, हुनरमन्, नाचने यामिं जोमिपार।

ब्रह्माब्ज, ब्रह्मण् ईको।
ब्रह्माब्जि (स० पु०) ब्रह्मामिं बिडि: ब्रह्माको
ब्रह्माब्जि बिडिर्वा यज्ज ब्रह्मो०। १ ब्रह्मर्प, कामदेव।
(स्त्री०) २ ब्रह्माको, मोको।

ब्रह्माब्ज (स० स्त्री०) ब्रह्माब्जा चातुर्पु, हुनरकी
ब्रह्माग्ं।
ब्रह्माब्ज—ब्रह्मण्पका एक प्राचीन तीर्थ। (वैमिर्ण्य)
ब्रह्माब्ज (सं० पु०) १ धारवपकी। २ पीरयाज्ज
प्रवर्तक बरपिसत। ३ ब्रह्माब्ज।

ब्रह्माब्ज (स० पु०) पञ्चविमिष, एक ब्रह्मिपार।
ब्रह्माब्जि (सं० पु०) मासि ब्रह्मविमिष, बिडो
बिडलका बान।

ब्रह्माब्जि (सं० पु०) दर्श, ब्रह्मण्।
ब्रह्माब्जिका (स० स्त्री०) ब्रह्मा पञ्चति गण्डति प्राप्नोति
वा, ब्रह्मा पञ्च-पञ्च क्षाब्जं ब्रह्म टापु पत इत्यम्।
१ प्रकोठ, ब्रह्माई। मूर्धर (कुम्भको)ये मचिबन्ध
(पञ्चुं) पर्यन्त इत्यमामको ब्रह्माब्जिका वा प्रकोठ
ब्रह्मते है। २ पञ्चके जानुका पचिम भाग, सोड्के
हुटनेका पगला बिडल।

ब्रह्माब्ज (स० स्त्री०) ब्रह्मा पञ्च ब्रह्मोम्। ब्रह्मण्पका ईको।
ब्रह्माब्ज (वि० पु०) मन्त्रबुधका कोयज विमिष,
कुम्भोका एक वैज। इसने बिडाङ्कीये कामने ब्रह्म हुटरा

पञ्चवाम् दक्षिण पद पामि ब्रह्माता, तब ब्रह्म पपना
ब्रह्म इत्य मोचेये लक्ष्मि दक्षिण इत्य पर ब्रह्माता है।
फिर बिडाङ्की ब्रह्म जानु भूमि पर लया दक्षिण इत्यये
लक्ष्मि दक्षिण ब्रह्मा पञ्चवाम् पीर मिरकी लक्ष्मि
दक्षिण पञ्चके मिडाल वाम इत्यये लक्ष्मि दक्षिण
इत्य चोचने लगता है। पञ्चको दक्षिण इत्यये
विपचको ब्रह्मा ब्रह्मा ब्रह्म दिव् लये मिराये है।
ब्रह्माब्जये वेत्तक ब्रह्म जाता है।

ब्रह्माब्जो (सं० स्त्री०) ब्रह्माये ब्रह्मये, ब्रह्मा-जन्म
ब्रह्म टापु। ब्रह्मीनी, मंगरेका।

ब्रह्माब्ज (सं० पु०) गण्डयासि, एक ब्रह्म।
ब्रह्माब्ज (स० पु०) ब्रह्मण्पकी, सवेद ब्रह्मरेका।
ब्रह्माब्ज (स० पु०) ब्रह्मा पञ्चवाम् लक्ष्मिदीनां पञ्च
पादले मन्त्राति, ब्रह्मा पा दा ब्रह्म। लक्ष्मिबाट, मोगर।

ब्रह्माब्ज (सं० पु०) ब्रह्मा पञ्चवाम् लक्ष्मिदीनां पञ्च
पञ्चि मोपयति, ब्रह्मा-पञ्च-ब्रह्म। लक्ष्मिबाट, मोगर।
ब्रह्माब्जो—१ ब्रह्मर्पे प्रदेमके इत्यिय विमामका एक
मिडल। यह पञ्चा० १२ १० १० २० २० पीर
देया० ७२ ११ ०६ ११ १० तक पञ्चवाम् है।

मिडल २०६० वर्ग मील लगता है। ब्रह्माब्जोके
लक्ष्मिदीनां मीमा नही बोवापुरके पञ्चके मिडल गयी
है। इसने मोवापुर मिडल पीर पञ्चवाम् लक्ष्मि
बोवापुरके ब्रह्मण्पका है। दक्षिणको मासप्रमा
नही, पूर्व एवं दक्षिणपूर्व मिडलका पञ्च पीर पचिम
सुबोबराण्ण कामबण्को तथा पाठ है।

यह ज्ञान प्राचीन दण्डकारण्डके पञ्चवाम् है।
ब्रह्माब्जोके मिडल परण्डमं ब्रह्मण्पका बिन्दुनेके
देवनेकी बहुत सी चीजे हैं। पञ्चुं मन्त्रपञ्चि
पोराबिड इत्य इतर लक्ष्मि पङ्के हैं। बिन्दु इन लक्ष्मि
निर्माताको समझनेका कोको लयाज नहो। ब्रह्माब्जो
दिक्षिं देवको, ब्रह्माब्जो, ब्रह्मण्पको, भूतबिड्, गलमको,
विपनी पीर मन्त्राब्ज प्रब्रह्मण् है। लक्ष्मि सबल क्षाब्जोको
शिव गुण्ण तीर्थ समझते हैं। देवा, लक्ष्मिदी पीर
विडोको मोलाके प्रवण्डये माहात्म्य स्थित हुवा है।
ब्रह्मी ईको।

लोक लयाजा ब्रह्मण् है—ब्रह्म वन ब्रह्मण् ब्रह्मण्

डाली गयी थी। फिर भी प्रमाण मिला, कि सुदूर विगतकाल पर कलादगीमें नगर स्थापित हुआ। ई०के २२ शताब्दमें टलेमिने यहाँकी बादामी, कलकरी और इन्दी नामक नगरीका उल्लेख किया है। इन तीनोंमें बादामी वा वातापीपुरी नामक स्थान ही प्रतिपाचीन है। पल्लव राजावोंने दुर्भेद्य दुर्ग बना निरापद प्रबल प्रतापसे राजत्व रखा था। ई०के ६ठे शताब्दमें चालुक्य राजा १म पुनिकेशीने पल्लवोंको हटा बादामी अधिकार किया। पुलिकेशीके पीछे ७६० ई० तक चालुक्योंका राज्य चला। फिर राष्ट्रकूट राजा हुये। ८७३ ई०में राष्ट्रकूटवंश गिर जानेसे कलचुरि और हयशाल वल्लाल वंशकी ठहरी। उन्होंने ११८० ई० तक राज्य किया। अनन्तर कलादगीमें देवगिरिके यादवोंका शासन लगा। उस समय देवगिरि (वर्तमान दौलताबाद) नगरमें यादव राजावोंकी राजधानी रही। १२८४ ई०को अलाउद्दीनने देवगिरिपर आक्रमण किया। यादववंशीय रामचन्द्र देवगिरिके राजा थे। उन्होंने सुसहमानोंके आक्रमणसे घबरा दिल्लीके अधीश्वरकी अधीनता मानी। ई०के १५वें शताब्द युसुफ़ आदिल शाहने दक्षिणापथमें एक स्वाधीन राज्य जमाया। बीजापुर उसकी राजधानी बन गया। विज्ञापुर देखो।

पहले कलादगीके अनेक बौद्धस्तूप चीन-परि-ब्राह्मक यशरु सुयाङ्गने आकर देखे थे। उन्होंने इस राज्यकी ६०,०० लि (कोई साढ़े चार सौ कोस) विस्तृत लिखा है।

इस जिलेमें भांमा, कृष्णा, धोन, घाटप्रभा और मालप्रभा नदी प्रवाहित है। सिवा इनके और भी कितनी ही नुद्द्र स्रोतस्वती विद्यमान हैं। धोनका जल बहुते खारी, किन्तु दूसरी नदियोंका मीठा है।

कलादगीमें लोहा, स्लेट (तख्तीका पत्थर), कालापत्थर, चूना, लाल विष्ठीर प्रकृति खनिज द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

कृषिमें ज्वार, बाजरा, गेहूँ और कपासकी उपज अधिक है। फिर भण्डे, अलसी, तिल और कुसुमकी भी कोई कमी नहीं। वसन्तके आगममें कुसुमका सुनहला फूल खिल जाता है।

वनमें व्याघ्र, शूकर, हक (भेड़िये), शृगाम और हरिण रहते हैं।

जलवायु पत्यन्त मन्द नहीं। फिर भी यथा-कालको वृष्टि बन्द रहनेसे प्रच्छा गम्य कम उपजता, जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है। १३८६ ई०से १४०६ ई० तक बहुवर्षव्यापी दुर्भिक्ष लगा था। उसमें कलादगी एककाल ही उत्सन्न हुआ। दूसरे भी कई दुर्भिक्ष पड़े। १७८१ ई०में अन्नकी अभावसे सैकड़ों नरमारियोंने प्राण छोडा। इस प्रकारकी लोग कष्टासरूपी महामारी कहते हैं। वास्तविक प्रकारमें मरे अमरस्य स्त्रीपुरुषोंका कद्वान भूगर्भ खादते समय आज भी मिनता है।

कलाधर (सं० पु०) कला: धरति, कला-ध-प्रच् । १ चन्द्र, चांद । २ चतुःपटिकनाभिज्ञ व्यक्ति, चौमठ कला जाननेवाला । ३ गिष । ४ छन्दोविशेष । यह दण्डकका भेद है । इसके प्रत्येक चरणमें १५ गुह और १५ लघुके पीछे एक गुरु लगता है ।

कलाधिक (सं० पु०) कृष्ण, ट, मुरगा ।

कलानक (सं० पु०) शिवके एक अनुचर ।

कलानाथ (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद । २ गन्धर्वविशेष । इन्होंने सोमेश्वरसे सङ्गीत सीखा था ।

कलानिधि (सं० पु०) कला: निधीयन्ते ऽस्मिन्, कला-नि-धा-कि । १ चन्द्र, चांद । २ चतुःपटि कलामिज्ञ व्यक्ति, हुनरमन्द ।

कलानुनादी (सं० पु०) कलं अनुनदति, कल-अनु-नद-णिनि । १ शब्द निकालते निकालते गमनकारी, बोलते बोलते चलनेवाला । २ भ्रमर, भौरा । ३ कलविद्, गौरवा । ४ षटक, चिडा । ५ कपिञ्चन, एक चिड़िया । ६ चातक, पपीहा ।

कलान्तर (सं० लो०) अन्या कला अंशः, सुप्सुपेति समासः । १ लाभहृदि, सूद, व्याज । २ चन्द्रकी अन्यकला ।

“पुषीप सापथमयान् विमेषान् ज्योत्षामरापीव कलामरादि ।”

(इमार ११५)

कलान्यास (सं० पु०) कलानां न्यासः, ६-तत् । तन्त्रोक्त न्यासविशेष । शिष्यके शरीरपर कलान्यास करना चाहिये । पादतलसे जानुतक ‘सो नृवत्य नमः’,

जासुं नानिबत वीं प्रतिहाये नम' नामिषि कष्ट
देय तत्र 'वीं विद्याये नम', कष्टुषे लडाट तत्र
'वीं गान्धे नम' पौर लडाटसे ब्रह्मरन्ध्र तत्र 'वीं
गान्धेनोताये नम' मन्थ द्वारा ग्वाष कर पुनर्वार
लत्र सक्क मन्थ द्वारा ब्रह्मरन्ध्रे यथाक्रम पदतत्र
तत्र लौट पाने है।

कथावत (वि०) कथापु० ईकी।

कथाप (स० पु०) कानां मातां पाश्चोति, कथा-
पाप पच, कथा पाप्यति पनेन कथा-पप्-कल्-ना।
१००। क शा। १ स मु० डेर। २ मयूरपुच्छ, मोरकी
पूछ। ३ मिक्षा, चन्द्रहार। ४ पक्षहाट, खिर।

"कथाप इति कथारूपेण सुखापचयस्य च निरूपणम्" (इलाह)

१ लूच, तरकग। २ चन्द्र, चाँद। ३ चतुरा श्रोत्रियार
थाइमी। ४ व्याकरण विधिप। कथाप व्याकरणका
पपर नाम कुमार पौर आतम्य है। कथापचन्द्र
नामक मकलत यन्त्रमें इस व्याकरणको उपपत्तिसे
सम्बन्ध पर लिखा है—

राजा मानिवाहन किसी मन्त्रियोके हाथ लक्ष्मोडा
करती थी। लक्ष्मणे केवलसे राजीने रतिके रत्नमें सुख
सुख भूख राजाको लक्षा,—“मोदक देहि देव” पर्याप्त
है देव। सुभ्रवर पानो मत डाको। मूर्च्छता बय
राजाने लत्र क्षरप्रदित पद न समझ राजीको एक
मोदक (सख्खु) दिया था। इससे बुधिसती राजीने
यह कर निन्द्या लडायो—मैरे पति जोसे भी राजा मूर्च्छ
है। शाकिवाहनने भायोको यह बात शर्बवर्मा मुखसे
बोली थी। फिर शर्बवर्माने उनको शिक्षाक बिजे
आतम्य (कथाप-व्याकरण) बनाया। आतम्य वा
कथापकी रचनाके सम्बन्धमें एक बिम्बदन्तो है।

शर्बवर्माने मानिवाहनको श्रुत्यक बनानेके लिये
प्रतिष्ठत जो कुमारकी पाराधना करावी थी। भयवान्
आतिथिय पाराधनासे वीत जो अपने व्याकरण ज्ञानसे
पाकिर्मावको 'सिधो बचममाचार्य' पद्यपाठरूप लूख
कन्ने प्रदान किया। कुमारसे व्याकरणका प्रथम छल
मिषने पर इसका लूखरा नाम 'कुमारव्याकरण'
पक्ष गया।

दुर्गो बिम्बदन्तो यह है,—शर्बवर्माने मानिवाह

नसे निबधत प्रतिष्ठा कर कुमारकी पाराधना लडायो
थी। कुमार मयूर पर चढ़ उनके समक पाकिर्भूत
हुये। शर्बवर्माने मयूरक कथापदेय पर 'सिधो बर्ब-
समाचार्य' लूख लिखा दिया था। वह लूखसे जो
लक्ष्मणे मनेमें व्याकरणका पूर्ण ज्ञान पा गया।

शर्बवर्माने लक्ष्मणकी प्रथम लया क्षतम्य व्याकरण
बनाया है। मयूरके कथापमें प्रथम लूख लिखा रहनेसे
इस व्याकरणका नाम कथाप पड़ा।

कथाप टोकाचार्यके मतानुसार शर्बवर्माने ईयत्
तत्र पर्याप्त पक्षलूखमें यह व्याकरण प्रथमन किया
था। इसीसे इसका नाम आतम्य हुआ। १०

भारतमें कथाप नाम प्रसिद्ध है। वेद्याकरण
पापिनिधि गोषे इसीको खंडता मानते हैं। वाष्पनिब
केवल कथाप व्याकरणको पाषोपान्त मन लमाकर
पदमेंसे विद्यार्थी पक्षित जो चलता है।

शर्बवर्माने कथापमें तीन पर्यायोके लूख बनाये हैं—
सन्धि चतुष्टय पौर पञ्चमात। लक्ष्मिने छत्तुल्ल प्रचलन
नहीं किये।

दुर्गासिंहने कथापकी उक्ति बनायी थी। इनकी
इति न लगनेसे कथापव्याकरण सम्पक पौर वाका-
रके लिये सुबोवगम्य खैले होता। दुर्गासिंहने अपने
इतिमें पञ्चाचारक पाकिर्लका परिचय दिया है।
वाष्पनिब इसका देख चमत्कृत जाना पड़ता है।

दुर्गासिंह ईकी।

कथाप व्याकरणकी पनेक टोकाय भारतमें प्रच-
लित है। उनमें शोपति-रचित कथापउत्तिटोका,
सिधोचललन पक्षिका कबिराब्रह्मत कथापउत्तिटोका,
हरिरामललत व्याप्यासार रघुनाथमिरोमचि रचित
व्याख्या, आतम्यचन्द्रिका पौर सत्तुहति प्रसिद्ध है।

• (१) "कथापनेके लिये कुम्भपाथे पुनर्पिठिकम्; उपाने
कथापपने बधा लवेदेसि करप्रदलियवदालम् (कथन स. ३०१) इति
करकेल्ल कथतः । क पानेकर्ममाचार्यो कथापपने इति परदे। तत्र
कथनिध छत्तुपति। ईयत् तत्र कथलम्; कुम्भक कथलम् बरे।
का लोपरर एव इति ईयत् चाँदः" (सिधोचलन कथलपक्षिका)
(२) "ईयत् कथलम्; ईयत्कनी इलाह ग. ४८" (कथिपन कथा
कथलपक्षिका)

८ ग्रामविशेष, एक गांव । (माणवत १७१४) १० घञ्ज
विशेष, एक इचियार । (माणव १७१५) ११ वाष्प, तीर ।
१२ वेनु, गाय । १३ व्यापार, काम ।

“इन्द्रोऽप्यस्य कथमप्यने ।” (माणव १७१५)

कलापक (सं० पु०-क्री०) कलाप संचायां कन् ।
१ हस्तीका गणवन्ध, हाथीका गिलावां । आर्धे-कन् ।
२ कलाप । कलाप-क्रीडा ।

यस्मिन् काले मयूरः कलापिनो भवन्ति सकलापि
तस्मिन् काले ट्यं ऋणम्, कलापिन्-वुन् । ३ ऋपि-
विशेष । ४ कविताविशेष, किर्मी किष्मकी गायरो ।
चार प्रकारकी कविता एकत्र मिल जानसे कलापक
कहाता है,—

“इन्द्रोऽप्यस्य कथमप्यने च सुदृशम् ।

हामन्तु इन्द्रोऽप्यस्य कथमप्यने विभिरिधने ।

कलापकं चतुर्मिष पवामि कृत्वा महेम् ।” (माणव १७१५)

सुन्दानितकका नामान्तर विशेषक है । किसे
किसो ग्रन्थमें ‘विमिः शोकैर्विशेषकम्’ पाठ मिलता है ।
कलापग्राम (सं० पु०) कलापनामको ग्रामः, मध्यपट-
लो० । ग्रामविशेष, एक गांव । महामारतमें लिखा—
कलापग्राम हिमालयके उत्तर बसा है ।

“हिमालयके उत्तर बसा कलापग्रामविशेषम् ।” (मन्वि ३३३५ ११११)

कलापच्छन्द (सं० पु०) मुक्ताका एक प्रामुष्य,
मीतियोंका एक गहना । इसमें मीतियोंकी चौबीस
लडियां लगती हैं ।

कलापद्वी (हिं० स्त्री०) नौकाकी पटरियोंमें गण
प्रकृतिका प्रवेगनकार्य, लहाजकी पटरियोंमें सन्
वगेरहका ठुंसा जाना । यह शब्द पोर्तुगीज़ ‘कल-
फेटर’का अपभ्रंश है ।

कलापद्वीप (सं० पु०) कलापः तन्नामको ग्रामः द्वीप
इव, उपमितस० । कलापग्राम, एक पुराना बसती ।
कलापद्वीपमें सोमवंशीय देवर्षि और सूर्यवंशीय
सुदर्शन—दो ऋषि तपस्या करते हैं । कलियुगके
अन्तमें यही दोनों ऋषि चन्द्र और सूर्यवंश पुनः
पलायिगे । (मत्स्य)

कलापशिवा (सं० पु०) एक मुनि ।

कलापा (सं० स्त्री०) पद्महारके तीन कारणका स्थान ।
कलापानुसारी (सं० पु०) कलापव्याकरणका मतानुयायी ।
कलापिनी (सं० स्त्री०) कलापच्छन्दः अन्वयस्याम्,
कलाप-इनि-ड्वीप् । १ रात्रि, रात । २ नागरमुक्ता,
नागरसीया । ३ मयूरी, मोरनी ।

कलापी (सं० पु०) कलापोऽन्वयस्य, कलाप इनि ।
१ अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़ । २ मयूर, मोर ।
३ कोकिल, कोयल । ४ तूष् वाणादिभारी, तरकग
तीर वगेरह रखनेवाला । ५ कलाप व्याकरण-
धारी । ६ वैशम्पायनके एक छात्र । ७ मयूरके पक्ष
फेलाकर नाचनेका समय ।

कलापूर (सं० पु०-क्री०) वाद्ययन्त्रविशेष, एक वाजा ।
कलापूर्ण (सं० पु०) कलाभिः पूर्णः, ३-तत् । १ चन्द्र,
चांद । २ चतुःपटि कलाभिः, हुनरमन्द । ३ अंग-
मावसे परिपूर्ण, एक हिन्दोसे भरा हुआ ।

कलावतून (तु० पु०) १ स्वर्ण वा रोष्यमय सूत्र, मोने
या चांडीका तार । यह रोगमपर चढ़ाकर नपेटा
जाता है । २ कलावतूनका फीता । यह मचकेसे
पतला रहता और कपड़ेके किनारे पर टंकता है ।

कलावतूनी (तु० वि०) स्वर्ण रोष्य प्रकृतिके सूत्रसे
निर्मित, कलावतूने तैयार किया हुआ ।

कलावत्तु (हिं०) कलावत्तु ईवां ।

कलावानु (हिं० वि०) नटकिया कारक, कला खाने-
वाला, जो सफाईसे उच्छ्रिता कृता हो ।

कलावाजी (हिं० स्त्री०) १ नटविद्या, उच्छ्रानने
कृदनका हुनर, टंकली । २ नृत्यादि, नाच वगेरह ।
कलाबोन (हिं० पु०) वृक्षविशेष एक पेड़ । यह
श्रीहृद्, चट्टग्राम और ब्रह्मदेगमें उपजता है । उंचाई
४० ५० फीट रहती है । फलका बीज सुंगरा चावल
या कलौबी कहाता है । इसका लेह चर्मरोग पर
चलता है ।

कलाभृत् (सं० पु०) कलां विभर्ति, कला-भृत् क्लिप्
तुगागमय । १ चन्द्र, चांद । २ गीतादि कलाभिः,
हुनरमन्द ।

कलाम (सं० पु०) १ वाक्, लुमला । २ कबल,
बात । ३ प्रतिभा, वादा । ४ बह्व्य, पतराज ।

कलामक (सं० पु०) कलाम कृमि प्रयोदरादित्वात् साङ् । कलमकान्ध, कङ्कन ।

कलामोषा (विं० पु०) कान्धविशेष जिह्वी विष्यका शाल । यह प्रधानतः बङ्गालमें होता है ।

कलमि कलमिका ईको ।

कलामिन्धवा (य० श्लो०) कला धर्म विद्यायते प्रमुक्तेति पञ्चाम्, कला विन्धे क-डाप् प्रयोदरादित्वात् सुम् । १ कलदान, यज्ञं ईनेको जातत । २ इति शीविन्धा, घृटयोरी ।

कलाप (सं० पु०) कला पयते कला पय पच । पिम्बीकान्धविशेष, मटर । (Pisum sativum) इसका पकृत पर्वण्य—सतोलक इरीयु कण्ठिक, त्रिपुट, पतिवर्त्म, सुपुत्रचक्र, शमन नीलक, कण्ठी, सतीक इरीपुत्र, सतोन घोर सतोनक है । मात्र प्रकाशके मन्थी यह मङ्गुररस पाकमें मङ्गुर, कच और वायुवक क होता है ।

कलायका याक ईवत् कलायकुल मङ्गुररस कच मीदक और वायुवकायक है । (कल्पद्रुम्)

कलायक (सं० पु०) कलमयानि कङ्कन । यह विहित् कवाय मङ्गुर, रत्नप्रशान्तिजनक, कच, ईवत् वातक विप्लव और मुखसमानरूप जाता है । (जैत्रिकेण)

कलायका (सं० श्लो०) १ मङ्गुराको मङ्गरिया । २ गण्डपूर्वा पानोपर होनेवाली एक दूब ।

कलायकच (सं० पु०) बाहुरोगमेद, वायुको एक बीमारी । इस रोगमें मनुष्य समनारम्भमें अङ्गुली मति लङ्कङ्कानि बनता है । कारण उपको पम्बिका प्रबन्ध होता पक जाता है । (इत्, ५) पञ्च घोर पङ्की मति इसकी मी विहितसा करना चाहिये ।

कलायकच रोगमें मिस कयामिने बड़ा उपकार होता है ।

कलायकच कलमक ईको ।

कलायन (सं० पु०) कलानां शून्यमोतादीनां धर्म प्रातिपद्य कङ्कुरी । नर्तक तबहारको धारपर नाचनेवाला ।

कलायदाक (सं० श्लो०) याकविशेष, मटरका साम । यह मीदक, कङ्कुर और त्रिदोषको नीतनेवाला है । (कल्पद्रुम्)

कलायसुप (सं० पु०) कलायकत सू, मटरका मीक या रहा । कच सुप, प्राचीं सुपीतत कच और विस्, धरोचक तथा कलामाक होता है । (कैवल्यचक्र)

कलावा (सं० श्लो०) कलाय टाप । १ गण्डपूर्वा पानोपर होनेवाली एक दूब । २ धर्म ईको । ३ यंत्रां दूर्वा, ममेद दूब । ४ शून्यचक्र काका चना ।

कलार (विं० पु०) कलपाक, कलवार ।

कलाहवा (सं० श्लो०) जर्बसेतकी हृक पोला केशवा ।

कलाक (विं० पु०) कलपाक धाराव केशनेवाला कलवार ।

कलाकाप (सं० पु०) कलं महाराष्ट्र ई पाकपति, कल चा-कप-पय । १ खमर, गू ननेवाला मीर । कर्मकां । २ मङ्गुर पाकाप, मोठी बीसी । (वि०) ३ मङ्गुर पाकापवायी, गू ननेवाला ।

कलाकतो (सं० श्लो०) कला सङ्गोतादय सन्नि पञ्चाम्, कला मत्तुप कौप मज्ज क बङ्गुरी० । १ तुम्बुह नामक मन्थकी बीका । २ दूमिक राजाको पङ्की । ३ राबिहाकी माता । ४ पण्योविशेष, कोई परी । ५ गङ्गा । "हृन्मना कथारो" (कारी ५२००) ६ डोका विधिय । तन्धवारमें इसका निधम सिद्ध है—

यिन्धकी कपवायी रज निम्बक्रिया समापनपूर्वक प्रथम अस्त्रिवाचनके साथ सङ्कष्य करना चाहिये । गुह पाचमन ही हारदेयमें सामान्य धर्मदानपूर्वक हारको पूनी । फिर कर्के दक्षिणवह धारी बड़ा हारको बाम याका कू और दक्षिण पङ्क सिद्धोड मङ्कपमें प्रवेश करना चाहिये । वहाँ गुह मेष्यन दिक्मि वासुदक घोर ब्रह्माको पूजते हैं । इसके पीछे कर्के दिव्य मन्थी भावायको घोर देव दिक् विद्म पञ्च मन्थ एक एक द्वारा पन्थरीचक विद्म घोर बाम पाकिंधि पावात द्वारा मीम विद्म ब्रह्माणा पङ्कता है । तत्पश्चादि हृथ पञ्चमन्थये पमिमन्धित कर गुह पेंकरी है । फिर गुहको पाचनपदि अस्त्रिवाचन, विद्योताशन एक गन्थ पङ्कति द्वारा मङ्कपयोगन करना और दक्षिण पूजा दूब बाम सुवाचित कलपूर्व कृष्य तथा पृष्ठ-देयको बज्ज प्रशासनके विधि एक पात्र रखना पङ्कता है । इसके पीछे सर्वदेव हृतवा प्रदोष कला पुत्रा

ज्ञानपूर्वक वाम और गुरु, परमगुरु एवं पराशर, दक्षिण गणेश और मध्यमें इष्टदेवताको वह प्रणाम करते हैं। अस्त्रमन्त्र एवं गन्धपुष्प द्वारा दोनों हाथ संशोधन करने पीछे उन्हें ऊर्ध्व दिक् तीन तालि और दशदिक् तुहिसे बांधना चाहिये। फिर गुरु वक्रि, वीज तथा जलसे वक्रिके प्राकारको सींच भूतशुद्धि करते हैं। इसके पीछे माटकान्यास, प्राणायाम, पीठन्यास, अङ्गादिन्यास और मन्त्रन्यास होता है। फिर गुरुवी सुद्धा देखा ध्यान, मानसपूजा और अर्घ्य-स्थापन करना चाहिये। इसके पीछे अर्घ्यपात्रसे किञ्चित् जल प्रोक्षणीपात्रमें डाल उसी जलसे आत्मा और पूजाके उपकरणको गुरु तीन बार सींचते हैं। पीठमन्त्रसे शरीरमें धर्मादिकी पूजा की जाती है। फिर हृत्पद्मके पूर्व आदि देशोंमें पीठशक्ति पूज मध्यमें पीठपूजा होती है। हृदयमें मूल देवताकी पूजा त्रैवैद्य व्यतीत देवत्व गन्धादि द्वारा करते हैं। इसके पीछे रुस्तक, हृदय, मूलाधार, पट प्रभृति सष ऋद्धिमें मूलमन्त्रसे पांच पुष्पाञ्जलियां दे यथाशक्ति मन्त्र जप समापन करना चाहिये।

यह समस्त कार्य प्रोक्षणीपात्रके जलसे सम्पादित होता है। फिर प्रोक्षणीका जल बदल वहिःपूजा आरम्भ करते हैं। प्रथम शारदोक्त सर्वतोभद्रमण्डलके आदिका अन्यतम मण्डल विधान कर घट रखना चाहिये। मण्डलकी पूजाके पीछे कर्णिका धान्य पूर्ण कर तण्डुल फैलाते हैं। फिर तण्डुलोंपर कुश विस्तार-पूर्वक आतपतण्डुल संयुक्त कुशासन विन्यास किया जाता है। इसके पीछे मण्डलमें पीठोक्त देवता और प्रादक्षिण्यके वक्रिकी दशकलाको विन्यास कर पूजना पढ़ता है। फिर अस्त्र मन्त्रसे प्रक्षालन, चन्दन, अशुक् एवं कर्पूरसे धूपदान और त्रिगुण सूत्रसे वेष्टन कर स्वर्ण आदिसे रचित कुम्भको पूजते हैं। इसके पीछे कुम्भमें विष्टर, आतपतण्डुल एवं नवरत्न डाल और प्रणव उच्चारणपूर्वक कुम्भ तथा पीठका एकत्व पीठ-स्थापन करना पढ़ता है। फिर कुम्भकी चारो दिक्, चेर सूर्यकी द्वादश कलाको स्थापनपूर्वक पूजते हैं।

इसके पीछे आत्माके भेदसे माटकामन्त्र प्रतिलोम

भावमें जप, देवता बुद्धि पर वटादि वृक्ष किंवा पन्नाश वस्त्रलके कपाय, तीर्थजल अथवा सुवासित कपाय द्वारा कुम्भ भरना चाहिये। चन्द्रकी अमृत आदि षोडशकलाको प्रादक्षिण्यसे जलमें चित्ता तथा मन्त्र द्वारा पूजा कर और एक गह्र वटादि वृक्षके वपाय प्रभृतिसे भर अष्ट गन्धद्रव्यसे विनोडित करते हैं। उसमें आवाहनपूर्वक सकल कलाओंकी पूजा होती है। प्रथम आग्निकी दश कला पूजी जाती हैं। प्रति-लोम भावसे मूल मन्त्रका जप और मनघो मन मन्त्र-देवताका ध्यान करते हैं। फिर प्राणप्रतिष्ठापूर्वक प्रत्येकको पूजना पढ़ता है। इसके पीछे सूर्यकी तपिनी आदि द्वादश और चन्द्रकी अमृत आदि षोडश कलाको आवाहन कर पृथक् पृथक् पूजते हैं। परि-शेषको पचास कलाकी पूजा करना पढ़ती है। सृष्टि आदि कवर्ग एवं चवर्ग दश, जरादि टवर्ग तथा तवर्ग दश, तीक्ष्णादि पवर्ग एवं यवर्ग दश, पीतादि एवर्ग पञ्च और नृहत्यादि भवर्ग षोडश कलाओंकी पूजना चाहिये। समर्थ होनेसे प्रत्येकको आवाहन कर पाद्य आदिसे पूजा करना उचित है। फिर कलामय शङ्का क्षाय कुम्भमें डालते हैं। कुम्भका सुख अश्वत्थ, पनस एवं आस्रपक्षव इन्द्रवह्नीसे लपेट कल्पवृक्ष बुद्धिसे आच्छादन करना चाहिये। फिर कल्पवृक्षफल बुद्धिसे उक्त सुखपर फल, आतप और चसक रखना पढ़ता है। इसके पीछे निर्मल पट्टवस्त्रद्वयसे कुम्भको वेष्टन और मूल मन्त्रसे कुम्भकी मूर्ति कल्पन कर यथोक्तरूप देवताके ध्यानपूर्वक आवाहनादि सहकारसे पूजा करते हैं। देवताके अङ्गमें अङ्गन्यास, धेनु एवं परमो-करणसुद्धा प्रदर्शन, प्राणप्रतिष्ठा और षोडशोपचार पूजा समापन होनेपर १००८ वा १०८ वार मन्त्र जपा जाता है।

फिर मन्त्रके दश संस्कार समापन कर गुरुको शिष्यके नेत्रद्वय मन्त्र और वस्त्रसे बांधना चाहिये। पुष्प द्वारा उसकी पञ्चलि भर स्वयं मन्त्र पाठपूर्वक देवताकी प्रीतिके लिये गुरु कलसमें उक्त पुष्पाञ्जलि चढ़ाते हैं। इसके पीछे नेत्रका वन्धन खोल शिष्यको कुशासनपर बैठाना चाहिये। स्वकृत पूजाके क्रमात्-

चार भूतग्रहि पादि विज्ञानकर मियाके देहपर मन्त्रोक्त
 म्नाह करना पड़ता है। कुम्भक देवताको पञ्चोप
 चारके पुनर्वाँर पूज करहुत मियकी पन्थ पाठनपर
 बैठती है। कुम्भके कलाहचक्रपर सबक पङ्कव मियके
 मन्त्रपर रक्ष मन ही मन मातका अपपूर्वक बसिष्ठ
 स द्वितीया पमिनेकेके मन्त्रके कुम्भका जन्म मियके
 ग्रहोपर स्थल करना चाहिये। मिय परमियत
 लक्षके पाचमन से ब्रह्महय परिवर्तनपूर्वक गुहके
 समीप उपवेशन करता है। फिर गुह मियसंज्ञान्त
 पीर पाठदेवताको एक समस्त गन्धादि द्वारा
 पूजती है।

इसके पीछे मन्त्रके मियकी मिया बाँध मियके
 ग्रहोपर कलाह्यास पीर मन्त्रकपर प्राय रथ १०८ बार
 मन्त्र अप कर मी पमुक मन्त्र तुम्हें सुनाता हूँ ' कष्ट
 भूये मियके हाथपर कलहाह्न करना पड़ता है।
 मियकी मी 'दयस' कष्टकर धरु लेना चाहिये। फिर
 गुह मन्त्रादिबहुत मन्त्र दिनातिके इतिथ कर्म तोन
 बार तथा नाम कर्ममें एकबार पीर ली वा शुद्धे नाम
 कर्ममें तोन बार एक इतिथ कर्ममें एक बार सुगर्ते
 है। मन्त्राह्नक पीछे मियकी गुहके करकपर मिर
 जाना पीर गुहकी क्वे मन्त्र द्वारा छठाना चाहिये।
 मिय छठकर छठ मन्त्र १०८ बार अपता पीर कुम्भ,
 तिक एक जल से गुहकी कर्ब'क' दक्षिणा तथा
 दीक्षाके पञ्चको कमल सामग्री प्रदान करता है।
 पन्थान्त ब्राह्मणोंकी मी यन्त्रामत्रि दान से परितुष्ट
 करना पड़ता है। गुह मन्त्रदानके पीछे पन्थी यन्त्रकी
 रक्षाके लिये १००८ वा १०८ बार मन्त्र अपती है।
 पन्थमें ब्राह्मणोंको मित्राह्न पादि छिदा मिय मोहन
 करता है। कारथ दोकाके दिन गुह पीर मिय
 दोनीको अपवास निश्चि है।

कलावन्त (वि०) कलावन्तकी।
 कलावा (वि० पु०) १ स्वविधिय, सूतका एक
 कलावा। यह टेढ़ीमें लिपटा रहता है। २ मङ्गलसूत्र,
 राखीका कलावा। इसका सूत्र रत्नपीत रहता है। इसे
 मङ्गल कार्थमें इष्टा तथा कलथ प्रकृति पर लपेट देते
 हैं। ३ इष्टीके कण्ठका एक सूत्र। इसमें क्वे कर्षे

रहती है। महावत कलावेमें प्रथम पीर काल हाथोंको
 बाँधता है। ४ इष्टिकण्ठ, हाथीकी गरदन।
 कलावान् (सं० पु०) कला: सन्तान, कला मतपु
 मज्ज न। १ सङ्गीतविद्यावित्, कलावत। २ कम्प,
 पाँद। ३ नट, कलाकाजी करनेवाला। (त्रि०)
 ४ कलाविद्ये, हुनरमन्थ।
 कलावित् (सं० पु०) क' पाविशायति विधियेय
 रीति, कला-पा वि कौ क। कलावित्, सुरगा।
 कलावित्त (सं० पु०) कलाया कामाविधीन विवस
 पञ्चस, इ-तत्। षट्क, विद्या। षट्कदेवो।
 कलावित्तन्त्र (सं० ज्ञो०) एक तन्त्रमाफ़।
 कलाम (सं० पु०) वाद्यविधिय, एक वाजा। यह
 पतिपाथोन समयमें बजाया पीर कमकुंये मङ्गाया
 जाता था।
 कालान्त (सं० ज्ञो०) एक तन्त्रमाफ़।
 कलायो (त्रि० ज्ञो०) ऐश्वर्यियेय एक सतर। दो
 तपु तोंके जोड़की कलोको कलायो कहते हैं।
 कलाहक (सं० पु०) कर्षे पावन्ति यत्-पा-इन्-ड
 र्धश्याय कन्। काहक नामक वाययन्त्र, एक वाजा।
 कलि (सं० पु०) कश्चि कलिरासयत्नेन वर्तते,
 १ विमोक्त ह्म, बड़ेकुंका पेड़। नलराजकि निर्वातन-
 को लियो समय कलिने विमोक्त ह्मका पञ्चकण्ठ
 शिवा बा, इसीसे उचका नाम कलि पड़ गया।
 (जन्म-१०५) कश्चि कर्षते। २ शूर, वीर, बहादुर।
 कलन्त कर्षमाना भावन्ते। ३ बिबाट, भयङ्का।
 ४ हुह, लफ़ायी। कश्चयति पापिन कश्चरति। ५ सुस-
 विधिय, एक फ़माना। चतुर्थ सुमको कलि कहती है।
 कलिपुराकमें कलिहुमको उत्पत्ति-कला इव प्रकार-
 के लिखी है,—

प्रथमके पन्थमें कालवितामह ब्रह्माने पृथ्वीके
 पापमय मखिन बोर पञ्चमी कलि की दी। पञ्चमी
 पन्थो मार्वरकोचना मियः नाको पञ्चोके गर्मथे
 'दथ' नामक पुत्र उत्पादन किया। फिर दथने
 माबा नाकी कौय भयिनेके गर्मथे 'कोम' नामक पुत्र
 पीर निहति' नाकी कन्धाको निहाला था। रको
 जाता भगिनीके जीवने कथ किया। जीवके पीरस

और उसको भगिनाके गर्भसे कलि उत्पन्न हुआ। उसका रूप तैलसंयुक्त पञ्चनकी भांति कृष्णवर्ण, सुखकराल, जिह्वा लोल, उदर काककी तरह और सर्वाङ्गसे पूतिगन्ध था। ऐसी ही भयानक मूर्तिके साथ वाम हस्त द्वारा उपस्थ धारण किये कलिने जन्म लिया और जन्म लेते ही स्त्री, मद्य, यत्न, सुवर्ण प्रभृतिमें पासक हो गया। कलिके औरस और उसको भगिनी दुरुक्तिके गर्भसे 'भय' नामक पुत्र तथा 'मृत्यु' नाम्नी कन्याको उत्पत्ति हुयी। (कलि १ च०)

कलियुगका लक्षण—जिस समय सर्वदा मिथ्या, तन्त्रा, नद्रा, हिंसा, विषादन, शोक, मोह, हीनता प्रभृतिका प्रभाव रहेगा, उसीका नाम कलिकाल पड़ेगा।

इस युगमें मनुष्य कामी और कटुभाषी होंगे। सकल जनपद दस्युपीडित रहेंगे। चारो वेद पापगण्डसे दूषित धन जायेंगे। राजा प्रजापीडन करेंगे। ब्राह्मण शिष्य और उदरपरायण बनेंगे। ब्राह्मणबालक व्रतशून्य और अशुचि निकलेंगे। मिश्र परिवारपीपक देख पड़ेंगे। तपस्वी ग्राममें टिकेंगे। न्यायी अर्थलोलुप ठहरेंगे। फिर मनुष्यमात्र शूद्रकाय, अधिक भोजनशील और चौर्य माया प्रभृतिमें समधिक साहसी होंगे।

कलिकालमें मृत्यु प्रभुको और तपस्वी व्रतको त्याग करेंगे। शूद्र तपोवैयके उपजीवी बन प्रतिग्रह लेंगे। सब मनुष्य उद्विग्न, अनलङ्कार एवं पिशाचतुल्य हो अस्त्रात अवस्थामें भोजन करते भी अग्नि, देवता, अतिथि प्रभृतिको पूजेंगे। पिण्डोदक क्रिया लोप हो जावेगी। सकल ही स्वोरत और शूद्रसम बनेंगे। स्त्रियां अल्पभाग्य, अधिक सन्तानवती और सत्पतिकी अवघ्नाकारिणी निकलेंगी। कोयी विष्णुकी पूजा न करेगा। किन्तु कलिकालमें एक मलाई रहेगी, कि कृष्णनाम कौतूहल करनेसे ही मानवकी सुक्ति मिलेगी। (गर्भसु० १२० च०)

उक्तसतन्त्रमें भी कलियुगका लक्षण कहा है,— इस युगमें वैदिकी शिष्या, पौराणिकी शिष्या और पाप-पुण्यको वेदसम्भव परीचा लोप हो जावेगी। स्थान स्थान पर गङ्गा द्विजमित्र देख पड़ेंगी। राजा ज्ञेच्छ-

जातीय और धनलोलुप बनेंगे। स्त्रियां प्रतिशय दुर्दान्त, कर्कश, कलहरत और पतिनिन्दक निकलेंगी। पृथिवी अल्प अस्थ उत्पादन करेगी। मेघ अधिक न बरसेंगे। वृक्षोंमें खल्प फल लगेंगे। भ्राता, पाक्यो, अमात्य प्रभृति सामान्य मात्र धनके लिये परस्पर लड़ेंगे। मद्य पीने और मांस खानेमें कोई न हिचकेगा। सबको निन्दा होगी। पापियोंको दण्ड न मिलेगा।

माघी पूर्णिमाको शुक्रवारके दिन कलियुगकी उत्पत्ति हुयी थी। इसका आयुःकाल चार लाख वत्सोस हजार (४३२०००) वत्सर है। आर्यभटके मतमें कलियुग १५७७८१७५० दिन रहता है।

श्रीमद्भागवतमें वर्णित है,—कलिमें मनुष्योंका ५० वर्ष परमायु होगा। कलिके दोषसे देहियोंका टेढ़ चौण पड जावेगा। वर्षाअमाचारा लोकोका धमंपय विगड़ेगा। धार्मिक पाषण्डप्राय बनेंगे। राजा दस्युप्राय निकलेंगे। मनुष्य चौर्य, मिथ्या, ह्यहाहिंसा आदि नाना हतियां पकड़ेंगे। ब्राह्मण आदिवर्ण शूद्रप्राय ठहरेंगे। गो छागलप्राय रहेंगे। वन्धु यानप्राय होंगे। मेघ विद्युत्प्राय देख पड़ेंगे। आपधिका गुण घटेगा। पर्वत नाचको झुकेंगे। गृह शून्यप्राय और धर्मरहित बनेंगे। लोग दुःसहचेष्टित देख पड़ेंगे। फिर धर्मके परिव्राणको सत्वगुणसे भगवान् कलिके अध-तीर्ण होंगे। आप (परोक्षित)के जन्मसे महानन्दके राज्याभियेक पर्यन्त ११५० वर्ष बीतेंगे। सप्त नक्षत्रात्मक सप्तर्षि मण्डलके मध्य उदयके समय दो नक्षत्ररूप ऋषि आकाशमें प्रथम उदित होते देख पड़ते हैं। उन दोनोंके बीच समदेशपर अवस्थित अश्विनी आदि नक्षत्र रातको रहते हैं। उनमें एक एकसे मिल सप्तर्षि मनुष्य परिमाणके सौ सौ वत्सर अवस्थिति करते हैं। वह सकल ऋषि अथ आप (परोक्षित)के समयमें मघाको पकड़े हुये हैं। सप्तर्षि मण्डलके मघानक्षत्रमें घूमनेसे कलिकी प्रवृत्तिके १२०० वर्ष बीतेंगे। फिर सन्ध्या अतिक्रान्त होगी। जिस समयसे सप्तर्षिमण्डल मघा छोड़ पूर्वापादाको चलेगा, उस समय अर्थात् नन्दाभियेक तक कलि प्रतिशय बढ़ेगा। जिस दिन कृष्णका वैकुण्ठ जाना हुआ, उसी दिनसे कलियुग लगा

है। दिव्य परिमाणके मङ्गल वरदा पीछे चतुर्थ बलि
-रीतनेपर पुनर्वात सम्बन्धन पारण्य होगा।

(नवग्रह १२४ अक्ष, २ अं. १०-१२ अं०)

इस युग्ममें चर्म बह पाद और अक्षम तोन पाद है।
मनुष्यके पात्रुका परिमाण १०८ वरपर और देवका
प्रमाण चर्मने चर्मने चावरी माङ्गे तोन चाप पढ़ता है।
चवतार चौकण्य है। युग्मके शिपका द्यम चवतार
कल्पि कल्पक को पापियोंका विनाय माचम करेगी।
आद्याच निरम्बि अक्षमतमाच और मोक्षनपात्रके
चनियम बन जायेगी। बलिभुगका विमिय चर्म दाम
है। अज्ञिता प्रथतिमे लिखा है,—

“नन्दर ३ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनेपात्र चर्मके चर्मो हुवे।” (वसुव रिवा)

सम्बन्धुर्ममें तपस्या, अंतानुर्ममें ज्ञान, हापरमें यज्ञ
-और बलिभुगमें ज्ञानमात्र विमिय चर्म है।

“कन्दरा ३ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।” (नवग्रह १२४)

सम्बन्धुर्ममें तपस्या, अंतानुर्ममें ज्ञान, हापरमें यज्ञ
-और बलिभुगमें ज्ञान, दवा तथा दम विमिय चर्म है।

“वरीचर्मः ३ वसुने ज्ञान अंतानुर्म अक्षम।

एतरे चवत्त शीत चर्मो हुवे।” (वरीचर्म)

सम्बन्धुर्ममें वैदिक चर्म, अंतानुर्ममें ज्ञान, हापरमें यज्ञ
-और बलिमें दाम, दया तथा दम विमिय चर्म है।

एतौ प्रकार बलिपुराच अन्विपुराच प्रथतिमें भी
एकवाक्यके दामका विषय चतुर्मोहित है।

बलिभुगको अज्ञिताके निचय सम्बन्धमें परापरमें
लिखा है,—

“वरे ३ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।”

सम्बन्धुर्ममें मनुष्यजिता, अंतानुर्ममें यौतम, हापरमें
यज्ञ तथा किचित और बलिभुगमें पारापरके जिता
चर्ममात्र है।

बलिके दोपका यान्ति को बलिपुराच, उदकास्टीय,
महाभारत और मित्रपुराचमें मित्रपूजाका उपदेय दिया
है। फिर सम्बन्धुर्मात्रमें एकमात्र महुर ही बलिभुगके
देवता अङ्गे लगे हैं।

“वरा वरदुर्गे १०८ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनाय रिवाः चर्मो हुवे।” (वसुव रिवा)

सम्बन्धुर्ममें ब्रह्मा, अंतानुर्ममें सूर्य, हापरमें विष्णु और
बलिमें मङ्गल देवता है।

अथानुर्ममें अग्निका और मोषाकको अग्निका
जापत देव माना है —

“वरी चवत्त शीत चर्मो हुवे।”

आयोवास महाप्राण प्रथति बलिजाचर्ममें सुविधा
उपाय है,—

“नन्दर ३ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।”

है रिवाके जुरीं दाम न हुवेके उपायन।

दिव्य बलिमात्र शीतानुर्म अक्षम वरने वरने।” (वसुव रिवा)

बलिभुगमें वाराचसोपुरोका जोड़ जोड़ोका सर्व
पापनाशक पापविध टुकरा नहीं। जो आद्याच दस
पुरीमें बाहर सर्वदा बना रहना, वह बलिभुग पापके
छूट परम पद या सञ्जता है। महास्नानके सम्बन्धमें
लिखा है—

“वरी चवत्त शीत चर्मो हुवे।”

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।” (वसुव रिवा)

सम्बन्धुर्ममें वरुदाय तीर्थ, अंतानुर्ममें सुम्बर, हापरमें
सुवदेव और बलिभुगमें एकमात्र यज्ञ ही को तीर्थ
समझना चाहिये।

“वरी चवत्त शीत चर्मो हुवे।”

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।” (वसुव रिवा)

योता, महा, मिषुच, अग्निका पञ्चल हब (दोपर
का देव) और हरिवासरको देवा का छोड़ बलिभुगमें
सहस्र चर्मकार्य नहीं होता।

हरिनामकोतनके साक्षात्पुत्र सम्बन्धपर कहा है,—

“वरी चवत्त शीत चर्मो हुवे।”

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।”

यज्ञानुच अक्षम वरने वरने।”

नन्दर ३ वसुने मेरुय प्रमहुरागे।

एतरे वरनेपात्र चर्मो हुवे।”

वरीचर्मः ३ वसुने ज्ञान अंतानुर्म अक्षम।

जो दिन रात अदृश्या बाह्यदेवका जोर्तन जगता,

हे नरश्रेष्ठ ! उसे कलि किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचाता । सर्वदा सकल स्थानों पर चक्रपाणिका नाम लेना चाहिये । इसमें अशौचकी विवेचना आवश्यक नहीं । क्योंकि नामकीर्तन ही पवित्रकारक है । ज्ञान वा अज्ञानवश हरिनामकीर्तन करनेसे पुरुषके सकल पाप अग्निसे काष्ठराशिकी भांति जल जाते हैं ।

“गोविन्दनामा यः कथिन्नरो भवति मृतमि ।

कीर्तनादिव तस्यापि पापं शान्तिं सद्यस्वधा ॥” (लन्दपुराण)

गोविन्द नामयुक्त किसी मनुष्यकी पुकारनेसे भी सहस्र पाप ध्वस्त होते हैं । महानिर्वाणतन्त्रमें लिखते हैं,—

“अध्याग्नेध्वविचारार्था न मुद्दि शौचकर्मपा ।

न संहितायैः स्मृतिभिरिष्टसिद्धिर्णामभेत् ॥ ६ ॥

विना ह्यगमसारेण कश्चि मास्ति गतिं प्रिये ॥ ७ ॥

स्मृतिश्च त्तिपुराणानि सर्वेषु कः पुरा गिषे ।

आगमोक्तविधानेन कस्यो देवान् यजेत सुधीः ॥ ८ ॥” (२५ चण्डास)

पवित्रापवित्र विचारहीन ब्राह्मण आदि वर्णोंकी शुद्धि वेदोक्त कर्म द्वारा न होगी । पुराण, संहिता और स्मृतिसेभी मनुष्य अपनी इष्टसिद्धि न पावेंगे । कलिकालमें आगमोक्त विधानसे देवताओंकी पूजा करना चाहिये ।

“पपमावः कस्यो नास्ति दिव्यमात्रोऽपि दुर्लभः ।

वीरसाधनकर्माणि प्रत्यक्षाणि कस्यो शुभे ॥ १२ ॥

कुलाचारं विना दीपि कस्यो सिद्धिर्न जायते ॥” (४ घं चण्डास)

कलियुगमें पशुभाव नहीं होता । फिर देवभाव भी दुर्लभ है । इस युगमें वीरसाधन प्रत्यक्ष फलदायक है । हे देवि ! कलियुगमें कुलाचारकी छोड़ दूसरे उपायसे सिद्धि मिल नहीं सकती ।

महानिर्वाणतन्त्रमें यह भी लिखा है,—जो इन्द्रियोंकी जीत कुलाचारका अनुष्ठान करेगा, जो दयाशील रहेगा, जो गुरुकी सेवामें तत्पर, पितामाताके प्रति भक्तिमान्, अपनी पत्नीमें अनुरक्त, सत्यव्रत, सत्यनिष्ठ एवं सत्यधर्मपरायण हो ‘कुलसाधन’ कोही सत्य समझेगा, जो हिंसा, मात्सर्य, दम्भ तथा द्वेष न रखेगा और जो कुलाचारके अनुसार स्नान, दान, तपस्या, तीर्थदर्शन, व्रत, तर्पण, गर्भाधान, पित्र्याह प्रभृति करेगा, उसको

कलि पोडा पहुँचा न सकेगा । कलिके दापमें एक प्रधान गुण यह निकलता, कि कलिकी सद्गुण मात्रसे श्रेय फल मिलता है । कलिका तारक ब्रह्मनाम है—

“हरे कृष् हरे कृष् कृष् कृष् हरे हरे ।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ॥”

बृहन्नारदीयमें निम्नोक्त सकल कार्य कलिके लिये निषिद्ध कहे हैं,—समुद्रकी यात्रा, कम्पण्डलुका धारण, पशुवर्ष कन्याका विवाह, देवसे पुत्रका उत्पादन, मधुपर्कसे पशुका वध, श्राद्धमें मासका दान, वानप्रस्थान्यम, अक्षता होती भी दत्तकन्याका पुनर्धार दान, दीर्घकाल पर्यन्त ब्रह्मचर्य, नरमेघ, अश्वमेध, महाप्रस्थानगमन, गोमेध यज्ञ, आततायो रहते भी ब्राह्मणकी हिंसा, सुराग्रहण, अग्निहोत्रकी हवनीमें भी लेशली-द्राका ग्रहण, (चाट्चूट) वृत्त एवं स्वाध्याय सापेक्ष अशौच, सहोच, मरणके अन्तमें प्रायश्चित्तका विधान, संसर्गका दोष लगते भी चौर्य प्रभृति दोषोंसे मुक्तनाम, दत्तक तथा औरसकी छोड़ अन्य पुत्रका ग्रहण, गुरु एवं स्त्रीका परित्याग, दूसरेके लिये आत्मत्याग, उद्दिष्टका वर्जन, दास गोपाल आदिके अन्नका भोजन, गृहस्थके लिये अतिदूर तीर्थकी सेवा, गुरुस्त्री में शिष्यको गुरुवत् हृत्ति, द्विजातियोंकी आपद्दृष्टि, अश्वस्तनिकता, ब्राह्मणका प्रवास, मुषसे अग्निधमन, (आग सुलगाना) वस्त्रात्कारादि दोषदुष्ट स्त्रीका ग्रहण, सर्वजातिसे यतिका भिन्नाग्रहण, ब्राह्मणादिके लिये शूद्रादिका पाक, पर्वतके उच्च स्थानसे गिर अथवा अग्निमें पड़ प्राणका त्याग प्रभृति ।

युधिष्ठिर, हरिश्चन्द्र, मुनिश्चन्द्र, तेजःशेखर, विक्रमादित्य, विक्रमसेन, लाउसेन, वल्लालसेन, देवपाल, भूपाल एवं महीपाल-कई कलियुगके प्रधान राजा और युधिष्ठिर, विक्रमादित्य, शालिवाहन, विजय, नागार्जुन तथा बलि छह राजकर्मवर्ती शककारक हैं* । गुरु देखो ।

६ देवगन्धर्वविशेष । कश्यपके औरस और दक्ष

*“युधिष्ठिरो विक्रमशालिवाहनौ धर्पाधिनाथौ विजयाभिगन्धनः ।

हरीऽगु नागार्जुननेदिनोपतिर्वलिः क्रमात् पट् शककारकाः कस्यो ॥”

(ज्योतिर्विदामरण)

अथाथि गर्भे इन्दोने कन्य सिवा वा । ७ एक पति प्राचीन श्रुति । इतथा नाम अथचधितामि मिथता है । ८ सङ्गोतका पन्तरा । ९ मिथ । १० पेश्योका एक तिखक । इसको प्राकृति पुष्यको कलिकाको माति रक्षती है । फिर पादि तथा पन्त लुम्भ और मध्य पन्त होता है । पति सुन्दर देख पङ्कमि इथे 'रसकलि' कहते हैं ।

(श्री०) ११ कलिका, पूरको कनो ।

कलिक (सं० पु०) कनो मन्दमयोरो धनिरस्त्रप, कन मल्लं ठन् । १ शौचपयो, कराहुस या पन-कुकड़ी चिहिया । २ बंधावाभेद, बांसमें होनेवाका एक चापल ।

कलिकर्म (सं० श्लो०) हुब, लड़ाई ।

कलिका (सं० श्लो०) कलिकैव भाये कन्-टाप । १ कसी, गुधा । इसका संकृत पर्याय-सुम्भकोरक, कलि और कनो है ।

"हस्तामकरका कलिपत्तयि ।

अथे करैवैव वि मन्मथिवाप ॥" (कलिपत्तय)

२ वोचाका सूचद्वैय बीन वा सितारको जड़का चिह्या । ३ रचनामिथिय, एक कनाव । तासवासे पदसमूहका नाम कना है । कसादुस रक्षनेसे जो रस रचनाको कलिका कहते हैं । कलिका अथ प्रकारको होती है,—बण्डित्त, दिमादि गण्डित्त, त्रिमण्डित्त, मध्य, मिय और शेषक । बण्डित्तमें दममकार संयुक्त वर्ण रहते हैं । महर, सिद्ध, विष्टि, मिथिल एवं आदि संयुक्त वर्ण अस्तथा दोषे मेदसे मिथ हुवा करती हैं । अस्त तथा महर संयोगसे महर, पङ्कम और बिहरको उत्पत्ति है । शिष्ट संयोगसे इप कपर और सये वर्ण निकलते हैं । विष्टिसे संयोगसे मझ कपाय और बिहिन बनते हैं । मिथिल संयोगसे पन्न कपाय और मझ ठठा करती हैं । फिर आदि संयोगसे मझ, गुह्य, उन्न और मसुष्ट पाये जाते हैं । कोई कोई गर्हादि मन्त्रको जो आदि संयुक्त बताता है । दोषे संयोगसे तुष्ट, पङ्क चापास, बाण, वेष्ट और नाष्टक प्राप्त होते हैं । बण्डित्तमें बादमसे पतुबहि पर्यन्त कसाका नियम है । रक्षने क् नाचिक कर नहीं

सकते । बण्डित्त दो प्रकारका होता है—मध्य और विष्टिक । फिर मझ बोध प्रकारका है । बर्हिन्, बोरप्रद, समय, पन्था, उत्पल, सुरङ्ग योशुपरति-मातहसिधित और तिखक । जो प्रकारको जोड़ पन्थ मीदका नाम प्रायः देखनेमें नहीं आता । विष्टिक पाँच प्रकारका होता है—पन्न, कुन्द, कप्यक, कन्धुच और कन्धुच । फिर पन्न अथ प्रकारका है—पदेवच, सितकञ्च पाण्डुत्पल, इन्दोवर, पञ्चबाधोल और कञ्चकार । पङ्कस दो प्रकारका होता है—मासुर और महर । इसी माति बण्डित्त बोध प्रकार बनता है । शियादिमपङ्कत पाँच प्रकारका है—कोटक, गुण्य, सम्पुष्ट, कुसुम और गन्ध । त्रिमण्डो उन्न कञ्चक और विद्वय मेदसे दो प्रकारका होता है । मियकलिका मध्यसम्पुक्ता और सप्तविमज्जिका मेदसे दो प्रकार है । शेषका भी दो प्रकारको है—पसरमयो और सर्व-सङ्गो । ३ कान्धोविष्टिय ।

"अथमपरपरचक्रमं चरुमि च वधि कन । उरुत्तरपरविष्कति मिये च सुवे कप्य कुम्भकर्मकात्तरपति कलिवा वा ।" (अथमपर ३०) प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय एकत्रय कञ्चकात्तान्त और तयोव चरक पवित्रत रक्षनेसे कलिका अन्त बनता है । ३ कना, कन्धुके पयोतिहा संथ ।

"अथे वधिवा कनाकापयिष्कः कना ।" (विष्कविष्टिय)

४ कलिकाको, विष्णुपा । ७ मरुपङ्क, सरयोका । ८ अन्नमोलिका, कासो भाङ्गो । ९ पुष्यविष्टिय, एक पूर । १० पायविष्टिय, एक काना । इस पर कर्म कहता वा । ११ कनाकाको, मनेरका ।

कलिकाता (सं० श्लो०) कनका ईको ।

कलिकापूव (सं० श्लो०) कलिकया पंथिन कन्धे पयुक्त् । कर्मविष्टिय, एक काना । यह कर्म पूर्वकञ्चके कर्मसे कोवो सम्बन्ध नहीं रखता और भावी फल उत्पान करता है । बोधे सुयं और पोर्षमास याम का पङ्क धाम्येयादि भागसे पपूर्व होता है । इसे परम भी कहते हैं ।

"अथममन्त्रकपङ्कमकात्तरुत्तरकमनापुष्किली कन्धु-अथेवचकपङ्कम् ।" (क्श्लो)

कलिकार (सं० पु०) कलि कलई करानि, कलि-

क-अण् । १ धूम्याट पक्षी, एक चिडिया । इसकी पृष्ठ काटे-वैसी होती है । २ पीतमस्तकपक्षी, पीले सरकी चिडिया । कलिं स्वकण्ठकैरनिष्टं करोति । ३ पूतिकरञ्ज, करील । ४ जनपिप्लो, पनिहापीपन । ५ नारद ।

कलिकारक (सं० पु०) कलिं स्वकण्ठकैरनिष्टं करोति, कलि-क-णिच्-ग्व, लु । १ पूतिकरञ्ज, करील । २ लट्टा करञ्ज । कलिं कनहं करोति । ३ नारद । (त्रि०) ४ कनहकारक, भगडाल ।

कलिकारिका, कलिकारी देवी ।

कलिकारी (सं० स्त्री०) कलिं गर्भपाताद्यनिष्ठं करोति, कलि-क-अण्-डोष् । लाङ्गली वृक्ष, कलिहारीका पेड़ । इसका संस्कृत पर्याय—लाङ्गली, हनिनी, गर्भपातनी, टीसा, विगस्था, आग्निमुखी, नहा, इन्द्रपुष्पिका, विद्युज्ज्वला, अग्निजिह्वा, व्रणहृत्, पुष्पशौरभा, स्वर्णपुष्पा और वक्रिगिवा है । राजनिघण्टु के मतसे यह कटु, उष्ण, कफ तथा वायुनाशक, गर्भस्थ शल्य अर्थात् मृतगर्भनिष्क्रामक और चारके होती है ।

कलिकाल (सं० पु०) कलिरेव कालः । कलियुग । कलि देवी ।

कलिङ्ग (सं० पु०-स्त्री०) कलि-गम ड । १ इन्द्र-यव । २ पूतिकरञ्ज, करील । के मस्तके लिङ्गं चिह्नमस्या । ३ धूम्याट । ४ कुटज वृक्ष । ५ शिरीष-वृक्ष, सिरिसका पेड़ । ६ अश्वत्थवृक्ष, पीपरका पेड़ । ७ जल पदार्यं । ८ कोई अति प्राचीन राजा । दीर्घ-समाके औरस और वलिकी पत्नी सुदेव्याके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था । ९ भारतवर्षका एक जनपद । देखना चाहिये—यह जनपद कहाँ है ।

महाभारतमें लिखा, युधिष्ठिरने गङ्गासागरसङ्गम पर पहुँच पद्मगत नदीमें स्नान किया था । फिर वह भायियोंके साथ समुद्रतीरसे कलिङ्गदेगमें जा उतरे । उस समय मोमगने कहा—महाराज ! इसी समस्त प्रदेशका नाम कलिङ्ग है । यहाँ स्त्रीतस्त्रती वैतरणी बहती है । भगवान् धर्मने देवगणका आश्रय ले यज्ञा-नुष्ठान किया था । यज्ञके समय भगवान् रुद्रके पशुकी प्रकड़ कर अपना वताने पर देवगणने कहा—हे

भगवन् ! परन्तु ग्रहण करना बड़ा अन्याय है । चापकी धर्मसाधन यज्ञका भाग समस्त आत्मनात् करना न चाहिये । फिर सब उनको स्तुति करने लगे । याग द्वारा अपना प्रस्थान बटने पर रुद्र पशुकी काह देवयान पर चढे और स्वस्थानकी चल द्ये । इस विषयमें एक किस्मदन्ती है । देवगणने भयमें भोत ही सर्वात्कृष्ट रसपूर्ण एक भाग रुद्रका दिया था । हे युधिष्ठिर ! यह गाथा कोर्तनपूर्वक इस स्थानमें स्नान करनेसे स्वर्गका पथ प्रत्यक्ष होता है । फिर पाण्डवोंने द्रौपदीके साथ वैतरणीमें उतर पिष्टगणका तर्पण किया । इसके पीछे युधिष्ठिर क्षतस्वस्वयन ही सागरके निकट पहुँचे और मोमगका आदेश प्रतिपानन पूर्वक महेन्द्र पर्वत पर रात भर ठहरें ।

• “ स सागरं समासाय गङ्गायां सङ्गमे नृप ।
 नदीगतानां पर्यायां मन्त्रे समाचरन् ॥
 तदा समुद्रतीरेषु जलाम बहुभाषिण ।
 आश्रमि पठितो चोर कल्पितान् प्रति भारतम् ॥
 मोमग उवाच ।
 एते कल्पिता कान्यद यतः स्तारपो नदी ।
 यथाऽऽजग धर्मोऽग्नि देवाऽन्तरवदेव वे ॥
 यदपि समुद्राणुः सन्ति निरिगोभितम् ।
 उतार शीतसीतहि सतत रिचनेवितम् ॥
 समानं देवदानेन यदा चर्तुं सङ्कुपुप ।
 अथ वे अथयोऽपि न पुत्रा जन्तुभिरोगिरे ॥
 अथैव रुद्रो गङ्गेऽप्यमम-उत्तगाम् मनि ।
 परमादाय राजेऽन्त्र मागाऽऽमिति चाप्रभोत् ॥
 इती पर्यां यदा देवात्समुद्रभूतर्पणम् ।
 सा परन्तमिद्रोऽप्या सा धर्मान् सङ्गान् ययो ॥
 ततः कल्पानुपयामिर्भाग्मिन रुद्रमन्त्रवत् ।
 इष्टा। धेन तर्पयिष्या मातयाचक्रिरे तदा ॥
 ततः स परसुतुष्यथ देवदानेन कल्पितान् ।
 तत्रानुपवन्तो रुद्रस्य तन्निवेश युधिष्ठिर ॥
 अथातयामे सर्वेऽप्या माग्नीषो भागमुत्तमम् ।
 देवा सदभ्ययामामुर्भयाऽद्रव्य गायतम् ॥
 यथा वे तरपो सर्वे पाण्डवा द्रोपदी तथा ।
 अथतीर्थे महाभागान्पेयाचक्रिरे पितृन् ॥
 तत क्षतस्वभ्ययनो महात्मा युधिष्ठिरः सागरमध्यगच्छत् ।
 इत्या च तत् शासनकथं सप्त महेंद्रसासाय निगमुवाच ॥”
 (महाभारत, वनपर्व, ११४ अ०)

आसिदाघने कथा है,—

“च शैलीं कलितं चैवैवदिररहेदुवित् ।

कलितमर्धिरवतः कलितमिषुयी वी १” (रा० ४)

रतु हाथियोंका बहुत बंध कविमा नदी इतरे पौर
कलितदेवताको राजावर्षके साहाय्यसे एकको देख
कलितको पौर बल पड़े ।

शक्तिप्रदमतन्त्रके मतमें—

“कलितमत्तं सुंजलम् कथयोरुत्तमं विरे ।

कलितदेवः च शैलीं कलितमर्धिरवतः ।

कलितदेवतात्वं कथायोरुत्तमं विरे ।

शक्तिप्रदं वीर्यमि कलितं कलितवित् ॥”

कथकायके पूव भागके लक्ष्यानदीके तीर तक
कलित देव है । इस स्थानके लोग वाममार्गपुरायण
होते हैं । फिर कलितदेवके दक्षिण १८ योजन
पर्यन्त कलित कहता है ।

कलितरामने अपनी दिग्बिजयप्रकाशमें बताया है,—

“वीरुर्धमापरे च कलितो विहारी हृदि ।

वामानं भोगवैभवं वन्देतीति विदुषाम् ॥” (१५)

वीरु देवके उत्तर मण्डि कलित देव है । वहां
बोधप्रसिद्ध भोगवैभवं राज्य करते हैं ।

यह हमारे देवका प्राचीन मत हुआ । यह
देवता कहिये—प्राचीन योष पौर रामक पतिहा
सिद्धोंने कलितके सम्बन्धमें कहा कहा है । जिनने
सोन कलितों का उल्लेख किया है,—१ कलितो,
२ मोदोगलितम् पार ३ मन्नाकलितो । इनमें कलितो
मण्डि एवं मण्डिके बीच पौर मासेवास परंतके निबद्ध
परम्यित है । (Pliny, Hist. Nat. VI. 31)

यह लोग पूव सकृते—मण्डि पौर मण्डि विदे कहते
हैं । फिर मासेवास परंत ही कहा है । मण्डियोग
प्राचकक मुण्डा कहते पौर होडे जागपुरके
दक्षिण र्धममें पाये जाते हैं । (Campbell's
Ethnology of India, pp. 150-1) इनके पनति
सूत्र कलितके पाठ्यप्रदेशमें कन्व नामक परम्य रहते हैं ।
यही परम्य जिनकेबर्तत मन्नि मासूम होते हैं । यह
परम्यको वमी वमी मन्नाह वा मास मी कहा करते हैं ।
मासेवास परंत हमारा पुराबोध “मासवान्” है ।

जिनने दूसरे स्थानमें लिखते, कि मासेयाम् परंत पर
मोनिदे पौर ययरी रहते थे । इसका मूरि मूरि
प्रभाव मिला—पति पूवें कासे कलितके पार्वतीय
प्रदेशमें यहर कोनोंका वास रहा । पुरायणको र्धमनाथ
पनुसार नोकाबलके निबद्ध ही यहररागार था । वहां
यह—यह गदावर विष्णुकी मूर्ति बिराजमान थी ।

“वीरवर्ध विह्वलं च वज्रतं वारवायवम् ।

वमरुर्ध विवर्धनि वायवपुत्रयो इति ॥

वमरुवज्रवतः वमरामुर्धारवम् विवः ।

वर्धे वरुवामोर्धिवं परितो विवः ॥

येन च वीरवर्धं वम् वारं वरुवोववम् ।

वर्धे विववमोर्धम् वमरुवमरुवपुत्रम् ।

सती विववपुत्रानं वरुः वविवायवः ॥” (कण्डुपत्र)

पतयव जिन-वर्धित ‘ययरी’ पुरायणकथित यहर
से भिन्न दूसरे नहीं ठहरते । प्राचकक कलितके
धन्वर्गत पालकहरा राज्यके मन्ववर्ती एक कलित
युद्धको मान्य (मासगिरि) कहते हैं । सम्भवतः पूर्व-
कालमें उक्त राज्यकी समस्त गिरिमासाका नाम
मासगिरि रहा । यही गिरिमासा ‘मासेवास’
नामसे जिन हाण कथित हुयी है । इसे पुराबोध
मासगिरि माननेमें कोई दोष नहीं समता । सुतरां
समस्त पढ़ा कि जिनने कलितके पविर्मागको कलित
पहुमान किया था ।

पूवरा मोदोमण्डिम् है । हमारे प्रकृतत्वविद्
राकेन्द्रकालने इसे मन्व कलित किया है । फिर
विद्वान्त करारौषी पण्डित शेष्यमार्दिन इस स्थानके
सम्बन्धमें बताते कि मनुष्यवृत्तिमें भेद नामक एक
पकारके परम्य कोनोंका नाम पाते हैं । यह परम्यके
प्राच कथित हुये हैं • जिनने उक्त गदावके उदद
दोषका वासी बताया है । कलित सम्भवतः कलित
यन्त्रका रूपान्तर मात्र है । यज्ञके ‘व’ होपने रहने
वासे मद्गण्डि कहते थे । हमारे समझमें उक्त
दोनों मत सङ्गत मासूम नहीं पड़ते । तेलगु भाषामें
मोदोमण्डि मन्व भिजता है । तद्विधियोंके उच्चार

• मनुष्यवृत्तिमें परं वैश्विक कथितपुत्रक मी पौर वम् मन्वके
परिचित हुये हैं । (मनु १ : १६) मन्व नाम वरु है ।

पानुसार यह शब्द 'सुदुगलिङ्ग' कहा जाता है। तैल्यु मापासि सुदुका अर्ध तीन है। सुतरां 'सोदोगलिङ्ग' वा 'सुदुकलिङ्गका' संस्कृत नाम त्रिकलिङ्ग मानना युक्तिसङ्गत है।

(Caldwell's Dravidian grammar, Intro. p. 32.)

त्रिकलिङ्ग * जनपदका नाम दक्षिण देशके ५म, ६म एवं १०म शताब्दके शिलालेखों और ताम्रपासनोंमें मिलता है। टलेमिने इसे त्रिगलिपटन या त्रिलिङ्गन लिखा है। (Ptolomy's Geog. Bk. vii. ch. 23) दक्षिणापथके तामिल शिलालेखोंमें यह 'तेलिङ्ग' नामसे कलिङ्गदेशके साथ उक्त हुआ है। (Archaeological Survey of Southern India, Vol. IV. p. 61.) स्कन्दपुराणमें 'तिलिङ्ग' नामक जनपदका उल्लेख विद्यमान है,—

“रुद्रिर्नामदेशे च लक्ष्मणश्च पादकम्।

त्रिकलिङ्गं च तथा लक्ष्मणः सपादकः ॥” (कुमारिकाण्ड ३० च०)

शक्तिसङ्गतमन्त्रमें यही "तेलङ्ग" नामसे वर्णित है,—

“श्रीगोपानु समारम्भ श्रीशैशानु मन्त्रमागतः।

तेलङ्गदेशो देवशि ध्यानाध्ययनसत्पत् ॥”

त्रिकलिङ्ग वा तेलङ्गका वर्तमान नाम तेलिङ्ग या तेलिङ्गन है। यह जनपद मन्द्राजके उत्तर पलिकट नामक स्थानसे लेकर उत्तर गङ्गाम और पश्चिममें त्रिपति, वेम्पारि, करनूल, विदर तथा चम्पा तक विस्तृत है। यहां तैलङ्ग (तिलङ्गी) या तैल्यु-मापी हिन्दू रहते हैं।

तीसरा मङ्गोकलिङ्गी संस्कृत मघकलिङ्गका रूपान्तर है। प्राचीन भारतवासी वर्तमान आराकान प्रदेशकी मघद्वीप और उसके अधिवासियोंकी मघ कहते थे। किसी किसीने मघद्वीपवासियोंकी ही द्विनि-कथित मङ्गोकलिङ्गी माना है।

* किसी किसी प्रयत्नविदके मतमें त्रिकलिङ्ग कहनेसे तीन अविद्वत् समझ पड़ते हैं अर्थात् कलिङ्ग, मध्यकलिङ्ग और उत्कलिङ्ग। उत्कलिङ्ग ही अपभ्रंशमें उत्कल नाम निरुद्धा है। (Indian Antiquary, V. 53.) किन्तु यह मत सङ्गत नहीं लज्जता। कारण महाभारत, हरिवंश आदिमें उत्कल शब्द आया है। फिर किसी प्राचीन ग्रन्थमें उत्कलिङ्ग नाम देख नहीं पड़ता।

इंके ७म शताब्द चीनपरिव्राजक युयेनचुयङ्ग कलिङ्ग देशमें आये थे। उन्होंने लिखा है—कोङ्ग-उ-तो से सी कोसकी अपेक्षा अधिक (१४०० या १५०० लि) चलने पर हम कलिङ्ग (कि-लिङ्ग किथ) देशमें पहुँचे। (Si-yu ki, BK. X.)

अब देखना चाहिये—कोङ्गउतो देश कहां है। कनिङ्गाम साहवके मतमें उसोका नाम गङ्गाम है। (Cunningham's Ancient Geography of India p. 513.) विख्यात चीन भाषाविद् स्तानिसन्दा जुले ने 'कोङ्गउ-तो' शब्दका संस्कृत नाम 'कोनयोध' स्थिर किया है।* किन्तु हमारे विवेचनानमें, 'कोन-योध' नहीं, कोङ्गोद होना अधिक सङ्गत है। सामान्य भूखण्डके अधिपति रहते भी कोङ्गोदराजका प्रताप कुछ कम न था। कोङ्गोदराजकी भूमि अत्यन्त उर्वरा है। प्रचुर परिमाणसे धान्य उत्पन्न होता है। युयेनचुयाङ्गके मतमें कोङ्गोदसे १०० कोस चलने पर कलिङ्गदेश मिलता है। ऐसा होते गङ्गाम प्रदेश ही कलिङ्गदेश ठहरता है। फिर भी चीन परिव्राजकने गङ्गामसे कलिङ्गका आरम्भ होना माना है। यही बात हमें भी अधिक युक्तिसङ्गत समझ पड़ती है। इसमें महाकवि कालिदासकी वर्णनासे सम्पूर्ण सामञ्जस्य आता है। चीनपरिव्राजकने कलिङ्गदेशकी भूमिका परिमाण प्रायः ३५७ कोस (५००० लि) लिखा है। अक्षरके राजत्त्वकालमें कलिङ्ग दण्डपत् उड़ीसेके अन्तर्गत एक सरकार था। उस समय यह स्थान २७ महलोंमें विभक्त था।

(पार्ल-पहवरी)

इस प्राचीन विषयको छोड़ दीजिये। अब नवोन प्रगतस्वविदों का मत देखना आवश्यक है। कोल्लुक साहवके मतमें गोदावरी नदीके तटका प्रदेश कलिङ्ग कहाता था।†

कनिङ्गामके कथनानुसार युयेनचुयङ्गके समयमें कलिङ्गराज्य गङ्गामके दक्षिणपश्चिम १४००से १५००लि अर्थात् २३३ से २५० मील दूर अवस्थित था। उस

* Julien's 'Houwen Jhsang', III. 91.

† Colebrooke's. Essays, Vol. II. p. 179.

कमय इसका संश्लेषण प्रायः २३३ मील रहा। चतु-
 सीमा उन्नत न होती थी यह राज्य पश्चिममें धन्यु भीर
 दक्षिणमें जनकदत्त राज्यसे मिलता था। प्राक्ताकी
 सीमा दक्षिणपश्चिम गोदावरी घोर उत्तरपश्चिमकी
 इन्द्रावती नदीकी यात्रा मण्डिसियाई बाड़े न
 रही। यह विद्वीप भूमिपञ्चक मण्डपपर्यंत द्वारा
 समाप्तोच था। मिसाधिपतिवृत्तकुण्डलके मतमें कलिङ्ग
 गोदावरी घोर मन्नामदीके मध्य पड़ता है।*

हमारे मतमें महाभारत घोर हरिर्षयके समय
 कलिङ्गराज्य वर्तमान बेतरघी नदीके तटमदेमसे लेकर
 दक्षिणमें गोदावरी नदीतक विस्तृत था।[†] मीदिगोपुर,
 उड़ोडा, यन्धाम घोर सरकार कलिङ्ग राज्यमें ही
 रहा। उत्तरताराके बड़ कामे पर उड़ोडा कलिङ्गके
 निवास पड़ा। कल्प ईशो। फिर शिवल यन्धाम घोर
 सरकार कलिङ्गमें रह गया। ई०के १००० तथा ११००
 याताम्में चातुस्य राजाके प्रथम प्रतापसे कलिङ्गराज्य
 उत्तरकी कनकच घोर दक्षिणकी कोलमण्डल तक
 फैला था। उस समय तेजसु परम्य कलिङ्गराज्यके
 पन्नाभुंज रहा। सुप्रसमानोके चढ़ते कलिङ्गराज्यको
 भूमिका परिभाष बहूत बट गया। उत्कल घोर
 तेजसु परम्य हुआ। मण्डपपर्यंतके उपरिस्थित
 पामान्य भूमिगणको सोम कलिङ्ग कहने लगे। कस्तु-
 लन समय कलिङ्ग नामके सीपकी बारी भायो बी।
 पाककचके वर्तमान मानचित्रमें भी कलिङ्ग राज्यका
 कोई उल्लेख नहीं। शिवल समुद्रतटके कलिङ्गपतन
 घोर गोदावरीके मुहानिका कलिङ्गनगर मानी कलिङ्ग
 राज्यके विज्ञमात्रका अर्थ दिखाता है।

महाभारत आदिमें कलिङ्गके दो प्रधान नगरोंका

उल्लेख है— मन्धिपुर घोर राजपुर। बौध्यासमें
 कलिङ्गके दन्तपुर घोर कुन्धरती नामक दो प्राचीन
 नगरोंका नाम मिलता है। फिर बेनिवोंके हरिर्वयमें
 कालनगर लिखा है। प्राचीन मिलासेखोमें कलिङ्ग-
 नगर, विष्टपुर, वैज्ञोपुर प्रकृति कई दूररी भी प्राचीन
 नगर देख पड़ते हैं।

यह निर्णय करना कठिन समस्या, किंच कमय
 कलिङ्ग जनपद संस्थापित हुआ। महाभारतके मतमें
 दौर्षतमाके पुत्र कलिङ्गने अपने नामपर यह जनपद
 पचाया था—

“यो यः कलिङ्गं पुन्यं राज्यं मे ह्यतः।
 योऽपि दत्तं कनकजालं कनकमयिकं पुनः ॥
 कलिङ्गनिर्वाहं कलिङ्गकं यं कः ॥” (महाभारत, अर्ध, १०३३८)
 महाभारतको देखते कलिङ्गराज्यका स्थापन काल
 वैदिक समयता है। टीकाका ईशो।

बास्तविक यह जनपद पति प्राचीन है। वैदिक
 पत्रोंमें न कहीं— रामायणआदिमें इसका उल्लेख मिलता है।*

(उत्तरक विचित्रक, ४१ प)

पूर्वकालमें यहांके अग्रिय विजयच पन्नामाकी
 से। कुन्धरीके सुदके समय कलिङ्गराज महावीर
 हुआसु दुर्गेजनकी घोर पाण्डवोंके लड़े। भीमके
 हाथसे वह घोर उनके पुत्र मन्तदेव तथा कस्तुमान्
 मारे गये। (टीकर)

दायावय, महाभय प्रकृति प्राचीन बौद्ध अर्थमें
 लिखा, कि कुडका निर्वाच होने पर कलिङ्गके तत्का
 नीन राजाने कुडका दन्तसे आकर अपने राज्यमें डाला
 था। उन्हींके लड़ा वह दन्त रखा, वहां दन्तपुर
 नामक नगर बस गया। अन्तर ईशो।

कलिङ्गक (स० पु० लो०) कलिङ्ग एक क्षाप्रति,
 कलिङ्ग संस्थायां कन् कलिङ्ग के क प्रति हा।
 १ इन्द्रयव। २ अण्डल, पाकरका पेड़। ३ कुटकजय,
 कुटकीका पेड़। ४ गिरीवज्र, घिसका पेड़। ५
 पूतिकरण करील। ६ पचिबिभीय, एक बिड़िया।
 ७ तारमुच, तरबूत, कर्बोदा। यह महुर, यौतन अथ

* उत्तरकमें एक दूररी कलिङ्गका उल्लेख है। यह भीमकी घोर
 घोरकासे मन्धरीं बिबी कालमें रहा। (उत्तरक, अर्धका, ४१ प)

* E. Hultzsch's South Indian Inscriptions p 62.
 † हरिर्वयें मिला है — “यथाय कलिङ्गराज्यं विष्टत।”
 (११२ प ३३ शी)
 एव कामे लक्ष्मण (वर्तमान १२२४४) का कलिङ्ग एक
 हीके हीके कलिङ्गक कल्प कल्प इति है। इन्हींके भी कलि-
 कालके निवट कलिङ्ग नाम काल है। Indian Antiquary
 Vol. XIII p. 363.

वत्य, पिप्तदाहृत्, सन्तर्पण और वीर्यकर होता है। (राजनिघण्टु) ८ चातक, पपीहा। ९ विभीतक हृत्, वहेडेका पेड़।

कलिङ्गज (सं० पु०) इन्द्रयव।

कलिङ्गड़ा (हिं० पु०) कलिङ्ग, एक राग। यह दीपक रागका पञ्चम पुत्र है। रात्रिके चतुर्थ प्रहर इस रागको गाते हैं। कलिङ्गडेमें सातो स्वर लगते हैं। इसका स्वरपाठ इस प्रकार चलता है—म ग ऋ स स ऋ ग म प ध नि सा।

कलिङ्गडौ (सं० स्त्री०) दुर्गा।

कलिङ्गट्ट (सं० पु०) कुटजहृत्, कुटकीका पेड़।

कलिङ्गयव (सं० पु०) इन्द्रयव।

कलिङ्गवोज (सं० स्त्री०) इन्द्रयव।

कलिङ्गशुण्ठी (सं० स्त्री०) कलिङ्गदेशकी शुण्ठी, एक सोंठ। यह तिक्त, बलकर, अग्निदीपन, अजीर्णहर और बालकातिसारघ्न होती है। फिर यवचार मिलाकर खिलानेसे कलिङ्गशुण्ठी गर्भिणीकी वान्ति दूर कर देता है। (अभिहंघिका)

कलिङ्गा (सं० स्त्री०) काय सुखाय लिङ्गमस्याः, कलिङ्ग-टाप् बहुव्री०। १ नारी। २ लघुता, तेवरी। ३ कर्कटशुद्धी, ककड़ासींगी। ४ सुन्दर स्त्री, खूबसूरत औरत। ५ भोजराजकी पत्नी। यह दुष्मन्तकी माता थीं। (शुद्धिप्रणय १८। १८)

कलिङ्गादिकषाय (सं० पु०) कलिङ्ग, पटोलपत्र और कटरोहिणीका पाचन। यह पिप्तध्वरको दूर करता है। (चक्रदत्त)

कलिङ्गाद्यगुडिका (सं० स्त्री०) ज्वरातिसार रोगका एक औषध, बोखारके दस्तोंकी एक दवा। कलिङ्ग (इन्द्रयव), विष्व, जम्बू, आम्ब, कपित्थ, रसाञ्जन, लाक्षा, हरिद्रा, ज्रोवेर, कटफल, शुकनासिका (शोणाकल्क), लोभ्र, मोघरस, शङ्ख, धातकी और वटशुङ्गक (वरगदकी बी) बराबर बराबर तण्डुलोदकमें रगड बटी बनाते और छायामें सुखाते हैं। तण्डुलोदक अष्टगुण जलमें धावल घोनेसे होता है। इस गुडिकाके सेवनसे ज्वरातिसार, शूल, अतिसार और रक्तदोष निवारित होता है। (परिभाषाप्रदीप)

कलिङ्गिका (सं० स्त्री०) कलिङ्गगङ्गा, कामरूपकी एक नदी। (कालिकापुराण)

कलिङ्ग (सं० पु०) कं वायुं चञ्चति तिरस्करोति रोधनेन इति शेषः, क-कलि-अण् निपातनात् साधुः। १ कट, चटाई। इसका अपर संस्कृत नाम किञ्चिञ्च है। २ कुलिञ्चन, कुलीजन।

कलिङ्गम (सं० पु०) हृत्विशेष, एक पेड़।

कलित (सं० त्रि०) कल-क्त। १ विदित, जाहिर। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ भेदित, अलग किया हुआ। ४ गणित, गिना हुआ। ५ उपार्जित, कमाया हुआ। ६ अनुगत, टबाया हुआ। ७ आश्रित, सहारा पकड़े हुआ। ८ विचारित, समझा हुआ। ९ बद्ध, बंधा हुआ। १० उक्त, कहा हुआ। ११ गृहीत, लिया हुआ। १२ धृत, पकड़ा हुआ।

“करकलितकपालः कृष्णलो दृष्टपाणिः।” (भैरवध्यान)

(स्त्री०) भावे क्त। १३ ज्ञान, समझ।

कलितक (सं० पु०) विभीतक हृत्, वहेडेका पेड़।

कलिद्रु, कलिद्रुम देखो।

कलिद्रुम (सं० पु०) कलिनो आश्रितो द्रुमः, मध्य-पदलो०। १ सरल देवदारु, सीधा देवदार। २ भङ्गा-तक हृत्, भेलावेका पेड़। ३ विभीतक हृत्, वहेडेका पेड़।

कलिनाथ (सं० पु०) कलिः कलिरेव वा नाथः। १ कलि-युगके प्रभु, कलि। २ सुनिविशेष। इन्होंने एक गन्धर्ववेद प्रणयन किया था।

कलिन्द (सं० पु०) कलिं ददाति द्यति वा, कलि-दा दो वा खच्-सुम्। १ सूर्य, सूरज। २ विभीतक हृत्, वहेडेका पेड़। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। इसी पर्वतसे यमुना नदी निकली है। (रामायण, किञ्चिन्वा ३० अ०)

कलिन्दक (सं० पु०) १ कर्कास, पेठा, विलायती कुन्हा। २ तरबूज, तरबूज, कलींदा।

कलिन्दकन्या (सं० स्त्री०) कलिन्दस्य पर्वत विशेषस्य कन्या इव। यमुना नदी।

“कलिन्दकन्या मधुरां गतापि गङ्गां सङ्गमं कथय माति।” (रघुधर)

कलिन्दजा, कलिन्दमेलना देखो।

कलिन्दनन्दी (सं० स्त्री०) कलिन्दं नन्दयति, कलिन्द-

नन्द बिनि-डीप । यमुना नदी ।
 कलित्द्रोसजा (म० स्त्री०) कलित्द्रयनाम् जायते
 कलित्द्रयत्त जन-ठ टाप् । यमुना नदी ।
 कलित्द्रोसजाता, कलित्द्रोसजा ईडी ।
 कलित्द्रिका (स० स्त्री०) कलिं पति नागपति, कलि
 दो यन्-सुम् भाव्यं कन् टाप् पत इत्यम् । सर्वविद्या,
 द्विकर्मतः ।
 कलित्द्रो (द्वि०) कलित्द्रो ईडी ।
 कलिपुर (म० स्त्री०) १ पद्मराग मन्त्रिको एक पुरातन
 पति, मानिकको एक पुरातो पाम । २ पद्मराग मन्त्रि
 मेद बिषो कियका मानिक । इषी भोग मन्त्रम
 समभरी पे ।
 कलिप्रद (म० पु०) मन्त्रयासा यरावपाना ।
 कलित्द्रिय (म० पु०) कलि कलह द्वियो यष्य,
 बहुभो । १ कलहप्रिय नारद मुनि । “कलित्द्रिय
 त्पिचरन्तेः” (एवम्) २ वालद, बन्दर । ३ बिभो
 तकपुत्र बहिष्केका पेड । (वि०) ३ पुष्टप्रकृति,
 बदमिमात्र, भगवान् ।
 कलिपत्र (स० स्त्री०) बिभोतक पत्र, बहिष्का ।
 कलिस (स० पु०) विरोध पत्र, विरिचका पेड ।
 कलिमल (सं० स्त्री०) पाप, गुणाह ।
 कलिमार, कलिमार ईडी ।
 कलिमारक (सं० पु०) कलिना छदेवस्य कल्पकेन
 मारयति, कलि य बिच-पत्तम् । १ पूतिहरण
 करोत । २ कल्पकान् करक, कंठीसा करोदा ।
 कलिमान, कलिमान ईडी ।
 कलिमानक (म० पु०) कलोना कल्पकानां माला
 यत्त कलि-माला क । पूतिहरण करोत ।
 कलिमात्र (सं० पु०) कलोनां माल्यं यत्त बहुभो ।
 पूतिहरण करोत ।
 कलिदा (य० पु०) इतपत्र मात्र, बीमें भूता हुवा
 भोग । इममें मसालेदार भोस रहता है ।
 कलिदाना (द्वि० स्त्री०) १ कलो पाना, गुहा फूटना ।
 २ पत्र पाना नदी पर निबलना ।
 कलिदारो (द्वि० स्त्री०) कलिदारो, एक कुहरोसा
 पोर । इहका द्विन्दो पर्याय—कलियारो, कलियारो,

लांगुको थोर कुहवारो है । इषी बंगबामें बलद
 कल्पक, सजानोमें विरिच समनो, पञ्चाभोमें सुसिम,
 इषिकोमें मालका बहनाम, मराठीमें कलियानाग, मार
 वाडोमें इन्दूर, तामिकमें कलोपे कलियान्, तेलगुमें
 कल्पयाग्रा मन्त्रमें विनतोनी, इण्डोमें विपदोन थोर
 सिंघकोमें नियुक्त कइते हैं । (Gloriosa superba)
 यह एक विद्याल पोषधि है । कलियारो पपने
 पत्तोको मोकके मन्त्रो खपरको बढतो है । भारत,
 ब्रह्म थोर सि इलके जनेमें यह क्षमापत्रः कपय होतो
 है । वर्षा कस्तुके समय इसमें सुन्दर थोर सुदोषे
 पुष्प पाता है । पत्र पतसे थोर मोकदार कोते हैं ।
 मूल पत्रिबिम्बिद रहता है । पुष्प भङ्गने पर मिर्च-
 केसा पत्र लगता है । पत्र पत्रके पत्रमेंत कोम
 होता है । इसका मूल विपाह है ।
 कलियारोको बहुधा भारतोह वेद्य थोर सुसह
 मानो कलोम पोषधमें व्यवहार करते हैं । बिष्कू थोर
 कलपत्रके काठने पर इसका पुसटिक बढता है ।
 कलिहुग (सं० स्त्री०) कलिरैव हुदम् । कर्तुर्षं हुम ।
 कलि ईडी ।
 कलिहुगाथा (सं० स्त्री०) कलिहुगस्य चाथा चाथ
 तिथिः, ५ तत् । माको पूर्वमेता माहको पूरनमासी ।
 इषी तिथिका कलिहुग लगता या ।
 कलिहुगाथय, कलिरैव ईडी ।
 कलिहुगाभाष कलिरैव ईडी ।
 कलित्तुगी (सं० स्त्री०) १ कलित्तुगमें कपक कोनेवाला ।
 २ पापो, कुरा ।
 कलिक (सं० स्त्री०) ककरी मिच्छति, कलि इतम् ।
 कलिबन्धनिकलित्तुगकोकदिः कल्पः १ । ११ । १ मिच्छति,
 मिना हुवा । २ गहन, घना । ३ पाच्छय भरा हुवा ।
 (स्त्री०) ३ समूह डेर ।
 “यत्त के मोहकविन कुविन्निर्पचति ।” (गीता १।११)
 कलिवर्ण्यं (सं० स्त्री०) कलित्तुगमें न करने योग्य,
 बिडे वर्तमान कृपमें बचाना पेड़े । पात्रमेकादि यत्र,
 देवरादिषि नियोग, नशास मात्र विच्छदान प्रकृति
 काम पन्थ कुरमें बतक रहते भी कलिसं वर्ण्यं है ।
 कलिवह्नम—बासुदेवराज कृष्णका एक नाम ।

कलिविक्रम—दक्षिणापथके एक प्राचीन चालुक्य राजा ।
इसका अपर नाम विभुवनमल्ल वा विक्रमादित्य (४र्थ)
था । यह ब्राह्मवमल्लके पुत्र रहे । इनके राजत्वका
काल संवत् ८८७—१०४८ था ।

कलिविष्णुवर्धन—पूर्व चालुक्यराज विजयादित्य नरेन्द्र
नृगराजके पुत्र । इन्होंने छेड़ वर्ष राजत्व किया ।

कलिद्वज (सं० पु०) कलेरात्रयरूपो द्वजः, मध्यपद-
सो० । विभीतक द्वज, बहेडेका पेड़ ।

कलिसंश्रय (सं० पु०) कलेः संश्रयः आविश्यः, ६-तत् ।
१ शरीरमें कलिका प्रवेश, पापमें पहनेकी हालत ।

२ कलिकी आकृति, गुनाहकी सूरत ।

कलिहारी (सं० स्त्री०) कलिं हरति, कलि ह-अण्-
छीप् । चाङ्गली, करियारी । करियारो देखो ।

कली (सं० स्त्री०) कलि-डीप् । कनिका, गुच्छा ।

कली (हिं० स्त्री०) १ अक्षतयोनि कन्या, बाकरा ।
२ पक्षीका नया पर । ३ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा ।

यह तिकोनी कटती और अंगरखे, कुरते, पायजामे
वर्ग रहमें लगती है । ४ हुक्केके नीचेका छिस्सा ।

इसमें गडगडा लगता और पानी रहता है । ५ वैष्णवों
का एक तिखक । ६ कसई, पत्थर या सीपका फूँका
हुवा टुकड़ा । इसीसे चूना बनता है ।

कलींदा (हिं० पु०) तरस्वुज, तरवूज ।

कलील (अ० वि०) अल्प, थोड़ा, कम ।

कलीसिया (हिं० स्त्री०) ईसायियों या यहूदियोंकी
घर्ममण्डली । यह यूनानी 'इकलीसिया' शब्द का
अपभ्रंश है ।

कलु (सं० पु०) गरुडशालि, किसो किसका घान ।
कलु—आसामके गारो पर्वतकी एक नदी । यह तुरा
नामक स्थानसे निकल ब्रह्मपुत्र नदमें जा गिरी है ।

कलुक (सं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा ।

कलुका (सं० स्त्री०) १ गुण्डा, शराबखाना ।
२ उल्का, उत्पात, शहाब-साकिब, टूटता तारा ।

कलुष (हिं०) कलुष देखो ।

कलुषाई (हिं०) कलुषता देखो ।

कलुषी (हिं०) कलुषी देखो ।

कलुषी (हिं० पु०) देवताविशेष । इनको दोहाई

सावरी मन्त्रमें लगती है । यह जादू टोनेके प्रधान
देव है ।

कलुप (सं० स्त्री०) कं सुखं लुपति हिन्दुः, क-लुप्-
अण् कल-उपच् वा । पुनश्चकित्त उपच् । उच ३। ७२ ।

१ पाप, गुनाह । २ मलिनता, मैलापन । "कित्त-
कमुपमः; शल्पिषा धरिषो ।" (चतुष्पार) (पु०) कस्य

जलस्य लुपः हिंसक आविकलकारकः, क-लुप-क ।
३ महिष, भैंसा । ४ मण्डलिसर्प । ५ क्रोध, गुच्छा ।

(त्रि०) ६ बह, बंधा हुआ, जो बहता न हो ।
७ निन्दित, बदनाम, खराब । ८ कपायित, कसैला ।

९ दुःखित, अपसुर्दा । १० क्षुब्ध, घबराया हुआ ।
११ असमर्थ, नाताकृत ।

"भारावभोधकमुपा ददितेव रात्रौ ।" (२५ ५।६४)

कलुपता (सं० स्त्री०) १ मलिनता, मलापन । २ अन्ध-
कार, अंधेरा । ३ क्षुब्धता, घबराहट ।

कलुषमञ्जरी (सं० स्त्री०) लिङ्गिनी, मजीठ ।

कलुषयोनि (सं० त्रि०) वर्णसद्वर, नुत्फेहराम, दोगला ।

कलुषित (सं० त्रि०) कलुषमस्य सञ्जातः, कलुष-
इतच् । १ पापयुक्त, गुनाहगार । २ दूषित, खराब ।

३ मलिन, मैला । ४ कपायित, कसैला । ५ बह,
बंधा हुआ । ६ दुःखित, रस्सीदा । ७ क्षुब्ध, घबराया
हुवा । ८ असमर्थ, नाताकृत ।

कलुपी (सं० त्रि०) कलुषमस्यास्ति, कलुष-इति ।
१ पापी, गुनाह करनेवाला । २ मलिन, मैला रहने-
वाला ।

कलुटा (हिं० वि०) अत्यन्त क्षण्यवर्ण, निहायत काला ।
कलुना (हिं० पु०) स्थूल धान्य विशेष, एक मोटा
धान । यह पञ्जाबमें होता है ।

कलुतर (सं० पु०) देशविशेष, एक मुक्त ।

कलेज (हिं० पु०) १ भोजन विशेष, एक खाना ।
यह लघु रहता और प्रातःकाल जलपानके समय
चखता है । २ विवाह होते समय वरका एक भोजन ।

यह पाणिग्रहण होनेके तीसरे और चौथे दिन सन्ध्या
समय किया जाता है । विवाहमें प्रथम दिवस पाणि-
ग्रहण होता है । दूसरे दिन रात को कच्ची रसोयो
खाने वरपत्नीय लोग आते हैं । तीसरे और चौथे

दिन तीसरे पहर कोयो पांच बजे अन्ध्यापघोष बन
बासि (जर्ब) बरपघोष ठहरवे है) में बरात श्योतने
पावे है। अब बरात श्योत जाता, तब अन्ध्यापघोष
मन्ध्याको बरको भोजन करकेके लिये होताहो है।
इसका नाम कसीजर्ब है। कसीजर्ब सिवा मन्ध्या और
पूरीके दूसरे चीज नहीं खिलावे। बरके साथ यह
कोया मो कसीज करन जाता है।

कसीजर्ब (हिं० पु०) १ बरकेबिधिये, एक रंग। यह
जिबुने, हरे कंधास और मन्नीठ वा पतङ्गके यानके
बनता है। इसका अपर नाम कुनोटिया रंग है।
(वि०) २ कुनोटिया।

कसीत्रा (हिं० पु०) १ पचःफलानामर्थतः पचःकच विधिये,
जातोका एक मीतरी विद्या। कच ईको। २ कचःफल,
सीमा, जातो। ३ साहस, विद्या।

कसीटा (हिं० पु०) पचःविधिये, एक बहारा। इसको
जनके अन्धका बनते है।

कसीवर (स० स्त्री०) कसी यज्ञे बर केहन, द्वितीय
विर्हकुलजाप पवित्रम् भद्रुक् चमा०। यपेर, कच,
कोया।

कसीध (हिं०) कच ईको।

कसीया (हिं० स्त्री०) १ कसा, कचट पुसट। २ ताड़ना,
छरपीहन, मारपीट।

कसीईवाड़ा (हिं० पु०) सर्वविधिये, पचःकरको भाति
एक कड़ा छाप। यह बहानमें होता है।

कसीहन (सं० पु०) कसमयादि कडहन।

कसीपनता (स० स्त्री०) मूर्च्छनादिभिः, एक कचप।

“कसने का कोपीये इतीपता एव कम्।

कान् कसीजर्ब बरनका भागी च कीरती।

इयका इतीरी कीका दुर्दिकेवर्धना रनः।” (बर्हिपारंभ)

मन्ध्या पामको घात मूर्च्छना होती है,—सीपोरी,
हारिकाश्या, कसीपनता, इहमश्या, मार्गी पीरपो और
इयका। कसीपनता मन्ध्या पामको छतीय मूर्च्छनाका
नाम है।

कसीर (हिं० वि०) कसीको, को थापो न हो।

यह इन्द्र मायके जो किये पाता है।

कसीक (हिं०) कसीके ईको।

कसीकना (हिं० स्त्री०) कसीक करना, खेसना-कूटना।
कसीस (हिं० वि०) १ अन्ध्यावर्ष विधिष्ट आन्ध्यापन
विधे हुये। (पु०) २ अन्ध्यावर्ष आन्ध्यापन। ३ कचक,
बन्ना।

कसीत्री (हिं० स्त्री०) १ अन्ध्यावर्ष, बाबा जोरा।
इसे बहसामें सुमरैका, कसीत्रीमें तुक्ष्म गन्धन, पच
शान्तिमें सियाह बाक, मराठीमें कासेजिरे, तामिळमें
आवणपिरोगम्, तेलगुमें नख चितकार, कनाडोमें काडो
जिङ्गो, मलयमें आवण औरकम त्राष्ट्रोमें समोने
सिङ्गोमें कसुतुफ, परबोमें कसूनपसवद और फारसी
में सियाहदाना कहते है। (higella sativa) जिन्हु
कानोत्रोके कसीत्रीके भिन्न बस्तु है।

यह इतिवत् युरोपमें सामान्यत उत्पन्न होती है।
इतिवत् भारत और नेपालकी तराईमें इसे बड़ी
बिनाई मार्ग शीर्ष वा पीप माधमें बोते है। वास्तुक्रम
भूमि कसीत्रीके लिये पच्छी रहते है। इस किंद
वा दो जग उच होता है। पुष मङ्ग जानिये कोयो
तोन पङ्क्ति परिमित कसी निकलतो है। उनमें
अन्ध्यावर्ष कच मरै रहते है। कचका पसाह सबल,
तन्ध्या और सुमन्धि होता है। लोग कसीत्रीको तर-
कारोमें काह कर खाते है। इच्छे दो प्रकारका रिक
निकलता है—एक अन्ध्यावर्ष सुमन्धि एवं बाहु परि
माधमील और दूसरा अन्ध तका परपत्तेल छडय।
प्रथमोछ लेखे सुन्दर मोक्षकथ प्रतिबिम्ब पडता है।
कसीत्री दुग्धित, वास्तुनायक पम्बिदोपन और पाचक
होती है। यह पम्बिमान्य भवधि, क्वर और पचको
प्रधति रोगमें पीबकको भाति क्वरवार को जाती है।
कसीत्रीके शिवनके पुष्य मो पचिञ्ज उतरता है। सुसह-
मान इकोमिदि सनामुदार कसीत्री उच्छकक छप
ताकारक, परिपाकशील शोषक, और मूत्रबर्धक है।
कसीत्री कचमङ्गय बीज कपडेमें रखन को नहीं बनता
२ एक तरकारो। यह कसेके परबन्, मिथो,
वेपन बनेरकको कोचके और और नमक, मिर्च,
घटाई, बनिया प्रधति क्वच भर कर बनायी जाती है।
इसे मरनक भी कहते है।

कसीयो (हिं० स्त्री०) इत्यम्, तु यरा बाधक।

कल्कि (सं० पु०) कान क । द्वाभ्यामप्यर्थः कः । १५ । १० ।
 १ गिन्धिपिट द्रव्य, पत्थर पर पीसो हुयो चीज । शुक्ल
 वा जलमिश्रित द्रव्यमात्र पत्थर पर पीसनेसे कल्कि
 कहाना है । इसका संस्कृत पर्याय—पिट, विनीय,
 भावाय और प्रसेय है । हिन्दीमें इसे चूरेन और मुकनी
 या मुकन कहते हैं । एक प्रहरमें अधिक काल
 रहने पर कल्कि द्रव्यका वीथ घट जाता है । २ रमपिट
 द्रव्य, पानीमें पीसो हुयो चीज । ३ सधादिपिपित
 द्रव्य, गहद वग रत्नमें पीसो हुयो चीज । इसमें पथ न
 द्रव्य एक कप और मधु, घृत या तैल द्विगुण पड़ता है ।
 फिर मिता या गुठ द्विगुण और द्रव्य चतुर्गुण डालते हैं ।
 (परिभाषा श्लोक) ३ घृत तैलादिका जेप, वी तैल यगैर-
 द्रव्या वषा हुवा हिम्मा । ४ दम्भ, घमण्ट । ५ विभि-
 तकहस, वट्टडेका पेड । ६ घिटा, मैला । ७ किट्ट,
 ८ पाप, गुनाह । ९ द्रव्यमात्रका रूप, किमी चीजकी
 बुकनी । १० वर्षमल, कानका मैल । तुल्यक नामक
 गन्ध द्रव्य, लोबान । ११ प्रतारणा, फटकार । १२ पय-
 लेह, घटनी । १३ करिदन्त हाथी दांत । (वि०)
 कल्पयति पापं आचरति । १४ पाणाला, पापी
 गुनाहगार ।

कल्कन (सं० क०) कल्कं ग्राह्यं करोति, कल्क-
 षिच् भावे ल्युट् । १ गठनाचरण, फरेव, धोकेवाणी ।
 २ विवाद, भगडा ।

कल्कि (सं० पु०) कल्कं पापं शय्यन्त्या पद्मि पप्य,
 इन् । भगवान् नारायणकी दग पयतारोंमें दगम वा
 जेप पवतार । भूमण्डलमें कल्कि चारो पाट या
 पूर्ण अधिकार जाने पर्यात् समुद्रय मानवोंके एक वर्ग
 हो जाने और विष्णुका नाम सुनानेसे भगवान् कल्कि
 नामसे अवतीर्ण हंगे । यह कल्कि निपौडित कर
 पृथिवीमें भगाधेगी; स्त्रच्छकुलकी मिटा सद्धर्म चलावेगी ।
 (महाभारत, भावक, विष्, गह, नारदचं उवादि)

सत्य, वेता, हापर और कलि—चार युगोंकी
 पृथिवी पर अधिकार मित्रा करता है । इन्हीं चारो
 युगोंके समष्टि कालको ' दिव्ययुग ' कहते हैं । ७१
 दिव्ययुगमें एक मन्वन्तर होता है । आजकल ७म
 मनु वैवस्वतका अधिकार चलता है । वैवस्वत अधि-

कारके ७१ दिव्ययुगमें षट्त्रिंशति दिव्ययुगका वर्तमान
 कल्पियुग है । इसमें पञ्चमे मायम्पू, चारोपिप,
 वक्षम, नामय, रवग और चाकूम नामक छह मन्वन्तर
 योत चुके हैं । इन मन्वन्तरोंमें इहवृत्तार इहवृत्तरके
 हिमावसे ४०१ दिव्य युग हूये । प्रत्येक दिव्ययुगमें
 एक यह कल्पियुग निकला है । वर्तमान वैवस्वत
 मनुके २० दिव्य युग और लोके माय २० कल्पियुग
 भी है । वर्तमान गोतवराहकल्पमें कुल ४५३ कल्पियुग
 बीते हैं । प्रत्येक कल्पको जेप पयत्यामें नारायणके
 कल्पमूर्ति परिग्रह करते ४५३ बार कल्पक्रियाका
 हूयो है । फिर वर्तमान कल्पियुगमें चत्वारों भी एक
 बार कल्कि पवतार सेगे । प्रत्येक मन्वन्तरमें
 नारायणके पयतारादि समाप्त होमें हैं यह दिमीयो
 पुराणमें षट् समझ नहीं सकते । सुनारों कोन निवृत्त
 कर सकता है कि विगत मन्वन्तरों या कल्पियुगोंमें
 कल्पि पयतार हूया या या नहीं । भगवान् को कल्पि
 लोकाके मन्वन्तरमें कल्पपुराणकारने लिखा है,—

कल्किना जेपशट् वारो हो आध्याय, पषा, प्राज्ञा,
 यपट् एवं सोद्वार पस्तर्हित हूया, सुतरां देवी का
 पाहारादि भी करू गया । इस समय यह समयेन
 हूये और टीना, लोका, तथा मन्त्रिा धारो को पानि
 कर पत्यन्त हताग मनसे ब्रह्मलोक जा पदुंसे । विष्णु
 मन ब्रह्मलोकमें उपनोत होने उर्दने मरह, मरह,
 मनातनादि एवं मिहगण द्वारा स्तूयमान लोह विनाम
 ब्रह्माको सुखोपविष्ट देख पवतत मन्त्रक प्रदामूर्धक
 पवस्यान किया था । पितामहने इनसे सादर बैठने-
 की कह कुगन पूछा । फिर देवीने कल्किके दोषमें को
 धर्भनाग हूया, यह सब यथायथ बना दिया । ब्रह्माने
 देवाकी प्रवस्या देख पाग्रास प्रदामपूर्वक कहा था,—
 चविचे, विष्णुको रिभाकुभा सुन्दारा पमोट मिह
 करेने । ब्रह्मा देवीके सममिच्छाहारसे विष्णुके
 निकट गये । विष्णुको स्तव पादिसे मन्तुटकर उर्दने
 देवीको प्रायना बताया थी । नारायण विधिके मुखमें
 कल्किो विवरण सुन कहने लगे—विभी ! हम आपके
 अभिप्रायानुसार मन्वन्तरासमें विष्णुयुगके औरस और
 सुमतिके गर्भसे जन्म सेगे । हमारे तीन ल्येष्ट भ्राता

होगी। हम उन्हीं लोगों भावियोंके साथ कल्पि चय करेगी। हमारी प्रियतमा नक्षी पद्मा नाम पर सिंहाच देयमें उग्रद्वयकी पत्नी चौमुदोके गर्भमें जन्मग्रहण करेगी। देवगण। तुम भी भूमण्डलमें अपने अपने योगमें प्रवृत्त हो। हम तुम्हारे साहाय्यसे देवादि और मन्त्र नामक दो राजाओंकी प्रवृत्तियोंके साथ पर बैठे उत्कृष्ट तथा धर्म चलावेगी। विष्णुकी यह बात सुन ब्रह्मा देवीके साथ लौट पड़े।

देवीकी विदाकर भगवान्ने यन्त्रलपाममें विष्णु यमाके चारस और सुमतिके योगमें लक्ष किया। इससे पहले कल्पि, प्राण और सुमन्त्र नाममें विष्णुयमाके तीन पुत्र हो चुके थे। यथाकाल वैशाख मासकी यक्षा शादयीके दिन भगवान्ने प्रवृत्तार किया। इस बार भी वह उग्रद्वयकी मति भूमिष्ठ चीते की चतुर्भुज देव पड़े। महाप्रयोगे बानी बनी थीं। भगवती पत्निकाके नामिच्छेदन किया। भागोरदोमें गर्भका छेद निकाला था। सावित्री देवीने नक्षत्राया हुआ था। प्रवृत्तियों देवीने वृष विद्याया था। पौड्यमासकाने पायोर्वाद दिया। ब्रह्मा जगंधे भगवान्को चतुर्भुज मूर्तिमें प्रवृत्तार् होते देव बहुत उदरा गये। उन्हीं प्रवृत्तियों स्तिकापट्टमें मीत्रा था। प्रवृत्तियों पाकर भगवान्के ज्ञानमें कदा—प्रयोग। पापको चतुर्भुज मूर्तिका दर्शनकाम देवताओंको भी दुर्लभ है। उत्तरा इन मूर्तियोंके विद्या महत्त्वमूर्ति चारस कीकिये। भगवान् प्रवृत्तियों सुकरी ब्रह्माका पत्निकाय समझ लसे चक्र दिग्गज मानव प्रिय बन गये। विष्णुयमा पत्निकाय पुत्रका चक्रान्तर देव विद्यित हुये। बिन्दु विष्णुकी मायामें भाहित हो उन्हीं पूर्णद्वय रूपको भ्रम ठहरा लिया।

भगवान्के जन्म पञ्चममें यन्त्रलपामका पापताप पत्निकाय हुआ था। पत्निकाकी महत्कारुण्य करने लगी। पुत्रको जन्म—प्राणचय देव विष्णुयामें वेदविद् ब्राह्मण हुआ नामकरकका पायोर्जन उठाया था। नामकरकके दिन परशुराम, जगन्नाथ पायत्तमा और व्यासदेव मिथुनका रूप बना प्रियद्वयों जगिको देखने गये। विष्णुयामें पट्टपूर्व पूर्णचम मीत्रकी चारों

पत्नियोंको रोमाञ्चिनकसेवर हो संवर्षनाको। सुकरी बैठने पर विद्वत्कीकृष्ण वाक्यकी देखते हो उन्हीं समझ लिया, कि भगवान्ने कल्पिब्रह्मविनायके लिये वह रूप परिग्रह किया था। वह वाक्यका 'कल्पि' नाम ठहरा और जातकम तथा नामकरकादि संस्कार करा प्रवृत्त मन विदा हुये। फिर गण, भर्ग, विद्याम प्रकृति नामोंसे देवता कल्पिकी जातिमें प्रवृत्तार लेने लगी।

उस समय यन्त्रलपामके निवृत्तल प्रदेयमें विद्यायुग्म नामक नरपति राजत्व करते थे। वह ब्राह्मणोंके प्रतिपालक रहे। कुछ काल पीछे कल्पिका ब्रह्म उचनयनके योग्य होने पर विष्णुयामें कदा,— ब्रह्म। हम तुम्हारा यज्ञरूपक प्रदान स स्कार सम्यक करेंगे, फिर तुम्हें चतुर्भुज पदना पड़ेंगे। कल्पिने यह बात सुन पूजा, वेद, सावित्री, यज्ञरूप, ब्राह्मण, दमनिक स स्कार, विष्णुज्ञा प्रकृतिका पर्व कदा था। फिर वह प्रवृत्त करने लगी—को ब्राह्मण चतुर्भुज पर चक्र हरिके प्रिय बनने और मिलोकका पमोड तथा निश्चिन्त सुखका उदार साधन करती, वह कदा मिलते हैं। विष्णुयामें इस प्रवृत्तियों उत्तरी कल्पिके पत्निकाचरकी कदा सुनायी। पिताके सुकरी कल्पिका संवाद पाकर कल्पि मानो ज्ञान लठे। उनके मनमें कल्पिके निपटका पत्निकाय उचनयन हुआ था। पीछे यथानियम उचनयन प्रिय होनेपर वह सुकृष्णकर्म रहनेकी चम दिये।

उस समय परशुराम महेन्द्र परवतपर वास करते थे। उन्हीं कल्पिको पाती देव पायत्तमें लाकर उचनयन परिचय दिया। और फिर वह कल्पिने लगी, 'हम तुम्हें पदुनेमें। चतुर्भुजमें जन्मदम्बिके पीरससे हमारा जन्म है। वेदेदेदाइके तत्त्व और चतुर्भुज यामें हम पारदर्मी हैं। हमने समुद्रय द्विषिके निः- पत्निकाचर ब्राह्मणोंको दक्षिणा दी है। पात्रकक तपस्विके लिये रथी महेन्द्रपरवत पर रहते हैं। तुम हमें गुरु समझो और पत्निकायित माल पत्निकाय करो। कल्पि परशुरामकी बात सुन मुकचित हुये और प्रवृत्तार कर उनके निवृत्त रहे। उन्हीं चतुः-

पट्टि कला साङ्गवेद और धनुर्वेद पद दक्षिणा देना चाहा था। परशुरामने दक्षिणा की बात सुन कर कहा,—ब्राह्मणकुमार! भगवान् ब्रह्माने विष्णुसे कलिनिग्रहके निमित्त प्रार्थना की थी। विष्णुने वही प्रार्थना पूर्ण करने का अवतार लिया है। तुम वही पूर्णब्रह्मरूपी हरि हो। तुमने हमसे विद्या पढ़ी है। आगे तुम शिवसे अस्त्र तथा सर्वत्र शुक पत्नी और सिंहलदेशकी राजकन्या पद्मानाम्नी लक्ष्मी पावोगे। फिर तुम्हारे हाथमें धर्मज्ञान नृपतियोंका विनाश, कलिका निग्रह और स्रग्धर्मका संस्थापन किया जायेगा। तुम अन्तमें मरु और देवापिकी पृथिवीके राज्यपर अभिषिक्त कर गोलोक पहुँचोगे। तुम्हारे इस साधुकार्यके अनुष्ठानसे हम परम प्रमत्त होगे। यही हमारी दक्षिणा है।' कल्किने गुणदेवसे आज्ञा ले विम्बोदकेश्वर नामक शिवमन्दिरमें पहुँच महादेवकी पूजा और स्तुति की। स्वयसे तृप्त हो देवादिदेव पावतोके साथ प्राविभूत हुये और वर देकर कहने लगे,—'तुमने जो स्तव बनाकर पढ़ा, वही सब पढ़ने वालिका सर्वाभोट सिद्ध होगा। यह द्रुतगामी बहुरूपी गरुडके अंगसे सम्भूत अश्व और यह सर्वत्र शुक तुम्हें देते हैं। आजसे मानव तुम्हें सर्वविध शास्त्रमें निपुण, वेदपारदर्शी और सर्वभूत-विजयी समझेंगे। यह महाप्रभाशाली रत्नसूचित सुष्टविशिष्ट कराल करवाण पहण करो। इसीसे पृथिवीका मार हरण करना पड़ेगा।' यह कह कर महादेव अन्तर्हित हुये। कल्कि भी हर पावतोकी प्रणाम कर शिवदत्त वस्तु उठा अश्व पर चढ़े और अपने घरकी लौट जाये। विष्णुयुगा पुत्रके सुव्रसे अवगत हो इधर उधर उस समस्त कथाकी आलोचना करने लगे। क्रमशः राजा विशाख्युपकी खबर लगी। विशाख्युप सुनते ही समझ गये, कि यद्यार्थ विष्णु अवतारण हुये थे। कारण जिस समय कल्किने जन्म लिया, उसी समयसे उनकी राजधानी माहिष्मती नगरीमें याग, दान, तपस्या और व्रतका अनुष्ठान होने लगा। ब्रह्मण, चन्द्रिय और वैश्व आदि अपना दुराचरण छोड़ते थे। इससे



कल्कि अवतार।

विशाख्युप भी स्वयं धर्मावरण अवलम्बन पूर्वक विग्रह हृदयसे प्रजापालन करने लगे। कल्किने उपयुक्त समय देख खुड्ग तथा धनुर्वाण लिया और अश्वपर चढ़ माहिष्मतीपुरकी ओर गमन किया। उनके दो भ्राता और गंग मर्गादि जातिगण भी पीछे पीछे चले। विशाख्युप कल्किकी भाते सुन आगे बढे थे। उन्होंने पुरोहार पर पहुँच देवतापरिहृत उच्चैःशयरोही इन्द्रकी भांति स्वजनवेष्टित कल्किकी दण्डायमान देवा। विशाख्युपने अवनत हो कल्किकी प्रणाम किया था। कल्किने भी प्रसन्न दृष्टिसे उनकी ओर देख दिया। भगवान्की कृपादृष्टि प्राप्तकर विशाख्युप उसी दिनसे पुण्यात्मा बन्पाव वन गये।

कल्कि राजाके साथ रहने लगे। फिर उन्होंने संक्षेपमें आज्ञाधर्मका निर्देश लगा कहा था,— 'हमारे अंगनाले कलिके पापसे भ्रष्टाचार बने, किन्तु अब हमसे आ भिन्न हैं। तुम राजसूय और अश्वसेष यज्ञ कर हमारी उपासना उठाओ। हमीं परमलोक और हमीं अनातन धर्म हैं। काल, स्वभाव और संस्कार हमारा अनुगामी है। हम चन्द्रवंशीय देवापि तथा सूर्यवंशीय मरुको धर्मराज्य पर संस्थापित और सत्य युग प्रवर्तित कर गोडोक चले जायेंगे। विशाख्युपने यह बात सुन कल्किसे वैष्णव धर्मका प्रसङ्ग पूछा।

कल्पिनी कल्पितपतिनामके किये विद्यालयपदकी समाप्ति कहिषे आरम्भ कर विराट्पूर्ति, ब्रह्मा, माया, देवदानव-मानव स्थावर जड़म पादिकी वृत्त पति, वेदमाहात्म्य, ब्राह्मणमन्त्रिमा, अपने पवता रको पानप्रकृता प्रकृति सब बातें बतावै थीं । कल्याणक विद्यालयपके स्नानान्तर जाते शिवदत्त यह वतस्तत विवरण कर कल्पिनी निबट पा पङ्क्ति । कल्पिनी शुकसे कथा—यह ! कछो, तुम किस देवसे क्या पाचार कर भाये हो, तुम्हारा मङ्गल तो है ? शुकने उत्तर दिया—देव । सागरके मध्य सिद्ध नामक एक द्वीप है । वहाके नृपति बह प्रय कहति है । कोसुरी जाके उनको पत्नीके गर्भसे एक लम्बा हुयी है । उसका नाम पद्मावती जिनको दुर्लभा है । उनका चरित्र अतीव रमणीय है । रूपसे मन्थव मी पानक बन जाता है । पद्मावतीने हर पावतीकी उपासनाकर कर पाया है, कोई मनुष्य राजपुत्र पद्मावतीके उपबुद्ध नहीं । इस समयमें जो मानन का देव अतुर नाग मन्थर्व प्रकृति पद्माको काम भावके निर्गोच्य था पमितान करेगा, वह तत्कथ्य स्त्रीय सुखपक्षके बपसाहृदय शील भावको पङ्क्ति है । एकमात्र नारायण ही उनसे स्नानो है । पद्मा महादेवसे यह वर काम कर परम इष्ट हो इतने दिनसे नारायणकी राह देख रही है । सम्पति इनके पिता अयम्बरका आयोजन बनाया है । नृपतिका उद्देश्य है, अयम्बरको धर्ममें शोच्यने केसे कल्पिनीकी सङ्घ किये, वेसे ही नारायण पद्माको भी सङ्घ करेगी । फिर अयम्बरको धर्ममें जो सबल नृपति पङ्क्ति, वह पद्माको काम भावसे देखते ही करल बहपके अतुरूप निपुलनितम्बा, इन्द्रसुधादिनी और सुमन्ममा रमणी बन गये । जिनसे श्रेष्ठ रमणीकी बाधा कछने वेसा ही बप पावा था । वह हाथविद्यालयपन भी निपुलतासे देखने लगी । फिर नृपति लोग प्रसन्नतासे पद्माको सङ्घारियेमें मिल गये । मैं विवाह देखनेको एक निबटकर हृदयर बेठा था । किन्तु यह व्यापार इठले मैं पक्षक पुञ्जित हुआ । पद्मा भी रोने लगी । मैंने उनका विवाह

सुना है । वह शोचरिनी विद्यामें पतिवातर है । मैं अक्षि प्रपेसा कर न सबनेपर पद्मावतीको लखी पक्षकमें जोड तुम्हें संवाद देने पाया है ।

कल्पिनी शुकको पद्मावती लक्ष्मीको पेशी पक्षक बताते देख पाश्चास दिशानेके किये यद्योपबुद्ध उपदेश प्रदान पूर्वक फिर सिद्धक भेजा था । यह सिद्धक पङ्क्ति गये और पद्मावतीको पाश्चास देने लगे । उनसे सुखसे शिवोक्त विष्णुपूजकी पद्धति, मनवानुके देखकी बर्तना और शोचरपके कैय पर्यन्त प्रति पङ्क्ति ध्यान सुन शुकने संवाद दिया, कि सतुद्धके, अथरपाय शक्यताममें विष्णुने कल्पि पक्षतार किया है । पद्मानि कल्पिका संवाद सुन शुकको रत्नाकरारसे सजाया मनवानुको सुका क्षानिके किये दूत बनाया और बह सुनाया,—देखो, जो कल्पना है, कछोमी । तुमसे परिचित कुछ भी नहीं है । यह दूसरी कोन बात कह सकती है । कल्पि अपने मनुष्यत्वमें स्त्रीप्राप्ति को पायाहाथे सिद्धक पाई न पाये, किन्तु पाप शोचरपमें हमारा प्रथम पक्षक पङ्क्ति । कल्पिने बह शैलियोग, कि पद्माके पङ्क्ति दोपसे शिवका कर पमित्याप बन गया । यह उनसे विदा हो कल्पिनी निबट पङ्क्ति । कल्पि पद्माकी कथा सुन शिवदत्त अथरप चढ़े और शुकको सङ्घ से तथ्यपक्षिके छरित-पद सिद्धकको और बल पङ्क्ति । कल्पि यथाकाल राजधानी कावमती नगरमें पङ्क्ति है । नगरके प्रान्त-मायमें मनोहर शरोवर देख लखेने शुकसे कथा,— “इस स्नानपर स्नान करना पड़ेगा ।” शुक उनका उद्देश्य देख पद्मावतीके सञ्चिदानको बह दिखे । कल्पिने शरोवरके तीर पर पक्षकान किया । शुकने काकर पद्मावतीको मनवानुके पागमनका संवाद किया था । पद्मावती सुनते ही शरोवरक्षानके अलसे सङ्घकी सङ्घ से कल्पिने इयंको बल छोड़ी हुयी । उनसे पानिका समाचार या अक्षरिपिनेमें जो सबल सुख रई बह भयसे भागने लगी । उनका कामिनिद्यां सुखकार्यका अतुरहान करती, जिनमें पतिशोक शीलको न पङ्क्ति । पद्मावती सङ्घारियेके काय शरोवरके शोपानपर जा बतरी । उस समय मनवानु

कल्कि कदम्बतरुके मूलदेगपर मोते थे। पद्मावती यथाकाल स्नान समापन कर जमी तरुके मूलपर जा पहुँचीं और कल्किका रूपलावरण देख मोहित हुयीं। उन्होंने शकसे महापुरुषकी निद्रा न भङ्ग करने और उनके लग कर श्रोत्र प्राप्त होनेसे डर लगनेकी कहा या। वैसा होते उनकी क्या दगा होती। महादेवका वर पद्माके लिये गाप था। कल्कि मन ही मन उनका अभिप्राय समझ जाग उठे। उन्होंने मधुर प्रेमसम्भाषणसे पद्मावतीको मनाया था। पद्मावती कल्किदेवके मधुर वचन सुन तथा पुरुषत्व पक्षत रहते देख सातिशय आनन्दित हुयीं और लज्जा नम्रमुहमें प्रेम-गद्गद स्वरसे भगवान् कल्किको स्तव द्वारा रिक्ता घर लौट पड़ीं। उन्होंने पितासे घरमें भगवान् कल्किदेवके आगमनकी वार्ता कही थी। बृहद्रथने नगरमें श्रीहरिको पदार्पण करते सुन नानाविध नृत्य, गीत, वाद्यादिका आयोजन उठाया। फिर वह पाद्री, मित्रा, परिजनों और ब्राह्मणों आदिके साथ कल्किदेवकी नेने चल टिये। पुरोहित पूजाका उपकरण उठा पीछे रहै। राजाने शरीवरके तीर कल्किको देख स्तवपूजादि द्वारा रिक्ताया था। पुरीमें आनेपर कल्किका पद्मावतीके साथ विवाह हुआ। श्रोत्र प्राप्त राजा कल्किका स्तव करने लगे और प्रसन्न होने पर उनके आदेशानुसार रेवा नदी में नहा अपना अपना पुरुष देह पा गये। फिर उन्होंने दश अवतारोंका नामांशेख और भगवान् कल्किका स्तव कर स्वप्न देगको प्रस्थानका उपक्रम लगाया। पुरुषोत्तम कल्किने उस समय उन्हें वर्णाश्रमधर्म, वैदिक अनुशासनादि और प्रवृत्तिमार्ग तथा निवृत्तिमार्गका पथकींचित कार्य बताया था। नृपति वह वारें सुन पुलकित हुये पर पूछने लगे,—देव! किस कारणसे स्त्री और पुरुष भेदमें सृष्टि पड़ती है? सुख, दुःख और जग कहामे है? किसके आदेश और किस उद्देश्यसे यह विद्विन्न है? आज तक इन सकल विपर्योका यथार्थतत्त्व विवेचित नहीं हुआ। फिर इनसे जो विषय मित्र पटना, वह समझ पर नहीं पटना। तुम अनुग्रह कर हमसे कहो।' कल्कि-

देवन यह प्रश्न सुन अगम्य मुनिको स्मरण किया। वे वहाँ पहुँचे थे। कल्किने राजावोंका प्रश्न बता सदुत्तर देने को कहा। सुनिवर अगम्यने अपने पूर्व जन्मका वृत्तान्त सुना राजावोंके सकल प्रश्नोंका उत्तर दिया। राजा फिर अपने अपने घर लौट गये। राजावोंके स्वराज्यको जति भगवान् कल्किने सौ अपने राज्य को प्रत्यागमन करनेका सद्बल किया। देवराज इन्द्रने भगवान्का अभिप्राय समझ विश्वकर्मासे शम्भलग्राममें उनके लिये स्वस्ति प्रकृति नानाविध भवन वनवाये थे। यथाकाल पद्मावतीको साथ ले धूमधामसे कल्कि शम्भलग्रामको और चला दिये।

वह सब लोग शम्भल ग्राम पहुँचे थे। कल्कि और पद्मावतीने जाकर जनक-जननीका प्रणाम किया। फिर वह यमुवीके समभिष्याहारसे नगरमें गये और विश्वकर्माके जनाये भयनमें रहने लगे। उसी समय कल्किके भ्राता कविने स्वपत्नी कामकलाके गर्भसे बृहत्कीर्ति तथा बृहद्वाहु, प्राज्ञने अपनी पत्नी सन्नतिके गर्भसे यज्ञ एवं विज्ञ और सुमन्वकने शान्तिनीके गर्भसे शासन तथा वेगवान् नामक पुत्र उत्पादन किये।

कुछ दिन बीतने पर विष्णुयगाने अश्वमेधयज्ञ करना चाहा था। कल्कि पिताको इच्छा देख धनरत्न सग्रह करनेकी दिग्विजयके लिये चले गये।

कल्कि स्वजनोंको लेकर ससैन्य प्रथमतः कीकट देशमें जा उतरे। कीकटदेशमें उस समय सब एकाकार रहा। स्त्री, धन वा अन्न आदि लेनेमें कौयी अपना पराया देखता न था। वहाँ जिन नामक एक राजा रहे। वह कल्किको पाते सुन दो अर्धौ-हिणी सैन्य लेकर लड़ने चले।

प्रथम युद्धमें जिन राजकी बौद्धसेना हारकर भागी थी। फिर कल्कि और जिन दोनों लड़ने लगे। कल्कि गदाघातसे सूर्धित हुये थे। जिन राजाने अचेतन कल्किका देह उठा ले जाना चाहा। किन्तु वह विष्वधर देह उठाये उठा न था। उसी बीच विगाड्युपने निकटस्थ हो गदाघातसे जिनको हटाया और कल्किको लाकर अपने रथ-

पर बैठाय। रसपर चढ़ते ही कालिन्ध जाग पड़े। फिर वह सुझते मध्य त्रिनक्षि समुद्र पशु से थे। मध्य सुझते इरा कालिन्धि तर्षे कलिन्ध तोड़ तोड़ मार डाला। त्रिनक्षि भ्राता शुद्धोदन ब्राह्मणानेति प्रतिशोध देने गये थे। किन्तु कालिन्धि ज्योत्स्नाता कविने उनसे लड़ने लगी। शुद्धोदन धीरे कविसे बढ़ी गदाये लगी। शुद्धोदनने कविसे कियो प्रहार दृशान सकनेपर माया देवीका स्मरण किया। माया देवी किङ्कज रसपर चढ़ सेवसे पुरोमामर्म का चढ़ी हुई। मायाके पाते ही कालिन्धिका सेव्य पक्षमन्थ बना था। बोधदेना जयध्वनिके साथ धाने बढ़ी। किन्तु बारण्य यमभूमिपर कालिन्ध शयं मायाके समुद्र का पशु थे। माया देखते ही विष्णुके शरीरमें समा गयीं। मायाको न देख बीह सेना बहुराये ही। यन्त्रको मुद्र होने क्या। क्रमशः शुद्धोदन, काकाय, करोपरोमा प्रभृति बीहनायक खेत रहे। यन्त्रिक लोम मागे थे। फिर बोधपतिव्यां लड़ने पशुकी। कालिन्धि तर्षे पक्षमन्थसमय पक्षतिल्य समझा मुद्रसे निहत होनेका क्या। रसपियेने उनको घात न सुन पतिके शोभने पक्ष छोड़े थे। किन्तु यन्त्रोंने यन्त्रुके प्रति न चक्र मूर्ति परिपक्व पूर्वक उनसे कह दिया—जिन भगवान्को यन्त्रिके पाचवसे इन यन्त्रकीको ध्यं करते, वह वही भयवान् हरि देख पकते हैं। भगवान्ने प्रज्ञाहके लिये त्रिस समय तृदिह मूर्ति बनाये ही इस समय ही हरिके गोत्रमें पाचात मारने को हमारी लुब्ध चमने न पाये। पर हम क्या कर सकते। बीहकामिनिवां वह बात सुन विस्मित हुईं। धीरे पवनेवसे हरिके शरण गयीं। कालिन्धि तर्षे भक्तिपायका उपदेश दिया था। फिर तन्त्रोंने भी क्रमशः सुखि पायी।

कालिन्धि शीघ्रतः चक्रतोर्षको का सदस याक विहित विधानके अनुसर जान पादि किया था। एक दिन वहाँ भगवान्ने वाच्यविषय नामक सुनियोंने विषय बदन जाकर कहा—कृष्णचर्मके निकृष्य नामक एक पुत्र रहा। उसके कुबोदरी नामको एक कन्या है। काचकर्म नामक धिनी राचमसे विवाह हुआ। यन्त्रिके विषय नामक एक सम्मान विद्यमान

है। पापातत कुबोदरी हिमालय पर्वतपर मरुत्तक क्या धीरे विषय पर्वतपर दोनों पैर खेला छो गयी है। हिमालयकी एक उपत्यकामें बैठ विषयक पश्यपान करता है। वयो राचसीके निम्नोस पवनसे प्रतिहत धीरे विषय जो हम पापके शरण भाये है। पापने हमें बिरहास राचसी-भौतिके उपाय है। इधरारमो पाप ज्ञापपूर्वक जमाप दुःख मिटा दीजिये।

कालिन्ध सुनियोंने बात सुन हिमालयकी उपत्यका पर पशुके थे। तन्त्रोंने वहाँ एक दुम्बरी नदी पति शरकोतधे बहते देखीं। पूरने पर खतर लगी, कि वह कुबोदरीके एक भ्रमकी दुम्बरीारा रही। विषयक एकही ध्यान पोता था। उससे पपर स्थानकी दुग्ध बारा नदी बनकर बह लगी। मत्तवटिका पोके पपर स्थान बदलते वह नदी सूख जाती धीरे दूधरी धीरे नदीकी दुम्बरीारा बहते देखने लगी। फिर कालिन्धि कुबोदरीके भोषण पाकारको विन्त्यामें पड़े धीरे इससे पमिसुखको बस गये। तन्त्रोंने जाकर देखा, कि राचसीका कर्षे पर्वतमन्थके जमने सिंकोशा पाचयं धीरे कोमसुप सुझपोतादि सच इतिथीके सुखसे रहने को निश्चित बना था। कालिन्धि राचसीको देख मर लोड़ा। राचसी शरणिक होते गभीर गर्भन करने लगी। वह यन्त्र सुन कालिन्धि सेना मूर्धित हुई। फिर राचसीके श्रास लेते ही इष्टो, पक्ष, रव धीरे पदातिके साथ कालिन्धि नामापयमें जानि लगी। उसने निश्चय पाकर सबको का डाका।

भगवान् कालिन्धि समेय राचसीके उदरमें पशुके थे। इससे जगत्संसार डर गया। फिर वह राचसीका उदर बाधामि लक्षा धीरे करवानसे उड़ा बाहर निकल्य। सेव्य लोग भी योनिरम्बु कर्षे नाशार्थ प्रभृति प्यलोंने निश्चय पड़े। कुबोदरी पक्षमकी पशुकी। विषयक जगतीको मरते देख निराशुच जाय से कालिन्धेना मारने लगा। कालिन्धेने पक्षमकीय भोषण राचस गिरुको ज्ञान पक्षसे यमासय मेक दिया।

दूसरे दिन पक्षम्य कलिन्ध सुनि सहाका स्थाय पकृते पकृते कालिन्धे देखने मये। तन्त्रोंने पक्षि, यन्त्रिक,

वशिष्ठ, गालव, भृगु, पाराशर, नारद, दुर्वासा, देवल, वसु, ऋद्धत्यामा, परशुराम, कृपाचार्य, त्रित, वेद-प्रमिति महर्षि रचे। उनकी साथ मरु और देवापि नामक दो राजर्षिभी आये थे। कल्कि के परिचय पृच्छने पर मरुने कहा,—‘सूर्यवंशोद्भूत अग्निवर्णका पौत्र और शास्त्रका पुत्र हूँ। व्यासदेवकी मुखसे कल्कि अवतारकी कथा सुन दर्शन करनीकी यहाँ चला पाया। देवापिने अपनेकी चन्द्रवंशीय प्रतीपकरका पुत्र बताया। वह शान्तनुकी राज्य सौंप कलापग्राममें तपस्या करते थे; व्यासकी मुखसे कल्किका संवाद सुन देखनेकी पहुँच गये।

उनका परिचय पाकर भगवान् कल्किकी पूर्वकथा स्मरण पढ़ी। उभयकी आश्वास दे उन्होंने कहा,—‘मरु ! प्रजापीडक तथा प्राणिहिंसक स्नेच्छीकी मार तुम्हें अयोध्याकी और पुष्पादिका उच्छेद साधन कर देवापिकी इस्तिनापुरके सिंहासनपर बैठावेंगी। तुम अस्त्र शस्त्र क्षतविद्य हो। अब योद्धवशमें रथपर चढ़ हमारे साथ चलो। मरु ! तुम विशाखयूपकी सुन्दरी रुचिराङ्गी कन्याकी पत्नी बनाओ और देवापि तुम भौ रुचिराङ्ग नृपतिकी कन्या शान्ताकी विवाह कर लाओ।’ कल्किकी यह बात कहते ही आकाशसे अस्त्र-शस्त्र सज्जित दो रथ उतर पड़े। उससे सबकी विज्ञय लगा था। कल्किने कहा,—‘तुम दोनों लोकपालनायं सूर्य, इन्द्र, इन्द्र, यम और कुबेरके अंशसे धराधामपर अवतीर्ण हुये हो। तुम्हारे ही लिये इन्द्रके आदेशसे विश्वकर्माने यह रथ बनाये है। तुम इनपर चढ़कर हमारे पीछे पीछे चलो।’ उनकी इस बातपर पुष्पहृष्टि होने लगी।

उसी समय सनक सट्टय एक तेजःपुष्प ब्रह्मचारी जा पहुँचे। कल्किने पाद्यादि द्वारा उनकी पूजा कर परिचय पूछा। ब्रह्मचारिने कहा,—‘कमलापते ! मैं आपका आदेशवह सत्ययुग हूँ। आपका आविर्भाव और प्रभाव देखानेकी यहा आ पहुँचा हूँ।’ सत्ययुग यह कह कल्किका स्वर करने लगे। फिर वह उनके अनुगामी बने थे। महर्षियोंने अपने अपने स्थानकी प्रस्थान किया।

उसके पीछे कल्कि विशासन राज्यपर पर चढ़े। विशाखयूप, देवापि और मरु उनके पीछे थे। धर्म भी उसी समय बृह ब्राह्मणवेशमें कल्किके निकट आ पना परिचय पा उनकी आश्वास दिया था। कीकट बौद्धोंकी विदलित होनेकी बात सुन धर्म आल्हादित हुये और सिंहाग्रम अपने परिजनोको छोड़ कल्किके पीछे चल दिये।

कल्कि खश, काम्बोज, शबर, बर्वर प्रभृतिको दवानेके लिये कल्किकी पुरीके भ्रमिमुख हुये।

कल्किकी पुरी अत्यन्त भीषण थी। उसे देखते ही लोग कांपने लगते। सर्वदा भूत, सारमेय, काक, उलूक और शृगाल वहाँ देख पड़ते थे। गोमांसका पूतिगन्ध सर्वत्र परिपूर्ण रहा। कामिनियां द्यूत, विवाद प्रभृति विषयोंमें अनुरक्त थीं। फिर वही वहाँ कर्त्री रहीं। अन्य प्रभुकी बात चल्ती न थी।

कल्किने कल्किदेवकी लड़ने आते सुन स्त्रीय परिजन बुला लिये। फिर वह पेचकाच रथपर चढ़ विशासन नगरके बाहर जाकर लड़नेकी प्रसूत हुये। कल्किने ससैन्य रणक्षेत्र पहुँच धर्मसे कलि, ऋतसे दम्भ, प्रसादसे लोभ, अभयसे क्रोध, सुखसे भय, दृपसे व्याधि, प्रश्रयसे ग्लानि और स्मृतिसे जराकी लडाया था। अन्यान्य प्रतिद्वन्द्वियोंमें भी उन्होंने युद्ध घोषणा करायी। क्रमक्रम विषम युद्ध उठा था। आकाशमें देवता देखने गये। मरु राजा खशों काम्बोजो, देवापि चीनावों बर्वरों और विशाखयूप पुलिन्दो चण्डालोंसे लड़ने लगे। कल्किके काक और विक्राक नामक दो दानव सेनापति थे। वह इकासुरके पौत्र और शकुनिके पुत्र रहे। दोनों देखनेमें एक रूप थे। ब्रह्मासे वर पा वह देवतावोंसे अजेय रहे। उन दोनों वीरोंके गदाहस्त रणमें कतरनेसे मृत्यु भी डर कर भागते थे। कल्किदेव स्वयं काक और विक्राकके प्रतिद्वन्द्वी बने। युद्धमें अस्त्रोंकी भाड़ा झडी और वीरोंकी कडाकडीसे पृथिवी धरधराने लगी। अवशिष्टकी कल्किके अनुचर पराजित हो नाना देशोंमें चले गये। कलि स्वयं हारने पर स्त्रीस्वामिक भवनमें डुसा था। पेचकाचरथ चर-

हुवा। ब्रह्मचर्य व्रत पक्कासादि भी मन्त्र देनापि तथा विद्यालयपथे भागी है।

ब्रह्मचर्य की शक्ति ब्रह्मदेव सृष्टे। मनुकेट-मन्त्रा सुख मन्त्र मारता था। ब्रह्मि तनके पञ्चाङ्गातसे पञ्चम्य पीडित हुये। तन्मोने सुख हो बिकोबका गिर काट जासा। बिन्दु ब्रह्मके अतदेवकी धोर देखने हो बह जो ठठा धीर फिर दोनो भाइयोका जोडा ब्रह्मिपर टूट पड़ा। ब्रह्मिने कई बार दोनोका गिर काटा था। बिन्दु एकसे देखने हो दूरता पीडित हुवा। शिपने ब्रह्मिने अपने पञ्चको तनपर छोड़ दिया। कामगामो पञ्चके सुरप्रकारसे दानव बार बार सूर्धित होने लगे। फिर भी उन्हें मरते न देख ब्रह्मि चिन्तामें पड़ गये। ज्ञानमें उस समय रचने पहुंच कर कहा,—'बिभो। यह दानव पञ्चम्यसे भयप्य हैं। हमने उन्हें एकको मरते दूसरेके देखनेसे फिर जोठठनेका बरदान दिया था। सुतरां पाप बह-उपाय करें जिससे दोनो साथ हो मरें। ब्रह्मिने उस रक्षक समझ बदाको जाबसे जाबा धीर दोनोके एक पास बचपुष्टि माग था। दोनो बिदोषे मर्याद हो पञ्चम्यको पहुंच गये धीर एक दूसरेका अतदेव देख न सके। देवता धीर मनुष्य सब तनके मरनेसे परम प्रीत हुये। सिद्धवारसादि ब्रह्मिको सराहने लगे। ब्रह्मिपुरमें तन्मोने रच बीता था।

ब्रह्मि तनके पीछे मन्नाटनवरको शय्याचर्चीसे बड़ने लगे। मन्नाटनवरके राजा शशिभद्र पति लक्ष्यपरायण धीर योनिदोने पचपण्य है। मनवान् ब्रह्मिको बड़ने धारि सुन बड़मो प्रीति धीर मन्नि सचकारसे शैष्य सजाकर प्रस्तुत हुये। तनको बिन्दु, परावथा सुजाता पञ्चोने कामोको जगत्पतिसे सुहोषत देख कहा था—'माह। मयवान्के बीमल शरीरपर पाप कैशे पक्ष छोड़ेंगे। तन्मोने उत्तर दिया,—'प्रिये। रचकर्ममें सुख शिष्यको धीर उपाय उपायकको शिष्या मार सकता है। सुहमें यदि बनें, तो कैशेके तेरी राजा बनेही रहेंगे। धीर साथ ही ब्रह्मिको जोतनेके जोन हमारी मयला करेंगे। नहो तो सुहमें मरनेसे जगप्रान होना तो निश्चित हो है।

सुतरां हमें दोनो धीर काम ही काम देख पड़ता है। पक्ष ईश्वर धीर हम शिष्याचरम है। ब्रह्मि हमसे जो सेवा कराना चाहेंगे, उससे बिदे से हमें पचस्तुत न पायेंगे। सुतरां प्रस्तुत जह हमसे बड़ने पाये हैं, तब हमने भी अपने पञ्चम्यका ठठाने हैं। तनको इच्छाके अनुसार हम कार्य करनेको बाध्य हैं।' तानोने यह सुनकर उत्तर दिया—'हरिके शिष्य कामी कामनासिद्ध नहीं होते। सुतरां जगत् या यमको कामनासे पापका बड़ना पचम्य है। फिर पाप जह कोयी कामना नहीं रखते तब बह भी क्या देखते हैं। सुतरां हमें पाप कोनोका यह सुहोषत मोहको लोभामात्र माहूम पड़ता है।' इसी प्रकार बचनोपबचनके पीछे शशिभद्र हरिनाम धरण धीर हरिध्यान कर हरिके सङ्गने लगे। शय्याचर्च लोभ पक्ष ठठा तनके साथ हुये। राजहृमार सूर्धित भी परम वैष्य धीर पञ्चविदोने अंड है। सुख पारण्य हुवा। विद्यालयपथे शशिभद्र, मन्त्रके सुपनेतु धीर देवापिसे उहसूर्धित बड़ने लगे। ब्रह्मिचरम्य विभ्रम्य हुवा था। सूर्यके सुहमें सूर्धित होते ही सारिक मरको ही भागा। उहसूर्धित देवापिसे बार गये। तनके छोड़ने निष्प्रेषित होने लगे। परन्तु इतनेमें ही सूर्धित साहाय्यके बिदे पहुंचे धीर तन्मोने सुष्टिके पाचातसे गिरा देवापिसे सुजबन्धनसे अपने श्नाताको छोड़ा दिया। शशिभद्र विद्यालयपथे जरा ब्रह्मि सचप्योन हुये।

शशिभद्रने कविबन्धे कहा,—'सुष्टिकेपाप। पारसे धीर हमारे सुहयवर प्रचार जगारने नतुवा हमारे मयसे हमारे पच्यकार सुहमें द्विप जाहये। यदि पाप हमें यत्न, समझे, तो निर्विवाद प्रचार करें, जिससे हम पनायास शिष्य पचवा बिन्दुकोकलो लगे।

कविब यह बात सुन मनको मन सन्तुष्ट हुये धीर उपरसे शशिभद्र पर बाध बर्धक करने लगे। दोनोमें महासुख हुवा। दोनो दिव्य पक्ष जलाते है। शिष्यको कविबन्धे सुष्टिकापातसे शशिभद्र सुहर्त मार पचैतन्य रहे। फिर तन्मोने भी उठकर कविबन्धे सुष्टि मारा था। कविब उस पाचातसे शिष्यमूल बहकोको मति पचैतन हो गिर पड़े। अर्म एवं

सत्ययुगके साथ कल्किको उठानेके लिये शशिध्वज निकट पहुँचे थे। वह धर्म तथा सत्ययुगको अपने दोनों कर्षोंमें दबा और कल्किको वक्षस्थलसे लगा अपनी पुरी चले गये। उनने घरमें पहुँच रानीको सखियोंके साथ हरिगुण गाने पाया था। राजा उनसे कहने लगे,—‘प्रिये! भगवान् कल्कि मूर्च्छाकृतसे हमारे वक्षस्थलमें लग तुम्हारी भक्ति देखने आये है’। फिर हमारे दोनों कर्षोंमें धर्म और सत्ययुग है। इनकी यथोचित अर्चना कीजिये।’ सुशान्ता सबको प्रणामकर और हरिप्रेमसे विह्वल बग नाचने गाने लगीं। स्तवसे तृप्त हो कल्किने सुसोयितकी भांति ईषत् लज्जितमुखसे सुशान्ताका परिचय पूछा। उन्होंने अपनेको दासी बताया था। धर्म और सत्ययुग सुशान्ताकी हरिभक्ति सराहने लगी। कल्कीने कहा यथार्थ तुम्होने हमको जीत लिया। शेषको उन्होंने शशिध्वजकी कन्या रमाका पाणिग्रहण किया। फिर कल्किके सहचर राजावीने शशिध्वजसे उस अपूर्व भक्तिकी कथा पूछी। उन्होंने परिचय देकर जिस प्रकार हरिभक्ति पायी, उसी प्रकार सब बात खोलकर बताया थी।

उसके पीछे कथाप्रसङ्गमें शशिध्वजने भक्ति एवं वासनातत्त्व देखा दिया और द्विविद तथा जाम्बवान्की भांति मरणकी प्रार्थना की। राजावीने उन दोनों वानरोंका वृत्तान्त सुनना चाहा था। राजाने सब बताकर कहा,—‘हमीं कृपावतारमें सत्यभामाके पिता सदा-जित् थे।’ इसके बाद कल्कि श्वशुर शशिध्वजको सान्त्वना दे चल दिये और ससैन्य काञ्चनपुरी पहुँच गये। वह पुरी गिरिदुर्गसे वेष्टित और सर्पजालसे रक्षित थी। कल्कि विविध बाणों द्वारा विघ्नस्त हटा पुरीमें घुसे। पुरीके मध्य सुन्दर प्रासाद हरिचन्दन वृक्षसे वेष्टित और मणिकाञ्चनसे अलङ्कृत थे। किन्तु मनुष्योंका कोई सम्पर्क न रहा। केवल नागकन्या चारो ओर घूमती फिरती थीं। कल्कि पुरीमें घुसते द्विषकिचाने लगे। उसी समय देवबाणो हुयी,—‘आप अकेले ही प्रवेश कीजिये। इस पुरीमें एक विषकन्या है। उसके देखते आपको छोड़ सब मर जावेगे।’ फिर वह केवल शुकको पकड़ और अश्वपर चढ़ काञ्चनपुरीमें

खड्गहस्त घुसे थे। विषकन्या एक स्थानपर देख पड़ी। कन्याने कहा,—‘मेरे तुल्य हतभागिनी विषनेत्रा कामिनो दूसरी नहीं। आप कौन हैं?’ कल्किने उससे विषनेत्रा होनेका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया मैं गन्धर्वराज चित्रश्रीवकी भार्या सुलोचना हूँ। एक दिन मैं पतिके साथ गन्धमादन कुञ्जवनमें रसालाप करती थी। उसी समय नद्य सुनिका कदर्यं कलेवर देख मुझे बड़ी हंसी आयी। सुनिने क्रोधवश विषनेत्रा होनेका अभिशाप दिया था। आज आपके दर्शनसे मेरे शापका अन्त हुआ। अब मैं स्वामीके पास जाती हूँ।’

विषकन्या स्वर्गको चली गयी। कल्किने उक्त पुरीके अधीश्वर अमर्षको राज्यपर अभिषिक्त किया। फिर उन्होंने मरुको अयोध्या, सूर्यकेतुको मथुरा, देवापिको वारणावत, परिस्थल, वृकस्थल, कामन्दक एवं हस्तिना, कविप्रभृति भाइयोंको शीघ्र, पौण्ड्र आदि, ज्ञातिवर्गको कौकट प्रभृति और विशाखयूपको कौड तथा कलाप राज्य दिया था। फिर सब शम्भल लौट गये। पृथिवीपर धर्म और सत्ययुगका अधिकार प्रवर्तित हुआ।

कुछ दिन बीतने पर विष्णु यशाने यज्ञ करनेकी पुत्रसे कहा था। कल्किने उनके आदेशसे राजसूय, वाजपेय और अश्वमेधयज्ञ सम्पन्न किया। कृप, राम, वशिष्ठ, व्यास, धौम्य, अज्ञतव्रण, अश्वत्थामा, मधुच्छन्दा और मन्दपाल प्रभृति महर्षि उन सकल यज्ञोंमें उपस्थित थे। कल्किने यज्ञान्तमें गङ्गायमुनाके सङ्गमस्थलपर ब्राह्मणोंको खिलाया पिलाया। पीछे सब लोग शम्भल लौट गये।

समय पाकर परशुराम कल्किके भवन पहुँचे। उसी बीच कल्किके पद्मावती-गर्भजात जय और विजय दो पुत्र हुये थे। रमाके कोयी बालक न रहा। उन्होंने परशुरामको देख पपना अभिसाध कहा। परशुरामने रमासे रुक्मिणोव्रत कराया था। व्रतके प्रभावसे रमाने मेघमाल और वलाहक नामक दो पुत्र पाये। कल्कि पत्नीपुत्रके साथ महासुखसे दिन बिताते थे। फिर ब्रह्मादि देवतावीने उनसे स्वर्ग जानेको अनुरोध किया। कल्किने पुत्र तथा प्रजावर्गको कहा अपने

कार्यमनसा संवाद सुनाया था। वह सब शोकांत
हुये। कल्पि राजत्व छोड़ दोनो पत्नियोंके साथ
हिमाक्षय प्रदेशमें गङ्गा किनारे पङ्क्ति में। वहाँ
उन्होंने पचने पापको क्षरण किया। फिर चतुर्भुज
मूर्तिमें परिवर्तित हो वह मोक्षोक्त गये। पद्मा पौर
रमाने भगवतें देह छोड़ पतिलोक पाया था। प्रथिबो
पर सम्बुधका प्रभाव पङ्क्तु रहता। देवादि पौर सब
राज्य प्राप्त करने लगे। अन्तिमपुत्र श्वो।

मायवतमें कल्पि मयवान्का ज्योतिष्य पचतार
कहा है। (भाग्य १।१।११-१२)

जेनियोमें भी कल्पि पचतारको कहा चुन पङ्क्तो
है। वह कहते हैं—महाभारते निर्वाच पानिके पौष्टि
प्रति लक्ष्मण वर्य कल्पि होता है पौर वह जेनवतमें
विद्वह मत स्थापन करते हैं। (जेन इतिवत्)

कल्पिपुराण—एक पतिरिक्त उपपुराण। यह पद्मादय
उपपुराणोंके बाहर है। इसमें तीन चर्म लगे हैं।
प्रथम एवं द्वितीयमें सात सात बौद्ध पौर छत्तीसोंय
में इक्षीस सब पैंतीस अर्थात् है। इनमें क्रमानुसारी
शुद्धादर्शयोगका संवाद, चर्ममेंके अंगका कौर्तन,
कल्पिका विवरण, प्रथिबो तथा देवगणका ब्रह्मचोक्तको
-ममन, ब्रह्मनाम्नात्पार अथवासत्राद्वय विष्णुयथाधि
इहमें सुमतिके गमने विष्णु एवं उनके अर्धभूत तीन
अष्ट सप्तोदरके अथवा विवरण, कल्पि विष्णुयथा
का संवाद, कल्पिका उपनयन परशुरामके कल्पिका
याथाय, उनके वैद्याभयन, पद्मपद्मविद्या, कल्पिका
दिवाराधन, हरपावतीके समस्त कल्पिका शिवरूप
पाठ, शिवके अर्थ, अङ्कन, गंध अर्थादि एवं बरका
साम, अथवासत्रो प्रत्यागमन, पद्मभद्रके बरका कौर्तन
-नरपति विद्यायुपकी उभारमें कल्पिका संक्षेपके वर्षा
-अमवर्तकेयम शुद्धका आयमन, शुद्धकल्पिसंवाद
सिंहकका वर्णन, पद्माका चरित, शिवके पद्माका बर
-साम, पद्माके अथवासत्रका यावोभन अथवासत्रको उभारमें
-यागत राजावोका जोभाव पद्माका विद्या, शुद्धको
-भूतपक्षके प्रेरण, शुद्धपद्मा-संवाद, पद्माका विष्णु
पूजन, पद्मादिसे योग्यत पचतार विष्णुके प्रबोक्त पङ्क्ता
वर्णन तथा ध्यान, शुद्धको अथवासत्राद्दान, शुद्धका प्रत्या

यमन, पद्माके अर्थ, कल्पि एवं शुद्धका सिंहायमन,
सामके अथवासत्रो पद्माका अथिपार, पद्माका अथ
कोट्टक, कल्पि तथा पद्माका मिशन, शुद्धयथा
संवाचन, अथवि-पद्मा विद्या, कल्पिके दर्शनके अथवा
प्राप्त राजावोका पुण्यनाम एवं कल्पिपुत्र, वर्षाअम
वमपर कल्पिका उपदेश, राजावोका प्रथ भगवत
मुनिका आगमन, भगवतका पूर्व जन्मान्त अयन, शिव-
का अथ विद्याके अथवापर भगवतका मायादर्शन पौर
वेदाभ्याससम्बन्ध, भगवतका मोक्ष राजावोका प्रत्या
यमन, कल्पि पद्माका अथवासत्रो प्रत्याग, सिद्धकर्मा
का विधान, आदर्शका अथवासत्र विष्णुयथाका
ब्रह्माभिषय, कल्पिका अथवासत्रके साथ दिग्ब्रह्मके
गमन, जिनराजका बर, वीरोका नियम, मायाका
अथवासत्र, बौद्ध रमणियोंका बुद्धयोग, अथ देवतादि
का याविमान, ज्ञानके योगका अयन, मुनिवोका
आयमन शुद्धोदरोका उत्पत्त, चतुस्र शुद्धोदरोका
बर, हरिहरको कल्पिका गमन, मुनिवोका
आयाय, मर एवं देवायिका मिशन, उभरके परिचय
अथके अर्थव्यय तथा अथवासत्रका कौर्तन, मरका राम-
चरितव्यय, मर एवं देवायिके साथ कल्पिके
शुद्धावगमन, चर्म तथा सम्बुधका मिशन, कोक्त
विषोक्तका विनाय, महाभरमें गमन, अथवासत्रोका
शुद्ध, सुभान्ताके शयिभ्रमका विष्णुमन्त्रिकौर्तन, अथ
अथमें शयिभ्रम अर्थक कल्पिकर्म एव सम्बुधका
पराजय, उनको उठा शयिभ्रमका पचमी सुतीमें
प्रथि, सुभान्ता अर्थक अथ, कल्पिके साथ रमाका
विद्या, शयिभ्रमके अथवासत्रका विवरण, द्विविध एवं
नाम्नानुका वर्णन, अमवर्तकोपाख्यान, शयि
भ्रमका मोक्ष, विद्वन्त्याका मोचन, राजावोको
राज्यदान, पुत्रादिका अथिपेक्ष, मायाअथ, अथवर्तमें
अथदिवा अथवासत्र, नारदके विष्णुयथाका मन्त्रिनाम,
चर्म एवं सम्बुधका अथिपार, अथिपौत्र, कल्पिका
विद्या, पुत्रपौत्रादिका वर्णन ब्रह्मकल्पि संवाद,
विष्णुका वैष्णवगमन, पद्माकायाका शयि, शुद्धदेवका
प्रत्याग, मुनिगणका गङ्गाअथ, पुत्रावका विवरण
पौर पुत्रावके अथका अथ विद्या है।

कल्किपुराणको लोग द्वैपायन प्रणीत बताते हैं। किन्तु कोई कोई इस बातको नहीं मानते। कारण वेदव्यासप्रणीत सकल पुराण और उपपुराण नामक अन्यान्य ग्रन्थोंमें इसका नाम नहीं मिलता। एतद्भिन्न कल्किपुराणके मध्यही तृतीयांशके एकविंश अध्यायमें एक स्थलपर लिखा है,—‘सकल पुराणाभिन्न लोम-हर्षणनन्दन सूत वेदव्यासके शिष्य थे। हम उन्हें प्रणाम करते हैं।’ यदि यह पुराण वेदव्यासरचित रहता, तो उनकी लेखनीसे स्वशिष्यके प्रति प्रणाम-ज्ञापक श्लोक लिखा देख न पड़ता। फिर कल्कि-पुराणमें वेदव्यासके रचना होनेका प्रमाण कहा है? प्रथम अंशके गौनकादि ऋषियोंके प्रशानु-सार इस पुराणकी व्याख्याका अनुक्रम लगाया है। पुराणोत्पत्ति निरूपण करते समय उन्होंने कहा, ‘पुराकालकी नारदके पृथ्वीपर ब्रह्माने यह उपाख्यान सुनाया था। नारदने व्यासदेवके निकट व्याख्या की। फिर वेदव्यासने स्वपुत्र ब्रह्मरात (शुकदेव ?) को यह विवरण बताया था। ब्रह्मरातने अभिमन्युके पुत्र विष्णुरात (परीक्षित ?) की सभामें यह कथा कौतूहल-की, किन्तु कथा शेष न हुयी। विष्णुरात स्वर्गको चले गये। मार्कण्डेय आदि महर्षियोंने शुकदेश्चे अनुरोधकर शेष पर्यन्त कथा सुनी थी। उनके मुखसे सुना हुआ विषय हम विवृत करेंगे। इसमें अष्टादश सहस्र श्लोक विद्यमान है।’ किन्तु तृतीयांशके शेष अध्यायमें ग्रन्थके उपसंहारकालमें उग्रयवाके मुखसे ही भिन्नरूप वर्णना मिलती है,—‘निरतिग्रथ पापी लोग भी इस पुराणके प्रभावसे अभीष्ट लाभ कर सकते हैं। इस कल्किपुराणके कुछ सहस्र एकशत श्लोकमें सकल शास्त्रोंका अर्थ और तत्त्व संगृहीत हुआ है। प्रलयावसानमें श्रीहरिके मुखसे यह कल्किपुराण निकला है। इस पुराणसे चतुर्वर्ग मिलते हैं। भगवान् वेदव्यासने ब्राह्मणकर्म परिग्रह किया था। उन्होंने ही धरातलपर अवतीर्ण हो परम विष्णयकर भगवान् कल्किके प्रभावकी यह वर्णना सुनायी है।’ पूर्वीकृत दोनों अंश देख श्लोक संख्याके सम्बन्धपर भी विभिन्न रूप कथन मिलता है।

कल्किपुराणमें पुराणोपपुराण-वर्णित सकल विषयोंकी बहुत वर्णना नहीं। लेखक इस सम्बन्धमें जो कथायें लिखते, उनकी देवर्त ही समझा जा सकता है कि वह सकल अंग केवल पुराणके तत्त्वकी रक्षा करनेके लिये ही ग्रन्थमें लगाये गये हैं। रघुवंग, नैपथ्य, कुमार प्रभृति महाकाव्योंमें जेमे किसी एक व्यक्ति या विषयकी वर्णना चलती है, इसमें भी वेमे ही एक मात्र कल्किचरितकी कथा मिलती है। कल्किपुराणमें शृङ्गार, शान्ति एवं वीररस विगोप देखाया, अन्यान्य रसोंका भाव अविस्मृत रूपसे भक्तकाया और पुराणादिकी भाति पुनरुक्तिदोष वा अनर्थक अश्रय शब्दोंका प्रयोग नहीं लगाया है। इन सकल कारणोंमें इसकी एक सुन्दर महाकाव्य कहना अधिक युक्तिमत्त है। इसकी रचनाप्रणाली पुराणोंकी भाति रसहीन नहीं। कल्कि-पुराणकी भाषाकी भी प्राचीन कहनेमें सन्देह है।

इसमें कल्पियुगके शेष पादकी वर्णना लिखी है। उसके अनुसार कलिप्रभावसे समस्त पृथिवी एकवर्ष होनेपर भगवान् कल्कि रूपसे जन्म ले कल्कि-घटावे और सत्वयुग चलावेंगे। सूक्ष्म भावमें मनोयोग पूर्वक विचार कर देखनेसे कल्किके समय पृथिवीकी वर्णित अवस्था शेषपादकी नहीं—प्रथमपादकी घटना समझ पड़ती है। कल्किके साथ मायावादी बौद्धोंका युद्ध जिस अंशमें लिखते हैं, वह अंग निषिद्ध चित्तसे पढ़नेपर सहजमें ही समझ सकते हैं कि वह वर्णना भारतमें बौद्ध धर्म वर्धन समयकी ठहरती है। यही बात कल्कि शब्दमें उद्धृत श्लोकसे भी प्रतिपन्न होती है। अनुमानसे कल्किपुराणकार उस समयके मालूम पड़ते, जिस समय बौद्ध धर्मकी प्रबलता घटनेसे ब्राह्मण-धर्मके तत्त्व कुछ कुछ ऊपर उठते थे। उस समय उनकी आँखोंमें भारतकी जो दुर्दशा समायी, उन्होंने वही लिख कल्किके शेषपादकी अवस्था बतायी।

कल्किपुराणमें जिन स्थानों (माहिषती, शम्भल, कीकट, सिंहल, पाण्ड्य, सौह्य, सुराष्ट्र, पुलिन्द, मगध, मध्यकर्णाट, अन्ध्र, चोड, कलिङ्ग, अङ्ग, वङ्ग, कन्नड, कच्छापक, हारका, मथुरा, वारणावत, अरिस्थल, हकस्थल, माकन्द, हस्तिनापुरी, चोल, बर्वर, कर्बट,

महाद, काचनपुरी प्रसक्ति के नाम लिखे हैं, उनमें अविर्भाव प्राचीन पोराखिक देख पड़ते हैं।

कल्किपुराणकारने मरु और देवायिकी पाण्डवों से सम्बन्धन बतुंयं मुख्य मान्यताका स्थाता कहा है। अन्त्या पुराणोंकी कथा देखते सुभिष्ठारादिने कश्चिदं प्रारम्भमें ६३३ वर्षं राजत्व किया था। सुतरां उनसे सम्बन्धन बतुंयं मुख्य कथे बहु परवर्ती कश्चिदे ग्रिय पादमें पा सकते हैं। मरु और देवायिकी भी घात सुवर्षोंका प्राबन्ध पडता है। फिर कल्कि अवतारके पीछे सत्त्वगुणका प्रारम्भ किया है। यदि कल्किदेवने देवायि और मरुकी सुविषोका राज्य सौंप सत्त्वगुणका प्रारम्भ किया ऐसा बीकार करे तो वे सत्त्वगुणके प्रथम राजा ठहरते हैं। किन्तु अन्य किसी पुराणमें यह कथा नहीं मिलती। नान्द ईश्वरी।

रतिहासकी जोड़ पुराणकथाकी भांति यथाचं समझां और मन्त्रिके साव विज्ञास करे तो इसका बर्णित विषय भविष्यत्में हीनेकी बात है। किन्तु कल्कि पुराणकी बर्णना पढ़नेसे बेधा मालूम नहीं पड़ता। इसमें जो कुछ लिखा है, उससे यतीत कालकी घटनाका जो प्रान होता है।

‘उपश्रवा अविने पृथ्वीपर कहा था,—‘युद्धदेवके अनुमति ज्ञमसे हमने इस सुखायममें सबस भविष्य घटना सुनी थी। इस खल पर हम बड़ी गुप्तकर भाववतवर्तमें बीर्तन करती हैं। उपययार्थी जो सुखसे भविष्यत् कालकी बोधक एक बात निहकी है। दूसरे अक्षरपर कर्त्री कुछ दिखनाई नहीं पड़ता। भविष्यत् कालकी बताया जाती भी यह कथा बेसी मालूम नहीं पडती। किन्तु महाभारत भाववत, विष्णुपुराण नारसिंह पुराण प्रस्यतिमें कल्कि अवतारकी जो कथा लिखी, उसमें सर्वत्र भविष्यत्काल बोधक किया गयी है। सुतरां हमझ कहते हैं कि उत्तर कालकी कल्कि अवतार हीमें कोई संदेह नहीं। फिर भी कल्किपुराणमें संक्षेपसे अनेक ममीर भाववयी पत्त्वकथाओंकी पालोचना लगी है। पाठ करनेसे पालन्द पाता है। इन्हीं कारणोंसे कल्किपुराणकी ‘यनुमागत’ कहते हैं। हमने जो तर्क ऊपर दिखाये,

यह सुने सुनाये हैं। भगवान्की सीसा अपार है। जोन कथ सकता है भविष्यत्में क्या होगा? दूसरे ज्ञिनाकदमीं महर्षिका कवनोपकथन समझना भी कुछ सरल नहीं। ऐसी पत्रकामिं कल्किपुराणका उक्ति खिन विषय भक्तिप्रकारसे मान लेना ही अच्छा है। कल्किपत्र (सं० पु०) कल्किपत्र विमोतकपत्र फलमिद पर्यं यत्न मन्त्रपदयो०। दाक्षिमन्त्र, बनारका पेट्ट।

कल्किरोत्र (सं० पु०) पडिचारोत्र, सास लोच। कल्किवर्गं नान्द ईश्वरी। कल्किप्रादुर्भाब (सं० पु०) कल्कि देवमावतारक्य प्रादुर्भाबः उत्पत्तिर्ह कल्कि अवतारकी उत्पत्ति। कल्कि राज—एक प्राचीन राजा। गुप्त राजवंशके पीछे इन्द्रपुरमें इन्हींमें ३१ वर्षं राजत्व किया। (नैव इति/च) इन्ने स्थाता राजा पत्रितक्य यी। (नैव कथर उवाच)

कल्किद्वय (सं० पु०) विमोतक द्वय, बड़ेकेका पेट्ट। कल्की (सं० पु०) कल्का पापं नाय्यतया अक्षय, कल्क इति। १ कल्कि अवतार। (जि०) २ पापी, मसीन, गुनाइगार, मेका। कथ (सं० पु०) कल्क्यते विधोयते पसी, लप कर्मदि कथ। १ विधि तरीका।

“रत्त है अरत कल्पः यारी कल्पकरीः।” (मड ३। १००) कल्पति अरत गर्धं वा यनु रूप चिच। २ प्रलय, कयामत। अरन्विपुत्र बतुंयं मनु द्वारा प्रलय काल निर्घीत होता है।

“अक्षयत्वं नरकः काले संसारजुर्गै। अवलगा कलती रमिः पवार क दः।” (रतिहास) कल्पते अत्रियाये समर्ती मरति पत्र। १ ब्रह्माका दिन। देवताओंके दो सक्षर तुर्नीं ब्रह्माका एक दिन (कथ) और तीस कल्पमें एक मास होता है। उनके संज्ञित नाम—य्येतराराच नीलसोहित, वाम देव नाबान्तर, रौरव, प्राच, इन्द्रकल्प कल्पं, सत्त्व, ईमान्, ध्यान, धारणा, उदान, मद्क, कौमं, (ब्रह्माकी पीर्थमासे), नारसिंह, समानि, याम्येय, विष्णु क और, धीम भावन, सुसमासी, वेङ्कट पार्थिव, कला

कल्प, वैराज, गौरीकल्प, महेश्वर और पितृकल्प (ब्रह्माकी अमावस्या) हैं। इसी प्रकार वारह मासमें ब्रह्माका एक वत्सर बीतता है। उनका आयुकाल शत वत्सर है। अभी ब्रह्माके पचास वर्ष अतीत हुये हैं। एक पञ्चशतवर्षीय श्वेतवाराहकल्प चल रहा है। चैत्र मासकी शुक्ल पतिपट्टसे प्रथम कल्प सगा है,

“श्वेत मासि जगत् ब्रह्मा समनं प्रथमं ऽहनि।

शुक्लपक्षे ममग्रन्तु वदा सूर्योदये ऽपि।

प्रथमं यामास तदा काश्यप गणनामपि ॥” (ब्राह्मपुराण)

चैत्रमासके शुक्ल पक्षीय प्रथम दिनकी सूर्योदय होने पर ब्रह्माने समय जगत् बनाया और उसी समयसे कालकी गणनाको चलाया है।

एकसप्तति (७१) महायुगोंमें एक मन्वन्तर पड़ता है। सत्ययुगके परिमाणसे मन्वन्तरकी सन्धि निकलती है। प्रत्येक मन्वन्तर बीतने पर जलप्लावन

• प्राणदि स्युल कालका नाम मूर्तकाय वृद्धादि परमाणु सद्य मूर्तकायका नाम अमूर्तकाय है। सत्य गरीमें विद्यास प्रयास सेमें जो काल लगता, उसे विद्यात् प्राण कहते हैं। अर्थात् दम गुण अर्थात्कि उदाररूपका काय प्राण है। यह अमूर्तको ४ संकल्पोंको बराबर पड़ता है। ऐसेही ६ प्राणोंमें १ विनाश और ६० विनाशियोंमें १ माफ़ी (दृश्य) होती है। ६० दण्डोंका १ मास अज्ञेय और ६० मास अज्ञेयोंका १ मास मास माता है। एक सूर्योदयसे दूसरे सूर्योदय तक १ सावन अज्ञेय और ३० सावन अज्ञेयोंमें १ सावन मास पड़ता है। एक विधिसे दूसरी विधि तक चान्द्र अज्ञेय रहता है। ३० चान्द्र अज्ञेयोंका एक चान्द्रमास ठहरता है। सूर्यके एक विरापि संक्रमणसे दूसरे राशि संक्रमण पर्यंत सौरमास चलता है। इसी प्रकार हादय मासोंमें एक वर्ष बीतता है। एक सौर वत्सरमें देवताओंका एक अज्ञेय होता है। देवताओंके दिनमें अज्ञेयोंकी राति और देवताओंकी रातिमें अज्ञेयोंका दिन है। ऐसे ही ३६० अज्ञेयोंमें देवताओं और अज्ञेयोंका एक एक वत्सर लगता है। देवताओंके ३६०००० वत्सरोंमें एक महायुग (चतुर्गुण) जाता है। महायुगमें ४३२०००० सौर वत्सर बीतते हैं। सत्या (प्रतिपुत्रकी आदिमन्त्रि) एवं सत्यायका (प्रति युगकी अन्न सन्धि)के साथ चार युग जाते और अन्नादकी व्यवस्था अर्थात् सत्ययुगमें चार पाद, वेतायुगमें तीनपाद, हापरमें दो पाद तथा कल्पमें एक पादके अष्टयुग युगका परिमाण ठहराते हैं। महायुगके वत्सरोंकी दस भाग और अन्य मासकालकी चार गुण करनेसे जो काल जाता, वही सत्ययुगका परिमाण कहता है। फिर उक्त अन्य मासकालके विगुणसे वेता, द्विगुणसे हापर और एकगुणसे कल्पियुगका काल निश्चयता है। प्रति युगका आदि एवं अन्त पठाने ही सत्या तथा सत्याय है।

होता है। फिर प्रत्येक कल्पमें सन्धिके साथ चतुर्दश (१४) मन्वन्तर रहते अर्थात् सन्धिवाले चतुर्दश मन्वन्तरोंको ही एक कल्प कहते हैं। एक सत्ययुगके परिमाण पर ऐसे ही कल्पादिमें पञ्चदश (१५) सन्धिया मानी जाती हैं।

	देवमान	सौरमान।
आदिसन्धि	४८००	१०२८००८
एकसप्तति महायुग	८५२०००	३०६७२००००
एकसन्धि	४८०३०	१०२८००
एक मन्वन्तर	८५६८००	७०८४४८०००
चतुर्दश मन्वन्तर	११६६५२००	४३१६२०२०००
कल्प	१२००००००	४३२०००००००

सहस्र (१०००) महायुगोंमें एक कल्प होता है। प्रति कल्पके अवसानमें सर्वभूतोंका विनाश अर्थात् प्रलय पड़ता है। एक कल्पमें ब्रह्माका एकदिन ठहरता और उनकी रात्रिका परिमाण भी वैसा ही लगता है। पूर्वकथित अज्ञेयोंकी सत्यासे एकशत (१००) वत्सरकाल ब्रह्माका आयु है। आज तक ब्रह्माकी आयुका अर्धकाल (५० वत्सर) बीता है। वर्तमान कल्पके आरम्भमें ब्रह्माके पचगिष्ट आयु (५० वत्सर) का प्रथम दिवस देखना पड़ेगा। वर्तमान कल्पमें भी कुछ मन्वन्तरोंके साथ सात सन्धिया अतीत हुई हैं। आज कल वैवस्वत नामक, सप्तम मनुका काल चलता है। फिर वैवस्वत मनुके भी सप्तविंशति (२७) युग चुके हैं। इस अष्टाविंश (२८ वें) युगके सत्य, त्रेता और हापरकाल गल गया, कल्पियुग सगा है।

(सूर्य सिद्धान्त, मन्त्राधिकार ११-१२)

४ विकल्प। ५ न्याय। ६ कल्पवृक्ष। ८ शास्त्र-विशेष। इस शास्त्रमें षडङ्गवेदके अन्तर्गत याग-क्रियादिका उपदेश दिया गया है। ८ व्याकरणका एक प्रत्यय। ईषट् ऊन अर्थमें यह प्रत्यय पड़ता है।

“ति परस्परानाम्ना देवकल्पा मन्त्रं च।” (भारत १।१।६।५)

९ सङ्कल्प, इरादा। १० पक्ष। ११ अभिप्राय, मतसव। १२ वेदका एक विधि।

कल्पक (सं० पु०) कल्पयति चौरकर्मादिना वेशं रचयति, कल्प-णिच्-गुल्। १ नापित, नाथी।

२ कर्षर, कर्षर। अल्पयति अल्पपादिकमुद्रमाय
रक्षयति। ३ यन्त्रकर्ता चिताय वनानिवासा।
४ रक्षार, रक्ष। (त्रि०) १ रक्षक, वनानिवासा।
५ पारोपक, वनानिवासा।

अल्पकृतसु, अल्पक ईडी।
अल्पकार (सं० पु०) अल्प अल्पसुम् करोति, अल्प-
कृत-अल्प। १ अल्पसुम्कारक पात्रसायनादि। अल्प
धर्म करोति। २ नापित, नायो। (त्रि०) ३ श्रेय
कारक, रूप वनानिवासा। ४ श्रेयक, श्रेयनेवासा।

अल्पकारक (सं० पु०) अल्प-कृत सुम्। अल्पक ईडी।
अल्पसय (सं० पु०) अल्पसय सुम् अयो यत्, अल्पसो०।
प्रकय, अयामत, संसारका नाय।

“अल्पसय सुम् अ यो यत् अल्प।” (पितृपत्र)

अल्पगा (सं० स्त्री०) मन्ना गरी।

अल्पतह (सं० पु०) अल्पपासी तहवेति कर्मिणा०
अथवा अल्पतह तह राशो शिरः रत्नादिबत् ६ तत्।
१ देवकोकका प्रकविशिय। विद्विपतका एक पीड़।
यह इत्य मांयनिधि सुकसपदाई देता है।

“अल्पतह अल्पतह तह राशो शिरः रत्नादिबत् ६ तत्।” (अनपत्र १।१।१)

१ धृतिप्राप्तविशिय। २ शरीरकसुम्भाषपर
भामतो टोकाको एक व्याख्या। ३ उदारपुत्रव, सखी,
सुहर्मासी शीर्ष देनेवासा। ४ अल्पकृतसु, सुपारोको
पीड़। ५ रक्षविशिय, एक सुयत्। रक्ष (पारद),
गम्ब (गम्बक) विप (अल्पकनाम) धीर ताम्बको
अमभाग पोष अमय पांच दिन तक पांच बार मोरो
चनाको भावना कयतो है। यत्नाको दिगुंश्रीके
रक्षमें घात दिन शीर्ष धीरे धीरे धीरे धीरे धीरे रक्षको
मीन भावना देनेसे यह पोषक प्रयुक्त होता है। इसकी
बड़ी संघर्ष समान बना जायामें सुखाते हैं। श्रीबंश्वर
धोर विपमज्जरमें २१ बड़ी शिखायो जाती हैं। इससे
वैद्यन समय रोगीको अल्पको पिपकोका रूप अल्प
पिपाना, गर्भरा तथा दधि पिपाना धीर नडडाना
चाहिये। (मेघनरकाली)

अल्पदु (सं० पु०) अल्पपासी हुषेति, कर्मिणा०।
१ अल्पतह, अल्पका एक पीड़। २ अक्षररग्वच सुच,

छोटे अमकतासका पीड़। ३ शिखावधोत एक
अल्पकोय।

अल्पद्रुम (सं० पु०) अल्पपासी द्रुमवेति, कर्मिणा०।
१ अल्पतह। २ छोटा अमकतास। ३ धृतिप्राप्त
विशिय। ४ तन्त्रप्राप्त विशिय।

अल्पन (सं० स्त्री०) अल्प भाषि अल्प। १ श्रेय, काट
काट। २ रचना, वनाय। ३ विद्यान ठहराव।
४ पारोपक जगाव। ५ अमकृत विपयका उद्भावन
अन्दाज।

अल्पना (सं० स्त्री०) अल्प-विप भाषि सुम्-टाप।
१ अल्पसय, सगरीके शिपि जायोको सजायट।
२ अल्पमान, अल्पान। ३ रचना, वनायट। ४ अर्थ
पतिकरुप प्रमाय विशिय एक सुम्त। इसमें शीर्षपासी
भातोका अथवा रक्षता है। ५ अल्प विपयका उद्भा-
वन, नवी बातका निष्ठास। काष्, अल्पनास धीर
विशिय आदि अल्पनाये ही बनते हैं।

अल्पनाशान (सं० त्रि०) अल्पनायां शान इव शोको
यत्, अल्पसो०। अल्पको भाति पाय विनायो, अल्प
सुवेको तरह अल्प विनड कर्मिणासा। अल्प अल्प
अल्पके अर्थका विशिय है।

अल्पनाय (सं० पु०) अल्पविशिय, एक पीड़।
(Justicia paniculata)

अल्पनायिक (सं० स्त्री०) अल्पनायाः नरोद्भावनाय
यत्, ६ तत्। अल्प विपयके उद्भावनको यत्कि,
नवी बात निष्ठाकर्मिणी तात्त।

अल्पनी (सं० स्त्री०) अल्पयति शिखादीन् क्लिनति
अल्पना, अल्प अल्पदेने अल्पकोय। कर्मिणी, श्रेयो।

अल्पनीप (सं० त्रि०) अल्पनाय हितम्, अल्पन
ठक्। १ अल्पनाके अल्पयोयो, अल्पनाके सायक।
२ श्रेय, काटने का विश। ३ विद्यानके अल्पद्रुम,
ठहराने सायक। ४ पारोपकके अल्पयोयो, अल्पनि
का विश।

अल्पपादप (सं० पु०) अल्पयति सर्वकाम अल्पाद
यति अल्पः, अल्पपासी पादपवेति, कर्मिणा०। १ अल्प
तह, अल्पका एक पीड़। “अल्प न चरे अल्पकृतसु।”
(अनप १।१।१) २ विमोतकृतसु, अल्पका पीड़।

कल्पपादपदान (सं० क्लौ०) कल्पपादपस्य सुवर्ण-
निर्मितपादापकृतैर्द्वौनम् । महादानविधिषु, सोनिके
पेड़का बड़ा दान। वल्लालसेन विरचित दानसागर
नामक ग्रन्थमें कल्पपादप दानका विधान इसप्रकार
वर्णित है,—

“कल्पपादपदान देनेकी इच्छा रखनेसे यजमानकी
तुलापुरुष दानकी भांति पुण्याद वचन तथा लोकेशका
आवाहन कराना और ऋत्विक्, मण्डप, सम्भार,
भूषण एवं आच्छादान जुटाना पडता है। शक्तिके
अनुसार तीनसे एक सहस्रपल पर्यन्त स्वर्णके अर्धांगका
नाना फलशुक्र और पांच याखाविशिष्ट वृक्ष बनाते हैं।
वृक्ष नाना वस्त्र और अन्नद्वारासे सजाया जाता है।
फिर १ प्रस्य गुडपर शुकवस्त्रके दो टुकड़े काल तप्त-
देगमें ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं सूर्यकी प्रतिमा लगाते
और स्वर्णके अर्धशने १ दूसरा वृक्ष तथा
४ मूर्ति बनाते हैं। मन्तान वृक्षके नीचे रति और
कन्दर्पकी मूर्ति गुडमें रखना पड़ती है। यह वृक्ष
१ प्रस्य पूर्व, वृत्तपर लक्ष्मी सह मन्दार वृक्ष दक्षिण,
जीरकपर सवित्री सह पारिमद्र वृक्ष पश्चिम और
तिलपर सुरभिसह हरिचन्दन वृक्ष उत्तरकी रहता है।
प्रत्येक वृक्षको शुक वस्त्रके दो दो टुकड़ोंसे आच्छादन
करते हैं। फिर प्रत्येक वृक्षके पार्श्वपर दो दोई
हिमावत् पूर्ण कलस रखे जाते हैं। कलसपर इक्षु
टण्ड और फलाटि लफा कीपिय वस्त्र ओढाना पडता
है। पूर्ण कलसके पार्श्व देगमें पाटुका, उचनात्, छत्र,
चामर, चासन, भाजन और टोप रखते हैं। फिर
मन्त्र विधिसे तीन बार प्रदक्षिण करते दो तीन
पुण्यास्त्रलि देनेपर गाम्त्रोक्त विधानसे कल्पपादप दान
होता है। दानके अन्तमें अधिक दान करनेपर विस्मित
न हो सकल प्रकार शठता देखानेसे दूर रहना
चाहिये। इस महादानसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता,
सर्वपाप कटता और शतकल्प स्वर्गमें रह यजमान
राजाधिराज दो जन्म ग्रहण करता है। फिर नारा-
यणवल्लिशुक्र, नारायण-परायण और नारायणकथा
सकल रहनेसे वह नारायणलोक पाता है।

कल्पपाद (सं० पु०) कल्पं सुराविधानकल्पं पालयति,

कल्प-पाल-णिक-ऋण् । १ शौण्डिक, कलवार, शराव
वनानेवाला।

कल्पभव (सं० पु०) देवता विधिषु । जैन मतानुसार
यह वैमानिक हीते है। जैन मतानुसार ये सोनह
हैं—सौधर्म, ईगान, मनतृकुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर,
लान्तव, कापि, शुक्र, महाशुक्र, गतार, सहस्रार, भ्रानत,
प्राणत, आरण, अच्युत। खेतास्वर जैनके मतसे कल्पभव
वारह हैं,—अच्युत, भ्रानत, आरण, ईगान, कानान्तक,
प्रणत, ब्रह्मा, माहेन्द्र, शुक्र, मनतृकुमार, सहस्रार
और सौधर्म। जैन वताते—तीर्थङ्करोंके जन्मादि
संस्कारोंमें कल्पभव आते हैं।

कल्पमहीरुह (सं० पु०) कल्पयासौ महीरुहयेति,
कर्मघा० । कल्पवृक्ष, एक पेड़।

कल्पलता (सं० स्त्री०) कल्पवृक्ष ।

कल्पलतादान (सं० क्लौ०) कल्पलतायाः यथाविध सुवर्ण-
निर्मिताया लताया दानम्, इ-तत् । महादानविधिषु ।
दानसागरमें इस दानका विधि निम्नोक्त रूपसे
लिखा है।—

शक्तिके अनुसार पांचसे हजार पल पर्यन्त परिमित
स्वर्णकी दश लतायें बनावे और उनमें फल, पुष्प, ग्रह,
पक्षी, विद्याधर, किन्नर, मिथुन, सिद्ध तथा सुक्ताहार
लगावे। फिर नानाविध विविध वस्त्रोंमें उन्हें आच्छा-
दन करे। लताओंके निम्नदेशमें रखनेके लिये ब्रह्मादि
दश प्रतिमायें बनाना पडती है। लतारोपणके लिये
लवण, गुड, हरिद्रा, तण्डुल, वृत्त, चीर, शर्करा, तिल
एवं नवनीत और पार्श्वमें स्वर्णलकके लिये दश धेनु,
दश कुम्भ तथा दश जोडा वस्त्र संग्रह करना चाहिये।
व्रतके पूर्व दिन इषिय भोजन, निविदन, सहस्रवाक्य
प्रभृति किये जाते हैं। दूसरे दिन गुरु, पुरोहित,
यजमान और जापक उपवासी रहते हैं। पुरोहित
प्रधान वेदीमें लिखित वक्रपर पूर्वादि आठ दिशाओंमें
आठ और लतामण्डपमें दो लतायें रखते हैं। दोनोंके
निम्नदेशमें लवणसे हांसारुदा ब्राह्मी और अनन्तशक्ति-
की मूर्ति स्थापित होती है। आठ दिशाओं की दूसरी
आठ लताओंके नीचे पूर्वदिक्से यथाक्रम आरम्भ कर
गुड पर स्वर्णसन कुलिगायुषहस्ता माहेन्द्री, हरिद्रा पर

कल्यान्तस्यायी (सं० त्रि०) कल्यान्तपर्यन्तं तिष्ठति, कल्यान्त-स्या-णिनि । प्रसयकास पर्यन्त वर्तमान रहने-वाला, जो कयामत तक टिक सकता हो ।

कल्पिक (सं० त्रि०) उपयुक्त, काविल ।

कल्पित (सं० पु०) कल्पते सञ्जीक्रियते असी, कल्प-णिच् कर्मणि क्त । १ सञ्चितहस्ती, मड़ाइकेलिये सजा हुआ हाथी । (त्रि०) २ रचित, बनाया हुआ ।

“कदादि ह्यपर्येक मापया कल्पितं जगत् ।” (महाभारत)

३ उद्भावित, फर्जी, माना हुआ । ४ सम्पादित, ठीक किया हुआ । ५ सञ्चित, सजा हुआ । ६ दत्त, दिया हुआ । ७ आरोपित, लगाया हुआ । ८ अवधारित, सोचा हुआ । ९ कृत्रिम विषय सत्यकी भांति स्थिरीकृत, गुलसकी तरह ठहराया हुआ ।

कल्पितार्थ, कल्पितार्थं देखो ।

कल्पितार्थं (सं० त्रि०) कल्पितं दत्तं अर्थं यस्मै । अर्थ दिया हुआ, जो अर्थ पा चुका हो ।

कल्पितोपमा (सं० स्त्री०) अभूतोपमा, अन्दाज़ी मिसाल । इसमें प्रकृत उपमान न मिलनेसे कल्पना लगती है ।

कल्पो (सं० त्रि०) कल्पयति, कृप-णिच्-णिनि । १ रचनाकारक, बनानेवाला । २ आरोपक, लगानेवाला । ३ विशकारक, सुधारनेवाला । (पु०) ४ नापित, नाई ।

कल्प (सं० त्रि०) कृप-णिच्-यत् । १ रचनीय, बनाने लायक । २ आरोप्य, अच्छा ही सकनेवाला । ३ अनुष्ठेय, किया जानेवाला । ४ विधेय, मानने लायक ।

कल्प (सं० स्त्री०) रत्नयोर्वैक्यात् । कर्म, काम ।

कल्पलि (सं० पु०) कल्पयति अपगमयति मलम्, पृषोदरादित्वात् साधुः । तेजः, रोगनी ।

कल्पलीक (सं० स्त्री०) कल्पलि देखो ।

कल्पलीक (सं० पु०) कल्पलीकमस्यास्ति, कल्प-लीक इति । १ रुद्र । (त्रि०) २ तेजीयुक्त, चमकदार ।

कल्प (सं० स्त्री०) कर्म शुभकर्म स्याति नाशयति, पृषोदरादित्वात् साधुः । १ क्षपाण, गुनाह । २ हस्ति-पुच्छ, हाथकी पूछ । ३ मस्तिन्ता, मैलापनः ।

४ हथेली । (पु०) ५ नरक विग्रेष, एक दोड़ण्ड । ६ मास विग्रेष, एक महीना । जिस मास जन्म नक्षत्रकी मङ्गलवार वा शनिवार आता, वह कल्पव कक्षाता और मनोदुःख देखाता है । (शीघ्रिणा) (त्रि०) ७ मस्तिन्, गन्दा, मैला ।

कल्पध्वंसकारी (सं० त्रि०) १ पाप वा तिमिर-नाशक, गुनाह या अंधेरेको दूर करनेवाला । २ पाप-कर्मसे वचनेवाना, जो क्षुर्भ करने न देता हो ।

कल्माप (सं० पु०) कल्पयति, कल्-क्लिप्, मापयति, स्वभासा अभिभवति, अन्वयवर्णान्, माप-णिच्-अच्; कल् चामो मापयेति, कर्मधा० । १ चित्रवर्ण, चित्-कवरा रंग । २ कृष्णवर्ण, सांवन्ता रंग । ३ राक्षस, आटमण्डोर । ४ गन्धगालि, खुशबूदार चावल । ५ सर्पविशेष, एक सांप । ६ अग्निविशेष, एक आग । ७ सूर्यके एक अनुधर । ८ पूर्व जन्मके शाश्वतमुनि । (त्रि०) ९ चित्रवर्ण विगिट, चितकवरा । १० कृष्ण-विन्दुयुक्त, काले धब्बेयाना ।

कल्मापकण्ठ (सं० पु०) कल्मापः कृष्णवर्णः कण्ठो-यस्य, बहुव्री० । नीसकण्ठ, शिब ।

कल्मापश्रीव (सं० त्रि०) कल्मापा कृष्णवर्णा श्रीवा यस्य, बहुव्री० । १ कृष्णवर्ण श्रीवावाला, जिसके कानी गर्दन रहें । (पु०) कल्मापा श्रीवा सामौप्यात् कण्ठो यस्य । २ महादेव ।

कल्मापता (सं० स्त्री०) कल्मापस्य भावः, कल्माप तल् । १ चित्रवर्णता, चितकवरापन । २ कृष्ण-पाण्डुरवर्णता, कालापन, स्याही ।

“राक्षसं भावमापन्न पादं कल्मापतां गत ।” (भागवत ४८२३)

कल्मापपाद (सं० पु०) कल्मापो कृष्णवर्णा पादौ यस्य, बहुव्री० । सौदास राजा । यह ननसखा राजा ऋतु पर्णके वंशीय थे । किसी समय मोदासने मृगयाकी निकल एक राक्षस मारा था । उसका भ्राता वैर निर्यातन उपायके अनुसन्धानकी आशासे राजाके घर आ पाचक विशेष रहने लगा । एक दिन राजगुरु वशिष्ठ भोजन करने पहुँचे । उसने नरमांस खानेकी रखा । वशिष्ठने वह मांस देख राजाका दुर्घबहार समझ लिया और अभिप्राय दिया,—सौदास तुम

राजस्य ङीमि । विना चपराच चमियाप पा राजाने श्री गुहको प्रतिमाप देमिके बिद्ये बस ठठाया । किन्तु राजमहिषो मदयन्तीने हुतपद उपस्थित हो राजाको रोषा । राजाने बह बस चपनेहो पैर पर छाना जा । इसै दानो पर बासे पङ्क मयै पीर लीन उर्ध्व कल्यावपाद कहने छी । (मज्जिम ८।२५)

कल्यापाङ्गि, कल्याण देवी ।

कल्यापाङ्गिक (सं० पु०) कल्याणो कल्याणका पङ्गी यज्ञ, कल्यापाङ्गि-कनू । कल्याणपर देवी ।

कल्याणो (सं० ङी०) कल्याण डोय । १ बिद्वेषो ङी बाको या संवसो धारन । ३ कल्याणो वसुना, बाहिन्यो नदी । “कल्याणोत्तरात् कल्याण विष्णोः षष्ठी” (वारह्, उवा ५६ प)

कल्याणर—मध्यप्रदेशके नागपुर जिल्लाका एक नगर । यह नागपुर महरसे ० कोठ पश्चिम पङ्कता है । यहाँ कुमबीबी बमोन्दारो है । बह नगरके मध्य एक दुर्गमें रहति है । दिहोबि बिद्यो हिन्दू मनसबदाराने प्याकर यह दुर्ग बनाबा जा । कल्याणरमें बाम्ब, तैल पीर देगोय बङ्कका व्यवसाय चलता है । यहाँको बमोमूर्ध पपोम, लख पीर लमाण होती है ।

कल्या (सं० ङी०) कल्याण पायस्यते, कल कर्मणि यत् । १ प्रात काच सवेरा, मोर । कल्याणति मित्रतां सप्यादयति कलूयन् । २ मङ्ग, मङ्गद । ३ छरा, मराव । ४ कल्याणबाम्ब, मुबारकबादो, बहार । ५ यमाका छ्वा, पोरपाहो । ६ यम समाचार, चण्डी फुवर । (त्रि०) ७ नख, प्रसूत, तैयार । ८ नीरोम चङ्गा को बीमार न हो । ९ बाङ्गुतिरहित, बीरा पीर बहरा, जा बह सुन न सक्ता हो । १० दण होमि यार, चानाक । ११ माङ्गलिक, घुययवार । १२ मिषा प्रद, नवीहत, चङ्गेर ।

कल्याणनि (सं० ङी०) कल्यो प्रातः कलि मीत्रमनु, ०-तत् । १ प्रातःकासका भोजन, सवेरेका नाश्ता । २ प्रातःकाकका मील्य, सवेरेके खानिको चीज ।

कल्याण (सं० ङी०) कल्याण नीरोगण भाव, कल्याण । पारोख चाराम, बीमारीके छुटकारा ।

कल्याणम (सं० पु०) विमोक्षक हथ, बङ्गिका पीङ्ग ।

कल्याण (सं० पु०) कल्य मङ्ग मङ्ग पासयति, कल्याण-पान-यच । मील्यक, कल्याण, मराव उपकामिवासा । कल्याणक (सं० पु०) कल्यो पासयति, कल्य मनु । कल्याण देवी ।

कल्याणतं (सं० पु०) कल्यो प्रातः वर्तते कौष्यति चनेन कल्य इत चिन्-यत् । १ प्रातराय, सवेरेका नाश्ता । २ कल्याणम, कल्याण चाना । (ङी०) ३ तुच्छ वरु मामूको चीज ।

कल्या (सं० ङी०) कल्यति मादयति, कल्य-चिन्-यक-टात् । १ मध्य मराव । २ चरीतको, छर । ३ कल्याणबाम्ब मुबारकबादो ।

कल्याण (सं० पु०) पर्यटयं च इमम पापकेका पीङ्ग ।

कल्याण (सं० पु०-ङी०) कल्यो प्रातः पश्यते मन्वति, कल्य पश्य ह्य् । चकारि च । १ कल्याण । २ मङ्गल, मलायो । इसका संख्यत पयाय—बह, बेष्य, मिह, मङ्ग, यम, मातृक, मन्त्रिक मन्त्र, कुमक, चेम पीर मङ्ग है । २ पचाय खर्ग । ३ नागबिगीय । इस समयमें ब. नि, सा ख, य, म पीर प लमसे खर लगायि जाति है । दय इच्छ रात्रि बीतनेसे यह राम गाया जाता है । इसके ठाटपर राजधानी, कल्याण विरारो पिराबत पीर कोकिल कल्याण मन्थति रामिषियां चलतो है । कल्याणके पुत्र हिमाच, बल्लभ बोर, प्रङ्गाण, कलि छरा, मुनिन्द पीर शुद्धामर है । ४ राजविगीय, एक राजा । बह 'मङ्गको कल्याण नामसे प्यात थि । ५ 'नीतयङ्गा नामक पुष्पकके प्रबेता । (त्रि०) ६ कल्याणवृक्ष, मजा ।

कल्याण—कल्याण प्रांतके नागा जिल्लाका एक उपविभाग पीर नगर । इस उपविभागका परिमाणफल २०८ वर्ग मील है । कल्याणके उत्तर उत्तरदास तथा भारतदा नदी पूर्व घाटपुर एवं सुरबाट दक्षिण बरबल तथा पक्किल पीर पश्चिम पारसिक पश्चतमासा है । उत्पन्न इष्योमें बाम्ब माच पीर सर्वपादि प्रबान है । यम पस्यत होता है । कल्याण प्रायः त्रिकोणाकार है । पश्चिमार्धमें पयम्प समतल भूमि पायो है । फिर पूर्व पीर दक्षिणमें पर्वतमाळाका रंधकमूख परिप्यात है । यहाँ बेयाच-क्येठ माहमें पूर्वदिक्षे बाहु चलत

है। स्थान बहुत ही अस्वास्थ्यकर है। ग्रीतकाचमें ल्वरका कुछ प्रादुर्भाव बढ़ते भी प्रच्छा रहता है। एक दीवानी अदालत और एक घाना है। फौजदारोकी दी कचेहरियां लगती हैं। कल्याण नगर इस प्रदेशका प्रधान स्थान है। यह अक्षा० १८° १४" उ० और देशा० ७३° १०' पू० पर अवस्थित है। नगरमें बन्दर विद्यमान है। चावल छांटनेका काम बहुत होता है। मुसलमानोके अधिकार समय कल्याणमें ११ मसजिदें बनी थीं। चतुर्दिक् प्राचीरसे वेष्टित नगरमें प्रवेश करनेकेलिये चार द्वार थे।

कल्याण प्रतिप्राचीन है। नाना स्थानोंके ई० प्रथम, पञ्चम तथा षष्ठ शताब्दके खोदित शिलालेखों में भी इसका नाम मिलता है। पेरिप्लसके मतसे ई० द्वितीय शताब्दकी दक्षिणात्यमें कल्याण नामक एक प्रधान राज्य था। कसमस इण्डिकोपुटेसकी वर्णनासे समझ पड़ता है, कि ई० षष्ठ शताब्दमें भारतकी वाणिज्यप्रधान पांच नगरियोंमें कल्याण एकतम और वन्द्यपित्तल प्रभृतिका विस्तृत व्यवसाय केन्द्र रहा। ई० चतुर्दश शताब्दकी मुसलमानोंने जिलेका सदरघाना बना इसका नाम इसनामावाद रखा। पोर्तगीजोंने १५३६ ई०की कल्याणपर अधिकार किया था। किन्तु उन्होंने इसकी रक्षा रखनेका कोई प्रयत्न न बांधा। फिर १५७० ई०की वह इसका उपकण्ठ लूट यथेष्ट धन रत्न ले गये। पीछे यह प्रदेश अहमद नगर राज्यमें लगा। १६३६ ई०की बीजापुरके राजाने प्रवच हो इसे अधिकारमें किया। १६४८ ई०की शिवाजीके सेनापति भावाजी सीमदेवने कल्याणपर आक्रमण कर शासनकर्ताको बन्दी बनाया। १६६० ई०की मुसलमानोंने इसे शिवाजीके हाथसे छुड़ाया, किन्तु १६६२ ई०की फिर गंवाया। १६७८ ई०की शिवाजीने अंगरेजोंकी यहाँ कोठी बनानेका आदेश दिया था। १७८० ई०की मराठोंका साहाय्य न मिलनेसे अंगरेजोंने यह प्रदेश अधिकार किया। उसी समयसे कल्याण अंगरेजोंके अधीन है।

प्राचीन इतिहास—इसका जो प्राचीन इतिहास मिला, अधिकांश कर्णाटकके खोदित लेखोंसे निकला है।

करनीन सेकेची माहवने संस्कृतपुस्तकीका मंदिप इतिहास लिपिवद्ध किया है। उसमें 'मरुराज वमराज वंगवर्लो' नगी है। वह तिरुपती पर्वतके निकटवर्ती नारायणपुर वा नारायणवरम् नामक स्थानके अधिपतियों या प्राचीन कर्षेती नगरके मरु राजवंशीय राजावोंका वंशविवरण शीतन करती है। तोन्दमान चक्रवर्तीके एक वंशीय धनप्लय घोस थे। उन्हीं वीनराजपुत्रसे उक्त वंशकी उत्पत्ति है। धनप्लयके वंशमें नारायणराज नामक किसी व्यक्तिने जन्म लिया। उन्हीं नारायणराजने नारायणवरम् वा कल्याणपत्तन स्थापित किया था। कल्याण पत्तन प्राचीन कल्याण वा प्राधुनिक नारायणवरम् नदीपर अवस्थित है।

कर्णाटक खोदित शिलालेखोंसे जो प्रमाण मिले उन्हें देख समझ सके हैं—एक समय गोदावरी और कल्याणदीके अन्तर्गत भूभागमें चालुक्य राजा अतिशय प्रबल पराक्रान्त पड़े थे। उस समय कौडण्य, कल्याण, वनवासी प्रभृति राज्योंपर उनका अधिकार फैला था। कल्याण बहुत सन्तुष्टिगामी और विख्यात था। चालुक्य राजा शिलालेखोंमें अपना कल्याण वा कल्याणपुरके 'चालुक्य राजा' कहकर परिचय दे गये हैं। कौडण्य प्रदेशमें धिन्नराज नामक एक महामण्डलेन्द्र नृपति (८४६ गक) थे। उनकी प्रदत्त छाडके सम्बन्धमें मतामत देने समय अध्यापक लासेनने कहा है,— 'इसकी लिखी शिलाहार जाति काफिरिस्तानकी उत्तरस्थ काफिर जातीय "गिलार" जातिकी छोड अन्य जाति ही नहीं सकती।' किन्तु दक्षिणात्यमें एक शिवात् जाति थी। वह लोग पड़ले मान्य-खेटीय राष्ट्रकूटोंके पीछे कल्याणवाले चालुक्योंके अधीन हुये। उस समय गिलाहारीके ही शासनमें कौडण्य प्रदेश, वेल्गांध और सतारेका मध्यवर्ती समुदय स्थान था। गिलारोंके पराजयके बाद उक्त सकल प्रदेश कल्याणके अधीन हुआ।

दक्षिणात्यके चालुक्य राजावोंने कलिविक्रम विक्रमादित्य तिसुवनमहदेवकी महिमाका एक काव्य है। विष्णु नामक कविने उसे बनाया था। काव्यका नाम 'विक्रमाहचरित' है। उसके मतसे विक्रमा-

द्विपक्षा राजत्व काच ग्रन्थ ८८०—१०३८ ठहरता है।
विज्ञानमयी पिता २५पादग्रन्थ अख्यायनमयी प्रतिष्ठाता
पि। (Ind Ant. Vol. I. p. 209) अख्यायप्रदेश
विज्ञानमादिख महाराजको प्रतिप्रिय रहा। यह माना
जातींथे कुछ भीत यहीं पाचार ठहरते पि।

अख्याय जयाधाय—वाचतन्त्र नामक संस्कृत ग्रन्थके
प्रथिता। यह मञ्जीधरके पुत्र और रामदासके पौत्र
थे। यहिन्दुस नगर इनका जन्मस्थान रहा। इन्होंने
१३३३ ग्रन्थको श्यायपूर्विकाकी रचिबारके दिन अपना
वाचतन्त्र समाप्त किया था।

अख्यायक (सं० श्लो०) अख्याय काये बनू। १ अख्याय
मसार्ह। (पु०) २ पर्यटक, दमनवायका। (त्रि०)
३ अख्यायगुरु, भखा, पच्छा।

अख्यायकगुरु (सं० पु०) यहचौरीगका वैद्यकीज्ञ
शोधविधिय दक्षोकी नोमारीने दो कामिबानी एक
द्रव्य। पामसकीका रथ २ और और दक्ष गुरु ६ और
एकत्र पाक करे। पाक प्राय समाप्त होने पर पियसी
मूत्र, बीरज चय, मरिच, पियसी छप्टी गज,
पियसी, हनुवा, पामोदा, विडङ्ग, सेन्धव, चरीतका,
पामसकी, विमोतक यमाने, पाठ, वित्रक एवं
श्यायका चूर्ण पाठ-पाठ तोले, सिहचूर्ण १ और
और तैल १ और डाल भवसेह बना लेते हैं। यह
भवसेह पाठ तोले रसायनी और तेजपत्रका चूर्ण
मिखा कर कामिने प्रश्नके, श्याय, काय, अरभेद योग,
मन्दाभि, सुवपलहानि और बन्धाबोध निवारित होता
है। इसे सिहचूर्ण तैलने तलकर देना चाहिये। (चक्र०)

अख्यायकघृत (सं० श्लो०) वैद्यकीज्ञ घृत शोध
विधिय, दवाका एक घी। विडङ्ग सिद्धका,
तुपक, मञ्जिहा दाङ्गिमलक, उत्पल प्रियङ्गु, एला,
एकशकुल रत्नचन्दन देवदाक, शिवामूत्र, कुठ,
हरिद्रा, मातुपर्णी, चक्रकुन्ध, धनन्तमूत्र, श्यामा,
रैखका, सिद्ध, दन्ती, तथा तालीयपत्र और मासतौ
मूल प्रसेकका बरख दो-दो तोले हत ३२ एक तथा
जब १६ गरायक एकत्र पाक करिनेथे यह घृत बनता
है। इसकी शिवनेथे विपमखर, श्याय, गुच्छ, उन्नाद,
विषरोध, पञ्चशोषण रसोदीय चन्दिमान्द्य, पय

आर, शुकहीनता, बन्धादीय चक्षुरोग और अज्ञानार्थ
का शोधसमूह कूट पाहुर्हथि होती है। (इत्थ०) इसी
घृतको दिगुच एक और चतुर्भेद दुग्ध डाल कर
पञ्चानिधे औरअख्याय कहते हैं। (भारवीर्य) फिर
दाहरोग पर मङ्गलश्यायक घृत बनता है। यथा घृत
३ गरायक घृतमूत्रिका रथ १६ गरायक, दुग्ध १६
गरायक और औरक, तथा मञ्जिहा, पञ्चगव्या,
हरिद्रा, कासोकी, औरकाकोली, यहिमह मेदक
महामेदा, अरि हवि तथा देवदाका बरख पाठ
पाठ तोले एकत्र पाककरनेथे मङ्गलश्यायकघृत
प्रसृत होता है। (चक्र०)

अख्यायकर (सं० त्रि०) माङ्गलिक, मसार्ह करनिबाना।
अख्यायकामोद (सं० पु०) मिषरीयविधिय, एक
मिखाकरी राम। ईमन और कामोद मिखनेथे यह
बनता है। इसे प्रथम प्रहरने गति है।

अख्यायकार, अख्यायकार ईकी।
अख्यायकारक (सं० त्रि०) अख्यायप्रद मसार्ह
करनिबाना।

अख्यायकत् (सं० त्रि०) अख्याय क क्षिप्। १ अख्याय-
कारक मसार्ह करनिबाना। २ माङ्गलिकित कार्य-
कारक, मसा काम करनिबाना।

अख्यायकोट—विष्णुप्रदेशवाले ठाठानगरके पार्श्वका एक
प्राचीन गिरिदुर्ग। प्रायशक इसे तुपककावाद
कहते हैं।

अख्यायगुरु, अख्यायगुरु ईकी।
अख्यायघृत, अख्यायघृत ईकी।
अख्यायचन्द्र (सं० पु०) एक ज्योतिषास्त्रकार। यह
ई० १२ ईं शताब्दिमें विद्यमान थे।

अख्यायचार (सं० त्रि०) १ यममार्ग पञ्चसमन करने
काका, जो चप्टी राख बनता था। २ भाष्यशास्त्री,
किरामती।

अख्यायधर्म अख्यायनी ईकी।
अख्यायधर्मो, (सं० त्रि०) अख्यायो महात्मनया धर्मो।
प्राङ्गि अख्याय-धर्मो इति। मङ्गलकर धर्मेविशिष्ट,
निक चप्टा।

कल्याणनट (स० पु०) मिश्ररागविशेष, एक मिलावटी राग । यह कल्याण और नटके संयोगसे बनता है ।

कल्याणपञ्चमीक (सं० पु०) मास पञ्चविशेष, मञ्जीका एक पाख । जिस पञ्चमी पञ्चमी कल्याणकारक रहती, उसकी संज्ञा कल्याणपञ्चमीक पड़ती है ।

कल्याणपुर—१ युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेकी एक तहसील । यह गङ्गा और यमुना नदीके बीच अवस्थित है । इसमें २१८ ग्राम लगते हैं । भूमिका परिमाण २८७ वर्ग मील है ।

२ काश्मीरका एक प्राचीन नगर । ६६७ शकमें कल्याणदेवीने यह नगर बसाया था ।

३ दाक्षिणात्यके कल्याण प्रदेशका प्राचीन राजधानी । चालुक्य राजाओंके शिलालेखोंमें यह स्थान प्रसिद्ध है । कल्याण देखो ।

४ युक्तप्रदेशके कानपुर जिलेका एक ग्राम । यह कानपुर शहरसे कीर्ई ६ मील पश्चिम पड़ता है । यहां पुलिसका थाना और बम्बई-बरोदा-मध्यभारत तथा राजपूतना-मालवा-रेलवेका स्टेशन विद्यमान है । फिर बिठूर (ब्रह्मावर्त)से कानपुरको सुवेदार साहबकी रेल भी उक्त स्टेशनसे जाती है । थानेके पास एक पक्का तसाव और महादेव तथा देवीका मन्दिर है ।

कल्याणभार्य (सं० पु०) पुरुषविशेष, एक मर्द । स्त्रीके मरने पर फिर विवाह होनेकी बात उठनेसे पुरुषको 'कल्याणभार्य' कहते हैं ।

कल्याणमल—युक्तप्रदेशके प्रान्त हरदोई जिलेका एक परगना । इसका प्राचीन नाम थोसिया है । प्रवादानुसार रामचन्द्र रावणको मार लड्डासे लौटते समय यहां रथसे उतरि थे । फिर उन्होंने रावणवधजनित पापक्षालनके लिये 'हत्याहरण' नामक पवित्र कुण्डमें स्नान किया । पांचवीं वर्ष पहले यह स्थान ठठेरीके अधिकारमें था । पीछे वैशखवार राजपूत कुलोद्भव राजकुमारने ठठेरीको भगा ८४ ग्रामों पर राजत्व चलाया । उन्होंने रथौलिया नगरमें एक दुर्ग बनाया था । उसका भग्नावशेष आजभी देख पड़ता है । नागमल नामक किसी नायकने प्रभुको मार (किसीके मतसे बलप्रयोग पूर्वक) यह स्थान छीन

लिया । आजभी नागमलवर्गोय शकरवार राजपूत ६३ ग्रामका उपभोग करते हैं ।

इस परगनेका परिमाण ६३ वर्गमील है । उसमें ३१ वर्गमील पर कृषि कार्य होता है । यहांकी भूमि बहुत अच्छी नहीं । हत्याहरणकुण्डके निकट प्रति वर्ष भाद्रमासमें मेला लगता है । उसमें न्यूनाधिक पन्द्रह हजार आदमी इकट्ठा होते हैं । इस परगनेमें कल्याण नामक ग्राम ही प्रधान है ।

कल्याणमत्त (सं० पु०) १ अनङ्गरत्न नामक ग्रन्थके प्रणीता । २ गजमत्तके पुत्र । इन्होंने मेघदूतकी मानती नाम्नी टीका बनायी थी ।

कल्याणमित्र (सं० क्लो०) कल्याणस्य धर्मस्य मित्रमिव । १ महर्षि सुतपाके पुत्र । इनका नाम लेनेसे नष्ट द्रव्य मिलता और वज्रका भय भगता है । (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

२ धर्मका सद्गी, नेक मनाह देनेवाला ।

कल्याणयोग (सं० पु०) कल्याणकरो योगः, मध्यपद-लो० । ज्योतिःशास्त्रोक्त यात्राका एक योग । बृहस्पति केन्द्रस्थान (लग्नसे १म, ४र्थ, ७म और १०म) और सूर्य त्रिकोण (५म और ८म) अथवा १०म वा ११म स्थानमें रहनेसे यह योग आता है । इस योगमें यात्रा करनेसे मङ्गल हुआ करता है ।

कल्याणलेह (सं० पु०) अश्वलेहविशेष, एक चटनी । हरिद्रा, वचा, कुष्ठ, पिप्पली, शुण्ठी, जीरक, अजमोदा (यमानी), यष्टी मधु, मधुकुप्य और सैन्धवकी सम्भाग बारीक चूर्ण प्रत्यह २१ दिन घीमें सानकर चाटनेसे वातव्याधि, हिकका और श्वासरोग आरोग्य होता है । (चक्रदत्त)

कल्याणवचन (सं० क्लो०) कल्याणं मङ्गलमयं वचनम्, कर्मधा० । मङ्गल वाक्य, भली बात ।

कल्याणवर्मा (सं० पु०) १ कीर्ई प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् । इन्होंने सारावली नामक एक ज्योतिष बनाया था । २ काश्मीरवाले राजा बृहस्पतिके एक मातुल (मामा) । इन्होंने बृहस्पतिकी शैशवावस्थामें कुछ दिन भ्रातृ-गणोंके साथ राजकार्य चलाया था । फिर कल्याणवर्मोंने 'कल्याणस्वामी केशव' नामक विष्णुकी एक मूर्ति प्रतिष्ठित की । (राजतरङ्गिणी ३।६२८)

इं० पर्वे गताष्टमे विद्यमान रहें। कारण उस समय काञ्चीरमें कल्लट नामक एक गैव राजा राज्य करते थे। सम्भवतः स्पन्दसर्वस्वकारने उक्त राजाके नामसे ही अपना ग्रन्थ निकाला होगा। स्पन्दसूत्रके वार्तिक कार यास्करभट्टके मतानुसार वसुगुप्तने कल्लटको शिवसूत्र बताया था। फिर इन्होंने स्पन्दसूत्रकी कारिकाके साथ उसे जनसमाजमें प्रचार किया। कल्लटने स्पन्दसूत्रकी एक लघुप्रति भी बनायी थी। ईदरान देखो।

कल्लव (सं० स्त्री०) कल्लस्य भावः, कल्ल-त्व। १ स्त्र-मेद, आवाजका फर्क। २ वाधियं, बहुरापन, मुन न पहनेकी शान्त।

कल्लन—दक्षिणापथकी एक असभ्य क्षत्रवर्ण जाति। तामिल, तेलगु (तिलहरी) प्रभृति भाषाके अनुसार 'कल्लन'का एक अर्थ चोर या डाकू है। सम्भवतः पूर्वकालमें क्षिप्रकर माल मारने डाका डालनेसे यह नाम निकला होगा। मटुराराज्यमें इस जातिका वास है। किसी समय कल्लन लोग वल्लालीसे कुछ स्थान हीन स्राधीन भावमें रहते थे। अंगरेजोंके आनेसे पहले यह जाति मटुरा और निकटस्थ राज्योंमें बड़ा उत्पात डटाती थी। १८०१ ई०की मटुरा अंगरेजोंके अधिकांशमें आयी। फिर इन लोगोंका वह प्रभाव और दौरातन्त्र बटने लगा। फिर भी उक्त स्रभाव, अतुल साहस और गरीबका तेज आज भी वैसा ही बना है।

कल्लन जातिके विवाहकी पद्धति अति चमत्कारक है। एक रमणी अनायास दो-से दस तक पति ग्रहण कर सकती है। किन्तु एक एक जोड़े पति रखना पड़ता है; जोड़ा फूटनेसे काम विगड़ता है। इनके सन्तान अपनेकी छह, आठ या दस लोगोंके नहीं—आठ और दो, छह और दो या चार और दोके पुत्र बताते हैं। अनेक पिता रहते भी कोई गृहवध नहीं होती। कारण सन्तान सबके समझे जाते हैं। फिर सबको उन्हें पालना पड़ता है।

कल्लन अपने पुरोंकी गैश्वकालसे ही धैर्यवृत्ति सिखाते हैं। इस कार्यमें जो जितना परिष्कृत पड़ता,

उसे स्वजातिके निकट उतना ही आदर और सम्मान मिलता है। यह शिवकी पूजा करते हैं। किसीके मरनेपर शव जलाया या भूमिमें गड़ाया जाता है।

कल्लसूक (सं० त्रि०) वधिर एवं सूक, जो कल्ल मुन न सकता हो।

कल्लर (हिं० पु०) १ कल्ल, खारी मटो। २ रेह, नोना। ३ अनुर्वरा मृमि, कसर।

कल्ला (हिं० पु०) १ पल्लर, किन्ना। २ कुत्तर, कुर्वा, गट्टा। यह भोट पर पान सींचनेका खीदा जाता है। ३ कपोलके अभ्यन्तरका अंग, जवड़ा। ४ विषाद, भगड़ा। ५ शरीरका स्थान विगिप, जिम्नका एक हिस्सा। जवड़ेके नीचे गलेतक कल्ला रहता है।

कल्लांच ((हिं० वि०) १ दुष्ट, लुच्चा। २ दरिद्र कल्लाल। यह तुर्कीके 'कल्लाच' शब्दका रूपान्तर भाव है।

कल्लातोड (हिं० वि०) प्रबल, जोरावर, जो बराबरी कर सकता हो।

कल्लाटराज (फा० वि०) कर्कशवादी, सुंहनोर, कड़ी वात कचनेवाला।

कल्लादराजी (फा० स्त्री०) कठोर वचन, सुंहनोरी, कड़ी वात।

कल्लाना (हिं० क्लि०) खुजलाने अथवा जलजानेसे चर्ममें असह्य पीडा होना, चमड़ा जलना।

कल्लि (सं० अव्य०) आगामी दिवसको, कल।

कल्लिनाय (सं० पु०) एक प्रसिद्ध सद्गीतशास्त्ररचयिता।

कल्लू (हिं० पु०) क्षत्रवर्णविगिष्ट, काले रंगवाला। यह शब्द प्रायः काले आदमियों या कुत्तोंका नाम होता है।

कल्लोल (सं० पु०) कल्ल वाहुलकात् ओल्लच्। १ महा तरङ्ग, बड़ा लहर। २ धर्म, खर्शी। ३ शत्रु, दुश्मन। (त्रि०) ४ शत्रुता रखनेवाला, जो दुश्मनी मानता है।

कल्लोलित (सं० त्रि०) कल्लोलोऽस्य संजातः, कल्लोल-इतच्। तरङ्गयुक्त, लहर लेनेवाला।

कल्लोलिनी (सं० स्त्री०) कल्लोलोऽस्यप्याः, कल्लोल-इनि-ढीप्। नदी, दरया।

अज्ञोत्तिनीयज्ञान (स० पु०) अज्ञोत्तिनीयां ज्ञानोत्तिनीयज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (स० पु०) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि०) अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (स पु०) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (स० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (स० पु० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (स० पु० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

अज्ञान (सि० अज्ञो) अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।

• "अज्ञोत्तिनीयं ज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।
अज्ञानम् । अज्ञानम् । अज्ञानम् ।" (राज्यादीनी १।११)

रका पेड। ५ त्वक्, टारचीनी। ६ मूलपत्र, भोज-
पत्र। ७ नन्दीवृक्ष, बेनिद्या पीपर। ८ डिण्डिमवाद्य,
उड्डा, नकारा। ९ प्राचीन ज्ञातिमेढ। जोष देखी।

कवचपत्र (म० क्ली०) कवचस्त्रेयनसाधनं पत्रमिव
पत्रं वक्त्रं यस्य, वङ्ग्री०। भूर्जपत्र, भोजपत्र।

कवचपाश (वै० पु०) कवचं च वर्मवन्ध, त्रिरह
वांधनेका पट्टा। (अ० ३५ दि०)

कवचहर (म० पु०) कवचं हरति येन वयसा, कवच-
हृत् अच्। १ कवच हरणका उद्यम करनेके उपयुक्त
वयस्क वानक, लड़का, बच्चा। (त्रि०) २ कवचधारी,
द्विरह पहननेवाला। ३ कवचका यन्त्र धारण करने-
वाला, जो तावीज पहने हो। ४ कूर्पासकधारी,
मिरछाई पहने हुआ।

कवचित (म० त्रि०) कवचं सञ्जातमस्य, कवच-
इतच्। कवचयुक्त, द्विरह पहने हुआ।

कवची (म० त्रि०) कवचं अस्थस्य, कवच इति।
१ वर्मयुक्त, त्रिरह पहने हुआ। (पु०) २ धृतराष्ट्रके
एक पुत्र। (महाभारत १।१०।११) शिव, महादेव।

कवचीयन्त्र (म० क्ली०) औषधके पाकार्यं यन्त्रविशेष,
दवा पकानिका एक घाला। किमा टट काचकूपो
(शीगी)का यह बनता है। कूपो न तो अतिदृढ
और अतिदीर्घ रहना चाहिये। पहले इसे कर्द-
माक्त (भीगे) वस्त्रे अच्छीतरह लपेट पीछे नट्टु
चुत्तिकाका लेप चढाते हैं। फिर धूममें कूपी सुग्रायी
जाती है। अन्तर्को इसमें औषध रख सुख वन्द कर
देते हैं। इसी प्रकार कठिन और दृढ़ अग्निमें पक
सकनेवाली कूपीका नाम कवचीयन्त्र है। (त्रायेयकं)

कवटी (म० स्त्री०) कौति गच्छायते, कु-अटन् डोप्।
कवाट, किवाही।

कवड (अ० पु०) केन जलेन वलते चलति, क-वल-
अच् नडयोरैक्यम्। १ घास, लुकमा, कौर। २ गण्डूष,
कुझा।

कवडप्रह (म० पु०) कर्षं, २ तोलिकी तोल।

कवती (म० स्त्री०) दशवृत् प्रस्यस्य, क-मनुप-डोप्
मस्य वः। 'कयानयित्र' इत्यादि ऋक्-विशेष, जो ऋचा
'क' से शुरू हो।

कवत्र (वै० त्रि०) १ सार्धपर, मतनवी। २ मन्-
कर्म, वृग काम करनेवाला।

"इयन्ति न देवान् कवत्रे।" (अ० ३।२।१)

कवन (म० क्ली०) कौति गच्छायते, कु-न्युट्। १ जल-
पानी। (पु०) २ शूद्रके एक पुत्र।

कवन (द्वि०) होम देखी।

कवन्तक (म० पु०) व्यक्तिविशेष, किमी आटमीका
नाम। पाणिनिने इनका उल्लेख किया है।

कवन्ध कवध देखी।

कवपय (म० पु०) कु पय, कीः कयाटेगः। पयि च
अन्ति। प० १।३।१००। मन्दपय, वृग राम्ना।

कवयि, कवयो देखी।

कवयी (म० स्त्री०) कात् जलात् वयते गच्छति,
क वय-इन् डोप्। मत्स्यविशेष, सुभा मन्त्री। इसका
संस्कृत पर्याय—कविकापुच्छ और चक्रपृष्ठी है।
(Coilus colius) अन्यान्य मत्स्यकी अपेक्षा यह
जलशून्य स्थानमें अधिक क्षण लौ सकृती है।
इसके तालकूपपर चटनेका प्रवाद सुन पडता है।
यन्तुनः यह कर्णदेगम्य कण्टकके सहारे उच्चस्थान पर
पहुंच जाती है। फिर भूमिपर भी कवयी बहुत दूर
तक चला करती है। इत्रालके यगोर और फरिदपुर
जिल्लेमें यह बृहदाकार देख पडतो है। वैश्वक मतमें
कवयी मधुर, सिग्ध, जपाय, रुच्य, वल्य, द्रैपत्-पित्तकर
और वातघ्न होती है।

कवर (म० पु०-स्त्री०) के सम्यक् वरं गाममानत्वात्
अं टम्। १ जेगयाग, जुनक। २ कवरी, वनतुलसी।
कु-अरम्। शोभन्। अ० १।३।१३। ३ पाठक, व्याख्यान
दाता। ४ लवण, नमक। ५ अन्ध, खटाई। (त्रि०)
६ मस्युक्त, गुच्छेदार। ७ खचित, जहाज। ८ द्विज
वर्ण, चितकवरा।

"दृष्टं कश्चिद्विद्वान्मन्त्राणामध्यात्।

आनीयं मानदवर्गं कवरीं तरन्वा, ३" (मा० ४।१२)

कवर (द्वि०) होर देखी।

कवर (अ० पु० = Cover) १ आच्छादन, पोशिम,
गिलाफ। २ कौप, टकना। ३ लिफाफा, चिट्ठी।
४ पट्टा, दफती।

अक्षरको (स० स्त्री०) अक्षरं क्षियमाणं क्षिरति विक्षिरति । यत्र अक्षरं ह्रस्वोऽप्यु । कारामारण्यश्लो, धौर्धर्मं पक्षी वृष्टि चोरत । अयने क्षियमाणको धर्म न सञ्चनेषु कारागारने पक्षो स्त्री अक्षरको अज्ञातो है ।

अक्षरका जीवाश्वी ।

अक्षरपुष्पी (स० स्त्री०) अक्षरं विज्ञपयति पुष्पं पञ्जा, १ तत् । १ मयरी, मोरनी । २ विज्ञिपयच्छिदियिज्ञा विज्ञतक्षरौ पुष्पशामो (विज्ञिया गोरक)

अक्षरा बन्ती श्वी ।

अक्षरी (स० स्त्री०) क मिरं इषीति प्राच्यादयति, क इ अच् ङीप अक्षरा कु परन् ङीप । १ क्षियविभ्यास लृक् । इक्षका म स्तत पर्याय—क्षियविभ, अक्षर चोर क्षियमर्मत है । २ पर्यंग, बर्ही । ३ जनतुषवी । ४ कर्पूरक इक्ष बभूवका पेड । ५ रत्न करवोर, काञ्च बनीर । ६ मन्मथिका । ७ विज्ञपयती, शौमकी पत्नी ।

अक्षरोक्ष (स० पु०) सुगम्य पत्रवृक्ष विरीच, एक पेड़ । इक्षर्षो पत्नी अक्षरवृक्षर होती है ।

अक्षरीकला (स० स्त्री०) मन्मथिका ।

अक्षरोकूटक (स० पु०) अक्षरी, बर्ही ।

अक्षरोमर, अक्षरीगत श्वी ।

अक्षरोमार (स० पु०) अक्षर्यां मार प्राचिस्वन् १-तत् । १ अक्षुन अक्षरो, बड़ो कुक्षुप । २ अक्षरीका मारत, गुक्षुपका बोध ।

अक्षरीधत् (स० स्त्री०) अक्षरीं विमर्ति अक्षरी-धत् क्षिप् । अक्षरीधारी, कुम्भीकाका ।

अक्षर्य (स० पु०) अक्षरादि यच्च अक्षरमसूत्रं अक्षि क तच्च पांच अक्षर । क य य अ चोर क पांचो अक्षरोंका नाम अक्षर्य है । यह अष्ट स्तानधि उच्चारित होता है ।

अक्षरीश (स० स्त्री०) अक्षर्यां श, अक्षरीश । अक्षर्यदि उत्पन्न को क, ख, ग अ चोर क अक्षर्यदि निश्चिता को ।

अक्षर्या—मध्यमदेमके विनायपुत्र विभीषा एक सुदृष्ट राजा । यह पञ्जा० २१ ११से २२ २८ उ० चोर दिया० ८१ १३से ८१ ३० पू० तक अवस्थित है ।

अक्षर्यक ८८० वग मौल्य लभता है । सोई ३८८ पाम इक्ष राज्यके अन्तर्गत है ।

अक्षर्यके पविम अयमं विमपी गिरियेयो है । राज्यमें बड़ खान लक्ष्मण समभा जाना है । यहाँ कवी, धान चोर गीह को अक्षर्य पञ्चा है । अक्षर्यमें काञ्च, महुषा चोर कई तरहका गीह पाते हैं ।

राज्यका प्रधान नगर अक्षर्यां । पञ्जा० २२ १ उ० चोर दिया० ८१ १३ पू० पर बथा है । क्षार्यां चोर नाथाका अक्षर्याय ही प्रधान है । अक्षरीपत्नी सन्ध्यायके प्रधान यहाँ रहती है ।

अक्षर्य (स० पु०) क्षिय अक्षिय वक्षति वक्षति क वक्ष-पच् । १ प्राय क्षोर ।

“अक्षर्यं अक्षर्याणां कवी वक्षन् न वक्षन्” (उभयव २ ३।१८)

२ वक्ष्यप अक्षर्य, कुक्षी । अक्षर्यका बड़ी माया पातो जो अक्षर्यने सुखमें बह जानो है । अक्षर्य श्वी । इक्षिप्तिभिस्तृण एव मक्षती ।

अक्षर्य (क्षि० पु०) १ क्षोक, क्षिगारा । २ पक्षिविरीच, एक विज्ञिया । ३ अक्षर्य विरीच, क्षिमी क्षिष्का चोड़ा । ४ मतिष्ठा श्वीत ।

अक्षर्यप्रक्ष (स० पु०) अक्षर्यं परिमात्रं कोई एव तोसे को तोक । २ अक्षर्यका पक्षर्य, कुक्षी क्षिमीका नाम । यह चार प्रकारका होता है—अक्षरी, मसाको, मोषी चोर रोपण । बातमें क्षिष्पीय अक्षर्य कोको विमर्तं अक्षर्य श्वीत अक्षर्ये प्रमादो अक्षर्ये अक्षर्य-अक्षर्य-अक्षर्य अक्षर्य अक्षर्ये मोषो चोर अक्षर्यमें अक्षर्य तिष्ठ मक्षर्य-अक्षर्य अक्षर्य अक्षर्ये रोपण अक्षर्य क्षिया जाता है । (इक्षर्य) अक्षर्य-अक्षर्य क्षिमी मोक्षन अक्षर्य समता अक्षर्य अक्षर्य चोर अक्षर्य, तोय अक्षर्य तथा अक्षर्यकाको दोय मिटता है । (इक्षर्यविषय)

अक्षर्यप्रक्ष (स० पु०) अक्षर्यप्रक्ष प्रक्ष, १-तत् । १ अक्षर्यकोय परिमात्र विरीच कुक्षीके नावय एक नाय ।

अक्षर्यिका (स० स्त्री०) अक्षर्यव्यन्तरे अक्षर्यिकादिबल्लक अक्षर्य वक्षनेके क्षिये गूक्षर अक्षर्यको क्षान ।

अक्षर्यित (स० स्त्री०) अक्षर्यं अक्षर्येति, अक्षर्य-क्षिच

कर्मणि क्त। १ भुङ्, खाया हुआ। २ ग्रन्थ, निगना हुआ। ३ अधिकृत, किया हुआ।

कवली (सं० स्त्री०) वटरी वृक्ष, पेटी।

कवलीकृत (सं० त्रि०) अकवलं कवलं कृतम्, कवल-चि-कृतम्। कवलित, कौर बनाकर खाया हुआ।

कवप (वे० त्रि०) कु-असुन् क्खान्दसत्वात् पत्वम्। छिद्रयुक्त, जिसमें छेद रहे।

कवष (वे० त्रि०) कु-अपच्। १ सच्छिद्र (कपाटादि) छेददार (किवाड़ा वगैरह)। (पु०) २ प्राचीन ऋषि-विशेष। इनके पिताका नाम इलूप था। माता दासी रहीं। ऋक्संहिताके दशम मण्डलमें इनके वनाये मन्त्र विद्यमान हैं। एक समय सारस्वत प्रदेशमें कतिपय ऋषि यज्ञ करते थे। इन्होंने उनकी पंक्तिमें बैठ भोजन करना चाहा। किन्तु उन्होंने इन्हीं दासीका पुत्र बता निकाला था। इससे यह क्रुद्ध हो वहांसे चले दिये। फिर इन्होंने तपस्या कर अनेक मन्त्र वनाये थे। उक्त मन्त्रोंको सुन देवगण प्रसन्न हुए। इससे ऋषि प्रार्थना करने लगे और यह उनकी पंक्तिमें लिये गये। (ऐतरेयब्राह्मण) ३ धर्मशास्त्रके रचयिता।

कवस (सं०पु०) कु-अस्। सम्राट्, जिरह। २ कण्टक शुष्म, वंटीला भांड।

कवसि (सं० पु०) कु-अस्पो अग्निः, कोः कवादेशः। अल्प अग्नि, थोड़ी आग।

कवाट (सं० स्त्री०) कलं शब्दं अटति, कु भावे अप्-अट्-अच्; कं वातं वटति वारयति वा, क वट्-अण् कपाट, शब्द करने या वायुको रोक रखनेवाला किवाड़।

“मोचदारकवाटपाटमन्त्री कामीपुराधीयरी।” (अन्नदानव)

कवाटक (सं० स्त्री०) कवाट स्वार्थे कन्। कवाट, किवाड़।

कवाटक (सं० पु०) कवाटं हन्ति शक्या, कवाट-हन्-टक्। शक्यौ इत्तिकवाटयोः। पा १। २। ५४। तस्कार विशेष, किवाड़तोड़ डालनेवाला डाकू।

कवाटचक्र, कवाटचक्र देखो।

कवाटवक्र (सं० स्त्री०) कवाटं वक्रं यस्मात्, ५-तत्। खनासख्यात वृक्ष, एक पेड़।

कवाटी (सं० स्त्री०) कवाट अत्यार्थं डीप्। नुद्र कपाट, किवाड़ी।

कवाम (प० पु०) १ पक्षगाट रस विशेष, पकाकर गहद-जैसा बनाया हुआ रस, किमाम। २ गीरा, चागनी।

कवायद (प० पु०) १ व्यवसायें, तरीके। २ व्याकरणके नियम। ३ लडार्थकी तालोमके तरीके। सेनामें योद्धार्योकी श्रेणियां अथवा भाग एवं पयाद् भागमें नियमानुसार लगायी जाती हैं। सेनाध्यक्ष शिष्टाके शब्द उच्चारण करते हैं। साङ्केतिक वाद्य प्रभृति भी वजते हैं। इस पर संनिक अथवा कार्य करने लगते हैं। उनके अथवा मन, पद्यात्वनन, मुद्रापरिवर्तन, शस्त्र सज्जीकरण, सन्तानन, प्रहार, आक्रमण, रक्षा, शयन और उपवेशन आदिका नाम कवायद है।

यह शब्द 'कायदे'का बहुवचन है। हिन्दीमें इसे स्त्रीलिङ्ग भी मानते हैं।

कवार (सं० पु० क्त०) कं जलं आश्रयत्वेन वृणीति, क-ह-अण्। १ पक्ष, कंबल। २ पक्षिविशेष, एक चिडिया। इसका चञ्चल प्रतिदीर्घ होता है।

कवारि (सं० पु०) कुत्सितो ऽरिः, कोः कवादेशः। कुत्सित शत्रु, पाजी दुश्मन।

कवासख (सं० त्रि०) कुत्सितस्य सखा, कुसखा-टच्, कोः कवादेशः। कुत्सित सहायविशिष्ट, खुदगर्ज।

कवि (सं० पु०) कवते श्लोकान् अथते वणयति वा, कव्-इन्। १ कवितागान प्रभृति रचयिता, शायर, छन्द बनानेवाला। २ वाल्मीकि। ३ शुक। ४ पण्डित। ५ ऋषिविशेष। यह भृगुके पुत्र और शुक्याचार्यके पिता थे। ६ सूर्य, सूरज। ७ कल्कि देवकी ज्येष्ठ भ्राता। ८ ब्रह्मा। ९ चाक्षुषमनु और वैराज प्रजापतिकी कन्याके एक पुत्र।

“कव्यायो मरत्ये च वैराजस्य प्रजापतेः।
जहं पुरु, गतदुःखसपत्नी सत्यमाक् कवि, ह” (हरिवंश २ व०)

(त्रि०) १० क्रान्तदर्शी, शीलिया। ११ मेधावी, अक्षमन्द। (सं० स्त्री०) कु-अच्-इ। अथ १। छप ३। ४८८। १२ खलीन, लगाम।

कवि-यवहोपकी प्राचीन भाषा। ब्रह्म, श्याम-

ये गुरु प्रथमिं केषि पाणि भाषा बीध योऽन्योनिकि गिवा
 लीकोर्मिं कोऽपि दिव्य पङ्क्तौ, वैश्वी प्रोक्तक न चरति
 भी वाकि वादि होयंकि यिसासीकों पीर धर्मयुक्तो
 मीं तव मिता करती है। यवहोपमिं कवि यन्द्वा
 धर्म रक्षक वा धार्यायिका कर्माते है। सम्भवतः
 प्राचीनकालको इस भाषामिं रक्षक पीर धार्यायिका
 बननेके हो 'कवि' नाम पड़ा है। फिर कितनी ही कि
 पन्तुमानमिं संस्कृत भाष्य यन्द्वा 'कवि' को उत्पत्ति है।

किसी किसी यन्द्वायकविदुषि मतमिं यह यवहोपको
 देगोय भाषा नहीं, किसी समयमिं मित्र देगोय पावर बर्दा
 कसो होगो। वस्तुतः भारतीय इतिहास देगोय भाषामिं
 इसके धर्मिक मूल दिख पङ्क्तौ है। किन्तु यवहोपको
 यवानीभाषाने यह पक्षिक मिलतो है। इसकिये कवि
 भाषा मित्र देगोय समझी जा नहीं सकतो। पुरानो
 हिन्दुमिं केषि नयो हिन्दुमिं कम मिलतो, वैश्वी प्राचीन
 कविभाषासे भी नभोन यवानो पृथक् लगती है। फिर
 प्राचीन हिन्दुमिं ध्येयकारुण्यकार जिस प्रकार धर्मिक
 पदप्रकृति यन्द्वा यवकमिं कोयीको समझ नहीं पङ्क्ति,
 लमो प्रकार कवि भाषाके धर्मिक यन्द्वा वतंमान यवहोपके
 प्रथम प्रथम पङ्क्तौको छोड़ि जाकारके किये कठिन
 रक्षती है। यवहोपका प्राचीन इतिहास जानमिंको कवि
 भाषा सोचना चाहिये। यवहोपमिं मुद्रणमानोके
 धानये पङ्क्ति कोहो पीर हिन्दुकोका राग्य था। इनका
 विवरण इस भाषाके लिखित प्राचीन यिसासीकोमिं
 मिलता है। यह पीर कालिके धर्मयन्द्वा यन्तोत रामा-
 यन्द्वा, महाभारत, ब्रह्मसंहितायक प्रकृति प्राचीन संस्कृत
 मुद्रणक यवभाषामिं पन्तुवादिता दृष्टी है। इस भाषाका
 लिखित 'ज्ञानहुद' पन्तु भारतसुख नामक यन्द्वा मन्
 प्रथम है। इस यन्द्वाको दया नामक प्रदेगोय राका
 कवयमके पादेयके धार्यायिका नामक किसी ध्येयिकि
 बनाया था। कवयमका कुदरीनापति यवको
 कथा बहुत पङ्क्तौ लगती हो। कर्मो को मन्तुष्टिकि
 किये कुदपायकका हुद यवमयन कर १११८ शकमिं
 "ज्ञानहुद" (भारतसुख) लिखा गया।

कविता (१०००) कवि यन्द्वा कम् १ यन्तु, कर्मात, २ कवि यवत।

कविता (वि० पु०) इत्ययमिदं, एक पङ्क्ति। यह
 मूलक प्राचीनोपमिं उत्पन्नता है। यह गोल पीर सरल
 होति है। प्रायः कस यह बहूदेय, दक्षिणभारत
 पीर ब्रह्मदेयमिं भी बनाया जाता है। कविताका
 धरर नाम मूलका कामरुक्त है।

कवितायुक्त (सुकुन्दराम चन्द्रमूर्ति)—बङ्गालके एक
 प्रसिध पीर प्रथम प्राचीन कवि, यन्तुमन्तुप्रथमिता।

कवितायुक्त (१०००) कर्मोनां कण्ठहार इव
 पादरथोय इत्यर्थः १ कवियोका कृपाकि विद्येय,
 धार्योका एक विताय। २ सुप्रसिध पलहार यन्तु।
 कवितायुक्त प्रसिध वैश्वय यन्तुकार। यह कवितायुक्तो
 (कवितायुक्त) धामकाके परम वैश्वय यिसासन्
 धर्मके पुत्र ये। इनका प्रकृत नाम परमानन्द् रथा।
 इन्मिं संस्कृत भाषामिं चेतन्यचरित महाकाव्य
 धामन्द्वायन्द्वा पीर चेतन्यचन्द्रोदय नाटक यवयम
 किये। कवयन्तु ईको।

कविता (१०००) कवि यन्तु कम् १ यन्तु, कर्मात,
 कर्मात, २ कविता यन्तु इत्य, एक यन्तुदार पङ्क्ति।
 ३ मन्तुमिदिय, एक मन्तुको। यन्तु ईको।

कवितायुक्त (वै० वि०) धामकायुक्त समभहार।
 कवितायुक्त, १ कवितायुक्तके पुत्र पीर कवितायुक्तके यिसा।
 यह एक प्रसिध पङ्क्ति थी। इनके बनये काव्य
 यन्तुका, वातुयन्तुका, रत्नायको, रामचन्द्रयन्तु,
 शान्तियन्तुका, करलचरी पीर यन्तुकाको नामक यन्तु
 यिद्यमान है। २ बङ्गालके भाषा रामायण भागवतादि
 रचयिता एक प्राचीन कवि।

कवितायुक्त (१०००) कवि यन्तु यन्तु धाररक
 यन्तुमिद यन्तु, यन्तुको। पङ्क्ति समभहार।

कवितायुक्त (१०००) यव कवियोके बङ्गे काव्योक्ति।
 कवितायुक्त (१०००) यन्तुमिदिय, एक यिदिय।

कवितायुक्त (१०००) यन्तुमिदिय, एक यन्तु,
 कवितायुक्त। यन्तुमिदिय यन्तुकायुक्त, यिदियत समभहार।
 कवितायुक्त (१०००) यन्तुकायुक्त यन्तुकायुक्त, यन्तुकायुक्त
 समभहार।

कविता (१०००) कवि यन्तु, कवितायुक्त, कवितायुक्त-
 काव्य, धार्यो, यन्तुकायुक्त।

कवितायी (हिं०) कविता देखो।

कवितावेदी (सं० त्रि०) कवितां धेत्ति, कविता-विद्वि-
णिनि। कविताज्ञ, शायरी समझनेवाला, जो कवितायी
जानता हो।

कविष्ट (सं० त्रि०) ज्ञानवान्, अज्ञमन्द।

कवित्त (हिं० पु०) इन्दोविशेष। यह दण्डकके
अन्तर्गत है। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें
इकतीस-इकतीस अक्षर लगाते हैं। यह मनहरन
और घनाक्षरी भी कहाता है। कवित्तका अन्तिम
वर्ण गुरु रहता, अन्य वर्णोंकेलिये गुरू लघुका कोई
नियम नहीं चलता। उदाहरण नीचे लिखा है,—

“तालम पे ताल पे तमालम पे मालम पे, इन्द्रावन वीरिन विहार
इंशोष्ट पे। कहे पदमाकर अखण्ड रासमण्डल पे, मण्डित उमण्ड मदा
कालिंदीके लट पे॥ हत पर हान पर हनुन कटान पर ललित लतान
पर लाङ्गिणीको लट पे। पायी मल हायी यह शरद जीन्दारं शिदि
पायी हवि भाग ही कम्पारंके मुकट पे॥” (पदमाकर)

कवित्त्य (सं० पु०) कवित्त्य वृद्ध, कैथका पेड़।

कवित्त्य (सं० स्त्री०) कवेर्भावः, कवि-त्व। १ कविता
रचनाकी शक्ति, शायरी करनेका माहा। २ ज्ञान,
समझदारी।

कवित्वन (वै० स्त्री०) १ स्तुति, तारीफ़। २ ज्ञान,
समझ।

कविनासा (हिं०) कर्ननागा देखो।

कविपुत्र (सं० पु०) कवेः भृगुपुत्रस्य पुत्रः, ई-तत्।
१ शक्ताचार्य। २ भागव ऋषि।

“भृगोः पुत्रः कविर्बिहान्।” (महाभारत, आदि ६८ अ०)

कविप्रशस्त (वै० त्रि०) कवियों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित,
शायरीसे बड़ा नाम पाये हुआ।

कविभूषण (सं० पु०) कवीनां भूषणमिव। १ उपाधि-
विशेष, एक खिताब। २ कविचन्द्रके पुत्र।

कविय (सं० स्त्री०) कं सुखं भजति, क-पञ-क,
भोजस्थाने वि प्रादेशः। खलौन, लगाम।

कविरञ्जन, बङ्गालके एक विख्यात शाक्त कवि।

रामप्रसाद देखो।

कविरथ (सं० पु०) एक राजा। इनके पिताका
नाम चित्ररथ था।

कविराज (सं० पु०) कवीनां राजा श्रेष्ठः, कवि-
राजन्-टच्। १ कविश्रेष्ठ, बड़ा शायद। २ भाट,
कवित्त कहनेवाली एक जाति। ३ वङ्गदेशीय वैद्योंका
उपाधि।

कविराज, एक कवि। इन्होंने ‘राघवपाण्डवीय’
काव्य बनाया था। पायात्व मन्से यह ई० १०म
शताब्दमें विद्यमान रहे।

कविराजी (हिं० स्त्री०) १ वङ्गदेशीय वैद्यक चिकित्सा,
इकीमी। (त्रि०) २ कविराजसम्बन्धीय, इकीमीके
सुतात्मिक।

कविराजी, एक उपासक सम्प्रदाय। रूप कविराजने यह
सम्प्रदाय चलाया था। गुरुने रूपसे शङ्खधारिणी रम-
णीके हाथका भोजन ग्रहण करनेकी रीका था। इसीसे
उन्होंने एक दिन शङ्खधारिणी गुरुपत्नीके हाथसे
भोजन न किया। गुरुने यह सुनकर उनकी तीन
कण्ठियोंमें दो कण्ठियो छीन ली। फिर रूप वची
हुयी एक कण्ठो लेकर भागे थे। उहीसेमें अनेक वैष्णव
उनके मतानुयायी हुये। इसीसे लोग इस सम्प्रदायवालों
को कविराजी कहते हैं। कविराजो अन्य वैष्णवोंके घरमें
न तो विवाह और न किसी दूसरेका बनाया भोजन
करते हैं। यह प्रायः समी सदाचारी होते हैं। कोई
कोई कविराजियोंको ही ‘स्पष्टदायक’ कहते हैं।

कविराम, दिग्विजयप्रकाश नामक संस्कृत ग्रन्थके
रचयिता। कह नहीं सकते, यह किस राजाकी
सभाके पण्डित थे। इनका ग्रन्थ पढ़नेसे समझते, कि
कविराम यशोरवाले राजा प्रतापादित्यके समसामयिक
रहे। कविरामके दिग्विजयप्रकाशमें भारतवर्षका तत्-
कालीन भूगोल और प्रवाद लिखा है।

२ विहारमें डोम जातिके चाईको भी कविराम
कहते हैं।

कविरामायण (सं० पु०) कविना कवितया कविभु
काव्येषु वा रामः अयनं आश्रयो यस्य, बहुव्री०।
कवितासे रामका आश्रय रखनेवाले वाल्मीकि मुनि।

कविराय (हिं० पु०) कविराज, भाट।

कविस (सं० त्रि०) कु कव वा वर्णने इत्च्। १ स्तोता,
तारीफ़ करनेवाला। २ शब्दकारक, आवाज देनेवाला।

कविदास (हिं० पु०) १ कविदास, महादेवके रचनेका पदाङ्क । २ कर्म, विधि ।
 कविकाविका (सं० स्त्री०) कं कृष्णं कविकाविका कवीपति, कवि-वास कवि-कुल, डाप पत इत्यम् ।
 कौपाकियेय, कियो कविकावा तम् ।
 कविबर (सं० त्रि०) कविपुं बरं खेठ । कविखेड, यावरोमिं बड़ा ।
 कविब्रह्म (सं० पु०) काकावर्ष वा काकानिर्घय नामक एक तिर्षपदके रचयिता । इनका परपर नाम आदित्यसूरि का । विष्णेश्वर आचार्यने इनके गिणाये दी ।
 कविद्वय (सं० त्रि०) कवियोगो बहुवचिवासा ।
 कविदेशी (सं० त्रि०) कवि कवित्वं देशि, कविविद्-चिनि । १ काव्यवेत्ता, यावरो समझनेवाला । २ कवि, यावर ।
 कविमया (सं० त्रि०) कविपुं मयाः प्मात्, ०-तत् ।
 कविमोमिं विष्णवात्, यावरोमिं मयङ्कर ।
 कविमेश्वर (सं० पु०) १ काकनमुद्रावलो नामक संस्कृत धम्मके प्रवैता । २ प्रकृत तास्त्रियेय ।
 कवी (सं० स्त्री०) कवि-स्त्रीय् । कवीय, कव्याम ।
 कवीठ (हिं० पु०) कवीठ, केश ।
 कवीन्द्र आचार्य (सरस्वती) कविचन्द्रोदक पीर पद-चन्द्रिका नामक संस्कृत धम्मके रचयिता ।
 कवीन्द्रनारायण (यर्मा) एकाग्रचन्द्रिका पीर किरका माहात्म्य नामक संस्कृत धम्मके रचयिता । इनोंने उक्त दोनों धम्म कृतकचराम आकाशुकेप्रतीके समयमें बनाये थे ।
 कवीय (सं० स्त्री०) कवि कर्वे क । कवीय, कव्याम ।
 कवीयत् (सं० त्रि०) कविरिच आचरति, कविं स्त्रीतारं इच्छति वा, कवीय यङ् । १ कविसद्वय, यावरके बराबर । २ अपनी प्रार्थना इच्छुक, जो, अपनी तारीफ़ आहता को ।
 कवीयान् (सं० त्रि०) अयमनयोरतिथयेन कवि, कवि ईयसुन् । विचरन्ति कवीयान् ईयसीवद्वे । क ४७२० ।
 समय कवियोगिं खेठ दोनों यावरोमिं बड़ा ।
 कवुक, क्वीतिवका एक योग ।
 कवेय (हिं० पु०) कामीय, दीवती, मवार ।

कवेय (सं० स्त्री०) कं कव्य विचति स्थाति, क-विच-यत् । १ उत्पन्न, मौला कवय ।
 कवेया (हिं० पु०) अमपका कौचक, कवयो कौच ।
 कव दिग्दर्शनकव्य (कृतपुत्रमा) कौ सुबो कव्यातो है । २ काव्ययावक, कवेयका कवा ।
 कवीयवक, कव्ययव वही ।
 कवीय्य (सं० स्त्री०) कृतसित ईयत् कव्यम् कर्मका-कौः कवादेय । ईयत् कव्यस्यै, कौटो मरीं । (त्रि०)
 २ ईयत् कव्यस्यैर्गमुञ्ज, कृञ् गर्मे ।

‘मूलं इदं कव्यमूलार्थिभेय ।
 यत् पूर्वं कविभिः कवीयतकामैः ।’ (१४१०)

कव्य (सं० त्रि०) कवि यत् । (यद्व्यय-टीकानिबन्ध-निबन्ध कव्ययवत्पुत्रवत्पुत्रवैकविह रवेः कव्ययवदि कर्त्तं यत् ।
 यर्माका २।१।२) १ स्थावकारो, तारीफ़ करनेवाला । (यत्) (पु०) २ विदोञ्ज पिठलोच विमिय ।

‘मल्लो वरेरेके कवीयि-’ (कव्यविज्ञान १।१०।२)
 १ कृत्यं मन्वन्तरेके सप्तर्षियोगिं एक कविय ।
 (स्त्री) कृमये कौयि पिठम् यत् असादिकम् तु० पच यत् । यदीयत् १।२।२० । पिठलोच विमियके उद्वेग्ये दिवा कानिवासा पच ।

कव्य पदार्थं कौत्रिय ब्राह्मणको ज्ञान न करनेके निश्चय ही जाता है । मनुसंहितामें लिखते हैं कि विद्वान् ब्राह्मणको कव्य विद्वानिसे पनेक मुञ्चक पत्र लिखते हैं । किन्तु अमन्त्रय बहु ब्राह्मणको भोजन करानिसे भी वह काम नहीं निकलता । पूरै-अमन्त्रय ब्राह्मण जितने पाठ होता, पिठलोचके सुचमें उतने ही उतत जोड़के भोजे जोड़ देता है । अमन्त्रय प्रथम ही परीक्षाके साथ ज्ञाननिष्ठ ब्राह्मणको कव्य भोजन कराना चाहिये । विद्वत्कविद् ब्राह्मणोंमें ज्ञाननिष्ठ तपोनिष्ठ, तपःप्राप्त्यायनिष्ठ पीर कर्मनिष्ठ मरुके बार खेचिवां होतो हैं । कव्यके भोजनमें वारो खेचियोंका विधान है । किन्तु कव्यके भोजनमें एक मात्र ज्ञान-निष्ठ ब्राह्मणको ही पचिकार है ।

‘जानिष्ठ विद्यः क्विपुं क्वीयिचरवतरे ।
 यदका-कवीयवक कर्त्तव्यवतरे ।’

अथाघात (अ० पु०) अग्नि अथवा वा पाघात,
 १-तत् । अथाका पाघात, चानुबन्धो मार ।
 अथाह्वय (सं० स्त्री०) अथानां अथाघातानां अयम्,
 बहुव्री० । तीन प्रकारका अथाघात, तीन तरहसे
 चानुबन्धो मार । यह अतु मध्य और निहुर होता
 है । अथोको साधारण दण्ड देते समय अतु पाघात
 लगाते हैं । किन्तु उपवेगम निद्रा, स्थलम्, दुष्ट शिवा,
 अग्निनी (लोहो) देवनेका पौरुषत्व, गर्भित श्रेया
 रव (मोरको जिनजिनाइट), ज्ञास, दुर्द्व्याग, विमार्ग
 यमन, मय, शिवाज्ञाग, चित्तभ्रम प्रवृत्ति अथराशोमिं
 मध्य और निहुर पाघात देना पड़ता है । अथराव
 विमिषिं पाघातका स्थान भी पृथक् है । ज्ञास एवं
 भवमिं अथदेय, शिवाज्ञाग तथा चित्तविभ्रममिं अथर,
 मर्दित श्रेयावर एवं अग्निनी देवनेके चोत्पुत्रमिं बाहू
 तथा अथदेय, उपवेगम एवं निद्रामिं अठिदेय, दुर्ध्व-
 जार तथा विमार्ग प्रधानमिं सुच, अथवन एवं पुत्र
 ज्ञानमिं अथन और अण्ड प्रवृत्तिमिं सर्वस्यानपर अथा
 मारते हैं ।
 अथारि (सं० स्त्री०) अथको एक शिरो । यह अथ
 अथमिं उत्तर दिक् रहती है ।
 अथाई (अ० स्त्री०) अथां अथैति, अथा अथं अथ् ।
 अथ चानुबन्ध समामिं सायक । अथर ईको ।
 अथाभान् (सं० स्त्री०) अथा भिन्ने भूवा, जो चानुबन्ध
 रहता हो ।
 अथिच (अ० पु०) अथति दिनश्चि सर्वम्, अथ
 बाहुबन्धात् इव । ननुच, अथको मार आकनेवासा
 निवसा ।
 अथिचपाद (सं० स्त्री०) अथिचप्य पादाविच पादो
 यत्, बहुव्री० । इत्यादिवात् नाम्न्यकोप । अथ
 कोपान्तरिम् । पा० १।३।११५ । ननुचको भाति पद
 विमिट (अन्तु), निवसेको तरह देववासा (ज्ञानवर) ।
 अथिका (सं० स्त्री०) अथकया, अथकेवा चानुबन्ध ।
 अथिपु (अ० पु०) अथति पुत्रं अथ्यते वा, अथ-
 युदित्वात् निपातनात् आह । अथ, अनाज ।
 १ पाश्चादन, अथका । २ अथ, अनाज । ३ अथ्या, अथय ।

१ पासन विमिष, एक शिठक ।
 अथिपुवर्ष (अ० स्त्री०) अथाघात वत्, तथिविवा
 विवाय् ।
 अथिय (अ० स्त्री०) अथवर्ष, अथिच ।
 अथीका (अ० स्त्री०) अथ बाहुबन्धात् ईकम् आत् ।
 प्रवृत्ता ननुको अथि ईई निवको ।
 अथोदया (अ० पु०) अथनुबन्धा सुदोपायविमिष,
 अथोका एक पेश । इसमिं खेलाको अथनी कोङ्को
 यदैनपर आठ रव अथ अथ अथ अथिच पद
 अथनी और अथिच खेता और अथिच अथिच पद
 गिरा देता है ।
 अथोदा (अ० पु०) अथिचमिं विमिष, अथका । इसमिं
 अथवर अथीं तथा अथिच नामाप्रकार अथिम अथपुष्य
 बनाते हैं ।
 अथिरव (सं० पु०) एक पशु । (अथ २।११५)
 अथैव (सं० पु०-स्त्री०) अथै देवै योयमि, अ-अ-अ
 अथैवैव । अथरवपान् । अथ १।२ । १ अथालि,
 रोङ्, पाठको अथो अथो । अथ अथं वार्त् वा अथति ।
 १ अथानमस्यात् अथविमिष, अथिच । अथका अथरव
 अथयि—अथैव, अथिच, अथिच अथ और अथिच है ।
 अथिचमिं अथिच, अथनामिं अथर, अथोमिं अथिच, अथ-
 थोमिं अथिच और अथर (अथको)मिं अथ अथ अथो
 अथिच है । (Selpus dabilis)
 अथिच एक प्रकारको राव है । यह अथम भारतमिं
 अथेवरी और अथिचोकि अथिच अथय होता है ।
 अथका अथिच अथ अथिच (अथयम) अथय रहता
 और अथरव अथयव अथ अथका है । यह अथोचन-
 मोल है । अथको और अथिचका रोममिं अथोय अथ
 अथिचको भाति अथरव अथरते हैं । यह रोय
 न अथनेके अथिच भी अथका जाता है ।
 अथिचालमिं अथिच अथिच अथ अथका जाता है ।
 अथिच अथिचको अथरव भी अथका है । अथालमिं
 यह अथको अथ अथका है । अथिच अथिचमिं अथर और
 अथिच है । यह दो प्रकारका होता है—अथ
 अथिच और अथिच । अथ अथिचको अथ अथिच

“ अथां विमिषिं अथिचिः अथरवैः ” (अथ २।१।११५)
 Vol. IV. 65

और सुस्वाकृति लक्ष्मीको चिखीड़ कहते हैं। दोनों प्रकारका कश्येक शीत, सधुर, तुवर (कपाय), गुरु, पित्तशोषित दाहज और आंखकी बीमारी दूर करनेवाला होता है। (भावप्रकाश)

चिङ्गापुरका कश्येक बहुत बड़ा निकलता है।

कहीं कहीं इसे ठण्डाईमें भी घोंट कर पीते हैं।

३ भारतवर्षका एक विभाग।

“भारतवर्षात् सर्वं न नरदिवाप्रियास्य।

इन्द्रोपः कश्येक्य तावरको रणदिमान्।

भाष्योपसया सोमो गार्ग्यस्तप बारपः ॥” (विश्वसाय)

कश्येक, कश्येक देखो।

कश्येकका (सं० स्त्री०) कश्येक-टापू। १ पृष्ठास्य,

रीढ़, पीठकी बड़ी हड्डी। २ कश्येक, कसेर।

कश्येरमान् (सं० पु०) यवनराजविशेष, एक राजा।

“इन्द्रस्यो हतः कोमाह यवनस्य कश्येरमान्।” (हरिवंश १६ प०)

३ भारतवर्षका एक खण्ड।

कश्येक (सं० स्त्री०) कश्येक, कसेर।

कश्येक (सं० स्त्री०) कश्येक परहू चान्तादेयः।

१ हृष्यकन्दविशेष, कसेर। २ विश्वकर्माकी चतुर्दशी कस्या। मरकासुरने हस्तिरूपसे इन्हें हरण किया था।

(हरिवंश, १२१ प०)

कश्यक, कश्येक देखो।

कश्येकका, कश्येक देखो।

कश्यक (सं० त्रि०) कश्य ताड़ने वाहककात् शोक।

१ हिंसक, मार डालनेवाला। (पु०) २ राक्षसादि, शैतान बगैरह।

कश्यन (सं० अर्थ०) किम्-चन इति सुगन्धोषः।

कीई, एक न एक यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिने इसे श्रुयक् शब्द माना है।

कश्यत् (सं० अर्थ०) किम्-चित् इति सुगन्धोषः।

कीई, एक न एक। यह अनिर्दिष्टवाचक है। पाणिनिके मतमें ‘कश्यत्’ शब्द श्रुयक् ठहरता है।

“कश्यत् कानाविरहदुरवा साधिकाप्रसताः।” (निघंटु)

कश्यती, कश्यती देखो।

कश्यस (सं० स्त्री०) कश्य-कन्-मुट्। इटिक्कित्वात्तः।

कश्यस मुट्। १०८। १ मूर्च्छा, गृध, एकाएक बेहोश

हो जानेकी हालत। २ मोह, कमकीरी। ३ पाप, गुनाह। (त्रि०) ४ मस्तिष्क, गन्दा। ५ दुराचार, बदकाग। ६ पापी, गुनाहगार।

कश्यस (वै० स्त्री०) वेदे श्रुयोदरादित्वात् लक्ष्य शः।

कश्यस देखो।

कश्यीर (सं० पु०) कश्य-ईरन् सुडागमस्य। कश्येकं २ प।

१२५। १२। कश्यीर जनपद। कश्यीर देखो।

कश्यीरज (सं० स्त्री०) कश्यीरे जायते, कश्यीर-जन-

ज। कुङ्कुमविशेष, जाफरान्, केसर। इन्द्रम देखो।

कश्यीरजम् (सं० स्त्री०) कश्यीरे जन्म यस्य, बहुव्री०।

कुङ्कुम, केसर।

कश्यीरी (हिं० वि०) १ कश्यीरसम्बन्धीय, कश्यीरके

सुतात्रिक। (स्त्री०) २ कश्यीर देशकी भाषा या

बोली। ३ लेह विशेष, एक चटनी। आर्द्रककी हीस

छुट छुट खण्ड करते हैं। फिर उनमें पीस कर सरिष,

कडोन्ड, कश्यीरज (केसर), ऐला, जावित्री, भौंफ

और जीरक पीसकर मिश्राना पड़ता है। अन्तकी

लवण, सिरका और गर्करा छालनेसे कश्यीरी-चटनी

तैयार हो जाती है। (पु०) ४ कश्यीर देशका

अधिवासी यानी रहनेवाला। ५ कश्यीरका अर्थ

यानी घोड़ा।

कश्य (सं० पु०-स्त्री०) कश्यां अर्हति, कश्या-य।

दग्गादिभ्यः। १। १। १। १ अर्थ, घोड़ा। २ अर्थ-

का मध्यदेश, घोड़ेका पुष्ट। ३ मय, शराव। (त्रि०)

कश्याघातके योग्य, कोड़ा खाने लायक।

कश्यप (सं० पु०) कश्यं सोमरसादिजनितं मय्य

पिबन्ति, कश्य-प-क। १ कीई ऋषि। ब्रह्माके मानस-

पुत्र मरीचिके औरस और कल्याके गर्भसे इनका जन्म

हुवा था। मार्कण्डेयपुराणके मतानुसार कश्य अर्थात्

सोमरसके मय्यसे इनकी उत्पत्ति है, उसीसे कश्यप

नाम पड गया।

“ब्रह्मण्डलमयो सोऽप्यन् मरीचिकिति विद्युतः।

कश्यनस्य पुत्रोऽप्यन् कश्यपनात् स कश्यपः ॥”

(मार्कण्डेयपुराण १०८। ३)

यज्ञ यजुर्वेद प्रभृति वैदिक संहिताओंके मतमें

द्विरस्यगर्भं ब्रह्मसे कश्यपने जन्म लिया था।

“निरुचयः इत्येव चकार इत्येव चकार इत्येव चकार।”

(ऐतिस्यैव नियमः ३।१।१११) -

अभ्याप एक प्रकाशयति च। काम, यस्तु चौर
अभ्यापसंज्ञिताम् इत्थं इन्द्र चन्द्र प्रकृति देवसि एक
शब्दात्। (राम १।१००, वल्लभ ७।१७, चर १।१०।१०)

आख्यायने अपनी वैदायुजमधिकारिणि विद्या है
वि अभ्याप सत्संज्ञितावासी कई लुकीं कि कृपि चि।
श्रीमद्भगवद्गीतासु दिखति है कि अभ्याप कृपिने इसको १०
अभ्यापोंके विवाह विद्या। उनके गर्भसे १० जातियां
उत्पन्न हुईं,—१ पदितिसे देव, २ दितिसे देव, ३
इन्दुसे दानव ४ काहासे यज्ञादि, ५ परिहासे
गन्धर्व, ६ सुरसासे राक्षस, ७ इकासे वृष, ८ सुनिसे
पद्मपाद, ९ ब्रह्मपादके लिये १० ताम्बूनिसे श्वेत घ्न
प्रकृति, ११ सुरभिसे मोमहिवादि, १२ अय्यसे श्यापद,
१३ तिमिसे जम्बूद्वीप १४ विनतासे मङ्ग, एवं पद्म,
१५ बहुसे नर, १६ पतङ्गीसे पतङ्ग चौर १७ यामिनिसे
यक्षम। किन्तु महाभारत चौर पद्यान्वय सुपच प्रकृति
से अभ्यापको सवोदय मार्गसे लिखी है। मार्कण्डेय-
पुराणके मतसे उनसे नाम है,—१ पदिति, २ दिति,
३ इन्द्र, ४ विनता, ५ पद्मा, ६ बहु, ७ सुनि, ८ ब्रह्मा,
९ परिहा १० इन्द्र, ११ ताम्बा १२ इका चौर १३ प्रजा।

(मार्कण्डेयपुराण १००५)

पद्मतेति पद्मः, सर्वशः पद्म एव पद्मक पाद्य
नाद्यस्यैवपर्ययात् सिध्यति यथा कर्णं पद्मानं पवित्र्या
मिच्छते विवति नायपति पद्मवा कर्म विज्ञानकर्म
दाति इवति श्लाघतेति श्रेयः। २ परब्रह्म।

“ इति ब्रह्म वा चकार इत्येव चकार इत्येव चकार
दीव्यवर्णनोवा मार्कण्डेयः ” (मार्कण्डेय ७।११)

३ अक्षयप, बहुवा। ४ सूर्यसिमेव एक चिरन।
५ मङ्गलसिमेव, एक मङ्गलीः (सि०) ६ श्यावदन्त,
बहुदन्ता।

अभ्यापनम् (सं० पु०) अभ्यापनम् पुत्र, ६-तत्।
१ अभ्यापसे पुत्र गङ्ग। २ देव, चन्द्रा थादि।

अभ्यापपुर (सं० लो०) अभ्यापसे पुरम् ६ तत्।
अतमान आग्नीषोमा यह नाम रथा वा। अभ्यापपुरको

श्री इन्द्रोदितकर्म ‘अभ्यापनम्’ चौर इक्षिमिने ‘अभ्यापित’
विद्या है।

अभ्यापसंज्ञिता (सं० लो०) अभ्यापसे संज्ञिता, ६-तत्।
अभ्यापसेचित एक कर्मशब्द।
अभ्यापकृति, कर्म रथिय हैकी।

अय (सं० पु०) अयति पद्म धनिन वा, अय चक्षुःपद्मा-
अय च निपातनात् साङ्। शीतलकृतसप्तमप्रभाष्यनि-
ष्पन्नः क १।१।१११। १ अतिप्रदार, अक्षीरो। इक्षवर
अर्थे राज्य शिखर कांचने है। अयका संस्तत पर्याय—
ग्राम चौर निहत्त है। २ अर्थेच, बिसार। (सि०)
अर्थेच अरमेवासा, जो विपता या रणरुता हो।
अयच (सं० सि०) अयते बिसाद्यते, अय कर्मवि
क्युट्। १ अयत्त, अया। (पु०) अयति पद्म।
२ अतिप्रदार, अक्षीरो। (लो०) मथि क्युट्।
३ अयच अक्षकाण्ड, रणरु।

‘अयचकर्मविपत्तयस्तिः अयचकर्मविपत्तयस्तिः’ (भाट्ट ७।१००)

अयपात्राय (सं० पु०) अयपात्रो पात्राचयेति, अयपात्रा०।
अयसंनि, अक्षीरो।

अया (सं० लो०) अयते ताद्यते पनया अय वाहुच
कात् अरथि अप् टाप्। अया चाहुच।

अयापात (सं० पु०) अयाका पात्रात चाहुचको मार,
अयके।

अयाहु (सं० पु०) अय—पाहु। १ ल्ये, पाप्ताव।
२ अयि, अयिण, पाम।

अयापुत्र (सं० पु०) निहत्याम्बुज, एक राक्षस।

अयाय (सं० पु० लो०) अयति अय्यत्, अय—अयाय।
१ अयसिमेव, अयसापन। इक्षका संस्तत पर्याय—तुष्ट,
अक्षर चौर तुष्ट है। तुष्टकसे मतानुसार आसादनसे
तुष्टको तुष्टाने, बिह्वको ठहराने, अय्यको यह
बनाने चौर तुष्टको अयच घोडा पद्म जानेवाला रथ
अयाय कहाता है। एतिसे वाहुचकर्मक होमिसे यह
उपजता है। पूषकल थादि आदिसे इक्षका आसाद
मिलता है। अयाय रथ मक्षयाइक मक्षरोपक,
मृक्षान, मोहन, सैखन, मोक्ष, पौदाशायक श्रेय
नायक चौर वाहुचकर्म है। इक्षके प्रतिरिक्त अय
अरथे घोडा, सुखसिमेव, अदरासान, वाहुचक (वात

करते एक जानकी हालत) मन्यास्तम्भ (गला जकड़ जानकी हालत), गात्रस्फुरण, स्त्रोतश्वरोध, श्यावत्व (सुरापन), शुकनाश, श्वाकुञ्चन, आक्षेपण प्रभृति वायुधिकार बढ़ते हैं।

२ क्वाथ, पाचन, जीर्णांदा, भौंटी, काटा। इसका अपर संस्कृत नाम नियुं ह है। इसके पांच भेद हैं—स्वरस, कचक, क्षयित, शृत और फ्राण्ट। मरम, कल्क, क्षयित, शृत और फ्राण्ट देखो।

३ निर्धास, गौद। ४ विलेपन, चुपहाव।

“कषायाधिं लोभकषायस्य गौरीवनाच पनितानगौरे।” (उभारसभ्र)

५ अङ्गराग, उषटन। ६ श्योनाकहृत्, सोनापान। ७ कपित्थहृत्, कैथिका पेड़। ८ महासकंठहृत्, धूनीका वड़ा पेड़। ९ मण्डलिसर्प, एक सांप। १० राग, आसक्ति, लगाव। ११ कलियुग, बुरा जमाना। निर्विकल्प समाधिका एक विघ्न। वाञ्छ विषयसे हट अखण्ड वस्तु ग्रहणमें लगते भी जो राग आदि संस्कार उठ मनको स्वध्व और अखण्ड वस्तु ग्रहणसे पृथक् रखते, उन्हें कषाय कहते हैं। १२ लोहितवर्ण, लालरंग। (त्रि०) १४ कषायरसविश्रिष्ट, कसेला। १५ सुरभि, खुशबूदार।

“प्रत्येषु क्लृप्तकमलाकोदनेकोकषायः” (मेषून)

१६ लोहित, सु, खं, लाल। १७ रक्तपीत मिश्रित, लाल-पीला। १८ अपटु, नाशकिल्फ। १९ सुश्याव्य, अच्छीतरह सुन पड़नेवाला, जो कानमें खटकता न हो। २० रक्षित, रंगदार। २१ आसक्त, संसार-लित्त, फंसा हुआ। जैनशास्त्रमें लिखा है,—

“कष” संसारकालारमयं ते यानि धे जनाः।

ते कषायाः क्रोधमागमायालोमः इति युगः ॥” (लोकप्रकाश १४०९)

जैनशास्त्रमें ‘कषाय’के ऊपर बहुत विचार किया है। क्रोध, मान, माया, लोभका नाम ही कषाय है। इसके उत्तरोत्तर भेदोंका बड़ी ही सूक्ष्मताके साथ दिग्दर्शन कराया गया है। गोम्यटसार (जीवकांड)में कषाय शब्दको दो तरहसे निरुक्ति लिखी है। जैसे—

उपद्रवउपद्रवसं कषयक्रेण कसेदि जीवसवसु।

संसारदूरीं तेष कषायोपि चं वैपि ॥ १८५ ॥

अर्थात् जीवके सुख दुख आदि अनेक प्रकारके धान्यकी उत्पन्न करनेवाली, तथा जिसकी संसाररूपी मर्यादा अत्यन्त दूर है ऐसे कर्मरूपी चैत्र (खेत)का जो कर्षण करता है उसे कषाय कहते हैं। दूसरी प्रकार कष धातुसे भी इसकी व्युत्पत्ति बतलाते हैं—

सम्यग्दिवसयत्नपरितज्जन्मनादपरपरिणामे।

धादन्ति वा कषाया चउभोवचमठ खलोगमिदा ॥ १८२

जीवके सम्यक्त्व, देशसंयम, सकलसंयम और यथा-ख्यात चारित्ररूपी शुच परिणामों की जो कषै—म होने दे उसको कषाय कहते हैं। इसके अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और सञ्ज्वलन ये चार भेद हैं इन चारमें प्रत्येकके क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार चार भेद हैं इसतरह सोलह ही जाते हैं। फिर इनके भी उत्तरोत्तर असंख्याते भेद हैं। कषाय की विशेष व्याख्या करने लिये जैन धर्ममें अनेक शास्त्र हैं। सबसे बड़ा कषायशास्त्र है। गोम्यटसारमें भी इसका अनेक व्याख्यान है।

कषायकृत् (सं० पु०) कषायं कषायरागं करोति, कषाय-कृ-कृप् तुगागमः। १ रक्तलोभ, लाल-लोभ। इसकी छान रंगनेमें लगती है। (मि०)

२ कषायप्रस्तुतकारी, कादा बनानेवाला।

कषायचित्र (सं० मि०) लोहितवर्ण द्वारा रक्षित, फीके सुख रंगसे बनाया हुआ।

कषायजल (सं० क्लो०) जलविशेष, एक पानी। पूष (पाकर), अश्वत्थ (पीपर) और बटके सिद्ध जलको कषायजल कहते हैं।

कषायता (सं० स्त्री०) कषायस्य भावः, कषाय-तल्-टाप्। कषायका धर्म, कसेलापन।

कषायदस्त (सं० पु०) सूषिक विशेष, किसी किसका चूहा। इसका शुक जहां गिरता, वहां शोथ, कोथ आदि उठता है। (स० पु०)

कषायदशन, कषायदन देखो।

कषायनित्य (सं० त्रि०) नित्य अतिमात्र कषायरससेवी, रोज़ हृदसे ज्यादा कसेली चीज़ खानेवाला।

कषायपाक (सं० पु०) द्रव्य विशेषके क्वाथकी प्रस्तुत प्रणाली, किसी चीज़के जीर्णांदा बनानेका तरीका।

ब्रिज सकल ज्ञानोर्धि कलका परिमार्ग नहीं ब्रिजते,
जर्मि पाइ द्रव्य रजनीस पाइ गुण थीर सुख द्रव्य
रजनीस बोद्ध्य गुण लक्ष्मी सिंह कर चतुर्वा म परबिष्ट
रखति हैं।

कषायपाठ (स० पु०) कषाय' पार्म यज, बहुलो-
बलम् । कषयं च । स मन्त्र गान्धार जाति ।

कषाय प्राधत्—एक सेन शाक । इसमें कौरवी संसार
में धर्मक अरानिवासी कषायों का वर्णन है ।

कषायफल (स० ली०) पूयफल, सुपायी ।

**कषाय मार्गशा—सेन शाकर्म संसारो कौरवी विधिय
परब्रह्मा वतलामिणि शिवे १४ मार्गशा निषी हैं।**
जर्मि कौ एक मार्गशा ।

कषायपायनाल (स० पु०) कषाय' रज्जवर्णं यावन्नाल-
कर्माशा । तुवर वायनाल शान्ध, कसेली सुपाय ।

कषायदोनि (स० ली०) कषायानिकरच, कसेलीपनकी
मुनयाद । यह पांच प्रकारकी होती है —मनुष्य कषाय,
कटुकषाय तिष्ठकषाय थीर कषायकषाय । (५५)

कषायरस (स० पु०) रसविशेष, एक क्षायका ।
कषय ईकी ।

कषायवर्ग (स० पु०) कषायार्था कषायरसद्वयद्रव्यापार्
वर्ग समूह, ६ तत् । कषायरस द्रव्यगुण, कसेली
चौकीका कषीप । तिष्ठला, यज्ञकी, जम्बू शास्त्र
वकुच तिष्ठकषय, म्यपोष पादि पल्पहादि, विपद्,
पादि, बौद्धादि, शालसारदि, कतकषाय पापाय
मेदक, वनस्पतिषय, कुशक कौविदारक जीवकी,
चित्री पक्ष्मी, सुनिषय पादि, नौभारकादि थीर सुय
पादि द्रव्य कषायवर्गमें पड़ती हैं । (५५)

कषायशासिक (स० पु०) सुश्रुतोक्त बीट विशेष,
एक जहरोला बीड़ा । यह बीट सीम्ब र्जोनिसे देय
प्रकोपक है । इसका मूल विषाक्त निवृत्तता है ।

कषायहय (स० पु०) बटामनकादि कषायलक्ष् फलद्रव्य,
वरदद पावका वरेरक कसेली शाकसे पलकाशा हय ।

कषायकषय (स० पु०) विपद्, पादि कषाय द्रव्यकृत
बाष्णापन विधिय एक कसेली हय ।

कषाका (स० ली०) कष पाय टाप । १ सुद्र सुरा
सम, बीटा कषासा । (Small sort of Hedyarum)

इसका संकृत पर्याय—शाक, वनसा सुप्यर्ग, पक्षयशाक,
पुरासमा, मसुद्रास्ता, रोदिनी, गम्भारी, कञ्जुर,
पानम्बा, हरविपदा थीर सुरमिपदा है । माषप्रकागर्षि
मतमें यह मनुष्य तिष्ठ एवं कषायरस, शारक, श्रोतल,
कतु थीर कषय, मेदक, मसुता, यम, पित्त, रज, कुष्ठ,
काश, तुष्य, विषर्ष वातरज, वमि तथा क्खलायक
है । ५०५५५५५५ ।

कषायग्वित (स० त्रि०) कषाय रसविशेष, कसका ।

कषायित (स० त्रि०) कषाय' रज्जपोतादिवर्णं सञ्जातो
ऽय, कषाय इत्य् । १ रज्जादि वर्णकृत, कास रंया हुआ ।

“कतुर्ग कसविषयनी सुवैर शिम्बकवन्धा ।” (उत्तररथन १२४)

कषायी (स० पु०) कषायो विद्यति ऽय, कषाय-
इति । १ यानह्वय । २ सङ्गुषय, सुकाटका पीड़ ।

३ कर्पूरी ह्वय, कर्पूरीका पीड़ । ४ सर्वाह्वय, सुनेकापीड़ ।

५ शालकृष्ण, शालीकका पीड़ । ६ सुद्रपनस, बीटा
कटकल । (त्रि०) ० कषायविशेष, मोंददार ।

८ कषायान्नित, कसेला । ९ सशारासक, दुमिवाकी
वातोंमें कलम्भा हुआ ।

कषायीकृत (स० त्रि०) कषाय' कषायः कृत-
कषाय कि-क-क । कषायवर्णं हुआ जो सुर्ष दिवा
गवा हो ।

कषायीकृतबोधन (स० त्रि०) कषायवर्णं कश्चु बनाये
हुवा, जो पाँचें काक कर हुआ हो ।

कषायीभूत (स० त्रि०) कषाय' कषायो भूत-
कि-भू-त । ० कषायवर्णं बना हुआ जो काक पक्ष
गया हो ।

कषि (स० त्रि०) कषति विनष्टि, कष १ ।
कषिकविषयि रथयि । ५५ ५१५५ । विंसक, सुषसाण
पञ्चानिवासा ।

कषिका (स० ली०) पक्षिजाति, कोई बिड़िया ।

कषित (स० त्रि०) कष ३ । परोक्षित, कषा हुआ,
जो बीट का हुआ हो ।

कषीका (स० ली०) कषति, कष-ईकम् टाप ।
कषि-ईकम्-कम् । ५५ ५१५५ । १ पक्षि जाति, बिड़िया ।
कषकनया । २ पश्या ।

कपेरुका (सं० स्त्री०) कप-एरक्—उ संज्ञायां कन्-टाप् । १ पृष्ठास्थि, रीढ । २ कगेरु, कसेरु ।
कप्कप (वै० पु०) कप इति अव्यक्त शब्दसुचार्य कपति, कप-कप्-घच् । विपधर छमिविधेय, एक जङ्घरीला कीड़ा ।

“विभाषाम्. कृष्णाम् एतन्का गिविविष्का ।

कष्टप इत्यतां छमिरताहृष्टय इत्यताम् ॥” (कपर्ववेद ३ । २२ । ०)

कष्ट (सं० त्रि०) कष्यते ऽसौ, कषं कर्मणि क्त निट् । कष्ट-गहनयोः कपः । या० । २ । २२ । १ पीडायुक्त, पुरददं, दुःखनेवाला । २ गहन, सुशूलिन । ३ पीडाकारक, तकलीफ देनेवाला । ४ कष्टसाध्य, बहुत खराब । ५ कुत्सित, बुरा । (क्ली०) कप भावे क्त । ६ पीडा-मात्र, कोई ददं या वामारो । इसका संस्कृत पर्याय—पीडा, वाधा, व्यथा, दुःख, अमानस्य, प्रसृतिज, कष्ट, कलाकल, अर्ति, आर्ति, पीहन, वाधन, आमानस्य, विवाधन, विद्वेष्टन, विधानक, पीडित, छाद्य और अशर्म है । अर्थ प्रतीति व्यवहित (अलग) होनेसे कष्ट वा क्लिष्टता दोष कहलाता है,—

“ क्लिष्टत्वमर्थप्रतीतिव्यवहितम् ।” (साहित्यदर्पण ० ५०)

इसका उदाहरण ‘चीरोदजावसतिजन्मभुवः प्रसन्नाः’ वाक्यमें मिलता है । उक्त वाक्य ‘जल प्रसन्न है’ अर्थमें प्रयोग किया गया है । किन्तु सहजमें उसके समझनेका कोई उपाय देख नहीं पड़ता । चीरोदजा लक्ष्मी, उनकी वसति पद्म और पद्मका जन्मस्थान जल है । अतएव यहाँ पर क्लिष्टत्व वा कष्टदोष लगता है ।

(अर्थ) ७ इन्त । हाय ।

कष्टकर (सं० त्रि०) कष्टं करोति, कष्ट-कृ-ट । १ पीडा-जनक, ददं पैदा करनेवाला । २ दुःखजनक, तकलीफ देनेवाला ।

कष्टकल्पना (सं० स्त्री०) कष्टेन कल्पना, कठोर अनुमान, कड़ी अन्दाज । जिसे देख करनेमें कष्ट पड़ता और जो सहजमें कल्पनापर नष्ट चढ़ता, उसे विद्वान् कष्टकल्पना कहता है ।

कष्टकल्पित (सं० त्रि०) कष्टेन कल्पितं रचितम् । कष्टसे बना हुआ, जो सुशूलनसे ठीक किया गया हो ।

कष्टकारक (सं० त्रि०) कष्टकार म्वाद्यं कन्, कष्ट-कृ-ण्वन् वा कष्टस्य कारकः, ६-तत् । दुःखका कारण बननेवाला, जो तकलीफका सबब ठहरता हो । (पु०) २ संसार, दुनिया ।

कष्टजीवी (सं० त्रि०) कष्टेन जीवति, कष्ट-जीव-इनि । १ कष्टसे जीविका निर्वाह करनेवाला, जो सुशूलनसे काम चलाता हो । २ अनेक भोग कर बचनेवाला, जो सुशूलनसे बचा हो । १ पक्षिजाति, चिडिया ।

कष्टतपस् (सं० पु०) कष्टं कष्टकरं तपो यस्य, बहुव्री० । कठिन तपस्या करनेवाला, जो इंसतिफगारके सुताक्षिक अभ्यन्त करता हो ।

कष्टतर (सं० त्रि०) सापेक्ष पीडायुक्त, ज्यादा तकलीफ देनेवाला ।

कष्टद (सं० त्रि०) कष्टं ददाति कष्ट-दा-क । कष्ट-दायक, तकलीफ पहुँचानेवाला ।

कष्टरिपु (सं० त्रि०) कष्टः कष्टसाध्यो रिपुः, कर्मधा० । कष्टसे पराजय किया जानेवाला गव, जो दुश्मन सुशूलनसे हारता हो ।

“ मात्रं कुर्वन् गुरुच त्वं दातारमिष च ।

उत्तमं प्रतिनमस्य कष्टमाङ्गिं वृष ॥” (मनुस्मृतिः)

विद्वान्, कुम्भीन, बौर, दच, दाता, कृतज्ञ और धर्मशाली गवको पण्डित कष्टरिपु कहते हैं ।

कष्टलभ्य (सं० त्रि०) कष्टेन लभ्यम्, ३-तत् । कष्टसे मिलनेवाला, जो सुशूलनसे हाथ आता हो ।

कष्टप्रति (सं० त्रि०) कष्टं अति आश्रितं येन, बहुव्री० । १ कष्टपानेवाला, जो तकलीफमें हो । २ कठोर व्रत-कारक, कठे इंसतिफगारके । अभ्यन्तमें लानेवाला ।

कष्टत्रोत्रिय—वङ्गदेशके त्रोत्रिय ब्राह्मणोंका एक विभाग । शीघ्र देखो ।

कष्टसह (सं० त्रि०) कष्टं सह करति, कष्ट-सह-घच् । कष्टसहिष्णु, तकलीफ उठा सकनेवाला ।

कष्टसाध्य (सं० त्रि०) कष्टेन साध्यम्, ३-तत् । १ कष्टसे आरोग्य होनेवाला, जो सुशूलनसे अच्छा हो । २ कष्टसे पराजय किया जानेवाला, जो सुशूलनसे हारता हो ।

कष्टस्थान (सं० क्ली०) कष्टं कष्टकरं स्यागम्, कर्मधा० ।

दुःखजनक ज्ञान, धराव जगद, तद्वशीय देविवासा
शुभाम् ।

कष्टहरण पर्वत—विहार मान्ये सुहृद ज्ञिषीषा एक
पादाङ्ग ।

कष्टहरणी (स० श्री०) कौश्टदेश्यो एक नदी ।
(नल्प मन्वन् ११०) २ पञ्चदेश्ये देवीकर्मणि निवृत्त
प्रतिष्ठित देवोक्षो एक मूर्ति । (शकली ३३२२) यत्र
सुहृदश्च निवृत्त वर्तमान यौ ।

कष्टागत ((स० ज्ञि०) कष्टसि धाया इवा, श्री सुरिष्य
असि पद्म वा श्री ।

कष्टि (स० श्री०) कष्ट भाषि ज्ञि । १ परीषा, नाथ,
कषायो । अक्षिकरवे ज्ञि । २ धर्ममणि, कषोटी,
कसनेका पत्वार । ३ पौडा टर्ट, बीमारो ।

कष्टो (वि० श्री०) प्रसवका कष्ट कठानेवाश्री ।

कष्टीर (स० श्री०) रङ्ग रांया ।

कष्ट (स० पु०) कनति निवृत्तसि ज्ञादिद्विरा कस-पञ्च ।
१ धर्ममणि कषोटी सोना चाश्री कसनेका पत्वार ।

कष्ट (वि० पु०) १ कष्टका क्वित्प्रापकस्य, तद्वहार
श्री कषक । २ यत्र तद्वहारश्री शीमे पञ्चथानो जातो है ।

२ यक्षि, ताकत । नग, काशू । कुरतोका एक पेश,
यत्र 'कसकी गोदी' कदाता है । ३ पररीष, रीक ।
४ कषाय पर्व । ५ सार, निचोड । (श्री०) ६ बन्धन
रक्ष कसनेकी रक्षो । (ज्ञि० ज्ञि०) ७ क्विस प्रकार, केषी ।
कसई, कवी शोको ।

कसक (वि० श्री०) १ पौडा विरीय, एक दर्द ।
२ कौई धायात जाने पीर कषका जो जानेसे यत्र श्री
पीर ठठा करती है । ३ कसकको जमक । ४ सुरा-
तन बेर, सुरानो दुःखमो । ५ सषातुमृति, जमदर्दी ।
६ धमिबाय, जौमका ।

कसकना (वि० ज्ञि०) १ पौडा करना, दुष्कना, जम
कना, रक्ष रक्षके दर्द कठना । २ धमिय समना, सुरा
माकूम पङ्कना ।

कसका (स० श्री०) कासमर्द, कषोटीदी ।

कसकट (वि० पु०) मियचातु विरीय, एक मिलावटी
पञ्च । १ कर्म ताका पीर कषका बराबर बराबर
पङ्कता है । कसकटसि कौटे, कटोरे, धावकीरे योगेः

बरतन बनती है । किन्तु रक्षके पात्रमें पञ्च पञ्च रक्षनेसे
विगडकर विद्या हो जाता है । कसकटका दूधरा
नाम मरत है ।

कसकर (वि० पु०) जाति विरीय कासागर श्रीम ।
यत्र सुसहमान कोति है । रनका काम मष्टीके कोटे
कोटे बरतन बनाना है ।

कसन (स० पु०) कसति विनष्टि, कस ह्यु । कस
कास घासी । २ वेदना विरीय, एक दर्द ।

कसन (वि० श्री०) १ बन्धन, बंधाई, कसाई ।
२ बन्धनको रीति कसनेका तरोका । ३ बन्धनरक्षु,
कसनेको रक्षी । पशो, तङ्ग, पङ्को ।

कसनई (वि० श्री०) पक्ष विरीय, एक विद्विपा ।
१ कसा एक कष्यकर्म, कष्यकस एव कष्टदेय पाठक
पीर कषु रक्षकर्म होता है ।

कसनमर्दन (स० पु०) कासमर्दकस्य, कसोदोका पेड ।

कसना (स० श्री०) कष्यसाय कृता विरीय, एक कष
रीको मकशी । नृष शोको ।

कसना (वि० ज्ञि०) १ बन्धन करते समय रक्षु धादि
इफुतापूर्वक शीषणा, कीरये तागना, कषकना ।
२ निवृत्तसि कषाणा, दवाना । ३ बन्धन करना, बैठना,
ठिकाने मण्ड्याना । ४ क्वित्त करना, (जाको चोखा)
सत्राणा । ५ मरना, ठूसना । ६ विषणा, तनना ।
७ तङ्ग पङ्कना, कड़ा रङ्गना । ८ कषना, फुटना ।
९ प्रसृत वा तेषार ज्ञोना । १० मर जाना ।
११ कसना रमङ्कना । १२ परीषा करना, परखना ।
१३ थोटना मङ्कियाणा । १४ कषाणा जमना ।
१५ परिपञ्च करना तसना । १६ कष्ट ईना,
तद्वशीय पङ्कनाणा । (पु०) १७ बन्धन, बंधना ।
१८ मिलाय, जोड । १९ क्विमि विरीय एक कष
रोका शोका ।

कसलि (वि० श्री०) बन्धन, बंधाई, शीष ।

कसनी (वि० श्री०) १ रक्षु, रक्षी । २ मिलाय,
जोड । ३ कषकुली, बीसी । ४ धर्ममणि, कषोटी ।
५ परीषा नाथ । ६ कषोटी । ७ कायायकस्य,
कसायका कषाणा ।

कसनीत्याटन (सं० पु०) कसनं कामरोगं उत्पाटयति,
कसन-उत्-पट-णिच् ल्यट् । वासक हृद्य, अङ्गुलिका पेङ्गु ।
कसयत (हिं० पु०) १ अम्बुप्रसाद-भेद, कामा कृट् ।
२ अम्बुप्रसाद हृद्य, कृट्का पेङ्गु ।
कसव (प्र० पु०) १ वाणिज्य, तिजारत, कामकाज ।
२ परिश्रम, मेहनत । ३ व्यवसाय, पेशा । ४ व्यभि-
चार, छिनाना ।
कसवल (हिं० पु०) १ पराक्रम, छीर, ताकत ।
२ साहस, हिम्मत ।
कसवा (अ० पु०) महाग्राम, बड़ा गाँव । यह गहर-
से छोटा और गाँवसे बड़ा होता है ।
कसवीती (हिं० वि०) महाग्राम मध्यस्वीय, बड़े
गाँववाना ।
कसविन (हिं० स्त्री०) १ वेश्या, रग्रे, देहार्ती
पतुरिया । २ व्यभिचारिणी, छिनाल ।
कसवी, कसरिन ईश्वर ।
कसम (अ० स्त्री०) ग्रपद्य, किरिया, सौगन्द ।
कसमसाना (हिं० क्लि०) १ छिलना छुलना, ससकना,
भाराम न मिनना । २ ऊब उठना, बवरा जाना ।
३ छिचकना, छिन्नत न पडना ।
कसमसाहट (हिं० स्त्री०) उकताया, घबराहट ।
कसमसी (हिं० स्त्री०) कसमसाहट, कुलकुलाहट ।
कसर (सं० स्त्री०) १ तूट, कमी । २ दैन, दुग्मनी ।
हानि, नुकसान, घटी । ४ दोष, पेव ।
कसर (हिं० पु०) हृद्यविशेष, कुसुमका पौदा ।
कसरत (अ० स्त्री०) १ व्यायाम, मेहनत । २ अधि-
कता, बहुतायत, बढती ।
कसरती (हिं० त्रि०) परिश्रमी, मेहनती, कसरत
करनेवाला ।
कसरवानी, विहारके बनियोंकी एक गाखा । कसरवानी
बनिये ६६ श्रेणियोंमें विभक्त हैं । उनमें प्रधान प्रधान
यह हैं,—सगीना, बगीला, कथौतिया, पावकड़ेना,
चान्नाबिया, चौसवार, मान्नाटिया, लौंगभाराभरी,
सोनचडा, पेकदाही, सोनाल, तारसी और तिरुसिया ।
यह अपनी अपनी श्रेणी या पाँच पीढ़ीके सम्बन्धमें
विवाह करते हैं । इनमें बाह्यविवाह प्रचलित है ।

पुरुष बहू विवाह भी कर सकते हैं । विधवाविवाहमें
यह कोई दोष नहीं देखते । कसवानी प्रायः वैष्णव
होते हैं । विष्णु व्यतीत ग्रामदेवता 'बन्नी' और 'सुष्वा'
गम्भूनाथकी भी पूजा की जाती है । अधिकांश
दुकानदारोंका काम चलते हैं । कुछ लोग खेतोंमें
भी लगे हैं । तेनी या सुसममान्के हाथ यह कमी
गाय नहीं बचते ।

कसरहटा (हिं० पु०) हृद्यविशेष, कसेरोंका चाजार ।
इसमें पात्र बना और बिका करते हैं ।

कसणीर (वै० पु०) सर्पविशेष, एक माँव ।

(पदसंश्लेषण १०१५)

कसनो (हिं० स्त्री०) समित्व भेद, किमी किम्पका
फायडा । यह सुद्र और सूत्रापविशिष्ट होती है ।

कसवाना (हिं० स्त्री०) कसाना, कसनिका काम दूरसे
कराना ।

कसवार (हिं० पु०) इक्षुभेद, किमी किम्पकी जग ।
यह प्रायः छेद इक्षु मान् (मोटा) होता है । त्वक्
धूसरवर्ण और फटोर निकलती है । सारभागमें रस
भरा रहता और तन्सु कम पडता है ।

कसदंड (हिं० पु०) कांक्षपाचका क्रिय भिय चंग,
कांसिके टूटेफूटे धरतनोंका छिन्ना ।

कसदंडा (हिं० पु०) कांस्य या पित्तन पात्रभेद,
कांसि या पीतलका एक वरतन । यह प्रयस्त होता
है । उल्लावादिके समय कसदंडेमें पानी भरकर रखा
जाता है ।

कसदंडी (हिं० स्त्री०) कसदंडा ईश्वर ।

कसा (सं० स्त्री०) कसति ताडयति, कस-अच्-टाप् ।
अग्नादि ताडिनी, चावुक, कीडा ।

कसाई (हिं० पु०) १ घातक, मारनेवाला । २ गो-
घातक, कप्लाव, वृचड । (वि०) ३ निर्दय, वेददं ।

कसाना (हिं० क्लि०) १ कपायरसविशिष्ट होना,
कसेलापन आना, बिगड जाना । २ कपायित लगना,
कसेला मालुम पडना । ३ कसवाना, सजवाना ।

कसाब्जु (सं० स्त्री०) पिष्टलोककी कथ्यदानके समय
दिया जानेवाला जल ।

कसार (हिं० पु०) आद्यविभिय, पंकोरो । वीने सुमा
 पीर बोनी मिहा पाठा कसार कइता है ।
 कसाका (हिं० पु०) १ ज्येय, तक्षसौक्य । २ पश्चिम,
 मिहगत । ३ पशुमेध, एक कटावो । कसने कसबेकार
 पलहारदि परिष्कार करते हैं ।
 कसाव (हिं० पु०) १ कपायता, कसेलापन ।
 २ आकर्षण, खिंचाव ।
 कसावट (हिं० स्त्री०) आकर्षण खींचना ।
 कसावड़ा (हिं० पु०) मोघातक, कसाई ।
 कसिपु (सं० पु०) कस्यति शक्ति दुःखम् निपातनाच्
 सिद्धम् । एक, बाबल मातु ।
 कसिया (हिं० स्त्री०) पश्चिमिय, एक बिड़िया ।
 यह बुरखे होतो पीर राजपुताने तथा पञ्जाबको
 छोड़ मारतबर्षे सख्त मिलतो है । इसका कुसाव
 (सोसका) इसको कस गाथा पर बनता है । पण्ड
 पीताम होते हैं ।
 कसिबाना (हिं० स्त्री०) कपायित हो जाना, कसाना ।
 कही भीम लवि का पीतनके बरतनमें रखनेके कसाने
 लगतो है ।
 कसो (हिं० स्त्री०) १ रज्जु मेद, एक रज्जो । इससे
 मूमि गायो जाती है । रोष्वं माय ही पद (यवा
 ३८ इच) पड़ता है । २ इसका पपमान, पास ।
 ३ पवित्रक इच, एक पीसा ।
 माघोन कालको इसका एक वैदिक बधर्म लगता
 था । कसो कविता एक इच्छा रही । वर्तमानमें
 इसको कवि बन्द हो गयो है । फिर भी मध्य
 प्रदेश सिद्धिम पाषाण पीर ब्रह्मदेयके अङ्गुली
 खोन कसो लगते हैं । यह मारत, ब्रह्म, मखर, चोन,
 जापान प्रधति देसोंमें बन्ध पबक्या पर पायो जाती
 है । कसो कई प्रकार को जाती है । दा मेद प्रवान
 हैं, खेतवर्ष पीर कल्पवृक्ष । यहाँ कसु इसको
 कर्पासिका बमय है । भूलसे कसरे वार शाकरो
 फूटतो है । फल गोक सुदीर्घ पीर एक पीर तोल्लाघ
 रहते हैं । लक कठिन पीर बिबध होती है । खेत
 धारको रोडो बनतो है । फल भून कर धारको
 मङ्गुको नाति खास भी है । फिर पपक धारके

दुबड़े भातमें भी पड़ते हैं । यह कास्यकर पीर
 सुसातु होतो है । जापान पादि देसोंमें कसोवे मध्य
 प्रगत बिबा जाता है । बोबको पीपबमें कसते हैं ।
 दार्जिली मासा बनतो है । मेवाकके बाक सोम कसोके
 मोक टाकरोंको म्हासरोमें डीबते है ।
 कसियाङ्गी, बङ्गाल प्रान्तके मैदिनोपुर जिलेकी तमकुल
 तक्षसौलका एक पाम । यह पचा० २२ ७' २३'
 ७० पीर देसा० ८० १३' २०" पू० पर पवक्षित है ।
 कसियाङ्गी वाबिन्धप्रधान खान है । यहाँ तसरकी
 कवि होतो है । तसरके क्पसायसे हो कसियाङ्गी
 बिख्यात है ।
 कसोदा (हिं०) कसोदा ईशो ।
 कसोदा (प० पु०) कविताविद्येय कियो बिब्यकी
 मायरो । यह कसे या पारसोमें बनाया जाता है ।
 इसमें क्पक्षिविद्येयकी मृति वा निम्हा रहतो है ।
 कसोदेमें कससे कस १० पंक्तिवां पड़तो हैं ।
 कसोब (हिं०) कसोन ईशो ।
 कसून (हिं० पु०) पयमीद, सुसोमानो बोड़ा । इसको
 पाँचें कसो होतो है ।
 कसुमर (हिं० पु०) कुसुम कुसुम ।
 कसुर (प० पु०) पपराब, खाता, चूब ।
 कसुरमन्द (का० वि०) पपराबो, सतावार ।
 कसुरवार कसुमर ईशो ।
 कसरबडा (हिं० पु०) कसेरोंका बाजार, कसरबडा ।
 कसरप (हिं० पु०) सुखप्रदेय पीर बिधारके बनिवोंकी
 एक जाति । यह कसि पीर कुस बसेरइके वर्तन
 बनाबना ऐवते है ।
 कसेब (पु० स्त्री०) कसेर ईशो ।
 कसेबका (सं० स्त्री०) कसेर ईशो ।
 कसेब (हिं०) कसेर ईशो ।
 कसेबा (हिं० पु०) १ मज्जून वांभनेमाठा, जो कस
 देता है । २ परीपक आचनेपाका । ३ मोघातक
 कसाई ।
 कसेका (हिं० वि०) कपायपत्र विविध, कसामेपाका,
 जो बीमको रीठता या शिकोड़ता है । कपाय इक
 लक्षमें पाक करमेके कसा बर्ष बनता है ।

कसूर, पञ्जाब प्रान्तके लाहौर जिलेकी अपनी तहसील और प्रधान नगर। यह अक्षा० ३१° ६' ४६' उ० और देशा० ७४° २०' ३१' पू० पर अवस्थित है। लाहौर नगरसे कसूर ३४ मील दक्षिणपूर्व फीरोजपुरको सड़क पर पड़ता है। पहले सिन्धु नदीके पूर्वसे पठान लोग आकर यहाँ बसे थे। १७६३ और १७७० ई० की सिधेने आक्रमण मार कुछ दिनके लिये पठानोंको दबाया, किन्तु १७८४ ई० की उन्होंने फिर अपना पूर्वाधिकार पाया। अन्तपर १८०७ ई० में नवाब कुतब-उद-दीन खानको रणजित्सिंहने हरा कसूर लादारसे मिला दिया। यहाँ घोड़ेका साजसामान बनता है। किसी डिपटी कमिश्नरकी प्रसिद्धित ग्लिम्पगालमें नमदे और कालोन तैयार होते हैं। सिन्धु, पञ्जाब, दिल्ली रेलवेकी रायविन्द-फीरोजपुर शाखा इसे लाहौर और फीरोजपुरसे मिलाती है। अतिरिक्त अस्मिष्टक कमिश्नरकी कचहरी, तहसील, पुलिसका थाना, पाठागार, चौपघानस्य और डाक वगना विद्यमान है। देशीय द्रव्यके व्यवसायका कसूर केन्द्रस्थान है। बड़ी सड़के पक्की बनी हैं। पानी निकलनेका बड़ा सुभौता है। लोगोंके कथनानुसार मर्यादा पुरुषोत्तमके पुत्र कुशने कसूर बसाया था।

कमेरा (हिं० पु०) कांस्यकार, कांसिकी बीजे बनाने और बचनेवाना। यह एक वणिक् जाति है। संस्कृत पर्याय कंसकार, कंसवणिक और कांस्यकार है। इस जातिकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें मतका भेद लक्षित होता है। ब्रह्मवेवर्तपुराणके ब्रह्मवर्णनमें लिखा है,—

किसी समय विष्णुकर्मा स्वर्गकी वेश्या घृताचीकी देव कामके शरसे पीडित हुये। उस समय घृताची कामदेवके निकट जाती थीं। विष्णुकर्माने अपना अभिलाष उनको बता कर कहा, 'हे सुन्दरी! हमने कामदेवमें कामशास्त्र पढ़ा है। हमारी इच्छा पूर्ण कीजिये। हम आपको विविध अलङ्कार देंगे।' घृताची बोल उठी, 'देवी! आप कामदेवमें कामशास्त्र सीखनेकी बात कहते हैं। इस समय हम उन्हीं कामदेवके चित्तरञ्जनना जा रही हैं। आज हम तुम्हारे गुरु कामदेवकी पत्नीके स्थानमें हैं। ऐसे स्थल पर

हमारी कामना करनेसे आपको गुरुपत्नीके गमनका महापातक लगेगा। हम किसी प्रकार आज आपको प्रस्तावमें मग्न हो नहीं सकती।' विष्णुकर्माने घृताचीकी बातसे पत्यन्त घबरा गाप दिया था, 'तुने मेरा मनोरथ पूर्ण न किया। अब मेरे अमोघ गापके प्रभावसे मर्त्यलोकमें शूद्राके गर्भमें तुम्हें जन्म लेना पड़ेगा।' फिर घृताचीने भी विष्णुकर्माकी गापित किया 'तू भी मेरे गापमें स्वर्ग छाड़ नरनोकेमें जाकर उत्पन्न होगी।' घृताची नरनाकेमें शूद्राके गर्भमें जन्म ले मटनगोपकी पत्नी बनीं। उधर विष्णुकर्मा किसी ब्राह्मणके घर उत्पन्न हुये। घटनावश मटनगापकी स्त्रीमें ब्राह्मणरूपी विष्णुकर्माने सङ्घाम किया था। उससे नौ पुत्रोंने जन्म लिया। उन्हीं नौ पुत्रोंमें मानाकार, कर्मकार, कंसकार (कमेरा) प्रभृति नौ जातियां बनीं हैं। मानाकार, कर्मकार गद्गकार, तन्तुपार, कुम्भकार, और कंसकार (कमेरा) कष्ट जातियां प्रधान हैं। * बृहद्वर्मपुराणके मतमें ब्राह्मणके औरस और वैश्याके गर्भमें पम्बठ, गन्धवणिक, गद्गकार और कामकार (कमेरा) जाति निकली है।†

भार्गवशराम विरचित जातिमानामें लिखा है,
"गान्धिकः गान्धिकश्चैव कांसिको मणिकारकः।
सुवणवणिकश्चैव पश्चेति वणिजः स्मृताः ॥"

वणिक चर्यात् अनिया जाति पांच प्रकारकी है—गन्धवणिक, गद्गवणिक, कंसवणिक (कमेरा) मणिकार और सुवणवणिक। गन्धवणिकके औरस तथा गद्गवणिककी कन्याके गर्भमें ताम्र और कांस्य उपजीवी कंसवणिक (कमेरा) जाति उत्पन्न हुयी है।

भार्गवशरामके मतानुसार विनामक्रम पर अपर

* "विश्वकर्मा च शूद्रायां वीर्यायां चकार म"।

ततो बभूवु पुत्रस्य नभेने सिन्दुकारिणः ॥

माशाकार-कर्मकार गद्गकार-कुम्भकार।

कुम्भकार-कंसकार, पश्चेति सिन्धुना बरा ॥"

(ब्रह्मवेवर्तपुराण, ब्रह्मवर्णन, १०।१८-२०)

† "देश्यायां ब्राह्मणात्ततः पत्न्यतो गान्धिकी वणिकः।

कंसकारगद्गकारी ब्राह्मणात् स बभूवु ॥" (बृहद्वर्मपुराण)

जातिवैधे संस्कारमें कसवदिक (कसेरे)से निश्चिन्त जातियां निश्चिन्ती हैं—

“वर्जितान् कर्त्तव्यमनां कर्त्तव्यकारं वलन्ते ।
 कर्मन्वापन्नं कर्त्तव्यतां सुखं नीतिवीं वनेषु ॥
 कर्त्तव्यतां कर्त्तव्यतां योऽपन्नं न वदन्तः ।
 नीतिवत्तुं कर्त्तव्यतां नैवेदितात्तुं निश्चिन्तः ॥” (अद्वैतब्रह्म)

गृह्यसूत्रके घोरस एवं कसवदिककी कन्याके गर्भसे मरिचकार, कसवदिकके घोरस तथा मरिचकारको कन्याके गर्भसे सुवर्णवर्षिक, सुवर्णवर्षिककी कन्याके गर्भ एवं कसवदिकके घोरसमें सोपान घोर गोपालके घोरस तथा कसवदिककी कन्याके गर्भसे तीसी तंबोकी बूजे हैं।

विष्णु कसेरे अपनेको प्रकृत वेदज्ञाति बतवाते हैं। वास्तविक शिल्पियों घोर कधिकोंमें इनका सम्मान कुछ कम नहीं। यह यज्ञापरोत व्यवहार करते हैं। उपाधिके सिद्धे कसेरोंमें सात शाखायें हैं, १ पुरविहा, २ पक्षेडा, ३ गोरसपुरी ४ तट ५ तांबरा, ६ भरिहा घोर ७ गोलर।

उक्त शाखाओंमें परस्पर पादान प्रदान घोर पाचार व्यवहार प्रचलित नहीं। मिर्जापुरमें कसेरे पवित्र देय पकृति हैं। वहाँ यह कसिके पात्र प्रकृति प्रगुत कर दूर देगान्ताको विजनेके लिये भजते हैं।

विहार पक्षके कसेरे विष्णुजामी कसेरोंको मति पदमर्वादा पान सक्ते भी ठठेरे कसेरे वृत्तरे कनियोंके कुछ घोर मोहमें न्ये हैं। ठठेरे कसेरे कन्याके द्रव्य पर खोदायो करती हैं। श्रेय ईशः।

विहारके कसेरोंमें अपनेक मोक्ष जनते हैं—जनो बिया कसेया, चौपना, चौहरा, हरिहरना, ककड़ मकोबिया सङ्घवा, मकोबिया, मोहरिया सुकरिया घोर सुषट। यह अपने गोत्रमें विवाह कर नहीं सकते। फिर कन्याका विवाह वाक्यकानमें हो करता पकृता है। कमी कमी कन्याका वयस कुछ अधिक हो जाता घोर अतुमतो बनने पीछे लछे पतिवा सुख देखाता है। श्री रत्ना अतवत्ता, मृगुगर्मा पद्मवा कन्या होमें पर सुख सतन्व पत्नीको वरव कर सकता है। विवाहायें मनमें धामेके ‘कनार्थ’ प्रकाशे अनुसार अपनी विवाह

नमीर रात्रिको पन्थकार घटमें होता है। लघमें किवच विवाहायें ही जातीं, सुखवायें अपवित्र समझ देकने नहीं पातीं। सुख सिन्धूर चढ़ा विवाहाको अपने पत्नीलक्षमें पक्ष करता है। मोक्ष पामीह प्रमोद घोर शास्त्रके धर्मकर्मका पभाव रहता है। समाजमें रहने सत्सुद कसते हैं। ब्राह्मण इनके हाथका पामी पी सकते हैं।

वृद्धदेयके कसेरोंमें पद कर घोर गोत्र प्रचलित है—पद—कुप्ट, प्रमाविक दाघ र्ना, पाक्ष नन्दन, दे रत्नादि। घर—सप्तपामी सुखपदाबादी, मोता सेती।

गोत्र—गृह्य कवि शास्त्रिक सप्तवर्षि, कदविकिय, दक्षि कवि।

विवाहादि कार्यपर रहने बियन वातुमें गिरना पकृता है। सब धरोको निमन्त्रण देना पावश्यक है। मोक्षका बड़ा पायोजन होता है। इसीसे गुरीव कसेरे एक ही साध पाठ कन्याओंका विवाह कर कासते हैं। बहूको कसेरोंमें विवाहविवाह नहीं पकृता। घोर भाद्रमानमे १० वे दिन विवाहकर्मकी पूजा होती है। उस दिनको कोयो कसेरा यन्त्रादि नहीं कृता।

बम्बरके कसेरे अपनेको कार्तिकारी कमीव कसिय शैनापतिके घोरस घोर कसिवाकोके गर्भसे उत्पन्न वताते हैं। शूद्रोंको अपेक्षा यह कुछ, मोक्ष घोर मानमें बहुत न्ये है।

कसेलापन (चिं० पु०) कयावरस शाकपन।
 कसेबी (चिं० श्री०) पूयपक्ष, सुपारी।
 कसेरा (चिं० पु०) कसेरा, प्याहा।
 कसेर्रा (चिं० पु०) कासमर्द भेड, एक घोदा। यह वर्षों अतुमें लपकता घोर तीन बार हाथ कसे उठता है। पत्रक एक धुविर (सीके)में परस्पर सङ्घुषोन पाते घोर प्रयत्न तथा मोक्षाय देखाते हैं। शीतकाल इससे पुकनेका समय है। एक कक सात पङ्क्ति दीर्घ एक समान होते हैं। मोक्ष एक दिक् तीर्याप रहते हैं। रत्नवर्ष कसेर्रा सतत हरिन्नु हय है। पत्र घोर सुप्य रत्नान होते हैं। यह कट्ट, कष्य घोर कष्य, वात तथा काय नायक हैं। मोक्ष इसका माध भी बनारी

हैं। रक्तवर्ण कसौंजिके पत्र और वोज अर्शरोगमें औषधकी भांति व्यवहृत होते हैं।

कसौंजी (हिं० स्त्री०) कसौंजा देखो।

कसौंदा, कसौंजा देखो।

कसौंदी (हिं० स्त्री०) कसौंजा देखो।

कसौंटी (हिं० स्त्री०) अर्शमणि, चांदीसोना कसनेका पत्थर। यह काली होती है। गालग्राम कसौंटीके वनते हैं। लोग इसके खरस भी तैयार करते हैं। २ परीक्षा, जांच।

कसौली—पञ्जाबके शिमला जिलेका एक सैन्यवास (छावनी) और निरामय स्थान। यह एक पर्वतके शिखर (अक्षा० ३०° ५३' १४" उ० तथा देशा० ७६° ०' ५२" पू०) पर अवस्थित है। कालिकाकी उपलका नीचे देख पड़ती है। कसाली अम्बालेसे ४५ मील उत्तर और शिमलेसे ३२ मील दक्षिण-पश्चिम लगती है। १८४४-४५ ई०की देशीय राज्य बीजासे भूमि ले यहाँ छावनी डाली गयी थी। उस समयसे वरावर कसौलीमें अंगरेज सिपाही रहते हैं। पर्वत समुद्रतलसे ६३२२ फीट ऊँचा है। इससे दक्षिणपश्चिम समभूमि और उत्तर हिमालयका दृश्य अत्यन्त मनोहर लगता है। यहाँ कुकुट और शृगाल आदिके विषकी चिकित्सा होती है।

कस्कादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त गण विशेष। इसमें विसर्गस्थानपर नित्य 'स' होता है। कस्कादिके शब्द यह हैं,—कस्क, कौतस्कृत, भ्रातृप्युत्र, शनस्कण्यं, सद्यस्काल, सद्यस्त्री, साद्यस्त्र, कास्कान्, सर्पिप्लुण्डिका, धनुष्कपाल, वहिप्यल, यजुप्यात्र, अयस्कान्त, तमस्काण्ड, अयस्काण्ड, मेदस्यण्ड, भास्कर, अहस्कार और आहतिगण। (पा० ८। १। ४८)

कस्तभी (वै० स्त्री०) कं शिरोऽग्रभागं स्तभ्राति, कस्तन्भ-अण्-ङीप्। शकटका अग्रः पत्तन रोकनेकी एक अवष्टम्भ, गाडीके बांसकी धूनी।

कस्तूरी (हिं० स्त्री०) दुग्धपात्रभेद, एक वरतन। इसमें दूध पकाकर रखा जाता है। सुख विस्तृत रहता है। फारसीमें इसे 'कसा' और साधारण हिन्दीमें 'दूधहँसी' कहते हैं।

कस्तूरी (सं० स्त्री०) पिच्छट, रांगा। इसका संस्कृत पर्याय—पुत्रपिच्छट, मृदङ्ग, वज्र, रङ्ग, त्रपुः, स्वर्णज, नागजीवन, गुरुपत्र, चक्र, तमर, नागन, शालीनक और सिंहल है। रङ्ग देखो।

कस्तूर्य (सं० स्त्री०) रङ्ग, रांगा।

कस्तूरिका (सं० त्रि०) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप्-ष्टपो-दरादित्वात् साधुः। कस्तूरिका मृग, एक हिरन। इसकी तोंदीसे कस्तूरी निकलती है। कस्तूरिकाभृग देखो। २ कस्तूरी, मुशक।

कस्तूरमल्लिका, कस्तूरमल्लिका देखो।

कस्तूरा (हिं० पु०) १ कस्तूरी, मुशक। २ सन्धिभेद, एक जोड़। यह जहाजी तख्तोंमें पड़ता है। ३ शक्ति भेद, एक साप। इसमें मोती रहता है। ४ पक्षि-विशेष, एक चिडिया। यह धूसरवर्ण होता है। पद तथा चक्षुका वर्ण पीत लगता और उदर खेताभ रहता है। कस्तूरा पार्वत्य प्रदेशमें काश्मीरसे आसाम तक मिलता है। इसकी बोली सुननेमें अच्छी लगती है। ५ द्रव्य विशेष, एक चीज। इसे पोर्टवलेयरके पर्वतोंकी शिलारोंसे खुरच-खुरच निकालते हैं। कस्तूरा अत्यन्त मूल्यवान् होता है। इसे दुग्धके साथ २ रत्नी सेवन करते हैं। लोग इसे अवाधीस पक्षीके मुखका फेन समझते हैं।

कस्तूरिक (सं० पु०) करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़।

कस्तूरिका (सं० स्त्री०) कस्तूरी स्वार्थे कन्-टाप्-ष्टपो-दरादित्वात् ङस्त्रः। कस्तूरी, मुशक।

कस्तूरिकाण्डज, कस्तूरिकाण्ड देखो।

कस्तूरिकाभृग (सं० पु०) एक प्रकार हरिण, मुशकी हिरन। तलपेटके निकट नामिमें कस्तूरी सञ्चित रहने और शरीरसे कस्तूरिका गन्ध निकलनेसे ही इसको कस्तूरिकाभृग कहते हैं। संस्कृत पर्याय—कस्तूरीभृग, गन्धवाह और गन्धभृग है। भारतवर्षमें प्रति पूर्वकालसे यह मृग परिचित और समाहृत है। प्राचीन शास्त्रकारोंने पाँच प्रकारके मृग कहे हैं। कस्तूरिकाभृग 'पार्थिवभृग'के अन्तर्गत है।

“प्रथम्यपवापुगगणके शोऽभिहास्य पञ्चधा।

सिपयस गंभेदाद्य समस्ता मृगजातयः ॥

३ बलिना पीपरतिरवर्षे बर्षेण वनस्पत इतिच ॥”

(इतिचलत्तर)

शृगजाति एक प्रकार नहीं। पार्श्वियमम जलशृग बाहुशृग, यमनशृग और तीक्ष्णशृग पाँच भेद विद्यमान हैं। जिस शृगका शरीर एवं कर्ण बौच तथा गन्ध विभिन्न देखाता, वह पार्श्विय मन्थशृग कहलाता है। वन हीकी। इसी मन्थशृगका शृगर नाम कस्तूरिकाशृग है। कस्तूरिकाशृग रोमन्थ (पाशुर करनीवासी) शृगपद पशुओंमें परिगणित हैं। यह साधारण हरि चोंकी भाति नहीं होता। दूसरे हरियोंके बड़े बड़े लीन रहती हैं। किन्तु इसकी बह देह नहीं पड़ती। फिर भी यति जावमान मिलकुल हरियोंकी ही भाति है। इसीके यह विभिन्न जातीय हरिय कहलाता है। हरियोंकी भाति बहकी मुखमें इसकी पश्चिद्धि नहीं होते। इसकी छोड़ शरीर चौंइकी गालकी दोनों पार्श्वमें इसकी दो गन्धदन्त दो-तीन पशुवि बाहर निकल पाते हैं। शोमशृग करनिके शृगपुच्छके पालकीकी भाति कर्णय जगती है। कस्तूरी कीके लिये इसका शतना शहर है। कस्तूरी नामक शृगमि दम्ब बहू दिनके भारतवर्षमें प्रचलित है।

“कस्तूरिकान्तर्दिपर्वे हरिर्षीरे ॥” (शृग)

पहली भारतवर्षमें तीन जगह तीन प्रकारका कस्तूरिकाशृग मिलता था। खानभेइके कस्तूरीका भी तातक्य रहा। काश्मीरपण्डित नरहरिके विर चित निष्कस्तूरीय नामक पत्रमें लिखा है,—

“बलिना विहया कथा कस्तूरी लियेना यथा ।
 शीतलैर्षि कस्तूरीके कस्तूरैर्षि जगती ।
 कस्तूरैरवा बौंहा र्षिपत्नी गन्धक वरिण ।
 कस्तूरीरवर्षका कस्तूरी शृगका कृष्ण ॥”

निपाच, काश्मीर तथा कामरूप तीन प्रदेशमें खपिशा, पिङ्गना एवं कृष्ण तीन प्रकारकी कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी सर्वोत्कृष्ट एवं कृष्ण कर्ण, निपाचकी मध्यम तथा नीलकर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी खलम एवं खपिनकर्ण रहती है। लक्ष प्रमाणा द्वारा समझ पड़ता—पूर्वकालमें कामरूप निपाच और काश्मीरमें मिश्रप्रकारका कस्तूरीशृग रहता।

था। पश्चिम टीकाकार मङ्गिनाथकी मतमें हिमाचल प्रदेश ही इस जातीय शृगका प्रधान वासस्थान है,—

“अथर्ववेद कस्तूरी मन्थके कल दीपपरिहासयित्कुञ्ज
 दिन दिनप्रारम्भे वन्य वन्य कस्तूरी प्रतीति गन्ती ॥”

(इतिचलत्तरके शृगर मङ्गिनकपद टीका १ । ३४)

यह शृग चीनकाकर्म समुद्रके ८००० फीट लंबे खान पर शहरैरियां मध्य एशिया एवं हिमाचल प्रदेशमें उद्भिचमें और पासाममें देव पड़ता है। सबल खानोंकी खपिशा तिक्तत देशिय कस्तूरिका शृग पश्चिम पादरबौय है। इसे तिक्ततमें ‘का’ एवं ‘लव’, काश्मीरमें ‘शेष’, लुनावरमें ‘विना जिन्दुखानमें ‘कस्तूरी’, मन्थाराइमें ‘पिगोरी’ और ईरानमें ‘मुयक’ कहती है। इसका शरीरकी वैज्ञानिक नाम मुसकसुसुचिदिरस (Moschus moschiferus) है।

यह इन्हीं पीटकी पश्चिम बसा नहीं होता। बरमें कृष्णकर्ण रहता है। बौच-बौच बाह और पीठे हाग पड़ जाती हैं। गन्धदेम पीताम खपता है। [शुभ्र] (पुष्प) कोरि एक इक्ष दीर्घ देखाता है। खोपुचय] दोनोंके पुष्प पर से बसा पशुना लोम और निव भायमें पय्य रहता है। बकुमिपर सुदृषका लोम या पय्य बड़ जाता है। वयभात सुदृषकी श्वेत मांसिके ही कस्तूरी निकलती है।



कस्तूरिका मृग ।

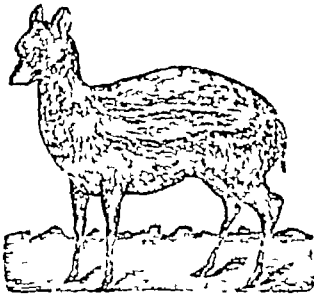
यह पति भोज, निरोह मालुब और निर्बलप्रिय है। निबिडु परल और भागवके ‘पगम्य कपलका प्रदेशमें इसकी विचररथकी मृमि बजती है। शिकारी बड़े कष्टके शर पकड़ कर सकती है। किसी प्रकार

पकड़ सकते; वह इसका नाभि काट लेते और अधिक मूल्य पर व्यवसायियोंके हाथ बेच देते हैं।

कस्तूरिकासृगका नाभि (musk-bag) कबूतरके छोटे अण्डेकी भांति होता है। आकार एककसे मिलता है। प्रसिद्ध भ्रमणकारी टाभाणिआरने ७६७२ नाभि संयुक्त किये थे।

यह पर्वतजात सामान्य तृण खा जीवन धारण करता है। चारो पैर अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। दूरसे जङ्घादिका भेद समझ नहीं पडता। इसीसे लोग कहते, कि कस्तूरिकासृगके घंटने नहीं रहते।

भारत महासागरीय द्वीपोंमें इसकी भांति दूसरे भी कितने हो चुद्र पशु हैं। किन्तु उनके नाभिसे कस्तूरी नहीं निकलती। सुमात्रा तथा यवद्वीपमें वल्लु चुद्र अर्धहस्तपरिमित हिरणको कहीं 'सेन्नेटन' और कहीं 'नेपू' कहते हैं। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम ट्रागुलस जवनिक्स (Tragulas Javanicus) है।



कस्तूरी सृगसदृश हिरण।

यह यवद्वीप-वासियोंको अत्यन्त प्रिय लगता और पालनेसे बहुत हिलता है।

कस्तूरी (सं० स्त्री०) कसति गन्धो ऽस्याः, कस्-ऊर-तुट्-डोपि षुषोदरादित्वात् साधुः। सुगन्धि द्रव्यविशेष, सुशक, एक खुशबूदार चीज। कस्तूरिकासृग देखो। इसका संस्कृत पर्याय—सृगनाभि, सृगमद, मृग, मृगी, नाभि, मद, वातामोद, योजनगन्धिका, मदनी, गन्ध-केलिका, वेधसुख्या, मार्जारी, सुभगा, बहुगन्धदा, सहस्रवेधी, श्यामा, कामान्धा, मृगाङ्गजा, कुरङ्गनाभि, सलिता, श्यामला, मोदिनी, कस्तूरिका, कस्तूरिका, नाभी, लता, योजनगन्धा, मार्ग, गन्धबोधिका, कालाङ्गी,

धूपसधानी, मिथ्या और गन्धपिशाचिका है। कस्तूरी-सृगके नाभि (एक छोटी थैलीके पाकारमें) रहता है। उसीमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। इसीसे लोग इसे सृगनाभि (नाफा) कहते हैं। अरबी और फारसी सुशक, बंगला, तामिल तथा तेलगु कस्तूर, यव एवं मलयमें दिदेग, सिङ्गली सत्ता, ब्रह्मी टो, चीना गिहियद्र, रूसी सुस्कस, इटालीय सुसचिची, जर्मन विसम्, पोर्तुगाल अल मिस्कार, पोलन्डका मस्क, डेनमार्क दिस्मेर, फारासीसी मस्क और अंगरेजी नाम मास्क हैं। सृगनाभि कुछ उष्ण होती है। आन्वात कट्टू लगता है। सुगन्धमें कस्तूरी शालनिसे विपुल सद्गन्ध निकलता है।

प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंमें भूरि भूरि प्रमाण मिलता कि भारतवर्षमें बहुत पूर्वकाससे सृगनाभिका आदर है। प्राचीन वैद्यक मतसे कामरूप, नेपास और काश्मीर तीन देशोंमें कस्तूरी उत्पन्न होती है। कामरूपकी कस्तूरी सर्वोत्कृष्ट और सृष्णवर्ण रहती है। फिर नेपालकी मध्यम एवं नीलवर्ण और काश्मीरकी कस्तूरी अधम तथा कपिसवर्ण ठहरती है। यह पांच देशोंमें विभक्त है—खरिका, तिनका, कुलत्या, पिता और नायिका। (भाष्यभाग) राजवल्लभके मतसे कस्तूरी सुगन्धि, तिक्त, चक्षुके लिये हितकर, और सुखरोग, किलास, कफ, दौर्गन्ध्य, घन्ध्यदोष, अलक्ष्मी, मल, रक्तपित्त तथा हृदिनाशक है। दूसरे भावप्रकाशमें इसे कट्टू, चार, उष्ण, शक्तजनक, गुरु और शीत तथा शोषनाशक भी कहा है।

पहले युरोपके लोग कस्तूरीका विषय समझते न थे। ई० प० १५०० तकको अरबों इसे युरोप ले गये। अरबी और ईरानी कस्तूरीकी सुशक कहते हैं। इसी 'सुशक'से लाटिन सुस्कस (Musculus) और अंगरेजी मास्क (Musk) शब्द निकला है।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे यह उत्तेजक और आक्षेपजनक है। खासकाश (१०से १५ ग्रेन), कास (१ ग्रेन दिनको ३।४ बार), मृगीरोग, ताण्डवरोग, धनुष्टकार, स्त्रियोंके प्रसवकालीन आक्षेप, हिष्टिरिया, मोहकार एवं तान्त्रिक ज्वर (Pneumonia), फुफ्फुसके प्रदाह (२४-३० ग्रेन) और वातरोगमें कस्तूरी विशेष

उपकारी है। बालकोंके पाचिपरोममें पचिष पाचिप
चोनेके ११ घेन कस्तूरी विचकारीके जगानिमें पच
मिलता है।

प्राक्कल तोन प्रकारकी कस्तूरी प्रचलित है—
तिथ्यतो, कसी और चीना। तिथ्यतो सर्वाङ्गकष्ट, चीना
सध्यम और कसी पचम होती है। कस देगीय दूगको
कस्तूरी उच्छेद नहीं रहती। प्यबसापो कस देगीय
सगळे नामिमें कमा देते हैं। रमस कस देगीय कस्तूरी
कीका गन्ध बहुत कुछ बदल जाता है।

सगनामि पचिष मूत्रमें विचतो है। प्रत्येक
नामिका मूत्र्य १५ या १० व० है। रसोमें प्यबसापो
मांस और रक्त मिला और क्विमि वम मैय जगा इसे
बैबते हैं। किन्तु सगनामिकी परोसा बहुत सीधी
है। क्विमि सगनामि पचिमिे क्वमिे दुर्गन्ध उठता
है। किन्तु प्रकृत कस्तूरीमें यह वात नहीं होती है।

कस्तूरिया (चि० पु०) १ कस्तूरिकाग्रा (वि०)
२ कस्तूरी मिथित, सुगन्धी। ३ कस्तूरी सद्यय वषं
विगिट जो सुम्भ रंग रचता हो।

कस्तूरिक, कस्तूरिक ईकी।

कस्तूरीकापुत्र (स० पु०) सगनामि, सुगन्ध।

कस्तूरीतिलक (सं० ली०) कस्तूरीपिण्डकम् ३ तम्।

कस्तूरीका तिलक, सुगन्धका टीका।

“कस्तूरीपत्रं मद्यप्रदम्” (विचरण)

कस्तूरीमेरवरस (स० पु०) रसविशेष एक कृष्ण।

चिद्रुम, विष, उह (चोडामा) लातीकोपक (जाय
फल), मरिच विपकी और कस्तूरी बराबर बराबर
कलमें घंटेनेसे यह पोषक प्रयुक्त होता है। मादाका
परिमाण २ रसो है। इसकी वैबनसे योनाङ्ग सविपात
हूर होता है। (प्रेतलगा) हदन् कस्तूरीमेरव
रस बनानेका विधि यह है—कस्तूरी, कर्पूर, ताम्ब,
जातको, गूडगिम्बो, रोप्य, पर्व, मुद्गा, प्रवाल, लोह,
पाठा, विङ्ग, तुम्बक गुप्ती, बाला इतिताक पचम
और पामनकी समभाग चर्बपत्रके रसमें घोटनेसे
यह रस प्रयुक्त होता है। इसे १ रसो पादूर्बके रसमें
वैबन करनेसे विषमन्वर कटता है। (प्रेतलगा)

कस्तूरीसर्जिका (स० ली०) कस्तूरी गन्धयुक्त सर्जिका

सध्यपदको०। १ सगनामि, चिरनका नापा। २ सर्जिका
पुष्यमेद, बिधी विद्यकी चमिनी। यह सगनामिवासा
होती है। कस्तूरीसर्जिका दो प्रकारकी मिलती है—
एक लता सद्यय और दूसरी एरण्डपत्रके समान।
दोनेमें फलफल पाते हैं। पुष्य और फलके बीजमें
सद्यय्य रहता है। बेग मन्नेके समानिमें इसका
बीज जामा जाता है।

कस्तूरीसग, कस्तूरिकाग्रा ईकी।

कस्तूरीमोदक (स० पु०) मोदकमेद, बिधी विद्यका
नड्ड। कस्तूरी, त्रिपण्ड, कण्टकारी, दोनो लौरक,
तिथ्यता, पककदकोकन, पत्रर उष्णतिलक तथा
कोडिकापत्रका बीज समभाग और सबके बराबर
गर्बरा डाल सद्यैय इस चुपुंकी मन्द मन्द पचिमिे
धातोरस, दुग्ध एवं कुष्माण्डरमें पाक करे। मोदक
पचपरिमित बनता है। इस मोदकको खानेसे प्रमिद
रोग धारोप्य होता है। (वैबनगात्र पत्र)

कस्तूरीवर्जिका (स० ली०) कस्तूरीगन्धयुक्त सर्जिका,
सध्यपदको०। लताकस्तूरी, एक सुगन्धदार वेल।
मावप्रकारके मतसे यह मधुर एवं तिक्त रस, शीतल,
कठ, चक्षुके लिये हितकर, मेदक और कष्ण, यक्षि
रोग, सुषुपोग तथा श्लेष्मागन्ध होती है।

कस्तूरीहरिप, कस्तूरिकाग्रा ईकी।

कस्तूरी (स० पु०) प्रतिप्रा, सद्यय, इरादा।

कस्तूर (सं० ली०) कस वन सुद, निपातनात् मध्य
सलम्। १ कस्तूराड, चबराड। २ मोड, गुय।

कस्तूरात् (स० पद्य०) विष कारकसे, बिषलिये बर्तो।

कस्तू (वि० ली०) सुरा गराव।

कस्तूर (सं० लि०) कस्तूरम्। १ समनयोड, कस्तूता
बुवा पान्। २ चिंघक प्यवार।

कस्तूरी (चि० ली०) पादुपंप, चींजतान।

यह मन्द मधुर चींजने या ताननेके पधमें पाता है।

कस्तू (चि० पु०) कर्पूरतिलक, कस्तूरको डाल। रसमें
रंगनेके लिये चमड़ा मिगाया जाता है। २ मद्यमेद,
सुरा, एक गराव। यह कर्पूरकी लक्ष्मे प्रयुक्त होता है।

कस्तूरापना (चि० ली०) दुबिया मटर, लोबिया।

कस्तूराव (स० पु०) गोवातक, कस्तूरी।

कस्मी (हिं० स्त्री०) १ खनिजभेद, एक फावड़ा। यह हाँटी रहती और मालियेके काममें लगती है।
२ मालविशेष, एक नाप। यह दो पट परिमित रहती और भूमि नापनेमें चलीती हैं।

कस् (हिं० प्र०) १ को। (हिं० वि०) २ कहाँ।
कस्का (प्र० पु०) अट्टहास, ठट्टा, गिबलगिलाहट।
कस्का देवार (फ्रा० स्त्री०) १ प्राचीर विशेष, एक लंबी दीवार। चीनके राजा मीहवाङ्गतीने चीनके उत्तर ई०से पूर्व द्वय गतालके अन्तमें फकिन, कुआङ्ग तुङ्ग और कुआमी नामक मोङ्गलोंका आक्रमण निवारण करनेके लिये इसे बनाया था। यह १५०० मील लंबी, २० से २५ फीट तक उच्च और इतनी ही प्रगल्भ है। मी-मी गडके अन्तर पर वन (बुर्ज) विद्यमान है। २ कठिन पवरोध, कही राक्ष।

कस्मिन (हिं० स्त्री०) गारा, फेनिया, घास मिली हुई गोली मट्टी। यह गच्छ फारसी भाषाके काह (घास) और गिल (मट्टी)का समाहार है।

कस्त (प्र० पु०) दुर्मिष्ठ, अकाल, पनाजकी कसी।

कस्ती (हिं० स्त्री०) क्यरी, लहर उठायी।

कस्ता (हिं० पु०) कयनकार, कहनेवाला।

कस्तून (हिं० स्त्री०) प्रसिद्ध वार्ता, मगहर वात।

कस्तन (हिं० पु० स्त्री०) १ कयन, बोलचाल। २ वचन, वात। ३ शोकीहि, मस, कस्तूत। ४ कविता, गायरी। ५ भाषण भाष, बोलनेका तौर।

कस्तना (हिं० स्त्री०) १ बोलना, वताना, समझना। २ लक्षित करना, खोलना। ३ संवाद सुनाना, पसर पहुँचाना। ४ बोलना, नाम लेना। ५ सिगाना पदाना, देसाना-सुनाना। ६ उरसी लेना, धोका देना। ७ अशोभ्य बोलना, कष्ट बैठना। ८ कथिता बनाना, गायरी सजाना। (पु०) ९ पवरोध, तरगीव, समझाव।

कस्तानत (हिं० स्त्री०) १ किंवदन्ती, मसल, कहावत। २ कस्त, कस्तानत।

कस्तर (प्र० पु०) १ चापट, चापल, पनछोनी। (हिं०) २ भयङ्कर, शोचनार्थ।

कस्तरा, कस्तरा देखा।

कह्य (सं० पु०) कथ्य सूर्यस्य इयः अखः। सूर्यका अथवा वा घोड़ा। सूर्यके सातो अश्वोंका वर्ण हरित है।

कहरवा (हिं० पु०) १ सङ्गोततालविशेष, गाने-बजानेका एक ठहराव। इसमें पाँच मात्राएँ लगती हैं,—चार पूरी और दो षष्ठी। आघात चार पड़ते हैं। चाल है—धारी टेते नागधिन धा। २ गीत-विशेष, दादरा। यह नाचगानेके पीछे होता है। ३ नृत्यभेद, एक नाच। यह सबेरे मिसलुनकर किया जाता है। ४ कहार, पानी भरनेवाला।

कहरवा (फ्रा० पु०) १ नियाँभेद, एक गोंद। यह ब्रह्मदेशकी खनियोंसे निकलता है। वर्षा पीत है। इसे औषधोंमें व्यवहार करते हैं। चीनमें कहरवा गन्धा मालकी गुटिका और सुहनास बनाते हैं। इस रंग भी चटता है। वस्त्र प्रभृति पर रगड़ निकट रखनेसे यह लणादिकी यह सुस्वक भाति आकर्षण करता है। २ सर्जहच, धूनका पेड। इसीके गोंदको वृष या राल कहते हैं। यह सततहरित् हृष है। पश्चिमघाटके पर्वतोंमें इसकी अधिक उत्पत्ति है। दूसरा नाम सफेद डामर है। तारपीनके तेलमें इसे बोल रंग चढ़ाते हैं। कहरवीकी मानाभी उत्तम होती है। उत्तर-भारतमें स्त्रियाँ इसे तेलमें डबास गोंद बना लेती और उसी गोंदसे चिपका मस्तक पर टिकली देती हैं। कपाय प्रभृति प्रसुत करनेमें भी यह कहीं कहीं व्यवहृत होता है।

कहरवा, कहरवा देखा।

कहल (हिं० पु०-स्त्री०) १ जप्ता, गरमी, उमस। २ ताप, बुखार, तकलीफ।

कहलना (हिं० स्त्री०) व्याकुल्य होना, बहराना।

कहलवाना (हिं० स्त्री०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ कहलवाना, बहरवाना।

कहलाना (हिं० स्त्री०) १ कहाना, कहनेका काम दूसरेसे कराना। २ नाम पाना, कहा जाना। ३ दहलाना। ४ संवाद पहुँचाना, संदेश देना।

कहवा (प्र० पु०) एक पेडका बोज, काफी (Coffee)। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम कफिया अरेबिका (Coffea arabica) है। इसे बंगलामें बापि, गुजरातीमें

अपि, मराठोंमें कपूजी, मारवाड़ोंमें अजि, तामिसमें अजिबोतरा, तेलगुमें अजिबिसुतु, मलपमें अजि, कर्नाटोंमें अजिबोत्र, पारसीमें बुन, ब्रह्मोंमें अजिबिसि और सिंधुओंमें अजिबोत्रा कहते हैं।

अजिबोत्रा प्रत्यकार क इनेको अजिसोनिग, सोदान और गीनिग तथा माअरबिकके पूर्व मसुदतटका अजि मानते हैं। परबमें अजिसी इसे अजिब हीते नहीं दिना।

कहवा एक पद अजि है। इसमें आकारों बहुत होती हैं। यह १३ से २० फीट तक बढ़ता है। वल्कल अंशताम और पुष्य अंशतवर्ष रहता है। फल पकनेपर काल पड़ जाता और छोटे आइदाने की भांति दिखता है। फलमें दो बीज परस्पर चिपटे रहते हैं। यही बीज निवासनेसे बुन कहलाते और बाजारमें बेचे जाते हैं। बीजोंको भूमिमें और पौधनेसे दुकानका कहवा लेया जाता है।

दाहिनाखकी इसको अजि अजिब है। कहवे और फयोको एक ही प्रकारको भूमिमें लगते हैं। इसे पानी बराबर मिश्रणा चाहिये। उष्ण प्रदेशमें यह बहुत पनपता है। निबिड़ मित्र ठीक नहीं पड़ता और प्रबल वायु लगनेसे पुष्य पड़ता जिसमें पाखा कहवा निबलता है। विभिन्न उष्णता और मोव रहनेसे जाया यावप्रबल पातो और प्रबल वायु चलनेसे लपकोंको पाक लमायी जाती है। निबप्रदेशकी भूमिमें उपयुक्त पाद्रीता न रहनेसे पच्छो फलस कम होती है।

१० १३वें मताम्दकी शिप महापुरीन इसी पदन ले गये थे। यमनसे यह मछे जायरो दामासकस परसेपा और कुमुनतुनिसे पयूषा। सबसे पहले १३१३ ई०को कुमुनतुनिगामें ही कहवेको दुकान खुली था १३०३ ई०का फलेप्पिमें रामशेख नामक लूरोपीयका इसका नाम लुन पड़ा।

कुलसमानमें कहवा पौनेका बड़ा पादर बढ़ा। मन्दिदोले भी अजिब लोग कहवेको दुकानोंमें देख पाते थे। इनके मोलबिबोले निबिड़ अजिब पर बढ़ा मजसूल बांधा। अंत इटनमें यह १६१२ ई०को पड़वा। बिन्तु १६०३ ई०का २५ जाम्पने इनको

पुकारने बन्द करा दीं। उनका कहना था—कहवेको दुकानों पर बयमाय रहना होता है।

ई० १८वें मताम्दके पन्त कहवेकी अजि बढ़ीं। भारत, सिंधल, यबदोय, अमीबा और अजिसमें यह लपाया जाने लया। १६८० ई०से पहले यह परबमें ही होता था। पाबकल बोरा, रिबा गाटेमाहा, शैमिस्तु, येका मिषाना पीरु बोलिविया, कूबा, पोर्टो रिबो और पयिम मारतीय द्वीपपुच्छमें भी कूबा फल उपजता है। कहवे दो मताम्द पूर्व मछेसे बाबा बुदन कहवेके ० बीज मजिसुर लाये थे।

इसको भूमि उत्तम और पाद्री रहना चाहिये। यह रकवर्ष एवं अक्षयर्ष भूमिमें अजिब पनपता है। प्रबल वायु लगनेसे इसे बड़ो हानि पड़ जाती है। भूमि ठाक रहना चाहिये। अंतनेकी सुविधा पड़ना पच्छा है। भूमिको १८से २४ इंच तक गहरी कीत घास फूस निबाल डालते हैं। एकर पीछे ३० से ८० मज तक खाद पड़ती है। पानी निबलनेकी राह आरियो रखी जाती है। बीजोंको ४ अतारोंमें बीना चाहिये। प्रबल अतार ८ इंच अजिब और २ इंच गमीर रहती है। बीज एक एक इंच दूर डाले जाते हैं। अंदरे और सम्भाकाल सिंचायी होती है। बीज उत्तम रहनेसे फलन भी पच्छी निबलती है। दो बार पत्तियां निबलनेसे हवाको खाद दूसरो अजिब लगाते हैं। अल मरा रहनेसे अजिब सड़ जाती है। एक एकर भूमिमें १०३०से अजिब अजिब न रहना चाहिये। मोबरको खाद पच्छी जाती है। आसिया अजिबे काको बोडो काट देते हैं। १ फीटसे अजिब रहला बहना आरव है। इनके साबदूसरी बीज नमा नहीं पड़ते। इसको अजिबका समय मई या जून मास है। जूनके अर्ध मास मासमें पुष्य पाते और अभावर मास फलस काटनेका प्रबन्ध लगाने हैं। फल मजसूरके अजिबरो तक पका करते हैं। यह फलको शीत तोड़ लेना और अजिबक कल गिरा देना चाहिये।

माधारकाल देमोव कोम पलाका पुपमें पुष्य पोबर्षमें कूट पकोड़ कर बीज १० डालते हैं। बिन्तु यह शीत अजिब नामकर इच नहीं पड़ती। अंतने

लोग कलमें डाल बीजोंका गूदा छोड़ते हैं। कलका नाम डिस्क-पल्प (disc pulpar) है। इसमें गूदेसे बीज छूट अलग जा पड़ता है। फिर बीजको हौजमें डाल १२ घण्टे धोते हैं। धुलहुवा बीज धूपमें सुखाया जाता है। सूखनेकी भूमिपर मोटी चटायी बिछा देते हैं। सूखते समय कहवेकी सोटते रहना चाहिये।

भारतवर्षमें जितना अधिक और उत्तम कहवा उपजता, उतना किसी दूसरे अंगरेजी अधिकारमें देख नहीं पड़ता। किन्तु इसमें अनेक रोग लग जाते हैं। यथा,—पत्तियोंका पीना और काला पड़ना, पत्तियों, फूलों और फलोंका चिपचिपा उठना और कीड़ा लगना। टिड्डियां भी इसको बड़ी हानि पहुँचाती हैं। कहवेकी पत्तियां भी उबाल कर पीनेसे अच्छी लगती हैं। गूदेमें चीनी रहती है। अरबमें लोग गूदेका अर्क तैयार करते हैं। कहवेमें तेल भी होता है।

यह उत्तेजक है। इसके सेवनसे थकाहट दूर हो जाती है। शिरःपीडाका यह उत्तम औषध है। काशश्वास रोगमें भी इससे लाभ होता है। विशूचिका और ग्रहणीरोग इसके सेवनसे दब जाता है। कहवा च्वर पर भी चलता है। पीनेसे मूलक्षय और वातरक्त रोग नहीं लगता।

कहवाना (हिं० क्लि०) कहलाना, कहाना।

कहवैया (हिं० वि०) कथनकार, कहनेवाला।

कहा (हिं० पु०) १ कथना, वातचीत। (क्लि० वि०) २ कैसे, किस प्रकार। (सर्व०) ३ क्या। (वि०) ४ कौन। ५ कथित।

कहां (हिं० क्लि० वि०) १ कुत्र, किस जगह। (पु०) २ शब्दविशेष, एक आवाज। सद्योजात शिशुके शब्द करने या रोकनेकी 'कहां कहां' कहते हैं।

कहाना (हिं० क्लि०) कहलाना, कहा जाना।

कहानी (हिं० स्त्री०) १ कथा, किस्सा। २ मिथ्या वचन, झूठी बात।

कहार (हिं० पु०) जातिविशेष, एक कौंस। यह लोग पानी भरते और डोनी लेकर चलते समय अनेक प्रकारके साहित्यिक शब्द व्यवहार करते हैं। वेहारमें कहार लोग जरासन्धका वंशीय कहलाता है।

कहारा (हिं० पु०) टोकरा, दीरी, भौवा।

कहान (हिं० पु०) वायविशेष, एक वाजा।

कहावत (हिं० स्त्री०) १ नोकृति, मसन, चनती बात। २ कथित विषय, कहां हुयो बात।

कहासुना (हिं० पु०) अनुचित वचन, गेरवाजिव बात, भूल चूक।

कहासुनी (हिं० स्त्री०) वादविवाद, नगार्द भगडा।

कहाड़ (सं० पु०) १ महिप, भेंसा। २ कटाड़, कडाड़।

कहिक (सं० पु०) कहीड-ठक्। एक ऋषि।

कहिया (हिं० क्लि० वि०) १ किस समय, कब। (पु०) २ यन्त्रविशेष, एक बीजार। कनईगर इससे रांग रख जोड लगाते हैं। यह एक प्रकारका बीह दण्ड है। इसमें सुट्टि रहता है। एक किनारा काक-चष् की भांति कुटिल होता है।

कहीं (हिं० क्लि० वि०) १ किसी स्थान पर, दूसरी जगह। २ नहीं। इस प्रथमें यह प्रत्य रूपसे आता है। ३ यदि, अगर। ४ अतिगय बहुत, बहुत।

कहूं, क्को देखो।

कहं, क्को देखो।

कह्य (सं० पु०) कः सूर्यः ह्यो यस्य, छे-क्यप् बहुव्री०। सूर्यको आछान करनेवासी एक ऋषि।

कहोड (सं० पु०) एक ऋषि। यह उद्दालकके शिष्य और अष्टावक्रके पिता थे।

कहक, क्कार देखो।

कहण (सं० पु०) कल्हण, राजतरङ्गिणीके प्रणेता।
कल्हण देखो।

कहारा (सं० स्त्री०) कस्य जलस्य हार इव के लक्ष्णे ह्लादते वा, क-ह्लाद पचाद्यच्, ष्टोदरादित्वात् साधुः। १ श्वेत उत्पल, वधवच, कीकाविली। (*Nymphaea edulis*) यह भारतके नाना स्थानोंपर जलमें उत्पन्न होता है। कल्हारा शीतल, ग्राही, विष्टभी, गुरु और रुच है। (भावप्रकाश) २ ईपत् श्वेत रक्तकमल, कुछ सफेदी लिये लाल कंवल। ३ कमलसाधारण, कोई कंवल।

कल्हाराद्यष्टत (सं० स्त्री०) घृतविशेष, एक घी।

कम्हार, लूपस, पाग कुमुद पीर महपट्टिकाको
जसमें पञ्चाने तथा इतके साथ कल्ल समानेसे यह
प्रसृत होता है। इसके पानसे यावतीय हृदरोम
पारोप्य होते हैं। (खरखार)

कङ्क (स० पु०) के जने प्रयति क मन्दावती चर्षके
पा, कङ्क क। कङ्क, कङ्क।

का (स० पद्य०) १ काकका मन्द, कोरेको पावाङ्क।
(सि०) काककण्टि। क। १। १। १। १ मन्द, पतरा।

का (हि० प्रत्न०) १ सम्बन्धोय, जाना। यह पठोका
चिह्न है। इसी अधिकारी चञ्चलत, पावार पाधिय,
कायं काएच, कर्त्तव्यमें प्रथति पनेक भाव दिखनेको
दो मन्दीके बीच अगती है। एतोविहमिं 'का' का रूप
अदसकर शै' हो जाता है। (सर्वे) २ क्या।

"काप्यो वर इती सुचने।
वसन् चरि इति चर चरिच्यते।" (एवयो)

काई (हि० स्त्री०) एक विधिय, एक साध। यह
जस तथा शीतल स्नान पर उपजतो और सुष्प जगती
है। इसका बवं और पावार विमिश्र होता है।
मिखा और भूमिपर पड़नेवासी काई सुष्प सुवसइय
इरिचवं रहती है। बिन्दु जसपर फेसनेवासीमें
सोलाकार सुष्प पत्रक और पुष्प पाते हैं। बहुत
यह एक प्रकारका मूल है। काई उबल कर तरक
पदाघो पर पा जाती है। २ मण्ड जेम, मांड। ३ मस,
मेस। ४ पयोमल, मोरका।

काज (हि० स्त्री०) १ यहविमिच, जानी एक कोटी
छठी। यह पाटेमें बरकोषि विरेपर समायो जातो है।
(सर्वे) २ कोरे। ३ कुड। (सि० वि०) ४ कमी।
(पु०) १ काक, कोका।

काइया (हि० वि०) कुतं, जानाक, पपने मतसवका
पडा।

काई (हि० पद्य०) १ क्या, बिच जिये। (सर्वे)
२ बिचे, बिचको। ३ क्या।

काक (हि० पु०) मण्डविमिय, एक पन्नाक। इन
कंगनो मो कचने हैं।

काकवा (हि० पु०) कापांकोच, विनीला।
काकर (हि० पु०) काकर, काकड़।

काकरी (हि० स्त्री०) पुद कचंट, बोटा काकड़,
ककरी।

काका (हि० पु०) काकका मन्द, कोरेको कोसी।
काकुन, काकुनो, कनी देको।

काच (हि०) कच देको।

कापना (हि० सि०) १ वीकित पवसामिं दुःखरुचक
मन्द कचारप करना, कराङ्गा। २ मूत्रपूरीकोलनायं
उदरके बायुको पीड़न करना, पांतपर ओर देना।

कापाकोनी (हि० स्त्री०) वस्रपरिकामनेद दुपहा
रखनेका एक तरीक। इसमें दुपहा पायें कंचे पीर
पीठ पर होता और दाहिनी बगलके मोचे पड़ू चता,
खिर बनि कच्ये पर पा चढ़ता है।

काको (हि०) कानो देको।

कांगड़ा (हि० पु०) कङ्कपयो, एक चिह्निका। यह
बसुरबवं होता है। इसका बचाकल खेत, मण्डस्थल
रक पीर मिपाका बवं कल्प रहता है।

कांगड़ा—पञ्चाव प्राक्का एक जिका। यह पसा० ३१,
२०' से ३३' उ० और देसा० ७३' ३८' से ७८' ३३'
पू० तक पचकित हैं। भूमिका परिमाच ८०६८ वर्ग
मील हैं। इसमें प्रायः साठेघात भाव घाटमो रहती हैं।

कांगड़ा सर्वत पञ्चुच गिरिमाभाषि परिशिष्टित है।
यवन गिरि समुद्रके समतलको पपिषा ८३०६ १३८३
घोट पर्यन्त तक है। बरसावारगिरि कांगड़ेके उत्तर
कोमाकपसे चढ़ा है। उसीके पानी बड़ा बङ्गाइल
मिनता, चढ़ता है। गिरिमाभाषि परिशिष्टित और
समाकोच रहती भी इसमें खान खान पर घाम तथा
कापिपैत्र विद्यमान हैं।

उत्तर कोमापर हिमाकय परंत कांगड़ेका तिम्पतके
बसुवनपर और चीन साम्राज्यको सीमासे हुएक
बिधा है। दक्षिण पूर्वको बचवर, मण्डो, बिबाध
पुर इत्यति यावतीय राज्य है। दक्षिणकिस कोपि-
यापुर जिका तथा उत्तरपश्चिम काको मटा मुहदासपुर
१८ बन्ना राज्यको खाती है। कांगड़ा जिलेमें
१६ तहसीलें हैं मूत्र, कांगड़ा, जमीरपुर, छटा और
दुःपुर। कांगड़ा तहसील मध्यपश्चिम अगती है।
बरसावारगिरि बङ्गाइल प्राक्का दो प्राचीन

वांटा है। उत्तरार्धको बड़ा बड़ाहल और दक्षिणार्धकी छोटा बड़ाहल कहते हैं। बड़े बड़ाहलमें कूलूके मध्य स्थलपर बड़ा बड़ाहल पहाड है। यह दैर्घ्यमें पन्द्रह मील और उच्चतामें १७००० फुट पड़ता है। इसमें एक सामान्य ग्राम है। उसमें कोई ८००० कुनैत रहते हैं। एक वर्ष टारुण तुषारपातसे लोगोंके बहुतसे घर बह गये। इसी गिरिका अत्यन्त शृङ्ख फोड इरावती नदी निकली है।

छोटे बड़ाहलके बीचमें १००० फीट ऊंचा एक गिरिशृङ्ख है। उसने इस स्थानकी दो भांगोंमें वांटा है। निम्नांगमें १८।२० ग्रामविद्यमान है। सकल ग्रामोंमें केवल कुनैत और दावी रहते हैं।

बड़ाहल तालुकके कुछ अंगका नाम बीर बड़ाहल है। इस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य मनोहर है।

कांगड़ा जिलेके बीच तीन गिरि भेड़िया समभावसे निकली हैं। इन्हीं गिरिश्रेणियोंसे विपाशा, चन्द्रभागा, स्मिति और इरावती नदी निकली हैं।

पुरातत्त्व और इतिहास—भारत और पुराणादिमें कुलिन्द और कुलूत नामक पार्वतीय जातिका नाम लिखा है। वही यहाँके प्राचीन अधिवासी थे। उस समय कांगड़ा कुछ कुलूत और कुछ कुलिन्द (कुनिन्द) जनपदमें रहा। आजकल कुलूत तथा कुलिन्द जातिको कुलू और कुनैत कहते हैं। इन्हें और इन्हें देखो।

कुलूत और कुलिन्द लोगोंको हरा राजपूतोंने यह स्थान अधिकार किया। उन्होंने यह पार्वतीय भूभाग विभागकर बहुकाल राजत्व चलाया। वह अपनेको कुरुपाण्डवके समकालीन जालन्धरका कतोच राजव्यवताते थे। सुसलमानोंके आक्रमणसे उकता कतोच राजकुमारोंने कांगड़ेको गिरिदुर्गमें आश्रय लिया। उनका विपुल राज्य छुद्र छुद्र अंगोंमें बंट गया। उस समयमें यहाँके नगरकोटवाले भारतीय देवमन्दिर विशेष प्रसिद्ध थे। ऐसा ऐश्वर्य पञ्जाबके किसी दूसरे देवमन्दिरोंमें न रहा। भारतीय लोगोंने देवमूर्तियोंको बड़ी श्रद्धा भक्ति करते थे। १००८ ई०को महमूद गजनवीने कांगड़ेके मन्दिरोंको बड़ाई सुनीं। उनका लोभ और विद्वेष बढ़ गया। वह पेशावरके जैत्राभि-

सुख समैन्य आये थे। भारतीय राजावोंने वाधा देनेकी यया साध्य चेष्टा लगायी, किन्तु कोई बात बन न पायी। महमूदने कांगड़ेशा दुर्ग अधिकार कर देवमूर्तियोंके साथ श्वण, रोष्य, मणिमाणिक्य प्रभृति बहुमूल्य धन लूटा था। कोई ३५ वर्ष पीछे राजपूतोंने कांगड़ेशा दुर्ग छीन फिर राजपूतोंने बड़े समारोहके देवमूर्ति प्रतिष्ठा किया था।

कुछ दिन कोई गडबड न पडा। १३६० ई०को फीरोजशाह तुगलक कांगड़ेशा और लहने आये। कांगड़ेशाके राजावोंने उनकी शक्ति माननेसे अपना राज्य तो पाया, किन्तु पवित्र देवमूर्तियोंको गंवाया था। सुसलमानोंने देवमूर्तियां लूट मक्के भेज दी।

१५५६ ई०को चकवर वाटगाहने कांगड़ेशा दुर्ग अधिकार किया। उसी समयसे यह पार्वतीय भूभाग दिल्लीके साम्राज्यमें मिला गया, केवल दुर्गम मरुमय स्थान देशी सरदारोंके हाथ रहा। राजपूतोंने दो बार विद्रोही हो कांगड़ा दुर्गके उद्धारकी चेष्टा लगायी थी। जहांगीर दोनो बार (१६१५ और १६२८ ई०) कतोच राजकुमारोंको शासन करने आये थे। पन्तको वैस-सरदार कर देनेपर समत हूये।

जहांगीरने प्राकृतिक सौन्दर्यसे मोहित हो यहाँ रहनेके लिये शीषभवन बनानेको आदेश किया था। आज भी कांगड़ेशाके गर्गरी ग्राममें एक शीषभवनका शिष्ट देख पड़ता है।

दिल्लीके सुसलमान बादशाह कांगड़ेशाके सरदारोंको उपेक्षा करते न थे। सब लोग विशेष सम्मानार्ह रहे। पदके अनुसार मर्यादा मिलती थी। १६४६ ई०को नूरपुरके राजा जगतचन्द्र शाहजहान्के आदेशसे १४०० सैन्यका अधिनतपद पाया। उन्होंने उसी सैन्यके साहाय्यसे बलख और बदखशान्के अोजबेकोंको हराया था।

१६६१ ई०को औरंगजेबके राजत्वकाल जगतचन्द्रके पौत्र मान्धाता कुछ दिनके लिये सद्रखतो वामियान और गोरबन्दके शासनकर्ता बने। २० वर्ष पीछे उन्होंने दो जजारी मनसबदारका पद पाया था।

१७५८ ई०को कांगड़ेशाके राजा बमण्डचन्द जालन्धर

घोर दूरावतो तथा प्रतट्ट नदीके मध्यवर्ती प्रदेशमें माइनकर्ता बनाये गये।

दिल्लीके बादशाहोंका पूर्व पराक्रम विस्तृत चीनेके राज्यमें एक प्रकारकी पराजयता पारि को। तभी समय प्राय १०३२ ई०को राजपूत सरदार क्षात्रोत्त जो कांगड़ेका पश्चिमाय उपमोय करने लगे। शिवल मन्त्र दुर्म पञ्चमद प्राय दुर्गानेके पायलमें रहा। १००४ ई०को जयसिंह नामक सिधो सिख सरदारने कोमल कर्मके काँगड़ेका दुर्म पश्चिमाय लिया किन्तु १०८५ ई०को कांगड़ेका राजपूत-सरदार संसारचन्द्रको धोय दिया। इतने दिन पीछे काँगड़ेका दुर्म फिर कताच राजसंघर्षके इष्टमत हुआ। कतीचराम संसारचन्द्र अपने पूर्वपुत्रपौकी भांति क्षात्रोत्त भावने राजत्व चलाते लगे। पार्श्वतीय प्रदेशस्य नामा खानोंके घर हारोंमें लड़े कर दिया। दिग्बिजयकी निकलने समय सब सरदार सेव्य से संसारचन्द्रके अनुवर्ती बनते थे। वर्षमें एक एक बार प्रत्येक सरदार राजदरजनको पाने पर बाध्य रहा। संसारचन्द्रने २० वर्ष प्रबल प्रतापके राजत्व चलाया। अन्तुम घोर युगमें यह सब कतोच शाखाके स्वयं थे। १८०५ ई०को संसारचन्द्र घोर विनाशपूर्वक राजाने प्रतट्ट घोर चर्चरा नदी मध्यवर्ती प्रदेशके गोरखा-सरदारोंके साहाय्य मांगा था। गोरखा प्रतट्ट नदी पार पाये। वह मजसमीरी नामक स्थानमें (१६०६ ई०) कतोच-राजपूतों पर टट्ट पड़े। बाहू बलके प्रभावने राजपूतोंमें डार पीठ दिखायी। गोरखा सरदार काँगड़े राज्यमें कुछ दाबच धासाचार मपाने लगे। काँगड़ा राज्यके खोतमें हुआ था। नगर, घाम, कपवन, सुन्दर राजमासाद प्रथति सब लज्जु गये। उस समय काँगड़ा राज्य मयान घोर मजसूमिमें जमान था। कतोच राजकुमारने प्राय छोड़ बिरकी हुकामें पायव पाया। ऐना क्षोमजबब-काण्ड का कोबी कमी मूल चकता है। काँगड़ेके प्रत्येक पास एवं प्रत्येक नगरमें जीमीके इदय पर वह भीयच व्यापार चटकता है।

तोन बत्तूर चम्पाधार दिक्कने पीछे संसारचन्द्रने महाप्राय रचनित सिद्धि जाहाय्य माना। १८०८

ई०को रचनितदिहने गोरखारोंके विषय बुद्धको धोपचा बगायी थी। भीयच समर पायव हुआ। बड़े कष्टमें रचनितको जय मिला। गोरखा प्रतट्ट उत्तर गये। प्रथम लक्ष्मि समस्त कांगड़ा राज्य संसारचन्द्रको धोय दिया, शिवल काँगड़ेका दुर्म घोर ६६ घामोंका कर संभ्रम्यपके निर्वाहको अपने हाथ रख लिया। पीछे रचनितु भीरि चारे पहाडी नरदारोंके पखोनस्य स्थान अपने समरमें मिलाने लगे। १८२४ ई०को संसारचन्द्र मरे। उनके पुत्र पतिवहचन्द्र राजा बने थे। पतिवहचन्द्रने शिवल चार वर्ष राजत्व किया। रचनितु सिद्धिमें अपने मन्त्रो प्यानसिंहके पुत्रके पतिवहको मगिनौका विवाह ठहराया। कतोच राजकुमारने इदय अपनेको अपमानित होते देख राज्य छोडा घोर हरिद्वारकी पार मुच माहा। तभी समय समस्त काँगड़ा महाराज रचनितुसिंहके राज्यमें मिक गया। १८४५ ई०को प्रथम सिधु ब्रह्म चोरे पर चर्चराकेने काँगड़ा पश्चिमाय किया। १८४६ ई०को मूल तानो बिलोहके पीछे यहाके पहाडी सरदारोंने बिलोह नदानीकी पेशा चबायी थी, किन्तु कुछ सिद्धि न पायी। फिर सिवाही बिलोहके समय एचमा मिरी कि काँगड़े में सामान्य बिलोहकी पाय मजको है। उस समय जब बिलोही सरदारोंको फाँसी दी गयी पाय तक फिर काँगड़ेमें कोबी पयानि न फेकी।

इस विच्छेके प्रभाव नगरका भी नाम काँगड़ा है। यह पचा० ३२ ३६ ११ उ० घोर देया० ०६ १० ३६ ०० पर अवस्थित है। यहक्षि यह नगर नगर-बोट नामके विख्यात है। काँगड़ा बाबबहा घोर विमाशा नदीतट्टमके निकट पवत पसा है। इह नगरमें एक बहुशाखीन दुग है। मवानो घोर मवानो पतिका पूर्वनिर्मित मन्दिर सुन्दर है। काँगड़ेमें जहाज घोर मीनेका काम अच्छा बनता है।

काँगड़ेके भीम साहमा बनयाभी मरन घोर क्षात्रोत्तपिता है। राजपूत पश्चिमे देक पड़ने है। यहां बिलितुहकीका एक दुन रहना, जो नक्षत्रीकी अच्छा कर चकता है। पञ्चनूर साहब-रदु-दोन एक बिलितुहक थे। लकीन नाक बनानेकी

विकित्ना निकाली। अकबर बादशाहने गुणकौशलसे संतुष्ट हो उन्हें कांगड़ेका कुछ स्थान जागोर दिया था।

इस जिलेमें खर्ब, रौप्य, लौह, ताम्र, रसायन, हीरक, मर्मर प्रभृति नानाप्रकार बहु मूल्य द्रव्य उत्पन्न होते हैं।

उद्भिज्ज और पण्यद्रव्यमें यव, गेहूं, चना, शण, कार्पास, इक्षु, तमाखू, चाय, नमू, लवण, और धान्य प्रधान है।

कांगड़ी (हिं० स्त्री०) सन्तस छुद्र पात्र विशेष, एक छोटी अंगोटी। काश्मीरके अधिवासी शीतसे परित्राण पानिकी इसे कण्ठमें बांध वचः स्थलपर लटकवा लेते हैं। यह अङ्गुरके काष्ठसे प्रस्तुत होती है। कांगड़ीके भीतर सृत्तिका चढ़ा देते हैं।

कांगूर, कंगूर देखो।

कांग्रेस (ए० स्त्री० = Congress) सभा, परिषद्, मुल्कीका प्रदेशोंका जलसा। इसमें विभिन्न प्रदेशोंके प्रतिनिधि एकत्र हो राजनैतिक विषयोंपर अपना अपना मन्तव्य प्रकाश करते हैं। संयुक्त अमेरिकाकी राजसभा भी कांग्रेस ही कहती है। भारतमें प्रति वर्ष जातीय कांग्रेस (National Congress) होती है।

कांच (हिं० स्त्री०) १ लांग, घोंतीका एक छोर। यह दोनों टांगोंके बीचसे निकाल कमरपर खींची जाती है। २ गुदावर्त, गुदाका भीतरी भाग। कभी कभी जोरसे कांखनेपर यह बाहर निकल आती है।

(पु०) ३ मित्र घातुविशेष, एक मिलावटी घात। यह बालुका और चारको अग्निमें गलानेसे प्रसृत होता है। इसमें काष्ठण, पात्र, दर्पण प्रभृति अनेक द्रव्य बनते हैं। शाप देखो।

कांचरी (हिं० स्त्री०) कच्छ लिका, सांपकी केंचुल।

कांचली, कांचरी देखो।

कांचा, कचा देखो।

कांचू (हिं० पु०) १ कच्छ लिका, केंचुल। (वि०)

२ कांचका रोगो, जिसके कांच निकल पड़े।

कांछना, काचना देखो।

कांका (हिं० पु०) १ कांच, कमरमें पीछे खींचा।

जानिवाला घोंतीका किनारा। २ लंगोटा, चिट। (स्त्री०) ३ भाकांचा, खाडिग।

कांजी (हिं० स्त्री०) १ क्वाञ्जिक, एक रस। यह खट्टी रहती और कई प्रकारसे बनती है। इसमें अचार और बहा भी भिगोया जाता है। कांजी बनानेके चार विधि नीचे लिखते हैं—

१ चावलका माह किसी सृत्पात्रमें दो-तीन दिन रख लवणादि डालनेसे यह तैयार हाती है।

२ राई पीसकर पानोमें घोला दी जाती है। फिर लवण, कीरक, शण्डी प्रभृति पौसकर मिला उसको सृत्पात्रमें रख छोड़ते हैं। खट्टी होनेसे पहले बहा और अचार भी डाल दिया जाता है।

३ दहीका पानी राई और नमक मिलाकर रखनेसे उठनेपर कांजी कहाता है।

४ शर्करा और निम्बूकका रस अथवा सिरका मिलाकर पकाया और किमांम बनाया जाता है।

मठे, दही या फटे दूधके पानीको भी कांजी कहते हैं। शापिक देखो। २ कारागारका गृहविशेष, कैद खानेकी एक कोठरी। इसमें कर्दियोंको मांड पिलाया जाता है।

कांजीवरम् (हिं०) काचोपर देखो।

कांजी हारस (ए० पु० = Kine-house) पशुशास्त्र विशेष, मवेशीखाना। इसमें कृषि आदिकी चतिप्रस्त करनेवाले पशु सरकार रखती है। फिर प्रभु दण्ड स्वरूप कुछ पैसा रुपया दे उन्हें छोड़ता है। जिनकी कृषिकी हानि पहुंचाते, वह पशुओंको पकड़ कांजी-हाउसमें हांक आते हैं।

कांट (हिं०) कण्टक देखो।

काटा (हिं० पु०) १ कण्टक, खाट। यह तीक्ष्णाय अङ्गुर हाता है। कतिपय हर्षोंकी शाखोंपर सूचीकी भांति काटा निकलता और पुष्ट होनेपर कठिन पड़ता है। २ पदकण्टक, पैरका खाट। यह मोर, सुरगे, तीतर वगैरह नर चिड़ियोंके पैरमें निकलता है। लडाईमें सक्त पची इसीसे प्रहार करते हैं। कटिका दूसरा नाम खांग है। ३ गलरोग विशेष, गलेकी एक बीमारी। यह पक्षियोंके गलदेशमें उत्पन्न होता

है। इससे बहुतवा पत्तो भर जाती हैं। पात्रतू पति-
वीका कांटा निवास करता है। ३ सुखरोयवियेय
सुखकी एक बीमागे। इससे सुखमें तोष्याप धोर
पिड़काये पड़ जाती है। १ खोइकीबक, खोइकी
कील। ६ कांटिया, मकनो मारनेको खोइ। मोठा
पाटा कपिट इसको पानेमें डाल देते हैं। खोइके का
जाने पर यह मकनोके सुखमें पड़बता धोर निजाने
नहीं निजकता। फिर मिक्कारी कांटिसे कमी मोटे
होरेको बन्धोके धरारे खोव मकनोको जपर खोव
खिता है। ७ यन्त्रवियेय, एक पात्रार। यह खोइको
मुन्को हुयी बीकोका एक गुच्छा है। इससे कुयेमें
मिरे कोटे मगरे बड़े रच निजाके जाते हैं। ८ तोष्याप
बशुमाप, कोरे सुकीको खोज। ८ यन्त्रबन्ध वियेय,
मूयनिका एक खोजार। यह खोइको एक ठेकी खोव
है। पटके इसमें बागा डाल मूयनिका काम बनाते
हैं। १० खोइसुचोमेद, खोइको एक ध्यो। यह
सुखादन्धके घटदेयपर लगती है। इससे तराबके
सोनी पकड़ोकी बराबरो माकूम होती है। ११ खोइ
सुखामेद, खोइको एक तराब। इसको कांठीमें कांटा
सगा रहता है। १२ नासाकहारवियेय, खोय, खोय
माकका एक बी बर। १३ खाद्य सन्धखोव यन्त्रवियेय,
खानिका एक पात्रार, इससे ठठा ठठा धंगरेक रोटी
बये, रच खाते हैं। १४ काठयन्त्रवियेय, पेसाको,
पांचा। इससे जपक तथादि बटोरते हैं। १५ खूचि
वियेय, खजा। १६ पटिका खूचि, बड़ोकी खूची।
१७ गवितमें शुचनपलको यथायवपयोद्या खूबरकी
कांच। इसमें दो रैखाये धारपार बनायो जाती हैं।
फिर गुच्छके पद पत्रसं सुकुब कर ८के भाग समारि
है। शिय पद एक रैखाकी बिसे सीमापर रहते हैं।
इसी प्रकार शुचकके भी पद खोइ धोर गीबे तोड़कर
शिय पद रैखाके दूसरे मान्त पर रखा जाता है। यह
संमुखीन समय पद शुचन धोर ८के विभागकर शिय
पदको मुखये रैखाके एक पत्रपान पर समारि है।
फिर शुचनपलके पद खोइनी धोर ८के तोड़ने पर
यदि शिय पद पूर्वक पदके सिव जाता, तो शुचनपल
यह समझा जाता है। १८ यचितसन्धखोय यथायव

परोचाको शिया, जिसका जांभनीको तरकीब। १८ मक
सुखवियेय, बिसे बिषकी कुगतो। इसमें पदक
बान् मिड़कर नहीं सड़के, दूर धीसे काट काट करते
है। २० पनुवरा मूमिवियेय, एक लसर। यह
यमुगा बिनारे मिलता है। कांटिमें खोयो खोज लयक
नहीं होती। २१ बिसे बिषका पैतनुदा। यह
दरीमें भोक्कार निजाका जाता है। २२ पन्निकोड़ा
वियेय, एक पातयवाजी। २३ मकसोका कांटा।
२४ दुच्छदायो पुखप, तकसोप देनैवाना पाहसो।
कांटादार (हिं वि०) बच्छकान्धित, कांटीला।
कांठी (हिं खो०) १ सुद खोसक, कांठी खोस।
२ सुदसुखामेद, एक जोटो तराब। इससे दच्छपर
खूचि लगती है। कामकारादि कांठीके काम शिथि है।
३ कांटिया, पकड़ो। ४ यन्त्रवियेय, एक खोजार।
यह बिनारे पर खोइकी पकड़ो कमी एक सखड़ी है।
इसके धपे पकड़ें जाते हैं। ५ देको केदियेके पैरमें
कासे जानिवासे खोइके बड़े। ६ बिसे बिषकी खूची।
यह हुनि जाने पोइ बिनीनीमें सिपटो रहती है।
७ बानकीकी एक खोइ, लकड़ समानेका खेस।
कांठीहार कांटाबन हैवी।
कांठा (हिं सु०) १ बच्छ, पका। २ बिच्छ वियेय
एक नियान। यह शुचपयोके यन्त्रपानपर मक
साकार पड़ जाता है। ३ लपकच्छ बिनारा। ४ पाय,
बमुक। ५ काठदच्छवियेय, एक सखड़ी। यह एक
बिसे कमी धोर पतको होती है। इस पर तनुवाय
वाना कुननेकी रय्य पड़ाने हैं। बादसेका ताना कांटिसे
थो कुगा जाता है।
कांठला (हिं खो०) १ बच्छन करना, रौद खानना।
२ मूटना, सुरना। ३ मारना-योठना, कतियाना।
कांठलो (हिं खो०) काच्छ, कुचका, खोनी।
कांठा (हिं सु०) १ इत्यरोय वियेय, पिड़ोकी एक
बीमाये। इससे उखोके काठमें खोयादि लय जाते
है। २ काठकोट, बकड़ोका खोइ। ३ दनाकोट,
दांतोंमें खमनेकाका खोइ।
कांठी (हिं खो०) १ इच्छुबननं, पाचसोका ननु।
इसमें कासकर सुपकसे पकड़ जाता है। २ मिमेंभू

गडा हुआ काष्ठ वा प्रस्तरखण्ड, जमीनमें गडा हुआ लकड़ी या पत्थरका टुकड़ा। इसमें अन्न कूटनेकी गर्त रहता है। ३ हस्तिरोगविशेष, हाथीकी एक बीमारी। इससे पैरके तलवमें एक गडा व्रण पड जाता और हाथी चलने फिरनेमें बडा कष्ट पाता है। व्रणमें क्षुद्र क्षुद्र क्रमि होते हैं। ४ काष्ठदण्डभेद, लकड़ीका दण्ड। इससे गुरुभार द्रव्योंकी चढाते, उतारते और हटाते हैं। ५ लङ्गडकी छांडी। यह सुडे हुये अंकुशों पर रहती है। ६ वंश वा काष्ठखण्ड विशेष, बांस या लकड़ीका एक लट्टा। यह पतला तथा सीधा रहता और मकामकी छल्लोंमें लगता है। इससे दूसरे काम भी निकलते हैं। ४ काण्ड, लट्टा। ५ रजठा, अरहरको सुखी लकड़ी। ६ दियासलाई। ७ मय्यसमूह, मच्छलियोंको टोली।

कांधरि (हिं०) कन्ना देखो।

कांदना (हिं० क्रि०) रोदन करना, चीख मारना, फूट फूट रोना।

कांदव (हिं० पु०) कर्हम, कीचड।

कांदा (हिं० पु०) १ कन्दली, एक पौदा। यह प्याजकी भांति गन्धविशेष होता है। पत्रक प्याजसे कुछ प्रशस्त रहते हैं। कांदा सरोवरोंके निकट उपजता है। वर्षाका जल मिलनेसे पत्र निकलते हैं। पुष्प श्वेतवर्ण रहते हैं। उन पर रत्नवर्ण पांच छह खंडे रेखायें पड़ जाती हैं। रेखायोंके प्रान्त भागपर अर्धचन्द्राकार पीतवर्ण चिन्ह होते हैं। कांदेके लसेसे माड़ी बनती है। इसका अपर नाम कंदरी वा कंदली है। २ प्याज।

कांदू (हिं० पु०) कंदीयों, बनियोंकी एक जाति। यह हलवाईका काम करते हैं।

कादो, कादव देखो।

कांध (हिं० पु०) १ स्कन्ध, कन्धा। २ कोल्हका एक हिस्सा। यह पतला रहता और जाठमें सुण्डीके ऊपर पडता है।

कांधना (हिं० क्रि०) १ कन्धे या गिर पर रखना, उठाना। २ नाघना, मचाना। ३ स्त्रीकार करना, मानना। ४ भार सङ्ग करना, बोझ उठाना।

कांधर (हिं० पु०) कण्ठ, कान्हा।

कांधा (हिं० पु०) १ स्कन्ध, कान्धा। २ कण्ठ, कान्हा।

कांधी (हिं० स्त्री०) स्कन्ध, कांध।

कांप (हिं० स्त्री०) १ तानी, पतली छड। यह बांस या किसी दूसरी चीजको रहती और लघानेसे झुक पडती है। २ कनकौषीकी पतली तीनी। यह कमानकी तरह झुका कर कनकौषीके ऊपरी हिस्सेपर लगायी जाती है। कनकौषा काश्रियानेसे इसमें कन्ना बंधता है। ३ शूकरका कांटा या खांग। ४ हस्तिदन्त, हाथीदांत। ५ कर्णालक्षार विशेष, कानका एक ज्वर, यह सादी और जहाज दो तरहकी होती है। काप सोनेकी रहती और पत्रकके आकारमें बनती है। श्रियां एक माय पांच पांच सात सात कांपे घपने कानोंमें डाल लेती हैं। यह धक्का लगनेसे हिल उठती हैं। ६ करनफल। ७ कलईका चूना। ८ कांपकांपो।

कांपना (हिं० क्रि०) कम्पित होना, धरधराना। २ मय करना, डरना।

कांपिल (हिं०) कम्पिल देखो।

कांयकांय (हिं० स्त्री०) काकका शब्द, कीवकी बोली।

कांय कांय (पु०) कांय कांय देखो।

कांवर (हिं० स्त्री०) १ बहंगी, बांसका मोटा फटा। इसके दोनों किनारे द्रव्यादि रखनेकी छोके लगा देते हैं। २ यात्रियोंके गण्णजन्त ले जानिका यन्त्र। यह एक टण्ण होता है। किनारों पर बांसको दो टोक-रियां बांध दी जाती हैं।

कांधरा (हिं० वि०) उद्दिग्ना, घवराया हुआ।

कांधरि, कांधर देखो।

कांधरिया (हिं० पु०) कांधर ले जानेवाला।

कांधरु (हिं० पु०) १ कामरूप। कामरूप देखो। २ कमल रोग, एक बीमारी।

कांधारयो (हिं० पु०) एक तीर्थयात्री। यह अपनी कामनाके लिये कांधर ले तीर्थयात्रा करता है।

कांशि (वे० पु०) कंस भवः, कंस बाहुलकात् इत्, वेदे षषोदरादिस्त्वात् सञ्च शत्वम्। काश्य, काशिका प्याला। कांशनील, कांशनील देखो।

कांस (हिं०) कांश देखो।

कांस (सं० लि०) कौशो देवमिदो ऽमननो ऽप्य, कंध
पद्म । विष्णुसर्पवर्तिनीययोः । वा० । १ । २१ । कंधादि
हित मोक्षदीप्तोय, कांस देयमं पैदा होमिवासे ।

कांसपात्र (सं० लो०) पादक परिमाण, ३०८६
मासिकी मील ।

कांसा / जि० पु०) १ कांस, कसकूट, मरत । यह
तमि वीर अष्टोके मिस्रकर बनता है । २ कासा, मोक्ष
भागिनीका अर्थ ।

कासागर (जि०) कांसकर ईशो ।

कांसिका (सं० लो०) सुवर्ण, मोठ पनाक ।

कांशो (सं० लो०) १ शीतलसिद्धि । २ कांसपात्र ।

कांशो (जि० लो०) १ कांसरोमविशेष, कांसके पीदेकी
एक बीमारो । २ कांस कांसा । ३ कनिष्ठा, सुवर्ण
कोठी धोरत । ४ कामयोग कांशो । कांशोय कांस ईशो ।

कांसुना (जि० पु०) यन्त्रविशेष एक धोहार अंतुका ।
यह कांस धातुका एक अंतुकोच अणु होता है ।
इसकी चारो धोर मोखाकार मर्त बनाये जाते हैं ।
सर्वाकार कंसुले पर रीय वा अर्धेके पत्र एक अणुका
हुण्डो तैयार करते हैं ।

कांस्टेबल (सं० पु० - Constable) टप्पर, राक्ष
सुवर्ण, सुरेत, शीकोदार, पुबिसका सिपाही । पुबिसके
सिपाहियोंका कामदार 'डेड कांस्टेबल' धोर अन्ध
रोम्बका शीकोदार 'श्रीमल कांस्टेबल' कहजाता है ।

कांस (सं० लो०) कंधाक पाणपात्राद्य हितं कंसोयं
तप्य विचारः, कंसोय यन् कंसोय । कंसोय कंसोये
कंसो इत्य । वा० । १ । २१ । कंसोय इत अर्थे यन्
वा । १ पाणपात्र अटोरा, प्याना । २ तास्य धोर
रहका उपकीत, कांस कसकूट तमि वीर अष्टोको
मिस्रा कर बनाया हुआ एक उपवातु । इसका संकृत
पद्यायुक्त, कसांस, तासांस, मोराहक, सोय, कांसोय
अन्धकोहक दोमिथीह, कोरहुय, दीसिकांस धोर
कांस है । राक्षसिहयुद्धके मतके यह तिष्ठ लय इय
अपाय, मनु अन्धरीयक पाचक, स्रोतःसमूह तथा
अपुके त्रिये हितकारक अविचारक धोर धातु एवं
अपरोमनायक होता है । राक्षसहमने इके अन्धार,प,
विमद सैवम नारक धोर विलनायक भी कहा है ।

सुवर्णोचये मनमं यव देवकी इठता धोर धातु बढ़ाता
है । इसका मोहन मारण प्रकृति तास्यकी भांति किया
जाता है । किसी किसांमि इसकी मोहन धोर मारणका
विधि अतन्व भी माना है । मोहनके त्रिये कांसके
पतसे पतसे पत्र अन्धिमं खूब तपाये धोर तोन तोन
बार तैल, तन्न, कांसिक, धामूय तथा कुसुममं मुभाये
जाते हैं । मारणके कांसके सुद्र पत्तोंपर अर्धकोरके
नन्वक पोस माद्र सैवम बढ़ाते धोर मूयापुटके लखे
रथ गणपुटके पकाते हैं । (भाष्यकाम) ३ कांस
विशेष अडियान । ३ मानविशेष, एक तोल ।
(जि०) ३ तास्यरह अणुपातुसे सम्बन्ध रखनेवाला,
मरतिवा ।

कांसक (सं० लो०) कांस ईशो

कांसार (सं पु०) कर्ण तत् पात्र करोति, कांस-अ-
पत् । कांसकार, कषीरा । कषीरा ईशो ।

कांसक (सं जि०) कांसकायमि, कांस बन-ह ।
कांस धातु धारा प्रकृत कांसिका बना हुआ ।

कांसताम (सं० पु०) कांसोय निमित्त तासः, मन्व
पदको० । १ करतास । २ मंकोरा ।

कांसदोहनो (सं० लो०) कसोरो, कांसिकी दुर्दुर्बो ।

कांसनोस (सं० पु०) कांसोय इतः नोसः, मन्व
पदको० । नोसतुला, दूतिया, नोसायोया । इसका
संस्कृत पर्याय मूयातुस्य हेमतार धोर अितुसक है ।

कांसमाजन (सं० लो०) तास्य धोर रहका उपवातु,
कांसा ।

कांसमय (सं० जि०) कांसके बनी या मरा हुआ,
को कांसके बना या मरा हो ।

कांसमल (सं० लो०) तास्यकिट, पुष्पार, तथिका
कहाक ।

कांसमाशिक (सं० लो०) धातु हन्धविशेष, किसी
द्विधाका अक्षमक ।

कांसाम (सं० जि०) कांससहय धामाविशेष,
कांसिकी तरह अमकर्मवाला ।

कांसपातु कांस ईशो ।

कांस (जि० पु०) १ अणु विशिषकी साहायक पकार,
कामकी बात । यह अणु रहता धोर दवानके कुच

यह दुष्ट दरिद्रोंके लिये प्रति अनिष्टकर है। कभी कभी कौवा फूसके छप्पर या भोपडेमें खाद्यादि छिपा रखता है। आवश्यक स्थान न पाते यह अधिक-कांश लूणादि खोंच घर तक उलट देता है।

यह करचोटियेसे बहुत चबराता है। उसे देखते ही काक स्थान छोड़ भागता है। वह भी इसके पीछे पड़ जाता है।

भारतवासियोंके नवान्न पर्वपर काकका बड़ा आदर होता है। प्रत्येक गृहस्थ 'नवान्न' ले घरकी छतपर चढ़ता और इसको आने बोलाया करता है। किन्तु उस दिन काकका आना कठिन पड़ता है। क्योंकि यह सर्वत्र भोज्य मिलनेसे लस रहता है।

२ (क) गङ्गापारी कौवा—'करवस्' जातिमें सबसे बड़ा होता है। भारतवर्षके उत्तराञ्चलमें यह अधिक देख पड़ता है। इसीसे हिन्दूस्थानी इसे 'गङ्गापारो' कौवा कहते हैं। सिन्धु, राजपूताना प्रभृति कई देशोंमें यह शीतकालकी नहीं रहता। शरत्के प्रथम यह आता और वसन्तके पश्चात् ही अफगानस्थान, काश्मीर प्रभृति शीतप्रधान देशोंको चला जाता है। हिमालय प्रदेशमें १४००० फीट ऊँचे यह मिलता, दूसरे पार्वत्य प्रदेशमें देख नहीं पड़ता। बङ्गाल, युक्त प्रदेश और पञ्जाबमें भी यह होता है। गात्र गाढ़ नील आभायुक्त चिकण लघुवर्ण रहता है। गलदेशके पालक दीर्घ और विरल होते हैं। ऊपरी भोंठ (टेंट)-का अग्रभाग कुछ वक्र लगता है। ऊर्ध्व चञ्जुकी उच्छता अधिक पड़ती है। पक्ष १५ इञ्च और देह २५से २७ इञ्चतक दीर्घ होता है। चञ्जुके समय पार्श्वोंमें गड़ा रहता है। चञ्जु और पदद्वय घोर कृष्ण वर्ण होता है। ऊर्ध्व चञ्जुका अग्रभाग कुछ वक्र रहता है। इसे बङ्गाली 'डोम काग' अंगरेज 'रावेन' (Raven), स्कव 'कर्वी' स्वीडनवासी 'क्रप', दिनमार 'रीन', जर्मन 'कोलक्रोड', फरासीसी 'करवो', इटालीय 'क्रवो', रोमक 'करवस्', स्पेनीय, 'एल कुदवो', पश्चिम भारतीय द्वीपवासी 'कष कष गिच', और एसकूइमोने 'तुलुभाक' कहते हैं। वैदेशिक शाकुनशास्त्रमें इसको करवस् कोराक (Corvus Corax) लिखते हैं।

हिमालय और युरोपमें रहनेवाला डोमकाक अधिक भोर होता है। यह कभी लोकानयमें जाना नहीं चाहता। किन्तु भारतके अन्यत्र स्थानोंका डोमकाक देशी कौविका भांति निर्भीक रहता और घरोंमें इच्छानुसार आया जाया करता है। यह प्रति हृन्मयि है। डोमकाक मड़ते मड़ते इतना उन्मत्त पड़ता, कि दोमें एक न एक अवश्य मरता है। सिन्धु-प्रदेशमें प्रति वर्ष शरत्कालको जब इनका दल आता, तब अनेकोंको मृत्यु घर दबाता है। इससे भोग अनुमान लगते कि डोम काक स्वभावसुलभ हृन्मयिताके कारण ही मर जाते हैं। सिन्धुप्रदेशवाले जातिगत कण्ठस्वरसे भिन्न घण्टेके ध्वनिकी भांति एक प्रकार शब्द निकाल सकते हैं। युक्तप्रदेशमें यह घास फूससे मैदान या हलके जङ्गलमें बड़े बड़े वृक्षांकी शिखावोंपर घोंसले बनाते हैं। इसके चार-पाँच अण्डे होते हैं। प्रायः पौष मासमें फाल्गुन तक यह अण्डे देते हैं। अण्डे हरित आभायुक्त तरल नील वर्ण होते हैं। उनपर काले मटमले, बैंगनी और लाल रङ्गके धब्बे पड़ जाते हैं।

(ख) भूटानका डोमकाक—हिमालयके ऊर्ध्वतम प्रदेश, काश्मीर, कुमायूँ राज्य और तिब्बतमें एक प्रकारका २८ इञ्च दीर्घ काक होता है। इसका पक्ष १८ इञ्च बड़ता है। ऊर्ध्व चञ्जुके मूलकी उच्छता अधिक रहती और पंख भी दीर्घ लगती हैं। अन्वान्त अवयव साधारण देशीय काककी भांति होते हैं। दो चार वैदेशिक शाकुनशास्त्रविद् इसे एक स्वतन्त्र जाति मान 'करवस् टिबेटेनास्' (Corvus Tibetanus) नामसे अभिधान करते हैं। किन्तु आकारकी सामान्य दीर्घता छोड़ इसमें कोई अन्य विभिन्नता देख नहीं पड़ती। इसीसे बहुतसे भोग तिब्बती कौविको देशीयोंमें गिनते हैं।

युरोपीय शाकुनशास्त्रविद् कहते कि डोमकाक (Raven) मनुष्योंके कण्ठस्वरका प्रतिमुद्गर अनुकरण कर सकते हैं।

(ग) पाटलचूड़ (गुलाबी चोटीवाला) काक—महप्रदेशमें होता है। इसका कपाल और मस्तक

पाटखाम (गुलामी) विह्वलरूपं रक्षता है। योड़ेके चर्ममें बेमनी रंगकी बिजबतता झलकती है। ऊपरी स्तरके पासक बिजब एम क्लयपर्यं पीर निम्न स्थानीय पाटखाम विह्वलरूपं समर्थ है। विह्वलरूपं पाकखोका प्राणतमान रक्षाम होता है। चक्षु का पुट कासा पड़ता है। दोनों पद भी कासि ही रहते हैं। देण्ड २२ इंच है। सिन्धुप्रदेशके याङ्गनाबाद पीर नारखामके मध्यप्रदेशमें मोतकाकर्म मो घट्ट दिख पड़ता है। पक्ष्याकी खोमकाक (C corax)के इसके नासका बन्ध निम्न सम्यता है। दूसरा पार्श्वक मसुदेयके पासकीकी सुदूर पाकति पीर देखके परिमात्रकी कहुता है। इसका वैज्ञानिक नाम 'बरबस पम्बिनस' (C Umbrinus) पर्यात् पाटखचूड़ काक है। यह भारतके कुम्भप्रदेशके मिसर पीर पश्चिमके पश्चिम तथा दक्षिणक देस तक समस्त स्थानमें मिलता है।

१ बौद्धियाका बोबाकी उत्तर भारतीय 'डांड' या 'डाक बोबा' दक्षिणमें 'बेरी बोबा' तेरह 'बाकी' तामिक 'बाबा', शेषका 'बलबबो', भूटानी 'डलड' पीर पमिक चंगरेज 'बारेन' (Baren) कहते हैं। सिन्धु याकुनतक्षत्र चंगरेज पण्डितोंने इसका नाम 'दक्षिणक कर्बी' (Indian Corby) रखा है। इसकी देकीके कई भेद हैं। उनमें कुछ मोचे लिखते हैं।

(क) गलित मांसमुक्—भारतीय बौद्धियाकी बोबेके ऊपरी पर चिकनी पीर बन्ध कासि होती है। किन्तु नीचेकासे पक्षिक क्लयपर्यं नहीं रहते। पुच्छके पासकीका नखान ईयत् मोकाबार मगता है। पक्ष विशेष सोई पड़ता पीर प्राय पुच्छके पन्धतक बिस्वत रहता है। चक्षुका पुट मरक बैठता है। उब चक्षुका पक्षकाल माग उब पीर पक्षमाम बल होता है। गलदेस (चाङ्ग) पीर बलुपार्श्वक पासकी, बिजब पता कम झलकती है। इस स्थानके पानक दक्षीक पासकी भांति मगते हैं। उनमें चूटो (डांठि) दिख नहीं पड़ती। कष्ट पद पीर पक्षिका बन्ध कासा होता है। यह १८ इंच लीठ रहता है। पक्षका प्यारकषे बीदक पुच्छका भात, परकी चूटोका दीर्घ पक्षिक पीर कष्टका देण्ड हार्द इंच है।

इसकी धमरीकी शाकुनयास्त्रके 'बरबस माकोर्बि हुस' (C macrorhynchos) पक्षका 'बरबस कलमि नाटम्' (C culminatus) लिखते हैं। यह भारत बर्षके वनों पर्यंतों कोकासमें प्रकृति पक्षक स्थानमें रहते हैं। पूर्वं उपरीय पीर भारतीय हीपर्येकीमें भी रहती कोरे कमी नहीं। प्रायकाककी भांति पक्षक न रहते भी पक्ष्याय आतोकीको अपेक्षा बह संख्यामें पक्षिक बैठते हैं। कोकासकी अपेक्षा इन्में वन पक्षका पवतमें रहना पक्ष्या सम्यता है। यह प्रथमतः भूत कन्तुका मांसदि खाते हैं। इसीसे चंगरेज इन्में 'कर्बी' या 'कैरियन' पर्यात् गलितमांसमुक् (सदा मोक्ष खातिवासी) कहते हैं। यह भी पक्ष्ये दीर्घ समय बिधी सुगम वनमें निबधट्टक क्लयपर बोसका बनाती हैं। बोसका चूकी घास पत्ते पीर कासके खोमक तथा उष्य कर लिया जाता है। एक बारमें तीन-चार पक्ष्ये होती हैं। पक्ष्या इकका इरा रहता पीर उष पर मूरा भूरा दाग पड़ता है। वैशाखके आरभ्य मासके मध्य तक पक्ष्ये देमिका समय है। इनके भी बोसकीमें बोयल पपने पक्ष्ये रख देती है। यह बड़े पण्डितकारी हैं। छोटे छोटे सुरगी कदूतरके बने पीर बिड़े पकड ले पाते हैं। बकरीका छोटा बन्ध भी इनके चक्षु पुटापातके चक्षुमुषुधमें पड़ता है। दूसरे पश्चिमका बोसका या पक्ष्या मोहते देख इनको 'राजकाक' पदे जाता है। पमिक चंगरेज इन्में 'जङ्गल को' (Jungle crow) कहते हैं।

(ख) सुतोपीय कारियनको (Carrion crow) बिलकुल भारतीय गलित मांसमुक्की भांति होता है। शिवम क्लयक नासका वष्यं पीर क्लय पीर कपोल (गास)का पासक चक्षु नहीं रहता। सर्वप्रथम बिजब सम्यता है। पुच्छका पासक पाठ, पक्ष बारक बीदक पीर कष्ट तोन इंच बढ़ता। शिवम भारत पीर काक्रीके यद काक दिख पड़ता है। इस ज्ञानीय पक्षीका पादि बासकाल सादरियेकी पूर्वीय में इनकोनदीके प्रथमतः मन्नावागर पर्यन्त है। उस स्थानके दक्षिण काक्रीर पीर पश्चिम इन्सीक पदम्य समस्त देसमें बह रहते हैं। इन्में चंग

रुकी शाकुनशास्त्रमें 'करवम् कोरोन' (C. Corone) कहते हैं।

(ग) काश्मीरमें दूसरी तरहका एक काक होता है। यह परिमाणमें गणित मांसभुक्से चूट मगता है। गात्रका वर्ण श्वेतकारकी भांति काला रहता है। यह प्रतिद्रुत उड़ सकता है। चीनमें इसका विषम विवाद है। यह भी गणित मांस खाता है। काश्मीर, हिमालय, और दुर्गमायी उपत्यकामें इसे देखते हैं। यह पार्वतीय काक (पहाड़ी कौवा) नामसे विख्यात है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसे डांक काक और ग्राम्य काक मध्यवर्ती काक 'करवम् इण्टरमेडियम्' (C. intermedius) कहते हैं।

(घ) सूक्ष्मवक्षु—मात्र नीलमिश्रित लण्यवर्ण होता है। मस्तक, स्तम्भ, पृष्ठ, उदर और चतुका वर्ण अपेक्षाकृत तरल रहता है। कपाल गाढ़ लण्यवर्ण लगता है। इसका देह्य १८ इंच है। पक्ष माटे सारह, पुच्छ सात, चक्षुपुट टाई इंच दीर्घ बैठता है। किन्तु चक्षुपुट पोल इंचमें ज्यादा मोटा नहीं होता। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमें इसका नाम 'करवम टेनु-इरोसट्रिस' रखा है।

एतद्भिन्न चीनदेशीय 'करवम् पेक्टोरालिस' (C. pectoralis) और यवहीय 'करवस एन्का' (C. enca) भी डांडकाक जातीय हैं। यवहीयका 'करवस एन्का' सूक्ष्मवक्षु काकसे मिलता, किन्तु चूटकाय रहता है। चीन देशीय 'पेक्टोरालिस' भारतीय डांडकाककी जातीय होता है।

ब्रह्मदेशीय ग्राम्यकाक—इसका कपाल, मस्तक, चिबुक और कण्ठ चिकण लण्य होता है। स्तम्भ (घाड) और चक्षुपात्र तरल पिङ्गलवर्ण रहता है। कर्णावरक और निम्न देशके पालक पिङ्गलाभ मिश्रित लण्यवर्ण देख पड़ते हैं। पक्ष, पुच्छ और अवगिट पालक चिकण लण्यवर्ण मगते हैं। इसके लण्यवर्ण पालकीसे मयूरकण्ठकी भांति नील और हरिद्वर्ण-मिश्रित आभा निकलती है। स्वभाव विलकुल भारतीय ग्राम्यकाकसे मिलता है। समस्त ब्रह्मदेशसे दक्षिण मरगुई और पश्चिम आसामसे मणिपुरके पूर्वाञ्चल तक

यह रहता, पश्चात् देश नहीं पड़ता। इसका ब्रह्म देशीय नाम 'किगियान' है। ग्रेट्टिक शाकुनशास्त्रमें 'करवम् इनसोलेना' (C. insolens) लिखते हैं।

५. चोटियाना कौवा—इसके मस्तकपर काका-सुवाकी भांति चोटो रहती है। मस्तक, स्तम्भ, मज्जेश, वक्षःस्थलका उत्तमभाग, पक्ष, पुच्छ और उदर चिकण देखते हैं। अवगिट पालक गड्ढाकी वाम् जमें धूमर होते हैं। ऊपरी पालक लण्यवर्ण और नीचेयानि पाटन मगते हैं। पेर, कण्ठ और उंगलीका रंग काला रहता है। देह्य १८ इंच है। पुच्छ माटे सात, पक्ष माटे सारह, पटकी चूटो दो और चक्षुका देह्य दो इंच है। साधारण अंगरेजीमें इसे 'हूड्ड कौ' (Hooded Oriole) कहते हैं। अंगरेजी शाकुनशास्त्रमग्नत नाम 'करवम् कारनिस' (C. Corais) है। इसकी तीन प्रेयियां होती हैं। आकृतिका प्रभेद स्पष्ट देख पड़ता है। एक दूमरीको मज्जमें ही पक्ष-यान सकते हैं। मशा चोटियाना कौवा (True Corvus Corais) पारसीप्रसागरके उपकुलसे पश्चिम युरोप पर्यन्त मिलता है। लण्यवर्ण पक्षको छोड़ इसके दूमरे पालक पांयन धूमर होते हैं। एक जातीय 'करवम कैपेल्लानस' (C. Capellanus) पारस्य उपसागरके उपकुल और मिस्रीपेटेमिया प्रदेशमें रहता है। इसके पर मज्ज और कलम भाने होते हैं। आकार यवहीयकी बात पहने ही बता चुके हैं। ग्रीक कालमें यह पञ्जाबके उत्तरपश्चिम प्राय, उम्पारा प्रदेश और गिनगिट प्रान्तमें देख पड़ता है। इसका आभा यदि मांसभुक् काककी भांति होता है। किन्तु यह गण्य मिलनेकी आगामे इसे दल बांध मैदानमें घूमना पड़ता है। भारतवर्षमें न तो यह घोंसना बनाता और न चण्डे ही देता है। साइबेरियामें चोटियाना गणित मांसभुकीके साथ सहवासोपि रख सन्तान उत्पादन करता है। यह वषसङ्कर का इंस देशमें देख नहीं पड़ता।

६. काश्मीर प्रदेश, पश्चिम एशिया और युरोपमें एक प्रकारका कौडियाना कौवा होता है। अंगरेजी शाकुनशास्त्रके मतसे यह भिन्न प्रेयिभुक्त है। इसके

यह पचयमोक्षा वर्ष खाका रहता है। मच्छक, कृन्म, पीर निम्न देखके पासबोमि नीचवर्षको विह्वलता तथा पाटबन्धी भामा भ्रमरकती है। परिभाष्य दण्डकावसि मिचता है। इतरविधियेव सामान्य है। पंगरीबोमि हसे 'बुक' (Book) कहते हैं। माहुन ग्राह्यका वैज्ञानिक नाम 'बरवसु प्रगिरीगर्ध' (C Frugilegus) है। पांच मास बौतये हो इसके मायकको नासाका ब्रोम (Nasal bristles) विर जाता है। विर हो मास पीके कुछके सभ्युय माग पर्यायु बचुके मुसुमि विह्वलता पासक नहीं रहति। यह भारतवर्षमें कहाँ रहता या पन्नाजोत्याहन करता है। हसे मच्छको देखते हैं। यह सुगमिसे बिजे हलदल मेदानमि भूमता पीर नदीबोत तथा जलाशयमि बोटादि ड्युता है।

०। काञ्जोरमि मो एक सुहृदाकार दण्डकाव होता है। हसे सुद्रुचु दण्डकाव कहते हैं। मच्छक तथा कपास विह्वल कृन्मवर्ष पीर कृन्म माडू प्रसरवर्ष रहता है। मच्छकका पाख्य एवं मच्छकिय तरक सुसर वर्ष होता है। प्रायः पाके गलदेवमि सफ़ेद भारिया पड़ जाते हैं। खरका पाकक पीर सुच्छ सुविह्वल नीचाम कृन्मवर्ष लगता है। परका कलम भूरा होता है। गलदेवका निचमान कृन्मवर्ष रहता है। पन्नाज्य पासक मो खेटकी भांति वर्षविमिह देख पड़ते हैं। दीवता २३ इच है। सुच्छ बाड़े पांच पच नी, पेरको खंडी छिड़ पाच बोंच छिड़ इच है। पंगरीबोमि हसे 'जाकड' (Jackdaw) कहते हैं। माहुनग्राह्यके पनुसार वैज्ञानिक, नाम 'बरवसु मोमिडुका' (C monedala) है। भारतके मच्छ काञ्जोर पीर इतर पन्नाजमि पड़ देख पड़ता है। मोतकासमि पन्नाका प्रदेशक पर्यंतके निचट मो हसे पाति है। काञ्जोरमि यह सुरातम चट्टासिकायो पीर ह्योंगर बौसका समा रहता है। इरका पन्ना ठसे ३ इचतक दीर्घ होता है।

८ खेतकाव—काकको भांति पविह्वल धाकारका एक पक्षी है। इसका समस्त मच्छक काकात्याकी भांति सफ़ेद रहता है। पदहल, चक्षु एवं चक्षु एवं

चक्षुका धाकार मो काकातुवैध मिचता है। हसे सफ़ेद बोटा कहते हैं।

काकके सन्मन्मि कर्ष प्रवाद सुन पड़ते हैं। जन्मि कुछ मोके निचे जाति हैं,—

(१) बोके दो पांखसे देख नहीं सकति। कारक एक दिन राम पीर सोता कभय बन्मि भूमति थे। इच्छुके पुत्र कभय सोताका वय देख मोहित वृधे पीर काक ह्यसे उनका कपोवसन खोंच ले गये। नखावात जन्मि सोताके स्थानसे रक्त मिरा या। राममि यह देख पाच खोड़ा। यह काकके चक्षुमि जाकर समा या। उषो दिनके बोरोको एक पांच छूटी है।

(२) बिसो प्यहलके मन्मानपर बैठ एक काकके दूधरेका माद कांट निखाकति या मच्छकैक्षित पासक संवारी सववापुत्रसन्माकिता बचू वा कन्माके दिख पार्मि उषो मासके खटुखान पीके ठक बचू वा कन्मा यमिबो हो जाती है।

(३) काकका पासक हूमिसे पूर्ववर्षमि विनट होता है। बहूतसे बोम हसी विख्यास पर पर बूबर सवख नखा कालति हैं।

(४) काक सिवा मच्छके दूधरे समय नहीं मरता।

(५) काक वय सरेरे छट बोखता पीर उड़ता बिन्नु धाकार पड़क नहीं करता, तब यम उहैयसे बलमिपर मज्जक रहता है।

(६) पक्षिमि काक चण्डासजातोय है। वह यवका देख परिन्धार करता है।

(७) काकका मांस तिन्न रहता पीर बिसो पयु पचीके खाद्यमि नहीं लगता। खार्पपरताको तुचनमि कहा जाता है काक सवका मांस खाता, बिन्नु उच्छा मांस बिसी खात नहीं पाता। काकपतिर ईकी।

मदनपासके मतके इसका मांस लक्षु, पम्पिदीपक, इ हच, बककारक, पासु एवं बचुके बिदे हितकर पीर सत तथा सवरोयनायक है।

३ एक कपर्धका चतुर्वीय। ३ द्वीपविमिह, एक डापू। ७ तिलकविमिये। ८ धिरोऽवसासन। (त्रि०) ८ ह्यमित मासके गमनकारी, खराब तीर पर बचमि-पाखा। १० पतिपुह, बड़ा बढमाय।

काककङ्ग (सं० स्त्री०) काकप्रिया कङ्गः मधुलो ।
 धान्यविशेष, चीना । 'कौमकसु काककङ्ग' (हिम श० ४४)
 काककण्टक (सं० पु०) जलचर पक्षिविशेष, पानीकी
 एक चिडिया ।
 काककर्कटी (सं० स्त्री०) खजूरी वृक्ष, खजूरका पेड़ ।
 काककला (सं० स्त्री०) काकस्य कला अवयव इव
 अवयवो यस्याः, मध्यपदलो० । काकजङ्घावृक्ष,
 एक पेड़ ।
 काककुङ्कुमल (सं० स्त्री०) नीलपद्म, आसमानी कंवल ।
 काककुष्ठ (सं० स्त्री०) कङ्क, दवामें पडनेवाली
 एक मट्टी ।
 काककूर्ममृगास्तु (सं० पु०) कौवा कछुवा, हिरन
 और चूहा ।
 काकक्री (सं० स्त्री०) काकं हन्ति, काक-हन्-ट डीप् ।
 महाकरञ्जवृक्ष, बड़े करींदिका पेड़ ।
 काकचरित्र (सं० स्त्री०) काकस्य चरित्रं वर्णितं यत्र,
 वहुव्री० । शाकुनशास्त्रका अंशविशेष, इक्ष्मणिशूनीका
 एक छिन्ना । इसमें यही उपदेश लिखते काकके शब्द
 विशेष चेष्टादिसे कैसे लाभालाभ मालूम कर सकते हैं ।
 वसन्त राजप्रणीत शाकुन शास्त्रमें कहा है—
 काक पाच त्रे षियोंमें बाटा है,—ब्राह्मण, क्षत्रिय,
 वैश्य, शूद्र और अन्यज । वर्ष, स्वर और स्वभावसे यह
 भेद पहचान लेते हैं । जो परिमाणमें वृहत् क्षण्यवर्ण,
 दीर्घ, विशाल मस्तकयुक्त और गभीरस्वर रहते, उन्हें
 विप्रजाति कहते हैं । मिश्रवर्ण, पिङ्गल अथवा नील
 चक्षु, तीक्ष्णरव और अतिशय बलवान् काक क्षत्रिय-
 जाति हैं । पाण्डु वा नीलवर्ण, श्वेत अथवा नीलचक्षु
 और शब्द अल्परुद्र वैश्यजाति होते हैं । भस्मकी भांति
 वर्णविशिष्ट, क्षणशरीर, अधिकांश ककार शब्द युक्त,
 और चञ्चल स्वभाव शूद्रजाति माने गये हैं । रुद्र,
 अथवा सूक्ष्म मुख, दौर्लभविशिष्ट स्वाम्भदेश, शब्द एवं
 बुद्धिवृत्ति स्थिर और अल्प आशङ्कावाले अन्यज कहते
 हैं । द्रोण नामक क्षण्यवर्ण विप्रकाक अष्ट होता है ।
 अभावमें जिनका कण्ठदेश श्यामवर्ण लगता, उनका
 लक्षणादि देखना पड़ता है । अद्भुत दर्शन होनेसे
 श्वेतकाक आद्या नहीं ठहरता । विप्रकाक प्रश करने

पर परिष्कार उत्तर देता है । क्षत्रियकाक विप्रकाककी
 अपेक्षा अल्प रहता है । वैश्यकाक अधिवेगन और
 शूद्रकाक पूजार्चन पानेसे बोलता है । किन्तु अन्यज
 काक सर्वदा समस्त प्रश्न नगाया करता है । इन पाँचों
 काकोंके शब्दसे उसी समय, तीन दिन, सप्ताह वा एक
 पक्षमें फल अवश्य मिल जाता है ।

शान्त और प्रदीप्त भावमें बोलना शुभप्रद है । किन्तु
 रौद्र स्वरविशिष्ट शब्द प्रशस्त नहीं होता । मधुर स्वर
 ही सर्वत्र अच्छा है । प्रदीप्त भाव अथवा परुषस्वरमें
 बोलनेपर कार्य बनकर भी विगट जाता है । किन्तु
 प्रदीप्त अथवा शान्तभावसे शब्द करते सिद्धि मिलती
 है । यदि काक शान्त एवं प्रदीप्त भावसे एक बार
 वाहर बोल भीतर आता और फिर वैसा ही शब्द
 सुनाता, तो समस्त विघ्न विनष्ट हो कार्य बन जाता है ।
 प्रथम दीप्त और पश्चात् शान्त शब्द निकालनेसे कार्य
 विगड़कर बनता है ।

सूर्योदयके समय पूर्वदिक् किसी निर्दोष स्थानमें
 सम्मुख बैठकर काकके बोलनेसे चिन्तित कार्य निक-
 लता और स्त्रीरत्नादि मिलत । अग्निकोणमें बैठ
 शब्द करनेसे शत्रुनाश, भयनाश और स्त्रीलाभ होता
 है । दक्षिण दिक्में परुष स्वरसे शब्द करनेपर अति
 दुःख, रोग वा मृत्यु आता, किन्तु मधुरस्वर रहते कार्य
 बन जाता और स्त्रीलाभ देखता है । नैऋत और
 सहस्रा बोल उठनेपर क्रूर कार्य लग जाता, दूत आता
 और मनुष्य मध्यम सिद्धि पाता है । पश्चिम दिक्में
 शब्द करनेसे वृष्टि पड़ती, राजपुरुषको अवायी ठहरती
 और स्त्रीसे लडावौ चलती है । वायुकोणमें बोलनेसे
 वाञ्छित वस्तु, अन्न एवं धान मिलता, किन्तु पड़ला
 आजीवन विगड़ता, अतिथि या पड़चता और अपनेको
 स्वदेशसे विदेश जाना पड़ता है । उत्तरदिक्में शब्द
 करनेपर दुःख, सपेका भय, दारिद्र्य, धनका नाश और
 प्रियव्यक्तिलाभ होता है । ईशान दिक्में बोलनेसे
 अन्यज आते, रोगके कारण उठते देखाते प्रिय वस्तु मिल
 जाते और पीड़ाका आधिक्यमें रहते मृत्यु पाते हैं ।
 ब्रह्मदेश अर्थात् ऊर्ध्व दिक्को मधुर स्वरसे शब्द करने
 पर वाञ्छित अर्थ, प्रसुर अनुग्रह और धन मिलता है ।

प्रथम प्रहरके समय पूर्व दिक्को आक बोसनेके चिन्तित कार्य बनता पमीट व्यक्ति या पड़ता और बिन्दु विषय मिना करता है। पम्बिबोपनि सर्वेण गम्ड करनेके श्रीकाम और मत्र नाय होता है। दक्षिण दिक्को प्रातःकाम बोसनेके श्री सुष और प्रियमत्र यति है। नैऋत दिक्के पड़ने पहर टेर बगानेके प्रियपत्नी, मिष्टाच सामथी और चिन्तित विषयको सिद्धि सिद्धती है। पश्चिम और पुकारनेके प्रथम जन धाते और मेष वरसने कम जाते हैं। बासुकोपनि बोसने शुभ, राजप्रसाद और पयिब डेण पड़ता है। उत्तर कोचको टेर ठठानेपर मय और, मोक सुष पयथा जन कामका संवाद मिलता है। ईशानकोपनि गम्ड पानि पर प्रिय व्यक्तिके साथ पाकाप, पम्बिका पाक, और बहुरथे कोयोंका साथ होता है। ब्रह्मदेयमें बोसनेके सुख एवं कामभोग, मन्धान, सम्पद् धन और सिद्धि पाते हैं।

द्वितीय प्रहर पूर्वदिक्को आकका गम्ड सुननेके कोई पयिक पाता, औरका मय टेखता और व्याकुलता तथा पतिदय आग्रहाका शिग बड़ जाता है। पम्बिबोपनि कोनला मित्रव्यक्तिके पानमनसंवाद और श्रीकामका सुख है। दक्षिणके गम्डे पानी पड़ता, पतिव्यय मय बढ़ता और प्रिय व्यक्ति या पड़ता है। नैऋतमें ही पहरको आक बोसनेके प्राचमय, श्री एवं भोग्यकाम और यात्रतोय रोगका नाम होता है। पश्चिममें पुकारनेके श्री मिलती, सम्पद् बढ़ती और कुष्ठटि पड़ती है। बासुकोपनि बोसनेके धन तथा और चङ्ग, दूतका पाममन, और श्री मांस तथा पयन्याम होता है। उत्तरको रम्य रव निहाकरनेके व्यगच एवं दुष्ट व्यक्ति पाता और जयकाम टेखाता किन्तु परम्य कर रहते औरमय बड़ जाता है। ईशानमें बच मासके बाकने पर और तथा पम्बिका मय समता और बिबह बाक्य सुनाता, किन्तु पबच लमने पर शुभभागमन एवं जयकाम टेखाता है। ब्रह्मदेयमें दिनके द्वितीय प्रहर कुम्भके राजप्रसाद तथा मिष्टाच मिलता, किन्तु कुम्भके औरमय कमता है।

तृतीय प्रहरको पूर्वदिक्को आकके रुच गम्ड

निहाकरते सम्पद् बढ़ती तथा औरमौति या पड़ती, किन्तु रम्य धनि रहनेके राखाकी पयायी ठहरती और अयपानि एवं कार्यसिद्धि कमती है। इसी प्रकार पम्बिबोपनि विबह गम्डे पम्बिमय, कलङ्क पसुंय संवाद तथा यात्राकी विषयता और विषय शरसे जयादि संवाद पाते हैं। दक्षिण दिक्क बोसनेके मीत्र श्री रोग कमता पास व्यक्ति या पड़ता और सुष्ट कार्य बनता है। नैऋत दिक्को गम्ड करनेके शिवागम मिष्टाच काम, गम्ड नाय, गूद्गममन, प्रसुके विबह संवाद नयच और यात्रामें कार्यनाय होता है। पश्चिमको टेर लवानेके मत्रजन मिलता, दूर पय चलना पड़ता, सुष्ट व्यक्ति या पड़ता, पमीट जयादिका संवाद कमता, श्रीकाम ठहरता और यात्रामें कार्य बनता है। बासुकोपनि बोसनेके दुर्दिनबार्ता, अपहृत वसुधा काम, सन्तोपहर संवाद उत्तम श्रीकाम और यात्रा होता है। उत्तर दिक्क गम्ड कर ठठनेपर कार्य बनता, पब मिळता, भोग्यव्यक्तिका मय संवाद सुन पड़ता और गमन तथा वेङ्गसमागम रहता है। ईशान दिक्के सुगम्डे भोग्य एवं जय मिलता, किन्तु कुम्भके धानि तथा कलङ्क ठठाना पड़ता है। ब्रह्मदिक्को बोसनेके तिलतपत्रक एवं ताम्बकहुक भोग्यकाम होता है।

चतुर्थ प्रहर—पूर्व दिक्को आक, बोसनेके पबकाम राजपूजा अमय, सम्पद्दुष्टि और रोग तथा पम्बिबोपनि गम्ड पानेपर मय, रोग न्यय और मिष्टागम दक्षिण दिक्क पुकारनेके तस्कर तथा मयुका मय बढ़ता, गिहजन या पड़ता और रीग एवं धन्य देख पड़ता है। नैऋतकी टेरेके पतिदुष्टि, पमीटसिद्धि और पबमें औरके साथ सुष्ट होता है। पश्चिममें पुकारनेके ब्राह्मपक्षा पावमन, पबक काम, श्री एवं जयकाम बंध्य, यात्रामें मनोरय पूर्य और राजप्रसाद होता है। बासुकोपनि बोसनेके प्रियपत्नीका पागमन, बसाइके मय प्रवास और मत्तर प्रत्यागमन है। उत्तरको गम्ड कर ठठने पर पबिक पाता, ताम्बक पाया जाता कुम्भ संवाद सुनाता वेङ्गबेवन मिलने देखाता, पयादि पर पाटोहच कमता और विबह यात्राके रोगी प्राच गंवाता है। ईशान दिक्को गम्ड सुन पड़ती

स्वर्णका संवाद आता और रोग नष्ट हो जाता है। ब्रह्मदिक्में बोलनेसे मध्यम वार्ता और मध्यम सिद्धि होती है।

टिक् और प्रहरादिके अनुसार सकल शुभाशुभ विमिश्रभावसे कहा है। इसमें दीप्तशब्दकी अशुभ और शान्त शब्दकी शुभकर समझना चाहिये। दूसरे दीप्तदिकका रव शान्त दिक्की प्रसारित होनेसे अधिक फलप्रद है। दीप्तदिककी बैठ उसी और देखते देखते बोलना अच्छा नहीं होता। दीप्त दिक्में रह प्रदीप्त दिक्की देखते देखते शब्द करना भी दुष्ट है। दीप्त दिक्में बैठ प्रशान्त दिक्की भूम बोलनेसे तुच्छ और दुष्टफल मिलता है। शाखा पर रह शान्त दिक्की देखते देखते रूज शब्द निकालनेसे अल्प अनिष्ट होता है। शान्त दिक्की दृष्टि डालते डालते शान्त स्वरसे बोलना पल्प अभीष्टप्रद है। शान्त दिक्में रह दीप्त दिक् देखते देखते शब्द करना शीघ्र अभीष्टप्रद होता है। इसी प्रकार मनुष्योंकी कार्कीका प्राकार, प्रकार, भाव और रव विभाग कर दिवारात्रमें चारों प्रहरोंका शुभाशुभ देखना चाहिये।

काल और स्थान विशेषमें काकका गृह निर्माण देखकर भी शुभाशुभ निरूपित होता है।

वैशाख मासकी निरूपद्रव हृत्तमें गृहनिर्माण करनेसे देशका मङ्गल और कुल्लित, शुष्क वा कण्टक-युक्त हृत्तमें घोंसला लगानेसे दुर्भिक्ष होता है। प्रशस्त हृत्तकी पूर्व शाखा पर घरे बांधते पानी बरसता, शकुन-प्रशद मिलता, नीरोग रहता और विषय हाथ लगता है। अग्निकीणकी शाखासे दृष्टि, भय, कलह वा पाप, दुर्भिक्ष एवं शत्रु द्वारा देश नाश और पशु वीकी पीड़ा है। दक्षिण शाखासे अल्प दृष्टिपात, अन्ननाश और शत्रु विरोध होता है। नैर्ऋत शाखा पर घोंसला लगानेसे वर्षाकालकी अल्प जल बरसता, मनुष्यकी रोग शत्रु तथा और भय रहता, दुर्भिक्ष पडता और युद्ध चलता है। पश्चिम शाखासे दृष्टि, नीरोग, मङ्गल, सुभिन्न, सम्पद् और आनन्द है। वायु-कीणस्य शाखापर घोंसला रहनेसे अल्पन्त वायु आता, मेघ अल्प जल बरसता, मूषिकोंका उपद्रव बढ़ जाता,

शस्य नसाता और दोनों और महाविरोध देखाता है। उत्तर शाखा पर सोनेसे वर्षाकालको परिमित दृष्टि, मङ्गल, सुभिन्न, सुख, नीरोग, सम्पद्-दृष्टि और समृद्धि है। ईशानदिक्स्थ शाखापर रहनेसे अल्प जल बरसता, शत्रु वदता, प्रजावर्गका उत्सर्ग पडता, वान्धव कलह लगाने लगता और जनसमूह मर्यादाशून्य बनता है। हृत्तके अग्रभागमें अति दृष्टि, मध्यदेशमें मध्यमरूप दृष्टि और निम्न देशमें रहनेसे अनादृष्टि होती है। भूमिमें कीण बनानेसे अदृष्टि और रोगादि भयकी दृष्टि है। शुष्क हृत्तपर बसनेसे विप्रह और अन्ननाश है। प्राचीरके रन्ध्रमें काक रहनेसे प्रभूत भय लगता है। निम्नप्रदेश, तरकीटर, वाल्लोक-रन्ध्र और लतामें सो जानेंस पीडा, अदृष्टि और देशके नियमकी शून्यता रहती है।

अष्टप्रखके अनुसार शुभाशुभका निरूपण—एकको वारुण, दोको अग्नि, तीनको वायु और चार अण्डे देनेको ऐन्द्र कहते हैं। वारुणसे पृथिवीमें शस्य बहुत बढ़ता, अग्निसे मन्द वर्षण पड़ता तथा रोपित वीजमें अहुर नहीं उठता, वायुसे शस्य उत्पन्न होते भी सूखते सूखते शलभ प्रसृति कौटोंका भक्षण-बनता और ऐन्द्र अण्ड प्रसव करनेसे मङ्गल, सुभिन्न, सुख और कार्य निकलता है।

काकके शब्द सेटादिसे यात्राकालीन शुभाशुभका निरूपण—कार्कीकी दधि और अन्नयुक्त पूजा चढ़ा यात्राके समय प्रवासी निम्नोक्त मन्त्रपाठपूर्वक नमस्कार करते हैं,—

“सुहृत्से बलिं पविषु मन्त्रपूर्वं तं प्राप्सिषु प्राप्सिषु वर्षं लक्षम्।

शुभे न च सौं मजसे नमोऽस्तु तुभ्य खगेन्द्राय सकृत्प्रशय ॥”

नमस्कारके पीछे अपना कार्य सोच सिद्धिकी कामनासे काक दर्शन करना पड़ता है। उस समय यदि यह वामदिक्से मधुर शब्द कर दक्षिण और चला आता, तो सर्वार्थ सिद्ध हो जाता और प्रत्यागमन देखाता है। फिर वाम दिक्से भूम लौट आने पर भी अभीष्ट कार्य बनता, मङ्गल लगता और शीघ्र प्रत्यागमन पडता है। वामदिक्में अनुकीम आगते अर्थात् ऊपरसे नीचे आते समय मधुर रव निकालने पर प्रयोजन सिद्ध होता है। वाम और दक्षिण उभय

दिक उक्त प्रकारसे ही शब्द करने पर कुछ कार्य बनने और कुछ विमर्श ही है। पृष्ठदेशको मधुर करने कोही बोधते वहु करनेपर मङ्गल होता है। शब्द करने करने पाति पाने, वहु बकर एवं टेपाने पयवा पद द्वारा मत्ता सुत्रस्थानेसे समिष्ट सिद्ध होता है। हाथी बाधनके घटे पर बैठ कर हाथी जाननेसे हाथी मिलता और हाथीपर राजत्व भी पचता है। पयके बन्धन स्थान पर बैठकर पुकारनेसे वाहन एक मूमिहा काम होता है। अत्रसे विजय, कूपसे नटबलु एवं लयका काम नदीतीरसे कार्य सिद्ध पूर्ण घटसे बनसाम प्रासादसे चान्ध राशि और इन्वपृष्ठ एवं शय्यस्थपूर्य मूमिपर अवस्थित हो कोननेसे जननाम है। फिर बुम्ब शब्द निष्कारनेसे भी बन मिल जाता है। पृष्ठदेश वा शय्युक्तको गोमय पयवा बटादि हृत्त पर बैठ कर विद्यासुख कोननेसे पतिनमित मोत्रन पान काम होता है। फिर सुधमें पचादि, विद्या, पक्ष, मूल, पुष्य वा मन्त्र देख पडते भी मिष्टाय मोत्रन पाते हैं। नागी-शिरस्य पूर्ण घट पर पठ कर पुकारनेसे श्री एवं बन काम है। शय्यापर बैठ कर कोननेसे सुत्रन समागम होता है। सामने गोपृष्ठ, हृत्त, पूर्वा वा गोमय पर चतु रगङ्गते पयवा चन्धको पाहार प्रदान करते देखनेसे विविध भोग्य मिलता है। चान्ध यत्र, दधि वा हृत देख बाध लठनेसे बन पाते हैं। सुधमें हरि एवं लय से चन्धुच पानेसे काम रहता है। मनोरम चन्द्र, पत्र, पुष्य, पक्ष तथा जापानुक्त हृत्तपर शब्द करनेसे कार्यसिद्धि होती है। हृत्तके शिखरदेशमें प्रमात्त भावसे शब्द करने पर श्रीपञ्च गठता है। धान्यादि राशिपर रथ लगानेसे पक्षकाम है। गोपृष्ठ पर बैठकर कोननेसे गो एवं श्रीकी पाति हैं। इन्द्रि मिथसे पृष्ठपर शब्द करनेसे मङ्गल होने लगता है। इती मकार गदमर्क पृष्ठसे मात्र मय तथा बध, शूकरसे पृष्ठसे बध, घन पङ्कसुक्त शूकरसे बन काम, महिषसे हृत्तसे मधोञ्चर कृतेके शरीरसे शब्द, शूब्यकलठसे कार्यसिद्धि और काष्ठ पर अवस्थित हो शब्द करनेसे कलठ है। दक्षिण दिक्में बोक चरते, पशुचरते शय्य, शूब्यकलठसे कार्यसिद्धि और काष्ठपर अवस्थित

हो शब्द करनेसे कलठ है। दक्षिण दिक्में बोक चरते चन्धुचरते वा पङ्कसे पयवा पयाद् दिक् शब्द सुनाते हुनासे विपरोत मानसे गमन करते रक्षपात होता है। काम और दक्षिण क्षमसे समय दिक् शब्द करनेपर पक्ष रहता है। काम दिक्से विप रोत मानसे जानेपर विघ्न पङ्कता है। पचाद् दिक्से शान्ते दक्षिण और ममन करनेपर रक्षपात होता है। जतादि से प्रदक्षिण लगानेपर सर्वमय रहता है। गीपुष्य और वस्त्रोक्त पर बैठ शाननेसे सर्वदर्शन होता है। पञ्जार बिता और पक्षिपर पक्षस्थानकर शब्द निष्कारनेसे शय्य पातो है। वर चर्च कर शाननेसे शानि घोर पौडा है। पृष्ठदेशको निहुर शब्द करनेसे शय्य होता है। शूब्यसुख पेशासे रहनेसे पमङ्गल क्यता है। पराटसुख होती रक्षपात वा वन्धन होता है। परस्पर लङ्गनेसे बध है। पराहसुख ही शय्य हृत्त पर रहनेसे शय्य लगता है। तिष्ठ हृत्त पर पक्ष स्थान करनेसे कलठ और कार्यनाय होता है। कण्टक हुक्त हृत्त पर पक्ष इय कर्पा हृत्त शब्द करने पर शय्य पातो है। मन्त्र याज्ञापर रहनेसे बध है। जता विहित स्थान पर अवस्थित होते बन्धन पङ्कता है। कण्टकसुक्त रम्य हृत्तपर बैठते कलठ कार्य सिद्धि है। पाण्डुक्त हृत्तपर रहनेसे रक्षपात होता है। विद्या पावर्जना, पतिव्या, लक्ष, काष्ठ, कूप और मध्यादि पर बैठनेसे काय विनङ्क जाता है। काकसे सुत्रमें लता, रज्यु, शय्य, काष्ठ, चर्म, पक्षि और चन्धुच बल्लक, पञ्जार तथा रक्षोपक्ष पादि देखनेसे पुत्रस्य पाप समागम, पक्ष एवं पाण्डुयमें मङ्गलमय, शय्य बन्धन, पक्ष और सर्ववनापहरण प्रसिद्धि होता है। सुधके लपर ठठा पचन पचसे कर्कश शब्द निष्कार नेसे शय्य पाता है। एक पेर लिङ्गोङ्ग और सुयकी और लुक् मोङ्ग शीघ्र करनेसे कोनने पयवा काष्ठादि फोङ्गनेपर हुवादिमें पक्षमें रहता है। चन्धुसे पुष्पदेश सुत्रसा शब्द करने पर शय्य होता है। एक पेरसे बैठने बन्धन है। मन्त्र पर विद्या वा गोमय काष्ठ देनेसे बाजाकारी बन्धनमें पङ्कता है। पक्षि देखनेसे शय्य होता है। अर्ध दिक् कोननेसे श्रीदीव लगता

ॐ अमिहव्रित मोक्षण एवं वाम नाम 'कु' के प्रथम प्राप्ति, 'कु' के अर्थशाम, 'केके' से सुन्दरी श्रीप्राप्ति, कां कां से यात्रासिद्धि, 'मौ' 'मौ' से शुभशाम पौर 'कुकु' शब्दसे प्रिय सङ्गम है । 'कां कु' 'कां' एवं 'कां' कुहवनन पौर 'कां कां मौ' 'मौ' 'कु' तथा 'मौ' कुकुकु' शब्द जाता, 'मौ' 'मौ' रक्षाके बडाता, 'अल अल' पन्नि बजाता, 'मौ' 'मौ' तथा 'मौ' 'मौ' शब्द बडाता, 'मौ' पर्यदा विपल देखाता, 'कु' मित्र मिलाता । 'काका' ज्ञानि पणु जाता, 'कु' कु' कु' नडाता 'के' 'के', 'का कुट्टि' एवं 'किं किं' परबोध बनाता, 'कां कां कां' मङ्गल सुहृदा समाचार सुनाता, 'कां' वाहन बडाता पौर 'कु' कु' कु' शब्द पर्य दिखता है । अन्त, दोन पौर अन्धाहरीन शाक बोध 'का' मोलनेसे कार्य नामक है । 'कक कक' से मोक्षण मिलता पौर 'कलि कलि' से रत्नेन्द्रियप्राप्त रूप पूर रहता है । (कक करसे मोक्षनेपर विदेशी स्थिति पाता है) 'मममम'से मृत्यु, 'कककक' से ककक कुकु कुकु' से प्रिय स्थितिका प्रागमन पौर 'कट कट' से प्रथ एवं इति मोक्षण होता है । इसी प्रकार कई प्रयोग पौर धान्य करोसे धान्यपत्र देष्ट पड़ता है ।

एहि चर्चाय प्रसीद पाश्चादि पानेसे शाक निम्न श्री वित्तबो बडाता है । प्राचीन सुनिर्वाण शाकशक्ति प्रदानका बो नियम रक्षा, उसे हमने गोपे लिखा है—
दक्षिणको जोड़ पश्चात् पौर बडादि श्रीरी हुकसे पाचपसे बहु काकोसे एकत्र रक्षनेके एकापर निश्चल दिनमें पणु क कर वलि पिच्छके बिदे निमन्त्रक देना पड़ता है । क्रूर दिन प्रातःकाल उल ट्रकका निम्न देय म्हाड़ पोण्ड गोमयसे कोपती है । फिर यहां विदो बना ब्रह्म, विष्णु, सुर्व इन्द्र, पन्नि वेवक्रत, राक्षस, बहच, वायु, कुबिर, यक्षु पौर अष्ट लोकापालको पूजा को जाती है । पूजाके समय प्रथम पौर नमः शब्द मुख घुबक् प्रथक् नाम क्षीते है । पर्य, पावन, प्रासेपन, पुन्य, रूप, नैवेद्य, दोष तच्छल पौर दक्षिण पूजाका उपकरण है । पूजात्पर तद्विनिधि काकोको मन्त्रप्राप्तपूर्वक पात्राण कर इति पिच्छ मुख वलि निष्कलित मन्त्र पढ़वे पढ़ती देना

वाचिदे,—
"अथ एकम परवाम पुरातन वृत्तपरकम एवं यथाह वै वार्ता ।"
एतद समस्त कार्तिके पन्नाको बडासे अष्ट निश्चल देयमें निश्चल मायसे पणु को काकोको विप्रिय विष्टासे धमाचम देखते है । पूर्वदिक्से पाना पारश्च करती सुच पौर वन बडता है । पन्निबोबसे मोक्षण पारश्च बोपे प्राग लगती है । दक्षिण दिक्से प्राति पर्य नाम है । नैर्दृत्तसे कार्य ज्ञानि होती है । पश्चिमसे प्रसीद स्थिति है । वायु दिक्से पश्य अल बरसता है । उत्तरसे सुच, पारोष्य पौर जाय स्थिति है । फिर ईशान दिक्से काकोके वलि प्राति प्रसीद मिश्र जाता है । चारों पोरसे कलि विनकुण विह्वल ईरिपर शत्रु, पौर पचम देवों पञ्चमी सन्धानना है । शाकन न करनेसे भयको प्रागप्रा उठती है ।

श्रीरोहण, उपवन, चतुष्पथ, नदीतोर एवं देवासल प्रवृत्ति ज्ञानों पर भूतदिन (चौदय) तथा अष्टमी तिथिको चर्चदिव मीक्षम वा चर्चक है । एतद्विषय क्रूर प्रकार सो विप्यदानको स्पष्टता है । नारदादिने तोन विप्य देगिबो वात बडा है ।

एत दिनकी चतुर्ष प्रकरके परम पूर्णत ज्ञान पर विप्यत्रय प्रागिके बिदे काकोको सयत्र निमन्त्रक देति है । क्रूर दिन प्रातःकाल भूमि शेष पोण्ड पूर्णकवित मन्त्र द्वारा ब्रह्मा विष्णु, महेश्वर, बहच, शीकपाल पौर काककी वधाक्रम दध्वादने, पाङ्कजातप्युक्त, प्रथम रूप प्रवृत्तिसे पूजते है । फिर पूर्वादि दिक्से चतुस्रार प्रथम विप्यमें कर, द्वितीयेमें रौप्य पौर त्रतीयेमें शोण कला चर्चदिष्ट इत्यसे वलि प्रदानके उपरुक्त पिच्छ बनाना वाचिदे । वलि शाकन करनेके विधि निम्नोक्त मन्त्रके शाक बोलाये जाती है—

व विमि द्विदि विवि वाकचकलाप वार्ता ।
व वाकसे विपान वाकचकलाप वार्ता ।"

वाकके सुवचभुक्त पिच्छ मोक्षण करनेसे उत्तम कार्य होता है । फिर रौप्य मुख ज्ञानिके मध्यम पौर श्रीहमुख क्षेपिसे प्रथम समस्त है ।

विवाह, वाचिष्, विवाह, इष्टि, मङ्गल, वन, इति, भोग, रोग चपाम, वेवा, राककार्य पौर श्रेयके

सम्बन्धमें शुभाशुभ देखनेको उक्त प्रकारसे बलिप्रदान कर समझते हैं,—

काकके शिशुको ले अनुकूल चेष्टा लगाने और टक्षिण पर तथा घोषा उठा बोलते बोलते मनोप्रस्थान वा मनोप्रवृत्त पर जानिसे शुभ और अमीटकी सिद्धि होती है। इससे विपरीत चेष्टामें उलटा फल मिलता है। प्रधान शिशुको लेकर शान्तदिक् चलनेसे पूर्ण लाभ होता है। शिन्तु पिण्डके साथ प्रदीप्तदिक्की प्रस्थान करनेसे कार्य प्रथम बनते भी पीछे विनकुल विगड जाते हैं। द्वितीय पिण्ड उठा शान्तदिक्की जानिसे शुभ रहता और कार्यका फल विलम्बमें मिलता है। जवन्य पिण्डके साथ प्रदीप्तदिक्की चलनेसे कार्य भी जवन्य होता है।

पिण्डरुद्ध शालकी व्यवस्था—शुभदिनमें सायंकाल बलि भोजनके लिये काकोको निमन्त्रण देना चाहिये। दूसरे दिन प्रातः काल अमृत उपकरणके साथ किसी निर्जन देशमें तर्कके तन्त्रपर पङ्च भूमिको मृत्तिका गोमय प्रमृत्तिमें परिष्कृत और पञ्च गन्धसे परिशुद्ध करते हैं। फिर शीघ्र उपहार दे कुलदेवताको पूजा दत्त एवं दक्षिमिन्त्रित आठ पिण्ड पूर्वादि क्रममें आठो दिक् इन्द्र, वरुण, भव, नैऋत, विष्णु, ब्रह्मा, कुबेर, नईश्वर और काकको देते हैं। प्रत्येकका नाम ले प्रणव एवं नमः शब्दयुक्त मन्त्र, तथा अर्घ्य, आमन, आलेपन, पुष्प, घृण, नैवेद्य, दीप, आतप और टक्षिणादिसे पूजा करते हैं। पूजाका मन्त्र नीचे लिखा है,—

“ॐ नमः खगपदये गरुडाय शीघ्राय किरानाय साहा।

शीघ्रादहसर्मे पिण्डं यद्वापजमगच्छितम् ।

यदाहट निमित्तघ वक्ष्यन्त्या मी श्रुटम् ॥”

पिण्डदानके पीछे वहांसे विघ्नक किसी निम्न स्थानमें खुडे हो काकचेष्टा देखना चाहिये। प्रथम पिण्ड लेनेसे कार्य सिद्ध होता है। द्वितीयसे उद्देग शोक, यात्राकी विफलता, हानि वां कलह, तृतीयसे रोग, आपद्, भय एवं मृत्यु, चतुर्थसे युद्धमें जय, पञ्चम महकमें अमीटसिद्धि, षष्ठसे प्रवास तथा विफलता, सप्तमसे असिद्धि और अष्टम पिण्ड ग्रहण करनेसे

मन्ताप, शोक एवं यात्राकी विफलता है। यदि काक पिण्डको विनकुल नहीं खाता अथवा चतुर्नक्षत्रमें फेंक जाता, तो सर्वकार्यमें अमटन खाता या गहरा युद्ध देखाता है।

काकचिन्ता (सं० स्त्री०) काकवर्ण चिन्ता प्रान्तभागः फले यस्याः, शुभोदरादित्वात् साधुः । १ गुन्ना, घुंघची । उदा श्लोः । २ रक्तगुन्ना, नाल घुंघची ।

काकचिन्ति, काकचिन्ता श्लोः ।

काकचिन्तिक (सं० स्त्री०) काकचिन्तापृष्ठ, घुंघचीका पेड ।

काकचिन्ती (सं० स्त्री०) काकचिन्ति-दोष् । गुन्ना, घुंघची ।

काकच्छट (सं० पु०) काकस्य छटः पक्षः इव हृदो यस्य, मध्यपदलो० । १ चतुर्नक्षत्री, चडरैचा । २ चापपक्षी, नीमकण्ठ । ३ कौषेका पर ।

काकच्छटि (सं० पु०) काकच्छट या हनुकात् इच् । वाक्च्छट श्लोः ।

काकच्छटि, वाक्च्छट श्लोः ।

काकजंघा (सं० स्त्री०) काकस्य जंघीय जंघा आकृति र्थस्यः, मध्यपदलो० । १ मृत्नामख्यातहृत्, एक पेड । इसका संस्कृत पर्याय—काकाद्री, काकावी, काकनामिका, क्षपीवन, छाडुचर्वा, काकाह, सुलोमगा, पारावतपट्टी, टामो और नदीकान्ता है । राजनिवण्टुके मतमें यह तिष्ठ, उष्य और व्रण, कफ, वधिरता, अजीर्ण, जीर्णज्वर तथा विषमज्वरनाशक होती है। मृदानायके कथनानुसार काकजंघा ज्वर, कण्ठ, विषमज्वर और क्षमिको दूर करती है।

पुष्पानक्षत्रमें इसका मूल उष्णह रक्त सूत्रसे गने या हाथमें बांधनेसे एक दिनके अन्तरसे शानिवाला ज्वर (एकातरा) छूट जाता है ।

कोई कोई इसे समी या चकसेनो भी कहते हैं। काकजंघाका नाम वेनगुमें सुरपटि (टिविकि वेनमा) है। अंगरेवी उद्भिज शास्त्रमें ल्याहिरटा (*Leea hirta*) लिखते हैं । यह ४१५ हाथ बढता है । काण्ड-सम्बिका मध्यभाग काकजंघाकी भांति छत्रत रहता है। इसी स्थानसे पत्र निकलते हैं। काकजंघाके

यस्य पाच जाय रोचं पीर इ पशुति प्रयच्छं चोति है।
 कनका पयमाग लक्ष्म तथा बहु शिरायुक्त लोमय पीर
 विहित परस्परं सगता है। फल शुष्कदार होता
 है। उसका लपरी वर्तुल प्रदेश कुछ निम्न पड़ता
 है। शाकजम्को पुरानी मोदी माठमें एक छोड़ा
 मी रहता है। यह बसोबी पत्तनी चमकनेसे पीप
 चको भाति ध्वजदार लिया जाता है।

भारतमें नामा ज्ञानोपर शाकजम्का उत्पन्न होती
 है। विशेषतः पश्चिमोत्तर यमोर पश्चिमके नदीकुलवर्ती
 वनमें यह बहुत देव पड़ती है।

२ गुच्छा चुंबकी। ३ सुखपर्षो घता, सुगौन।
 शाकजम् (सं० जी०) शाकजम् जम्। १ मूमि
 शाकजम्, लड्डो लामनका पीड़। (Ardisia humilis)
 रस रंगलामि वनजाम मसयमें बीसी, लड्डियामि
 कुदना, रसगुमि कोदमयाद शाकी नारदु नागपुरीमें
 जातेना, महिच्छरीमें कोदिनाविह, जमीमें म्येड मीप
 पीर सिंघोमें बहदून कहते हैं।

यह एक छोटी झाड़ी है। भारतमें शाकजम्
 प्रायः सर्वत्र पायी जाती है। बिन्दु उत्तर भारत
 पीर सिंघोमें यह नहीं मिलती। इससे पकोषि रस
 बर्ष इससे पच्छा पीका रंग निकलता है। बाठ
 सुखरबर्ष एवं ईपत् कठिन भाता पीर बसाया जाता
 है। पेदाक निष्पत्तके मतसे यह कपाय, पक्क, शुष्क,
 पाकमें महद, सौर्य सुखि-बलकारक पीर दाह, अम
 तथा पतौधारनापक है।

२ नामरुद्रघट, नारडोका पीड़।

शाकजम् (सं० जी०) शं ब्रह्म पञ्चति शाकजम्के
 पञ्चति, क पक पञ्-टाप, शाका शाकी जम् चिति,
 वसंशा०। शाकजम् जम्, विशेष, पानोमें पेदा जोमि
 बाको एक जामन। इसका संस्कृत पर्याय—शाक
 पला, नाडेयो, शाकजम्मा, लड्डोडा, शाकजोला,
 शाकजम्पीर पीर वनप्रिया है। शाकजम् बीकी।

शाकजम् (सं० पु०) शाकजम् जातः प्रतिपासिन बर्षित
 रस्यं। १ शाकजम्, शिबिल कोषिसे परमरिय
 पायी हुई शिबिल। (त्रि०) २ शाकजम् उत्पन्न,
 कोषिसे पेदा।

शाकजम् (सं० जी०) शाकजम्का, मसी, पकसेनी।
 शाकजम् (सं० पु०) १ लक्ष्मिदीप, एक पीड़। यह
 लक्ष्मिदीप पीर हिमाचल प्रदेश पर होता है। जूमायमें
 इसे पकिक देखते हैं। शीतकालमें इससे पक भङ्गते
 हैं। बाठ पोताम सुखरबर्ष होता है। इससे बिहद
 (हरसी) मज (मिज), मय्या (पक्षग) प्रचलित
 बनते हैं। पत्र पशुकी विशायि जाते हैं। शाकजम्के
 बांटे 'शाकजम्मीनी' कहलाते हैं। बर्षपरी बीकी।

शाकजम्मीनी (सं० जी०) बर्षटनडो, एक पीला
 गंदा। यह शाकजम्के पीड़में लगता है। बावरा बीकी।
 इससे दूसरो कोर्नोपर रंग पदाति पीर चमका सिमाते
 हैं। कोर्नोर्षमें मिला सेनेसे शाकजम्मीनी काको पड़
 जातो है। इसका शाखाद कपाय है। बर्षपरी बीकी
 शाकजम् २ (सं० पु०) लक्ष्मिदीप, शाका गूजर।
 यह शिडा होता है।

शाकजम् (सं० जी०) लक्ष्मिदीप पञ्चति निमीकति, लक्ष्मि
 पञ्च, शिा कादेय। १ गुच्छा, चुंबकी। शाकजम्
 मिष शाकजित्पर्यायि लक्ष्मिदीपविहितम्। २ लक्ष्मि
 विशेष, वासी पीर लाम बनेशाना सुगौन या शिडा।
 (Leprosy with black and red spots)

गुच्छाको भाति बर्षविषिष्ट, पपाक (न पकनीवासे)
 पीर शिदानुक्त लक्ष्मि 'शाकजम्' कहते हैं। यह लक्ष्मि
 विशेषसे उत्पन्न होता है। सुतरां इसमें शिदीयसे
 शाकजम् देव पड़ते हैं। शाकजम् पसाय लक्ष्मि है।

शाकजम् (सं० जी०) शाकजम् कांश्च जम्। शाकजम्
 लक्ष्मि, लक्ष्मि-सेशा शिडा।

शाकजम्पीर (सं० जी०) लक्ष्मिदीप, सुगौन या
 कोर्नोको एक दवा। कोर्नोमय, शिव, शिवकला मूल
 कटका, शिफला, शिबदु पीर शिमद (विहद, सुख
 तथा शिवक) सममाग से पीस लाकते हैं। फिर
 इस मूलको मय्या (हर), निम्ब, बिहद, वासक पीर
 पयता (शुंभ)के शाकजम् भावना से जोखिया बना लेते
 हैं। भावनाके लिये पडावयेव शाकजम् है। एक
 माघ यह पीपच खासिसे शाकजम्के पच्छा ही जाता
 है। (रवरावर)

शाकजम् (सं० जी०) लक्ष्मिदीप पञ्चति निमी

लन्ती, काकणन्ती-कन्-टाप्, को: कदादेशः। १ गुष्ठा, लाल घुंघची। ३ रक्तकम्वल वृक्ष, लाल बघोलेका पेड़। काकणन्ती (सं० स्त्री०) कु-कण-शब्द लीप्।

काकणन्तिका देखो।

काकणान्तक (सं० पुं०) सिन्दूर।

काकणी (सं० स्त्री०) काकण-डीप्। १ गुष्ठा, घुंघची। २ कुष्ठविशेष, किसी किसिका जुलाम।

काकण देखो।

काकण्डा (सं० स्त्री०) काकनासा, सफेद कौटी घुंघची।

काकतन्द्रा (सं० स्त्री०) काकस्य तन्द्रेव तन्द्रा मध्य-पदलो०। १ काककी तन्द्राकी भांति अति सतर्क भावमें तन्द्रा, कौवेकी काहिली-जैसी निहायत होशियारीमें सुस्ती। २ काककी तन्द्रा, कौवेकी काहिली।

काकता (सं० स्त्री०) काकस्य भावः, काक-तल्-टाप् १ काकका घस, कौवेका फल। २ काकका स्वभाव, कौवेकी आदत, कौवापन।

काकतालीय (सं० स्त्री०) काकतालमधिकृत्य उपदि-टम्, काक-ताल-द्ध। सम्राज्य तस्मिन्। पा३।१।१०६।

न्याय विशेष, एक मन्तिक। सुपन्न ताल अपने आप गिरते समय यदि काक वृक्षपर आकर बैठ जाता, तो कह्य जाता कि काक ही ताल गिराता है। इसी प्रकार कौई काम स्वतः सिद्ध होती यदि किसीका हाथ लगता, तो वह उसीका किया ठहरता है। ऐसी ही घटनामें काकतालीय न्याय होता है।

“तदिदं काकतालीयं देवमादात्त तया।” (रामायण ३।७१।१०)

(त्रि०) २ आकस्मिक, दैवायत्त, नागदानो, उत्तिफाकी। (अव्य०) ३ अकस्मात्, इत्तिफाकसे, अचानक।

काकतालीय न्याय, काकतालीय देखो।

काकतालीयवत् (सं० अव्य०) अकस्मात्, इत्तिफाकसे अचानक।

काकतालुकी (सं० त्रि०): काकवत् तालुरस्यास्ति, काक-तालुक-इनि। इतिपतापगर्हात् प्रापिस्तादिनि। पा।३।

२।२२८। काककी भांति तालुविशेष, कौवेकी तरह तालू रखनेवाला, खराब, बुरा।

काकतिहका, काकतिहा देखो।

काकतिहका (सं० स्त्री०) काकमांसवत् तिहका, मध्य-पदलो०। १ लताकरपत्र, वेनदार करौंदा। २ काक-लंबा, मसो, चकमेनी। ३ खेत गुष्ठा, सफेद घुंघची।

काकतिन्दु, काकतिन्दु देखो।

काकतिन्दुक (सं० पुं०) कां जलं प्रकति, का-प्रक-अण्; काकचासौ तिन्दुकश्चेति, कर्मधा० यद्वा काकवर्णस्ति-न्दुकः काकप्रियो वा तिन्दुकः, मध्यपदलो०। तिन्दुक-विशेष, किसी किसिका आवनूष। (Diospyros tomentosa)

इसे भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें अन्दुनी, जिनाई इस्किन्द, पेदा इस्किन्द, नोगरिके, श्रीलक्ष्णे, उस्किन्द या उलिमेरा कहते हैं। यह मध्य आकारका वृक्ष है। काकतिन्दुक दाक्षिणात्यमें उड़ीसे तक मिलता है। सूत और नासिकमें यह अधिक देख पड़ता है। इसे गोदावरो वनका भाड़ कहते हैं। चान्नाघाट पर्वत और मन्द्राजमें भी यह पाया जाता है। इसका फल गोल बड़े मटरकी भांति होता है। पकनेपर लोग इसे खाते हैं। यह अति सुरस निकलता है। काठ कठिन, स्यायी और सुन्दर वर्णविशिष्ट रहता है। यह अनेक कार्योंके लिये उपयोगी है।

काकतिन्दुकका संस्कृत पर्याय—काकेंदु, कुलक, काकपीलुक, काकपीलु, काकाण्ड, काकस्फूर्ज, फाकाह और काकवीजक है। राजनिघण्टुके मतसे यह गुरु, कषाय, अक्ष, वातविकारघ्न और मधुर होता है। इसका पक्क फल मधुर, किञ्चित् कफकारक और वसि-तया पित्तनाशक है।

काकतीयरुद्र (सं० पुं०) नागपुरके एक प्राचीन राजा।

काकतुण्ड (सं० पुं०) काकतुण्डस्य इव वर्णोऽस्यस्य, काकतुण्डवत्। १ कृष्ण अगुरु, काला अगुरु। २ जल-पक्षिविशेष, पानीकी एक चिड़िया। ३ श्रीवोधगत काकतुण्डाकार सन्धि, जिसका एक जोड़। यह हनुवय (दोनों नवडों) की सन्धि है।

काकतुण्डफला (सं० स्त्री०) काकतुण्डमिव फल-मस्याः बहुव्री०। काकनासिका, सफेद घुंघची।

काकतुण्डा, काकतुण्डिका देखो।

काकतुण्डिका (सं० स्त्री०) काकतुण्डस्यैव वर्षः-

यस्यमि यथा, काकतुहल-उन् टाप् । १ श्वेतगुह्या, कपिह घुस्यौ । २ महाश्वेतकाकमाषी, बहुत यपेद वेदेया । काकविद्या, हुं बषी ।

काकतुहली (स० खी०) काकं ईरम् तु-वं तुप्यते नामयति, तुङ्कल् वषे यप् ङोप् । रावणिलक्ष, बिसे विष्णुको पीतल । काकतुहल्येव पाकतिर्बन्धा । २ कानामप्यात कता, बीबाटीटी । इसका स कृत पर्याय—काकादनी, काकपीतु, काकविष्णी, रत्नका, काङ्काननी, ककमया, दुर्मीडा, वायपादनी, काङ्काननी, वायवी, काकदन्तिका और काचदन्तो है । रावणिलक्ष्मी मतेय यह बहुत, उष्ण, तिक्त, द्रव, रसायन, वायुदोषनाशक, खिन्नारक और पकित स्थायक (बाकीको यपेदो रोक्नेवासी) होती है । १ गुह्या, हु बषी । ३ कङ्कुरक काकमाषी, बीटी काक वेदेया । काकतुहल (स० सि०) काकत्तु तुह्यम् ३ तत् । काकके समान, कीर्षीकरावर, चासाक ।

काकतीय (काकत्य)—इतिषापवका एक प्राचीन राजवंश । इस वंशवासी प्रथम काकाक्षिक चातुह्य राजाधीश्वर शोधित रहें । पाशाक्य सुपतन्त्रविदोकि मत्तमि ई० पञ्चादय मतादिके शिव मायके इस वंशका चम्पुदय हुआ ।

इस राजवंशमें जिन जिन राजाके नाम मिलते, उनमें काकतिप्रलय प्रधान हैं । कहीं कहीं ऐसी बातें सुन पड़ती हैं कि प्रलय राजाको पट्टरानी काकती देवीको पूजा करती थीं । राजाभी पक्षीके पीछे बच काकती देवीके उपासक बने । इसीसे उन्होंने अपना नाम काकतिप्रलय रख लिया । षट्माह्रमये राजानि एक शिवलिङ्ग पाया । शम्भुवत बह पारस पत्थर था । उस प्रत्थरके शुष्के राजाको विष्टार बन मिला । पत्थर बहुत भारो था । किसीमें उसको हिलानिका सामर्थ्य न था । इसीसे प्रलयराजको धनमकोष्ठ छोड़ ८८० यक (१०५८ई०)में उस शिवलिङ्ग निकलनेके क्षान पर नवा नगर बसाना पड़ा । प्रथम काकति प्रलय चातुह्य राजाके पक्षपतनके काशीन हुए । सुकन्य भूमि पर देवर्षिनि राजाके बधा था, यह पिटुवासे होया । देवर्षीकी बातसे बह पुत्रको वनमें

छोड़ पायि । किसी काकति पाकर उसे पुत्रको माति पावा पोधा । बनीपात होनेपर बह पारसकिङ्कवा रखक बना । षट्माह्रमये किसी रातको प्रलयराज मन्दिरमें देवदर्शन करने गये । धायमें गौहर काकर कोरे न था । राजकुमार राजाको गुप्तभावसे जाति देख सोचने लगे, सन्ध्यातः चोर पाता है । फिर उनसे रक्षा न गया । उन्होंने तलवार धावात कमाया था । प्रलयराज बरा पर फिर पड़े । धर्ममें उन्हें माहूम हुआ कि बह उसी पुत्रको आप' था, जिसको माहूम छोड़के निष्काल चपनी रसाधे लिये वनमें छोड़ा । उन्होंने देखा चङ्कटका शिख नहीं मिटती । पुत्रका का दोष था । पुत्रके हाथ बन्ने मरना रखा । पन्तिम काल पर राजानि पुत्रको चपना राज्य दे लासा ।

काकतिप्रलयके पुत्रका नाम चन्द्रदेव था । उन्होंने पिटुवाका रूप महापातकके प्रायचित्तमें सङ्कल शिव-मन्दिर बनवाये । उनके बाहुवसधे कटक और बल नादके राजानि ब्रह्मता मानो थी । शिन्तु कनिष्ठभाता महादेविन विद्रोही हो सुहमें उनको जरावा और राज सिंहासन पाया । चन्द्रदेव मारे गये । कुछ दिन पीछे महादेवगिरिके राजाके लड़के चले और सुहमें कट मरे । उनके पीछे चन्द्रदेवके श्वेठपुत्र गणपतिदेव राजा हुए । उन्होंने देवगिरिके रामराजाके सुहमें पिङ्गल्यके लड़का बदका लिया था । राम राजाको मर देना पड़ा । उन्होंने चपनी कथा प्रदान कर गणपति देवका चातुगण्य माना था । गणपतिदेवने पहियारोके यज्ञके बलनाद, निरुर प्रकृति प्रदेय भवि कार किये । बह यज्ञे श्वेनविदेवी थी । उन्होंने तोड़ पीड़ परसक्य श्वेनमन्दिरोंके क्षान पर शिबलिङ्ग लगवा दिये । फिर गणपतिदेवने अपनेक नमरपत्तन बसाये । राजधानीका नाम 'एकशिवानगर' रखा गया और चारो ओर प्राचीर बना । उनके राजत्व काकर्म 'पनेक तेकङ्क खिबीनि कथ्य लिया था । मन्त्री सोपराजके बलसे नियोगी ब्राह्मण माम्ही मोहरिर बनाये गये । वैदिक ब्राह्मणोंने इस नियमका धोर प्रतिवाद किया था । शिन्तु राजमन्त्रीका चादिम बोरे डास न लका ।

गणपतिदेवके कोई पुत्र न था। उनकी एक मात्र कन्या उमाकदेवीसे राज महेंद्रीके राजकुमार चालुक्यतिसक वीरभद्रका विवाह हुआ। मृत्युसमय गणपतिके दीहित्रका भी जन्म न था। सुतरां उनकी पत्नी रुद्रयादेवीने भूमिपत्न्य हो २८ वर्ष राजत्व रखा। फिर वयोप्राप्त होने पर उमाकदेवीके पुत्र प्रतापरुद्रदेवकी मातामह गणपतिदेवका सिंहासन मिल गया। प्रतापरुद्रदेव ही वरङ्गलके अन्तिम स्वाधीन थे। उन्होंने गोदावरीसे सेतुवन्ध-रामेश्वर पर्यन्त अप्रतिहत प्रभावसे राजत्व चलाया। सुननेमें आता है कि उनके प्रवल प्रतापसे घबरा करटकके राजाने दिल्लीमें वादश-हसे साहाय्य मांगा था। मुसलमानोंका इतिहास पढ़नेपर समझ पड़ता है कि १३२३ई०को प्रतापरुद्र उनसे पराभ्र हुए और पकड़ कर दिल्ली भेजे गये। कुछ दिन पीछे प्रतापरुद्र स्वाधीनता लाभ कर वरङ्गलको छोटे थे। किन्तु फिर वह अधिक दिन इहलोकमें न रहे। मरनेपर उनके पुत्र वीरभद्र राजा बने। उनके समय मुसलमानोंके आक्रमणसे वरङ्गल राजधानी भस्मीभूत हुई। वीरभद्रने वरङ्गल छोड़ कोण्डवीड नामक स्थानमें एक नूतन नगर बसाया था। उसी समय वरङ्गलके काकत्व (काकतेय) राजवंशका राजत्व जाता रहा। कोण्डवीड देखो।

काकदन्त (सं० पु०) काकस्य दन्तः। काकका दन्त, कौवेका दांत। कौवेके दांत नहीं होते। इसीसे असम्भव विषयको काकदन्त कहते हैं। शशविषाण, जूर्मन्चोम, और बन्ध्यापुत्रकी भांति यह भी निरर्थक वाक्य है।

काकदन्तकि (सं० पु०) प्राचीन चन्द्रियजातिविशेष। काकदन्तकीय (सं० पु०) काकदन्तकि चन्द्रियोंके एक राजा।

काकदन्तगवेषण (सं० पु०) काकस्य दन्ताः सन्ति न वा इति संशये तत्र वर्षसेदस्य संख्याविशिष्य च गवेषणमिव अनर्थकः प्रयत्नो यत्र। प्रकारण्य अन्वेषणबोधक न्याय-विशेष, वेत्तायदा खोजमें पड़नेका एक लौकिक न्याय।

काकके दन्त रहने या न रहनेका सन्देह, निश्चित होनेसे पहले वर्ष और संख्या पर बात बढ़ाना अन-

र्थक है। यह न्याय अनर्थक वितण्डाके स्वप्न पर लगता है।

काकदन्तिका (सं० स्त्री०) १ काकादनी जता, सफेद या लाल घुंघची। २ दन्तीवृक्ष, दांतोका पेड़। ३ रक्त-काकमाची, लालकेवैया

काकट्टम (सं० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। (Dalbergia rimosa) चौहट्ट (सिलहट्ट)में इसे काकट्टम कहते हैं। यह झाड़दार पेड़ है। काकट्टम पूर्व हिमालयके उष्ण प्रदेशमें ४००० फीट ऊंचा होता है। खुशिया पर्वत, चौहट्ट और आसाममें इसे अधिक देखते हैं। यमुनासे पश्चिम सिवालिक प्रान्त और हिमालयके वहिर्भागमें भी यह पाया जाता है। मङ्गलोर (बङ्गलोर)में इसकी छापि होती है।

काकज्वज (सं० पु०) काकं ईपञ्जलं वाप्यं ध्वज इव यस्य। वाडवाग्नि, समुद्रका भीतरकी भाग। भाग्यप्रि देखो। २ शीर्ष ऋषि।

काकनन्ती (सं० स्त्री०) कु ईपत् कनन्ती निमीलन्ती, कोः कादेशः। काकणन्तिका, घुंघची।

काकनासा (सं० पु०) काकस्य नास इव नाम यस्य, मध्यपदन्तो०। वकहल, अगस्तिका पेड़। काशीयं देखो काकनाशा काकनासा देखो।

काकनास (सं० पु०) काकस्य नासाया वर्ण इव फले यस्य। विकण्टक वृक्ष, गोखुरीका पेड़।

काकनाथा (सं० स्त्री०) काकस्य नासा इव फलमस्याः। १ महाखेत काकमाची, कौवाटीटी। (Solanum indicum) यह मधुर, शीतल, पित्तघ्न, रसायन, दाह्यं-कर और विशेषतः पलितघ्न होता है। (राजनिष्यट्) भावप्रकाशमें इसे कपाय, उष्ण, रस एवं पाकमें कटु, कफघ्न, वान्तिकर, तिक्त और शीय, अग्नि, शिथिल तथा कुष्ठनाशक कहा है।

काकनासिका (सं० स्त्री०) काकनासा स्वार्थे कन्-टाप् भत इत्वम्। १ रक्तविहत्, लाल निसेत। २ काक-जंघा, चकसेमी।

काकनिद्रा (सं० स्त्री०) काकस्य निद्रा इव निद्रा, मध्यपदन्तो०। काककी निद्रा-जैसी अतिसतर्क निद्रा, कौवेकी तरह होशियारीके साथ सोना।

काकनाका (सं० स्त्री०) काक रज नीला । काक-
बन्धुपुत्र, काकलो कामनाका पिङ्ग ।

काकनो (सं० स्त्री०) लघुयोज्यो, काको धैर्य ।

काकन्दक (सं० वि०) काकन्दो देवी मन्त्रः, काकन्दो
कुम्भ । ऐतरेयः शतसु. का. ३. २. १११ । काकन्दो देव
पात्री, काकन्दो सुरवन्धवा रहनेवाका ।

काकन्दि (सं० पु०) पत्रिय कातिरियिप ।

काकन्दो (सं० स्त्री०) काकन्दि स्त्रीप । १ देवविधिय,
कोई सुख । २ विद्या, दमनी ।

काकन्दीय (सं० वि०) काकन्दो-श्च । काकन्दो देव
पात्रो, काकन्दो सुखका रहनेवाका । २ काकन्दि
पत्रियोका राजा ।

काकपत्र (सं० पु०) काकपत्र पत्र इव पात्रारो
ऽस्म्यप्य, काक पत्र-पत्र । १ मन्त्रकथि समय पात्र
क्षिप्ररचना, धिरकी दोनो चोर बालोका बनाव ।
'इसका संस्कृत पर्याय—मिश्रकथ चोर मिश्रकथि है ।
पूव समयमें बालबालीके मन्त्रक पर ऐसी जो क्षिप्र
रचनाका व्यवहार था,—

' कौशिकेय च विच किलौचरो एतन्नमपरिक्रमकामने ।
कामरपरालेप कथिकन्धे अचरति न मन्त्र कनोचरिने ॥' (१४ १११)
२ काकपत्रे समय पात्रं क्षिप्ररचनाविधिय, कामोको
दोनो चोर बालोका बनाव, पहा, कुष्ठ ।

"काकपत्र निर कील्य कीके ।
इच्छा निच निच इत्यवकीके ॥" (इतरी)

काकपत्रगुह्य (सं० वि०) काकपत्रेव क्षिप्रस फ्दार
विधियेव गुह्यः, इ-तत् । १ मिश्रकथगुह्य कुष्ठकाका ।
२ कामोके पात्र पत्रे रक्षायै गुह्य ।

काकपद (सं० पु०) काकपद इव पात्रारो ऽस्म्यप्य,
काक पद-पत्र । १ रतिवन्ध विधिय ।

"पत्नी रो काकपुत्रको विपुत्र निर धने चङ् ।
कामनी कङ्करो कनी वन् काकनी मन्त्र ॥" (रजिनवटी)

(स्त्री०) काकपत्र पदं पदपरिमाचम् । २ काकपत्रे
पदको मांति परिमाच, कौशिके पेरको तरह नाप ।
श्रुतिशास्त्रमें शरी परिमाचये मिखा रक्षनीको व्यवस्था
है । ३ कपराके धिरपर्याप्त सुखन । काकपदवत्
काकतिरस्म्यप्य । ४ विच विधिय, एक विद्याम् ।

(, श्र) पुस्तकमें विहित विवरको पदेवा काम
ज्ञान पर कुछ परिचय भी मिखा देना पड़ता है । एहि
कारण पर यह विच समता है । इस विचके नीचे
कापर जो विचके उचि उक्त विषयमें जो संबन्ध
समझती है । काकपद कूटे हुये विचको पूरा करनेमें
व्यवहृत होता है ।

काकपर्षी (सं० स्त्री०) काक इव काक्यपरं यस्याः,
काकपत्र-स्त्रीप । सुहपर्षी, मोठ । उभयो देवी ।

काकपीठ (सं० पु०) काकप्रिय पीठ । १ काक-
तिलक, कुचिका । काकादनीनता, बौवाटीटो ।
२ खेतगुहा, सपेद गुहयो । ३ रज गुहा, काक
कुंठयो ।

काकपीठक (सं० पु०) काकपीठ संघायं कम् ।
कामनीप देवी ।

काकपुच्छ (सं० पु०) काकपत्र पुच्छ इव पुच्छो यस्य,
मज्जपदको० । कौबिच, कोयक ।

काकपुष्ट (सं० पु०) काकिन पुष्टः इ तत् । कौबिच,
कोयक । कौबिको अपनी चप्टेको पोष नहीं सबती ।
इसीसे यह काकपत्रे कौबिके का कपुष्टे चप्टे केक अपनी
चप्टे रक पाती है । काक कप्टे अपनी चप्टे समझ
देवा करता है । चप्टे खूनी पोषि भी अवतक लम्प्य
रोका एक नहीं आवि, तबतक कौबिकके दाव व सुगु
बिचके पचंभानि जाति है । सुतरां काकको इनका
पाकन करता रहता है । काककप्टेक प्रतिपासित
होनेके ही कौबिक 'काकपुष्ट' कहता है ।

काकपुत्र (सं० स्त्री०) काकवत् प्रप्य पुत्र यस्य,
कङ्कनी० । १ पत्रियपं, यह सुगुह्यार कीङ् ।
२ सुगन्धक, सुगुह्यार वास ।

काकपीय (सं० वि०) काकेरनतकम्बर पोषि, काक
पा यत् । उभयोविधानके । क १. १. १११ । काकपि पात्र
करने सोय्य, जिसे बीबा पो धके ।

काकप्राचा (सं० स्त्री०) १ काकनाका, बौवाटीटो ।
२ मन्त्रायेतकाकमाचो, कङ्की सपेद केयेपा ।

काकपत्र (सं० पु०) काकप्रियं पत्रमप्य, मज्ज-
पदको० । १ मिश्रकथ, नीमका पिङ्ग । निच देवीः
२ काकबन्धु, कठनामन ।

काकफला (सं० स्त्री०) काकप्रियं फलमस्याः, मध्य-
पदलो०। काकजम्बू, जङ्गली जामन।

काकवन्ध्या (सं० स्त्री०) काकीव वन्ध्या, पुंवद्भावः।
एकमात्रप्रसवा भार्या, एक ही वध्वा पैदा करनेवाली
औरत। काकी केवल एक बार प्रसव करती है,
इसीसे जो स्त्री एक ही प्रसवसे वन्ध्या हो जाती, वह
काकवन्ध्या कहती है।

काकवलि (सं० पु०) काकेभ्यो देयो वलिरन्नादिकम्
मध्यपदलो०। काककी दिया जानेवाला पत्रादि।
प्रथम काककी पाद्यादि दे निम्नीक मन्त्रसे पूजते हैं,—

“कं यमहारावस्थित-नागादिन् दिग्भ्यवायसेभ्यो नमः।”

फिर इस मन्त्रसे प्रार्थना की जाती है।

“कं काक त्वं यमपूतीर्षि मर्याप वलिहृत्तमं।

यमयोक्तगत प्रे सं त्वमाप्यादितुमर्हसि ॥”

इस प्रार्थना पर पिण्डदान वा मन्त्रपाठ करना
पड़ता है—

“ (श्री) काकाय काकपुरुषाय वायसाय महाकले।

भक्तपिण्डं प्रयच्छामि कृपया धर्मराजनि ॥”

आङ्कितत्वमें पिण्डदानका दूसरा मन्त्र कथा है,—

“येन्द्रावाहपवायसाः शीष्या वे ऋषीहास्या।

वायसः प्रतिगृह्णन्तु ममो पिण्डं नयार्चितम् ॥

ऊं काकेभ्यो नमः।”

उक्त मन्त्रसे दान पिण्डपर जल छिड़कना पड़ता है।

काकभाण्डी (सं० स्त्री०) श्वेतगुच्छा, सफेद बुचची।

काकभाण्डी (सं० स्त्री०) काकस्य ईश्ललस्य सुख-
स्त्रावरूपस्य भाण्डी चूडभाण्डमिव, उपमि०। १ महा-
करक, बड़ा करौंदा। २ लघु रक्तमाचिका, छोटी
लाल कौवाटोटी।

काकभीरु (सं० पु०) काकात् भीरुर्भयशीलः, भू-तत्।
पेचक, कौबिसे डरनेवाला उल्लू। पेचक देखो।

काकभुशुण्डि (सं० पु०) एक ब्राह्मण। यह रामके
सन्ने भक्त रहे। लोमशके शापसे इन्हे काक होना
पड़ा था। काकभुशुण्डिने रामकी कथा गरुड़से
कही है।

काकमहु (सं० पु०) काक इव कृष्यो मदगुर्जलचर
पक्षिविशेषः। दात्युह, पानीकी सुरगी या कुकड़ी।

“शं इत्या तु इयं हिः काकमदुशः प्रजापते ॥” (भारत, ११११११११)

काकम (सं० पु०) काकं मृदनाति, काक-मृद-
श्रण्। महाकालकता। किसी किष्मकी कडवी चाकी।
यह कौबेकी मार डालता है।

काकमदंक, काकमर्द देखो।

काकमांस (सं० स्त्री०) वायसमांस, कौबेका गोश्ल।

काकमाचिका (सं० स्त्री०) काकमाचो स्याये कन्-
टाप् ऊलः। काकमाचो देखो।

काकमाची (सं० स्त्री०) काकान् मञ्चते, मधि-पण्-
छीप् मृपोदरादित्वात् नलोपः। खनामख्यात पत्रशाक
विशेष, एक छोटा पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—
वायसी, पाङ्चमाची, वायसाहा, सर्वतिल्ला, बडुफला,
कटुफला, रसायनी, गुच्छफला, काकमाता, स्यादु-
पाका, सुन्दरी, तिक्तिका और बहुतिक्ता है।

हिन्दीमें काकमाचीको कौबैया या मकीय, बंगलामें
कासते या मधुनी, मराठीमें कसुनी या घाटी और
तामिलमें मनौककलौ कहते हैं। (Solanum
nigram)

यह शाकप्रधान चूड वृक्ष है। भारत और सिंहालमें
७००० फीट ऊंचे इसे सर्वत्र पाते हैं।

भारतके अनेक विभागोंमें इसके पत्र और चूड
भदुर पालककी भांति उवालकर खाये जाते हैं। सुपक
गुटिकायें बालकोंके खानेमें आतीं और कोई बसर
नहीं देखतीं।

राजनिघण्टु तथा राजवल्लभके मतमें यह कटु,
तिक्त, उष्ण, हृष्य, रसायन, रोचक, भेदक, और कफ,
शूल, अर्शरोग, शोथ, कुष्ठ एवं कण्डूनाशक है। आव-
प्रकाशमें इसे ल्वर, मेह, नेत्ररोग, द्रिक्ता, वमि और
हृद्दोग मिटानेवाली भी कथा है। यकत् बढनेपर उड़
पाव काकमाचीके रस प्रयोगसे विशेष उपकार होता
है। शोथरोगमें भी इसके पत्रका काथ अथवा रस
दिनमें तीनवार एक-एक ड्राम पिलाया जा सकता है।

काकमाची श्वेत रक्त भेदसे दो प्रकारकी होती
है। श्वेतकी श्वेता तथा महाश्वेता और रक्तकी
लघुरक्त काकमाची कहते हैं। श्वेत काकमाची मधुर,
रसायन, शीत, कषाय, कटु, तिक्त, उष्ण, वमिप्रद,
तनुदार्यकर और कफ, शोथ, अर्श, पक्षित, पित्त,

तथा श्वेतकुडनामक है। महाश्वेत शाक्यमाचो
तुवर, लक्ष्य रसायन, बट्ट, तिष्ठ, बधिकर, धोर वात,
कुड पाच, प्रमिष बफ बर्दि, क्षमि ज्वर एव पनि
तत्र शोती है। रज्जु काममाचो शोयत्, वात एवं बफ-
कार, हृत्क रसायन धोर पिच तथा त्रिदोषनामक है।

शाक्यमाचोलेख (सं० श्लो०) अनामक्यात् पत्रयाक्या
तेन महायक्या वेत्त। मनगिष्ठा, शोमराचो शोत्र,
मिन्दूर तथा मन्थकके डाल चार पल बट्टतेन शाक्य
माचोके रसमि पचाति है। इस तेनको १ घाण
(३ मासि) बर्मादि चर्चयिष्या (सरको खुबको)
पच्यो हो जातो है। (१२२०५२२)

शाक्यमाता (सं० श्लो०) शाक्यस्य मातेव पोषिका
तत् फलमिवत्वात्। शाक्यमाचो रूप मकोयका पीदा।
शाक्यसुख (सं० श्लो०) शाक्यस्य सुखमिव सुख यत्न,
यदुमी०। शाक्यवत् सुखमिष्य, जो शोषिको तरह
मज रक्षता हो। (पु०) १ पुराशोख ज्ञानिविषय।
यह बन्धवत महाश्वेतके उपसृष्टमि रक्षते यि।

शाक्यमुदा (सं० श्लो०) काचेल ईपलक्षित सुदं गच्छति
शाक्य मुदु गम ह टापु। सुदपर्वी मोट। इत्यर्थे ईको।
शाक्यमम (सं० पु०) वायस एवं हरिष्य, शोत्रा धोर
हरिण।

शाक्यधोर (सं० पु०) वृक्षविषय, बिसे पीड़का नाम।
शाक्यधव (सं० पु०) शाक्यवत् निर्गुणो जव। यत्न
शोत्र प्राण्य, शोषका ज्ञान। इसमि वाकल नहीं होता।
“ सर्वं शक्यत् सर्वं वया चकवता इव। ” (महाश्वेत)

शाक्यमाल (सं० श्लो०) शोडककेमप्यात् शाक्यनाम
वृक्षविषय, एक पीड़।

शाकर—बन्धर् प्राण्यके मिशारपुर जिलेको एक तह-
सीम। यह पचा० १६ १८' उ० धोर देया० ६०'
३३' पू० पर अवस्थित है। भूमिका परिमाण १८८
वर्ग मील है। इसमें ११ वाने धोर शोत्रराचोके १
पदाकते है। शाक्यज्जार्मे गवरजमिष्यको १८६११०'
६० मिचता है। शोषस फ्ला प्रायः पचात इज्जार है।
शाकरव (सं० पु०) शोषसुख्य, इत्योष पादमौ।
शोषादि शाक्यवत् मयमीत शो शोलाइल करता है
उधको शाकरव कहके है।

शाकराका (ककराका)—बुद्धमदेयके मुदाक जिलेको
सुतामपत्र तहसीलका एक नगर। यह मुदाक
नगरके बह कोस दूर है। यहां भारतीयके देव-
मन्दिर धोर सुसज्जमानोंको भसबिठे विद्यमान है।
सिपाही विद्रोहके समय बलवाहीरोंने शाकराका जलाया
था। १८०१ ई०के अक्टोबर मासमें चर्मरेज सेना
नायक जनरल पीगो विद्रोहियोंका शासन करने पाये।
शिवु बुद्ध सुसज्जमानों (ब्राह्मियों) के लिये मार ठाका।
पाकिर इनके येव्यस्यमूहने विद्रोहियोंको सम्पूर्ण
रूपसे इराया था। शोषसख्या प्रायः बह इज्जार है।
भारतीयोंने सुसज्जमान चर्चि मिहति है।

शाकरासोमि (हिं०) बर्चमयो ईको।
शाकरियु (सं० पु०) लक्ष्य कोषिका मत्, बहू।
शाकरी (हिं०) बर्चती ईको।

शाक्यवत्, शाक्यवत् ईको।
शाक्यवत्, (सं० श्लो०) शाक्यस्य वत्तम् ६ तत्।
शाकरव, शोषिकी शोषो। वाक्यवत् ईको।
शाक्यवदा (सं० श्लो०) काच इव रोहति भूखस्य-
तया वृक्षाद्यवसम्भवेन जायते काच-वह-व टापु यदा
काचपुरीपात् रोहति उत्पद्यते वृक्षोपरि इत्यर्थे।
इत्यावृष नांदा, शोषिकी तरह चद्रमि दानो बहू न
रक्षनेके पीड़ बगेरहके सज्जारे उपजने वा शोषिके मेलिसे
निक्षलनेवाली है।

शाक्यवत् (सं० श्लो०) सु कुम्भित करोति, कु-
खक को कादेय। १ शोषयोमूत्, शोषका तापे
दार। २ मन् नहा। ३ शोष इत्योष। ४ शिष्य,
गरीम। (पु०) १ दण्ड, शोषा। बाधिन शूयते
शिष्यमि, शाक्य-सु बर्मादि शिष्य चर्चाराय बन् लक्ष्य टः।
शिवक, शोषिके मारा जानेवाला लक्ष्य।

शाकरीका (हिं० पु०) १ वृक्षविषय, एक लपड़ा।
यह शाकरीको होता है। २ बर्चमेद, एक रंग। यह
शाकरीको रक्षता है।

शाकरीवी (हिं० पु०) १ बर्चमेद, शोषिकी, एक रंग।
यह शाक्य काका होता है। लपड़ेको पाकके रंगमि धोर
शोषराकी खाड़ीके रंगमि पर शाकरीको निक्षलता है।
(हिं०) १ बर्चविषय सुख, शोषिकी, शाक्यकाका।

काकल (सं० स्त्री०) ईषत् कलो यस्मात्, कोः काटेशः ।
१ कण्ठमणि, गलेका जीहर । (पुं०) का इत्येवं
कलो यस्य बहुव्री० । २ ट्रोणकाक, जङ्गली, पहाडो
या काला कौवा । यह 'का का' करता है ।

काकलक (सं० पुं०) काकल-कप् । १ कण्ठमणि,
गलेका जीहर । २ कण्ठका उन्नत देश, सास लेने-
वाली नली (हलकूम, नरकसी) का सिरा । ३ षटिक
धान्यविशेष, साठीधान ।

काकलि (सं० स्त्री०) कल-इन् कलिः, कुर्ष्वत् कलिः
कोः काटेशः । १ सूक्ष्म मधुरास्फुटध्वनि, समभक्तं
न भानिवाली वारीक मीठी भावाञ्ज ।

“देवो काकलितोत्सव तद्वीथ्या निन्दत्यथ ।” (कथासरित्सागर)

२ अप्सरो विशेष, एक परी ।

काकली (सं० स्त्री०) काकलि डीप् । १ सूक्ष्म
मधुर अस्फुट ध्वनि, समभक्त न पडनेवाली वारीक मीठी
भावाञ्ज । “क्रीडतीकिलकाकलीकलकलैकदशोर्णकण्ठ्वरा ।”
(उचरचरित, १५०)

२ यन्त्रविशेष, एक वाजा । इसका स्वर नीचा
रहता है । काकली वजानिसे मालूम पड़ता है कि कौन
निद्रामें अदेतन रहता और कौन जगता है । हिन्दीमें
सेंधकी सवरी, साठी धान और घुंघचीकोभी काकली
कहते हैं । २ रत्नविशेष, एक जवाहर ।

काकलीक (सं० पुं०-स्त्री०) अस्फुट मधुरध्वनि,
मीठी मीठी भावाञ्ज ।

काकलीद्राचा (सं० स्त्री०) काकलीव सूक्ष्मा द्राचा,
मध्यपदलो० । द्राचाविशेष, किशमिश । इसका
संस्कृत पर्याय—जम्बूका, फलोत्तमा, लघुद्राचा
निर्वीजा, सुहृत्ता और रसाधिका है । राजनिघण्टुके
मतमें काकलीद्राचा मधुर, अन्न, रसाल, रुचिकारक,
शीतल, श्वास तथा हृत्तासनागक और जनसमूहकी
प्रिया है । किमलिय देखो ।

काकलीनिपाद (सं० पुं०) विकृत स्वर विशेष, एक
भावाञ्ज । यह कुसुहती श्रुतिसे चलता है । काकली
निपादमें चार श्रुति गाते हैं ।

काकलीरव (सं० पुं०) काकली मधुरास्फुटो रवो
यत्न, बहुव्री० । १ कोकिल, मीठी मीठी भावाञ्ज

लगानिवानी कोयल । कर्मधा० । २ सूक्ष्म और मधुर
अस्फुट ध्वनि, मीठी मीठी भावाञ्ज ।

काकवत् (सं० प्रथम्य०) काकशौ भांति, कौवेकी तरह ।
काकवर्ण (सं० पुं०) सुनिकवर्णीय एक राजा । यह
शिशुनागके पुत्र थे । (विष्णुपुराण ४। २४। २)

काकवर्तक (सं० पुं०) वायस तथा वर्तक, कौवा
और वटेर ।

काकवर्मा (सं० पुं०) नेपालके एक सोमवंशिय राजा ।
इसके पिताका नाम मनाक्ष था ।

काकवल्गुभा (सं० स्त्री०) काकस्य वल्गुभा प्रिया ।
काकलम्बू, कौवेकी अच्छी लगनेवाला वनजामुन ।

काकवल्लरी (सं० स्त्री०) काकप्रिया वल्लरी, मध्य-
पदलो० । १ स्रग्वली, एक सुनहली बेल । २ पीत-
काञ्चन, पीले फूलका कचनार ।

काकविष्ठा (सं० स्त्री०) काकमल, कौवेका मैला ।

काकवन्ता (सं० स्त्री०) रक्त कुलत्पक, लाल कुरथी ।

काकव्याघ्रगोमायु (सं० पुं०) वायस, व्याघ्र तथा
शृगाल, कौवा, वाघ और गीदड़ ।

काकशब्द (सं० पुं०) काकरव, कौवेकी बोली ।

काकशानि (सं० पुं०) क्षणा शान्तिधान्य, किसी
किस्मका धान ।

काकशिखी (सं० स्त्री०) काकप्रिया शिखी, मध्य-
पदलो० । १ काकतुण्डो, कौवा ठोठी । २ रक्तगुह्या,
लाल घुंघची ।

काकशोर्ष (सं० पुं०) काकः शीर्षे अग्रेऽस्य, बहुव्री० ।
वकल्ल, अगस्तका पेड़ ।

काकसादी (सं० पुं०) १ भ्रमभलक्षणाश्च, ऐबी घोड़ा ।
२ भ्रान्तेय ।

काकसेन (हिं० पुं०) कार्यनिरीक्षक विशेष, जहाजके
मजदूरोंकी निगरानी करनेवाला एक जमादार । यह
अंगरेजीके 'काक्सवेन' शब्दका अपभ्रंश है ।

काकसौ (सं० स्त्री०) काकस्य स्त्रीव नामसादृश्यात् ।
वकपुष्पवृक्ष, अगस्तके फूलका पेड़ ।

काकस्फूर्ज (सं० पुं०) काक-स्फूर्ज-घञ् । काकतिन्दुक
वृक्ष, एक पेड़ ।

काकतिन्दुक देखो ।

काकस्वर (सं० पुं०) काकस्य इव स्वरो यस्य, बहुव्री० ।

काकवत् पर निवारणैवावा, जो कोरेको तरह
 बीजता है। १ तत्। २ काकरव, कोरेको बीज।
 काका (स० स्त्री०) काकवत् पाकारोऽस्तस्य काक-
 वत्-टापः। १ काकनाभा बीजाठीटी। २ काकोको
 ह्रस्व एक पीड़। ३ काककटा मसो। ४ इति का-
 कता, ह्रस्वो। ५ मन्पूष्य, निर्ममोषा पीठ।
 ६ काकमाषी, क्षिपेया। ७ काकोदन्तरिका कठमूलर।
 काका (हिं० पु०) पिताका न्याता, बापका भाई,
 पापा।

काकाकोषा (हिं० पु०) यकविय पाकातुषा बड़ा
 मोता।

काकापि (सं० स्त्री०) काकवत् पचि चक्षुः, १ तत्।
 काकका चक्षु कोरेको पाप।

काकापिगोसकन्याय (स० पु०) काकवत् पचि
 गोकर्णमिप न्यायः, उपमिः। न्यायवियेय, एक
 मन्त्रिणः। काकका एक मात्र चक्षु कंठे उभय पचिने
 गोसकका कार्य करता है, वेही ही एकमें दो विषयोंका
 समर्थ रहनेसे 'काकापिगोसकन्याय' कहलाता है।

काकाङ्गा (स० स्त्री०) काकवत् पङ्क कंचि पाकारो
 यस्याः, बहुव्री०। १ काकका, चकरीनी। २ काक
 नापा, बीजाठीटी।

काकाङ्गी, बाबाग ईकी।

काकाको (सं० स्त्री०) काकं पचति प्राप्नोति,
 काक-पच-पच-कोप्। काककवाग्रच, मसो, कोरेको
 काप-वेला पीड़।

काकाण्ड (सं० पु०) काका पण्ड इव फलं यत्,
 बहुव्री०। १ महामिन्त्र, बड़े मोम। २ काकतिन्दूक उच्य,
 एक पीड़। ३ तत्। ४ काकका पण्ड, कोरेका पण्ड।

काकाण्डक (सं० पु०) काका पण्डः, काकोपण्ड
 फालेभन्तु पु ब्रह्मवः, ३ तत्। १ काकका पण्ड, कोरेका
 पण्ड। "वसिष्ठ उवाच-वदन्त काकण्डकनिगन्तवः।" (भारत, ५५)
 २ कृताभेद, विषो विषयका मसका।

काकाण्डा (स० स्त्री०) काकवत् पण्ड इव बीजमस्याः,
 बहुव्री०। १ काकमिन्त्रो कोकको फलः। २ महा
 श्लोतिकता कता, रतनकोम। ३ कृता विधिः।

चक्षु ईकी।

काकाण्डाग्रचिक—ब्रह्मकर्म भिदिनीपुरकी ब्राह्मणमूर्धिका
 एक पाम। यही 'काकाण्डाग्रचिक' नामक एक
 आपत देवता विद्यमान है।

काकाण्डो बाबाग ईकी।

काकाण्डोना (स० स्त्री०) काकाण्डं धोरति तत्
 माङ्ग्यं बीज प्राप्नोति काक उर पच टाप एव नत्वम्।
 शैलमिन्त्रो, शैवको फलः। २ पटमो, हय उन्
 कनकन, कनपटिया।

काकातुषा (हिं० पु०) पचिवियेय, एक विडिया।
 वर्तमान माङ्गलतस्त्रविदोके मतमें यह शुक्र कातोय
 पक्षी है। निर्यं भेद यही है कि काकातुषा तोतेसे
 पाकारमें बड़ा पाया जाता है। सम्यक्पर पूर्व बिचरे
 पक्षको माति गिखा रहती है। पुच्छ बहुत बड़ा
 होता है। 'चंगरेकोमें' इसे 'कोकातू' (Cockatoo)
 कहते हैं। माङ्गलशास्त्रमें यह पक्षीस्य 'काकातुषा
 (Cacatua) माना गया है। काकातुषा चन्द्र
 चंगरेको 'काकातू'का पपञ्च म है।

पक्षत काकातुषैका पासक (पर) श्लेतवर्ष होता
 है। किन्तु बिषो क्षिपीका श्लेतवर्ष पासक पश्य रत
 वर्ष वा पवर वर्ष मिश्रित रहता है। भारतवर्षके
 दक्षिणाञ्चल धोर पट्टेसिया हीवमें दो प्रकारका काका
 काकातुषा मिश्रता है। चंगरेको माङ्गलशास्त्रमें
 एकको 'कैलिप्टोरिन्चस' (Calyptorhynchus) धोर
 दूसरेको 'मायिग्लोसस' (Microglossus) कहते
 हैं। शिबोक काका काकातुषा पूर्व बड़ा होता है।
 मृगिनेमें यह पाया जाता है। इसको जिहा कण्ठ
 धामित रहती है। उससे सुखमतवा यह काप प्रत्यादि
 चटा सकता है।

भारत महासागरके हीवपुञ्ज धोर पट्टेसियामें
 इसको संप्ला पक्षसे पचिब है। काकातुषा फल,
 मूल बीज धोर श्लेदक कोटादि धा पपनी जीविका
 चलाता है। यह पाकनेसे यह चिक जाता धोर
 नियामेमें तोतेकी तरह बातचीत करता है। काकातुषा
 पपनी चोटी रतच्छत चला सकता है। इसका मन्द
 मन्दुर्ण होता।

काकादनक (सं० पु०) बाबाग ईकी।

काकादनी (सं० स्त्री०) काकैरयते मुच्यते ऽसौ, काक-अद् कर्मणि ल्युट् डीप् । १ रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची । २ श्वेतगुञ्जा, सफेद घुंघची । ३ रक्त काकमाची, लाल मकोय । ४ काकतिन्दुका, कौवा ठाँठी । ५ कण्टकपालीलता । इसका संस्कृत पर्याय—हिंन्दा, रूध्रनखी, तुण्डी, काला, अहिंन्दा, कटुका, पाणि, कापाल और कुलिक है । सुश्रुतमें संक्षेपतः इसे कफशमनी कहा है ।

काकानन्ती (सं० स्त्री०) रक्तगुञ्जा, घुंघची ।

काकास्र (सं० पु०) समष्टीलक्षुप, कर्कवा ।

काकायु (सं० पु०) काकस्य आयुर्यस्मात्, बहुव्री० । स्वर्णवल्लीलता, एक सुनहली वेल ।

काकार (सं० त्रि०) कं जलं आकिरति, क-आ क् अण् । जल स्त्रावकार, पानी फैलानेवाला ।

काकारि (सं० पु०) काकःपरिर्यस्य, बहुव्री० । पेचक, कौविका दुश्मन उल्लू ।

काकाल (सं० पु०) का इति शब्दं कलति रीति, का-कल्-अण् । १ द्रोणकाक, पहाडी कौवा । २ वत्स नामविष, वच्छनाग, एक जहरीली चीज ।

काकावलि (सं० स्त्री०) काकानां अवलिः श्रेणी, इ-तत् । श्रेणीबद्ध बहुसंख्यक काक, कौविका भुण्ड ।

काकास्या (सं० स्त्री०) महाश्वेत काकमाची, सफेद मकोय ।

काकाह्वा (सं० स्त्री०) काकमाची, मकोय ।

काकिणा—वड्डालके रङ्गपुर जिलेका एक गण्डग्राम । यह त्रिस्रोता नदीके वामकूलपर पवस्थित है । इस अञ्चलके विन्न लोग 'काकिणा' शब्दको 'काहन'का अपभ्रंश मानते हैं । यह ग्राम अधिक प्राचीन नहीं । फिर भी एक प्रधान जमीन्दार यहाँ रहते हैं । बाजार लुगा करता हैं । जख, तमाखू और सन बाहर विकनेको भेजते हैं ।

काकिष्का (सं० स्त्री०) काकिष्ठी स्वार्थे कन् ङ्रस्वञ् । पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी ।

काकिष्ठी (सं० स्त्री०) ककते गणनाकाले चञ्चली भवति, काक-णिजि-ङीप् षष्ठीदरादित्वात् नस्य षः । १ पणका चतुर्थांश, पांच गण्डा कौड़ी । २ एक-

वराटिका, एक कौड़ी । ३ मानदण्ड, नापकी छड़ । ४ रक्तिका, घुंघची । मापाका चतुर्थांश, मासेका चौथा हिस्सा ।

काकिष्ठीक (सं० त्रि०) एक काकिष्ठीके मूल्यवाला, जो कौमतमें पांच गण्डे कोडियोंके बराबर हो ।

काकिनौ (सं० स्त्री०) काकिष्ठी, पांच गण्डा कौड़ी ।

“इयरा मूरिदानेन यद्गमने फलं किल ।

द्विरिदमस्य काकिष्ठां प्राप्नुयादिति न युति ॥” (पञ्चतन्त्र)

काकिल (सं० पु०) कु-ईषत् किरति, कु-कृ क कोः कादेशः रस्य लत्वम् । कण्डमणि, गलेका जवाहिर ।

काकी (सं० स्त्री०) काकस्य स्त्री । १ वायवी, मादा कौवा । २ श्वेतकाकमाची, सफेद मकोय । ३ काकोली, एक वृष्टी । ४ कश्यपकी एक कन्या । इन्होंने ताम्राके गर्भसे जन्म लिया । काकोही से सब काक उत्पन्न हुये हैं । ५ चाची ।

काकी (हिं० स्त्री०) पितृव्यकी पत्नी, वापके भायीकी औरत, चाची, चची ।

काकीय (सं० त्रि०) काकस्य इदम्, काक-ठञ् । काकसम्बन्धीय, कौविके सुताविक ।

काकु (सं० स्त्री०) काक-उण् । १ शोकभयादि द्वारा स्वरका विकार, खौफ़ गुस्से तकलीफ़ वगैरहमें आवाजको तवदीली । २ विरुद्ध अर्थबोधक स्वर विशेष, उलटा मतलब जाहिर करनेवाली आवाज ।

“मिन्नकण्ठभनिधिरि काकुर्त्तमिधीयते ।” (साहित्यदर्पण २२२)

३ दैन्योक्ति, गिडगिडाइट । ५ जिह्वा, जीभ ।

६ उल्लाप, जोरकी बात ।

काकुत्स्थ (सं० पु०) ककुत्स्थस्य नृपतेरपत्यं पुमान्, ककुत्स्थ-अण् । १ ककुत्स्थ राजाका धशज । इस शब्दसे धनेनस, अज, दशरथ, राम और लक्ष्मणका बोध होता है । २ पुरञ्जय राजा । स्वार्थे अण् । ३ ककुत्स्थ नृपति ।

काकुत्स्थवर्मा—पलाशिका और धनवासीके एक प्राचीन कदम्ब राजा । इनके पुत्रका नाम शान्तिवर्मा था ।

कदम्ब देखो ।

काकुद् (स्त्री०) काकुद देखो ।

काकुद (सं० स्त्री०) काकुं ददाति, काकु-दा-क । तालु, काम, तालू ।

बाकुदो (स० पु०) बाकुदावर्तमें महादोषान्वित पशु.
एक पीवी वीड़ा। इससे ताकूम बड़ा दीव होता है।
बाकुद्र (स० ति०) बद्धमाता। (श्रीरघुवच० ११)
बाकुन (हि० स्त्री०) एक प्रजाति। यह चिड़ियोंको
बहुत चिन्तायी जाती है।
बाकुम् (जो०) बकरा देवी।
बाकुम (सं० ति०) बाकुम इदम्, बा कुम पञ् ।
१ बाकुम अन्वेषयित गात्रादि। २ दिक् सम्बन्धीय।
३ बाकुम रसजात।
बाकुमवर्षत (स० पु०) एक प्रमास। यह बाकुम्पे
पारस जो इज्जतीपर बाकर पूरा होता है।
बाकुम (सं० पु०) मकुममिद, बिसेी किष्का नीरका।
बह तातर देयके शीतल रसोमें होता है। इसका
वर्त पति खेत बच्चे, खुद तथा अन्य रजता पीर
पोष्टीनमें लगता है।
बाकुवत (स० स्त्री०) विहृत मन्त्र, विगडो पावात्र।
बाकुस (पी० स्त्री०) शेषपास, कुपू जानोके गोचे
कटकनीवासी बड़े बड़े बास।
बाकुसौधक (स० पु०) चतुर्विध विधियय अथ, माद
(हृदय)में रहनीवाका चार तरङ्का चिरन।
बाकुवाद (सं० पु०) काका देव्यशरैर वादम्, १ तत् ।
दीव करमें छिद्रि, मिद्रिमिद्रा कर बहो हुई बात।
बाकुञ्जि (स० स्त्री०) बाकुन देवी।
बाकुपुर—(बाकपुर) ब्रह्मप्रदेशके कानपुर जिल्लाका एक
प्राचीन नगर। यह कानपुर शहरके १० कोस उत्तर
पश्चिम पड़ता है। बीच राजापीके समय बाकुपुर पञ्च
प्रदेशका प्रधान नगर बहता था। बिसेी बिसेी
प्रसन्नविदके मतसे यहीं बाकुपुर मोठ देशके बीच
पन्नोंमें 'बागुद' नामसे लिखा गया है। बाकपुर पीर
बिदूरके बीच 'पञ्चजोमी अणुसार' नामक पवित्र
काल विद्यमान है। पाञ्चकक यहाँ 'अमपुर' नामक
दुर्गका सम्भावनीय पडा है। इस दुर्गको बाई ८२०
वय पक्षके चन्देस राजा अन्नपादन बनवाया था।
बाकुपुरमें श्रीरघुवर महादेव पीर पञ्चजामाके नामसे
दो बड़े मन्दिर बड़े हैं। प्रतिवय देवताके अन्न
अपवच्छमें सेवा चयता है।

बाबिधि, बाबि देवी।
बाबिधु (स० पु०) बाबई ईपञ्चर्ष यत्र ताडय इण् ।
१ इणुगम्ब अथ, जखको तरह लम्बी एक सुमसूरार
बास। २ घायङ्क, खगरा। ३ बासअथ, बांस।
४ कोबिलाचरुप, ताकमघानीका भाङ्क।
बाबिधु (स० पु०) बाबअ इन्दुरिच भाङ्गादबलात्,
१-तत् । बाबिधु अथ पावन्धु, तेंदू। २ बाटुतिन्धु,
मुबिधा।
बाबिधुअ, बाबिधु देवी।
बाबिधुबो, बाबिधु देवी।
बाबिध (स० पु०) बाबअ इण्, १-तत् । निम्बअथ,
भोमका पिङ्क। निम् देवी।
बाबिडा (स० स्त्री०) १ ऐलका गिर्द। २ बाब-
माथो, मथोय।
बाबाबिध (सं० पु०) इ ईयत् कोषो सङ्घोषो। इ-
अथ चिनि काबो बन् की बादेमः। मन्धविमिय, किमी
लिष्काकी मन्धो।
बाकोषो (स० स्त्री०) बाबिध-कोषी। बाकोषि देवी।
बाकोडुम्बर (स० पु०) बाबियिडः बहुम्बर, मन्ध-
पदको०। बाकीडुम्बिका देवी।
बाकीडुम्बिका (सं० स्त्री०) बाकीडुम्बर काबो बन्-
टात् पत इत्यम् । सनामप्यत इथ, बाठगूबर। इसका
स सतत पर्याय—अणुअका, पदको, राबिधा, पुद्र-
डुम्बिका अणुपाटिका, अणुगो, बाकोडुम्बर, अन्ध-
वाटिका, बहुपका, इण्डो, प्रजाकी विममेपका, पीर
भाङ्कनाथो है। इसे बंगलामें बाबकपुर, बिन्दोमें
यवका, पञ्जाबोमें देमर, मराठीमें बिङ्क, मारवाडीमें
वरवत, गुजरातीमें बाङ्को पञ्चीर, सिङ्गुमें अरधन
पीर परबोमें तिने-बरो कहते हैं। (Flora Hispania)
यह एक मन्धोका पिङ्क या भाङ्क है। बाकोडु-
म्बिका जेनाथे पूर्व बाङ्क विमलय बड़ाथ, मन्ध
एवं इथिच भारत, अण्डेय पीर भाङ्गामानरीपमुक्कमें
होता है। मन्धका, सिङ्कल, चीन पीर अङ्केशियामें
भी यह मिचते है।
बाकोडुम्बिकाको बाबका सूत्र पटलिवा बाबिधमें
अवधार दिया जाता है। पत छोटा होता है निधपर

सफेद रूपां उठता है। यह एक प्रकारका खाद्य है। पत्तियों काटकर पशुओंको खिलाई जाता है। काष्ठमें कोई बड़ा काम नहीं निकलता। यह प्राचीन फाडकर उठ जाती और भवनको मिट्टीमें मिला देती है।

राजनिघण्टुके मतसे काकोदुम्बरिका कषायरस, शीतल, व्रणनाशक, गर्भरक्षाके लिये हितकारक और स्नान्यद्रववर्धक है। एतद्व्यतीत भावप्रकाशमें इसे कफ, पित्त, मूत्र, कुष्ठ, चर्म, पाण्डु और कामना-नाशक कहा है।

काकोदर (सं० पु०) कु कुक्षितं चकति, कु-प्रक्-
चक् कः कादेगः, काकं वक्रगमनकारि उदरं यय
वा, बहुव्री०। सर्प, साप।

काकोदुम्बरिका, काकोदुम्बरीका देखो।

काकोदुम्बरिकाफल (सं० ली०) चञ्चौर, कठगूलर।
काकनालक (सं० पु०) प्रवजातीय पत्ती, बौड़ेके
साथ रहनेशाला परिन्द।

काकोर—युक्तप्रदेशके लखनऊ ज़िलेका एक नगर।
यह अक्षा० २६° ५१' ५५" उ० और देशा० ८०° ४६'
४५" पू० पर अवस्थित है। काकोर नगर पति
प्राचीन समझा जाता है। पहले यहां भारजातिके लोग
रहते थे। आजकल लखनऊके वकीलों और मुखता-
गोंकी काकोरमें रहना बहुत अच्छा लभता है। यहां
बहुतसे सुसलमान पीरोंके गोरखान मौजूद है।
काकोरका बाज़ार सप्ताहमें दो बार लगता है।

काकोल (सं० पु०-ली०) कु कुक्षितं तैःव्रतरं यथा
स्यात्तथा कश्चि पीडयति, कु-कुम्भ-चक् कः कादेगः।
१ कृष्णवर्षस्यावर विषभेद, पेडमें पैदा होनेवाना काले
रंगका एक ज़हर। इसका संस्कृत पर्याय—उयतेजः,
कृष्णच्छवि, महाविष, गरुड, च्छेद, वस्त्रनाभ, प्रदीपन,
शौक्तिकेय, ब्रह्मपुत्र और विष है। २ द्रोणकाक, पहाड-
कीवा। ३ सर्प, साप। ४ घन्य शूकर, जड़नी सूवर।
५ कुम्भकार, कुम्हार। ६ काकल नामक श्रेयधि
विर्गय, एक वृष्ट। (ली०) काकेन उजायते भक्ष्यते
प्रव, प्रपोदराटित्वात् साधुः। ७ नरकं विशेष, एक
टोकर। इसमें कौवे पापीको नीच नीच खाते हैं।

काकी (सं० ली०) काकी-डीप। १ कन्दविशेष,

एक डला। यह चीरकाकोलीके भांति लगती और
कुछ अधिक कृष्णवर्ण होती है। इसका संस्कृत पर्याय—
मधुरा, काकी, कालिका, वायसीनी, चरा, फाडुचिका,
वरा, शूका, घीरा, मेदुरा, फाडुचक, स्वादुसांभी,
वयःस्या, जीवनी, गुरुघीरा, पयस्विनी, पयस्यां और
शतपाकु है। राजनिघण्टुके मतसे काकाभी—मधुर
रस, शीतल, कफ एवं शुक्रवर्धक और चयरोग, पित्त,
वातव्याधि, रक्तदोष, दाह तथा ज्वरनाशक जाती है।
यह नेपाल वा मगधसे पाती है। २ चीरकाकोली।
३ फलघृत, एक पकाया हुआ घी। पण्डित देखो।

काकीनीहय (सं० ली०) काकीलीका जोड़ा, दोनो
काकीली। काकीली और चीरकाकोलीको काकनी-
हय कहते हैं।

काकीलूकिका (सं० स्त्री०) काकीलूक-वुन्-टाप।
आरुन् ईमेदुलिख्योः। पा ४। ३। १११। काक और पेचककी
स्वभाविक गुरुता, कौवे और सलूजजानी दुस्मनो।
काकीत्यादि (सं० पु०) तन्नामकौषधद्रव्यगण, काकीनी
वगैरह, जडी वृष्टियोंका ज़खीरा। इसमें काकीनी,
चीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, सुहृण्णो, मापण्णो,
मेदा, महामेदा, गुल्ल, कर्कटगुह्री, घंगनोचन, चीरी,
पशक, प्रवीणरीक, ऋद्धि, हृद्धि, नृद्धिका, जीवन्तो
और मधुका काकीत्यादि द्रव्य है। इसका गुण
रक्तपित्त तथा वायुनाशक और शूकर, प्रायुः, स्तन्य एवं
श्लेष्मवर्धक है। (सूत) कर्णं दंशकी प्राकृति विशेष।
काकीष्ट, काकीष्टक देखो।

काकीष्ठक (सं० पु०) काकस्य भोष्ठ इव कायति
प्रकाशते, काक-उष्ठ-कै-क। मांस शून्य सूक्ष्म अग्रभाग
और रक्तविशिष्ट कर्ण पाली। निर्मासर्धक्षिप्तायास्पर
शोणितपालिः काकीष्ठपालिरिति (सुश्रुत १६ प्र)
काकीष्ठक, काकीष्ठक देखो।

काज (सं० पु०) कुक्षितं चक्षं यत्र, कैः कादेगः।
का चक्ष्यो। पा ६। ३। १०४। १ कटाक्ष, नजारा, तिरछी
नज़र। कर्मधा०। २ कुक्षितचक्षु, बुरी आंख।

काक्षतव (सं० ली०) कक्षतुका फल।

काक्षवेनि (सं० पु०) अभिपतारीका नामान्तर।

काक्षी (सं० स्त्री०) कक्षे कच्छे भवः कक्षं पण्ड-डीप।

कागज का रंग। का. १। १११। १ सोराइसलिका, एक कुम्ह
दार मडो। २ पड़ुवर, तोर।

काशीरी (सं० फो०) बंगलीबना मीर, किसी बिष्णुका
वंशकोषन।

काशीर (सं० पु०) कु ईवत् चीबनि, चौक-बिष्
को बाटिये। योमाकावतएक एक पिड। २ वीतम
कविसे एक पुत्र। यह चौयोमरो नाको गूहाचीके
गर्मसे उत्पन्न हुये।

“इन्द्रो वीरुको बर नरका वरितवत्।

वीरुकोबलवत् काशीरवत् सुवत् इति।” (भा. १०, वना)

काशीरक कापीर देवी।

काशीरवत्, कापीर देवी।

काशीरवत (सं० पु०) काशीरवती मनोरमका पुमान्
काशीरवत् पत्नी। १ काशीरवत् कवि सम्बन्धीय।

काशीरवती (सं० फो०) काशीरवत डीय। अविता
मन्त्री फो। इरका नाम मझा या।

काशीरवान् (सं० पु०) १ कोर्तमाकविसे गूहायर्न
कात एक पुत्र। २ चरुकोविष्णुसे पिता नीतम।
३ शीर्ष राजा। (भा. १०, पर्व १५)

काग्य कल्प देवी।

काग्य (पारसीक शब्द) “काग्य” शब्द जोर है,—
यह किसी की धमझानेकी कछरत नहीं। सुविबोधि
से देय बहुत की काम है, जहां काग्य नहीं। मिय
मिय दिगोमें इसके नाम भी मिके मिके हैं। जैसे,—
उत्तर भारत और पारखर्न .. काग्य।

पारखर्न .. कर्ताम्।

तामिकर्न .. करक।

देव्याकर्न .. धिपर।

प्राय और जर्मनीमें .. धिपरार।

इटाकी और पाषोन् नाटिकमें .. काटं वा काटी।

पत्तुमीर और कोनमें .. धिपर।

दुपियामें .. गुमाङ्गनी।

ईगनेडमें .. धिपर।

धमापोन तामिक संस्कृत संघेमें काग्य नाम
भी मिकता है। धाककस भी धागरा यंटा पादि
शान्तीमें काग्य नाम प्रचलित है।

यह सर्व देयोंमें, प्रधानतः विष्णुकार्यमें काग्य
का व्यवहार होता है। यह काम भी पाकिस्तान
प्रधानतः नाम प्रकासे बायीय रंजीकी सहायतासे
यूरोप, अमेरिका और एशियामें बनते हैं, किन्तु यह
भी एशियाके इतिहास और पूर्व प्रदेशसमूहमें जाकोसे
यथैष्ट परिमाणमें काग्य तैयार होता है। यह
काम्य दुर्गम है और मिय विमिय कार्यमें व्यवहृत
होते हैं। भारतवर्षमें विमिय काेनिमीसे पाषोन्
(इष्टाविक्रित) यात्र इसी काम्यमें लिखे जाते हैं,
और यह भी लिखे जाते हैं। भारत पूर्व-उपकोय,
चीन, जापान, पारख पादि दिगोमें जो ऐसे
जाके बने हुए काम्यका पबिक पादर पाया
जाता है।

भारतवर्षमें बंगाल, बिहार, छत्ता, नेपाल
पश्चिमबंगाल, छत्ता, बाराक, कोल्हापुर, औरंगाबाद
और होजताबादमें एका (जाके बनाया हुआ) काम्य
यथैष्ट प्रसृत होता है। औरंगाबादका काम्य सबसे
उत्कृष्ट गिना जाता है। देगीय राजवाडोंमें एकी
काम्यका पबिक पादर है। यह काम्य सब काग्य
की पपिका मसूच, बिबक और सुदुग्ध होता है।
इसके बाद होजताबादके “बहादुरखानि” और
“माबागरि” काम्य समबिक पादरवीय होते हैं।
इत काग्यमें बनते बने इसके मसूच पर लखका
सुष्ण पात मिका देते हैं, फिर काग्य बनने पर इसमें
(काम्यमें) धरत बह लखका सुष्णाय पैल जाता
है; जिससे देलुमें पलि चमखार योमा देता है—
इस काम्यका नाम “धाफयानि काग्य” है। देगीय
राजव्ययक इस काग्य (धाफयानि) पर राजकीक
कार्यदि करते हैं। इत कायसे बने हुए काग्य पर
एकीक समद पादि लिखे जाते हैं।

जिसके ऊपर लिखा जाता है, एकी संस्कृतमें “पत्र”
कहते हैं। हिन्दो भाषामें (प्रचलित भाषामें)
“पत्र” वा “पत्रे” कहनेसे जो चर्च प्राप्त होता
है संस्कृतमें “पत्र” शब्दका यकार्य पत्र बंभी है।
किस बिध पत्र पत्र और बिचनपत्राकीकी उत्पत्ति
है, इस बिधमें एके बीतुईकजनक हीमें पर भी

समूलक प्रमाण रघुनन्दनके 'ज्योतिष्शास्त्र' में देखनेमें पाया है,—

"वाग्मानिके तु सप्तमे भागि ३ भाग्ये मतः ।
प्रागप्यदि यद्यपि प्रागप्यमतः पुनः ॥"

अर्थात् छह मास घीतने पर भ्रम उपस्थित होने देव विधाताने पुर्य कालमें अक्षरकी सृष्टि की और वे पत्र पर लिखे गये। छह मासके बाद अधिकांग बातोंमें ही भ्रम हो जाती है, यह ठीक है।

जगत्की उत्पत्तिका इतिहास पर्यालोचना करने पर समझ सकते हैं कि, पछिले ही कागजके ऊपर स्याही और कलमसे लिखने की प्रथा प्रचलित नहीं हुई। कागज आविष्कृत होनेसे पछिले किस पर लिखा जाता था, किससे कागज हुआ, पछिले किस देगमें कागजकी सृष्टि हुई और कौन कौनसे द्रव्यसे कैसे अब कागज बनता है, यह यथाक्रमसे वर्णन किया जाता है।

१। कागज बननेसे पछिले कौन कौन सामग्री लेख्यरूपसे व्यवहृत होती थी ? यह बतलाते हैं।

(क) पत्थर और काठ—सबसे पछिले काठ और पत्थर ही लेख्यरूपसे व्यवहृत होता था। अति प्राचीन कालमें काठ और पत्थर पर अक्षरादि खोद कर रक्षितव्य विषय लिखे जाते थे। कानदेशीया प्रदेशमें प्राचीन समाधिस्तम्भके और मिस्र देगके पिरामिडके ऊपर खोदित अक्षर अक्षरमाना ही इसका प्राचीनतम निदर्शन है।

(ख) इटक—कालदीयगण इटक (इंट) के ऊपर अपना ज्योतिषिक पर्यवेक्षणदिका फलाफल वक्षीर्ण कर रखते थे। इस प्रकारकी निधि विभिन्न इटक अब किसी किसी यूरोपीय अजायबघरमें संरक्षित हैं।

(ग) सीसा—प्राचीन कालमें सीसेके ऊपर दक्षीण आदि खोद कर रखनेकी प्रथा थी। कहा जाता है कि, हिस्सियड की "ग्रन्थावली और उनका समय" नामक पुस्तक एक बड़ी सीसेकी टेबिल पर खोदी गई थी और बहुत दिनोंतक मेसिसके मन्दिरमें रक्षित थी। सीसेकी पत्ती, इतोड़ासे पीटकर पतली

कर लेख्यरूपमें व्यवहृत होती थी। रोमनगरमें ऐसे सीसा पर खुदो हुई एक पुस्तक मिली है। उसका आकार ४ इंच लम्बा और २ इंच चौड़ा है। यह प्राचीन मिशरीय अक्षर अक्षरोंमें लिखित है।

(घ) पोतलपाटि—रोमनगरमें प्राधारण प्रसार आदिष्वर फलाफल इस समय पोतल पाटिमें खोदा जाता था। प्राचीन रोमीय ऐतिहासिक दृष्टिकर्तमें पोतलकी स्याम (तमवार रंगनेकी) में अथवा "विल्लिय" (Willis) लिख रगते थे। १२ सत्राकी कागज (Law of 12 tables) पोतल पर खोदी गई थी। रोमक सम्राट मर्येसीयानके राजत्वकालमें अथ अग्नि-टाष्टमें राजधानी बन गई थी, तब खरीब ६००० (छह हजार) पोतलकी पात गट्टे हो गई थी; इन सब पातोंमें बहुत प्रयोगयोगी कागज (नियम) और दर्शनादि भर्त्सामुत हो गये। मिशरीयके प्राचीन मठमें ६० सुफासगरी २ (दो) धातुफलक मिले थे। ये धातु विभिन्न थे। ६ धातुफलकोंमें करीब १२ छट थे। यह द्वितीयाकार अक्षरोंमें लिखित थे। कौचीनके यज्ञदिवोंके पास और भी ऐसे कई एक धातुफलक हैं।

(ङ) काठ—रोमनके कानून पाठके ऊपर खोदित हैं;—इस काठमय कानून पुस्तक का नाम "अक्सोनम्" (Asonum) है। उनमेंमें कितने ही कानून पत्थर पर भी खुदे हुए हैं। इन प्रस्तर-लिखित नाम ग्रीक भाषामें "किरविम्" (Kirbis) है। रोमनके समयसे पछिले का ताजिका-पुस्तक भी (शीमहा) काठ पर खोदी जाती थीं। एकम् नीबुके पेहजा काठ और हाथीके दांत ही इन सब कार्योंमें अधिक व्यवहृत होते थे। तब इन सब कार्योंके ऊपर मोम लगा कर सीक (सीना, चांदी, घीतन, मोहा वा तामेकी पैनी सनाई) को गढ़ा गढ़ा कर लिखनेकी प्रणाली प्रचलित थी। इन सब लिखे हुए काठके टुकड़ोंकी बाध कर रखनेसे जो पुस्तकें बनती थीं, उनकी "कडेक्स" (codex) अर्थात् पोया कहते थे। इन काठोंके ऊपर कभी कभी खडियामिडी से भी लिखा जाता था। बंगाल और उत्तर-पश्चिम प्रदेशोंमें

पत्र भी छोटे छोटे दूधानदारोंको दूधान पर ऐसी बलु टिपनेमें पाती है। ये लोग १—४ वर्षके १ आठके टुकड़े एकत्र रखीमें विरी सेते हैं; और उस रखीके छारमें एक कोड़ेकी बोल बांध रखते हैं। उन टुकड़ों पर मोम और कासीब मिखा कर जमा दिते हैं। कभीद बिस्की करते करते यदि लपार देनिका या और कोई बिसाव या पड़ता है, तो ये उन टुकड़ों पर जमी बोलके निच सेते हैं। २ साल प्रांतकी झोड़कर प्रायः चारै हिन्दुस्थानमें बिचिपतः मारवाड़ और गुजरातमें काठकी पड़िचों (१ फुट + १०") पर खाड़ियांमिही बोल कर धरपते (पेटा) की बलमये लिखा करते हैं। यह बेटा उन प्रांतमें प्रायकी तरह अपने पापको लपत्रता है। बिचिठ और पिन्डलका उन प्रांतोंमें बहुत ही कम प्रकार है, बहाई मदर्शनोंमें भाषरी "पडा" काममें जाये जाती है। पहिले जमानेमें पंधि काठके टुकड़ों पर बिडो लिख कर रखीये बांध कर, गांठके अरर सुद्ध लया दिते थे। कभीमन पुद्दाबानपने २ फुट ६ इंच काठके तपलापर एसा लिखा हुआ मौजूद है। चीनमें भी काठके तपले लिपनेके काममें पाते हैं।

(ब) पत्ता—प्राचीन काममें पहिलेखाय जातिकी पीड़ोंक पत्तोंकी सेपकपधे व्यवहारमें कामी थीं। पाकिस्तानके मिसरोयोनि सबके पहिले ताड़पत्र पर लिखना सोचा था। मिराबिकसके अत्र मोम 'अलपार' इचके पत्ते पर लिखानन-दण्डके पाशाभियोक नाम लिपने थे। भारतवर्षमें, पहिलेमें और ब्रह्मदेवमें ताड़ पत्रका पहिले व्यवहार होता है। ब्रह्मदेवमें लसम पुद्दाके हाथीके दांतकी पत्तों पर लिखो जाता था। हाथीके दांतकी पत्तियां पहिले काका रंगको जाता थी और फिर लसम पर बोलको या बालीकी दिख के पत्तर लिपि जाते थे। कड़िया और सिद्धलीय लाम "तालिपत" इचके पत्ते व्यवहार करते हैं यह पत्ती बहुत थोड़े थोड़े पत्रसे होत है। इसके लपर पत्तोंका पत्र करनेके लिये लस पर काड़िमी भौंकके लिख कर फिर लस पर थोपलका चुरा बिस कर पाल देत थे। पत्र भी पहिलेमें तालिपत और भारतमें

'ताड़-पत्र' का बहुत कुछ व्यवहार किया जाता है। दक्षिण (अबध्वेसमोला चादि)में ताड़ पत्र पर यास लिपनेका बहुतही प्रचार था और अब भी है। जैनब्रह्मी भूइब्रह्मी नगरमें "अधधरक महाधरक" नामक ताड़पत्र पर लिपि हुए दिग्दर्श केनियोक महात्त २५ पत्र भी मौजूद हैं। पाराके जैनसिद्धान्त मयनमें भी बहुतसे पत्र ताड़-पत्रोंमें लिपे हुए मौजूद हैं। निवालमें महामहोपाध्याय इरमसाद याश्रीजीने बितने इत्तलिखित पत्र देखे हैं, उनमेंसे ईगोके ६८ यत्तककी पोको सबके प्राचीन गिनो जाती है। परंतु दक्षिणके लपहुं ब्रह्म पत्रों (अधधरक महाधरक) परसे नियय किया जाता है कि, भारतमें ताड़-पत्रों पर लिपनेकी प्रथा बहुत दिनोंसे पकी पाती है।

(क) इचपत्तक—पीड़ोंको बाल में जिसे समय पहिलेके सर्वत्र लिखने के काममें लाई जाती थी। पहिले बानदीयगक पीड़ोंकी भीतरी कासको "लेबर" (Leber) कहते थे और उसको लिपनेके काममें खाते थे। इसी 'लेबर'में ही पत्र 'लेबर' मन्थ्ये पुद्दाकका प्राण होता है। ब्रह्मदेवमें बांध की लपत्र पर पवित्र पुद्दाके लिखी जाती थीं। सुमावादीयमें मुहाब्राति पत्र भी एक तरहके पीड़ोंकी भीतरी काम पर लिखा करते हैं। ये लोग इस बालको लकी लंबी और कर थोड़ी छोटी करी करके रखते हैं। रत्न या टाविन-तेलके हल जातोय एक प्रकारके लपके रचमें इचुरस मिखा कर खाई बनते हैं। साधारणतः व्यवहारके लिये ये लोग बांधके गांठमें लगी हुई थोका (पहिलक) पर भी लिखा करते हैं। बोइबियन कारबरीमें भिविसको देयक पत्तक सांकेतिक पत्तोंमें लिपि हुई एक पुद्दाके लसके पत्तर-समूह भी बरतलक लपर लिपि है। भारतके मसपार लपहुंन बाको पत्र भी प्रधानतः बरतलके लपर लिखा करते हैं।

(ख) ऐमोबल्लक—जिनि कहते हैं कि, ऐमो बरकके लपर लिखना पहिले अपवित्र पत्रोंमें प्रचलित था। इन ऐमो बरक पर लिखित पुद्दाके दिनें मबिष्टेड कोयोके नाम और साधारणकी

दक्षीण प्रादि लिखी जाती थीं। मिसरके लोग भी ऐसी पुस्तकों पर रचितथ्य विषय लिख रचते थे।

(भ) पशुचर्म—एक समयमें कहीं कहीं लोग पशुओंके चमड़े पर भी लिखा करते थे। जोन छाति पुस्तकको “डेफ्टेरी” (Defteræ) वा चर्म (?) कहती थी। “बिब्लस” (Biblos) पेड जब दुष्प्राप्य हो उठा तब लोग बकरी और भेड़ोंकी छाल पर लिखते रहे। ईश्वीके प्रथम शतकमें ‘कन्स्टांटिनोपल’में जा भोषण अग्निकांड हुआ था, तब एक जातिके सर्पके पेड का चमड़ा जल गया था। उसी सर्प-चर्म पर ग्रीकका महाकाव्य “इलियाड” और “वडेसि” सोनेके अक्षरोंमें लिखा गया था। यह हिंसक लिखन प्रणाली अब कहीं भी नहीं रही।

(ज) पार्चमेंट और विलाम्—बकरी और भेड़ की छालकी रीति अनुसार ऐसा बना लिया करते हैं; जिसमें “छापा” हो सके। ऐसे बने हुए चमड़ेका नाम ‘पार्चमेंट’ है। सूक्ष्म और अच्छा पार्चमेंट विलाम् कहलाता है। विलाम् चमड़ेसे नहीं बनता; अकाल-प्रसूत या दुग्धपायी गोवत्सके चर्मसे बनता है। पहिले यहही लोग इस पर कान्नादि लिखा करते थे। पारसी लोग इस पर खदेशप्रचलित गल्प वा इतिहास लिखते थे। दलोल्लादि लिखनेमें यह अब भी व्यवहृत होता है। डेसडेन लाइब्रेरीमें हुआपचीके चमड़े पर लिखी हुई एक मेक्सिको-पञ्जिका और भियेना-लाइब्रेरीमें एक पुस्तक है।

(ट) बना हुआ चमड़ा (लोम छील कर, पीट कर साफ किया चमड़ा; जो आजकल भारतमें भी खूब व्यवहार किया जाता है।)—ऐसे चमड़े पर आरबी लोग अधिक लिखते थे।

२। कागजकी उत्पत्ति—पहिले ही एकदम अंशुमान पदार्थके ‘मण्ड’से कागज बनानेकी प्रणाली उद्भावित नहीं हुई। पहिले लृण और वृष्णादिका अंशुविशेषसे कागजवत् एक प्रकारका पदार्थ बनता था। इसमें विदेशीय ऐतिहासिकोंके मतसे “पेपिरस” (Pepirus Antiquorum) वा वाईवेलके मतसे “बुलरस” (Bulrush) नामक लृणके जड़से बने हुए

कागज सबसे प्राचीन हैं। इससे जो कागज बनता था, उसको “पेपिरस पेपर” और संक्षेपमें “पेपिरि” कहते थे। नैस साहब कृत Exodus नामक ग्रंथमें देखा जाता है कि, ईश्वी १४०० वर्ष पहिले भी पेपिरिका बहुत प्रचार था; और ईश्वीके ३०० वर्ष बाद भी इस पेपिरिके व्यवहारका उत्तम मिनता है।

यह लृण गरकी भाति जनाशय-भूमि पर उत्पन्न होता है। मिसरदेशमें, सिरियामें और सिविलिडोपमें यह लृण उत्पन्न होते हैं। सिरियामें इसको ‘बेबेर’ (Babeer), ग्रीकमें ‘बिब्लोस’ (Biblos) और उद्दिशास्त्रमें पाद्यात्य मनीषिगण ‘साइपेरस सिरियाकास’ (Cyperus Syriacus) कहते हैं। यह करीब ८ फुटसे लेकर १२ फुट तक लंबा होता है। इसके पत्ते गरके पत्ता सरीखे नहीं होते, बंगाल प्रांतके “भाउ” वृक्षके पत्तेकी भांति इस लृणके अग्रभागमें ८ पत्ते होते हैं। इसके सर्वाङ्गमें पत्ते नहीं होते और न गरकी भांति इसमें गांठें ही होती हैं। इसका वर्ण सवुज होता है, पर जो अंश बीचमें रहता है, वह सफेद होता है। इस सफेद अंशकी छाल बहुत ही पतली होती है; और १८।२० घरो भी होती है। इन घरियोंकी सावधानीसे खोल कर चौड़ाइकी ओर जोड़ देनेसे ही कागज बन जाता था। उन छानोंके जोड़नेके लिए उस समय यूरोप वा अन्य कोई वैसी ही वस्तु काममें लाई जाती थी। ‘पेपिरस’ घासकी जड़ मनुष्यके हाथके समान मोटी होती है, अतः जितनी गोन्दाई इसकी होती है, उतनी ही कागज की भी चौड़ाई होती है। यह छाल जितने भीतरकी होगी उतनी ही पतली होगी, इसलिए तब मोटा पतला सब तरहका ‘पेपिरि’ बनता था। जो ‘पेपिरि’ सबसे अधिक पतला होता था, उसकी ग्रीक लोग ‘हेरिटिका’ कहते थे, कारण कि—इस तरहका ‘पेपिरि’ सिर्फ मिसरीय याजकगण ही व्यवहारमें लाते थे, अन्य साधारण वा विदेशीय वणिक् इसे खरीद नहीं सकते थे। मिसरीय याजकगण इस पर धर्मकथा लिख कर विक्रय करते थे। इस समयमें केवल मिसरीय लोग ही ‘पेपिरि’ बना जानते थे, अतः ग्रीक

‘बोध विद्या सुन्दर’ ‘पेपिरि’ नहीं बना सकते थे। रोमकालक भी इसी लिए ‘कृत्रिमिका पेपिरि’ नहीं पाते थे; परन्तु पीछेसे इतने लोगोंने बेसा बना दिया था। रोमकालकाद, अथवासाके समयमें रोमकालक मिसर देशके राजकीके किछे हुए ‘कृत्रिमिका’ खरीद जाते थे और एक प्रकार की चीयबिजे लखे अथर मिटा कर अपने व्यवहारमें लाया करते थे, यह चीयाब भी रोमवासियोंने बनाई थी। इस कागजका नाम, रोमवासियोंने अपने सम्बन्धके नामानुसार; ‘अथवासा’ कायक रखा। उससे नोबे दर्जेके ‘पेपिरि’का नाम, बर्बाको राजकी नामानुसार, ‘सेमिवाणा’ पड़ा। पीछेसे जब इन लोगोंकी ‘पेपिरि’ बनाना था गया, तब उक्त दो अर्थिके सिवा ‘रेम्कि क्विस्टिका’ ‘वेमियाणा’ ‘एम्पोरटिका’ ‘क़ामिया’ आदि नामके मिस्र मिस्र दामोके पेपिरि बनाने लगे थे। इतिहासे इतिहास पढ़नेसे समझ सकते हैं कि चीस या रोमके सम्बन्धकारकका विद्यास था कि पेपिरि बनानेके विद्य, मिसर देशीय नोबे लखे पानीकी पत्थरकी चीयकालक जाता है क्योंकि नोबेकलके पानीमें अम्लकाल एक प्रकारका मोदसा मिठा हुआ है इससे पेपिरि ओढ़नेमें अधिक सहायता मिलती है। पेपिरिकी जाक एक टेबल पर समान मात्रसे सजा कर उस पर नोबेकलके पानीके छिटी दे कर, कुछ देर तक धाममें सुखा देनेसे ही पेपिरि बनता था, परन्तु यह ठीक नहीं था। पेपिरिकी जासको मिगोनेने ही, लखे प्रक प्रकारका मोदसा निकलता था और उसे धाममें सुखा देने ही बह सूख कर सुख जाता था।

इसके बाद कैसे किस रातिसे अद्यमान् पदार्थकी ‘मड’ बनाके कागज बनानेकी तरकीब निकाली गई, यह जाननेका उपाय नहीं है। हा, खोजियोंका अनुमान है कि कैसे बर्रया मीरा और मीरारके जले देयमें बहुत कुछ कागज है और बह उध पादिये ही उत्पन्न होते हैं। उक्त बर्रया आदि अिस प्रकार उपाय विधियोंकी तरक बनाकर छोड़ा छोड़ा सु र्ने सेकर बड़े बड़े जले बना लेते हैं, इसी प्रकार ही शायद कागज बनाया जाता था। अ क्षेत्र ऐतिहासिकोंने

किर जिया है कि, खरोब इसी सन् ६३३ चीयके कोनोंने ही अद्यमान् पदार्थके सबसे पहिले कागज बनाया था।

खण्डके समयमें चीनवासी बांसके मीतरी धामके खपर तोष्य खेपनी द्वारा विद्या करती थी। किर इन लोगोंने बांसकी ही जाक, बई, रेशम और अन्त्या इत्योंकी जासके ‘मड’ बनाके कागज बनाना सोचा था। ईसवीय ज्योति नामक चीनकालकादके राजकालमें बई एक ज्योंकी जाक, मडको पकड़नेके सुराने जानके टुकड़े, धम, और रेशम एकसाथ उपाय कर ‘मड’ बनाते थे और इसी मडके ही कागज बनता था। कागज बनानेके लिए पहिले जो कुछ यज्ञ आदि बनाये गये थे, अब लखेको उत्पत्ति करके लखे ज्योंके उत्पत्तम कायक बनाये जाते हैं। अब चीनदेशमें नागाप्रकारके कागज बनते हैं। इस देशमें ही-सि नामक साध या फूस इतना अधिक उत्पन्न होता है कि, ये लोग लखेके यज्ञका दाह करते हैं।

जो कुछ भी हो इनकेही ऐतिहासिक कागज की उत्पत्तिमें चीनकी ही प्रथम उपाधि दे या और किसीको, परन्तु पीछे इतिहासके सम्बन्ध बांस जानी जा सकते हैं। अन्त्या विजयी चीनकालकाद केके-कालके रीगापति विवरणुम् लिख गये हैं, कि, उस समय लगे भारतवर्षमें उत्तम, नरम बिजने और मजबूत एक तरहके ‘इरुके’ बसुके खपर अन्त्याके क्षेत्र देनका जिसका लिखनेका बहुत प्रकार देखा है। यह शायद तुलत वा तुलाट अथवा तुलत कागजकी भांतिजा होया। माकिदना-राजने एरु-अथसे ३२१ वर्ष पहिले भारतपर पाकालक जिया था इसलिये लखे बहुत पहिलेने भारतमें तुलाटके भांतिजा कागजका प्रचार था,—यह निश्चित बात है। बहुतोंको धारका है कि विद्यायी कायक वा पानुनिक निखोके कागज पर इतनाक किर ऐतिमें ही तुलत कागज बन जाता है; पर बास्तव में ऐसा नहीं है। पहिले माकदक जिनमें यह तुलत कागज बहुत ही ज्यादा बनता था। देय बिदेयोंमें भी इसका बहुत कुछ आदर होता था। इसीलिए माक

पालियामेंट (Rump parliament)के हाथमें आया तब यह चिह्न उठा दिया गया था ; पर आज तक भी उसका और पालियामेंटकी रोकड़ वही आदिका नाम "फुलिस्केप" ही है ।

वहुतसे विनायती कागज नीले रंगके होते हैं । इसप्रकार कागज रंगे जानकी पहिले एक आकस्मिक घटना घट चुकी है । मि० बुरेनुस नामक एक कागज व्यवसायी १७२० ख्रिष्टाब्दमें अपनी स्त्रीके साथ एकदिन अपने कारखानेमें गया । कारखानेका कार्यादि देखते हुए ये दोनो घूम रहे थे, अचानक ही स्त्रीके हाथसे एक नील रंगकी पुडिया कागजके 'मंड'के ऊपर गिर पड़ी ; जिससे वह रंग उसी समय 'मंड'में भिद गया फिर उस 'मंड'से जो कागज बना वह नील रंगका बना । इस कागजका खूब आदर हुआ । बुरेनुसकी स्त्रीने भी नीले रंगकी पाटि (Cake) देकर यद्येष्ट लाभ उठाया ।

ईस्वीसन १६६५में स्कोटलैंडमें कागज बनाना शुरू हुआ । एडिनबरा नगरमें इसके लिए सभा हुई थी । इस सभामें जो कुछ नियमादि स्थिर काये गए थे, वे आज तक भी ब्रिटिश मिडजियममें विद्यमान हैं । उस समय सबसे ज्यादा सूक्ष्म (पतले) कागज स्पेन देशीय एक प्रकारके घास (Eapart Alfa, Lygeum Sparteum) से बनता था ।

इसी तरह ख्रिष्टीय ११वीं शताब्दीके अन्तके समयसे लेकर १६वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धकालके मध्यमें यूरोपीय कागज बननेके लिए जो चीजें व्यवहारमें लाई गई हैं और प्रत्येक चीज सबसे पहिले किस किस सालमें किस किसने व्यवहार की है, इसकी एक तालिका नीचे लिखी जाती है, —

द्रव्य ईस्वीसन सबसे पहिले व्यवहार करनेवाले
 रुई }
 सन } ... १६८२ ... ब्लाडन (Bladen)
 रेगम }
 पत्रम }
 चमड़ा ... १७२० ... हूपर (Hooper)

धानका पूला ... ८०० }
 काटिके पेड ... ८०० }
 लकड़ी ... १८०१ } ... कूप (Koops)
 पेडकी काल ... १८०० }
 सूखी घास ... १८०० }

पशुविष्टा ... १८०५ ... जोम् (Gones)
 गैवान (पोखरकी काई) १८२४ नोस्बिट् (Nesbitt)
 'रप'घ्न ... १८१५ टिला-गर्दे Dela-Gorde
 वाल, रोम ... १८३३ विलियमस् (Williams)

छतकुमारी }
 कैलेके पेडका खोपटा } १८३८ ... बेरि (Berry)

सूंगकी डांठरा ... १८३८ डि'हारकोर्ट D'Harcourt
 ईखकी छोई ... १८३८ ... बेरि (Berry)

पेडके पत्ते }
 पेडकी जह } ... १८३८ बैल्मैन (Balmane)

जौकी भुषी और डंटल } १८३८ ... डि'हारकोर्ट
 मटरका डंटल } (D'Harcourt)

'गटापर्चा' ... १८४६ ... होनोक (Honoak)
 पट-सन ... १८४६ ... कैलभार्ट (Calvart)

नारियलकी लटा १८५२ ... निडटन (Neuton)
 भुषी } १८५२ ... विल्किन्सन

'करात'का गुड } (Wilkinson)
 तमासूका डंटल १८५२ ऐडकक (Adcock)

ढणादि ... १८५२ ... स्टिफ (Stiff)
 नारियलकी खोल १८५४ डिद्यापर (Diaper)

वाटामकी चुकल १८५४ कुपलैंड (oupland)
 जनज ढण ... १८५५ आरचर (Archer)

इनके सिवा और भी नाना प्रकारकी वस्तुओंसे कागज बन सकता है, पर सब चीजोंसे कागज बनाने से व्यापार चल सकता है, ऐसा नहीं । इस विषयमें चीनवासियोंसे सबसे अधिक संख्यामें भिन्न भिन्न उपादानोंसे कागज बनाया था और बनाते हैं । चीनराज्यके प्रत्येक विभागमें, प्रत्येक जिलेमें भिन्न भिन्न उपादानोंसे कागज बनते हैं । पहिले कह चुके हैं कि, चीनवासी हो-सि नामक कागजसे शवदाह करते हैं । पि-स्की नामक कागज तूँतियाके पेड़की

कामसे बनता है, यह कागज चीनमें चायकी लिंट (Lant) वा पट्टीके काममें आता है, पटे लकड़ी के लकड़ों से यह कागज काममें आता है। कियामिमें पियाइ सिन् नामका एक तरहका कागज होता है। यह कागजमें पुड़िया बांधी जाती है। होयामिन् नामके कागजमें मिर्च दुवाईयोंकी पुड़िया बांधी जाती है। कियामि प्रदेयमें होयामियान् नामक कागजसे जो सि कागजकी माति गवदाइ बिना जाता है। ता से और चं धनामके कागज हिसाबकी बची खातीके लिए बनता है। म पिथेन और जियेनसि नामके सुन्दर और पतले कागज लिखन सुदुर्पादि करनेके लिए तथा बिजादि बैठानेके लिए और कोइ जियेनसि नामके पोछे रगके पतले कागज चौपचासगोम चपे चौपचियाकी पुड़िया बांधनेके काममें आता था स सिथेन नामके बिचने कागज पर पत्रादि लिखे जाते थे। इनके सिवा और भी एक प्रकारका रंगीला कागज बहुत सखे दामोंमें बिकता है इसके कुछ बानजो पर ० और कुछ पर ८ साठ रगकी रियाय (कम्पारिमें) रहती है।

ये सब कागज जो भिन्न भिन्न उपदानोंसे बनता है। जो जियेन प्रदेयमें खूब सखे बांस से लि बिर्वा प्रदेयमें बानजो पूजासे, और कियामि नाम प्रदेयमें पट्टी पुरानो रैयमसे कागज बनता है। इनमेंसे रैयमटा कागज भीमता पादरकोय और देयनेमें खूबसूरत होता है। कागज प्लाही न मोब सके इसके लिए ये लोग इस पर गिरीयका एक पदार्थ लगाते थे। यह देखनेमें मोमकी 'पटपटो' की भांति ही होता है। पहनेके कर्टाको सब पच्छी तरह जोकर उसके तेकामको नष्ट करके इसे नियमातुनार लिटिकरीके साथ मिना कर रख देते हैं, जिससे दोनों गन्धकर तरल हो जाते हैं फिर बोमटोमें एक कागज ठठा कर उसमें कुछा कर काममें वा पागके सामने रख कर उसे सुखा लेते हैं। ये लोग और भी एक भांतिका बहुत कागज बनाते हैं, वह 'पाचा' एक मोटा होता है। यह कागज सखजमें पाग जगते ही बल नहीं पकता। ये लोग "मारत" नामका एक प्रकारका

कागज (India paper) बनाते हैं इस पर प्रति स्पष्ट चित्र कोटित होता है और बहुत ही बढ़िया कपारें होती हैं। चीनमें मोबा या बरको कलमें बिर हो जाने पर, उसमें तेलाइ कागज दूसर कर उन पर टांगराओ कर दी जाती है। पहिले जिन जिन कपड़े कागजोंका इस्तेमाल किया है, उनमें से लोग मोबा का कपड़ाके पालमें समाया जाता है, और दूधानदार मोम इससे चीन-यसु बांधनेके लिये सुलभो बना लेते हैं। चीनमें निख प्रति कागजका इतना प्यार है कि वह लिखा नहीं जा सकता। इससे सुलभ बाबिज्य चीनमें और दूधरा नहीं है। चीनबासियोंकी पूजा, भूमी, बर्त, सन, लकड़े बांस, रैयम इत्यादि जो कुछ मिलता है उसीमें से ये मोम कागज बनाया करते हैं। चीनके कागजों पर मोम लगाया जाता है इसीसे वे देखनेमें खूब बिचने होते हैं। कागज पर मोम लगानेसे पहिले, उनको पलरसे बिभ किया जाता है। चीनमें विदेशीय कागज बहुत कम टिकते हैं। विदेशीय कागज ऐसे नियमसे बनाया जाता है कि पकसातु नष्ट न होनेसे वह सखो नष्ट नहीं होता। इस लिये बर्दा लिपने पढ़नेके काममें, विशेष कागज की व्यवहार किये जाते हैं। विदेशी काग पर गिरीय समानसे वह ज्यादा दिन तक नहीं ठहरता।

चीनबासी खूब खासीनीके साथ बांसके कागज बनाते हैं। खूब सखे बांसोंकी पहिले पानोमें डाल देते हैं जब बांसोंमें पच्छी तरह पाी भिंट जाता है, तब उनका खोर कर बनाके पानीमें डाल देते हैं। इससे यह कोचकी तरह गरम हो जाता है, फिर सूटा जाता है। सूटन जब वह 'मंठ' बन जाता है तब पानोमें उबाना जाता है। इस प्रकार उबाने जाने पर बांसोंमें डाल कर पायगुत्तागुमार पतने और माटे कागज बनाये जाते हैं। यह कागजके लिपने और पुड़िया बांधनेके सिवा और भी एक काम किया जाता है। ईंट खोनामें ईंट बनने समय 'ग्रीस' एक कागजकी सूट कर मिना दिया जाना है। बांसका कागज खूब पतले और साफ होता है। लोग बाबिजोने ईसो चन् २.० में इस कागजकी सबसे पहिले

बनाया था। कोई कोई कहते हैं कि, इससे भी पहिले चीनमें वांसके कागजका प्रचार था। चीनमें एक एक प्रदेशमें एक एक चीजसे प्रधानतः कागज बनाया जाता है। कहीं सनसे, कहीं कसे वांससे, कहीं नूतछालसे, कहीं धानके प्लासे और कहीं गेहूँके प्लासे प्रधानतः बहुत कागज बनाये जाते हैं। रोमकी 'गुटो' से पार्चमेंटकी भाँतिका एक तरहका कागज होता है, इसको चीन लोग लो-प्रोचिन-डी कहते हैं। यह अत्यन्त कोमल होता है; और इस पर खुदाई करके लिखा जा सकता है। एक प्रदेशमें 'को-चा' वा 'चा' नामक एक प्रकारके वृक्षसे यथेष्ट कागज उत्पन्न होता है। ये लोग उस समयका सा कागज खूब भी बनाया करते हैं। चीनवासो चीन या वृक्ष देशी नूत-छा (*Broussonetia papyrifera pepermulberry*) के कागज बनानेमें पहिले डानियोंके १-१ घाय लम्बे टुकड़े करके खारे पानीमें डबाल लेते हैं। इस प्रकार उबाल लेनेसे भीतरी छाल घृथक हो जाती है। फिर उस छालको घृथक करके वाममें सुखा लेते हैं। इस तरह जब पर्याप्त रूपसे छाल एकत्र हो जाती है, तब उसे ३-४ दिन तक पानीमें डाल कर नरम बनाते हैं। और वचे हुए अंशसे बाहर निकाली हुई छालको फेंक देते हैं। सबसे पीछे बाहर निकली हुई छालको फेंक कर; जो कुछ बाकी बचती है, उसको उबालते हैं। जब तक यह उबाली जाती है; तब तक एक बटनेसे उसे घोंटा करते हैं। फिर नाना प्रकारके यंत्रोंको सहायतासे इसे 'मंड' (लूंड) बना लेते हैं; और कूट कर इसे धा लेते हैं। फिर इसमें भातका माड मिला कर मंचिमें टास कर इसका कागज बनाते हैं। वांसके कागजसे इसमें अधिक यत्न करना पड़ता है। फिर इनको रखते समय, प्रत्येक कागज पर एक एक तिनका रख कर रखते हैं। बादमें फिर एक एक ताव घाममें सुखाया जाता है। यह कागज खूब नरम और पतले होते हैं, इसमें दोनों तरफ नहीं लिखा जा सकता। ये लोग कभी कभी इसके दो ताव गिरिंधसे एक साथ बाँड लेते हैं। ऐसा बाँड

देते हैं कि, कोई ममभ नहीं सकता कि, यह एक ही या दो।

जापानमें ऐसे कागज बनाते समय, ये लोग (जापानी) छालको खारेपानीमें न उबाल कर दाई (खागु)के पानीमें पात्रके मुँहको ठकरा उबालते हैं। जब डालीके दोनों किनारकी छाल आधेघड़के करीब गन जाती है; तब उसे उतार लेते हैं, और ठंडा होनेपर उसके बलून छुड़ाकर ३-४ घंटे पानीमें डाल रखते हैं। इसी समय ये लोग ऊपरकी शाली छालको छुरोंमें छील देते हैं। फिर माटो छाल और पतली छालको अलग अलग कर लेते हैं। इसके बाद फिर इन बलनोंको उबालते हैं, और एक लकड़ीमें घोंटा करते हैं। इस प्रकार जब यह 'मंड' (लूंड) बन जाता है। तब इसमें भातका मंड तथा अग्रान्य वस्तु मिला कर; चटाई पर डाल कर कागज बनाया जाता है। और बने हुए कागजोंको सम्भाल कर रखते समय प्रत्येक कागजके नीचे एक एक लप गव देते हैं; फिर उसपर बज्रनटार चीज रख कर उसका पानी निकाल देते हैं। इसको घाममें सुखा लेनेसे ही कागज बन जाता है। इसके अंशोंके अनुसार यह कागज फाड़ा जाता है। इसको घरी करके रखनेसे उस घरीका दाग नहीं होता; और यूरोपीय कागजसे यह खूब मजबूत भी होता है। बाजारमें जो चीनके पंखे विकते हैं, वे इसी कागजके बने हुए हैं। इस कागजके द्वारा घरकी भीत भी बनाई जाती है पुडिया बंधनेके काममें भी यह लगता है। यहाँके बहुतसे लोग रुमालको जगह इस कागजको काममें लाते हैं वास्तवमें यह कागज होता ही ऐसा है कि; इसको देखते ही कपड़ेका भ्रम हो जाता है। कारण, यह कपड़ेकी भाँति कोमल और सर्वत्र एकसा होता है तथा इसमें भाँज भी नहीं पड़ती वहाँके लोग इस कागज पर साखका कान करके टोपी बनाते हैं और तौलियां, टेबिलका आस्तरण, पहिरनेकी फतूली आदि भी बनाते हैं।

जापानमें प्रधानतः "मोरस पेपिरिफेरा सेटाइमा (*Morus Papyrifera Sativa*) वा 'कागजके पेड-

को जाँचने काम बनता है जापानवासी इसको "कादुबी" कहते हैं, इसमें भातका माह "ओरेण्डि" (Oreni) मिलाकर कूबधूरत घोर मजबूत बनाते हैं घोर भी एक प्रकारके लघु जातीय इन्धने का लघु काम बनाने हैं, इस से थोके इन्धको वहाँ "कादुब" या "कादुबिरा" कहते हैं। इस काममें फुब पन्थी कपाई पातो है। यह "कादुबिरा" इतना मजबूत होता है कि इससे रथ्या म बनाये जाते हैं सिरिना प्रदेशके सिरिमान नगरमें एक तरहका आगम बनता है जो बिजकुल रैयमसा जान पड़ता है। जायमें सेकर देखनेमें भी इसमें रैयका म्रम होता है। बहुतोका मतमान है कि जापानो "कामम" मन्दे ईराचिदीने आगम मन्द बनाया है।

समरसंदर्भमें लघु ज्वाला पतला रैयमी काम बनता है। चीनके कामलसे भी इसका पचिक पाटल होता है। सबसे पहिले चीनवासियोंने जो रैयमसे आगम बनाया था वहहि भारतवर्षमें भारतके पारख में पारखसे पारखमें पारखसे पीसमें घोर पीससे प्राचीन रोमक राष्ट्रमें रैयमी काम बनानेको परि पाठो जमी है।

भारतवर्षमें सेवम निपाचमें जो बाँससे काम बनता है। निपाचवासी बाँसको काटकर काठकी थोचकीमें कूट कूट कर 'मंड' बनाते हैं फिर पानीमें जो कर माप करके जाना लपावोंसे लघु रैयमके ऊपर ठाक कर सुखा लेते हैं। इसका पत्थरकी बटनियासे विष त्रिम कर बराबर करते हैं। यह आगम बहुत बड़ा होता है; घोरटेढ़ा नहीं पडता, सोबा ही पडता है। यह आगम "फिल्टर" (Filter) करनेके लिए सबसे पच्छा है, क्योंकि यह पानीमें मीग जानेसे सुरभ्राता नहीं; घोर न लक्ष्मी मड हो जाता है। "निपाची कामम" नामका भी एक तरहका काम होता है। यह महादेव का-प्लू (Opheo chana-lua) नामक इन्धने बढलसे बनाया जाता है। ईस्वी सन् १८२१ की प्रदर्शनीमें इसी बढलसे बना हुआ एक बड़ा काम दिखाया गया था, दर्शकोंने इसे देख कर बड़ा आश्चर्य किया था। इसकी बनाने

की तरकाब जापानके तूत-कासके आगम घरोबी जो है, सिर्फ़ एक इतना ही है कि, ये काम हाथीको लबाक कर सिर्फ़ मोतरी कासकी जो लपावते हैं। यह काम लघु लघु लघु से विष कर भी बराबर किया जाता है। यद्यपि यह आगम 'निपाची आगम' कहलाता है, पर वास्तवमें यह निपाचमें नहीं बनता। मोट राष्ट्रमें घोर विमासव प्रदेशमें जो इस इन्धने बहुतसे लयक है, घोर नहीं पर यह काम बनता है। सुटिया लोक इस इन्धको लकड़ी लबावा करते हैं। १८२८ ईस्वीसे पहिले इस काठके ईटके पाबारके कुछ टुकड़े लुखेडमें परोचार्थ में गये थे। वहाँ इसके द्वारा जाँचने जेसा आगम बना उससे सत्यर्थमें एक मुद्रकका बहना है कि, इस आगम पर जेसी छापके छाप कपाई हो सक्तो है वेसो किसी पंदेशी आगम पर नहीं हो सक्तो। यह चीन रैयमी 'रुडिया घोर'के समान गुणविशिष्ट होता था। निपाचमें इसे आगम पर लियो हुई कुछ प्राचीन पोबिया मोमूद है, दुनते हैं ये बहुत जो प्राचीन है। इन पोबियोंको देख कर बहुतसे मतमान करते हैं कि, चीन रैयमे प्राय ७०० वर्ष पहिले सुटिया लोमोने यह आगम बनाया सोचा है। "महादेव का प्लू" छोटा काँठका-लघु माह है देखनेमें बहुतसा बिलपतो लरेयको मतिका होता है। यह दो बर्य तक होता है, घोर काड़ेमें इसके पत्त नहीं भरते। इसका फल विवाह है ता है। यह इन्ध कई तरह होता है, पर सबसे काम बनता है। कुछ इन्धने फुम सपेद होते हैं घोर कुछका रंग सोड़ा मटोला घोर लैयमी रंग मिला हुआ सपेद सा होता है। बहुतोका विचार है कि विमानयके नीचेके लोग निपाची काममें इड़ताक मिलाते हैं, पर यह बिलकुल गलत है, क्योंकि निपाचमें वेसा विष कीई वैच नहीं सक्तो, घोर विपाचकर वैचमें पर भी लघु विगेष दंड दिया जाता है। "महादेवका प्लू"का इन्ध भी जोड़ा बिपेला होता है, पर आगम बन जाने पर लघुमें विष नहीं रहता क्योंकि देवा गया है कि इनमें भी जोड़े करते हैं। यह छपने पर बड़ा बड़ा हो जाता है; लघु चीनी

प्रकारके लक्षण एकत्रित किये जाते हैं; जो कि "पामेट" (Palmeta) नामसे प्रसिद्ध है। ये लक्षण आठ-दश फुट लंबे होते हैं; और इससे भी कागज बन सकते हैं।

आज कल विनौले (कपासके बीज) की सुसीसे कागज बनते हैं। बहुतोका कहना है कि, इसका कागज बहुत अच्छा होता है। पहिले स्पेन देशीय एस्पार्टाके सम्बन्धमें जो कहा है, उनमें "मेरोकोया टेनासिसामर" (Merochoa Tenaissamr) और "लिगेयाम् स्पार्टम्" (Lygeum Spartum) जातीय घास ही अच्छी होती है, यह घास भूमध्यसागरके किनारे पर ही अधिक होती है।

भारतवर्षके वाव्ना वृक्षकी भीतरकी छालसे भी बहुत अच्छे कागज बन सकते हैं।

पृथिव्या राज्यमें "पीरो" नामके लक्षणसे कागज बनता है।

कागज पर रंग चढ़ाना।—इंग्लैंडमें सबसे पहिले जैसा रंगीन कागज चला था, उसका उल्लेख पहिले कर चुके हैं। पहिलेसे साधारणतः कागजका रंग सफेद होता आया है; और उसके ऊपर काली स्याही से लिखनेकी रीति चली आई है। कागज बननेसे पहिले जब चमड़े पर लिखा जाता था, तब भैंस वगैरहके चमड़े पर पीला, नीला आदि रंग चढ़ा कर उस पर सुनहरी या रुपैरी हिन्नसे लिखा जाता था। रोमकगण हाथीके दांतकी पत्तियों पर सज रंगकी मोस लगते थे। बहुत जगह सिन्दूरसे लिखनेका न्वव प्रचार था। ग्रीकके राज वंशमें प्रायः सब ही लिखा-पट्टी लालरंगसे होती थी। भारतवर्षमें चन्दन, लालरंग और सिन्दूरसे मन्त्रादि लिखनेकी प्रथा बहुत प्राचीन समयसे चली आई है।

बंगालमें और भारतके अन्य स्थानोंमें वानकीकी पहिले पहन "सिद्धम खुडी" नामक एक प्रकारके नरम पत्थरके टुकड़ेसे जमीन पर लिखना सिखाया जाता है; फिर क्रमशः ताड़पत्र पर, केलिके पत्ते पर; और आखिरमें कागज पर लिखते हैं। इससे भारतकी लेख्य वस्तुका क्रमविकास अष्ट भन्नक जाता है। भारतवर्षमें प्राचीन कालमें जितनी लेख्य वस्तुएं थीं,

उनमेंसे ताड़-पत्र, केलिके पत्ते, बट-पत्र, तैरेट-पत्र, मुर्ज-पत्र, तूनात् वा तून्ट-कागज, पत्थर और धातु-फलक आदि ही प्रधान हैं। अब भी ताड़-पत्रका व्यवहार है। मन्त्रादिका 'गदा' वाघनेके लिए अब भी भूर्ज पत्र काममें आता है। केलिके पत्ते भी अब तक गावोंकी पाठशालाओंमें लिखनेके काममें लाये जाते हैं। केलिका पत्ता जन्टी सूख कर नष्ट हो जाता है, इसी लिए इस पर कोई रक्षितव्य विषय नहीं लिखा जाता। इस विषयकी बंगालमें एक कहावत है कि,— "लिखे दिनाम कलार पाते, भेसे वेडाग् पये पये"— अर्थात्, केलिके पत्ते पर लिखा दिया है; इस लिए लिखना न लिखना बराबर है। तैरेटपत्र पर लिखित पोथियां अब भी यथे मिलती हैं। यह ताड़-पत्रकी भातिका ही होता है; पर उससे कुछ पतला और चौड़ाईमें बड़ा होता है। यह ताड़-पत्रकी अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। बट वृक्षके पत्ते का अब विरहूल व्यवहार नहीं है। धातुफलक और पत्थर पर अब सिद्ध मन्दिरादिमें शिल्पलिपि खोदी जाती है। तामेकी चद्दर पर जैनियोंका सिद्ध-यन्त्र भी खोदा जाता है। यन्त्र परम पूज्य होता है; और जैन विवाह पद्धतिसे जो विवाह होता है, उसमें इस यन्त्रकी स्थापना करके पूजा की जाती है। यह यन्त्र प्रायः करके सब ही दि० जैन मन्दिरोंमें प्रतिभाके पास विराजमान रहता है और इसमें सिद्ध भगवान (अष्ट कर्मसे मुक्त) की स्थापना करके अष्ट द्रव्यसि पूजा की जाती है। तान्त्रिक उपासक लोग तामे, सोने और चांदीमें खोदित देवताओंके यन्त्र मन्त्रादिकी पूजा आदि करते हैं। तूनात् वा तून्ट कागजका भी यथेष्ट प्रचार है। पहिले इस कागज पर गोद, इमलीके चियाक्री चूर; और हडताल लगा कर घोंट कर रंग चढ़ाया जाता था, कोई भातका साड़ भी लगाता था। इससे न तो कीड़े लगते थे और न कागज स्याही सोखता था। जिस कागजमें साड़ लगाता था, उस पर संस्कृतकी पुस्तक नहीं लिखी जाती थीं।

सुसज्जमानोंके जमानेमें भारतमें कई तरहके

कागज बनते थे, जिनमेंसे (१) सर्वाधारणके कागज कागज, (२) अमौर उमरावोंके कागज और (३) मुठे हुये कागज ही प्रधान हैं। मुठ्टा हुआ कागज भी तीन तरहका था।

१ सफ़ेद—सिर्फ कृद्विवा मुठियासे सिध कर बिचनना किया हुआ।

२रा करपुमान—सुनहला और सफ़ेदा। पर्याप्त हाथिचाखके “पपुगानी” कागजकी भांतिथा।

३रा टिखलीदार—जिसमें छोटी छोटी सुनहली और सफ़ेदकी टिखली मगो रहती हैं। यह मर्यादाके अनुसार मिश्र मिश्र रूपसे म्यमजत होता था।

यह कागज चौड़ाईको तरफ लम्बा होता था। इन कागजों पर बिषय लिखे जानेके बाद, फिर इनको मोड़कर ऊपरसे एक बेशी ही कामका टुकड़ा मूट्ट दिया जाता था। ऐसे कागजके टुकड़ेका नाम “कमरबन्द” था। फिर मध्यमककी सेकीमें रखकर, उसे मकमकसे या जरीसे बांध कर रख दिया करते थे।

कश्मीरमें एक तरहका पुराना दिगो कागज देखा जाता है। यह कागज देखनेमें सफ़ेद न होनेपर भी ऐसा बिचनना कागज भारतमें बहुत कम ही है। सुना गया है कि, ऐसा कागज कश्मीरमें बहुत दिन पहिलेसे बनता थाया है।

पत्र तब परोसा करके जिन जिन कद्विज बनुचोंके कामका बनाया गया उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं—

इससे पहिले मिकों में सनकी (परिवर) जड़के कागज बनाया जाता था, परन्तु पत्रक मिकोंमें सनकी जड़ से बोर बनाये जाते हैं, इस लिये उसका मुख्य बड़ गया है। इसी कारण सनकी जड़के पात्र जल कागज नहीं बनाये जाते।

सातुरे या बडुरे चास ही कागजकी मिकों में कागज बनानेके लिये पचिक काम में लाई जातो है। यह भाष या सात साध मग के करीब यह उपयुक्त होती है। यह घास १७ या १७ मग मिलतो है।

मग और मूकध भी कागज बनाया जासकता है, परन्तु इससे बिकायत नहीं हो सकतो। क्योंकि यह

घास पचिक पेदा नहीं होती; और इसका मुख्य भी पचिक होता है।

क्यों क्यों बांस से भी कामका बनाया जाता है। इसदेय में बांस द्वारा कागज बनानेको कस पमी तक स्थापित नहीं हुई है। पासाम और ब्रह्म देय के बंगलों में यथेष्ट बांस उपलब्ध होते हैं। बांसों की कटाई, रचना किराया, मजदूरोंको मजदूरी पादि जोड़ कर जिसका सगाने पर १७ या १७ मग से कम नहीं पड़ेया। अमंगों में सिध काम के पूरों से कागज बनाया जाता है।

जान ही में क्वि तलविद् श्योमुक्त निवारकबन्द, बीबरो ने गयेयथा पूर्य यह मन्तम्य प्रकाशित किजा है कि, ‘सन-कटो’ ही कागज बन सकता है। क्योंकि रासायनिक परोसा करके देखा है कि ‘सन कटी से सेकडा पोडे ६० भाग कागज तैयार करानेके छूत होते हैं। उनके परोसा फल से जाला गया है कि—

सनकटी से सेकडा पोडे	६०	भाग	सूख
बांस से	३१	“	“
सतुरे बातुरे चाससे	३८	“	“
मग से	३०	“	“
जान के पूला से	३३	“	“

सनकटी पात्रकल सिध कलाने के काम में पाती और यांश में कम शोमत में मिलतो है। ५ या ७ थाने मग इसका भाव है। श्योमुक्त निवारकबन्द ने जिसका करके दिखाया है कि बंगाल बिहार, कड़ीसा प्रदेशको सनकटिणी ही एकाक में साठे पांच करीब मग कागजके छूत बन सकती हैं। भारतवर्ष के लिये सिध २३, पचीस साध मग कागज-छूतको सफल है। याकी के छूत का बने हुए कागज बिदेयां में अजर्न से देय की पार्थिक काम और गरीबों का बन्पाव हो सकता है।

कागुजात (५० गु०) पत्रादि बहुतसे कागज। यह यन्द कागजका बहुबचन है। कागुजी (५० बि०) १ पत्रक सम्बन्धीय कागजके सुता जिक। २ पत्रकनिमित्त, कामकासे बना हुआ। ३ सूख लम्बे बिगिट बहुत पतले बिखेबासा। (५०) ४

पत्रक विक्रेता, कागज फरोख्त करने वाला । ५ श्वेत वर्ण कपात, सफेद कवूतर । सूक्ष्मजलीकाको 'कागजी जोंक' और सूक्ष्मत्वक् विशिष्ट निम्बुक् को 'कागजी नीवू' कहते हैं । कागजी वादामका भी क्लिक्ता बहुत पतला होता है । हिन्दी में जिस वस्तुके पहले 'कागजो' शब्द लगता, वह प्रति उत्तम रहता है ।

कागद (हि० पु०) पत्रक, कागज ।

काग भुसुण्ड, काक भुसुण्ड (हि०) काकभुसुण्ड देखो ।

कागर (हि० पु०) १ पत्रक, कागज । २ पक्ष, पर ।

कागरी (हि० वि०) तुच्छ, हकीर, झोडा ।

कागल—बम्बई प्रदेशके कोल्हापुर राज्यका एक सुद्र राज्य । यह अक्षा० १६° ३८' ८०" और देशा० ७४° २०' ३०" पू० पर अवस्थित है । इसकी भूमि का परिमाण १२८ वर्ग मील है । प्रति वर्ष २००० रु० कर लगता है । वर्तमान सामन्त राजाके पूर्व पुरुष सखाराम राव सेंधिया के एक कर्मचारी थे । १८०० ई० को उन्हें कोल्हापुर राज्यके निकट कागलकी समद मिली । राजा साहब ८ तोपोंकी सलामी पाते हैं । इस राज्यके नगर का नाम भी कागल ही है । दूग्धगङ्गा और वेदगङ्गा दो नदी हैं ।

कागान—पञ्जाब प्रदेशके हजारा जिलेकी एक उपत्यका । दक्षिणांश-यन्तीत इसके तीनों ओर काश्मोर राज्य लगा है । भूमि का परिमाण ८०० वर्गमील और क्षेत्र ६० मील तथा प्रस्य १५ मील है । कागानके शृङ्ग प्रायः १७००० फीट ऊँचे पडते हैं । यह हिमालयके अन्तर्निविष्ट है । इसमें २२ घरराय है । वनमें अच्छी अच्छी लकड़ी होती है । मनुष्य अधिक नहीं । कहीं कहीं दो चार घरों में लोग रहते हैं । कागान नामक ग्राम अक्षा० ३४° ४६' ४५" ८०" और देशान्तर ७५° ३४' १५" पर अवस्थित है ।

कागावासी (हि० स्त्री०) प्रातःकाल पी जानेवाली विजया, कौवे बोलनेके समय छनने वाली भाग ।

कागारि (सं० पु०) कागस्य परिः कागः अरिर्था यस्य । पेचक, उल्लू ।

कागारोल (हि० पु०) काकरव, कौवोंका शोर, हुल्लड़ ।

कागिया (हि० स्त्री०) मेघी विधेय, एक तरहको भेड ।

यह तिज्यत मे होती है । इसका मिर बड़ा और पर छोटा रहता है । मांसका आस्वाद सुप्रसिद्ध है । कागिया मांसके लिये ही पाली और मारी जाती है (पु०) २ छामविधेय, एक कीडा । यह वाजरेको विगाहता है ।

कागीर (हि० पु०) काकवलि, कौवेकी दिया जाने-वाला कौर । इसे त्रादादि के समय कव्यसे निकाल कर काककी घिसाते हैं । काहर्णि देखो ।

काग्नि (सं० पु०) ईपत् अग्निः । अल्प अग्नि, थोड़ी आग ।

काद्दायन (सं० पु०) एक सुनि । इन्होंने चरकसंहिता प्रणेता अग्निवेश ऋषि के साथ भरद्वाज-पुनर्वसु, से आयुर्वेद पढा था । चरकसंहिता देखनेसे इनकी बनाई संहिता का भी पता लगता है । किन्तु यह देखने में नहीं आती ।

काद्दायनमोदक, (सं० पु०) मोदक विधेय, किसी किम्ब का लड्डू । यह हरीतकी ५ पल, जीरक १ पल, मरिच १ पल, पिप्पली १ पल, पिप्पलीमूल २ पल, चविका १ पल, चित्रकमूल ४ पल, गुण्डो ५ पल, यवचार २ पल, भझातक ८ पल तथा गुडकन्द १६ पल (खाड) और उक्त सर्व चूर्ण से द्विगुण गुड डालने से बनता है । इसके सेवन से शरीरोग अच्छा हो जाता है ।

काङ्गणीय (सं० त्रि०) इच्छा के योग्य, चाहने लायक ।

काङ्गा (सं० स्त्री०) काञ्चि-अटाप् । आकांक्षा, इच्छा ।

काङ्क्षित (सं० त्रि०) काञ्चि-क्त । १ अभिलषित, चाङ्ग जानेवाला । (स्त्री०) २ इच्छा, खाङ्गि ।

काङ्क्षिता, (सं० स्त्री०) अभिलाष, चाह ।

काङ्क्षी (सं० त्रि०) काङ्क्षतीति, काञ्चि-णिनि । अभिलाषी, चाहनेवाला ।

काङ्क्षी (सं० पु०) कङ्क्षी, एक चिडिया ।

काङ्गयम,—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिले का एक ग्राम ।

यह धारापुर तहसीलके अन्तर्गत अक्षा० ११° १' ८०" और देशा० ७०° ३६' ५०" पू० पर अवस्थित है । प्राचीन नाम कोङ्ग है । सम्भवतः पूर्व कालको दक्षिणात्यके कोङ्ग राजा यहां राजत्व रखते होंगे ।

खाड़ा (सं० स्त्री०) कुत्सितं खनि यद्वा, खाड़ा उप-
बहुव्री० । खाया, खाप ।

खाड़ाक (सं० स्त्री०) पश्चिम आशियाकिये बिस्वी बिष्पका
खान । यह रस एवं पाकमें मधुर, वातपित्तप्रमन पीर
यासिबद्ध गुण होता है । (इन्द्र)

खाप (सं० स्त्री०) कथ्यते बभ्रते पमिन खाप ब्रह्म न
कुत्वम् । १ सोम । २ खाप या खपडा । ३ खापबलक ।
(पु०) ४ यिक्व । ५ मन्वि क्रियेव । ६ मीम रोगवियेव
सोतियाबिंद सिङ्गनाय पीर मोसिका ये दो इसके
नामान्तर हैं । तिमिर रोगको पहिली चक्का में
जब किशन बन्द, सूर्य, नक्षत्र बिभुत् पीर उज्ज्वल रस
पादि की दिवारि देते हैं तबो खनकाका नाम 'खाप'
या सिङ्गनाय रोम है ।

यहनामि, बड़ेकाकी सींगे, हरोतकी मगयिना
दोषक, मिरक, कुड, पीर मक,—इन सब चीसोंका
प्रमान रीतिसे एकत्र करके बहरी के सूबके साय
पोरना चाहिये । फिर मटर की बराबर गोलियां बना
कर उन्हें सूखा लेना चाहिये । इसके बाद इन गोलियों
को पानी में सिध कर पापों में लगाता चाहिये । इस
पश्चन से खाप, तिमिर पटलरोम, भांसङ्गि पर्वुद
पीर रामग्रन्थ पादि रोग नष्ट हो जाते हैं । ७ समुद्र
गुप्त का नामान्तर । ८ अक्षि का विषय । इसका दूसरा
संस्कृत नाम पार है । रामवहमके मत से इसका
गुण—पाररस, उज्ज्वलीय पीर पञ्चमहारा इति
प्रसवता कारक है ।

खाप मङ्गलवर्ण अक्षय बहु है । यूरोपको एवं प्रमान
प्यबहायं पशु वही है । हमारे देशमें जिस प्रकार
खाप पोतक, पत्थर पादि के बर्तन व्यवहार में पाते
हैं उबोप्रकार इन (खाप) के बर्तन यूरोपमें व्यवहृत
होते हैं । इसी लिए इसदेश को पपेचा यूरोप में खाप
पत्रिक तैयार होता है पीर इस थिम्प को उपति
भी बह हुई । यूरोप में खाप इतना पत्रिक तैयार
होता है कि इससे देस का प्रभाव पूरा कर बिदेसीमें
वापिकके लिये भी भेजा जाता है । भारतमें भी
यूरोप के खाप पाता है । खापके दोतक, सौमी, खाप
को चादक, पोत, खनिम मोती, तरक तरकके बर्तन

भाइ, नामटेन, पानुप पीर नाना प्रकार की बिलोरो
कीक, बूडे, बाबा बानी पादि पत्थर बनते हैं
पीर नाना देसोंमें भेजे जाते हैं । यूरोपको खाप की
चीसों हमारे पबसे भारतमें भी प्रत्येक वर्ष में १५—१६
लाख रुपये की पाती हैं; जिनमें १० लाख के तो मोती
पादि पाते हैं ।

बाहुबिन पीर पार से खाप बनता है । भारत
में इन दोनो चीसों का प्रभाव नहीं है । साधारण हाल
में ही यथेष्ट बाहुबिन प्राप्त हो सकता है, पीर पार
नाना तरहकी बसुयो से संयुक्त किया जा सकता है ।
पच्छा खाप बनाने के लिये बाहुबिन की समझ बूझ
की बची हुई मिट्टी (Fire-clay) का पूर काममें लाया
जा सकता है भारतमें उज्जका भी प्रभाव नहीं है ।
इतनी सुविधा होने पर भी भारत में आज तक खापके
व्यापार को उपति न हुई । यहाँ आज बस जेया खाप
बनता है इससे एक तो बूडियां पीर दूसरो बहम
येंको भी बची सोमियां या कुपवियो के मिश्र पार
कुड भी नहीं बनाया जा सकता । इस देस के खाप
बनाने वाले पार पत्रिक काम में लाते हैं, इसी लिये
खाप पच्छा या साक नहीं बनता । बनी खनो से सोम
पार इतना पत्रिक हाल देते हैं कि खाप तक गुन
परा हो जाता है । इससे बाद जेयी मट्टी में खाप
गलाया जाता है, वह भी ठीक काम के खापिक नहीं ।
कारण उसमें पारप्रकृततासुधार उत्पन्न नहीं पैदा
होता पीर जो कुड होता भी है, वह बराबर पकसा
नहीं रहता । सो कि इस देस की मट्टी में पत्रिक
प्रकृतित रखनेके लिए थोबनो से हवा दो जाती है ।
इसीलिए थोबनो को हवा से अनुसार पाग का लेज
पर्यदा घटता बढ़ता रहता है । फिर ऐसी हवासे गरी
हूय खाप में कुड खंम पतका पीर कुड खंम गाढा हो
जाता है इसलिये माक भी नहीं होता । देसो खापमें
बिग्रह पारके बदले मखीमिट्टी काममें कारि जाती है ।
इससे खाप पच्छा नहीं बनता । सोकि इसमें प्यदा
तर बड़े खंमारकी पार (crude carbonate of
कुड उदिकार (potash) सेकड़ा
माय चूना, १०—१० भाग कुड

बहुत घोडा कोष्पार्जिन, फेल्स्यार और लोहा आदि रहता है। परन्तु यूरोप में कांच की बोतलों के लिये जो चीजें काममें लाई जाती हैं, उनमें सैकड़ा पीछे ५८ भाग वालू, गन्धक चार, (Sulphate of soda) २८ भाग, चूना ११ भाग और उद्भिज्जाह्वार ११ भाग रहता है। गन्धक चार से सैकड़ा पीछे ४५ भाग चार रहता है। और काच मण्ड में सैकड़ा पीछे २८ भागमें १३ भाग मात्र यह चार पढता है; किन्तु सज्जीमिष्टो से जो अह्वार चार मिलता है, उसमें ३०—४० भाग चार रहता है, इसी लिए भारतके कांच में और यूरोप के कांचमें चार-परिमाण करीब २३ और १३ भाग हो जाता है।

इस देश में कांच पर रंग चढ़ाने के लिए लोहा, तांबा और सस्वल्चार (arsenic) काममें आते हैं। पछ्चावमें काच बनानेके कारखाने हैं। वहां जिस वालू से कांच बनता है, वह स्वभावतः कांच सरीखी चिकनी और चार विभिन्न होती है। उस देश में इस वालू को रेश कहते हैं। यह जिस जमीन में रहती है, वह जमीन खेती के काम में नहीं आती। बहुत जगह यह हवासे अपने प्राप लस कर कांच सरीखी हो जाती है। इस जमीन हुई वालूका रंग विनायती यिथियों की तरह कुछ नीलापन की लिए हुए रहता है। इससे बहुत उत्तम सपेटे वर्ण का कांच बनता है।

फौरोजाबाद (जिला-आगरा) में भी आज कल काच के कारखाने बहुत हैं। इनमें वृद्धियां बहुत बनती हैं।

चीन में भारत की अपेक्षा काच के कारखाने अधिक समुन्नत हैं।

कांच के भिन्न भिन्न भाषाओं में नाम लिखे जाते हैं। कांच को अरबी में खिज्ज, फारसी में—मिट्टे, हिन्दी बंगला में 'कांच'। इटालीमें 'मेट्रो, टाटिनमें—मेट्रास, रुसियामें—'टिब्लो', स्पेनमें—'मिट्रो', तामिस में 'कच्चानि', तैन्ड्रमें 'आद्दासु' और उर्दूमें 'शीगा' कहते हैं।

रसायन-तत्त्वके मतानुसार कांचमें निम्नलिखित चीजें रहती हैं—

वालुकिन (Silica), उद्भिज्जचार (Potash = Pearl ash और wood ash), सोडा (Soda, Sulphate of soda, carbonate of soda) बैराइटा (Baryta) स्ट्रॉन्सिया (Strontia), चूना (Lime) और फिटकिरी (Alumina)।

अस्त्रिज्जचार (bone-ash) से एक प्रकारका कांच बनता है; जिसे अंग्रेज लोग बोन ग्लास (boneglass) कहते हैं।

कांच का आपेक्षिक वजन करीब २.७३२ है। जर्मनीके बने हुए जंगलोंमें लगाने के कांचोंमें चिकनी वालू १०० भाग, उद्भिज्ज चार ५० भाग, खडियामिट्टी २५ या ३० भाग, और शोरा २ भाग रहता है।

फरासीयोंके (परकोलाके दर्पणके) कांचका आपेक्षिक वजन २.४८८ है। इसका रंग कुछ नीलापन को लिए हुए होता है। मिनसीके दर्पणका कांच कुछ पीले रंग का होता है।

बोहिमिया का काच स्वच्छतामें सबसे अच्छा होता है। इसका आपेक्षिक वजन २.३८६ है।

विनायती "क्राउन" कांच बोहिमियाके कांचकी तुलना करता है। इसका आपेक्षिक वजन २.४८७ है स्पटिक कांच (crystal glass) का आपेक्षिक वजन २.८ से ३.२५ तक होता है। इसमें सीसेका कुछ अग्र रहता है। इसका विशेष बंदे वर्ण नहीं। इसमें १०० भाग वालू, ३० या ४० भाग उद्भिज्जचार, ६० या ७० भाग मिनियाम, ४ भाग सुहागा, ३ भाग शोरा, १५ भाग सस्वल् चारान्द्र इत्यादि है। लण्डनके छटेल नामसे वैज्ञानिक यंत्रादि बनते हैं।

टोबास कांच (Flint glass) सबसे परिशुद्ध चीजों से बनता है। इसमें १०० भाग वालू, ५० भाग उद्भिज्ज चार, १०० भाग मिनियाम और बाकी स्पटिक की भांति की कोई वस्तु रहती है। चुनिया-काच (Ruby glass) एक प्रकार स्वच्छत स्वर्ण प्रभासय कांच है। यह परिमाण करके बनाया जाता है और बनते-समय इसके "मण्ड" में स्वर्णद्रावक मिला दिया जाता है। यह कांच जब बनता है, तब इसमें कोई भी रंग नहीं रहता। बाद में फारिनहीटके

काचसम्भव (सं० स्त्री०) काचः सम्भवः उत्पत्तिस्थानमस्य, बहुव्री०। काचखवण, कालागमक।

काचसौवर्चल (सं० स्त्री०) काचस्थानिकं सौवर्चलम्, मध्यपदनोपी कर्मधा०। काचनवण, काष्ठानमक।

काचखाला (सं० स्त्री०) काचस्य स्थालीय, उपमितसमा०।

१ पाटलावृक्ष, पाडरीका पेड। इसका संस्कृत पर्याय पाटलि, पाटला, अमीवा, मधुदूती, फलेरुहा, छण्ड-वृक्षा, कुवेराची, कानस्थाली और ताम्रपुष्पी है। भावप्रकाशके मतसे यह कपाय एवं तिक्तारस, ईपदुष्ण-वीर्य और वायु, पित्त, श्लेष्मा, परुचि, श्वास, शोथ, रक्तवमि, हिक्का तथा ढ्यन्ना नाशक होती है। इसका पुष्प कपाय, मधुररस, शीतवीर्य, हृदयघ्राही, कण्ठ-शोधक और कफ, रक्तदोष, पित्त तथा अतिसारघ्न है। फल हिक्का और रक्तपित्तको दूर करता है। २ काचपात्र।

काचा, (सं० स्त्री०) १ काच-मणि, विह्वीरी पत्थर। २ अश्वके दन्तकी शुभ्र रेखा, घोड़ेके दांतकी सफेद लकीर। यह पन्द्रहसे सत्रह वर्षकी अवस्था तक घोड़ेके दांतोंमें सरसोंकी तरह पड़ जाती है।

काचाच, (सं० पु०) काच इव अक्षि यस्य, बहुव्री०। १ हृहृहक, बड़ा बगला। २ पद्मकन्द, कमलकी जड। काचाह्वा, (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी। काचिच, (सं० पु०) कचते दीप्यते, बाहुलकात् इन्; काचिं-कान्तिं हन्ति गच्छति, काचि-इन्-ञ-प्रपोदरा-दित्वात् ह्रस्व घः। १ काश्चन, सोना। २ मूषिक, चूहा। ३ शिम्बी-धान्यविशेष, एक घान। काचिचिक (सं० पु०) काकचिच्चा, घुंघची। काचित्—(सं० अथ०) कोई भी अनिर्दिष्ट-स्त्री। काचित (सं० स्त्री०) कच्यते वच्यते अशौ, कच-णिव-क्त। शिक्कारोपित, शिकहरमें रखा हुआ। काचिम, (सं० पु०) कच-णिव-इमन्। देवकुशोद्भव वृक्ष, पाक पेड। काचिलिन्दि, काचिचि देवी। काचुया—बङ्गालके खुलना जिलेका एक गांव। यह भैरव और मधुमती नदीके सङ्गम स्थानपर वाघेरहाट नामके पास पूर्व अवस्थित है। यहां पुलिसका थाना

और दहावाजार मौजूद है। १७२२ ई०की हेसकेल सांघेने यह बाजार लगाया था। ग्रामके मध्य एक नाला निकला, जिससे यह दो भागमें बंट गया है। खाने खानेके लिए पुल बंधा है। यहां दूधू (सुरदा) बहुत होती है।

काचूक (सं० पु०) काच बाहुलकात् एकञ्। १ कुफुट, सुरगा। २ चक्रवाक, चक्रवा।

काच्छ (सं० त्रि०) कच्छस्थानीय, नदीके किनारेका।

काच्छप (सं० त्रि०) कच्छपसम्बन्धीय, कच्छुयेका।

काच्छिम (सं० त्रि०) परिष्कार, साफ।

काछ (हिं० पु०) १ ऊरुका उपरि भाग, छांवका ऊपरो हिस्सा। २ काछा, सांग। ३ रूपका भराव।

काछना (हिं० क्रि०) १ खोंसना, नगामा। २ अंगार करना, बनाना।

काछनी, (हिं० स्त्री०) एक प्रकार की घोंती। यह कस और ऊपर चटा कर पहनी जाती है। २ परिधेय वस्त्र-विशेष, जांघियेके ऊपर पहना जानेवाला कपडा। यह छांवरेकी तरह रहती और चुन्चट पड़ती है। रामखीना और कृष्ण खीलामें पुरुषमात्र प्रायः काछनी पहनते, हैं।

कांछा (हिं० पु०) सांग, उठी घोंती।

काछी—युक्त प्रान्तकी एक छपक जाति। यह लोग प्रायः खेत जोतते—बोते और भाजा तरकारी बाजारमें बेचते हैं। युक्त प्रान्तके काछी ७ अेषियोंमें विभक्त हैं—कनौजिया, हरदिया, सिंगौरिया, जौनपुरिया, मगहिया, जरेठा और कङ्गाह। इन ७ अेषियोंमें परस्पर आदान-प्रदान और पान भोजनादि प्रचलित नहीं। सातो अेषियोंमें कनौजिये सर्वापेक्षा सम्मानार्ह और कङ्गाह सबसे छोटे समझे जाते हैं। किन्तु कङ्गाह कहते कि बड़ी सर्वापेक्षा सम्मानार्ह और कनौजिये सबसे छोटे होते हैं। कनौजसे काशी तक कनौजिये, पूर्व अक्षयमें हरदिये, अक्षयके दक्षिण-पश्चिमांशमें सिंगौरिये, बनोघेमें जौनपुरिये, मगहिये और जरेठे विहारमें तथा कङ्गाह ब्रज एवं जयपुरादि स्थानोंमें मिलते हैं। इन सात अेषियोंको छोड़ काछियोंमें दूसरी भी ३ अेषी चसती हैं,—धाकल,

सुपरीन और सचन। यह विहारमें पचिसांय देव पड़ते हैं।

कश्चित्पुरके कश्चियेमें पूर्वीक ७ वा १० नंवीं नदीं जातीं। यह बहाइ, सकोरिया इरदिवा और पम्पर—चार नोबिओमें बंटे हैं।

भासीके काको पपनीको कठमाइ बताते हैं। यह कठमाइ राजपूतोंके लपले और लनेके पूर्वपुष्य नरवर प्रदेशके लस पचसमें पड़ते हैं।

काको जातिको नोबोके नाम अनुभारक करनेमें समझ पड़ता—यह पपनी बाधमूमिके पनुपार भिन्न भिन्न नोबोमें बंटे हैं। कनोअवा—कयोअ वा कान्वा-कुअ, इरदिवा—इरदिवागक, सि योरिवा—सि गोर (इलाहाबादके २३ मील उत्तर मज्जाके पश्चिमपूर पर पचकित है। यह रामायणके निवादारण्य की "मज्जाके सुरो" है), बीनपुरिया—बीनपुर, मगधिया मगध, कठमाइ—कक और सुखसेन सङ्घिया (रामायणके "साहाय्य"। काको नदीके तीर सेनपुरी और पल्लाबादके बीच पाक भी इसका मन्माभिय विद्यामान है) से निकला है।

पनीक लकोमें इज्जें कोरी और सुराई भी कहते हैं। यह कश्चियेमें पति पट्टे होत और पति परिष्कार परिष्कार रूपसे लक्ष्मीतम मग्गादि लस कत्याहन कर सकेते हैं।

चागरा पचसमें कठमाइ काश्चियेको जो पचया पचिक है। हाजिपाममें यह जाति लपेह है। यह कुसो जातिको सद्य पचयोमें गण्य है। कन्वई प्रदेशमें यह पचसूख और तरकारो बचत तो हैं किन्तु साधारण खोर्गीके स्थि नहों। देमसेवाके स्थि यह मजे पर खोबीको बचते पिरते हैं। हाजि पाममें इनके बीच सेबल मात्र २ नोबिओका भद है—बदेका और नरवरी।

राजपूतानिके कोलपुर प्रदेशमें जो काको जाति यथैट दीप पड़तो है।

काव (हिं० पु०) १ कार्य, काम। २ व्यवसाय, उद्योग। ३ प्रयोग, मतलब। ४ विवाह, शादी। ५ चिद्रक्षिय, अटन लगाने का हिंद।

कावर (हिं० पु०) कवच, पांखमें लयनेवाली दोबिके हुयेको कालिका। इसको चरके या चरके पर पार सेते हैं।

कावर—सुसलमानोंकी एक जाति। पारख का वर्णमान राजवंश इसी जातिका है। जिस समय सुसलमने बंगोअ प्रथम सम्राट्, याइ रफाइनने गिया मतको पारखके राजकीय मतकर्म खेलाया उस समय ७ तुर्की जातियां उनको पठपोयक रीं। कावर लखें सात जातियोंमें एक हैं। जिसी समय प्राचीन हिरेकीनिया (वर्षमान मसन्दरान) राजमें कावरी ने महा प्रतिष्ठा पावो बो। ११०० ई०से पहले इस जातिकी बात लुन नहों पड़तो। लल समयके एक कश्चिखित पन्नेमें "पिरिको कावर" नामक किसी जातिका उल्लेख है। जिससे पहले किसी भी साहित्य में "कावर" जातिका नाम नहों पाया। पल्लाबाद और मसन्दरान प्रदेशमें यह पचिक संख्यक रहते हैं। राजपूतोंकी भांति यह किरल सुख्यवसावो होत हैं। इसी जातिके सच्यत पागा सुख्यव का १८८३ ई०को प्रथम सम्राट हुये और पल्लाबादके निकट रहे। (यह एक सामान्य सेनिकके पुत्र थे और जिसी समय नादिर शाहकी समाप्ति निहाली गये थे) नादिरके एक मतोअिने इन्हें बाक्यकालमें खोजा बना डाला था। यह कोमी और पराक्रम भिन्न थे। इनके पीके इनके आनुष्यत फरीश पसी—(१८८६ ई०) सम्राट् बने। इन्होंने समयमें इस और पारखका सुच हुवा। करनिल मेकपिनरके मतसे तेमूर बादशाह ८०१ हिजरकी कावर बर्जां से लये थे। इनमें कोकरोबास और पालोनाशाय दो नोबो और मजेक नोबोमें बंग भेद है। जियाओयसु नामक कावर जातीय एक बंग इसी परमियाके गाबी प्रदेशमें जा कर रहा है। पचदानल बंगोअ १८ तमास शाहके समय यह भावं प्रदेश पचुये थे। किन्तु कुकारियाले का साहयके पचीन कलवाक बंगोअमें लखें निहाला और पचयिह पनेजोंको समूल विनष्ट कर डाला। कावरी (हिं० खो०) एक भाय। इसकी पांखके बिगारे काला काला चेत रहता है।

काजल (सं० ली०) कुत्मितं जलम्, कीः काटेयः ।

कुक्षित जल, छराव पानी ।

काजन (हि०) कजल देखी ।

काजलवास—एक सुसलमान जाति । यह शिया सम्प्रदाय भुक्त है । ईरानका तबरीज, गीराज, मगोद और किरमान नगर इनकी जन्मभूमि है । यह प्रखरपालन, मेघपालन और कृषिकार्यसे अपनी कौशिका चलाते हैं । काजनवास विलक्षण साहसी, दुर्दान्त और युद्धप्रिय होते हैं । यह पारस्यशेर नादिर शाहकी विपुल वाहिनीमें भरती किये गये थे । नादिर शाहका बध होने पर इन्होंने अहमद शाहसे मिल काबुल जीता । अहमद शाह जब मर गये, तब यह काबुलके निकटवर्ती चान्दोल ग्राममें रहने लगे । इनकी संख्या कोशी डेड लाख है । यह सुन्नीसम्प्रदाय वाले दुराभी सरदारोंके घोर शत्रु हैं । अफगान सरदार काजलवासोंसे डरा करते हैं ।

काजाक (कज़ाक) मध्य एशियाकी घूमनेवाली एक जाति । युरोपमें इन्हें कोसाक कहते हैं । यह मध्य एशियाके उत्तर विभागस्य मरु प्रदेशमें प्रधानतः रहते हैं । तुर्कीकी तरह इनमें मानाविध अेषी, शाखा और वंशविभाग हैं । युरोपमें यह बृहत्, मध्य और छुट्टदलमें विभक्त हैं । किन्तु ऐसा विभाग मध्य एशियामें नहीं होता । भ्रमणप्रियता और युद्धप्रियताके लिये अति दूरवासी भिन्न भिन्न अेषियोंके लोग या मिलते हैं । एम्बा नदी, आराल झर और बलकाश तथा आलातौ झरके तीर यह पश्चिम संरत्यक देखे पड़ते हैं । किन्तु इतने दूरवर्ती होते भी सर्वदा सकल प्रदेशोंमें घूमते रहनेसे इनमें भाषाका विविध पार्श्वक्य नहीं पडता ।

ट्रान्साक्सियाना प्रदेशमें तोकेल या तिथेकेल सुसतान नामक किसी व्यक्तिके अधीन इन्होंने प्रथम अभ्युत्थान किया था । १५३४ ई०को (८४१ हिजरी) जकशरतेग नदीके तीर यह बहुत दुर्दान्त बन गये । सुसतान तोकेलने मास्को नगरकी रूस-सम्घाटके डोवके निकट अनेक बार दूत भेजा था ।

यह युद्धप्रिय लोग विश्वास रखते कि “यद तदाई”

(द्वैयशक्ति सम्पन्न प्रस्तरखण्ड) पत्यर रोग कोड़ाता, युद्धमें जय दिनाता और मृत भगता है ।

१६ वें शताब्दीको तातार सेनादलके मध्य सम्प्रदाय मार्गमें रह कज़ाक ही लडते थे । रूस उस समय छुट्ट छुट्ट राज्योंमें विभक्त था । इन्होंने उन्नी समय सुविधा देख प्रायः समस्त रूस-राज्यकी विषयमें डर डाला और अष्टाकानतक अधिकार किया । अन्तकी प्रचण्ड और इमान (Ivan the terrible) ने इन्हें रूसी-सौमसे बाहर भगा दिया । यह पारस्य शेर समर-कन्द, बोग्रारा और खोवाकी चले प्राये । यहाँ भी यह दुर्दमनीय हो गये । फिर रूसका अधिकार यहाँतक प्रा जानेसे इन्होंने नाम मात्र रूसकी अधीनता स्वीकार की । काजन प्रदेशमें लघुाधिक कज़ाक रहते हैं ।

इनमें भिन्न अेषीकी भिन्न मण्डिद, भिन्न कवर और डेरा डालनेकी जगह रहते हैं । इनमें अनेक घनी वणिक और अनेक सम्मानार्ह विद्वान् भी हैं । रूसका कोई कानून यह नहीं मानते । भाषा और आचार व्यवहारमें यह बृहत् जातिसे विविध पृथक् नहीं होते । इनकी स्त्रियाँ और शिशुओंके गात्रका वर्ण युरोपीयोंसे भिन्नता, केवल सूर्यके उत्तापसे अपेक्षाकृत काला पड़ जाता है । इनका मस्तक दीर्घ, पगड़ी कोषाकार, चक्षु बादाम जंसे तथा पौञ्जव्य-विशिष्ट, हनु उच्च, नाक चपटी, प्रशस्त ललाट, आठ हड्डि और मूख घोड़ी होता है । इनके मतमें कालू नयाजकोंकी स्त्रियाँ ही सुन्दरी हैं । यह शीषकालमें कल्पक नामक पगड़ी और शीतकालमें तुमक नामक टोपी पहनते हैं । इन्हें सामुद्रिक शास्त्र, फलित ज्योतिष और भूतादिके आद्यान प्रकृतिपर विश्वास है । उक्त शास्त्रोंकी बहूल आलोचना हुवा करती है ।

१८१२ से १८१६ ई० तक इनमेंसे कितने ही उपयुक्त लोगोंको लेकर रूस-सम्घाटने ८० सेनादल प्रस्तुत किये थे ।

युरोपीय कज़ाक देखनेमें सुपुरुष, आतिथेय और सम्मानार्ह हैं । विवाहित स्त्रियाँ मस्तकपर एक रात्रि कालोचित रेशमी टोपी लगातीं और अपने गात्रमें एक रमाश खीस लेती हैं ।

आबी—सुसलमान समाजका विचारवृत्ति। जहाँ सुसलमानोंका राजत्व रहता, वहाँ काबीसमाज नीति, धर्मनीति, फौजदारी और दीवानो विधिसे अनुसार विचार करता है। भारतका राज्य सुसलमान राजाओंके अधीन रहते समय आबी लोग विचारक परपर समिपिष्ठ थे। हिन्दुधाममें सो धर्मिक आबी विचार करते रहे। लोगोंके व्यवसायवार जन्ममें पक्षपात और भेदभावारिताका कुछ प्रायश्चय। प्रायश्चय अंगरेजोविरुद्ध भारतधाम्नायके मध्य आबी सुसलमानोंके विवाह कार्ममें उपस्थित हो विवाहके बन्धनको हट्ट किया करते हैं। बिन्दु तुर्कियात, अरब और ईरानमें यह प्रायश्चय भी विचारक है। जहाँ देगमेंदेखे इनको मर्यादाका कुछ तारतम्य रहता है। तुर्कियातमें विचारकको पूर्ण समता रहती भी यह सुप्तोके अधीन होती है। तुर्कियातमें खलीफा आबू अल रसीदके समयमें आबियोंके शासकी विचारका मार पड़ित हुआ है। सर्वप्रथम आबोका नाम अबू युसूफ था। सब देगोंके अधीन अरब राज्यके आबियोंकी समता अस्ति है। यदि प्रजा किसी आरक देगमें अधिपति पर अधियोग लगती, तो प्रथम पराक्रान्त मस्लतके अधिपतिको उपस्थिति भी आबोके समय अधिवार्य पाती है। ईरानमें प्रत्येक नगरमें आबो रहते हैं। फिर प्रत्येक शिक इक-इसलामके अधीन होता है।

आबी अमीर या—एक सुसलमान विद्वानक। यह अमराव भी है। ११३१ ई० को आगरा नगरमें यमुनाके तीरे इन्होंने एक सुन्दर इमाम बनवाया था। उस इमामका पूर्ण शीर्षक यह देख नहीं पड़ता, अधिर्वाय विमङ्ग गया है। जो बचा है, उसे पाठ से "अबीमका वाय" कहते हैं।

आबी अहमद—एक विद्वान पतिव्रतिका। इनका पूरा नाम आबी अहमद बिन मुहम्मद अलमुत्तौरी था। इन्होंने मुहम्मद-अहमद-बारा नामक एक इतिहास लिखा। इस ग्रन्थमें सुसलमान-राज्यके ज्ञापनमें ८०१ हिजरी तक शीघ्र घटनाओंकी लिपि है। आबी अहमद पदब्रह्म (पैदल) ईरानमें

महा दर्शन करने गये थे। वहाँ से लौटने पर बिन्दु प्रदेशमें टेवाल नामक याममें इनको मृत्यु हुई। (१३६० ई०)

आजू (हि० पु०) इष्यविधिप एक पेड़। इसे बङ्गलामें चिककी बादाम, बम्बईमें काजूकलिया, तामिळमें सुन्दरी, तङ्गुमें बिदोमिदी, कर्नाटमें किम्पु मन्थयमें परलक्षिमात्र कुछ और अङ्गदेशमें यीनोच कहते हैं। (Anacardium occidentale)

यह पुष्प ३०से ३० फीटतक लम्बा होता है। आजू दक्षिण अमेरिकाके भारतवर्षमें पाया है। प्रायश्चय यह भारत, अङ्गलाम, टनसरीम तथा पान्दामान होपुष्पके समुद्रतटके वन और दक्षिण भारतमें बहुत होता है। 'आजू' दक्षिण अमेरिकाके 'पन्नात्राल' मन्थका अपभ्रंश है।

इसको आकरी पोशा या आल गौद निवृत्तता, को पानोमें अम सुकता है। बीड़े इसमें मायते हैं। आलको मोहनसे एक प्रकारका रस अर्जनी लगता है। इससे चिक आलनेको पको रीयगाई बनती है। देगो आरौपर काजूका रस लया कर आतको चीज जोड़ते हैं।

आजू रंजनेके काममें लग सकता है। पान्दामान वायो आजूके बीजको आकका तेल मङ्गली पकड़नेके ताल रंगनेमें व्यवहार करते हैं। मोरामें इसे 'बीज' कहते हैं। वहाँ यह नानों और आबोमें रसको मालि समता है। आजूका तेल हा प्रसार निवृत्तता है—गुठकोके जिसके और मीयोके। मीयोका तेल कुछ पोशा, मुलायम, ताकतवर और बादामके तेलकी तरह होता है। जैतूनका तेल इसकी बराबरी कर नहीं सकता। बिन्दु भारतवर्षमें मीयो बहुत जामो जाती है। गुठकोके जिसकेवा तेल काका, कड़वा और पखोले आकनीका है। अङ्गलीमें इसे पुपङ्ग देगमें बीजक नहीं लगती।

ओषधमें आजूका तेल जोड़, नाएर, गुमड़ी और आसिपर लगता है। मीयो आसिसे बल सुकता और अङ्गली पोड़ाका प्रकीप दबता है। गुठकोके जिसकेका तेल अमानिसे घेरका घटना मन्थ हो जाता है।

मूनकर खानेसे इसकी मींगी बहुत अच्छी लगती है।

काजूकी लकड़ी लान, कुछ कुछ कडी और दानेदार होती है। ब्रह्मदेशवासी इसे सन्दूक तथा नाव बनानेमें लगाते हैं।

काजूत (सं० पु०) लुपविशेष, एक भाड़। महाराष्ट्र देशमें इसे 'जावी' कहते हैं। यह मधुर, उष्ण, लघु, धातुवृद्धिकर और वात, कफ, गुल्मीदर, ज्वर, क्षमि, व्रण, अग्निमान्द्य, कुष्ठ, श्वेतकुष्ठ, संघ्रघ्णी और प्रशोनाशक होता है।

काजूभोज (हिं० वि०) देखाऊ, कार्यमें न आनेवाला।

काञ्चन (सं० स्त्री०) काचलवण, सोहर नोन।

काञ्चन (सं० पु० स्त्री०) काञ्चते दीप्यते, कचि-ल्यु।

१ स्वर्ण, सोना। २ पुत्रागपुष्य, सुलतानी चम्या।

३ पद्मकेशर, कंवलकी धस। ४ धन, दौलत।

५ नागकेशरका पुष्य। ६ दीप्ति, चमक। ७ वन्धन, बंधाव। ८ उद्वस्वर, गूसर। ९ धुसूर, धतूरा।

१० सम्पत्ति, जायदाद। ११ पुरुरवा वंशीय भीमके एक पुत्र।

“भीमन् विजयस्वाप काञ्चनो होमकसया।” (भागवत ४।१।२)

१२ पञ्चम बुद्ध। १३ नारायणके एक पुत्र।

१४ धनञ्जय-विजय नामक ग्रन्थके प्रणेता। १५ वृच-विशेष, कचनारका पेड़। इसका पुष्य पीत, रक्त और श्वेत भेदसे त्रिविध है। रक्त पुष्यका संस्कृत पर्याय—

रक्तपुष्य, काविदार, युग्मपत्र एवं कुण्डल और श्वेतका पर्याय—

काञ्चनाल, कर्बुदार तथा पाकारि है। भाव-प्रकाशके मतसे यह शीतल, ग्राही, कषाय, श्लेष्मपित्त, क्षमि, कुष्ठ, गुदभ्रंश तथा गण्डमाला रोगनाशक होता है। १६ हरिताल।

काञ्चनक (सं० स्त्री०) काञ्चन सजायां कन्।

१ हरिताल। २ धान्यविशेष, एक धान। ३ काञ्चन वृक्ष, कचनार।

काञ्चनकदली (सं० स्त्री०) काञ्चनवर्णा कदली, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। १ चम्या केला। २ कदली-विशेष, एक केला।

काञ्चनकन्दर (सं० पु०) काञ्चनस्य कन्दरः, क्ष-तत्।

स्वर्णकी खनि, सोनेकी खान।

काञ्चनकारिणी (सं० स्त्री०) काञ्चनं बहुमूल्येन वन्धनं करोति, काञ्चन-क-णिनि-ङोप्। गतमूल्यो, सतावर।

काञ्चनचौरी (सं० स्त्री०) काञ्चनमिव चौरमस्याः, बहुव्री०। १ स्वर्णचौरिणी लुप, एक प्रकारकी खिरनी।

२ चौरिणी, खिरनी। ३ यवतिक्ता, एक बूटी। इसका दुग्ध पीत और पत्र हृद्यत् होता है। ४ कद्दुठ, किसी किसकी गेरू।

काञ्चनगिरि (सं० पु०) काञ्चनमयो गिरिः। १ सुमेरु पर्वत। २ स्वर्णनिर्मित कृत्रिम पर्वत, सोनेका बनाया हुआ पहाड़। यह दान करनेके लिये बनता है।

काञ्चनगुडिका (सं० स्त्री०) औषध विशेष, एक दवा।

त्रिफला प्रत्येक एक एक तोलेके हिसाबसे ३ तोला, त्रिकटु प्रत्येक दो दो तोलेके हिसाबसे ६ तोला, रक्तकाञ्चन (खाल कचनार) की छाल १२ तोला और सबके बराबर गुग्गुलुआल गोली बनानेसे यह औषध प्रसुत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला और गलगण्ड रोग दब जाता है। (रसरत्नाकर)

काञ्चनगैरिक (सं० स्त्री०) सुवर्णगैरिक धातु, सोना मिट्टी।

काञ्चनचक्र (सं० स्त्री०) बौद्धशास्त्रके मतसे पृथिवीका मध्यभाग (दिग्वातान १८।८।८)

काञ्चनचय (सं० स्त्री०) काञ्चनस्य चयः राशिः, क्ष-तत्। स्वर्णराशि, सोनेका ढेर।

काञ्चनजङ्घा—पूर्व हिमालयका एक अत्यन्त शृङ्ग। यह सिक्किम और नेपालकी प्रान्तीय सीमामें अक्षां २७° ४२' ५' और देशां ८८° ११' २६" पू० पर अवस्थित है। धवलगिरिका छोड़ इतना बड़ा शृङ्ग जगत्में दूसरा नहीं। यह २८१७६ फीट ऊँचा है। यह शृङ्ग गोखामीस्थानसे ६५ कोस पूर्व रहते मानो नेपालकी पूर्व सीमाको बचाता है। यह निरवच्छिन्न तुपाराहत रहता है। सूर्योदयकाल दूरसे ठीक काञ्चनकी भांति देख पड़ते यह शृङ्ग 'काञ्चनजङ्घा', 'काञ्चनजिङ्ग', 'काञ्चनशृङ्ग' और किसी किसी संस्कृत पुस्तकमें 'काञ्चनाद्रि' नामसे अभिहित है।

काञ्चनपत्रिका (सं० स्त्री०) काञ्चनस्य पत्रिका, क्ष-तत्। काञ्चनपत्नी—बङ्गाल प्रान्तके चौबीस परगनेका एक

मण्डपाम (बृजवा)। यह कलकत्तेसे १४ कोस उत्तर पश्चिम है। यहाँ पूर्ववत् ऐतिहासिक एक पञ्चाश है। पहले यह धाममें बहुसंख्यक पण्डित और विद्वान् विद्विक्ताक रहते थे। यहाँ लयाका श्रीमन्दिर मोगलमन्दिर तथा शैलमन्दिर बना और निम्नदेशकी निर्वाहकी कल्याणटी नामक गांव बना है। चेतन्य चन्द्रोदय नाट्यके रचयिता पुरोगीकामीकी यह जन्मभूमि है। यहाँ रघुयात्रा बड़े समारोहसे होती थी।

वाङ्मयपुर (स० ज्यो०) कश्मिर राज्यका एक नगर।
(लेखनिका १९११)

वाङ्मयपुर (स० ज्यो०) वाङ्मयमिव वीरतं मुख्य वस्त्र, वाङ्मयपुर-कप। पाङ्गु-कप, तगर। वाङ्मय-रत्न। वाङ्मयपुरिका (स० ज्यो०) पीतजाती, पीसां भूमि।

वाङ्मयपुरी (स० ज्यो०) वाङ्मयमिव मुख्य वस्त्र, ज्यो०। गणिकारिका, परलो।

वाङ्मयम (स० पु०) १ ऐश्वर्यमय एक राजा। (सि०) २ अर्चनको भाति प्रभावमिष्ट, सोमिकी तरह पमकनेवाला।

वाङ्मयमू (स० ज्यो०) वाङ्मयमकी मू, मध्यपरलोपां कर्मका०। १ अर्चनमय ध्यान, सोमिकी समझ। २ अर्चनेषु सोमिका हारावा।

वाङ्मयमूपा (स० ज्यो०) अर्चनेरिष, सोनामाटी।

वाङ्मयमय (स० सि०) वाङ्मयम विकारः, वाङ्मय मयः। मयः केटीमनकनकावाचनकी। स० १९१०। अर्चनमिष्ट, सोमिका बना हुआ।

वाङ्मयमाधिक (स० पु०) अर्चनमाधिक सोनामाटी।

वाङ्मयभाषा (स० ज्यो०) १ पमोव राजाके पुत्र हुआकरी पञ्चो। २ अर्चनयो, सोमिका सङ्घ। ३ वाङ्मयभाषी योषी, अचनारकी कतार।

वाङ्मयमोहनरस (स० पु०) रसविशेष, एक दवा। रसविन्दू, ताक्षमय एवं अर्चनमय समभाग अर्च (मदार) तथा बड़ी (गुहर) के दुधमें दिन भर पीनेसे यह रस प्रसुत होता है। मोठी एक रसीकी बनती है। वाङ्मयमोहन रसके सेवनसे गुल्म रोग धारोव होता है। (कल्याण)

वाङ्मयरस (स० ज्यो०) हरितालविशेष, किसी किसका हरताक। वाङ्मय-रसी।

वाङ्मयम (स० पु०) वाङ्मयमयो वयः, मध्यपरलोपो कर्मका०। १ अर्चनमिष्ट प्राचीर, सोमिकी दोवार। २ सुमिष्ट पञ्चकका साहस्य।

वाङ्मयमर्मा (स० पु०) एक प्राचीन राजा।
रिचरणां रसी।

वाङ्मयमोठी (स० पु०) अर्चन राजाके पुत्र।
(मत्तारण, पञ्च २-११)

वाङ्मयमसिन्धि (स० पु०) वाङ्मयमवत् दुग्धेय सन्धिः। सुदृढ सन्धि मज्जुत सुबद्ध।

वाङ्मयमसिन्धि (स० सि०) अर्चनवत् सुन्दर, सोमिकी तरह पमकीका।

वाङ्मयमसूय (स० पु०) वाङ्मय नामक विद्वत्तयाय साधित सूय, एक दवा। बह सरसोके विलीन कतार कर बनाया जाता है।

वाङ्मयना (स० ज्यो०) महीराजकी राजधानी। इसका उपर नाम अर्चनमूमि है।

वाङ्मयना (स० पु०) एक ज्ञानव। (रत्न १४ ४) वाङ्मयना (स० ज्यो०) धरतली गरी।

वाङ्मयना (स० सि०) वाङ्मयवत् सुन्दर अर्चन मय, बङ्गो०। १ अर्चनवत् सुन्दर पङ्किमिष्ट, सोमिकी तरह पमकीके मिश्रणाका। (ज्यो०) २ अर्चनमिष्ट पयव सोमिका बना हुआ पदन।

वाङ्मयनामिधानसिन्धि (स० पु०) अर्चनसिन्धि, कीर्ति तर्क बराबर भाती पर सोमियाली सुबद्ध।

वाङ्मयनामरस (स० पु०) रसविशेष, एक दवा। रस विन्दू, सुशामय कोष अर्चन, प्रवाल हरीतकी, रोव, धमनामि और मनमिका दो दो तोले कलमें चटनेसे यह रस प्रसुत होता है। इसे विन्दुनाम पशुपानके पशुपार धवन करनेसे सर्वोपद्रवसुख नागरोग दन जाति है। पय, बास और श्लेष्मिल पर यह बड़ा गुब देखाता है। (रत्नकल्याण) हृदय अर्चनमय रस बनानेका विधि यह है—अर्चनमय रसविन्दू, सुशामय, कोषमय, धमनामय, प्रवालमय वेदान्तमय, रोव, ताक्ष, बह, कपूरी, लवङ्ग, जाति

कीप भीर एलवालुक दो टो तोले छतकुमारी तथा केशराजके रस एवं अजाक्षीरमें तीन तीन दिन घोटते हैं। मात्रा चार रत्ती है। यह रस भी अनुपानके अनुसार सर्वरोग दूर करता है।

काञ्चनार (सं० पु०) काञ्चनं तद्वर्णं ऋच्छति पुष्यः काञ्चन-ऋ-पण् । रक्तकाञ्चनवृक्ष, ज्ञान कचनार । यह कषाय, संघ्राही, त्रणरोपण, दीपने और कफ, वात तथा सूत्रकृच्छ नाशक होता है। (राज निघण्टु)
२ श्वेतकाञ्चन वृक्ष, सफेद कचनार ।

काचनारक (सं० पु०) कांचनार स्मार्थे कन् ।

काचनार देखो ।

काञ्चमारगुगुलु (सं० पु०) भीषध विशेष, एक टषा । कचनारकी छालका चूर्ण ५ पल, शृण्ठी, पीपल एवं मरिचका चूर्ण एक-एक पल, हरोतकी, आमलकी तथा विभीतकका चूर्ण चार-चार तोला, वरुणकी छालका चूर्ण २ तोला, गुड़त्वक्, पत्रक (तेजपात) एवं एलाका चूर्ण एक एक तोला और सब चूर्णके बराबर गुगुलु डाल एकत्र मर्दन करनेसे यह भीषध प्रसृत होता है। इसके सेवनसे गण्डमाला, गलरगुड और पर्वुदादि रोग नष्ट होता है। मात्रा आध तोले तक है। (भावप्रकाश)

काञ्चमाल (सं० पु०) काञ्चनं काचनवर्णं अस्ति, काञ्चन-अन्-अण् । १ श्वेतकाचन वृक्ष, सफेद कचनारका पेड़ । २ आरगवध वृक्ष, अमिलतास ।

कांचनाह्वय (सं० पु०) कांचनं स्वर्णं आह्वयते स्पर्धते स्वभासा इति श्रेयः कांचन-आ-ह्वे-क । १ नागकेशर वृक्ष । २ पशुकेशर ।

कांचनिका (सं० स्त्री०) गणिकारी पुष्यवृक्ष, अरनी ।

कांचनी (सं० स्त्री०) कच्यते दीप्यते अनया, काचि-स्तुट्-टीप् । १ हरिद्रा, हलदी । २ गीरोचना । ३ स्वर्णघोरी, खिरनी । हिन्दीमें 'काचनी' नर्तकी और गायिकाकी कहते हैं ।

कांचनी—गीसामी सम्प्रदायविशेष । यह लोग नृत्य गीत द्वारा लीषिका निर्वाह करते और गैरिक वस्त्र पहनते हैं । आचार-व्यवहार साधारण गांधारियोंसे मिलता है । भावशुद्धि आनसे यह विवाह कर सकते

हैं । मरने पर इनके शवको समाधि देते या नदीके जलमें बहाते हैं ।

कांचनीय (सं० द्वि०) स्वर्णजात, सोनेका बना हुआ ।
कांचनीया (सं० स्त्री०) १ हरिताल । २ गीरोचना ।
काचि (सं० स्त्री०) काचि-इन् । १ रसना, करधनी ।
२ दक्षिणात्यके द्राविड राज्यकी राजधानी । कांचोपुरदेखो ।
कांचिक (सं० स्त्री०) कांचि संज्ञायां कन् । कांचिक, काजी ।

कांची (सं० स्त्री०) कांचि-डीप् । १ रसना, करधनी । इसका संस्कृत पर्याय—मेखला, सप्तकी, रसना, सारसन, कांचि, कक्षा, कक्ष्या, सप्तका, सारशन, रसन और वंधन है । इन पर्यायोंमें किसी किसीकी मता-नुसार विभिन्नता रहती है । एक लडवाली यष्टिकी कांची कहते हैं । फिर आठ लडवाली मेखला, सोलह लडवाली रसना और पच्चीस लडवाली करधनी कहाप कहलाते हैं । २ द्राविड राज्यकी राजधानी । ३ गुप्ता, घंघची, ।

कांचीनगर (सं० स्त्री०) कांचोपुर देखो ।

कांचीपद (सं० स्त्री०) काञ्च्याः पदं स्थानम्, इ तत् । जघनदेश, नितम्ब, करधनी वांधनी की जगह ।

कांचीपुर—मन्द्राज प्रांतस्थ चेंगलपट जिलेके कांची-पुरम् तालुकका एक प्रसिद्ध नगर । यह अक्षा० १२° ४८' ४५" उ० और देशान्तर ७८° ४५' ५०" पर अवस्थित है । भूपरिमाण ५८५८ एकर है । यहां न्यायालय, कारागार, चिकित्सालय और विद्यालय विद्यमान है ।

पुरातल—कांचीपुर अति प्राचीन नगर है । महा-भारतमें उल्लेख मिलता है,

“ पञ्चत् पश्यवान् पुष्पात् प्रथमादद्रिकां पृथक् ।

मल्लतयाद्यन्तु कांचोन् श्वराथेय पार्थवः ॥ ” (महाभारत, पादि, १०८, १४)

अनेक महात्माओंके मतसे महाभारतमें कांचो नामका उल्लेख रहते भी केवल उसी प्रमाण पर निर्भर कर इसको महाभारतका समकालीन अति प्राचीन नगर कह नहीं सकते । तामिल भाषाके “कांचीपुर स्थलपुराण”में लिखा कि प्रसिद्ध चोलराज कुञ्जीकुञ्जने कांचीपुर नगर स्थापन किया था । तत्-

पुत्र चदण्डी तोखीरके समय इसकी विधेय सञ्चि
हू। पाश्चात् पुराविद् फार्गुसनने उच्चमत समर्पनकर
दिया है,— 'यहसे यह स्थान ब मरुधि परिहृत था।
उस समय यहाँ पत्थर कुम्हार रहते थे। ई० ११^{वें}
या १२^{वें} यताब्द चदण्डी चक्रवर्तिने यह नगर पत्थर
दिया। (Fergusson's History of Indian and
Eastern Architecture.)

उक्त समय मत समीचीन नहीं समझ पड़ते।
प्रायिक यह काशीपुर धति प्राचीन नगर है। प्राचीन
शिल्पकृति धीर प्राचीन संस्कृत पुष्पक पठनेसे पना
यास उपलब्धि पाती, कि चोख राजाधीक शम्भुदससे
बहुत पहले काशीपुरमें दक्षिणापथके प्रबल परा
दात कृपतियो की राजधानी स्थापित हुई थी। पात्र
कक्ष यह जैसा बृह नगर है पूर्वकाशको बेधा न था।
उक्त समय काशीपुर एक विन्दीर्ष बनपदने विमल था।
स्वन्दपुराणसे कुमारिकाखण्डमें लिखा है—

"वज्रात् नमस्कृत काशीपुरे महीर्षेयम्।" (१० व)

महाभारतके समय काशीपुर सध्वगत कलिङ्गके
सत्रिय राजाधोके अधीन था। उस समय मो यह
स्थान द्राविड़ राष्ट्रके अन्तर्गत न हुआ था। यही बात
महाभारतमें द्राविड़ धीर काशीके कृतम्न उल्लेखसे
पशुमित होती है। फिर दक्षिणापथके पाण्डुर
राजाधोने १६ अधिकांश किया।

पाण्डुर राजाधोसे पीछे जो काशीपुर पञ्च
राजाधोके हाथ लगा। किसी समय पञ्च राजाधोने
द्राविड़ धीर दक्षिणापथका अधिकांश जीत रघो
काशीपुरमें राजधानी स्थापित की थी। बीच धीर जैन
धर्म प्रबल पड़ते मो तत्कालीन काशीपुरके पञ्चराज
हिन्दू धर्मावलम्बी रहे। कुटीय इर्ष धीर १५ यताब्दकी
शिल्पकृति उक्त विषयका साधर देतो है। उक्त शिल्प
कृति पढ़नेसे समझ पड़ता, कि उस समय धीर उक्त
ई पहले काशीपुरमें जैन धर्म मो विधेय प्रबल था।
तत्कालीन पञ्च राजाधोने वेदय ब्राह्मणोंका
अनुयायन द्वारा जो धाम दिये उन सबके स्थानोंमें
ब्राह्मणोंके पथप्रहित पूर्व जैनोके अधिकांश रहे।
सध्वगत हिन्दू राजाधोने जैनोको निदान बन ज्ञानोंमें

ब्राह्मणोंका रक्ता था। (Indian Antiquary,
VIII, 281)

बौद्धय अनुमान कुटीय १५ यताब्दकी काशीके
का काशीपुरमें रहे थे। पाण्डुर राजाधोके समय यहाँ
जैनधर्म प्रबल हो गया था जैन राजाधोने अधिकांश
बौद्ध अधिकांशको भया दिया। (Wilson's
Mackenzie Collection, p. 40-41)

शिल्पकृतिसे अनुसार विंशतिष्णु जो काशीपुरके
प्रथम पञ्चराज थे, जो कुटीय ३^{वें} यताब्दकी राजत्व
कर गये। वह केष्यव थे। पनेक लोग अनुमान
करते, कि उन्नीके समय विष्णुकाशीके नरदराजज्ञानी
पाणिमें हुये थे।

कुटीय ६^{वें} यताब्दकी पुलिकेयो (२५) ने पञ्च-
राज पञ्चराज पर आक्रमण किया। १०० यक्षमें
खोदित पुलिकेयोका शिल्पकृति पढ़नेसे समझते कि
पञ्चराज जनेसे डार काशीपुरके प्राकारमें छिप रहे थे।

"यत्कालेनकीर्तिकेनरजसुवन्धवकाशीपुरः।
मन्वन्तुःशिल्पकालेनयः पञ्चराजोऽपि ॥"

(१०० वीं शीतिल ऐतरेय शिल्पकृति)

उक्तय ७^{वें} यताब्दकी धीर परिव्राजक कुपन-
नुबाइ काशीपुर (कि पन-वि पु-ली) पाये थे।
उस समय यह द्राविड़ राष्ट्रकी राजधानी था।
विष्णुति प्राय २३ कोष रही। बीच निर्णय धीर
हिन्दू तीन दक्ष प्रबल थे। १०० बीच सङ्गराम धीर
८० देवमन्दिर रहे। काशीपुर धर्मगल कोशिसलका
अभ्युत्थान है। रघोके बीच १५ ज्ञानकी पुष्पभूमि
धर्मगले धीर नाना देवोके बीच याची यहाँ था
पहुँचते थे।

पनेक जीधोके अनुमानसे धीर-परिव्राजकके
धाममलकास यहाँ बीहराज राजत्व करते थे। हिन्दू
यह बात ठीक नहीं। कुटीय ७^{वें} यताब्दकी शिल्पकृति
पढ़नेसे समझ पड़ता कि उस समय मो काशीपुरमें
केस्यव धर्मावलम्बी पञ्च राजाधोका राजत्व था।

पूर्वतन पञ्च राजाधोके केस्यव होते मो कुटीय
८^{वें} यताब्दकी शिल्पकृतिमें काशीपुराधिप नर्तक
धर्माने पढ़नेको यह था मधेयरापापक किया है।
सध्वगत उधो समय यहाँ धर्मधर्म प्रबल हुआ था।

खुट्टीय ६म शताब्दीको चीनराज कुन्तोत्तुङ्गने कांचीपुर अधिकार किया। तत्पुत्र अदण्डी चक्रवर्तीके समय कांचीपुर तोण्डीरमण्डलको राजधानी हुवा।

खुट्टीय १०म और ११म शताब्दीके मध्य चालुक्य राजावर्नि कांचीपुर लेनेको चेष्टा की थी। विह्वलण कथि विरचित विक्रमाहधरित पुस्तक पढनेसे समझ पडता कि चालुक्यराज आहवमङ्गने (१०४०-६१६०) चीनराजधानी कांचीको आक्रमण किया। वह युद्धमें जय पाते भी चीन राजावर्तीको स्वधर्म लान सके। उनके आदेश-क्रमसे तत्पुत्र, विक्रमादित्य चालुक्य कई बार कांचीपर चढ़े।

(विह्वलणकृत विक्रमाहधरित ३६१, ६६, २२-२८)

मालूम पडता कि उसी समय कांचीका कीर्ति कीर्ति अंग पल्लव राजवर्तीके भी अधिकारमें था। कारण शिल्पलिपि और विह्वलणका ग्रन्थ पढनेसे समझ पडता कि विक्रमादित्यके पुत्र विनयादित्यसे कांचीके त्वैराज्य पल्लवकी विपुलवाहिनी आक्रान्त और पर्यटस्त हुयी।

१०७४ शककी एक शिल्पलिपिमें खोदित है कि उस समय (खुट्टीय १२म शताब्दी) काकत्वराज रुद्रदेव कांचीपुर शासन करते थे। (Ind. Anti-quary, XI. 19.)

१५म शताब्दीके मध्यकाल चल्तालके केशरीवंशीय एक राजाने कांचीपुर लूटा था। फिर १४७७ ई०को वहमानी वंशीय सुसलमानराज सुहभदने कांचीपुर जीत अपना अधिकार जमाया। इसी प्रकार यह कुछ काल यहमानियोंके शासनाधीन रहा। उसके पीछे विजयनगरके राजा नरसिंह रायने यहमानियोंके हाथसे इसे छोडाया। उन्होंने वीरवसन्त रायको कांचीपुरमें शासनकर्ताके पद पर बैठाया। नरसिंह रायके पुत्र कृष्णदेव राय १५०८ ई० को राज्याभिषिक्त हुवे थे। वह १५१५ ई०को यहां आये। उन्होंने कांचीपुरके विख्यात शतस्तम्भ और कई शिवमन्दिरका

संस्कार कराया था। १४३८ शकके खोदित अनुगासन-पत्र पढनेसे समझते कि कृष्णदेव रायने कांचीपुरके प्रसिद्ध वरदराज स्नामके मन्दिर व्ययकी ११ सो रुपये आयके विगारा, तिरुप्प, कटाह, उपधंगान और गोविन्दवदी प्रभृति अनेक ग्राम प्रदान किये।

१६४४ ई० को विजयनगर यधन-कवलित होने पर कांचीपुर गोलकुण्डायाले सुसलमान राजाके हाथ लगा। कुछ दिन पीछे यह अरकूदुरमें शामिल हुवा। १७५१ ई०को नाई काइवने फरासीसियोंके हाथने कांचीपुर अधिकार किया था। किन्तु उसी वर्ष राजा साहवको छोड देना पडा। १७५० ई०को फरासी-सियोंने यह स्थान आक्रमण कर आग लगाया थी। दूसरे वर्ष अंगरेजों सैन्य कांचीपुर छोड़ मन्द्राजमें फरासीसियों पर चढा। किन्तु फिर लौटकर फरासी-सियोंके भवगोषसे इसे चढार किया। कांचोपुरसे अदर पुल्लनर स्थानपर अंगरेजों और सुसलमानोंमें एक घोरतर युद्ध हुवा था। उसमें हीटरपनीने (१७६० ई०) जनरल वेलीके सैन्यबुद्धका कैद किया।

कांचीपुर एक प्राचीन महातीर्थ है। भारतवर्षकी जो सत्त पुण्यनगरी दर्शन करनेसे जीव बनायास सिद्धि पा सकता, उनमें इसका भी नाम मिलता है,—

“यद्यथा मयुग माया कागो काचो चरन्तिका।

पुरो शागवतो चैव सर्वता सिद्धिदायिका ॥”

तोडलतन्त्रके मतसे यही तीर्थ विम्बरूप महादेवका कटिदेय है,—

“नामिष्वे महेयानि यथाश्यापुरो स सिन्धु।

काचोपीठं कोटीदेशे श्रीशुद्ध चरुदेशके ॥”

(तीर्थतन्त्र, २म अध्याय)

केवल तीर्थ ही नहीं, काचो महापोठस्थान है। ब्रह्मनीलतन्त्रके मतसे यहा, कनककांची देवी विराजतो है,—

“काचां कनककाचोव्यारनतन्त्रे चरुरे ॥”

(तीर्थतन्त्र, २म अध्याय)

कांचीपुर नगर दो भागमें बँटा है—पूर्व कांची और पश्चिम कांची। पूर्व कांची और पश्चिम कांची के बीच कांची नदी बहती है।

* फागुसन प्रभृति पाषाण पुराविदोंके मतसे खुट्टीय ११म वा १२म शताब्दीके मध्य कुलीयुद्ध चीनराजका राजत्वकाश रहा। किन्तु दक्षिणपथके प्रसिद्ध ब्रह्मदीयराजाहाय्य नामक पुस्तक देखते खुट्टीय ६म शताब्दीके वह महान् राजत्व करते थे।

दोनों कामोंके दर्शनोप बसुकोके मध्य शिवकाशीस्थित 'एकाम्बनाथ' नामक महादेवका पाटलिङ्ग भगवती कामाक्षी देवीकी मूर्ति, भगवान् यदराचार्यको प्रतिष्ठा एवं समाधिस्थल तथा कल्याणदी तीर्थ' और विष्णुकाशीस्थित 'श्रीहरदरात्रयामा' नामक भगवान् विष्णुकी मूर्ति, उल्लङ्गमूर्ति, भगवतीधारा तीर्थ रत्नकोश, भोमभोर्क, महकलतीर्थ, कुशतीर्थ, सुहस्रतितोर्थ, सुकलतीर्थ एवं यन्तितोर्थ' प्रकृति प्रधान है। इसक प्रतिरिक्त काशीके निम्नट केदारेश्वर और शालुकारण्य दो पुष्पक्षाल भी हैं। (उक्त तीर्थों का विवरण शिवकाशीमाहात्म्य कामाक्षीविलास, केदारेश्वर माहात्म्य प्रकृति संस्कृत पत्रोंमें देखना चाहिये।)

दक्षिण देवीय आर्तोंके मतके शिवकाशी धाराक्षी तुल्य है। इस स्थानके उत्पत्ति विषय पर ज्ञानपुराणमें लिखा कि महादेवने पार्वतीके सुख तोषको ज्ञान करनी करते कहा था,—“धाराक्षी रामेश्वर, शोषित पादि सुष्णसेवीके काशीपुर उल्लङ्ग है। यहाँ जो भोग रहते जो दर्शन करते या इसका विषय सुनते यवना इसका विषय मर्ममें रखते एवं चान्दोहन करते और जो यशु पत्नी यहाँ बसते, वह भी मुक्ति लाभ करते हैं। इन नगरके मध्यस्थलमें समस्त शास्त्रोंके धामके तुल्यरूपमें एक और पपमें लिङ्गरूप एकाम्बनाथ नामकी प्रतिष्ठित का जन्म रहा करते हैं। इस काशीपुरमें आज करनी नर मर्षपापके सुख जो ज्ञानि हैं। काशीपुर धारा और पञ्चकोहन विद्युत है। इनके मध्य पूर्व पश्चिम एवं उत्तर दक्षिण टाई शोभ जन्म सर्वदा विराजमान रहेंगे। फिर प्रलयके समय जन्म इनकी यवने जिज्ञान पर रहेंगे। पतयव इनका जन्म विनाश नहीं। इनका हमारी जो, पाकृति समझना चाहिये।”

पाठोपलक्षिक भोग केपे श्रीरत्नके श्रेष्ठ भागमें कामो का रहते तथा कामीमें मर खडनेपर शिवत्व प्राप्तिका विधान रहने केके जो दाक्षिणात्यवासी भी काशीमें रहने और काशीमें मरनेके यवने मुक्ति समझते हैं।

दाक्षिणात्यके ज्ञाना कामीमें महादेवकी पांच

भोतिव मूर्ति हैं। काशीपुरका “एकाम्बनाथ विष्णु” जन्में क्षितिमूर्ति होनेके जो क्षतिबाधसे मठित है। सुतरां पञ्चान्य देवान्यकी मूर्ति यहाँ जलाभिषेक नहीं होता।

एकाम्बनाथका मन्दिर दाक्षिणात्यमें पति विद्यात और देवनेमें भी पति सुन्दर तथा पुरातन है। यह मन्दिर द्विती समय एकवारकी ही न बना था। इसकी तृति जन्म जन्म हुई है। इस मन्दिरकी दोवापे परस्पर परस्पर भावसे नहीं बनीं और वर भी परस्पर सम्बन्धन नहीं। यन्नेक भोगके अनुमानमें इनका मूळ ध्यान शोभ राजाशाने बनबाया था, फिर बिजय नगरके राजा छप्परावने गोरुर निर्मात्र करवाया। इस मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पुरातन धाम्भङ्ग है। सुदृशा वनम शःह मत बल्लर होना। दक्षिणके भोग इस धाम्भङ्गजकी पनादि और सर्वमात्रकी मानते हैं। इसकी चार यापावोंमें हयबर् मिर, बट तिष्ठ और पञ्च चार पञ्चारी धाम्न होती हैं। फल प्राप्ति कामे इस विषयका साध्य दिया करते हैं। देव-सेवकोके कथनानुसार पञ्चसे इस धाम्भङ्गके प्रत्यह एक पञ्चा पाम गिरता, जिसका भोग एकाम्बनाथकी श्रुता था। यन्नेक लोकोके कथनानुसार इनाने लिङ्गका नाम 'एकाम्बनाथ' पड़ा है। विष्णु प्राङ्गण मन्त्रक धाम्न नहीं मिलता।

कामाक्षी देवीके उत्पत्ति सम्बन्ध पर व्यक्तपुराणमें निष्ठा है—द्विती समय पार्वती देवीने क्रोतुकच्छनने कोके का महादेवके चक्षु मूढ किये थे। इसीके विग्रह धारा पञ्चधारमय हो गया। काश्च श्रुत्येवम् शत्रुछपो ज्यनत्रय ठक जानेके प्रकाश बिम्ब प्रकाश होता ? इनमें भगवतीका वाव श्रुता। जन्मी पापके प्रायश्चित्तकी महादेवके पादेयसे उन्हें मम्यनाक पाना पड़ा। एकाम्बनाथके मन्दिरप्राङ्गण स्थित कल्याणदी नामक तीर्थमें कामाक्षी देवीरूपने एक माप तपस्या करनीपर महादेवने उन्हें फिर वक्ष्य किया। तदवधि कामाक्षीमूर्ति जन्मत्र मन्दिरमें प्रतिष्ठित है। पानानु मालके पंचदश दिन बराबर एकाम्बनाथका वार्षिक मङ्गल होता है। इनके दृश्य दिवस रात्रिकी

कामाची देवीकी भोगमूर्तिके साथ एकाम्बनायकी भोगमूर्ति मिलायी जाती है।

कामाची देवीका मन्दिर कुछ छोटा है। इमीके प्राङ्गणमें भगवान् गङ्गराचार्यका समाधि है। इसी समाधि पर उनको प्रम्दरमयी मूर्ति प्रतिष्ठित है।

शिवकाचौमें अनेक शिवलिङ्ग हैं। इनके मन्वन्वमें एक प्रवाट है—किसी समय एकाम्बनायने एक मुष्टि बालुका छोटी थी। उससे बालुकाके जितने कण गिरे, वह प्रत्येक शिवलिङ्ग बन गये।

एकाम्बनायकी पूजाकी १४००) रु० आयक कई ग्राम लगे हैं। ८०५) रु० नकट कन्धकरीसे आता है।

इस मन्दिरमें प्रत्यह वेदपाठ और वेदगान होता है। उष्वके समय भोगमूर्तिकी रत्नालङ्कारसे सजा बाहक ब्राह्मण अपने स्कन्ध पर ले जाते हैं। पीछे दूसरे ब्राह्मण वेद गाते चलते हैं। फालान मास रथोत्सव होता है। उस समय विस्तर यात्री आते हैं।

यह देवालय कर्णाटक युद्धके समय सेनावास या अस्पतालकी भांति व्यवहृत होता था। द्वार पर उसी युद्धके एक गोलेका चिन्ह आज भी देख पड़ता है।

उक्त शिवमन्दिरमें २ कोस दूर विष्णुकांची है। यहीं वरदराज स्वामीका प्रसिद्ध मन्दिर बना है। स्वल्पुराणमें वरदराज स्वामीके उत्पत्ति-मन्वन्ध पर इस प्रकार लिखा है,—“किसी समय ब्रह्माने अश्वमेध यज्ञ किया था। काञ्चीपुरमें यज्ञस्वल्प निरूपित हुआ। यज्ञभूमिका उत्तर द्वार नारायण, पश्चिम द्वार विरञ्चिपुर, दक्षिण द्वार चिद्वन्निपट और पूर्व द्वार महाबलीपुर था। सरस्वती देवीने ब्रह्माके यज्ञकी बात न सुनी। नारदने ब्रह्मलोक जा उसकी सवाद दिया था। उनको इससे बड़ा क्रोध हुआ कि ब्रह्माने उनसे न कुछ यज्ञ करना आरम्भ किया। वह यज्ञस्वल्प बहानेकी नदी बन गयीं। ब्रह्माने यह सुन विष्णुसे साहाय्य मांगा था। विष्णुके आकर गति रोकने पर सरस्वती अन्तःसलिला होकर बहने लगीं। विष्णु

फिर नग्न रूपसे एदोचौरों नामक स्थान पर नदीके सामने जा पड़े। तब सरस्वती देवीने लज्जासे अधोमुखी हो अपना पूर्व मद्दक्ष परित्याग किया था। इधर यथासमय यज्ञोप अश्वमांसको आहुति दी गयी। भगवान् विष्णु, वही हुत माम स्थाने स्नाते यज्ञीय अग्निसे आविर्भूत हुये। विष्णुके दर्शनसे ब्रह्माकी मनस्कामना मिह हुयी। समागत ऋषियों और ऋत्विकोंने विष्णुसे उसी स्थान पर रहनेका प्रार्थना की थी। नारायण उनकी प्रार्थनासे मन्तुष्ट हा काञ्चीपुरमें त्रिवरदराज स्वामीके नामसे रहने लगे।

सुननेमें आया कि ११ग गताष्टकी काञ्चीपुरके शासन-कर्ता गंजागोपाल राशने विष्णुमन्दिर प्रतिष्ठा किया था। पहले वह अशुभकर रहे। वरदराजको रूपमें उनके पुत्रसन्तान हुआ। इसीसे उन्होंने एक शिवमन्दिर तोड़वा उसीकी इंटोंमें एक छद्मत् विष्णुमन्दिर निर्माण कराया और उसमें वरदराज स्वामीकी ना विठायी। इसी विष्णुमन्दिरसे यह स्थान विष्णुकांची कहाता है।

विष्णुमन्दिरके देवीभवनके एक स्तम्भपर १०३२ शककी एक शिल्पलिपिमें लिखा कि—नोत्तनतन्वजी-मस नामक कोई व्यक्ति उदेव्यर पत्नीयमसे वरदराजकी मूर्ति विष्णुकाची ले गया था। विष्णुमन्दिरके द्वितीय प्रकोष्ठमें छण्णराय निर्मित प्रसिद्ध शतस्तम्भ-मण्डप विद्यमान है। एक पत्थरको काटकर यह मण्डप बनाया गया है। इसके निकट दूसरे भी कई मण्डप हैं। उनमें बाह्यमण्डप और कल्याण-मण्डप ही नष्ट हैं। इस मन्दिरकी देवसेवाके लिये ३०००) रु० आयका एक ग्राम लगा है। फिर मन्दाक गधरनमेण्ट भी ६६६१) रु० वार्षिक देती है। यह मन्दिर अतिसन्धियाली है। इसकी केवल मणिमुक्ताका मूल्य ही लाख रुपयेसे अधिक होगा। लार्ड क्लार्डने ३६६१) रु० मूल्यका एक कण्ठाभरण चढ़ाया था। वैशाख मास १० दिन बराबर इसका महीत्सव हुआ करता है। उस समय यहाँ प्रायः पचास हजार यात्री आते हैं।

काञ्चीपुरी (सं० स्त्री०) काञ्चीपुर देवी।

* दाक्षिणात्यके प्रायः प्रत्येक विप्लवकी ही मूर्ति होती है। मूलमूर्ति मन्दिरमें प्रतिष्ठित रहती है और भोगमूर्ति उरुवादिमें नगरदाताकी बनती है। भोगमूर्ति ही अन्तःसलिला होकर बहने जाती है।

काशीप्रसन्न (सं० श्री०) भागीरथ देवी।
 काश्चित् (सं० श्री०) हु काश्चित् पश्चिमा मन्वायो
 वष, हु पश्च यदुत् टाप् पत इत्त कोः आदेयं ।
 काश्चित्, काशी । अक्षरं अक्ष काशकांशे अक्ष
 पहा पहा जाता, तव वही अक्ष 'काश्चित्' कह्यता
 है। इसका संस्कृत पर्याय—पारलास, वीवीर,
 कुस्त्राय, धर्मिपुत्र, धर्मिधर्म, काश्चित् कुस्त्रक,
 कुस्त्राय, कुस्त्रायामिपुत्र, काशीक काश्चित्, काश्चित्,
 काशी, मन्वायो, वाशमूल, वाशयोनि, तुपाम्
 वृथाक, महारस, तुमोदक, मूत्र, पुत्र, वातुप्र,
 उवाह रक्षोप्र, कुच्छमोक्ष सुवीराक, वीर,
 पन्निपथ वीर पञ्चसारक है।

राजवह्मणे मतसि यह मीदक, तोष्य उष्य
 कर्मयोगतक, स्वम एवं काश्चित्नायक, पन्निपथक
 वीर पित्र, वधि तत्रा वक्षिद्यधिकारक है। फिर
 राजनिष्पत्, ईच्छते इधि पहापर मन्वये वातु, मीय
 पित्र, ज्वर, दाह मुच्छां मूत्र, पापान वीर विवन्ध
 योग विवन्ध होता है।

काश्चित्पटक (सं० पु०) काश्चित्पटक विधि काशी
 बड़ा। मन्वोका एक मृतम पात्र कटु तेक जमा
 निर्मल कलसि भरते है। फिर लक्ष्मि राई सरसो,
 जोग, नमक, जौंग वीर इच्छोके चूर्ण छाया कुक्ष
 बड़े सिंगो तीन दिन तक सुख बांध रख छोड़ते है।
 वही बड़े जव खई पक्ष काशि तव 'काश्चित्पटक'
 कह्यते है। यह वधि एवं अक्षकारक वीर शून,
 पक्षीक, दाह तथा वातुनागक है।

काश्चित्पटपटक (सं० श्री०) घृत विद्येय, एक जो।
 घृत ४ मरावक काश्चित् १६ मरावक वीर विदु
 मूली, दिप्यमो, मरिच अथ तथा सैन्धवकचका
 कलक एक एक एक एक पकानेसे यह वीरव प्रसुत
 होता है। काश्चित्पटपटक पामवातके निवे
 दितकार है। (पञ्चतन्त्र)

काश्चित् (सं० श्री०) काश्चित् पश्चिमायका, टाप्।
 १ लघुमात्रको। २ पन्वायो मता। ३ काश्चित्, काशी।
 काश्चित्क (सं० श्री०) काश्चित् विद्येय, एक काशी।
 इधि मन्वये वात बद्धता, दाह उठता, मात्र गिदिब

पडता वीर वीर पकने लगता है। किन्तु धानिनि
 खोई होय नहीं। (पञ्चतन्त्र)

काश्चित्पश्चिमा (सं० श्री०) काश्चित्पश्चिमा वृष,
 काशी दातो।

काशी (सं० श्री०) वं कल पन्नि, क पन्त्र पत्
 डीय। १ महाश्रीवपुमो एक प्रसुदार पीड़।
 २ काश्चित्, काशी। ३ मार्गा एक पावनि।

काशीक (सं० श्री०) काश्चित्, काशी।

काट (सं० पु०) वं अक्ष पथते पक्ष, क पट वक्ष्।
 १ वृष, कृपा। २ विपमपथ, लोपो-ध्वं वी राव।

काट (वि० पु०-श्री०) १ खेदक, कटार। २ अर्तन,
 तराय। ३ भावत खान, कटो हुयो जवव। ४ पौड,
 दर्द। ५ कल, बोका। ६ मन्वुवका कोयल विद्येय,
 पंचपर कर्मेवाका पंच। ७ काई, चिट्टी सिधनेका
 एक कागज। ८ तामके खेचमें तुक्षका रंग। इधये
 वृधरे सव रंग कट जाते है। ९ मन्व, कोट।

काटको (वि० श्री०) वधि विद्येय, एक कटो। इधये
 मशारी तमाया दिवावि वीर बकरी, बन्दर तथा मासू
 मधते है।

काटना (वि० श्री०) काश्चित्पटक, एक टुकड़ा। यह
 निरर्थक जीनेसे छोड़ दिया जाता है।

काटना (वि० लि०) १ अर्तन करना तोष्य पक्षके
 काश्चित् उतारना, टुकड़े उठाना। २ रमङ्गना, पीटना।
 ३ अमंवर पासात कमाना कम्पना उठाना। ४ काटना,
 कोटना। ५ मिठाना, काड़ाना। ६ अतोत करना
 बिना देना। ७ गमन करना चलना। ८ पक्षमें धनो
 पार्जन करना, वारीसे क्षया कमाना। ९ रक्ष करना,
 सेवना। १० प्रस्तुत करना बनाना। ११ निशासन,
 से जाना। १२ खींचना, तैयार करना। १३ काटना,
 भान कमाना। १४ तराय सेना। १५ सवायोधि
 फिटना। १६ उठाना भोजन। १७ दात मारना,
 कल सेना। १८ कमाना, काड़ना। १९ पार करना।
 २० पाना, दिख पड़ना। २१ मारना, उठाना।
 २२ पक्षिक करना, काचित् होनि न देना। २३ वीराना।
 २४ पक्षम करना, तोड़ना। २५ सदन न होना, सङ्ग
 न जाना। २६ काड़ना, काप करना।

काठवेम (सं० पु०) कान्तिदास-प्रणीत गकुन्तला नाटकके एक टोकाकार।

काठव्य (सं० स्त्री०) कटोर्भावः, कटु-प्यञ् । १ कटुता, कडवापन, कडुवायी । २ काकेश्य, काकसपन ।

काठाखान—दक्षिण कर्णारवाली धवलेखरी नदीकी एक शाखा। कहते बहुत पहले कछारके किसी राजाने इस नदीसे नहर निकाल द्वाराक नदीमें जा मिलाई थी। फिर उन्होंने सड़म स्थानपर एक बाघ बंधाया। आज-कल वारहो मास इसमें जन रहता और सोत बहता है।

काटान—बंगालके मानदह जिलेका एक कंटोला जङ्गल। यह भूभाग पूर्व और उत्तरपूर्वी ओर विस्तृत है। उत्तरपूर्व और दक्षिणपूर्वको काटान महानदीको चर-भूमिसे दोनाजपुरकी सीमानक चला गया है। इसका प्रकृत गठन अति श्रद्धत है। बड़ा हल वा गहन वन कहीं देख नहीं पड़ता। केवल कंटोला भाडियां चारो ओर लगी हैं। पहले यहा बहुत लोग रहते थे। पुष्करिणी और गृहादिका भग्नावशेष आज भी इसकी प्राचीन सन्धिक्रा साक्ष्य देता है। प्रसिद्ध पाण्डुया नगर इसी वनमें बना था। काटालमें कई खाड़ी और नदिया हैं। यहाँ केवल असभ्य लोग रहते हैं। उनमें अनेक शिकार करते और मछली खा अपना पेट भरते हैं। कुछ कुछ सन्यास अथवा और घर बना बसने लगे हैं।

काटुक (सं० स्त्री०) कटुकम्य भावः, कटुक-अण् । कटुता, कडुवाहट।

काट (हिं० पु०) १ कर्तन करनेवाला, जो काटता हो। २ भयानक, स्त्रीपनाक, दाट खानेवाला।

काठोया—बंगाल प्रान्तके बर्धमान जिलेका एक नगर। यह भागीरथीके पश्चिम तीर अक्षा० २३° ३७' ४०" और देशा० ८८° १०' पू० पर अवस्थित है। यहाँ कैगव भारतीने चैतन्यदेवकी संन्यासकी दीक्षा दी थी। गौराह देवका मन्दिर प्रभो बना है। सुमलमान नवाबोंके समय यह नगर बहुत बड़ा। १७४२ ई० को महाराष्ट्र राज-मन्त्री भास्करपंथ बड़विजयके लिये योड़े दिन यहीं आकर ठहरे थे। १७३३ ई०को कासिमखाने ने उनसे युद्ध किया। अधिवासियोंमें तन्तुबाय (चुन्नाहे) वर्षिष्ठ

हैं। पीतल और काँचका व्यवसाय बहुत होता है। काठ्य (सं० त्रि०) काठे विषममार्गं कूप वा भवः, काठ-यत् । १ विषममार्गं जात, वेदव राहमें निकना हुवा। २ कूपजात, कूपसे पैटा। (पु०) ३ रुद्र विजय। काठ (सं० पु०) काठते तरते, कठ-वञ् । १ पापाण, पत्तर। (त्रि०) काठम्य इदम्, कठ-अण् । २ कठमन्वन्धीय, कठका लिये हुवा।

काठ (हिं० पु०) १ काठ, लकड़ी। २ ईंधन, जनानेको लकड़ी। ३ गहतीर, तरुता। ४ वेडी, कलन्दरा। काठक (सं० स्त्री०) कठानां धर्म आम्नायः समूहो वा कठ-बुञ् । १ कठ गाथाध्यायीका धर्म। २ कठ गाथाध्यायीका शास्त्र। ३ कठ गाथाध्यायीका समूह।

काठड़ा (हिं० पु०) कठौता, काठकी बडी परात। काठवनिया—बिहारके वणिकोंकी एक योगी। इनमें अधिकांश वैष्णव होते हैं। सैन्यन ब्राह्मण इनका पौरोहित्य करते हैं। हिन्दू शास्त्राह देवदेवियोंके प्रतिरिक्त यह सांखा सम्प्रदाय और सत्यनारायण नामक शास्त्र देवताको पूजते हैं। अथर वणिकोंके मध्य कन्या और वर समय पक्षमें समपुरणका सम्बन्ध रहते भी पिण्ड पडते विवाह रुक जाता है। किन्तु इनमें बेटी कोई दाया नहीं लगती। यह बाल्यकालमें कन्याका विवाह करते और एक पत्नी रखते अथवा पत्नी ला सकते हैं। इनमें विवाहविवाह प्रचलित है। फिर भी विधवा पूर्वपतिके कनिष्ठ मछोटर अथवा सम्पत्तिके कनिष्ठ भ्रातासे विवाह करनेका सचम नहीं। कोई सुखतर अपराध प्रमाणित हाने स्वामी पचायतकी अनुमतिसे पत्नी परित्याग कर सकता है। इस प्रकार परिवर्तन क्रियेका फिर विवाह नहीं होता। यह श्रवदाह करते और अगौचान्त ३१ दिन आहत्या नियम रखते हैं। सामान्य व्यवसाय और छापकार्य इनकी उपजीविका है।

काठवेल (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक वेल। यह भारतकी युक्त प्रान्त, अफगानिस्तान और फारसमें उपजती है। इसका फल इन्द्रायणकी भांति कटु होता है। बीजसे तेल निकालते हैं। कहीं कहीं काठ-

केक चौपचर्म इन्द्रायकके प्रभावसे डाब दी जाती है। इसका पपर नाम 'कारि' है।

काठमाण्डू—आशौन मेषाब्द राक्षसो राजधानी। बाब मती और विष्णुमती नदीके सहज स्रवणपर गागाङ्गुल गिरि अवस्थित है। इसी गिरिके पाददेशमें आब कोस दूर उपमहाकके पश्चिमामें काठमाण्डू नगर है। इसका प्राचीन नाम 'मञ्जुपत्तन' है। देवीय लोगोंने विद्यासाधुकार पूर्वजानका मञ्जुश्री नामक किसी बुढ़ने यह नगर स्थापन किया था। राजधानीकी मूमि अतुराज वा त्रिकोण पर्वतवा द्रव्य पर्यंतत कीरे नियमित आकार विविध नहीं। हिन्दू इसका आकार शैलेके अङ्गुली मूर्ति बताते हैं। फिर बीच निवासी इसके आकारको मञ्जुको नामक नगरस्थापयिताको तबकारके सिपामें है। इस अवस्थित पर्वतका मुटि नगर की इतिहास और बाबमती तथा विष्णुमतीका सहजस्रवण और नगरकी उत्तर और 'तिपासी' नामक उपकण्ठ स्थान इसका मुख्य पथभाग है। मञ्जुश्रीको तबकारको मुठमें जैसे एक अण्ड पक्ष अमाकार वेष्टित रहता, तब तिपासी अण्ड भी वैसे ही देख पड़ता है।

प्रकृत पथमें प्राय ०२१ ई०को काठमाण्डू गुप्त कामदेव द्वारा प्रतिष्ठित हुआ था। नगर उत्तर दक्षिणको ही अविकल होय, कोई पथ कोस होगा। इस काठमाण्डू बहुत दिनसे नहीं आइते। १३८६ ई०को राजा अक्षयवर्धन मत्तने नगरके मध्य अक्षांसिके जिये एक आडमय तहल मन्दिर वा आडमण्डप निर्माप करवाया। यह मन्दिर पाद भी बना और इसी कार्यमें लगा है। इसी आडमण्डपके 'काठमाण्डू' नाम निकला है। पक्षसे यह नगर आचौर स्थित था। आचौरके गाममें बीच बीच सुन्दर तोरख रही। पादकण्ठ स्थान स्थान पर आचौरका मण्डारतीय भाव मिलता, किन्तु पश्चिमामें अक्षममें कोई अडतक देख नहीं पड़ता। ३२ तोरख विद्यमान रहते भी अबाधका प्रभाव है।

काठमाण्डू चूद चूद ३२पक्षियों या ठोकीमें विभक्त है। उनमें पाचछान, इन्द्रवज, काठमाण्डूठोका,

लक्षपटोका और राक्षमवनका निकटवर्ती स्थान ही पश्चिम प्रसिद्ध है।

नगरके मध्यभागमें दरवार या राजमवन अवस्थित है। यह देखनेमें पश्चिम सुन्दर न होते भी बहुत बढ़ा है। इसका कोई कोई पथ बहुत प्राचीन ब्रह्मदेशीय मन्दिरादिके आकारका बना है। इस प्रासादके मोटे मोटे अक्षोर्ष गिण्ट देखनेमें बहुत पक्के लगते हैं। प्रासादके मध्यका दरवार बने २० बयें दूधे। राज मवनका आकार कुछ कुछ अतुराज और उत्तर और नगरमुखको अण्डाकार है। इन और पक्के 'तन्त्रि' नामक मन्दिर अवस्थित है। दक्षिण और शीघ्र मार्गमें मन्दायादक 'बनस्तपुर' नामक पहाडिका और नूतन होच मन्दायक (दरवार) है। पूर्वमें उद्यान और पथघाणा विद्यमान है। पश्चिममें प्रवाल तोरख द्वार है। इसके मध्यका नगरका प्रथम पथ निकला है। पक्षके पाममें हिन्दुनेके पनेक मन्दिर हैं। सम्राट्टके उत्तर पश्चिम 'कोट' वा सुखविपदादिवा मन्दायागा है। इसी पक्षसे १८४६ ई०को मोपब नरहत्याका पादमे निकला था। राजमवनके पश्चिम अक्षयरी पदाकत और मध्यका पनेक सुन्दर देव मन्दिर है। इन मन्दिरोंमें पनेक पति तब और बहुतन विविध हैं। मन्दिरोंका अक्षोर्ष आब विरल और अर्थादि बर्षके मुक्तकोका काम बहुत पक्का है। पनेकोके समस्त द्वारों पर पीतल या ताँबेका सुनघा चला है। मन्दिरोंके आरनिषमें बहुतसी पतनी अष्टिणी पठकती हैं। कुछ आरवे बना बनने पर सब अष्टिणी टन टन बनते पति महार अम्ह होने लगता है। इन मन्दिरोंमें कईके हाथीपर प्रस्ताके शिवादिकी मूर्ति उभय और स्थापित हैं।

पनेक सरदारोंने प्रायकन अदरमें सुन्दर सुन्दर पहाडिका बनाया यामा बढ़ायो है।

इस नगरमें एक प्रकार तूषरी मन्दिर भी देख पड़ते, जो पक्षपर सुम्न रख बने हैं। इस अक्षोके मन्दिर विषय आब कार्य न रहते भी देखनेमें बहुत परिष्कार और परिष्कृत हैं। पूर्वके तन्त्रि मन्दिर देखनेमें ब्रह्मदेशीय मन्दिरके मिलता और

मन्दिरोंमें सर्वापेक्षा उच्च लगता है। लोकोके कथनानुसार १५४६ ई० की राजा महेंद्रमल्लने यह मन्दिर बनवाया था। अनेक मन्दिरोंके सम्मुख उनके प्रतिष्ठाता प्राचीन राजाओंकी प्रस्तरमूर्ति स्थापित है। यह मूर्तियां प्रायः मन्दिरकी ओर घुटने लचा हाथ जोड़े बैठी हैं। उनके मस्तक पर राजसम्मानसूचक धातुनिर्मित सर्पफणा परिशोभित है। फणापर एक चन्द्र पक्षी बैठा है। राजभवनसे कुछ दूर एक मन्दिरमें एक बड़ा घण्टा लगा और दूसरे दो मन्दिरोंमें एक एक बड़ा दमामा रखा है। समस्त मन्दिरोंमें नानाविध हिन्दू देवदेवीकी मूर्ति विद्यमान हैं।

राजभवनसे २०० गज दूर अर्ध-युरोपीय प्रणालीसे निर्मित 'कोट' नामक अटालिका है। जहाँ यह स्थान बना, वहाँ सार जङ्गलहादुरकी (१८४६ ई०) अभ्युदयमूलक भौषण नरहत्या हुयी। राज्यके समस्त सम्भ्रान्त और जमताशाही लोग उस समय मर मिटे थे।

यहाँ कई चूड़ मन्दिर हैं। वह एक ही प्रस्तर-खण्डसे निर्मित हैं। उनकी देवमूर्ति एक इंच प्राय दीर्घ हैं। अनेक मन्दिरोंमें मोर, हंस, छाग और मणिपाटिका वलिदान होता है।

नगरके पछादि अप्रशस्त और अपरिष्कार हैं। प्रत्येक पथके किनारे नावदान होता, जो कभी परिष्कार नहीं किया जाता। नगरका मंश जमीनमें खाद डालनेके लिये खूब होता है। गृह प्रायः चतुरस्र, अभ्यन्तर चक्राकार और पथका द्वार अप्रशस्त रहता है। बीचमें चौड़ा चवुतरा बनाते हैं।

उत्तरपूर्वके सिंहद्वार छोकर नगरसे निकले पर दक्षिण और 'शानीपोखरी' नामक बृहत् दीर्घिका मिलती है। इसके चारो ओर प्राचीर वेष्टित है। दीर्घिकाके मध्यस्थलमें एक मन्दिर है। इसके पश्चिम छोकर इष्टकानिर्मित रेतु द्वारा मन्दिरमें प्रवेश करना पडता है। मन्दिरके दक्षिण एक बृहत् प्रस्तरके हस्ती-पुष्ट पर राजा प्रतापमल्लकी मूर्ति दत्तायें है। यही राजा एक मन्दिर और दीर्घिकाके निर्माता थे। कुछ दक्षिण ओर पागे वृदकर बकाइन (Cape lilac) वृक्षकी

कतारके बीचसे एक राह नगरसे मैदानमें जा मिली है। पहले इस मैदानमें जङ्गलहादुरकी तलवार लिये मूर्ति ३० फीट ऊंचे स्तम्भ पर रखी थी। पीछेको बह वाघमती नदीके तीर एक प्रासादमें स्थानान्तरित हुयी। इस मैदानकी पश्चिम ओर प्राचीन सेनापति भीमसेन यापाका 'दवंरा' नामक २५० फीट ऊंचा प्रस्तर स्तम्भ है। इस स्तम्भकी गठनप्रणाली अति सुन्दर है। इन सेनापतिका दूसरा भी बृहदाकार स्तम्भ था, जो १८३३ ई० के भूमिकम्पमें भूमिसात् हो गया। यह स्तम्भ १८५६ ई० की वज्राघातसे टूटा था। १८६६ ई०की इसकी अच्छी मरम्मत हुयी। इसके अभ्यन्तरमें एक गोलाकार सीढ़ी है। इस स्तम्भपर चढ़नेसे नगरकी शोभा अच्छी तरह देख पडती थी।

इससे कुछ दक्षिण पुरातन अस्त्रागार है। मैदानके पूर्व पुराना तोपखाना है। यहाँ बारूद तोप बगैरह तैयार करते हैं। आजकल नगरसे दक्षिण ४ मील दूर चुकू नामक नदीके तीर एक कारखाना खुला है। वहा तोपें बनायी जाती हैं।

इस पथमें पूर्वमुख घूम एक मील चलने पर ठाटपटली नामक स्थान मिलता है। यहाँ वाघमती तीर अवस्थित जङ्गलहादुरका महल है। इस महलके सामने वाघमतीका मनोहर सेतु उतरते पत्तन नामक स्थान आता है।

काठमाण्डूके रेसीडिण्टका स्थान नगरकी उत्तर ओर एक मील दूर है। जगह अच्छी है। लोकोके कथनानुसार भूतांका उपद्रव रहनेसे रेसीडिण्टके वासके लिये यह स्थान मनोनीत हुवा है।

मन्त्री रणदीप सिंह नगरके उत्तर पूर्व पार्श्व एक बृहत् प्रासादमें रहते थे। काठमाण्डूमें १२००० पदातिसैन्य है। पुरानी चालकी २५० बन्दूकें रहती हैं। काठमाण्डू किसी विशेष व्यवसायके लिये प्रसिद्ध नहीं।

काठशाठी (सं० पु०) कठशाठिन प्रोक्षं पधोयते, कठशाठ-णिनि। कठशाठ-कथित शास्त्राध्यायी।

काठिन (सं० स्त्री०) कठिनस्य भावः, कठिन-अण्। १ टड़ता, कड़ापन। (पु०) २ खर्कूरख, खजरका पेड़।

काठिन्य (सं० छी०) काठिन्य प्रायः, काठिन्य-पर्व ।
 १ कठिनता काड़ावन । २ निष्ठुरता बिरहमो ।

'काठिन्य वरीचाने चङ्ग' बरभयवति ।

(रामचरित् १० ३४०)

काठिन्यफल (सं० पु०) काठिन्य फले यव्य, बज्रमो० ।
 काठिन्यफल, केषिका पिक्र ।

काठियावाड़ (सौराष्ट्र) बम्बई प्रान्तका एक प्रायो
 द्वीप । यह भूभाग २० ३१ एच २१ ८ ७० पीर
 दिमा० ६८ ३६ तथा ७२ २० पू० के मध्य अवस्थित
 है । काठियावाड़ गुजरातका पश्चिमांग है । यह प्रायो
 द्वीप २२० मील लम्बा पीर १६३ मील चौड़ा है ।
 सैबयल कोई २३६३५ वर्ग मील जोगा । कोकसंज्ञा
 २५ भाषयि पश्चिम है । इसमें १२३५ वर्ग मील भूमि पर
 गायकवाड़ राज्य करते, १२८८ वर्ग मील पद्मदा
 वाद विसिद्धे पञ्चोल पड़ते, २० वर्ग मील पोर्तगोइ
 राज्यमें सन्तरे पीर २०८८२ वर्ग मील पर अन्त्याय
 देयो राजा अपना प्रमुख रखते हैं । इन राजाओंके
 राज्यको एक पक्षको १८२३६ ई० मने । काठियावाड़
 पक्ष को ३ प्रान्तमें विभक्त है—भासावाड़, हाबार
 सोराठ पीर गोइकवाड़ । इन एकीकृतके पञ्चोल राज्य
 १८६३ ई० मे ७ अक्टोबर्में निबह है । प्रथमके ८,
 द्वितीयके ६ तृतीयके ८, चतुर्थके ८, पंचमके १६, षष्ठ
 के ३० पीर सप्तम अक्टोबर् ३ राज्य है ।

काठियावाड़ प्रायाद्वीप वर्गाकार है । यह चरक
 सागरीके अर्ध पीर गुजरात समुद्र तटके मध्य विद्य
 मान है । इसमें पश्चिम प्रचारी समुद्र पड़ता सि
 पक्षसे यह पश्चिमोत्तरेय करनेवाले द्वीपोंका एक
 समूह था । उत्तरीय तट पर रामका उदका जल पीर
 पूर्वका जलदाज भूमि है । ई० १३ वी पीर १४ वी
 सताब्दको काठियावाड़ अक्षुण्ण था यहाँ पापय निवा
 पीर १५ वी सताब्दको इसे पश्चिकार किया ।

पञ्च निम्नलिखितके हैं : भासावाड़के पश्चिम ठांवा
 पीर माण्ड्य तथा हाणारके कुछ पुर पर्वतोंको छोड़
 इन देशका उत्तरीय विभाग चपटा है । किन्तु दक्षिणमें
 गोधाके पीर पञ्च बराबर गिरगार तत्र चला गया है
 माङ्ग प्रधान नदी है । यह माण्ड्य पर्वतके निम्न

बरकामें नवी बन्दरके समीप समुद्रमें जा मिरा है ।
 इसको बाराका परिमाण ११० मील है । नदीके दोनों
 ओर खेती होती है । दूधरी नदी घात्र, माण्ड्य, मोगाव
 पीर गतरंको है । गतरंकोका बन्ध इत्य सुप्रसिद्ध है ।
 इसका भावनगर, सुन्दरी, बरहियाको पीर
 कोसीरा लवपाट जल्के घात हैं ।

सहामण्ड्यके उत्तर पूर्व कोचपर पठत बन्दर है ।
 पिराम चांच, याल, डिक् वेयल पीर चांच प्रधान
 द्वीपमें गण्य हैं । नव पीर मेडय छोटे छोटे मील हैं ।
 दक्षिण-पश्चिम कोचपर गाराकोइ नामक नवचा
 यार है । पारबन्दरका पत्तर पच्छा जाता है । काठ
 बज्रभूय नहीं । काठियल पीर जगमौ पुत्र बज्रत है ।
 पक्षे काठियावाड़में तिंह सवत्र देख पड़ते है किन्तु
 पक्ष गोर पक्षे पतिरिक्त दूररे स्थानमें नहीं मिलते ।
 काठियावाड़का जलवायु प्रसवताकारक पीर प्लाष्य
 कर है । दक्षिण मार्गमें तप्त वायु पश्चिम चलता है ।
 काठियावाड़में पित्तप्रकापीय श्वर पा जाता है । जूना
 यद पीर राजकोटमें इति पश्चिम होती है ।

पूर्वतन समय काठियावाड़में ब्राह्मणोंमें अपना
 प्रभाव बहुत बढ़ाया था । जूनागढ़ पीर गिरगारके बीच
 पञ्चोबको गिजासिधि (२६५ २११ पूय सृष्टाब्द)
 मिलती है । इवाने सारपोसटोस (Sarostos)
 पञ्चवत सौराष्ट्रका जो निवा है । पिसा जोनेमे सौदीय
 राजावने सृष्टपूर्वम् १८०—१४४को काठियावाड़
 जीता था । पञ्चवतसुन्दराके बलिष्क मो ई० १म तथा
 २य सताब्दको इसमें परिचित है । किन्तु उन्होंने जिन
 स्थानोंके नाम लिखे उनके मिसानमें विद्वन् जलक
 पड़े है ।

काठियावाड़का प्राचीन इतिहास बहुत कम
 मिलना है सञ्चवत समायत मयूर जूनानी पार
 पञ्चवत इवक पश्चिमि रहि । खिर गुप्तोंने वेन पतिर्य
 द्वारा पञ्च पाड़े दिन राज्य किया । पेशाजिहानि
 राजा हा अपने प्रधानको बज्रमो जगर्षि (भावनगर
 में १८ मील दूर) रखा था । गुप्त नाम्द पक्षे पतन
 जोनेके बज्रमो राजावोंने अपना पश्चिकार अर्ध तत्र
 बढ़ाया पीर ३०० तथा ३२० ई० को काठियावाड़में

बाबरा और मीड़ पबिह होता है। जिमबडो और काठियावाडके पूर्वोय समुद्र तटकी भूमिमें खाद काटना नहीं पड़ती। जन्मो और मग बहुत होती है। चींचके बिदे कई ताकाब बनाये गये हैं।

काठियावाडमें जोड़े बहुत अच्छे होते हैं। गौरको गाय भेमें बड़ी दूध देनेवाली है। मेड़ोंका खन, दुई और पतान बाहर भेजा जाता है।

गौरमें १५०० वर्षमीलका जगल है। बांजाले और रंजालमें खंजलके बिदे भूमि निर्धारित की गई है। भावनगर, मोरबी, मोहाल और मानाबडारमें बहुत जमा है। भावनगरमें होहार और घामके बाग बनाये गये हैं।

काठियावाडमें पत्थर अच्छा होता है। प्रधान धातु सोडा है। पक्षी बरछा और लघुभाण्डियों कोडा मछला जाता था। वीरबन्दरके निबट की पत्थर निकलता, यह महान बनानेके बिदे बम्बईमें बहुत बिकता है। न्वागनरके पास अच्छी खाडीसे अच्छा मीती निकलता है। कुछ मीती मेराई और बांचके पास जूनागढ़ और भावनगरमें भी मिलते हैं। मानरोल और लीकमें कुछ लाल मृदा होता है।

काठियावाडका देय जमी है। दुईका जपडा चीनी और शुद्ध बाहरये रंगाले हैं। सक्के भी खई बना लो गयी हैं। १८६१ ई की यहाँ कीई सक्क न सी।

१८८० ई० को देगो राज्की जपये यहाँ रेल लकी। बम्बई बडोदा मध्यभारत रेलकी कम्पनी १८८२ ई०को पहले पक्ष काठियावाडमें रेल ले गयी थी।

१८१३ १४ ई० को यहाँ बड़े बड़े लकी खुई निबल पड़े थे। लकीमें फसलकी बड़ी जालि पड़ जायी। १८८८ १८९२ ई०को काठियावाडमें और दुर्मिष पड़ा था।

१८२२ ई०से बम्बई गवर्नमेंण्टके पचीन लोकटि कल पत्रण्ट काठियावाड प्रासन करी ली। १८०३ ई०को लन्ने गवर्नरके पत्रण्टका पद मिला। यहाँ सेकड़ों पक्षताल खुसे हैं।

काठो (बि० ली०) १ पर्यायविशेष, एक तरङ्गका लीन। इधमें काड लगता है। २ लीसडोल, डांचा। ३ दियासलायी। ४ काठका म्यान। (बि०) ५ काठियावाड सम्बन्धीय।

काटू (बि० पु०) वृक्षविशेष एक वीदा। यह कटुसे भिन्नता है। जिमालयके पक्ष गीत खानमें इसकी खवि लो जाती है। काटूका शाक भी बनता है।

काटेरखि (घ० पु०) एक जपि।

काटेरखीय (स० ति०) काटेरखिरिदम् काटेरखि ह। काटेरखि जपि सम्बन्धीय।

काठों (बि० पु०) शान्तिश्रेय, किसी बिन्धका धान। यह पञ्जाबमें लपजता है।

काठोडुवर (घ० पु०) काठडुवरिका, काठगुकर।

काड (घ० पु० = Cod) मन्थविशेष, एक मन्थनी। यह उत्तर-समुद्रमें रहता और न्यूफाउण्डलैण्डके बिनारे पबिह मिलता है। अमेरिकाके सुक राण्यमें पटकाण्डिक मन्थामरके तीर भी एक प्रकारका काड होता है। यह मन्थ तीन बयमें बढ़ कर पूरा निकलता है। इसका टेम्प ३ फीट और परिमाह ३ से ८ घेर तक रहता है। काडका मांस बककारक है। इससे मसेलीका तेल (Cod liver oil) निर्धन मनुष्योंको सिधारी है।

काठना (बि० लि०) १ खीचना, निचानना। २ प्रकारका रंग, रीचाना। ३ बिन्नकारी करना, सेकपुटा बनाना। ४ लख सेना लक्ष करना। ५ पकाना, उतारना, खानना।

काठा (दि० पु०) छाप जोगंदा लवालो हुयी दना।

काच (घ० पु०) कचल एक चकूमिमीलति, जप बम्। १ काच, लीस। (ति०) २ एक लक्षुमिण्ड, लाला, बिसेके एक लो पांच रई।

काचकीय (घ० पु०) कपोतमेव, एक कपुतर। यह कपाय, खानुनवच और गुह होता है। (ठ०)

काचल (घ० ली०) काच जोनका माय, खानापन। काचमाय (घ० पु०) त्रिभाग, चार दिखमें तोन दिखा।

काचमृति (घ० पु०) विषाचकपी एक यल। यह कुदरेके एक पशुवर रई। नाम सुमतोक था। खून-

शिरा नामक किसी राजसके साथ इनका बन्धुत्व रहा। कुवेरने उसका साथ छोड़नेकी कृपा। किन्तु यह बन्धुत्वके अनुरोधसे उसका साथ छोड़ न सके। इसीसे कुवेरके अभिशाप वश इन्हें पिशाच योनिमें उत्पन्न हो काणभूति नामसे विन्ध्याटपी पर कुछ दिन रहना पड़ा। फिर दीर्घलङ्का नामक अपने भ्राताकी चेष्टा पर पुष्पदन्तके मुखसे इन्होंने महादेव कायित हृष्ट कथा सुनी और मात्स्यवान्के निकट उसे प्रयाग करने पर पिशाचयानिसे मुक्ति मिली। (कृपाकरित्-सार)

काणा (सं० स्त्री०) १ काकोली, एक ऊँची वृष्टी। २ काकिनो, घुँघची। ३ पिप्पली, पीपल।

काणाट (सं० त्रि०) कणादस्य इदम, कणाद-अण्। १ कणादप्रणेत (शास्त्र)। इसे वैशेषिक वा श्रौतलूक कहते हैं। कृपाद देखी।

२ कणाद-सम्बन्धोय।

काणादामोदर—बङ्गाल प्रान्तके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदर नदीकी एक शाखा थी। किन्तु आजकल इसने दामोदरको छोड़ दिया है। इसीका निम्नांश काणसीना कहलाता है।

काणानदी—बङ्गालके हुगली जिलेकी एक नदी। पहले यह दामोदरका प्रधान भाग थी। किन्तु अब लुप्त होत व्यतीत होर कुछ भी नहीं। वर्धमानके दक्षिण सप्तोमा-वाटके पास वर्तमान दामोदरसे यह पृथक् हुई, फिर दक्षिणामिमुख जा घिया नदीसे मिली और हुन्ती नदीके नामसे नईसरायके निकट भागीरथीमें गिरी है। इसी नदीमें दामोदरका जल था पहुंचता है।

काणुक (सं० त्रि०) कण द ह्यो उक्त्वा। १ कान्त कमनीय, चाँदने लायक। २ प्राकान्त, दवाया हुआ। ३ पूर्ण, भरापूरा। का. क देखी।

काणुक (सं० पु०) कणति शब्दायते, कण उक्त्वा मन्निभ्याम्कोकपो। उक्त्वा ३२।

१ वायस, कौवा। २ कुकट, सुरगा। ३ हंसभेद। ४ कण्ट, एक पत्ती।

काणिय (सं० पु०) काणायाः अपत्यं पुमान्, काणा टक। १ एक चण्डोनाका पुत्र कानी औरतका लडका। २ काकशावक, कौवेकावच्चा। (त्रि०) २ काण, काना।

काणियविध (सं० स्त्री०) काण्येयाना विपयो देयः, काण्येय-विधन्त। भोरित्तयेत्, कर्णादिभ्यो विष्णु-भ्यः।

पा ३। २। ३५।

काण्योका विद्य वा देग।

काणेर (सं० पु०) काणायाः अपत्यं पुमान्, काणा टक। उक्त्वा ३। पा। ३। १३।

१ एकनेत्र स्त्रीका पुत्र, कानीका लडका। २ काक-शावक, कौवेका वच्चा। (त्रि०) ३ काण, काना। काणोनी (सं० स्त्री०) १ अविवाहिता कन्या, वेव्याह्री नडकी। २ व्यभिचारिणी, छिनाल।

काणोनीमात (सं० पु०) काणोनीमाता यस्य, वधुव्री० १ अविवाहिता स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न पुत्र, वेव्याह्री औरतका लडका। २ व्यभिचारिणीका पुत्र, छिनालका लडका।

काण्डकमर्दनिक (सं० त्रि०) कण्डकमर्दनेन निर्हु-त्तम्, कण्डकमर्दन-ठक। निर्हुते षष्ठ्यादिभ्यः। पा ३। ३। १२। कण्डक वा शत्रु मर्दन द्वारा सन्पादित, जो कांटों या दुश्मनोंके कुचलनेसे चाँसिन हो।

काण्डकार (सं० त्रि०) कण्डकारस्य अवयवो विकारा वा, कण्डकार-अण्। प्रावरित्तादिभ्योऽण्। पा ३। ३। ५५। कण्डकारके काष्ठसे निर्मित, जो किसी कंटीले पेडकी लकड़ीसे बना हो।

काण्डेविद्धि (सं० पु०) कण्डेविद्धस्य ऋप्रेः अपत्यं पुमान्, कण्डेविद्ध-एल्। कण्डेविद्ध नामक ऋषिके पुत्र।

काण्ड (सं० पु० स्त्री०) कण्डि-ड दीर्घश्च। १ दण्ड, छड। २ नाल, डाल। ३ वाण, तीर। ४ शरहत्त, रम-सर। ५ पशु, घोडा। ६ कई एक जातीय वस्तुका एकत्र समावेश, ढेर। ७ परिच्छेद, वाव। ८ अक्षर, मौजा। ९ प्रस्ताव। १० जन, पानी। ११ लणादिका गुच्छ, घासका गुच्छ। १२ तरुप्रकाण्ड, पेडका तना। १३ निर्जनस्थान, सूनी जगह। १४ झाडा, चापलूसी। १५ व्यापार, काम। १६ पर्व। १७ हन्त, बोडी। १८ प्रह्लोठ हत्त, एक पेड़। १९ एक सन्धिके निकटसे अन्य सन्धि पर्यन्त दीर्घ स्थिति, लम्बी हड्डी। २० विभाग, महकमा। २१ गुप्तस्थान, पोशीदा जगह। काण्डक (सं० पु०) बालुकककंटी, एक ककड़ी।

काण्डकटुक (सं० पु०) काण्डे कर्तावा कटुकः, ०-तत् ।
 कारवीरक, करीका । कम्पेइ ईको
 काण्डकण्ड (सं० पु०) १ पणामार्गं कण्ड, कटकीरेका
 पैङ् । २ खेतापामार्गं, सपेदे कटकीरे ।
 काण्डकण्डय कण्डकण्ड ईको ।
 काण्डकण्डक, कण्डकण्ड ईको ।
 काण्डका (सं० स्त्री०) १ करालत्रिपुटा, त्रिसो
 विस्त्रवा घान । २ वायुकोकबंटी, एक ककरो ।
 ३ पञ्चाङ्ग, कोको ।
 काण्डकाण्डक (सं० पु०) काण्डक्य ग्रहचक्र,
 काण्डमिष काण्डं यज्, काण्डकाण्ड कप् । १ काम-
 टच । २ बटो घञ्, वेरका पैङ् ।
 काण्डकार (सं० स्त्री०) काण्डं कृत्यं किरति दीर्घतया
 कृत्विपति, काण्ड क्क घञ् । १ गुवाक, सुवारो । (पु०)
 काण्ड वाक् करोति । २ वायुनिर्माता, तीर
 बनानेवाका ।
 काण्डकीर, कण्डकार ईको ।
 काण्डकीरक (सं० पु०) काण्डे कृत्यं कीरकमिष
 यज् काण्डकीरक कण् । कीरकद्रुम, कीरका पैङ् ।
 काण्डकुण्ड (सं० पु०) एक कृत्वि ।
 काण्डक्रेट (सं० स्त्री०) धक्क, खराव ।
 काण्डगुङ्ग, कण्डकण्ड ईको ।
 काण्डगुण्ड (सं० पु०) काण्डेन गुण्डेन गुण्डयति
 वेदयति भूमिम् काण्डगुङ्गि घञ् । १ गुण्डक, एक
 पैङ् । २ त्रिभाराकच एक घञ् ।
 काण्डगोबर (सं० पु०) काण्डक्य वाक्क्य गोबर इव
 गोबरौ घञ्, मध्यपदनीपो कर्मका । नाराच नामक
 एक कोडमय पञ्च, काण्डेका तीर ।
 काण्डगड (सं० पु०) काण्डक्य विषयज् प्रकरचक्र
 वा पञ्च प्राणम् । काण्डप्राण, उपस्थित प्रकरच वा
 विषयमात्रके पञ्चका कोष ।
 काण्डघरहित (सं० स्त्री०) काण्डघरेच रहितः
 हीनः, इतत् । काण्डप्राणगुण्ड, को कीरं भी यात
 कर्मकता न हो ।
 काण्डधारी (सं० पु०) काण्डे तदभावायां चरति,
 काण्ड-चर-विनि । हचकी याकापर विचरच चरति

वाका यचो, को विदिया पैङ्गकी वाक् पर बुमतौ हो ।
 काण्डधिया (सं० स्त्री०) सर्पं वातिभेद, विषो
 विस्त्रवा घां ।
 काण्डप्राण (सं० स्त्री०) काण्डक्य प्रकरचक्र
 वा प्राणम्, इतत् । १ विषयप्राण, वातकी कर्मक ।
 २ प्रकरचक्रोच, सितसिसेका इत्य । ३ वाधारच प्राण,
 मामूनी कर्मक ।
 काण्डपी (सं० स्त्री०) काण्डेन पृथगेन नीहसिसेो,
 काण्ड-नी-क्रेट्-क्रीप पत्यम् । सूक्ष्मपर्वी कता एक वेत् ।
 काण्डतिष्ठ (सं० पु०) काण्डे कृत्ये तिष्ठ, ०-तत् ।
 किरततिष्ठ चिरायता ।
 काण्डतिष्ठक (सं० पु०) काण्डतिष्ठ कृत्ये कम् ।
 चिरायता ।
 काण्डवार (सं० पु०) काण्डं वारयति घञ्, काण्ड
 च्च विच घञ् । १ देयविधिय एक कृत्वि । (स्त्री०)
 स यमिषकोऽप्य, काण्डवार पञ् ।

किम्बन्धित्वादिभ्यो षष्ठी । घ मरए ।

२ काण्डवार देयवापो काण्डवार सूक्ष्मया
 रहनेवाका ।
 काण्डनी (सं० स्त्री०) १ रामभूमि, एक देव ।
 २ नामवहोयता पानकी वेत् ।
 काण्डनील (सं० पु०) काण्डे कृत्ये नीलः कीटवत्त्वात् ।
 कोत्र कोष ।
 काण्डपट (सं० पु०) काण्डे काहादिनिर्मितकृत्ये किरत
 पट, मध्यपदकोपी कर्मका । यमिका, परदा ।
 काण्डपटक, कण्डकण्ड ईको ।
 काण्डपतित (सं० पु०) नामराकविधिय, यदोके
 एक राजा ।
 काण्डपात (सं० पु०) काण्डका पतन वा नमन, तीरका
 गिराव या कङ्कन ।
 काण्डपुङ्ग (सं० स्त्री०) काण्डक्य वाक्क्य पुङ्ग इव
 पुङ्गो यथ्य । ग्रहपुङ्गा सरपौका ।
 काण्डपुष्प (सं० स्त्री०) काण्डात् कृत्यं कृत्यं पुष्प
 यज्, बहुप्रो० । क्रीपपुष्प, चीना ।
 काण्डपुष्ट (सं० पु०) काण्डं वाक् पुष्टं यज्, बहुप्रो० ।
 १ मज्जाकोष, घाव, सिकापो । २ वैष्णवपति । (स्त्री०)

काण्डं तरुस्कन्ध इव स्थूलं पृष्ठं यस्य । ३ स्थूलपृष्ठधनुः,
मोटी पीठवानो कर्मान । ४ महावीर कर्णका धनु ।
कांडभन् (सं० स्त्री०) काण्डे अस्थिखण्डे भग्नम्, ७ तत् ।
अस्थिभङ्गविशेष, हड्डियोंका टुटाव । यह वारह
प्रकारका होता है ।

कांडभङ्ग (सं० पु०) अस्थिभङ्ग, हड्डीकी टूट ।

कांडमध्या (सं० स्त्री०) काण्डवल्ली, एक वेल ।

काण्डमय (सं० त्रि०) वेंतका वना हुआ ।

काण्डरुहा (सं० स्त्री०) काण्डात् छिन्नस्कन्धात् रोहति,
काण्ड रुह-क-टाप् । कटुकी, कुटभी ।

काण्डार्थि (सं० पु०) काण्डस्य वेदविभागस्य ऋषिः
यद्वा काण्डेषु, एकजातीयक्रियादिसमवायेषु ऋषि
विचारकः । किसी देवकाण्डके अध्यापक एक मुनि ।
पूर्व मीमांसाशास्त्रके प्रणयनसे क्रियाकांडके विचारक
जैमिनि, उत्तर मीमांसारूप वेदान्तशास्त्रके प्रणयनसे
ज्ञानकाण्डके विचारक वेदव्यास और भक्तिकाण्डके
प्रणयनसे भक्तिकाण्डके विचारक शांडिल्य ऋषि
'काण्डार्थि' कहते हैं ।

कांडनाव (सं० त्रि०) काण्डं सृनाति, काण्ड-ल-अण् ।
वृक्षस्कन्धका छेदनकारक, पेडकी डाल काटनेवाला ।
कांडवल्ली (सं० स्त्री०) कारवेल्लीलता, डांटे करलेकी
वेल । यह दो प्रकारकी जाती है—त्रिधारा और चतु
धारा । यह कटु, तिक्त लघु, सर, पित्तल और कफ,
गुल्म, लूता, दुष्टव्रण, घ्नोरोदर, अग्निमान्द्य, शूल,
वात तथा मन्सस्तम्भ नाशक है । त्रिधारा सर, लघु,
अग्निदीपन, रुच, लघु, मधुर और वात, कृमि, अर्थ
तथा कफनाशन होती है । चतुर्धारा अति लघु और
भूतोपद्रव, शूल, आघान, वात, तिमिर, वातरक्त और
अपस्मार नाशक है । (वैद्यकनिघण्टु)

काण्डधान् (सं० पु०) काण्डः शरः प्रहरणतया
अस्वस्य, कांड-मत्तम् मस्य वः । कांडोर, तीरन्दाज ।
काण्डशरियो (सं० स्त्री०) काण्डान् संग्रामापतितान्
वाणान् धारयति स्मरणादेव इति शेषः, काण्ड-ह-णिच्-
षिभि-हीप् । दुर्गा ।

“महामत्तपटारोपसंयुक्ते भरवात्रिनाम् ।

करवाहायवे वावान् वेद वा काशशरियो । (शिरोपुराण ३५ ५०)

काण्डवीणा (सं० स्त्री०) काण्ड इव स्थूला वीणा,
मध्यपदलोपी कर्मधा० । चंडाक्षवीणा, वेंतोका वना
एक वाजा ।

काण्डगाथा (सं० स्त्री०) १ महिषवज्रो, एक वेल ।
२ सीमवल्ली, एक लता ।

काण्डसन्धि (सं० पु०) काण्डस्य स्कन्धस्य सन्धिः
मेहनस्थानम्, ६-तत् । अन्धि, गांठ ।

काण्डस्युष्ठ (सं० त्रि०) स्युष्टं गृहीतं काण्डं येन,
निष्ठान्तत्वात् परनिपातः । शम्भाशीव, हथियारके
सहारि अपना काम चलानेवाला ।

कांडहिता (सं० स्त्री०) लोत्रवृक्ष, लोघका पेड ।

कांडहीन (सं० स्त्री०) कांडेन स्कन्धेन हीनम्, ३ तत् ।
१ मद्रमुस्ता, एक प्रकारका मोया । (पु०) २ लोघ,
लोघ ।

कांडा (सं० स्त्री०) सुपत्नी, मूसर ।

कांडानुक्रम (सं० पु०) कांडस्य अनुक्रमः । तैत्तिरीय
संहिताके कांडसमूहका सूचीपत्र ।

कांडानुक्रमणिका (सं० स्त्री०) कांडस्य अनुक्रमणिका ।
तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र ।

कांडानुक्रमणी (सं० स्त्री०) कांडस्य अनुक्रमणी
अनुक्रमणम् । तैत्तिरीय संहिताका सूचीपत्र ।

कांडारोपण (सं० स्त्री०) एक माह्वस्य क्रिया । देवमूर्तिके
चारो और चार कांड (तीर) काट कर लगानेसे यह
क्रिया सम्यक् होती है ।

कांडाल, काण्डो लक्षो ।

कांडिक (सं० पु०) काण्डिका देशो

कांडिका (सं० स्त्री०) कांडः गुच्छः माहुष्येन
अप्यास्ति, कांड-ठन्-टाप् । १ लह्ना नामक धान्य-
विशेष, एक प्रनाज । २ अलावु, लीको । ३ पलाशीलता,
एक वेल ।

कांडिनी (सं० स्त्री०) हरित शुंडीलता, एक वेल ।

कांडी (सं० त्रि०) कांडः गुल्मः प्रागख्येन अस्त्रस्य,
कांड इनि । प्रगस्त गुल्मयुक्त ।

काण्डो--मिहलकी मध्यवर्ती काण्डो नामक अश्वि-
काका प्रधान नगर । यह अक्षा० ७° १७' उ० और
देशा० ८०° ४८' पू० पर अवस्थित है ।

आयक्षोका प्राचीन नाम शिवशैलपुर है। पूर्व-
कालको सिंहजकी राजा यहाँ राजत्व करते थे।
१८१३ ई० को मयदा महा नदीरा नामक खानमें
राज विक्रमराज सिंहकी माय चर्मरौबोंका एक मुठ
हुवा। उस मुठमें सिंहजकी राजा पराजित होर बन्दो
हुये। फिर चर्मरौबोंने आयक्षी अधिकार किया था।
तबसे आयक्षी चर्मरौबोंके अधिकारमें है।

यहाँ आयक्ष जातिका नाम है। यह पहाड़ पर
रहते हैं। सब बलवान् धूमकाय होर साहसी हैं।
अधिकार्य प्राय बीह चर्मरौबोंको हैं। फिर भी
चर्मरौबोंके पाने पीठे किये बिनीके ईसाई धर्म
परबल्यन किया है। पहाड़े इनमें बहुविवाह यथैव
प्रचलित था। १७० जना एक स्त्रीका पाचिपहच
कर सकते थे। यन्तान वज्र ज्ञातवोंमें बड़ेहकी जो
पिता समोहन करते थे। मुठप चपनी मनोमत बहु
स्त्री पहच कर सकते था। ऐसा प्राय मुठपके प्रति
स्त्रीका अनुग्रह होनेके होता था। स्त्री यदि पतिको
जे चपने पिठपहचमें रहे तो चपर ज्ञाताको भाति
पिठसम्पत्ति पर अधिकार मिले। बिन्दु पतिको
चपने पूर्व विधवाका पालय छोड़ पाना पड़ता है।
फिर यदि स्त्री जाकर ज्ञानीके यज्ञमें रहे, तो उसका
पिठसम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं; बिन्दु पतिपर
उसका कार्यत्व चलता है। १८३३ ई० के चर्मरौब
नबरमैष्ट्य कायध जातिकी कुपया ठठानेको सिद्धित
हुयी है। चर्मरौबी स्त्रीपुत्र मत जोरमें परस्पर विवाह
बल्यन किरन कर सकते हैं। बिन्दु यदि विवाह-
महर्षि ८ माह मध्य स्त्रीके सुवादि है, तो पूर्व पति
उस पुत्रको मीता होर उसका मरत्व पावच करता
है। निरु ईकी।

आयक्षोर (सं० पु०) काय्ठ 'खाम' चप्टारण, बांड ईरन्।

आयक्षोरकीधो। अ ३२१११।

१ पयानाग, अट्टोरा। २ कारवहो जता, करैनेकी
ईक। इनका संकलन पर्याय—बांडकटक नामा
-विद्वान, पट, पयकांड स्त्रीमन्त्री, कारवहो होर
कुवांडिका है। राजनिबन्धके मतसे यह अट
तिष्ठ, अष्ट, कारव होर दुष्टकच, जूता-विद्य, मुठ,

बहट, डोका शून तथा मन्दाग्नि विनायक होता है।
बांडोरा (सं० स्त्री०) बांडोर टापू। १ मखिण्ड, मंजीठ।
२ कारवैकक, करैला। ३ पयनछना, एक बेल।
बांडोरी (सं० स्त्री०) बांडोर डीपू। बाताप ईकी।
बांडिपु (सं० पु०) बांडि इपुरिव। १ खेन इपु बहिर
खण। भावप्रकाशके मतसे यह पातयसोपन होता है।
२ अण्य इपु बाठी काण। ३ कायटकमेद एक समी
पास। ४ कोबिकावपुष, तासमखानेका पैड़।

बांडिरी (सं० स्त्री०) बांडि रोबाकारं पुत्र्य रिते प्राञ्चोति,
बांडि-रैर-पयु डीप। नामहस्ता उच। नावको ईकी।
बांडिहवा (सं० स्त्री०) बांडि रोहति, बांडि-रह
क-टापू। अट्टोको, अट्टोकी।

बांडोस (सं० पु०) बंडान कावे पच। १ बांडका
टीकरा। २ अट्टु-छट।

काराव (सं० पु०) कारावण्य चपत्य पुमान्, काराव पयु।
१ काराव चर-दिषि मुत्र। २ काराववयीयके ज्ञान।
३ यत्रवेदकी एक माया। ४ कारावद्वष्ट सामवेद।
(सि०) १ कारावसम्पत्तीय।

कारावह (सं० स्त्री०) कारावेन दुई नाम, काराव मुक्।
कारावद्वष्ट सामन्वियेय।

कारावपायो (सं० पु०) वेदकी कारावपायाका
चमुयायी।

कारावायन (सं० पु०) काराव पच पच। १ काराव
संघीय शिरोक्ष प्राचीन अवि। २ अंत होर यष्टुल्लके
रचयिता एक अवि। ३ कारावसंघीय राजा। बिनी
समय यह वय भारतवर्षमें राजत्व रचता था।
ब्रह्म यह, बिन्दु मन्दा तथा भागवन पुराणके मतसे—
कारावसंघीय महामति बहुदेवने यष्टुव यीव येप नृपति
दिवभूमिको मार राज्य पावन किया।

ब्रह्मावहपुराणमें कहा है,—

“चरिरी पदुईपु गाम्बरावर्षिं वरन्।
दिवर्षिं मदीवच वर पु नरिना वर ।
अविचरि वना पाना वर वनाप्यनच वः ।
दुर्बिना वनकच पदुईपु अविचरि ।
अविच वारन वना पचकालवकी वर ।
ववनी वर वरपु, अविचरि वना वर ।

चत्वारः शुद्धभक्त्याने शुभा कारावायना विज्ञा ।
भाष्या प्रणतसामन्तायत्वारिंशद्य पद्य च ॥
तेषां पर्यायकाद्यै तु शुभोऽन्धोऽपि भविष्यति ।
कारावायन सप्तोद्भूत्य सुशर्मां प्रसज्य तम् ॥”

मत्स्यपुराणमें भी लिखा है,—

“अमात्यो वसुदेवस्तु प्रसज्य स्यात् ॥ ११
देवभूमिमज्जोत्थाय श्रीशत्रुभविता शुभः ।
भविष्यति समा राजा नय कारावायनो शुभ ॥ १२
भूमिमिय सुतन्वत्तु चतुर्दश भविष्यति ।
नारायणः सुतन्वत्तु भविता द्वादशैव तु ॥ १३
सुशर्मा तन् सुतयापि भविष्यति दशैव तु ।
इत्येते शुद्धभक्त्यास्तु शुभाः कारावायना शुभा ॥ १४
चत्वारिंशत्पद्यै चैव भोषात्तोर्मा वसुन्वरात् ।
एते प्रणत सामन्ता भविष्या धार्मिकाय वै ।
शेषां पर्यायकाद्यै तुऽभिमिरात्मान् गमिष्यति ॥” १५

(मत्स्यपुराण १८१ च०)

उक्त ब्रह्मण्ड और मत्स्यपुराणके बचनानुसार समझते कि वसुदेव प्रथम शुद्धराज देवभूमि के अमात्य थे। पीछे उन्होंने अपने प्रभुको मार राज्य लिया। उनके वंशीय राजा ‘शुद्धभृत्य’ नामसे भी प्रसिद्ध हुये। ब्रह्मण्ड, मत्स्य और विष्णुपुराणके मतसे कारावायन राजावर्षका राजत्वकाल सब मिलाकर ४५ वर्ष था। उसमें वसुदेवने ८, वसुदेवके पुत्र भूमिमित्र वा भूमिमित्रने १४, भूमिमित्रके पुत्र नारायणने १२ और नारायणके पुत्र सुशर्माने १० वर्ष मात्र राज्यशासन किया। किन्तु श्रीमद्भागवतका देखते काराववंशीय राजावर्षका राज्य ३४५ वर्ष चला जा। यथा,—

“युक्तं इत्या देवभूमिं कारावोऽमात्यस्य कामिमतम् ।

सूतं करिष्यते राज्यं वसुदेवो महापतिः ॥ १८

तस्यैपुत्रस्तु भूमिवत्सस्य नारायण सुत ।

कारावायना इमे भूमिं चत्वारिंशद्य पद्य च ॥

शतान्निक्षीपि सोऽप्यस्मि वर्षायाश्च कलौ युगे ॥” १८

(भागवत, ११ स्क० १ च०)

पाश्चात्य पुराविदोंने कारावायन राजावर्षका शासनकाल इस प्रकार स्थिर किया है,—

• भागवत और विष्णुपुराणके मतसे ‘देवभूमि’ नाम था।

वसुदेव	ख्रिष्टपूर्वाब्द	७६	से	६१
भूमिमित्र	”	६१	से	५३
नारायण	”	५३	से	४१
सुशर्मा	”	४१	से	३१

(R. Sewells Dynasties of Southern India, p.7)

सुशर्माको मार उनके किमी अन्धजातीय भृत्यने राज्य लिया था।[†]

कारावोपुत्र (सं० पु०) कारावस्य अपत्यं पुमान् काराव्यः स्त्रियां ङीप् यत्नोपः कारावी; काराव्याः पुत्रः ङ-तत् । काराववंशीय एक ऋषि ।

कारावीय (सं० त्रि०) कारावस्य इदम्, काराव-ङ्; काराववंशीयोसि सम्बन्ध रक्षनेवात्ता ।

काराव्य (सं० पु०) कारावस्य अपत्यं पुमान्, काराव-यञ् । १ कारावपुत्र । २ काराववंशीय । ३ काराव सम्बन्धीय ।

काराव्यायन (सं० पु०) काराव्य-फक् ।

यत्नोपः । पा शा० १०१ ।

काराववंशीय ।

कात् (सं० अथ०) कुक्षितं अतति अनेन, कु-अत क्षिप् कोः का-देशः । तिरस्कार, फटकार ।

“यन्मर्देयंमतेन युधः सदधि कात्कृतः । (भागवत ६।१०।८)

कात (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, एक कौची । इससे भेड़ोंके बाल कतरै जाते हैं । २ सुरगेका कटा ।

कातना (हिं० क्ति०) कार्पाससे सूत्र प्रस्तुत करना, रूईसे सूत बनाना । कातनेका यंत्र रचंटा कहाता है ।

कातत्र (सं० क्ती०) कु ईषत् तंत्रं अस्य, कोः कादेशः । कलाप व्याकरण । शर्मवर्मा इसकी सङ्कलनकर्ता थे ।

वृहत् कथासारमें इस व्याकरणके सङ्कलन सम्बन्धपर लिखा है,—एक समय कार्तिकेयने शर्मवर्माके प्रति अनुग्रह कर दर्शन दिया । कुमारको कृपासे शर्मवर्माके मुखमें सरस्वतीका आविर्भाव हो गया । फिर कार्तिकेयने छहो मुखसे ‘सिद्धोवर्णसमान्नायः’ सूत्र उच्चारण

† उस अन्धजातीयका नाम ब्रह्मण्डपुराणके मतसे ‘विभुक्त’ था।

किन्तु मत्स्यपुराणमें ‘शियक’, विष्णुपुराणमें ‘शियक’ और भागवतमें ‘इषक’ लिखा है ।

बिबा बा। गर्भवर्मा मो सुनते हो उसका परवर्ती सुन पड़ने लगी। कार्तिकेयने इससे समुद्र को गर्भवर्माको उक्त व्याकरणप्रचरण करनेके लिए आदेश दिया और 'कातर' तथा 'कात्प' नाम निर्दिष्ट किया। प्रचलन हुआ। त्रिसोवनदापने 'कातत्रपञ्चिका' नाम्नी एक टीका बनाई है।

कातर (स० पु०) क अर्ध पातरति, क वा ल पपु। १ मञ्जुविशेष एक मञ्जुली। यह मङ्गल,गुह्य और त्रिदोषघ्न होता है। २ ललितपत्र।

३ एक ऋषि। (सि०) ४ व्याकुल चक्रवाया हुआ। ५ मोत, डरा हुआ। ६ विषय, काबार। ७ चक्र, चावाँडोका।

कातर (हिं० पु०) १ कवड़ा। (श्री०) २ शोचनका तपूता। यह शोचनको कमरमें लगता और चारों ओर चला करता है। शोचन रीतिवाला इसी पर बैठ कर वेस हाँकता है।

कातरता (सं० श्री०) कातररूप भाव, कातर तत्त्व। १ व्याकुलता, चक्रवाट। २ मोहता, डरपीडपन। कातराचार (स० पु०) दुःखका एक प्रकार नामको एक भाव।

कातराचक्र (सं० पु०) कातररूप ऋषेरपञ्च पुमान्, कातर-पञ्च। कातर ऋषिके पुत्रादि।

कातररत्न (स० श्री०) कातररूप रत्न, इ-तत्त्व। कातर रत्निका नाम, डरपीडको बात।

कातर्य (स० श्री०) कातररूप भाव, कातर चक्र। कातरता, डरपीडपन।

कातक (सं० पु०) कातर एव रक्षकः। १ मञ्जु-विशेष, एक मञ्जुली। २ एक ऋषि।

कातकायन (स० पु०) कातकपुत्र ऋषेरपञ्च पुमान्, कातक-पञ्च। १ कातक ऋषिके पुत्रादि। २ मत्पुत्र विशेषका वचन।

काता (हिं० पु०) १ चाकू, डुरा। इससे बाँस काटते या छोड़ते हैं। २ सुन, डोरा।

काताचारी (हिं० श्री०) कदाचारी एक काँडी। यह यतको रचती और कदाचारी जैको चरनोपर लगती है। इसी पर तबुते कड़वे हैं।

काति (स० श्री०) १ प्लव, तारीफ़। (सि०) २ पम्बिबावी, काङ्किमन्ड।

कातिक (हिं०) चर्चक शब्द।

कातिकी (हिं० श्री०) कार्तिक ऋतुा पूर्वमा, कार्तिक सुदी पूरणमासी, कतकी। चर्चको शब्द।

कातिव (स० पु०) तिदिवार, तिखनिवासा।

कातिव (स० पु०) इन्ता, मार डालनेवाला।

पातो (हिं० श्री०) १ खैली, कतरनी। २ पाक लुरी। ३ छोटी तलवार।

कातीय (स० सि०) कात्यायनपुत्र इन्द्र, कात्यायन-क पञ्चो वा सुबु। १ कात्यायन सम्बन्धीय। (पु०) २ कात्यायनके ज्ञान।

कातु (स० पु०) क अर्ध धतति सातस्मेन यच्छति, क-धत-कम्। कूप, कुर्या।

काटक (स० श्री०) कृ कृषितं सुद्र वा टक को-कादिम्। १ रोडिकटक, एक श्वयम्बुदार वृक्ष।

कातोली (स० श्री०) शोचकसुप, एक घराब। मय, माय आदिके पिठके कथित सुप 'कातोली' कहताते हैं।

कातुलत (सं० सि०) पयमानित, वैश्वत किया हुआ।

कातुलेय (स० सि०) कतुलेरिन्द्रम्, कतुलि उचकम्। चन्द्रासिद्धी वचन। वा भाष्यर।

कातुलि-सम्बन्धीय, तोन छोटी बीसोके सम्बन्ध रखनेवाला।

कातुल्य (स० पु०) कतु-यदुल् काञ्च कम्। पम्बि विशेष। (निरुक्त १५२१)

कात् (सं० पु०) कातपुत्र ऋषिर्गोत्रापञ्चम्, कात-पञ्च। कात्यायन ऋषि।

कात्यायन (स० पु०) कातपुत्र गोत्रापञ्चम्, कात पञ्च पञ्च। १ पति प्राचीन ऋषिविशेष। यजुर्वेदीय तेजिरीय थारपुत्र (१३।३।२३), सवित्रायन थारपुत्र (८।१०) प्रायश्चित्तायन श्रोतसूत्र (१३।१।२३) रामायण एव पाणिनिकी पद्याभ्यायो (३।१।२८)में भी इनका नाम मिलता है। यह कात्यायन गोत्र प्रवर्तक समझ पड़ते हैं। अन्वया नगरवचन, १-५।१६ शब्द।

२ वर्मशाककारक एक मुनि। वर्मपत्रके पाठके

कई कात्यायनीका परिचय पाते हैं। उनमें विश्वामित्र-वंशीय, गोमिलपुत्र और सोमटत्तके पुत्र वररुचि कात्यायन ही प्रधान हैं। १म विश्वामित्र-वंशीय कात्यायन मुनिने 'कात्यायनश्रौतसूत्र', 'कात्यायन-गृह्यसूत्र', और 'प्रतिहारसूत्र' बनाया था। कात्यायन श्रौतसूत्रकी कोई-कोई 'कातीयश्रौतसूत्र' कहता है।

कात्यायन श्रौतसूत्रके १म अध्यायकी १म कण्डिकामें यह विषय लिखित है,—वेदवेदान्ताध्यायी सपत्नीक द्विज और रथकारका अग्निस्थापनादि कार्यमें अधिकार; अन्नहीन, स्त्रीव, पतित और गूटका अधिकार, निपाद एवं सूत्रधरका गावेषुक नामक चरुमें अधिकार, व्रतलङ्घनकारियोंका गर्दभयज्ञ नामक प्रायश्चित्तमें अधिकार, गावेषुक चरु तथा व्रतलङ्घनकारियोंके प्रायश्चित्तरूप गर्दभयज्ञकी लौकिकानिमें कर्तव्यता, गर्दभयज्ञमें कपालपर वृतदान न कर भूमि ही पर वृतदानका विधि, अग्निमें शुद्धिकारक होम न कर जलमें करनेका विधान, अन्यान्य आधारका अग्निमें ही करनेका विधि, गर्दभके त्रिन्द्रदेगमें प्रायश्चित्तप्रदान; यज्ञसमूह, विद्यारविषय, गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्निमें कर्तव्य वेदिक कर्म, प्रायश्चर्य अर्थात्—गृह्यसम्बन्धीय लौकिक अग्निमें स्मृतिविरहित कर्तव्य और मांसपाकके निषेधकी व्यवस्था। २य कण्डिकामें देवतागणके उद्देश्यसे द्रव्यत्यागरूप याग, यागलक्षण, अभावस्था और पौर्यमासी आदि शब्दका अर्थदोषक एक त्याग, उसका प्राधान्य, इस प्रकारणपठित अग्न्याधानसे ब्राह्मणोंकी दक्षिणा पर्यन्त कर्मसमूहकी अन्नता, इसीप्रकार प्रयाज तथा पूर्वाधार प्रभृति होमविधि, उसका अङ्गसमूह, होममें दण्डायमान हो वपट्कारप्रदान, यजति शब्दका अर्थ, उपविष्ट हो स्वाहाकार प्रदान, जुहोति शब्दका अर्थ, समुदाय कर्ममें ब्राह्मणका पौरहित्यविधि, चन्द्रियवैश्यागणके अवशिष्ट इविर्भाजनमें निषेधके लिये पौरहित्यमें निषेध, फल्लाममें अभिनापी होते काम्यकर्मकी अवश्य कर्तव्यता, अग्निहोत्रादि नित्यकर्मकी अवश्य कर्तव्यता, न करनेपर उसके दोषका विधान, दीक्षित व्यक्तिका सत्यवाक्य,

भूमितकमें शयन तथा ब्रह्मवर्षादि नियमकी अवश्य-कर्तव्यता, इच्छानुसार अनुष्ठान न करते गृहदाह एवं धनहानि प्रभृति कारणसे प्रायश्चित्तकी अवश्य-कर्तव्यता, यथाशक्ति नित्य कर्मसमूहका प्रतिपालन, काम्य कर्मका सर्वाङ्गरूपसे प्रतिपालन और कामना रहते भी काम्यकर्मका अनुष्ठान न करते जब वैदिक यज्ञसमुदाय सम्पन्न करनेकी सामर्थ्य हो; तभी करनेका विधि। ३य कण्डिकामें—ऋक्, यजुः, साम और त्रैप भेदसे चार प्रकार मन्त्र, ऋक् प्रभृतिका लक्षण, यजुके जिस परिमित पद उच्चारण करते पदसमूहकी आकाहा शून्य हो, कर्मकालमें उसी परिमित वाक्यका प्रयोगविधि, जहाँ पठित पदसमूह द्वारा यजुः आकाहा शून्य न हो, वहीं यथायोग्य पद अध्याहार कर अथवा पूर्व पठितपद संयुक्त कर आकाहाशून्य करनेका विधान, कर्मके आरम्भमें मन्त्र-प्रयोगविधि, यजुर्वेदीय मन्त्रसमूह ऐसे स्वरमें जिममें अन्य सुन न सके और ऋग्वेद एवं त्रैप मन्त्र उच्चैःस्वर से प्रयोग करनेका नियम, यज्ञिशब्दका कुगजाति-मात्र अर्थ, साग्निक ब्राह्मणकी होमगृहादि और वसुधारा होम प्रभृतिमें संख्याका कोई नियम न रहने जिस परिमित संख्यामें कार्यसिद्धि हो वही ग्रहण करनेका विधि, इधमवाहिवन्धनके लिये संनहन और विषम संख्या लक्षणमुष्टिका वह नियम, (संनहनमें भेट, यथा—

१ उत्तरदिक्को वहिर्भागमें अथभाग स्थापनपूर्वक वरमाकी भांति दृढ रूपसे बन्धनकर बाहर मूलदेगमें अग्नि गोपनकर रखना चाहिये। इसको प्रागप्रसंनहन कहते हैं। २ पूर्वदिक्को वहिर्भागमें अथभाग स्थापनपूर्वक पहलैकी भांति बन्धनकर मूलदेगमें अग्नि क्षिपानेसे सद्गम संनहन होता है।) १८ या २१ हाथके पन्नाय काठखण्डकी इक्षु कहते हैं। किन्तु पन्नायके अभावमें वैवकाष्ठ, वैषके अभावमें गणिकारी, गणिकारीके अभावमें वंग, वंगके अभावमें यज्ञहुसुर और यज्ञहुसुरके अभावमें खदिर काष्ठ ग्रहण करनेका विधि, तीन इक्षकाष्ठ द्वारा परिधिपरिमाणकी व्यवस्था, अग्निसन्दीपनमन्त्रकी वृद्धिके अनुसार इक्षकाष्ठकी

सद्विद्या नियम रहते भी विद्यवृद्धि कार्यमें अग्नि सम्योपनमनाका उपास पाते इच्छावाहके उपास विविक्षा अभाव, अग्निअपवणके निये पूर्वोक्त इत्थ काठकी मन्था अपेक्षा अधिकसम्यक् इच्छा पावाइकता, इ चापयद्यप्ये ३८ इत्य परिमित पूर्वोक्त काठ द्वारा इच्छा करनेका विधि और यह इत्थ तीन प्रकार समझन नामक अन्वयवियेय द्वारा अंधधर्मकी प्रवृत्ती, अभावका और पीछमासीकी भेदकरण, सुतोक्त 'पाण्ड' मन्था अग्निविधि तथा प्रतिष्ठा अर्धे, सर्वविध कर्ममें अनुसक्त होते भी मार्ग पन्थके अनुसार पाइकनीय तथा दृष्टिवाग्निमें उद्धारकी पावय्यकता, किन्तु अन्य कार्यके निये उद्धार होने पीछे दूसरे आगमनुक्त कार्यके निये उद्धारकी अभावकता, (श्रीशिव त्रिस कार्यके निये उद्धार किया जाता, वह समाप्त होवे अग्नि फिर शीघ्रकालकी पट्ट पता है। इसीसे दर्श प्रशुति कार्यमें उद्भूत अग्निसे अग्नि होत होम सम्पादित होता है। किन्तु शौकिक ही आग्निसे फिर इच्छा अग्निमें पाइकनादि कार्य कर नहीं सकते।) जहाँ पीछमासीदि कार्यमें इच्छा पूर्वोक्त इच्छा विधि यज्ञका नियम होता, वहाँ प्रतियोगमें इच्छा पूर्वक अग्नि उद्धार कर सम्पादन करनेका नियम, अद्विष्टावृत्तिमित द्रव्यादि कर्षों अनुसक्त होने भी वहाँ उचको अर्थव्याता सूत्र अत्र 'युद्ध, युद्ध प्रशुति होम आचन द्रव्यका लक्षण, यज्ञकार्यमें उचके पाने आग्निकी प्रशुति और उत्तर अतोत पचविधान और उत्तर वैदिकाकार्यमें आत्मान एवं उत्तरके अन्तराका पहनियम। इन्हें अष्टिकार्य—विहित द्रव्यका अभाव होनेसे आभ्यर्चनके आरम्भका नियम, शिवाकार्य समूहमें प्रधान द्रव्यका अभाव होने भी प्रतिनिधि द्रव्यके उचके अनुष्ठानका विधि, आभ्यर्चनमें समुदाय पत्र अर्थवृत्ति होनेसे कार्य आरम्भ करनेका विधि फिर भी आरम्भके पीछे किसी प्रधान द्रव्यका अभाव होनेसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा उचका अभाव एवं असमाप्त कार्यके आत्मका नियम, शिवाकार्य आरम्भके पक्षसे या पीछे प्रतिनिधि द्रव्यका आयोगन करके, किन्तु आभ्यर्चनकी अर्थवृत्तिस्यता न रहते

प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा आरम्भ किया नहीं जाता; इतना ही अभावका भेदकरण एवं श्रुतिप्रोम दीक्षित मन्थे यरीर आरम्भार्थ पयपाम प्रशुति अतमें भी प्रतिनिधि विधान है। उच प्रतिनिधिमें अनेक विधीय नियम निर्दिष्ट हैं। द्रव्यके अभावमें तत्सदृश अन्य द्रव्यकी अल्पता को मातो है। देवात् वद द्रव्य भी नष्ट होनेसे उचको भाति अन्य प्रतिनिधि न मिलने प्रधान द्रव्यजातीय द्रव्य द्वारा प्रतिनिधि अल्पता करण आइये। श्रेष्ठ शोचिके अभावमें नौवार द्वारा कार्य आरम्भ करते देवात् को नौवार नष्ट हो गया, तो नौवार आतीर अन्य द्रव्यकी अल्पता न कर शोचिकी ही अल्पता करना पड़ेगी। इसी प्रकार जहाँ उच अथ शोचिका अभाव होगा, वहाँ उचका प्रतिनिधि युक्त शोचि माना जायेगा। किन्तु उचका नौवारकी अल्पता कर नहीं सकते। फिर जहाँ पुंनसद्रुक्त शोचि द्रव्य द्वारा विधान है वहाँ उचके न मिलनेसे शीघ्रमासुक्त शोका दुग्ध प्रदान करना आइये। किन्तु पुंनसद्रुक्त शिवो प्रशुतिका पुंनस प्रदान करनेसे काम न चलेगा। इसी प्रकार समुदाय द्रव्यका प्रतिनिधि विवेचना करना उचित है। इस अष्टिकार्यमें श्रुतिपाठ, मन्थपाठ एवं अर्धविधिसे अभावानुसार पदार्थके अनुष्ठानका क्रम है। जहाँ पाठक्रम और अर्धविधिक्रम अभावका विरोध पायेगा, वहाँ पाठक्रम अर्थात् कर अर्धविधि क्रम किया जायेगा और वहाँ श्रुतिपाठ तथा मन्थपाठ अभावका विरोध दिखायेगा, वहाँ श्रुतिपाठक्रम छोड़ मन्थपाठके कार्य चलाया जायेगा। फिर बहु प्रधान द्रव्यका एकत्र प्रयोग विधान रहते किसी प्रकारके क्रम विभागीकी व्यवस्था न कर समुदायके प्रयोग करनेका नियम है। ६४ अष्टिकार्यमें अथवत्तवि ७ नष्ट होनेसे अथवत्तवि द्वारा कार्यसम्पादन, अथवादि द्विगता, मन्थ एवं प्रयाग अनुष्ठान प्रशुति विधानमूहके प्रतिनिधिका नियम, इत्यादि अथवत्त प्रशुति विधा- समूहके प्रतिनिधिका विधान, शिवो विहित अनुधि

▲ आदि आत्मार्थ यतीर इतिही अर्थवृत्ति करके है।
 † अथवत्तविही अभाव और अनुष्ठान करने है।

सदृश होते भी निरपह वस्तुके प्रतिनिधित्वका निषेध, त्याग तथा वपन प्रभृति एवं संस्कार कर्ममें यज्ञमानके प्रतिनिधित्वका अभाव, किन्तु पात्रग्रहण, हविर्दर्शन, अग्निस्थापन, न्यृहण और वेदवन्धनादि गुणकर्ममें यज्ञमानके प्रतिनिधित्वका विधि, पत्नीके पभावमें भी हविर्दर्शन, अन्नारम्भ और उपासन * प्रभृति गुणकर्ममें प्रतिनिधिकल्पना, यज्ञमानकर्मके साथ सम्बन्धवशतः प्रतिनिधिरूपसे कल्पित व्यक्तिके भी दौचाटि यज्ञमानधर्मका सम्पादनविधि, ब्राह्मणका ही यज्ञाधिकार, चतुरियवैश्याका अनधिकार, ब्राह्मण होते भी एक कल्प ब्राह्मणका अधिकार, किन्तु विभिन्न कल्पका नहीं, चतुरिय तथा वैश्याका गृहपतित्व अधिकार रहते भी यज्ञमें अधिकार नहीं। सहस्र वत्सर साध्य यज्ञ मनुष्यसाध्य है। क्योंकि यहाँ संवत्सर गण्डका सहस्र दिन मात्र सञ्चयविधि है। ६म कण्डिकामें जहाँ एकही फलकी कामनासे एक वाक्य द्वारा बहुसंख्यक प्रधान कार्यका विधान है, वहाँ समुदाय कार्यका एकत्र प्रयोग होता है। देग, काल, फल और कर्मादि समान रहते प्रधान कार्य-समूहका भाग उपयोगी आचार, प्रयाज और आच्य भाग पृथक्-पृथक् न कर एकत्र करनेका नियम है। किन्तु देग, काल वा तन्त्रभेद पढ़नेसे एकत्र कर्तव्य नहीं। एक द्रव्यमें अनेक कर्मका विधान रगनेसे प्रत्येक क्रियामें मन्त्रपाठ न कर केवल एक वार ही करनेका विधि है। किन्तु हविर्ग्रहण, कुगच्छद, कुगस्तरण और आच्यग्रहण कार्यमें प्रत्येक वार मन्त्र पढ़ना पड़ता है। आच्यग्रहण कार्यमें तीन वार मन्त्र पढ़ते और अवशिष्ट बार मौनी रहते हैं। दीक्षित व्यक्तिके अनेक दुःखप्रदर्शनमें एकवारमात्र मन्त्रपाठ विधि है। एक नदीके अनेक प्रवाह उत्तीर्ण होनेसे एक वार मन्त्र पढ़ते हैं। अनेक वृष्टिधाराका संयोग होते भी वर्षणकालमें एक ही वार मन्त्र पढ़ा जाता है। एक ही समय अनेक अमङ्गल दर्शनसे एकवार मात्र सूर्योपस्थापन करते हैं। विद्यामपूर्वक पुनः पुनः गमन करते समय अन्धेय दर्शन करनेसे एकवार

मात्र मन्त्रपाठ होता है। एक रात्रिके मध्य वारंवार निद्रादि कामकी अमङ्गल देखनेसे वारंवार मन्त्र पढ़ना पड़ेगा। ऐसे समय एकवार मन्त्र पढ़नेसे काम नहीं चलता। अप्रधानकालीन अङ्ग एकवार मात्र होता है, उसका प्रतिधान बदलना नहीं पड़ता। आधानादि कार्यमें केवल यज्ञमान ही नहीं, समुदाय पुरुष कर्त्ता है। फिर भी देवताके उद्देशसे द्रव्यत्याग प्रभृति आत्मकर्मसमूह यज्ञमानको ही करना और पुरुषयोनि मन्त्रसमूह जपना चाहिये। वपन अभ्यञ्जनादि संस्कार यज्ञमानका ही है। किसी किसी स्थलमें यह संस्कार पुरोहितका भी होता है। इन सकल कार्योंको छोड़ अन्य कार्य विशेष विधान रहते यज्ञमानको ही करना पड़ेगा। जैसे— यज्ञमान वसुधारा होम करेगा और पात्र सकल ग्रहण करेगा। तद्विन्न कार्य पुरोहित प्रभृतिका है। जैसे अध्वर्युका आध्वर्यव कार्य, होताका होत्रकार्य और उद्गाताका उद्गात्र कार्य। समुदाय कार्य यज्ञोपवीतधारीको करना पड़ता है। फिर समस्त कार्य पूर्वदिक् वा उत्तरदिक् कर सम्पादन करनेका नियम है। परिस्तरण एवं पर्युत्थनादि कार्य प्रदक्षिण क्रमसे और पित्रकार्य अपसव्य क्रमसे अर्थात् दक्षिणसे क्रमानुसार वाम ओरको करनेका नियम है। देवकार्यमें जहाँ पुनराहृति करते, पैत्र कार्यमें वहाँ एकही वार निवटते है। पैत्रकर्ममें दक्षिणदिक् प्रशस्त है। देवकर्ममें जो पूर्वदिक्को स्थापन करना पड़ता, पैत्रकर्ममें वक्ष समुदाय दक्षिणदिक्को स्थापन करना उचित रहता है। प्रधान द्रव्य विनष्ट होनेसे निकटस्थ अङ्गसमूहके साथ उसकी पुनराहृति करना चाहिये। उस कारणकामें विकल्प विधिस्थल पर एकही द्रव्यद्वारा कार्य सम्पादन करना उचित है। अष्टवहु विषय विहित रहते समुदायको ग्रहण करना चाहिये। यज्ञकालमें मन्त्रसमूह एक श्रुति स्वरसे प्रयोग करते हैं, संहितास्वर वा ब्राह्मणस्वरसे प्रयोग कर्तव्य नहीं। किन्तु सुब्रह्मण्य, साम, जप, नुस्क और यज्ञमान मन्त्र एक श्रुतिसे प्रयोग न कर संहितासे मिश्रते स्वरमें ही प्रयोग करना चाहिये।

* शीघ्रादि धारा जपन।

पादानमें विहित इतिपादिदत्ता विवक्ष्य कर्तव्य है, किन्तु समुदाय नहीं। पक्ष साधनकार्यमें धर्मशास्त्रादि कार्यका समुदाय करना पड़ता है। सर्वत्र गांधर्व्य तथा पादवनीय कार्यमें प्रदत्त कर पदस्य एवं पदस्य कर प्रदत्त कर लेते हैं। विहारको उत्तरदिक् समुदाय कार्य किया जाता है। उत्तरां ब्रह्म पौर यक्षमागका पासन विहारको दक्षिणदिक् कर्तव्य है। पासनइयके मध्य प्रथमतः यक्षमाग एक पासन पर विदिने मध्य पक्षका पदमाग संस्थापन कर बैठे, फिर ब्रह्मको बैठना चाहिये। पश्चिमिदिक्का प्राद्वय न रहते पक्षवर्गको यक्षुर्विहित धर्म सम्पादन करना कर्तव्य है, प्राद्वय रहनेसे पक्ष किया जाता है। इतिपादस्य द्रव्यसमूह केसे पर पर संव्यहोत होता, प्रदान धारणमें वेधे हो वह सक्षय द्रव्य पूर्व पूर्व सेना चाहिये। प्रतापनादि पश्चिमाध्य संस्कार गांधर्व्य पश्चिममें सम्पादन करती हैं। समुदाय कार्यमें ही इति प्रदान गांधर्व्य वा पादवनीयमें कर्तव्य है। संस्कार मूल्य घतमात्रको धान्य मन्दाका पक्ष समझना चाहिये। हत मन्दासे मध्यगत किया जाता है। द्रव्यविधिय कथित न रहनेसे सर्वत्र ही घृतद्वारा होम कर्तव्य है किन्तु विधीय द्रव्यका विधान होमिसे लघु द्रव्य द्वारा होम करते हैं। आत्माके ० इतिपाद पुरीय प्रह्व करना चाहिये। पूवक् प्राद्वय न रहते पादवनीय यक्षमें ही समुदाय वाग कर्तव्य है। किन्तु प्राद्वयको विभिन्नता प्राति प्राद्वयानुसार धान करना पड़ता है। ऐसा प्राद्वय न होवे एक बार मात्र पक्षोत द्रव्य द्वारा होम करते हैं। प्राद्वय रहनेसे प्राद्वयानुसार किया जाता है। ८म कण्डिकां—सकल स्य पर श्रोत्रि वा यव इतिरूप कल्पना करते हैं। समयके निदानस्य पर विधानानुसार कर्त्री पक्षी यव पीके श्रोत्रि पौर कर्त्री पक्षी श्रोत्रि पीके यव देना चाहिये। किन्तु प्राद्वयके मतके सर्वदा शिवल श्रोत्रि पाद्य है। इतिवक्ष्य प्रह्वका विधान रहनेसे प्रथम बार पुरोडाश चर्चके मन्दादेयके यक्षमागमें एक पञ्च

परिमित प्रह्व है। द्वितीय बार इतिके पूर्वमामके विधे हो नियममें प्रह्व करना पड़ता है। त्रिमंदि प्रभृति पर्वसमूहमें तीन बार इति प्रह्व कर्तव्य है। चतुर्थे प्रथम बार मन्दादेयके द्वितीय बार पूर्वमामके पौर तृतीय बार पञ्चामामके लेते हैं। जहां पाण्यमाग पक्षोसंधान, उपाययात्र पौर अग्निहोत्रादि होममें बार बार प्रह्वका विधि है, जहां त्रिमंदि प्रभृति का पक्ष बार प्रह्व किया जाता है। दक्षि दुष्का भी पवदान स्तूपद्वारा पञ्चहवर्ष परिमित प्रह्व करना पड़ता है। पुरोडायादि इतिके पवदानके प्रथम पाण्य एक बार ले पक्ष इति प्रह्व करना चाहिये। शेष बार फिर पाण्य किया जाता है। त्रिदिकान् होममें इतिप्रह्वके प्रथम पवदानकी प्रथमा एक बार बटा देते हैं। उपस्थाका कार्य एक बार करते हैं। उपरि देयमें अमिचारय दो बार कर्तव्य है। पवदेय पौर पवदान इति का प्रथमिचारय करना पड़ता है। एक कपाल पुरोडाश सर्वस्थानमें पाहुति देना चाहिये। “पक्ष्ये पतुमोहि” को भांति वाक्यसे चतुर्वी विमञ्जन्त देवतापद द्वारा पतुवचन करना पड़ता है। आवाचकके पीके जहां मेषावहकका अनुसन्धान करते जहां भी चतुर्वी विमञ्जन्त देवतापद रखते हैं। किन्तु आवाचकके पीके जहां मेषावहकका अनुसन्धान नहीं करना पड़ता, जहां द्वितीयान्त देवता पदप्रयोग करना चाहिये। प्रियसम्भ्यी पतुवचनस्यसमें द्रव्यके उत्तर पठो होती है। किन्तु दो प्रेषोका सम्भ्य रहनेके पठो नहीं सम्यो। जहां द्वि प्रयोगका विधान रहता कि नाम पक्षपर्वक इन्ने यजन करो, जहां इन्ने पदके परिवर्तमें लन्ने लन्ने नामोंका प्रयोग करना चाहिये। वपटकारके साथ पाहुतिप्रदानस्य पर वैदिके दक्षिण मायमें उत्तर पूर्व वा ईमान सुप पवस्थित हो वपटकारके पीके वा वपटकारके साथ पाहुति देते हैं। इन सकल धर्मोपर हतमिचित इति देना पड़ता है। उसका नियम है—प्रथम हतपाहुति, मन्दामें इति को पाहुति पौर पीके फिर हतको पाहुति प्रदान करना चाहिये। पक्षवा हत पौर इति पक्ष्य ही प्रदान करना पड़ता है। ९म कण्डिकां

• कर्त्तव्यी वपटकारका द्विती पौर कर पक्षका इति वक्ष्ये

—‘आग्नेयो षष्टकपालो भवति’ इत्यादि स्थान पर ऋत्विभक्ति विधिलिङ्ग बोधक समझी जायेगी। कर्तव्य कर्मके उपकरणका द्रव्यसमूह प्रथम कल्पना कर कर्मदेशस्थानमें स्थापित करना चाहिये। सर्वत्र ही उत्तर दिक्को क्षीम और पूर्व दिक्को प्रीवाधिन्यासयुक्त चर्मका आस्तरण प्रदान करते हैं। हविःसमूहके मध्य जो सकल द्रव्य पश्चात् पठित है, वह देश कालके अनुसार पश्चात् ही प्रदान करना पड़ता है। ग्रहणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे पूर्व और परपठित रहनेसे पर ही ग्रहण करते हैं। ऐसे ही अधिश्रयणादि कार्य पूर्वपठित रहनेसे दक्षिण दिक् और परपठित रहनेसे उत्तर दिक् स्थापन करना चाहिये। स्यासी, स्रुव और घृत दक्षिण हस्तसे गृहीत होने पर वाम हस्त द्वारा वेदका उपग्रहण किया जाता है। किन्तु उपभृत् प्रभृति द्वितीय द्रव्यका ग्रहणविधि रहनेसे वेदका उपग्रहण नहीं करते। घृत व्यतीत अन्य द्रव्य द्वारा याग करते स्फेनका उपग्रहण करना चाहिये। वेद वज्रादि द्वितीय द्रव्य न रहते कुश द्वारा उपग्रहण करना पड़ता है। स्रुक् ग्रहण करते समय स्रुक् और जुहू उभय हस्त द्वारा ले उपभृत्के उपरि देशमें स्थापन करते हैं। इसके स्थापनकालमें परस्पर स्पर्शसे शब्द निकलना उचित नहीं। विश्वजित् न्यायके अनुसार सकल स्थान पर फलस्वरूप स्वर्ग कल्पित होता है। एक ही कार्यमें वेदविहित वैकल्पिक अङ्गसमूहके मध्य अधिकाङ्ग अनुष्ठित होनेसे फल भी अधिक मिलता है। इसी प्रकार षड दक्षिणापक्षकी अपेक्षा द्वादश और चतुर्विंशति दक्षिणापक्षका फल अधिक है। यजमान मन्वन्धो टाम, अन्वारम्भ, वरण और व्रतप्रमाण ग्रहण करते हैं। अर्थात् दानविधि, सत्यवाक्य तथा अधःशयनादि व्रत यजमानका कर्तव्य है और अग्नि, खर, वेदि गृह प्रभृतिका परिमाण यजमानके इस्तेानुसार ही स्थिर करना पड़ता है। प्रोखित यूप, क्षिन्न कुश, अवघत त्रीचि, पिष्ट तण्डुल, दोहनकृत दुग्ध और दग्ध षट्कादिसे विहित सकल कार्य समादन करना चाहिये। रौद्रमन्त्र, रथोदेवतमन्त्र, असुरदेवतमन्त्र और शैवमन्त्र उच्चारण कर उक्त देवतासम्बन्धीय कार्य

सम्पादनपूर्वक आत्मस्पर्ग तथा हस्त द्वारा जलस्पर्ग करते हैं।

उक्त समस्त कार्यका उपयोगी विधान प्रथमाध्यायमें कथित है।

द्वितीय अध्यायमें ८ कण्डिका है। उसकी १२ कण्डिकामें यह वृत्तान्त वर्णित है,—पौर्णमास यज्ञकाल, उसमें अग्निका अग्निसाधन, अध्वर्यु और यजमानका अधिकार, उसके विधानकी प्रणाली, दीक्षाके पञ्चममें दीक्षित धर्मसमुदाय, दिवामैथुन और मांसपरिवर्जन, शिष्टा पर्यन्त केशपरित्याग, व्रतकालानुसार सपत्नीक यजमानको मय्य मांस सवण वर्जित् हविष्यान्न हविके साथ भोजनका विधि, मत्स्य वाक्यप्रयोग, रात्रिकालका पूर्वविहित विहारस्थानमें अग्निहोत्र होम, सायंकालको भोजनकी इच्छा होनेसे होमके पीछे अधिक रात्रि न चढ़ते ही नीवार प्रभृति वन्य भोजनके अन्न और वन्य वृक्षके फलका भोजन, प्राहवनीय गृह और गार्हपत्य गृहमें शय्या व्यतीत अधःशयनविधि, ब्रह्मचर्य आशरणविधान, (यह नियम सपत्नीक यजमानका ही समझना पड़ेगा) पौर्णमासको अग्न्याधानादि कार्य समापन होनेसे दो दिन या एक दिनमें कार्यभेदका विधि (यह प्रातःकाल ही सम्पादन करना पड़ता है।)। २५ कण्डिकामें अग्नि होत्रके पीछे ब्रह्मघरण विधि और उसका प्रकार है। ३५ कण्डिकामें ब्रह्मसदनसे आत्मस्पर्ग पर्यन्त कर्मसमूहके अनुष्ठान, प्रकार और मन्त्रादिका कर्तन है।

३५ अध्यायमें ८ कण्डिका है। उसमें होत्रसदनसे पौर्णमास समाप्ति पर्यन्त कर्तव्य कार्यसमूहका अनुष्ठानप्रकार और मन्त्रादि वर्णित है।

४४ अध्यायमें १५ कण्डिका है। उसकी १२, २५ और ३५ कण्डिकामें दर्शयोगके पूर्वपिण्ड तथा पिढ्यपके अनुष्ठानका प्रकार और मन्त्रादिका कथन है। द्रव्य देवतायुक्त अख्यातप्रत्ययान्त कर्म शब्द और वेदबोधित याग शब्दका अर्थ है। समुदाय यज्ञ और अग्नीषोमीय पशुमें दर्शपौर्णमास यागधर्मका अतिदेश है। वैश्वदेव, वरुणप्राघास, साकमेध और शंभासौर नामक चतुः पर्वमय चातुर्मास्यके प्रथम वैश्वदेव-

पर्वमें दस्युर्वीर्यं वर्मका कथन है। पवर तोन पर्वमें त्रिविध बधि- प्रभारादि औपदेशिक वर्मविधान है। चातुर्मास्य बन्धवपावासादि पर्वत्रयमें वैश्वदेव पर्व वर्मका विधान है। बिन्दु माहत्वादिमें ऐसा विधान नहीं। औमित्त खानकी धरिपा बादब प्राञ्चसिक खानमें वर्म हुपा भरता है। ऐसा सम्बन्ध उपस्थित होमेये कि बर्दा करेगे औचित्कामि हो क्षेता चाहिये। दस्युं और पौर्णमासमें पार्व्येवादि ब्रह्म प्रधान थाय है। एक देवताबुद्ध ब्रह्मत कमबसुदायमें पार्व्येय वर्मका विधान है। पनित देवताबुद्ध वर्ममें पन्निपामोय वर्मविधि है। द्रव्य सामान्यमें वर्मप्रवृत्ति है। देवता सुबन्धे उपायस्य प्रवृत्तिकी साम्य भवकामें वर्मप्रवृत्ति है। द्रव्य देवता समयका साम्य विरोध रहने द्रव्यकी धामागततामें ब्रम होता है, बिन्दु देवताकी सामान्यमें नहीं। गोमि दुग्धका वम होता है बिन्दु दधिकानहीं। इसी सिधे चातुर्मास्य प्रवृत्तिमें परि बालित माका द्वारा पवित्र बन्धनके पीछे बन्ध दूरोभूत और दोहन चतुष्टय प्राप्त होता है। पयमें दधिकान वर्म नहीं, दुग्धका ब्रम होता है। द्रव्य समूहमें खाना पतिका वर्म रहता है। माहृत खानसुद्ध द्रव्यका जो खानोय वर्मके साब विरोध पड़ता, खानप्राप्त द्रव्यमें यह विरोध लग नहीं सकता। जिस विद्वान्तिसे प्राहृत द्रव्य देवताखानमें पन्थ द्रव्य देवतादिविहित होता, उस खानमें प्रहृत मन्त्रका खर नहीं पाता। विद्वान्तिमें बचनविशिषये प्राहृत वर्म नहीं होता। पर्यंकीप और प्रयोजनकीपसे प्राहृत वर्म नहीं पति। विद्वान्तिमें विरोध हेतु प्राहृत वर्मसमूहकी प्रवृत्ति नहीं पड़तो। प्रवृत्तिसे जो पदावर्ण्यमें विहित है, पदावर्ण्यकी प्रवृत्तिसे विद्वान्तिसे वर्मकी प्रवृत्ति होती है। लक्षा पदावर्ण्य जात द्रव्य बर्दा कर्मान्तरमायनके सिधे विहित हुपा है उसमें दूधरेका धमाय रहने मी पदावर्ण्यका द्रव्यका सद्भाय होता है। ससुदाय द्रव्यका सखा समवधि है। इयं काण्डिकामिं प्रजा, पय, पत्र और यया कामादिबा कार्य्यदासायय यत्र, मंत्र एवं पौर्णमासके देव तथा द्रव्यमेद बन्धनपूर्वक ब्रमका विधान है। इम काण्डिकामिं उपाय द्रव्यका पर्यंभवयन और उसमें

द्रव्यदेवतादिबा वर्चन है। ६७ काण्डिकामिं शोचि और पत्रका पात्रकावर्मे प्रापयय नामक वर्म वर्ततेय है। यरतु बसल प्रवृत्ति काक, द्रव्यदेवतादिबा मंत्रविधान और उषका प्रकार है। इयं पौर्णमास यत्रके पीछे पय बन्धादिबा ययाप्रवृत्ति कार्य्यविधि है बिन्दु इस यत्रके पूर्व विहित नहीं। दस्युर्वीर्यमासका ब्रह्मं होमपर पन्नि- होममें पावृत्तिबा विधि एवं प्रापयय विधानप्रकार है। शोचितका विशेष विधि है। संवत्सर एवं उपसव्यदि यत्रमें प्रापययविधिय बन्धा है। संवत्सर और सुती प्रवृत्तिमें द्रव्यविधिबन्धा विधान है। इयामाक प्रापयय का विधानप्रकार है। ७३ काण्डिकामिं पन्नि, प्राप्येय वर्म, काक, देवता और मंत्रका विधान प्रभारादि ब्रजित है। ८३, ८४ और १०३ काण्डिकामिं प्राधानके पङ्क वर्मसमूहका विधान एवं मंत्रादिसकन है। ११५ काण्डिकामिं पुनर्वार प्राधानके ब्रमनाय प्रवृत्ति निमित्त कथन है। उषका विधानप्रकार है। १२५ काण्डिकामिं शिवसमाय पन्निशोत्राङ्ग ब्राह्मप्रका उपखानप्रकार है। १३५ १४५ और १२५ काण्डिकामिं पन्निशोत्रके काक, द्रव्य देवता, विधान तथा मंत्रादि कामनामेदातुसार पयका महद्बुद्ध पन्निमें होमकी कर्तव्यता है। कामनामेदके होममें द्रव्यमेदका विधि है। एधे एधे द्रव्यसमूहद्वारा प्रवृद्ध संवत्सर होम करने पर तदनुसार कामनासिधि होमेकी बात है। पन्निशोत्र होम एवं सर्वविध वर्ममें गार्ग्यवन्ध पागारके दक्षिण द्वारसे प्रियय का विधि है। सर्वदा यत्रमानकी जय हो होम करना ब्रजित है कार्य्यवयनः यत्रमान पयक होति यत्रमान- निवृद्ध पधयं मी कर सकता है। बिन्दु दस्युं और पौर्णमासोमें सर्वदा जय होम करना चाहिये। प्रवासमें और धूनकादि प्रायोपमे विधिप नियम है।

इम पञ्चावर्तमें १३ काण्डिका है। उनके मन्त्र १३ और २५ काण्डिकामिं चातुर्मास्य ७ यत्रान्तर्गत वैश्वदेव यागका पर्यंकाक एवं उसके द्रव्य और देवताप्रयोगा- दिका वर्चन है। १५ ठर्ब और इम काण्डिकामिं बन्धव पावासाका रूप और उषका पर्यंकाक, द्रव्य, देवता एवं

मन्त्र, इगादी, बन्धवपाय और बन्धनेय नामकदुग्ध- कथन चतुर्मास थाय है। १५ दस्युर्वीर्यका वर्म की वर्म की वर्म है।

मन्त्रविधानादि है। ६४ कण्डिकामें साकमेधका रूप और उसके पर्वकाल, द्रव्य, देवता तथा मन्त्रादिका विधान है। ६५ कण्डिकामें द्विद्विविधक कौटुम्बीयमें इष्टिका कालविधान एवं तदीय द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। ६६ एवं ६७ कण्डिकामें पितृष्टिके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। ६८ कण्डिकामें त्रैयम्बक होमका कालविधान और द्रव्य, देवता एवं मन्त्रादिका नियम है। ६९ कण्डिकामें चातुर्मास्य यज्ञान्तर्गत पर्वविशेषात्मक सुनासीरीयके काल, द्रव्य, देवता और मन्त्रादिका कथन है। सूतकादिमें भी चातुर्मास्यका पुनर्धार आरम्भ है। चातुर्मास्य त्रिविध है—ऐष्टिक, पाशुक और सौमिक। इस त्रिविध चातुर्मास्यके द्रव्य, देवता और मन्त्रका विधानादि है। ७० एवं ७१ कण्डिकामें मित्रविन्देष्टि और उसके द्रव्य, देवता तथा मंत्रका विधान है।

६४ अध्यायमें १० कण्डिका हैं। उनमें निरुद्ध, पशुवन्धयाग और उसके काल, द्रव्य, देवता तथा मंत्रका विधानादि कथित है।

७५ अध्यायमें ६ कण्डिका है। उनमें ज्योतिष्टोम यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। फिर ज्योतिष्टोमके पूर्वानुष्ठेय सोमयज्ञके भी द्रव्य देवतादिका विधान है।

६६ अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उसकी १५ एवं २५ कण्डिकामें प्रातिथ्यकर्म, उसके द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। २५ कण्डिकामें औपवसस्वके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका विधान है। ४४, ५५, ६४, ७५, ८५ और ९५ कण्डिकामें ऐसा ही विधानादि कथित है।

९५ अध्यायमें १४ कण्डिका है। १५ कण्डिकामें सौत्यकर्म और उसके काल, द्रव्य, देवता एवं मंत्रका विधानादि है। अपर कण्डिकाओंमें प्रातःसवनका द्रव्य, देवता और मंत्रविधानादि कथित है।

१०५ अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उसकी समुदाय कण्डिकाओंमें प्रायः अध्याय शेष पर्यन्त मध्यन्दिन सवन और तृतीय सवनके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधान

है। अध्याय शेषमें ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य (अत्विष्टोम, उक्थ्य, पौष्ट्य, वाजपेय, अतिमात्र, आसयाम और ज्योतिष्टोम यागमें सोमोत्तर कर्तव्य, सोमका ज्योतिष्टोमविधान और उसमें आध्वर्यव-विधान प्रकार है।

११५ अध्यायमें १६ कण्डिका है। उसमें ज्योतिष्टोमका अद्भुत विधान है।

१२५ अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें द्वादशाह यज्ञका विधान है। एकादशाह प्रभृति यज्ञमें ज्योतिष्टोम धर्मका प्रतिदेश है। किसीके कथनानुसार उसमें अग्निष्टुत धर्मका प्रतिदेश वर्णित है। सत्ररूप और अहीनरूप भेदसे द्वादशाह दो प्रकारका है। इन उभय रूपोंका निरुद्धप्रदर्शन है। प्रायस्त्वमें अतिरात्र रहनेसे सत्र और केवल अन्तमें अतिरात्र रहनेसे अहीन होता है। सत्रयागमें यजमान सह पौड्य ऋत्विक्का कर्तृत्व रहनेसे सकलका यजमानत्व है। सुतरां सकलको फलप्राप्तिका अधिकार होनेसे इस कार्यमें दक्षिणाका अभाव है। पौड्य ऋत्विक्में यजमानत्वका प्रतिदेश रहनेसे सप्तदश व्यक्तिका दीक्षादि यजमान धर्मनिर्देश है। गृहपतिका अन्वारम्भविधि है। यज्ञसम्पादनके लिये पात्रग्रहणादि कार्यमें एकमात्र जनका ही कर्तृत्व है। तत्कर्मक सम्पादित होनेपर सकलका सम्पादित होता है। गार्हपत्य और आहवनीय अङ्गारप्रासन है। अध्याय-समाप्ति पर्यन्त तदीय द्रव्य, देवता, मंत्र, दीक्षा और कालका विधानादि निरूपित हुआ है।

१३५ अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उसकी प्रथम कण्डिकामें गवामयन यज्ञका प्रकार और उसमें द्वादशाह यज्ञधर्मका प्रतिदेश है। २५, ३५ और ४५ कण्डिकामें द्वादशाह धर्मके द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि वर्णित है।

१४५ अध्यायमें ३ कण्डिका हैं। उनमें ज्योतिष्टोम संख्याभेद, वाजपेय यज्ञके काल, द्रव्य, देवता और मंत्रका विधानादि कथित है।

१५५ अध्यायमें १० कण्डिका है। समुदाय-कण्डिकामें राजस्य यज्ञ, उसमें चतुर्थ जातिका-

पञ्चिकार, वाक्पथ यत्र नरमे पर राक्षसकी
पनाशकता और राक्षसके द्रव्य, देवता एवं मंत्रका
विधानादि वर्णित है।

१३य अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनमें १य
कण्डिकामें पञ्चतित्व स्वरविशेषकृत पन्चि-
विधानका प्रकार है। चक्रनरुपाङ्ग विधिष्टाम्बिकी
सोमज्ञता कहो है। उनमें दण्डादुसार पञ्चिकार
है। फिर भी शिवकामात्र महाप्रत नामक श्लोत्रहाय्य
सोमयाममें पञ्चतित्व स्वरका नियम है। पन्चम
दण्डादुसार विवक्ष्य है। २य ३य और ४थं
कण्डिकामें सषा (यष्टादिका पात्रविशेष) निर्माण
प्रकार है। ५म कण्डिकामें पन्चिचयनप्रकार एवं
उसमें देवता और मंत्रादिका विधान है। ६ठ
कण्डिकामें पञ्च पन्चिक्रियका चक्रनप्रकार है। ७म
कण्डिकामें तत् सम्बन्धीय प्रायश्चित्त होमविधान
है। ८म कण्डिकामें पूर्वोक्त पन्चिचयनका प्रकार
सेह एव उसके शाक, द्रव्य, देवता और मंत्रादिका
वर्णन है।

१४य अध्यायमें १२ कण्डिका हैं। सप्तदाय
कण्डिकामें प्रायश्चित्तात्मा कर्मके परवर्ती कर्तव्यका
विधान और उसका भेद, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि
वर्णित है।

१५य अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। उनमें यत्-
द्वितीय होम उसके चक्रकर्म द्रव्य देवता और
मंत्रादिका विधान है। ६ठ कण्डिकाके शिष्यमाममें
पन्चिचयनकारो पुत्रपत्न्या नियम वर्णित है।

१६य अध्यायमें ० कण्डिका हैं। उनमें शीत्रा
मन्त्रि बागका विधान है। इस यज्ञमें अनामिकाको
ब्राह्मणका पञ्चिकार है। सोमयज्ञकारो साम्बिक
ब्राह्मणको सोमयज्ञके पीछे द्रव्यको कर्तव्यता है।
सोमातिवृत्त पर्याप्त सुख, नासिका, कर्णं शुद्ध प्रमत्ति
द्विद्व हारा पीत सोम निकालनेवाले और सोमबामो
पर्याप्त पीत सोम सुखसे वसन करनेवालेका इस यज्ञमें
पञ्चिकार है। मनुष्यका कारणसे बहिष्कृत
राजाका पुनर्धार राज्य प्राप्तिके लिये उनमें पञ्चिकार
है। पथके भयानके पथ पानिकी कामनाके वेदको

भी उनमें पञ्चिकार है। चार रात्रमें दस यज्ञके
सम्पादनका विधि है। दस यज्ञको पञ्चकल्प
सुप्राम्भुतप्रवासी और दस यज्ञका द्रव्य, देवता तथा
मंत्रादि वर्णित है।

२०य अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। समस्त
कण्डिकावर्षमें यज्ञका विधान है। उनमें प्रथमियत्र कर्त्तव्य
रामाका ही एकमात्र पञ्चिकार है। ब्राह्मण और
वेदका पञ्चिकार है। तीन रात्रमें दसका सम्पादन
नियम है। दस यज्ञके पञ्चके समुदाय पत्नीद्विकी
शका और यज्ञका शाक, द्रव्य, देवता तथा मंत्रादि
वर्णित है।

२१य अध्यायमें ८ कण्डिका हैं। उनमें १म
कण्डिकामें नरमेचयज्ञका विधि है। सर्वजीवके
उत्पत्तिकाओ पुत्रपत्न्या पञ्चिकार है। पांच रात्रमें
दसका सम्पादनविधि है। इसमें पञ्चमियत्रि दीक्षा-
नियम है। ब्राह्मण और कर्त्तव्यको पञ्चिकार है।
वेदको पञ्चिकार है। दस यज्ञके द्रव्य, देवता
और मंत्रादिका विधान विहित है। ३य कण्डिकामें
पञ्चविषय पमिसाको वार्षिके कर्त्तव्ययज्ञका विधान है।
दस रात्रमें दसका सम्पादनविधि है। ३य और
४थं कण्डिकामें मनुष्य, पशु, गो, श्वेप और ज्ञान एव
पयका कर्त्तव्य है। प्रोषित वा मृत पिताका सवत्सर
पत्नीत होनेके पितृमेचयज्ञका विधान और उसके
नपत्यादि शाक, द्रव्य देवता तथा मंत्रका भी विधान
वर्णित है।

२२म अध्यायमें ११ कण्डिका हैं। उनको प्रथम
कण्डिकामें यज्ञवेदीय पाधानादि पितृमेच पर्यन्त
कर्त्तव्य और सामवेदीय एकाहशाख यागविधि
वर्णित है। इस सम्बन्धको कई परिभाषा भी बिया
हैं। यथा—विमिचर्षका वर्णित न रहनेसे यज्ञ
पन्चिहोमसंख दूबा करता है। जेनुमात्रदक्षिणा
देव भूयोमक एकाह और ज्योतिर्नामक एकाहमें
कोई धंष्य कदा न जानेसे समय पन्चिहोमसंख
होते हैं। गो और पातु नामक एकाह कल्प
धंष्य है। पन्चिजित् और शिञ्जित् पन्चिहोमसंख
है। ज्येष्ठपुत्रके विभागयोग्य द्रव्य एवं भूमि और

दास वरतीत पदार्थको सर्वस्वपदार्थ कहते हैं। किसी किसीके मतानुसार धारण भ्रमणादिके निचे भूमि और गृह्युपाके निचे दास प्रावश्यक है; इन समय द्रव्योंको छोड़ सुवर्णादि अन्य समुदाय द्रव्य सर्वस्व है। पुरुषमेघ यज्ञमें गर्भदासके दानका विधान और भूमिके एकदेशपरित्वागमें धारणकी सम्भावना है, इसनिचे अपने मतमें भी समय द्रव्य व्यतीत अन्य समुदाय सर्वस्व होता है। किन्तु प्रवभ्यञ्चानविहित वस्त्वच्छवि और दीक्षाका उपयोगी द्रव्यसमूह सर्वस्वके मध्य परिगणित नहीं। वस्तुतः सहस्र अघिना अधिकसंख्यक द्रव्य ही सर्वस्व कहाता और वही दक्षिणा माना जाता है। विश्वजित् यज्ञमें द्वादशरात्रि प्रमृति नियमकी विभिन्नता है। अभिजित् सम्पन्न होनेपर विश्वजित्का अनुष्ठान किया जाता है अथवा अभिजित् और विश्वजित्का एकदा अनुष्ठान कर्तव्य है। किन्तु एक ही समय समय कार्य करने पर देवयजनस्थानका विशेष नियम है, उसमें योद्ग्य ऋत्विक्का कार्य बाहुल्यप्रयुक्त अन्यतम ऋत्विक् द्वारा अन्यत्र सम्पादन करना पड़ता है। किन्तु त्रिदिव्यक कर्मसमूह समयका एक रूप है। केवल अन्तर्दिव्य कर्ममें ही समयका विभिन्नता पड़ती है। समय कार्य एक ही समय करते भी अभिजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन कर विश्वजित्का एक एक अङ्ग सम्पादन करते हैं। सर्वजित् नामक एकादश महाप्रत नामक सामन्तवसाह है। इस यज्ञमें अक्षरशोभा, क्ताइका ज्ञान और तीन या छह उपपद विहित हैं। अर्थात् अन्तर दीक्षाके पीछे सप्तम दिवस ज्ञान करना और इसके अनन्तर सप्ताह पतीत होने पर यज्ञानुष्ठान कर तीन या छह उपपद करना चाहिये। यह यज्ञ भी अग्निष्टोमसंख्य है। उक्त समस्त विषय १५ कण्डिकामें कथित हैं।

२५ कण्डिकामें सर्वजित् यज्ञकी दक्षिणाका भेद और उसका विधानादि है। इस यज्ञकी उक्थ्य-संख्या है। कथित अभिजित् प्रवृत्तिका नामास्तर है। यथा—अभिजित्का नाम ज्योतिः, विश्वजित्का नाम विश्वज्योतिः; आर सर्वजित्का नाम सर्वज्योतिः

है। इस समुदायकी दक्षिणाका भेद, विधानादि है। चतुर्थ उक्थ्यसंख्या चिरावसम्भित नाम है। सायस्क नामक छह यज्ञका विधान है। उसका प्रदर्शन उत्तरोत्तर किया है। यथा—प्रथम सायस्कमें स्वर्गकाम, पृथ्वीकाम एवं भ्राह्मण-विद्युत् पुरुषोंका अधिकार है। द्वितीय सायस्कमें दीर्घव्याधिगान्ति एवं प्रतिष्ठा और अत्रामिसाधियोंका अधिकार है। तृतीय नामक तृतीय सायस्कमें कर्महीन आर कर्म-निवृत्तिप्राथिम्यका अधिकार है। विश्वजित्शिल्प नामक चतुर्थ सायस्कमें दक्षिणाभेद, सर्वस्व प्रतिनिधि-दक्षिणा विधान और सर्वस्व प्रतिनिधि द्रव्यसमूहका वर्णन है। यथा—धेनु, हृष, मीर, धान्य, पसादि परिमाणोपयोगी स्वर्ण तथा रौप्य, दास, दासी, मिथुन उपकरणके साथ सहानस, अग्नादि यानारोहण और गृहशय्या। अतएव सर्वस्व पद द्वारा इस समस्तका ही ग्रहण कर्तव्य है। अथेन नामक पञ्चम सायस्कमें वैरनिर्यातनकामका अधिकार, उसकी दक्षिणा, अनुष्ठान, मन्त्र और देवतादि कथन है। फिर एकविक नामक षष्ठ सायस्कका विधान है। दीक्षा अघिना सद्यः क्रियमायताके निचे इनकी सायस्कसंज्ञा है। ब्राह्मण्योम नामक चतुर्विध एकादश्यागका विधान है। तीन पुरुष पर्यन्त पतित सावित्रीकको ब्राह्मण कहते हैं। इस दीपकी शान्तिके निचे इनका अनुष्ठान और लौकिक अन्तिमें इनका होमविधि है। इनके मध्य ब्रह्म ब्राह्मण्योममें नृत्तगीतकारी ब्राह्मणका अधिकार है। द्वितीय-उक्थ्यसंख्यामें निम्नित वरुणिका अधिकार है। तृतीयमें कनिष्ठका अधिकार है। इसमें गृहपति बना कार्य सम्पादन करना पड़ता है। चतुर्थमें अथ्यसन्ततिस्वविर ज्येष्ठका अधिकार है। अर्थात् ऐसे ज्येष्ठको गृहपति बना यह कार्य सम्पादन करना पड़ता है। इन सकल कार्योंका दीक्षा-विधानादि और ब्राह्मण्योम सम्पादनकारियोंके व्यवहारका विधि है। परिशीलको ब्रह्मवर्षस, रोषं, अन्न एवं प्रतिष्ठादि पमिहापी और श्लोय पवित्रता-प्राथी वरुणिके अग्निष्टोमसंख्य अग्निष्टुत् नामक एकादश्यागकी कर्तव्यता है।

नामक यज्ञविधि है। पुत्रार्थी और पशुपार्थी व्रतिका उसमें अधिकार है। गोकुल दक्षिणा है। उसमें दो भ्राता वा दो सखाका अधिकार है, समूहका अधिकार नहीं। राजकर्तव्य उक्थ्यसंख्य इन्द्रस्तोमका विधान है। पुरोहित प्रार्थीका इन्द्राग्नेस्तोम नामक यज्ञविधि है। सायुज्य अभिन्नापी राजा और पुरोहितका इसमें अधिकार है। उभयका एकत्र वा वृथक् भावसे अधिकार है। ऐसे अधिकारका भेद विधि है। पशुकाम व्रतिके अग्निष्टोमसंख्य विधान नामक यज्ञहयका विधान है। उसमें अभिचारकाम वा पशुकामका अधिकार है। पशुकाम व्रतिका वक्त्र तथा दुग्धयुक्त वृहत् गो और अभिचार कामका तीस गो दक्षिणाविधि है। अभिचारकामके संदश और वक्त्र नामक दो यज्ञोंका विधान है। इन्द्रसोम भावसे उभय यज्ञोंकी कर्तव्यता है। उभयके मध्य वक्त्रका षोडशसंख्य रूपभेद-कथन है। संदश द्वारा राजाका अभिचार करना चाहिये, देशका नहीं और वक्त्र द्वारा देशका अभिचार करना चाहिये, राजाका नहीं। उक्त रूपसे विधान कथित है। मतान्तरमें उभयका विपरीत भावसे विधान है। अभिचार द्वारा राजादिका उपशम वा मारण सम्पादन कर ज्योतिष्टोम यज्ञद्वारा आत्मशुद्धिका विधान है। इसी प्रकार सामवेदविहित एकाह निर्दिष्ट है।

२३ अथायमें ५ कण्डिका हैं। उसकी १२ कण्डिकामें अहीन नामक यज्ञसमूहका द्वादश उपसदृ एवं एकमासमें उसका समापनविधि है। सूत्रोपसदृका विशेष उपदेश है। दीक्षाके भेदका विधि है। यथा सौत्वदिन और उपसदृसमूहके दिन गिन दीक्षानियम है। दो रात्रिसे द्वादश दिन पर्यन्त सम्पादन योग्य याग अहीन कहता है। अन्यके मतमें पाठ हेतु अतिरात्रकी भी अहीनसंज्ञता है। द्वादशदिमें दशरात्रादिकी प्रवृत्तिको गौण्या कहते हैं। द्वादशदिन कर्तव्य दशरात्रका द्वादशदिमें कर्तव्यता है। द्विरात्रि प्रवृत्तिमें सप्त दक्षिणा है। चार रात्रि प्रवृत्तिमें अधिक दक्षिणादान पर प्रत्यह समभागसे दानविधि है। परिशीको अवशिष्ट समुदायका दान

है। त्रयोदश अतिरात्रका विधान है। यथा— षोडशसंख्यद्विरात्रि चार प्रथम अतिरात्र है। उनके मध्य प्रजातिकामका नव सप्तदश नामक प्रथम अतिरात्र है। ज्येष्ठ भ्रातृविशिष्टा स्त्रीके ज्येष्ठपुत्रका कर्तव्य विपुवत् नामक द्वितीय अतिरात्र है। जिसके भ्रातृव्य रहता, उसका गो नामक तृतीय अतिरात्र है। स्वर्गकाम वा प्रारोग्यकाम व्रतिका आयुः नामक चतुर्थ अतिरात्र है। धनाभिन्नापीका ज्योतिष्टोम नामक पञ्चम अतिरात्र है। पशुकामका विश्वजित् नामक षष्ठ अतिरात्र है। ब्रह्मतेजः-प्रार्थीका त्रिहत् नामक सप्तम अतिरात्र है। वीर्यकाम व्रतिका अष्टम नामक अष्टम अतिरात्र है। अन्नादि-अभिन्नापी व्रतिका नवम अतिरात्र नामक नवम अतिरात्र है। प्रतिष्ठाकाम व्रतिका एकविंश नामक दशम अतिरात्र है। प्राप्तपशुका ध्वंय होनेसे पुनर्वार उसकी प्राप्तिके लिये आप्तोर्याम नामक एकादश अतिरात्र है। भ्रातृव्यवान्का अभिजित् नामक द्वादश अतिरात्र है। ऐश्वर्यप्रार्थीका सर्वस्तोम नामक त्रयोदश अतिरात्र है। इसी प्रकार त्रयोदश प्रकार अतिरात्रका विषय कहा है।

२४ कण्डिकामें दो सुतीके तीन अहीनका विधि है। उनके मध्य द्वितीय और तृतीय अहीनके षोडशसंख्यद्विरात्रि दो अतिरात्र है। तीन अहीनके आङ्गिरस, चैत्ररथ और कापिवन तीन नाम कहे हैं। द्वितीय द्विरात्रिके उक्थ्य पूर्वतारूप अन्यका मतभेद है। पार्थिक अग्निष्टोमके स्थानमें उक्थ्यनिर्देश है। संख्यभेदमात्र ही उसका धर्म है। पूष्ययोग्य होते भी जो पूष्यहीनकी भांति रहता, उसीका आङ्गिरसमें अधिकार है। पुत्रार्थी व्रतिका चैत्ररथमें अधिकार है। स्वर्गकाम वा पशुकाम व्रतिका कापिवनमें अधिकार है। त्रिसुतीके गर्ग, वेद, छन्दोम, अन्तर्वसु और पराक नामक पांच अहीन यज्ञोंका विधान है। उनके मध्य वेद त्रिरात्रिसाध्य एवं त्रिहत्स्तोमयुक्त अपर समुदाय अतिरात्रसाध्य है। इस पञ्चभेद यज्ञमें संख्यभेदका कथन है। इस समुदायमें राज्य-कामका अधिकार है। फिर पन्तर्वसुमें पशुकामका

चार पराक्रमी अर्जुनात्मका परिवार है। उक्त मास भेदका अग्रम है। अग्निचतुर्वेद, कामदम्भ, अग्नि संवत् पीर विद्यामित्र नामक चार चार दिनसाध्य यज्ञका विधान है। इनके मध्य कामदम्भ यज्ञमें पुष्टिकाम अग्निष्वा अग्निष्वा है। उसमें वि मति दीक्षा एव इन चार यज्ञमें पुरोडाशविशिष्ट उपसर्गका विधान कथित है। १५ अष्टिधर्म उसमें विद्यामित्रका प्रकारादि है। ३४ अष्टिधर्म पञ्चदिन साध्य तीन अर्जुनका विधान है। इनके मध्य प्रथम अर्जुनका नाम द्वेषपञ्चाह है। द्वितीयका नाम पञ्चपारदीय है। इन समय अर्जुनके विद्यानादिका अग्रम है। तृतीय पञ्चाहका मतवत् नाम अग्रम है। इस त्रिविध पञ्चाह यज्ञमें ज्योतिर्गो, महाव्रत पीर गोरानु नामक तीन एकाह यज्ञका विधि है। सर्वजित्की मति इसमें दीक्षानियम पीर अहका विधानादि निर्दिष्ट है। इस अष्टिधर्म ऋह दिन साध्य तीन अर्जुनका विधि है। तीन अर्जुनके अतुपङ्क, पञ्चाहसक्य पीर त्रिकटुह तीन नाम कहे हैं। इस त्रिविध यज्ञमें अग्रमविद्यानादि है। असाहसाध्य अत अर्जुनका विधान है। इनके मध्य चारका उत्तम महाव्रत है। इन चारके मध्य उत्तममें पराक्रमका परिवार है। पञ्चम अर्जुनका नाम इन्द्रपञ्चाह है। इस पञ्चम असाहमें द्वितीय एकाहसे चारपञ्चक एक एकाह एव सुत्याह समुदायका विधान है। इस असाह समुदायके अग्रम असाहमें ज्योतिः, गोः, पाशुः, अग्निजित् पीर सर्वजित् अह महाव्रतकी कर्तव्यता है। इसी प्रकार समुदाय दिनसाध्य यज्ञमें महाव्रतका विधान है। उत्तम सर्वशोभका विधान है। अहके शेष दिनको ज्योतिः, गोः, पाशुः, अग्निजित्, अग्निजित् पीर सर्वजित् महाव्रतविशिष्ट सर्वशोभ पतिराज है। अहक असाह नामक पठ कताह है। उसका विद्यानादि है। उत्तम असाह असाहमें अहद्वन्द्वकामदम्भ पुष्टिका विधान है। इस समुदायकी पुष्टिहीन ६ प्रा है। इसी प्रकार अत असाह अर्जुनका विधान कथा है। उसके जोड़े उसका विद्यानादि है। अष्टद्वन्द्व अर्जुनमें पाष्टि

अहके जोड़े महाव्रत कर्तव्य है। असाहमें त्रिकटु, ज्योतिः, गोः, पीर पाशु नामक महाव्रतका विधान है। उसका प्रकारात्तर है। उसका विद्यानादि है। चार दयराजका विधि है। प्रतिष्ठाकामनाकारी अग्निष्वा त्रिकटुपु नामक प्रथम दयराज है। अग्नि चारकारीका शीतवन्दि नामक द्वितीय दयराज है। पूर्वदयराज नामक तृतीय दयराज है। पराक्रम अग्निष्वा अन्दोह नामक चतुर्थ दयराज है। अहका विद्यानादि है। पीछीक नामक एकादशराज एव उक्तका विद्यानादि कथित है।

२३५ असाहमें ३ अष्टिका है। उसकी १२ अष्टिधर्म द्वादशराजसे एक दिन बढ़ा असाहियत् एव पर्यन्त अष्टविधि है। उसमें जिस अहके जो दिन उपदिष्ट है, वह दिन अहो प्रकार अग्रमना पढ़ते हैं। आवापिकसमूहका अग्रम अह पीर अष्टिधर्मक समूहका उपदेशाग्रम शिया जाता है। उपदिष्ट दिन अतिरिक्त अष्टिधर्म समूहका आवाप अग्रम अग्रम है। यथा—यज्ञ अपूर्व अग्निसे दयराज आवाप रहता है। यह पक्षसे नहीं, जोड़े होता है। अह पाष्टिक पक्ष पीर चार अन्दोम पक्ष मिसाकर दयराज पाता है। असाह अष्ट पङ्क, तीन अन्दोम पीर अग्निष्वाके समूहायका नाम दयराज है। यह दयराज समुदाय दिनके अग्रम मानना पड़ेगा। दयराजके जोड़े एकाह विषयमें प्रकृतियुक्त समुदायसे महाव्रत होता है। यज्ञ संख्यापूर्वके विधि दयराज जोड़े एकाह अतीत महाव्रत पढ़ता है। महाव्रत अतीत अग्रमकार्यसमूह आवापके जोड़े पीर दयराजके पक्ष करते हैं। अहा पङ्क अतीत यज्ञसंख्यापूर्व नहीं होता, अहा पङ्क पूर्वके विधि अग्निष्वा अहद्वन्द्वक पठता है। अग्निष्वाके पक्षसे पञ्चाह समुदाय भी पञ्चाह अतीत संख्यापूर्व न पढ़नेसे अनुष्ठित होता है। अह अतीत संख्या-पूर्व न अग्निसे अह विषयमें ज्योतिः, गोः, पीर पाशुका विधान है। उक्त तीनोंको त्रिकटुका अहके है। अतुरह अतीत यज्ञसंख्या पूर्व न अग्निसे अतुरह विषयमें ज्योतिः प्रकृति तीन पीर महाव्रतका अनुष्ठान

कर पूरण कर्तव्य है। द्वादश व्रतीत संख्यापूरण न होनेसे द्वादश विषयमें गौः और आयुः पूरण हुआ करता है। यज्ञकी आरम्भमें अतिरात्र कर्तव्य है। प्रायणीय और उदयनीयके मध्य आवापस्थान करना पडता है। जो आवाप करनेका विधि है, उसके अतिरात्रद्वय मध्य करणका विधान है। आवापसमूहके समवाय द्वारा जहाँ यज्ञ पूरण होता, वहाँ जो जो अनुष्ठान अथ्य आता वही प्रथम किया जाता है। दो त्रयोदशरात्र यज्ञका विधि है। इसमें षष्ठ्य सम्पादित होनेसे सर्वस्तोमनामक अतिरात्रका विधान है। अर्गात् समुदाय यज्ञमें द्वादशरात्र धर्मका विधान है। सुतरां इसमें भी द्वादशरात्र समूह सम्पादन और सर्वस्तोम अतिरात्रका अनुष्ठान करना चाहिये। ऐसा करनेसे त्रयोदशरात्रका पूरण होता है। इसका क्रम है। यथा—प्रथम दिन प्रायणीय अतिरात्र होता है। द्वितीय दिनसे छह दिन पर्यन्त षष्ठ्य पडह करते हैं। अष्टमदिन सर्वस्तोम अतिरात्र होता है। नवम दिनसे चार दिन तक चार छन्दोम चलते हैं। त्रयोदश दिन उदयनीय अतिरात्र किया जाता है। द्वितीय त्रयोदशरात्रमें दशरात्रके पीछे महाव्रत करना पडता है। इसी प्रकार भेद कथित है। सन्तार्य तृतीय त्रयोदशरात्रके गवामयनकी भांति सन्तरण-प्रकार है। चतुर्दशरात्रमें तीन यज्ञका विधान है। उनके विधानका प्रकारादि है। उसके मध्य गेप चतुर्दशरात्रमें विवाहोदकतल्पसंग्रहित गणका अधि-कार है। पञ्चदशरात्रको चार यज्ञोंका विधान है। उनका विधान प्रकारादि एवं सप्तदशरात्रमें, अष्टादश-रात्रमें, एकीनविंशरात्रमें और विंशतिरात्रमें इसी प्रकार आवापनपूरण कथित है। २५ कण्डिकामें द्वादशरात्र प्रकृति चारमें आवाप प्रकार है। उसके मध्य द्वादशरात्रको प्रायणीयके पीछे पञ्चाह है। अष्टादशरात्रमें प्रायणीयके पीछे पडह है। एकीनविंश-रात्रमें प्रायणीयके पीछे पडह एवं दशरात्रके पीछे व्रत है। इसी प्रकार आवाप उक्तिके द्वारा विधान प्रकार है। एकविंशतिरात्रमें दो अतिरात्र हैं। उनमें आवाप प्रकार और उसका विधानादि है। अन्नादिकाम वार्षिकके द्वाविंशति रात्रका विधान है।

उनके विधानका प्रकारादि है। प्रातष्ठाकामके त्रयोविंशतिरात्रका विधान है। प्रजाकाम और पशुकाम वार्षिकके चतुर्विंशतिरात्रका विधान है। यह द्विविध है। उनमें प्रथमका विधानादि और द्वितीयका संसृष्ट नाम तथा उसका विधानादि कथित है। अन्नादि-कामके पञ्चविंशतिरात्रका विधि है। प्रतिष्ठाकामके षड्विंशतिरात्रका विधान है। घनकामके सप्त-विंशतिरात्रका विधि है। प्रजाकाम तथा पशुकामके अष्टाविंशतिरात्र एवं द्वाविंशतिरात्रका विधि है। इस समुदायका क्रमगः विधान है। एकीनविंशत्-रात्र, द्विंशत्रात्र, एकविंशत्रात्र एवं द्वाविंशत्रात्रका विधानादि है। त्रयस्त्रिंशत्रात्रका द्विविध भेद है। उसके विधानका प्रकार है। चतुस्त्रिंशत्रात्रावधि चत्वारिंशत्रात्रि पर्यन्त सप्तयज्ञका आवापक्रमानुसार पूरणविधि है। उसका विधि नियम है। यथा—अन्नादिकामके चतुस्त्रिंशत्रात्र, प्रतिष्ठाकामके षट्-त्रिंशत्रात्र, ऐश्वर्यकामके सप्तविंशत्रात्र, प्रजाकाम एवं पशुकामके अष्टाविंशत्रात्र चार चत्वारिंशत्रात्र यज्ञका विधान है। एकीनपञ्चाशत् रात्रमाध्य सप्त यज्ञका विधान है। उनके मध्य प्रथमका नाम विधृति है। उसका विधानादि है। द्वितीयका नाम यमातिरात्र है। उसका विधानादि है। तृतीयका नाम पञ्चनाभ्यञ्जनीय है। विद्वानोंके मध्य अपनी स्वातिके आकाशद्वियोंका इसमें अधिकार है। इसका विधानादि है। चतुर्थका नाम संयत्सरमित है। उसका विधानादि है। ३५ कण्डिकामें इसने मादृशको प्रसङ्गाधीन पुत्रार्थियोंके कर्तव्य एकपट्टि-रात्रका विधान है। सविताके उद्देशसे पञ्चम ककुभका विधि है। उसका विधानादि है। उसमें पुत्रार्थोंका अधिकार है। षष्ठ और सप्तमका सामान्य विधान है। शतरात्रका विधानादि और इस विधानमें विकल्प-विवरण कथित है। ४४ कण्डिकामें सवन सन्तन्य प्रकृति होमका विधानादि है। संवत्सर प्रकृति यज्ञमें गवामयन धर्मका प्रतिदेश है। आदित्यगणके अयन नामक यज्ञका विधानादि है। आदित्यगणके अयनकी भांति आङ्गिरसोंका अयनविधि है। उसका

विशेष नियम है। इतिहासबान्धुके अथवा नामक
यज्ञका विधानादि है। कृत्वापायिष्यके अथवा नामक
यज्ञका वासविधानादि है। इस यज्ञमें सुम्ना खान-
समुद्र पर सोम और उपलङ्गन प्रवृत्तिका विशेष विधि
है। सर्वसप्त नामक यज्ञका भेद विधानादि और
उत्तमं गवामयन वर्त्मना धतिदेय उच्यते है। इस
कण्टिकामें तापचित नामक यज्ञका विधानादि है।
महातापचित यज्ञका विधानादि है। सुहृत्
तापचित यज्ञका विधानादि है। त्रिंशत्बर यज्ञका
विधानादि है। महासप्त नामक यज्ञका विधानादि
है। हादम बभ्रुवसाध्य प्रजापतिवज्र नामक
यज्ञका विधानादि है। यद्भि यद् बभ्रुवसाध्य
प्रक्ष्मागमयन नामक यज्ञका विधानादि है।
यतवभ्रुवसाध्य साध्यागमयन नामक यज्ञका विधानादि
है। सप्तवभ्रुवसाध्य विद्युत्प्रकाशयन नामक यज्ञका
विधानादि है। (मोषत्रुति यन्तुवार यद् यद् सप्त
दिनसाध्य समभगा आह्वये) सारसत यज्ञसमूहका
विधानादि है। यात्सव नामक यज्ञविधि है।
यतसस्याक प्रजमगर्भिणी बभ्रुवरी और एक सप्त सप्त
संध्या पूरकको इस यज्ञमें वर्त्मना कोट्टनेका विधि है।
सारसत यज्ञका दोषाकार और दीमादि विधान है।
(यथा—चेत् यद् सप्तमी तिविको सरसतो विनयन
नामक खानमें दोषा कर्तव्य है। सरसतो नाम्नी
जो नदी बहती है उसका पूर्व और पश्चिम माय
मनुष्यका दिग् पडता है। किन्तु मध्यमाग भूमिमें
निम्न रहनेके लियेके इतिगोचर नहीं होता।
इसो खानको सरसतो विनयन कहते हैं। इसमें
दोषा विधानादिका प्रकार है।) इह कण्टिकामें
उसका चतुर्विधा विधानादि है। सरसतो और इयहतीके
सप्तमस्यपर उसका विधानादि है। इयहतीके नामक
सरसतोके उत्पत्तिखानपर पन्थेकामात्र नामक
यज्ञका विधि है। इस यज्ञमें आरपत्र नामक एक
दिग्मं यज्ञमानका चक्रवर्त्तनविधि है। यज्ञमिपमं
उदवसनीयको कर्त्तव्यता है। इहयमनीयगुण तीन
सारसत यज्ञका विधान है। पूर्वार्ध सप्त यज्ञ पूरक
न होती अथपति वा सप्तदाय गो मर जानिके यह यज्ञ

समापनका विधि है। सप्त पूरक होवे भी यह यज्ञ
समापन करना पडता है। अथपतिका मनु जोनेके
प्राग् नामक पतिराज यज्ञपर और द्रव्यसमूह गड
जोनेके विद्युत् नामक यज्ञपर समापन करनेका
विधि विधि है। उत्तम षट्नावर्तमे ज्योतिर्होम
द्वारा समापनरूप पन्थ मतका उच्यते है। इसी प्रकार
प्रथम सारसत का है। द्वितीय सारसत इतिहात-
वान्धुके अथवा नामकी भाति कर्त्तव्य है। उक्तका विधानादि
है। उत्तमं तिविको यद्युत्तिका भी विशेष विधान है।
यज्ञसप्तयज्ञका विनय विधानादि है। उत्तम
सारसतमें विद्युत् और पश्चिम विधानादि है।
उत्तमं कण्टिक पवसा आचार्यके दार्पणत नामक
यज्ञको कर्त्तव्यता है। इस यज्ञमें एक वषके क्रिये
वर्त्मने मो सवत् परिष्कार करना चाहिये। द्वितीय
वभ्रुव इने निर्जल खानमें रचा करनीका विधि है।
इसो वर्म सरसतो तीर नेतव्यना नामक जो सक्त
प्राचीन घाम है, उनमें पन्थापालका आरसतके
और कण्टिकमें परीयत् नामक अक्षर परम्परा
विधि है। उत्तमके पीछे उत्तम वभ्रुव परीयत् नामक
अक्षर पर ही दार्पणोपमात्र कायको कर्त्तव्यता है।
इयहती तीरके या यमुनामें पवसा खान और उधो
खान पर मन्त्रपाठका क्रिये विधान कहा है। उत्तम
कण्टिकामें चेत् वा वेद्याकासको यज्ञपक्षिमौको
तुषामय नामक सारसत यज्ञको कर्त्तव्यता है। उत्तमको
दोषाका विधानादि है। यह यज्ञ एक बभ्रुवसाध्य
है। उत्तमं वर्म पर्यन्त कर्त्तव्यका उपदेश है। दार्प-
णतको भाति यनियत पवसायकानविधि है। भरत-
दादयाह मन्त्रि हादयाह भेद उच्यते है। उसका
विधानादि और उत्तमसमूहमें गवामयनका विधान
विधान विहित है।

२५म अध्यायमें १३ कण्टिका है। उनमें चतु
वैगुण्य दोषके उपयमको प्रायचित्तका विधान है।
(प्रायचित्त यज्ञका अर्थ है। यथा—अपूर्वक प्राय
चातुके उत्तर अथ प्रज्वल कयानेके प्राय पद निषेध
होता है। उत्तका अर्थ विधि पतिवर्त्मके क्रिये प्राय
है। चित चातुके उत्तर भागमें अ प्रज्वल कयानेके

चित्त पद निष्पन्न होता है। घातुसमूहका विविध अर्थ विहित रहनेसे उसका अर्थ सम्मान है। प्रायका अर्थात् विधि अतिक्रमके लिये दोषका चित्त अर्थात् सम्मान अर्थ आता है। इस वाक्यमें पाणिनि व्याकरणोक्त 'प्रायस्य चिति चित्तयोः' एवं 'पारस्कार प्रभृति' सूत्र द्वारा मध्यमें 'सुट्' आदेशपूर्वक यह पद निष्पन्न हुआ है। सर्वकार्यके अन्तमें अथवा निमित्तकालमें प्रायश्चित्तकी कर्तव्यता है।) प्रायश्चित्त विशेषका आदेश न रहनेसे सर्वत्र महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्तका विधि है। विशेष आदेश अनुसार ही प्रायश्चित्त करना पड़ता है। यथा—“प्रणीताः स्तवा भिमि-
 न्श्रेत” यजुः श्रुतिद्वारा प्रणीताभिमर्षणरूप प्रायश्चित्त विहित होनेसे यही कर्तव्य है।) ऋग्वेदोक्त हौत्रिक कर्म उपघात होनेसे गार्हपत्य अग्निमें 'भुवः' स्वाहा बोल अग्निदेवत होम करना चाहिये। इसमें कर्ताका विशेष आदेश न रहनेसे ब्रह्मकी ही करना उचित है। ब्रह्मवरणके पूर्व निमित्त उपस्थित होनेसे ब्रह्मवरणके पूर्व ही व्याहृतिहोमका अन्य अपर ब्रह्मवरण कर उसके द्वारा कराते है। जिस अग्नि-
 होत्रादिमें ब्रह्मवरणका विधि न हो, वह स्वयं कर्तव्य है। कालाहुति द्वारा सोममें इसका समुच्चय करना पड़ता है। यजुर्वेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे 'भुवः स्वाहा' कह होम करते हैं। वह भी पूर्वकी भाँति ब्रह्मका ही कर्तव्य है। सोमके आग्नीध्रीय अग्निमें 'भुवः स्वाहा' कह होम करना पड़ता है। इतनी ही पूर्वके साथ इसकी विभिन्नता है। इसका देवता वायु है। सामवेद विहित कर्मका उपघात होनेसे आहवनीय अग्निमें 'स्वः स्वाहा' कह होम करना चाहिये। इसका देवता सूर्य है। सर्ववेदोक्त कर्मका उपघात होनेसे तीन वार पृथक् पृथक् 'भृभुंयः स्वः स्वाहा' वाक्य द्वारा एक वार समुदाय मिलित वाक्य द्वारा चार वार होम करते हैं। "अपाद्याग्ने" इत्यादि पञ्च ऋक् द्वारा प्रत्येक ऋक् पर आहवनीय अग्निमें पञ्च आहुतिरूप सर्वप्रायश्चित्त नामक होम करना चाहिये। स्मृतिविहित अज्ञात कर्ममें पृथक् और मिलित भावसे चार महाव्याहृति होम करते हैं।

(जैसे—यज्ञोपवीतधारी वरुण शिखा बांध पवित्र दक्षिण हस्त द्वारा कर्म करता है। इस नियमस्थलमें यज्ञोपवीतधारणादि स्मृतिविहित कर्म है। इसमें किसी प्रकार उपघात होनेसे वास्तु और मिलित चार महाव्याहृति होमरूप प्रायश्चित्त कर्तव्य है।) उसके पीछे यजुर्वेदोक्त सर्वप्रायश्चित्त नामक पूर्वोक्त पञ्च ऋक्वेदीय आहुतिरूप प्रायश्चित्त समुदाय ज्ञात वा अज्ञात कारणसे करनेका विधि है। (किन्तु इसमें समुदाय भेद है। यथा—गार्हपत्यमें भूः, दक्षिणाग्निमें सुवः, आहवनीय अग्निमें स्वः, एवं सर्वप्रायश्चित्त नामक पञ्च आहुतिरूप प्रायश्चित्त होममें भूमूवः स्वः कहा है।) उसके पीछे कर्मविशेषके अनुसार प्रायश्चित्त-विधान कहा है। इस अध्यायकी ७म कण्डिकामें ८म सूत्र पर्यन्त उक्त समस्त विषय वर्णित है। उसके आगे ९म सूत्रसे कर्मसमाप्तिके पूर्व यजमानका मृत्यु होनेसे कर्मसमाप्ति उसी समय ही जाती है। एक ऐसा पक्ष है। दूसरे पक्षमें ऋत्विक् प्रभृति अवशिष्ट भाग समाप्त करते हैं। उसमें कर्मसमाप्ति पर्यन्त उत्तर क्रियाविशेषका विधान विहित है। ८म कण्डिकामें उपकृत पशुके पलायन प्रभृति पर प्रायश्चित्तके भेदका कथन है। उसके आगे अन्त्ययाग-पक्ष है। ९म कण्डिकामें अस्थिके सञ्चयका प्रकार आदि है। १०म कण्डिकामें यज्ञविशेष करनेके लिये उद्यम करनेके पीछे वह किया न जानेसे विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करनेका विधि है। यज्ञ आदिके लिये दीक्षा करनेसे यदि देवात् वा किभी मनुष्यके लिये वह दीक्षा अर्धकृत रहे वा स्वामीका यज्ञ समापन न करे और इस प्रकार बुद्धि उपस्थिति हो जाये, तो सोमयुक्त साधारण घान्य घृतादि सर्वस्व दक्षिणाके साथ विश्वजित् नामक अतिरात्र यज्ञ करना चाहिये। अध्वर्यु प्रभृतिका देवात् स्व स्व कार्य किया न जानेसे अदक्षिणाभावमें ही कर्म समापन कर पुनर्वार अन्यको वरणपूर्वक याग आरम्भ करनेका विधि है। इसमें दिनके भेदका विशेष नियम है। दीक्षित व्यक्तिकी पत्नी यदि रजस्वला हो, तो दीक्षारूप शङ्खनिधान कर रत्नस्त्राव पर्यन्त बालुकामें अवस्थान-

करना चाहिये। सुखा वर्तमान रहते सिद्धतामें उपवीर्यन करती हैं। प्रातःकाय और सार्धकाल वेदोक्ति निश्चय सिद्धता पर बैठती हैं। चतुर्वेद दिनस मोमृतमिञ्जित कस द्वारा स्थितिनिश्चित छान कर वस्त्र परिधानपूर्वक साधिव्यतिक्रम कावे करना चाहिये। आरात्तुपकारक काम वर्तमान नहीं। (दोषयोग्य मुनि लक्षणेन प्रथमि कार्यो आरात्तुपकारक काम कहते हैं।) पक्षो प्रथमा होमेने दय रात्रिमें पोछे छान करना चाहिये। मतान्तरमें नर्मिणोको दोषावा नियेष है। किन्तु "पयश्चिदा मर्मा" नृत्तिने अनुसार गर्भकोको भी दोषामि पश्चिकार है। काव्यायनका यही मत है। दौषित व्यक्तिके दुःकष्टादि वर्णन प्रथमिमें प्रायश्चित्तका विधिप विधि है। चमसके पान और चपान सम्बन्धमें प्रायश्चित्तका विधान है। सोमके ऊपर मेघ बरसनेके सम्बन्धन नियमपूर्वक लक्षमें प्रायश्चित्तका विधि है। चमसके दोषविषयमें और श्लोचकलसके दोषविषयमें प्रायश्चित्तका विधान है। अग्निमेदनेमें होममेद प्रायश्चित्त है। ११य ऋषिधामि सोमका पयश्चर्य होमिने पयश्च रक्षिमा कुत्र पुत्र्य और द्रव्य सोमकार्यमें निधान कर पमियन करनेका विधि है। बह्वाकोन चरिण द्रव्य लताको मांति चतुरित होमिने श्लोचकल कषाता है। श्लोचकल एव यामा (सोम पदम्य पूतिका नामक एक लता), पयश्च वष दूर्वा, पयश्च रक्षिमाकुत्र दूवा हरित्कणे कुम पयसा पयश्च कुय—सकल द्रव्यमें पूष पूष द्रव्यका चमस चामिने पर पर द्रव्य प्रतिनिधान कर पमियन करनेका नियम है। लक्षमें मोदान प्रायश्चित्त कर लक्ष दूवा द्वारा यज्ञ समापन वर्तमान है। पयश्चय पोछे पुनर्वार लक्षमें कश्चिदि है। सोमकलसके मेदानुसार सामपाठके प्रायश्चित्तका विधान है। पमियवच लक्षमें प्रकृति परिमित सोमरत्न प्राप्त होमिने कषादि द्वारा लक्षे बड़ा लक्षय पूष कर दौषकलसको पूषता सम्पादन करना पड़ता है। सोम पोछे मिक्तमें पर को द्रव्य मिक्त लक्षे, लक्षे को का पुनर्वार वष करनीका विधि है। लक्षमें मोदान प्रायश्चित्त करनीका नियम है। १२य ऋषिधामि

सोमका साधिव्य होमिने पयश्च प्रथमि बचननियेषके अनुसार प्रायश्चित्तके मेदका विधान है। दौषित व्यक्तिके रोग लक्षमें श्लोचकलसमें का दृष्टिपियकी प्रकृति बचन किया जाये, लक्षके मज्ज को द्रव्य सेनेकी दृष्ट्या हो पक्षो शिखर चिदिमज्जको लक्षको चिदिमज्ज करना चाहिये, किन्तु तदुप्यतोत पयश्च द्रव्यद्वारा चिदिमज्जा विधिय नहीं। बसका विधानादि है। ऊपरदृष्ट व्यक्तिके लक्षे मो पूर्वात्त देयमें पयश्चानका ल पयश्च रोमको साधिव्यका विधान है, पयश्च नहीं। प्रातःनवनेमें लक्षके मज्जविधिय द्वारा पमिनेकका मकार है। लक्षके पोछे दौषित व्यक्तिके अनुदाय चिदिमज्ज काये करती हैं। लक्षमें यज्ञमानके मज्जमेद द्वारा सार्धका विधि है। दौषित व्यक्तिका पयश्च होमिने लक्षको लक्षामि पोछे लक्षका पमियमज्ज लक्ष्य-लक्षके लक्षमें बर्ष चत व्यक्तिको पक्षोको श्लोच लक्षमें और पतिका लक्षमें सम्पादन करना चाहिये। पक्षोका यज्ञ होमिने लक्षके मेदोको श्लातादि दौषित को यज्ञ समापन करती हैं। इहो प्रकार मतान्तर मिच्छता है। किन्तु चिदिमज्ज लक्षमें पयश्च होमिने यज्ञका भी समापन होता है। लक्षय पयश्च लक्षमें प्रायश्चित्तका विधानादि है। १३य ऋषिधामि लक्षामरक्षके दिन यज्ञमानका पयश्च होमिने विधेय प्रायश्चित्तका विधान है। यज्ञको दोषामि मज्ज को पयश्च होमिने लक्ष सोमादि कार्यके लक्षे दौषित व्यक्तिके लक्षमें लक्ष होता है। किन्तु मतान्तरमें लक्ष है—दौषित व्यक्तिके श्लाता प्रकृतिको को प्रकृत यज्ञफल मिलता है। लक्षोप अग्निमें लक्षोप द्रव्य द्वारा साधिव्य मेदोको पुनर्वादिर्षयक साम्बिचिन्वादि यज्ञ अनुष्ठित होमिने मेदोको को पयश्चमाति होती है। किन्तु प्रकृत यज्ञफल यज्ञमान पाता है। लक्षमें लक्षोको व्यक्तिको लक्षमें लक्षके दिनके बादम दिन पयश्च साधिव्यतिक्रम करना चाहिये। यदि मेदोको पयश्चमात्ति न हो, तो यज्ञकारो व्यक्तिको को अग्निमें कार्य करना पड़ता है। लक्षमें वेद्यानरनिर्वाय नामक प्रायश्चित्तका विधान है। १४य ऋषिधामि एक यज्ञके पक्षो दो यज्ञमान यदि पयश्च वा नदी प्रकृतिके व्यक्तिके समान देयमें यज्ञ करे, तो

उसमें सोमसंभव होता है। फिर यदि परस्पर विरोधी दो यज्ञमान इसी प्रकार एक स्थानपर यज्ञके लिये सोमका अभिषेक करें, तो मिलित भावमें कार्य करनेके लिये उसका संभव कहते हैं। उसमें समुदाय कर्म सत्वर सम्पादन करना उचित है। देवकाल भिन्न हानिसे, पर्वतादिका व्यवधान रहनेसे और परस्पर अविरोधी हानिसे वह संभव नहीं होता। इसी प्रकार भेदका कथन है। संभवविषयमें अप्रती भांति मृत्यु-कामनाकारी होवादिफलक कर्तव्य कर्मविशेषका विधान है। यथा—होताके मृत्युकामनाकारी होता, अध्वर्युके मृत्युप्रार्थी अध्वर्यु और यज्ञमानके मरणा-काङ्क्षा यज्ञमानकी वही कर्म सम्पादन करना चाहिये। यह यज्ञ परस्पर द्वेष रहनेसे ऐसे देशमें अनुष्ठित होता जहाँ रात्रपर बैठ एक दिनमें जा सकें। परस्पर द्वेष न रहने प्रथवा उक्त नियमकी अपेक्षा देशका दूरत्व पडनेसे अनुष्ठान असंभव है। पूर्वाह्न होता प्रभृतिके मध्य एक जनमात्र कर्मका अनुष्ठान करनेसे प्रथवा एक जन मरनेसे स्व स्व यज्ञमध्यवर्ती अध्वर्यु प्रभृति अवशिष्ट कर्म सम्पादन करेंगे। उसमें अन्य वरणकी अपेक्षा करना नहीं पड़ती। सोमादि जन जानसे प्रतिनिधि द्रव्य द्वारा कर्म समापन करना चाहिये। पशु गोदान कर यह यज्ञ समापन करनेका विधि है। हादश रात्रिके पूर्व यह दोष आनेसे पुनर्वार यज्ञारम्भ और परिशेषकी पशु गोदान दक्षिणामात्र प्रायश्चित्त करना चाहिये। इसी प्रकार मत्तान्तरका विधान है। ब्रह्मका ही विहित कर्ममें अधिकार रहने और विशेष आदेश न मिलनेसे समुदाय प्रायश्चित्त होममें ब्रह्मका अधिकार है और ब्रह्मशून्य अग्निहोवादि कार्यमें यज्ञमानके ही अधिकारका विधि कहा है।

२६श अध्यायमें ६ कण्डिका हैं। इन समस्त कण्डिकाओंमें प्रवर्ग्यका उपयोगी महावीरमन्त्रण कर्म प्रतिपादित है। (यथा—मृत्पिण्ड, वल्मीक-सोद, शूकरकलक उत्पादित मृत्तिका, पूतिका नामक जलाविशेष और गवेधुक नामक जलसन्निहित महादण्डजात शुक्लफलविशेष—समस्त द्रव्य सङ्घय-पूर्वक पूर्वदिक् वा उत्तरदिक् रात्रि क्षणान्तरात् और

कुहालकी उत्तरदिक् रात्रिना चाहिये।) उक्त समस्तके प्रथम और निधानका मन्त्रकथन है। इसमें कुम्भकारकलक भाण्डादि निर्गमकी उपयोगी एवं प्रति विषय मृत्तिका प्रथम करणा पडती है। ऐसी मृत्तिका क्षणान्तरात् उत्तरदिक् रात्रिना चाहिये। उसकी दक्षिणदिक् वल्मीकसोद रखते हैं। सम-चतुष्कोण भूभागकी पूर्वदिक्में द्वार और मात वार भूमन्त्रार कर उसके ऊपर वानुका आच्छादनपूर्वक उसमें पशु अर्घ्यात् प्रायः पशु हाथ परिमित नृगचर्म डाल उसके ऊपर उपकरणमसूह रात्रि देना चाहिये। उल्लेखन, जलद्वारा अभिषिञ्चन और मन्त्रार द्वारा मसर्गविषयमें मन्त्रमसूहका कथन है। उसके पनन्तर अध्वर्युका गवेधुक और हागदुग्ध द्रव्यक भावसे रात्रि वल्मीकसोद्रादिके साथ मृत्पिण्ड मिथाना चाहिये। उसके पोछे महावीर कर्तव्य है। उसका स्वरूप है। (यथा—परिमाणमें एक प्रादेश अर्घ्यात् अर्ध इन्त और मध्यदेश उल्लेखनकी भांति सङ्घचित् रहता है। उपरिभागमें तीन अहुन्निपरिमित स्थानके पनन्तर ही यह सङ्घचित्त लेखना लगाना पडती है।) महावीर निष्पन्न होनेसे "मध्वस्य गिवः" मन्त्र पाठ-पूर्वक उसके स्वर्गका विधि है। किमीके मतमें इस मन्त्र द्वारा उसका प्रथम है। इसी प्रकार अपर दो महावीरका विधान है। अभिमर्गपके पोछे समुदायको भूमिमें निहत करनेका विधि है। त्रिकके सुखकी भांति प्राकृतिविशेष, रोहिण कपान एवं वक्ष्यमाण पुरोडागकपानकी भांति गोनाकार दोहनपात्रद्वय भूमिमें स्थापन कर अवशिष्ट मृत्तिका प्रायश्चित्तके लिये निहत करना चाहिये। "मन्त्राय त्वेति" मन्त्र पाठ-पूर्वक गवेधुकसमूह चूर्णकर अश्वपुरोप द्वारा प्रठीम दक्षिणाग्निसे "अश्वस्य त्वेति" मन्त्र पाठपूर्वक इस मृत्तिकाके धूपदान करते हैं। उग्राको भांति प्रदाहन आदिका विधि है। चतुष्कोण अवट बना उसमें अर्पण अर्घ्यात् पाकसाधन काष्ठादि विद्या उसके ऊपर तीन महावीर वक्र भावसे रखने पड़ेंगे। पोछे उसके ऊपर पुनर्वार इस काष्ठका आच्छादन डाल दक्षिणाग्नि द्वारा जलाना चाहिये। दग्ध होने पर फिर

अथ तत्र ज्ञानसुखसि बोजना पश्येत् । इयं कश्चिद्व्यक्तिं
 महावीरसि विद्याय विद्ये प्रथमस्यै पाचरत्नका विद्याय
 है । मार्हपयस्यै पूर्व प्रागपद्युयससूह येना तस पर
 प्राज्ञससूहसि ज्ञापनका विधि है । प्रोचयो संकृत पीर
 कतिव कर ज्ञानको पशुशाका करव है । जोपादिवा
 प्रेरव है । एतसि पूर्वशरसि क्नुवा पीर मयूव निहाक
 म्दको दक्षिचदिक् जडा बैठ होता निहात क्नुवा
 पीर मयूव दीव सके, बडीं तसके निधात करनीका
 विधि है । मार्हमय पीर पाचरनोयमें उत्तरदिक्
 शरनिवाय है । दक्षिचदिक् मितिउम्यमासके उच्छ्रुट
 करनिवायको कर्तव्यता है । पाचरनोयको पूर्वदिक्
 उन्माडासन्तो पाचरव कर दक्षिचदिक् प्राबोपचव
 होता है । उत्तरदिक् राजासन्त्या पीर ज्ञानाकिन
 पाचरव कर तसमें महावीर निद्यान पयवा तसके
 हाप पाच्छादन करला चाहिये । पञ्चर्षु वा पण्य कोर
 क्नुवादि निष्कासन करेवा । पीके विहित धिकताके
 मध्य महावीरका प्रवेसन कडा है । इयं कश्चिद्व्यक्तिं
 प्रस्योताका प्रेरव है । पस्योमिःका पाच्छादन है ।
 पाच्छादनकारके काव म्दकव जडा सिक्तताके मध्य
 ज्ञापनका विधि है । तस सवन सुच्छादकमें संकृत
 हतपूर्व महावीरका निद्यान है । महावीरके उपर
 प्रादेमशरक मन्वका पाठ है । दक्षिचदिक् यजमानके
 कतान पापिका निद्यान है । उत्तरदिक् प्रादेमका
 निद्यान है । महावीरको चतुर्दिक् मन्वकेप कर
 परिजपका विधि पीर महावीरके पाच्छादनका
 विधि कवित है । इयं कश्चिद्व्यक्तिं पाच्छादनके तसव
 प्रस्योताका प्रेरव है । महावीरको चतुर्दिक् ज्ञाना-
 किन निर्मित व्यवन द्वारा व्यवन करनीका विधि है ।
 व्यवनके समय काम पीर दक्षिचमासके तीन बार
 प्रदक्षिचका विद्यान है । पीब प्रकृत कोनेसे तसमें सी
 तोसे हत ज्ञान महावीरके बोजनेका विधि है । तयो
 पमव प्रतिप्रकाताके चक्षणाकका विधि है । पाकथीव
 पर चक्षे ज्ञापनका नियम है । प्रस्योताका प्रेरव है ।
 यजमानके साव कश्चिद्व्यक्तिं परिजमव है । प्रस्योता
 व्यतीत अपर पञ्च कश्चिद्व्यके उपजानका विधि है ।
 प्रस्योताके साव कश्चो कश्चोनाके परिजमवका विधि

है । पञ्चोके मिरका पाच्छादन कोव तसके हाप
 महावीरकोचकविधि है । परिमेषको रीक्षिच पाहुति
 का विषय कवित है । इयं कश्चिद्व्यक्तिं बर्मसूह
 बन्धनके निजे रन्नु पीर तसके पद बन्धनको सन्धान
 पदवपूर्वक मार्हपयमें वा मन्व एव तपोव नाम
 तकारपपूर्वक तसे शरसि तीन बार तसके पाच्छानका
 विधि है । प्रस्योताका प्रेरव है । मन्वपाठके पशु
 शार समागत योको तस रन्नु हाप क्नुवामें बांध
 पीर सन्धान द्वारा तसके पद बन्धन कर "बर्माय
 होवेति" मन्व पद वलको सानपानके विरत करला
 चाहिये । विहित मन्वपाठपूर्वक पिबन नामक पाञ्च-
 विमेषमें तसके दोहनका विधि है । स्तनाकभयनका
 विधि है । ऐसि जो मयूवमें जाग बांध प्रतिप्रकाता
 तसको दीहन करेवा । प्रतिप्रकाताके प्रेरवका विधि
 है । गोके निबटसि पाञ्चर्षुके उद्यानका नियम है ।
 पथीयापचवके प्रक्षयका विधि है । पथीयापचव हाप
 महावीर प्रक्षव एव तसे उत्पितकर पुनर्बार तसे
 पक्षव करनीका नियम है । दुग्धकप घमके निव्व
 दीममें उपयमनोका स्थापन है । उपयमनो द्वारा
 पशुत महावीर पर ज्ञानसुख सिपन कर निर्वाचित
 करनी पीर गोदुग्ध पयनयन करनीका विधि है । इह
 कश्चिद्व्यक्तिं पाचरनोयमें वा वातनाम जपका विधि है ।
 उपयमनोमें पतित दुग्ध वा हतका सिचनविधि है । जपके
 पीके प्रस्योताके प्रेरवका विधि है । मयद्वारके साव
 मन्वपाठपूर्वक ज्ञानका विधि है । तीन बार महावीर
 क्तकभ्यन करनीका नियम है । मयद्वारकतुञ्ज मन्वपाठ-
 पूर्वक पुनर्बार जोमका विधि है । हुतावयित प्रुष्यका
 प्रजातुर्मन्व है । यजमानकत्तव बर्मका पशुजमव
 है । पतितमके लिये पात्रमें उच्छ्रुतित बर्मके
 सेयससूहका पशुमन्वव है । ईमानदिक्को गमन
 कर सिक्तताके मध्य पञ्चर्षु कत्तव महावीरके निद्यानका
 विधि है । निव्वस्य बर्मके मध्य मयस हास पाहुति
 दानपूर्वक प्रथम परिमिते दिवङ्गत मन्वकससूह
 निद्यान करनीका विधि है । ऐसि जो तीन बार पाहुति
 दे पवयित मन्वक दक्षिचदिक् ज्ञानमें प्रवेस करला देना
 चाहिये । अहुत पतम मन्वक महावीरक हतादि हाप

लिप्त कर प्रतिप्रस्थाताको देते हैं। उसके पीछे द्वितीय रौहिण्यके होमका विधि है। मध्यम परिधिमें निहत पञ्च विकसित शकल आहवनीयमें आहुति देना चाहिये। उपयमनीस्य धर्माव्य अग्निहोत्रके विधानानुसार आहुति दे समुदाय ऋत्विक् प्रभृति भक्षण करते हैं। खरमें उच्छिष्ट घृत कर उपयमनीको निधान करना पड़ता है। इसी समय उपश्रित पञ्च शकल आहवनीयमें प्रहार किये जाते हैं। उसके पीछे धेनुको लण जल देनेका विधि है। समुदाय पात्रसमूह आसन्द्या करनेका विधि है। खर, स्यूणा, मयूख, क्षुणाजिन, अभिन्न, उपशय और आसन्दीके एक बार आसादन और प्रोक्षणका विधि कथित है। ७म कण्डिकामें उपसदके पीछे प्रवर्ग्य उत्सादनका प्रकार है। अवभृथकी भांति अर्धयकलक सामगानके लिये प्रस्तोताका प्रेषण है। अवभृथकी भांति देवगति और निघन है। सामगानके पीछे सकलके उत्सादन देशमें अर्थात् महावीरादि पात्रके त्यागदेशमें गमनका विधि है। उस स्थानमें यज्ञ अग्निचितिशून्य होनेसे सकलके उत्तर वेदिमें गमनका विधि है। किन्तु यज्ञ अग्निचितियुक्त रहनेसे परिष्वन्दमें जाना पड़ता है। उक्त उखादन देश वा उत्तर वेदि परिषेक कर उत्तर कार्यकी कर्तव्यता है। अर्धयकलके उत्तर वेदिमें प्रथम महावीर और सर्वदिकमें अपर दो महावीर निघन करना चाहिये। वहीं उपशय अर्थात् महावीरादिकी निर्माणावशेष ऋत्तिका स्थापन करना पड़ती है। महावीरादिकी चारो और परीशासद्वय निधान करते हैं। नीचे और बाह्य देशमें रौहिणी एवं हरणी नामक सूक्लद्वय निधान करना चाहिये। रौहिणीकी उत्तरदिक् अग्नि तथा दक्षिणदिक् आसन्दी और अभिन्नकी उत्तरदिक् धवित्त अर्थात् क्षुणाजिन निर्मित व्यजन समूहमें निधान करते हैं। उसके पीछे परिधि, उपयमनी, रज्जु, सन्दान, वेद, पित्वन, स्यूणा, मयूख, रौहिण्य, कपाल, ऋष्टि, सूव, सुप्लकुट, खर, उच्छिष्ट खर प्रभृति निधानका विधि है। दुग्ध द्वारा महावीरादि सप्त पात्रके गर्तपूरणका विधि है। पत्नीके साथ सकलके चात्वाल मार्जनका विधि है। उसके

पीछे ब्रह्म प्रभृतिको याज्ञिक द्रव्यसमूहके प्रदानका विधि है। महावीर भङ्ग होनेसे यथाकाल प्रायश्चित्त करनेका विधान है। दस प्रायश्चित्तका प्रकारादि है। प्रवर्ग्यके चरणका विधि है। उममें पूर्णाहुति होमका प्रकार है। सन्ध्यमाष महावीर भङ्ग होनेसे उसके प्रायश्चित्तका नियम है। प्रवर्ग्यके अधिकारीका निर्देश है। द्युतशेष द्रव्यके भक्षणका विधि है। प्रवर्ग्य-चरणके आद्यन्तमें शान्तिकाध्यायके पाठका विधि है। इन दोनों अध्यायोंके मध्य १म अध्याय द्वारनिधान पीछे घोर २य अध्याय आसन्द्यामें, पात्र निधानके पीछे पढ़ना पड़ता है।

कात्यायनसूत्रमें उक्त समस्त विषय अति विस्तृत भावसे वर्णित है।

निम्नलिखित व्यक्तिके कात्यायनश्रौतसूत्रका भाष्य बनाया है,—

१ अनन्त, २ कर्क, ३ कल्याणोपाध्याय, ४ गङ्गाधर, ५ गदाधर, ६ गर्ग, ७ पित्रभूति, ८ भट्ट यज्ञ, ९ महादेव, १० मिश्राग्निहारी, ११ श्रीधर, १२ हरिहर। याज्ञिक-देवने श्रौतसूत्रपद्धति और पद्मनाभने कात्यायनसूत्रपद्धति नामसे सूत्रतन्त्र पद्धति रचना की है।

३ गोमिनके पुत्र कात्यायन। इन्होंने गृह्यसंघ और छन्दोपरिशिष्ट वा कामप्रदाप रचना किया है। किसी किसीके अनुमानमें श्रौतसूत्रकार कात्यायन और सप्त-प्रथेता कात्यायन उभय अभिन्न व्यक्ति थे। न्तुका उभयकी रचनाप्रणाली देख बैसा बोध नहीं होता।

हरिवंशमें विश्वामित्रवंशीय कतिके पुत्र कात्यायनों का * नाम मिलता है। फिर इसी विश्वामित्र वंशमें

* "विश्वामित्रश्च सुता देवरातादयः सुता ।

विल्लातास्त्रिषु लोकेषु तेषां नामानि मे शृणु ॥

देवश्रवा, कतिर्यं च यथात् कात्यायना, सुता ।

शास्तावत्यां हिरण्यको रिकोऽं ३५ रिकमान् ॥

सादृतिर्गावश्रवैव सुदृष्टयेति विदुःता ।

समुच्छन्दो अथयैव देवउप तथाऽदृक् ॥

कच्छपो हारितयेव विश्वामित्रश्च सुता ।

तेषां उगामानि गोवापि कोटिः ३। ३। महाभगवाम् ॥

पापिनो वभवयैव ध्यानज्ज्यास्तयैव च ।

देवता देवश्रवैव याज्ञिकव्याधमपंपाः ॥

श्रीदुस्वरा ह्यमप्यतासारकायनपुत्रुलाः ।" (हरिवंश २० च०) .

वैदिकशास्त्रावर्तक काव्युक्ति, गायत्र, सुक्ल, मन्त्राव्युत्तर, टेरक, चतुर्क, अक्षय, वारित, पाविनि, वधु, ध्यानव्यय, द्वैरात, याज्ञवल्क्य, वासुदेव, विष्णु याज्ञवल्क्य, पञ्च मन्त्र, श्रीकृष्ण, तारकायन यज्ञति पाविर्भूत हृद्ये । तन्मन्त्र याज्ञवल्क्याने यज्ञयज्ञु पञ्चात् वाक्यसमीची याथा का प्रचार किया । श्रौतसूत्रकार शास्त्रायन सत्र वाक्य समीची याथाके अनुवर्तक थे । एतौ कारण समझते हैं कि विश्वामित्रवर्षीय (याज्ञवल्क्यके अनुवर्ती) शास्त्रायन यज्ञति जो शास्त्रायनश्रौतसूत्रके रचयिता थे ।

यज्ञतिकार शास्त्रायन श्रौतसूत्रके पुत्र थे । * शास्त्रायनके वर्णमन्त्रोप नामक यज्ञति ग्रन्थमें निम्न लिखित पद्यक विषय पाया है —

ब्रह्मोपशौत, पाचमन, मातृगण, पाण्डुदयिकवाक्य, उहयावाहका इन्द्र परिवेदनदीप, उहका प्रतिप्रसव स्तम्भिकरीया, पम्बावान, पारिचिचि, पञ्चुहार, सुवाटिकपच, वादप्रातर्गमिवाक्य, शोभैतिकर्तव्याता, खानादिश्रिया, सन्ध्यावासान, तपच, पञ्चयज्ञप्रकरण, दक्षिणादिपाव, पाण्डुकाव्यादि, प्रमावाधा याज्ञकाक, याज्ञमोद्गमन, यज्ञु विधि, दुर्भवीर्षमासशोमका कादि, प्रवासिद्योका पूज्यय श्रोत्रतंत्रावर्त, दाम्पत्य सचिचर्ष इन्द्रादि, प्रेतचार्य, शोभोपनादन पर्वणर दाहादि, धर्मोपनिषद्वादि, योद्धमन्वाहादि, शोभोपनिषीय चक्र, गो पञ्चयज्ञादि काक, नरयज्ञकाक, पम्बाहाय नाम एवं विधि, पञ्चातादिसंज्ञा शौर नामा विधि ।

यज्ञार्थयज्ञमें ब्राह्मणोंका दयविध प्रकार शौर वासुदेवादि किया है ।

इ शास्त्रायन वररुचि । धर्मिक शौग रन्धीको पाविनिस्त्रया वार्ति ककार बताते हैं । श्रौतसूत्र मन्त्र-विरचित कवासरित्पागममें लिखा है,—“युपदन्त नामक महादेवके एक अनुचरने शोरोहर्षक धर्मि यज्ञ जो मन्त्रकोक या वसरात्रधानी शोमाश्री नगरीमें श्रौतसूत्र नामक ब्राह्मणके शौरसही कथ पद्यक किया था । वही शास्त्रायन वररुचिके नामसे विख्यात हृद्ये । इनके जन्मकाक पाकामवाशो सुत पढ़ी थी, ‘यद्य वाक्यक श्रुतिचर शौगा शौर वर्ण पण्डितके निकट समस्त किया काम करेगा । वाक्यरच याज्ञमें एतकी पञ्चाचारक युत्पत्ति शोमी शौर वर पदार्थ श्रेष्ठ विषयमें रचि बहूनीसे वररुचि * नाम पढ़ेगा ।’ बयोहृदिके शान वद्य शोमीस श्रुति शौर शोमश्रिसम्पूज हो गये । एक दिन वन्धीने बिली नाटकका अभिनय देख माताके निकट वही नाटक समस्त पाषोपान्त थाइति किया शौर उपनयनके पूर्व ब्राह्मिके मुखसे प्रतिपाद्य सुत एही समस्त कण्ठज कर लिया था । शास्त्रायनने पञ्चमीको वर्षका शिष्यत्व पद्यक कर मना याज्ञमें पाण्डुका काम किया, यहाँ तक कि उन्हींके ब्राह्मणरचक तर्कमें पाविनिको भी उबरा दिया । अथ शिवमें महादेवके अनुग्रहसे पाविनिने जय पाया । शास्त्रायनने महादेवको शोभयाशिके निमित्त पाविनि-वाक्यरच पढ़ उहकी धर्मपूजं शौर सशोचित किया था । परिशेषको वद्य मगधराज शोमानन्दके म श्रियद्वय निबुद्ध हृद्ये ।

इमचन्द्र, शिद्विनी शौर विश्वामित्रिय धर्मिचानमें शास्त्रायनका एक नाम वररुचि * लिखा है ।

पञ्चापक शोसमूहके मतमें भी वार्ति ककार शास्त्रायन वररुचि शौर प्राकृतप्रकाय नामक

* “वराठी शौमिनीशानन्दैदां चं च वर्णमन्त्र ।
 पञ्चमनां विं चक्रुः वररुचिके वरीयन् ॥” (वर्णमन्त्र १११)
 वरां शौवाचारानि शौमिनीकी कल्पनका किया जाता है ।
 चक्रुः वरुं भी शैवा ही वरिचर लिखा है । वरा—
 “शुनचक्रमन्त्रेणैव वर वि शान्तोर्वररु ।
 शौमिनी शौव यथाऽपि वरु इत्यपि शौमिनुः ।
 शौमिचारमन्त्रक शौमिनी वरिचर युक्तम् ।
 वरुवर्णमन्त्रः कतं विदितवन् ॥”
 (चक्रव ११ १२-१३)

* “वचश्रुतिरपी कथी रिदां वररुच्युक्तये ।
 विच व्याकरणं नैके वरिदां वर्णमन्त्रे ।
 यथा वररुच्योने वररुचं वि टोचये ।
 वररु वरं वरुं विविदिन् ॥ कतं वररुच्युत्तम् ॥”
 (शौमदेवकत वररुच्युत्तम्)
 † इमचन्द्रक क्लेवर्णमन्त्र १११८ शिद्विनी नाम १०२ शौर-
 विचारमन्त्र २१ (११२)

व्याकरणकार वररुचि दोनो एक ही व्यक्ति थे। सभ्यवतः उन्हेने इण्डिया हाउसके पुस्तकालयकी सर्वानुक्रमणीमें “अत्र शीणकादिमतसंगृहीतुर्वररुचिरनु-
क्रमणिका” बचन पढ़ उक्त मत प्रकाशित किया है। वास्तवमें कात्यायन वररुचि एवं प्राकृतप्रकाश नामक प्राकृत व्याकरणके रचयिता दोनो एक व्यक्ति नहीं थे। प्राकृतप्रकाशकार वररुचि वासवदत्ताप्रणेता सुबन्धुके मातुल थे। पुराविदोंके मतमें यह वररुचि हर्षविक्रमादित्यके समसामयिक अर्थात् खृष्टीय ६४ शताब्दके लोग रहे। (Hall's Vasavadatta, preface, p. 6.) किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि पाणिनिके वार्तिककार उसके बहुशत वर्ष पूर्व विद्यमान थे। सोमदेवने व्याह्रि, पाणिनि और कात्यायन तीनोंको समसामयिक लिखा है। किन्तु युक्तिपूर्वक पाणिनिस्वरूप और कात्यायनका वार्तिक देखनेसे उभय व्यक्तिको समसामयिक मान नहीं सकते।

एक तो, पाणिनिके समय जिस प्रकार शब्दशास्त्रका नियम प्रचलित था, वह वार्तिकरचनाके समय अनेक अप्रचलित हो गया। जैसे, “अदृशतरादिष् पचष्ः। (पा०।१।२५) अर्थात् उत्तर और उत्तम प्रत्ययान्त एवं अन्य, अन्यतर तथा अन्यतम पांच सर्वनाम शब्दोंके उत्तर क्लौवलिङ्गमें प्रथमा और द्वितीयाके एकवचनमें ‘अदृश्’ होगा। यथा—कतरत् कतमत् इत्यादि। फिर पाणिनिने दूसरा विशेष विधि बढाया— “नेतराच्छन्दसि।” (पा०।१।२६)

अर्थात् वेदमें इतर शब्दके क्लौवलिङ्गपर प्रथमा और द्वितीयाके एकवचनमें अदृश् न होगा, ‘इतरद्’ पदके परिवर्तनमें “इतरम्” लगेगा।

कात्यायनने इस विशेष विधिके वार्तिकमें उक्त सूत्रका संशोधनकर लिखा है,—

“इतराच्छन्दसि प्रविषे एकतरात् सर्वम्।” (वार्तिक)

इसी वार्तिकका पच समर्थन कर काशिकाकारने कहा है,—

“एकतराच्छन्दसि भाषायाच सर्वत्र प्रविषे च इत्यति।”

अर्थात् क्या वेदिकप्रक्रिया और क्या साधारण व्यवहार्य भाषामें सर्वत्र “एकतरम्” पद व्यवहार होगा।

एतद्विन्न पा० ८।४।३५ सूत्रमें भी कात्यायनने प्रतिषेध किया है।

दूसरे, पाणिनिके समय कोई कोई शब्द जैसा अद्य-प्रकाशक था, कात्यायनके समय वैसा न रहा। जैसे— “आयर्धमन्त्रिः।” (पा०।१।१४०)

यहां पाणिनिने आयर्ध शब्दका अर्थ अनित्य ग्रहण किया है। किन्तु कात्यायनने “अदृत इति वक्तव्यम्।” अर्थात् आयर्ध शब्दका अर्थ अदृत माना है। इसी प्रकार ४।२।१२८, ०।३।६८ प्रवृत्ति कई स्थलमें पाणिनि और कात्यायनके अर्थकी विभन्नता लक्षित होती है।

तीसरे, पाणिनिके समय अधिकांग शब्द * और शब्दार्थ जैसा प्रचलित था, कात्यायनके समय वैसा न रहा। यथा—

पाणिनिघृत शब्द	अर्थ
उपसङ्गन (१।३।१६)	उपसङ्गपण
उपसंवाट (३।४।८)	पणवद, उपयकरण।
उपाजेक, अन्वाजेक (१।४।३३)	बलाधान।
कृपि (४।४।८६)	वेद।
कण्डन (१।४।६६)	अज्ञाप्रतिघात।
निषघनेक (१।४।३६)	भोजन।
प्रत्यवसान (१।४।५२)	भोजन।
मनोहन (१।३।६६)	अज्ञाप्रतिघात।
स्वकरण (१।३।५६)	स्वोकार, विवाह।
होवा (५।१।३५)	कृत्वक्।

कथन युक्ति और प्रयोगके अनुसार (कथासरित्-सागरमें उल्लिखित हाते भी) पाणिनि और कात्यायनको समसामयिक कैसे मान सकते हैं? इस पक्षमें कोई संशय नहीं कि कात्यायनके बहुपूर्व पाणिनि आविर्भूत हुये थे। वार्तिक आशेषान्त मनोनिवेश-पूर्वक पढ़नेसे समझ सकते हैं कि पाणिनि व्याकरण प्रति प्राचीन ग्रन्थ है। कात्यायनके समय उपयुक्त वृत्ति

* कथित शब्दोंसे दो एक किसी किसी कायमें शब्दनिर्घणार्थ उक्त होते भी महिनाय व्यतीत दूसरे प्राचीन लौकिक काव्य रण्यादिमें कोई देख नहीं पड़ता। शब्दप्रयोगके गानादप दिखानेके लिये ही केवल महिनायमें उद्धृत हुए हैं।

पञ्चवा वार्तिकके अन्तर्गत चनेक श्लोक इति समस्त न उच्यते षः। सुतरां इह मन्वापर्यन्तके पुनः होनेका उपक्रमः स्यात्। आत्मायनने उक्त सुतरात्करो उच्चारणवन्ति इति पश्चिम परिवाम, अथापारण पाण्डित्य और अमिष्टताके प्रमावके अथवा वार्तिकपाठ प्रथयन किया जा। मन्वाभावने पतञ्जलिने भी लिखा है—

“उपक्रमः उच्यते। उच्चारणवन्तः आत्मा आचरणं आचरन्ते। तेष्वप्यन्यः कान्यकत्वेनाप्रवृत्तत्वेनैवो रतिवत् मया उच्यते अत्र उच्यते न इति।

वैतनीय प्रतिज्ञा प उच्यते। वैतना वैतिकाः मयाः पिता शोकाय वीरिवा चर्तव्यं मन्वापर्यन्ति। ईश्वरं एवं त्वत्प्रियतनुमीयी इत्येवमः इत्युक्त्वा आर्त्तं इव मन्वाकर्त्तव्ये। इत्येव उच्यते अत्र उच्यते न इति। (मन्वाभाव १।१।। पण्डित)

पर्यात् पङ्क्ति उपनयन होनेके पौष्टे ब्राह्मण विद पङ्क्ति से। यह उच्यते अनुसारा अत्रापिधिया और वैदिक शब्दका उपदेय काम करते हैं। किन्तु पात्र कस वेसा नहीं होता। श्लोक विद पङ्क्ति कर ही बना बन बैठते और कहते कि वैदिक वैदिक शब्द तथा शौचिक व्यवहारके शौचिक शब्दनिष्कर्षते हैं। विषय ब्राह्मण पाठ पात्रक नही समझते। पात्रार्थ आत्मायनने उच्यते उच्यते विप्रतिपक्षतुष्टि पश्यनकारिकाके अन्तु हो व्याकरण शिक्षानेके लिये नामा प्रयोगको बतवाते हुये (पाणिनिके अनुवर्तते अत्र) अथवा वार्तिक शब्द प्रकाश किया था।

किसी किसी श्लोकके अन्तर्गत आत्मायनने विधिय भावके पाणिनिकी समासोचना और पाणिनिका श्लोक दिखानेके लिये ही वार्तिकको रचना की है। किन्तु समस्त वार्तिक और मन्वाभाव पङ्क्तिवाली कथा करते हैं—आत्मायन पाणिनिके उच्चारणकर्ता है। वाचस्पतिके मायोजीमङ्गले “वार्तिक” शब्दको विवृतिमें लिखा है,—

“वार्तिकेति। एवं उच्यते उच्यते अत्र उच्यते।”

वार्तिक पत्रो है, जिसमें उच्यते अनुसारा और सुवचन विषय आशोचित हो। पाणिनिके सूत्रमें की बात नहीं करती अथवा की बात अस्पष्ट भावके उक्त हुयी और समस्त न पङ्क्ति, एवं ही शौचगम्य बनाना वार्तिकका काम है।

पङ्क्ति ही लिख चुके हैं—यह ऐसा समस्त पाया था, जब पाणिनिका व्याकरण ब्राह्मण कीयोंने समस्त न पाया था। पर्यन्तु सुत होनेका उपक्रम था पर्यन्तु था। पाणिनिके अनेक सूत्रोंमें पर्यन्तुपङ्क्ति और पर्यन्तु पङ्क्ति, जिन्हें आत्मायनके समय आनेमें प्रमथित मिथ्या पञ्चवा शब्द शब्दकी रीतिसे विवर समझा। उही समय आत्मायनने आचार्य श्लोकोंको समझानेके लिये पात्रक्य विवेचना कर पाणिनिसूत्रका वार्तिक बनाया। आत्मायनने अपने वार्तिकके प्रारम्भमें ही लिखा है,—

“विदुः कर्त्तव्यमर्थः। शौचो एव सुवृत्तं कर्त्तव्यं कर्त्तव्यमर्थो मया वीरिवावैदिके। अथमाचार्यविरचितो मन्वेव उपक्रमेण न पङ्क्तिवैतनीयं विवेचयति इत्येवमः। एवं उच्यते इत्येव मया। न वैतनीयपत्रादिः स्वयमेव क्त्वा निष्कर्षेण इतिवचनवार्त्ताः उपक्रमवार्त्तावत् न चान्तुवैदिकः। अत्र उच्यते अत्र उच्यते (वैदिके इतिवचनम्)।

शब्दके साथ शब्दगत अथवा अन्वय शौचमें प्रसिद्ध है। इस शौचप्रसिद्ध अर्थका प्रयोग कृति में शब्द द्वारा शब्दके वैदिकवित्त समझे निम्नानुसार पर्यन्तु निर्धारित जाता है। शब्द और अथवा शब्द समस्त द्वारा समान अर्थ ही समस्त पङ्क्ति है। फिर भी ऐसा नियम है कि शब्द द्वारा पर्यन्तुका अर्थ करना चाहिए।

अन्तर्गत शब्दप्रयोग अत्रसे ही होता है। पाणिन प्रवृत्ति आचार्यमें सूत्रको बना निर्धारित नहीं किया। (पर्यात् आचार्यमें शानके प्रमात्र अथवा यायके अथ जो सुव उच्चारण किन्ने, यह ईश्वरादि वैदिकशब्दकी भांति अन्वय क नहीं। सुतरां आचार्य श्लोकोंको समझने न पानिये उन्हें अन्वय विधि कह सकते हैं।)

सर्वसमवाय और अनुसारायके लिये अर्थका उपदेय दिवा मया है। शब्दमें प्रवृत्तिके निमित्त एवके पौष्टे सूत्रा अर्थव्यवस्थाका अर्थसमवाय करती है।

आत्मायनका वार्तिक पङ्क्तिसे समस्त उच्यते है—

(१) अर्थमें प्रवृत्तिके अर्थमें पाणिनिसूत्रके अनुवर्तते अथवा वार्तिक अर्थप्रकाश किया है। (२) किसी किसी अर्थ पर नामा तर्कवितर्क और समासोचना निष्कर्ष पाणिनिसूत्रके अर्थपरमं स्पष्ट विधा की है। (३) किसी

किसी स्थल पर सूत्र परिवर्तन किया है। (४) फिर स्थलविशेष पर पाणिनिके सूत्रका दोष देखा उसका प्रतिषेध किया है। (५) पनेक स्थल पर परिशिष्ट लगा दिया है।

पतञ्जलिने अपने महाभाष्यमें वार्तिकपाठ उद्धृत कर उसका भाष्य बनाया है।

पाणिनि और पतञ्जलि देखो।

इन्होंने कात्यायनने वेदकी सर्वानुक्रमणो और प्रातिशाख्यकी प्रणयन किया है। प्रातिशाखा और सर्वानुक्रमणो देखो।

यह पतञ्जलिके बहुत पूर्ववर्ती और पाणिनिके परवर्ती थे।

५ एक बौद्ध आचार्य। इन्होंने अभिधर्मज्ञान-प्रस्थान नामक बौद्धशास्त्र रचना किया है। नेपाली बौद्धग्रन्थके पाठसे समझते हैं कि यह बुद्धनिर्वाणके ४०० वर्ष पीछे प्रादुर्भूत हुये।

६ जैनेके एक प्रधान और प्राचीन स्वविर।

कात्यायनवीणा (सं० स्त्री०) कात्यायनने भाविष्कृता वीणा, मध्यपदलो०। कात्यायन-सृष्ट शततन्त्री वीणा।

कात्यायनी (सं० स्त्री०) कात्यायन-डीप। १ दुर्गा। महिषासुर द्वारा अत्यन्त उत्पीड़ित हो उसके विनाश-साधनको ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरने अपने अपने देहसे यह मूर्ति बनायी थी। महर्षि कात्यायनके सर्वप्रथम इनकी अर्चना करनेसे ही यह कात्यायनी कहार्यी। इन्होंने भाषिणकी ऋणचतुर्दशीकी जन्म लिया और शुक्रसप्तमी, अष्टमी तथा नवमी—तीन दिन कात्यायन ऋषिकी पूजा अर्पण कर दशमीक महिषासुर मारा था। २ कषायवस्त्र अर्धिना प्रौढवयस्का विधवा, गेरुहे कपडे पहने हुयी अघेड वेवा औरत। ३ कषाय वस्त्र, गेरुहा कपडा। ४ कात्यायन ऋषिकी पत्नी। ५ याज्ञवल्क्यकी द्वितीय पत्नी।

कात्यायनीतन्त्र (सं० स्त्री०) तन्त्रविशेष। इसमें शिवने कात्यायनीपूजाके मन्त्रादि कहे हैं।

कात्यायनीपुत्र (सं० पु०) कात्यायन्याः पुत्रः, ६-तत्। १ कार्तिकेय। २ एक प्रसिद्ध बौद्धाचार्य। यह बुद्धके चार सौ वर्ष पीछे भाविष्कृत हुये।

कात्यायनीय (सं० त्रि०) १ कात्यायन-प्रणीत, कात्यायनका बनाया हुआ। (पु०) २ कात्यायनके छात्र।

कात्यायनीव्रत (सं० स्त्री०) कात्यायन्याः व्रतम्, ६-तत्। कात्यायनो देवीके उद्देश्यसे किया जानेवाला एक व्रत। हुन्दावनमें गोपिया श्रीकृष्णकी स्वामीरूपसे पानिके लिये सयाकान यमुनामें नहा और बालुकाकी प्रतिमूर्ति बना भगवतो कात्यायनीकी पूजा करती थीं।

कायक (सं० पु०) कथकस्य अपत्यं पुमान् कथक-अण्। १ कथकके पुत्र। (त्रि०) २ कथकवंशीय। ३ कथक सम्बन्धीय।

कायक्य (सं० पु०) कथकस्य गोत्रापत्यन् कथक-यञ्। कथक ऋषिवंशीय पुत्र।

कायक्यायन (सं० पु०) कथकस्य गोत्रापत्यम् कथक-यञ्-फक्। कथक-वंशीय पुत्र।

कायश्चित्त (सं० त्रि०) कथश्चित् ठक्।

विजयादिमाहक। (पा ३। ४। ११)

किसी प्रकार सम्पादन किया हुआ, जो सुशिक्षितसे बना हो।

कायरी (हिं० स्त्री०) कन्या, कयरी।

काथिक (सं० त्रि०) कथायां साधुः, कथा-ठक्। १ कथादिमाहक। पा ४। ४। १२। १ कथारचमाके विषयमें सुनिपुण, अच्छी अच्छी कहानी बनानेवाला। २ कथा-सम्बन्धीय, कहानीसे सरोकार रखनेवाला।

कादम्ब (सं० पु० स्त्री०) कदम्बे समूहे भवः, कदम्ब-अण्। १ कदम्बस। इसका मांस शीतल, भेदक, शुक्रकारक और वायु, रक्त तथा पित्तनाशक है। (राजवल्लभ) कदम्ब-स्वार्थे अण्। २ कदम्ब-वृक्ष, कदमका पेड़। ३ कदम्ब पुष्प, कदमका फूल। ४ इक्षु, जल। ५ वाण, तीर। ६ दाक्षिणात्यका एक प्राचीन राजवंश कदम्ब देखो। ७ पुष्यविषयविशेष, एक जहरीला फूल। (त्रि०) ८ कदम्ब-सम्बन्धीय।

कादम्बक (सं० पु०) कदम्बस्वार्थे कन्। वाण, तीर।

कादम्बकर (सं० पु०) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कादम्बर (सं० पु० स्त्री०) कादम्ब कदम्बोद्भवं रसं

जाति प्रजाति, कादम्ब क क क र' । १ कदम्ब
पुष्पोक्त मध, कदम्बके फूलकी शराव । २ यौगु मध,
एक शराव । यह मधुर और शिवा एवं अम लम्बा मदक
होता है । (जलिनक) ३ दधिहार, दहीकी मलाई ।
४ दधुभात सुहादि लक्ष्मी बना हुआ शुद्ध मगुरक ।
५ कहराम ।

कादम्बी (सं० स्त्री०) कुक्ष्यादर्श नीलवर्णे पद्मर् रक्त
यक्ष को कदादेश, कदम्बरो कहराम' तक्ष शिवा,
कदम्बर पद्म-स्त्रीपू । १ मधु शराव । २ स्त्रीबिला,
श्लोक । ३ सरलतो । ४ शारिकापत्रिणी, टुप्या ।
५ कदम्बपुष्पोक्त मध, कदम्बके फूलकी शराव ।
६ धनुष्यक कदम्बके तक्षकोटरका इडिजक पुंसे हृदये
कदम्बकी शोषमें पडा कदसातका पानो । * नापमड
विरचित कदाकी नायिका । यह संघ नामक गम्भीर
राज और कदम्बविरचये कल्पक पद्मरोकुलभात गीरोकी
कन्या थी । कल्पक ही ।

कादम्बरीगोत्र (सं० स्त्री०) कादम्बर्वा' गोत्रम्, ३ तत् ।
सुरागोत्र, क्षमीर ।

कादम्बर्ये (सं० पुं०) कादम्बर्ये द्वितम्, कादम्बरो यत् ।
१ कादाकदम्ब । २ कदम्बत्रय, कदम्बका पैड़ । (स्त्री०)
३ पद्म, कंबल ।

कादम्बा (सं० स्त्री०) कादम्ब इव पाचरति, कादम्ब
क्षिप् पद्म-र्याप । कदम्बपुष्पोक्तता एक विल । इसमें
कदम्बकी भांति पुष्प प्राप्ति है ।

कादम्बिक (सं० स्त्री०) मोक्षदृश्यकारण, कामिनी
शैल बनामैवाका ।

कादम्बिनी (सं० स्त्री०) कादम्बा कलसंधाः सन्ति
पद्माम्, कादम्ब-इति-स्त्रीय । शिबमाता, पत्नी ।

कादर (वि०) कर्म हीकी ।

कादर—भागवतपुर और धन्याकपरगरीकी एक गाँव ।
दाक्षकाम्यके पनमलय पर्वत और कोयलपुर जिलेमें
ही "कादर" नामक एक गाँव रहती है । अनैक लोग
पनुमानके इन दोनों गाँवोंकी एक ही संघीका
कदम्बती है ।

कादर क्षत्रिय और मध्यकारण कर प्रधानता
जीविका चलाती है । अनैक लोग मजदूरी भी कर

जाते हैं । किसीके मतमें कादर सुदूरवा जातिके निकले
हैं । इनमें दो संघी विभाग हैं—कादर और नैया ।
नैया नामक एक खार्जक जाति भी है । कादर में दोषी
कोई सम्भव नहीं रहती ।

कादरोंमें अनैक गोत्र होते हैं । सबसे मोक्षमें
परकार पाहान प्रदान नहीं होता । इनमें बाड़े,
बारिक, इधे, इकायो कम्पतो, कापदो, मन्दर, मांभी,
मरेया मरोक, मिर्दाह, नैया, रावत और विधिगालन
खरें गोत्र हैं । बाड़े गोत्रवासी मिर्दाह, कम्पतो
और रावत गोत्रको छोड़ दूसरे किसी गोत्रमें विवाह
नहीं करते । कम्पतो केवल बारिक कापड़ी, मरोक,
इधे, मांभी और बाड़े गोत्रके विवाह सम्भव छोड़ती
हैं । मरोक गोत्र बारिक, कापड़ो, मांभी, मन्दर और
नैया गोत्रमें विवाह करता है । फिर मिर्दाहोका इधे,
मांभी, कम्पतो, और बाड़े गोत्रवालोंमें और नैयोका
केवल मरोको, इकायोंके कम्पतियों और बाड़ियोंमें
विवाह जाता है । यह मातुलकन्या वा पित्रप्यकन्याके
विवाह नहीं करते । मातृपर्यायमें १ और पुत्र्य तथा
पित्रपर्यायमें * पुत्र्य छोड़ विवाह होता है ।

इनमें बाँधिका और बयका दोनों कन्याओंका
विवाह होता है । फिर भी बालिकाकालमें विवाह
होना प्रयत्न समझा जाता है । कोटे हिन्दुओंकी बाँधके
विवाह होता है । सिन्दूरदान की विवाहका प्रमाण
काय है । पामका नापित इनका पौरोहित्य करता है ।
श्रीके यन्तान न होसिरे यह दुष्टता विवाह करते हैं ।
विधवा समारोको प्रथाके पशुघार निषिद्धगोत्र और
पुत्र्यादिको छोड़ विवाह कर सकते हैं । स्त्रीकी सारी
सर्वस्व परित्याग होमिपर समारोको प्रथाके पशुघार
पुनर्विवाह करनेका अधिकार है । समारोका विवाह
करके बाहर पन्तपुरके पोखे खुली जगहमें और घुम
विवाह करके चतूरी पर होता है ।

यह प्रवृत्ती कदा और उरका मजठ उठा कल्प है
दुसरे दिन समाहित करते हैं । क्रमोदय दिनको घटके
उपेसती बलि दिया जाता है । फिर सलुके दिनके
ब्रह्म साध पोखे इको प्रकार बलि देते हैं । इनमें
पार्षिक आदि नहीं होता ।

हिन्दुओंमें यह बहुत छोटे समझे जाते हैं। जोमां और हाड़ियोंको छोड़ दूसरी कोई जाति इनका हुवा यानी नहीं पीती। कादर मुहयों और कहारोंका भद्र खा लेते हैं, किन्तु वह लोग इनका भद्र ग्रहण नहीं करते। यह लोग गोमांस, गूकरमांस, सुरगा तथा चूहा खाते और मद्यादि भी पी जाते हैं। कभी कभी कति और कुल्हाड़ीकी पूजा होती है।

कादर हिन्दू होते भी अपर असभ्य जातियोंको भाति कुसंस्काराच्छत्र हैं। इनमें कितने ही लोग विश्वास करते कि कुछ विशेष शक्तिसम्पन्न अपदेवता उनकी चारोघोर रहते हैं। उन देवताओंमें अनेक इनके पूर्वपुरुषोंके आत्मा होते हैं। दूंगरे लोगोंके विश्वासानुसार अपदेवता कहीं नहीं, फिर भी नदी पर्वतादिसे शक्ति उद्भूत होती है। उसकी कोई मूर्ति वा प्रतिमा मानी नहीं जाती। कहीं घोड़ीघी रंगी नृत्तिका और कहीं एक खण्ड सिन्दूरस्त्रेपित प्रस्तर खण्डमात्र भगवान्के उद्देशसे मार्गके मध्य प्रतिष्ठित रहता है। उक्त सकल प्रतिष्ठित देवताओंमें कारुदानो, हर्दियादानो, सिमरादानो, पहाड़दानो, मोहन, दूया, लिनू, परदीना इत्यादि प्रधान हैं। इनके मतमें लोग समझ नहीं सकते उक्त अपदेवता कौन कौन शक्ति रखते हैं। कादरोंके कथनानुसार उक्त सकल अपदेवताओंकी पूजामें अवहेला करनेसे देशमें नाना असमझ होते हैं। पूजाके समय यह लोग गूकरगावक, छागल, कवृतर, और सुरगा काट कर चटाते हैं। शय्यकी गिखा और छतादिका उल्लङ्घन किया जाता है। इनके देवता जहां स्थापित रहते, उन कुल्होंकी सरना कहते हैं। नापित ही इनके पुरोहित हैं। उपासक पूजाका द्रव्य खाते हैं। यह अपनेको हिन्दू वतते और परमेश्वर महादेव, विष्णु प्रभृति नामोंपर विश्वास लाते हैं।

दाक्षिणात्यके कादर पर्वत विभागमें वास करते हैं। वज्रपुलियार और मालय भावसार जातिपर प्रमुख चलाते हैं। कभी कभी तोप और युद्ध सज्जादि वहन करते मो दासादिके कार्यसे भक्त रहते हैं। पक्षे-दार कहनेमें बुग मानते हैं। वज्र बड़े विख्याती सत्य-

वादी और वाध्य होते हैं। कुक्षित केशका बंधाव रहता है। वनसे हरिद्रा, अदरक, मधु, मोम इनायची, रीठा, माणफस इत्यादि संग्रह कर चावल और तम्बाकूके साथ बंदसते हैं। यह अंगरेजी जंगलसे जो चीज खाते, उसका महसूल नहीं चुकाते। कोचिन-राजके अधिकृत वनभागसे इनायची संग्रह करनेके लिये केवल वार्षिक १०० रु० राजसूट देते हैं। कादर वनमें पथ प्रदर्शकका कार्य करते हैं, किन्तु कभी वीभ नहीं टोते।

कादलेय (सं० त्रि०) कदसेन निर्वात्तम्, कदस-ठम् । कदस निर्मित, केलिका बना हुआ ।

कादा (हि० पु०) जहाजकी एक पटरी । यह शहतीरों और कदियोंके नीचे लगती है ।

कादाचित्क (सं० त्रि०) कदाचित् भवम्, कदाचित्-ठम् । समय पर होनेवाला, जो कभी कभी हो ।

कादाचित्कता (सं० स्त्री०) कादाचित्कस्य भावः, कादाचित्क-तल्-टाप् । कदाचित् उत्पत्ति ।

कादिपुर—पश्चिम प्रदेशके सुलतानपुर जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ५८' ३०" से २६° २३' ३०" और देशा० ८२° ८' से ८२° ४४' पू० तक अवस्थित है। इसके उत्तर अकबरपुर तहसील, पूर्व भागमगढ़ जिला, दक्षिण पत्ती तहसील और पश्चिम सुलतानपुर तहसील है। भूमिका परिमाण ४३८ वर्गमील है। यहां सुलतानपुर और जौनपुरकी सड़क भा मिनो है। राजकुमार जमिन्दार हैं। ब्राह्मण बहुत रहते हैं। तहसीलको छोड़ धाना और स्तूप भी है। एक देशाती वंक खुला है। बाजार बहुत छोटा है। भूमि समान-गुणविशिष्ट है। नाले चारो ओर लगे हैं। बड़ी नदी पर पुल बंधा है।

कादियान—बोरनिषो हीपवासी एक जनार्थ जाति। आजकल इस जातिने सुसज्जमान धर्म ग्रहण कर लिया है। कादियान ही—बोरनिषो हीपके आदिम अधिवासी हैं। यह सरल और शान्तिप्रिय हैं। इनकी स्त्रियां अधिक सुयी होती हैं।

कादिर—१ शैशु अद्भुत कादिरका उपनाम। आलम-गौरके पुत्र शाहजादे मुहम्मद अकबरने इन्हें अपना

मुंसी बनाया था। यहाँने एक होवान् बिचा है।
२ बजोर धान्वा उपनाम। यह धान्वाके निवासी रहे।
शाहमगोर पीर लकके टोनों कसपकिकारी इन्के बहुत
चाहते थे। १०१४ ई०में इनको मरुतु हुई। इन्की एक
होवान बनाया है। ३ बदाख्वासे बन्दुस कादिरका
उपनाम। इन्के लोग कादिरों भी कहते हैं।

कादिर (सं० खी०) कादिरसार।

कादिर खली—एक सुससमान पीर। प्रायः वन् ३२०
दिनकीको जीकीफानमें इनकी लखप्रवच किया था।
उसके पीके सुतब-उद्दीनके राज्यकालमें यह पक्षीर
मये। बर्हा सेयद हुसैन मगोहीको ख्याति इनका
विवाह हुआ। ६२८ ई० का यह मर मये। १०२०
दिनकीमें लखनौर बादशाहने इनकी कब्रके पास
एक सुन्दर मसजिद् बनवायी थी। इनके करवाब
नगरमें भी एक मसजिद् है। मोयका सुससमान
कादिर खलीको बड़ो खामलि कहते हैं। ११ वां
जमाद-उल्-पखौर इनके लखवला दिन है।

कादिराह—सुखमानाके पटा जिलेका एक गाँव।
यहाँ बंकरुके बने एक प्राचीन दुर्गका अध्यापयि
विद्यमान है। कादिरमखाने घरको मायाको एक
गिबाधिपि निबन्धी थी। उसमें बिचा है,—यहाँ वन्
११०४ दिनकीको शाहमगोरके राज्यकालमें यहाँत
खानकी दरगाह बनी थी।

कादिरगाह—मानवके एक बाह्याह। सखाद् हुमायूँने
मासको पकिवार कर अपने पक्षसरोके बाप कीड़
दिया था। बिन्दु उनके धागरे बापिल जाते ही
पूर्वतन खिलजी राज्यके एक पदाधिकारी सुख् खान्नी
बारह मास बिजोके पक्षसरोसे लड़ नर्मदा पीर मेरुधा
नगरके बीचका समस्त देय पकिन्नत किया तथा
अपना कपाधि कादिरगाह रख किया। यहाँने
१३३२ ई० तब राज्य बनाया था। पीके मिरगाहने
मासव पकिवार किया पीर इनके मन्त्री एक बख्तो
यखा खान्का राज्य भोप दिया।

कादिरों—१ यादवजाँके ल्के सुख यादवजाँके दारा
गिबोडका उपनाम। २ बदाख्के बन्दुसकादिरका
उपनाम। (सं० खी०) ३ खीसी।

कादीवादी—बहुतसे पीरीसपरगनेका एक नगर।
यह पक्षा० २९° ३८' १०" स० पीर रेखा० ८८
२८' ३८" पू० पर अवस्थित है। साधारण लोग इसे
केट्टो कहते हैं। यहाँ प्रायः ३००० आदमी रहते
हैं। बिधाखय पीर काकहरको कोड़ कादीवादीमें
अनेक बख्तोस लोगोंने बर भी वने हैं।

कादुरिय (सं० पु०) कादुरियख सुमान् कदु-ठक्।
अवस्थित। न० ३११२२। १ कदुके सुख। मिय, अन्ना,
बासुकि, तथक, सुखसुम पीर कुबिख 'कादुरिय'
कहाते हैं। १०

२ खड्क। ३ खड्कीर। -

खान (हि० पु०) १ खर्च, गोम। २ खेरी। ३ खरक
खलि, सुनकीको ताकत। ४ खका, खकड़ीका एक
ठुकरा। इसे खकके धानी खूँड़ पीड़ा करनीको-बाँधते
हैं। ५ खर्चाखहार विधिय, एक गहना। इसे खानमें
पहनते हैं। ६ भदा खोन। ७ खनेद, भारपायीका
टेकपन। ८ पखमा। ९ खकदागी, पिपाही।
(खी०) अने दो।

खानक (सं० खी०) खानक पखमिख खरं पख पख्दाख,
खनक-अक्। १ खेपासखीक, वापपन। राजवखमके
मताहुसार यह तीख्ख खखीरै धारक पीर वन्
खेदकारक है। २ खसूरवीक, खसूरका बीज। (त्रि०)
३ खनक खखपीक, सोनिका बना हुआ।

खानकखर्च (सं० खी०) खीवखमिय, एक दवा।
खड्कसुम, यकधार, खिकर, पाठा, रसाखन, खय,
खिपका कारित लीड पीर खितक बराबर बराबर
खुटपीस कर खानके यह बनता है। इसे महुके खाक
सुखमें रखनेके सुखरोम धारोख खोते हैं। (खलीठरे)

खानगी (हि० पु०) खखविधिय एक पिड़। यह
खीडख देयमें जोता है। इसका तिल पोका रहता
पीर दवा बनाने तथा बखानिमें खनता है। पख
खापपखे मिबठा है।

• "३००० कीसकी पदुखिय बखकष सुनकः।
खूँड़ कुबिखके बखरीकः खकीरिः।"
(अन्नाख १।११।११)

कानड़गौड़ (सं० पु०) कानडा और गौड़से उत्पन्न एक राग ।

कानडनट (सं० पु०) कानडा और नटके संयोगसे निकला एक राग ।

कानड़ा (सं० स्त्री०) एक रागिणी । इसका स्वरग्राम नि सा ऋ ग म प ध है । ११से १५ दण्ड रात्रि चढ़ते यह गायी जाती है । भिन्न भिन्न राग-रागिणीसे मिलने पर १८ प्रकारके भिन्नकानडाकी उत्पत्ति होती है,— १ दरवारी कानड़ा, २ नायकी कानड़ा, ३ सुद्रा कानड़ा ४ काशिकी कानडा, ५ वागीथी कानड़ा, ६ नट कानडा, ७ काफ़ी कानड़ा, ८ कीलाहल कानडा, ९ मङ्गल कानड़ा, १० श्याम कानडा, ११ टड्ड कानडा, १२ नागध्वनि कानडा, १३ अड़ाना, १४ शाहाना, १५ सूहा कानड़ा, १६ सुधर कानडा, १७ हुसेनी कानड़ा और १८ मियांकी जयजयन्ती ।

कानडा (हिं० वि०) १ काण, काना । २ चम्पो रानीका घर । यह सात समुन्दर खेलमें होता है ।

कानद (सं० पु०) घोररणके पुत्र ।

कानन (सं० स्त्री०) कां जलं अननं जीवनं अस्य, बहुव्री० यद्वा कानयति दीपयति, कन-णिच्-ल्युट् । १ वन, जंगल । कस्य ब्रह्मणः आननम् । २ ब्रह्माका मुख । ३ गृह, घर ।

काननचन्द्र—टिकारीके एक विख्यात राजा ।

(देगावली ३५ । २ । २)

काननाग्नि (सं० पु०) काननाष्वातोऽग्निः, मध्य-पदलो० । दावानल, जंगलमें लगनेवाली आग ।

काननारि (सं० पु०) काननस्य अरिःरिव, उपमित समा० । शमीवृक्ष, कुमतिया पेड़ । इसकी मध्यस्थित शाखा रगड़नेसे अग्नि प्रवृत्तित हो कभी कभी समग्र वन जला डालता है । इसीसे इसको 'काननारि' (जङ्गलका दुश्मन) कहते हैं ।

काननौका (सं० पु०) काननं प्रोक्तः स्थानमस्य, बहुव्री० । १ वनवासी, जङ्गलमें रहनेवाला । २ कपि, बङ्गर । ३ वानर, वन्दर ।

कानपुर—युद्धप्रदेशका एक जिला और नगर । यह जिला अक्षा० २५° २६' से २६° ५८' उ० और देगा०

७८° ३१' से ८०° ३४' पू० तक अवस्थित है । कानपुर इलाहाबाद विभागके पश्चिमार्धमें पड़ता है । इसके उत्तरपूर्व गङ्गानदा, पश्चिम फर्रुखाबाद तथा इटावा, दक्षिणपश्चिम यमुना और पूर्व फतेहपुर है । इस जिलेका सदर मुकाम कानपुर नगर है ।

कानपुर जिला गङ्गा-यमुनाके अन्तर्गत सुविख्यात दीवाव प्रदेशका मध्यवर्ती है । इस जिलेमें गङ्गा और यमुनाको छोड़ दूसरी भी अनेक क्षुद्र क्षुद्र नदी है । साधारणतः भूमिका भाग दक्षिण-पश्चिमके अभिसुख ढालू पड़ता है । चार प्रधान क्षुद्र नदियोंसे कानपुर जिला चार प्रधान भागोंमें विभक्त है । गङ्गाकी उपनदी ईशानने उत्तर दिक् एक खण्ड त्रिकोणाकार भूमिको बाँट दिया है । मध्यमें पाण्डु (पाँडव) और रिन्द दो नदियोंसे दूसरे दो विभाग बने हैं । फिर अवशिष्ट भूखण्डके मध्य यमुनाकी उपनदी सेगुर वर्तमान है । इन सकल नदियोंका तोड़ फोड़ बहुत अधिक विस्तृत और गम्भीर है । कानपुर जिलेके मध्य गङ्गा यमुनामें वर्षाके समय बड़ी बड़ी नौका आ-जा सकती हैं, किन्तु अन्य समय क्षुद्र क्षुद्र नौका व्यतीत बड़ी नौकावोंका चलना कठिन है । क्षुद्र क्षुद्र नदी घोषकालमें प्रायः सूख जाती हैं । १८५७ई० तक कानपुर नगरके नीचे आने-जानेकी गङ्गापर नावका पुत्र बंधा था । फिर अवध-रहेलखण्ड रेलपथके लिये गङ्गापर पक्का पुल बना । आजकल बी० एन० डेवस्यू० आर० ने भी अपना दूसरा पक्का पुल बनवा लिया है ।

कानपुर जिलेकी भूमि स्वभावतः शुष्क है, किन्तु अब गङ्गासे नहर निकलनेके कारण अधिक वर्षा और शस्यशालिनी बन गई है । इस नहरकी शाखाप्रशाखा-से छोड़ समस्त जिलेमें जल पहुंचानेका प्रबन्ध बंधा है । इस जिलेमें कई भील हैं । सिकन्दरा परगनेमें सोना भील है ; यह सिकन्दरसे भोगिनीपुर तक चली गई है । सोना भील यमुनासे दो मील दूर है । यमुना आजकल जहाँ जैसे बितनी झुक झुक कर बही है, यह भील भी ठीक उसके समानान्तर भावमें वैसे ही घूम घूम कर चली है । इसीसे कोई कोई सोना भील-की यमुना नदीका प्राचीन गर्भ समझते हैं । किन्तु

प्रांश भी इस सम्बन्धमें कोई प्रमाण वा प्रतिवाद नहीं मिलता। इसी प्रकार रत्नवाहाद और गिवरानपुरमें २१ मील विद्युत खोत है। छवि भी लोग प्राचीन नदी का मम मानते हैं। इस जिलेमें बंगल न छोटे भी ज्ञान ज्ञान पर मूर्ति पड़ी है। पतित मूर्तिमें कि दूक (टाक) हूय हो पवित्र विद्यमान है। ज्ञानपुर जिले में चौता, बाब, मोखगाय, हरिच, बोमडो, नृमाळ, गृहर इत्यादिको छोड़ अन्य कई अन्य जन्तु देख नहीं पड़ता।

इस जिलेमें वृद्धमान्दिके सब जातिवासी हिन्दू ब्रह्म संघीके मूखलमान और यूरोपीय रहते हैं। धामका सामाजिक बन्धन अन्तर्दिके अन्धान्य ज्ञानको भाति है। जमीन्दार हो प्रथम मन्थ है। प्रधानतः ब्राह्मण और राजपूत हो जमीन्दार होते हैं; बसके पीछे साबिक पवित्रासिद्धीके अन्धकार छपक है। यह जमीन्दारोंको जमीन बंयातुक्रमसे मोफुसे तोरपर खोती है। फिर बगियाँ और दुबान्दार हैं। इसी प्रकार दूसरे बिधान, मार्त, कोडार, कुन्दार इत्यादि रहते हैं।

ज्ञानपुर जिलेमें खेती बाराका बियेय प्रमेद देख नहीं पड़ता। दोबावके अन्धान्य खेतोंमें जैसी इबासीके अविचार्य बसता, यहाँ भी यँसे हो हुवा करता है। ज्ञानपुरमें दो बड़ो फसले होती हैं। मरगुकाकमें जेने-बाको फसलको बरीय और बसता कालमें जेनेबाको फसलको रबी कहते हैं। अन्धको प्रथम इतिमें खरीफ होती है। इस फसलमें ज्ञान, मकई, बाजरा, ज्वार, चापाप, नीच इत्यादि होता है। इसका पवित्राय धार्मिक मासमें पक जाता है। धान यीध यीध पकनेसे माद्धमें भी काट लेते हैं, किन्तु अपाप पावगुन म्यतोत हुननेके सायक नहीं होती। रबी धार्मिकमें बोई और चैत्र बेशान्दमें काटो जाती है। इस जिलेका प्रधान फाष गीहू है। प्राय सब ज्ञानपुरमें अपाप बहुत बतते हैं। कारक इससे काम बहुत होता है। यहाँ खेतीकर काम एक प्रकार अन्धान्द अन्धारावा बसते हैं। किन्तु जमार, बाकी, कुमीने प्रथम अपाप यँयो बहुत इति है। इसीसे ज्ञानपुरकी दरिद्रता

अति प्रसिद्ध है। उत्तराखलमें ज्वार तथा गीत्र और दक्षिणाखलमें बाजरा पवित्र अपापता है। बिबरीर, रत्नवाहाद और गिवरानपुरके दक्षिणार्धमें प्रायः होता है। गिवरानपुरके उत्तरार्धमें नील ही प्रधान है। सबस जेज मड्डीको नहर, नूप, पुष्करिको, मड्डे मील इत्यादिसे हीच पावाद किये जाते हैं। ज्ञानपुरमें अनाहडिका मय पवित्र रहता है, सुतरा दुर्मिय भी यथैठ ठहरता है। प्रधानतः इस जिलेके पवित्रार्धमें दुर्मियके मयके लोग घरवाया करते हैं। ज्ञानपुरमें कई दुर्मिय पड़े और उनसे जाको लोग और ज्ञान-कर मरे हैं।

ज्ञानपुरके मड्डा, अपाप और नाथका क्षेत्र बाहर भेकते हैं। यहाँ जो नीच अपापता, उससे जेबल बील हो अन्धकोत होता है, वह बील बिहार प्रदेशमें पवित्र बिकता है। ज्ञानपुर नगरमें बोड़ेका साम, जूता, पोटायापो इत्यादि अमड्डेका प्रत्यादि यथैठ और अन्ध रहते प्रयुत होता है। अमड्डेके कई कार खानि खुसे हैं।

ज्ञानपुरके पुतखोबरीमें फरेका अपाप भी बनता है। बहुतसे तम्बू और छेरे तैबार किये जाते हैं। ज्ञानपुरके पुराने जिलेमें मबरनमिफ्फने अपाप अमड्डेका कारखाना खोल रखा है। उसमें अन्धका मयचार्य प्रत्यादि बनता है। सरकारो पाटेको अल भी है। इसमें अन्धके किये पाटा अन्ध इत्यादि तैयार करते हैं। एकपथ, नदी, नहर, पकी और कच्ची सड़क अथवा नागाविष पत्र यथैठ है। धार्मिकरतका प्रधान मास पाण्ड ट्राइरोड गाँवके अमान्तराज इस जिलेमें प्रायः १८ मील विद्युत है।

यहाँ एक कलेक्टर मजिस्ट्रेट, दो ज्वाइफ्ट मजिस्ट्रेट, एक पसिडण्ट और दो डिपटी मजिस्ट्रेट रहते हैं। सबस प्रकारके राजखका पूरा परिमाण १८०२५७ १० है। पुलिस, टेकोप्राय, विद्यालय इत्यादि सुविधाके अन्धकार विद्यमान हैं।

ज्ञानपुर जिलेमें चार प्रधान नगर हैं। उनसे प्रत्येकमें १ इकायके पवित्र लोग रहते हैं। प्रधान नगर ज्ञानपुरमें वार ८०१०० बिठूरमें ०१०१

विन्हीरमें ५१४३ और अकबरपुरमें ८३४८ लोगोंका वास है।

कानपुर नगर गङ्गानदीके दक्षिण कूल पर अवस्थित है। प्रयागके त्रिवेणीसङ्गमसे १३० मील ऊपर यह नगर पड़ता है। युक्तप्रदेशमें कानपुर चतुर्थ नगर है। समुद्रपृष्ठसे यह ५०० फीट ऊपर है। यहां सेनानिवास (छावनो), अदालत, ऐशान इत्यादि विद्यमान हैं। सेनानिवास और अदालत गङ्गा किनारे है। पूर्वांशमें देशीय अस्वारोही सेनानिवास और कवायद परेडकी जमीन है। कवायद परेडकी जमीनसे पश्चिम युरोपीय पदातिकी वारीक और सेण्टजान गिरजा है। इसके मध्य गङ्गा किनारे सेमोरियन गिरजा है (यह १८५७ ई०को सिपाही-विद्रोहके स्मरणार्थ बना था)। नगरके उत्तरांशमें साधारण कवायदपरेडकी जमीन है इसके समुख गङ्गातीर म्युनिसिपल गार्डन है। इस उद्यानमें एक कूप था। आज कन उसी कूप पर एक स्तम्भ बनाया और उसकी चारों ओर प्राचीरका वेग लगाया गया है। इस स्तम्भ पर एक स्वर्गविद्याधरीकी मूर्ति है। स्तम्भके गात्रमें अंगरेजीसे लिखा है,— “विद्रोहके विद्रोही नाना धनुषपुत्रके दलने १८५७ ई०की १५वीं जुलाईको इसी स्थानके निकट अनेक युरोपियों विशेषतः युरोपीय स्त्रियों और शिशुओंको अन्यायरूपसे मार इस कूपमें डाल दिया था।” इस उद्यानकी रक्षाके लिये गवरनमेण्टका वार्षिक ५००० रु० खर्च होता है। उक्त विद्रोहमें जो निहत हुये, वह इसी उद्यानके दक्षिण और पश्चिमांशमें गड़े हैं।

कानपुर नगर प्राचीन नहीं। इस लिये यहां दर्शनीय अट्टालिका, प्रासाद और मन्दिरादि कम हैं।

१७६४ ई० को वकसर और १७६५ ई०को कांडके युद्धमें गुजा-उद्-दीना (अवधके नवाबवजीर) पराजित होनेपर यह नगर बना। नवाब अंगरेजीसे सन्धि कर फतेहगढ़ और कानपुरमें सैन्य रखने पर स्वीकृत हुये थे। १७७८ ई०को वर्तमान स्थान नवाधिकृत स्थानकी प्रान्तसीमाके सेनानिवासका निरूपित होनेसे इस नगरको नीव पड़ी। १८०१ ई०को अंगरेजीने अवधके नवाबसे इसकी चारों ओरका स्थान पाया था।

उस समयसे कानपुर एक जिला और प्रधान नगर गिना जाता है। १८५७ ई०के सिपाही विद्रोहको छोड़ दूसरी कोई ऐतिहासिक घटना यहां नहीं हुई।

सुसम्मानोंके अधीन यह जिला अनेक परगनोंमें विभक्त था। उस समय कानपुर इलाहाबाद और आगरासे लगता था। ११८४ ई० को साहब उद्-दीन गौरीने दोषाध अधिकार किया, उसीके साथ कानपुर भी उनके हाथ लगा। श्रीरंगजीवके समय यहां दो एक सामान्य मसजिदें बनीं थीं। मुगल सम्राटोंकी दुर्दशाके समय १७३६ ई०को यह अंग महाराष्ट्रके अधिकारमें गया। अवधके नवाबसे सन्धि होने पीछे अंगरेजी सेनाने प्रथमतः बेलगांव (विश्वग्राम) और फिर कानपुरमें आ अवस्थान किया।

सिपाहीविद्रोहके समय कई दिन तक समस्त जिलेमें विद्रोहान्त जला था। मेरठमें विद्रोह आरम्भ होने पीछे ही नानासाहबकी कानपुरके धनागारकी रक्षाका भार सौंपा गया। जूनमासके प्रथम यहा चारों ओर किले और गढ़े बना समस्त यूरोपीय बैठे थे। ६ठीं जूनको कानपुरका देशीय द्वितीय अस्वारोही दल तथा प्रथम पदातिदलने विगड जेल तोड़ा, धनागार लूटा और आफिस आदिकी गिरा डाला। उसके पीछे विद्रोही दिल्लीके अभिसुख चले गये। उसी समय ५३ एवं ५४ संख्यक सैन्यदल विद्रोही हुवा। नानासाहबने विद्रोहियासे मिला उनके साहाय्यसे यूरोपियोंके आवास आक्रमणपूर्वक तीन सप्ताह अवरोध किये थे। बेलगागरदसे अंगरेज (केवल सात सौ या एक हजार ही लोग हागे) धूपमें खड़े हो लड़ने लगे। विद्रोहियोंका आक्रमण तीनवार हुवा हुवा था। शेषकी अधिकांश अंगरेज मारे गये। विद्रोही उन्हें परास्त कर उन्मत्त भावसे स्त्रियां और शिशुओंको भी मारने लगे। २६वीं जूनको नानासाहबने इतावशिट अंगरेजोंकी रक्षा करनेमें प्रतिश्रुत हो सबको लेकर कानपुरके सतीचौराघाटमें नौका पर बैठाया था। नौका इलाहाबादको खुननेके पहले तोरख विद्रोही सिपाही गोली चला आरोहियोंको गिराने लगे। दो नौकाओंने भागनेकी चेष्टा कौ थी। किन्तु सिपाहियोंने

दोनो खिलारके गोखो बका एकको बुवा दिवा। एखके
 कई लोग खुद चांद गिवराजपुर आम मये से। सिपा
 हियोनि बहासे मो ३ पादमी जोड़ सबको एककर मार
 जावा। मोरामे जितने खियां थीर गिय से, सब
 सवादाको जोठीमे धाबक बिसे मये। पीछे सब काम
 पुरके बहिदोसमे जाबलकको तोपका प्रथम गन्द सुना,
 तब सिपाहियोनि कज सबक खियों थीर गियबीको
 टुकड़े टुकड़े कड़ा दिया जा। प्राय हो सो प्राची
 बिबल हुये होये; जहाँ एह खापार हुवा, वहाँ सेमो-
 रियल रूप थीर म्थ्य बना है।

११ वीं जुलाईको जाबलकमे पाण्डु नदीके तीर
 थीर पबइरमे हुइकिया जा। उसके दूसरे दो दिन
 कानपुर पबिसत हो गया।

२०वें नवम्बरको म्हाखियर थीर पबतके विद्रो
 हियोनि पापसमे मिल कानपुर फाकमपपुरेक नगर
 पबिसतार बिबा जा। दूसरे दिन सन्नावाल जाई
 झाबइने या फिर फाकमक बिया थीर; इठी दिवम्बर-
 को विद्रोहियोको नगरसे मना बनवा तोप रईकसा
 सब बीन बिया। जनरल गोयाखयोनि पबइरपुर,
 रज्जुबाबाद थीर डिरापुर उदार बिया जा। १८५८ई.के
 मई मास कासपी उदार होनेसे कानपुरमे मान्ति
 कापित हुई।

कानपरेस (एं. एं. Conference) १ समाम,
 भजबिष। २ मन्दाया सबाह।

कानकंड (एं. रि.) कबल-हुज्। कानल नामक
 प्वात्र द्वारा निर्मित, कानकंडा बनाया हुवा।

कानडेबिल (एं. सु. Constable) दण्डकार, भीको
 दार, सुभिसका सिपाही। सुभिसके समुदाारको 'ईड
 कानटेबिल' कहते है।

काना (हिं. बि.) १ बाब, एक पबिसवाला।
 २ कसि जोडादि द्वारा बिदारित, जोड़ा लगा हुवा।
 ३ बक, डेढ़, जो बराबर न हो। (पु.) ४ पाबारको
 मात्रा (१)। यह म्थ्यकनबर्धमे जगता है।

कानाकामो (हिं. एं.) गुप्तकानन, कानाकामो।

कानादोटी (हिं. एं.) दण्डबियोप, एक बास।

कानाड़ा—दक्षिणात्यके पबिम उपमूलका एक प्रदेश।

इसके उत्तर बम्बई प्रांताका वेङ्गमां बिका, दक्षिण
 मन्दाक प्रदेशका मलबार बिका, पूर्व बम्बई प्रांतका
 चारबाड़ बिका मडिहुर राज्य एवं कुर्मे, पबिम परब
 सागर तथा भारत महासागर थीर उत्तरपबिम कोप
 सोया प्रदेश है। मेसिडैन्तो बिमामके समय कानाड़ा
 दो भागमे बांटा गया जा। उससे उत्तराय बम्बई
 मेसिडैन्तो थीर दक्षिणाय मन्दाक मेसिडैन्तोके
 बिभागमे पड़ा।

उत्तर कानाड़ा पचा० ११ ३१' एवं १३ १२'
 उ० थीर देगा० ७४ ४' तथा ७३ ३' के मध्य
 पबिसत है। उसका प्रधान नगर थीर नन्दर करवर
 है। उत्तर कानाड़ाके मध्य पबिमघाट परबतका
 सद्माद्रिपण्ड उत्तरदक्षिण विस्तृत है। उसकी
 उंचता २५०० से ३००० फीट तक है। सद्मादि
 समय पाषां मूमिको एक दिक् उच थीर पपर दिक्
 गिण्य है। उच मुमागका नाम बाबाघाट है। परि
 माप प्राय ३००० वर्गमील है। पबिम सुद्र थीर
 उचत् नदियोका सुखभाग रज्जेसे उपमूल भागकी
 रखा बहुत बिच मिच हो गई है। (नदीका
 सुखप्रयच्छ होमेसे) समुद्रको धाड़ी देयके मध्य दूरतक
 विस्तृत है। उपमूलके उत्तरपबिम कोप करवर
 पन्तरीप है। समुद्रतीरको मूमि प्राय वासुकासय है,
 बीच बीच पहाड़ मो है। पामि कारियकसे घुइसे
 मरा बंगल थीर उसके पामि पप्रयच्छ काप्येित है।
 उच निक्मूमिका बिस्तार कहीं १३ मीलके पबिम
 नहीं। फिर कहीं कहीं वह १५ मील पड़ता है।
 कही मूमामके पाषां प्राय १०००० फीट उच
 परबत है। परबतमानाके मध्य उजार फीट उंचे
 रंगकसे मरे गिजर मो खड़े है। गिलरतमे बीच बीच
 उत्तम कर्पित प्राक्येित थीर उपधानयोमित पहाडबिका
 है। बाबाघाटको उपमूल कुमोन् २५०० फीट तक
 उंचा है। नदीतीरवर्तो कुछ प्थानोंको जोड़ वह
 र्वनकसे मरी थीर गिरो है। नदीके तीर सामान्य
 पाम थीर सुद्र पञ्चवेच वर्तमान है।

सद्माद्रिक् समय पाषां नदी है। जगसे कुछ
 पबिम सुख परब-सागर थीर कुछ पूर्व सुख वङ्गोप-

सागरमें जा गिरी हैं। पूर्वांशकी नदीमें तुङ्गभद्राकी उपनदी वर्षा चक्रखयोग्य है। पश्चिमांशकी नदीमें उत्तर कालीनदी, बीवी वीच गङ्गावही एवं तट्टि.भौर दक्षिण शिरावती प्रसिद्ध हैं। शिरावतीका जलराशि होनावाड़ नगरके ३५ मील ऊपर ४२५ फीट उच्च पर्वतसे भीषणवेगमें गिरता है। वही विख्यात गारसप्पा प्रपात है। पर्वतमें अधिकांश ग्रेनाइट पत्थर है। फिर अनेकोंके मूलदेशमें लेटराइट है। करवर और होनावाड़के निकट पार्वत्य प्रदेशसे लेटराइट प्रस्तर संगृहीत हो गृह्यादिके निर्माणमें लगता है। उक्त प्रदेशके स्थान स्थान पर लौहखनि है। कुमपतासे १८ मील दूर जान उपत्यकामें चूनेका पत्थर मिलता है।

उत्तर कानाडाके वनविभागमें सकल प्रकार वृक्ष उत्पन्न होते हैं। उनमें सागवन, पियासाल प्रभृति अधिक देख पड़ते हैं। वहां गवरनमेंटके वनविभागसे एकड़ी कटती है। कृषकोंकी वनसे घिना व्यय जलानिके लिये काठ, खादके लिये पत्ता और गृह-निर्माणके लिये वांस, खंटा वगैरह मिल जाता है। पहिले उत्तर कानाडाकी लकड़ी गुजरात और बम्बई जाकर बिकती थी। आजकल उसे वचनेकी करवर ले जाती हैं।

दक्षिण कानाडा अक्षा० १२° ०' एवं १३° ५८' ८०' और देशा० ७४° ३४' तथा ७५° ४५' पू०के मध्य अवस्थित है। वह मन्द्राज प्रेसिडेन्सीमें लगता है। प्रधान नगर मङ्गलूर (मंगरोल या बंगलोर) है।

उक्त प्रदेशका प्राकृतिक दृश्य अति सुन्दर है। नदी अनेक होनीसे क्षेत्र शस्यपूर्ण रहता है। वन नाना वृक्षादिसे भरा है। नारियलके वाग वगैरह काफी हैं।

उसके उपकूलभागमें (विस्तारमें ५ से १५ मील तक) उत्तर दक्षिण सब जगह लोग रहते हैं। आवादी कुछ घनी है। भूभाग लेटराइट प्रस्तरसे पूर्ण और समुद्रतट पर ४०० से ६०० फीट तक उच्च है। उसके प्रागे ही पश्चिमघाटकी सुदृ शिखरमाला है। जमालावाटका पर्वत (वेलतंगडोंके निकट) और गदभकर्ण पर्वत सर्वापेक्षा विख्यात है। उक्त

प्रदेशमें पश्चिम घाट ३००० से ६००० फीट तक ऊंचा है। पूर्वांशमें उसीको एक प्रकारको मोमा मान सकते हैं। उसमें अनेक गिरिवर्त्म हैं। उनमें सम्पजी, अण्डस्वी, चरमादी, हैदरगदी या हुसेनगदी, मंजरावाद-तथा कनूर प्रभृति कुर्ग और महिसुरके मध्य अवस्थित हैं। मंगलोरसे उक्त गिरिपथ तक गङ्कटगमनोपयोगी मार्ग है।

दक्षिण-कानाडाकी कोई नदी १०० मीलसे अधिक विस्तृत नहीं। फिर सब नदियां पश्चिम घाटसे निकली हैं। उनके मध्य ग्रीष्मकालकी भी अनेकोंमें नौका गमन कर सकती है। नदियोंमें नेत्रवती, गुरपुर, गङ्गोनी और चन्द्रगिरि वा पयस्वनी ही प्रधान है। कारकल नामक स्थानमें एक सुन्दर झर है। फिर कुण्डपुरमें निर्मल जलका अपेक्षाकृत वृहत् झर भरा है।

वहा नृत्तिकाके सुन्दर वृक्ष वनते हैं। वहुतसे लोग कलमें उस नृत्तिकासे गण और ईंट तैयार करते हैं। फिर वहां चीनी मट्टीकी भांति एक प्रकारकी श्वंतवर्ण उज्ज्वल मसृण नृत्तिका भी मिलती है। मिलार नामक स्थानमें स्वर्ण, सुमधुराय एवं केम्फल नामक स्थानमें दाड़िम-बीजाकार सुदृ पुष्पक-मणि और उदिपी तथा उधारंगड़ी तालुकके मध्य लौहकी खनि है। लोहा निकालनेका कोई प्रबन्ध नहीं।

दक्षिण कानाडाकी अधिकांश भूमि अधिवासियोंके अधिकारमें है। गवरनमेंटके अधीन केवल पश्चिम-घाटकी निकटवर्ती वनभूमिका कुछ अंश है। उक्त वनमें नाना प्रकार काष्ठ, वंश, एला, वन्य आरारोट, खदिर, दासचीनी, (छाल और तेल), गोंद, राल और तरह तरहका रंग उपजता है। मधु, मोम और अन्यान्य द्रव्यादि पहाडी लोग (मलयकुटी) संग्रह करते हैं। वहांसे प्रतिवर्ष प्रायः डेट लाखका चन्दनतेल वनकर बाहर जाता है। महिसुरसे चन्दन काष्ठ आता है। किन्तु उसका तेल केवल दक्षिण कानाडामें ही बनाया जाता है।

असलमें तो कानाडा नामका कोई स्वतंत्र देश

नहीं है। पहले उसकी चतुर्भुजा बना चुके हैं। उसके दक्षिणके किनारे ही अंगका नाम मन्वयासम् (मन्वय) है। फिर मन्वय तुलुव और उत्तरका कुछ अंग अर्थात् बचाता है। अनेकोंके मन्वयासम् कानाड़ा अर्थात् देवका नामान्तर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। अर्थात् ऐसी।

दक्षिण कानाड़के छोटीसे परगनेका उत्तर पर्यन्त भूमाम प्राचीन केरल राज्यके अन्तर्गत है। कहा जाता है कि परगणामके अविद्यमानके पीछे पाण्ड्य राजाश्रीनि का एक स्थान पर अधिकार किया था। ११२२ ई० तक पाण्ड्यराज प्रबल रहे। फिर ११३२ ई० की वह विजय नगरराजके अधिकारमें गया। ११६२ ई० की तालि कोटके युद्धमें विजयनगरराजका पराक्रम पूर्व हुआ और बदनूरके सरदारने आश्रीनता या बदनूर राज्य स्थापन किया। अनेके कानाड़के इनर नामक स्थानके नीसिधर पर्यन्त अधिकार किया था। पीछे चेरमल राजके साथ ईडवण्डिया मन्वयोका मन्वोवस्तु हुआ। उस समय वह प्रदेश मालाप्रभ कानाड़के नामसे लिखा जाता था। कानाड़ाका उत्तरांग तुलुव प्रदेशके अन्तर्गत रहा। १६१५ ई० तक वह अदम्य राजाश्रीके अधिकारमें था। अन्त ऐसी।

फिर १६३५ १६३६ ई० तक कानाड़के उत्तरांग मन्वयासम्के अन्तर्गत रहा। अन्त ऐसी।

१७६६ ई० की ईदरघोनि बदनूरके अधिकार काक कानाड़ाके मध्य मन्वयोर काचपुर केनेके पीछे मलवार और समस्त किला अधिकार किया। दो वर्ष पीछे अंगरेज सेनाने इनर और मन्वयोर का हड़ियाया था। किन्तु कुछ दिन पीछे ही डोवू सन्तानने पुनरधिकार किया। उसके पीछे १८०६ १८३६ ई० की डोवू अंग ऐसीका दक्षिण कानाड़में मन्वयासम् हुआ। अन्तर्गत १८८१ ई० की वह सम्पूर्ण रूपसे अंगरेजके अधिकारमें पहुँच गया।

१८६६ ई० की तुर्गासके साक्ष्यपर्यन्तके समय अन्त और दक्षिण प्रदेशके कोमोनि अन्त प्रदेश अंग ऐक राज्यसुद्ध करकेको प्रांथना की थी। १८७६ ई० की इडियाराज इनके मन्वयास पर शीघ्रत हुआ। समय

मन्वय किला दक्षिण कानाड़ाके पुनर विभागसे लिखाया गया। उसी वर्ष कन्वयापाया तुलुव नामक बिसे सरदारने तुर्गासके अन्तर्गत अंगरेजके विरुद्ध अन्त भारत किया। पुनरसे मन्वयोर पर्यन्त विद्रोह देखा था। उसके पीछे विद्रोही गासित होने पर कानाड़ा प्रदेश दो भागोंमें बँट करके दोर मन्वयास प्रेषीश्रीनि मित्र मया। दक्षिण कानाड़ाका प्रधान नगर मन्वयोर, बन्वयोर और छोटी है। अन्तमें प्रधानत हिन्दू पोतंगोत्र, अन्तरीश्री, अन्त और अन्तय शोक रहते हैं। हिन्दुओंमें ब्राह्मणोंको अन्तय अधिक है। वह भारतत और कोहनी नामक दो समाजोंमें विभक्त हैं। द्वाविश्रीके अन्त ब्राह्मण गिरवी कहाते हैं।

वह प्रदेशके अन्त सोपका कहाते हैं। अन्तय कोमोमें मन्वयकुदिराज प्रधान है। वह बिश प्रथाको अन्तयिकायें करते, अन्त कुमारो प्रथाको कहते हैं।

उत्तर कानाड़ाके मध्य हिन्दुओंमें अन्तरीके अन्त ययो द्वाविश ब्राह्मण ही विख्यात हैं। सुसन्तानोंमें नाविक अन्त अन्तरीके प्रतिनिधि कहाते हैं। किन्तु वह अन्त अन्तयक मिकते हैं। अन्तरीकासे अन्तरी पोतंगोत्रोंको अन्त द्वाविशके गर्मबान सुसन्तान सोदो नामसे आख्यात हैं। उनको आकृति इस समय भी बहुत कुछ अन्तरीके मिकती है।

कानाप्रुश्री (हि० श्री०) गुप्तकथन, अन्तरी अन्तरी अन्तरीका बात।

कानाभातो (हि० श्री०) १ गुप्तकथन, कानाप्रुश्री। २ बाहक ईशानेका एक कार्य। बाहकके अन्तमें कानाभातो कानाभातो 'अ' कहते 'अ' मन्वय अन्तरी कोरते हैं। अन्तरी बाहक अन्तरी समता है।

कानाविल (हि० पु०) अन्तरीके, एक अन्तरी। यह अन्तरीके मिकता-सुसन्तान रहता है।

कानि (हि० श्री०) १ मयाँदा, अन्तरी। २ मिकता, सीक। कानिद (हि० पु०) कानि अन्तरी। अन्तरी अन्तरीके समय अन्तरी अन्तरीका काना है।

कानिष्ठिक (अ० श्री०) कानिष्ठिका इव, कानिष्ठिका अन्तरी अन्तरीके। कानिष्ठिका अन्तरी।

कानिष्ठिनेय (सं० पु०) कनिष्ठाया अपत्यं पुमान्, कनिष्ठा-ठञ्-इण्ड्, प्रादेश्य । कानिष्ठादीनामिण्ड् । पा० १।१२१। कनिष्ठाका पुत्र ।

कानी (हिं० स्त्री०) १ एक चक्षुवानो स्त्री, जिस शीरतके एक ही आंगु रहै । २ कनिष्ठा, सबसे छोटी हाथकी सँगसी ।

कानीत (सं० पु०) कनीतस्य अपत्यं पुमान् । कनीत नामक ऋषिके पुत्र, पृथुश्रवा ।

कानीन (सं० पु०) कन्यायाः जातः, कन्या-अण् कनीन आदेश्य । कन्यायाः कनीनया । पा० १।१२१।

१ अविवाहिता कन्याका पुत्र, विद्याही लडकीका लडका । २ कर्ण राजा । ३ व्यासदेव । ४ अग्निवेश । ५ लोभप्रह्व, लोभ । (त्रि०) ६ चक्षुके निवे दितकर, आँखकी पुतलीकी फायटा पहंचानेवाला औषध ।

कानीयस (सं० त्रि०) कनीयसः इदम् । कनिष्ठ-सम्बन्धीय, शुभारमें कम ।

कानून (अ० पु०) व्यवस्था, पार्सन, सुक्तमें अमन-चैन रखनेका कायदा ।

कानूनगो (अ० पु०) राजस्व विभागका एक कर्म-चारी, कोई माली अफसर । यह पटवारियोंके वागुज देखता भागता है । कानूनगो दो प्रकारका है— गिरदावर और रजिष्टार । गिरदावर वस वस पटवारियोंका काम देखा करता है । रजिष्टारके दफ्तरमें पटवारियोंके पुराने कागज पङ्चाये जाते हैं ।

कानूनगोई (अ० स्त्री०) कानूनगोका काम या ओहदा । सुसनमानोके राजत्वकालमें जो राजकर्मचारी भूसम्पत्तिके ज्ञातय विषय नवावके निकट पहुँचाते, वही यह पट पाते थे । आर्देन-अकवरी पटनेसे समझ पड़ता है कि उस समय प्रत्येक सरकारमें एक कानूनगो और उसके अधीन प्रत्येक महलमें एक पटवारो रहता था । चतुःशीमा, विभाग, विक्रय और हस्तान्तरकरण प्रभृति भूसम्पत्ति-सम्बन्धीय कोई कार्य आवश्यक आनेसे पहले कानूनगोसे कहना या उसके आदेश ले कार्य करना पड़ता था । भूमिसम्पर्कीय किसी विषयपर तर्क उठनेसे कानूनगो मीमांसा कर देता था ।

कानूनदा (फा० पु०) १ व्यवस्था समझनेवाला, जो

कानून जानता हो । २ व्यवस्था भाड़नेवाला, जो कानून छाँटता हो ।

कानूनिया (हिं०) कानूनदा स्त्री ।

कानूनी (अ० वि०) १ व्यवस्था जाननेवाला, जो कानून समझता हो । २ व्यवस्था-सम्बन्धीय, कानूनके मुताबिक । ३ नियमानुक्रम, कायदेके मुताबिक । ४ हठी, हठती । कानून—पञ्चावके कुगावर उपविभागका प्रधान नगर । यह समुद्रतलसे ८३०० फीट ऊँचे पर्वत पर अक्षा० ३१° ४' ३०" और देशा० ७८° ३०' पू० में अवस्थित है । यहाँ एक प्रसिद्ध बौद्ध मठ है । इसमें भोटदेशीय विस्मर बौद्धग्रन्थ संरक्षित हैं । कानून लाधकवाले प्रधान नामाके प्रधान है । कानूनका व्यवसाय अधिक चलता है ।

कान्त (सं० पु० स्त्री०) कन्ते दीप्यते, कन कर्तरि क् । १ कुद्दम, रोरी । २ कान्तनीह, एक लोहा । ३ चोक्रण । ४ चन्द्र, चाँद । ५ स्वामी, स्वायिन् । ६ चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त और अयस्कान्त मणि, आतशी शीशा बगेरह । ७ नन्दीह्व, एक पेड़ । ८ वसन्त ऋतु, मोसम बहार । ९ विष्णु । १० शिव । ११ कार्तिकेय । १२ कामदेव । १३ चक्रवाक, चक्रवा । १४ वर्षा, वरमान । १५ झिल्लमह्व, एक पेड़ । १६ प्रियतम, प्यारा । (त्रि) १७ मनोरम, सुवस्त्ररत । १८ अमि-लपित, घाहा हुआ ।

कान्त—युक्त प्रदेशके गाहजहापुर जिलेका एक गण्ड-ग्राम (कसबा) । यह गाहजहापुर गहरमे साठे चार कोस दक्षिण जनासावादकी राह किनारे प्रजा० २७° ४८' २०" पू० और देशा० ७८° ४८' ४५" पू० पर अवस्थित है ।

यह नगर अति प्राचीन है । गाहजहापुर वसनेसे पहले कान्त अत्यन्त मशहिशाली था । प्राचीन पट्टा-निका और दुर्गाटिके भ्रंसावशिष्ट स्तूप प्रभृति देखनेसे इसका कितना ही पूर्व परिचय मिलता है । आजकल यहाँ पुस्तिका याना, डाकखाना और सराय मौजूद है । यह जनपद महाभारतकी 'कान्ति' (मो० २।१०) और पाद्यात्य भौगोलिक टलेमि-वर्णित 'किण्डिया' समझ पड़ता है ।

वान्तनगरका यह पवित्र देवमन्दिर देखनेसे समझ पड़ता है, कि अंगरेजोंके आनेसे पहले बहालके दीन शिल्पियोंने स्थापत्य और शिल्पविद्यामें कितना उन्नतिनाम किया था। यह नवरत्न मन्दिर है। मन्दिरकी चूहाके विष्णुचक्रसे पाददेश पर्यन्त सुगठित सुचित्रित और कारुकार्य-सुशोभित है। इस मन्दिरमें विनकुल पत्थरका जगव नर्तन, भित्तिसे चूडा पर्यन्त समस्त दृष्टक-निर्मित है। मन्दिरके गात्रमें दृष्टक खोद बहुसंख्यक देवदेवी मूर्ति-गठित हैं। देवदेवीकी मूर्ति देखनेसे यह भी समझ सकते हैं कि प्रायः दो सौ वर्ष पूर्व बंगाल देशमें रीति, पद्धति और वस्त्रादि कैसे प्रचलित थे। हम कह सकते हैं कि ऐसा दृष्टकनिर्मित एवं दृष्टकखोदित कारुकार्यविशिष्ट मन्दिर दूसरा कहीं नहीं है।

कान्तनगरसे थोड़ी दूर सनका नामक स्थान है। प्रवादानुसार विख्यात वणिक चांदसौदागरने वहां मट्टीका एक किला बनवाया था।

कान्तपत्नी (सं० पु०) कान्तस्य वार्तिकेयस्त्र पत्नी, इ-तत, यद्वा कान्तः मनोहरः पत्नीः स्थास्त्रि, कान्त-पत्न-इति। मयूर, मोर।

कान्तपापाण (सं० पु०) सुस्वक नामक प्रस्तर, सद्ग-मिकनातीस। यह ग्रीत, लेखन (खुजली पैदा करनेवाला) और विपदीय, मेद, पाण्डु, घय, कण्ड, मोड़ तथा मूर्छानागक है। (वैद्यकनिघण्टु) इसके शोधनका विधि यह है—कान्तपापाणको घीस महिषी-दुग्ध तथा गन्ध दूधमें पकाते हैं। पका कर यह खवण चार और शोभाञ्जनमें डाला जाता है। फिर दोन्ना यन्त्रमें महिषीचीरादिसे दो बार पकाते हैं। अन्तको प्रस्तरसे रौद्रमें एक दिन भावना दी जाती है।

(रसेन्द्रसारसूत्र)

कान्तपुष्य (सं० पु०) कान्तानि मनोरमाणि पुष्यास्त्रस्य, बहुव्री०। कोविदारवृक्ष, लाल कचनार।

कान्तवावू—कासिमवाजार राज परिवारके प्रतिष्ठाता। इनका प्रकृत नाम छाप्यकान्त नन्दी था। जातिके यह तेजी थे। प्रथम कान्तवावू-सामान्य मोदीका व्यवसाय करते थे। इसीसे अनेक लोग इन्हें 'कान्तमादी' कहते

हैं। वारन हेष्टिङ्गसके कासिमवाजारमें हेष्टिङ्गिया कम्पनीके अधीन कर्म करते शीराज-उद्-दोलाने वहांके अंगरेजोंको पकड़ बंध करनेका आदेश निकाला था। उसी घोर संकटकके समय इन्होंने वारनहेष्टिङ्गसको अपनी दुकानमें निरापद्रु स्थान पर बैठा मरनेसे बचाया। फिर हेष्टिङ्गस गवरनर जनरल होकर आये। किन्तु वह कान्त वावूका सच्चा उपकार भूले न थे। प्रथमतः उन्होंने इन्हें अपना टीवान बनाया। कुछ दिन पीछे कान्त वावूने कम्पनीसे गालीपुर और आजम गढ जिलेके भन्तर्गत (दूहा विहार) परगना जागीर पाया। इनके पुत्र लोकनाथको भी राजा बहादुरका उपाधि मिला था। ११८५ ई०के पौषमासमें कान्तवावूका मृत्यु हुआ। यह हेष्टिङ्गसका दाहना हाथ थे। कान्तवावूके द्वारा ही उनका सब काम चलाया था। प्रयोजन होनेसे यह उनको रुपये उधार लाकर देते थे। हेष्टिङ्गसके साथ ही साय कान्तवावू रहते थे। एक बार हेष्टिङ्गसने इनके लिये वागीकी राजमाताको भी डांटा डपटा था। (कासिमवाजारके चरित्र सम्बंधमें Beveridge's The Trial of Nanda Kumar, p 234-45, 367-461 देखो।

कान्तलक (सं० पु०) कान्तं लक्षते प्रास्त्रायते, कान्त-लक ववर्धे कः। १ नन्दीहृक्ष, एक पेड़। २ तुन्नहृक्ष, तुनका पेड़।

कान्तलोह (सं० ली०) कान्तं लोह त्र्येष्टत्वात् कमनीयं लोहम्। १ अयस्कान्त, ईस्पात। २ लोह विग्रेष, एक लोहा। कान्तलोह उसीको कहते, जिसके पात्रमें जल रख कर तैलविन्दु डालनेसे तैल इतस्ततः न चले, जिसके स्वर्गसे हिङ्गु, स्त्रीय गन्ध परित्याग करे, नीमका क्षाथ भी जिसमें मधुर आस्वाद दे, जिसमें दुग्ध पकानेसे बालुकाराशिकी भांति जमे और जिसके पात्रमें घना भिगानेसे क्षयवर्ण देख पड़े। इस लोहसे वैद्यशास्त्रोक्त अनेक औषध प्रसृत होते हैं। औषध प्रयोग करनेके लिये जारण मारण प्रकृति कई कार्य आवश्यक हैं। लोहगुण देखो।

इसके निस्त्वकीकरणसम्बन्ध पर रसेन्द्रसारसंग्रहमें ऐसा उपदेश लिखा है,—“शुद्ध पारद १ भाग, गन्धक २ भाग, और समयके समपरिमाण लोहचूर्ण एकत्र

इतङ्गमारीके रसमें हो पहर घाँट तापके पात्रमें छोटी
कोटी मोबो बना रखना चाहिये। फिर यह मोबियां
दो पहर परस्पर द्वारा आच्छादित रखनेसे बन्ध
हो जायेंगे। इस समय इन्हें आन्तरायिके मध्य तोम
दिन तक रख लूँ कर लेते हैं। यह लूँ बपड़ेसे
हाल जलमें डालनेसे उतरा पायिगा।

आन्तरीह (सं० श्लो०) आन्त ममोरम लोहम्, कर्मशा०।
आन्तरीह, ईसपात। आन्तरीह ईशो।

आन्ता (सं० श्लो०) आम्प्ये शची, कर्म चिह्न-रु-टाप्।
१ पञ्चो, शोचो। २ सुन्दर शो, सुबसुत शोरत।
३ प्रियङ्गु, एक सुयवृदार वैक। ४ सुसेता, वड़ी
वृषायको। ५ ईशका, बाहु। ६ नागरसुष्ठा नागर
मोहा। ७ विलम्बिपुष्य उष्य, एक सुलदार पीङ्।
८ श्वेत दूर्वा, श्वेद दूर्वा। ९ वाराशोकम्, एक वृक्षा।
१० आबायवहो, एक वैक। ११ मूषिकपर्णी, एक
वृटी।

आन्ताई—विहार आन्तिके सुबसुपरसुर भिसेका एक
वाम। यह सुबसुपरसुरसे ३ योष दूर पचा० ३६
१२०० घोर देमा० ८३ २० ३००० पर पयसित
है। यहाँ मोषका व्यवसाय अधिक होता है।

आन्ताङ्गदोहद (सं० पु०) आन्तावा पङ्किया परच
आयेंव दोहद* पुष्पोद्गमी वृष्य, वृद्धो०। पयाक
उष्य।

आन्तावरचदोहद, पट्टक ईशो।

आन्तायस (सं० श्लो०) पय एव, पायसम् आर्षे पम्।
आन्त पायसम्, कर्मशा०। १ सुव्यक्त लोह, सङ्ग-
मिक्कातोस। २ आन्तरीह, एक तरचका मोहा।

आन्तार (सं० पु० श्लो०) कच्छ सुष्यस्य चर्त अच्यति
अच्यति आन्ता मनोस अच्यति वा, आन्ता अ-पम्।
१ वम, अङ्गुल। २ पद्यविमिय, किरी शिखका
कषस। ३ शोचिदार उष्य, कषमारका पीङ्। ४ शंभ,
बाँध। ५ महावन, वड़ा अङ्गुल। ६ दुर्मम पय, सुत्रिकस
राह। ७ गर्त, गहा। ८ बिट्ट, बिट्ट। ९ दुर्मिच, अहत।
१० धारव्यवृष्य, पमलतावका पीङ्। ११ पोप
वर्गिक रोप, छोटी बीमारी। १२ वाचारप इष्ट, अक्ष।
१३ रवेष्टु विमिय, कतोर। आवमकायके मतके यह

गुद, सारक चीर मरीरकी खूबता, उच्च तथा येना-
इतिकारक है।

आन्तारक (सं० पु०) आन्तार आर्षे कम्। रवेष्टु
विमिय, कतोर।

आन्तारग (सं० श्लो०) आन्तार गच्छति, आन्तार-
गम-क। वनका गमन करनेवाला, जो अङ्गुलको
जाता हो।

आन्तारपत्र (सं० पु०) आन्तारगतः पत्रा, मध्य-
पत्रकी०। वनमाम, अङ्गुली राह।

आन्तारपयिक (सं० श्लो०) आन्तारपयिच पाङ्गतम्,
आन्तार पय-उमम्। पयपयवरे परितःकच्छकान्ताप-
पयपयवकान्ताम्। प ३११००—वर्षिक १। १ वनपयकाय
आङ्गुली, अङ्गुली राहसे बाया हुआ। २ वनपयके गमन-
कारे, अङ्गुली राह जानीवाला।

आन्तारवासिनी (सं० श्लो०) आन्तारि वायोःस्त्यान्ता,
आन्तार-वास इति-श्रीप्। १ दुर्मा। २ वनवासिनी,
अङ्गुली रचनेवाली शोरत।

आन्तारि (सं० पु०) वाफरी ईशो।

आन्तारिका, वाफरी ईशो।

आन्तारी (सं० श्लो०) आन्तार-श्रीप्। १ मथिका
विमिय, एक प्रकारको मस्ती। अथवा ईशो। २ इष्टविमिय,
कतोर।

आन्तारीष्टु (सं० पु०) इष्टुविमिय, कतोर। १।

आन्तारुष (सं० पु०) मन्दीष्टुय, एक पीङ्।

आन्ति (सं० श्लो०) कम् भावे किम्। १ शोचि, वमक।
२ शोभा, सुबसुतो। इवका संज्ञकत पर्याय—शोभा,
सुति, शोचि, अदि, यम, माया, मा शीर पमिप्या
है। ३ शो मोमा, शोरतकी सुबसुतो।

*अन्तीपयपयिच शोमरीकच्छरम्।

शोमा शोका र्वे व अन्तिपयपयिच शोमरीकच्छरम्। (वर्षिकवर्षिक ४)

उप तथा यौवनके काष्ठिक शीर पयद्वारादिसे
कोनेवाली शोम्दुंकी शोमा कहते हैं। यही शोमा काम
वेदा विविष्ट रचनेसे 'आन्ति' कहती है। ४ उष्य,
प्राणिय। ५ काममथि विमिय। ६ दुर्मा। ७ महा।
८ चन्द्रकी एक वृक्षा। ९ चन्द्रकी एक श्लो। ९ वाराशो
कम्, एक वृक्षा। महावर्गइष्य, शोवानका पीङ्।

कान्तिक (सं० स्त्री०) कागत्वा कान्ति आख्यया कार्यात्
आह्वयते, कान्ति-कै-क । काम्त्सलीह, एक लोहा ।

कान्तिकर (सं० स्त्री०) कान्तिं करोति, कान्तिकर-ण ।
कान्तिकवर्धक, खूबसूरती बढ़ानेवाला ।

कान्तिद (सं० स्त्री०) कान्तिं अति नाशयति कान्ति-
दा-क । १ पित्त, सफरा, जर्द-भाव । २ घृत, घी । (त्रि०)
कांतिं ददाति, कांति-दा-क । २ शोभावर्धक, खूब-
सूरती बढ़ानेवाला ।

कातिदा (सं० स्त्री०) कातिद-टाप् । सोमराजी, वकुची ।
कांतिदायक (सं० स्त्री०) कांतिं ददाति, कांति-दा-यु-ल् ।
२ काशीयक, चन्दनवृक्ष । (त्रि०) २ शोभादायक,
रौनकवर्धक ।

कान्तिनगरी (सं० स्त्री०) काञ्चीनगरी, काञ्चीवरम् ।

कान्तिपुर (सं० स्त्री०) १ नेपालके अन्तर्गत एक नगर ।
आजकल नेपालकी राजधानी काठमांडू है । पहले
सैकीको कान्तिपुर कहते थे । नेपालके राजाओंकी
वंशावली देखनेसे मालूम होता है कि, राजा
सम्प्रीनरसिंह महाने नेपाली-संवत् ७१५ (१५६५
ई०)की गोरक्षनाथकी पूजाके लिये एक वृक्ष
काष्ठमण्डप बनाया था । तदनन्तर कान्तिपुरका
नाम काठमांडू पड़ गया । स्कन्दपुराणके कुमारिका-
खण्डमें लिखा है, कि कान्तिपुरमें नव लक्ष ग्राम थे ।
२ ग्वालियर राज्यका एक नगर । उसका वर्तमान
नाम काठवार है । अश्विन नदीके तीरे वह अवस्थित
है । प्रभासखण्डके मतसे वहां जनप्रिय नामक देव
विराजते है ।

कान्तिभृत् (सं० त्रि०) कान्तिं विभर्ति, कान्ति-भृ-
क्षिप् । १ कान्तिविशिष्ट, रौनकदार । (पु०) २ चन्द्र,
चांद ।

कान्तिमती—काञ्चीपुरके चोल राजा सोमेश्वरकी कन्या
और पांड्यराज उग्रपांड्यकी पट्टमहिषी ।

कांतिमत्ता (सं० स्त्री०) कांतिमतो भावः, कांतिमत्-
तल्-टाप् । कांतिविशिष्टता, रौनकदारी ।

कांतिमान् (सं० पु०) कांतिः प्रशस्येन अस्यस्य,
कांति-मतुप् । १ चन्द्र, चांद । २ कामदेव । (त्रि०)
३ कांतियुक्त, रौनकदार ।

कांतिवृक्ष (सं० पु०) महासर्जवृक्ष, लोधानका पेड़ ।

कांतिहर (सं० त्रि०) कांति हरति नाशयति, कांति-
हृ-ख । कांतिनाशक, रौनक, घटानेवाला ।

कांतीनगरी (सं० स्त्री०) कान्तिपुर देखो ।

कांतीत्याहा (सं० स्त्री०) कन्दोविशेष । इसमें धारह
बारह माताके चार चरण होते हैं ।

कांतीली (सं० स्त्री०) कुष्माण्डकी सुरा, कुम्हंडेकी
शराव ।

कान्यक (सं० त्रि०) वणु नदसमीपस्यकन्यात् जातः,
कन्या-वुक् । वर्षोत्थ । पा ४।२।१०२ । वर्षु नद समीपस्य
कन्याजात, वर्षुनदीके पासकी एक जगहका ।

कांयक्य (सं० पु०) कान्यकस्य ऋषेः गोत्रापत्यम्,
कान्यक-यञ् । कान्यक ऋषिके वंशीय ।

कान्यक्यायन (सं० पु०) कान्यकस्य ऋषेः गोत्रापत्यम्
कान्यक-यञ्-फक् । कान्यक ऋषिके वंशीय ।

कान्यिक (सं० त्रि०) कन्यायां जातः, कन्या-ठक् ।
कन्यायाठक् ४।२।१०२ । कन्याजात, कथरीमें पैदा हुआ ।

कान्द (सं० त्रि०) कन्दस्य इदम्, कन्द-अण् ।
१ कन्द-सम्बन्धीय, डलेके सुताक्षिक । २ कन्दजात,
डलेसे पैदा । (स्त्री०) ३ पक्वान्निविशेष, एक मिठाई ।

कान्दपं (सं० पु०) कान्दपंस्य अपत्यं पुमान्,
कान्दपं-अञ् । १ कान्दपंके पुत्र, अनिरुह । (त्रि०)
२ कान्दपं-सम्बन्धीय ।

कान्दपिक (सं० स्त्री०) कान्दपांय कान्दपंहृहये प्रयो-
जनमस्य, कान्दपं-ठक् । वाजोकरण, ताकत बढ़ाने-
वाली चीज़ ।

कान्दव (सं० स्त्री०) कान्दो संस्कृतं भक्ष्यम्, कान्द-अण् ।
पिष्टकादि भोज्य वस्तु, राटी पुरीकी तरह कहाहो या
तवे पर भूनी या सेकी हुई खानेको चीज़ ।

कांदविक (सं० त्रि०) कांदवं पर्यं अस्य, कादव-ठक् ।
सदस्य पणम् । पा ४।४।३१ । १ पिष्टकविक्रेता, पुरी
मिठाई बेचनेवाला । (पु०) २ हस्तवाई, कांदोई ।

कांदाविप (सं० स्त्री०) कांदविप ह्यादत्वात् दीर्घः ।
विपभेद, किसी तरहका जहर ।

कान्दाहार (कांधार) १ अफगानस्थानका एक प्रदेश ।
हण्टर प्रभृति पाषाण्य परिश्रुतोंके मतसे, खन्धार

सिल्लिकसुके अधीन रहा। उस समयका इतिहास विशेष नहीं मिलता। उसके पीछे पारद और सासान शीर्योंने उसे अपने अधीन किया। किन्तु उनके समयका भी विवरण विदित नहीं। फिर हिजरी सन्की प्रथमावस्थामें सुसन्नमान धर्मप्रचारक मुहम्मदके वंशधर वहाँ आये। ८६५ ई० को याकूब बिन-सिब नामक 'साफोरी' वंशके प्रतिष्ठाताने उस पर अधिकार किया। सासानवंशीयोंने उनके हाथसे उसे छीन लिया। फिर गज़नवी वंशीयोंने सासानोंको कान्दाहारसे भगाया था। पीछे गोरी वंशीयोंने गज़नवियोंको खदेड़ वहाँ अपना अधिकार जमाया। उनके अनन्तर कान्दाहार सेलजुकीयोंके हाथ लग गया। अवशेषमें ११५३ ई० को तुर्कोंने कान्दाहार पहुँच नगर अधिकार किया था। फिर कई वर्ष पीछे वह गयासु-उद्दीन मुहम्मद गोरीके हस्तगत हुआ। १२१० ई० को खौरजमके सुलतान अलाउद्दीन मुहम्मदने वह स्थान अधिकार किया था। १२२२ ई० को उनके पुत्र जहानगौर खान्ने उन्हें वहाँसे निकाल भगाया। फिर मलिक कुतुबशाहीके हाथ जहानगौर खान्के उत्तराधिकारी दूरीभूत हुये। कुछ दिन पीछे मलिक कुतुबशाही स्थानीय सरदारोंसे हार और नगर छोड़ भाग गये। अवशेषमें १३८८ ई० को तैमूरजन्ने सरदारोंके हाथसे कान्दाहार छीना था। १४६८ ई० तक वहाँ तैमूरके वंशीयोंका अधिकार रहा। फिर अबू सैयदके मरनेसे कान्दाहार और कतिपय पार्श्व-वर्ती स्थान स्वाधीन हो गये। १५१२ ई० को भारतके मुगल राज्यस्थापयिता बाबरने शाहवेग नामक स्वाधीन राजाको हरा उसे भारतके राज्यमें मिला लिया। कुछ दिन पीछे पारसियों (ईरानियों) ने वह स्थान अधिकार किया। इसी प्रकार एक बार पारस्य (ईरान) और दूसरी बार भारतकी अधीनता स्वीकार करते करते कान्दाहारकी राजसूची कुछ दिन अस्थिर रही। अवशेषमें १६२० ई० का फिर ईरानियोंने उसे अधिकार किया था। १५३७ ई० को नादिरशाहने दश लाख फौजके साथ १८ मास अवरोध कर कान्दाहार जीता। १८३४ ई० को

शाहशुजा कान्दाहार पर चढ़े, किन्तु परास्त हो लौट पड़े। फिर सादोजाहियोंने उसे जीतनेकी चेष्टा की थी। १८३८ ई० को शाहशुजा फिर अंगरेजोंका साहाय्य ले कान्दाहारमें घुसे। उन्होंने सिन्धु नदीके तीरवर्ती सैन्यसाहाय्यसे २०वीं अपरेलको उसे जीता और नगरमध्यस्थ अहमदशाहके समाधिमन्दिरमें ८ वीं मईको राजपद पर अभिषेक पाया। उसके पीछे उनका सैन्यदल समुदाय अफगानस्थान अधिकार करनेके लिये काबुल और गजनोकी और अपसर हुआ। सैन्यका कुछ अंश कान्दाहारमें शूजाके पास रह गया था। उसी समय दुरानियोंने विद्रोही हो सादोजाहों जातीय अकबर खान् और सफदरजङ्गके अधीन कान्दाहार आक्रमण किया। अवशेषमें १८४३ ई० को नाना युद्धविषयोंके पीछे सफदर जङ्गने उसे जीता था। किन्तु अति अल्प दिन पीछे ही काहनदिल खान्ने उन्हें वहाँसे भगा दिया। काहनदिल अति अत्याचारी था। १८५५ ई० को काहनदिल खान्की मृत्यु हुई। उनके पुत्र-मुहम्मद सादिकने पिढ्यन्त सम्पत्तिको लूट लिया और पिढ्यन्त रहीमदिल खान् पर अत्याचार किया, इसीसे रहीमदिल खान्ने अफगानस्थानके अमीर दोस्तमुहम्मदको साहाय्य भेजनेकी लिखा था। दोस्त-मुहम्मद खान्ने जा नगर अधिकार किया और अपने पुत्र गुलाम हैदरको शासनकर्ताके पद पर रख दिया। गुलाम हैदरके पीछे शेर अली प्रथम कान्दाहारके शासनकर्ता रहे, फिर वह काबुल चले गये। उन्होंने अपने भ्राता अमीन खान्को काबुलसे शासनकर्ता बना वहाँ भेजा था। अमीन खान्ने शेर अलीके विरुद्ध अस्र धारण किये और १५६५ ई० को काज-वाजके युद्धमें मारे गये। अमीनके कनिष्ठ मुहम्मद शरीफने एक बार पृथा चेष्टा की, आखिर ज्येष्ठकी अधीनता स्वीकार की। अलीम खान् नामक शेर अलीके वैचित्र्य भ्राताने विद्रोही बन १८६७ ई० को खिलाति-ए-बिलजाई नामक स्थानमें शेर अलीको हरा दिया। उसके पीछे शेर अलीके पुत्र याकूब खान्ने पिढ्यन्त उदार किया।

हाथमें है। कान्दाहारमें रेशम और जनके कपड़े बहुत बनते हैं। लाखकी खेती भी अधिक होती है। मेवाकी कोई कमी नहीं। शुष्क फल यहाँका प्रधान खाद्य है।

कान्दाहारी वेगम—बादशाह शाहजहानकी प्रथमा महिषी। वह पारस्यराज इस्माइल शाह (१म) के वंशोद्भव सुलतान मिर्जाशफीकी कन्या थीं। सम्राट् अकबरने पारस्यराज शाह अस्वासकी कान्दाहारका शासनभार सौंपा था। किन्तु उन्होंने वह कार्य सुलतान हुसेन मिर्जाके हस्त अर्पण किया। हुसेन मिर्जाके मरने पर उनके पुत्र मुजफ्फर हुसेनका कान्दाहारका शासनभार मिला था। वह १५६२ ई० को तीन भ्राता साथ ले अकबरकी सभामें पहुँचे। अकबरने उनकी सम्बर्धना कर पाँच हजारकी पद और सम्भल नामक स्थान जागीर दी थी। कान्दाहारी वेगम उनकी भगिनी थीं। १६१० ई० को उन सुन्दरी रमणीके साथ युवराज खुरम (शाहजहान्) का विवाह हुआ। आगरेके कंधारीवाग नामक उद्यानमें कान्दाहारी वेगमको समाधि दिया गया। उनका समाधिमन्दिर अति सुन्दर है। आजकल वह भरतपुरराजके अधिकारमें है।

कादि—वज्जाल प्रान्तके सुर्गिदावाद जिलेका उपविभाग। उसका परिमाणफल ३८८ वर्ग मील है। उसमें कादि, भरतपुर और खडगाँव तीन धाने लगते हैं। वीरभूमसे मयूराची नदी जाकर जहाँ सुर्गिदावाद जिलेमें घुसी है वहाँ कादि नगरी बसी है। पायकपाड़ेके राजाओंका वहाँ आदिवास है। उक्त राजवंशके आदिपुरुष गङ्गा-गोविन्द सिंहने कान्दिमें ही जन्म लिया था। उन्होंने २० लाख रुपये सगा अपनी माताका आह किया और अस्यागतकी ब्राह्मण वाइकीकी डाक बैठा हाथों हाथ जगन्नाथसे ताजा प्रसाद मगा खिल्ला दिया।

कान्दिगभूत (सं० त्रि०) कां दिशं गच्छामि, इत्या-कुलोभूतः, कान्दिग्-भूतः। १ पलायित, दूटे राह न पानेवाला, भगोडा। २ भीत, डरा हुआ।

“स बभूयिन् मयाकान्तिं किञ्चिद्वा ब्राह्मणसदा।

आदिभूतो जोजितार्थो प्रदुद्रावोक्तं दिग्म्” (भारत, भाषि, १६६ पं०)

कान्दिशीक (सं० पु०) ‘कां दिशं यामि’ इत्येवं वादिभो अ ठक् प्रत्ययेन ष्टपोदरादित्वात् सिद्धं। यदवा कदि वैक्तव्ये भावे इन्, कन्दि वैक्तव्यं ; शोक सेचने भावे घञ्, शीकः अत्युपातः ; कन्दिश्च शीकश्च तौ विद्यते अस्य कदिशीक-प्रण्। भय देखकर पलायनकारी, डरसे भगनेवाला।

कान्दू (काण्डु) वज्जाल और बिहार प्रान्तवासी एक जाति। कहीं कहीं उसे भडभूजा, भुरजी आदि भां कहते हैं। शस्यकण्डन ही इस जातिकी प्रधान उपजीविका थी।

कान्यकुब्ज (सं० स्त्री०) कन्याः कुब्जाः यत्र, कन्यकुब्ज स्वार्थे ञ्। १ देशविशेष, एकसुक्तः। हिन्दीमें इसे कनौज कहते हैं। संस्कृत पर्याय—महोदय, कन्याकुब्ज गाधिपुर, कौश और कुशस्थल है। रामायणमें लिखा है कि राजर्षि कुशनाभके औरस और छताची अप्सराके गर्भसे १०० कन्याओंने जन्म लिया था। उनका रूप-यौवन देख वायुदेव कामातुर हुये। किन्तु विना पिताकी आज्ञाके कन्याने उनसे सहवास करना स्वीकार न किया। इसपर वायुदेवने उन्हें शाप दे कुबड़ी बना दिया। पिताने प्रसन्न हो अपनी कन्याओंका विवाह कम्पिन्न नगरके राजा ब्रह्मदत्तसे किया था। उनके स्थ से कन्याओंकी कुब्जता मिट गई। २ ब्राह्मण-जातिविशेष। शत्रुनिघा देखो।

कान्यकुब्जौ। (सं० स्त्री०) कान्यकुब्ज-डोप। कान्यकुब्ज देशकी स्त्री।

कान्यजा (सं० स्त्री०) कात् जज्ञात् अन्वम्निन् जायते क-अन्व-जन्-ड-टाप्। नभौनामक गन्धद्रव्य, एक श्वशुरदार चीज।

कान्ह (हि० पु०) श्रीकृष्ण।

कान्हडा— काण्डा देखो।

कान्हडो (हि०) कर्पाटो देखो।

कान्हम (हि० पु०) कृत्यावर्ण भूमि, कान्ती मिट्टी की जमीन। यह भडौंचकी और होती है। इसमें कपास बहुत उपजती और पनपती है।

कान्हमी (हि० स्त्री०) कर्पासविशेष, एक कपास। यह भडौंचकी और कान्हम भूमिमें उपजती है।

आवर (वि० पु०) १ शीतल २ शीतलको एक लकड़ी। यह कातरके नीचेपर लगता और टेका मेंड़ा रहता है। इसकी दोनों प्रायः निकल पड़ते हैं। आवर कोशकी बमरके पास चारों ओर भूमा करता है।

आवरा—बनवा दीकी।

आप—बड़ाबने बारिष्ठ भाद्रकीकी एक कुल-बेकी।

आपटव (सं० पु०) आपटोयोआपटवम् आपटू पच्। आपट पचिबे र्थीब। (ली०) कुम्भित पटुः तस्य भावः, आपटु भावि पच्। २ निम्नित पाटुता, सुरी चालाकी।

आपटवक, बल्लर दीकी।

आपटिष (सं० पु०) आपटिन चरति आपट ठक। १ ज्ञान, विचार्यो। २ पञ्चका मर्मज्ञ दूधरका मेव ज्ञाननेवाला। ३ प्रतारक, भोषिवात्र।

आपव (सं० ली०) आपटस्य भावः कार्यम्भा, आपट वम। १ आपटता चालाकी। २ प्रतारका भोषेवा काम।

आपकी (वि० पु०) जातिविशेष, एक बीम। गुजरातमें आपके रीचनेबानोकी आपकी कहते हैं।

आपय (सं० पु० ली०) कुम्भितः पन्था कु पचिन्-पच् कीः आदिमः। चालक्योः। १। २। ३। ४।

१ कुम्भित पच अराव राज। इसका संस्कृत पर्याय—व्याध, दुग्ध विषय बटधा, कुपब, पमसू पच और कुम्भितवर्ष है। २ जयीट, पच। ३ एक दानव।

आपर (वि० पु०) बख, कपड़ा।

आपरगादि—बड़ास प्रायःके सिंहरूम बिलेकी एक गिरिमाहा। उसका शृङ्ग सतुद्रदृष्टी १६८८ फीट उंचा है। यह गिरिमाहा दक्षिणपूर्वामिसुच जल मण्डलमेंकी उत्तर सीमाके सिंहामनि परतने जा मिली है। उसके उत्तर पठारमें तांवा निक्षलता है। पड़के कुछ साइड बीम वहाँ तांवा तैयार करते हैं। बिन्नु पचिल पच लगनेसे १८५८ ई की उन्नेनि यह कार्य छोड़ दिया।

आपरप्लेट (सं० पु० = Copper plate.) तांबपट,

तबेकी बर। यह सुदृक् यन्त्रालयमें काम जाता है। इस पर अक्षर छोड़े जाते हैं। पक्षरों पर छोड़ी गया पौध हालनेसे सुदे पक्षरोंके चित्रा दृश्य ज्ञान जन्म निकल पाता है। इसी प्रकार आपप्लेट प्रेसपर बड़ा काटन जाया जाता है। चित्र यदि आपनेकी तैयारी काम सेते हैं। विश प्रेसमें आपर प्लेट जयता है, बनवानाम 'आपरप्लेट प्रेस' पड़ता है।

आपा (सं० ली०) अ सुअ पाज्यते बनवा, आ-पाप घञ्-टाप। बन्दिर्वीका प्रातःकालीन स्तुतिपाठ।

"हन्दिर्वीक्येव चान्ता।" (अच् १-११-१)

'हन्तः हन्दिर्वीक्येव रविपौषी बरा। (आच)

आपाटिक (सं० ली०) आपाटिक एव आपाटिक कामे पचः। यह आपट, छोटा सिंहाड़ा।

आपास (सं० पु०-ली०) आपासकेव आपास ज्ञाप्यं पच्। १ अष्टादश कुहास्तमैत वातिककुड, एक बीड़। (बचन दीकी।) २ अप्पन्नता, वायविरंग। ३ आपासका पक्षि धोएकीकी बन्नी। ४ अर्द्धदेमेव एक लकड़ी। ५ किसी मंत्र सम्प्रदायका अनुशायी। ६ अक्षविशेष, एक इषियार। ७ सम्प्रिमेद, एक सुकड़। इसमें विषको कुछ जल मानते हैं। (नि०) ८ आपास लक्ष्मीय, सरके सुताखिन्।

आपाका (सं० ली०) रज्ज्विकल्पिका, जाल फूकीका एक पिंड।

आपालि (सं० पु० ली०) पक्षिणः, जोषाटोटी।

आपालिक (सं० पु० ली०) आपाकीन नरकपालिन चरति, आपान ठक। १ जातिविशेष, एक बीम। यह पक्षदेयमें मिलती है। २ बामाचारी, एक तान्त्रिक साधु। यह उच्चमतावन्नी होती है। सांस ज्ञाना और मध्य पौधा बनें अनुचित गर्भो मानूम पड़ता। आपालिक धर्ममें हावमें मनुष्य का अयाल रखते और नेत्रव वा शक्तिको बलि चर्पक करते हैं। ३ कुष्ठरोग विशेष एव तरदवा छोड़। बल्लर दीकी। आपालिका (सं० ली०) वायविय, एक बाबा। पक्षी यह सुकड़े बनाकी जाती की। आपाकी (सं० ली०) आपास लीप्। १ बिडङ्ग। २ अप्पन्नपाथी, जोषाटोटी।

कापाली (सं० पु०) कपालं धार्यत्वेन अस्त्रस्य, कपालश्चिन् । १ शिवः । २ वासुदेवके एक पुत्रः । ३ एक जातिः । पूर्ववङ्गमें एक प्रकारके लुलाहे रहते हैं । किसीके मतमें लोहारके औरस और तेलीकी कन्याके गर्भसे वह उत्पन्न हुये हैं । फिर कोई महुवेके औरस और ब्राह्मणोंके गर्भसे कापालियोंका जन्म वताता है । वह अपने पूर्वपुरुषोंकी युक्तप्रदेशसे आये कहते हैं । दूसरा प्रवाद यों है—“आदिशूरके समय कापाली शूद्र समझे जाते थे । कान्यकुब्ज देशसे पांच ब्राह्मण और कायस्य आये । आदिशूरने कापालियोंसे उनके पैर धोनेकी कहा । किन्तु कापालियोंने उनका आदेश माना न था । इसीसे गौड़राजने उन्हें समाजकी नीच श्रेणीमें गिन लिया ।”

उनमें अधिकांश वैष्णव हैं । विवाह शास्त्रानुसार होता है । प्रथम स्त्री बन्धा होनेसे द्वितीय स्त्री ग्रहण कर सकते हैं । आक्षीयकी मृत्यु होने पर ३० दिन अशौचके पीछे ३१ वें दिन आह किया जाता है ।

कापिक (सं० पु०) कपिरेव ठक् । अट्ट्यादिभ्यश्चक् । पा५।३।१०८ । १ कपि, वानर । (त्रि०) २ कपिवत् आचरण करनेवाला, जो बन्दरकी तरह पैर आता या देखा जाता हो ।

कापिकेक्षण (सं० पु०) कोकिलाच्च क्षुप, ताल मखानिका पेड ।

कापिञ्जल (सं० पु०) कपिञ्जलस्य अपत्यं पुमान्, कपिञ्जल-अण् । कपिञ्जलके पुत्र ।

कापिञ्जलादि (सं० पु०) कपिञ्जलान् तन्मान्सानि अत्ति, कपिञ्जल-अद्-अण्-इञ् । चातक तथा तित्तिर पक्षीका मांसभक्षक, जो पपीहे और तीतरका गोशत खाता हो ।

कापिञ्जलाय (सं० पु०) कापिञ्जलादेरपत्यं पुमान्, कापिञ्जलादि-अण् । ऊर्ध्वदिगो ष । पा४।१।१५१ । कापिञ्जलादिका पुत्र, पपीहे और तीतरके गोशत खानेवालेका बेटा ।

कापित्य (सं० स्त्री०) कपित्यस्य धिकारः, कपित्य-अण् । अशदादायः । पा४।३।१४० । १ कपित्य द्वारा निर्मित वस्तु, कैथकी चीज । २ कपित्यफल, कैथा ।

कापित्यक (सं० स्त्री०) देगविशेष, एक सुस्त । (हप्त संज्ञिता) वर्तमान उत्तर भारतके सद्दिश नामक नगरकी चारो ओरका स्थान ‘कापित्यक’ कहता है ।

सद्दिश ओर सादाग्या देखो ।

कापिल (सं० पु०) कपिलेन प्रोक्तं शास्त्रं वेत्ति पद्यते वा, कपिल-अण् । १ साख्यशास्त्रवेत्ता । कपिलमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः । २ कपिल मुनिके मतानुसार लिखित एक उपपुराण । ३ पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग । ४ कपिलवर्णके पुत्र । (त्रि०) ५ कपिल-सम्बन्धीय । ६ पिङ्गल, भूरा ।

कापिलिक (सं० पु०) कपिलिकाया अपत्यं पुमान्, कपिलिका-अण् । कपिलवर्णके पुत्र ।

कापिलेय (सं० पु०) कपिलाया अपत्यं पुमान्, कपिला-ठक् । कपिल मुनिके एक शिष्य । कपिला नाम्नी किसी ब्राह्मणोंका स्नानपान करनेसे वह ‘कापिलेय’ कहाये हैं । (भारत, शान्ति, ११८ प०)

कापित्य (सं० त्रि०) कपिलेन निर्हृतम्, कपिल-अण् । कपिलनिर्मित, कपिलका बनाया हुआ ।

कापिवन (सं० स्त्री०) दो दिनमें होनेवाला एक अहीन यज्ञ ।

“आद्विरस चैवमस्य कापिवनाः ।” (कात्यायन, २१।४३)

कापिश (सं० स्त्री०) कपिश माघवी तत्पुप्यात् जातम्, कपिशा-अण् । १ द्राक्षामद्यविशेष, माघवीके फूलोंकी शराब । २ मद्यमात्र, कोई शराब ।

कापिशायन (सं० स्त्री०) कापिश्या जातम्, कापिशो-स्तक् । कापिश्या षक् । पा४।१।१८६ । १ मद्य, शराब । २ मधु, शहद । ३ देवता । ४ कापिशो जनपदमें रहनेवाला । (त्रि०) ५ द्राक्षानिर्मित, दाखका बना हुआ ।

कापिशायनी (सं० स्त्री०) द्राक्षा, दाख ।

कापिशो (सं० स्त्री०) प्राचीन जनपदविशेष, एक पुरानी बसती । पाणिनिने अपने सूत्रमें उसका उल्लेख किया है । (भा१।१८६) हिउयेनसियाङ्गने उस जनपदका नाम ‘कि अ-पि-शि’ लिखा है । उक्त चीन परिव्राजकके समय भी कापिशो जनपद क्षत्रिय राजाके अधीन रहा । उस समय यहाँ निर्ग्रन्थ, पाण्डप, कापालिक,

द्विषोपासक और बहुत मोह वास करती है। उसका विस्तार ३००० मि (अंगूठे ३३३ कोस) का। (Beal's Ethnologist Record I, 54-55 देखें)

पाश्चात् प्राचीन भौमोलिक टर्मेसिनि उसका नाम 'अपिथिया', जिनमे 'अपिथियन्' और ससिनासमे 'अपथसा' लिखा है।

अभिहाम साइबेरि मतके उक्त प्राचीन जनपद कापरकान औरवन्ध और पश्चिमि पर्यन्त विस्तृत था। चीन परित्रावकको वर्षमाने समझ पड़, कि वर्तमान बग्नू (पश्चिमि-वसित वर्ण) अथवाका प्रदेश पश्चिमि आपिथियो ससिय राजाका अधिकार रहा।

जिनमे उसको राजधानी 'अपिथिया' बताया है। उसका वर्तमान नाम कुसान अथवा सीपियान है।

आपिथिय (सं० पु०) अपिथिया अथवा सुमान्, अपिथिया इन्। विमाच, योतान्।

आपिथिल (सं० पु०) अपिथिलकम् इदम्, अपिथिल-अप्यु। १ प्राचीन जनपद सिथिय, एक पुरानी बसती। इहत् संज्ञितसि बह 'आपिथिल' नामके उक्त है। फिर प्राचीन ग्रीक भौमोलिक परिद्यानमे लये 'आम्पिलको' लिखा है। एक पश्चात्के पन्तर्मत कुवसिहका सम्बन्धी है। वर्तमान नाम अइबल है। बर्हा पश्चिमामन्दिर मसिह है। २ मोरमेह।

(काम्बेनकर १०५११)

आपिथिलि (सं० पु०) अपिथिलकम् योत्रापत्नम्, अपिथिल-अप्यु। अपिथिल अथिथि संशिय।

आपो (सं० ली०) १ नदी सिथिय, कोरे दरिया। २ लीथियि एक तरङ्गको धीरत।

आपी (सं० ली० = Copy) १ प्रतिस्व, नदक। एक शब्द पंगरेको Copyका अपभ्रम् है। (चि०) २ नङ्गारे, बिरनी।

आपो राइट (सं० पु० = Copy right) मुद्रकसामिह, एक तस्नीय या मुद्रकिकी। उक्त अत्र राजकिचि पसुहाय अन्वकार वा प्रकाशकको मिकता है। बिना अनुमति बिद्ये दूसरा अत्रि चिपी अन्वकार वा प्रकाशकको कोरे मुद्रक अथवा नहीं बसता।

आपु—अन्द्राक प्रायको एक जाति। उडे खान

बिगेवर्मे आपु, रेण्डो या गायड् भी कहती हैं। निहूर, अदगा, करन्क और समस्त तैलङ्ग देशमें आपु लोग रहते हैं। उनको अथवीबिका प्रजागतः अथिकायं हो है। बिन्तु कोरे कोरे अथसाय भी बसाते हैं। दइ बतुर, काइलो और कायंसम होते हैं। आपु जाति १३ भाषामे विभक्त है। १ पारि, २ कानिदे ३ अककुटी ४ देहरि, ५ निरातु, ६ पय्या, ७ पाकान्टी ८ पीदाकान्ति ९ पङ्के, १० मोटानि, ११ रतु १२ येराय और १३ रैकामा आपु।

आपुवप (सं० पु०) कु पुवपः कोः आथिय। तिनला पुवै। १। २। ३। ४। निम्दिह पुवप, अराव आइमी।

आपुववता (सं० ली०) आपुववक भावः, आपुवप तन्। १ निम्दिह पुवपका कार्य, अराव आइमीका नाम। २ मोहता निवप्यापन।

आपुववद (सं० ली०) आपुवप त्व (अन्वकारकली। १। २। ३। ४। निम्दिह पुवपका कार्य। आपुववता देवी।

आपुवव (सं० ली०) आपुववक भावः, आपुवप-अन्। आपुववता, निवप्यापन।

आपिय (सं० लि०) अपिर्माणं कायंम्बा, अपि इन्। १ अपिसम्बन्धीय अन्तरके सुतात्रिह। २ अत्रिह अन्तिके अर्थमे अथक। (पु०) ३ यीनक अपि। (ली०) ४ बानर जाति, अन्तरकी लीम। ५ बानरके कायं, अन्तरकी काक।

आपोत (सं० पु०-ली०) अपोतानां समूह, अपोत अथ। १ अपोतसमूह, अन्तरकीका सुत्र। २ लीमीपाकान, सुरमा। ३ अर्लिघार, अन्नीघार। ४ अथक अथक, आका नमक। ५ अपोत अर्थ, भूरारइ (लि०) ६ अपोत-अथकीय, अन्तरके सुतात्रिह। ७ अपोत अर्थविशिष्ट, भूरा।

आपोतक (सं० लि०) अपोताः सन्ति पश्चाम् अपोत इ कुच अ तत्र अन्व अन्व कुक्। अपोतविशिष्ट देयत्रात, अन्तरकीके अरे मुद्रकका रङ्गनिवाका। आपोतपाक (सं० पु०) अपोतानां पाकं द्विज्, तन्व अन्व, अपोतपाक अन्व। अपोतके द्विज् अन्तरकीके अर्थका समूह। २ अपोतपाकका राजा। आपोतवक्रव (सं० पु०) अपोतवक्र, एक शूटे।

कापोताञ्जन (सं० स्त्री०) कपोतं तत् प्रञ्जनञ्चेति,
कर्मधा०। सीवीराञ्जन, सुरमा।

कापोति (सं० त्रि०) कपोतस्य इदम्, कपोत-इत् ।
कपोत सम्बन्धीय, कबूतरके सुताल्लिक।

काप्य (सं० पु०) कपेर्गोत्रापत्यम् कपि-घञ् । १ कपि
ऋषिके वंशीय, आङ्गिरस। २ वानर वंशीय, वन्दरसे
पैदा होनेवाला। (स्त्री०) ३ पाप, गुनाह।

काप्यकर (सं० पु०) कुत्सितं आप्यं काप्यं पापं
करोति, काप्य-क-ट। १ स्वकृत पाप प्रकाश करनेवाला,
जो अपना किया हुआ गुनाह कह डालता हो। (त्रि०)
२ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यकार (सं० पु०) काप्यं करोति, काप्य-क-अण् ।
१ पाप करके प्रकाश करनेवाला, जो गुनाह करके कह
डालता हो। २ पापकी स्त्रीकृति, गुनाहकी तसलीम।
३ पापकारक, गुनाहगार।

काप्यायनी (सं० स्त्री०) कपेर्गोत्रापत्यम्, कपि-यञ्,
फक्-स्त्रीप्। कपिवंशीया, कपिके वंशकी औरत।
काफरी (हि० स्त्री०) किसी किसका मिर्चा।
इसका आकार चपटा गोल और वर्ष पीत होता है।
काफल (सं० पु०) कुत्सितं फलं यस्य, कोः कादेशः।
कटफल वृक्ष, कायफल।

काफिया (अ० पु०) अनुप्रास, तुक। अनुप्रास जाड़नेको
काफियाबन्दो कहते हैं।

काफिर (फा० वि०) १ मूर्तिपूजक, वृत्तपरस्त।
२ नास्तिक, ईश्वरको न माननेवाला। ३ निदय,
वेरहम। ४ दुष्ट, पाजी। ५ काफिरस्दानका रहने-
वाला। (पु०) ६ अफरीका का एक मुल्क।

काफिर—एक जाति। अफरीकाके दक्षिणस्य काफे-
रिया नामक स्थानके अधिवासी ही काफिर हैं।
किन्तु सूदानके दक्षिणदिग्धर्तों समुदाय अफरीकावासो
भी उसी नामसे पुकारे जाते हैं। आजकल आधिक्य
स्थानमें वह देख पड़ते हैं।

भारतवर्षमें भी काफिर हैं। उन्हें साधारणतः
इब्रवी कहते हैं। यह खिर कर नहीं सकते
काफिर किस समय कैसे इस देशमें आ पहुँचे थे
फिर भी अनुमान आता, जिस समय अरबके साथ

भारतका वृद्धिर्वाणिक्य रहा, उसी समय अरबोंके साथ
काफिरोंका यहाँ आगमन हुआ। अफगानों, सुगकों
और तुर्कोंके साथ भी अनेक आये हैं। काफिर यहाँ
आ और क्रमशः विशेष प्रशय या शेषकी किसी किसी
स्थानमें राजा तक हो गये हैं।

आजकल उत्तर कनाडेके दार्जिलिनी जिलेके पार्वत्य
प्रदेशमें काफिरोंका वास अधिक है। बम्बई उपकूलके
जंजीरा नामक स्थानमें 'इब्रवी' या "सीदी" जातीय
राजा हैं। वह राजवंश अबसीनियाके काफिरोंसे
उत्पन्न है। खृष्टीय १८५५ शताब्द पर्यन्त अबसीनियाके
काफिर भारत-उपकूलमें जलद्वयका व्यवसाय
उठा निकटवर्ती सागरमें घूमा करते थे। खृष्टीय १५५५
और १६५५ शताब्दको विजयपुरमें आदिल शाही तथा
निजामशाही वंश राजत्व करता था। उसके अधीन
काफिर पुररची सैन्यश्रेणीमें नियुक्त रहे। सिन्धु
प्रदेशमें तामपुरके अमीर एक दिन काफिरोंका सैन्य
रखते हैं। कर्णाटकके नवाबके पास भी काफिर दास
रहते हैं। कर्णाट केलास और मेकराम नामक
स्थानमें बहुत काफिर हैं। फिर निजाम राज्यमें
निजामके नियमित सैन्यके मध्य उनको संख्या कुछ
अधिक है। भारतके अन्य प्रदेशोंमें भी मुसलमानोंके
साथ काफिर फैल पड़े। पहले मुसलमान नवाबोंके
अधीन वह पुररची सैन्यदलमें नियुक्त रहते थे।
नगराटिकी शांति रचा उनके हाथमें थी। उनकी
रमणियाँ भी नवाबोंके अन्तःपुरमें दामो थीं नवाबोंके
अनुकरणसे हिन्दू जमान्दार और राजा पुररचीको
काफिर नियुक्त करते थे भेष रीति कि काफिराँको
बड़े विश्रामो, प्रभुमत्त और आनन्द समझ कर ही उस
कायका भार दिया जाना था।

पूर्व-भारतय होगुज पार दक्षिण एशियाके
अन्यान्य स्थानमें भी काफिरोंका वास है। काफिर वहाँके
उपनिवेशों नहीं वह मूलस्थान उनको आदिम वास-
भूमि है उक्त स्थान अफगानोंके काफिरोंका वासभूमि-
क साथ अमसूर गानम रहनेसे उन दोनोंके मध्य देयगत
पायबन्ध बना पन्थे गोर आभेनत देख नहीं पड़ती।
इसीसे दोनों स्वनोंके लोग काफिरमाने जाते हैं।

उत्थिमिके सुखकपाठके समस्त पङ्क्तियाँ हैं। उनमें "बुरिया खिरपनेहास" "मावाडस इङ्गिडसि" और "इविचोपिस इङ्गिडो यजि"में बुद्धाच, वपरीय एवं नर विनीची पपूर्वा जातिका विवरण मरा है। इन्हीं की उपायचोख राखण जाति पठुमान करते हैं।

प्राचीनकाल भारतवर्षके दक्षिणार्धमें काबिख बरनेको मिशरीय बचिनीके साथ पपरीकाके पूर्वा अक्षरके साथ परब और पपरीका समय स्थानीके यहाँ पाते थे। पाखाज पतिवाचकीके मतमें वेसा कबसायवाचिख प्राय तीन हजार वर्ष रहा। उक्त समय यही नहीं कि उक्त कबक देगोंके साथ कबक पच से पोतापेचक द्वारा इस देगमें पाते और कब विखय कर बन्दरके चले जाते थे, किन्तु पनेक बचिखरूपके इस देगमें रहने भी लयते थे। उक्त कबक कायो, बचिख सिङ्गलमें "मुपरजाति" और दाचि काखमें "मोपका" वा "लकाई" नामके प्यात हुए। किन्तु किन्हींके कबनागुसार दक्षिणार्धमें पायोंका पचिबार बिपुत होनीसे पचिसे ही काभिर रहने लगे थे। उक्त मत समझनेके लिये बताते हैं—

"दाचिबाखके पचिबासियोंके पायंजातिका जितना पार्थक्य पानकक देख पङ्कता है, उतना भारतमें खिरी रूपरे कालपर नहीं मिलता। फिर दक्षिणार्धकी सबसे माया संकतके सम्यक् मिल है। दक्षिणार्धके पचिबासियोंमें जितनी हीका पाङ्कतितन हीसादय पचिबाय ईरानियोंकी माति, जितनी हीका समितीय ईरानियोंकी माति, जितना हीका पपुसियोंकी माति और जितनी हीका मलय पपुसोंकी माति है। फिर निचले चोके सागोमें पचिबायको पाङ्कति पपरीकावासिबास मिलती है। उक्त कोयके मतानुसार विन्ध्य एवं वाटपर्वतके पूर्वा प्रायवर्ती अक्षयजतिको पाङ्कति पचिबातर उत्तर भारतीय पायंजातिकी पाङ्कतिके हीसादय रहती है। किन्तु वाटपर्वतके पचिमाखलवासो मलय हीयका आङ्कन जातिकी माति होते हैं। आङ्कन जातियोंके साथ पपरीकावासियोंका पचिख आङ्कन है।

पूर्व भारतीय हीयबसोंमें प्रचलतः चाड जातिका वाड है—(१) विन्ध्य मलय जाति, (२) मलय उप-हीयवासो पचिबाखर काभिर वा भीमाजाति, (३) खिलिपारन हीयकी सुद्राबाखर काभिर जाति और (४) नरविनीची इङ्गिडकाय काभिर वा पपूर्वा जाति। एतादृख नरविनीची और मलयहीयके मलयवर्ती कई हीयोंमें उनको मलयवर्ती एक जातिके सोम देख पङ्कते हैं। उन्हें मलयको काभिर जाति कह सकते हैं। खिलिपारन और कबक देगके पूर्व को सबल हीय हैं, जन्मे पचिबासी पाचारपत पपुसियावासियोंकी माति होते हैं। उक्त पार्थक्य देख पनेक सोम पनुमान करते हैं कि पचिबायके दक्षिणार्धके साथ पूर्व भारतीय हीयपुङ्कके पचिभमागल हीय पति प्राचीन काबिख संकलन से और काबिखममें प्राङ्कतित पचिबर्तनके विखिख हो गये। *

पपरीकाके जितने काभिर रहते हैं, पठुमानतः उनको सप्या ही कपुके पचिख नहीं। इस पूरे संकलनमें काभिरियासी काभिर और इटोप्ट भी रख बिसे मये हैं।

सोहितसायके पूबकूब, पारश्वोपसागरके तीर और मलय उपदोयमें काभिरोंको सप्या पचिबके पचिख १० काय होयी। किन्तु बङ्गोपसागरके पाम्यामान हीयके पूर्व दिखको हीयबसोंमें जिन जिन जातीय लोगोंकी वाचारपतः काभिर कहते हैं, उनके मध्यमें जिनकममें १२ पाङ्कतितन सेको-विमाय हैं। इन १२ सेकोयत पायंकाको देख जात जाता है— इनमें जितने ही साङ्गे तीन चाब या चार चाब तक और जितन ही साङ्गे चार चाय तक लखे निहलते हैं।

* यह पनुमान केवल काबिख पाङ्कतितन हीयकाचर पर निर्भर नहीं करता। सुप्या, हीयबस, मलय, पचिब बर्तन हीयकी वरकर मलयवर्ती बसानी और दक्षिणके बसाय कूबको मलयवर्ती बसानी नहीं ही (१) । १०० पायके पचिब कभी नहीं। किन्तु खिलिपारन हीयके हीयवर्ती बसानी और बसुतार पनेक काबिख १० काबकी पचिबा ही कभी नहीं। एतादृख एतादृखके दक्षिणार्धके कबक कब कूब इत्यादि पपरीका पनु और हीयन आचारपचिबके साथ उन कबक हीयके कब कबक पचिबकी काब कबक देख देख सकते हैं।

उनके मध्यमें अपेक्षाकृत कई विख्यात त्रेणियाँकी वात कहते हैं।

शान्दामान हीपके मीनकपी काफिर—मालूम पड़ता है कि मनुष्य त्रेणोमें उनकी अपेक्षा प्रसभ्य जाति दूसरी कम मिलेगी। उनके वासस्थानकी स्थिरता नहीं, परिषेय वस्त्रादि नहीं और उन्हें यह भी ज्ञान नहीं जीविकाके लिये किस प्रकार कार्य करना पड़ेगा। मीनकपी जोगोंके साथ मिनना तो चाहते हैं, किन्तु अनिष्टप्रिय होते हैं। नरमांस नहीं खाते भी वह शूकरमांस, मत्स्य प्रभृति भक्षण करते हैं। मीनकपी जङ्गली फल एवं मूल तोड़कर और भीन तथा पुष्करिणीसे मत्स्य पकड़कर खा जाते हैं। वह धनुर्वाण ले वन वन और पुष्करिणी पुष्करिणी घूमते फिरते हैं। वाँसकी खपाचसे मछली पकड़नेका कांटा वह लोग बना लेते हैं। वह वस्त्र नहीं रखते और नङ्गे रहनेमें कोई लज्जा नहीं करते। मीनकपी सुद्रकाय होते हैं। उनका मस्तक छोटा और तालु चपटा रहता है। वह अपना सर्वाङ्ग कांचसे खरींच खरींचकर शरीरकी शोभा सम्पादन करते हैं। बाहुमूल तथा कण्ठमूलसे मणिवन्ध एवं कटिदेश पर्यन्त अङ्गकी चारो ओर गोलाकार खरींचके दागोंसे मीनकपी प्रति विन्धी और भयानक लगते हैं। किन्तु वह उसीकी अपनी प्रधान शोभा समझते हैं। किसी विषय पर सन्तोष प्रकट करते समय मीनकपी दक्षिण हस्तमें तालुके निम्न भागपर धीरे धीरे दन्ताघात कर वाम स्कन्धपर एक थप्पड़ लगाते हैं। सईस घोड़ेका बदन मलते वस्त्र जैसे ठपक देते हैं, वैसे ही शब्द निकाल वह चुम्मा लेते हैं। परस्पर कथोपकथन करते समय मीनकपी ऐसा गडबड उच्चारण करते हैं, मानो चूँ चूँ कर ही मनोभाव प्रकाश करते हों। किन्तु वास्तवमें यह वात ठीक नहीं। उडियोंकी भांति उनकी उच्चारण-प्रणाली प्रति द्रुत और प्रसृष्ट होती है। उनको नाचना बहुत अच्छा लगता है। नाचते समय बड़े दोनों हात मस्तककी ओर उठा सङ्गीतके ताल ताल पर कूदते फाँदते हैं। फिर नृत्यमें कभी मीनकपी मस्तक घुमाते और कभी समस्त शरीर सम्मुखकी ओर झुका लाते हैं। इसी प्रकार मीनकपी, सङ्गीत और

नृत्यके ताल ताल पर नामारूप अङ्गभङ्गी किया करते हैं।

सेमां, विला—शान्दामान हीपके पूर्व मलय उप-हीपके अन्तर्गत केटा, पिराक, पाहाङ्ग और विङ्गानु प्रदेशमें जो काफिर रहते हैं, उन्हें मलयके लोग “सेमां” तथा “विला” कहते हैं। उनका वयं ऊण्य, केग ऊर्ण-मट्टय और गठनादि अफरीकावासियोंकी भांति खर्षाकार होता है। पूर्णवयस्क पुरुषकी उच्चता तीन हाथसे अधिक नहीं बैठती। उनके भो निर्दिष्ट वासस्थान और कृषिकार्यका अभाव है। उनमें अधिकांश घूम घूम कर वनका उत्पन्नादि संग्रह करते हैं और उसे ही मलय-जातीयोंके निकट व्यवहाय द्रव्यादिसे बदलते हैं। वह शिकार सरतें और शिकारमें पारसे पार पक्षी या उसका चर्म पानकादि विनिमय कर खाद्यादि लाते हैं।

सियान नदीकी उपनदी इजानके तारवर्ती स्थानमें “सेमां बुकित्” नामक त्रेणोक काफिर रहते हैं। वह पूर्णवयसमें सवा तीन हाथ हाते हैं। उनका मस्तक सुद्र, मस्तकका सम्यक्खभाग कुछ कोणाकार उच्च, और पश्चाद्भाग वस्तुनाकार तथा मध्याङ्गकी अपेक्षा अप्रगस्त होता है। मलयजातीयोंसे सेमां बुकित्को सुखमण्डल साधारणतः अप्रगस्त, अद्देश उच्च, नयनकोटर प्रति गम्भीर, नासिका नोची और छोटी एवं नासिकाका अप्रभाग सूक्ष्म तथा उठा हुआ होता है। प्रांखका परदा पौना, चक्षुष्य दीर्घ-कुक्षित, हनुदेश एवं मुखविवर प्रगस्त और डाँठ मोटा तथा छाटा रहता है। भ्रू तथा नासिकाका अप्रभाग और छिद्रकी उच्चता समान होता है। उनका उदर लहलह रहते भी शरीर अपेक्षाकृत घाय लगता है। वह वानरकी भांति उदरको घटा बना सकते हैं। गात्रका चर्म साधारणतः कोमल पारिष्कारण होता है।

विङ्गानुको सोमाङ्ग नामक त्रेणो कटादियोंकी भांति कुछ तरलवयं है वह लगभग सव्व बुद्धिमानोंकी भांति मच्छण घोर कृष्णवर्ण नहीं रहते। उनका बाल ऊनसे नहीं मिलते, टेढ़े टेढ़े पार घटा तालुकी भांति ऊंचे रहते हैं। मा-वागर्थों की भांति अङ्गना माटा सूक्ष्म रहता है। मन्तकी वनावट मन्तयां या काफिरकी

मार्ति नहीं होते, पबिखतर पापुयावधि मिचती है।
 जनका सर परिष्कार तथा सोमन लयता, बिन्दु
 चतुर्णासक रहता है। वह कपाल और कपीकर्म
 गीला गादाति है। दक्षिण कर्ष बिदा कर
 बड़ा छेद रहति है और सधुचभागमें बाबोका एक
 कोनाकार दुष्का छोड़ समस्त मरुत सुच्छन करते है।
 घिराकई नदीकुसवतीं सेमाइ "मेमातिह पाय" कहति
 है। वह सधुद्रुगौरसे पर्वतके ऊपर तक सचन स्थानमें
 रहति है। बिन्दु बुद्धित बन और पार्वत स्थान मिच
 कर्मके उपभूतनाम वा नदीतीरको नहीं जाते। फिर
 "सवि" खेबोके लोग पार्वत प्रदेशमें नीचे उतरना
 कर जानत है। बिदा और घिराकई सेमाइकी भाषामें
 दो मन्थोब योगन मन्द छोड़ पन्थ कोई बड़ी कवा वा
 समानवन्ध नहीं। बिन मरुत स्थानमें सेमाइ लोग
 रहति है, इनमें मरुतवन्धनोय नहीं मिचति।

पापुया खेबोके काफिर—डोरिस, सुम्ब वा
 इन्दुन, पदेनाय, ससर, सधुडा चताय खोम्बे,
 पाथेठर, रती, सर्वन्ति, बम्बर, तिमर, तिमरकाहत,
 काराड, नन काकिठानिया, नन पायवैख, पाडावायटी
 पलिनैधिया, पिबो, मासहच, ननगिनी, पोयो, वासन्द,
 किरीप, पम्बनना, घासवती प्रकृति पूर्वायको हीया
 पचीमें वास करते है। बिन मरुत हीयमें उस जातिके
 काफिर रहते है उन्हें मरुतके बीब "तानापापुवा"
 (पापुया जातिके वासस्थान) कहते है। वास भूवर
 बासे होनेसे ही जनका नाम "पापुवा" पड़ा है। क्योकि
 मरुत भाषामें डेढ़ बानोको "सुया सुया" कहति है।
 सुया-सुया मन्थे पापुया मन्थे निबन्धा है। उनको
 प्राकृति बिलकुल काफिरोंके मिचती है। भासिका
 मरुत होती है। हाँठ मोटा और बड़ा रहता है।
 कपाल दबा हुआ होता है। रङ्ग मटमैला लगता है।
 पक्षिगासकका चतुर्थाय कपेद जाता है। वह
 दक्षिणपूर्व दिगियाकं पन्थान्ध काफिरोंके पूर्वगठित
 और बलिष्ठ है। पापुया लोग लम्बाके, पम्बनसायो
 और परिवर्तनी होते है। उच्च सब सुबोके कियो
 समय उनको सम्भेदमें दासकी भांति पाबल बैठते है
 और बीब भी पापुयासकारके ही शीत है। उनको

मानसिक हृति मरुतजातिकी अपेक्षा हीन न रहते
 भी बहुत बधुल होती है। इसीसे वह काभीन भाषमें
 रह नहीं सजति। मरुतजातिके सब विवाहमें इसी
 कारण पापुया डार जाति है।

वह ननगिनो तथा उरुके निबटवतीं हीयमें सधुद्रुके
 उपभूतपर वास और पन्थान्ध स्थानमें पार्वत
 प्रदेशपर पबस्थान करते है। बहुतसे हीयमें तो उनको
 उरुका बिलकुल घट गये है। विराम और गिलोको
 हीयमें वह कभी कभी सुरिककसे देख पड़ते है।
 बहुतोका पशुमान है कि, वास पाकर पापुया
 दक्षिणसे उठ जायेगे, क्योकि विश्वारके भूये अपेक्षा
 हत तान्त्रक जातीय लोग उनको पबिच मारते
 है। बिन्दु वह जन है। कारण कदा कदा
 पाककल सुरोपीय सम्भता देखती, कदा कदा
 उन्हें परभर दिन दिन मिचसुल कर रहनेको
 शिवा मिचती जाती है। विराम और गिलोको
 हीयमें रहनेवासे पन्थाकारके लपोद्धित हो पतिवय
 मोद बन गये है। वह कियो सम्भ जातिके साथ एक
 हम ही बैठते उठते नहीं। अपरिचित वा मित्र
 जातिके लोगोंको देख जगजगमें भाव छिप जाते है।
 माइसल नामक उरुत्त हीयमें उस जातिकी छोड़
 पन्थ कोई जाति नहीं रहती। केवल उपभूत
 भागमें एक प्रकारकी मिच वा सहरजाति देख पड़ती
 है। उसको भी प्राकृति प्रकृति उनसे बहुत कुछ
 मिचती है। उच्च सहरजाति मायिकतामें विधेय
 पारदर्शनी होती है। वह सुरापीयोसे सद्य व्यवहार
 करती है। मागीसलमें पापुया जातिके लोग देख
 पड़ते है। बिन्दु उरुके निबटवतीं जेसु हीयमें वह
 बिलकुल नहीं पाये जाते। वह भी उनमेंमें नहीं
 जाता कियो समय कदा पापुयावाका वास वा।
 ननगिमि, कि, पर, माइसल घासवति प्रकृति हीयमें
 उस जातिके लोग रहते है और कबो खेबी जिनो
 हाय तक विस्तृत है। उनके वास कड़े और बहुत
 डेढ़ होते है। पूर्वदयस्थानके मरुतपर उसी प्रकारके
 वास उच्च बड़ कर टापीकी भांति बन जाते है।
 उन्हें बेश ही वास पच्छे भी लगते है। उनको

दाढ़ीके बाल भी बैसे ही टेढ़े होते हैं। दोनों हाथ, पैर और छातीमें भी कुछ बैसे ही बाल रहते हैं। उच्चतामें वह मलय जातिकी अपेक्षा दीर्घ, प्रायः युरोपीयोंकी भांति होते हैं। पदद्वय दीर्घ रहते हैं। मुखमण्डल दीर्घाकार, कपाल चपटा, नासाक्षिद्र प्रगस्त, सुखविवर बड़ा और श्रोत्र मोटा तथा भारी होता है। वह कामकाज और बातचीतमें बड़े दृढ़प्रतिष्ठ होते हैं। वह लोग विद्या कर और खूब जोरसे हंस हंस कर तथा छद्म कूट कर आनन्द प्रकाश करते हैं। वह गृह, द्वार, नौका और तैजस आदिकी श्रोट कर चित्र बनाते हैं। अपनी अपनी गिग्यसन्तान पर पापुया बहुत क्रुद्ध रहते हैं। वह अपने कभी सामाजिक बन्धनमें पड़ रह न सकेगी। समझमें ऐसा आता कि कान पाकर युरोपीय सभ्यता फैलनेसे उस गृहप्रिय जातिका जोप होगा। वह बड़े विघ्नाधी होते हैं।

हृत्कृपाय पापुया आकृतिमें श्रेष्ठ और वसादिमें विख्यात हैं। उनका विस्तृत स्कन्ध और गभीर वक्षस्त्र प्रीतिकर देख पड़ता है। काफिर जातिका साधारण श्रेष्ठ पदद्वयकी क्षीणता और अपूर्णता है। पापुयाशैर्में भी उसका अभाव नहीं। स्त्रावीन पापुया जाति बड़ी प्रतिहिंसापरायण और उद्वतस्वभाव है। नव गिनिके उत्तरपूर्व प्रान्तमें वह रहते हैं। पापुया अपने देशमें अन्य किसी जातिकी निरापद वसने नहीं देते। निहायत परैगान करके भी भगान सक्नेसे अपना स्थान छोड़ अभ्यन्तरभागमें पार्वत्य प्रदेश पर वह चले जाते हैं। पापुया गोदना नहीं गोदाते। किन्तु ऊरु, वक्ष और शृष्ठ पर एक प्रकारके प्रलेपसे चमड़ेकी उभार वह कहा कड़ा आवला बना लेना अच्छा समझते हैं। कभी कभी यज्ञ कर पापुया उसे एक अंगुल तक लंबा उठा देते हैं।

झोरिस और नवगिनि प्रकृति क्षीर्षीमें काफिर ही वसते हैं। नवगिनिके पापुया भिन्न भिन्न श्रेणीके साथ परस्पर युद्धमें लिप्त रहते हैं। उस युद्धमें विपक्ष पक्षका सस्त्रक काट न सक्नेसे कोई पक्ष मिरस्य नहीं होता। नवगिनिके काफिर एक काष्ठमयी प्रतिमाकी उपासना करते हैं। उस देवताका नाम "कारयर" है।

प्रतिमा १८ इंच उच्च रहती है। प्रत्येक घटनाकी वह उस देवताके निकट प्रकाश करते हैं। उनकी विधवायें स्वामीके गृहमें रहती हैं। अन्यान्य स्त्रानोंके काफिरोंकी अपेक्षा नवगिनिके पापुया सभ्य हैं। किन्तु अधिकारी अति सामान्य पर्णकुटीरमें रहते हैं और गिकार या स्वभावजात फलमूलसे जीविका निर्वाह करते हैं। उपक्रमभागके पापुया अपेक्षाकृत सभ्य हैं। वह ऊचे खम्बोंपर खसीकी भांति भड़े वर बांध रहते हैं।

डोरी क्षीपमें पापुयावोंको "माइफोर" कहते हैं। वह घाटे तीन हाथ दीर्घ होते हैं। जातिसुलभ कुक्षित केशोंकी माइफोर स्त्रियोंकी भांति बढ़ाकर रखते हैं। उन बालोंके कारण वह अधिक भयानक लगते हैं। पुरुष गिरमें एक कंधी खोस रखते हैं, किन्तु स्त्रियां वेसा नहीं करतीं। उनकी दाढ़ीके लोम कुक्षित, कपाल उच्च एवं प्रगस्त, चक्षुद्वय बड़े, वर्ण कामा, नासु चपटी और श्रोत्र मोटे होते हैं। किन्तु दांत विस्तृत मोतीकी भांति रहते हैं। पुरुष वहिर्वास की भांति एक प्रकारका छोटा कपडा पहनते हैं। वह कपडा "मार" नामक हथकी हालमें बनता है। उनकी स्त्रियां नीले रंगके सूत्रका यज्ञ परिधान करती हैं। वह घंटनेके नीचे नहीं पहंचता। उष्णवादिमें वह गोदना गोदाते हैं। वह गोदना अधिक दिन नहीं रहता। गोदना गुदाते समय मच्छलीके कांटेसे जहां गोदना बनाना चाहते हैं, वहां रत्न निकाल कर भूया लगा देते हैं। वह समुद्रगमनमें अतिगुण्य पारदर्शी होते हैं। नौकाके चामन, सन्तरण और समुद्रमें डुबकी मार समुद्रके गर्भपर कर्मादि करनेमें उनकी बराबर निपुण्य और कोई नहीं होता। वह हथकी पेडी खोद अपनी नौका प्रस्तुत करते हैं। मकई, धान और सिन्धनेसे शूकर मांस भी खा जाते हैं। वह चौर्य-वृत्तिकी सर्वापेक्षा दुष्ट और दुष्ट्य अपराध समझते हैं। माइफोर लाम्यद्व-दोषवर्जित हैं। विवाह एक ही बार होता है।

शर क्षीपमें स्थान स्थान पर परिष्कार लक्षपूर्व दक्षदक्ष और दुर्गम जंगल है। वहांके लोग मलय

पौर पश्चिमीय काफिरोंको मध्यवर्ती जाति है। पट्टेनीयोंके साथ ही उनकी जाति प्रकृति पौर व्यवहारका साक्ष्य पचिह्न है। पुत्र्य जाय तब तुमको दुनो बटाई या बपड़ा पड़नते हैं पौर दुपड़ा बपड़ा करते हैं। बह ब्रौचनअमात्र नहीं होते। किन्तु गुहर्षी वा शिवोषि तिरछत होनि पर इधत् विमह ठठते है। शिवां तुमको दुनो बटाईका एक बख सय प पौर एक सख पदात् दिक् नट बा धीतो है। उनमें जितने हो सुखमान पौर जितने हो ईसाई है। थोसन्दासोनि चम्पपना होपमें ईसाई धर्म प्रचार कर देयके प्रायः प्रथान प्रथान लोगोंको ईसाई बना जाना है। यह हीपके पापुया पपने पपने पदको धातुपलक पौर वक्षिदन्त द्वारा सजाते है। इसीके मर जानिने बह दन्त संपद करते हैं।

जि हीपके काफिर सुसलमान होते भी शूहरमाय खाते है। उनको शिवोषिं मी पचरोबपदा नहीं। जानक बाकिना बड़ी पामोटप्रिय होती है पौर पूर्वबयम्भ भी प्रायः सलन शिवधर्म गृहबद्ध करते हैं। इस हीपमें हो जातिके लोगोका बाह है। उनमें पापुया नारिदेसका तेस मोबा पीर बाहका गमला बनाते है। उनको बनाई बहो बड़ी नारोमिं २०० ३० टन तक बोम्ब काद रुकते है। उनमें जिहो मकारकी लुटावा चहन नहीं। समस्त जय विजय विनिमयके सम्प्य होती है। बह पिहकी बाह या धनका बपड़ा पड़नते है। बहोकी दूसरी जाति बान्दाहीपके सुसलमानांको है। बह बहाने भगाये धानि पर वहां धाकर बसि है। बह धनहा बपड़ा पड़नते है। बह मन्वजातीय मान्म होते हैं। किन्तु बाकबक लग जातिकी सन्तानपरम्पराके परभर नमिन्प्रयके एक परतन्त्र मध्यवर्ती जाति बन गयो है।

बैरम हीप मसज्जास हीपपुच्छके मध्य सर्वापिचा इरन्त है। बहां मिहोका हांपकाके अधिवासिपके साथ पापुयाकोका पति निबट धाइय है। उनके पुत्रबका पूरे मठन होता है। किन्तु देद बर्कद रहता है। शिदोको पाकृति मसज्जातिकी अपिचा पधोति

कर है। इस हीपके अधिवासी पापुया "बाहकारो" नामसे ख्यात है। यह मसज्जाकी बाम दिक्के बाह बांघते है। बाकोके मध्य एक पंगुह मोटा सूबा रखते है। सूबाका पचभाग पौर पाददेम बाह रंन रहता है। यह प्रायः नख पौर पबहारवर्जित होते है। केवल पुत्र्य भाह या रूपको बाको बसुहा पौर पोत या छोटे छोटे एक पदको माहा पड़नते है। शिवां बाह नहीं बांघतीं। किन्तु उन्न समस्त पबहार यह भी परिधान करतो है। बह अपेक्षाकृत दीर्घायु होते है।

विशिविध हीपके काफिर मन्व हीपवासी पौर काफिर जातिकी मध्यवर्ती त्रैको मन्व पड़ते है। बह मन्व जातिकी भांति मन्व होते है। उनका नाम "हुमि" है।

विक्षिपारम हीपमें पचमको भांति बाहबासे काफिरोंको संख्या पचिह्न है। पचरोबाबासिधोकी अपिचा उनके गासका बर्ष कुछ तरल प्राय रहता है। स्थिनीय तब "सुदबाय काफिर" कहते है। थोकि तोन हायके पचिह्न दीध नहीं होते। उनका जातियत नाम "इटा" वा "बाएटा" है। इस हीपपुच्छके पानाम, निपौष समर, सीबटो मसवेत बांजन पौर श्रु हीपके मध्य उस जातिके लोग देख पड़ते है। धन्वाय हीपमें विग्रह इटा त्रैकोके काफिर नहीं मिलते। जेनुहीपमें एक भी इटा न पोबा काफिर बाह है।

विनि हीपके पापुयाकोको नाक बपटो होती है। हांठ मोटा बसु बांटरगत पौर रज्ज बादासो रहता है। पनेकीके अनुमानमें नरनिनिहो पापुया जाति पौर मन्व जातिके मियबके बह जाति उत्पन्न हुई है। उनके बाह भी पापुयावाके नहीं मिलते। पट्टे-निया नखबाशिहिनिया, पिसु मसक्ति होवमें को सलन पापुया काफिर देख पड़ते, बह पलिनेविध पापुया काफिरोंके संमिचबके उत्पन्न वा मध्यवर्ती जाति ठहरते है।

पिजो हीपके पापुया जो पापुया त्रैकोके काफिरोंका पूर्वभूति है। बह बघावातामें नख पौरब्यहहारमें भद्र होते है। किन्तु नरविनि, नख

कान्तिडोनिया और फिजीके पापुया नरमानुभुक् है। फिजीकीपके पापुया पफरीणके टेटेगटोंकी भांति चूड़ाकार केग बांधते हैं, सानीकी भांति करोटो (खोपड़ी) अपगम्य होती है। नवगिनिके पापुया धार्मिकता, गुस्सनाभक्ति और पातिव्येयताके निचे विख्यात हैं। प्रायः मकान तपनीमें काफिर स्त्रियोंके मध्य व्यभिचारदीप देर नहीं पडता।

काफिरस्थान—भारतवर्षकी उत्तरपश्चिम सीमा और हिन्दूकुश पर्वतके मध्यका एक प्रदेश। उसकी पश्चिम सीमा अफगानस्थानकी अमीरान्द नदी है। पूर्वसीमा कुमार नदी हो सकती है। उस स्थानके अधिवासी काफिर या सियाहपोग कहलाते हैं। १८८२ ई०में पहिले कोई अंगरेज उस प्रदेशमें प्रवेश न कर सका था। सुतरां उसके पहिले उसका जो विवरण सुनते, उसपर प्रकृत पक्षमें आस्था कैसे ना मकते हैं। प्राचीन अंगरेज ऐतिहासिकोंने उस स्थानके मध्यस्थमें जो कुछ निरखा, उसका अधिकांश पार्श्वयनों सुसलमानोंमें संशुद्ध किया था। किन्तु अब सुनते समझते कि सुसलमान उस प्रदेशमें सफल हो चुक नहीं सकते वा युसना पसन्द नहीं करते। कारण काफिरोंसे उनकी शिर गतता है। कोई काफिर यदि अपने जीवनमें किसी उपायसे एक भी सुसलमानको मार नहीं सकता, तो वह स्वजाति, स्वयेपी और स्वयंगमें अपदार्थ एवं हीन रहता है। सुतरां शहर उधर मुसलमानोंसे उस प्रदेश या उस जातिका विवरण ठीक ठीक कैसे मिला दूंगा।

वहाँ सियाहपोग नामक एक जाति रहता है। कोई कोई सियाहपोग जातिके मध्यस्थमें कहता कि वह पारस्यकी गबर जातिकी भांति आचार-व्यवहार-विगिष्ट किसी अरबी जातिसे उत्पन्न है। कोई उसे अलेकसन्दरके ग्रीक सैन्यकी औरसोत्पन्न बताते हैं। फिर किसीके अनुमानमें सुसलमानोंका मत फैलनेसे पहिले भारतवर्षसे जो लोग पर्वतादिमें रहनेको समस्तम प्रदेशसे निकाले गये, सियाहपोग उन्हीकी एक नयी है।

काफिरोंकी भाषाके साथ अरबी, फारसी या तुर्की

भाषाका विन्दुमात्र भी सादृश्य नहीं। डॉ. मन्त्रनरेण्डे साय उसकी यथैत घनिष्टता पाता है। इसी कारण प्राधुनिक ऐतिहासिक अरबी या अफगानोंकी भांति उन्हें किलकुल स्वतन्त्र जातिनहीं मानते। यह भारतीय जातिके ही अन्तर्गत है। केवल देगभेटमें काफिर स्वतन्त्र हो गये हैं।

१८८२ ई०के पूर्व यहाँका जो विवरण मिला, उसमें समझ पडा कि उस देगमें कतार, गम्हार, देम दल्ल, अरमस, इगुरस, अमीमिअ, पगिर, येमल प्रकृति जनपद विद्यमान हैं। १८८२ ई०के मिटर एडवन्स मनीयार नामक अंगरेज ही मध्यप्रतः सभेप्रथम उस प्रदेशमें जा सके थे। उन्होंने यहाँके लोक संख्या अनुमानमें ६ लाख स्थिर की। प्रति घाममें १००के ६०० तक लोग रहते हैं।

उनके दैनिक आचार व्यवहार और सादृष्टि प्रकृतिके मध्यस्थमें नानाशय विभिन्न मत मिलते हैं। किसी किसीके यथनानुसार सियाहपोग देगमें वनिष्ठ, दृढगठित एवं साहसी रहते भी स्वभावमें सम्पूर्ण विपरीत यथात् अल्प, विनासी तथा सयदा मद्यपारी होते हैं। अफगानस्थानमें अनेक एकडे काफिर बसते हैं। उनका शरीर दृढ समझ पडता है। उनमें सुरापीय गठनके लोग ही अधिक हैं। कृपाहीन और विडालाघोंको भी कोई कमी नहीं। उन्हें पासन बांधकर घेठना कठिन लगता है। काफिर कुरसी पर ही सुविधासे बैठ सकते हैं। उनकी स्त्रियां रूपवती और बुद्धिमती होती हैं। वर्ष रक्तोच्छन्न भूते हैं। अनेकोंके कथनानुसार अतिरिक्त मद्यपान करनेसे वह रक्तवर्ष हो गये हैं। यदि उनमें पूजा जाय उन्हें कैसा पानाहार अच्छा लगता है, तो वह शीघ्र कष्ट उठेने—प्रतिदिन एक मटका शराब चाहिये। एक मटकेमें प्रायः पंद्रह सेर शराब आती है।

मनीयारका विवरण पठनेसे समझते कि काफिर-स्थानके लोग सुपुरुष, साहसी और कृपिणीवी हैं। उनकी स्त्रियां बागका काम करती हैं। नृत्यगीतमें वह बहुत अनुरक्त रहते हैं। प्रायः प्रति सन्ध्या नृत्य-गीतादिमें बीतते हैं। उनमें आत्मकसह वा सुहृदविषय-

अहित रहपात नहीं होता। सुखसमाप्तिमें इनका सर्वप्रमुख ध्येय है। एक दूसरेको देखते ही मुह छिन्न जाता है। चंद्रनेत्रोंमें आस-रसका कोई विवाद नहीं। इनमें दासत्वप्रथा और दासध्वंसवाय विद्यमान है। किन्तु समझ पड़ता है कि वह गौर ही बूट जायगा। यह प्रायः बहु विवाह नहीं करते। स्त्रीको अविचार दोषमें सामान्य दण्ड मिलता है, किन्तु पुत्रपुत्री बहूतसा मोक्षोपायि सुधीना देना पड़ता है। यह प्रवृत्ति अत्यन्त बन्द कर रक्क छोड़ती है। एक मात्र परिशील्य विवशता "रम्" (या रम्) पूज्य है। रम्बुका मन्दिर होता है। उक्त मन्दिरमें पवित्र प्रस्फारपूर्ति स्थापित रहती है। पुरोहित आकर पूजा करते हैं। वह अनुप्रासकारी है। मोक्षोपायि ही इनका मुख्यवाम्बु बधु है। यही अिधर्म पवित्र रहता है, यही यमो ठहरता है। इनमें १८ लोग सरदार हैं।

यह लोग परस्पर शपथ ठठा अनुताकि सुखमें बंध जाते हैं। किसीके साथ सुखकी शपथ टूटनेसे पहले एक तीर मीमा जाता है। यह बड़े प्रतिश्रुति भक्त हैं। यदि कोई प्रतिश्रुति इनके घर जाता, तो अत्यंत श्रद्धापूर्वक शपथी परिचर्या ठठाता है। फिर यदि कोई दूसरा उस प्रतिश्रुतिको ठठा शपथी घर से जाता तो शपथके मध्य विषम विवाद देखनेमें आता है। यहां तक कि रहपात होने समता है। शिवोंके यथेच्छा भवधर्म ह्युक्त बाधा नहीं, श्वसुच्छन नहीं। किन्तु उन पुत्रपुत्रीके साथ पालनोत्तन करने काम पातो हैं। प्रतिश्रुति पाममें शिवोंके प्रसन्नकी अतन्त्र मगन रहति है। इनके शपथमें विवाद होनेके पीछे मित्रते समय विवादियोंके मध्य एक पादमो दूसरेका श्दन और दूसरा श्दन चरनेवासीका मन्दाह जुम्न करता है। इसी प्रकार विवाद मिट जाता है। आफिर शपथमें सन्तानको विज्ञान नहीं करते। किन्तु अहर्नि पढ़नेके प्रतिबाधीके सन्तानको चोरीके श्व सेते हैं। किसी किसीके अज्ञानाश्रम पर यह व्यापार अज्ञानके मध्य गण्य है। इसीके विनाशके चरदार विज्ञानार्थ बासक-नाशिकार्यों पर अज्ञान देते हैं। किन्तु सुखसमाप्ति आति पर बुद्ध यात्रा करने समय अितने दिन तक आशोचन उपायादि

निर्धारित नहीं होता, उतने दिन कोई पुत्रपुत्री शपथमें घर जाने नहीं पाता। दिवारात्रि मन्दाशपथमें रहना और नहीं पालनोत्तन प्रथनादि करना पड़ता है। अिध स्थानमें प्राक्तमच करना ठहराते, दिनके समय सब बर्तों पड़क दो ही तीन तीन पादमो अाङ्गियोंमें श्लिप जाति है। फिर जैसे ही निवृत्ति सुखसमाप्ति निवृत्ति वैसेही शपथ टूट मारने बगते है। प्रति दिन मन्दाशाल अ अ कार्यका विवरण बता पामाद प्रसाद करते हैं। सुखसमाप्ति भी ऐसे ही आफिरस्थानमें सुख बासक नाशिकार्युत जाति है।

यह बर्तोंमें शिष्ट, श्व प्रश्रुतिको पीछ पाटोको शरीर बनाते हैं। शरीरके शीघ्रकटाह (तथे) पर शिष्ट श्वाया करते हैं। यह श्रद्धाश्रुति परशुका मोक्ष जाति हैं। आफिर एक ही शरारमें गसा श्वाट प्रश्रुत्वा करते हैं। यदि दो श्वाट मारनेका प्रयोजन आता, तो वह श्वाट शपथिक्त समझ छोड़ दिया जाता है। फिर आफिर शरारिजातिके मध्य पारिया श्चोको बोका श्चि दे देते हैं।

यह शंश्रुते शरार बनाते हैं। शंश्रुते श्वर्तिसिद्धि मयका श्वर्त दो प्रकार होता है। बासक श्वर्तमें अज्ञान समय मध्य पीने नहीं पाते। सुगम-शस्वाट शरारने शिष्टा है कि आफिर शपथी गरीमें मध्यपूर्ण "किष्ट" नामक शमशुको श्रुत्थी श्वाट रहति है। अर्थात् यह मोक्षका किष्ट अज्ञानके श्वाट मध्य पाल करते हैं।

इनका प्राश्रुत्वा न मिलनेसे आफिरस्थानमें सुखने को कोई शिष्ट श्वाटन कर सकता है।

आफिरस्थान देखनेमें पतिश्रुत्वा देय है। यह निश्चिष्ट श्वाटकारि मश्रुतिकार्य श्वाट शपथन समझ पड़ता है। प्राक्त भागमें मश्रुत्वा है। आफिरस्थान प्रशासनः तीन श्वाटकारिमें विभक्त है। इन्हीं तीन श्वाटकारिमें बर्तोंको तीन प्रशासन आतियोंका नाम श्वरक हुवा है—शमनक, श्वेगस और श्वाटनक। इनमें श्वेगस श्वर्तिया पराक्रान्त और श्वाटकी श्वाटका मोक्ष श्वर्तिया श्वरक है। आफिर या श्वाटश्रुत्वा इनका आतिय भास नहीं। पाम्बर्तों सुखसमाप्ति श्वर्तिय श्वाट नामके श्वर्तिय करति हैं। सुखसमाप्ति श्वर्तिय

विश्वास न करनेसे ही यह काफिर कहते हैं। फिर अधिक संख्यावाले बैगनाका कृष्ण वर्ण छागधर्मका परिच्छेद पहनने से ही सियाहपोग नाम है। इसीसे सबके सब सियाहपोग नामसे पुकारे जाते हैं। रामगल वा बासगल काले धमडेका परिच्छेद नहीं पहनते। वह उसके वटसे सूतके कपड़ेकी पोशाक बनाते हैं। उक्त तीनों जातियोंकी भाषा खतम्ब है।

यह भूत प्रेतमें विश्वास रखते हैं। काफिरोंके मतानुसार जो कुछ दुःख कट मिलता, वह सब भूत प्रेतादिके कारण ही पडता है। इनके पानका मद्य सद्यप्रसूत-प्रणालीके नियमानुसार नहीं बनता। वह खानिस अंगूरका ताजा रस होता है।

परस्पर युद्ध विप्रहाटिके पीछे पराजित लोगोंकी स्त्रियां बन्दी बन टासीकी भांति विक्रती हैं। स्त्रियोंमें लज्जा, शीलता वा धर्मभाव नहीं देखते। इनके समाजमें उसे विशेष दोष कब गिनते हैं। कारण पूर्व ही लिख चुके कि ऐसे दोषमें उभय पक्ष केसी सामान्य शान्ति रखते हैं।

यह अंगरेज अफगान या तुर्क किसीके अधीन नहीं सम्पूर्ण स्वाधीन है। सिन्धु और अकमस नदीके मध्य समस्त गिरिधर्ममें इनका अक्षुण्ण प्रताप है। हिमालय पर्वतके श्रेय प्राप्तसे अकसस नदीके तीरवर्ती वदख़शान पार्वत्य प्रदेश पर्यन्त और हिन्दूकुश पर्वत-मालामें यह अधिकार रखते हैं। कादुन नदीके उत्पत्ति स्थलपर पहनेवाले सक्रम गिरिधर्म भी इन्हींके अधीन हैं।

यह देखनेमें सुपुरुष होते भी दीर्घच्छन्द नहीं। इनमें दूधरी जो सुद्र सुद्र जाति हैं, उनमें दारानरी जाति अपनेकी तानक मतावलम्बी और अति प्राचीन वताती है। सम्पाक (समघान) नामक स्थानकी भाषाके साथ इनकी भाषा और अफगानोंके आकारके साथ इनके आकारका सीसादृश्य है।

सेधया (शिवा ?) नामक स्थानके वामपार्श्वमें जुगुनी नामक एक जाति है। इसके लोग अपेक्षाकृत संख्यामें अधिक हैं। विशुद्ध काफिर इन्हें "निम्बा" पर्याय् वर्णसंकर कहते हैं। क्योंकि यह काफिर

और अफगान उभय जातिकी कन्याका पाण्डिपङ्क और काफिरस्थानमें मिर्भय प्रवेश करते हैं। यह प्रधानतः पथप्रदर्शकका काम बनाते हैं। कुन्द पर्वतमें ही इनका अधिक वास है। जुगुनी अफगानोंको अपेक्षा सुद्रकाय होते हैं। इनकी आकृति भी अपेक्षाकृत कोमलतापूर्ण रहती है। यह समुद्रमान धर्मावलम्बी हैं। किन्तु इनमें स्त्रियाँके अवरोधकी प्रथा नहीं।

इस प्रदेशकी अरत उपत्यका ७३०० फीट दीर्घ है। उच्चलिक-इथानिक नामक गिरिपङ्कटा दृश्य परम रमणीय है। कुन्द पर्वतके शिखरपर एक सुद्र ऊट है। प्रबाटानुसार इमी छूटके तीर नूहकी नौकाका भग्नावशेष प्रस्तरीभूत हो गया था, फिर निम्न उपत्यकामें उसीसे नूहके पिताका समाधिस्थान बना है।

काफिसा (५० पु०) यात्रियोंका समूह, सुमाफिरोंका भ्रष्ट। काफिसाके भोग तीर्थ या व्यापार करने मिल-सुलके निकलते हैं।

काफी (५० वि०) १ पर्याप्त, पूरा, कम न ज्यादा, गपा हवा। (पु०) २ रागविशेष। इनमें कोमल गन्धार सगता है। काफीके कई भेद हैं,—काफी कान्डा, काफी टोही, काफी रोनी इत्यादि। यह राग प्रायः लन्द जन्द गाया जाता है।

काफी—(हिं० स्त्री०) कड़वा, बुन।

काफी—(अं० = Coffee) कड़वा, एक प्रकारका रक्तवर्ण सुद्र फल। इसे तोड़, भून कर और चुकनी बना चायकी भांति दूधके साथ बहुतसे भोग प्रत्यह पान करते हैं। इसके भिन्न भिन्न नाम यह हैं,—

हिन्दी	बुन, कड़वा, काफी।
बंगला	कापि, काफि, कावा।
गुजरा	बुन्द, कापी।
बन्देया	कष, बुन, काफी।
दक्षिणी	हुन्द, तचेम-केवे।
महाराष्ट्री	कन, बन्द।
तामिल	कापि कीटाइ।
तैलङ्गी	कापि भित्तुतु।
कन्नटी	बोन्द बोन।
परवी	बुन, कड़वा।

पारसी	बहवा ।
ब्राह्मो	कापडत ।
बिड़को	कोवि-पत्ता ।
पंमरेजी	काफी (Coffee)
परासीसी	काफ़ि (Cafe)
कर्मनी	कफ़ो (Kaffee)
बेजानिक	कफिया एराबिका (Coffee Arabica)

इसका पीड़ ११ से २० फीट तक लंबा होता है। इसमें बहुत संप्यक शाखा प्रमाणा रहती है बिन्दु बह पत्रिक नहीं बढ़ती। इसमें पीड़को झाड़ सजना पीड़को शाखकी मांति कुछ म्यत बर्ण होती है। नारङ्गीके पाकारका सज्द पत्र निकलता है। फूल सुट्ट बकुच फलकी मांति पाते हैं और पत्रपर कास हो जाति हैं। प्रति पत्रमें केवल दो बीज होते हैं। बीज निखास कर फल सेवे जाति हैं। फिर सुखे फलोंको मूल कर और पुकनो बना सेवेसे पीनिका बहवा प्रसुत होता है।

पनीकफि पनुमानमें इसके परबो "बहवा" नामसे प्रथमतः मध्य समझा जाता था। बिन्दु पात्रकल उससे काफ़ीका बोध होता है। फिर किसीके पनु मानसे यह मन्ड पत्रकोनिया (पत्रोका)के पन्मयंत काफ़ा प्रदेशमें नामसे विमङ्ककर बना है। इसके दिन्दो नाम "पुन" से उच तथा फल और "बहवा" नामसे काफ़ीकी बुकनीका बोध जाता है।

इस फलका पाकिनिवास पपरीकासे पन्मगत पत्रकोनिया, सुदान, गिने और मोआम्बिक प्रदेशका उपज्जुल है। उच्च सचन स्थलेमें यह उच्च पपने पाप बर्णमें उपजता है। परबदेशमें यह इस प्रकार नहीं होता; फिर मो बह नहीं सकते कि परबसे पुर्गम मध्यप्रदेशमें यह है या नहीं।

काफ़ीके पनेक खेपे विभाग हैं। जन्ने भारत पर्यन्त ७ प्रकारकी काफ़ी मिलती है।

१ परबो काफ़ी। (Coffee Arabica) भारतके गाना स्थानमें इस काफ़ीको यथैष्ट ज्ञपि होती है।

२ बङ्गालकी काफ़ी। (Coffee Bengalensis) कुमायूँके मिथमी तक, पुञ्जप्रदेश, बङ्गाल, पाशा

चीङ्ग बहपाम और तिनारारिम प्रदेशमें यह उपजती है। इसका फल ईषत् पायताकार होता है। बहपाममें इसे "हरोपा" फल कहते हैं।

३ सुगन्धि काफ़ी। (Coffee Fragrans) यह चीङ्ग और तिनारारिम प्रदेशमें मिलती है। फल बङ्ग दोनो जातिकी मांति होता है।

४ पाशासी काफ़ी। (Coffee Jenkinsii) पाशामके केरिया परबतमें उपजती है। फल ईषत् द्विभाकार जगता है।

५ कफिया काफ़ी। (Coffee Khasiana) कफिया और जयन्तो पहाड़ो पर होती है। इसके फल शिवन बोपाई इच मोटे पडते हैं। बीज टेडे केरकी मांति होतें हैं।

६ त्रिवाङ्गुकी काफ़ी (Coffee Travancorensis) त्रिवाङ्गुमें होती है। फल जम्माईमें छोटा और चौड़ाईमें बड़ा रहता है।

७ मलवारी काफ़ी। (Coffee Wightiana) दार्जिलाकके पचिमाममें उपजती है। इस फलका पाकार त्रिवाङ्गुके फलकी मांति होता, बिन्दु एक तरफ बहुत दबका रहता है।

प्रथम खेपेको खोज कर दूसरी सचल खेपियोंकी काफ़ी खम उत्पन्न होती है। दार्जिलाकके शोग हो पत्रिक काफ़ी होते हैं और उच्च हो इसकी छिती पत्रिक की जाती है। दार्जिलाकमें पात्रकल रहती काफ़ी उपजती है कि बिदेशमें मो जाकर विकती है।

१३ उत्तर और १५ दक्षिण पर्यायके बीचमें काफ़ी मनी मांति उपजती है। फिर १६ उत्तर और १० दक्षिण पर्यायके मध्यम प्रदेशमें इसकी उत्पत्ति साधारण है। अपासकी छिती केसी जमीनमें भी जाती है केसी ही लमीन इसकी छितीके जन्ने मो पात्रकल होती है। इसको भाङ्गी देशमें प्रति मनीकर पाती है। इसीसे पनेक शोग इसे उद्यानकी मोमाके छिपि मगाते हैं। जहां पारिजोटेके तापमानमें ६०° से ८०° पर्यन्त उष्णता मिलती है, वहाँ यह उपजती है। मासमें एकवार इति होना और पर्यन्त १३ इचसे पत्रिक बह न पङ्कन, इचकी उन्नत उत्पत्ति

सहायक है। काफीकी छपिमें बडा यत्र करना पड़ता है। अतिशय मेघ चटना वा अतिवेगसे वायु चनना, इसके लिए अशुभ है। जोरसे हवा चलने पर काफीकी फूल भङ जाते हैं और फल नहीं लगते, सुतरा कृषक प्रायः बाधे शस्यकी चति उठाता है। अत्यन्त शीघ्र होनेसे हृषके लिये छाया आवश्यक है। समुद्रके उपकूलमें काफी अच्छी नहीं होती। अफरीकाके अन्तर्गत अरबीनियाके साथ मससूत्रपातसे भारतमें पडनेवाले स्थानोंमें यह भली भांति उपजती है। विशेषतः नौलगरि उपत्यकामें काफीकी उत्पत्ति अच्छी है।

अरबीनियामें इसके फलको "बुन" कहते हैं। प्राचीनकालमें मिसर और सिरीयामें यह नाम प्रचलित था। उस समय सिरीयाके रहनेवाले इस वीजको केवे (Cave) कहते थे और पका कर खाते थे। अरबी ग्रन्थादिको अरबीनियाके अनुसार शेष गङ्गाबुद्दीन अरबीनामक किसी व्यक्तिने अफरीकाके उपकूलमें काफीका व्यापार देख कर सर्व प्रथम अदनबन्दरमें एक दुकान खोली थी। १४७० ई०को वह मर गये। सुतरां १५वीं शताब्दीके मध्यभागमें काफी अरबमें पहिले आई। १५७१ ई०को यह यमन, मका, कायरो, दामास्कस, अलेपो और कुनस्तुनियामें फैली थी। १५५४ ई०को कुनस्तुनियामें सर्वप्रथम काफीका एक पानागार स्थापित हुआ। १५७१ ई०को अलेपो शहरमें रनडल्फ नामक किसी युरोपीयनने इसका प्रथम परिचय पाया। फिर कह नहीं सकते कि भारतमें काफी कैसे आये। अनेकोंके कथनानुसार बाबा बूदन नामक एक सुसज्जमान सञ्चासी मङ्गलेश्वर लौटते समय ७ वीज लेकर महिसुर पहुंचे थे। दक्षिण भारतमें उक्त मतपर बडा विश्वास करते हैं। इसीसे उसका समस्त अमूलक होना ध्यानमें नहीं आता। १५७६ से १५८० ई० तक लिनसोटेन (Jan Huygen van Linschoten) नामक एक ओलन्डाल इस देशमें घूमनेकी पाये थे। वह अपने अन्वेषणप्रस्तावमें मलबार उपकूलके समस्त उत्पन्न वस्तुओंकी वर्णना कर गये हैं। किन्तु उसमें काफीका नाम नहीं मिलता। उनमें समसामयिक लेखकोंके

पुस्तकमें मिसरियोंके बुन फलका साथ खानेकी बात देखते हैं। इससे अनुमान होता है कि भारतवर्षमें आते समय लिनसोटेनने काफीकी बात नहीं सुनी। डाक्टर फोयालिचने विलायतमें "हाउस-अव कामन्स"के समस्त साध्य देते समय कहा था — "कलकत्तेके कम्पनी वागमें जो काफी होती है, उसको छोड़ हमने दूसरी कोई काफी नहीं पी।" उसके पीछे मिलनेवाला विवरण भी १८वीं शताब्दीका विवरण है। सिंघलमें पोर्तगोजांके दौरात्तरसे पहले अरबोंने इसे प्रथम प्रचार किया था।

पूर्व भारतीय द्वीपश्रेणोंमें १६८० ई० के अन्तमें गवर्नर वान हुरनने (Van Hoorne) अरब बगिचोंसे बीज संग्रह कर यवद्वीपके वटेविया नगरमें लगाये थे। उनसे जो पेड उगे उनका एक पौदा इङ्गलैण्ड पहुंचाया गया। फिर इङ्गलैण्डके वृक्षोंका एक पौदा १७२८ ई०को सुरिनाम नामक स्थानमें आया था। इसके दश वर्ष पीछे अमस्टरडमके काफीवागसे एक पौदा १४वें जुईको उपद्रौकन दिया गया, फिर उसका पौदा पश्चिम भारतीय द्वीपसुञ्जमें रोपित हुआ। इससे नूतन महाद्वीपमें काफीकी खेती फैल पडी। अमेरिका और यूरोपकी काफी-कृषिका मूल यवद्वीप है। किन्तु आजकाल अमेरिकाको भांति पृथिवीके दूसरे स्थानमें कहीं काफी नहीं उपजती। अकेले ब्रेजिलमें ही पांच करोड़ तीन लाख पौदोंसे यत्रके साथ फल संग्रह किया जाता है। फिर कोष्टारिका, गोयाटिमाना, वेनसुइला, गोयाना, पेरू, बनिविया, जामेका, किउवा, पोर्टारिका, अन्यान्य पश्चिम भारतीय द्वीप, अट्रेलियाके मध्य किन्सलैण्ड, पूर्वभारतीय द्वीपवलीके मध्य सुमात्रा, बोरनियो, मनयउपहोप, श्वासदेग, सिंगापुर प्रभृति प्रणाली मध्यगत द्वीपविभाग और फिजी द्वीपमें इसको खेती होती है। ब्रेजिल और यवद्वीपकी भांति आबाद जमीन् दूसरी जगह नहीं। उसके पीछे भारतवर्ष और सिंघलद्वीपकी आबाद जमीन् उल्लेख योग्य है।

अरब देशमें इस प्रथाके फैलनेसे सुसज्जमाग धर्म-यात्रक काफीपानके विरुद्ध उठे थे। कारण मसजिद और

दरमाइकी भविष्य खाफो पानागारमें कोर्गोको पाबलि
 अणुच बड़ गई थी। पानासलि चटानिके सिधे इस
 पर बहुत मन्त्र स्थापित हुआ। येदहटेगमें चावकी
 पहली दुकान खुलनेसे पहिले (१९३० ई०) खाफो
 पानागार बना या (१९३२ ई०)। डि, एडवाइस
 नामक एक तुर्कजानका भंगरल बलिबु खाफो पोनिमें
 प्रतना भम्पय हो गया कि देय जाति समय उधे
 व्याफोया रासो नामक एक घोड मोहर प्रत्यक्ष
 खाफो बना देनेके सिधे अपने साब रखना पड़ा।
 उससे बन्धुपाकी भी क्रमशः खाफोपानका भम्पास
 पड़ गया। भवमिपमें बन्धुबान्धवोंका निम्न उपग्रह
 न लड़ सकनेके कारण उसने रोसीको करनडिलवासी
 वैष्णुमाइकेबकी पाको नामक ज्ञानमें प्रकाश रूपसे
 खाफोका पानागार खुलवा दिया। क्रमशः व्यवहार
 बढ़नेसे पानागारोंको संख्या भी बढ़ी। २३ फाल्गुन
 (१९०३ ई०) पानागारोंमें कोर्गोको मीड़ देब
 इसका व्यवहार बटानिको शाखासे निधिवर किया
 था। प्रांशमें १९४० ई०को खाफोका व्यवहार बसा
 और १९९८ ई०को पारिष जमरमें प्रथम पानागार
 खुला। उससे बाद हुरोपमें सर्वत्र इसका व्यवहार बहुत
 बढ़ा गया था। भवमिपमें १८४० ई०को चावका
 व्यवसाय और व्यवहार पब्लिकतर बड़ जानेसे खाफोका
 प्पादर चढा। ब्रह्मदेगमें खाफोको खेती होती है,
 पर बीजका प्रभाव है। दिन दिन इससे पोनिकी चाव
 बढ़ रही है।

भारतसे दक्षिणाममें खाफोकी खेती अब होती
 है। १८८३। ८४। ८५ ई०को लोन बर्ष दक्षिणाममें
 प्रायः १८५१०० एकर भूमिपर खाफो बोई गई थी।
 इसमें मजिदुरकी ८२१०० एकर भूमिमें ७११००००
 पाउण्ड, मन्दाबकी ३३१०० एकर भूमिमें १११६००००
 पाउण्ड मिहाइड़की ४८०० एकर भूमिमें ८२०००००
 पाउण्ड और कोचीनकी ३२०० एकर भूमिमें ८१०००००
 पाउण्ड खाफो उत्पन्न हुई।

इसके व्यवस्थित बाबाबुदनको बात बिबु बुधे है—
 भारतवर्षमें सर्वे प्रथम खाफो बोई पाई थी। मजिदुरमें
 प्रवाद है कि दो यतान्त्री हुवी मन्नाये खोटसि समक

बड़ कई एक पल और ७ बीज खावे थे। मजिदुरमें
 बड़ बिबु पवत गिण्डरपर रहते थे, पाब बल खोग
 उनसे नामागुवार उसको "बाबा बुदनगिरि" कहते हैं।
 वह गिण्डर पर उठाने अपने हुडोरको बगलमें उठाने
 ७ वींताधिपच उपजाये थे। क्रमशः उस पर्यंतमें खाफोके
 'धनेक इब हो गये। फिर ९०००० बय बीतने पर
 यूरोपी मो निबडवती कई खानोंमें इसकी खेती बढ़ी।
 शिवकी पाब प्रायः ४० बर्षसे पंगरेजोंको इस और इष्टि
 पड़नेसे खाफोकी खेती मत्तो मांति की जाती है।
 सि० खानन नामक किसी पंगरेजने सर्वप्रथम बाबा
 बुदनगिरिके दक्षिण एक लंबो ज़मोन् पर खाफो
 बोयी थी।

पंगरेजाबिज्ञत देयीके मध्य भारतवर्षमें हो सर्व
 पिबा उत्तम सुगन्धि खाफो बहुपरिमावसे उत्पन्न होती
 है। खाफोको पत्तो उपबुद्ध नियमसे बना देनेपर चावको
 मांति काममें खाफो या चावमें मिलायी जा सकता है।
 सुभाजामें पाइज़ नामक ज्ञानके योग खाफोकी पत्ती
 चावकी मांति बना प्रतिदिन पान करती है। चावकी
 मांति इसमें भी खेगहर शक्तिनामक गुण होता है।

खाफोके फलके जिबकेमें एक प्रकारका तेल रहता
 है। बिन्दु इस तेलके निष्काशनकी प्रथाको पत्तो पत्र
 कर्मित नहीं हुई।

पमेरिकामें खाफोका पत्र इन्तेजक पोर्बलकारक
 पोषकको मांति काममें पाता है। बिन्दु रहस्यकेमें
 इसका बखन नहीं। सुपापार थरीरमें जेसा कार्व
 उत्पादन करता, यह भी जेसा ही प्रभाव रखता है।
 खाफो चावकी भविष्य धारक है। बड़ कोठबड़ नहीं
 करते। फिर भी पवित्र परिभाषमें खाफो पोनिसे
 क्या बम इतरता है।

डाइकिड ज्वरमें फरासी नीविनाके मध्य रोगीकी दिा
 ऐः चण्डे पोखि दो चक्क खाफो पिबा बीच बीचमें
 छारिट या बराखी मय सेवन कराते हैं। इससे मयिड
 उपचार होता है। खाफो पोनिसे फरासीखिवोंमें
 मूत्रजलोके चक्करी रोमका पातिगण्य घट गया है।
 तुर्कजानमें खाफो पोनिसे बातकी पोड़ा नहीं रहीं
 है। तुर्क प्रबुद्ध खाफो पोते हैं। यही उनका

प्रियतम पानीय है। सविराम ज्वरमें कुनैनकी भक्ति कच्ची काफी खिन्नाते हैं। किन्तु इससे उतना फल नहीं होता। मुनी काफीसे गलित जीवशरीर वा हृत्पादिका दुर्गन्ध दूर हो जाता और दूषित वायुकी संक्रामकताका दोष नहीं आता है। मन्त्राज और गञ्जामके अस्पतालमें प्रत्यह काफीकी बुकनी जला वायुका दूषित अंश नष्ट करते हैं। अरवाकिकथनानुसार काफीमें कामिच्छानिवारक गुण है। घरके आगन या खुले मैदानमें काफी जलानेसे हवा साफ होती है। उक्त मत अनेक विद्वत् चिकित्सकोंका अनुमोदित है। इससे अफीमका विष भी नष्ट होता है।

लाइबेरियाकी काफी (Liberian Coffee) अफ्रीकाके पश्चिम उपकूल पर लाइबेरिया, अङ्गोला, गोलङ्गो, बलटो प्रभृति स्थानोंमें उत्पन्न होती है। इसका वृक्ष अरबीके काफी वृक्षसे दृढ़ और फल तथा पत्र दीर्घ रहता है। जिस समय काफी वृक्षका सिंहराममें अनुसन्धान हुआ, उस समय इस अफ्रीकी काफीका वृक्षान्त युरोपीयोंने प्रथम जाना। इस अफ्रीकी काफीमें शायद अधिक कोड़ा नहीं लगता।

लिखकर काफीकी खेतीका उपाय बताना कठिन है। कारण अपनी भाँखों इसकी खेती या बाग न देखनेसे कैसे समझ सकते हैं। अरबी काफीके वृक्षमें नानारूप पीडा उठ खड़ी होती है। भावहवा और खेती वारीके दोषसे ही अधिकांश पीडा उपजती है। खेतीके दोषमें कंकड़से पीडा टूट जाता है। पत्तीमें पीली धूल निकल आती है। फिर पत्ती काही पड़ और सिक्कड़ जाती है। काफीमें कीड़ा और मक्खी लगनेका डर रहता है। इसको छोड़ टिड्डी, चूहा, गिलहरी, गौदड़ वगैरह भी इसे बहुत विगाड़ते हैं। शृगालोंके अत्याचारसे जो फल गिर जाते वृक्ष संग्रह किये जानेपर "शृगाल काफी" (गौदड़ काफी) कहते हैं।

काफी—१ मिर्जा अला उद्-दौलाका उपनाम। बादशाह अकबरके समय इनकी संरक्षि रही। २ सुरादावादके एक सुसलमान कवि। इनका यथोचित नाम किफायत

अली था। इन्होंने 'वहार खुल्द' नामक ग्रन्थ लिखा। काफूर (अ० पु०) कर्पूर, कपूर। कर्पूर शब्द। काफूर मलिक—दिल्लीवाले बादशाह अला उद्-दीन खिलजीके एक प्रिय कञ्चुकी। इन्हें बादशाहने अपना वजीर बनाया था। बादशाहके मरने पर इन्होंने एक व्यक्ति ग्वालियर, उनके पुत्र बिदज़िर खान् और शादी खान्की भाँखें निकालने भेजा था। दारुप रूपसे यह कर्म सम्पन्न किया गया। फिर काफूर मलिकने बादशाहके कनिष्ठ पुत्र शहाबुद्-दीनको सिंहासन पर बैठाया और स्वयं राज्यका कार्य चलाया था। किन्तु १३१७ ई०के जनवरी मास सन्नाटके मरने पर इनका वध हुआ। अलाउद्-दीनके तौसरे लडके पीछे सिंहासन पर बैठ गये।

काफूरी (अ० वि०) १ कर्पूरजात, कपूरसे बना हुआ। २ कर्पूरवर्ण विशिष्ट, कपूरका रङ्ग रखनेवाला। (पु०) ३ वर्णविशेष, कपूरी रङ्ग। इसमें हरित् भाषा रहती है (कपूरके दोषको 'काफूरी शमा' कहते हैं।

काव (अ० स्त्री०) पात्र विशेष, शीना मट्टीकी बड़ी रक्वावी।

काव—पारस्य उपसागरके किनारे रहनेवाली एक अरब जाति। उद्योगमें सास्तरसे रामहरमुज और पूर्वमें वेबेहनसे हिन्दियन तक यह जाति बसती है। इसकी राजधानी सुहमेरा है। काव लोगोंकी वासभूमिके मध्य बहु शाखाविशिष्ट ताव नदी बहती है। अरबी भौगोलिक इस नदीको दोरक कहते हैं। ई० के १८वे शताब्द कावोंने कई अंगरेजी जहाज आक्रमण किये थे। उसी सूत्रमें इनसे युद्ध चल पडा। फिर अन्नौरजा पाशाने सुहमेरा नगर अधिकार किया। १८५७ ई०से पारस्य युद्धके बाद उक्त नगर भारत गवरनमेण्टके अधीन हुआ।

कावर (सं० पु०) कुत्सितो बन्धुः कोः कादेशः शृषोदरादित्वात् सिद्धम्। कुत्सित बन्धु, बुरा फन्दा। कावर (हि० वि०) १ कर्पूर, कवरा। (पु०) भूमि-विशेष, दोमट, रेत मिली हुई जमीन्। २ पक्षिविशेष, एक जङ्गली मैना।

काबला (ई० पु०) नीरक, कबाबका रखा या कबीर। यह शब्द अंगरेजीके 'कैबिल' (Cable)का अपभ्रंश है। ठेकी कसे जानिवाले बड़े पेश या बालटूको भी 'काबला' कहते हैं।

काबा—१ एक जाति। इस जातिके लोग भारतके पश्चिम सुहरातके उत्तररज्ज्व कपसागरके कपकूट पर महााराष्ट्र राज्यमें रहते हैं। पात्र बस इनकी बात पश्चिम चल नहीं पड़ती।

२ सुसप्तमानाका एक परिच्छेद। यह अपलनकी भांति रहता, शिवस कथकल पर अर्धाय बहता है। इसके भीतर खुला कपड़ा पहनते हैं। उस कपड़े पर कथकलमें जूरीका या कोरे घुंघरा काम रहता है। काबिके कटे अंगुष्ठे यह देख पड़ता है। काबिका कपड़ा पचसी बहुत था, किन्तु अब घट गया है।

३ समपतुष्कोष पाञ्चति, बराबर चौकोर गड्ड।

४ सुसप्तमानाका एक पश्चिम गड्ड। यह परब देगके मन्ना नगरमें प्रायः अनुष्कोष एक मसन है। इसे सुसप्तमान एक पश्चिम तोर्के मानते हैं। यह उत्तर पश्चिमके दक्षिण पूर्व तक २३ हाथ लम्बा, २३ हाथ चौड़ा और २० हाथ ऊँचा है। पूर्व दिक्की इसका द्वार है। द्वारके निकट दीप्यासन पर ज्ञाप्य बर्बका एक प्रस्तर रखा है। यामो मन्ना पट्टु बते शो हस्तसुख प्रसासन बाखानाहि कर भलअिदमें जाती है। पचसी ज्ञाप्यबर्बका प्रस्तर बूम पीछे काबाकी चारो पोर प्रदक्षिण लवाना पड़ता है। काबाको दक्षिण रख तीन बार बरह पचद पौर बार बार बीरे बीरे प्रदक्षिण कर काबाको नाम पौर रहते पतिप्रमप शिव करती है। काबाके निकट एक प्रस्तर पर दवाहीमका पदक्षिण है। प्रदक्षिणके पीछे यामो इसो प्रस्तरके निकट का मन्ना पड़ती है। उत्तरके पीछे ज्ञाप्य प्रस्तरको फिर बूम बखी बाते है। परबो परिवारबर्गके मन्ना सुसप्तमानको उत्पन्न कोनिछे ४० दिन पीछे काबिके ले जानिकी प्रथा है। यथा काबर उत्तर पर मन्नादि पड़े जाते है। इससे पीछे कपूकेको घर जाने पर लापित धाबर गच्छेदेयमें सुदेवे कपूकेकोचरि सुयके कोच पर्यन्त जमान्तराकमें तीन दाग बना देता है।

पति प्राचीन काबके काबा परबोका तीर्थदान मिला जाता है। कथनानुसार धाईमके समय एक प्रस्तरमूर्ति स्मरंछि गिरी को। तत्रमय १६० मूर्ति प्रतिष्ठित हुईं। सुबकदके अर्मप्रचारके इसका भीरव कितना ही बिगड़ गया। भारतमें खलोफा खमरके अंगीय करनाउबके लबावोंमें इस काबिके पतनेके सिमि एक सर्वतोपान प्रदान दिया था। १६२७ई०को काबेका गोरव फिर प्रतिष्ठित हुआ।

काबाहज—एक जाति। पारखके पूर्व और पश्चिम छुटे लोग रहते हैं। कबाहज ठनोंके पन्तगत हैं।

काबावयबर्बा (सं० खो०) कबाव चीनो।

काबावखेज—एक जाति। काखोर प्रान्तमें बखूके निकट बचीरो लोग रहते हैं। बड़े मन्नारयो पौर बचीरियोमें काबाव खेज जाते हैं। इनको तीन खेचो है,—मियामो, शिपाओ पौर विपाओ। इनमें बजारे बखवान् योहा पाये जात हैं। १८२० पौर १८२३ई०को इन्में भारतके प्रान्तभागमें अर्मनेकीका पश्चिमा रहते भी ३० बार कूट मार को यो। अर्म देवेनि इन्के कई बार मारा पौर बिरा है।

काबिक (प० बि०) पश्चिमादास, कबका रखने बाबा। काबिल (प० बि०) १ योय, लायक। २ बिदान्, समन्दाह।

काबिल खान् (कबलाई खपान) एक विप्लवत सुपस बन्नाट। यह बज्जोन् खान्के प्रवीर पौर तातार राज मज्जुके भ्वाता है। १२३८ई०को २० माहकल प्रात हुआ। यथा चीन राज्यमें सुदेन अंगुष्ठे प्रतिष्ठता है। १२६०ई०को यह अर्मद्वय एक बल साथ ले चीन राज्यमें हुआ। फिर इन्में तातारोंको हरा उत्तर चीनपर पश्चिमा किया था। १२७३ई०को इन्में पट्ट अंग जिम्बुन कर दक्षिण चीन कोता था। इसी समय यह उत्तरमें उत्तर महासागरके दक्षिणमें मन्ना प्रचाओ पौर पूर्वमें कोरियाके पश्चिममें पश्चिमा माहजर पर्यन्त खसुदय भूखण्डके एकाजिपति है। पूनरे सुसप्त मन्नाटोंकी भांति यह अन्धाचारी पौर मन्नापौडक न है। सुदासमके शुबरी चीनवासी नाम इनको अर्मवा करती है। १२८३ई०को इन्में १६कोक जोड़ दिया।

काविलीयत (अ० स्त्री०) १ योग्यता, लियाकत, पईच। २ विद्वत्ता, समझदारी।

काविस (हिं० पु०) कपिशवर्ण, एक रंग। इसमें मट्टीके कच्चे बरतन रङ्ग कर आवा लगानेसे लाल निकल आते और चमकीले दिखते हैं। काविस बनानेमें सोंठ, मट्टी, रेश, आमकी छाल और बबून तथा बांसकी पत्ती घोल कर डालते हैं। २ नृत्तिकाविशेष, एक मिट्टी। यह रक्तवर्ण होता है। जन मिलानेसे इसमें लस आ जाती है।

कावी (हिं० स्त्री०) मङ्गयुद्धका एक हस्तलाघव, कुशीका कोई पेंच। इसमें एक पहलवान दूसरेके पीछे जा एक हाथसे उसके जांघियेका पिछोटा पकड़ लेता और दूसरे हाथसे पैर खींच कर पटक देता है।

कावुक (फा० स्त्री०) बधूतरीका दरवा।

काबुल—१ अफगानस्थानका एक जिला। इसके पश्चिम कोहदावा, उत्तर हिन्दूकुश पर्वत, उत्तर पूर्व पञ्चसरा नदी, पूर्व सुलेमान पर्वतश्रेणी, दक्षिण सफेदकोह तथा गजनी और पश्चिम हजारा प्रदेश है।

काबुलका अधिकांशस्थान पर्वतसे परिपूर्ण है। इसकी अनेक उपत्यका उर्वरा हैं। इन उपत्यकाओंमें बड़े बड़े वृक्ष होते हैं। उनके कडी और वरगी वनते हैं। कोहस्थान और कुरममें अच्छा भच्छा काष्ठ उपजता है। काबुलके नानास्थानोंमें भेबेके बाग हैं। कोहदामन और हस्तालीफ उपत्यकामें बाग बहुत हैं। बाग देखनेमें अति मनोरम हैं। न्गार और घोरबन्द नामक प्रदेशमें पशुचारणका स्थान है। यहां पशुादिका आहार भी अधिक मिलता है। यहां गेहूं और यम यथेष्ट उत्पन्न होता है। किन्तु उसे केवल दरिद्र लोग व्यवहार करते हैं। सब सम्पन्न लोग मांस अधिक खाते हैं। गजनीसे नानाविध शस्य यहा पाता है। उत्तर बदर्खुशान्, जलालाबाद, लामघन और कुनारसे चायखकी आमदनी होती है। इस जिलेमें स्थान स्थान पर शस्यादि अधिक उपजता है। रामयान और हजारेसे घी पाता है। यहां द्रव्यादिका मरुध्य नहीं। शीतके समय लोग अधिक शीतमें रहते हैं। प्रस्तर और इटकनिर्मित

घर भी हैं। वर्राकी छत भारतवर्षकी भांति समतल होती है। गो और भेब ही यहां धन गिना जाता है। उत्तरमें तुर्कस्थान और दक्षिणमें भारतवर्षके साथ वाणिज्य होता है। तुर्कस्थानके पशुका ही वाणिज्य अधिक चमत्ता है। ग्राम छोटे बड़े नाना प्रकारके हैं। एक एक ग्राममें सौ-डेढ़ सौ घरोंकी बसती है। ग्रामके भीतर बीच बीच छोटे किले बने हैं। जल अनेक स्थानोंमें मिलता है। उपत्यकामें प्रायः बंजगाही चलती है। वहिर्वाणिज्यमें उड़, पशु और अश्वतर व्यवहृत होते हैं। तुर्कस्थानमें रुसियेनि शुक बड़ाया था, इस लिये वहांका वाणिज्य कुछ घट गया। पहले भारतसे कपडा और चाय भेजते थे। किन्तु यह काम भी बन्द हो गया। इससे उसके शुककी आमदनीमें घटी आई है।

काबुलके प्रादेशिक शासनकर्ताकी हाकिम कहते हैं। १८८२ ई०को अमीर शेर अली खानके भ्राता सरदार अहमद खान यहांकी हाकिम थे। काबुलका आय प्रायः अठारह लाख रुपया है। अफगानस्थानके अन्यान्य प्रदेशकी अपेक्षा काबुलकी सैन्य-संत्या कुछ अधिक है। यहांकी राहें भी खराब नहीं। इसका बहुत प्रमाण मिलता है कि पहले काबुलमें हिन्दू राजाओंका अधिकार था।

२ उक्त काबुल जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३८° ३' ७० एवं देशा० ६८° १८' पू० में काबुल और नगर नामक दो नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। काबुल गजनीसे ८८, खिलात ए गिलजाईसे २२५ और पेगावरसे १८५ मील दूर है। लोकसंख्या डेढ़ लाखसे कम है। यहां तापमानयन्त्र ३०° डिग्री उतरता और १०५° डिग्री चढ़ता है।

कोह ताकतशाह और कोह खोजासफर नामक दो गिरिश्रेणी मिलनेसे कोणकी भांति वननेवाला स्थान ही समतल है। उसी स्थानपर काबुल नगर अवस्थित है। यह चारोदिक् डेढ़ कोससे अधिक न निकलेगा। प्रधान दुर्ग वालाहिसार नगरके दक्षिण पूर्व भागमें खडा है। पहले काबुलकी चारो ओर इटकका प्राचीर था। किन्तु आजकल

ज्ञान ज्ञान पर ठलका भन्नाबसीय देख पड़ता है । नगरका अधिकांश ज्ञान-व्यवहारिकता परिपूर्ण है । बस्ती १००० घरके अधिक नहीं । नगरमें धानि जालेके लिये पड़के घात फाटक है । धानकस काङ्गोरी धोर बरदार नामक दो ही ईंटके फाटक देख पड़ते हैं । शीमीके घर अधिकांश बस्ती ईंट धोर महीके बने हैं । नगर कई मजहोमें विभक्त है । फिर मजहो कूचेमें बटे हैं । कूचे पाचोरने भेदित हैं । कुछ विपणनके समय प्राचीनीकी मरम्मत होती है । उस समय एक एक कूचा दुर्गची मालि देख पड़ता है । प्रथमके लिये कूचेमें सिर्फ एक फाटक रहता है । ऐसी धानरपाके व्यवहारका कूचाबन्दी बचते हैं । भीतरकी राहें धानक सड़की हैं । नगरमें धनेक बाजार हैं । उनमें दो प्रधान हैं । बह दोनों प्रायः समान्तररूपमें अवस्थित हैं । एकका नाम मोरनाजार धोर दूधरीका नाम काङ्गोरी बाजार है । नगरकी दक्षिण धोर मोरनाजारमें बजार-बाता नामक एक इमारत है । यह देखनेमें बहुत सुन्दर है । बाजारमें यह देखने लायक चीज है । इधरके कच्चे चित्र विचित्र बने हैं । पत्थी मरदान जालने यह इमारत बनवायी थी । नगरके बाहर बाहर धोर तेमूर माङ्गला समाधिज्ञान है । वह दोनों चीजें भी देखने लायक हैं । काठमाडौंका मासनकर्ता कुरुधमीर हैं । पड़के पाकादिभारमें ही राजभवन का । धानकस धमीर नगरके मध्य पथ ज्ञानमें रहते हैं । नगरमें एक विद्यालय है । विदेशी बच्चों का व्यवसायियोंके रहनेको यहां १३।११ सराव हैं । इन्हें कारवान-सराय कहते हैं । धानरक लोगीके महामोको खानाघार है । कच्चे हथाम कहते हैं । हथाममें धर्म पानी रहता है । धीमके समय धारो धोरके बच्चिक पाते हैं । प्रथमिक्रम अधिकांश दुकानोंके धारा सम्यक होता है । नगरमें ध्यान ज्ञान पर कूप हैं । किन्तु उनका बल कुछ भारी होता है । नदीका बल बहुत अच्छा है ।

नगरमें जानिके लिये कई पुल हैं । उनमें बिज्जीका पुल प्रधान है । कई नामी बौद्ध धर्म नामका पुल

बना है । पक्के पुल भी कई हैं । धनेक जाली पर नदीमें बल कम रहनेके धेतुको पावसकता नहीं पड़ती ।

तेमूर माङ्गले काठमाडौंका धपगागजालको राजधानी ज्ञापित की थी । उस समय तक धादुजाई धंगीय राजा ही काठमाडौं रहते थे । धादुजाई धंगका पतन होने पर यह नगर दोस्तसुन्दरदके हाथ बना । धंग ऐकोके राज करते समय काठमाडौं बहुत सुव्यवस्थित हुआ । नगरधन हैकी ।

१८३६ ई० की ७वीं अगस्तके दिन धंगरेकोनि सर्वेस्य माङ्गलजाको काठमाडौं लेला था । धंगरेकोका धेस्यदल दो नवें बहां रहा । फिर १८३६ ई० की २१ीं अगस्तके दिन काठमाडौंके सिपाहियोंने विद्रोही हो पानीर माङ्गलजाको मार डाला । दोस्त सुन्दरदके पुत्र धनवरस्यान्नि फिर धंगरेकोसे सन्धि करना चाहा था । सन्धि होनेको बात इस मर्म पर बची थी कि धंगरेकोको काठमाडौं छोड़ना पड़ेगा । धर विलियम माकनाटन सन्धिकी बात बोल करने गये थे । किन्तु वह पिछोके धार गये । उनके साथ डेवर, मिहैको धोर कारिग्य साहब थे । निकजाई सिपाहियोंने डेवरको भी मार डाला । दूधरी साहब बाँध लिये गये । धियमें फिर हुआ कि धंगरेकोको क्षमा पेसा सब देना धोर कच्चे सिर्फ ६ तोयें से खोटा पड़ेगा । १८३६ ई०की ६ठीं अगस्तको धंगरेको सेना खोटी बनी । ३३०० सिपाही धोर १२००० मोहर सख्त ठण्ठो बरफको तोड़ने वापस पाते थे । इस इंसके मध्य कियल डाक्टर कारिग्य समीर अलाहाबाद पहुँचे । बस्ती हुये ८२ लोग भी पधमधमें पा गये । १८३६ ई० की १३वीं अगस्तको धंगरेकी सेना से अज्ञान धीमकेने काठमाडौं पड़ु धानाधिधार दखल किया था । १२वीं अथ तोवर तक धंगरेक नगर पर अधिकांश लिये रहे । माकनाटन साहबको हथामके धीके उनका दिङ्ग बाजारमें बटकाया गया था । इधके बदलेमें धंगरेकोने बजार-बाता बाजार तीथीके लड़ा दिया ।

१८०६ ई०के धर्म माङ्गलजाकमें धादुध धानके साथ धंगरेकोको सन्धि हुई । इधके काठमाडौंका धंग

रेजीके एक रसीडण्ट रहनेकी बात ठहरी। सर लूइस रसीडण्ट वन काबुल गये। उस समय भी अफगान बिलकुल ग्रान्त न थे। ३री सितम्बरके दिन ही सर लूइस ससैन्य छलपूर्वक मारे गये। उस समय कुरम उपत्यकामें सर फ्रेडरिक रावर्ट अंगरेजी सेना लिये अपेक्षा करते थे। अंगरेज गवरनमेंण्टने उन्हें काबुल जानेकी अनुमति दी। रावर्टने ससैन्य प्रस्थान किया था। रास्तेमें नाना विघ्न बाधाओंका प्रतिक्रम करमा पडा। ६वीं अक्टोबरको उन्होंने काबुल पर अधिकार किया था। अंगरेज सैन्यने वानाहिसार, किन्ना और राजभवनका अधिकार तोड डाला। अमीर याकूब खानने पदत्याग किया। अंगरेज काबुल अधिकार किये रहे। अफगानोंने सोचा था कि अंगरेज लौट जावेंगे। किन्तु उन्हें वैठा देख सब लोग असन्तुष्ट हो गये। दोहे दिन पीछे अफगानोंने काबुल और वालाहिसार दखल किया। २३वीं सितम्बरको शेरपुरमें एक युद्ध हुआ। उसमें अंगरेज ही जीते थे। किन्तु उन्हें शेरपुरमें अवरुद्ध हो रहना पडा। २३वीं दिसम्बरको वहाँ ५० हजार अफगान सेनाने पहुँच अंगरेजों पर आक्रमण किया था। किन्तु वह पराजित हुई। दूसरे दिन अधिकतर अंगरेज-सेना पहुँच गई। काबुल फिर अंगरेजोंके हस्तगत हुआ। उसके पीछे ३ मास तक कोई उपद्रव न उठा। २२वीं जुलाईको अबदुररहमान काबुलके अमीर मनोनीत हुये। अगस्त मासमें अंगरेज सेना लौट आई। अमीर अबदुररहमानके शासनसे शान्ति स्थापित हुई। १८८१ई०को याकूब खानने आक्रमण किया था। किन्तु यह पराजित हो हिरातकी राह पारस्यकी ओर चले गये। उसी वर्ष अमीरने एक बार काबुल छोड दिया था। फिर बादक और कोहस्थानके लोग विद्रोही हुये। किन्तु धीरे धीरे शान्ति हो गई। १८८४ई० को रूस-सैन्य मार्च पर अधिकार कर अफगानस्थानकी सीमामें जा पहुँची थी। अंगरेजोंने रूस और अफगानस्थानकी सीमा स्थिर करनेके लिये ४० कर्मचारी और ४०० सिपाही भेज दिये। १८८५ ई०को भारतके गवरनर जनरल लार्ड डफरिनने रायस-

पिच्छीमें एक दरबार किया था। अमीर उसमें निमन्त्रित हुए। मार्च मासके जेपमें अमीर अबदुर रहमान वहाँ आए थे। एकपक्ष तक रह वह आपस गए।

आजसे कोई तीन वर्ष पहिले भूतपूर्व अमीरको सोतेमें किसीने मार डाला था। उनके पीछे कनिष्ठ पुत्र अमान उल्ला खानको काबुलका राजपद प्राप्त हुआ, किन्तु उन्होंने अंगरेजोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। कितनी ही खून खराबीके पीछे युद्ध बन्द हुआ। फिर अफगानोंका एक दूतदल सन्धि करने भारत आया, भारतसे भी अंगरेजोंका दूत-दल काबुल सन्धिकी बातचीत करने गया। गत २८वीं फरवरीको काबुल और रूससे भी एक सन्धि हुयो है। कहते हैं उस सन्धिके अनुसार अमीरने रूसी बोलशेविकोंको भारत पर आक्रमण करनेके लिये अफगानस्थानकी राह सेना ले जानेका अधिकार दे दिया है। काबुलकी समस्या आजकल बहुत टेढी पड गयी है।

३ अफगानस्थानकी एक नदी। इसी नदीके तीर काबुल नगरी है। ऋग्वेदमें यह नदी कुभा नामसे कही गयी है। ऊमा देखो।

काबुली (हिं० स्त्री०) कुभासम्बन्धीय, काबुलके सुताक्षिक।

काबुली ववूल (हिं० पुं०) वृक्ष विशेष, एक तरङ्गका ववूल। यह भारतमें प्रायः सर्वत्र मिलता और सरोकी तरह सीधा चलता है। इसे राम ववूल भी कहते हैं।

काबुली मस्तगी (फा० स्त्री०) निर्यास विशेष, एक गोंद। यह रूस मस्तगीसे मिलती और उसकी जगह काममें आती भी है। वृक्ष बम्बई प्रान्त और उत्तर भारतमें होता है। इसे 'बम्बईकी मस्तगी' भी कहते हैं।

काबू (तु० पुं०) १ पकड, पञ्जा, पहुँच। २ अधिकार, इच्छितियार।

काम (सं० स्त्री०) कामाय हितम्, कम्-अण्। १ शुक, वीर्य। २ यद्येष्ठ, वाजिष वात। ३ वाञ्छा, स्वाहिय। ४ स्वीकारवाक्य, इक्षुरारिया लुमसा। ५ अनुमति, सलाह। (पुं०) काम्यते असौ वच्।

कामकला - (सं० स्त्री०) कामस्य कला प्रिया, ६-तत् ।
 १ कामदेवकी पत्नी रति । २ चन्द्रकी घोड़य घृष्टा ।
 ३ तन्त्रोक्त विद्याविशेष । पुण्यानन्द-प्रणीत कामकला-
 विलास नामक तन्त्रग्रन्थमें इनका विषय वर्णित है ।
 तन्त्रशास्त्र स्वभावतः गुह्य रहनेसे अर्थ स्पष्ट समझ नहीं
 पड़ता । इस लिये कामकलाविद्याके सूत्रश्लोक ही
 उद्धृत किये जाते हैं,—

“सकलसुखनोदयस्थितियमययोलाविषोक्तमोद्युक्त
 अकलीनविमर्गः पातु महेयः प्रकामनापतत्र ॥
 सा जयति शक्तिराद्या निजसुखमयस्थितिरपमाकारा ।
 भाविशरावरवोर्गं शिवरूपविमर्गनिर्मलादमं ॥
 छुट्टिशिवमर्हिसमागमवोशादुत्तरविषो परायणः ।
 अतुतररुपातुत्तरविमर्गसिपिअद्याविप्रदा भावि ॥
 परशिवरविकरनिकरे प्रतिफलति विमर्गं दर्पे विप्रदि ।
 प्रतिरुचिरुषिरे इवो चित्तमये निविशते मन्नाविन्दुः ॥
 चित्तमयोऽङ्गकारः सुखलाह्वयं समरसाकार ।
 शिवशक्तिमियु नपिष्टः कवचोक्तवचनमपलो जयति ॥
 सितयोपविन्दुदुर्गलं विविक्तशिवशक्ति सद्बुधतुमसरम् ।
 वाग्यं छट्टिहेतु परस्वरागुमविविष्टमिष्टम् ॥
 विन्दुरहद्वारात्मा रविरेतन्मियु जसमरसाकार ।
 कामः कमनोयसया कला दृक्नेन्दुविषयो विन्दु ॥
 इति कामकलाविद्या देवीसकलमात्मिका सियम् ।
 विदिता येन स सुक्तो भवति मन्नादिपुरसुन्दरीरुपः ॥
 छुट्टितादरुपाविन्दो नादन्नद्रादुतो रवोऽस्यक्त ॥
 तज्जात् गगनसमीपददमोदकमुसिवपंसम्भूतिः ॥
 अथ विप्रदादपि विन्दोर्गमनाजिहवजिवास्मिन्निशानिः ।
 एतन् पञ्च कविक्रियिर्गदिदमपायजाङ्गपदंलम् ॥
 विन्दुदिवथं यद्वे देविद्वोन परस्परम् तवत् ।
 विद्यादेवतयोरपि न भेदस्योस्ति वेदभेदकयोः ॥
 वाग्यो नित्ययुतो परस्परं शक्तिशिवमयावतो ।
 छट्टिस्त्रिविधयभेदो विधा विमर्गो विषोऽरुपेप ॥
 माता मार्गं मध्यं विन्दुव्यभिन्नवोअरुपापि ।
 घामन्नयपोठवयगक्तिवयभेदभावितान्पि च ॥
 तेभु क्रमं च लिङ्गवित्त तद्व्य सादृकानितयम् ।
 इत्यं वितयतुरोधा सुरीयपोठादिभेदिनी विद्या ॥
 इन्द्रस्योर्ध्वं रूपं रसगन्धो चेति भूतसृष्ट्यापि ।
 व्यापकमायं व्याप्यं गुत्तरनेवं क्रमं च पञ्चदश ॥
 पञ्चदशाक्षररुपा मित्या देवा हि भौतिकाभिमता ।
 नित्याः शब्दादिगुणभेदमिन्द्रा स्यान्मया व्यावाः ॥

नित्यासिध्याकारासिधयः शिवशक्तिमयसाकाराः ।
 दिवसनिगामयन्ता शोवर्षासिपे तद्व्ययीदया ॥
 अथचनविन्दुतयसमतिभेदेर्देविभावितान्कारा ।
 अद्विगतं तत्प्राप्ता सत्तातोता च क्षेत्रज्ञा विद्या ॥
 विद्यापि तादृगात्मा सृष्टा सा विप्रसुन्दरी देवी ।
 विद्या द्यामदशोरत्पलाभेदमामनन्दार्था ॥
 या सान्तरीहृदया परा महेयो तिमामिता सेव ।
 स्पष्टा पय्यलादिदिमात्रकाया अरुतां याता ॥
 अक्षरापि महेया न भेदस्यो विमाम्यते विवुधे ॥
 अमयो, सृष्टाकारा परैव सा स्युत्तमप्रिय मिदा ॥
 मध्यं अरुथ स्यात् परामये विन्दुत्वमभेदेदम् ।
 एषु न तत्र यदा तिकोपरुपे परिपन्थं अरुम् ॥
 पततु पय्यलादि दितयनिदान विवोअदपं च ।
 वामा जगता रौट्रो चारिष्वा अतुत्तरांमभूताः स्युः ॥
 इत्या प्राग्-क्षिया-गात्पापेता सद्योचारावधवाः ।
 स्यलास्यतदपंअयमिदमेकादशम्यममरुतो ॥
 अथं कामकलाया निविन्दुतास्यस्यदपंअमयो ।
 सेठं तिकोपरुपे द्याता विगुपन्मरुपिदी माता ॥
 एका परा तदस्या वामादिस्थितनाष्टसृष्टाया ।
 तेन मवाया जाता माता सा मध्यमाभिधानाभ्याम् ॥
 द्विविधा हि मध्यमा सा सृष्ट्या मन्नाति स्थिता सृष्टा ।
 नवनादमयो स्युत्ता नववर्गाया च भूतविद्यादया ॥
 आद्या कारपमया कर्णं तमयोर्दंतमयो ऐती ।
 सेवेथ नहि भेदना द्यागां ऐतु ऐतुमदमोचम् ॥
 म प स प वर्गमथ तदसुक्तोपं मध्यकोमविलारम् ।
 नवकोपं मध्यं चैवाद्यि पिद्वोपदीपिते दम्ये ॥
 तच्छायादितयमिठं द्यारअक्षयान्मना पिततम् ।
 क च ट त वं अतुत्तयविसमयिष्टतकोपविद्यारम् ॥
 एतयस्रुतुत्तयप्रमासमेतं द्यार-परिपामः ।
 द्दिस्त्ररनवक चतुर्दशवर्गमयं चतुर्भारनिदम् ॥
 परया पय्यलापि च मध्यमया स्युत्तवर्गदिव्या ।
 एतामिरेकपञ्चादचरात्मा च चैखरीजाता ॥
 कादिभिरदमिदपचितमददलास्य च वैखरैवेर्गैः ।
 खरुपसमुदितमिदददददलाभोरुद्वय सचिन्म्यम् ॥
 विन्दुमयमयतेजस्त्रितयविद्याराय तानि इतानि ।
 भूविश्वत्रयसेतु पय्यलाद्यादि विमाद्विश्रान्तिः ॥
 क्रमप पदविसेपः क्रमोदयसेन कथ्यते वेधा ।
 आधरुपं गुर्पन्तिअयमिदमयापदासु अमसरम् ॥
 सेधं परा महेयो अकाकारेप परिपन्थे तदा ।
 तद्वे आवयवानां परिपवितारुपंदेवताः सर्वाः ॥
 आसीना विन्दुमये अन्ते सा विप्रसुन्दरी देवी ।
 कामेश्वराङ्गनित्या कथया अष्टस्य अस्थितोचं सा ॥

अङ्गोलका मूल, त्रिफला, गुहूची, मरिच हरिद्रा, समच्छेदा, सुरामांसी एवं कुष्ठ दो दो तोले, त्रिडङ्ग, सुस्तक, कृष्णलवण, तालक, तथा टंकण चार चार तोले और शोधित गुग्गुली चोतीस तोले एकत्र चोमें घाटनेसे यह बनती है। चार मापा इसको सेवन करनेसे वातरक्त रोग आरोग्य होता है। (रसरवाकर)

कामकलाविलास (सं० पु०) कामकलायाः विलासः मन्यक् विवरणं यत्र, बहुव्री०। एक तन्त्रशास्त्र। इसमें कामकला विद्याका विषय विविध रूपसे वर्णित है। इसके प्रणेता पुष्यानन्द और टीकाकार नटनामन्ट थे। [कामकला दीप्ति]

कामकाज (हिं० पु०) कामकार्य, कारवार, दौड़धूप।

कामकाजी (हिं० पु०) व्यवसायी, कारवारो।

कामकाति (सं० त्रि०) कामपरा कातिः शब्दो यस्य, कामके शब्दे क्तिन् बहुव्री०। काम शब्दयुक्त, अपनी खाहिस जाहिर करनेवाला।

कामकान्ता (सं० स्त्री०) राजनेपाली, नेपालकी मनःशिला।

कामकाम (सं० त्रि०) कामं कामयते, काम्-कम्-णिच्-प्रण। अभीष्टप्राप्ति, खाहिस की हुयी चीज मांगनेवाला। कामकामी (सं० त्रि०) कामं कामयते, कम्-णिच्-णिमि। अभीष्टप्राप्ति, सुगद मांगनेवाला।

“कामुर्मापनचप्रविष्टं ससुद्रमापः प्रविशति यस्तु।

तस्तु कामाः यं प्रविशति सर्वं स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥” (मगवद्गीता)

कामकार (सं० त्रि०) कामं करोति, काम-क-प्रण्। १ काम्यकार्यका निष्पादक, खाहिसके सुताविक चन्नेवाला। (पु०) २ फलामिसन्धि, खाहिसकी चाल।

कामकाली (सं० स्त्री०) जलपक्षिविशेष, एक दरयायी चिडिया।

कामकूट (सं० पु०) काम एव कूटं प्रधानं यस्य, बहुव्री०। १ वेद्याप्रिय, रण्डीवाज्। २ वेद्याविभ्रम, रण्डीवाजी। ३ कामराज नामक त्रीविद्याका एक मन्त्र। यह तीन प्रकारका होता है,—कामकूट, कामकेलि और कामक्रीडा। यथा १म कामकूट,—

“विद्वद्व्यसतः पश्यान् कालो यद्विद्वि बन्धु च

मायास्वरेष वंयुषं गार्धविन्दुश्चाविवम्।

प्रथमं कामराजस्य कूट परमदुर्लभम् ॥” (इमकमड्रीम्)

२य कामकूट,—

“विरिष्युतं कामो हंयः शक्यत परम्।

सदायाया ततः पश्यान् सप्रमतीति कथाते ॥” (इमकमड्रीम्)

३य कामकूट,—

“सदम शिवशौच वादुवीर्यं ततः परम्।

इद्रवोज ततः पश्यान् सदायायां ससुदरेत् ॥” (इमकमड्रीम्)

कामकृत् (सं० त्रि०) कामेन करोति, काम-कृ-क्तिप्।

१ यथेच्छकारक, मर्जीके सुवाफिक चन्नेवाला।

२ अभीष्ट सम्पादक, अपनी सुराद पूरी करनेवाला। (पु०) ३ विष्णु।

“कामका कामकृत् कामः कामं कामप्रदं प्रभुः।” (विष्णुसहस्रनाम)

कामकेलि (सं० त्रि०) कामे तत्रेतुकरतो केनियस्य, बहुव्री०। १ लम्पट, ऐयाग, छिनरा,। (पु०) काम-

निमित्ता केनिः, मध्यपदलो०। २ सुरत, छिनाला।

कामक्रीडा (सं० स्त्री०) कामेन क्रीडा, इ-तत्। १ सुरत,

ऐयाशी। २ पञ्चदशाक्षरी एक छन्द।

“नाः पच न्युर्दयां सा कामक्रीडा संज्ञा ज्ञेया।” (उपरासकटीका)

जिस छन्दमें पाँच मगण अर्थात् पन्द्रहो वर्ण गुरु रहते,

उसे ‘कामक्रीडा’ कहते हैं।

कामकृद्भद्रता (सं० स्त्री०) कामं कामनीयं खड्गमिव

दलं पदं यस्याः, बहुव्री०। सुवर्णकेतकी, पीला केवडा।

कामग (सं० त्रि०) कामेन वाह्यस्य इच्छया यथेच्छं

देशं गच्छति, काम-गम-ड। १ इच्छानुसार चलने-

वाला, जो अपनी खुशोसे जाता-जाता हो। २ लम्पट,

रण्डीवाज, छिनरा। (पु०) ३ कन्दर्प, कामदेव।

कामगति (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं गतिर्यस्य, बहुव्री०।

१ इच्छानुसार चन्नेवाला, जो मर्जीके सुताविक

जाता-जाता हो। २ यथेच्छ देगको गमनकारक, मन-

मानी जगहको जानेवाला। ३ लम्पट, रण्डीवाज्।

कामगम (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं गच्छति, काम-

गम-प्रच्। कामगति देखो।

कामगा (सं० स्त्री०) कामेन अनुरागेण गच्छति,

काम-गम-ड-टाप्। १ कोकिला, कोयल। २ यथेच्छ-

पुरुषगामिनी, छिनाला।

“कामध्वजोऽस्मात् प्रोक्तः इति कामध्वजः।”

“सुखं कामध्वजोऽस्मात् प्रोक्तः इति कामध्वजः।” (आध्यात्मिका)

कामगामी (सं० त्रि०) काम—यथैच्छं योनिविचारं प्रकृत्यैव गच्छति इत्यर्थः, काम-राम विनि। योनि-विचारभूय हो यथैच्छं मायै श्रीगामन करनेवाला, रक्षोवाह, जिनरा। २ कामधारी, खाद्विधये सुखा विह्वल करनेवाला।

कामदार (त्रि० पु०) राक्षसवन्धवर्ता, कामदार।
कामगिरि (सं० पु०) कामप्रधानो गिरिः, मध्यपर्वतो०।
१ कामरूपका एक पर्वत। (बर्हिषत्पुण्य) २ द्वापि कामरूपा एक पर्वत।

“कामगिरिं वसन्तं शरत्कालं सर्वशरीरं” (बर्हिषत्पुण्य)

कामगुच (सं० पु०) कामकृतो गुचः, मध्यपर्वतो०।
१ अनुग्रहम सुखप्रदात। २ विषय, रिय। ३ श्लोक, मन्त्र।
कामहामी (सं० त्रि०) कामं यथैच्छं गच्छति, कामम्-मम विनि। कामरानी शैवी।

कामधर (सं० त्रि०) कामिनं धरति काम धर ट।
शेच्छाधारी, मर्त्रीके सुखाधिक सुख समझ करनेवाला।
“नं गारुडं कामधरं धरति” (इन्द्रावधर)

कामधर (सं० त्रि०) कामं यथैच्छं धरति विचारकम्, कामंका०। यथैच्छंभावये विचारक, मनमामी बहधिर।
कामधर (सं० त्रि०) कामधरक माय, काम धर-स्य। कामधरका धार्य, मनमामी सुखधिर।

कामधराज (त्रि० त्रि०) त्रिसो न त्रिसो प्रकार धार्य मित्राज देनेवाला, जो काम बहा देता हो।

कामधार (सं० त्रि०) कामिनं शेच्छया धरति, काम धर-स्य। १ यथैच्छंभावये विचारकधारक मर्त्रीके सुखाधिक सुखम विरनेवाला। २ यथैच्छंभावये पय धरनेवाला, जो मर्त्रीके सुखाधिक मर्त्रीके बचता हो।
कामधारिणी (सं० स्त्री०) सुगन्ध कृताविधिय, एक सुगन्धधारिणी।

कामधारी (सं० त्रि०) १ कामिनं शेच्छया धरति, काम धर विनि। कामधर दियास, जिनरा। २ यथैच्छंधारी, मर्त्रीके सुखाधिक करनेवाला। (पु०) १ मर्द्ध। ३ कामधर, एक विद्विया।

कामध (सं० त्रि०) काम्या धारयि, काम जन-ध।

१ कामिधायकान्त, खाद्विधये देदा। “कामध्वजं कामध्वजं प्रकारात्वा होता है,—

“कामध्वजो विधायाः इतिगत्तं निधो मत्त।

योनिविहं वरुणा य कामध्वी वरुणी वरुणः” (मनुस्मृतिका)

सुगया (विचार), सुतकौडा द्विधाविद्या, पर-मिन्वा, कौडक्याय, मद्यपान, सुख, वीत, वाय वीर कृपापर्वटन इय कामध्वज व्यसन है। इनमें मद्यपान, सुतकौडा श्लोसश्लोम वीर सुगया चार उत्तरोत्तर पश्चिम करदातक होती है। कामध्वज व्यसनमें पासल होनि पर धर्म वीर पर्यकामध्वे वहित रहना पड़ता है। इहभिये इनको सर्वदा छोड़ना चाहिये। २ कामध्वज सुखप्रदाते देदा। (पु०) १ कामध्वज सुख, धनिद्वह।

कामध्वज (सं० पु०) कामध्वजो ध्वजश्चेति, कामंका०। कामध्वज ध्वज, एक नौकार। कामरिपुके धाधिक्यये यध ध्वज धाता है। वेद्ययाध्वजे मर्तके इच्छा सत्य,—

“कामध्वे निर्यादिनं मन्त्रावध्वजोऽस्मात्” (आध्यात्मिका)

मनको विह्वलता तन्द्रा, पालस्य वीर धमोचन है। मायध्वजध्वजे मतासुधार धायासुधार, धमोच वसुधै काम, वासुधै उपयमधारक धार्य वीर इह रहनेके लयावये यध ध्वज कूट जाता है। धोवसे भी यध ध्वजका उपयम होता है।

कामध्वजो (सं० स्त्री०) नायवर्द्धी, धानको शैव।
कामध्वि (सं० पु०) कामध्वजं ध्वजिद्वयपति ध्वजात्, वहुमी०। १ कोबिह, कोयक। (त्रि०) २ सुमधि, सुगन्धधार।

कामका (सं० स्त्री०) इत्यविधिय, एक मर्द्ध। यध ध्वजोच देयमें प्रसिध है। इहका बोध जो ‘कामध्वज’ बचता है। वेद्यध्वजिद्वय, इसे मनुष्य, वध, काम इहिकर, इन्द्रियबन्धिवर वीर दण्य बचता है। राध निवयध्वजे मर्तके इहसे बोधमें भी उक्त शुच जाता है।

कामध्वज (सं० पु०) कामं जनयति, काम-जन-विध्व-ध्वं निपातनात् न उच्यते। धवरा कामध्वं ध्वज्येमायं धानयति, कामध्व-धा-नो-ध। कोबिह, कोयक।

कामध्वि (सं० पु०) कामं धयति, काम-ध्वि-वि-ध्व-ध्वं निपातनात् न उच्यते। धवरा कामध्वं ध्वज्येमायं धानयति, कामध्व-धा-नो-ध। कोबिह, कोयक।

कामध्वज (सं० त्रि०) कामको बड़ा समझनेवाला, जो खाद्विधया पावक हो।

है। इसको "वाघहार" कहते हैं। इस तोरणके शिखरदेशमें एक व्याघ्रमूर्ति थी। नगरके उत्तरांशमें घरला नदीके प्राचीन स्थानके सुखसे पश्चिम प्रायः एक मील दूर "होकोहार", नामक तोरण है। कामरूप जिलेमें कई असभ्य लोगोंके नाम सुन पड़ते हैं। उनमें होको भी एक असभ्य जाति होगी। इसीसे होको नामक किसी असभ्य जातिके नामानुसार सम्भवतः तोरणका नाम भी रखा गया है। यह सकल तोरण इष्टकनिर्मित थे। इनके निकट नानाविध रक्षणोपयोगी उपाय थे। आज भी उन सबका भग्नावशेष पड़ा है। होकोहारके वृष्टिदेशमें राहके वामपार्श्व और शिङ्गीमारीके पूर्व एक चूड़ दुर्ग है। यह प्रायः एक वर्गमील जमीन् पर बना है। इस दुर्गका "पात्रका गढ़" कहते हैं। कारण इसमें पात्र अर्थात् प्रधान मन्त्री रहते थे। इसकी गठनप्रणाली और व्यवस्थादि नगर-दुर्गकी भांति अधिक उत्कृष्ट नहीं। फिर भी यह इस प्रकार निर्मित हुआ है, कि नगरदुर्गसे ही इसकी रक्षाका कार्य अनायास चल सकता है। इस दुर्गसे कुछ उत्तर एक क्षेत्रके मध्य राजाका सानागार था। इसकी चारो ओर आजकल तम्बाकूकी खेती होती है। क्षेत्रके एक स्थानको आज भी "श्रीतलवास" कहते हैं। किन्तु यहां किसी प्रकारकी अष्टाशिकाका चिह्न नहीं। यहां गमलेकी भांति पत्थरका एक पात्र विद्यमान है। वह थानाइट पत्थर खोदकर बनाया गया है। इसका किनारा ६ इंच मीटा है। सुखका विस्तार साठे ६॥ फीट और गभीरता साढ़े तीन फीट है। इसके अभ्यन्तरमें पत्थरकी एक शिङ्गी जैसी बनी है सम्भवतः उसीके सहारे इसमें उतरते थे। पत्थरके बाहर इस प्रकार चढ़नेका कोई उपाय नहीं। इसीसे अनुमान होता है कि पत्थर भूमिमें गड़ा था। फिर इसका किनारा सानभूमिके मध्यभागसे समष्ट था। इस सानागारका क्षेत्र देखनेसे अष्ट समझते हैं कि सानागार और श्रीतलवास दोनों एक सुन्दर छायाशीतल मनोरम उद्यानके मध्य थे। कालक्रमसे उद्यानके षष्ठादि विनष्ट हो गये हैं। अथवा कृषिकार्यके लिये सबस हक्षादि काट भूभाग बनाया गया है।

नगरके मध्य प्रधान स्थान दुर्ग और राजप्रासाद है। यह प्रायः नगरके मध्यस्थलमें अवस्थित है। इसको चारो ओर ६० फीट विस्तृत एक खाई है। दुर्ग पूर्वपश्चिम १८६० फीट और उत्तर-दक्षिण १८८० फीट विस्तृत है। खाईके बाहर दुर्गका सुरक्षा और खाईके भीतर इष्टक-प्राचीर है। उत्तर और दक्षिण दिक् खाईके तीरसे यह प्राचीर लगा है। फिर पूर्व-पश्चिम प्राचीरकी बगलमें चौड़ा ढालू पोश्टा है। दुर्गके सुरचोके बाहर दक्षिणपूर्व कोणमें कई चूड़ पुष्करिणी और एक बृहत् तडाग है। अपर तीनां ओर दुर्गके मध्यविस्तारमें प्रायः २०० गज भूमि मट्टीके सुरचेसे वेष्टित है। यह वेष्टितस्थान तीन भागोंमें विभक्त है। सम्भवतः यह स्थान राजान्तःपुर रहा। इसके बाहर कई चूड़ पुष्करिणी हैं। किन्तु निकटमें अष्टाशिकाका कोई चिह्न नहीं मिलता। दुर्गके अभ्यन्तरमें इष्टक-प्राचीरके मध्य उत्तरांशपर बृहत् स्तूप है। यह ३० फीट उच्च है। इसका शिखरदेश ३६० फीट विस्तृत और चतुष्कोणाकार है। इस स्तूपके दक्षिण-पश्चिम कोणमें एक चूड़ अथवा गभीर पुष्करिणी है। इसीसे स्तूपका यह अंश आज भी नहीं विगडा। इसका चारो ओर इष्टककी टट्टी थी। किन्तु आजकल पुष्करिणीके तीरको छोड़ दूसरी किसी तरफ नहीं है। इसके निकट दूसरी भी कई चूड़ पुष्करिणी हैं। इनको देखते ही जान पड़ता है कि दुर्गकी रक्षा करनेकी पुष्करिणी खोदी गयीं थीं। फिर उसी मृत्तिकाकी राशिसे यह स्तूप निर्मित हुआ। इस स्तूपका अभ्यन्तर इष्टकगठित नहीं, केवल बालू और मिट्टीसे भरा है। इस स्तूपके ऊपर उत्तर एवं दक्षिणभागमें ईंटोंसे बंधे १० फीट चौड़े दो कूप हैं। दोनों कूपोंका तलदेश तक बंधा है। स्तूपके ऊपर पूर्व-पश्चिम दो स्थान हैं। देखनेसे सहजमें ही समझ सकते हैं कि पहले वहां अष्टाशिका थी। पूर्वको तरफ इसी ढेरपर वेदीकी भांति चूड़ चतुष्कोणाकार एक स्थान है। अनेकोंके अनुमानमें यहां कामतेश्वरीका प्राचीन मन्दिर था। यह अनुमान बहुत कुछ सत्य है। इस वेदीके पश्चिम दूसरा भी भग्नावशेष है। लोगोंके कथनानुसार वहां

राममठन बा। बिन्दु बड़ चढ्यन है। ऐसि सुद्र
 ज्ञानमें राक्षसमठन नन नहीं लखता। अथवात' यह
 देवीका अक्षयमठन बा। मोक्षको कोट्टेके द्विती यहदि
 ईंटे संघनोत हुयो थीं। यह चति सुयहित रहीं।
 बिन्दु यहां को ईंटे पाग मो उतर उतर पवैं है, यह
 भारतवर्षका साधारण ईंटेसि कुछ बिलस्य नहैं।
 ठेरकी दक्षिण दिक् मध्यमठनसि एक इष्टक-माचौर
 दुर्गमाचौर तब उत्तर दक्षिण विष्णुत है। इस
 माचौरको पूर्व पोर कई इष्टकपद हैं। सन्ध्यात इन
 सबक ज्ञानमें दरवार समता पौर सरकारी काम
 चलता बा। इहां पौर डेरके पूर्ववाममें ठसीको
 बरवार दोर्ब एक दीर्घका है। बबनागुहार राजा
 इस दीर्घकामि कई कुपीर पाहकर रखते थि। इस
 दीर्घकाके उत्तर पूर्व कोरमें दूसरा सुद्ध ठेर है। इस
 ठेरको चारो पोर दीर्घकाके एक नहर निबाक बुमा
 दी गयी है। इस सुद्ध डेरमें मो बहुत ईंटे पकी हैं।
 इसदि यहां देवमन्दिर कोनिका अनुमान करती हैं।
 कुपीर दीर्घकाके बिलकुल पूर्व दूसरा एक ठेर है।
 कोनैके अथनागुहार इस पर पछामार बा। बड़े
 डेरके पश्चिम दक्षिण पौर मध्य प्राचौरके पश्चिम को
 चक्क पड़ता है, यह प्राचौरके पूर्वचक्कको पयिका जोटा
 सयता है। अथवात: यहां राकाका मठन रहा।
 इसीके विषकुल उत्तर पन्त:पुर था। पन्त:पुरके पूर्व
 किनारे बड़ा ठेर है। पश्चिम पौर मिठोका सुरवा है।
 दक्षिण पौर उत्तरमें ईंटेका प्राचौर है। इसके मध्य
 ज्वालमें एक स्तूप है। अनुमानमें यह स्तूप पन्त:पुरके
 कोर देवालय था। इस स्तूपके निचट दो सुन्दरिचो
 हैं। अथवात: यहाँ दोनों जिवीके व्यवहारार्थ पत्तरके
 बंधी थीं। बड़े डेरके दक्षिण पश्चिम कोरकी सुन्द
 रिचोके तौर पर दूसरे मन्दिरका अम्बावयीय है। पन्त:
 पुरके निचट इन दोनों सुन्दरिचिदीमें पौर पूर्वीक
 बड़े डेर पर (बिल स्थानमें कामतीयरीके मन्दिर
 रखनेका अनुमान किया गया बा, वहां भी) प्रष्ट
 पदिके मध्यचक्क मिलते हैं। यहां ८ फीट ऊम्बा
 २८ इंच आठविंशति धूररवर्षके घानाइट पत्तरके
 स्तूपका एक चक्क पड़ा है। इसका अयमान चठ

पक्क पौर मूखदेय चौकोर है। कोनैके बबना
 गुहार यह स्तूपका चंय नहीं, मोक्षाम्बर नामक
 स्तूपतिके पयोमोलकका अयमान है। प्रवादानुसार
 इस दुगको विश्वकर्मा पौर नगरके बहिर्देगका मरवा
 नगरविज्ञानी कामतीयरीदेवीमें अपने हाथ बनाया बा।
 पूर्वदिक्में बरसाके तौर कामतीयरी-निर्मित सुरवा
 नहीं। अथनागुहार इसके निर्माच-समय राजाको
 देवीके पादेयके पचादिवसके चार दिन उपवास
 रखना था। बिन्दु तीन दिन नीत जाने पर राजा
 फिर चूका यह न सके पौर चतुर्थ दिन भाजार करने
 लगी। तब समय देवीने भी तीन ही पोरका सुरवा
 बांका बा। इस लिये चौथी पोरका सुरवा बंध न
 सका। बरसाके तौरके बाबहार तब एक प्रयत्न
 पय है। राजासादके मम्बावयीयके एक मोक्ष दूर
 मिठोमारी नदीको बर्तमान खाड़ी है। इसके निचट
 दूसरी मो सुद्र खाड़ी है। उसके ऊपर बाबहारके
 सन्धुच कुछ दूर ईंटेका मीहपगहार पुन है। इसी
 पुच पर चौकर बस बरसा बाबहारकी राह है।
 बावहारके निचट एक प्रष्टरमय स्थान है। सोन
 कथे मोरीपठ कहते हैं। इसका मिवसिद्धांय दूट गया
 है। इहदाकार मिवसिद्ध पर मन्दिर था। पात्रकल
 इसका चिह्नमान मिचता है। निचट जो एक पुष्प
 रिचो है। यह पूर्वपश्चिम २०० फीट होर्ब पौर
 उत्तर-दक्षिण २०० फीट विस्तीर्ण है। दोनों पौर
 दो घाट बने हैं। निचट जो कई ज्वालमें मूर्तिविशिष्ट
 इहदाकार प्रष्टर हैं। उनके एकमें चर्चानाजिनोमूर्ति
 पौर दूसरीमें वेष्णव-बेष्णवीमूर्ति खुदी है।
 पाषाणको तुषको पड़नेके समझते हैं बि ई० १३५
 यताब्दके प्रथम भाग कामरूपमें मोक्षज्वाल नामक एक
 राजा थे। उनके मन्त्रमें कई प्रवाद हैं—बहुका
 बिलीवासे ब्राह्मणके एक गोरकल रहा। यह गोरकल
 बड़ा दुष्ट था, दूसरेका पनिट करना उसे पच्छां
 समता बा। प्रतिदिन दूसरेके चित्रमें गो पादि झाड़
 यह कार्य सोबा करता बा। प्रत्येक मणको देवी जामि
 देव अपने ब्राह्मणके उसके पत्नके दुर्गबहारकी बात
 कही। ब्राह्मणने एक दिन अर्घ्य उन्न विपयका

अनुभव करनेका मौदान था ऐसा कि जसका गौरवक एक येंके नीचे पडा मोता ऐ यौर एक मयं फडा फैला उमके सुनकी धुव रोक रहा ऐ। साह्यप मयं ऐग कर टरा यौर दूनपट भागने लता। उमी समय मयं महुव याले ऐग मरक गया। साह्यपने ताम का कर देगा कि उनके दटतपमें चटपट पट, तिगुल, उर्ध्वेवा प्रमृति राजलपट ऐ। यह ऐग साह्यप लम लगा कर धर मे गया यौर तिमो पकारका मौनकर्म करिनी क्षिप्र किया। अचतैवका यह दिन साह्यपने धमने पुनाकर मणिदा करा थे—क्षिप्रो दिन राधा होने पर यह उसकी मन्त्री मयावेगा। लापकमये कामपराग धर्मदावने लदासोक्त मंगपर दुर्लभ एव मते। फिर वकी मोवासक उसकी मार एवं मोक्षभज नामने राजा हुआ यौर अपने राधका "साह्यपराध" नाम रग प्रतिपालक साह्यपकी मन्त्री बनाया। हर्मने मयावेके अनुसार क्षिप्र साह्यपके घर एक दासी थी। उकीके मयमें यह पुनमल्लान हुआ। साह्यपने उमे गौरवामे निगत किया। लाम-कमने एव रुदने गही गौरवक मोक्षभज हुआ। फिर जोर कहता ऐ कि गौरवक पुत्र (अमल "तमोग) था। अमलः राजा मोक्षभजन क्षिप्रवामे साह्यप यौर काटम्य ने जकर कामरुपने ठगार्य ऐ। फिर "कामतापुर" ० नामसे उकीके एक नगर भी मयावा। मोक्षभजनने इस नगरमें राजावामी स्थापन कर "वामनेर" तथापि पटवपूर्वक अपनेको "महुट्ट" नामसे प्रचारित किया था।

मोक्षभजनने पीले उमके पुत्र चक्रभजन यौर चक्रभजनके पीले उमके पुत्र मोलाम्बर राजा हुये। मोलाम्बरने की घोड़ाघाटके मद्र यौर चनेक कीर्तिकाे स्थापन किया। एकवार मोलाम्बरराजने मन्त्रिपुत्र राजरानी पर पामक हुये। राजाने उमें मार यौर

उसका मींग एका मन्त्रीकी विहाय था। मन्त्रीके या चुकने पर राजाने उमें दूनपट देवाय यौर मयम्ल विवरण बताया। मया प्रमृ दाव पर मद्र दून देवा उदित वाममंमने विव्याम पुर्वक महुके खागदुधमें लामघर हीड़ एक दिये। फिर उमाने महापालकर व'तमोप केके मोहुेयार पुमेक मार मयावेके साह्यप मींदा था। मयावेके साह्यपने कामका पुन कर मद्र मेका मद्र कामवदने मारा को। यौर मद्र होने मो कामनेय पराजित न हुये। इसने मयावे मय के बैठ मये। अमंतय १२ परे मयंल रहा। सुमलमानने इस दासिनेरके मय मरक हाइमोगमें चनेक काति विनक कर एउने हके सोम्य चहायिका यौर पुनक्षिप्रो तर एका थी। अचतैवने कर्मेने मोक्षभ चममयन किया था। राजाने यह मयावे मेता मया—सुमलमान परराय कोर एने कायेने, किन्तु जानने परने सुमलमानने मयमे रामने मासात् नरम माहवा ऐ। मोलाम्बर मयाव पर मयाव हुये। किन्तु सुमलमानने दीवामी विदीको न मीं ममल योडा मयाव किये। उमाने मींम परने मय अधिका किया यौर राजाने क्षिप्र किया। किमोत्र नममागुवार एकी राजा मोहुकी ऐवित हुमे यौर किमोके वयमागुवार यह मार हावे मय। फिर जोर कहता ऐ कि राजा माव हया मानी ने। अमलः नगर सुमलमानने अधिका किया। १४२० तककी कामतापुरमें सुमलमानने लवणाया उकीका, पाक वही नगर भगन्मय माउने परिलक ऐ, तिमने १४००मे मयं पुर्व एउकाल सुमलमानका दादम मधिक वपताप बनाया मय लिया। अमली विवित्र मीं था ऐ।

"महुजनकयावित" नामके ज्ञानने एउमें निगा ऐ.—कामतापुरमें दुनेमवारावण १३२० तक राजा ऐ। उमके मय मोक्षभ धर्मनारायण या एक भीषण युद्ध हुआ। दुनेमवारावणकी कीर्तना काम-दवके राजा धर्मदावना यौर कीर्तिका "किरिका" धंगीय बताते हैं। अमलः युद्धमें चनेक मय मारे मये। फिर दोगी नामवेने रातकी मय देवा हुरे दिन घस्यता-स्थापन-पूजक मन्त्रि कर ली।

* मोक्षभजनने मयमल, १४४०के दवापकी कामतापुर मय किये था। किन्तु किमी क्षिप्रके अटमानने कामतापुर नामक एक नगर एउके मय मया। मोक्षभजन उकी मरकवा विचार रहा यौर दुर्गदिके मय १४२० राजधानी बना ली मये। १४२०के मयमें ही इस नगरका नामोत्रे ए स्थिता ऐ।

उसके पीछे गोड़ेखरने खामरूपकी परका दिए राजा दुर्लभनारायणके पास सात ब्राह्मण पौर सात कायक भेजे थे। इनको चौदह मनुष्योंने प्रभाव १२ पादमिर्चोको राजा दुर्लभनारायणके "बारभैया" पाट्या दी। बारभैया को सम्यक्तः गोड़ेखरके सेनापति थे। दुर्लभनारायणने उनके साहाय्यसे भोट राजका बिद्रोह दबाया था। कामरूपमें खामरूपके मन्त्र शोकशान्तिको संस्था पौर प्रभाव बढ़नेसे राजा दुर्लभ नारायण कुछ शोषित हो गये। फिर पादि भूयोंको मरनेसे बच पश्चिम उल्लिखित हुये। कुछ दिन पीछे कोचोंके मन्त्र जाको नामक किसी सरदारको प्रभावमय मित्रा। वह क्रमशः अपना पश्चिमाय बढ़ाते गगा। पौर प्रभावमें कोडावाटको शोक प्रशासन मदेयका राजा बन बैठा। इससे ही पौर पौर दो कन्था मित्र पन्थ कोई सन्तान न थी। दोनों कन्थावने पश्चिमादितावसामि पति पन्थ दिनके पानी पीके दो सन्तान हुये। पौरके सन्तानका नाम मिष्ट पौर पौरके सन्तानका नाम विष्ट था। जाकोराजकुमारो कन्थावोंने पुत्र होने दिए मन्था विन्थान्ति हुये। उसी समय टैबकाको पुत्र पकी थी—यह दोनों पुत्र देवदेव महादेवके पौरपुत्रे उत्पन्न हुये हैं। किसी किसीके कपनामुसार हरिया नामक किसी मन्त्र जातोय सरदारके हीराका विवाह हुआ था, किन्तु उससे पौरपुत्रे उत्पन्न नहीं। अन्तर्गत यह दीर्घ सन्तान विष्टेय पराक्रमो हुये। इनोंने अपना नाम "विष्टमिष्ट" पौर "मिष्टमिष्ट" रखा तथा अपनेको मिष्टमिष्टीय पन्थ अन्ते पीके कोमोको "राजमिष्टीय" बता मचार किया। क्रमशः विष्टमिष्ट नामा देय (दुर्लभके मतमें १४२० से १० मन्थके मन्थ) खामतापुर पश्चिमाय कर राजा हुये पौर श्रीहृदिके वैदिक ब्राह्मण का "खामरूपी ब्राह्मण" पाट्या दे करारुपमें बना दिए। इनोंने बीहदम बढ़ते समय सुमनाय खामाख्यापोठका उद्धार किया था।

खामतापुर बितने दिनका है ? दुर्लभके मतसे राजा भोजभद्र खामतापुरके स्थापयिता नहीं, संस्कार कर्ता पौर राजशामोकर्ता माने थे। पन्थके अनुसार राजा भोजभद्रने १३१०—१० मन्थको (१३२०—१०

१०) यहाँ राजशामो स्थापित की। उस समयको को देखते १४२० मन्थमें (१४८० ई०) हुयेन माहने खामतापुर पश्चिमाय किया था। १२ वर्ष पश्चिमके पीछे नगर पश्चिम हुआ। सुतरां १४०० मन्थको (१४८६ ई०) हुयेन माहने प्रथम नगर पर पाहामच किया। उस समय भोजभद्रके पौर भोजभद्र खामतापुरके मिष्टमिष्ट पर पश्चिम थे। सुतरां भोजभद्रके समयसे भोजभद्रको राजकायक समानिसे मन्थ प्राय १५० १६० वर्ष व्यतीत हुये। फिर भोजभद्रवर्षमाय राजा-मोने प्रभोच क्पनाविच १२ वर्ष राजल किया। पूर्व-मारतके इतिहास-सिद्ध मिष्टर मनटगोमारी माटिंन साहबने इस कम्पन्थमें को ब्राह्मणके निटेंग को है, उससे काय इसका मन्थ नहीं। उनके कपनामुसार १४८६ ई०को (१४९० मन्थ) हुयेन माहने पौर १५२१ ई० को (१४४३ मन्थ) पन्थवहित परवर्ती भोजभद्र नगरत माहने राजावाराहक किया था। सुतरां हुयेन माहका राजलकाय २० वर्ष रहता है। २० वर्षसे नगरावरोचके १२ वर्ष (माटिंन साहब इसे नहीं मानते। वह इस बातको पतिमयोमिष्ट समन्थ कोड टैना बाहरी हैं। फिर वह स्वयं भी पश्चिमकायको कोई संस्था नहीं बताते।) निजाच कालने पर १२ वर्ष बचते हैं। फिर विष्टमिष्टके खामतापुरका पश्चिमाय करारुच दुर्लभके मतमें १४२० पौर १४३० मन्थके (१४८० पौर १५०० ई०) मन्थ का। मिष्टर माटिंनने विष्टमिष्टके खामतापुर पश्चिमाय को कोई बात नहीं कियो। वह कालकेपन्थके अनुसार हुयेन माहने शोय राजावाराहके कालसे (माटिंनके मतमें १४८६ ई० या १४९० मन्थ) प्राय ३० वर्ष पीछे (दुर्लभके मतमें १४०० मन्थ या १४०० ई०) खामता पुर पर पाहामच किया था। किन्तु माटिंनके मतसे उनके राजलकायका परिमाण केवल २० वर्ष था। फिर दुर्लभके मतसे खामतापुरका पाहामच-काल १४०० मन्थ या १४८६ ई० रहा। किन्तु माटिंनके मतसे वह समय (१४८६+१२) १५११ ई० (१४४३ मन्थ) था उससे दो-चार वर्ष पूर्व था। कारक दुर्लभके मतसे विष्टमिष्टके खामतापुरका

अधिकारकाल विवेचना करनेसे समझ पड़ता है कि कुछ दिन कामतापुरमें सुसलमानोंका अधिकार रहा।

कामतापुर नामका कारण क्या है? वुरुष्नीके मतसे तीनध्वज इसके स्थापयिता नहीं। किन्तु उनको द्वारा संस्कृत होनेसे इसका प्राचीन नाम मौजूद रहा। क्योंकि वुरुष्नी पटनेसे १२२० तकमें भी इसका नाम मिलता है। किन्तु इसके मूल स्थापयिताका नाम वुरुष्नीमें नहीं लिखा है। इस नगरमें शिष्टीमारीके तीरवर्ती गोसाईंनीमारी नामक स्थानपर कामतेश्वरी देवी हैं। अनेकोंके मतानुसार इन्हीं देवीके नाम पर नगरका नामकरण हुआ है। कामतापुरके दुर्गमें भग्नावशेषके विवरणस्थल पर कामतेश्वरी देवीका उल्लेख किया गया है। दुर्गमें उत्तरांशके बृहत् स्तूप पर इनके प्राचीन मन्दिरका भग्नावशेष है। इन देवीके मन्त्रमें एक प्रवाद है,—“प्रागज्योतिष्युराधिपति भगदत्तको शिवके घरसे एक कवच मिला था। महा-भारतके युद्धमें भगदत्तके मरने पर यह कवच इस्तिना-पुरमें ही रहा। शिवको उक्त नीलध्वजके पुत्र चक्र ध्वजने एक दिन स्वप्नमें देख और स्वप्ननिर्दिष्ट उपायसे कवच प्राहरण कर दुर्गके मध्य मन्दिर निर्माण पूर्वक स्थापन किया। उन्हें स्वप्नमें ही कवचकी पूजा-पद्धति और पध्दति देवीकी मूर्ति प्रवगत हुई थी। उन्होंने उसीके अनुसार देवीकी प्रतिमा बनवा उसके मध्य कवच रख दिया। पड़ले इसके निकट बलि होता था। अवशेषको सुसलमानोंके हाथ देवीकी प्रतिमा विनष्ट होने पर कवच एक पुष्करिणीमें छिप गया। उसके पीछे विश्वसिंह-वंशीय विहारके चतुर्थ राजा प्राण-नारायणके अधिकारकालमें भूना नामक एक धीवरने उस स्थान पर एक पुष्करिणीमें मत्स्य पकड़नेको जान डाला, जहाँ शिष्टीमारी नदीने नगरमें प्रवेश किया है। किन्तु यह जान इतना भारी समझ पड़ा कि किसी प्रकार उठ न सका। अवशेषको धीवरने राजाके निकट मन्वाद भेजा। राजा प्राणनारायण कवचका व्यापार जानते और उसके लिये उत्सुक भी थे। उक्त मन्वाद सुन वह उत्सुक हुए। उन्होंने ब्राह्मणोंसे परामर्श कर शायी पर चढ़ा एक ब्राह्मण भेजा था।

ब्राह्मणको वहाँ जाने पर डूबकी लगानेसे जानमें कवच मिला गया। उन्होंने इस्सखित एक रोगमी थेलीमें डाल उसे हाथीकी पीठ पर रखा और हाथीको उसकी इच्छाके अनुसार चलने दिया। हाथी शिष्टी-मारीके तीरसे जाने लगा। अवशेषको जहाँ नदीने प्राचीन नगरकी सोमाकी ढीला है, उसीके निकट गोसाईंनीमारी नामक स्थान पर वह खड़ा हो गया; फिर किसी प्रकार वहाँसे न हटा। ब्राह्मणोंने स्थिर किया कि देवी वहाँसे जाना चाहती न थीं। इसीसे राजाने वहाँ मन्दिर बनवा दिया। प्रथमतः विश्व-सिंहके आनीत वैदिक ब्राह्मणोंमें एक पूजक नियुक्त हुआ था। किन्तु देवीने स्वप्नमें मैथिली ब्राह्मणोंके मध्य पूजक नियुक्त करनेकी आज्ञा दी। कारण वही पड़ले देवीकी पूजा करते थे। इसी प्रकार एक मैथिली ब्राह्मण पूजक बनाये गये। कुछ दिन बीतने पर उन्होंने राजासे कहा—‘देवीके आज्ञासे हमें प्रत्यह रात्रिकी मन्दिरमें चतुर्वाधकर जाना पड़ता है। हम वहाँ तबला बजाते हैं। देवी एक सुन्दरीके वेशमें नग्न होकर ताल ताल पर नाचती हैं। किन्तु देवीके निषेधसे हमने उन्हें कभी इस प्रकार आखसे नहीं देखा।’ यह बात सुन राजाको कौतूहल उत्पन्न हुआ। वह उसी रात्रिकी मन्दिर जा दरवाजेकी सांससे झांकने लगे। देवी अन्तर्यामिनी हैं। उन्होंने राजाको देखते ही तृत्व बन्द कर शाप दिया,—‘अतःपर यदि वर्तमान नारायणवंशीय कोई राजा किसी दिन या रातको मन्दिरकी सीमामें आयेगा, तो उसी समय वह मर जायेगा। उस दिनसे आज तक उनके वंशीय मन्दिरकी सीमाके मध्य प्रवेश नहीं करते। किन्तु सेवाका प्रवन्ध लगा दिया जाता है। यह मन्दिर आज भी बना है। मन्दिर इष्टकनिर्मित है। गठनप्रणाली सुसलमानोंकी चालकी है। मन्दिरकी चारों ओर पुष्पोद्यान है। प्रतिमा नूतन है। निर्मित प्रतिमाके गर्भमें उक्त कवच रखा है। मन्दिरके मध्य एक प्रस्तरफलक पर वासुदेवकी मूर्ति उत्कीर्ण है। कथनानुसार यह प्रस्तरखण्ड प्राचीन नगरके भग्नाव-शेषसे मिलता है। प्रवादानुसार अर्थ पाने पर पूजक

यातिर्याकी प्रतिमाके गर्भसे कवच निकाल कर देखा देते हैं। किन्तु यह कार्य बहुत छिप कर किया जाता है।

कामतापुरके प्रधानबौद्धोंने पात्रबन्ध छुपावाय मासुबन्धा याबास बना है।

पार्शन पञ्चवारोमें मो कामतापुरका उत्प्रेष है। मार्टिन माइव माबदहके इष्टलिखित एक प्राचीन पुस्तक लाये थे। उसमें बतलियाका विवरण लिखा है। उसमें शैवानुसार नमस्त याचके पञ्चवर्जित पूर्ववर्ती बुद्धेन याचने कामतापुरैग्वर जपनादायचको मार समवा राख नीता। इरपभावावच सदा अण्णोमान् राजके पीठ पोर भासिवाङ्गराजके पुत्र थे।

कामताल (बं० पु०) कामं ताक्यति प्रतिष्ठापयति, काम तच् चिन्-पद्। कौशिक, कौयल।

कामतिथि (सं० श्लो०) कामञ्च पूजार्थं प्रयाष्टा तिथिः, मन्थपदमो०। तत्रोदयो निरम। इमौ तिथिको कामदेवकी पूजा करते हैं।

कामद (सं० त्रि०) कामं पमिनायं ददाति, काम दा-क। १ कामदाता, सुराद पूरो करनेवाला। (पु०) कामं अति कसोन्द्वेषेण पञ्चपञ्चयति कश्चैरैतद्व्यात् नामयति वा, काम अति-क। २ कार्तिकेय।

कामदगिरि (सं० पु०) चित्तकुट्ट पर्वत। निरुद्धेको। कामदमधि (सं० पु०) चिन्तामधि।

कामदमिनी (सं० श्लो०) कामञ्च दमाः अपयम-पन्थाज्जाः, काम दम-दमि। कामरिपुत्रो बभौमृत करनेवाली श्री, जो पीरत अपने आदिम दवा चको हा।

कामदगंथ (सं० त्रि०) कामं मनोर्द्धं इर्मनं यञ्च, बहुश्री०। सुन्दर, पञ्चसुरत।

कामदहन (सं० पु०) मित्र।

कामदा (सं० श्लो०) कामं यमोर्द्धं ददाति, काम दा-क-टाप्। १ कामवेतु। २ नागबन्धो कता, पान। ३ ब्रौतको, हर। ४ एक देवी। महिरावच इनें पूजता वा। ५ कन्दो विधि। इसमें दम पञ्चर रहते पीर काममुधार रतच यमच तथा कणच समते हैं।

कामदाती (सं० श्लो०) १ क्वत्रिम पुष्यादि, वेतुदा।

बह बादसेके तार या मनमिहितारसे बनती है। २ बह्मविधिप एक अपङ्गा। इसपर सकमिसितारैके पूज निवाधी करते हैं।

कामदार (सं० पु०) १ राध्यावबन्धकारो, रियासतका इतिवाम करनेवाला। राजपुताने पीर मानकेके राधोमें कामदार रहते हैं। (वि०) कानावत्के वैश बुटोवाला।

कामदोषकरस (सं० पु०) बाज्रीकरवका एक-पीपथ ताकतकी कोई दवा। श्वेतपुनर्नवाका मूत्र, मोच रस पारा पीर बन्धक करावर यात्राकीकी जानके रसमें मिलाकर गोशो बांधनेसे यह प्रभुत होता है। इसका नाम आष्ठाशिवयोग है। एक गोशो दो पक्ष वृषके साथ पानेसे बहुत बलवीर्य बढ़ता है। (रत्नराचर)

कामदुष्ट (सं० त्रि०) कामं होन्दि, काम-दुष्ट क इष्ट-क। यमोर्द्धलप्यादक सुराद पूरो करनेवाला।

कामदुष्टा (सं० श्लो०) कामं-दुष्ट टाप्। कामवेतु।

कामदुष्ट (सं० त्रि०) काम-दुष्ट शिप्। यमोर्द्धपद आदिम पूरो करनेवाला।

कामदुष्ट, कल्पनाईको।

कामदुष्ट (सं० त्रि०) काम-दुष्ट शिप्। यमोर्द्धपद आदिम पूरो करनेवाला।

कामदुष्टा (सं० श्लो०) मन्त्रयिज्ञा।

कामदुष्टि, कल्पनाईको।

कामदुष्टिका (सं० श्लो०) कामञ्च दूतिका इव उद्यो-पञ्चलात्। नामदन्ती, ज्योतिर्द्ध।

कामदुष्टी (सं० श्लो०) कामञ्च दूतीक, उपमित ममा०। १ मन्त्रयिज्ञा। २ पादकडक, परबलकी वैश। ३ कौशिक, कौयल।

कामदेव (बं० पु०) काम एव देव। १ कन्दप। इसका संकत नामान्तर—मदन, मन्थक, मार, प्रदुष, मोनकेतन, कन्दप, दपक, चणक, पञ्चमर, अर, यञ्चरारि, मन्त्रिन्, कुटुम्बेइ पनम्यक, पुष्यबन्धा रतिपति मन्त्राञ्जना पाममू, ब्रह्मत् पीर चिन्मकेतु है। यात्राकार कामदेवके पञ्चाप भेद बताते हैं,— १ काम, २ कामद ३ काम्य, ४ कार्तिकेय ५ कामन, ६ कामचर, ७ कामी, ८ कामच ९ कामवर्षक,

१० राम, ११ रम, १२ रमण, १३ रतिनाथ, १४ रति-
प्रिय, १५ रात्रिनाथ, १६ रमाकान्त, १७ रममाण,
१८ निशाचर, १९ नन्दक, २० मन्दन, २१ मन्दो,
२२ नन्दयिता, २३ पञ्चवाण, २४ रतिसख, २५ पुष्प-
घन्वा, २६ महाधनु, २७ भ्रामक, २८ भ्रमण,
२९ भ्रममाण, ३० भ्रम, ३१ भ्रान्त, ३२ भ्रामक,
३३ भृङ्ग, ३४ भ्रान्तचार, ३५ भ्रमावह, ३६ मोहन,
३७ मोहक, ३८ मोह, ३९ मोहवर्धन, ४० मदन,
४१ मन्मथ, ४२ मातङ्ग, ४३ भृङ्गनायक, ४४ गायन,
४५ गीतज्ञ, ४६ नर्तक, ४७ खेलक, ४८ उन्मत्तो-
न्मत्तक, ४९ विलास और ५० लोभवर्धन ।

निम्नलिखित कई स्थान कन्दर्पके माने गये हैं,—

“पादौ गुणके तयोरी च भगी नामी कुचे इदि ।

कचे कण्ठे च भोष्ठे च गण्ठे नेने श्रुतावपि ॥

ललाटे शीर्षकेषु कामस्याभं तिविक्रमात् ।

दन्ते पुंसां क्रिया यामे शल्लक्षणे विपर्यय ॥

पादाङ्गुष्ठे प्रतिपदि द्वितीयायाश्च गुणकैः ।

कन्दर्पे द्वितीयायां चतुर्थां भगदेशतः ॥

नामिस्थानि च पञ्चम्यां पञ्चमसु कुचमण्डले ।

सप्तम्यां हृदये चैव षष्ठ्यां कन्दर्पेशतः ॥

नवम्यां कण्ठदेशे च दशम्यां भोष्ठदेशतः ।

एकादश्यां गण्ठदेशे द्वादश्यां नयने तथा ॥

त्रयसे च त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां ललाटे क ।

पौरुषमास्यां शिखायाश्च ज्ञानमन्त्र इति क्रमात् ॥”

(अरटीपिका)

पदहय, गुल्फहय, ऊरुहय, भग, नाभि, कुचहय,
हृदय, कच, कण्ठ, भोष्ठ, गण्ठ, चक्षु, कर्ण, ललाट,
मस्तक और केशमें तिथिके अनुसार कामदेवका अचि-
ष्टान होता है । शूक्तपत्रमें पुरुषके दक्षिण अङ्ग एवं
स्त्रीके वाम अङ्ग और कण्यपत्रमें पुरुषके वाम अङ्ग तथा
स्त्रीके दक्षिण अङ्गके क्रमानुसार उक्त स्थान समूहका
विपर्यय पडता है । प्रतिपद तिथिको पदके अङ्गुष्ठ,
द्वितीयाको गुणफ, तृतीयाको ऊरुदेश, चतुर्थीको भग,
पञ्चमीको नाभि, षष्ठीको कुचमण्डल, सप्तमीको
हृदय, अष्टमीको कच, नवमीको कण्ठ, दशमीको
भोष्ठ, एकादशीको गण्ठ, द्वादशीको चक्षु, त्रयोदशीको
कर्ण, चतुर्दशीको ललाट और पूर्णिमाको मस्तकमें
कामदेव रहता है ।

कामदेवको ध्येयमूर्ति इस प्रकार कही है,—

“कामदेवस्तु कर्तव्यः शठपद्मविमूषकः ।

चापबाणकरयैव सदाकृषितलोचनः ॥

रति प्रीतिलयाग्निक्रिमायां तासद्योऽप्यया ।

चतस्रस्य कर्तव्याः पद्मो दपमनोहराः ॥

चत्वारय करालस्य क्षार्यां भार्यालनोपमाः ।

केतुष मकर, क्षार्याः पञ्चबाणसुखो मदान् ॥”

(ईमाद्रिष्टत विन्दुधर्मोत्तर)

कामदेव शङ्ख, पद्म, धनुः और वाण धारण करते
हैं । मटकके कारण चक्षु ईपत् कुक्षित है । केतु मकर
है । पञ्च बाण हैं । रति, प्रीति, शक्ति और उज्वलता
मात्री चार स्त्री हैं ।

वेदमें कामकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कहा है,—

“कामो जग्रे प्रथमो नोनं देवा पापु ।” (ऋक्. १०।१२।४)

सर्वप्रथम मनके ऊपर कामका भाविर्भाव पाता
है । सुतरां उसीसे पहले उत्पत्तिका कारण
निकला है ।

कालिकापुराणमें भी लिखा है,—

ब्रह्माने दत्त प्रसृति मानस पुत्रोंकी सृष्टि की थी ।
उसी समय सन्ध्या नाम्नी एक रूपवती कन्याभी उत्पन्न
हुयी । उस मनोरम कन्याको देख ब्रह्माके हृदयमें
चिन्ता उठी—‘यह जगत्का कौन कार्य करेगी ।’ इसीसे
परम रमणीय मूर्ति कामदेवका जन्म हुआ । ब्रह्माने
उन्हें जगत्के नरनारीसमूहकी सुगंध करनेके लिये
आदेश दे पुष्पधनुः और पुष्पशर प्रदान किया । काम-
देवने यह देखना चाहा कि उस पुष्पवाण द्वारा कार्य
सिद्धि होगी या नहीं । इसीसे उन्होंने परीक्षाके लिये
समीपस्थ ब्रह्मा, दत्तादि ऋषि और सन्ध्या पर वाष्पा-
घात किया । उससे सकल कामपीडित हो गये ।
उसी समय महादेव वहा जा पहुँचे । उन्होंने कन्याके
प्रति ब्रह्माका कामभाव देख उपहास किया था ।
ब्रह्माने उस उपहाससे अत्यन्त लज्जित हो कामका वेग
रोका । फिर उन्होंने कामको अत्यन्त क्रुद्ध हो अभि-
शाप दिया था—तू हरके कोपाननसे जल जावेगा ।
कामदेवने अकारण इस प्रकार अभिशाप हो ब्रह्मासे
अनुपहकी प्रार्थना की । उस समय ब्रह्माने मो काम-
देवका वैसा अपराध न देख यह कह कर भाग्यस्त

ब्रिया कि वह फिर धरार पायिया पीर दृष्यौ देह-
जात रति मान्नी सुन्दरी रमनीयो कामदेवकी पत्नी
बना दिया। (बर्णनपुराण १५)

इधर धर्मरा यह सोच पत्रकृत दुःखित हृयों कि
पिता तथा धाता उन्हें बाइती से पीर धपना दृषित
देह कोइनीको तपस्या करनी लगी। कठोर तपस्यासे
प्रीत हो मगवान्नी उनसे कर भांगनेको कहा। धर्म्याने
प्रथमतः पत्नी कोई कर न मांग यशो बाबा या कि
प्राची उपजते ही सकाम न हों। मयवान्नी उनको
इस प्रार्थनासे अनुसार योग्य, बौमार, योवन एवं
बाचंश्व चार भायमें बचकम बट हतीय भाग धर्मात्
योवनका कामात्यन्तके काचकपमें निहेंय ब्रिया
पीर बौमारका शिव समय मो लछोके भीतर लमा
दिया। (बर्णनपुराण १८५) इसीसे प्राचिवीके उत्पन्न
होति हो काममात्र प्रभावित नहीं होता।

देव तारकासुरके उत्पोजनके पत्रकृत व्यतिव्यस्त
हूये से। लखी समय रन्द्रके पादेगसे कामदेवको
मिथका ध्यान मङ्ग करनी जाना पीर कुछ दिनके बिये
पङ्कजोन होना पड़ा। मिथपुराणमें इसको पाप्मा-
विद्या इस प्रकार बर्णित है—“महादेवो हतोने
दृष्ये यज्ञमें देह कोइ। वा। लखे पीछे महादेव
कठोर बिसिन्द्रियता भवकम्बनपुत्रक महायोगमें
निमग्न हूये। लखी समय तारकासुरके देवधर्मके
प्रति पत्रकृत उत्पोजन पारम्भ ब्रिया। देव व्यतिव्यस्त
को लखे बचसाधनका लपाय लोचनी लनी। रन्द्रादि
देवगणके लखे कोई लपाय नियय न कर लखने पर
ब्रह्मासे परामर्श मांमा बा। ब्रह्माने लखे कहा—
‘महादेवके शीर्ष व्यतीत तारकासुरका निघन न होगा।
मङ्कजरी लती विमालयके यज्ञमें पुनर्बन्ध से महादेव-
की लुम्बिकाको सर्वदा लखे निबट रहो है। इस
कमय महादेवका योग तोइ लखी पावतीके प्रति
पमिलायो कर लखने पर महादेवके पीरलसे महावीर
कुमार लखपहल कर तारकासुरका निघनसाधन
करे। देवगणके लखी परामर्शके अनुसार कामदेवको
महादेवका ध्यान कुङ्गामें पर नियुक्त ब्रिया वा। पात्रा
पावै हो कामदेव रति एवं बचनके काच पमियाय

पुत्रक महादेवका योग तोइनी पङ्कजे पीर पुत्रकतः पर
पुत्रकाय लड़ा महादेवको मन्धकर फेंकने लगी। महा
देवने कल्पवृषाचसे पाइत होति हो लोचके पाय लन
पर धपनी इति लखी थी। फिर महादेवके लकाउसे
प्रदीत पत्रिमियाने निबट कल्पमूर्तिको बिसङ्कल
लका दिया।” दूसरे लखने कामदेव हो लोचकसे पुत्र
प्रयुक्तकपसे पाविभूत हूये। हरिवंशमें कामदेवके
कल्पका बिवरण इस प्रकार बर्णित है—“श्रीकृष्णक
पीरध पीर ब्रिमिथोके गर्भसे प्रयुक्तका लख हुआ बा।
लखके पीछे सातवों रातको धर्मरासुरने मायाके बल
लखे धृतिबाध्यइसे हरथ लर लीय लखी मायावतीको
दे दिया। मायावतीके कोई मिय न या। बह
प्रयुक्तको पा कर पत्रकृत पाइकादित हूयी। फिर
मियके पङ्कप्रत्यङ्ग पादि बियेय कपसे लख्य कर माया
वतीने धमभा कि लखी मिय लनका मियतम कामी
कल्पं था। लनको यह ली करण पाया कि लखे
लोपालकसे लखनेके पीछे देवकलने बेथे हो लखे पुनर्वीर
पतिको प्रातिक्षा बियय बतला दिया वा। लुतरा बह
सावकत् मियका पालन न लर लखी। लखने लखीके
शाय लसे लोपा या। फिर रसायन पादिके प्रयोगसे
लखर बर्णित कर मायावती लखे मिक्त गर्वी।
प्रयुक्त ली वेण्णक पत्रकसे धर्मरासुरको मार लखीके
साय पिच्छक लीट पाये। लखनेको धर्मरासुरकी
लखी लोते लो बसुत मायावती लखको लखी न थीं।
कल्पंको लखी रति पुनर्वीर पतिप्रासिक्तो कामनासे
देवगणके पाइेश्यानुसार मायावकसे धर्मरासुरको
लखी बन कर रहती थीं।” (हरिवंश ११५५)

महाभारत पीर विष्णुपुराणमें कामदेव बर्णने पुत्र
माने गये हैं,—

“यदा लखं यदा रतिं विरलं हरिपत्रकम् ।
बर्णनक लता दुर्लभं इतिरुत्तरम् ।
येन लुं विद्यावर्धं लवं विनलनेन न ।
तेन इति लका लका विरलं युत्तरकम् ।
लखलन लखने न लें लं प्रलनलकम् ।
इलं विरिन्ध लरिपत्रिके लरिन्धकम् ।”

(हरिवंश, १५१८-१५२०)

दिएर धर्मपत्रिकोंके मन्ध लखाने काम, लखाने इय,

वृत्तिने नियम, तुष्टिने सन्तोष, पृष्टिने लोभ, सिधाने अत, क्रियाने दण्ड, नय एवं द्विनय, वपुने व्यवसाय, शान्तिने अम, सिद्धिने सुख और कीर्तिने यशः नामक पुत्र प्रसव किया। यह सभी धर्मके पुत्र कहनाते हैं।

भागवतके मतसे कामदेव ब्रह्माके पुत्र है,—

“इदि कानो मुखा. क्षोभो भोमदापोऽपश्यदात्।”

ब्रह्माके हृदयसे काम, भ्रू हृदयसे क्रोध और अध-रोष्ठसे लोभकी उत्पत्ति हुयी है।

भागवतके ही अन्वयमें फिर कामदेवकी सद्-स्यका पुत्र कहा है,—

“मदकायासु मह्यः याम उदन्तः सुतः।” (भागवत १।१।१०)

ब्रह्माकी कन्या महत्याके पुत्र सद्स्य है। सद्स्यसे ही कामकी उत्पत्ति हुयी है।

यजुर्वेदमें भी कामका उल्लेख मिलता है। उसमें कामकी ही दाता और श्रुहीता माना है,—

“कीदात् रुथा पदात् कामीदात् कामायादात्।

कानो दाता कामः प्रविशतीता दानेते ॥” (यजुः यजुः ५।४८)

यह प्रश्न होने पर कि—किसने दान किया और किसको दान दिया है, उत्तर होगा कि कामने दान किया और कामकी ही दाता दिया है। क्योंकि काम ही दाता और काम ही प्रतिश्रुहीता है। अतएव ही काम। यह द्रव्य तुम्हारा ही है।

२ गोपकपुरीके एक राजा कदम्बरराज। इनकी महिषीका नाम केतलादेवी था। यह विख्यात वीर थे। इन्होंने बाहुके हल मलय, कोदण और मद्गाद्रि जाता था। शिनालीखुके अनुसार कामदेवने ११८१ ई० से १२०४ ई० तक राजत्व किया। ३ मह-नारायणके पुत्र। महाराजके शिष्य। ४ परमेस्वर। ५ महादेव। ६ कोई कवि। ७ कोई राजा। इनकी राजधानी जयन्तीपुरमें थी। यह “राघवपाण्डवीय” प्रणेता कथिराज नामक कविके प्रतिपासक थे। ८ प्रायश्चित्त-पद्धति नामक स्मृतिग्रन्थके प्रणेता।

९ “सत्सुख्यसुहावन्तो” प्रणेता रघुनाथके प्रति-पासक।

१० “चतुर्वर्गचिन्तामणि” प्रणेता हैमाद्रिके पिता। इनके पिताका नाम वासुदेव और पितामहका नाम कामन था।

११ कोई प्राचीन ज्योतिर्वित्।

१२ “कर्मप्रदीपिका” “पारस्करपद्धति” “पारस्कर-गृह्यपरिशिष्टपद्धति” प्रकृति ग्रंथ बनानेवाले। इनके पिताका नाम गोपान था।

कामदेव कवियक्षम—चण्डीके एक प्राचीन टीकाकार। कामदेववृत्त (सं० लो०) वृत्तविशेष, एक ही। अग्र-गन्था १०० पद्य, गोक्षुर ५० पद्य और गतावरी, मृत्ति-कुष्माण्ड, शालपर्णी, वना, गुलेचीन, अमृत्यकी शशा, पद्मबीज, पुनर्नया, गाम्भारीफल तथा मापबीज प्रत्येक दश दश पद्य २५६ गरावक जनमें पका कर ६४ गरावक जन गेय रहनेसे उतार कर ज्ञान लेना चाहिये। फिर पुण्ड्रकेक्षुरम १६ गरावक, दुग्ध १६ गरावक, और जीवक, ऋषभक, मेढा, महामेदा, काकाची, घोरकाकीनी, लीवन्तो, मधुक, ऋषि, हृदि, द्राचा, पद्मकाष्ठ, कुष्ठ, पिप्पली रहस्यन्दन, वानक, नागकेशर, शुक्रशिवोवीज, नीलोत्पल, श्यामा तथा अनन्तमूलका कलन दो-दो तोना एव यर्करा २ पल उह्र कावमें डाल यह वृत्त ययारीति पकाते और बनाते हैं। इसको व्यवहार करनेसे रक्तपित्त, घत, कामला, यातरक्त, हन्नीमक, पाण्डु, विषणता, चरमेद, सूत्रकृच्छ, पक्षादाह और पाण्डुगूल आदि रोग निवारित होते हैं (पुत्रदण)

कामदेव मीमांसक (दीक्षित)—‘प्रायश्चित्तपद्धतिके प्रणेता।

कामदोही (सं० त्रि०) कामं दोग्धि, काम-दुह-णिनि। अमीष्टप्रद, सुराट पुरी करनेवाला।

कामधर (सं० पु०) काम इति संज्ञां धरति धारयति वा, काम-ध-प्रच्। कामरूपदेशीय मत्स्यध्वज नामक पर्वतस्थित सरोवरविशेष, एक तामाव। यह सरोवर एक तीर्थ माना गया है। इसमें स्नान और जलपान करने पर मनुदाय पापसे छूट मुक्ति पाते और शिवलोक जाते हैं। (कश्मिरपुराण)

कामधरण (सं० लो०) अभिवापप्राप्ति, सुरादका उच्छ्र।

कामधेनु (सं० स्त्री०) कामप्रतिपादिका धेनुः,

सम्बन्धितोपयोगी कर्मका० । गो विधि, एक मास । इस मासमें इच्छासुखार को बन्धु मानिये, वही पावे है ।

अग्निपुराणमें कामधेनुका दान महापुण्य माना गया है । दानविधि परमो इत्थं इस प्रकार लिखा है—'कार्तिक मासको शुक्ल एकादशको उपवास कर चार दिन तक जन्मीके साथ नारायणकी पूजा करना पड़ती है । फिर पञ्चम दिन प्रातःकाल ज्ञानकर शुक्ल वस्त्र, शुक्ल माख और शुक्ल धनुसेपल धारण करती है । दानकी मूमिको मन्त्री कर्म, तिष्ठके प्रश्न और कर्म पादिसे यथा सक्त्वा कामधेनु बर्हा बायो जाती है । धेनुके मुह और कुर कर्णके मद्दा समस्त मानस शुक्ल वस्त्र धरित देते हैं । धनकार कर्माणि मन्त्रादिसे गायत्री पूज नारायणकी इष्टेय दान होता है ।'

२ दानके विषये कर्मनिर्णित धेनुविधये, देनिको योगको माय ।

दान-सागरमें कर्मनिर्मित कामधेनुके दानका विधि लिखा है,—'शुद्धिसे अनुष्ठान तीन पक्षके पश्चिम सप्तम्यक तक कर्म द्वारा सक्त्वा कामधेनु बना रखये विमूयित करना चाहिये । सप्तम्यक उत्कृष्ट, पाँच ओ पक्ष मध्यम और छह ओ पक्ष दुर्बल पञ्चम विधि है । पञ्चम्यक पक्षमयके विषये तीन पक्षके पश्चिम दुर्बलका मो विधान है । तुलाशुभ्य कश्चित समयके मध्य किसी दिन दानका काव निर्दिष्ट कर उसके पूर्व दिन शुभ, पुरोहित, यज्ञमान और ज्ञापक चारो लोग इषिक-भोजनदि कर निवेदन एवं सङ्कल्प कर रखते हैं । दूसरे दिन यज्ञमानको नोक्त्वादिकी धाराचना, महापुण्यका दान और ब्राह्मणोंको अनुमतिका पत्र बनना चाहिये । उसी दिन शुभ, पुरोहित और ज्ञापकको उपवास करना पड़ता है । उसके परदिन अग्निस्त्रयणादि कार्य समापनपूर्वक पुरोहित प्रथम शीशके सम्बन्धनमें विहित वस्त्र पर मन्त्रकर्म एवं शुभ्रस्रज यथाशक्त स्थापन कर उसके उपर कोपिय वस्त्रद्वारा पाण्यादित सक्त्वा धेनुको बद्धा करते हैं । धेनुके पाशदेममें पाठ पूर्व शुभ, यथाशक्त प्रकार बान्ध, नामादि प्रश्न, रत्न, इष्टदण्ड, कर्तपत्र, पञ्चपत्र, ताम्रनिर्मित दोहनपात्र, मदीय, चातपत्र तथा

पातुकाद्य और धेनुके सम्बन्धभागमें मनुवादि ब्रह्मरथ, हरिक्रा, सुष्य आदि विविध पूजा द्रव्य औरक, बान्धक एवं मन्त्रों रखते हैं । फिर महापुण्योत वाय तथा कृतिपाठके साथ वज्रकुण्डके समीपक चार कुण्डके एक द्वारा यज्ञमानको ध्यान कराया जाता है । ज्ञानके पन्थमें यज्ञमान शुक्ल वस्त्र परिधान कर शुक्ल माख एवं विविध धनधारधारपूर्वक सुगन्धद्रव्ये पुष्पाद्युक्ति से कामधेनुको प्रदक्षिणपूर्वक पूज गुरुकी प्रदान करता है । परिशेषमें शुभ पुरोहित और याचकको इच्छिया तथा पतिति ब्राह्मणकी पर्ये दे दानका व्रत समापन करना पड़ता है ।'

३ कर्मधेनु सुरमिको एक दोषिका धेनु । ईशको अत्यधिक विचरक इस प्रकार लिखा है—'गालमुह को पादिप्रसूति सुरमि द्रव्यको बन्धा यों । प्रजापति काम्यके औरसके लगे गममें रोहिणीका जय हुआ । रोहिणीमें ही तपोनिधि शूरसेन नामक बन्धुके औरसके सर्वलक्षणसम्पन्ना कामधेनुको प्रसव किया था । कामधेनुका वर्ष श्रेय है । अतुष्टेय अतुष्टयकरूप है । चारो स्थानोंके कर्म, सर्व काम और मोक्ष निश्चया करती है । शिवके बाहन इत्थने कामधेनुके गममें ही लब्ध किया था । योगमें कामधेनुको साधकको पश्चिमतरे बढ़ो । एषोषे कोही कालुक धैतात लगेको ईश कामातुर हुआ और शर्व इषकी मूर्ति बना लगेके साथ भोग किया । इस अङ्गमके पञ्चके एक विद्याक काय इव निश्चया था । उसने यमको तज्जाले बल महादेवका बाहनत्व प्राप्त किया ।'

(अग्निपुराण ६१ पं०)

४ कामधेनुको कुलजाता लक्ष्मीका धनका नात्री बन्धिका एक धेनु । कामधेनुके किये ही बन्धिके साथ विश्वामित्रका मर्यादर विवाद कटाका । उसी विवादके पक्षमें विश्वामित्रने अतिव्रतानि जोसे मी ब्रह्मर्षि बननेका विषये ल्योग किया । रामायणमें लिखा है—'विश्वो यमक राका विश्वामित्रने बद्ध सेन एवं यमात्म परिवार प्रथतिके साथ बन्धिके अतिव्रत निश्चय पालिय पत्रक किया था । बन्धिके कामधेनुके चकल क्तमोक्षम प्रसुर इत्यादि से लगेका धनार कटाया ।

विश्वामित्र राजा होते भी उक्त समस्त द्रव्य देण चमत्कृत हुये। उन्होंने देखा कि कामधेनुसे वैसा असाधारण ऐश्वर्य भोग किया जा सकता था। इसीसे विश्वामित्रने शत महस्र दुग्धवती गावोंके ददसे वगिष्ठसे कामधेनु मांगी। किन्तु वगिष्ठने धेनु देना स्वीकार न किया। उस समय विश्वामित्रने हरण करनेके लिये सैन्यको आदेश दिया था। सैन्यने कामधेनुको खोल ले जानिका उद्योग किया। नन्दिनी यह सोच कर अत्यन्त दुःखित हुई कि वगिष्ठने उनको छोड़ दिया था। फिर वह अपने बन्धुम वहु सैन्यको मार वगिष्ठके निकट आ पहुँचों। उन्होंने वगिष्ठसे पूछा था,—‘आपने क्या हमें परित्याग किया है? नतुवा विश्वामित्रके सिपाही हमें क्यों लिये जाते हैं?’ वगिष्ठने उत्तर दिया, ‘नहीं हमने तुम्हें परित्याग नहीं किया है। तथा फिर हम कभी तुम्हें परित्याग न करेंगे। अतएव तुम शत शत महाधैर सैन्य नृष्टि कर विश्वामित्रको पराजित करो।’ वगिष्ठकी आज्ञा पाते ही नन्दिनीने योनिदेशसे यवन, पुरीषसे शक और रोमकूपसे न्हेच्छ, क्षारीत तथा किरात सैन्य निकाले थे। उन्होंने विश्वामित्रको समुदाय सैन्यका विनाश कर पराजित किया। विश्वामित्रके पुत्र इससे बहुत क्रुद्ध हुये और (एकवारगी ही सौ पुत्र) वगिष्ठके ऊपर झपट पड़े। वगिष्ठने क्रोधके साथ एक ही हृद्धारसे उनकी जन्मा शान्ता। इस अपमानके पीछे विश्वामित्रने राजगण्डकी अपेक्षा तपस्याकी गण्डकी बड़ा माना था। वह राजकार्य छोड़ कठोर तपस्यामें लग गये। उसी तपस्याके फलसे उन्होंने ब्रह्मर्षिकी भांति चमतागान्धी वन ब्रह्मर्षि नाम पाया था।

(रामायण, अरण्य, ५१ च०)

कामधेनुतन्त्र (सं० क्ली०) कामधेनुरिव सर्वाभीष्टप्रदं तन्त्रम्। शिवप्रोक्त एक तन्त्र।

कामधेन्वी—रामात वा निमात सम्प्रदायमुख वैष्णव। इनमें अधिकांश भिक्षुक रहते हैं। कामधेनु नामक मित्रायन्त्र व्यवहार करनेसे ही कामधेन्वी नाम पड़ा। कामधेनुयन्त्र वैगीर्षी भांति होता है। उसकी दोनों और दो रखते बनी रहते हैं। एक औरका तख्ता

गायके आकारका होता है। दूसरी औरके तख्तेमें धनुमान्की मूर्ति रहती है। यह जोग सुबेरे और शाम दोनों समय उक्त यन्त्रकी पूजा तथा भारती करते हैं। कामधेन्वी कामधेनुयन्त्र कन्धे पर रख मित्रा मांगने निकलते हैं। यह किसीके द्वार पर खड़े नहीं रहते, ‘धनुषधारी राम धनुषधारी राम, कहते राह राह घूमा करते हैं। गृही यह नाम सुन इच्छानुसार कामधेनुपात्रमें मित्रा डाल देते हैं।

कामध्वंसी (सं० पु०) कामं कन्दर्पं ध्वंसयति, काम-ध्वन्स्-णिच्-णिनि। कामको ध्वंस करनेवाले शिष्य। कामवज्र (सं० पु०) मत्स्य, मछली। कामदेवकी पताका मछली है।

कामन (सं० त्रि०) कामयतीति, काम-ण्डि-युच्। १ कासुक, चाहनेवाला। (क्ली०) भावे युच्। २ अभिलाष, खाहिश।

कामना (सं० स्त्री०) कामन-टाप्। १ इच्छा, खाहिश। २ वन्दाक, वांदा।

कामनाशक (सं० पु०) कामं कन्दर्पं नाशयति, काम-नश-णिच्-णुल्। १ महादेश। (त्रि०) २ कामशक्तिनाशक।

कामनीडा (सं० स्त्री०) कन्दूरिका, सुरक।

कामनीयक (सं० क्ली०) कमनीयस्य भावः, कमनीय-बुच्। रमणीयता, खूबसूरती।

कामन्दकि (सं० पु०) कमन्दकस्य अपत्यं पुमान्, कमन्दक-इच्। एक नीतिशास्त्र-प्रणेता। इनके वनाये ग्रन्थका नाम कामन्दकीय नीतिशास्त्र है। वह १८ अध्यायमें विभक्त और महाभारतकी भांति प्राचीनकाल-रचित है। बहुत पहले उक्त नीतिशास्त्र वालि प्रसूति हीपमें नीति बना था। वहां महा-भारतको भांति वह कविभाषामें अनुवादित भी हुवा। उसके यवहीप पहुँचनेका समय निर्धारित नहीं। कोई अनुमान करता, कि महाभारतके ही समकाल वह भी पहुँचा होगा। महाभारत देखो। उसकी चार टीका मिलती हैं। एक टीकाका नाम उपाध्याय-निरपेक्ष है। बाकी तीनमें एक जयराम, दूसरी भास्कराराम और तीसरी वरदारामकी बनायी है।

कामन्दकीय (सं० श्लो०) कामन्दकीरिदम् कामन्दकीयः । अथः । ४० । १ । ११० । कामन्दकीयप्रथोत एक गीतिमात्रः ।

कामन्द्यो (सं० पु०) कामं यथेष्टं वसति, काम या विनि बाह्यकथात् कामदेयः निवातनात् सुमि साह । कौष्यकार, कथेरा ।

कामपति (सं० श्लो०) कामं पतिपंक्षा, विचल्य त्वात् न डीय् । १ रति, कामदेवको श्लो (पु०) २ इन्द्रवज्रयौ युयुक्लुमजात एक राक्षसुय । इन्होंने पुष्येष्टि याग किया था । (बभ्रुवच १ । २ । ११)

कामपत्नी (सं० श्लो०) कामस्य पत्नी, इत्यत् । रति, कामदेवको श्लो ।

कामपरिचय, कथनो ईको ।

कामपर्षी (सं० श्लो०) पाण्डुपुत्र, एक पौत्र ।

कामपात्र (सं० पु०) कामान् पात्रवति, काम पात्र पत्र । १ इन्द्रदेव । २ विष्णु ।

“कथं च कामपात्रं कथं च कामं प्रथमम्” (विचरवकथन) १ महादेव । ३ इन्द्रवज्रयौ इन्द्रमप्यत्र राज्ञेयं पुत्र । इन्होंने पुत्रका नाम लक्षित था । (बभ्रुवच १ । २ । ११) २ पक्षीरा देवीमन्त्र गौतम कुलत्र अनयासर्वयथे एक राजा । (बभ्रुवच १ । १११ (१०) ६ कुमारिकामत्र इन्द्रपत्र कुलत्र दत्तराक्षे पुत्र । इन्होंने पुत्रका नाम कुहमन था । (बभ्रुवच १ । १११ (१०) ७ महाराजपुत्र, एक कठिया पाम ।

कामपेठ (सं० पु०—श्लो०) क्षुपादिभिः उपरिभागका वृक्षप्रान, कुर्वेति उपर वशी ह्यो अगव ।

कामपौहित (सं० श्लो०) कामिन कन्दर्पपौत्र्या पौहित, १ तत् । कश्मिष्ठुच महकतकी आह्विय रखनेवाला ।

कामपूर (सं० श्लो०) कामं यथेष्टं पूरयति, काम पूर विष्-पत्र् । १ यमोदप्रद सुराद पूरी करनेवाला । २ परमेश्वर ।

कामप (सं० श्लो०) कामं विपतिं कामं हृत् । यमोदप्रद, आह्विय पूरी करनेवाला ।

कामपद (सं० पु०) कामं कामकरतिभेदं पददति, काम प्र-दा क । १ रतिवन्द्यद्विध, एक श्लोका ।

“ये वती कथं वती विष्णुर्वदं श्री देवा । कथं वती कथं वती कथं वती विष्णुः” (बभ्रुवच)

कामाणां सर्वपुत्रपार्श्वार्थं प्रदः १ तत् । २ विष्णु । (श्लो०) १ यमोदप्रद, सुराद पूरी करनेवाला ।

कामप्रवेदन (सं० श्लो०) कामस्य पत्रिवापत्र प्रवेदनं आभिस्वरचम्, इत्यत् । पत्रिवापत्र प्रथम, आह्वियका इन्द्रवारः ।

कामपत्र (सं० पु०) कामं यथेष्टं प्रथः । यथेष्ट प्रथ, मनमाना सवाल ।

कामपत्र (सं० पु० श्लो०) कामस्य कामगिरिः प्रथः, (अन्वयः कामस्य) आदिर्षं उदात्तः, इत्यत् । १ कामगिरिका समुदेय, काम पहाड़को जैश्वे इमवार जमोन् । २ एक नगर ।

कामप्रणीय (सं० श्लो०) कामस्य मयः, कामप्रकाश । कामगिरिके समुदेयमे इत्यत्र, काम पहाड़को जैश्वे इमवार जमोन्का पेडा ।

कामपि (सं० श्लो०) काम विपतिं, काम पृ वि । यमोदप्रथ आह्विय पूरे करनेवाला ।

कामप्रियवरो (सं० श्लो०) कथंगम्भा, पक्षीगं ।

कामपत्र (सं० पु०) कामं यथेष्टं पत्रमपत्र, बहुश्लो० । महाराजपत्र, एक कठिया पाम ।

कामपत्रम्—बादपत्र पालसगौरिसे कनिष्ठ पुत्र । यह माहकादे बड़े यमिमानी घोर निर्दय रक्षि । इनके पिताने इन्हें दक्षिणका राज्य दिया था । किन्तु इन्होंने ज्येष्ठ भ्राता महापुर माहका सर्वत्रप जीवार न किया घोर पयने नामका लिहा बना दिया । इसीसे यह एक बड़ो शैना छि इन्होंने बड़ने चली । ईदरायादके निष्कट सुत्र हुआ था । सुत्रमें यह चार गये । चार रूपसे चाहत होम पर १००० ई० के परवरी या मार्च मास इनका प्राच हुआ था । इनको माताका नाम कदवपुरी-महक रहा । १६६० ई० को २३वें पर वरीको कामपत्रम् माहकादेने कथ लिखा था ।

कामम् (सं० पद्य०) काम-चिदं पत्रु । १ यथेष्ट, मन्त्रोके सुपात्रिक । २ पशुमतिथे, मञ्जरीके काव ।

१ कश्मिष्ठुच, धूमोषि । ३ पञ्चा, बहुत पत्रु । ४ माता, हुआ । ५ निःपत्रे इ, शैयक ।

काममञ्जरी (सं० श्लो०) कश्मिष्ठुचोत दमकुमार-चरितको एक गाथिका ।

काममय (सं० त्रि०) कामस्य विकारः, काम-मयत् । मयत्त्वे तयोर्भावाया समवायात्प्रत्यययोः । पा ४।१।१५३ । कामविकार, खाद्विशये भरा हुवा ।

काममर्दन (सं० पु०) कामं कन्दर्पं मर्दयति नाशयति, काम-मृद्-ल्य् । कामको मर्दन करनेवाले महादेव । काममलोलुप (सं० पु०) सद्वैद्य, अच्छा हकीम ।

काममलोलुभ, काममलोलुप देखो ।

काममह (सं० पु०) कामस्य मह उत्सवो यत्र, बहुव्री० । कामदेवके उद्देश्य उत्सवका दिन । चैत्री पूर्णिमा इस उत्सवका निर्दिष्ट समय है ।

काममालिका (सं० स्त्री०) मद्यविशेष, एक शराव ।

काममाली (सं० पु०) गणेश ।

काममूद्रा (सं० स्त्री०) तन्त्रशास्त्रीक एक मुद्रा ।

काममूढ (सं० त्रि०) कामिन मूढः, इ-तत् । कामकी पीडासे हित और अहितकी विवेचना न रखनेवाला, जो शहवतके जोरसे अन्धा बन गया हो ।

काममूत (वै० त्रि०) कामिन मूतः मूर्च्छितः, काम-मव-क्त छान्दसत्वात् इट् अभावः जट्च । १ काममूर्च्छित, शहवतसे गूश खाये हुवा । २ अत्यन्त कामपीडित, शहवतके जोरसे बड़ी तकलीफ पाये हुवा ।

काममोदी (सं० स्त्री०) कस्तूरी, मुशक ।

काममोहित (सं० त्रि०) कामिन कामजरत्या मोहितः, इ-तत् । १ कामकी पीडासे हित और अहितका ज्ञान न रखनेवाला, शहवतके जोरसे अन्धा बना हुवा । २ सुरतासक्त, शहवत-परस्त ।

“मा निपाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।

यत् क्रीडामिषु गार्दिकमवधोः काममोहितम् ॥” (रामायण)

कामयमान (सं० त्रि०) काम-ण्डि-शानच् । कामुक, खाद्विशमन्द ।

कामयान (सं० त्रि०) काम-ण्डि-शानच् सुगभावः आगमशास्त्रस्य अमित्यत्वात् । कामुक, खाद्विशमन्द ।

कामायाना (सं० स्त्री०) गर्भिणी, हामिसा, जिसके पेटमें लड़का रहै ।

कामयाव (फा० वि०) सफल, नतीजा पाये हुवा ।

कामयावी (फा० स्त्री०) सफलता, मकसदवरी, बालबाला ।

कामयिता (सं० त्रि०) कामयते, कम-ण्डि-ल्य् । कामुक, चाहनेवाला ।

कामरस (सं० पु०) कामः कामजरत्यादिरिव रसः । सुरतादि, शहवत वगेरह ।

कामरसिक (सं० त्रि०) कामे कामजरत्यादौ रसिकः सुनिपुणः, उ-तत् । सुरतादि विषयमें सुनिपुण, शहवतपरस्त ।

कामराज—१ कालिकाभक्त कौण्डिन्य सुनिकुलोद्भव श्रीधरराजके पुत्र । इनके पुत्र मातुल थे । (वज्राद्रिखण्ड १।१।१।२) २ केशव-दीपिका-प्रणेता हिमाद्रिके प्रति-पालक । ३ गोपालचम्पू-प्रणेता जीवराजके पितामह । इनके पुत्र अर्थात् जीवराजके पिताका नाम ब्रजराज था । फिर इनके पिताको श्यामराज कहते थे ।

कामराज दीक्षित—काव्येन्दुप्रकाश, शृङ्गारकालिकाकाव्य प्रसृतिके प्रणेता ।

कामरान् मिर्जा—बादशाह वाबर शाहके २य पुत्र और बादशाह हुमायूँके भ्राता । १५३० ई० को सिंहा-सनारूढ़ होने पर हुमायूँने इन्हें काबुल, कन्दहार, गजनी और पञ्जाबका राज्य सौंपा था । किन्तु १५५३ ई० को काबुलमें हुमायूँने इनकी आंखें नश्वरसे छेदवा कर निकलवा लीं । कारण इन्होंने राज्यका प्रबन्ध बिगाड़ बड़ा गडबड़ किया था । आंखोंमें नीबूका रस और नमक पड़ते समय इन्होंने कहा— ‘हे परमेश्वर ! मैंने इस संसारमें जो पाप कामया, उसका यथेष्ट फल पाया है । अब परलोकमें मेरे ऊपर कृपादृष्टि रखिये ।’ अन्तमें इन्हें मक्के जानेको आज्ञा मिली थी । वहाँ यह तीन वर्ष रहै और १५५६ ई० को अपनी मौत मरे । इनके तीन कन्या और अबुल कासिम मिर्जा नामक एक पुत्र चार सन्तान रहै । १५६५ ई० को अकबरकी आज्ञासे अबुल कासिम मिर्जा खालियरके किलेमें कैद किये और मारे गये ।

कामरिपु (सं० पु०) १ शरीरस्थ कूह रिपुके मध्य प्रथम रिपु । अभिसाप और स्त्रीसम्भोगादि इसका कार्य है । २ शिव ।

कामरी (हिं० स्त्री०) कम्बल, कामरी ।

आमरूपि (सं० ज्यो०) अजबिद्विध, एक इतिवार ।
विष्णुसिद्धिमे इहे आमरूपको यज्ञके अथ विषय
करनेके विवे दिया गा ।

आमरूप (हि०) अमरर ईको ।

आमरूप (सं० वि०) आमं मनोत्रं रूपं यज्ञ, ब्रह्मो०
१ मनोत्र रूपविग्रह, ब्रह्मपुराण । २ इष्वाणुवार
विषय रूपकारी, अर्द्धके इष्वाणिक तरङ तरङकी
सूत्र बनाविवाहा ।

“अमरर अमररं अमररं विरहमः ।” (अमररर)

आमरूप—पूतमान पाषाण प्रदेशका एक विस्तृत
जिहा । यह पचा० २३ ३३' से २६ ३२' ०" और
दो० ८० ३०' से ८२ १२' पू०के मध्य ब्रह्मपुराणके
उत्तर पार पर अवस्थित है । इसके उत्तर भूटान,
पूर्व दरङ्ग एवं मोर्बाव जिहा, दक्षिण अठिया पहाड़
और पश्चिम अराकान्ना जिहा है । आमरूपका बड़ा
शहर बोहायो है ।

इस जिलेका प्राकृतिक दृश्य प्रति मनोहर है ।
भूमि बहुत उर्वरा है । ब्रह्मपुराणके तीरका जंगल
मौजा एवमेसे बर्षाकालमें लब जाता है । यहां चाय
और अर्धप अयर्वाह उत्पन्न होता है । मर, बंश यन्त्रि
समावतः पश्चिम निकलता है । ब्रह्मपुराणके तीरके
जमी उत्तर भूटान और दक्षिण अठिया पहाड़ तक
भूमि क्षमम" लब एवं समतल है । ब्रह्मपुराणके दक्षिण
इस जिलेमें बहुतसे झांडे झोटे पहाड़ हैं । उनमें एक
एक दो हजारसे तीन हजार फीट तक लंबा है । उच्च
पर्वतोंके पार्श्वदेशमें चाइके बाग हैं ।

ब्रह्मपुराण ही आमरूपको प्रधान नदी है । बहुतसो
नदी और उपनदी ब्रह्मपुराणमें गिरी हैं । उनमें उत्तर
दिक्षुके मानस, चावखयोया तथा बरनदी और दक्षिण
दिक्षुके अलसो नदी पायी है ।

ब्रह्मपुराणके मध्य कई छुट्ट छुट्ट होय हैं, इन्की
संख्या नहीं ।—ब्रह्मपुराणमें रेत पकनेसे जितने छुट्ट होय
अमरी और विगहृत हैं ।

आमरूपके पूर्वतः—कई छुट्ट नदी निकली हैं ।
‘ओसवाल प्राय’ उनमें लब नहीं रहता । फिर भी
बहु भीतर भीतर बहा करती हैं ।

यहां माका या नहर नहीं । किन्तु यज्ञ को
रसाके सिधे बीच बीच सामान्य बंध मौजूद हैं ।

इस भूभागमें प्रायः १३० वर्गमील जंगल है । इस
जङ्गलके भी गहरनसेफलोको पक्षी पाय होता है । इसमें
कुछसो नदीके तीरका बनविभाग प्रधान है । बिज
बिज वनके रूपका घाता, अर्धमें बकुडार, हिमरूपा,
पश्यान, मयरापुर और बरमे नामक वन लबेअयोम
दिखाता है ।

अर्धमें साजू, शोयम तुम, लूम, बाहर प्रवृत्ति लब
पक्षी उपजते हैं । उनसे सूड भीमती खड़िया
बरी और तकुति बनाते हैं । आसुड, अहारी, मारो,
मिखिर और खाओ प्रवृत्ति पशम खीम वनके साख,
मोम, तन्तु, गोंद यगु रब एकडा वर अणुओ जीविवा
बनाते हैं । उत्तराखण्डमें भूटान पहाड़के पास
मोचारचका बड़ा मैदान है । यहां नामाविध लब
उपजते हैं । *

जीवजन्तुमें ज्यो, मेंडा, नामाजातीय प्याम,
मधिय, बरिच बन्ध सूडर, नामा प्रकार सर्प और
नामापकार यसी देख पकते हैं । मध्य भी यहां नामा
प्रकार होते हैं । उनमें रैज चित्तो और यसी नामक
मध्य ही पश्चिम है ।*

-
- * यस्मिं जीविपेक्षामें लब इतिविवा वरुं क विगहा है । वयः—
 - “इड वीकडलिप्यदि अरपलररुमि प ।
 - अमू रं लबबर्धे वया कालररुमि प ।
 - यस्मिं अरुवर्धे वयः —————
 - मध्य अरुवर्धे वयः वया कालररुमि प ।
 - अथ अर्ध विगहाक लब वार्ध इतिवयम् ।
 - नामकल व आरुव अरुवक लम सिधे ।
 - विगहामे विगहायम् वया व विगहायम् ।
 - अर्ध अर्धवर्धे वया वया कालररुमि प ।
 - अर्ध वीगुव अर्ध वीगुवक लम सिधे ।
 - वीगुव अर्धवर्धे वया कालररुमि प ।
 - आमरुव अर्धवर्धे वया कालररुमि प ।
 - अर्ध वीगुवक लम वीगुवक लम ।
 - आमरुव अर्धवर्धे वया कालररुमि प ।
 - अर्ध वीगुवक लम वीगुवक लम ।
 - “अमरुव अर्धवर्धे वया कालररुमि प ।
 - “अमरुव अर्धवर्धे वया कालररुमि प ।

पुरातत्त्वको देखते कामरूप अति प्राचीन जनपद है। महाभारतके समय यह स्थान क्षिरातपति भगदत्तके अधीन था। उस समय लोग इसे परशुरामका लौहत्वतीर्थ मानते थे।

पुराण और तन्त्रमें कामरूप महापीठस्थान माना गया है। गरुडपुराणमें लिखा है,—

“कामरूपं महातीर्थं कामाख्या तत्र तिष्ठति।” (गरुडपुराण, ८१।१६)

राधातन्त्रके २०वें पटलमें कहा है,—

“शामदय सदैवाग्नि ब्रह्मद्वीपे सुखमुच्यते।”

इं भगवति ! यह कामरूप ब्रह्माका सुख माना जाता है।

स्कन्दपुराणका प्रभासखण्ड (७२ अ०) देखते इस स्थानमें शुभद्वार सिद्ध विद्यमान है।

नीलतन्त्र और वृहत्नीलतन्त्रके मतसे इस महातीर्थमें योगनिद्रा सर्वदा विराजती है।

पूर्वकालकी कामरूपका आयतन इस समयकी अपेक्षा अधिक विस्तृत था। कुमारिकाखण्डमें लिखा है,—

“कामरूपं च यामायां नयनचां प्रकौरिता।” (१० अ०)

वर्तमान भासाम, कोचविहार, जनपाईगोही और रङ्गपुर कामरूपके अन्तर्गत था। योगनीतन्त्रमें प्राचीन कामरूपकी चतुःसीमा इस प्रकार वर्णित है,—

“करतोयां समाश्रित्य दामद्विहरवासिनी।

उत्तरस्यां कञ्जगिरिः करतोयासु पश्चिमे ॥

तोषं देवा दिक्षु नदी पूर्वस्थां गिरिकन्धके।

दक्षिणे ब्रह्मपुत्रस्य लाचायाः सद्रसावधि ॥

येन दाम्पत्ययोगानि गन्धर्वेण प्रयोषतम् ।

सार्धं सास्य तथा क्षारं शालम सागर्कं तथा ।

साश्रित्य बर्हिधन्वांश्च चौरं दक्षिणतस्ततः ।

पविष्याथ प्रवृत्ताग्निं धीं प्रयोज्या नम प्रिये ।

हारितश्च सपूरुषः सारकं बतकमथा ।

कपिलरथं च चाग्रय काककुक्षु टको मिर ।

वन्यकुक्षु टकश्चैव श्यामरिय कपोराश्च ।

विश्वकः कुलिकरथैव रत्नपुष्पश्च टिडिमः ।

रुक्मन्मन्थाशनरथं च पद्मोपाश्च विधिपथे ।

शिवमत्स्य रोहितश्च महाभयश्च राजिवम् ।”

(योगनीतन्त्र, १८ पटल)

कामरूप इति ख्यातः सर्वथात्रेणु विद्यते ॥३३”

“विगतं योजनमिच्छीर्षं दीर्घं च शतयोजनम् ।

कामरूपं विशालोद्दिं त्रिकोणाकारमसतम् ॥

ईशानं धैव कदारो वायव्यां गजशासनः ।

दक्षिणे सद्रसं देवी लाचायाः ब्रह्मरतमः ॥

त्रिकोणमेव शानोद्दिं सुरासुरमनस्कृतम् ।”

करतोयामे दिक्करवासिनी तथा कामरूप विस्तृत है। इसकी उत्तरसीमामें कञ्जगिरि, पश्चिम करतोया नदी, पूर्वसीमामें तीर्थश्रेष्ठ दिक्षु नदी और दक्षिण ब्रह्मपुत्र नदी तथा लाचा नदीका सङ्गमस्थल है। यह सीमा निर्देश समुदाय शास्त्रका अनुसोदित है। यह सुरासुर-पूजित कामरूप त्रिकोणाकार है। इसका देघ्यं एक शत योजन और विस्तार तीस योजन है। कामरूपके ईशानकोणमें कदार, वायुकोणमें गजशासन और दक्षिणमें ब्रह्मरता तथा लाचाका सङ्गमस्थल है।

काशिकापुराणमें भी लिखा है,—

“करतोया सत्यगङ्गा पूर्वमाग्रावधिप्रिता ।

यावद्व्यतिरकामासि तावद्देगं पुरं तदा ॥”

(काशिकापुराण, १८।१११ अ०)

करतोया नामक सत्यगङ्गासे पूर्वदिक् ललितकान्ता पर्यन्त यह पुर विस्तृत है। (ललितकान्ता दिक्कर-वासिनीके निकट है।)

वुरञ्जीके मतसे भी कामरूपकी उत्तर सीमा कञ्जगिरि वा स्यूतानका पार्वत्य प्रदेश है। इसके पूर्व महाचीन वा चीन-साम्राज्य, दक्षिण लाचा नदी (यह नदी ब्रह्मपुत्रसे घृघक् हो बङ्गदेशके सीमारूपसे प्रवाहित है।) और पश्चिम करतोया नदी है। १६

* रङ्गपुरवासि लोकीके विश्वासानुसार देवीगङ्गेके निघमागमें प्राचीन त्रिधा (त्रिधोता) नदीमें पापरान नामकी एक छोटी नदी निक्षी है। वही करतोया नदीका पुराण नाम है। फिर पापरान भी कामरूपके अन्तर्गत माना गया है। (Martin's Eastern India, Vol. III, p. 361-68.) करतोया देखो।

इसके वर्तमान भासाम प्रदेशके पूर्वप्रान्तमें सदियाके निकट कामरूपपुत्र नामकी एक नदी बहती है। उसे भी कामरूपकी पूर्वसीमा बतानेवाली कहना पड़ेगा। (Journey from Upper Assam towards Hookhoom etc. by W. Griffith; see Selection of papers regarding the Hill Tracts between Assam and Burma, p. 126.)

पीछे हापर युगमें जालगौन और कलियुगमें कलिपाप-विनाशक कामारूप पर्वत देख पडा। हे महेश्वरि। प्रत्येक वर्षमें तुम्हारे पीठ, उपपीठ, तीन महादेव और तीन महारण्य विराजित हैं। फिर प्रत्येक पीठमें महादेव, चतुर्भुज विष्णु, गङ्गा और पार्वतीका अधिष्ठान है। प्रत्येक पीठ और प्रत्येक क्षेत्रमें एक एक पुण्यारण्य अवस्थित है।

‘कलिकालमें गृहसे दूरवर्ती स्थान मात्र पर तीर्थ-वृद्धि रहती है। किन्तु जहां भावनाको सिद्धि आती, वही भूमि तीर्थ मानो जाती है। प्रत्येक पीठमें धर्म और आचार पृथक् पृथक् है। देगभेटके अनुष्ठान कुम्भका आचार भी पृथक् होता है। इसलिये प्रत्येक पीठका पूजन और मन्त्र स्वतन्त्र है। हे पार्वति! मर्त्यभूमिमें तीर्थपीठ, दाक्षिणात्य देशमें भद्रपीठ, पायात्य देशमें जालन्धर और पूर्व दिक्में पूर्वपीठ है।

‘ईशान और पूर्वभागमें कामरूप है। इसके वायु-कोणमें जालन्धर, उत्तरमें कोन्वापुर, महेंद्रके किञ्चित् उत्तर देशान्दिक्में विहार और पूर्वमें त्रीहृष्ट है। हे देवेश्वरि। अतःपर उपपीठका विवरण श्रवण करो। श्रीहृष्टपीठ ६८ योजन विस्तृत है। शकटाकार पीठ चतुष्कोण, चार द्वारयुक्त और वायुविम्ब चिह्नित है। सिन्धुभद्रक पीठमें द्वा कोटि तीर्थ है। फिर उत्तम स्थानमें सीमेश्वरलिङ्ग अवस्थित है। फिर ज नामक क्षेत्र और एकास्त्रक्षेत्रमें कामधेनु तथा चक्रेश्वर शिवका अवस्थान है। भास्कर नामक महाक्षेत्रमें मातङ्ग महादेव, पवित्र कुम्भस्थली, दन्तकवन और सुमन्तवन है। इस क्षेत्रके पूर्व शिवयूप, पश्चिम धेनु-कारण्य, उत्तर गयाशिरः और दक्षिण चन्द्रभागा तथा श्रीहृष्टपीठ है। हे वरानने। इसका दैर्घ्य शत योजन और विस्तार तीस योजन है। जहां योनिमुद्रारूपिणी कामेश्वरी देवी, भृगोत्तपीठ, गोलोकेश्वर, धर्मपीठ, महापीठ, कामेश्वर शिव, पवित्रकुम्भ एवं हंसप्रपतन क्षेत्र, ब्रह्मयूप, श्वेतवट, कुरुक्षेत्र, मायास्त्रना नदी, पवित्र अयोध्यारण्य, धर्मारण्य, कृष्णामक नामक महारण्य तथा पातालशङ्करका अवस्थान है और जिसके पूर्व गण्डकी नदी, पश्चिम विष्णुयूप, दक्षिण ह्यभलिङ्ग एवं

उत्तर कदलीवन है, उनीका मध्यवर्ती धनुषाकार पीठ पद्म तथा रक्तवर्ण है। यह पीठ त्रिकोणाकार है। इसका दैर्घ्य १०८ योजन और विस्तार ८८ योजन है। इस पीठस्थानमें भी महादेवका क्षेत्र है। यह क्षेत्र-त्रय और माधवारण्य, महादेवारण्य एवं भर्गारण्य अरण्यत्रय वर्तमान है। इस पीठके उत्तर ब्रह्मक्षेत्र, दक्षिण समुद्र, पूर्व उदयकूट और पश्चिम त्रीपर्वत है। इसके मध्यवर्ती पीठका नाम पुण्यपीठ है। कामरूपके मध्यस्थानमें पटकोण, नवव्यूह चार त्रिसङ्ख्ययुक्त पवित्रतम एकवैदी है। फिर यहां दश पर्वत अवस्थित हैं। मध्यपीठ नामक महापीठस्थानमें कामेश्वर महादेव और चम्पावती नदी हैं। कन्याग्रम नामक महाक्षेत्रमें रुद्रदेवका पदद्वय है। एकास्त्रक्षेत्रमें नागाश-शङ्कर हैं। मानसक्षेत्रमें विश्वेश्वर, नाटकारण्य और चम्पकारण्यका अवस्थान है। गौतमके दक्षिण भागमें पिच्छिला और महावन है।

प्राचीन कामरूप प्रदेशके समस्त उत्तरांगका नाम सीमार है। योगिनौतन्त्रमें इस प्रकार चतुःसीमा निर्दिष्ट है,—

“पूर्वो मर्षं गदो वावत् करतोदा च पदिमी ।
दक्षिदि मन्द्गेश्वर्य चरारे विहगाचक्ष ॥
प्रकारे चैव श्यासाधं योजनानाच पञ्चकम् ।
अपुतवयच विमोतः पञ्चोद्वय तथा दश ॥
पटकोपच सोनार वन दिङ्करवासिनी ।
तस्मिन् वसति सा देवी प्रानात् ध्यानाद्वीरिणि वा ॥
तेऽपि देशा प्रसादेन म्यति गच्छन्ति मायया ।
अशोदयो नव पीठं सीमारार्थं तु कथ्यते ॥
वसत्यशय मयच यत् दिङ्करवासिनी ।
दिङ्कर्य च वापये मोदपीठं सुदुर्भमम् ॥
यत् कामेश्वरी देवी योगिमुद्रास्वदपिषी ।
पारिजात महापत्रे च यथादियन्तु शङ्कर ॥
कोपेयस्य पुर चेत तदा चानरकशृङ्गम् ।
आरण्यामाश्रिनचैव गौतमारण्याकं शिवम् ॥”

‘सीमारकी चतुःसीमामें पूर्व स्वर्णनदी (वर्तमान स्वर्णश्री), पश्चिम करतोया, दक्षिण मन्द्गेश्वर और उत्तर विहगाचक्ष है।

‘अष्टकोण सीमार और दिङ्करवासिनीके स्थलमें

महादेवी चयम्यान करती हैं। फिर उक्त स्थलमें देवोक्षि चतुस्रमे गीठादि भी प्रचलित हैं। यतपर नवपोठका विषय कथित है। दिक्षरवासिनीमें प्रत्य नामक प्रत्यय पीठ और दिक्षरत्वे वायुकोषमें दुर्धर्म मोक्षपीठ है। इसी स्थान पर योगिसुद्धाह्विषो कामिगरी देवोक्षा चयम्यान है। पादिल्लयंकरको पवस्त्रितिवे स्थलका नाम महादेव पारिजात और चपर पीठका नाम श्रीविवसुर परमरत्नपूज, पारण्य, पाश्र्चिम, गीतमारण्य और शिवनाभारण्य है।

सोमारके चयमियका नाम सोमारपीठ है। यह पाशामके उत्तर पूर्व भागमें प्रचलित है। इसकी चतुःसोमा एष प्रकार निर्धारित है—

- “पश्चिम दिग्भागात्क मन्त्र शीतलानि विधिः ।
- पूर्वो वीथिल्लारुच्य दक्षिणे कार्येही यथा ।
- दक्षिणे मन्त्रपुस्तकं चपरि उत्तरं चतुः ।
- एतन्मन्त्रय पीठं सुशुभ्रिच्छिन्नायकम् ॥
- सोमारपूजा यथासिद्धं यद्कोषयुगं विन्यस्यत् ॥
- इत्यथोत्तरमन्त्रात् इत्यथोत्तरं यत्नम् ॥” (योगिनियन्त्र, ५१)

इं प्रिये। इस शिवनाभके पारण्यको चतुःसोमाका निर्देश प्रथम करो। इसके पूर्व शीरगिहारण्य, पश्चिम कार्यदी, दक्षिण चन्द्रायुष्य और उत्तर मानसरोवर है। इसीके मध्यस्थलमें सुशुभ्रिच्छिद पद्मकोष और त्रि मण्डल सोमार नामक महापीठ है। इस पीठका परि मात्र लक्ष्मण योगिन नाम है। इसको पश्चिम जयताम्ब भी कहते हैं।

पाशामका सुरश्लोके मताशुसार मेरुकोषे दिक्षराई नदी तत्र सोमारपीठ है।

श्रीपीठको चतुःसोमा एष प्रकार है—

- “पारानो मन्त्र शीतं तिष्ठते श्रीवपीठकम् ॥
- दुर्धमार्थेन मन्त्र त्रितीय मन्त्रनाशकम् ॥
- इदमेव वाचसीकोशं मानसं मन्त्रं चतुः ।
- दिक्षारण्यं त्रिनीचक इकोटं विष्णु यत्नम् ॥
- श्रीश्रीवीथिदुर्धमं चिह्नं च द्विकोटिकम् ॥
- चतुर्धर्मं लक्ष्मिं पूर्वं दक्षिणे चक्रवा नदी ॥
- यथायथा दक्षिणे चैव चपरि इत्यथोत्तरं चतुः ।
- एतन्मन्त्रयन्त्रं द्विवि पीठोर्ध्वं नाम यथायथा ॥”

(योगिनियन्त्र, ५१ पृष्ठ)

प्रथम पीठका नाम वाटाही और द्वितीयका नाम

श्रीसपीठ है। प्रथम क्षेत्रको कुमार क्षेत्र द्वितीयको मन्दन और तृतीयको याज्ञनी क्षेत्र कहते हैं। प्रथम वन मातङ्ग द्वितीय विहारण्य और तृतीय विष्णुववन कहलाता है। यह वन कोटि कोटि निम्नकुश और कोटि कोटि यथाव्यवस्थित है। पूर्व सोमापर पश्चिमोर्ध्व, पश्चिम घनदा नदी, दक्षिण पद्मा और उत्तर सुवचका वन है। इसीके मध्यस्थलमें श्रीपीठ प्रचलित है।

रत्नपीठका वर्तमान नाम श्रीवदिवहार है। मन्धरत कामतिगरी देवोक्षि यथा रत्नमेधे रत्नपीठ नाम पडा है। पाशामको सुरश्लोके मतमें एषकोषायो नदीसे दक्षिण नदी तत्र रत्नपीठ है। यागिनोत्तरममें लिखा है,—

“रत्नपीठे तु पश्चिम लीलायां चैव उच्यते ॥”

पाशामको सुरश्लोके मतमें भरतोवा और एष्वं कोषो नदीका मध्यवर्तीस्थान कामपीठ है। बिन्दु योगिनोत्तरममें कामपीठका चपर नाम श्रीमिपीठ लिखा है। योगिनोपीठका वर्तमान नाम कामाप्या है। कामनिरिके चपर प्रचलित श्रीमेधे उक्त पीठका नाम कामपीठ पडा होता। यथा—

“श्रीपीठे चतुर्विधो यथायथा तत्र ईरता ॥” (उत्तरपश्चिम, सोमनाथ)

यथायथा ईरता ।

कामाप्याके कुछ दूर योगिनोत्तरमको उत्तरपीठ और मन्धरपीठ है। यथा,—

- “मन्धरपुष्पाय पीठं चक्रवाद्यर्थैरुच्यते ।
- सन् पीठं त्रिभिः पीठं तुत्र यत्र नक्षत्रैः ।
- सन्तोषयुक्तानां श्रीपीठिकारुद्रकम् ॥
- तत्रवीथिद्विधे चतुर्धर्मं यत्नयुक्तम् ॥
- विदिवन्ती मन्त्रदत्ता ईरता सुवचनदी ।
- निरक्षयं वा चानी चरन्ती चरित्पत्नी ॥”

(शक्तिविषय १११)

सुरश्लोके कार्यपीठ नामक एक पीठका उल्लेख है। बिन्दु क्षान्तिशायुराच और योगिनोत्तरममें एष्वंपीठका नाम नहीं मिलता। क्षान्तिदासने प्रथम रत्नश्रीमें इसीको “श्रीमपीठ” लिखा है—

- “श्रीमः चक्रवाद्यथायथा उक्तवर्तितम् ॥
- श्रीमे विवहरीनिरन्तरायुचरती च ॥ ५१
- चक्रवाद्यथायथा श्रीमपीठे ईरितम् ॥
- रत्नपीठे चरन्ती चक्रवाद्यथायथा चरन्तीः ॥ ५२ (सर्वत्र उक्तं चं)

फिर कामरूपेश्वर अन्य भूपातोंके आक्रमणसे नय-
प्रतिष्ठ अभिन्नगण्ड सब हाथी ले कर इन्द्रविजयी रघुके
गरणापन्न हुये और सुवर्णपीठके अधिदेवता स्वरूप उनके
चरणकमल पर रत्नरूप पुष्पोपहार प्रदान किये।

आयामकी वरञ्चीके समेत रूपिका वा रूपही
नदीसे भैरवी वा भरल्लो नदी तक स्वर्णपीठ है।

कालिकापुराणके मतानुसार कामदेवको महादेवके
क्रोधानलसे भस्मीभूत होनेके पीछे इसी स्थानमें महा
देवकी कृपासे स्वरूप प्राप्त हुआ था। इसीसे इसका
नाम कामरूप पड़ गया। (कालिकापुराण, ५ ५०)
पहले ब्रह्माने यहीं रह नक्षत्रोंकी सृष्टि की थी। इसीसे
कामरूपका प्राचीन नाम प्राग्ज्योतिष है।

“पदेव हि स्थितो ब्रह्मा प्रतिपद्ये” मरु ५।

ततः प्राग्ज्योतिषाद्यिदं पुरो मरुपुरो सभा १”

(कालिकापुराण, १० ५०)

कामरूप प्रति प्राचीन तीर्थ है, यह पहले ही
लिख चुके हैं। कालिकापुराणमें कामरूपतीर्थका
विवरण इस प्रकार लिखा है,—

‘पूर्वकालको महापीठ कामरूपको नदीमें नष्टा,
जल पी और तथाकार देवता पूज करनेक लोग स्वर्ग
जाते थे। फिर किसीने निर्वाणसुक्ति और किसीने
शिवत्वको प्राप्त किया। पार्वतीके भयसे यमराज इन
लोगोंमें किसीको न तो स्वर्ग जानेसे रोक सके और
न अपने घर ले जा सके। प्रथमतः उन्होंने कई वार
यमदूतोंको भेजा। किन्तु शिवके दूतोंने यमदूतोंको
लोगोंके निकट जाने न दिया। सुतरां यमराजका
कर्तव्यकार्य एक प्रकार बन्द हो गया। उन्होंने फिर
विद्याताके निकट पहुँच कर कहा,—हे विद्याता !
मनुष्य कामरूपमें नष्टा, जल पी और देवता आदि पूज
रह्युके पीछे कामाख्यादेवी वा शिवके पार्वचर हो जाते
हैं। वहा अपना अधिकार न रहनेसे हम उन्हें किसी
प्रकार वाधा नहीं पहुँचा सकते। इसीसे हमारा काम
बन्द हो गया है। अब इस सम्बन्धमें किसी उचित
उपायका अवलम्बन बहुत आवश्यक है। पितामह
ब्रह्मा यह कथा सुन यमको साथ से विष्णुके निकट
पहुँचे और उनकी उक्त समस्त कथा विष्णुसे कहने

नगे। विष्णु भी सब बातें सुन यम और ब्रह्मा दोनोंको
साथ ले शिवके निकट उपस्थित हुये। महादेवने
सत्कारपूर्वक अभ्यर्थना कर उनसे आनिका कारण
पूछा था। विष्णुने कहा,—कामरूप समस्त देवता,
सकल तीर्थ और सकल जैव द्वारा परिहृत है। उसको
पपेक्षा उत्कट स्यात् दूसरा कोई नहीं। सुतरां उस
पीठमें मरनेमें सबको स्वर्ग वा आपका पार्वचरत्व
मिलता है। फिर वहाँके लोगों पर यमराजका कोई
अधिकार नहीं रहता। यमका भय छूट जानेसे उक्त
पीठका नियम भी बिगड सकता है। इसलिये थोड़े
ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमें यमका अधिकार
पूर्ववत् अक्षुण्ण रहे।

‘महादेवने विष्णुवाक्य पालन करने पर स्वीकृत ही
उन्हें विदा किया। फिर महादेव अपने गणोंके
साथ कामरूपमें आ पहुँचे। कामरूपमें आते ही
उन्होंने देवी उग्रतारा और अपने गणोंसे कहा,—
‘मत्वर यज्ञसे सब लोगोंको भगा दो।’

‘शिवकी आज्ञा पाते ही महादेवी उग्रतारा और
गणसमूहने समुदाय लोगोंको भगाना प्रारम्भ किया।
क्रमशः उन्होंने कामरूपके अन्यान्य लोगोंको दूरीभूत
कर शिवको निकालनेका चेष्टा की थी। इसमें
शिवने बहुत क्रुद्ध हो उग्रताराको अभिशाप दिया,—
‘हे वामे ! हम सुनि हैं। फिर भी तुम हमें भगानेके
लिये चेष्टा कर रहे हो। इसलिये तुम मादृगणके
साथ वाम प्रधातु वेदविरुद्ध भावमें पूजित होगे।
तुम्हारे प्रमथगण मटमत्त चित्तसे स्नेच्छकी भांति घूमते
फिरते हैं। इसलिये वह स्नेच्छरूपसे इस कामरूपमें
वास करेंगे। इस गम-दम-गुणविशिष्ट, वेदपारग
और तपोनिरत सुनि हैं। फिर भी महादेवने विवे-
चनाशून्य हो स्नेच्छकी भांति हमें भगानेको कहा है।
इसलिये वह भी स्नेच्छकी भांति भय और प्रस्थि
धारण कर इस कामरूपमें रहेंगे। फिर यह कामरूप-
जैव अद्यावधि स्नेच्छपरिहृत होगा। जबतक स्वयं
विष्णु यहाँ न आयेंगे, तब तक इसमें यहो भाव
दिखायेंगे। कामरूपके माहात्म्यप्रकाशक सकल तन्त्र
धिरत्त हो जायेंगे। फिर भी जो पण्डित विरलप्रचार

कामरूपतन्त्र समझेगे, उन्हें यथावकाश सम्पूर्ण फल
मिलेगी।

यह प्रमाणात् दे बसिहके प्रस्तावित होवे हो
कामरूपके प्रसन्नमन्त्र श्रेष्ठ बन गये। अतएव कामा
हूवीं। महादेव श्रेष्ठवत् फिरेन सी। कामरूप
माहात्म्य प्रकाशक सखक तन्त्र विरचप्रचार हुये।
सुतरां सखकालके मन्त्र कामरूप वेदमन्त्रहोम और
चतुर्वेदशुभ बन गया। फिर कामरूपघोठमें विष्णुका
व्यासमन हुआ। इससे कामरूपका माप झूट गया।
फिर यह सम्पूर्ण फल देन लगा। किन्तु देवता और
मनुष्य पूर्णवत् इच्छा माहात्म्य समझ न सके।
अभी समय ज्ञानमें सब कुछ और नदी क्षिपानिके सिधे
मान्यतुषठी अमोघाके गर्भसे एक ब्रह्ममन्त्र सुत लयादन
बिया या। उक्त मन्त्रने परशुराम० द्वारा पञ्चप
भाके प्रवृत्तारित हो समुदाय कामरूपको उत्तम हुआ
दिया। सुतरां प्रत्यान्व तोर्ष सुत हो गये।

‘बी पन्थ बिषी तोर्षका विषय न समझ केवल
ब्रह्मपुरजका हो अस्थाल आनते और उसमें नहाते हैं यह
केवल मांज ब्रह्मपुरजके ध्यानसे हो पञ्चक फल पाते हैं।
फिर का ब्रह्मपुरजमें समस्त तोर्षोंका सुत भाव समझ
कर नशति हैं वे काम समस्त तोर्षके आनका पक्षलाभ
करते हैं। (वर्णनप्रकरण ५५ न)

उक्त विवरणके पाठसे कमकतें हैं कि बिस्वी समय
कामरूपमें बहुत तोर्ष थे। वास्तविक प्राज्ञ भी काम
रूपके नामाकारमें पर्यटन करनेसे देखते हैं कि काम
रूपके पन्थ तोर्ष और पनेक पवित्र स्थान ब्रह्मपुरजके
गर्भमें रहे हैं। ब्रह्मपुरज कामरूपके प्राचीन
मौरवके साथ ही हिन्दुओंको सखक प्राचीन कीर्तिवा
भी था गया है। योगिनोतन्त्रमें लिखा है,—

“दीर्घे च ब्रह्मरूपे दिव्येभ्यं न वत् धनम् ।

पन्थ विरचा दीरी कामरूपे पत्नी कवी ।”

कामरूप दीरीके है। देवा आन पूजा देय

नहीं पड़ता। अथवा देवीका दर्शनकाम सुकठिन है।
किन्तु कामरूपमें घर घर देवी विराजती है।

योगिनोतन्त्रके पाठसे भी कामरूप तीर्थका देवा
ही परिचय मिलता है,—‘महापोठ कामरूप पति
शुद्ध तीर्थ है। यहां महादेव पर्यतोके साथ नियत
पञ्चज्ञान करते हैं। इस घोठमें घत नदी औरघोटि
शिष्ट परस्थित हैं। बाहुकूटकी पन्थिम सीमा पर
चतुर्वेद परिमित बायुहयी चन्द्रका पञ्चज्ञान है।
बाहुगिरिकी पूर्व और चन्द्रकूट दैव, मन्त्रभागमें यादन्त
और चन्द्रयेकके मन्त्रज्ञानमें इन्द्रयेकके कुछ दक्षिण
एवं चन्द्रयेकके कुछ उत्तर चन्द्रकूट नामक सरो
वर है। इस सरोवरके दक्षिणदिक्भागमें चार चतु
परिमित मानसतीर्थ हैं। मानसकी दक्षिणदिक्
२० चतु परिमित पशुततीर्थ है। इसके दक्षिण भागमें
दश चतु परिमित श्वसमोचन नामक सरोवर है।
पञ्चज्ञान्य पर्यंतके दक्षिण और पश्चिमीभागमें पञ्च-
ज्ञान्या नामक सरोवर मरा है। चन्द्रयेकके विरने
बासी निर्भरको जाडको और इन्द्रयेकके निक्षत्रनेवाले
निर्भरकी बरकती कहते हैं। वर्षाकाल पञ्चज्ञान्या
तीर्थमें दानो निर्भर मिल करते हैं। इस सिधे यह
प्रवायतीर्थके तुष्य माना जाता है।

‘इन तीर्थमें आन, दान और पूजादि साथ करनेसे
विशेष सुखफल मिलता है। विशेषतः प्रयासतीर्थके
तुष्य माना जानेसे पञ्चज्ञान्या तीर्थमें मरुत सुखनादि
कार्यका मा विधान है। इससे रहस्योक्तमें यावतौय
सुखस्थान चार परलोकमें सर्वसाम होता है।

(टीपिनोत्र ५। १७५५)

‘पञ्चतीर्थको विष्णु पश्चिम और पाठ चतु
परिमित आनमें विरहकूट है। इस तीर्थके पश्चिम
मर्कके निक्षत्र ६७ चतु-परिमित आनमें ब्रह्मरूप तीर्थ
है। इन्द्रकूटके उत्तर ८० चतु-परिमित रामसेन है।
यहां मा एक कुण्ड विद्यमान है। रामतीर्थके ८ चतु
दूरकी पूर्वदिक्भागमें सोतातीर्थ है। सोतातीर्थके
दक्षिण १० चतुपरिमित विजयतीर्थ है। यहां
विजय नामक विरबिह्न परस्थित है। एकीके निक्षत्र
योगतीर्थ है। यहां योगीय नामक विरबिह्न पश्चि

परमन्त्र पञ्चालके ब्रह्मपुर ज्ञानपरिचयमें ब्रह्म है कि
सर्वज्ञानी अपने इन्द्रके एक काममें ब्रह्मपुरका पञ्चालक विधा था।
पञ्चवि ब्रह्म आनका मन्त्र “ब्रह्मिन्द्र” है। यह एक दक्षिण तीर्थ
है। अस्थिके ब्रह्मपुर ब्रह्मपुरके निक्षत्र अस्थिकार पञ्चालक है।

ष्ठित है। उसके निकट २२ धनु परिमित मुक्ति-
तीर्थ है। मुक्तितीर्थसे बहुत दूर हत्तकुण्ड है।
इन्द्रशैलके दक्षिण १२ धनु परिमित सूर्यतीर्थ
है। यहां सूर्यदेव अट्टम मूर्तिमें अवस्थान
करते हैं। रामनेत्रके मध्य दो दुर्गकूप और एक
ब्रह्मरूप देखते हैं। इन्द्रकूटमें मणिनाथ नामक
महादेव अवस्थित हैं। नीमतीर्थकी श्रेय सीमा पर
५ धनुपरिमित नागतीर्थ है। चन्द्रशैलके उत्तर ६४
धनुपरिमित एक पर्वत अवस्थित है, उसके जलाशयका
नाम गयाकुण्ड और तीरकी भूमिका नाम क्षेत्र है।
पूर्वमें जोहित्य और उत्तरमें ब्रह्मयोनि पर्यन्त विस्तृत
२२ धनुपरिमित स्थानको गयातीर्थ वा गयातीर्थ
कहते हैं।

‘इन समुदाय तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा एवं
प्रदक्षिण और गयातीर्थमें आहादि कार्य करनेसे अघय
पुण्य मिलता है।’ (योगिनोत्प, २। ४४ पटल)

‘सोमशैलकी ईशानदिक् मणिशैल है। मणि-
शैलके किञ्चित् पूर्वाय ईशानकोणमें ७ धनु दूर वारा-
णसी नामक कुण्ड है। इस कुण्डका देव २२ धनु
है। इसकी दक्षिण दिक् ५ धनु दूर २२ धनुपरिमित
मणिकर्णिका नामक कुण्ड है। मणिशैलको ईशान
कोणमें मङ्गला नदी है। फिर दक्षिण दिक् कामेश्वरी,
पश्चिम हयग्रीव, उत्तर कमललिङ्ग और पूर्व विरजा
है। इस चतुःसीमाके मध्यस्थलमें तीन कोस परिमित
स्थानका नाम मणिपीठ है। मानशैलके वायुकोणमें
वराहपर्वत है। उसके पूर्व-दक्षिण भागमें नर-
नारायण सरोवर है। इसके वायुकोणमें ८ धनुदूर
वैनायक तीर्थ और १०० धनुपरिमित टीर्थ प्रभामतीर्थ
है। प्रभामतीर्थके वायुकोणमें विन्दुसरोवर है। नाटला-
चलके पूर्व भागमें मातङ्ग नामक पर्वत और अग्नि
कोणमें हयाचल है। इस तीर्थको शिवका अन्तर्गृह
कहते हैं। हयाचलके पूर्व और ईशानदिक् भागमें
भस्माचल है। इसकी उत्तर और उर्वशी नामक तीर्थ
है। उर्वशी तीर्थके पूर्व और सूर्यतीर्थ है। उससे ५
धनु दूरवर्ती पूर्व दिक्में कामाख्या सरोवर है। मदन
तीर्थकी दक्षिण और गङ्गासरोवर तीर्थ है। गङ्गातीर्थसे

८ धनु दूरवर्ती दक्षिण दिक्में आगस्त्यतीर्थ है। इस
आगस्त्य तीर्थके किञ्चित् पश्चिमागमें अग्निकोण पर २१
धनुपरिमित स्थानमें घामव नामक तीर्थ है। इसकी
पश्चिम और अनतिदूरवर्ती ७ धनुपरिमित स्थानमें
रुमातीर्थ है। उसकी ३० धनुपरिमित दूरवर्ती
पश्चिम दिक्में रुक्मिणी कुण्ड है। इस कुण्डके वायु-
कोणमें ८ धनुपरिमित स्थान पर पित्रतीर्थ है। उक्त
भस्मशैलके अग्निकोणमें ८ धनु दूर पिगावमोचन
तीर्थ है। यहां कपर्दीश्वर नामक शिवलिङ्ग अवस्थित
है। भस्मकूटके वायुकोणमें कपालमोचन तीर्थ है।
यहां कपालेश्वर नामक शिवलिङ्ग अघिष्ठित है।
कपालमोचनसे ५ धनु दूरवर्ती उत्तरकी कपिला-
तीर्थ है। इस स्थानमें हयभध्नज नामक शिवलिङ्गका
अवस्थान है। इस शिवलिङ्गके पश्चिमभागमें २२ धनु
परिमित मातङ्गक्षेत्र है। मन्दर पर्वतकी चंगान
और १६ धनु-परिमित चक्रतीर्थ है। चक्रतीर्थके
पश्चिम नन्दन पर्वत है। इसका परिमाण ६२ धनु
है। यहां बुधरूपो जनार्दनदेव अवस्थित हैं। मन्दर
शैलके उत्तरागमें ईशान कोणपर विरजातीर्थ है।
गजशैलके दक्षिण-पश्चिम भागमें शोभलिङ्ग है।
चक्रतीर्थके अग्निकोणमें २ धनु परिमित स्थान पर
शोभलिङ्गतीर्थ है। इसीके निकट शुक्राचार्य-स्थापित
शुक्रेश्वर नामक शिवलिङ्ग अघिष्ठित है।

‘इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण और
स्नान विशेषके समय आहादि करनेसे विशेष पुण्यसाध
होता है।’ (योगिनोत्प २। ४४ पटल)

‘जोहित्यके दक्षिण दिक् जाते वायुकोण पर कोल-
पर्वत है। कोलपर्वतकी पश्चिम ओर पाण्डुनाथ है।
उसके वायुकोणमें ब्रह्मकुण्ड नामक १२ धनु विस्तृत
सरोवर है। इस सरोवरमें अनतिदूर दक्षिण दिक्
धन्वन्तर कृन् पर्यन्त विस्तृत विष्णुकुण्ड है। विष्णु-
कुण्डके दक्षिणभागमें नैर्ऋतकोणपर ११ धनुपरिमित
शिवकुण्ड है। इसीके निकटवर्ती स्थानमें पाण्डुशैल
है। पाण्डुशैलके ५ धनुदूरवर्ती नैर्ऋतकोणमें
अश्वत्थ-चिह्नित धर्मक्षेत्र है। फिर इस शैलसे ५
धनु दूरवर्ती पूर्वदिक्में स्वच्छाक्षति शिला है। यह

मिथा कछी नामने पवित्रित होतो है। इतके पनतिदूर दक्षिणदिक्कमें ८ अनुपरिमित शोकदेव है। इमो स्थान पर पण्डितके मूलमें विष्णुको पापाक मूर्ति विराजित है। ब्रह्मकुण्डके निचट शीकुण्ड नामक २ अनुपरिमित सरोवर है। उषकी पूर्व पोर २२ अनु दूरवर्ती स्थानमें बनफण्ड नामक तीर्थ है। उषके दक्षिणदिक्कभागमें मनोहर पर्वतके उत्तर ४ अनु परिमित चम्पकेशरकी मूर्ति विराजित है। इस मूर्तिको पूर्व पोर ८ अनुपरिमित पुष्करतीर्थ है। पुष्करको उत्तर पोर विचित्र नाममागमें २८ अनु परिमित बदरिकायमतोर्थ है। यहाँ विमाण्डक नामक मिवविष्णु पवित्रित है। पुष्करके पूर्वभागमें कुमार नामक सरोवर है। यहाँ स्नाप नामक महादेव है। उक्त चम्पकेशरके नामानुसार ६२ अनुपरिमित स्थानमें एक वन है। वह चम्पकवनके नामके प्रसिद्ध है। नीलकुण्डकी पूर्व पोर दुर्गाकुण्डके १ अनु दूर पश्चात्तर्धकार नामक महादेव है। पश्चात्तर्धकारकी दक्षिण पोर ८ अनु दूरवर्ती स्थानमें श्यामवर्ण महाकार गणदेवकी मूर्ति है। उषकी पूर्व पोर १ अनु दूर विचित्रमकी मूर्ति विराजित है। इत मूर्तिके १ अनु दूरवर्ती स्थानमें ४० इत्यपरिमित सोमाय सरोवर है। यह कामाप्सा देवोका लोहा सरोवर कह्यता है। इसीको ईमान पोर बोधिस्य सरोवर, पम्पिकुण्ड पोर वामनसरोवर है। सोमाय सरोवरके १ इत्य दूरवर्ती श्रेष्ठ दिक्कमें मङ्गलार है। इसके उपरिभागमें पण्डककुण्ड है। इस कुण्डकी पूर्व पोर श्यामिकाकी पश्चिम पोर बराहतीर्थ है। इसके पश्चिमोपमें चम्पक नामक मिवकी मूर्ति पवित्रित है। पनलकुण्डको पश्चिम पोर पश्चिम नदी है। उमने पश्चिम बहया नदी बहो है।

‘यह मङ्गल स्थान अथे नीले गिरी जाने है। यहाँ यथाविधान पूजादि काठे कारमेंके पनल पुत्र जाता है। (४३३ = ४३४)।

मानसरोट नार्थो महानदीको उत्तर पोर २ अनु दूरवर्ती स्थानमें प्रेतमिना है। बाहुदेवके १८ अनु दूर पश्चिम पोर पञ्चकोप उत्तरतीर्थ है। बाटि

विश्वे दक्षिण पण्डकोप मिवमूर्तिना नाम दक्षिण मानस है। कामनापरी ७ अनु दूर पश्चिम पोर दोषोघरो देवो है। कामेश्वरदेवकी उत्तर पोर १२ इत्य दूरवर्ती स्थानमें कामेश्वरपर है। चम्पकेश्वरकी दक्षिण पोर ८ अनु दूरवर्ती स्थानमें कौटोघरो देवो है। मोक्षपण्ड देवोके २ अनु दूरवर्ती स्थानमें तील धारा है। उममें मध्यधारा सरस्वती, दक्षिण धारा बहया पोर उत्तर धारा यमुना कह्यतो है। विधाराके पण्डकमल पर चाकाममङ्गा है। उमको उत्तर पोर पनतिदूर यज्जवर्ण बाहुदेवकी मूर्ति है। कामेश्वरके पश्चात्तर्धमें विधेश्वरकी मूर्ति है। उमके निचटवर्ती स्थानमें श्यामरुद्र है। विष्णुपण्डके निचटवर्ती स्थानमें विष्णुेश्वरी मिना है। उमको पूर्व उत्तर पोर १०० अनु दूर चाकाममङ्गाका विष्णु मितला है। इसके दक्षिणभागमें सुरदोषिंका मिना है। यह मिना कलितानामना कह्यतो है। इस स्थानमें नन्दि नदी पश्चल पोर उषके भूखदेवमें कूर्मरुद्रति मिना है। इसके पनतिदूर पश्चात्तर्ध पोर पश्चात्तर्ध-देवका पर्वकान है। पश्चात्तर्धके २० अनु दूर पूर्व पोर इन्द्रदेविको देवोमूर्ति है। इसीको पूर्व पोर पनतिदूर ८ इत्य परिमित मुनेश्वरकी मूर्ति है। उषके बाहुकोप पर पनलकागमें गङ्गावरकी मूर्ति है। गङ्गावरकी पनतिदूर पण्डकमल श्रेणमिनाका नाम कखीय है। उषको पश्चिम पोर सदाशिव मूर्ति है। नदाशिवके निचटवर्ती स्थानमें दो गोविन्द पर्वतस्थित गोविन्दकी मूर्ति है। उमको पूर्व पोर ८ अनु परिमित रङ्गवर्ण मिनाका नाम गरवंगा है। उष दिक्कालमें मङ्गा नार्थो महादेव ८। विष्णुपण्डको उत्तर पोर ८ अनु दूरवर्ती स्थानमें महाकण्डो है। शीपर्वतमें शीकुण्ड नामक तीर्थ है। मानसायममें इयमध्वज नामक मिवकी मूर्ति पोर श्वेततीर्थ महादेव है। पाण्डुकूटमें निचटनेवाला धाराका नाम नमदा नदी है। मिव पोर विष्णुमूर्तिके मध्यवर्ती स्थानमें को धारा पाने, वह महानदी कह्यता है। विष्णुपण्ड पोर वन उमको महावर्ती धारा मङ्गला नामके विष्णुना है। विष्णुको पनलक सोमायममें निष्कल

धाराको सरस्वती कहते हैं। मन्तङ्ग पर्वतकी धारा भी नर्मदा नामसे पुकारी जाती है। कामकुण्डकी धाराका नाम कामगङ्गा है। कामाख्याकी धारा गङ्गा कहती है। नीलकुण्डकी धाराकी उर्वशी कहते हैं। व्यासकुण्डकी धारा सुभद्रा नामसे अभिहित है। शक्रशैलकी धाराका नाम चन्द्रभागा है। सोमकुण्डकी धारा उर्वशी नामसे प्रसिद्ध है। यमशैलकी धाराको वैतरणी और भण्डोगकी धाराकी गोदावरी कहते हैं। धर्मारण्यके मध्य रामझड़ नामक तीर्थ है। उससे ३० धनु दूर उत्तर और कोटिलिङ्ग है। इसी लिङ्गके सम्मुख भागमें ब्रह्मयोनि है।

वराह और कामके मध्यवर्ती स्थानमें अप्रुणभवं क्षेत्र तथा अप्रुणभवं नामक ८ धनुपरिमित सरोवर है। उसके उत्तर तीर भद्रकाश पर्वत है। इसी पर्वतमें पौत्रविज्ञा और शोणच्युति शिला है। उसके ५ धनु दूरवर्ती स्थानमें भववीथी नामक क्षेत्र है। अप्रुणभंवकी पूर्व और ८ धनु दूर ७ धनु विस्तृत वाराणसीकुण्ड है। उसकी पूर्वदिक् ५ धनु दीर्घ मार्कण्डेय झड़ है। झड़के उत्तर तीर मार्कण्डेयशिव है। गोकर्णसे अनतिदूर ब्रह्मसरः नामक कुण्ड है। उसकी पश्चिम दिक् शैलरूपी वराहदेव है। गोकर्णकी ईशान दिक् ३ धनु दूरवर्ती स्थान पर मदन पर्वत है। वहां केदार नामक महादेवकी मूर्ति विराजित है। केदारकी पश्चिम दिक् ब्रह्मवटहस्त है। केदारकी उत्तर दिक् ३ धनु दूरवर्ती पौषक नगरमें कमलाच महादेव है। ब्रह्मवट नामक कल्पवृक्षसे ३ धनु दूर दक्षिणदिक्की छत्रकोर पर्वत है। इसीके मध्य देशमें मन्दार नामक उन्नत गिरि है। छत्रकोरकी पूर्व और महुरिपुनामक विष्णुकी मूर्ति है। इसी पर्वतकी उत्तर दिक् २० धनु दूर कपिलाश्रम है। वहा कपिलेश्वर देवता है। कपिलाश्रमकी पूर्व दिक् ११ धनु दूर पिशाचमोचन तीर्थ है। यहा कालभैरव देवता है। व्याघ्रेश्वरदेवकी ईशान दिक् १० धनुदूर कृत्तिवासेश्वर है। मदन पर्वतकी ईशान दिक् ३ धनु दूर वाणेश्वर, सप्तपातानभेदक और वक्रहस्त लिङ्ग है। वाणेश्वरकी वायुकोणमें गरुडलिङ्ग

है। उसकी पश्चिम दिक् विष्णुका मन्दिर है। मणिकूटकी उत्तर दिक् वज्रभा नदी है। मणिकूटकी पूर्वदिक् अनतिदूर विष्णुका पुष्करतीर्थ है।

‘यथाविधान इन तीर्थोंमें स्नान, दान, पूजा, प्रदक्षिण आदि कार्य करनेसे अक्षय पुण्य लाभ होता है।’

(योगिनोत्तम २। ७-८ पटल)

कालिकापुराण और योगिनोत्तमके पाठसे कामरूपके प्राचीन भूखतान्तका बहुत परिचय मिलता है। कालिकापुराणके मतानुसार कामरूपमें निम्नलिखित पर्वत विद्यमान हैं,—

१ चन्द्रगिरि, २ सुरस, ३ नील, ४ कृत्तिवासा, ५ सुतीक्ष्ण, ६ विभ्राट, ७ शुभाचल, ८ धवस, ९ गन्धमादन, १० गोप्रान्त, ११ मणिकूट, १२ मदन, १३ दर्पण, १४ रोहण, १५ अग्निमान्, १६ कंसकर, १७ वायुकूट, १८ दुर्गाशैल, १९ चन्द्रकूट, २० आनन्दवा भस्माचल, २१ मत्स्यध्वज, २२ काम, २३ सुकान्तक, २४ रचकूट, २५ पाण्डुनाथ, २६ चित्रवह, २७ ब्रह्मगिरि, २८ कर्पट, २९ वराह, ३० अर्वाक, ३१ कालस, ३२ दुर्जयगिरि, ३३ लोभक, ३४ सन्ध्याचल, ३५ भगवान्, ३६ शृङ्गाट, ३७ नाटक, ३८ हेम, ३९ भद्रकाश, ४० मन्दन। इनकी छोड योगिनोत्तममें निम्नलिखित पर्वत भी कहे हैं,— ४१ मन्दशैल, ४२ विहगाचल, ४३, स्पर्शाचल, ४४ ब्रह्मयूप, ४५ विन्ध्याचल, ४६ मानशैल, ४७ शिवयूप, ४८ इन्द्रशैल, ४९ श्रीशैल, ५० मतङ्ग, ५१ हास्याचल, ५२ कोलपर्वत, ५३ हस्तिकर्ण, ५४ विकर्णक, ५५ अमाचल, ५६ द्युमन्त, ५७ कनक, ५८ नीललोहित, ५९ गन्धर्व, ६० पिशाच, ६१ आदित्य, ६२ भस्मातक, ६३ धनद, ६४ महौघ्र, ६५ जनक, ६६ नल, ६७ मण्डल, ६८ यम, ६९ गोविन्द, ७० विस्वश्री, ७१ भण्डोग, ७२ छत्रक, ७३ परिपात्र, ७४ पूर्णशैल इत्यादि।

कालिकापुराणमें कामरूपकी निम्नलिखित नदियोंका नाम मिलता है,—

१ सुवर्णमानस, २ जटोद्गवा, ३ त्रिस्रोता, ४ सितप्रभा, ५ नवतोया, ६ योगदा, ७ महानदी, ८ बहूः

रोका, ८ भरतोबा, १० इन्द्रमदा, ११ चन्द्रिका,
 १२ विष्णुका, १३ यत्नामदा, १४ सुमदना १५ मेरु
 नदा, १६ देवगङ्गा, १७ महा, १८ सुमर्मा, १९ मानवा,
 २० मेरु २१ बर्माया २२ कुसुममासिनी, २३ चोरोदा
 २४ लोका, २५ विवाचय्यो वा चण्डिका, २६ विष्णु
 चिह्नोता २७ उददेविका २८ महारिका, २९ दिक्क-
 रिखा ३० कर्षवदा, ३१ सुवर्च्यो, ३२ कामा,
 ३३ सोमासना, ३४ इषोदका, ३५ श्वेतगङ्गा, ३६ कन-
 यका ३७ शीता, ३८ सुमङ्गला, ३९ मायती,
 ४० अनिङ्गिका, ४१ इन्द्रमान, ४२ अविचयङ्गिका,
 ४३ दमनिका ४४ इडा ४५ आन्ता, ४६ अलिता,
 ४७ संखा, ४८ दीपवती, ४९ अगद नद ।

पतञ्जलि योगीनीतन्त्रमें सूच्यो मी कई नदियोंका नाम लिखा है— १० अन्धारती, ११ मानस, १२ विष्णुका, १३ कर्षवदे, १४ चौरिका, १५ कनदा, १६ पताका, १७ मङ्गला, १८ अचका, १९ अविचा २० अरकती २१ काङ्गो, २२ दिक्षु इत्यादि ।

सुवर्चमानस, जटोडवा पीर चिह्नोता तीनों नदियां जलपाईगुफों जिलेमें प्रवाहित हैं । सुवर्चमानसका वर्तमान नाम कर्षवोमी है । चलो बोबोमें घागबोयो कहते हैं । यह नदी भोटानके पर्वतके निकल ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है । जटोडवा नदी भोटानके पर्वत पर उत्पन्न हो जटोदा नामके जलपाईगुफों जिले पीर कोचबिहार राज्यके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें गिरी है । चिह्नोताका वर्तमान नाम तिखा है । इसके प्राचीन नाममें बहुत परिवर्तन हुआ है । घागबल यह चिह्नमके पड़ाइके निकल जलपाईगुफों पीर राइपुर जिलेके मध्य जा कर ब्रह्मपुत्रमें जा मिली है । यह नदीके पततिदूर पश्चिम गङ्गके मध्य जलपाईगुफों नगरके माय डेडकोय दूर अख्योय नामक सुकूपीठ है । आबिबापुराचमें कहा है,—

“नदयः सन्तरपय पाचनी निरुपमका ।

पाचनी चिह्नमूर्त्तं जन्मोत्पन्नं नदयः वनः ।”

कामरूपके बाहुकोचमें महादेवने अख्योय नामक पयना यतुल चिह्न दिखाया है ।

“नदयः सन्तरपय पाचनी निरुपमका ।

पाचनी चिह्नमूर्त्तं जन्मोत्पन्नं नदयः वनः ।”

एव सुकषाः पीठी जन्मोत्पन्नं नदयः वनः ।

एतन्मन्त्रा नदी वापि इत्यत्रात्तर्यं वती ।”

(चरित्रापुराण ७७ प)

यह प्रख्योय नामक महादेव बरदासयङ्गम पीर कुन्दतुल्य श्वेतचर्च है । इके तत्पुत्रको मांति पूजना बाधिये । अख्योयका विषय किसी पण्डो तरह मानन हो जाता, वह शिवकोष पाता है ।

आबिबापुराचके मतमें नन्दोने महादेवको धारा बना कर यहाँ घमरीर माचपन्न पाया बा ।

अख्योयदेवका मन्दिर प्रथम अख्येधर नामक किसी राजाने बनवाया था । सुषलमानोने प्राचीन मन्दिर तोड़ डाला । उसके पीछे कोचबिहारके पाच नारायणने (कोई २२२ वर्ष हुए) वर्तमान मन्दिर निर्माच कराया । पात्र यह मन्दिर पड़िसिबाका सुन्दर नहीं रहा, जोके पचवर्षमें पड़ा है । न मान्म अच पच मूमिपात्त हो बाधिया । पड़िसि यहाँ बहुतसे यामो पाति से । जिनु पच यह समय नहीं है ।

अख्योयदेवके पततिदूर तलमा नदीके पाच प्राचीन प्रयुराचके नगरका अच प्राचीन पड़ा है । किसी समय यहाँ प्रयुराचका राजमवन, दुगपरिखादि बा । पात्र भी कनका निर्दान देख पड़ता है । यह प्राचीन काल प्रकृतत्वानुसन्धाधियोंके देखने योग्य है ।

इसके निकल कई सुद सुद नदी है । बड़ी आबिबापुराचमें लिखो कई अितममा पीर नवताया समझ पड़ती है ।

इसके छोटी दूर पाठमच नामक कालमें पाटेखरी देवोका प्रसिध मन्दिर है । बाईं बाईं पाटेखरी देवोका ही आबिबापुराचमें उच्चिहित सिधेखरो मानता है ।

मेरुको नदीका वर्तमान नाम भरको है । यह पञ्जाबानिके देयके निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयो है । बर्चाया वर्तमान कामरूप जिलेमें उत्पन्न जा योमीषोचके निकल ब्रह्मपुत्रमें मिली है ।

उददेविका कामरूपमें प्रवाहित सुकुपुफों नदी है । दिक्करीकाका वर्तमान नाम दिक्करी है । यह नदी पञ्जा पड़ाइके निकल दक्क जिलेके मध्य हो कर ब्रह्म पुत्रमें जा गिरी है ।

स्वर्णवहा वा सुवर्णश्री नदीका वर्तमान नाम सुवर्णसिरी या सोवर्णसिरी है। यह नदी लखीमपुर जिलेसे प्रवाहित हो ब्रह्मपुत्रमें मिली है। कामा लखीमपुर जिलेकी वर्तमान कारामदा है। यह भी ब्रह्मपुत्रमें मिल गयी है।

सोमासनाका वर्तमान नाम सिंसी है। यह लखीमपुर जिलेमें प्रवाहित है।

श्वेतगङ्गा वर्तमान सदियाके निकट प्रवाहित दिक्-राह नदी है। इसीके निकट दिक्करवासिनीका प्राचीन मन्दिर है।

दिध्य यमुनाको भाजकल केवल यमुना कहते हैं। यह नदी नागापहाड़से निकली है।

दमनिका उल्ल यमुना नदीके पूर्व प्रवाहित है। भाजकल यह दिमोना नामसे प्रसिद्ध है।

कलिङ्गिका नौगांव जिलेकी कलङ्ग नदी है। यह ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है।

कपिलगङ्गिका वा कपिलाको भाजकल कपिली कहते हैं। यह जयन्ती पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

वृहगङ्गा दरङ्ग जिलेकी वृहगङ्ग नदी है।

दीपवती दरङ्ग जिलेकी दीपोता नदी है।

दिच्चुनटीका वर्तमान नाम दीघू है। यह शिवसागरके निकट ब्रह्मपुत्रमें मिली है। योगिनीतन्त्रके मतमें यही नदी प्राचीन कामरूपकी पूर्व सीमा थी।

चम्पावती ग्वालपाड़े जिलेमें प्रवाहित वर्तमान चम्पामती नदी है। इसके दक्षिणांशका नाम गदाघर है।

मानसा ग्वालपाड़े जिलेकी मानसा नदी है।

पिच्छिका दरङ्ग जिलेकी पिच्छिका नदी है। यह विश्वनाथके निकट ब्रह्मपुत्रमें गिरी है।

शौरिका नदीका वर्तमान नाम झिलिक है। यह शिवसागर जिलेसे बह लखीमपुर जिलेके मध्य हो कर ब्रह्मपुत्रमें मिली है।

धनदा भाजकल धनेश्वरी कहती है। यह नागा पहाड़से निकल ब्रह्मपुत्रमें पतित हुयी है। यही श्रीपीठकी पश्चिम सीमा है।

शतघण्ट

भाषामकी बुरखीमें लिखा है कि—महीरङ्ग नामक एक दानव कामरूपके भति प्राचीन राजा थे। इस बातका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता—बह दानव कौन थे और कैसे या किस तरह उनके शासनमें कामरूप आया।

महीरङ्गके पीछे नरकासुर कामरूपके राजपद पर प्रतिष्ठित हुये। कालिकापुराणके ३६वें से लेकर ४०वें अध्याय तक यह सम्यक् रूपसे विवृत है—नरकासुर कौन थे और कैसे कामरूपके राजपद पर बैठे। (उनके विशेष विवरणमें लिखा कि भगवान् विष्णुकी कृपासे उन्हें कामरूपका राजत्व मिला।) नरकासुरकी कीर्ति अद्यापि कामरूपमें देख पडती है। नरकासुर और कामाख्याके सम्पर्कमें निम्नलिखित कई किंवदन्ती प्रचलित है,—

नरकासुरने किसी समय स्त्रीय आसुरिक दर्पमें उन्नत हो भगवती कामाख्यासे विवाह करनेका प्रस्ताव उठाया था। उस समय भगवती कामाख्याका मन्दिरादि बना न था। भति सामान्य भावसे परण्यके मध्य पीठस्थानमात्र था। नरकका प्रस्ताव सुन भगवतीने कहा,—‘यदि आप एक रातमें हमारा मन्दिर, मार्ग, पुष्करिणी इत्यादि समस्त निर्माण कर सकें तो हम आपकी पति बना सकती हैं। नरकने उसी समय विश्वकर्माको बुला उनके साहाय्यसे रात्रिसमाप्त होनेसे पहिले ही प्रायः समस्त कार्य सम्पन्न करा दिया। भगवतीने देखा,—‘महाविपद् आ पडी। अब हमें असुरकी भार्या बनना पड़ेगा।’ इस प्रकार चिन्ताकर उन्होंने एक मायारूपो कुक्कुट बनाया। नरकके कार्यसमाप्त होनेसे कुछ पहिले ही वह अपना प्रातःकालीन ध्वनि सुनाने लगा। कुक्कुटध्वनि जाते ही भगवतीने नरकसे कहा,—‘कार्यशेष होनेसे पहिले ही कुक्कुट बोलने लगा। रात्रि बीत गई। प्रभात हुआ। हम आपको वरण करने पर प्रसुत नहीं हो सकती।’ भगवतीके वाक्यसे क्रोधान्व हो नरकने उस कुक्कुटको मार डाला था। कुक्कुटके मारे जानका स्थान भाजकल भी “कुक्कुराकटाचकी” नामसे प्रसिद्ध

हे। अथ संविधि नरकादुरासि चै उक्त समय भवतौ
 कामाख्याया मन्दिर भवनवाया वा।

रामायणके समय कामरूप (रामावधोतिपपुर)के
 शासनकर्ता नरकादुर सि। सोताकी इङ्गुमेमे लिने
 सुषोभिने वागरादि सभ देसी और दिशापोमि मेसे सि।
 एक वागर कामरूपमें भो था पङ्क वा। वागरराज
 सुषोभिने उक्त समय कामरूपका शिक्षा परिचय
 दिया था—

“सोमजम् चक्रावधि वरौ नमः सर्वम्।

दुर्योधनं ब्रह्मनासायै परब्रह्मणे ॥

एव आत्मसीमानं नाम आत्मरक्षणं पुत्रम्।

अस्मिन् कश्चिद्दुःखो मरवी नमः उवाच ॥१॥”

(विष्णुपुराण ४१ अ०)

वर्तमान मोहाटोम नरकाको राजधानी से।
 मोहाटोके पश्चिम दक्षिण पाण्डे मोनाचलके निकट
 नरकादुर नामक पृष्ठ परत भो है।

नरकादुरके पीछे भगवान् श्रीकृष्णने उक्तके पुत्र
 भगदत्तको कामरूपके सिंहासन पर बैठाया था।
 पूर्वदिक्-बोनदेश पौर दक्षिण वसुध पयन्त्र भगदत्तने
 श्वेद शासन विस्तार किया। महाभारतके समाप्तमें
 यज्ञके दिम्बलय पर भगदत्तका विषय एक प्रकार
 लिखित है—

“व विराटेषु श्रीं च इत् उवाचोऽनिरुद्रम्।

नर्मैव वसुधैर्वीर्यैः ब्रह्मणापुराणदिभिः ॥”

उद्धामि बिरात, भोग और वसुधैर्वीर्यो राजा
 कश्चि परिहत हो यज्ञके साथ युद्ध किया था।

सुहसेवर्षमें सुहसे समय भो भगदत्तने भोग और
 बिरातको सेनाके दुर्योधनको सहाय्य दिया था।
 पनेक कारणमें नरकाको श्रीकृष्ण, कामरूपीश्वरको
 श्रीकृष्णका पश्चिम पौर कामरूपके बन्धवर्ती देसोंको
 श्रीकृष्णदेस बिखा गया है। प्रकृत कामरूपदेसका भो
 किबो किबो पञ्चमें श्रीकृष्णदेस नाम मिलता है। पङ्कका
 कारण कामरूप तोपविबरणके कारणमें हो बना
 दिया है।

योगीश्वरकी कामरूपके राजविबरण पर पङ्क
 प्रकार मन्त्रिणद्वयों लिखी है—

“कनकतुण्डयुक्त राजपत्नी वरा भवत्यु।

वसिष्ठसु त्रयैश्वरिणं ब्रह्मचारि-वदती ॥

वसिष्ठसु वरावती कामरूपी बन्धवद्वि।

वरा इव महाकाली वरा इव मनोव ॥

द्विरात्मवन्धवः वरा पीडयत्यनघः।

दुर्गन्धुवरायने वरे मन्त्रे दिग्दामिजम् ॥

वीलोक वरायैव वरम् इदं ब्रह्मण्यम् ॥

वसिष्ठसु ब्रह्मण्डं ब्रह्मैक्यवशात्तुम् ॥

मही वस्ये च कोमार विना वसन्तीषिषम् ॥

एव नित्यचतुःशतं महाभारतमेंगीर्णम् ॥

मृगुवर्णान् वलवहाय वरायः श्वेदपाण्डवाम् ॥

वरानो वरन विना शीलापी राजवन्धवः ॥

उगादीचक्रवर्तिनो नवे तत्रे मन्त्रिणिः।

ब्रह्मण्यं मही इहहभोजेण ब्रह्मण्यनि ॥

ब्रह्मण्ये वरा राधं वलवहाय मन्त्रिणिः।

सुवचनवदती सुता वरवच वसिष्ठसु ॥

पञ्चम ब्रह्मण्यसकटः मन्त्रिणिकण्डि ॥

मन्त्रिणिकं ब्रह्मण्यं मोहादेव सुवचनम् ॥

वरवच सुवचन भोगेण च वरा इवः।

ब्रह्मण्यदिपी द्वीपे ब्रह्मण्येन ब्रह्मण्य ॥

वरमेव वसिष्ठ मन्त्रे ब्रह्मण्यीवरिः।

विश्वेदे वसुधवन्धवः वरवच वसिष्ठसु ॥

पश्चिम ब्रह्मण्यसकटः मन्त्रिणि वसिष्ठसु ॥

वसिष्ठसु च वरायः ब्रह्मण्यसकटोऽवः ॥

मन्त्रिणिक विराटने वरे वेदु वसिष्ठसु ॥

ब्रह्मण्यसकटः मन्त्रे मन्त्रे ब्रह्मण्य वरवन्धवः ॥

ब्रह्मण्यसकटः वरे वरे वरवन्धवः ॥

वीरवन्धवः मही वरे वरवन्धवः ॥

विश्वेदे ब्रह्मण्यः वरे वीरवन्धवः ॥

वन्धवा-वरे वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु च वरायः वरवन्धवः ॥

वरवन्धवः वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

वसिष्ठसु वरे वरवन्धवः ॥

• शीलापी ही महीन नाम ब्रह्मण्यसकट का।

“ब्रह्मण्यसकटः मन्त्रिणिकं ब्रह्मण्यम् ॥”

(मन्त्रिणिक, १११ अ०)

श्यामवर्षा कामाख्या देवी सहास्रमुख कोन
त्रिधा विष्टारपूर्वक योगिनियुक्ति माय पर्वतके
मिथर पर बड़ कर रथका घोषित पाग करेगी।
कुयाब (बोध) इस सुखी श्रोत दस दिन काम कर
अदेयको सोट जायेगी। इसके पीछे कामरूपदेवमें
ब्राह्मण राजा होते। राज्यमें बड़ प्रजादिशो पूजा
घोर जय प्रभृति कार्यों लगा देंगे। इसी प्रकार बड़
तोन वर्ष राज्यसासन करेगी। फिर ब्राह्मणराजा योगि
मण्डलके निवृत्तवर्ती स्वामि कामस्यान ठहरा क्रम
क्रममें पञ्चशतको राजा बन बैठेगी। इन राजाका पत्नी
श्यामवर्षा होंगी। पति घोर पत्नी दोनों सबैदा
पार्वतीकी आराधनामें रथ यथाकाल सवित नामक एक
पुत्र नाम करेगी। इस पुत्रके जन्मसे बारह दिन पर्यन्त
अर्घ्याचम पर्वतके अग्रमन्त्रिका पाविर्मात्र होगा।
उसके कामरूपबासी मंत्र बनो बन जायेगी। फिर इसी
समय बसिष्ठ ऋषिका पत्निमाय हूटेगा।

१६म यामाब्दके आरम्भमें श्रीबलिद्वारा राजव्ययके
मूलपुत्रक विषवर्षीय विद्यसिंहने बराबकता हटावो
यो। श्रीबलिमनुष्यत जात्रा नामक बिसो व्यक्तिके द्वारा
घोर शौरा नामको टी परमसुन्दरी लब्धा रह्यो।
कामरूप पराजय होते समय बोध निवृत्तवर्ती
अन्वाम्य रत्नर श्रीगणेशो बसोमूल कर लुप्त पराजान्त
बन गये थे। पराक्रममें जाचोके मन्त्र जाओ पद्यको
रहे। प्रसादानुसार महादेवके चोरलके शौराके गर्भमें
मिथ बा विषसिंहने घोर श्रीराजे गर्भमें विद्य बा विद्य
सिंहने जन्म लिया था। * बाल्यवर्षको। ई० १६म
यामाब्दके प्रारम्भ पर ही विद्यसिंहने श्रीबलिद्वारामें
राजत्व बिद्या। विद्यसिंहने सुसुखमासी द्वारा निवृत्त
कामतापुर राज्य पुत्रा लिया था। आधुनिक इराकके
मत्तमें उन्होंने १४२०, २० शक (१४८८-१४९० ई०)के
मध्य कामरूप परबिहार बिद्या। उसमें पक्षि
कामरूपमें छोड़े दिन सुसुखमानोका राजत्व रथा।

दुवेनयाइके पुत्र मायनवर्ता थे। बिन्दु उस समय
कोशोका बड़ा उत्पात रहनेसे दुवेनयाइके पुत्र नगरत
माइ कामरूप छोड़ने पर बाध्य हुए। विद्यसिंहने
उसी सुखोर्गमें पयसिष्ठ सुसुखमानोका भगा राज्य
परबिहार बिद्या था। उन्होंने पति पराक्रमके साथ
१५२० ई० तक राजत्व रखाया। उन्होंने राजत्वकालमें
सुप्त कामाख्यापीठका उद्धारपावन बिद्या मया था।
फिर कामाख्याके अनुवर्ती पनेक पीठस्थान पाविष्कृत
भी हुये। आरविचारके प्रकृतपथमें राजा होते भी
कामरूप उस समय विद्यसिंहके शासनशौन था।
कामरूपकी सीमा श्रीबलिद्वारा तक येसो हुई थी।
विद्यसिंहके समय पद्मोर्गमें ब्रह्मनिषण्ण पर पाजमन्त्र
बिद्या। विद्यसिंहने मेम्य भेज पाजमन्त्र हटाया
था। बिन्दु उनके सेम्यदलके उल्लूकाने हटाइते ही
फिर पद्मोर्गमें उत्पात उठाया। सुनरा विद्यसिंहने
बाध्य हो उनसे पन्थि को थी। उसी समय राजसुख
कामरूप घोर विचार राज्यकी पूर्वक्षोमा माना
गया।

विद्यसिंहने छिमहया कृष्णिते स्वामोके मन्त्र
चमतामानो विद्यात कोनोको श्रीभूत कर लिया
था। फिर उन्होंने अयान ताथे, राते, रांथे, हय, मारु
चांदो, माथे चांद, मिथी, नमक बगेरह पर कर
लगा राज्यका प्राय बड़ाया। उन्होंने समय माठान
बासे पर्वदा उपद्रव उठावा करती थी। उन नमक
भोठानमें देबराल राजा थे। विद्यसिंहने उनके
माय सन्धि को। राज्यके कोमान्त प्रदेशमें मान्ति
रथाके लिये विद्यसिंहके बिद्याही नियुक्त थे।

विद्यसिंहके १८ सन्तान रहे। उनमें नरनारायण
मर्षवेरठ थे। उनका ही मिंशकल मिला। उनका
परवर्ती कनिष्ठ भ्राता विनाराय था। यज्ञधर राज्यके
दाशन या मीनापति बने। नरनारायणने मङ्गलदेवके
भ्राता रामरायको लब्धा कामनियवा आगेने विद्या
बिद्या था। बिनी बिनीके अक्षयानुसार दुःखलक्षणा।

पद्यको रूप में समझनेकी कठिनाई निका रह बन है।
उसको देखने में अल्पकालका है कि इतिहास लक्ष्य बिनी काशीके
अथवा घोर होनेके लक्ष्यके लिए वा लिखितका एक पुत्र। अक्षयानो
अक्षयान लक्ष्यमन्त्रकी बन्धने रचित है।

* यह महादेव श्रीबलिदेवके पुत्रकालके है। यह सुखोर्गमें ही
सुसुखमन्त्रके अक्षयानो देवपुत्रक रूप में बिद्या था। महादेव श्रीबलिदेवकी
कनिष्ठ पुत्र ही अक्षयानो लिखवा पद्यके लक्ष्य माने है।

कमलप्रियासे विवाह हुआ। विवाहके स्थानको आज भी "रामरायकी कोठी" कहते हैं। ग्वालपाडा जिलेके सुक्का परगनेमें उक्त स्थान विद्यमान है। वहा मेना भी जगता है। कमलनारायण नामक किसी दूधर कुमारने भी भाटान और आसामके मध्य ब्रह्मपुत्रके उत्तर किनारे एक बांध बाधा था। उस बांधका नाम "गोसाईं कमलकी आलि" है। लखीमपुर और जलपाईगुडीके मध्य अनेक स्थानोंमें उसके चिह्न आज भी वर्तमान हैं। उस समय सजन वा सुजन ग्राममें पण्डित रामखान् भूया नामक एक राजा थे। उन्होंने चुपके चुपके विद्रोहकी भाग सुनगायी। किन्तु अन्तकी भय देख उन्हें भागना पड़ा।

आसामकी बुरखी और अन्यान्य इतिहासके मतानुसार विश्वसिंहके बड़े पुत्र नरनारायण और छोटे शुक्लध्वज वा चिलाराय थे। किन्तु रामसरस्वती पण्डित-प्रणीत ग्रन्थमें लिखा है,—

विश्वसिंहके शशीसिंह नामक एक पुत्र थे। शशीसिंह अल्प वयसमें लोकांतर प्राप्त हुये। उनकी कन्याके गर्भसे (ठीक नहीं किसके औरसे) अपुत्रक विश्वसिंह राजाके परम सुन्दर रूपवान् एक दौहित्रका जन्म हुआ। पण्डितोंने उसका नाम नारायण रख दिया।

उक्त नारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वज (चिलाराय) का नाम कामरूपमें सविशेष प्रसिद्ध है। महाराज नरनारायण अधिक वनशाली थे। उन्होंने विदेशियोंके हाथसे सम्पूर्णरूप उद्धार कर कामरूपकी बहुत उन्नति की। महाराज नरनारायणका दूसरा नाम महर्षि वा मल्लनारायण था। उनके समय पुरुषोत्तम विद्यावागीशने संस्कृत रत्नमाला व्याकरण बनाया। * वह आजकल आसाममें प्रचलित है।

हिन्दूधर्मविधेयी विख्यात कालापहाड़ † १५६४

* "श्रीमहर्षिदेवस्य गुणैश्चरित्योमहोर्षेन्द्रस्य यथा निर्दिश्यम्।

यद्वात् प्रयोगोचनरत्नमाला विद्ययति श्रीपुरुषोत्तमस्य †" (रत्नमाला)

भाषुनिक बुरखीके मतमें १४८० शककी रत्नमाला बनी थी।

† कामरूप अञ्चलमें कालापहाड़को "दीरासठार" "दीराठठार" और "कावाठठार" भी कहते हैं।

या १५६६ ई०को भगवती कामाख्या देवीका मन्दिर तोड़ने गया था। कोचविहारमें उस समय महाराज नरनारायण राजा थे। कालापहाड़के पराक्रमसे मन्थन हो उठाने सन्धि की। कालापहाड़ भगवतीका मन्दिर तोड़ और पीठस्थानवर्ती सुन्दर सुन्दर अन्यान्य प्रतिमूर्ति विगाड़ स्वदेगको तोड़ गया। महाराजने अपने भ्राताके साथ भगवतीके मन्दिरादिका पुनः संस्कार किया। कमसे कम बारह वर्षमें उक्त जीर्ण संस्कारका कार्य सुसम्पन्न हुआ था। कामाख्या मन्दिरको वर्तमान (चतुस्ता) मूर्ति (जो साधारणतः सरकायी जाती है) महाराज नरनारायणकी बनायी है। वर्तमान मन्दिरके मध्यभागमें ही महाराज नरनारायण और उनके भ्राता शुक्लध्वजकी प्रस्तर खोदित सुन्दर दो प्रतिमूर्तियां अद्यापि वर्तमान हैं।

महाराज नरनारायण और शुक्लध्वज महामायाके परम भक्त थे। भगवती भी उन पर यथेष्ट अनुग्रह रखती थीं। महाराज कोचविहारसे द्विष ब्राह्मण ने जाकर भगवतीको पूजा आदि निर्वाह करते थे। केन्दुकसाई नामक कामाख्याके एक पुजारी ब्राह्मण, महाराज नरनारायण और शुक्लध्वजके सम्मुख पर कामरूपमें अद्यापि निम्नलिखित जनप्रवाद प्रचलित है—अन्धका केन्दुकसाईके आरति करते समय भगवती सुग्ध हो घण्टा बाद्यके ताल ताल पर नृत्य करती थीं। महाराज नरनारायणने यह सुन केन्दुकसाईसे भगवतीकी चैतन्य मूर्ति देखनेका उपाय पूछा। उन्होंने कहा कि घण्टा बजते समय अन्याको किसी रन्धसे देखने पर उन्हें भगवतीकी चैतन्य मूर्तिका दर्शन होगा। महाराजने उक्त परामर्शके अनुसार एक दिन जाकर भगवतीको देखा था। देवात् भगवतीको यह बात मालूम हो गयी। उन्होंने केन्दुकसाईका गिर जाट महाराज नरनारायणको ग्राह दिया,—'भविष्यत्में तुम और तुम्हारे वंशका कोई भी इमारा दर्शन कर न सकेगा। मन्दिरकी ओर देखनेसे शिरच्छेद होगा।' उक्त ग्राहके भयसे आज भी कोचविहार, बिजनी, दरङ्ग इत्यादि शिववंशो राजपरिवार कामाख्याके मन्दिरकी ओर प्राण जाते

जाति पांच नहीं उठाता। किसी कार्यवश कामाख्या की चोर गमन करते समय कपड़ेधि मुड़ किया लेते हैं।

ब्रह्मके पीछे विद्यार्थिद्वारा राज्य नरनारायण चौर यज्ञध्वज होनेसे सुबोधे मध्य बँटा था। नरनारायणको ध्वजकोपीछे पश्चिम मोर चौर यज्ञध्वजको उभके पूर्व तीरखा समस्त राज्य मिखा। यज्ञध्वजके चंगमें ही ब्रह्मपुत्रके समय तीरखा मृमाग पड़ा। सुतरां कामरूपमें भी वहाँका अधिकार था।

यज्ञध्वजके पीछे उनके पुत्र रतुदेवनारायण राजा बूढे। उनके या पुत्रमें ज्येष्ठ परीक्षित्थि। कश्चित् का नाम ज्ञात नहीं। उनके जावगीरको प्रति दरङ्ग प्रदेश मिखा था। उनके बँसबर पात्र भी पाषाणो राश्राशके पचीन उच्च प्रदेश अधिकार करते हैं। परीक्षित्थि समय राज्यके प्रबोध्यर हो गिहाभाङ्ग नामक ज्ञानमें प्रसाद बनाया। वहाँ राजप्रसादका भग्नावशेष पात्र भी देख पड़ता है। प्रसादके निकट ही १८ कुम मो बनी है। इनकी समाने निम्न ७०० विद्वारण ब्राह्मण उपजित रहते हैं। फिर उच्च नगरमें ही ब्राह्मणका पाषाण था। परीक्षित्थि ही समयमें हाथके सुसज्जमान यासनकर्तानि सुमत्तसम्पादके प्रतिनिधित्वमें राजका भाग्य था। फिर उन्होंने सताना भी यह किया। परीक्षित्थि भीत हो मन्त्रिगणसे परामर्श किया था। फिर वह बन्नाटके पास चानरे गये। वहाँ बन्नाटने उनके दरबारमें हादर पदक किया। हाथके नवाब पर आदेश हुआ कि परीक्षित्थि जिनना रूपया राजकर्म हैं उतना ही वह ले ले, कोई दिङ्गिज न करे। राजानि सौट कर सान मन्त्रि नवाबको दी करोड़ रुपये देने कहा। उनके मन्त्रीने यह सुन सुसज्जमानोंके पतङ्गत पत्र मोमकी बात बतायी। इतने वह मन्त्राज्ञोत हो गये। शिवका परामर्श करने पर फिर हुआ कि एक बार वह फिर बन्नाटके दरबारमें जा ज्ञम चंगोचन कर पारि। जवसे समय मन्त्रो भी साथ हो गये। किन्तु दुर्भाग्यवशमे जाति समय पठनेमें (किसीके मन्त्राज्ञकार राजप्रसादके) राजा परीक्षित्थि मर गये। इसी ज्योयमें

नवाबको पीछने प्रतिश्रुत शर्तके मोमसे राज्य पर अधिकार कर लिया। परीक्षित्थि मन्त्रो अपनेक बहते सम्पादके दरबारमें पहुँचे हैं। उन्होंने जा कर समय विवरण निवेदन किया। सम्पाटने उनके कामूनको पद पर नियुक्त कर विदा किया था। उस समय यह राज्य चार सरकारोंमें बँट गया—ब्रह्मपुत्रक उत्तर उत्तरकुञ्ज या टेंबेरी सरकार, दक्षिण दक्षिण कुन, पश्चिम बङ्गाळ सरकार चौर गोहाटीके साथ कामरूप सरकार। परीक्षित्थि बन्नाटराज्य दरङ्ग उन्हीं चंगमें रहा। परीक्षित्थि पुत्र चन्द्रनारायणने एक बडो ज्योन्कारी मो पायो ही। वह ज्योन्कारी पात्र भी उनके चंगोय मोमते हैं। प्राचीन मन्त्री (नये ज्ञानगो)का भी उनके निवे बङ्गलको ज्योन्कारी मिले। उच्च बटना माय १६०१ ई०में बूयो ही। एक सुसज्जमान पीजदार नियुक्त हो रांगामाटी नामक ज्ञानमें रहने लगे। फिर राजा नामार्थिकके बङ्गाळ विचारके नवाब हाते समय इस दिग्गो विधि उन्नति बूयो। चौरङ्गके वक्रे समय मीरजुमना सेबन्द ही पाषाण जय करने पाये हैं। उनके पो कामरूपराज्यके उच्च चंगके कामरूप, उत्तरकुन चौर दक्षिणकुञ्ज सरकारका कुछ भाग पाषाणवासी राजाओंके अधिकारमें चला गया। उच्च बटनाके ७० वर्ष पीछे रांगामाटीकी पीजदारी उच्च बोड़ाघाटमें स्थापित बूयो।

मीरजुमनाके पाषाणपक्षे पीछे पाषाणके राजाओंने किन्तुवर्ष पदक किया था। फिर वह नाममात्र पीजदारको चंगोचनता मान राजका करने लगे।

नरनारायण चौर यज्ञध्वज उभयके मध्य राज्य-विभाजको बात पड़ती बिच बूढे हैं। किन्तु यज्ञध्वजके जोचित ज्ञानमें राज्यविभाज हुआ न था। यज्ञध्वजके मरनेके पीछे नारायण चपुत्रक थे। इसीके वन्त्रोंने यज्ञध्वजके पुत्र रतुदेव नाया पक्षको पीचपुत्र मान पदक किया। उसके कुछ दिन पीछे उनके एक पुत्र हुआ। रतुदेवकी वन्त्रे मन्त्रिचत्थि राज्यपातिको पाया न रहे। इतने वह मोतर ही मोतर बिदोहाकरके मरत बूढे। पक्षमें

नारायणकी सब बात मान ली गयी। फिर रघुदेव भाग कर पूर्वाञ्चलके शत्रुसे मिले और उनका सैन्य ले ज्येष्ठश्राताके राज्य प्राक्रमणार्थ आ पहुँचे। नारायण भी स्वराज्य रक्षणार्थ सैन्य भ्रमसर हुये। स्वर्णकोपी नदीके पूर्व पार रघुदेव और पश्चिम पार नारायणकी छावनी पडी थी। नारायण स्वयं प्रशारोही सैन्य ले आगे बढ़े। रघुदेव भीत हो ससेन्य भागे थे। नारायणने आज्ञेय कर कहा,—“दुःख है कि-इम राज्य देनेके लिये ही आये थे। किन्तु वह बात न हुयी। इस लिये यह नदी ही अब दोनों राज्य सीमा रहगी।” आधुनिक आसामको बुरख्जीके मतमें उक्त घटना १५०३ गककी हुयी थी। रघुदेवके राज्यकी सीमा पश्चिम स्वर्णकोपी एवं पूर्व दिक्कराई और नारायणके राज्यकी सीमा पूर्व स्वर्णकोपी पश्चिम करतोया थी। रघुदेवने स्वानपाडे जिलेके छोद्यार परगनेमें आधुनिक गौरीपुर नगरसे १० मील दूर गदाघरनदीके तीर नगर स्थापन किया था।

शुक्लध्वजके जीते समय कामारख्याका मन्दिर फिरसे बना था। मन्दिर समाप्त होनेमें १० वर्ष लगे। किची पश्चिमी हिन्दुस्थानीने उसे बनाया था। मन्दिरके पूर्व द्वारके समुख उक्त केन्दुकलाई पुरोहितके द्विप्र मुण्डकी प्रतिमूर्ति वर्तमान है। शुक्लध्वजके जीवित कालमें नरनारायण एक बार शनिग्रस्त हुये थे। ज्योति-पियेनि गणना कर उक्त कथा कह दी। फिर नरनारा-यणने शुक्लध्वजकी राज्यका प्रतिनिधि बना तीर्थयात्रा की थी। प्रायः एक वर्ष पीछे वह लौटे। उक्त भ्रमणके समय कामामराज्यके शत्रुतइम्ही पर उनको लोभ बढ़ा। शुक्लध्वजकी यह खबर लग गयी। वह भ्राताकी दृष्टिके लिये कामामराजकी युद्धमें परास्त कर हायी ले आये थे। अनेकके कथनानुसार उक्त घटनासे ही उनकी नाम “शुक्लध्वज” हुआ।

आधुनिक बुरख्जीके मतमें १५०६ गककी नर-नारायण मरे थे। फिर उनके पुत्र लक्ष्मीनारायणके राज्यमिला। स्वर्णकोपीसे महानन्दा और सरकार घोडाघाट तथा भीटानके दक्षिणस्थ पार्वत्य प्रदेश तक समस्त भूभाग उनके राज्यके अन्तर्भूत था। उक्त राज्य

पश्चिमोत्तरसे दक्षिणपूर्व तक ८० मील दीर्घ और पूर्वी-त्तरसे दक्षिणपश्चिम तक ६० मील विस्तृत रहा। उत्तर पश्चिममें ककटा सीमान्त प्रदेश शिवसिंह (उक्त हीरा और जीराके मध्य जीराके पुत्र) के मन्तानोको दिया गया। लक्ष्मीनारायण अपने राज्यको पछलेसे ही “विहार” कहते थे। कारण शिव हीरा और जीराके साथ विहार करते थे। किन्तु मध्यदेशके वर्तमान विहार (पटना) प्रदेशसे स्वतंत्रता दिखानेके लिये “कोचविहार” नाम रक्का गया।

आईन-एकवरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने एक-वरीकी वधवा मानो था। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें तिब्बत, दक्षिणमें घोडाघाट, पश्चिममें सिद्धत और पूर्वमें ब्रह्मपुत्र थे। भूमिका परिमाण-फल दैर्घ्यमें प्रायः २०० कोस रहा। उनका ४००० प्रशारोही सैन्य, २ लाख पदाति, ७०० हस्ती और १००० जहाज थे। फिर आईन-एकवरीमें लक्ष्मीनारायणके पिताका नाम शुक्लगोस्वामी लिखा है। शुक्लगोस्वामी नहीं, उनके कनिष्ठ न्वाता बाल गोस्वामी राजा थे। उन्होंने विवाह न किया था। इससे उनके मन्तान कोई न था। बालगोस्वामी प्रति सुविद्य राजा थे। उन्होंने अपने भ्रातृपुत्र पाटकुमारको राज्याधिकारी ठहराया। शुक्लगोस्वामोने दूसरा विवाह किया था। उसीसे लक्ष्मीनारायणका जन्म हुआ। पाटकुमार विद्वोही बने थे। उसी समय मानसिंह बङ्गालके नबाब रहे। लक्ष्मीनारायणने मानसिंहसे सस्वाटके निश्चय परिचित होनेका प्रार्थना की। किन्तु मानसिंहने वह बात न सुनी। मानसिंहने उनकी एक कन्याका पाष्यग्रहण किया था। बाल-गोस्वामोने १५०८ ई० की एक बार बङ्गालके नबाबकी अधीनता मान डरवारमें ५४ हाथियोंके साथ विष्टार उपटोकेन दिया। लक्ष्मीनारायण १५८६ ई०में राजत्व करते थे।

ताजक-जहांगीरीके अनुसार लक्ष्मीनारायणने १६१८ई०को गुजरातकी राजसभामें ५०० अग्रणी नज़र भेजी थीं।

बादशाहनामकी देखते जहांगीरके समय परीक्षित

नारायण को बहाली प्रदेमसे और कम्पोजनारायण को पवित्रारसे राजत्व करते थे। पादयाचनमा। कम्पोजनारायणको परीक्षितके पितामहका सहीदर पतसाता है। जहाँमोरके राजत्वके दस वर्ष सुहृदके राजा अनुमानसे परीक्षितके विद्वद दरबारमें पमियोग समया कि उन्होंने उनके परिवारवर्गका पचरोध किया था। शिव चला उद्-दोन धर्मदुष्टो इतकाम् खान् उस समय बङ्गाके नवाब रहे। उन्होंने मकराम खान्को को बहाली को छीनेने भेला था। कम्पोजनारायणसे सुहृदमानिके पच पर याम दिया। सुहृदमें पराजित हो परीक्षितने आमसमयेके किया था। फिर उनके ध्याता बलदेवने पञ्जाबराज स्वर्गदेवका आशय किया। उससे पीछे परीक्षित् लम्बादेके आदेशानुसार दिल्ली भेसे गये और मकराम खान् जाओके शासनकता निवृत्त हुये। बलदेव आसामराजको सहायतासे जाओके उद्यारार्थ यत्न करने लगे। पञ्जाबराज कोय पक्षीनता कोकार करार बनका साहाय्य करने पर प्रतिश्रुत हुये। मकरामखान् उसी समय शासनकुलसे डटे थे। इनके ध्यान पर कोई नूतन शासनकर्ता आनिवाला ना। इसी पचसरमें सुयोग देव बलदेवने बरहू पञ्चिहार किया। उस समय इस देयमें बङ्गाके नवाबको घोरसे हाथो छिटाको रक्षा करनेको आगोरदार पावक रहते थे। आहिम खान्ने बङ्गाके नवाब रहते समय बहुत दिन तक जाबियोंको आमदनी न पावो यो। उन्होंने जाओ देहाके सरदारको उपकृत होनेका आदेश दिया। उपकृत होने पर नवाबने इसे बन्दी बनाया। उनमें कम्पोज और सवराजने भाग कर आसामराज स्वर्गदेवका आशय किया था। फिर इसलाम खान् नवाब हुये। उस समय पाण्डके पञ्जाबारी यामिदार यत्नजित् बलदेवसे मित्र गये। उन्होंने उनको जाओके शासनकर्ताके विद्वद सुहृद करनेके लिये गोपनीय परामश दिया था। बलदेव कोर्षा घोर आशामियोंका सेन्ध के सुहृद करनेको उपकृत हुये। १६३६ ई० को इसलाम खान्ने यह बात सुनी। उन्होंने कई मंगसबदारोंको १००० सवार, १००० बन्दूकबाणै पैदक, १० बाराय गामक मोबा, १००

मोबा० मोबा घोर बहुरसंख्यक बलबाह मोबाके साथ भेजा था। मोबाउ घोर पाण्डके निकट महा-सुहृद हुआ। समय पचमें मारी घोर बायल जोसे मो सुहृद चलता रहा। इसलाम खान्ने फिर विगुण सेन्ध भेज दिया। किन्तु उसी समय फिर पाण्डोंने वल देवका पच किया था। इससे सुहृदमानो सेनाको रसद बन्द हो गयो। इसलामखान्ने संवाद सुन रसद भेकी। किन्तु उससे पच् बनेमें बिलम्ब लगा था। उसी समय बलदेव सेन्ध मोबाउ घोर पाण्डु, जोड़ जाओके पमिसुहृद चले गये। फिर उन्होंने राय पचरोध कर रसद पच् बनेको राज राको को। जाओके शासनकर्ता पचउ उद्-सखामको खीय स्वाताके (यको प्रधान सेनापति बन ठाकेसे भाये थे) साथ विपच गिरिमें सन्धिका प्रस्ताव करनेके लिये ज्ञाना पड़ा। किन्तु यह सदेव बांध कर आसाम भेजे गये। उनके स्वाता सेवदने बलपुत्रके शत्रुगिरिसे निकलनेको चेष्टा की थी। किन्तु विपच जामि पर बह सदेव मार गये। उससे पीछे मौर यको सेनापति हुये। इसी बीचमें ब्रह्मपुत्रके उत्तरकुच राजा चन्द्र नारायण पर सुहृदमानोंमें आक्रमण किया। चन्द्र नारायण भीत हो इधियकुलके परमने साखामारोको भागे थे। साखामारोके जमीन्दार चन्द्रनारायणके भयसे सुहृदमानोंमें जा मिले। सुहृदमान उसके पीछे धुतयद् यत्नजित्के पचसम्मान करनेको हुबकी पच् थे थे। यत्नजित् राय मूषचबाणै जमीन्दार (राजा) सुकुन्दरायके सुहृद थे। लम्बादे जहाँतोरके समय शिव चला-उद्-दोन बङ्गाके शासनकर्ता रहे। उस समय उन्होंने सुकुन्दरायके को खरीन एक दल सेन्ध भेज एक बार जाओप्रदेम पर पञ्चिहार किया था। सुकुन्दराय सुहृदमें खीतने पर पाण्डु घोर मोहादीके यानिदार बने। इसी सुयोगमें आशामियोंके बाय

• यह पचक सरदार मोबा अनुपदने सुहृदको नहीं पचरद कीती थी। मोबा भीयाने एक पचक करता है। फिर कचने बाउ पचर चने है। कच मोबाके आशामके हीन नहीं नहीं सुहृदकी मोबा (यको जोनेके बाउके बहाले न पचरनेको पच) कीच के जाती है।

उनका सौहार्द स्थापित हुआ। फिर उन्होंने भूपणिके जमीन्दारकी भांति आसाम और कामरूपप्रदेशके अनेक प्रधान व्यक्तियोंके साथ बन्धुता बटाई। शिखर भस्मा-उद-दीनके पीछे होनेवाले सब नवाबाने उन्हें दरवारमें जानेके लिये कई वार आदेश किया था। किन्तु न तो वह कभी उपस्थित हुये न नियमित पेश-कश ही भेजी। नवाब इसलाम खान्ने देखा कि सुकुन्दरायका दरवारमें पहुँचना कभी सम्भव न था। इसलिये उन्होंने उनके पुत्र शत्रुजित्को बुला भेजा। शत्रुजित् गये। उन्होंने दरवारमें यथारीति नवाबकी वध्दता दिखलाई थी। उस समय नवाब हाजोके विरुद्धमें सैन्य भेज रहे थे। उन्होंने शत्रुजित्को भी उसी सैन्यके साथ भेज दिया। किन्तु शत्रुजित् आसामराज एवं राजा बलदेवसे बन्धुता मान चुपके चुपके गूढ़ संवाद और दूसरे जमींदारोंको उनसे मित्रनेके लिये उत्साह देने लगे। अन्तमें नवाबकी सेनाने धुवड़ी पहुँचतेही शत्रुजित्को बांध लिया और जहांगोरनगर भेज दिया। वहाँ विचार होने पर शत्रुजित्को प्राणदण्ड मिला था।

अबद-उस्-सलामके विमट होने पर कीर्षी और आसामियाँको सेना १२००० पदाति तथा बहुसंख्यक कासा नौका लेःवनाश नदीकी राह ब्रह्मपुत्रके तीर योगीगोपा (योगीगुहा) नामक पर्वत पर पहुँच गयी। उक्त पर्वतके नीचे ही ब्रह्मपुत्रका वनाश-सङ्गम है। आसामी वहाँ एक सुदृढ़ दुर्ग बना नवाबके सैन्यकी प्रतीक्षा करने लगे। फिर उक्त दुर्गके विस्तृत सामने ब्रह्मपुत्रके दूसरे तटपर भी हीरापुर नामक स्थानमें वैसाही एक और दूसरा दुर्ग बना था। योगीगुहाके दुर्गमें ३००० और हीरापुरके दुर्गमें अवशिष्ट ८००० सैन्य रहा। नवाबका सैन्य धुवड़ी छोड़ खान्पुर नदीकी राह ब्रह्मपुत्र पार हुआ। फिर वह जङ्गल काट और मार्ग बना योगीगुहाकी ओर बढ़ा था। नवाब-सैन्यके प्रधान सेनापति और सेनानीके अधीन ३००० पथरकलावाले सिपाहो थे। क्रमशः राहमें दोनों दल सम्मुखीन हुये। आसामी प्रथम आक्रमणसे ६ कोस हटे थे। दूसरे दिन नवाबके सैन्यने योगीगुहाके

दुर्ग पर आक्रमण किया। फिर ठीक उसी समय जमान् खान् दक्षिणकूलके चन्द्रनारायणको धंस कर ससेन्य ला मिले। इसीसे बलदेव नूतन और वर्धित सैन्यका वेग सह न सके। वह ससेन्य दुर्ग छोड़ भागे थे। दुर्ग अधिकार कर नवाबका सैन्य चन्दनकोटको चला गया। राहमें बहुरनगरके जमीन्दार उत्तमनारायणका पत्रवाहक एक पत्र ले कर पहुँचा। उसमें लिखा था,—“बलदेवने हृदय सैन्यदलके साथ बडनगर पर आक्रमण किया है। किन्तु उत्तमनारायण उन्हें बाधा न पहुँचा सकने के कारण नवाबके सैन्यमें मिलनेको आशासे खुण्टाघाट गये हैं।” सुहृद्द जमान् खान्ने कुछ सैन्य ले उसी समय बलदेवके विरुद्ध बडनगरको यात्रा की। राहमें उत्तमनारायण मिल गये। नवाबके सैन्यका अवशिष्ट अंश चन्दनकोट पहुँचा था। नवाब जमान् खान्ने पोमारी नदी पार हो बलदेवके एक छुद्र दुर्ग पर अधिकार किया। फिर वह अपसर होने लगे। बलदेवने देखा कि जमान् खान् प्रायः जा पहुँचे थे। उसी समय उन्होंने बहुरनगर छोड़ चत्री नामक स्थानको गमन किया। वहाँ बलदेव पर्वतके किनारे किनारे कई एक दुर्ग बना कर बैठ गये। जमान् खान्ने भी इससे लौट विष्णुपुरके जंगलमें स्तम्भावार स्थापन किया था। फिर उन्होंने वर्षा अतीत होनेपर बलदेव पर आक्रमण करना ठहरा लिया। उसी समय बलदेवने विष्णुपुरसे डेट कोस दूर कालापानी नदीके तीरपर रहनेवाले विपक्षियोंका रक्षित छिन्न मित्र कर डाला। पाण्डु और ओघाटसे उसी समय उनका भी नूतन सैन्य आ पहुँचा था। उन्होंने बौचबौचमें रातका आक्रमण मार नवाबके सैन्य को व्यतिश्रुत कर दिया। वर्षा बीत गयी। आसाम-राजके जामाता बलदेवसे जा मिले थे। उसके पीछे १६३७६० की ११ वीं अगस्तको रातके समय बलदेवने विपक्षियोंके दो छुद्र दुर्ग अधिकार कर लिये। किन्तु दूसरे दिन सवेरे जमान् खान्ने इठात् कितने ही सैन्यके साथ बलदेव पर आक्रमण मारा था। उनके कुछ सिपाही बलदेवसे सामने लड़ते रहे। फिर अवशिष्ट सैन्यके साथ उन्होंने बलदेवके रक्षित स्थानोंपर

पाहलमच बिया। उस समय तमने बेधा येथे न हा।
 एसीवे बह एक एक कर विपचीके झाक जा बदि।
 पनेक सेनापति मरे से। फिर बहु सेन्ग मो चह हुआ।
 बितनो भी बन्दूका तोपां पोर घुंघरी इतिबारीकी
 ज्ञानि हुयी हो। किन्तु बहदेवकी सम्पूर्ण पराजित
 होति न देख नबाबका सेन्ग छठी दिन रातको बिन्दु
 पुरके बहलमके भाग गया। उसके पोछे नयनकर मासने
 चन्दनकोटये नूनन छेन्गने का तोन तरपटी बहदेव पर
 पाहलमच बिया था। उस समय बहदेव का पासाम
 राजका सेन्ग पशु का न था। एसीवे विपचके मीपच
 पाहलमचने बहदेवका पत्थसंज्ञक सेन्ग ठकर न सहा।
 बह मीठ हो रच छोड़ मामा था। बहदेवने कार्य
 बरहुकी राह पकड़ो। पासामराजके जामाता बन्दो
 बन गये। जताबगिह सेन्गदल नौबाट पौर पाचतुसी
 पोर माना। वहां पासामराज सपेन्ग रसद बगैर
 लिहे बचकित से। नबाबका सेन्ग एक बार उन पर
 पाहलमच करने गया। पचप पबत, नौबाट
 पौर पाचतुमें मीपच हुए हुआ। पासामराज परास्त
 हो करार्य होट गये। कोचहाको प्रदेय सुषलमानोंके
 पबिचारमें हो गया। पासाममानमें बहल नदी पौर
 ब्रह्मपुरके मन्च काबली दुर्ग पबिचार कर सुषलमान
 चान्त हुये। उकर एक दस सेन्गने दरज का बहदेवको
 मगाया था। बहदेवने पचसीपकी पासामने सुष
 मिन्ही नामक क्लानमें जाचव लिहा। पब्लिम पचजामे
 हो पुत्रोके साथ बन्देनि बरीं करगैकाम बिया। एसी
 दुर्गमें कामरूप सम्पूर्ण सुषलमानोंके पबोन हो गया।
 उपरि-कञ्ज चटना पादमाह नामने की गयो है।
 किन्तु बुरची या मिटर मार्टिनके पन्धमें बहदेवका
 नाम नहीं मिलता। परीचित् नारायचके बन्दू
 नारायच* पुत्रकी बात मी बिभी पन्धमें देख नहीं
 पड़ती।

नरनारायचके पोछे श्रीमहासे छव राजाओंका
 बियप कोपबिचारके इतिहासमें लिखा जाईगा।

कोपबिचार की।

पासामको बुरचीको देखते यज्ञभरके पुत्र
 रहुदेवने राजा जो नगर संस्कार पौर इयप्रोच-माचव
 का मन्दिर निर्माच कराया। तनके पिताने पासामके
 पबोम राजाओंको दुर्गमें परास्त कर पयने याचना
 पोन रखा था। किन्तु रहुदेव बह कर न सके।
 तन्हीने पासामके पबोमराजको मङ्गलदेवी मात्री
 निन्न बन्धा से निरापद राजस बिया। पातुनिच
 बुरचीके मतमें १५१४ तकको रहुदेव राजा हुये से।
 रहुदेवने गदावर तौर को नगर बनाया उसका बलित
 नाम मिखाभाऊ वा मिखाबिचय है। (यहां मिखा
 मीठहा या बियन हुचला बन गयेट हा।)

रहुदेवके पुत्र परीचित्-नारायचके को मन्दा
 दिकीके बाटमाहके पापसे कामूनयो हो कर पाये
 के डनका नाम बबोन्दू बहुरा था। रांयामाटीके
 बर्तमान बबोन्दूर तन्ही बबोन्दू बहुराके संयचर है।

पटनामें परीचित्को म्हु हुयो। तनका राज्य
 सुषलमानोंके हाथ पड़ते मो मानजानदोके पबिमसे
 क्चकेकोके पूर्व पर्यंत तनके पुत्र बिजितनारायचके
 पबोन रहा। बह सुषलमानोंके मोषे बरद राजा
 बने से। एसी प्रकार मानजानदोके पूर्वके दिब्यारै तल
 परीचित्के ज्ञाना बलितनारायच मो बरद राजा हुये।
 बिबनोके राजा बिजितनारायच पौर दरजके राजा
 बलितनारायचके सन्तान हैं। सचपत बिजितनरा
 यचने ही बिजितनगर या बिजनी क्लापन बिया का।
 पहले बह सुषलमानोंको बरने चर्धे देते से। फिर कर
 खरद्व हायां दिनका नियम हुआ। येपकी चगी बकि
 पबोन पर्यं दिनका नियम पुनः बह गया है।

सुषलमानोंके पबिचारके कामरूप समस्त परि
 बर्तित हो गया। देयका पाचार ब्यबहार, भूमिका
 प्रबन्ध पौर राज्यप्रबाबी बहदेवकी मानि दोखने सगो।

बलितनारायच त्रिस भागके राजा हुये, कामता
 पुरका राजबन्ध मिटनेके बह क्लान ततने दिनी तल
 एक प्रकार पराजक बन गया हा। शिकमें चण्डीपरादि
 र्भवांनोंमें बह देय बलितना को हुवाबलित बिया।
 किन्तु बह बात मो पबिच दिन न बची। सुषलमान
 राज्य वीत कर कूट मार करते से। सुतर्त तनके समय

* चारही उपरायचके बरने राजा चरकरचक बरिचित्के
 हुन है।

देगमें शान्ति व्यापित होना दूरकी बात थी, अधिक प्रशान्ति बढ़ गयी। भोट और कङ्कारके अधिवासी दोनों ही उक्त प्रान्तमें महा उपद्रव मचाते थे। फिर भी वलितनारायण दरङ्ग नगरमें राजधानी बना देगके शासन पर मनोयोगी हुये। किन्तु आसामराजका उपद्रव न घटा। पीछे उनकी भ्रातृपुत्रीका विवाह होनेसे आसामराजके साथ उनकी मित्रता हो गयी। स्वर्गनारायणने नूतन पत्नीके नाम पर नगरकी स्थापना और एक नदीका नामकरण किया। वलितनारायणकी धर्मशीलता तथा सदृश्यवहारसे प्रीत हो उन्होंने उन्हें 'धर्मनारायण' उपाधि दिया और उनके कनिष्ठ भ्राता गजनारायणको वल्लतलाका राजा बनाया। वल्लतलाके राजा उक्त गजनारायणके वंशधर है। आधुनिक बुरष्ठीके मतमें १६३८ गककी वलितनारायणने स्वर्गलाभ किया और उनके पुत्र महेन्द्रनारायणकी सिंहासन मिला। महेन्द्रनारायणने ब्राह्मणोंको बहुतसी निष्कार भूमि दी थी। उन्होंने १६ वर्ष निरापट यथेष्ट शान्तिसे राजत्व कर १६४३ गककी परलोक गमन किया। फिर उनके पुत्र चन्द्रनारायण राजा हुये। चन्द्रनारायणका राज्यकाल १७ वर्ष रहा। पीछे तत्पुत्र सूर्यनारायण राजा बने। आधुनिक बुरष्ठीके मतमें उनके समय १६८२ ई०की मञ्जूर खान् नामक किसी सुसममान सेनापतिने उक्त देग पर आक्रमण किया था। उस युद्धमें सूर्यनारायण बांध कर दिल्ली भेजे गये। राज्यसे सूर्यनारायण किसी प्रकार भाग आये। किन्तु वह लज्जामे फिर सिंहासन पर न बैठे। सूर्यनारायणके वन्दी होते समय उनके भ्राता इन्द्रनारायण पांच वर्षके थे। मन्त्रियोंने मिल कर उन्हें राजा बनाया। किन्तु मन्त्रियोंमें परस्पर विवाद उठनेसे आसामकी अहीमराजने कामरूप पर्यन्त अधिकार कर लिया

था। फिर भी वलितनारायणका वंश विलकुल मिटा न था। उनके वंशीय दरङ्गके सिंहासन पर प्रतिष्ठित रहे। फिर इन्द्रनारायणके पीछे आदित्यनारायणने सिंहासनाभिरोहण किया। उनके समय राज्यकी सीमा उत्तरमें गोसाईं-कमलकी शान्ति, दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र, पूर्वमें धनगिरी और पश्चिममें बहनदी निरूपित हुयी। उसीके मध्य कियटंग भाग कर आदित्यके भ्राता मधुनारायण राजा बने। आदित्यके मरने पर ध्वजनारायणकी सिंहासन मिला। उनके समय दरङ्ग राज्य सम्पूर्णरूपसे अहोमके अधीन हो गया। सूर्यनारायणके धीरनारायण नामक एक पुत्र थे। (आधुनिक बुरष्ठी मतमें १७४४ गक।) उन्होंने ध्वजनारायणको मार राज्य लिया। किन्तु वह तीन वर्ष ही राज्य कर डिमरुयाकी ओर भाग गये। उनके पीछे महसूनारायण बड़े पराक्रमी हुये। वह दोनों भाई एकत्र राजा बने थे। उनके पीछे (१७६८ ई०) कीर्तिनारायणके पुत्रने राज्य पाया। उनके समय दरङ्गके राजाओंका पराक्रम विलकुल खवे हो गया।

वलितनारायणके समयसे इन्द्रनारायणके समय पर्यन्त वही कामरूप पर शासन करते रहे। मध्य मध्य सुसलमानोंके आक्रमणमें भी उक्त वंशका ही प्राधान्य था। इन्द्रनारायणके समय कामरूपमें अहीमका अधिकार हुआ। किन्तु ध्वजनारायणके समयमें ही कामरूपकी स्वाधीनता मिटी थी। उनके पीछे कीर्तिनारायणके पुत्रके समयसे दरङ्ग राज्यका नाम उठ गया।

विजनोंके राजवंशका इतिहास आलोचना करनेसे समझते है कि महाराज विश्वसिंहके दो पुत्र रहे। ज्येष्ठ नरनारायण भूप करतोया तथा विहारके मध्य और कनिष्ठ शक्तध्वज भूप विहारसे दिकराई तक राज्य करते थे। शक्तध्वजके पुत्र रघुदेवनारायण रहे। रघुदेवके तीन पुत्र थे। उनमें ज्येष्ठ परीक्षितनारायण विजनीके, मध्यम वलितनारायण दरङ्गके और कनिष्ठ गजनारायण वल्लतलाके राजा हुये। ज्येष्ठ परीक्षितनारायणकी दिल्लीके सम्राटने खिलभत दी थी। देगकी दिल्लीसे लौटते समय उन्होंने राह

* पक्षे रूप वृद्धे ई कि परीक्षितनारायणने आसामराजके आक्रमणसे बचावके लिये स्वर्गनारायणको महकदमी नामी कन्या प्रदान की थी। इससे समझ सकते कि परीक्षितनारायणके राज्यकालमें ही वलितनारायण उक्त प्रदेश पर शासन करते थे। पीछे धातकी मरने पर उन्होंने आसाम की सुषमाल भासमहर्षिसे निज राजा प्रत्यक्ष कर लिया।

पर राममहर्षिमें स्नानकाम किया। उनमें पाद जो मन्थो या दोबानु से, वह कामरूपके ज्ञानरूपो हुये। परीक्षितके चन्द्रनारायण नामक एक पुत्र थे। उन्होंने व गये बिनमौके राजासे ही उत्पत्ति है।

व्यक्तियारके पद्ययोगी मिनशाम्बुधरोनी तबज्ञात र नासिरो नामक परम प्रतिज्ञासमें लिखा है —“नक्षत्रा-वतो पञ्चवारक करे वय पीछे (सम्भवत ६-१ हिजरीको) बख्तियार तिम्बत और तुलखान जेतनेयो पयबर हुये। तिम्बत और नक्षत्रावतोके सम्भवतीं मूमासमें इस समय शीत, शीत तथा तिहार (वर्तमान ब्राह्म) नामक तीन प्रवाल जातिका बास बा। शीत और शीतका एक सरदार (तबकात-र नासिरोमें इस सरदारका नाम शीतका “यमो” लिखा है) व्यक्तियारके द्वार गया। फिर उसमें सुसज्जमान धर्मप्रवच किया बा। वही प्रवचनमेंक बन व्यक्तियारको सुनेय बधनकाटकी राह बाधमतीके गौर की गया। उस ज्ञानमें वह दस दिनमें पारब्रह्म प्रदेशके किसे होसके भी पश्चिम भिहराववासे प्रहार-धेतुके निवृत्त पयुषि धी। उस धेतुको रचाके जिये व्यक्तियार एक दस सेय्य झाड़ पानि बड़े। धेतु पार जाने पर कामरूपके रावर्ष किसे विद्यासे बखिओ मेव बहता भेजा कि उस समय तिम्बत पर पाहमच करना हुकिसइत न था। उस समय लौट कर पश्चिम सेय्य संघर करना उचित बा। फिर उन्होंने भी शोकार किया कि पामामो बर्षे वच परना सेय्यदन से उक्त दीय कीतनेका प्रवाल ठठाके। व्यक्तियारने किन्तु उक्त प्रत्याव पाह्य न किया। लखके पीछे वह १६ वें दिन तिम्बत पयुषि। वहाँ बुद्धादिके पीछे परने सेय्यमें कुछ महबड़ को जानीसे लौटनेको बाध हुये। उनमें लौटनेका मार्ग कामरूप और किङ्कर्तके मन्थ तौस निरिबर्षका एकतम था। फिर १६ दिन पनाहार पश्चिमात्त बन उक्त धेतुके निवृत्त पाने पर उन्हें जमके दो भिहराव टूटे सिके। धेतु रचाके जिये निवृत्त सेय्यदन्में दो भायबोंके मन्थ बिबाद बहा था। रधोसे वह सुप्यबायं छोड़ चलने बने। फिर कामरूपके किन्तुसेमें वही लौटा बा। पार जानिका उपाय न देख व्यक्तियारने भनैय एक देवमन्दिरमें पायव लिया।

फिर उन्होंने बिडा बांध कर पार होनेके लिये बाडादिके संघर करनिको बिडा को। कामरूपके राय उक्त संवाद सुन सनेय्य बहा गये। उन्होंने मन्दिरको पारा और तीक्ष्णसुख बंधकपठ गाड़ पार उनमें बरनीबन्दो डाह सुसज्जमानके सेय्यका निर्बाचपय राकना बाहा। बख्तियारका सेय्य विपद् देख एक और तोड़ कर निकला और बिनहुन नहीतोर पयुषा था। कामरूपका सेय्य पीछे बगा। फिर प्रलेबने प्रायभयसे बोड़ेके साथ नहीमें बूट कर पार जानिको बिडा को। किन्तु नदीके मध्यकषमें पयुष प्राय सब डूब मरे। शेषक व्यक्तियार और कुछ बोड़े सोम प्रति बहसं प्राय बहा दूसरे पार पाये। उक्त शीत सरदार यकीने जा कर उन्हें लठाय पार दोनाजपुरके देवकोटमें पयु बाया।” ब्रह्मजानी पयियादिक सासावटीकी पयिकासिं २० पद्यके २६१ पृष्ठ पर ब्राह्मण साहबमें सिनहाको नामक धेतुको बर्षना इस प्रकार लिखी है —“यह धेतु पश्चिम कामरूपमें मोहाटो पयुषनेको एक पुरानी लंबी राहके बीच बहा है। सम्भवत रसी धेतुके व्यक्तियार छिलकी (मताकारके बख्तियारके पुत्र सुहभद बिलजरी) तातारके पय्यारोको से मोहाटोमें हुये धी। कारक यह मोहाटोके उत्तर-पश्चिम मानको मिरिमावासे प्रति निवृत्त परस्थित है। इस पर्यंत पर पाह मो नगरप्रवेशके मार्ग और पतरचकोपयोगी बहिर्दुर्गके भग्नाशयेपादि देख पकृति है। किन्तु इससे विद्याप करनेका यथैत कारक मिलता है कि वह महबद-र बफ्तियार बिनमौके तिम्बत परका सिलहाकोबाहा हवय मयार धेतु को नहीं सकता।

उसके पीछे मोहाटके नवाब नवाय लक्ष्मीन (१२११-१० ई०) कामरूप कीतने गये। कामरूपके सदिया नामक स्थान पर्यन्त उन्होंने बय किया और कर बिबा बा। किन्तु सदियाको पूर्वपौर पयुष वच परान्त हुये। १२५०-१८ ई०को मोहाटके मीनावति मन्थिक देवबने कामरूप पर पाहमच किया बा। उन्होंने वहाँ एक मसजिद बनवायो। किन्तु वह मुहमें जयलाम न कर सके। वयासे देय जममें डूब जानी पर उनको यथैत सेय्यजाति हुयी। पत्तकी वह महा

दुरवस्थामें पड़ कर गौड़ लौटे। फिर १२५८ ई०की गौड़के नवाब तुगलक खान् स्वयं कामरूप पर चढ़े थे। कामरूपराजने उन्हें बांध कर मार डाला। यह निरूपित करना दुःसाध्य है, उस समय कामरूपमें कौन राजा थे। कामरूप जिलेमें "वेदरगड" नामक एक पुरातन गढ़ है। प्रवादानुसार १२०४ से १२५८ ई० तक वहाँ कोई सुसलमान-सेनापति कामरूप पर आक्रमण करने गये थे। उनके हाथसे देशकी रक्षा करनेके लिये फेंगुवा नामक राजाने वह गढ़ बनवाया। परन्तु उसके पहले वैद्यदेवने उक्त गढ़ स्थापित किया था। फेंगुवाके पीछे फिर सुसलमान वहाँ न पहुँचे। एक बार राजा नीलाम्बरके समय गौड़के नवाब हुसेनशाहने (१४८८-१५०६ ई०) १२ वत्सर अवरोध करनेके पीछे कामरूप पर अधिकार किया था। हुसेनशाह कामतापुर जीत कर स्वीयपुत्र नसरत शाहकी प्रतिनिधि बना बहालको लौटे। नसरत शाह कोचविहार-राजवंशके आदि-पुरुष विश्वसिंहसे छारकर भागे थे। फिर कामरूपके सौमारखण्ड (वर्तमान आसाम)में चहुँमुद्ग वा स्वर्ग-नारायण राजा हुये। (१४८७-१५३६ ई०) उस समय तुरवक नामक किसी पठान-सेनापतिने कामरूपके अन्तर्गत उजाई देग पर आक्रमण किया। आसाममें कलियावर नामक स्थान पर युद्ध हुआ। युद्धमें तुरवक जीते थे। किन्तु स्वर्गनारायणके प्रधान मन्त्री कन्चेगने उनके विरुद्ध युद्धयात्रा की। वह तुरवकको पराजित कर करतोथाके अपर पार भगा गये थे। फिर विश्वसिंहके पुत्र नरनारायणके समय काल्यधनने कामरूपमें गौहाटी तक पहुँच कर अनेक देवालय नष्ट किये। परीक्षितनारायणके मरने पर टाकाके नवाबने

• इससे पहले इस प्रश्नके किसी स्पष्ट पर कामतापुरके विवरणमें नसरत शाहके हाथसे विश्वसिंह द्वारा कामतापुर वा कामरूपराज्यके उद्धार होनेकी बात लिखी जा चुकी है। फिर यहाँ देखते हैं कि अंशिम राजा स्वर्गनारायणके मन्त्री कन्चेग करतोथा तक तुरवकके पीछे गये थे। पचासपर पर तुरवक नामक किसी पठान सेनापतिके कामरूप जीतनेकी बात भारतवर्ष या बङ्गालके दूसरे इतिहासोंमें नहीं मिलती। यह विषय पर्यालोचना करनेसे समझ पड़ता है कि तुरवकके कामरूप आक्रमणकी कथा प्रवादमात्र है। क्योंकि विश्वसिंहके कोचविहार और कामतापुरमें रहते तुरवकके अनुसरणकी सम्भवे ग क्यों चलते ?

कामरूपके अन्तर्गत हाजोप्रदेग (परीक्षितका राज्य) ने लिया था। सुसलमान सेनापति मकरम खान् रांगामाटीमें रह उक्त प्रदेग पर शासन करने लगे। फिर बडदेनीलच्यो नामक कोई व्यक्ति रांगामाटी गया था। उसके पीछे सैयद अतु वकर नामक एक व्यक्ति आसाम जीतने गये। तेजपुरके निकट भरलीमें युद्ध हुआ। युद्धमें अतुवकर मारे गये। उस समय कामरूपका अधिकांश अंशोम राजाके, कुछ अंग रांगामाटीवाले सुसलमान शासनकर्ताके और कुछ अंग राजा टंगरके अधीन था। कुछ दिन पीछे मिर्जावाट नामक रांगामाटीके किसी शासनकर्ताने अंशोम राजावाँके हाथमें गौहाटी निकाल लेनेका यत्न किया। किन्तु वह बन न पड़ा। शेषको उनके परवर्ती बहरामवेग उसमें कृत-कार्य हुये। फिर क्रमशः मिर्जा रमन खान्, अशदुल-इसलाम शाह, इसलाम खान्, शेख बहराम खान्, शेख समस्तौ खान्, मकदूम इसलाम और मही-उद्-दोम रांगामाटीके शासनकर्ता बने। उसी बोच मोमार्द-तामूलो बडबडुवा नामक किसी आसामी सेनापतिने एक बार अत्यन्त दिनके लिये गौहाटीका उद्धार किया था। किन्तु वह फिर छोड़नेकी बाध्य हुये। फिर मिर्जा जैन-उल-आबदीन, इसपञ्चर खान्, नवाब नर-उन ला अनवर खान्, मिर्जा हुसेन खान्, जारो मियान्, सैयद हुसेन, सैयद कुतुब, नाखुला, प्रसूति कई लोगोंने कुछ २६ वर्ष कामरूप पर शासन किया। उक्त शासन-कर्ताओंमें कोई हाजा, कोई रांगामाटी, और कोई गौहाटीमें रहता था। शेषको उस समय समस्त कामरूप जिला एक प्रकार सुसलमानोंके अधीन था। बिजनीका राज्य और ग्वालपाडा जिला भी सुसलमानोंके ही हाथ था। केवल दरङ्गराज स्वाधोन रहे। किन्तु वह भी सुसलमानोंका प्रभुत्व मानते थे। १६५४ ई०की जयध्वज सिंह वा सुताम्ला रङ्गपुरमें अहोम-सिंहासन पर बैठे। उनके किसी सेनापतिने गौहाटी अधिकार किया। १६६२ ई०की मीर जुमला कोचविहार जीतने गये। गौहाटीके पूर्व उजाई गड़गाव तक उनका अधिकार हुआ। फिर मीर जुमला स्वयं पीड़ित हुये। उनके सैन्यमें भी

विद्रोह होमित्री धृपना मित्री थी । रघोसे वह राजा ब्रह्मधनने मन्त्रि कर छोड़ मये । मन्त्रम पान् पश्चिमत प्रदेशमें शासनकर्ता रहे । उनके पीछे मघोद कान् पौर से पदपीरिज पान् उक्त प्रदेशके शासनकर्ता हुये । पञ्चमराज ब्रह्मधन सिंघके मित्र राजक बसुन करकेके मिये उनका दूत गया था । उनमि उके पपमान कर निश्चान दिया पौर मोहाटी पर्यन्त ध्यान पश्चिकार किया । दिहोयने छुड़ हो १६१८ ई० के समय राजा रामसिंहको मिया था । रामसिंहने जा मोहाटी पर पश्चिकार किया । फिर वह जनरके पमिमुष पपकर हुये । उस समय कामरूपके सोमान्तखानमें बड़फूजन उपधिवाये कोई शासनकर्ता रहते थे । १६२० ई०का स्वर्गनारायणन इस पदको धरि भी थी । वह सोमान्तखानमें रहे पञ्चम राज्यका विदेशीय शासनप रोहतें थी । राजा ब्रह्मधनके समय नाशित बड़फूजन रहे । वह उक्त सोमार्द ताम्बुली फूजनके पुत्र थे । नाशित बड़ फूजनने राजा रामसिंहको मन्त्रि बननके कहका मिया कि १६६२ ई०को मीरजुमका रथमें डार पञ्चमराजके मन्त्रि कर मये थे । वह समय पञ्चमराज न तो दिहो मन्त्राई पञ्चमराज रहे पौर न उनके राजत्व देनको प्रमत्त थे । नाशित बड़फूजनका मरये याक उन मुसलमानोंका सेव्य सुइको पपकर हुआ । १६६८ ई० को पौरनजेबकी सेनाके साथ कामरूपके शासनकर्ता नाशित बड़फूजनका घोरतर संघाम माराहाट नामक खानमें पड़ा । उस संघाममें मुसलमानसेव्य परामृत हो भागा । पञ्चम सेव्यदि मानदा नदो तक उपका मोहा किया । उयो समयके मानदा नदो पञ्चमराजकी पविम सोमा मानो गयो । पञ्चमराजमें नदोनीर पर डारोरान नामक खानमें एकदम सेव्य रखा था । १६०१ गकमें पपात् १६८८ ई० को दिहोमि फिर सेव्य मया । उस समय पञ्चम शासनकर्ता मोतमनबाब मोबा बड़फूजन थे । उनने कजियावर पर्यन्त देस मुसलमानोंको ऐ मन्त्रि को । उरके वीरे १६०८ गकको सन्दिही बड़फूजनने निरपद्रव मोहाटीका उधार किया ।

फिर दूसरे वर्ष मंजूर पान् नामके एक नवाब बुद्ध बनने मये थे । मोहाटीके निरुक्त यक्षेणरके रट कोसेमें मयालक बुद्ध हुआ । उस युद्धमें पराज्य हो मुसलमान रांगामाटो, डारो मोहाटी पौर कामरूपको सोमा तक छोड़ कर भागने पर बाध हुये । कामरूप सन्धूर्कपने पञ्चमराजके पश्चिकारमें पड़ गया । फिर दिहोके बादग्राह हीनमम हुये । बहानमें पंगीत्रो पोरन्दाको पराभोविद्यो, पोरपोत्रो प्रभृति घुूर घुरोपवासिनोंका उपद्रव बढ़ा था । रघोसे नवाबोको भी कामरूपकी बात बोधनेका समय था परकाय न मिया । पञ्चमराज निरपद्रव कामरूप भोजने लगे । मोहा बड़फूजनके मन्त्रिपदमें कामरूप राजका नाम लिखा था । उस मन्त्रिपदको पञ्चम राजने पयाप्त किया । रघोसे कामरूप राजका नाम कोव हो गया पौर वह पाषामका पलागत प्रदेश बना ।

पाषाम देशके राजका पञ्चम नाम है । पनीकोके पनुमानमें वह मान बंगके लोग है । वह पाषामको पूर्ववर्ती परंतमाका पतिव्रत कर ई० त्रयोदश गतःस्यके पारखमें बड़ा पौर ध्यामदेशके श्रीमारपीठ राजत्व करने पड़े थे । फिर पाषामका राज स्वपित हुआ । दूसरा समय न माना जानेके उक्त राज्यका नाम 'पमम' पड़ा था । खानकमके स के खानमें ज गग जानेके सोम पदम या पञ्चम कहने लगे । पर उसका परिचय नाम पाषाम है । पूर्वखान बहाम मीग हिन्दू न थे । वह पामदेव नामक देवताको पूजते रहे । राजत्व स्थापनके कुछ काल पीछे उन्होंने हिन्दूधर्म प्रवृत्त किया पौर पपनेका स्वर्गके राजा इन्द्रका संशोद्धर बता दिया । पइसे ही निरुक्त बुद्ध है कि मोविनीनखमें बड़ इन्द्र बंगग्राह 'सोमार्' नामसे पमिहित है ।

११३१ गकाब्द (१२२६ ई०)को कुबावा नामक कोरे प्रतापशाली मन्त्रि समेव्य पूर्वदिक्के पपकर हुये थे । फिर उन्होंने पादिम निवामी कृतियावां पौर बराहिवीकी खोत पाषामके पूर्वभागमें राज्य स्थापन किया । पीछे उनके वारध पुत्र जमने राजा

हुये। उन्होंने अपने राजप्रविस्तार और किसी किसी आदिम निवासी जातिके साथ युद्ध करनेको छोड़ दूसरा कोई योग्य कार्य न किया। फिर १४१६ शकको चुङ्गुगुंग राजा या हिन्दू बने और स्वर्गनारायण नामसे ख्यात हुये। वह भी कोई कीर्ति छोड़ न गये। पीछे उनके पुत्र और पौत्र राजा हुये। उन्होंने भी लिखने योग्य कोई कार्य न किया। फिर १५३३ शकको च्चेंगफानि राजा पाया था। हिन्दू मतसे उनका नाम बुद्धिस्वर्गनारायण वा प्रताप सिंह रखा गया। उन्होंने उक्त देशमें दुर्गात्मव और स्वर्ण एवं रौप्यकी मुद्राका प्रचार किया। उन्हींके शासनकाल १५४६ शकको कामरूपके शासनकर्ताके आसाम आक्रमण करने पर युद्ध हुआ। उसमें मैयद मारे गये। गौहाटी आसामराजके हाथ लगे। उन्होंने बहुत मार्ग और घाट बनवा आसामकी उन्नति की थी। देवमन्दिर और ब्राह्मणके प्रतिपालनार्थ भूमि देनेकी गौरव उन्हींके समय वृद्धि हुयी। मरने पर उनके जेष्ठ और फिर कनिष्ठपुत्र सिंहासन पर बैठे। किन्तु वह दोनों अत्यन्त लपटूरी थे। इसीसे मन्त्रियोंने उन्हें राजप्रच्युत किया। उसके पीछे चुतमला या जयध्वज राजा हुये। वह पराक्रमी राजा रहे। उन्होंने आसामकी बहुत उन्नति की। १५७७ ई० को मीरजुमला और मजूम खान् दोनोंने आसाम पर आक्रमण किया। आसामराज परास्त हो सन्धि करने पर बाध्य हुये। उनके मरने पर च्चुंगुंगुंग या चक्रध्वज सिंहकी राजा मिला। उन्होंने सन्धिके अनुसार कर न दिया और बादशाहके दूतका अपमान किया। इस कारण बादशाह औरंगजेबकी आज्ञासे राजा रामसिंह आसाम पर चढ़े थे। किन्तु वह युद्धमें हार भागनेको बाध्य हुये। इसलिये कामरूप फिर आसामराजके हाथ लगा। राजधानी ऊपरी आसाममें थी। वहाँसे दूरस्थ कामरूपका शासनकार्य अच्छी तरह चलना कठिन था। उसीसे राजाने गौहाटीमें एक बडफूकन अर्थात् अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उनके मन्त्रणागारका चिह्न अद्यापि वर्तमान है। पीछे उनके भ्राता चुन्चतफा या

उदयादित्य राजा हुये। उनके मरने पर तद्भ्राता चुकलमफा या रामध्वज सिंहने सिंहासनारोहण किया। उनके पीछे होनेवाले चार राजावोंने हिन्दूधर्म या हिन्दू नाम रखा न था। उनमें प्रथम राजा सुतयफा १६०१ शकको कामरूप प्रदेश सुसनमानोंके हाथ समर्पण करनेको बाध्य हुये। उनके मरने पर चुन्किफा या तराराजाको राजा मिला। मन्त्रियोंने उन्हें सिंहासनसे हटा चामुण्डरीयवंशीय सुपातफा या गटाधर सिंहका अभियेक किया था। वह हिन्दू न थे। हिन्दू और हिन्दूधर्म दोनोंसे उन्हें बड़ी घृणा रही। ब्राह्मणोंसे उनका विजातीय विद्वेष था। फिर उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको नगरसे निकाल भी दिया था। वह बलवान् और हृष्टकाय पुरुष थे। मद्यमास विना रहना उनके लिये असम्भव था। भेक और गोमांस उनका प्रधान खाद्य रहा। वह कहते थे कि हिन्दूधर्म ही अहंम वंशके पतनका कारण होगा। वह हिन्दूधर्म मानते न थे। इसीकारण उन्होंने कोई हिन्दू देवमन्दिरकी प्रतिष्ठा न की। किन्तु गौहाटीके निकट ब्रह्मपुत्रमध्यस्थित भस्माचल पर्वत पर उमानन्दशिवका मन्दिर उन्हींके राजत्वकालमें प्रतिष्ठित हुआ। वह अद्यापि वर्तमान है। उनके राजत्वकाल १६०५ शकको सुसलमानोंने फिर आसाम पर आक्रमण किया था। किन्तु युद्धमें हार कर वह आसाम छोड़ने पर बाध्य हुये। आसामराजने गौहाटीमें राजधानी स्थापन कर एक बडफूकन भेजा था। उनके मरने पर जेष्ठपुत्र चुचरंगशा या रुद्रनाथ सिंह राजा हुये। उनके पिता जैसे हिन्दू और हिन्दूधर्मविद्वेषी रहे, वह जैसे ही हिन्दूधर्मपरायण और ब्राह्मणभक्त बने। उन्होंने अनेक ब्राह्मणोंको भूमि दी और देवमन्दिरोंकी स्थापना की। उन्हींके भ्राट्यानुसार शिवसागरके अन्तर्गत लामडाग नदी पर बना हृष्ट और सुदृढ प्रस्तरमय सेतु अद्यापि विद्यमान है। उस पर अनेक हस्तौ, अश्व और मनुष्य गमनागमन करते हैं। तद्भिन्न उनके स्थापित अनेक देवमन्दिर भी वर्तमान हैं। उन्होंने बङ्गालसे गायक और वाद्यकर ले जाकर अपने देशमें बंगला गीतवाद्यका प्रचलन बढ़ाया था।

बह गङ्गा नदीको निज देशान्तर्गत करनेके पश्चि-
मायमें बहूदेग पर बठनीको समेय बुढवाहापूर्वक
गोशालमें उपस्थित हुये। बिन्दु दुर्गाप्यवय यहाँ
उनको रोग लग गया। फिर बालके कारण बचलमें
पड़नेके उनका पश्चिमाय सिंह न हुआ। उनके पुत्र
सुतनका या शिवनाथ सिंहको सिंहासनका अधिकार
मिला था। पालामके समस्त देवोत्तर ब्रह्मोत्तर वा
पन्थप्रकार निष्कर भूमिमें अधिकार्य लक्ष्मीका प्रदत्त
है। उनकी पश्चिमदिशि फलेखरी वा प्रदमीखरीके
पादेयानुसार गौरीनागर नामक बड़द् पुष्करिणी बनो
पीर बसके पार एक शिवमन्दिरको स्थापना हुयी।
उनके मरने पर महाराजने उनको मगिनी द्वीपदो वा
पश्चिमाको विवाह कर पद्मदिशि बनाया था।
लक्ष्मी पवनी शिवाके पादेयके शिवसागर जिसेकी
दिशु नदीके उत्तर पार बिन्दुदक्षिण पार ही बीधे
भूमिमें शिवसागर नामो एक पुष्करिणी खोदा उसके
तीर शिव, दुर्गा तथा बिन्दुके तीन बड़द् मन्दिरोंको
प्रतिष्ठा की पीर देवसेवाके लिये बहुत सी भूमि है।
बह तीनों मन्दिर पीर पुष्करिणी पास ही विद्यमान
है। लक्ष्मी पुष्करिणीके नामानुसार उक्त देयका
नाम शिवसागर पड़ा है। फिर लक्ष्मीके गौर वर्तमान
समुदाय राजकार्यालय पीर अमरेश राजकर्मचारिकोले
निवाहप्यह स्थापित है। राजा शिवनाथ सिंहके
मरने पर उनके भ्राता प्रसन्न सिंह वा सुपिनफाने
बिंहासन अधिकार किया। शिवसागर जिसेके
पश्चान्त दिशु नदीके दक्षिण पार रंगधर (राज्याला)
नाम्नो हितल प्रशासिका लक्ष्मीको बनायो है। लक्ष्मी
दक्षी, व्याघ्र, मण्डिप प्रकृति पदार्थोंका सुध देखनेके लिये
उधे बनाया था। उनके पीछे उनके भ्राता सुराभ्या
या शशिभर सिंह सिंहासनान्धिपदक हुये। लक्ष्मी
तदानीन्तन राजशासकके परिवर्तमें शिवसागरको
दिशु नदीके उत्तर पार "मङ्गलेश" नामक बड़द् पीर
तिलक भवन बनाया था। कुछ समय बहाँ रहनेके
बाद बह पल्लुट हुये। फिर बह नदीके अपर
पार रंगधरके पास लक्ष्मी प्रति बड़द् पीर सप्तल
राजशासक बनवाया। बहका नाम रंगपुर रख गया।

बसके निबट शिवसागरको प्रतिष्ठित हुय "शयनागर"
नाम्नो पुष्करिणी लक्ष्मीको प्रतिष्ठित है। फिर गोरख
शिवमन्दिर भी लक्ष्मी स्थापित किये है। उनके
पीछे उनके भ्राता सुराभ्यापोषा वा लक्ष्मीनाथ सिंह
पश्चिमदिश हुये। लक्ष्मी भी शक्तिपय देवमन्दिर
स्थापित किये थे। उनमें कामरूपके पश्चान्त
मण्डिपवत पर पश्चान्तनाका देवानय प्रधान है।
उनके मरने पर उनके शिष्यपुत्र सुहितपांमया वा
गोरोनाथ सिंह सिंहासनान्धिपत हुये। उनके
राजत्वकालमें प्रधान बटना द्विवरुमङ्गके निबटका
द्विभूममें दोषित मन्थ, मोषामरौवा या मरान
नामक पादिम निवासी जानोंको बिलोडिता है।
बह दा बार विरोध हुये। प्रथम बार ही राजाने लक्ष्मी
दमन किया, बिन्दु लक्ष्मी बार बहान लक्ष्मीके मागना
पड़ा। लक्ष्मी लक्ष्मीके भूत मेक चंगरीज गधरन-
मिष्यके साहाय्य मांमा था। लक्ष्मी लक्ष्मीके कारण
बालिकके पादेयानुसार कतान वैश्व पीर लेक्टिनेष्ट
मिषेगर कितने ही दीर्घक सेवके साह पाषाम पहुँचे।
लक्ष्मीके बिलोड दवा देयमें शक्तिको स्थापना किया
था। राजाके मागने पर बिलोडिमीने पतीव निरतर
भावेके पक्षस्थ निराकय प्रशाकी मार जाला। लक्ष्मी
लक्ष्मी मरान कहते है। बिलोड-शक्तिके पीछे गौरी
नाम्ने रंगपुर नगर छोड़ शिवसागरके पश्चान्त जाइ
बड़ नामक स्थानमें नगर स्थापन किया। लक्ष्मी ज्ञान
पर बह कालपाधमें प्रतिष्ठित हुये। उनके पीछे काम
रूपीय बंगके लक्ष्मीधर बिन्दुने राज्य पाया था। यहाँ
यह बता देना भी बचित है कि बिन्दु लक्ष्मीके दोषित
लक्ष्मीके समयके पद्मेश राजा पपरापर लक्ष्मीको
भक्ति पवनी सन्तानिका बिन्दु नाम रखते थे। फिर
लक्ष्मी राजा लक्ष्मीके पश्चिमके समय पद्मेश
शास्त्रानुयायी लक्ष्मीके कार्य कर पद्मेश नाम प्रदत्त करती
थे। बिन्दु उक्त कार्य पतीव व्यपसाध्य था। लक्ष्मीके कार्य
लक्ष्मीधर लक्ष्मी कर न सके। उनके पद्मेश
नाम न पानेका यही कारण है। उनके पीछे न तो
किसी राजाने उक्त कार्य किया पीर न लक्ष्मीके पद्मेश
नाम ही मिला। लक्ष्मीके पश्चिमके लक्ष्मीके

लोगोंकी ले जा कर सैनिक कार्यमें लगाया और पथरकनेकी चलाया। उनके घरकोक पहुँचने पीछे भ्राता चन्द्रकान्त सिंह राजा हुये। उनके राजत्व-कालमें मन्त्रियोंमें विरोध उठा था। फिर गौहाटीके राजप्रतिनिधि बहफुकन ब्रह्मराजमें पहुँचे और कितने ही सैन्यके साथ लौट पडे। उन्होंने राजधानीमें उपस्थित ही विपक्षियोंको दमनपूर्वक राजाकी स्वायत्त किया और अपने ऊपर राजाके शासनका भार लिया। ब्रह्मदेशीय सैन्य पीछे लौट गया।

रत्न सैन्यकी स्वदेगयात्राके पीछे बहफुकनके किन्नी किसी विपक्षने राजमाताको प्रणोदित किया और उन्होंने उनका शिर काट लिया। उनके मरनेके बाद उनके विपक्ष प्रधान राजमन्त्री रुचिनाथ वृद्धा-गोसाईंने अपरापर प्रधान राजपुरुषोंसे मिल चन्द्रकान्त सिंहकी राज्यसे उठा पुरन्दर सिंहको अभिषेक किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशीय सैन्य आसाम पर चढ़ा। वृद्धमें परास्त हो पुरन्दर सिंह भागे थे। ब्रह्मदेशीयोंने फिर चन्द्रकान्त सिंहकी राज्य दे प्रस्ताव किया। अनन्तर ब्रह्मदेशीय राजाने चन्द्रकान्त सिंहके निकट वन्दुताके भावने कितने ही सैन्यके साथ एक दूत भेजा था। किन्तु मन्त्रियोंने उनका अभिप्राय न समझ पथरोध किया। उससे ब्रह्मदेशीयोंने अपमानित और क्रुद्ध हो युद्धकी घोषणा की। आसामियोंका सैन्य युद्धमें परास्त हुआ। राजाने फिर पलायन किया था। उसके पीछे ब्रह्मदेशसे अधिक सैन्य भेजा गया। उसने आसामवासियोंकी पत्न्यन्त सताया। धन और प्राणकी विशेष हानि हुयी थी। बहु कष्टके पीछे आसामका सीमाग्योदय हुआ। अंगरेज गवर्नमेण्टने दुर्दान्त और निदारुण ब्रह्मवासियोंको निकाल कर आसाम अधिकार किया था। १८२५ई०की २री फरवरीको आसामको दुःख रात्रिका अन्त हुआ। प्रजा असह्य यातनासे छूटी थी। ६०० वर्ष राज्य-मैग कर अहीमवंश सिंहासन च्युत हुआ।

अहीम वंशके राजाओंकी तालिका नीचे दी जाती है—

नाम	राज्यमैगकाल
१ सुकाफा	१२२८—१२६८ ई०
२ उनके पुत्र सुतेउफा	१२६८—१२८१ ..
३ .. सुविनफा	१२८१—१२८३ ..
४ .. सुम्रागफा	१२८३—१३३२ ..
५ .. सुखरांगफा	१३३२—१३६४ ..
६ उनके भ्राता सुतुफा अराजक	१३६४—१३७६ .. १३७६—१३८० ..
७ त्याश्रीवामती सुतुफाके भ्राता अराजक	१३८०—१३८८ .. १३८८—१३८९ ..
८ सुडांगफा, त्याश्रीवामतीके पुत्र	१३८९—१४०० ..
९ उनके पुत्र सुजांगफा	१४००—१४२२ ..
१० .. सुफाकफा	१४२२—१४३८ ..
११ .. सुचेनफा	१४३८—१४८८ ..
१२ .. सुडेनफा	१४८८—१४८९ ..
१३ .. सुपिम्फा	१४८९—१४८९ ..
१४ .. सुहुंगमंग वा स्वर्गनारायण	१४८९—१५३८ ..
१५ .. सुकलेनमुंग या गडुगाया राजा	१५३८—१५५२ ..
१६ .. सुवामफा या खोडा राजा	१५५२—१६०३ ..
१७ .. सुचेगफा या वुदा स्वर्ग नारायण वा प्रतापसिंह	१६०३—१६४१ ..
१८ .. सुरामफा वा भगा राजा	१६४१—१६४४ ..
१९ .. सुख्लिंगफा वा नडिया राजा	१६४४—१६४८ ..
२० .. सुवामला वा जयध्वज सिंह भगानिया राजा	१६४८—१६६३ ..
२१ .. चारिंगिया वंशके सुपंगमु ग वा चक्रध्वजसिंह	१६६३—१६७० ..
२२ उनके भ्राता सुन्यातफा वा-सदयादित्य	१६७०—१६७३ ..

नाम	राज्यसमीपका
२३. उनके भ्राता सुब्रह्मण्यका वा रामभद्र	१६३३-१६०२ "
२४. बामुण्डरीया बंधके सुब्रह्मण्य	१६०२ (१ मास १३ दिन)
२५. सुगंधमिया बंधके सोमर राजा	१६०५ (२० दिन)
२६. दिर्घगिया बंधके सुब्रह्मण्य	१६०५-१६००
२७. सुगंधमिया बंधके सुदेषा	१६०१-१६०८ "
२८. बामुण्डरीया बंधके सुब्रह्मण्य का सहायक	१६०८-१६०२ "
२९. बामुण्डरीया बंधके महापति का महाभर सिंह का सुपातया	१६०१-१६८६ "
३०. उनके पुत्र काई का सुब्रह्मण्य का बहुरसिंह	१६८६-१६१४ "
३१. सुनामया का सिधसिंह	१०१४-१०४४ "
३२. उनके भ्राता सुब्रह्मण्य का प्रसन्नसिंह	१०४४-१०९१ "
३३. सुनामया का शशिहरसिंह	१०९१-१०९८ "
३४. सुब्रह्मण्य का शशिहरसिंह	१०९८-१०८० "
३५. सुब्रह्मण्य का सोरोनाथ सिंह	१०८०-१०८२ "
३६. सुब्रह्मण्य का समसेन सिंह	१०८२-१०९०
३७. उनके भ्राता बहुराजसिंह	१०९०-१०९८ "
३८. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
३९. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४०. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४१. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४२. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४३. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४४. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४५. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४६. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४७. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४८. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
४९. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "
५०. सुब्रह्मण्य का सुब्रह्मण्य सिंह	१०९८-१०९८ "

भारते विष्णु बन गये हैं। पक्षी देवमन्दिरो पौर राजप्रासादोंका विवरण दिया गया है। उनमें प्रायः सब वर्तमान हैं। बिन्दु उनको पचका पति क्रीन है। उनका परिचय मिथयागर जिलेमें है। मित्रपुर पौर लोगका सब ज्ञान सुब्रह्मण्य है। कामरूप जिलेमें पालामयारी राजाशेखे स्थापित करनेके देव मन्दिर देख पड़ते हैं। बिन्दु कामाण्याका मन्दिर पालामयारी राजाशेखे जगता है। जिस समय कामरूप श्रीचक्रिकाके पत्तगत था, उसके समय को पचकारके राजा नरनारायणके छठे निर्मातृ जियो। पालामयारी राजाशेखे पुराने मन्दिरको केवल सुब्रह्मण्य था। पालामयारी।

पालामयारी राजाशेखे मिथयागर जिलेमें रही। इकोके कारण सुब्रह्मण्यको ज्ञानमें राजभवन मन्त्री है।

उक्त समयके दोहे कामरूपको कोरे बियेय जनेय पोष्य चटना मन्त्री मिथती। ईश्वर ई० महादेव प्रतापके शिष्यमार्गमें कामरूपके रहनेवाले चरदत्त पौर चोरदत्त नामके दो भारतेमें पञ्चम राजाशेखे विष्णु विष्णुका पचकज्जन जिया। चरदत्तके पञ्चकुमारी नामी पक्ष परम रूपवती जया दो। मन्थरतः पञ्चकुमारी ही चरदत्त पौर चोरदत्तके दोहका मन्थरतः जारण दो। पञ्चम राजाशेखे प्रतिनिधि क्षतिया-भोमोरा बहुराजके काय चरदत्त चोरदत्तका सुब्रह्मण्य। सुब्रह्मण्यके चार मन्त्री। क्षतिया भोमोरा बहुराजके जियो सुब्रह्मण्य नामके शिष्यपतिने पञ्चकुमारीका चरदत्त जिया। महाहासुवार पञ्चकुमारीके चरदत्त पौर पदमें पञ्चका चिन्तया। पञ्चचक्र ही उनके पञ्चकुमारी नामका सुब्रह्मण्य रहा। पञ्चापि कामरूपमें पञ्चम मन्त्री द्वारा चरदत्तका दोह पौर पञ्चकुमारीका विवरण गया जाता है।

राजा बहुराज जर्जदेव नदोयाशेखे ज्ञानम भावनामोय नामके जियो महाहासके निकट स्थित हुने। महाहासमें बहुराजको किञ्च ज्ञानता थी। इकोके पञ्चापूर काकारण बनकोन, एक देवोका सुब्रह्मण्य

पक्षीमेंकी वाचकन पक्षीके देवकारका है। उनमेंने निम्न जमके काय भावा भी जोड़ दी है, वे सुब्रह्मण्य

विश्वास और भक्ति करते थे। रुद्रसिंहके पुत्र शिवसिंहने भी सपरिवार उनसे मन्त्र लिया। शिवसिंह स्वर्गदेव सपरिवार भद्राचार्य महाशयके उपास्य देवी-मन्त्रमें दीक्षित हुये। किसी समय शिवसिंहको क्वबभङ्ग दोष लगा था। ज्योतिषी पण्डितों और मन्त्रियोंने परामर्श किया। फिर वह शिवसिंहकी प्रथमा पत्नी रानी फूलेश्वरीकी सिंहासन पर बैठा कर राजकार्य चलाने लगे। उसी प्रकार शिवसिंहके दोष राजत्वमें उनकी चार सहिषी-फूलेश्वरी, प्रमत्तेश्वरी, द्रौपदी, वा अम्बिका और अनादेवी या सर्वेश्वरीने वारी वारी सिंहासनाधिरोहण किया। फूलेश्वरी देवीके प्रति विशेष भक्तिमती थीं। एक वर्ष दुर्गास्वके समय उन्होंने मोयामरियाके महन्त और अन्यान्य स्थानके कई महन्त निमग्न दे कर बुलाये थे। फिर उन्होंने भगवतीका प्रसादित सिन्दूर, रक्तचन्दन और वलिका रक्षादि छिड़क उन्हें लाञ्छित किया। दूसरोंकी अपेक्षा मोयामारीवाले महन्तके हृदय पर उक्त व्यवहारसे दारुण आघात लगा था। उन्होंने सब शिष्योंको बुलाकर कहा,—“इसका प्रतिशोध लेना आवश्यक है। उसके लिये प्राणपणसे चेष्टा करनी पड़ेगी।” कालक्रमसे वह भी सिद्ध हो गया। १७५१ ई०की राजेश्वर राजा बने। उनकी अन्तिम दशमें मोयामारीके महन्तने शिष्योंको एकत्र कर शिवसिंह राजाके पत्नीकृत अपमानका प्रतिशोध देनेके लिये सबसे साहाय्य मांगा। शिष्य भी गुरुके अपमानका बदला लेनेको प्रतिज्ञावद्ध हुये। उसके पीछे लक्ष्मीसिंहकी राज्य मिला। राजा रुद्र सिंहके अन्तिम समयमें उन्होंने जय लिया था। आक्रामकता से सहाय्य न रहनेसे राजा रुद्रसिंह उन्हें अपना पुत्र न मानते थे। उसीसे राज्यके अन्यान्य प्रधान लोगोंमें भी उनका वैसा आदर न रहा। फिर राजाके कुलगुरु पर्वतिया गोसाईं भी उन्हें दीक्षा देने पर असममत हुये। लक्ष्मीसिंहने स्त्रीय विद्यागुरु रमानन्द भद्राचार्य नामक किसी अध्यापकको दीक्षागुरु बना लिया। बाण्यकालमें उन्होंने राजाने शिवकी पूजा औघ्री धो। फिर उन्होंने दीक्षा भी शिवमन्त्रकी ही

नी। राजगुरु होनेसे रमानन्दने बहुत वृत्ति पायी थी। फिर वह पद्मरिया गोसाईं नामसे भाख्यात हुये। उनकी वैसी पदमर्यादासे अन्यान्य महन्त बहुत चिटे थे। विशेषतः मोयामारीके महन्त कटु वचन प्रयोग करनेसे राजाके विरागभाजन हो गये। उसी वर्ष आश्विन मासमें स्वर्गदेव नौका पर भ्रमणार्थ बाहर निकले थे। साथ ही स्वतन्त्र नौकासे बहवहुवा रहे। मोयामारीके महन्तने साक्षात् कर क्षमा मांगी थी। किन्तु बहवहुवाने महन्तको यथेष्ट विद्रुप किया। महन्तने उससे अपना अतिगय अपमान समझा था। उनके मनमें पूर्व अपमान भी दूना भडक उठा। उन्होंने बुना कर भीतर ही भीतर शिष्योंको दलबद्ध किया। फिर महन्तने रुद्रसिंह स्वर्गदेवके किसी ताडित राजवंशीयको दलपति होनेके लिये बुलाया था। नाहरखोरा और राघमरान दो व्यक्ति सेनापति बने। विद्रोहमें योग देनेवाले कुरा, कुल्हाडा, कमान, कांता, बरछा प्रभृति अस्त्रोंसे सज्जित थे। प्रायः नौ हजार आदमी अप्रहायणके प्रथम ही रङ्गपुरकी ओर चल खड़े हुये। प्रवादानुसार महन्तने अन्यायसे लक्ष्मीसिंहको राजा बनानेके लिये उक्त युद्ध-यात्रा की थी।

मोयामरियाके लोगोका उक्त उद्योग देख भूपार्द बड गोसाईं, बूटे गोसाईं कीर्तिचन्द्र बहवहुवा प्रभृति मन्त्रियोंने भी परामर्श कर एक दल संन्य भेजा था। युद्धमें राजसैन्य हार गया। मोयामरियाके सैन्यदलने नगर पर अधिकार कर राजा, सेनापति और बहवहुवा प्रभृति मन्त्रियोंको बांध लिया। राजा जयसागरके निकट बन्दी रहे और गोसाईं, बूटे गोसाईं प्रभृति प्रधान प्रधान लोग मारे गये। फिर मोयामरियावालोंने कीर्तिचन्द्रको सूली दे उनके पुत्रोंको बध किया। खोरा-मरानके पुत्र रमाकान्त राजा हुये। उक्त घटना अग्र-हायणकी थी। किन्तु चैत्र मासमें लक्ष्मीकान्तके पक्षसे कुंये, गयां, घनश्याम प्रभृति कई लोगोंने साजिश कर रमाकान्तका दासत्व स्वीकार किया। उनके कौशलसे रमाकान्त, मोयामरीयाके सेनापति प्रभृतिने अपने प्राण गंवाये। उसके पीछे लक्ष्मीसिंह राजा बने। लक्ष्मी-

जि हने वनप्रयामको मुठानोसारके पद पर बैठवावा ।
 कन्धीसि हके पोडे कोबनाय मोसार्देवके गौरीनाथ
 नामसे राजा हुये । कन्धीने राक्षसपक्षक समस्त मोया-
 मरीचाके कोनोंको मार डालना चाहा । उदरसे इन
 लक्ष्मी साजिय कर १०८२ १०के शेषाश्वमासमें प्राय
 नगा सिद्धोचरनामक राजप्रासाद बनावा । प्रधान
 सेनापति लक्ष्मणार्यमें बाबा न पशुंवा सबनेके कारक
 गीजाटी भाग गये । नुके मोसार्देने मोबामरीचाबासीको
 पकड़ हुवावा था । फिर कन्धीने दोमी निर्दोष न देक
 लक्ष्मी मरवावा । सुतरा मोयामरीचाके दूसरे सब
 पादमी लक्ष्मीजित हो गये । वह शुद्धपाक्य धोर शुद्ध
 कार्यको साक्षात् ईश्वरका प्रादेय तथा कार्य समझते
 थे । उदरसे लक्ष्मी लक्ष्मी विद्वोहको धर्मविद्वोह मान
 लिया । सुपके सुपके मोयामरीचा मङ्गलके प्रत्येक
 सिक्केकी संज्ञा दिया गया था । फिर कन्धी कोय
 बुद्ध करनेको दृढप्रतिज्ञा हुये ।

उसी बीच वनप्रयाम मर गये । इनके सुशोभ्य पुत्र
 पूर्वात्म्य बुद्धा गोसार्दे बने । कन्धीने विद्वोह-आपार
 देख सोचा कि कामाक्ष्य शक्ति ऐतिसी ही वह दक्ष
 लक्ष्मी था । फिर कन्धीने मोबामरीचाके कई कोनोंको
 पकड़ मरु शक्ति दे करिण प्रादेय कर लुप्त किया ।
 किन्तु उससे पक्ष विपरीत निष्पत्ता । विद्वोहियोंने
 राजाको दुर्बल समझ पूछ लखाइते दय कइल सेम्य
 रूपक किया । एक दल नगरामिहुल चला था ।
 बुद्धा गोसार्देने उन बाबा देनेको सेम्य भेजा, किन्तु
 पराया होना पड़ा । राक्षसके मध्य कइलक मथ
 गयो । प्रजा जताय हुये । राजा नगर छोड़ भागे थे ।
 किन्तु सेनापति चारो धोर किसेबन्दो कर नगरमें ही
 रहें । अन्तको अयसानरके निष्कट विषम बुद्ध हुआ ।
 उस बुद्धमें भी राजकीय सेम्य द्वार गया । भरतसिंह
 नामक विपक्षके सेनापति राजा बने । राजा गौरी-
 नाथ चहार धोर अयमो राजसे साहाय्य से लक्ष्मी
 विद्वोह दशाना चाहते थे । किन्तु कन्धीने कहवा
 मजा कि अद्वैतको रचाके विद्वे सावप्रकसे अधिक
 सेम्य उनके पास न था । गौरीनाथ विद्वोहदलके
 भयके मोहाटी मान लये । वहाँ कन्धीने कइलकनते

परामर्श से खितना ही सेम्य संघर्षपूर्वक बुद्धा गोसार्दे के
 सहायताके भेजा था । किन्तु पथमें विद्वोहियोंने
 बाबा हार लये मारवाला ।

उसी समय म्वाहपाड़ेमें रस नामक कोई चंगरेक
 लक्ष्मीका व्यवसाय करते थे । गौरीनाथ निश्चयपत्र ही
 साहबको विधिय पुरस्कार देनेकी प्राणा दे उनके द्वारा
 छटिय नगरमिष्कटा साहाय्य पानेके लिये प्रायोजन
 करने लगे । साहबने ७०० बरकन्द्याक दिये थे ।
 बरकन्द्याओंकी शौकमें मोयांके विद्वोहियोंको जा
 मगाया किन्तु लक्ष्मीमिहुल्य जाते समय मोहाटाके
 निष्कट यज्ञके श्राव यत्र बरकन्द्याक मारि गये । कुछ
 दिन पोछे मधिपुरराज १०० अम्बारोही धोर ३००
 पदाति से गौरीनाथके साहाय्यार्थ उपस्थित हुये । वह
 सेम्यदक्ष भी बुद्धमें चारा था । प्राय ११०० योधा
 लक्ष्मीपुत्रमें पकड़नेके मधिपुरोसेम्य अद्वैत भीट गया ।
 विपद् चलेही नहीं चलती । उदर लक्ष्मीनारायणकी
 अयने भ्याता हरकुराज विष्णुनारायणको निष्काक राज्य
 अधिकार किया था । फिर कन्धीने गौरीनाथकी दुर्दगा
 देख विष्णुकागो श्राव स म्वासिधोके सेम्यप्रसन्न कर
 कामरूप पर चलाई थी । पुनः पुनः पराजित होते
 देख कामरूपके लोग पक्षोमेंके हुआ करने लगे । फिर
 मोहाटी नगरसे लक्ष्मीका श्राव भी लोचनसे ठठा दिया ।
 उही लक्ष्मी उनसे मध्य कोई कोई लक्ष्मीनारायणका
 पक्षपाती बना था ।

गौरीनाथने चारो दिक् विपद् देख मौहाटोके विद्या
 मनुमदार, दत्तयाम प्याबन्ध धोर दरङ्के विस्तारित
 राजा विष्णुनारायणको छटिय नगरमिष्कटाके साहाय्य
 मागनेके लिये कहलते भेजा । म्वाहपाड़ेके चंगरेक
 लक्ष्मी रस साहबने कइलिन बसित अयमोके नाम
 एक बिद्धो दीयो । उस समय अलक्ष्मीके नगरनर
 अन्तल कार्य कारनवाकिय थे । ये राजा गौरी-
 नाथका परिद्वेष्य पाते मो प्रथमतः साहाय्य करने
 पर पक्षोन्नत हुये । कारण प्याबन्धकेदर एक पक्षका
 साहाय्य करना दूसरे राजाके पक्षमें राजनीतिविद्वह
 है । किन्तु अन्तमें कन्धीने राजा लक्ष्मीनारायणको विष्णु
 कागो सेम्यके साह कामरूप ताड़ते छोड़ते देया ।

वह हिन्दुस्थानी अंगरेजोंकी प्रजा थे। सुतरां उनकी दवाना लाट साहबने अपना कर्तव्य समझा। उसीसे १७८२ ई०को कप्तान वेल्स साहब सर्वे नग भेजे गये। उन्होंने वहां पहुंचते ही हिन्दुस्थानियोंको दवाना चाहा था।

उधर भरतसिंह राजा हो निष्ठुर भावसे शासन करते थे। सिपाहियोंको आदेश रखा,—“तुम जिस प्रकार हो, अहोमप्रजाको लूटो मारो।” रस साहबके वरकन्दाज और मणिपुरके सिपाही विनष्ट होनेसे उन्होंने अपना राज्य निष्कण्ठक समझ लिया। उन्होंने गौहाटीके निकटस्थ कई स्थान अधिकार किये थे। राजा गौरीनाथ उक्त संवाद या कुछ सैन्य ले उसी ओर चल पड़े। फिर कप्तान वेल्स साहब भी जा पहुँचे। राजाके सुषसे देशकी अवस्था सुन १७८२ ई०की २५वीं नवम्बरकी उन्होंने गौहाटी प्रदेश उद्धार किया। मोयामरीया दल छिन्न भिन्न हो गया। गौरीनाथ गौहाटीमें ही रहे। कप्तान वेल्स ६ठीं दिसम्बरकी लौहिल्यके उत्तर कूल गये थे। मोयामरीयावालोंका पराजय सुन कृष्णनारायणका भी सैन्य भागा। कृष्णनारायणने कहा,—“हम गौरीनाथके विपक्षमें नहीं थे। मोयामरीया-विद्रोह निवारण करना हमारा भी उद्देश्य था। किन्तु गौरीनाथ यह बात समझ न सके। इसीसे उन्होंने हमें भी विद्रोही मान रखा है।” फिर कप्तान वेल्सने गौरीनाथ और कृष्णनारायणके मध्य सन्धि करा दी। सन्धिमें शर्त थी कृष्णनारायणको दरङ्ग, कुटिया तथा चाय-दोआषकी आदमी देनेके बदले ५५००० और भोट राज्यमें व्यवसाय करनेके लिये महसूलके हिसाबमें ३०००० रु० देना पड़ेगी। कप्तान वेल्सने गौहाटीमें रह देखा कि गौरीनाथकी बुद्धि विवेचना बड़ी न थी। फिर निष्कण्ठक होते भी उनके द्वारा राज्य स्थापित होनेमें बड़ा सन्देह रखा। उन्होंने निम्नलिखित मर्मका पत्र कप्तानसे भेजा था,—“हम वह काम करके आना चाहते हैं, जिसमें राज्यका सुष-वन्ध रहे। हमें बोध होता कि राजाके अन्याय्य आचरणसे ही कृष्णनारायण प्रभृति विद्रोही हुये थे।”

१७८३ ई०के मार्च मास कप्तान वेल्सने प्रधान नगर

आक्रमण करनेको पेर बटाया। गौरीनाथ भी साथ थे। जिस दिन वह नगरके निकट पहुँचे, उसी दिन नगरकी अवस्था ज्ञात हो दूमरे दिन प्रातःकाल १२ सिपाही, १ जमादार, १ नायक और १ हथलदार कुल १५ आदमी नगरके निकट भेजे गये। राजा गौरीनाथ वह व्यापार देख विपन्न हुये। उन्होंने यह सोच जयकी आशा छोड़ी थी कि ५००० मोयामरीयावालोंके साथ उन सुष्ठिमय सिपाहियोंका युद्ध होगा। मोयामरीयावाले चारों ओर घेर कर खड़े हो गये। उन्होंने सोचा कि उन्हीं कई सिपाहियोंके मारनेसे जय होगा। अन्तको सिपाही वीरभावसे गोली छोड़ने लगे। यद्यपि मोयामरीयाके लोग मरे थे। उन्हीं कई सिपाहियोंने शत्रुपक्ष प्रायः निःशेष कर डाला। फिर कुछ अंगरेज सिपाहियोंने जा नगर अधिकार किया। उसके दूसरे दिन बूढ़ा गोसाईं गौरीनाथकी नगरमें ले गये। १७८५ ई०के चैत्र मास कप्तान वेल्स नगरमें घुसे थे।

गौरीनाथ फिर जा कर सिंहासन पर बैठे। कप्तान साहबने बूढ़ा गोसाईं प्रभृति प्रधान कर्मचारियोंको बहुत उपदेश दिया और गवर्नर जनरलका अभिप्राय समझा कर कहा,—“देशमें सुशासन रखनेके लिये कुछ दृष्टिग्य सैन्य यहाँ रहेगा और कामरूपकी आमदनीसे उस सैन्यदलका खर्च चलेगा।”

उधर लर्ड कारनवालिस स्वदेश गये। १७८४ ई०की सर जान शोर गवर्नर हो कर आये थे। उन्होंने कप्तानको लौटनेका आदेश किया।

फिर १८१७ ई०की पुरन्दर सिंहने चन्द्रकान्तसिंह स्वर्गदेवकी बन्दी बना कर राज्य लिया था। उसी समय बड़फकनके लोगोंने ब्रह्मदेशके अधीश्वर भालुङ्ग मिङ्गि या कित्रया मिङ्गिसे जा कर उक्त विषयको सूचना की। उन्होंने साहाय्यार्थ ३०००० सैन्य भेजा था। ब्रह्मसेनापतिके राज्यमें प्रवेश करने पर पुरन्दर सिंहने सैन्य भेज कर बाधा दी। युद्धमें पुरन्दर सिंहका सैन्य परास्त हुआ। पुरन्दर डर कर गौहाटी भाग गये। ब्रह्मसेनापतिने चन्द्रकान्तको राजा बना पुरन्दरको पकड़नेके लिये सैन्य भेजा था। पुरन्दरको

घोर बह्मपूजनने हुए बिना। किन्तु उनके भी शारीर पर पुरन्दर भाग कर बिसमारीमें जा रहे। ब्रह्मसिनापति चन्द्रबालके रसाई २००० सेन्च छोड़ स्वदेश चोट गये। पुरन्दरने निरुपाय हो ललकते जा १८१८ई०के मितम्बर मास इटिया गवरनमेण्टके निकट निम्न लिखित पारिदेन किया जा,—“यदि इटिया गवरनमेण्ट मेन्च मेन्च कर हमारा राज्य लुहार कर दे तो हम उसके लिये स्वयं देन और परकीयको इटिया गवरन मेण्टके पक्षान कर दे राजा बननेके लिये प्रस्तुत हैं।” किन्तु इटिया गवरनमेण्टने उक्त पारिदेन न सुना।

उस समय कोचबिहारमें मिहल स्लट कमिश्नर थे। यह प्रतिपक्षमें गवरनमेण्टको नेचको पबल्का देपारि रहे। फिर ब्रह्मसिना रीतिके प्रहसार देयमें हुन पडे। चन्द्रबालका नाममात्र राजा रख ब्रह्मसिनापति सर्वमय कर्ता बन बैठे। चन्द्रबाल भी पन्तकी उनके बाइसे देयोहार करनेकी चेष्टामें लगे। १८२०ई०का ब्रह्मसिनापति मिह्रिमाहा देयको पबल्का देपने गये थे। अयपुरके निकट एक गढ़ बनने देप लन्गिमें कौमलसे बहके बह्मपूजनको मार डाला। चन्द्रबालने उससे भीत हो सोचा कि उस बार ब्रह्मसिनापतिने गढ़ दुपरी राज्यमें प्रवेश किया था। उन्नी बिबिचनार्थ बह बुढ़ा गोमार्थ को नगरके रसाय रण स्वयं सोचाटी भाग गये। मिह्रिमाहामें बर्षा पशुच कर चन्द्रबालको पभय दिया था। किन्तु उनके जनमें विस्वास न कर लकनेके नगररची चेन्चके साथ ब्रह्मसिनापतिका कुछ हुआ। बुढ़ा गोमार्थ बार मये। चन्द्रबाल कोड हाटकी घोर भारी थी।

मिह्रिमाहा योगेश्वर नामक बिनो कुमारको कइनेके लिये राजा बना स्वयं राज्यपालन करने लगे। उस समय राज्यमें प्रायः दय बहल ब्रह्मसिना उदयस्थित हो। दरङ्गराज भी उन्नी समय ब्रह्मको पक्षीमता लोकार करनी पर भाष्य किये। उनके पीछे ब्रह्मसिनापतिके नाय चन्द्रबाल घोर पुरन्दरका नामा ल्यानेमें हुए हुए। उन्नी पबल्कामें ब्रह्मसिनापतिने इटिया गवरनमेण्टको पत्र लिखा था कि बह बिबी पागामी राजाका पक्ष बहल न करे। किन्तु इटिया

गवरनमेण्टने बत्र पारिदेन सुना न था। पक्ष पक्षने बिबोको मजायता न थी।

उन्नी समय मारो प्रसूति पक्षमे जातियोका सभ्यता सिक्काने घोर जनके देयमें इटिया पब्लिकार जेन्गानेके लिये १८२२ई०को १०वो व्याख्या निकली थी। कोच बिहारके कमिश्नर स्लट साइब उक्त पबल (व्यख्या) का कार्य करनेका उत्तराह्वनके पत्रण्ट किये। उन्नी समय रङ्गपुरने बिस्कुप जो म्वालयाका पक्ष स्वतन्त्र सिक्का बन गया। पागाममें उक्त समय ब्रह्म पब्लिकार जोनेसे म्वालयाकेमें एकदम पंगरीको मेन्च रहा। मेण्टनेण्ट डेबिचसन काइब उक्त मेन्चटनके नायक थे। मिहल डेबिचसन घोर मिहल स्लट पागामियामें बहा खेड रखते थे।

उत्तर मङ्गलके हुएमें मन्थ्य परान्त हो चन्द्रबालने म्वालयाके जा पंगरीकोका पान्च लिया। मेण्टनेण्ट डेबिचसनको भय देखा ब्रह्मसिनापतिने निम्नलिखित पत्र मजा था,—‘ब्रह्मराज बाइते हैं कि कम्यनीके साथ मिचला रङ्ग घोर ब्रह्मसिना बिबो प्रकार पंगरीको सीमा पतिमम न करे। किन्तु चन्द्रबालने पंगरीकोके पब्लिकारमें पान्च लिया है। पत्रपत्र लने पबल्कनेके लिये पारिदेन देना पबल्क है।’ मिहल डेबिचसनने उक्त पत्र मिहल स्लटके पात पशु वा दिया। फिर स्लटने बड़ी पत्र नगरनर जनलके पाय भेजा था। गवरनर जनलने टाबिके पंगरीको सीमा पतिको पारिदेन दिया कि मिहल स्लटका पबल्क मेन्च मिन सभ्यता है। ब्रह्मसिना यदि पंगरीको सीमामें हुन पारि, तो बह बलपूर्वक मजायो लाने।

१८२० ई०को बहारक राजा गोबिन्दचन्द्रने गवरनमेण्टके पारिदेन किया कि मचिपुरको सीमा पर ब्रह्मनेण्टका पबल्कम हो सभ्यता है। १८२० ई०की मचिपुरके घोरबिन्तु सिंघ, मारबिन्तु सिंघ घोर मथीर सिंघ नामक तीन राजकुमारान ब्रह्मके पन्था पारने लपोहित हैं। बहार का कर पापय लिया था। उनके पीछे गोबिन्दचन्द्रके प्यडबिवादन राज्यपूज होने पर उक्त तीन म्वालयाकेमें बहारके सिंघामनेके लिये बड़ी बहलन पडे। १८२२ ई०की घोरबिन्तु

सिंहने हटिश गवरनमेण्टकी एक पत्र लिखा,—
“मालूम पड़ता है कि ब्रह्मराज शीघ्र ही इस पक्ष पर आक्रमण करनेवाले हैं। अतएव हम कछार राज्य अंगरेजोंकी सौंपना चाहते हैं।” हटिश गवरनमेण्ट उक्त प्रस्ताव पर सन्मत्त हो गयी। मारजित्सिंह पहली ही ब्रह्मके साहाय्यसे मण्णपुर अधिकार कर वहां ब्रह्मके करद राजा बन बैठे थे।

हटिश गवरनमेण्टकी कछार राज्य हाथमें लेने पर संवाद मिला कि ब्रह्मवाले आसामसे कछार आक्रमणके उद्योगमें थे। मिटर स्कटने ब्रह्मसेनापतिकी एक पत्र लिखा,—“कछारके साथ हटिश गवरनमेण्टका सम्बन्ध है। आप इस प्रदेश पर आक्रमण न कीजिये।”

आसाम और कछारके मध्य छुद्र जयन्ती राज्य है। ब्रह्मसेनापतिने उक्त देशके राजाकी भय देखा वशीभूत करना चाहा था। किन्तु जयन्तीराजने वश्वता न मानी। ब्रह्मसेनापति भी कछारकी अंगरेजी सेनाके भयसे हठात् उक्त राज्यको आक्रमण कर न सके।

उसके पीछे एक ही साथ आसाम और मण्णपुर दोनों दिक्से आक्रमण करनेके लिये जयन्ती एवं कछारके प्रान्त तथा श्रीहृदकी सीमा पर ब्रह्मसेना पहुंची थी। अंगरेजाधिकृत आराकान ब्रह्मवालोंने जीत लिया। १८२३ ई०की उन्होंने चट्टग्रामके निकटवर्ती शाहपुर नामक एक छुद्र होप पर अधिकार किया था। लार्ड आमहर्ट उस समय गवरनर जनरल थे। उन्होंने देखा कि ब्रह्मका अधिकार बङ्गालकी सीमा तक फैला था। फिर स्थिर रहनेसे बङ्गालके सीमान्त-प्रदेशमें भय अत्याचार करेंगे। १८२४ ई०की ब्रह्मसे युद्ध करना ठहर गया। गवरनर जनरलने टाकासे त्रिगेडियर मेकमरिनकी ग्वालपाड़े जानेका आदेश दिया था। उधर लेफ्टिनेण्ट डेविडसनकी आसाम प्रवेश करनेकी भी अनुमति मिली। मिटर स्कटने समस्त प्रवन्धका भार पाया था। १८२४ ई० की २८ वीं मार्चकी त्रिगेडियर मेकमरिनने बिना युद्ध गौहाटी अधिकार कर लिया।

ब्रह्मवाले अंगरेजोंका आगमन सुनते ही नगर छोड़ भाग गये। फिर त्रिगेडियर मेकमरिन, कप्तान हरसवरा, लेफ्टिनेण्ट रिचार्डसन, करनल रिचार्डसन प्रभृतिसे कलियावर, नौगाव, रहा, मरामुख आदि स्थानोंपर कई बार युद्धमें ब्रह्मसेना परास्त हुयी। युद्धमें त्रिगेडियरके मरनेसे करनल रिचार्डसन प्रधान सेनापति बने थे। अन्तमें १८२४ ई०के मई मास आसाम प्रदेशमें अंगरेजोंका अधिकार हो गया। उसके पीछे जोडहाट, जयन्ती, कछार, गोरीसागर प्रभृति स्थानोंमें शान्तिके रचार्य छुद्र छुद्र युद्ध हुये। ब्रह्मके अधीनस्थ ग्रामफुकन और बगली फुकनने ७०० सेनाके साथ आत्मसमर्पण किया था। योगेश्वरसिंह योगीजीवामें १८२५ ई०की परलोक गये। उनके वंशीय हटिश गवरनमेण्टके हृत्तिभोगी बने।

१८२६ई० की २४ वीं फरवरीकी यण्डाबू गहरमें अंगरेजों और ब्रह्मवासियोंसे एक सन्धि हुयी। उसके अनुसार आराकान, मार्ताबान, तेनासीम और आसाम अंगरेजोंकी मिला था। स्कट साहब उक्त नवजित राज्यके कमिश्नर हुये। किन्तु वह उत्तरपूर्वाञ्चलमें गवरनर जनरलके एजण्ट एवं कमिश्नर तथा कोच-विहार, रङ्गपुर, मण्णपुर एवं कछारके कमिश्नर और श्रीहृदके लज थे। सुतरा एक आदमीके हाथमें उतने कार्योंकी सुविधा न पडनेसे समस्त पूर्व-भारत निम्न और अष्ट खण्डमें विभक्त हुवा। उक्त खण्ड इयकी उत्तरसीमा भरली और दक्षिणसीमा घनशिरी नदी थी। सीनियर वा अष्ट खण्डके मिटर स्कट और जूनियर वा निम्नखण्डके करनल रिचार्डसन कमिश्नर हुये। किन्तु प्रधान कर्तृत्व स्कट साहबको ही मिला था। गौहाटी आसामकी राजधानी हुयी।

१८२५ ई० के अक्तोवर मास करनल रिचार्डसनके पीछे करनल कूपर कमिश्नर बने थे। अष्ट विभागमें अकेले कार्य चला न सकनेसे स्कट साहबने कप्तान एडम ह्याइटकी सहकारोरूपमें ग्रहण किया। स्कटसे आसाम प्रदेशकी यथेष्ट उन्नति हुयी। १८३१ई०की चोरापूञ्जीमें वह मर गये। उनके पीछे टि, सि, रवार्टसन प्रधान कमिश्नर हुये।

अन्तरालकालमें सुरन्दर सिंह राजा मरि जये थे।
 उन्होंने मार्च १०००) ४० कर देना प्योकार
 किया। विद्यनाथ नामक ज्ञानमें एक पब्लिकिजन
 एकप्य रहि गये। १८३५१३ ई०को खामरूप
 प्रदेश हरक, खामरूप पौर नौमवि तीन जिल्लोंमें
 विभक्त हुआ। उनमें एक अतन्त्र अकबर पौर
 मजिस्ट्रेटकी अमताके साथ एक प्रधान सहाकारी कमि
 शनर (Chief Assistant Commissioner) रखा
 गया। रावर्टसनके पीछे १८३४ ई०को जिनकिन्स वाचन
 कमिशनर हुये। उन्होंने जिली पौर मौकला सोमा
 विभाज टोका किया था। १८३५ ई० को एक प्रदेश
 चोड अय् रेविन्सुके अधीन गया। १८२६ ई० को
 अय्यमोराजन के अय्यमोके अय्य अर अधीनता मानी
 को। जिनु १८३३ ई० में राजाको मासिक ५००) ४०
 इति दे अय्यमो प्रदेश अय्यमोके अधिकारमें लाया
 गया। १८३८ ई० को सुरन्दर सिंह नियमित कर
 देन लये थे। लघुके अने राजपुत्र अर तम्रप्रदेश
 सिवसगर पौर लघुपुर दो जिल्लोंमें बांटा गया।
 अन्तरालकाल सिंह मौकलाके ५००) ४० इति पाये थे।
 जिनु एक साल को उन्होंने परकाज मगन किया।
 सुरन्दर सिंहको भी इति दे मौकलाके रजिमेंको
 बात लगी थी। जिनु गवर्नर सुरन्दरमें इति न को।
 लघु ज्ञान पर पुलाका-अय्यके अावके आशामका एक
 दक्ष अय्यकत हुआ पौर आशाम वा अधीन खामरूप
 राज्य प्रकृत प्रथाके अंगरेजोंके अधिकारमें गया।
 लघुके कुछ दिन पीछे १८३८ ई०को एक
 कमिशनरके हाथ आवन पौर विचारका भार रजिमेंके
 कार्यमें सुदृष्टका न दिख पड़ी। लघुके एक सहाकारी
 निजुक्त हुआ। एक सहाकारी निजुक्त जोनेके एक
 पदका नाम सुदृष्टक कमिशनर पौर सूदरेका नाम
 सुदुठे कमिशनर रखा गया।
 १८६० ई० को राजमण्डल प्रकृतित जोनेके एक
 सुदुठेके लोग मजुक्त लठे थे। अखिल कमिशनर
 सेक्टरण्ड सिवर गड़गड़ मिडान गये जिनु निजुक्त
 हुये। अन्तमें अने कोयलके गड़गड़ अमी पर
 दोबिदोंके अचित मासिक मिळी।

१८६१ ई० की कमिशनर जेनकिन्सने अय्यके
 अय्यर किया था। फिर लघु पद पर अज्ञान
 अय्यकत निजुक्त हुये। १८६६ ई० की मौकलाके
 जिनकिन्स मर गये।
 १८६९ ई०को अघिया पौर अय्यमो पवतमें
 अय्यकत विदोष लठा था। फिर १८६४ ई०में
 मूटानका अय्य अमा। अंगरेज लोत गये। १८६५
 ई० को मिचोला नामक अय्यमें अय्य हुये। एक
 अय्यके अय्यमो मूटानके अय्य अर अय्य अंगरेजोंका
 मिसे थे। गारो पौर नागाकोके अर हरदारीने
 अधीनता लोकार ली। उनमें अय्यता अेकानिके लिये
 एक प्रदेश दो जिल्लोंमें बांटा गया। १८६६ ई०का
 गारो पवतमें लुरा पौर नागा पवतमें अमागुडिय
 राजधानी हुआ। लघु अर कोचविहार पौर अय्य-
 पाका आशामका कमिशनरके हाथके निजुक्त
 अतन्त्र अर दिया। १८७१ ई० को सेक्टरण्ड
 गवरनर अर अर अय्यकत एक देय देअने पवुंके थे।
 अनेके अरके विचारलघु पौर विचारअय्यमें आशामो
 माया अय्यकत अरनिका आदिय दिया।
 १८७८ ई०को अरनिक अय्यकतने अय्यर किया
 था। फिर आशाम देय अय्यके सेक्टरण्ड गवरनरके
 हाथके निजुक्त एक प्रधान कमिशनरको मिना।
 अरनिक विडिंग प्रथम चौक कमिशनर हुये। अर
 कमिशनर अने पर अय्यकत गवर राजधानी हुआ पौर
 अय्यकत लका गारो पवत फिर आशाममें अया गया।
 अय्यके लोके अय्यकत पौर अय्यकत अय्यकत अतन्त्र
 लो चौक कमिशनरके अधीन हुआ।
 लघु अर अय्यकत कमिशनर सेक्टरण्ड अर
 अय्यकत नागापवतकी वेमाअय्य अय्य ली थी। मौकलाके
 पवतने पर अर नागाकोने विचारअय्यकतपवतके
 मिडियमें अर अने मार लाला। अय्यकत अय्यकत
 १८७ आदियमें लघु दिन ८० लोग मारि जये।
 ३१ लोग अय्यकत हुये थे। कुछ दिन लोके लन
 नामाधीको अय्यकत मासिक मिळी। अरनिक विडिंगके
 लोके अर अय्यकत लोके पौर लनके लोके मिडर अय्यकत
 आशामके चौक कमिशनर हुये। अर अय्यकत

सब लोग खाते हैं। उत्सवदिमें उसीको भोजन बनाना पड़ता है। अन्य स्थल पर वोका और सुलायम दो प्रकारका चावल जलमें भिगा दधि, गुड़, कदली प्रभृति मिला साधारणतः निमन्त्रणादिमें खाया जाता है। पान खानेकी चाल बहुत है।

चैत्र, भाद्रपद और पौषकी संक्रान्ति कामरूपियोंके प्रधान उत्सवका दिन है। उक्त तीनों पर्वोंको विहु कहते हैं। उक्त पर्वोंमें पिताकी प्रणाम करते और आत्मीय कुटुम्बादिसे मिलते हैं। फिर महा प्राडम्बरके साथ पानभोजनादि होता है। चैत्रकी संक्रान्तिकी सात दिन किसी प्रकाश्य स्थल पर स्त्रीपुरुष मिल नाचते-गाते हैं। उक्त नृत्यगीतमें अग्राह्य अघ्राह्य अश्लील गीत और अङ्गभङ्गी प्रदर्शित की जाती है। दुर्गास्वव, झीनिका, जम्नाष्टमी और शङ्कर-माधवके नृताहकी तिथिकी साधारण पर्व मानते हैं।

कामरूप जिल्लिके दक्षिण प्रान्तमें किसी स्थान पर प्रस्तरनिर्मित एक गृह है। प्रवादानुसार चांद सौदागरने उसे अपने लक्ष्मीन्द्र पुत्रके रहनेके लिये कोहसे बनाया था। यह वात बहुत लोगोंको मालूम है वेहुलाके कौशल और नेता घोपानीकी कृपासे लक्ष्मीन्द्र कैसे जी चठे थे। भुवडीके निकट "नेता-घोपानीका घाट" नामक एक घाट अभी वर्तमान है। किन्तु आज कल उसकी भग्नावस्था है। चांद सौदागर एक विख्यात वणिक थे।

तेजपुरके निकट दूसरे भी कई प्रस्तर-गृहोंके भग्नावशेष है। प्रवादानुसार वह वाणराजकी कन्या क्षयाके प्रासाद है। फिर नौगांवके चंपानला पर्वतपर कई प्रस्तर-प्रासादोंका भग्नावशेष है। कहते हैं वह महाभारतीकृत हंसध्वजके प्रासादका भग्नावशेष है। छीमापुरमें दैसे ही भग्नावशेष महाभारतीकृत छिडिम्बा नन्दन घटीलक्षकी राजधानीका भग्नावशेष माने जाते हैं। ग्वालपाड़ेके हवडाघाट परगनेमें "श्रीसूर्यपर्वत" नामका एक पहाड़ है। वहां एक गोलाकार हृद्यत् प्रस्तरखण्ड पर घड़ीके निशानकी तरह कई रेखा हैं। किसी किसीके अनुमानसे एक समय वहां मानमन्दिर रहा।

किसी समय कामरूप प्रदेश इन्द्रजासकी विद्याके लिये प्रसिद्ध था। अनेक स्त्रियां इन्द्रजास सीखती थीं। किन्तु आज कल अंगरेजों सभ्यतामें कामरूपकी वह प्राचीन विद्या विलुप्त है।

प्राचीन कामरूप वा वर्तमान आसामराजकी प्रथम ज्ञातय विवरणोंके सम्बन्धमें Hunter's Statistical Account of Assam, 2 vols; Dalton's Ethnology of Bengal, M'cosh's Topography of Assam, Robinson's Assam, J. Martin's Eastern India, vol. III, Journal of the Asiatic Society of Bengal, vol. XLI, XLII, Gait's Assam प्रथम पुस्तक देखो।

कामरूपत्व (सं० स्त्री०) सिद्धिविशेष, एक वरकृत। जैनशास्त्रके अनुसार यह कामादिसे निरपेक्ष रहने, मन्त्रसिद्धि करने पर या किसी देवके प्रसन्न होने पर मिलता है। इससे साधक मनमाना रूप बना सकता है।

कामरूपधर (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं रूपं धरति धारयति, काम-रूप-धृ-अच्। इच्छानुसार विविधरूप-धारक, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

कामरूपपति (सं० पु०) 'शारदातिलक' नामक तंत्रके टीकाकार।

कामरूपिणी (सं० स्त्री०) कामं मनासं रूपं भ्रष्टवत्याः, काम-रूप-इनि-ङीप्। १ अश्वगन्धा, असंगंध। २ सुन्दरी, खूबसूरत औरत। ३ इच्छानुसार विविधरूप धारण करनेवाली, जो मनमानी सूरत बना लेती हो। कामरूपी (सं० पु०) कामं क्रमनीयं रूपं अस्यस्ति, काम-रूप-इनि। १ विद्याधर। २ जाइक जन्तु, खेखर, एक जानवर। ३ शूकर, सूवर। (कि) ४ इच्छानुसार विविधरूपधारी, मनमानी सूरत बना लेनेवाला।

"सर्वमाय विश्वैतन्व इति, कामरूपिणिः।" (रामायण)

कामरूपोद्भवा (सं० स्त्री०) कल्पकस्तूरी, काला मुशक। कामरेखा (सं० स्त्री०) कामानां कामव्यापाराणां रेखा चिह्नं लक्षणं वा यत्र, बहुव्री०। वेष्टा, रखी, छिनात।

कामल (सं० पु०) कम्-पिच्-कलच्। १ रोगविशेष, कं-मलवाह। कामला देखो।

२ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ मरुदेश, रेगस्तान। (त्रि०) ४ कामुक, चाहनेवाला।

काम-मतुप्-होष् मस्य वः । १ दासहरिद्रा । कामः कन्दर्पभावः अस्यस्याः । २ मैथुनका अभिलाष रखने-वालो, जिस औरतको शङ्कत चटी हो ।

कामवर (सं० त्रि०) कामादपि सौन्दर्येण वरः श्रेष्ठः १ अतिसुन्दर, निहायत खूबसूरत । (पु०) २ यथेच्छ वर, मनमानी वखु शिशु ।

कामवल्लभ (सं० पु०) कामः कमनीयः अतएव वल्लभः प्रियः, कमंधा० । यद्वा कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभः, ६-तत् । १ आम्बुवृक्ष, आमका पेड़ । आम्बुका मुकुल कन्दर्पको बहुत प्यारा है । इसीसे कन्दर्पकी पूजामें आम्बुमुकुल भवश्य लगता है । २ वसन्त, वहार । ३ सारस पक्षी ।

कामवल्लभा (सं० स्त्री०) कामस्य कन्दर्पस्य वल्लभा प्रिया । १ रति । २ ज्योत्स्ना, चांदनी ।

कामवश (सं० त्रि०) कामस्य वशः वशीभूतः, ६-तत् । कामरिपुके वशीभूत, जो शङ्कतके तावेमें रहता हो । कामवश्य (सं० त्रि०) कामस्य वश्यः वश्यतामापन्नः, काम-वश-यक् । कन्दर्पपीडाके वशीभूत, जो शङ्कतके तावेमें हो ।

कामवाण (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य वाणः शरः, ६-तत् । कन्दर्पका वाण, कामदेवका तीर । कामदेव युष्मके पांच वाण रखते हैं ।

“अरविन्दमगोक्षच शिरोप चतसृषुषम् ।

पर्वतानि प्रकीर्तने पञ्चवाणस्य सायकाः ॥”

पशु, अशोक, शिरोप, आम्बु और उत्पल पाँचो पुष्प कन्दर्पके पञ्चवाण हैं ।

पांच प्रकारके कर्मानुसार कन्दर्पवाण अन्य नामों-से भी अभिहित हैं,—

“सन्तोषनीश्वरानी च शीघ्रपतापनक्षया ।

नभ्रनयेति कामस्य पञ्चवाणाः प्रकीर्तिताः ॥”

सन्तोषनी, उन्मादन, शोषण, तापन, और स्तम्भन पांच कामवाणोंके नाम हैं ।

कामवाद (सं० पु०) कामं यथेच्छं वादः । यथेच्छ-प्रवाद, मनमानी बात ।

कामवान् (सं० पु०) कामः अस्यास्ति, काम-मतुप् मस्य वः । १ अभिलाषयुक्त, खादिशमन्द । २ मैथु-नेच्छायुक्त, शङ्कतकी खादिश रखनेवाला ।

कामवासो (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं वसति, काम-वस्-णिनि । इच्छानुसार नानास्थानमें अस्थिरभावसे वास करनेवाला, जो खादिशकी सुवाफिक रहता हो ।

कामविह (सं० त्रि०) कामवाणिम विहः, ३-तत् । कन्दर्पवाणविह, मैथुनकी इच्छासे आकुल ।

कामविहस्ता (सं० पु०) कामस्य कन्दर्पस्य विशेषेण हस्ता नाशयिता, काम-वि-हन् लृच् । १ महादेव । (त्रि०) २ कामरिपु जयकारी, कामदेवकी जीत लेने-वाला ।

कामवीर्य (सं० त्रि०) कामं पर्याप्तं वीर्यं यस्य, बहुव्री० । १ अपरिमित वीर्यशाली, खूब ताकत रखनेवाला । (स्त्री०) कामस्य वीर्यम्, ६-तत् । २ कन्दर्पकी शक्ति, कामदेवका बल ।

कामवृक्ष (सं० पु०) कामं यथेच्छं जातो वृक्षः, मथ्य-पदलो० । वन्दाक, वांदा ।

कामवृत्त (सं० त्रि०) कामं यथेच्छं निरद्भुं हृत्तमस्य, बहुव्री० । यथेच्छाचारी, मनमानी चाल चल्नेवाला ।

कामवृत्ति (सं० स्त्री०) कामेन स्नेच्छया वृत्तिः, ६-तत् । १ स्नेच्छाचार, मनमानी चाल । २ कामरिपुका कार्य, कामदेवका काम । (त्रि०) कामतो वृत्तिरस्य, बहुव्री० । ३ यथेच्छाचारयुक्त, मनमानी ।

कामवृद्धि (सं० पु०-स्त्री०) कामस्य वृद्धिर्यस्मात्, बहुव्री० । १ कामजा नामक महाक्षुप, एक बड़ा भाड़ । कर्णाटक देशमें इसे ‘कामज’ कहते हैं । कारण कामवृद्धि सेवन करनेसे बलवीर्य बढ़ता है । इसका संस्कृत पर्याय—स्मरवृद्धिसंज्ञ. मनोजवृद्धि, मदनायुः, कन्दर्पजीव, मितेन्द्रियाद्य, कामेकजीव और जोवसंज्ञ है । राजनिघण्टुके मतसे यह मधुररस और बल, रुचि, कामशक्ति तथा इन्द्रियकी शक्ति बढ़ानेवाली है ।

२ कामरिपुकी वृद्धि, कामदेवकी बढ़ती ।

कामवृष्टा (सं० स्त्री०) कामं कमनीयं वृन्तं यस्याः, बहुव्री० । पाटलवृक्ष, एक पेड़ ।

कामशक्ति (सं० स्त्री०) कामस्य शक्तिर्नायिकाभिदः, ६-तत् । कामदेवकी एक पत्नी । राघवमहर्षेने इस कामशक्तिके पचास विभाग किये हैं,—१ रति, २ प्रीति, ३ कामिनी, ४ मोहिनी, ५ कमलप्रिया, ६ विलासिनी,

० कल्पिता, ८ इयामका, ८ शुचिप्रिता १० विप्रिता
ताची ११ विगाकाची, १२ सेलिहाना १३ दिमळरा,
१४ कामा, १५ कुड्ड, १६ बरा, १७ नित्या १८
कल्याची, १९ मीडिनी, २० सुनीदना, २१ सुनावप्या,
२२ विमटिनी, २३ कलहविद्या, २४ एकाची, २५
सुसुची, २६ नलिनी, २७ अटिका २८ पाचिनी, २९
गिवा, ३० सुभ्या, ३१ रवा ३२ अमा, ३३ चाडकोसा,
३४ कचका ३५ दीर्घलिह्या ३६ रतिप्रिया ३७
कोकाची, ३८ कडिची ३९ पाटका, ४० माटिनी, ४१
माका, ४२ चनिनी, ४३ विद्योतीकुची, ४४ नन्दिनी,
४५ रन्दिनी, ४६ क्षान्ति ४७ कलकच्छेटी, ४८ उडोवरा
४९ मिथ्यामा, धोर ५० वपोक्षता ।

ध्याने मन्त्रं कामयन्ति वस प्रचार वर्धत है —

‘मन्त्र इव मन्त्रः सर्वान्तरुचिषत् ।
मौलीकचक्रं चैव त्रिणीलाचरं वचनम् ॥’

कामकी मन्त्रि कुड्डमकी मन्त्रि वर्धमाची, सर्वाङ्गमें
पञ्चद्वार पदमी चावर्षी मौलीकचक्र निवे दीर सिद्धी
ककी चौव सकनिवासी है ।

कामधर (सं० पु०) १ कल्प्यैवाच, कामदेवका तीर ।
कामधर कल्प्यैवाच मर इव कामोदीपकत्वात् । २ काम्य
इव कामका विड ।

काममात्र (सं० स्त्री०) काममात्र कर्मादे प्रतिपादक
मात्रम् मन्त्रपदसो० । १ पमीडसम्पादक मात्र,
सुराद पूरा करनेवाला इत्य ।

‘एव मन्त्रनिर्देशेन काममात्रनिर्देशेन च ।
काममात्रनिर्देशेन कामोदीपकत्वात् ॥’

(मन्त्रार्ण, भाटि, ११०)

२ रतिमात्र । रतिमात्र इत्ये ।

कामवर्धनीय (सं० पु०) पतिव्रतित विपदकी प्राप्ति,
सुरादकी तद्वर्धनीय ।

कामसख (सं० पु०) कामस्य सखा काम सखि-टच् ।
१ वसन्तकाक, मौसम बहार । २ पाण्डवच,
पामका विड ।

कामवप्या (वि०) वलवच इत्ये ।

कामवृत्त (सं० पु०) कामस्य वृत्त पुम., ४ तत् ।
कल्प्युक्त पतिव्रत ।

कामवृ (सं० स्त्री०) कामं पमीडं सृजे, काम-वृ-ञिप् ।
१ पमीडमद, सुराद पूरी करनेवाला । (पु०) १

बोद्धव्य । (स्त्री०) कामं प्रयत्न सृजे । १ काम्य गो ।
कामसुख (सं० स्त्री०) कामस्य तद् व्यागारस्य पति
पादर्थं सुखम् मन्त्रपदसो० । कामकापारबोधक एक
मात्र । इति वेद्यम्यापनने वनाया है ।

कामवैभ (सं० पु०) कामवतीके एक राजा ।

वलयवत्या इत्ये

कामवैना (सं० स्त्री०) निवृत्तिवती वती ।

कामसुति (सं० स्त्री०) कामस्य सुति ३ तत् ।
प्रतिपदकी मान्त्रिके स्थिते कामदेवकी सुतिवा एक
मन्त्र । यह मन्त्र प्रतिपदकीताकी पढ़ना पढ़ता है —

‘‘बोधाय वक्तुं वक्तुं कामोदीपम् वलवत्याम् वली वना
वन्त्र इतिपरीना कामेवर्ध’’ (इडवट्ट-०५५)

कृतिमात्रमें मी प्रतिपदकी रोपमान्त्रिके निवे
निष्कान्त्रित मन्त्र पढ़नेकी बटा है —

‘‘इतिव्रतरीक्यमात्रं कामसुति र्देम् ॥’’

कामदा (सं० पु०) कामं कर्तव्यं इतवान् काम इन्
ञिप् । १ महादेव । २ विष्णु ।

कामदेतुक (सं० स्त्री०) कामः हेतुर्गम्य कामहेतु
कम् । १ केवल पतिवाचजात, विष काङ्क्षिणी देता ।
२ कामरिपुषे उत्पन्न, कामदेवके निकला हुआ ।

कामा (वि० स्त्री०) सुन्दरी, मूढवृत्त पोत ।

कामा (सं० पु० Comma) १ विराम उडराव । २
विरामका एक विड उडरनेका एक नियाम् । यह
समान चर्चवाचक दो मन्त्रों वा वाक्योंके बीच पाता
है । कामा विडका रूप यह है ।

कामाच (सं० पु०) कामारिकामात्र चम्यकमुनिङ्कलजात
मन्त्रार राजाके पुत्र । रत्नके पुत्रका नाम पारिक्रात
था । (वराहविष्णु १११११५)

कामाची (सं० स्त्री०) काम रमचोर्ध पत्नि यस्याः,
काम पत्नि वच् स्त्रीच् । १ देवमूर्तिविधिय, एक देवता ।
२ तन्त्रीक चोर्ध वीक ।

कामाप्या (सं० स्त्री०) कामपति भद्राणां कामं पूर
यतीति कामा पाप्या यस्याः । १ देवीविधिय, एक
देवता । इत्ये इम नाम मन्त्रस्य पर कौ निधा है —

कामाप्याय —

‘‘कामार्थं मन्त्रेण कर्मणा चार्थं कर्तव्यम् ।
कामाया रोपने इत्ये मन्त्रे इत्येवम् ॥’’

कामदा कामिनी कामा कान्ता कामाङ्गादायिनी ।

कामाङ्गादायिनी दद्यात् कामाङ्गा तेष चोचाने ॥”

(काविकापुराण)

भगवान्नी कथा—महादेवी कामाख्या अभिलाष पूरण कारनके लिये हमारे साथ नीलकूट गयी थीं । इसीसे कामाख्या नाम प्राप्त हुआ । वह कामदा, कामिनी, कामा, कान्ता, कामाङ्गादायिनी और कामाङ्गा नाशिनी होनेसे “कामाख्या” कहायो हैं ।

२ पीठस्थान विशेष । कामाख्यादेवी ही इस स्थानकी अधिष्ठात्री-देवता है । कालिका-पुराणमें इस पीठस्थानके सम्बन्ध पर लिखा है,—“दक्षके यज्ञमें सर्तोंने प्राण छोड़ा था । महादेव उनका मृतदेह स्तम्भ पर रख बहुत दिन पर्वन्त इतस्ततः घूमते रहे । क्रमशः उस देहसे स्थान स्थान पर अवयव विशेष गिरा था । उसीसे उन सकल स्थानों पर एक एक पवित्र पीठ बन गया । परिशेषको कुञ्जिका नामक पीठ-स्थानमें देवीका योनिमण्डल गिरा । उस समय महामाया योगनिद्रा भी महादेवमें नील थीं । उन्होंने फिर अति उच्च पर्वतका रूप धारण कर पातालमें प्रवेश किया । यह व्यापार देख ब्रह्माने पर्वतरूपसे उन्हें पकड़ा था । विष्णु भी पृथिवी आक्रमण कर उनके निकट उपस्थित हुए । उक्त पर्वतत्रय शत शत योजन उन्नत थे, किन्तु देवीके आक्रमणसे प्रबो-गत हो एक कोष परिमित उच्च रह गये । उनमें पूर्व दिक्का पर्वत ब्रह्मगैल है । उसे ‘श्वेत’ कहते हैं । वह सर्वापिचा अधिक उच्च है । पश्चिम दिक्का पर्वत वाराह नामक विष्णुगैल है । फिर उभयके मध्यदेशस्थित त्रिकोण उदूखलाकृति गैलका नाम नील है । वही महादेवका रूपान्तर है । एतद्भिन्न ईशान-दिक्के दीप्तिशाली पर्वतरूपी कूर्मका नाम ‘मणि-कर्क’ है । वायुकोणस्थित पर्वत ‘मणिपर्वत’ कहनाता है । उक्त पर्वत श्रीकृष्णका अति प्रियस्थान है । नैऋतकोणस्थ पर्वतका नाम ‘गन्धमादन’ है । वह महादेवका प्रियस्थान है । ब्रह्मशक्ति-शिलाका पूर्व-भागस्थित पर्वत भी महादेवका रूपान्तर है । उसे ‘भस्माचक’ कहते हैं ।

इसी प्रकार पवित्र नीलकूट पर्वतस्य कुञ्जिकापीठमें देवी महेश्वराने महादेवके साथ अवस्थान किया । उनका योनिमण्डल ही गिर कर प्रस्तर बन गया था । वही कामाख्यादेवीके नामसे विख्यात हुआ । मनुष्य उक्त शिलाके अर्गमें देवत्व पाते और देव ब्रह्मलोक जाते हैं । उक्त स्थानका माहात्म्य अति प्रबल है । उसमें लौह डान देनेसे उसी समय मन्त्र हो जाता है ।

उक्त योनिमण्डल २१ अङ्गुलि दीर्घ और १ वितस्ति (चालिग्न) विस्तृत है । फिर वह सिन्दूर और कुङ्कुमादिसे लेपित है । देवी महामाया वहाँ प्रत्यह पञ्चकामिनीमूर्तिसे अवस्थान करती हैं । पञ्चमूर्तिके नाम—कामाख्या, त्रिपुरा, कामेश्वरी, सारदा और महीसाहा हैं । देवीकी चारो ओर अष्ट योगिनी रहती हैं । उनके नाम—गुप्तकामा, श्रीकामा, विन्ध्य-वासिनी, कटीश्वरी, घनस्था, पाददुर्गा, दीर्घेश्वरी और प्रकटा हैं । अपरापर तीर्थ भी वहाँ जलरूपसे अवस्थित है । विष्णु उसके तीर कमल नामसे अवस्थान करते हैं । देवीके अङ्गमें लक्ष्मी ललिता नामसे ओर सरस्वती मातङ्गी नामसे अवस्थित हैं । देवीके प्रिय-पुत्र गणदेव पर्वतके पूर्वभागमें हारदेश पर सिद्ध नामसे रहते हैं । कल्पवृक्ष और कल्पमता तिलिछो तथा अपराजिता रूपसे वहाँ अवस्थित हैं । वाराह-मूर्ति हरि पाण्डुनाथ नामसे परिचित हो रहे हैं । उन्होंने जहा मधु और कैटभासुरको मार गिराया, वहाँ निकट ही ब्रह्माने ब्रह्मकुण्ड बनाया है । उक्त ब्रह्मकुण्डके निकट गया और वाराणसीचेव योनिमण्डलतुल्य कुण्डरूपसे अवस्थित है । उसीके पास इन्द्र एवं अन्यान्य देवने महादेवकी सन्तुष्टिके लिये अमृतपूर्ण अमृतकुण्ड स्थापित किया था । उसके निकट कामेश्वर नामक महापुण्यतीर्थ कामकुण्ड है । सिद्धकुण्ड और कामकुण्डके मध्यभागमें केदार नामक चैव है । वह दैर्घ्यमें १४ व्याम बैठता है । उसे छायाछत्र भी कहते हैं । गुप्तकुण्डके मध्यदेशमें कामेश्वर पर्वतसे सलग्न गैलपुत्रीका नाम ‘कामाख्या’ है । कामेश्वर और कामाख्याके मध्यदेशमें कालरात्रि हैं । पीठ-स्थानमें दीर्घेश्वरी, सीसामागमें प्रवण्डिका और

शामाख्याप्रकारके मान्ददेयमें कुशाब्धी नाम्नी योगिनी रहती है। दक्षिण पीठमें कामेश्वरके पञ्चोर नामक शिखरको परमार्षी, मेरु नामके समिहित करती है। उर्वी मेरुके निकट कामुष्पा मेरुकीका प्रवक्षान है। कामेश्वर पीर मेरुके मन्वन्ती स्नानमें सुरापगा देवी है। सद्योज्ञान नामक शिखरदेयमें धाम्नातकेधर है। उर्वी स्नानमें योगरूपिणी दुर्गा नाम्नी नाविका है। फिर उच्च स्नानका अपरुत यत्नविशिष्ट सतसिंहित धाम्नातक उच्च हो मन्वन्ततसिंहित कल्पद्रव्य है। उर्वी धाम्नातक उच्चके निकट अर्ध यज्ञा सिद्धगङ्गा नामके प्रवक्षित है। उच्चके समीप धाम्नातकविम नामक पुष्करदेव है। ईमान दिक् तत्पुष्प नामक शिखरके उपरिभासमें सुवनेश्वर देवका पीठ है। उच्चके निकट कामधेनु नामके सुरमिकी शिकामूर्ति है। मध्यदेयमें कोटिसिद्ध नामक महाभैरवकी मूर्ति है। वह पांच मूर्ति द्वारा पांच भागमें विभक्त है। ब्रह्मपर्वतके उत्पत्तिदेयमें सुवनेश्वरीके नाम पर महाभैरवकी शिकामूर्ति है। अर्ध ब्रह्मा पर्वतकपरी पर्वतकपरी मन्वन्तके साक मिलित हुये, अर्ध पय रात्रिता नामको कल्पवृता प्रवक्षित है। कामधेनुके निकट पश्चिमकोपमें योगिण्या शामाख्याका पीठ है। उर्वी स्नान पर विम्बवासिनी नामके चक्रवर्ण्य वन वासिनी नामके सन्मदाता पीर शामाख्यानी नामके पाददुर्गा योगिनीका प्रवक्षान है। उच्च प्रकृत योगिनी नीलशेखरी मेखन्त दिक् प्रवक्षित है। पश्चिम द्वार पर हनुमान्पीठमें पापाचकरी नन्दीका प्रवक्षान है।

(पश्चिमपुष्प (१५))

देवीगीतामें भी शामाख्या-पीठस्नान सर्वान्नुष्ट माना पीर शिखा मया है—

देवी शामाख्या प्रतिभास इष स्नानमें रजस्रका वीती है।

(शैविगीता, पृ. १४५ पीर चन्द्रक मन्वन्त है ।)

शामाख्याकी कुमारी पूजा भगवतोपूजाका विधि पञ्च है। शामाख्यामें पनेक ब्राह्मण-कुमारोका पूजा पञ्चक एक स्वधाय प्रकृत है। पूजा हो या न हो शामाख्यादयमें लिये पञ्चवती ही कुमारी याम्नीकी संर कर पञ्चैको पीर दक्षिणा भागने लयेगी। मूना

विश्व ३०० कुमारी सर्वदा शामाख्यामें रहती है। पनेक समय वह याम्नीको दक्षिणाके लिये व्यति-व्यष्ट कर डालती है।

शामाख्याके भीतर मन्वाधिक १२ तोव'स्नान पद्यापि वर्तमान है। किन्तु दुष्प है कि उगमें पनेक दुर्भेम प्रकृतके समाहृत है। उच्च समष्ट तोर्वीके मन्व भगवतो सुवनेश्वरी पीर दय मन्वाविद्याका पीठस्नान ही समविश्व प्रसिद्ध है।

शामाख्याके पूजादि निर्वहको पद्मोम राकावोने पनेक अल्ल (पायक) पीर निम्बर मूमिका दान किया है। पायक कार्य विधि पर भयवतीको वीममें बनी रहते है। फिर अंगरेज गवरनसिद्धने भी पूर्वं नियमके भयवतीको पूजाके लिये प्रथम्य वांच दिया है। प्राय प्रकृत देवालयोंमें पायक निम्बर मूमि पाते है जो शामाख्या, वेदार पीर माववमें सर्वोपेक्षा प्रविष्ट है।

शामान्धि (सं० पु०) काम' पश्चिम, उपमितसमा० ।
१ कामरूप पश्चि 'पश्चिमको धाम । २ कामरिपुको पञ्चका ।

शामान्धिसन्दीपन (सं० खी०) शामान्धीना सन्दीपनम् ६ तत्पु । कामोद्दोषक रसविधिय, ताकृतको एक दवा । वह एक प्रकार मोदक है। पारा २ तोबा, मन्वन्त २ तीला पञ्च २ तीला यवहार, सजिहार, चित्रक, पञ्चकवच, यमी, यमानी पनयमानी, कीटमारी तथा ताकीयपत्र एकत्र ३ तीला, बीर, तेजपत्र, दारचीनी बड़ी इलायची छोटी इलायची अर्ध ए० जातोपत्र एकत्र ६ तोबा इडदार, सण्डी, मरिच तथा पिपली एकत्र ८ तोला, अन्वाक, यक्षोमसु, एवं अर्धेक पाक दो-दो तोबा, यतावरी, मूमिकुष्माण्ड, मज्जपिपली, बजा, इक्षिकर्षपकाय, मोचुरबीज, मीत्रपत्रकुत्र इन्द्रयव बराबर-बराबर पीर सबके समान बीजे, तो तथा मन्वन्त काक इष पीपयका पाक करते है। पाक करतमें पर २ तीला अर्धूर डाल देते है। शेष ६३० ; वह पीपय इन्धेसो इन्धे है। इन्धे धवन करतमें सतुष्य पञ्चक प्रमदाको रिम्बा पीर बल्ले प्रमत्त नामाधिकका जरा सक्ता है। (शैव्यरत्नाली)

कामाङ्गुश (सं० पु०) कामे कामोद्दीपने अङ्गुश इव ।
१ मख, नाखून । २ शिग्र, उपस्थ । (त्रि०) ३ काम-
शान्तिधारक, खाद्दिशकी ठण्डा करनेवाला ।

कामाङ्ग (सं० पु०) कामं कामोद्दीपकं अङ्गं मुकुलं
यस्य, बहुव्री० । १ महाराजघृत, एक बड़ा आम ।
२ आन्वत्तक, आमका पेड़ । ३ श्येनपत्नी, वाज
चिडिया ।

कामाङ्गनायकरस (सं० पु०) वाजीकरणौषध विग्रेय,
ताकतकी एक दवा । शुद्ध पारिके बराबर गन्धक डाल
रक्त उत्पलके द्रवसे एक ग्रहण घीटते हैं । फिर पक्षलेसे
प्राधा गन्धक मिलाने पर यह तैयार होता है । मात्रा
टाई रती है । समूल इन्द्रियव, सुपत्नी तथा शर्करा
बराबर कूट पीस चूर्ण बनाते और इस रसकी आधि
पल गीदुग्ध एवं उल्ल चूर्णके साथ खाते हैं । इसके
सेवनसे मदनीदय होता है । (रसरत्नाकर)

कामाची (सं० स्त्री०) लघुकाकमाची, छोटी कौवाटोटी ।

कामाता (सं० स्त्री०) १ वन्दा, वांदा । २ काक-
माची, कौवाटोटी ।

कामासुर (सं० त्रि०) कामेन आसुरः, इ-तत् । काम-
पीडित, चाहका मारा हुआ ।

कामात्मज (सं० पु०) कामस्य आत्मजः पुत्रः, इ-तत् ।
कन्दर्पके आत्मज, अभिरुद्ध ।

कामात्मता (सं० स्त्री०) कामप्रधानः आत्मा यस्य
तस्य भावः, कामात्मन्-तत् । १ अनुरागप्रधानचित्तता,
जोशदार तवीयत । २ कामाकुलचित्तता, चाहकी
मारी हुयी तवीयत ।

कामात्मा (सं० पु०) कामप्रधानः आत्मा यस्य, बहुव्री० ।
१ अनुरागी, चाहनेवाला । कामवशीभूत, प्यारमें पहा-
हुवा । ३ काममय, चाहसे भरा हुआ । ४ फलाभिलाषी,
नतीलिका खाद्दिशमन्द ।

कामाधिकार (सं० पु०) कामस्य अधिकारः, इ-तत् ।
१ कामरिपुका अधिकार, खाद्दिशका दौरदौरा ।
२ मानदाभिलाष-सम्बन्धीय शास्त्रका एक भाग ।

कामाधिष्ठान (सं० स्त्री०) कामस्य अधिष्ठानं स्थानम्,
इ-तत् । कामका स्थान अर्थात् मन, खाद्दिशके रहनेकी
जगह यानी दिल ।

कामाधिष्ठित (सं० त्रि०) कामेन अधिष्ठितम्, इ-तत् ।
१ कन्दर्प द्वारा अधिष्ठित, प्यारसे जीता हुआ । (स्त्री०)
भावे क्त । २ कामाधिष्ठान, खाद्दिश या प्यारकी
जगह ।

कामानल (सं० पु०) काम एव अनलः, काम अनल
इव वा । १ कामरूप अग्नि, खाद्दिशकी आग ।
२ कामकी तीव्र यातना, प्यारका गहरा दर्द ।

कामानशन (सं० स्त्री०) कामं अनशनं यत्र, बहुव्री० ।
१ इच्छापूर्वक अनाहार तपस्या । २ रागद्वेषादि-
रहित इन्द्रियगण द्वारा विषयका त्याग ।

कामानुज (सं० पु०) कामका अनुज, क्रोध, गुस्सा,
खाद्दिशका छोटा भाई ।

कामान्ध (सं० पु०) कामेन कामोद्दीपनेन अन्धयति
ज्ञानशून्यं करोति काम-पन्ध-णिच्-अच् । १-कोकिल,
कोयल । (त्रि०) कामेन अन्धः । २ कामके वेगसे
हिताहितका ज्ञान न रखनेवाला, जो खाद्दिशके जोशमें
भलासुरा समझता न हो ।

कामान्धा (सं० स्त्री०) कामं यथेष्टं अन्धयति, कामान्ध-
टाप् । १ कस्तूरी, सुशक । (कामेन अन्धा) २ कामके
वेगसे हिताहितका ज्ञान न रखनेवाली स्त्री, जो औरत
खाद्दिशके जोशमें अन्धी पड गयी हो ।

कामाभी (सं० त्रि०) १ इच्छाभागी, खाद्दिशके
सुताविक, खानेवाला । २ आहार लाभकर्ता, खाना
पानेवाला ।

कामाभिकाम (सं० त्रि०) कामस्य अभिकामो यस्य,
बहुव्री० । कामभोगेच्छु, शहवतपरस्त ।

कामायु (सं० पु०) कामं यथेष्टं आयुर्यस्य, बहुव्री० ।
१ गृध्र, गीध । २ गरुड़ ।

कामायुध (सं० पु०) कामस्य आयुधमिव । १ महा-
राजघृत वृक्ष, बड़े आमका एक पेड़ । (स्त्री०)
२ शिग्र, उपस्थ ।

कामारस्य (सं० स्त्री०) कामं शोभन परस्मै, कर्मधा० ।
मनोहर वन, खूबसूरत जङ्गल । २ कन्दर्पवन, काम-
देवका वाड़ा ।

कामरथी (द्वि०) कामार्थे दिवो ।

कामारि (सं० पु०) कामस्य अरिः शत्रुः, इ-तत् ।

१ महादेव । २ बिहमाचोक चातु बिसे बिष्वा
चमक पत्तर ।

कामार्त (स० त्रि०) कामिन चण्डः पीडितः, १ तत् ।
कामपीडित, गडबतका मारा हुआ ।

कामार्थी (स० त्रि०) काम पर्ययति मय्यर्थे, काम
पर्यं बिष्पिति । काममार्थी गडबत पाइनेवाला ।
१ पमोठपार्थी, सुरादमामनेवाला ।

कामासिका (स० स्त्री०) कामं प्रकृति मूषवति, काम
पन्-वृक्षु टाप पत इलम् । मय्य, माराव ।

कामासु (स० पु०) कामं यथैव प्रकृति पुष्पिका
शिल पर्याप्तोति, काम प्रक-उष् । रत्नकाचून कास
कचनार । (त्रि०) १ पत्तन कामुच को गडबतके
बिसे बड़ो खाइय रत्नता हो ।

कामाचर (सं० त्रि०) कामं यथैव चरति काम
पत्-पत्-पत् । १ जेखाबारो, मनमोषी । (पु०)
२ बीडोके एक देव ।

कामावतार (सं० पु०) कामम् परतार, १ तत् ।
१ कामके अवतार, प्रचुच । बीडपुके घोरस घोर
बुद्धिबोके मर्मके इमीं जन्म लिया था । २ एक
रुन्द । इसमें बड़ बड़ मासके चार पाद होठे है ।

कामावधायिता (स० स्त्री०) कामिन जेखुया पवधाय-
वति, कचित्ते पदावार्त्त निबिनेति तस्य भावः काम
पव-मो-बिष्पिति तत् । रुन्दरुन्दरता, खाइयका
सुचार ।

कामावधाय (सं० पु०) कामिन जेखुया पवधाय-
कचित्ते पदावार्त्त निबिनेतरम् । इच्छानुसार पपने
चित्तमें पदावैतमूडका खिरीकरव, खाइयका दवाव
या सुचार ।

कामावधायिता (सं० स्त्री०) कामावधायिनः पम्
सहस्रकारिको भावः, कामावधायिन् तत् । १ सन्
सहस्रता, खाइयका दवाव । पविमादि पाठमें यह
मी योगोका एक शिष्य है,—

‘अथवा कचित्ते भावः सन्सन् कचित्ते दवा ।
इतिवच पविमच इव कामावधायिता ।’

कामावधायिका (सं० स्त्री०) कामावधायिको जावः,

कामावधायिन् । सन्सहस्रता, खाइयका दवाव ।
कामावधायी (सं० त्रि०) कामान् जेखुया पवधायितु
योग्यम् काम पव सो बिष्पिति । सन्सहस्र-
खाइयको दवानेवाला ।

कामासन (सं० स्त्री०) काम यथैव पवसत वा
पयस भोजनम् कर्मशा० । १ इच्छानुसार भोजन,
मनमोषा खाना । २ पर्याप्त भोजन खाफो खुराव ।
कामासन (सं० पु०) काम रमणोय पावसः, कर्मशा० ।
रमणोय पावस पन्खा ठिकाना या सुकाम ।

कामासनपद (सं० स्त्री०) कामं मनोत्र पावनपदम्
कर्मशा० । रमणोय पावनपदान्, पन्खो जनव ।

कामासन्न (सं० त्रि०) कामिन पावसः, १-तत् ।
१ कामरिपुके रमोमूत, गडबतका तावैदार ।
२ पमिनावमासके रमोमूत, खाइयका तावैदार ।

कामासन्न (सं० स्त्री०) कामि पावसिर्लिया ० तत् ।
कामरिपुके कर्त्तमात्रको इच्छा गडबतको खाइय ।

कामासन (सं० स्त्री०) काममपकृति सिपति पनेन,
काम पम्-रुद । पावनविमिच, एक बेटका गडडासन
कर कनिडाडुलि भूमिमें जागनेसे यह पावन बन
जाता है ।

‘अथ कामसन रथे कर्मरंरंरुतम् ।
पवसपवसपवस पविमच’ इति सुवि ।’ (पत्ररत्न)

कामासन्न (सं० पु०) रात्राव, बड़ा पाव ।

कामि (सं० पु०) कामवसे, काम बिष्प-रुच । १ कामुच,
गडबती । (स्त्री०) २ रुन्दरूपको, रति ।

कामिक (सं० पु०) काम पन्पासि काम ठन् ।
१ कारप्य पचो, एक दरवायो बिडिवा । (कामाधि
कारिच इतो पम्) । २ ईमादि-पचोत एक पम् ।
(त्रि०) ३ पमिकवित, चाहा हुआ । ४ पमिनावमास,
सुराद पावे हुआ ।

कामिका (सं० स्त्री०) १ तकारवा एक वीराविक नाम ।
२ व्यापक इच्छा पकावयो, सावन बड़े प्यारव ।

कामिकी (सं० स्त्री०) कामिक-कोपु । १ कारप्य
पचिचो, एक दरवायो बिडिवा । २ कामनाका
कार्यादि, खाइयका काम ।

‘अथ इति पचोत एक रं इववतिरुतम् ।’ (पत्ररत्न, पत्ररत्न)

कामित (सं० त्रि०) कम-णिच्-क्त । १ अभिलषित, चाहा हुआ । २ प्रार्थित, मांगा हुआ । (स्त्री०) ३ अभिनाय, खादिश ।

कामिता (सं० स्त्री०) कामोऽस्यस्य तस्य भावः, काम-इति-तल्-टाप् । १ कामुकता, मन्ती । २ अभिलाष, खादिश ।

कामिनिया (हिं० स्त्री०) १ स्त्री, औरत । २ वृक्षविशेष, एक पेड़ । यह सुमात्रा यव प्रमृति द्वीपमें उत्पन्न होती है । कामिनिया बहुत नहीं बढ़ती । इसकी रालसे चोवान बनाते हैं ।

कामिनी (सं० स्त्री०) कामः अतिशयेन अस्यस्याः, काम-इति-स्त्रीप् । १ अतिशय कामयुक्ता स्त्री । २ स्त्रीमात्र, कोई औरत । ३ सुन्दरी, खूबसूरत औरत । ४ भीरु स्त्री, डरपोक औरत । ५ वन्द्या, वादा । ६ दासहरिद्रा । ७ मद्य, शराब । ८ काम-देवकी एक शक्ति । ९ एक रागिणी । १० वृक्षविशेष, एक पेड़ । इसके काष्ठसे सुन्दर सुन्दर वस्तु बनते हैं । कामिनी पर नक्काशी अच्छी आती है ।

कामिनीकान्त (सं० पु०) एक छन्द । इसमें छह छह मात्राके चार पाद होते हैं ।

कामिनीदर्पण (सं० पु०) ध्वजभङ्गका रसविशेष, नामर्दीकी एक दवा । पारद १ तोला और गन्धक १ तोला जला धुस्फुरबीजका चूर्ण १ तोला मिलाते तथा धुस्फुरतेलसे सबको घोंट हातते हैं । इस औषधके सेवनसे ध्वजभङ्ग (नामर्दी) मिट जाता है ।

(भेषजशास्त्र)

कामिनीपुष्प (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़ ।

कामिनीप्रिया (सं० स्त्री०) मद्यसामान्य, माम्बूली शराब ।

कामिनीमोहन (सं० पु०) एक छन्द । इसका अपर नाम स्रग्विणी है ।

कामिनीय (सं० पु०) कामिन्याः कामिनीप्रियाश्चनस्य, ईशः साधकः । शोभाश्चनहृत्, सजना ।

कामिल (अ० वि०) १ पूर्ण, समूचा । २ योग्य, लायक ।

कामी (सं० पु०) अतिशयेन कामयते, कम-णिच्-णिनि ।

१ चक्रवाक, चकवा । २ कपोत, कवूर । ३ चिडा । ४ चन्द्र, चाट । ५ ऋषभ नामक एक औषधि । ६ सारस पक्षी । ७ विष्णु ।

“कामदेश कामपान कामी काल, हतात्म ।” (महाभारत ११।१३८) ८ कामुक, प्यार करनेवाला । (त्रि०) ९ अभिलाषी, खादिश करनेवाला । १० प्रेमी, मुग्धाक ।

कामी (हिं० स्त्री०) १ कमानी । २ कसिकी टकी हुयी छड । इससे सुठिया बनती है ।

कामीकजीव (सं० पु०) कामजहृत्, एक पेड़ ।

कामीन (सं० पु०) कामं अनुगच्छति प्रयोदरादित्वात्, साधु ; काम-ख । १ रामपूग, रामसुपारी । २ काम-देवका अनुगत । ३ कामुक, आशिक ।

कामील, कामीन देखो ।

कामुक (सं० त्रि०) कामयते कम-उकच् । अथपतपद-व्यामृत्पदनकमगमभा उकच् । पा ३।१।२५४ । १ कामी, मुग्धाक । इसका संस्कृत पर्याय—कामिता, अणुक, कम्ब, कामयिता, अभीक, कमन, कामन और अभिक है । २ अभिलाषी, खादिशमन्द । (पु०) ३ अशोक-हृत् । ४ पुत्रागहृत् । ५ माघवीनता । ६ चटक । ७ चक्रवाक, चकवा । ८ कपोत, कवूरतर ।

कामुककान्ता (सं० स्त्री०) कामुकानां कान्ता प्रिया, इ-तत् । अतिसुकृन्ता, माधवीलता ।

कामुकता (सं० स्त्री०) कामुकस्य भावः, कामुक-तल् । अत्यन्त कामयुक्तका कार्यादि, आशिकी ।

कामुकत्व (सं० स्त्री०) कामुक-त्व । कामुकता देखो ।

कामुका (सं० स्त्री०) कम-उकच् टाप् । १ इच्छावती, खादिश रखनेवाली । २ भोगाभिलाषविशिष्टा, आरामकी खादिश रखनेवाली । ३ रमणैच्छायुक्ता, शहवतकी खादिश रखनेवाली । ४ रक्तमञ्जरी, अतिसुकृन्ता । ५ वक्, बगला । ६ एक माटकादोष । यह रोग बालककी जन्मके पीछे बारहवें दिन, मास वा वर्ष ठठ खडा होता है । इसमें त्वर चढ़नेसे रोगी ईंसता, बफ्लादि फेंकने लगता और वृथा बकवाद करता है । फिर खासप्रखासका वेग भी बढ़ जाता है । कामुकायन (सं० पु०) कामुकस्य अपत्यं पुमान्, कामुक-फक् । नडादिथ, फक । पा ४।१।२८ । कामुकके पुत्र ।

शामुकी (स० खी०) शामुक डीव्। कनकशुभ्रमेति।
यथा। हृदयको, शिवात्। कण्ठका रीको।

शामुदा (स० खी०) सुशुभ्रर्षी, मोट।

शामिष्, (स० त्रि०) चमिकावर्षे पूरवार्यं उच्योम
कर्मिवासा भी श्राद्धिय पूरो कर्मिनेमि कमा जो।

शामिखर (स० पु०) शामाना ईखर, ३ तम्।
१ परमिखर। २ कुषिर।

शामिखरमोदक (स० पु०) शीवर्षियेय, एक दवा।
शामककी, सेन्धव, कुष्ठ, कटुपत्र पिप्पली, यष्टो
धमानी बनयमानो, पट्टिमह, शौरक शाम्यक, कृष्ण
शौरक मठो, कर्बन्धुर्षी, कष, भागिखर, तासीय,
एला, तासीयपत्र, गुडक, मरिच, इरोतकी तथा
विभीतकका चूर्ण समभाग शौर समोम भूमी कुबो
भांगका चूर्ण सबके बराबर हावनी है। फिर उक्त
चूर्णचूर्णके धमाल चोमो छोड़ पाकयोग्य कर्मि कामनी
बनाया जाइये। पाक शिव चोमि पर लिखित् इत
एक महू शौर कर्मिनेमि लिखे भूला तिब तथा कपूर
पड़ता है। मोदक पाच तोलेका बांधते है। इस
शीवर्षके देवनेसे संघर्षकी रोग शीघ्र शारीर्य होता है।

(परमखर)

शामोकरक (ताकत बढ़ाने) का शामिखर मोदक
इस प्रकार बनाया है—कुष्ठ, गुडू, शो, मिठी, मोषरस,
विदारो, सुबकी, मोषुरवीर, इरु, यतावरो, कर्मिचक,
धमानी, ताकादुर, शाम्यक, यष्टिमह, नामकाका, तिका
महरिका, शालीपत्र, सेन्धव भार्गी कर्बन्धुर्षी,
यष्टो, मरिच, पिप्पली, शौरक कृष्णशौरक शिरक,
गुडक तथा तासीयपत्र एला, नामकैगर, पुनका
मन्दिपिचो, द्राघा, कटुपत्र, यष्टो माकली त्रिफला
शौर कर्मिचका चूर्ण समभाग, सर्वचूर्णका चतुर्वीय
चम्, शौर चम्बे पाचा मन्धक पड़ता है। फिर इस
चूर्णमन्दिषि चाबी भांय शौर सबके दूनी चोमो हाक
यह मोदक बनाया जाता है। मोदककी मात्रा १ तोला
है। इसके देवनेसे कर्मिनेमि बढ़ता है। (परमखर)

शामिखरस (स० पु०) शीवर्षियेय, एक दवा।
पाप १ पत्र, मन्धक १ पत्र, इरोतकी तथा चित्तक
१ पत्र, सुपत्रक डेढ़ पत्र एला डेढ़ पत्र, पत्रक डेढ़

एक तिबट १ पत्र, पिप्पलीमूत्र १ पत्र, विप १ पत्र,
नामकेसर १ चूर्ण, परक १ पत्र शौर सबके बराबर
गुड काक कुपूररस या चोबे एक महूर वाटिने पर
एक रस तैयार होता है। गोको वैरकी गुठकीके
बराबर बनती है। रातको इसी रसम कर्मिनेमि पाक
शौर शोबरोग शारीर्य होता है। (परमखर)

शामिखरी (स० खी०) शामाना शोवर्षियेय
प्रदायित्वेन ईखरी, ३-तम्। १ खीर मेरवी।
२ शामाप्याकी पांच मूर्तिमें एक मूर्ति।

“कर्मका शिवुप र्षेय तथा कर्मिनेमि विष।
शावपत्र कर्मिवासा कर्मिनेमिनेमि।” (कर्मिचतुपत्र ११ प)

शामिखरपुराणमें शामिखरी मूर्तिको कर्षेना रस
प्रकार है—कृष्णचूर्ण, सुशुभ्र कृष्णवेय, परगुण,
दादय इष्ट, पहादय चम्, प्रक्षेक मन्धकमें चर्षे-
चम्, कर्मिनेमिपर मन्दिषुवादि निर्मित माका शौर
दक्षिण-कृष्ण चम्बुमें सुपत्रक तिबसुत, पत्रकाक, कड,
यष्टि तथा मूत्र है। शाम-कृष्णचम्बुमें पधमाका,
महापत्र कादक, पमय, चर्म शौर विनाक है।
ईयात, पूर्ण, दक्षिण पश्चिम, उत्तर शौर मन्ध कर्मो
शौर परगुण चर्षकित है। कर्मस सुष यथाक्रम यष्ट,
रक्त, पीत, हरित, कृष्ण शौर विचित्र चर्षविधिष्ट है।
यह कृष्ण सुषक सुषक देवोके सुष कर्मि गये है। यष्ट
माकेखरीका, रक्त शामाप्याका पीत त्रिपुराका, हरित
शारदाका, कृष्ण शामिखरीका शौर विचित्र सुष चर्षो
देवोका है। प्रति मन्धक पर शिव संयत है। परिधान
विचित्रकत पदका व्याजकम है। बिंद पर श्वेत शय,
श्वेतगव पर रक्तपत्र शौर रक्तपत्र पर देवी बैठो है।
चर्म, चर्ष शौर शामिचिदिषि लिपि इसी प्रकार शामि
खरी मूर्तिका ध्यान करना जाइये।

(कर्मिचतुपत्र ११ प)

शामिष्ट (स० पु०) शामाकडुप, एक बड़े शामका पिड़।
शामोद (स० पु०) एक रागिनी। शैवावली शौर
शोडके संयोगसे यह बनता है। ज नि सु ष्ट न म प
अरपाम है। केवत इसका बादो शौर पञ्चम संवादी
है। कर्मच शौर शाम रसके समय यह गाया जाता है।
रात्रिका प्रथम चर्षमहर रसके मानेका समय है। यह

कई प्रकारका होता है, जैसे—सामन्त-कामोद, कल्याण-कामोद और तिलक-कामोद। कोई कोई इसे मानकोसका पुत्र भी मानते हैं।

कामोदक (सं० स्त्री०) कामेन खेच्छया दत्तं उदकम्, मध्यपदन्तो०। सृतव्यक्तिके लिये इच्छानुसार दिया जानेवाला जल। चूड़ाकरणके पीछे मरनेवालोंको ही उदकक्रिया होती है। जो चूड़ाकरण होनेसे पहले मर जाते हैं, वह कमी जल नहीं पाते। किन्तु उनके लिये कामोदक छोड़ दिया जाता है। (लीलादि)

कामोदकल्याण (सं० पु०) कामोद और कल्याणके संयोगसे बनो एक रागिणी। इसमें शुद्ध स्वर ही लगते हैं।

कामोदतिलक (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और तिलकके संयोगसे बनता है। धैवत स्वर इसमें नहीं लगता।

कामोदनट (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और नटके संयोगसे बनता है। कोई कोई इसे नट-नारायणका पुत्र बताते और टिनके दूसरे प्रहर भी गाते हैं।

कामोदसामन्त (सं० पु०) एक रागिणी। यह कामोद और सामन्त मिननेसे बनता है। इसमें धैवत नहीं लगते और रातके तीसरे प्रहर गाते हैं।

कामोदा (सं० स्त्री०) कुम्भितो मोदो यस्याः, बहुव्री०। एक रागिणी। यह कामोदको स्त्री है। रात्रिके द्वितीय प्रहरकी द्वितीय घटिका इसके गानेका समय है। यह सुघराई और सोरठ मिननेसे बनती है। इसका स्वरग्राम—स ऋ ग म प ध है।

कामोदी, कामोदा शब्दो।

कामोदोपक (सं० त्रि०) कामदेवकी भड़कानेवाला, जो शहवतका घटाता हो।

कामोदोपन (सं० स्त्री०) कामदेवका उमार, शहवतका जोश।

कामोपजीव (सं० पु०) कामहृदि नामक महासुप्त, एक भाड़।

कामोपहत (सं० त्रि०) कन्दर्पके बाणोंसे व्याकुल, शहवतका मारा हुआ, जो सुहृद्वैतमें फंसा हो।

कामोपहतचित्ताङ्ग (सं० त्रि०) कामातुर, शहवती।
काम्पिल (सं० पु०) काम्पिलः नदीविशेषः तस्य अदूरे भवः, काम्पिल-अरण्य। काम्पिल्य नामक एक देश। हरिवंशके वर्णनानुसार यह देश पञ्चालका दक्षिणांग है।

काम्पिला (सं० स्त्री०) काम्पिल्य देशकी राजधानी।

काम्पिल्य (सं० पु०) काम्पिले जाताः, काम्पिल-अरण्य।

१ गुण्डारोचनी नामक सुगन्धद्रव्य, एक खुगवृद्धार चीज। हिन्दीमें इसे कमीला या कमीला कहते हैं। यह रेचक, कटु, उष्ण वीर्य और कफ, पित्त, रक्तदोष, क्षमि, गुल्म, उदर, व्रण, प्रमेह, भ्रनाह, विष तथा अश्वरी-रोगनाशक है। (भावप्रकाश) (कम्पिलाया अदूरे भवः, काम्पिला-अरण्य) २ जलपट विशेष, एक सुक्त। वर्तमान नाम काम्पिल है।

“माकन्दोमघ गद्रत्याधोरे जनपदापुत्राम्।
सोऽप्यवाप्तुं दोनमना काम्पिल्यच पुरोत्तमम् ॥” (महाभारत ११।१६८)

काम्पिल्यक (सं० त्रि०) काम्पिल्ये जातः, काम्पिल्य-वृक्षः। १ काम्पिल्यदेशजात, काम्पिल सुक्तका पैदा। (पु०) २ गुण्डारोचनी, कमीला।

काम्पिल (सं० पु०) काम्पिल-अरम् निपातनात् साधुः। गुण्डारोचनी, कमीला। इसका संस्कृत पर्याय—कम्पिल, कम्पील, काम्पिल और काम्पिल्य है।

काम्पिलक (सं० स्त्री०) काम्पिल-स्वार्थे-कन्। १ गुण्डारोचनिका, कमीला। २ काकमाचो, कौवाटोटी।

काम्पिलिका (सं० स्त्री०) काम्पिलक-टाप्। गुण्डारोचनिका, कमीला।

काम्पील (सं० पु०) काम्पिल-अण् निपातनात् साधुः। १ गुण्डारोचनिका, कमीला। २ काम्पिल्य नगर, एक शहर। ३ पलाशवृक्ष, टाकका पेड़।

काम्पीलक (सं० पु०) काम्पील स्वार्थे कन्। काम्पील शब्दो।

काम्पीलवासी (सं० पु०) काम्पीले काम्पिल्यदेशे वासो-ऽस्यास्ति, काम्पीलवास-इति। काम्पिल्यदेशवासी।

काम्बल (सं० पु०) कम्बलेन भावतः, कम्बल-अण्। १ कम्बल द्वारा भावत रथ, जनी कपड़ेसे लिपटी हुयी गाड़ी। (त्रि०) २ कम्बलसे भावत, जनी कपड़ेसे घिरा हुआ।

काम्बलिक (सं० पु०) वैद्ययास्त्रोक्तं यूपविशेष, किसी

विश्रुता करायत। इसीको बाँध पीर घटाईये मूय नयेरइका जो करायत बनाया जाता, वही 'काम्यविक्रम' कहलाता है। यह विमये वचिकारक होता है।

“दशमकम विद्वन्-काम्यविक्रमः कः॥” (५५३)

काम्यविक्रम (सं० पु०) काम्यं यद् मूयचत्वेन मिश्रमम्य मय्य ठक्। यद्वाकार लौकिके वने शिवर वेचनिवाका। काम्युहा (सं० ली०) कुक्षितं यन्मु यन्वा, कु-यन्म यत् टापु ली कादेय। यन्मन्या पसमन्।

काम्ये—१ गुजरातके पश्चिममामका एक देशी राज्य। यह पचा० २२ ८' एवं २२ ३१' व० और देमा० ७२ २०' तथा ७२ ३' पू०के मध्य पवस्थित है। इसके पूर्व बड़ोदा राज्यका बड़याद एवं पितवाद प्रदेश दक्षिण काम्ये उपसागर और पश्चिम साबरमती नदीके प्रांगे जो पश्चिमदाबादकी सीमा है। काम्येकी सीमाके मध्य पंगरीज और बड़ोदाप्रांसे साबरको बाएँके पश्चिमत करी घाम है। इस प्रदेशकी पूर्वदिक् मन्डो और पश्चिम दिक् साबरमती नदी बहती है। दोनों नदीयमिं प्यारमाटा प्रायिके पानो कुछ प्यारा रहता है। काम्येकी जमीन् मो खोती है। नूतन रूप खोदनेके पत्य दिनमें जो पानो खारा हो जाता है। वन वनको सावधानसे व्यवहार करना पड़ता, नहीं तो नाष्टर निवसता है। काम्येकी भूमि समतल है। बीच बीचमें घाम, इसकी भीम, बट प्रकृति वृक्षोंको खेकी देख पड़ती है। भूमिका परिमाण ३३० बर्गमील है। देशमें गुजराती और हिन्दी भाषा बहती है। हिन्दोमें इसे खप्पात् कहते हैं। कारख प्वायतीर्ष नामक महादेवका एक स्थान है। वहीथे खप्पात् नाम बना है।

जोकीके खजानानुसार ई० ८में यताब्दके मियमानमें पारख टेमथे पारखिक कोम कुछ जहाजोंपर आती है। नूयानसे इनमें कई जहाज खूब गये। कुछ जहाज पति बहथे साजिम प्रदेश पडुके थे। साजिम प्रदेश पुरतथे ३३ कोप दक्षिण है। पारखिकोने वहाँ बतरनेको राजाके अनुमति मांगी। राजाने खड़ा—यदि बट गुजरातमें भाषामें बात करना चीख सेते और मोमांस न खाते, तो बतरनेको अनुमति पा जाति। इस बात

पर खोजत जो पारखिक वहाँ बहुत दिन रहे थे। फिर बट बहथे उपकूलमें वाचिन्म करने लगी। काम्ये पारखिक प्राये पीर घेस काम्ये पडुच गये। काम्ये स्थान तथे बहुत पच्छम बना था। सुतरां यह दक्षिण टल बहाँ जा कर उपस्थित हुई। उनको संख्या काम्ये बहने लगी। मियको बहथे पश्चिमदिशोंकी पयिचा संख्या पश्चिम कोनेथे तथेकी का बहथे पारख हुआ। कुछ काच पीछे हिन्दुनेने तथे सुद्धमें पराप्त कर टेमथे निवाच दिया। सुद्धमें पनेक पारसी मरे थे। ८८० ई० को काम्ये जहाजोंके पश्चिकारमें पड़ा। तसी समयके कामिक उन्नति कोने लगी। १९८० ई०को सुसजमानोंने काम्ये पश्चिकार किया। उस समय काम्ये भारतका एक सम्बुद्धियाको नगर समझा जाता था। सुसजमानोके गांधनमें काम्ये गुजरातके पन्तगंत हुआ। ई० १२ में यताब्दमें काम्येको पश्चिक उन्नति देख पड़ी। ई० १६ के यताब्दके उत्तर प्रदेश वाचिन्मका प्रधान स्थान माना जाने गया। महाराष्ट्रके राज्य बड़ाते समय सुसजमानोंने प्राच्यपक्षे अपनी पश्चिकार बचाये थे। वैशिकको पश्चिके पीछे काम्ये पंगरीजोके हाथ बना। पात्र वन पंगरीजोके पक्षीय एक नवाह सासन करती है। इनको पंगरीजोके राज्य करनेके विद्ये बन्द मिथी है। प्रबन्धानुसार राज्यका मार तथेकी बंधावलीमें रहता। वह पंगरीज नगरन मियको कर देते हैं।

काम्येमें कोई १० विद्यालय हैं। पक्षीय, गिद्ध, बाबल, कर्क, तम्बाकू और मोस खूब उपजता है। मोसगाय बंगकी सुवर और हिरन बहुत हैं। काम्ये उपसागरमें वहाँ खतुके हिवा अन्य घमक मको भाति बच नहीं रहता। पत्थे वरपत्तर देकी। वाचिन्ममें पश्चिक सुविधा इसी कारख नहीं रहती। मन्डो और साबरमती वन उपसागरमें ही गिरती है। हिन्दु इनका प्रवाह बराबर एक राहसे नहीं चलता। तथेके नदीके सुद्धमें बड़े बड़े जहाजोंके जानेमें पडुचन पड़ती है। फिर मो वाचिन्म नुरा नहीं। यतर्को, मन्डोका, नमक, मोस और खोदनेका पत्तर तेदार होता है। काम्येमें कोई पक्की राह नहीं। किन्तानी,

छंट, घोड़ा बगैरहके जरिये माल-असवाव आता जाता है।

२ काम्बे राज्यका प्रधान नगर। वह मही नदीके सङ्गमस्थान पर अक्षा० २२° १८' ३०" उ० और देशा० ७२° ४' पू० में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३६००० है। नगर प्रति प्राचीन है। पहले इस नगरके चारो ओर प्राचीर वैष्टित था। फिर लो० पर तोप भी लगी रहती थी। किन्तु आज कल उसका भग्नावशेष मात्र लक्षित होता है। कथानुसार चारमनाघ्यने वहाँ जन्म लिया था। वह प्राचीन द्राविडके पाण्ड्य राजके दौत्यकार्यको रोम-सम्राट् अगस्तसके निकट भेजे गये। वहाँ आयेन्स नगरमें उन्होंने आग लगायी थी। फिर स्वच्छाक्रमसे चारमनाघ्य उसीमें जल मरे। प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्यके भी उक्त स्थानमें जन्म लेनेका प्रवाद है। १२६३ ई० को मार्को पोलो नामक वेनिसके परिव्राजक उक्त नगर देखने गये थे। उन्होंने उसे भारतका एक बड़ा बन्दर और वाणिज्यस्थान बताया है। उनके विवरणमें काम्बेय नामसे काम्बे नगरका उल्लेख है। वास्तविक वह भारतका प्रधान वाणिज्यस्थान था। किन्तु उपसागरका जल घट जानेसे अब वह सन्दि देख नहीं पडती।

काम्बे उपसागर देखो।

काम्बेमें जैनोके प्रकाण्ड मन्दिर थे। उन्हीं मन्दिरके स्तम्भ निकाल १२२५ ई० को मुहम्मद शाहने लामा मसजिद बनवायी। काम्बेकी प्राचीन कीर्तियोंका भग्नावशेष आज भी अनेक स्थलोंमें देख पड़ता है। एक सुसलमान नवाब वहाँ राजत्व करते हैं। -वह अंगरेजोंके अधीन करद राजा हैं।

काम्बे उपसागर—खम्भातकी खाड़ी। उसके पश्चिम गुजरात और पूर्व बम्बई-प्रांत है। समुद्रके मुहानेमें उसका परिस्तर केवल डेढ़ कोस है। किन्तु सुखसे उत्तर कावे प्रदेश तक प्रायः ४० कोस निकलेगा। पूर्व दिक्से मर्मदा तथा तामी, उत्तरसे सावरमती एवं मही और पश्चिम काठियावाड़से दो नदी जा उसमें गिरी हैं। उपसागरके सुखसे पश्चिम दिक् पोत-गीर्जाका अधिकत दौड नामक द्वीप और पूर्व दिक्

सूरत नगर अवस्थित है। सूरत, काम्बे बगैरह बन्दर उसीके उपकूल पर हैं। फिर भी उसमें वाणिज्यका विषम अन्तराय उपस्थित है। प्रायः दो सो वर्षने जल क्रमशः घट रहा है। इसी कारण भाटेके समय उसमें जल कम पड जाता है। फिर ज्वारके समय विषम स्त्रोतका वेग बढता है। काम्बेके निकट प्रायः ८ कोस तक भाटाके समय विलकुल जल नहीं रहता। उस समय पार जाते ज्वार उठनेसे जीवनकी आशा छोडना पडती है। ज्वारके वेगसे जहाज तक टूट जाता है। जो नौका या जहाज किसी ज्वारके उठते आ लगता, वह फिर ज्वार न चढ़नेसे कहां जा सकता है।

काम्बोज (स० पु०) काम्बोजदेशे भवः, काम्बोज-अण् । १ काम्बोजदेशजात घोटक, एक घोडा । २ श्वेत खदिर, सफेद कत्या । ३ पुत्रागृह, एक पेड । ४ कटफल, कायफल । ५ वरुणगृह, एक पेड । (स्त्री०) - ६ पद्मकाष्ठ, एक लकड़ी । (त्रि०) ७ काम्बोजदेशजात, काम्बोज सुक्कका पैदा । काम्बोज देखो ।

काम्बोज—यवनतुल्य एक श्लेच्छजाति । सगर राजाने इन्हे मस्तक सुण्डित करा देशसे निकाल दिया था । (हरिवंश)

काम्बोजक (स० स्त्री०) काम्बोजे भवः, काम्बोज-बुन् । मनुष्यवत्स्वयोर्बुन् । पा ४। १। ३४ । काम्बोजदेशवासीका हास्यादि । (त्रि०) २ काम्बोजजात ।

काम्बोजि, काम्बोजी देखो ।

काम्बोजिका (स० स्त्री०) श्वेतगुप्ता, सफेद घुंघची । काम्बोजी (स० स्त्री०) काम्बोज-ल्लीप् । १ रत्नगुप्ता-सता, साल घुंघची । २ वल्ल खदिर, पापरी कत्या । काम्बोजी (स० स्त्री०) १ श्वेतगुप्ता, सफेद घुंघची । २ बाकुची । ३ विट्खदिर । ४ मायपर्णी । ५ गन्धमुष्का ।

काम्बे (स० त्रि०) काम्बेते, कम-णिच्-यत् । १ कामनीय, चाहने लायक । २ सुन्दर, खूबसूरत । ३ कामनायुक्त, खाद्दिशमन्द । ४ कर्तव्य, करने लायक ।

“यत् किञ्चित् फलहृदियं यश्चदामजपादिकम् ।

क्रियते कायिकं यस्य तत्काम्यं परिकीर्तितम् ॥” (मुग्ध० रा० टी०) -

१ शीघ्र, पङ्क्ति या लघुया कामेवाका । (श्री०)
१ शमीहकर्म, चाहा हुआ काम । (पु०) ० चयन
प्रथ, एक पङ्क्ति ।

काम्यक (सं० श्री०) १ वनविमिय, एक जङ्गल । २ शरी
वरविमिय, एक ताकाव । ३ काठविमिय, एक काठ ।
काम्यकर्म (सं० श्री०) काम्यक तत् कर्म सिति,
कर्मका० । शर्गादि शमीहकामनासि श्रिया जाने
वाला एक कर्म, श्रुतिहोमादि, जो काम श्रिसी
मतसबसे श्रिया जाता है ।

काम्यकवम (सं० श्री०) वनविमिय एक जङ्गल ।
यह वरकातो नदोके तीर परस्थित है । पाण्डव बहुत
दिन इस वनमें रहे ।

काम्यगिर् (सं० श्री०) मधुर शब्द, एक पुराणवार गीत ।
काम्यता (सं० श्री०) काम्य माव, काम्य-तत् ।
१ कामनीयता सुवचुरतो । २ माय्यता, शिष्य-भाराम ।
३ काय्यनीयता, चाह ।

काम्यदान (सं० श्री०) काम्यक तत् दानचेति,
कर्मका० । १ शरीर प्रकृति कामनीय वस्तुका दान
शरीर दीक्षित वगैरह पण्ड्य पार्श्ववासी शीतोकी
वक्ष शिष्य । २ पुत्र, शिष्य, कथ प्रकृति मिश्रनीकी
कामनासे श्रिया जानिवाका दान ।

"काम्यनिवेदनमतेन वन शरीरके ।
वच वन काम्यकर्मार्थं श्रितिविषयः ॥" (रघुपुराण)

काम्यफल (सं० श्री०) काम्यक फल १-तत् । काम्य
कर्मका काम्यनीय फल चाहा जानिवाका नतीका ।
काम्यमरक (सं० श्री०) काम्य काम्यनीय मरकत
कर्मका० । काम्यनीय मरक, पानहला ।

काम्यवत (सं० श्री०) काम्य काम्यफलप्रद व्रतम्
मखपदको० । शमीहफलप्रद व्रत ।
काम्या (सं० श्री०) काम्य शिष्ट मासि कथ टाय ।
१ शिवव्रतको पत्नी । यह कर्तव्यको काम्या रक्षी ।
निरम हैकी । २ कामना याश्रिय ।

"कर्मव्रतप्रदं श्रितिविषयः कथ वच ।
शिवव्रतप्रदं च शरीरवैश्वानरीयम् ॥" (रघु शीरवच)

काम्यानिपाह (सं० पु०) काम्य काय्यनीय शमिप्राय,
कर्मका० । काम्यनीय शमिप्राह, मतसबको बात ।

काम्येष्टि (सं० श्री०) कामनाश्रियार्थं धनुहित यत्र,
जो यत्र श्रिसी मतसबसे श्रिया जाता है ।

काम्यापासना (सं० श्री०) काम्यका कामनाश्रियोप्या
उपासना, १ तत् । कामनाश्रिये शमिप्रायसे जो
कामेवाको उपासना जो पूजा अपने मतसबसे जो
जाती है ।

काम्य (सं० पु० श्री०) कु कुशित ईपत् या चक्य
का, आदिग । १ कुशित पम्बरस, पुराव चटारै ।
२ ईपत् पम्बरस, योकी पटाई । (सि०) १ कुशित
वा ईपत् पम्बरस युल काम चहा ।

काय (सं० श्री०) क प्रजापतिदेवता चक्य, क चक्य
इदादेयय चादेहं हि । कर्मत् । का कायः । १ प्राजा
पम्बतीर्थ । श्रिता पङ्क्ति श्रयोमागला नाम
प्राजापत्यतीर्थ है —

"शुभ्रकर्मने गत्र तीर्थं चक्यैः ।
काम्यपतिवृद्धे इवै वैप शिष्ये शरीरः ॥" (मनु १२२०)

१ मनुष्यतीर्थ । १ ब्रह्मतीर्थ । (कावति प्रजापति,
चक्य) ३ श्रुति, शरीर, श्रिया । शरीर हैकी । १ चमूड
ठेर । १ कर्म निप्राता । ० कर्माव, चादत ।
८ प्राजापत्य शिवाह । ८ मूलचन, कामा । १० पृथ,
वर । ११ ब्रह्मा । १२ तक्षकपाण्ड, तना । (सि०)
१३ प्रजापति मन्मथीय ।

कायक (सं० सि०) शारीरिक, श्रियमानो, बदनेके
मुताश्रिक ।

कायकारणकथल (सं० श्री०) कायस्य शरीरस्य
कारण उत्पत्तिकारणे कथं तम् । शरीरोत्पत्तिकारक
कारणको सृष्टिके विषयका कथं त्व श्रियानो कामेवाकी
इरकत ।

कायज्ञेय (सं० पु०) कावय्य ज्ञेयः, १ तत् । शारीरिक
परिचय, श्रियानो शिष्यत या तक्षकीय ।

कायशिक्षणा (सं० श्री०) कायस्य शिक्षणा १ तत् ।
पातुदेदीक्ष श्रिया शिक्षणाका एक पङ्क्ति, तमाम श्रिया
पर चकर श्रिकनीवाकी शोमारिकाका इलाज । इवमं
कर चक्रमाद, कुल प्रकृति शरीरव्यापी रोगको
शिक्षणा है ।

कायत्रा (सं० पु०) वरनारम्ब, जगामको शरीर ।

कायय (सि०) चक्य हैकी ।

कायदा (अं० पु०) १ नियम, तरीका । २ रीति, दस्तर । ३ व्यवस्था, कानून ।

कायफर (हिं०) कायकन देखो ।

कायफल (सं० स्त्री०) कटफल, एक पेड़ । इसकी छाल औषधमें पड़ती है । हिमालयके उष्णप्रधान स्थानमें यह उत्पन्न होता है । आसामके खासिया पर्वत और ब्रह्मदेशमें भी इसकी उपज है ।

कायवन्धन (सं० स्त्री०) कार्यं वधाति, काय-बन्धन्य, परिकार, कसरबन्द ।

कायम (अ० वि०) १ स्थित, ठहरा हुआ । २ स्थापित, रखा हुआ । ३ नियत, ठहराया हुआ । ४ समान, बराबर ।

कायम—कायम खानका उपनाम । टोंकवाले नवाब वजीर मुहम्मद खानके अधीन यह सेनानीके पद पर प्रतिष्ठित रहे । १८५३ ई० को इन्होंने उर्दूमें एक दीवान् बनाया था ।

कायमजङ्ग—फरूखावादवाले नवाब मुहम्मद खान् वरुणके पुत्र । १७४३ ई० के जून मासमें इन्हें अपने पिताका उत्तराधिकार मिला था । इन्होंने वजीर नवाब सफ्दर जङ्गकी प्रेरणा पर रुहेल्लोसे युद्ध ठाना । किन्तु पराजय होनेपर १७४८ ई० के नवम्बर मासमें इन्होंने इन्हें मार डाला था । फिर वजीर इनका राज्य टबा बैठे । इनके प्रधान कर्मचारी इलाहाबादकी बन्दी बनाकर भेजे गये । किन्तु इनको माताको १२ छोटे जिनके साथ फरूखावाद नगर वरुणके भरणपोषणके लिये मिला था । विजित टेग वजीरके प्रतिनिधि राजा नवल रायके संरक्षणमें रहा । थोड़े दिन पीछे ही इनके स्त्राता अहमद खान्ने युद्धमें राजा नवल रायको मार, टेग पर अपना अधिकार जमा लिया था ।

कायमनोवाक्य (सं० त्रि०) कायः मनः वाक्यश्च यत्र, बहुव्री० । शरीर, मन और वाक्यसे होनेवाला, जो दिखोजान्से लगने पर वनता है ।

कायमसुकाम (अ० वि०) स्थानापन्न, एवजी, जगह पर रहनेवाला ।

कायमान (सं० स्त्री०) कायस्य मानमिव मानमस्य,

मध्यपटनी० । १ लणकुटीर, फमका भोपडा । २ देहपरिमाण, जिम्नकी माप ।

कायर (हिं०) कातर देखो ।

कायरता (हिं०) कातरता देखो ।

कायरूपसंयम (सं० पु०) पातञ्जल-कथित एक ध्यान । इसमें अपने रूपका संयम कक्षा है ।

कायल (अ० वि०) यथार्थताका स्वीकार करनेवाला, जो झूठ निकलने पर अपनी बात पकड़ता न हो ।

कायली (हिं० स्त्री०) १ ग्लानि, गर्म । २ मधानी ।

कायवलन (सं० स्त्री०) कायो वल्यते प्राच्याद्यते अनन, काय-वलन-म्युट् । कवच, वस्तु ।

कायव्य (सं० स्त्री०) महाभारतात् एक दसुराज । इनके जन्मका विवरण इस प्रकार दिया है, किमी निपाटीके गर्भ और क्षत्रियके भ्रोरससे कायव्यका जन्म हुआ । यह दस्युदनाधिप बनते भी सर्वदा धम-कर्ममें लगे रहते थे । अनुशरोके प्रति इनका आदेश रहा—तुम लोग ब्राह्मण, तपस्वी, भीरु, शिष्ट, स्त्री और युद्धसे भागे व्यक्ति को कभी मत मारो । यह स्वयं वनवासी, तपस्वी तथा ब्राह्मणकी पूजते और नृगादि मार उन्हें पर्याप्त बाहार देते थे । इसी प्रकार दस्युवृत्ति रखते भी कायव्यने सिद्धि पायी । (महाभारत शान्ति, १३५, ५०)

कायव्यूह (सं० पु०) काये शरीरे व्यूहः वातादीना त्वगादीनां सप्तधातूनाञ्च व्यूहनम्, ७ तत् । शरीरके वात, पित्त, श्लेष्मा, त्वक्, प्रभृति सप्तधातुका विन्यास, वाह्यदिक्से चारम्भ करने पर यथाक्रम त्वक्, रक्त, मांस, स्राव, अस्थि, मज्जा और शुक्र जाते हैं । वात, पित्त और श्लेष्मा शरीरके अभ्यन्तरमें पृथक् पृथक् स्थानपर अवस्थित हैं ।

इन तीनों दोषों में अधिकत अवस्थाका स्थान इस प्रकार निर्दिष्ट है,—नितम्ब एवं गुच्छदेश वायुका, पक्वाशय (तिमस्य एवं गुच्छदेशके ऊपर और नाभिके नीचे पक्वाशय पड़ता है) तथा आमाशयके मध्य पित्तका और आमाशय श्लेष्माका स्थान है । संक्षेपमें प्राधान्यके अनुसार उक्त तीनों स्थान तीनों दोषोंके समझे गये हैं । (च्युत)

प्रत्येक दोष पांच पांच भागोंमें विभक्त है । उक्त

आप मेरा नामकरण कीजिये; और मेरे लिए कार्य दीजिये।”

भगवान् ब्रह्माने उसके मधुर वाक्योंकी सुन कर बड़ी प्रसन्नतासे कहा;—“हे वत्स! मैंने स्थिरचित्त हो कर समाधि लगाई थी, उसी अवस्थामें तुम मेरे कायसे पैदा हुए, इसलिए तुम मंभारमें कायस्थ नामसे प्रसिद्ध होगे और तुम्हारा नाम चित्रगुप्त हुआ। धर्माधर्मके विचार करनेके लिए यमराजके न्यायालयमें तुम्हारा स्थान निर्दिष्ट हुआ। तुम वहां क्षत्रिय धर्म पालन करना और पृथिवीमें अलिप्त प्रजा उत्पन्न करो।” ऐसा वर दे कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये। कमलाकर-भट्टोद्धृत बृहत्ब्रह्मसूत्रमें भी लिखा है,—

“भवान् क्षत्रियवर्षेय समस्थान समुद्भवात् ।
 कायस्थं क्षत्रियं खगता भवान् भुवि विराजते ॥
 तत्र समुद्भवा ये वै तिर्यपि तत् प्रसतां गताः ।
 तेषां संसृष्टादिभूतिय क्षत्रिया रततन्मरा ॥
 संस्कारादीनि कर्माणि यानि क्षत्रियजातिषु ।
 तानि भवापि कार्याणि सदाप्रायश्चित्ताः ॥
 सदा प्रजापतिरिदं तन्नेवात्मर्षे विभु ।
 एवमुक्तं चित्रगुप्तं प्रसन्नहृदयोऽभवत् ॥”

(Vyavasthā Darpana by Śyāmācharan Sarkar, 3rd. Ed Part I, p 664)

ब्रह्माने कहा था कि, हे चित्रगुप्त! समस्थान अर्थात् कायसे पैदा हुए हो; इसलिए तुम भी क्षत्रियवर्षे हो। तुम पृथिवीमें कायस्थ-क्षत्रिय नामसे प्रसिद्ध होगे। तुम्हारे वंशधर कायस्थ भी तुम्हारे समान कायस्थ-क्षत्रिय गिने जायंगे। उनकी लेख्यादि वृत्ति होगी और क्षत्रियकन्याके साथ उनका विवाह होगा। क्षत्रियोंमें जो जो संस्कार होते हैं, हमारी आत्मानुसार उनको भी वे ही संस्कार करने होंगे। इतना कह कर ब्रह्मा वहांसे अन्तर्धान हो गये; और चित्रगुप्त उनके वचन सुन कर प्रसन्न हुए।

गरुडपुराणमें और एक जगह लिखा है—

“प्रयाति चित्रनगरं कोचितो यव पापि” ।
 यमस्यैवाहुः शीघ्रं राशु प्रगतिं दि ॥” (उत्तराखण्ड १० प०)

फिर वह ऋषि चित्रनगरमें पहुँचे, जहाँ श्रीचित्र,—यमके छोटे भाई—श्रीरि अर्थात् सूर्यके पुत्र

राज्यशासन करते थे। उक्त गरुडपुराणसे यह भी ज्ञात होता है कि, यही चित्रनगर पीछे ‘चित्रगुप्तपुर’ नामसे विख्यात हुआ है।

“चित्रगुप्तपुरं तत्र योजनानां त्रिंशतिः ।
 कायस्थानतः पश्चिमं पापपुराणि वर्तन्ते ॥” (उत्तराखण्ड १० प०)
 उस यमलोकमें (२० योजनमें विस्तृत) चित्र-गुप्तपुर है। वहाँके कायस्थ सबसे पाप-पुण्यका धिक्कार करते हैं।

देवीभागवतमें लिखा है,—

“शाम्पायणी यमपुरी तत्र दृग्गो मदान् ।
 यमदेव इती राजन् चित्रगुप्तपुरकर्मः ।
 निम्नं इतिपुत्रो मानस्योनि यदा मदान् ॥” (१२ स्क० १० प०)
 हे राजन्! दक्षिण दिशामें यमपुरी है, जहाँ चित्रगुप्त पाटि अपने सुभटों सहित और अपनी समस्त शक्तियों सहित सूर्यके पुत्र यम विराजमान है।

गरुडपुराणमें भी लिखा है,—

“शुभं सर्वगतः एत सूर्येणोपिचरिमान् ।
 धर्मं राजसत्तं शूद्रपितृभिर्यम सुदुतं ॥
 शूद्रेणमदिभं सर्वं तयमेतं तु ददतः ॥”
 (गरुडपुराण, प्रोत्तराखण्ड, १ प०)

ब्रह्माने सबसे पहिले सर्वव्यापी वायुकी; फिर त्रेलोक्य सूर्यकी सृष्टि की थी। उसके बाद सूर्यमेंसे चित्रगुप्त सहित धर्मराज (यमराज) की सृष्टि की। इस तरह आदि जगत्की सृष्टि करके ब्रह्मा तपस्यामें रत हुए।

स्कन्दपुराणके प्रथम-खण्डमें चित्रगुप्तको कायस्थ कहा गया है। और उनकी उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है,—

“मित्रा नाम पुत्र इति धर्मोन्माऽमुदरातसे ॥ २
 कायस्थं सञ्जन्तानां नित्यं प्रियक्षेत्रतः ।
 तस्यानयं पार्थ यज्ञे श्मुखाभ्यामिगामिन् ॥ ३
 पुत्रं परमनेत्रस्यो चित्तो नाम वराहने ।
 तथा चित्रामवत् कन्या ददात्यागीन्ममृता ॥ ४
 आर्था तु ज्ञानमावाभ्यां मित्रा पञ्चममा वान् ।
 अथ तस्य च सा भायां मद्य तेनाधिमाविमत् ॥ ५
 अथ तो वायुकी शोभादिभिः परिपाशितो ।
 इति गतो मदारण्ये वायुवैव प्लितो व्रते ॥ ६
 प्रथमस्यैवमासाद्य तप परमनाप्यतो ।
 प्रतिष्ठाना महादेव मास्त्रं शरितस्करम् ॥ ७

पारोक्ष्य किया। इस प्रकार यमराजने अपने सुभटों और बहुतही सेनापोंकी साथ ले कर इन्द्रकी युद्धमें सहायता की। पाशपाणि वरुणदेव भी मत्स्यपुर सवार हो अपनी सेनापोंको साथ ले कर आ पहुँचे। इत्यादि।

श्रीहर्षके "नैपथचरित"में पाया जाता है,—
दमयन्तीकी स्वयस्वर-सभामें इन्द्रादि देवोंके साथ चित्रगुप्तदेव चतुरिय रूपमें आवे थे। नैपथकारने उनका परिचय इस प्रकार दिया है,—

"इन्द्रोपरोऽमुदय चित्रगुप्तः कायस्य चक्षेण च परदीपः।
जडं नु पवथ मधोद एको महेदं चक्षोरि पदमदः ।" (१४ मं)

चित्रगुप्तके प्रार्थनामन्त्रमें यह भी मिलता है—

"प्रिया मङ्गलमुपय चन्द्र-मन्दोदरः।
चित्रगुप्तं महाशो मयाय वरदो भव ॥"

उपर्युक्त मन्त्र मन्त्र पुराणोंसे यह प्रमाणित होता है कि, ब्रह्माके शरीरसे चित्रगुप्तकी उत्पत्ति है ; और फिर कल्पभेदसे चन्द्र सूर्यादि देव जिस प्रकार नाना भाव और नाना रूपसे अवतीर्ण हुये हैं, वैसे ही चित्रगुप्त भी विभिन्न कल्पोंमें कभी सूर्यदेवके पुत्ररूपसे और कभी मन्त्रके पुत्ररूपसे अवतीर्ण हुए हैं। इन्द्र, चन्द्र, वायु और वरुणकी भांति वह भी देवचतुरिय-रूपसे देव-सैन्यमें रहते थे।

विरुहशदियोंका मत।

उपर्युक्त प्रमाणोंके रहते हुये भी विरुहवादा यह कह करतें हैं कि, चित्रगुप्तदेव चार वर्षोंकी सृष्टिके पीछे हुए हैं, इसलिये वे चार वर्षोंमें नहीं गिने जा सकते।

कमलाकरके—"इयं ध्यायन्तिस्वाम्य सर्वहादरिन्निवः ।"
इत्यादि वचनके अनुसार चित्रगुप्त ब्रह्माके समस्त शरीरसे उत्पन्न हुए हैं और ब्रह्माकी "चतुर्वर्षोचित धर्म पत्न्योया यदाविधि—"इस उक्तिसे चित्रगुप्तका चतुरिय होना सिद्ध नहीं होता। "इन्द्रहाजोऽने यक्षान् काप्यन्तर्षं चन्दते" इस युक्तिसे कायस्य एक स्वतन्त्र वर्ष ही प्रतीत होते हैं।

इसके अतिरिक्त मन्वादि धर्मशास्त्रमें चित्रगुप्त अथवा कायस्य जातिका तत्त्व निर्णीत नहीं हुआ है।

किसी किसी स्मृति शास्त्रमें चित्रगुप्त और कायस्य नाम पाया जाता है। परन्तु इससे यह नहीं समझा जा सकता कायस्य कौन जाति है ?

पुराणकी—"धर्मशास्त्राधिकारो चित्रगुप्तो भूभृत् ॥" इस उक्ति द्वारा यहाँ सिद्ध होता है कि, चित्रगुप्त यमराजके लेखक थे। विष्णु, याज्ञवल्क्य, बृहस्पति, इत्यादि स्मृति-शास्त्रोंसे और कायस्योंके धर्माधिकारणमें भी उनके लेखक रहनेका प्रमाण मिलता है। शौगनस धर्मशास्त्र, ब्रह्मवैवर्तपुराण, अग्निपुराण, याज्ञवल्क्यस्मृति और राजतरङ्गिणीमें जगह जगह कायस्योंके प्रति कठोर उक्तियोंका प्रयोग पाया जाता है। विशेषतः अइत्या-कामधेनुके नवम वक्रोद्धत भविष्यपुराणान्तर्गत कार्तिक-युक्त-द्वितीया-व्रत-कथा-सन्दर्भमें कहा है,—

"एतन्दिने व द्वाष्टे तु धर्मदत्तं विजेतम् ।
चर्यायै च धारास्माभ्यन्तमजसदा ।
परमं विप्रमादिनं यथा कर्मादिगारतोम् ।
चित्रगुप्तं च तां दत्ता विवाहमकरोत्तदा ॥"

उपर्युक्त प्रमाणसे यह मान्य होता है कि, चित्रगुप्तका विवाह ब्राह्मण धर्मशास्त्रीकी पुत्री इरावतीसे हुआ था। इसलिये प्रतिक्रम विवाहसे उत्पन्न हुये कायस्य कदापि चैठवर्ष ही नहीं सकते। इसके अतिरिक्त शब्दकल्पद्रुमाद्धत आचार-निर्णय-तन्त्रमें कहा है,—

"आदौ प्रजापतेर्जाता सुषारिणा नाराया ।" इत्यादि उक्तमें पाराशर्य इयं सप्तदिवसवर्षं च कथकः ।
शोमनासा सुत्सवः प्रदोपसवः पुत्रकः ।
काप्यस्यस्य पुत्रोऽमृतं बभूवुः त्रिभुवः ।
काप्यस्यस्य पुत्राः सिद्धायाः कर्तव्योत्तरे ॥
चित्रगुप्तचित्रकेतो विविदथ तयो व च ।
चित्रगुप्तो नत सर्वं विभक्तो शास्त्रसन्निधौ ।
चित्रकेतुः त्रिभिर्वा वः इति दूदः प्रचक्षते ॥
वसुधैव कुटुम्बो भवति दत्तं करणं एव च ।
सृष्टुः स्वपथं चतैते विदमैः सुता सुनि ॥"

इत्यादि वचनोंसे और अग्निपुराणमें कही गई जाति-मात्रासे, चित्रगुप्त और उनके वंशधरोंकी चैठ वर्ष नहीं कह सकते। फिर कमलाकरके

शुद्धमंतलमें एक बायलकी उत्पत्ति इस प्रकार
बतलाई गई है,—

“मद्विषयनिपात्योदितः परमेशः ।
व कालम् इति तीव्रकाले कथं निरोधे ॥
कर्मकाशां मयिका ईश्वरीयाकी वैदिकः ।
श्रीगतां देवतागतां वैदिकं व कालपरम् ॥
वचनम् विविधं गीतपद्यो विदितः ।
वचनः सदाप्रसिद्धः एवम् आचारललीः ।
वचनम् नैवैति निर्विद्विषयवचनम् ॥
विद्यां वदन्तीत्यत्र वचनप्राप्तौ विरक्तं कृतम् ॥”

येदृक्क पोरसके पोर माद्विषयश्रीके गर्भके जो
उत्पन्न हुये हैं, वे बायल हैं। देवीय निविद्या निष्कला
गणना करना शिष्य कार्य करना, श्रेष्ठ पादिका शोभा,
चार वर्षकी सेवा करना इत्यादि उनका कार्य बतलाया
गया है। वह पाँचो संस्कार प्रथम शुद्धजातिके करनेके
हैं, इसलिये इनकी छोटी यज्ञोपवीत, वैरिखवस्त्र पोर
देवताका अर्घ्य न रखना चाहिये।

इसके प्रतिष्ठित मध्यम्यदुर्मोहन देवीवचने “वर्तित्वा
स्मिन् एव सर्वेण पारमवत् ॥” इस कथनसे यही प्रमाहित
होता है कि पादिशूरका समामि एव ब्राह्मणोके साथ
पाये हुये एवबायल पादि शूद्र जो ठहराये गये थे।

इसके सिवा कुछवर्षपुराणमेंभी लिखा है—

“उत्तमां चैव श्रेष्ठान् वरुणो वर्षेवरेत् ॥” (अथ ११ व)

इत्यादि प्रमाणके किसी कोमोका मत है
कि वेदमें बायल वर्षेसहर करके भी बायल थे।

विद्वदमत-व्युत्पन्न ।

विद्वदशादी श्रेष्ठ विद्वगुत्तके वर्षे पोर व्रत सम्बन्धमें
जिन कुशियाँकी दिवसार्ति हैं उनके व्रतार्थें हम
पढ़ने को कर्मनाकाष्टत इहदुक्कप्रपञ्चका प्रमाण
उद्धृत कर चुके हैं कि, ब्रह्माने उत्पत्ति
कालमें जो विद्वगुत्तके कहा था—“तुम बायल” जिस
धनके चरित्र उत्पन्न हुए हैं उन्ही ध्यानसे उत्पन्न
होनेके कारण चरित्र नाममें प्रसिद्ध होगी। तुम्हारे वर्णके
नाम भी तुम्हारे जो प्रमाण पर्याप्त बायल
नामके पुकारे जायेंगे। उन कोमोका विशद चरित्र
कल्याणके भाव होगा। चरित्रवर्षके बिटे जो

संस्कारदि कर्म बतलाये हैं, उन सबको वे भिरो
पाचारके अनुसार करेगी।”

ब्रह्माण्डके इस कथनसे विद्वगुत्त पोर उनके वर्षेकर
बायल चरित्र हैं इसमें कुछ भी संशय उत्पन्न
नहीं होता।

मिताशरामि बादस्यकी राजवृद्धम, शून्यविद्वत्त
दीपकलिकादि राजसम्बन्धित प्रमायामकी पोर पराराके
विरचित बाधवक्तृत्वनिबन्धमें उराविद्वत्त या करारि
कागे कहा गया है। बादस्य सदायै राजावर्षके प्रिय
होते पाये हैं। वह राजकार्यमें निपुण होते हैं पोर
कर रखन कर्ममें रचना सुप्यतः बाव रहता है, इस
लिये इन कोमोके द्वारा मन्त्राला पत्रिक जोड़ा पढ़ने
सकती है। एत वाधवक्तृत्व पोर चरित्रपुराणकार
राजापोंका इन (बायल) कोमोके प्रति
विशेष कथ्य रखनेका पादेय दे गये हैं।

बायलकोके हाथके किसी किसी बगइ प्रमा
पत्रिक पौकित होगी रही, एकी बिये पौयनम्
कर्ममाकर्म, ब्रह्मवैशतपुराणके कथ्यवस्तुमें पोर
राजतरङ्गिणी पत्रमें बादस्यको निम्न भी गई
है। सेविन बियो भी शास्त्रमें बादस्यकोको
श्रीनवर्षे नहीं कहा गया है। कर्मनाकरने जिन
प्रतिकोमत्रात बायलकोका उद्धृत किया है वह
विद्वगुत्तके वर्षेकर बायल नहीं हैं पोर न इनमें उन
कथ्य लिखी गई कर्म जो सङ्कटित होती हैं। ईसा
मासम् पढ़ता है कि मिदनीपुरवासी पाहुनिष्ठ ‘बाय-
जातिका नाम संस्कृत भाषामें कर्मो (कर्मनाकर)में
‘बायल’ रख दिया है। किन्तु विद्वगुत्तके वर्षेकर
बायलकोके कर्मान् भी बायल-चरित्र कह कर परिचय
दिया है। विद्वगुत्तके देवकथा सुदचिचकाके भाव
विवाद बिदा था। “अथवादीविरक्तो देवतापञ्च
उत्पन्नः । नेतन्व वत वचनादि ईदनेति ॥” इत्यादि
पद्यपुराणके कहनानुसार ब्राह्मण जब विद्वगुत्तकी देव
मान कर चुकते थे, तब कर्मवर्षमाने चरणी कल्याण
उपके पाचिपदक कर दिया, तो इसमें दाव कोवदा
जो गया? इसके सिवा एक कथय योग्यदृष्टि या
कहरोपलिकी कोई चर्चा हो न पा; नहीं तो ब्राह्मण

ऋषिकन्या गर्भिष्ठाका विवाह चतुर्विंशति राजा यथातिके साय कभी नहीं हो सकता था। शब्द कल्पद्रुममें "आचारनिर्णयतन्त्र" और "अग्निपुराणीय जातिमान्ना" से जो प्रमाण लिये गये हैं, वह आधुनिक रचना है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। तन्त्रसार, महासिद्धि सारस्वत, प्रागमतत्त्वविनास, वाराहोतन्त्र और उट्टया-मन्त्रतन्त्रमें मित्र मित्र ५०। ६० तन्त्रोंका उल्लेख है। परन्तु उपर्युक्त किसी भी तन्त्रमें "आचारनिर्णयतन्त्र"का नाम तक नहीं आया है। भारतके नाना स्थानोंमें कैकडा तन्त्र ग्रन्थोंका पता लगा है, परन्तु दूसरी जगह कहीं "आचारनिर्णयतन्त्र" की एक भी पोथी नहीं मिली। सिर्फ शब्दकल्पद्रुमके सद्गुणयिता राजा राधा-कान्त देवके पुस्तकालयमें ही एक प्रति मिलती है। उस पुस्तकमें ७० श्लोक हैं। इसकी लिपि देखनेसे ही स्पष्ट मालूम हो जाता है कि, यह किसी आधुनिक लेखककी लिखा हुआ है। यह पुस्तक किसी उद्देश्य-सिद्धिके लिये ही लिखी गई है;—इस बातको वे ही दृष्टयद्गम कर सकेंगे, जो इस पुस्तक को देख चुके हैं। अग्निपुराणीय जातिमान्नाके विषयमें भी ऐसा ही है। कन्नकत्तेकी एगियाटिक सोसाइटी और बम्बई आदि नाना स्थानोंसे मूल अग्निपुराण प्रकाशित हुये हैं, पर उनमेंसे किसीमें शब्दकल्पद्रुममें कही गई अग्निपुरा-णीय जातिमान्नाका एक भी श्लोक नहीं मिलता। और की तो क्या, भारतसे जितने हस्तलिखित ग्रन्थ प्राप्त हुये हैं, उनमेंसे किसीमें शब्दकल्पद्रुममें भी इस जाति-मान्नाका उल्लेख नहीं। बहलालके बाहर जो चित्रगुप्तके वंशके कायस्थ रहते हैं, उन्हें भी इस जातिमान्नाका पता न था। बहलालमें सिर्फ बसु, घोष आदि उपाधि धारियोंका वास है और इसके उल्लेखसे यह जातिमान्ना किसी बहलालीकी वनाई हुई और आधुनिक ही प्रतीत होती है। इसलिये 'आचारनिर्णय तन्त्र'की तरह यह जातिमान्ना भी किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिये ज्ञानमें वनाई गई है इसमें सन्देह नहीं। इसी तरह शब्द-कल्पद्रुमके 'कुलप्रदीप'के वचन भी प्राचीन-शास्त्र-सम्मत न होनेके कारण आधुनिक हैं; और वह किसी विशेष उद्देश्यसिद्धिके लिए लिखे गये हैं, इस लिए वह भी

त्याग करने योग्य हैं। 'शब्दकल्पद्रुम'में कही गई देवी-वरकी उक्ति भी काल्पनिक है, क्योंकि देवीवरके मूल कुलग्रन्थमें कहीं भी ऐसे वचन नहीं हैं। उपरोक्त प्रमाणोंकी भांति "हृद्यर्धपुराण"के वचन भी काल्पनिके विषयमें ठीक नहीं जंचते। शब्दरत्नाकर प्रमिधानञ्ज—

"अथ भवति गाने उक्तं यथाग्नि, पुत्रे।

उत्तं कायस्थैः शिल्पिभिः कृतं कर्मविदाम् ॥"

इत्यादि प्रमाणसे करण कायस्थ और शूद्र-वैश्यासे उत्पन्न करण, सम्पूर्ण मित्र प्रतीत होते हैं।

सान्निधिविग्रहिक।

कायस्थका अथे लेखक या राजाका लेखक है— इस बातको मञ्जु ही स्वीकार करते हैं। विष्णुस्मृति और हृद्यत्पराशरस्मृतिमें राजसभाके लेखककी ही कायस्थ कहा है। उक्त स्मृति चार श्लोकोंमें यद्यत् प्रतीत होता है कि, पहिले कायस्थ नोग ही हिन्दूराजाओंके समयमें सेना-विभागका दिसाव रखनेके लिए, कर वसूल करनेके लिए और विचारानयके कागजात लिखनेके लिए राजलेखक रूपमें रखे जाते थे। अर्थात् लिखनेका काम एकमात्र कायस्थोंके ही हाथमें था। पहिले हिन्दू-राजसभामें लिखनेके काममें कायस्थोंके विवाह दूसरे नहीं रखे जाते थे। इसी लिए कायस्थ या राजसभाके लेखक राज्यका साधनाङ्ग समझे जाते थे। मनुसंहिताके षष्ठे श्लोकके माध्यमें मेधातिथिने ऐसा लिखा है:—

"राजाप्राप्त्यामण्डिककायस्थ-सन्धिविग्रहिके प्रमाणी मरति ॥"

अर्थात्—राजदत्त ब्रह्मोत्तर भूमि आदिका गामन, जो एक कायस्थके हाथका लिखा हुआ है, वही प्रमाणीत है। मिताचरामें लिखा है,—

"सन्धिविग्रहिकारी तु मने यत्कर्म लेखकः।

अथं गणना समादिष्टं स लिपिद्राजगामनम् ॥"

(आचारान्धाय, २१८ श्लोक)

जो व्यक्ति राजाका सन्धि-विग्रहकारी लेखक होगा, वह ही राजाके आटेगानुसार राजशासन लिखेगा।

अपराकके याज्ञवल्करनिवन्धमें भी व्यासके वचन ऐसे उद्धृत हैं,—

"राजा तु सपमादिष्ट-सन्धिविग्रहिकः।

तावपदे पठे वापि प्रदिविद्राजगामनम् ॥"

कायस्थ ही सान्धिविपश्चिकके पट पर नियुक्त रहे हैं। इस विषयमें एक पुरातत्त्वविद् ब्राह्मणने लिखा है,—

“It is a noticeable fact that the सन्धिविपश्चिकी or minister of war and peace and the secretary, were always Kāyasthas or men of the writer-caste. This not only occurs in the Kataka plates, but in grants or inscriptions found in Ceylon and Central India.” (Indian Antiquary, Vol. V. p. 37.)

संस्कृतज्ञ अंग्रेज विद्वानोंने सान्धिविपश्चिक शब्दका इस प्रकार अर्थ किया है,—

“A great officer for making treaties and declaring war. This officer or a subordinate, is deputed at the end of the grant, to give effect to it.” (Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1875. pt. I. p. 5)

“Secretary for foreign affairs.”—(Tawney's Kathāsarit Sāgar. Vol. IV. p. 283.)

कायस्थ या लेखक ।

यदि कोई कहे, जो कायस्थ सान्धिविपश्चिक जैसे ऊंचे पट पर नियुक्त थे, वे या उनके वंशधर क्षत्रिय ही भी सकते हैं; परन्तु जो कायस्थ पटवारी सुहरिर आदिका काम करते थे, वे तो कमलाकरद्वारा कहे गये साहिब्या और वैदेहसे उत्पन्न हुए प्रथम शूद्र ही हैं। प्रकृत शास्त्रमें सामान्य पटवारी और सुहरिराँके लिए कैसा स्थान था, हमें इस बातकी जाच करना जरूरी है।

शुकनीतिमें लिखा है—

“शास्त्रोद्भूत शुकनीतिं दत्तसाम्राजसिः सदा ॥

सुदन्वी दयस्वल् तु यथादितं शुकप्रियाः ।

पवदत्त कवेयुर्ध्वं मन्विषी लेखकाः सदा ॥” (११६६—७)

राजाको आग्नेय-अस्त्रमें और जहाँ अस्त्र गिरते हैं—ऐसे स्थानसे सदा दूर ही रहना चाहिये। राजासे दश हाथकी दूरी पर उनके प्रिय गन्तधारी, पाँच हाथकी दूरी पर सन्धी और उनके पास एक वगलमें लेखक रहेंगे।

शुकनीतिमें और एक जगह लिखा है—

“शुकनीतिः कथं च कथं च कथं च ।

दिनाप्रश्नं च उपस्थात्तु वेदं च ।

प-द्वारादकरय दद्यात्तु च पादितं ॥

नाशनाये ह्यस्मि मा समागच्छति ॥” (११५०—२)

राजा, अध्यक्ष, सन्ध, सति, गणक, लेखक, हेम, अग्नि, जल और सत्पुरुष—ये दम साधनाश्च है।

उपर्युक्त प्रमाणसे यह स्पष्ट घटित हो जाता है कि, जो लेखक राजाके ब्राह्मण-सन्धीके पास बैठते थे, और जो राजाके प्रदू गिने जाने थे, वे कदापि शूद्र नहीं हो सकते।

अद्विजः सतिमें कहा है,—

“शुकान् दत्तसन्धे शुकान् च सदागमम् ।

शुकान्दालागं कथितं सन्धेन पातयेत्” ॥ १२ ॥

इस सन्धिवचनके अनुसार जब शूद्रके साथ बैठना भी ब्राह्मणके निये निषिद्ध है, तब हिन्दू-राज-सभामें ब्राह्मण-सन्धीके पास जो लेखक या कायस्थ बैठते थे, वे प्रथम ही हीजाति होने चाहिये।

अमरकोषमें भी लेखक शब्दका अर्थ क्षत्रिय वतलाया गया है और शुकनीतिमें भी स्पष्ट निम्ना हुआ है,—

“शाम्यो शास्त्रो योः, कायस्थो लेखकश्च ।

‘ शुकपादो न वेद्यो हि प्रतिपद्य पादश्च ॥” (२१४२०)

अर्थात् हिन्दू राजाधीके समयमें प्रामोका शासन ब्राह्मण करते थे, कायस्थ उनके सहकारी (लेखक, सुहरिर वा पटवारी) रहते थे, वेग्न कर वसूल करने थे और शूद्र नौकर (लेखक)का काम करते थे। शुकनीतिके उक्त वचनमें साफ जाहिर है कि, लेखक-कायस्थ ब्राह्मण नहीं, वैश्य नहीं और न शूद्र हैं। जब शास्त्रमें चार वर्णके सिवा पाँचवाँ वर्ण ही नहीं माना गया, तब ब्राह्मण, वैश्य और शूद्र वर्णके सिवा क्षत्रियवर्ण ही बच रहता है, इस लिए कायस्थ क्षत्रियवर्ण ही प्रमाणित होते हैं। कोई कोई कायस्थोंके लिए पाचवें वर्णकी कल्पना करता है। परन्तु मनु ही जब पाचवाँ वर्ण नहीं है ऐसा कह गये हैं, तब पाँचवें वर्णकी कल्पना अर्थात् और अशास्त्रीय है। टाक्षिणात्ममें जो जाति अस्मृत्त

टिया कि, जब तक चन्द्र और सूर्य रहेंगे, तब तक तुम्हारे वंशीय और तुम सुख भोग करते रहोगे।

उपर्युक्त प्रमाणोंसे यह स्पष्ट विदित होता है कि, चित्रगुप्तके वंशीय और चन्द्रसेनके वंशीय कायस्थ क्षत्रिय हैं।

चित्रगुप्तका वंश।

चित्रगुप्तकी उत्पत्तिके विषयमें सबसे पहिले जो पुराणके वचन उद्धृत किये गये हैं, उन वचनोंके साथ चित्रगुप्तके वंशका ऐसा परिचय मिलता है;—

“चित्रगुप्तस्य जातः शुभ्र तान् कथयामि ॥
गोदाण्या मायुरायं व भटनागरसेनका ॥
पश्चिच्छाना, श्रीवासत्या शकनेनास्य व च ॥
कुम्भदा, सर्वशास्त्रेषु सम्भवाद्या मराधिप ॥
पुत्रान् धे व्यापयामास चित्रगुप्तो महीतसे ॥
धर्माधर्मविवेकज्ञ, चित्रगुप्तो मद्यमति ॥
भूयज्ञान् बोधयामास सर्वधायकमुत्तमम् ॥
पुत्रं देवतानाथ पितृणां यज्ञसाधनम् ॥
वपानां ब्राह्मणानां च सर्वं दक्षिणसिवनम् ॥
प्रजाप्यः करमादाय धर्माधर्मविष्टीचनम् ॥
कर्तव्यं हि प्रवरे न पुत्रा, स्वर्गस्य काय्या ॥”

अष्टव्याकामधेनुसे उद्धृत भविष्यपुराणमें भी लिखा है :—

“चित्रगुप्त सा कथा काटी पुत्रान्जीवन्तम् ॥
चारुःसुचारयितास्त्री मतिमान् हिमवत्साया ॥
चित्रयाज्ञपाकनय स्वभोऽतीन्द्रियमया ॥
द्वितीया देवकस्ये व दक्षिणा या विवाहिता ॥
तथा पुत्राय चत्वारसेषां नामानि वै श्रुत् ॥
भाद्रसदा विमानुय चित्रभाणुय शौर्यवान् ॥
पुत्रा वाश्य विख्याता विधेकस्ये महीतसे ॥
मयु राधां गतपारु मायु शालमिती गता ॥
सुचारु गौकटेशे तु तेन गौहोऽभवत्पुत्र ॥
महमद्रीं गतद्विभो महमागरिकः श्रुतः ॥
श्रीवासनगरे मानुषाच्छ्रीवासुष्टं प्रकः ॥
श्रुत्वासांराध्य हिमवान् तेमास्वष्ट इति श्रुतः ॥
समार्यो मतिमान् गत्वा सखसीनवमागतः ॥
ग्रसेनं विमानु य तेन सूर्यध्वजः श्रुतः ॥”

सुक्तप्रदेशके कायस्थोंके “कुलधन्य”में, वहाँके समाजमें प्रचलित “पातालखण्ड”के कथनमें और चित्रगुप्तकी पूजापद्धतिमें गौड़, माधुर, भटनागर,

सेनिक या शकसेन, भन्वठ, श्रीवास्तव, शेटान, करण, सूर्यध्वज, वाल्मीक, कुलश्रेष्ठ और निगम—ऐसे वारह भेद चित्रगुप्तज कायस्थोंके पाये जाते हैं। इन्हीं वारह श्रेणियोंके कायस्थोंसे इकोस प्रकारके कायस्थ हुए हैं— ऐसा उक्त “पातालखण्ड”में लिखा है। उनके भेद इस प्रकार किये गये हैं :—

१ सूर्यध्वज, २ चन्द्रधाम, ३ शूरिचन्द्रार्ह, ४ चन्द्रदेव, ५ रविदास, ६ रविरत्न, ७ रविधीर, ८ रविपूजक, ९ गभीर, १० प्रभु, ११ वल्लभ, १२ उदारदास रवि, १३ मधुमान्, १४ भट, १५ सुभट, १६ श्रीगौड़, १७ राजधाना, १८ अनिन्द, १९ सम्भ्रम, २० विष्वास, और २१ पञ्चतल्लघ्न। इन इकोस श्रेणियोंमें भी हर एकके बीस बीस भेद हैं। पश्चिमाञ्चलके कायस्थोंके कुलधन्यकी भांति बङ्गालके उत्तरराष्ट्रीय कायस्थोंके कुलधन्यमें भी लिखा है :—

“चित्रगुप्त, क्रियोदेतः सर्वं शास्त्रेषु पूज्यते ॥१३॥
सेनोपुत्राटका, श्रुत्वा सर्वं सफलितं पुत्रा, ॥
गोदाण्यो मायुरश्रेयं सङ्घिन, भटनागरः ॥
कमहय श्रीवास्यः कर्णविक्रमं उच्यते ॥”

कुलाचार्य पञ्चाननने अपनी “कुलकारिका”में ऐसा लिखा है :—

“वेदोत्तराटगतार्थे माके कुम्भरुमाकरे ॥
वायु, सीकालीनयैव तथा मोहस्य एव च ॥
काग्रपवित्रामिमी च पञ्चमोऽहमेव च ॥
जनादिवरसिं दश्च सोमयोपय सुधीरः ॥
पुरयोत्तमदासय देवदत्तो मद्यमतिः ॥
सुधीराग्रपश्च मिमङ्गले सुदयंन, ॥
शयोध्यानिवासी सि धे शोभयैव तथा पुत्र ॥
मयु शालिवासी दास, खोलसटमागत ॥
मायापुरोभिवासिनी दक्षमिमी तथा रती ॥
“नम्रं दायानीरे पुरीं कर्णालीति मनोहरम् ॥
महेश्वरंमय सीर विद्वकर्मं च निर्मितम् ॥
तथा श्रीकर्णं सखीकममवत् तत्पुत्रीश्वरः ॥
वत्सुतेन पुरीं दत्त्वा धर्मराजपुरं यथी ॥
वर्गज्ञो वसुमतीसि हाव्याश्च नरेश्वर ॥
तदंशजाः कर्मदेव नामादेयान्तर गताः ॥
शाखापुत्रायुक्तश्च शाखागोपाश्च प्रक ॥
वस्त्राभजोऽनादिवरसिं द, खयाती मद्यमती ॥

चेदिराजके शिलालेखमें सङ्ग रत्नसिंहके पुत्रोंका परिचय "नि.श्रीवागमयहमोचविभवः" ऐसा मिलता है। मध्यप्रदेशके खल्लरि ग्रामसे मिले हुए, राजा हरिहरदेवके १४१० संवत्के शिलालेखमें यों लिखा है—

"श्रीवासम्भवेनेषा मगधिरमहापरा।

लिखिता रामदासेन पण्डितायोररेष च ॥"

पञ्जगड दुर्गमें राजा भोजवर्माके समयकी (ई० वारहवीं शताब्दीके नाग्राक्षरोंमें लिखी हुई) दो नई वही शिला-लिपियाँ हैं, इन्हीं शिलालिपियोंसे श्रीवासव वंशका विस्तृत परिचय मिला है। इनमें सब ही 'ठङ्कुर' उपाधिधारी थे। कोई सर्वाधिकारी था, कोई दुर्गाधिप था, कोई क्रीषाध्यक्ष था, और कोई प्रधानमन्त्रीके पद पर नियुक्त था। आवासीय मिले हुए १२०६ संवत्के शिलालेखसे मालूम होता है कि, आवासव वंश कर्कोटनागका रक्षा किया हुआ वंश है (Indian Antiquary, vol. XVII p. 62)।

काश्मीरके श्रीनगरमें श्रीवासवोंका आदिस्थान है—ऐसा भी इतिहास पाया जाता है। राजतरङ्गिणीसे यह मालूम होता है कि, वहकि सब अधिकारोंमें कायस्थोंका हाथ था। इसके सिवा कर्कोटवंशीय कायस्थ राजाप्रति काश्मीरमें २६० वर्षसे ज्यादा राज्य किया—इसका खासा प्रमाण मिलता है। इसी वंशके राजा जयादित्यके साथ गौड़के राजा जयसने (कुलप्रथमें जिनका आदिशूर नामसे सम्बोधित है) अपना लड़की कन्यापदेवी ध्याही थी। तब ही वे गौड़ोंका श्रीवासवोंसे वैवाहिक सम्बन्ध बना जाता है। इन ही जयादित्यने पाणिनीय व्याकरणकी कायिकावृत्ति बनाई थी। इसमें उनके वेदपाठ करनेका भी पता लगता है। उस समय वे ही वेदपाठ करनेके अधिकारी होते थे, जिनके संस्कारादि दिनोंके सदृश थे। ऐसी भवस्थामें जयादित्यके संस्कारादि दिनोंकी भांति थे—इसमें संदेह नहीं। श्रीवासव कायस्थोंके सिवा माधुर, भटनागर, शकसेन, निगम, गौड़ आदि विभिन्न अधिपयोंके कायस्थ भी, ई० ४ थी शताब्दीसे लेकर

१४वीं शताब्दी तक हिन्दू राजाओंके मन्त्री, सेनापति, कराधिकारी, प्रतिनिधि, राजपण्डित आदि जैसे पदों पर नियुक्त थे—इसका वर्षान्तर शिलालिपि तथा ताम्रलिपियोंमें पाया जाता है। पहले शास्त्रीय प्रमाणोंसे यह बता चुके हैं कि, गौड़देशमें रहनेवाले कायस्थ गौड़-कायस्थ कहलाते हैं। सब ११६१ के शिलालेखसे मिला हुआ माधुर-कायस्थोंके उच्च राजकीय पद और विद्वत्ताका परिचय (Indian Antiquary, vol. XV. p. 201), १८१८ संवत्को भटवाकी शिलालिपिमें मिला हुआ भट्टनामके वैदिक धर्मनिष्ठ शकसेन कायस्थ महीधर (उक्त शिलालेखके अनुवादकने इन्हीं महीधरका anointed sacrificer या परिभाषा-याज्ञिक कह कर परिचय दिया है), (Cunningham's Arch. Sur. Reports, vol. III p. 59), राज-चक्रवर्ती यशोधर्मके मासवीय संवत् ५८८में लिखित मन्दीरसे पाये गये शिलालेखसे 'राजस्थानीय' तथा महापण्डित नेगम या निगम कायस्थ वंश (Fleet's Corpus Inscriptionum Indicarum, vol. III p. 152), खानियरसे मिला हुआ ११५० संवत्की, राजा महीपाल देवकी शिलालिपिमें भट्टकायस्थ वा भट्टनागर वंशीय कायस्थ सुरि सोह और "शाब्दिक मदन्त" सूर्यध्वज श्रीभट्टका नाम—ये सब विशेष उल्लेखयोग्य हैं।

(Cordier—Catalogue du fonds Tibetan deb Bibliotheque Nationale, p. 67)

ई० पंद्रहवीं शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दी तक भारतके शासनकर्त्ता शकसेन वंशीय क्षत्रिय, गुप्त वंशीय सम्राटोंका आधिपत्य नष्ट हो जानेके बाद क्षत्रिय-कायस्थके नामसे प्रसिद्ध हुए—भट्टभट्टके "देववंश" नामक संस्कृत-ग्रन्थसे इस बातका पता लगा है। ओकरण कायस्थोंमें, "गार्हपत्य-पद्धति" और "सङ्गीतरत्नाकर"के बनानेवाले गार्हपत्यदेवके पिता सोदरका नाम प्रसिद्ध है। ये देवगिरि-यादव-राजके महासान्निविप्रसिद्ध थे। इनका शब्दके बाद इनके पद पर अहितौय शास्त्रविद्यारद, "चतुर्वर्ग-चिन्तामणि"के प्रणेता हिमाद्रि नियुक्त हुए। गौड़-

देमरी कावलीको उच्च पदाधिकार मिले थे। ई० ११वीं शताब्दीसे ही कर १३वीं शताब्दी तक गौड़देमरीके नामा स्मार्तमें से जो कावयज्ञ राज्य कर मये हैं। इतके सिवा भारतके पन्थाय देमरीमें भी गौड़ कावयज्ञ हिन्दू राज समर्थानिं लखि लखि पदों पर नियुक्त थे; और "मन्त्राध्यक्षी" "अनमयाजहारसमिति" "विद्विज्जि बन्धित" "साहित्याध्यक्षिबन्धु" इत्यादि राजादि पाण्डित्यधुपक विधीयतेषि विमूचित विधि जाती थे। यहातक कि, बंगालके सोय, दस, नाग, पादिय पादि उपाधिकारी कावयज्ञ ई० १० वीं और ११ वीं शताब्दीमें 'कनिष्ठ और दक्षिण कोयलके सोमवंशीय राजाधोको समामिं "रावण", "महासायिबिपदिब" "महापयटिबिब" जैसे लखि लखि पदोके पधिकारी थे। यदि इनका संस्कार द्वितीके लहय न जोता तो बसनिष्ठ हिन्दू राजाधोको समामिं इनका स्थान कदापि इतना लखा नहीं जा सकता था। त्रिबलिङ्गके पबिपति महायिष ययातिराजको ताज्जबिपिके लहारकनि बस ताज्जबिपिके सेपुत्रैवादि साम्बिपिपिब लोचइदराके विपदमें ऐसा लिखा है -

"It is also to be noted that Badra Datta who was Bengali Kayastha calls himself a Rāṇaka, which indicates a Kshatriya origin." (Journal of Behar & Orissa Research Society, 1917, March, p. 2)

यह पक्षि ही कहा जा चुका है कि, गौड़ कावलीके सिवा योवाष्टर, यकथन, सुर्वभब, माधुर राजादि विमिय चेदिरीके कावयज्ञ मिष मिष समयमें हुज्जमदेय पादि भारतके नामा स्मार्तमें कावयज्ञ गौड़देमरी रहने लगे थे। उनमें कोयवंशके सुर्वभब, बसुवंशके योवाष्टर, मिमवंशके माधुर, और इतक मके यकथन, तथा चिच, नाग, नाप दास पादि योकरक लोकोके कावयज्ञ हैं। ये सब बिज्जसुतके मये कावयज्ञ कथिय हैं और द्वितीको भांति माने जाते हैं।

मूल कावयज्ञा दर्शनिका कावयज्ञः ।

अपर कहे हुए बिज्जसुत मये कावयज्ञ लख दिखको भांति माने जाते थे तब बङ्गीय कावलीके

यज्ञोपवीतके लह जोमिका कावयज्ञ क्या है? बङ्गीय कावयज्ञकावयज्ञमें लिखा है—

।। "कनिष्ठाध्यक्षीयं प्राग् बलकता निरुत्तरम् ।
तत्पुत्र वरक व माजीय तथा इत्तः ।
यज्ञोपवीतं वने नयेत् याम्नादेविधीयन्तम् ।
यामनीजविपानेन कृताः कावयज्ञकथाः ।
तथापि निष्कन्धात् पिदायकात्कथयन् ।
तामिवाप्ये बलकतात्कथनात्कथि वाचरः ॥"

कावयज्ञमें गौड़ पाठराजके शासनकालमें यहाके राजबलक कावयज्ञ वेदिकाचार कोड़ कर गौड़ ताम्बिक हुए थे। वेदिकाचारके ज्ञायके साथ साथ लकोने वेदिक यज्ञोपवीत संस्कार भी छोड़ दिया था। ये कहे ताम्बिक थे या तन्मयाज्जमें कहे लप्यक थे, कसका यहिह प्रमाण मौजूद है। बङ्गीय साहित्य परिपक्षे महामहोनाम्नाय पं० हरप्रसाद याको महोदयने "हजार बर्षके पुराने बङ्गभाषाके गौड़ नाम और कोड़े" प्रकाशित लिखे हैं। याको महाययके लिखे हुए उच्च पत्रके पन्तमें जो "गौड़ताम्बिक पत्रकारपत्री" प्रकाशित हुई है, उतमें जाना जाता है कि पाठ राजाकोके समयमें कावलीमें सेकड़ों ताम्बिक पत्रोंको रचना भी थी। इन पत्रकारोंमें बहुतसे उपाध्याय और महोपाध्याय उपाधिके शरक थे। उवहुँक लुकोके यज्ञी जाका गया है कि, उनमें पद्धारइ पत्रकार महोपाध्याय उपाधिके जारी थे। इनमेंसे मयावर, विनवर शोप, तथायत रचित और बसकरचित—ये चार कावयज्ञ महोपाध्याय उपाधिके विमूचित थे। इनके और पन्थलक बहुतसे कावयज्ञपण्डितो के बगलि हुए सेकड़ो ताम्बिक पत्रोंका पता चलता है। सेकड़ गौड़ ताम्बिक कावयज्ञाचारोंको बात नहीं, बकि उच समय गौड़के हिन्दू समाजमें भी बहुतसे प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित मौजूद थे। उनमें राजाचिय गुय रङ्गाकरक लोचकन्दकोके कर्ता कोचरके भाययदाता पाण्डुदास, गौड़के राजा रामयाजके मन्त्री "तल्लकोष मूति" बोबिदेव चार इनके पुत्र "पद्मानाचक्यति", कामरुपके राजा लयदेव, गौड़काचिय मदनयासके

मान्धविग्रहिक वारिन्द्र कायस्थ प्रजापति नन्दी और उनके पुत्र 'रामचरित'-रचयिता 'कलिकासवास्मीकि' सन्ध्याकर नन्दीका नाम विशेष उल्लेखयोग्य है। पाल राजाओं के समयमें बहुतसे कायस्थ बौद्ध-सङ्घके विहारमें प्रधान आचार्य भी हो गये थे।

ब्राह्मणोंके समान अधिकार होनेसे ही ये कायस्थ—ब्राह्मणोंके अभ्युदयके समयमें भी—ऐसे ऐसे उच्च पदोंके अधिकारी बने; और इसी लिए ही ये वज्रिय ब्राह्मणसमाजके विद्वेषभाजन हुए थे। वैदिक ब्राह्मणोंने इन सद्गर्मियों पर कैसे कैसे भत्ताचार किये हैं, इसका पता 'शून्यपुराण'के अन्तर्गत 'निरञ्जनकी रूप्या'से खुद भच्छा लगता है। इसके फलस्वरूप बङ्गालमें बौद्धोंका प्रभाव नष्ट हो गया और ब्राह्मणोंके प्रभावसे कायस्थोंको सच्छूद्रवत् बनना पड़ा। इससे कायस्थोंको समाज-सम्बन्धी कोई ज़ानि नहीं उठानी पड़ी, यही कुग्रन्थ है। ब्राह्मणों नीचे कायस्थोंका ही स्थान था। और तो क्या; अकबर बादशाहके समयमें बङ्गालमें अधिकतर कायस्थ ही राजा थे। लाखों सैनिक, हजारों सुठसवार और सैकड़ों तोपें उनके आधिपत्यमें रक्षाके लिए रखा करती थीं। "भाइन-इ-अकबरी"में इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है। अकबर बादशाहके दरबारमें कायस्थोंके चरित्रत्वके विषयमें बड़ा भारी आन्दोलन हुआ था। उस दरबारमें मधुसूदन सरस्वती जैसे प्रमुख विद्वानोंने भी कायस्थोंके चरित्रत्वके अनुकूलमें अपना मत प्रकट किया था। जहाँगीर बादशाहके समयमें प्रकथित "वयान ए कायस्थ" नामक पारसी ग्रन्थमें उनके मतोंका उल्लेख ही नहीं, बरन् उद्धृत किया गया है। किसी किसी परिष्ठतका यह कहना है कि, बङ्गालके प्रातःस्मरणीय औरघुनन्दन ही जब वसु, घोष आदिको शूद्र निर्देश गये हैं; तब बङ्गालके कायस्थ शूद्र ही समझे जावेंगे। परन्तु निरपेक्ष हो कर यदि रघुनन्दनके ग्रन्थ देखे जाय तो उनमें कहीं भी "कायस्थ" शब्द तक न मिलेगा। ऐसी दशामें उनके मतसे कायस्थ शूद्र हैं—यह कहना विलक्षण हास्यास्पद है। वसु और घोष उपाधि ब्राह्मणोंसे

लेकर बङ्गालकी बहुतसी जातियोंमें पाया जाता है। ऐसी दशामें केवल रघुनन्दनोक्त वसु, घोष आदि शब्दोंसे बङ्गालके कोई कायस्थ शूद्र नहीं माने जा सकते। ई० १४वीं शताब्दीमें गौड़से कुछ कायस्थ-पण्डित राजा दुर्लभनारायणकी धोरसे कामता (कोवविहार) में बुलाये गये थे। ये वहाँ "वारहमुंइया" कहलाये और पीछे इन्हींने वहाँ अपना आधिपत्य जमा किया। इनके आचार-व्यवहार ब्राह्मणोंकी भांति ही थे। इन्हीं मुंइयाओंके प्रपत्नी शिरोमणि मुंइया कायस्थ चण्डोवरके वंशमें (महाप्रभु चैतन्यदेवके पहिले) ई० १५वीं शताब्दीको महाप्रभु और पश्चिमीय पण्डित श्रीगङ्गदेव पाविभूत हुए। आसामके बीस लाख हिन्दू इनको भगवान्का अवतार मान कर पूजते थे और अब भी ऐसा ही है। कायस्थ-अवतार गङ्गदेवके प्रधान कायस्थ शिष्य माधवदेव भी उनकी तरह प्रचार कार्यमें दक्ष थे और इन्होंने "महाप्रभुवीय" सम्प्रदाय भी बनाया था। आसामके प्रधान प्रधान स्थानोंमें महाप्रभुपयोगीके यथाधिक सब (पुस्तकस्थान) वर्तमान हैं। उनमें कायस्थ सत्ताधिकारी अब भी ब्राह्मण आदि सब वर्णोंके दीक्षागुरु और ब्राह्मणोंके सट्टम संस्कारवाले देखनेमें आते हैं। उनके पूर्वज लोग गौड़वङ्गसे जा कर आसामवासी हुए थे। वज्रिय कायस्थ पहिले इक क़हलाते थे—इसका प्रमाण भी यही है। क़ाप्यदास कविराजके "श्रीचैतन्यचरिता-मृत"में गौड़के राजाके प्रमात्य केशव वसुका (ई० १५वीं शताब्दीमें) 'केशवकृती' नामसे उल्लेख किया गया है। उत्तरराष्ट्रीय नन्दराम सिंह स्वयं (४०० वर्ष पहले) गोपीनाथकी पूजा करते थे। यह प्रथा ग्यारह पीढ़ियों तक चली आयी। इस वंशमें सर्वदा यज्ञकी प्रथा और प्रणवोच्चारणकी प्रथा प्रचलित रही है। शिष्य रक्षाको प्रथा और पूजाकी प्रथा भी बराबर चली रही है। वरिणालकी तरफ "त्रैलोक्यनारायणकी पञ्चासी" नामक पुस्तकका बहुत ही प्रचार है। इस पुस्तकमें लिखा है कि, चार सौ वर्ष पहिले जब चन्द्रहीपके राजाका वरिणालमें आधिपत्य था, तब वहाँके चाँदशी ग्रामके निवासी बङ्गाली

कायस्थ इतिमात्रात् एतत् 'विद्याकायस्थ' इत्यादिषु
 विभूतये। इतिचारादौ कायस्थ समाजं तु मन्वाद्यौ
 विभक्त्या च व्यवहारो यथांगोर आदयात्तु चिकि
 त्तव चतुर्भ्योय विद्यामन्त्रि राय 'विद्याराज' धोर
 रत्नमन्त्रि राय 'बन्धुमन्त्रि' इत्यादि पत्रकृतये। योजे
 एवौ ईयमि 'तयस्यो' 'सार्धमोम' 'बाबन्त्रि' 'विद्यमन्त्रि'
 'बन्धुमन्त्रि' 'विद्यमन्त्रि' 'विद्यमन्त्रि' 'विद्यमन्त्रि'
 मन्त्रि 'तर्कमोम' 'विद्याराज' इत्यादि इत्यादि इत्यादि
 चिकित्साको हो यथे हैं। इनके एके हुए बहुतसे
 वेदात्त पत्र मो मिले हैं।

दिनामपुरके वर्तमान कायस्थ मन्त्राचारके समयसे
 १०० वर्ष पहिले तक ब्रह्मोत्तरके दान-पत्रमें 'वर्धा'
 इत्यादि शब्दमें आता है। इस ईयमि विद्यवा-
 दयमोके दिन विद्यगुप्तका मन्त्राचार-मन्त्र पत्र कर
 पुरोहित अब इनके दानमें तत्पार सेते हैं, तब ये
 वही पत्र कर करते हैं, धोर धिर उद्यो तत्पारसे
 वेदके पत्रको काटते हैं। तब प्रया पत्रके
 अन्तिमो को ननवाका चतुष्कय है। ब्रह्मके कायस्थ
 समाजने तान्त्रिकताके प्रभावसे वैदिक मायसे आदिके
 स्वामी पर भी मन्त्राचार, चर्चसेध धोर ब्रह्मके
 आदि द्विभोचित संस्कार पाते हैं, ऐसी दानमें
 पत्रके कायस्थ कमी श्रुतिमें नहीं मिले जा सकते।

ब्रह्मके अन्तिमोय सामाजिक कायस्थ विद्यगुप्तके
 मन्त्राचार हैं, इनमें बराबर ये संस्कार चले पाते हैं।
 धोर इनमें बहुतसे तान्त्रिक आचारको पत्रक नहीं
 किया है। विद्याराज वैदिक आचार पालन करते
 पाते हैं—इसका आमात्र भी पत्रमें मिलता है।
 इनके मन्त्राचार ब्रह्मके धोर ब्रह्मके पत्रमें पत्र भी रहते
 हैं धोर ये पत्र मो द्विभो तत्पार संस्कारवाते हैं।
 ब्रह्मके १२२४ संवत्के छपे हुए 'कायस्थ-धर्म'
 निबंध' नामक प्रामोच ब्रह्मका पत्रमें देना किया
 है कि,—'गोष्ठ धोर ब्रह्मके आचारको दक्षिणदेशी,
 उत्तरदेशी धोर ब्रह्मके कायस्थ मन्त्राचारों को आचारमें
 विद्युक्तको कायस्थोंके आचारमें व्यवहारमें कृतित
 होना पता ३। अर्थात् विद्युक्तको कायस्थ
 समाजका प्रथम आचार १३३१-१३३४, आदयात्तु

अथोच, इत्यादि देव कर सम्—१२२४
 ब्रह्मके वर्धको मन्त्राचार गोपीमोहन देव ब्रह्मके
 अन्तिमोय तारिचोचरत्त मित्रक मन्त्राचारमें अत्र
 विद्याराजका आमात्र मन्त्राचार अन्तिम विद्यगुप्तके
 कायस्थ श्रुति नहीं, इस प्रकार मन्त्राचार धोर विद्युक्त
 पर मन्त्राचारपत्रमें प्रचार किया जा। तब काय
 गोमन्त्राचारमन्त्राचार दत्तक मन्त्राचार धोर वेदके
 तारिचोचरत्त चतुष्कय मन्त्राचारमें अत्र विद्याराजका
 आमात्र करती अथोच धोर विद्युक्त मन्त्राचारके
 विद्या, विद्युक्त न मन्त्राचार मुपके रहे। योजे तब
 वेदके आचारको दत्तक मन्त्राचारके पुत्र मुन्त्राचार
 विद्युक्त दत्तक मन्त्राचार इत्यादि पाते पाते
 पत्रमें विद्या एक मुपके ही पाते। विद्युक्त मन्त्र-
 मन्त्राचार विद्युक्त मन्त्राचार कायस्थ व यथा आदयात्तु
 पत्रके धोर अन्तिम चर्च इत होता है। अथना
 प्रया है कि अत्र पाते पत्रमें विद्युक्त कायस्थका
 नामक अन्तिम मन्त्राचार गोपीमोहन देवके
 पुत्र राजा राजाकायस्थ देवके मुपके अन्तिमोय
 विद्युक्त है। राजा गोपीमोहन देव धोर राजा
 राजाकायस्थ देव ब्रह्मके मन्त्र मन्त्राचार मन्त्राचारको
 विद्युक्त मन्त्राचारके अन्तिमोय पर अन्तिमोय धोर
 को मुपके अन्तिमोय अन्तिमोय धोर को अन्तिमोय
 श्रुति धोर अन्तिमोय मित्र तब वर्धको अन्तिमोय
 है। मन्त्राचार राजाकायस्थ १२२४ ई० को प्रचारित
 तब मुपके ही अन्तिमोय पत्रमें पत्रो जान सकते।
 अथ कायस्थ कायस्थ है—राजा राजाकायस्थ देव ब्रह्म-
 मन्त्राचारके धोर विद्युक्त मन्त्राचारके श्रुति अन्तिमोय
 तब वर्धको अन्तिमोय परिचित करते धोर राजा राजाकायस्थ
 देवके पत्रमें मन्त्राचारके मन्त्राचारके विद्युक्त पर
 अन्तिमोय कथा कथो निधी है? अथ मन्त्राचार-
 मन्त्राचारके प्रचारित होता जा तबो अन्तिम आचारके
 राजा राजाकायस्थ मन्त्राचार मन्त्राचार अन्तिमोय
 के धोर कायस्थ मन्त्राचारके अन्तिमोय मन्त्राचार पर
 अन्तिमोय है। राजा राजाकायस्थके धोर राजा

Consideration on the Hindu Law as it is current
 in Bengal, by Hon'ble Sir Francis W. Maghban, 1824.

गोपीमोहन १२११ सालको कायस्थोंका चरित्रयत्न संवादपत्रमें घोषणा करते भी प्रकृत कोई कार्य कर न सके। उनके साथ भान्दुल-राजवंशकी बराबर सामाजिक प्रतिबन्धिता रही। कहना ठ्या है कि उस काल कलकत्तेके दक्षिणराटीय कायस्थोंके मध्य १२ दल थे। दूसरे स्थानका और क्या बात कहेंगे। राजा राधाकान्त देवके सुयोग्य दौहित्र स्वर्गीय भानन्दकृष्ण वसु महाशयसे सुना है कि उस सामाजिक प्रतिबन्धिताके समय राजा राधाकान्त देवने भान्दुलके राजा राजनारायणका विरुद्ध पक्ष भवसम्पन्न किया था। उसी सुयोगमें उनके शब्दकल्पद्रुमके संश्लिष्ट पण्डितने 'आचारनिर्णयतन्त्र' और 'भग्नि-पुराणीय जातिमासा'की रचना कर कौशलसे शब्दकल्प-द्रुमके मध्य प्रक्षिप्त किया, यह विदित नहीं। जो हो, राजा राधाकान्त देव बहादुर हृदयसमें अपना स्वम समझ सके थे। शब्दकल्पद्रुमका वही भ्रम संशोधन करनेके लिये वह अपने सुयोग्य और सुपरिचित जामाता भन्तलात्त मित्र और प्रिय दौहित्र पण्डितवर भानन्दकृष्ण वसु महीदय पर भार अर्पण कर गये। वह केवल सुखसे ही कह कर धाम्त न हुये, अपने हृदयसवासे निज पीत्रके विवाहमें द्विजोचित कुशण्डिका करके पित्रपुरणोंका मुखोच्चल कर गये हैं। यह बात उनके प्राकीय स्वजन सब जानते हैं। इतिहासमें भी यह बात लिखी है। *

राजा राधाकान्त देव थोड़े दिन अघिक जीनेसे चरित्राधार प्रवर्तनमें उद्योगी बनते, सन्देह नहीं। जो हो, भान्दुलके राजा राजनारायणकी भांति स्वर्गीय राय मोहनलाल मित्र महाशय चरित्र आचारके प्रचलनमें उद्योगी हुये थे। किन्तु उस समय संस्कृत भाषामें अशिक्षित शास्त्रज्ञानहीन स्वजातीयोंके निकट उपयुक्त सद्दानुभूति न मिलनेसे उनका महत् उद्देश्य सिद्ध हो न सका। जो हो, भान्दुलके राजा राज-नारायण जो वीज धी गये हैं, वर्तमान कायस्थ-

समाजमें संस्कृत शिक्षा-प्रसारके साथ क्रमसे वह फलफूससे सुशोभित महीदयमें परिणत होते जाता है। आजकल बङ्गके उत्तरराटीय, दक्षिणराटीय, बङ्ग और वारेन्द्र इन चार श्रेणियोंके कायस्थोंके मध्य प्रायः सत्ताधिक कायस्थ-सन्तान द्विजोचित उपनयन-सम्पन्न है। उक्त चारों समाजोंके बहुकुलीन और मौलिक कायस्थ सन्तानोंने ब्राह्मण प्रायश्चित्तके भन्तमें उपवीत पश्य किया है एवं उनके मध्य त्रयोदशमें आदि चरित्रोचित आचार प्रचलित हुआ है। विशेषभावसे बङ्गके प्रधान प्रधान पण्डित भी इस स्थानके चित्रगुप्तवंशीय कायस्थोंकी चरित्रवर्ण-सम्पन्न समझते हैं। जब संस्कृत कालेजमें कायस्थ छात्र लिये जायेंगे या नहीं—बात उठी, उस समय संस्कृत कालेजके अध्यक्षरूप प्रातःस्मरणिय स्वर्गीय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महाशयने शिक्षा-विभागके डिरेक्टर महोदयको १८५१ ई० की २० वीं मार्चकी लिखा था—“जब वैद्य कालेजमें पढ़ सकते हैं, तब कायस्थ क्यों न पढ़ सकेंगे? जब शूद्रजाति वैद्य और जब शोभावाजारके राजा राधाकान्त देवके जामाता हिन्दू-स्कूलके छात्र भन्तलात्त मित्रने संस्कृत कालेजमें पढ़नेका अधिकार पाया है, तब अन्यान्य कायस्थ क्यों पढ़ न सकेंगे? कायस्थ चरित्र भान्दुलके राजा राजनारायण बहादुरने इसे प्रमाण करनेको प्रयास उठाया। कि कायस्थोंको संस्कृत कालेजमें लेना उचित है।” उसके पीछे संस्कृत कालेजके अध्यक्ष स्वर्गीय महामहोपाध्याय महेशचन्द्र न्यायरत्न महाशय बङ्गला विभक्तकीयमें कायस्थ शब्द पढ़ तत्-कालीन संस्कृत कालेजके स्मृति-अध्यापक स्वर्गीय महसूदन स्मृतिरत्न महाशयको कहा था—“कायस्थ-जाति चरित्रवर्ण है, यह हम अच्छी तरह समझ सके हैं।” उनके परवर्ती अध्यक्ष महामहोपाध्याय नीलमणि न्यायालद्वार महाशयने कायस्थोंकी चरित्रकी भांति स्वीकार किया है। (उनका बहवा इतिहास द्रष्टव्य) अतः पर महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री महाशय लिख गये हैं—बङ्गमें ब्रह्मण्य धर्मप्रतिष्ठाके लिये ही ब्राह्मणोंकी भांति कायस्थके प्रधान इस

* Ghose's Indian Chiefs, Rajas and Zamindars, 1881, Vol. II. p. 30.

देवमें पायी थी। अतएव बहोव आयकावमाचका
 विवाहकार लक्ष कर मत ११२१ लाके १८
 आवाहको अक्षत कासेवने पक्षक महामहोपाध्याय
 काः अतीयचन्द्र विद्याभूषणे समापतितमें लक्ष लक्ष-
 पक्षाको एक विचारवत्ता हुयो। एव वाममें अक्षत त
 कासेवने टोक विभाषमें बहोव आयक कासीके शेर
 अध्यायका पत्रिकारसूचक सप्ततियत्र प्रदत्त और
 शैदान्य पदान्ते विद्ये आयक काव्य पक्षोत्त हुवे।
 बहूदेवीय हूरी को सक्षक प्रदान प्रदान पञ्चायक हैं,
 अन्तेने इदानीन्तनकाव्य बहूदेवीय आयकांति चरित्रवत्
 और अपनयन सन्त्यमें व्यवस्था टी हैं। बहूदेवीय
 आयक-पदांति प्रकाशित व्यवस्थापत्रमें उन सक्षक
 पञ्चायकोके नाम लुहित हुये हैं। शेरक व्यवस्थापक
 पत्रिकत ही नहो, परमईयकल्प यात्रु महाका भी इस
 आकाशको आयकजातिका चरित्रवत् मानते हैं। कहनेके
 का—आमोरेके उपन्यासवासी श्रीशोणारद बाबा
 काकानन्द कासी महाकाव्य बहूको आयकजातिको
 आकाश कर लक्षका चरित्रवत् और अपनोत्त पक्षको
 पानमरुता घोषका कर गये हैं। ११ वर्ष हुये वनोंने
 अर्ध दशहरादीय कुसोन आयक इव श्रीगुरु विद्यापी-
 कास बहु महाययको अपनोत्त दान कर बहूके
 आयकोको अध्यागत किया है। कुछ दिन हुवे
 शरीन्द्र आयक पञ्चायक जेमचन्द्र सरकार महायय
 और बहूक आयक जेमचन्द्र शोपराय गुरीके मकर
 मठके प्रदान आचार्यके निवृत्तके अपनोत्त-अस्वार पाया
 या। कासी विवेकानन्द आयक थे। वह अपनो
 जातिको विद्वत् चरित्रको भांति प्रचार कर गये हैं।
 सुतरां कामाक्षिक बहोव विद्वत्सभ्योय आयक
 निःसन्देह विवक्त हैं, वह कहना ही इया है।

इकरवै।

पञ्चायके पवित्रमात्रके विचारके पूर्वमान्य पर्यन्त
 कर्षक आयक रहते हैं। वह सभी पपनीको विद्वत्सभ्य
 व मकर वताते और अपनो उत्पत्तिके सन्त्यमें मरिच
 सुराच तथा पद्मपुराणके लपाध्यान सुनाते हैं। एवको
 छोड़ कने उत्पत्ति सन्त्य पर बुद्धप्रदेसमें निष्-
 लिखित प्रवाद भी प्रचलित है —

कवये पक्षे यमपुरमें ११ यम राजत्व करते थे।
 उन ११ कोसिमें येष यमका नाम बिज रहा। अथ
 समय बिसी कावर्म इयो एक नामके तीन अक्षि थे।
 उनमें एक राजा, एक ब्राह्मण और एक नायित था।
 राजाको काव्य पूरा होने पर ही जानिके लिये यमदूत
 पा पहुंचा। दूतमें स्वमन्त्रके राजाको छोड़ ब्राह्मण
 और नायितको ले जा कर बड़ा उपश्रित कर दिया।
 यम शीघ्र हो यह म्रम समझ लखे थे। ब्रह्मा भी यह
 संवाद सुन कर बहुत ही दुःखित हुये। ब्रह्मा एव
 लिये विनित हो आनक हो गये, अितमें बेसा फिर
 न हो सके। उस समय भी योग बन्त्यके शीवको
 उत्पत्ति होती न थी। देवताके दुःखके शीव वगते
 रहे। ब्रह्माके आनक होमैके बहुर बकर आनमें
 शीत गये। पीछे ब्रह्माने देखा कि इनके निवृत्त एक
 आमर्ष सुख उपश्रित था। लक्षके कावर्म मसि
 पाव और शेषको यो। ब्रह्माने कहा—‘तुम हमारी
 कायके उत्पन्न और लयी कायार्थे खित हो। इस लिये
 तुम्हारा नाम ‘कायक’ है। लक्षके पीछे भी ब्रह्मा दाव
 कटे—‘तुम तुलमावये हमारे शरीरमें रहे हो। एव
 बिजे हमने तुम्हारा नाम बिजगुह रखा है।’ बिजगुह
 कोटनगर का कर देवो पत्रिकाको पूजा करने लगी।
 पक्षीमें लक्षुह ही लक्षे तीन कर दिजे थे—१ तुम
 हूरीके उपचारको तत्पर रहो, २ तुम अपनो
 कायमें इच्छेता होय और ३ तुम बहुत दिन जीवो।
 लक्ष कर प्रदान कर देवो पत्रार्थित हुयो। फिर
 ब्रह्माने बिजगुहको समपुरोका भार शीवा और योग
 सृष्टि पारम्भ करनेको आदेश दिया था। सूर्य, विष्णु,
 देवी ममवतो, शिव तथा गणेश उनके उपास्य और
 ब्रह्मा एहदेव हुवे। देवताओंमें सब सुना—एव
 मानकी सृष्टि न होमै, तब ब्रह्मगर्भा अविने अपनो
 अन्धा दरावतीके साथ बिजगुहका विवाह कर देना
 चाहा। सूर्यके पुत्र मनुने भी अपनो सुन्दरी अन्धा
 बुदबिवाके साथ बिजगुहका विवाह करनेको पापक
 प्रकाय किया था। ब्रह्माने दोनों को प्रार्थना मान
 थी। इयो प्रकार बिजगुहने दो अन्धावोका पत्रि-
 पत्रक किया। दरावतीके गर्भके बिजगुहके ८ पुत्र

उत्पन्न हुवे—चार, सुचार, चित्राच, मतिमान्, चित्रचार, अरुच और अतीन्द्रिय। फिर सुदक्षिणाके गर्भसे भानु, विभानु, विश्वभानु और वीर्यभानु चार पुत्रने जन्म लिया। ब्रह्माने चित्रगुप्तके यंगकी वृद्धि होती देख एक दिन आनन्दमें कथा या—'हमने अपने वाहुसे मृत्युलोकके अधीश्वर रूपमें चत्रियोंकी सृष्टि की है। हमारी इच्छा है कि तुम्हारे पुत्र भी चत्रिय हों। उस समय चित्रगुप्त बोल उठे—'अधिकार राजा नरकगामी हंगि। हम नहीं चाहते कि हमारे पुत्रोंके अष्टमें भी वही दुर्घटना पा पड़े। हमारी प्रार्थना है कि आप उनके लिये कोई दूमरी व्यवस्था कर दीजिये।' ब्रह्माने हंस कर उत्तर दिया—'इच्छा, आपके पुत्र अमिके मदसे लेखनी धारण करेंगे। चार जन्म वह इसी यमलोकमें रहेंगे। उसके पीछे इच्छा करनेसे वह देवलोकमें वास कर सकेंगे।' अन्तर चित्रगुप्तके सम्मान इन्द्रलोक पा गये। उक्त वारह लोगोंने चार मथुरा गये और 'माधुर' नामसे गल्य हुवे। सुचार गौड़में जा कर रहने लगे और उसीसे 'गौड़' कहे गये। चित्र भद्र नदीके कुल पर जा कर रहनेसे 'भद्रनागरिक' नामसे गल्य हुवे। भानु 'श्रीवाश' नामक स्थानमें जा कर रहे और 'श्रीवास्तव' नामसे ख्यात हुवे। हिमवान् देवी अस्याकी आराधना करनेसे 'अश्वष्ठ', मतिमान् अपनी सखी प्रधात् भार्याके साथ चलनेसे 'अखिवेन' और विभानु 'सुरसेन' देशमें जाकर रहनेसे 'सूर्यध्वज' कहें गये। यहाँ नरलोक विस्तार कर उन्होंने स्वर्गलोककी गमन किया।

यह समझ नहीं पड़ता कि ऐतिहासिकोंकी दृष्टिमें उक्त उपाख्यानका विशेष मूल्य है। फिर भी चित्रगुप्तके पुत्रोंकी भांति जिन कई लोगोंका नाम लिखा गया है, पश्चिमाञ्चलस्य कायस्थोंके मध्य कोई कोई श्रेणी अपनेकी उक्त किसी न किसी व्यक्तिका वंशधर बताती है।

* बृहस्पतिदेवके कायस्थोंका उ- विवरण अहल्या-कामधेनु धत समर्पितानि नि-ता * See Origin and Status of the Kayasthas, Jubus ed by Hargovinda Sahaia, M.A., p. 18.

आजकल युक्तप्रदेशके कायस्थ प्रधानतः १२ श्रेणियों विभक्त हैं—१ श्रीवास्तव्य वा श्रीवास्तव, २ भटनागर, ३ शकसेन, ४ अम्बह वा अमठ, ५ ऐठान वा पठान, ६ वात्कीक, ७ माधुर, ८ सूर्यध्वज, ९ कुलश्रेष्ठ, १० करण, ११ गौड़ और १२ निगम। सिया इसके उभाव जिलेके नामसे 'अनाई' एक पृथक् शाखा है।

श्रीवास्तव वा श्रीवास्तव शाखा—अपनेकी चित्रगुप्तके पुत्र भानुका वंशधर बताते हैं। उनके पूर्वपुरुष काश्मीरके श्रीनगरमें राजत्व करते थे। उसीसे 'श्रीवास्तव्य' शब्दा हो गयी। उक्त कथा भी श्रीवास्तव कहा करते हैं। फिर किसीके मतमें श्रीवत्स विश्वके उपासकोंको श्रीवास्तव कहते हैं। किन्तु कोई कोई युरोपीय पुराविद् अवध प्रदेशस्य गौड़ा जिलेकी आषस्ती नगरीसे श्रीवास्तव नामकी उत्पत्ति बताता है। किन्तु श्रेय दोनों मत कल्पनामूलक समझ पड़ते हैं। *

श्रीवास्तवोंमें दो शाखाएँ हैं—खर और दूसर। खर शाखा ही सत् वा श्रेष्ठ मानी जाती है। दूसर सम्मानमें बहुत छोटे हैं। एक प्रवाद है—अयोध्यामें जाकर जो बसे, वहाँ 'खर' वा श्रेष्ठ और जो अन्य स्थानमें जा कर रहे, वहाँ 'दूसर' हैं। फिर किसी किसीके कथनानुसार पहले इस प्रकार दो शाखाएँ न थीं। सम्राट् अकबरके ही समयमें उन दोनोंकी सृष्टि हुयी है। उस समय एक व्यक्तिने प्रति हृष्टाके साथ राजप्रदत्त उपहार त्याग किया था। उनका नाम 'अखोरी' अर्थात् धर्मपरायण हुवा। मांसस्पर्श न करनेसे ही अखोरी नाम हो सकता है।

इसाहावादी और फतेहपुरी श्रीवास्तवोंमें निपले-सदान और और बुद्धि सदान नामक दो कुल देख पड़ते हैं। युक्तप्रदेशमें श्रीवास्तवोंकी ही मख्या अधिक

* आर्य बृहस्पतिदेवके नामा स्थानोंसे जो अरुण प्राचीन विधानविधि आविष्कृत हुये हैं, उनमें 'श्रीवास्तव्य' नाम ही मिलता है। 'श्रीवत्स' अथवा 'श्रीवत्सी'से कभी यह शब्द निपन्न हो नहीं सकता। अन्-इपको राज-तरङ्गिणीसे इस बातका प्रमाण मिलता कि काश्मीरमें बहुकाल पूर्व कायस्थोंका अष्ट प्रभाव रहा। राजतरङ्गिणीमें श्रीवास्तवका भी उल्लेख है।

है। उनसे पयोध्या, कायाँ, रजाडापाद, मिर्जापुर, गोरखपुर, पयति क्षामिनिं ही लोग बहुत रहते हैं।

मदनकर—पयतिको विचगुप्तके पुत्र बिजवा सन्तान बताते हैं। उनमें कोई कहता कि पूर्वकाल भट नदीके तीरे रहनेमें ही इस नाम पड़ा है। फिर बिजोके मतमें मजमूर-गजुनबी, तैमूर और हुमायूँके पुत्र क्षामरानमें दुर्ग पबिहार करनेके लिये भटनगरमें प्राचपचके कुछ किया था। उसी इतिहास प्रसिद्ध भटनगरमें जो लोग रहें वह भटनगर नामसे विख्यात हुए। उनमें दो लोको हैं—भटनगर अदीम या पुराने और गोडकावालीमें मिल जानेवाले भटनगरी।

मन्वन्त—सर्विनाके ही पयति नामकी उत्पत्ति बताते हैं। उनके पूर्वपुत्रपौत्रे बोरल टिखा श्रीनगरके श्रीवास्तव्य राजाकोके एक कपाडि पाया था। प्रकृत प्रयागसे त्रिभुंजिं एक राजाकोके बिनाबिभागमें कृतिल टिखाया, लकीका अथ 'शक्येन कहाया। प्राचीन सिन्धुनिदिमें 'शक्येनज्जातीय काकक ठहुर नाम किया है।

शक्येनिंभी 'करे' और 'दूसरे दो कृत हैं। प्रवाद-गुमार कहते लोके सोमदत्त नामक कोई एक कृत्यके कीयाध्यक्ष है। शक्येन कहते कि लकी कुमने प्रीत ही सोमदत्तको घर पयात् लू सन्तोहन किया था। उनके अग्रर इनीमें 'दरे' कहें जति है। दूसरा गथ भी है—पकचरके विता हुमायूँ अथ ईरान भाग लये लख उनके काय कितने ही शक्येन भो रहें। ईरानमें उनमें ११ वर्ष व्यतीत किये। मोटने पर भारत लयेक शक्येन उनके नाय मोहन करनेको पयत न हुए। इसी प्रकार ईरानमें प्रयागत शक्येन और उनका अग्रर 'दूसरे' पयात् 'द्वेय सममि गये।

शक्येन पयतिको बिजगुप्त-पुत्र मतिमान्का अग्रर बताते हैं। उनका पचिक नाम इटावा त्रिभुंजिं है। कबीरके राजा कठचन्द्रके मरने पर शक्येन समर सिंघके पचीन इटावेमें जा कर बसे है। उनके पादि पुत्र पृथ्वीराज और निमजदानमें समरसिंघके निवृत्त क्षामिनेरें कई गाँव और चौकी पदकी प्राप्त किया। उनके अग्रर समरसिंघके समये 'परै'को

पबिहार पयत्त पुत्रवास्तुक्रममें इटावेकी क्षाननगरी करती रहे। * इटावेके एक शक्येन कायस्य वर्गमें ही प्रसिद्ध और राजा नवकरायमें जन्म किया था। वह पदपावादाशरी बहुर-नवाबके बनीर और प्रधान सेनापति रहे। उन्होंने पयति स्थानमें कुछ कर जो मोरल टिखाया, वह अर्थमनीय कहाया है। † इटावेके माट पात्र भी राजा नवकरायकी बोरगाया गाया करते हैं।

परिचय—पयति परिवय बिजगुप्तपुत्र विज मानुके नामसे दिया करते हैं। पडिठान नाम केडे बना है। उसके सम्पत्तिमें एक सन्प सुनते हैं—बाटाचोमें बनार नामक एक विप्रात राजा रहे। उन्हें एक लोकोके पूर्वपुत्रपौत्रे पटप्रकार सुकाका उपहार दिया था। उसीसे पटान (पडिठान) नाम बन पडा। उनमें पूर्वी और पश्चिमी दो भेद हैं। पूर्वी लोनपुर तथा उसके निवृत्तवर्ती क्षाम और पश्चिमी लखनक एक लखे पाठगाय बास करते हैं। समय त्रैविदिमें पान भोजन प्रचलित नहीं।

पयति—पयतिका बिजगुप्तके पुत्र द्विमवान्का अग्रर बताते हैं। प्रवाद है—उनके पूर्वपुत्र गिरनार पयत पर जा कर रहे और वहाँ पम्बादेवीकी पूजा करने पर 'पम्बठ' नामसे परिचित हुए। खरद पुराचीय सद्गादिकपठ और बिष्णुपुराणसे नमन पकता कि भारतके पश्चिमांशमें पम्बठ नामक एक जनपद रहा। बहुत समय है कि उसी स्थानके पबिहासी कायस्य पम्बठ नामसे ख्यात हुए। पौक (सूनामी) ऐतिहासिक पारियातने उनका नाम पम्बठो (Ambastae) किया है। पम्बठ बहुतसे बडाक्षेत्रों में जा कर रहने लगे हैं। एक प्रदेशके पम्बठ कायस्योका पाचार-व्यवहार प्रायः पाने प्रकता है।

* Havel's Memorandum on the Culture of Etawa p. 57
† Journ. As. Soc. Bengal Vol. XLVIII, pt. L p. 50-56 नवकरायके नाम गिरव इरक है।

वाल्मीक कायस्थ—चित्रगुप्तपुत्र विभानु वा वीर्यमानुके सन्तान कहते हैं। विभानुके तपस्याकाल शरीरमें वल्मीक उत्पन्न हुआ था। उसीसे उन्हां और उनके वंशधरोंने 'वाल्मीक' नाम पाया।

उनमें तीन श्रेणो हैं। वस्वइसे आनिवाले 'वस्वेया', कच्छसे आनिवाले 'कच्छी', और मुराष्ट्रमे आनिवाले 'सौरठी' कहाते हैं। वाल्मीकीमें कुछ कुछ दक्षिणालका आचार-व्यवहार भी प्रचलित है।

मायूर—कायस्थोंका नाम मयूराके वाससे पडा है। वह अपनेको चित्रगुप्तके पुत्र चारुका वंशधर बताते हैं। उनमें भी तीन श्रेणिया देख पड़ती हैं—देह-नवी, कच्छी और लचौली। दिल्लीमें रहनेवाले 'देहलवी', कच्छमें रहनेवाले 'कच्छी' और योधपुरमें रहनेवाले 'लचौली' नामसे परिचित हैं। लचौलियोंकी पश्चीमी भी कहते हैं। उनके कथनानुसार योधपुर वा मरुदेशमें पूर्वकालकी पञ्चनामक एक राजा थे। उन्हेंसि पञ्चोनी नाम निकला है। फिर किसीके मतमें पञ्चाल देशसे 'पञ्चामी' बना है।

सद्वचन—अपना परिचय चित्रगुप्तपुत्र विभानुके नामसे देते हैं। उनका कहना है कि इन्द्रजाकुशंगीय राजा सूरसेनने यज्ञकाल विभानुको साहाय्य करनेसे 'सूर्य-ध्वज' उपाधि दिया था। उनका आचार-व्यवहार कुछ कुछ ब्राह्मणोंसे मिलता है।

इन्द्रधनु—कायस्थ चित्रगुप्तपुत्र अतीन्द्रियके सन्तान है। उक्त श्रेणोके कायस्थ कहा करते कि जितेन्द्रिय (अतीन्द्रिय) परमधार्मिक रहे। वह प्रति वर्ष अपने भाइयोंका बुलाकर उनके पैर धो देते थे। उनका काल पूरा होने पर यमदूतोंने जा कर पूछा—'क्या आप अब स्वर्ग जाना चाहते हैं?' जितेन्द्रियने उत्तर दिया कि वह अबिलस्व स्वर्ग जाना चाहते थे। उसी समय स्वर्गसे विमान उतर पड़ा। जितेन्द्रिय विमान पर चढ़ कर अग्निशोक पहुँचे। अग्निशोकसे प्रजापतिशोक होते हुए ब्रह्मलोकमें जाकर उन्होंने अनन्त सुखभोग किया। अपना कुल उल्लस करनेसे ही उनके वंशधरोंने 'कुलश्रेष्ठ' उपाधि पाया

है। उनमें 'वरखेरा' और 'खेरा' दो श्रेणिया हैं। उक्त दोनों श्रेणियोंमें पानाहार प्रचलित नहीं।

करण—कहते कि नर्मदातीर कर्णालि नामक एक ग्राम है। उसी ग्राममें उनके पूर्वपुरुषोंके वास करनेसे 'करण' नाम पड़ा है। उनमें भी दो श्रेणिया हैं—गयावाल और तिरहुतिया। गयासे गयावाल और तिरहुतसे तिरहुतिया शाखाका नाम-करण हुआ है। करण कायस्थ प्रायः उड़ीसामें ही रहते हैं।

गोड—कायस्थ नाम गौड़देशकी प्राचीन राजधानी गौडमे निकला है। वह कहते कि उनके पूर्व-पुरुष भगदत्त कुरुक्षेत्रके महासमरमें निहत हुए थे। गौडकायस्थोंमें ही कालसेन वा कामसेन नामक एक राजकुमार रहे। कायस्थोंमें आज भी उनकी पूजा होती है। कायस्थ-कन्याके विवाह-काल प्रदीपके कज्जलसे एक मूर्ति अर्पित की जाती है। उसीको कालसेनकी मूर्ति मान लोग पूजा करते हैं। गौडकायस्थ कहते और उनके कुरसीनाममें भी पढ़ते कि गौडाधिप सेनराज उक्त कायस्थवंशीय ही थे। सुहृन्मद-वख्रतियार तुर्कने कौशलक्रमसे लखमनियाके निकट बङ्गराज्य अधिकार किया था। उसीसे अनेक गौड-कायस्थ युक्तप्रदेश भाग गये। हिमालयस्य सुखित, मन्दी प्रसृति स्थानके राजा आज भी अपनेको गौड़-राजवंशीय बताते हैं। प्रकृत प्रस्तावमें गौडकायस्थवंशीय होते भी आजकल वह अपना परिचय गौडराजपूतके नामसे देते हैं।^{१०} वल्लवन जब बङ्गाल पहुँचे, तब वहाके कायस्थ-राजा और लमीन्दार उनके अच्छे सहायक हुए। उनके पुत्र नसीर-उद्-दीनने गौडमे बहुसंख्यक कायस्थोंको बुलाकर इलाहाबाद स्वर्के अन्तर्गत निजामाबाद, भदोई, कोली, वापी और विरियाकोट प्रसृति स्थानोंमें कानूनगोईका पट प्रदान किया था। उनके सभी वंशधर गौडकायस्थ कह-लाते हैं।

* Elliot's Races of the N. W. P. ed. by Beames, vol II p 107; Sir Lepen Griffin's Panjab Rajahs, and Crook's Tribes and Castes of the N. W. P. Vol. III. p 192.

बड़ाके भटनागरोंने मोड़ोके पड़के जो सुसज्जमानो
नरबादके पचीन कार्यको शोकार किया था। फिर
सुसज्जमानोके भंडुपके गोडबायस्य भी उनमें मिल गये।
भटनागर बाममार्गी रहें। उस समय उनके
साथ सज्जित होने पर गोडबायस्य भी वाममार्गी
बन गए और मेरुपौबद्धमें पूजा करने लगे।

गोडबायस्योंने अब भटनागराँको साक्षर करनेके
बिधे निमग्नत्व दिया तब भटनागरोंने तो उनके
घर जा कर या लिये किन्तु पीछेकर भटनागरोंने
गोडबायस्योको अपने घर खाने पीनेके लिए बुलाया,
तब बहुत बोड़े बोगोँबो बोड़ कर खिजाय गोड़ोनि
निमग्नत्वमें जानेके अपना मुँह दिखाया फिर जिन
जानोंन भटनागराँके चारों का कर खाया था, उन्हें
समाजच्युत भी ठहराया। इसी भटनागर बहुत
बिड़ थे। उस समय दिहोमें नमीर उद-दोन् सखाद
रहें। गोड़ और भटनागर समय खेचोके बायस्य
उनके पचीन कार्य करते थे। दिहोके भटनागरो ने
बहुत दुना कि उनके प्रातिपुटुव्यके घर गोडबायस्योंने
साक्षर किया न था, तब उन्होंने मोड़ोके घर खाने
पाने सहस्र भटनागरोको समाजच्युत कर दिया।
बात ठहर गये—गोड़ जितने दिन उनके चारों न
पाठके उनमें दिन वह भी समाजमें मिलाये न आवेंगे।
इस पर समाजच्युत भटनागरोंने सुसज्जमान-सखादके
निष्कट मानिय को को। सखादको मोड़बायस्योके पन्थाक
धावरपका परिचय मिला। उन्होंने दिहोमें रहने
वाले गोड़ो और भटनागरोको एकत्र साक्षर करनेके
बिधे आदेश दिया था। उस समय बाध्य हो दिहोखाया
अनेक गोड़ोनि भटनागराँके घर जा कर या लिये।
किन्तु कई गोड़ भटनागराँके घर जा कर खानेके भयके
दिहो छोड़ कर चले गए। उनमें एक पूर्वगर्भा रमको
रहो। बिधो ब्राह्मणके घर प्रायस सीनेपर उनके एक
पुत्र जन्मक हुआ। बड़ा होने पर उसका नाम ब्राह्मणने
अपनी बन्धाका विवाह कर दिया था। परगार
गोड़ बदायूँ बिलेमें जा कर रहन लगी।

भटनागराँके चारों भाजन करनेवाले गोड़बायस्य
गोड़भटनागरो नामके प्रान्त हुए। आ बदायूँ भाग

गये थे दिहोके भटनागरोंने उनको भी सुसज्ज
मन्थादके बड़ दिए। बदायूँके उन्हें पकड़ बुलानेके
बिधे आदेशो मेली थे। इस समय उन्होंने ब्राह्मणोका
प्रायस लिया। रात्रपुत्र अब पकड़नेके लिए
पहुँचे, तब ब्राह्मणोंने उन्हें परना पामाय बताया था।
किन्तु उधे रात्रपुत्राँको विद्या न हुआ। उस
समय ब्राह्मणोका गोड़बायस्योके साथ एक पात्रमें
खाता पडा। इसी प्रकार गोड़बायस्य वहाँ बच गये।
अभिवृत्तोका निश्चालन करनेपर बदायूँके विरल
जो भटनागराँका आदेशन पचाया किया था। उधोके
साथ दूसरे भटनागराँने जो उन्हें समाजच्युत कर
दिया। उक्त समाजच्युत भटनागर गोड़भटनागराँ और
दूसरे (गोड़ोका एक पदच न करनेवाले) विद्वद भट
नागर समझे गये। इसी प्रकार गोड़बायस्य आर
खेचोके बटे थे—१म पाठो गोड़ है। वह
बहुतके सोमान्तर निजामाबद कोनपुर पड़ने
स्थानोमे बानुनमोरीका पद मान करते थे। २य
भटनागरोके घर खानेवाले ३य ब्राह्मणोके घर
प्रायस सीनेवाले और ४थे ब्राह्मणपदमें पुत्रवह
कारिषो रमकोका समाजमें मिला सीनेवाले है। उक्त
चारो खेचोके पड़के प्रादानप्रदान बन्द रहा।
फिर बदायूँके गोड़ निजामाबादमे जा कर रहे और
बदायूँके ब्राह्मण उनके पुरहित बने। २य खेचोके
गोड़ोनि ३य खेचोकाको साथ मिलनेको
थेता को को। पड़के कई पत्र न
निबला। परमेशको बदायूँके ब्राह्मणोको
पेटाके जोड़ाहाको मिट गई। यहाँ तक
कि समय खेचोके विवाहके समय प्रादान प्रदान
चलने लगा। किन्तु ४थे खेचोके इहोदिन बन्धादान
करनेका प्रथम न हुई। परमेशठा ३य खेचोको
पेटाके ३य खेचोको भी दहने मिल गयो। १म खेचो
उक्त तीना खेचोका कुलमें जोन परमेश उनमें दिन
चलन रहे थे। परमेश अब उनमें देखा
कि तीन खेचोके परपर मिले हैं, तब वह भी
उक्त उक्त मयमें मिलकर एक ही गयो। प्रात्र
अब चारो खेचोके प्रादान प्रदान चकना है। गोड़

कायस्थोंकी शाखाओंका नाम खरे, दूसरे, बड़ाली, दिल्लीसीमाली और वदायूनी है।

क्या हिन्दू-राजत्व क्या मुसलमान-सरकार दोनों समय कायस्थ सान्निविष्टिक वा राजसभास्थ लेखकका पदभोग करते थे। उनमें अनेक संस्कृत ग्रन्थकार और सुपरिष्ठत भाविभूत हुवे। मुसलमानोंके अधिकारमें पश्चिमके बहुतसे कायस्थोंने सैनिक-विभागका भी उच्च पद पाया था। उनमें अकबरके राजस्व-सचिव टोडरमल, महाराज नवलराय, पटनाके शासनकर्ता राजा रामनारायण प्रभृतिका नाम उल्लेखयोग्य है। आजकल भी कायस्थ वृद्धि गवर्नमेण्टके अधीन क्या शिक्षा-विभाग क्या न्याय-विभाग (क्वैटरी-अदालत) सर्वत्र उच्च आसन और सम्मान प्राप्त करते आते हैं। आजकल युक्तप्रदेशके समस्त कायस्थ एकताके सूत्रमें आवृत्त होनेको चेष्टा करते हैं। युक्तप्रदेशमें प्रायः साठे पाँच लाख कायस्थोंका वास है।

राजपूताना।

राजपूतानेके कायस्थ प्रायः अपनेकी राजधानी कहते हैं। वृंदाईमें माथुर और भटनागर कायस्थोंका वास है। मारवाड़में कायस्थोंकी 'पञ्चौली ठाकुर' कहा जाता है। राजपूतानेमें अजमेरी, रामसरी और केकरी तीन श्रेणियाँ मिलती हैं। उनमें सभी यज्ञसूत्र धारण करते हैं। फिर अखाद्य भोजन करनेवालोंका यज्ञसूत्र उतार डाला जाता है। वहाँ सभी कायस्थ अपनेकी क्षत्रिय व्रतानेके लिये तैयार हैं।* उनका आचार-व्यवहार अधिकांश युक्तप्रदेशके कायस्थों-जैसा है। राजपूतानेके कायस्थोंमें बहुतोंने राजद्वारमें सैनिकवृत्तिको भी अवलम्बन किया है।

विहार।

विहारके कायस्थ अपनेकी चित्रगुप्तका प्रकृत वंशधर बताते हैं। उनमें प्रवाद है—सत्ययुगमें जब सब देवता यज्ञ करने लगे, तब यम ब्रह्मासि बोल उठे—'पितामह! इन्द्रादि सकल दिक्पाल है। अथच उन्हे यज्ञादि करनेका समय मिला जाता है।

किन्तु हमने ऐसा क्या अपराध किया है कि हम अपने कार्यभारको एक मुहूर्तके लिये भी छोड़ नहीं सकते। आप हमें यज्ञ करनेका उपाय बता दीजिये।' ब्रह्मानि यमकी उक्त प्रार्थनाके अनुसार अपने शरीरसे चित्रगुप्तकी उत्पन्न करके कहा था—'यह महाभाग साहाय्य करके तुम्हारे कर्मका अवसरकाल ठहरा देंगे और सबके कर्मकर्मको वर्णना करेंगे। उसके अनुसार तुम स्वर्ग-नरकादिकी व्यवस्था कर सकागे।'

पश्चिमी कायस्थोंकी भांति विहारो कायस्थोंमें भी द्वादश शाखा हैं। उक्त द्वादश शाखाओंके आदि पुरुष चित्रगुप्तके वंशधर थे। विहारो कायस्थ आज भी उपवीत धारण करते हैं। कारण उनके कथनानुसार चित्रगुप्तने सोपवीत जन्म लिया था। उनकी द्वादश शाखाका नाम है—अहिठाना, अम्बष्ठ, वाल्मीक, गौड़, कुलश्रेष्ठ, माथुर, निगम, शकसेन, श्रीवास्तव, सूर्यध्वज और करण। उक्त द्वादश शाखा-वर्गमें अहिठानोंका आदिनिवास जौनपुर है। पटना और त्रिभुत अम्बष्ठमें अम्बष्ठ शाखाके लोग ही अधिक देख पड़ते हैं। वाल्मीक शाखाका आदि वास स्वान गुजरात है। अम्बष्ठ, श्रीवास्तव और करण एक ही हुक्केसे तम्बाकू पिया करते हैं। करण और अम्बष्ठ ब्राह्मणप्रसूत अत्र एक जगह बैठकर खा सकते हैं।

निगम शाखाके कायस्थ विहारमें अधिक देख नहीं पड़ते। सूर्यध्वजोंके अधिदेवता सूर्य माने जाते हैं। माथुर, शकसेन, श्रीवास्तव और भटनागर अपनेकी चित्रगुप्तकी प्रथमा पत्नीका गर्भजात वंश बताते हैं। विहारके गौड़ कायस्थोंको विश्वास है कि बङ्गालके सेन राजा उन्हींकी श्रेणीके प्रन्तर्गत रहे। श्रीवास्तव शाखाके दो श्रेणी विभाग हैं—खरे और दूसरे। खरे श्रेणीके लोग अन्यान्य श्रीवास्तवोंमें अछ होते हैं। वह अपनेका 'पाडे' बताते हैं। खरे और दूसरे लोगोंमें पाना-हार तथा आदान-प्रदान नहीं चलता। शकसेन शाखामें भी उसी तरह श्रेणी विभाग है। माथुर, भटनागर पार शकसेन परस्पर एक दूसरेका अन्नव्यञ्जनादि ग्रहण करते हैं।

पूर्वोक्त हादय याकाचे काळा कावळींको जोड
 कुसरे वरी प्रकाशके मोच कावळक मी जेते है । किन्तु
 बह पाप ही अपमैको कायक्य जाता, पपर जातीय
 वा पूर्वोक्त हादय याकाके कायक्य जमें कायक्य बहना
 नही पावते । सारन जिकेसे केवन नगरमें किंतने ही
 दरवी घोर किंतने ही ठेकेदार मो कायक्य-नामधे
 अपना परिचय देते है । किन्तु जनके घाय काळा
 कायक्योका कोई संख्य नही । बहुतके सोम प्रतुमान
 करतकि बह बहुत कायक्य है, फिर मो मोच जमें
 पदक करकेसे समानपत हो एकचारमो ही मित्र
 जेंको समझे जाते है । कारक वाक्य मो जो काळा
 कायक्य अंभानुक्रमधे यांके प्रत्यारी होते पावे है,
 बहुतके सोम जनके घर पादान-प्रदान करला नही
 पावते । पठवाते आनूमी, जपौरी, पांडे वा
 बप्पो लपात्रिधारी कायक्य यतगुह जमी वा धत्
 जमेंयाको होते मो धामात्रिक मर्वादामि हीन समझे
 जाते है ।

सुखप्रदेय घोर विहारके कायक्योका धर्मधर्म
 प्राय मित्रता कुलता है । किन्तु दिग्मंदके
 पाचारमें मो कुह प्रमैद पक गवा है ।

विहारो कायक्यमि नेत्रव जेव, माळ, आशोरपजो,
 मानक्याही प्रकति कुवा करते है । जनमें याको को ही
 संख्या पचिक है । आश्रितनीयाके दिन पद चित्र
 गुतको पूका करते है । शोषजनी धर्मात् बहना
 पजमीको दावात बहम पूजते है ।

परदेर ।

बहुजकमें प्रमानतः चार जे चिपाके कायक्योका वास
 है । बह स्थानमंदके उत्तरराष्ट्रीय, दक्षिण-राष्ट्रीय, बहुज
 घोर बरिन्द करवाते है । उक्त चारो जे चिपा अपना
 परिचय चित्रगुत समानके नामधे दिया करतो है ।

उत्तरराष्ट्रीय कुलधर्ममें लिखा है—

“निवृत्तः शिष्टैः सर्वज्ञैः सुप्रियैः ।
 श्री श्री सुभाषणः १४४३ सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 अथवा श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः १११ ।
 श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।

१४४३ सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 अथवा श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः १११ ।

(अथवा श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११)

धर्मात् शिवायान् चित्रगुत सर्वमाखर्मीं पूजितं द्युते
 धी । जनके बंधधर बेगो रहे । इस धूमिरी पर हीमोके सर्व
 पथ लियको पाठ समान द्युते । जन्मना नाम जोड,
 मायुर, यक्षधिन, मठनामर, पञ्चक शोवाप्य, जय
 घोर लपक्यं वा । पाठोमें जयं थोड रहे । लहीके बह
 इस धूमिरी पर शोबर्ध नामके मित्रात द्युते । जनके
 बंधमि पांच विज महामाजोके पथपथक शिवा या ।
 पांथोका नाम बाह्यगोत्र पनादिधर शोकासिन सोम,
 मौरक्य सुप्रियोत्तम, विद्यामित्र सुदयंग घोर आश्रय देन
 रहा ।

उत्तरराष्ट्रीय-कुलाचार्यं पञ्चाननको चारिचामि
 कथा है—

“सर्वज्ञैः सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः १११ ।
 श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 अथवा श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः १११ ।

शोबर्ध व धको जेचिके पांच महानन पाबिभूत
 द्युते । जनमें बाह्यगोत्र पनादिधर (सिंधू),
 शोकासिन सोम सोम (शोप), मौरक्य मोत्र सुप्रियोत्तम
 (दास), विद्यामित्र मोत्र सुदयंग (मित्र), घोर
 आश्रय मोत्र देव (दत्त) धी । दत्त तथा
 दास सुप्रियैघोय घोर मित्रकुसर्म सुदयंग जन्म
 व योय मो काडवाते है ।

बहुजकापथकारिचामि लिखते है—

“निवृत्तः शिष्टैः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 अथवा श्रीगणेशाय नमः सर्वज्ञैः सुप्रियैः १११ ।
 सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः सुप्रियैः १११ ।

इति चाष्टमताः खाताः कुलाणां पतयोऽभवन् ।
 एतेषाञ्च सुता सर्वे देवाखायाश्च सन्निताः ॥
 घोष सूर्यध्वजान्तरासदासद्वयसुतया ।
 रविरदात् गुह्यैश्च चन्द्रदेहात् मिमक ॥
 चन्द्रार्धात् करणो नाग रविदासाश्च दत्तकः ।
 मृत्युञ्जयस्तु गौडाश्च कथ्यन्त यत्प्रकारके ॥
 दासकी नागनाथी च करणाश्च सुतृन्वा ।
 मृत्युञ्जयसुतो नागः देवसेनश्च पालित ॥
 चिंदेश्वरश्च तथा खाताः एते पद्धतिकारकाः ।
 मृत्युञ्जय-कुलीन्मयी नित्यानन्दो दृश्यते ॥
 तथापि रंभे सञ्जाताः सदागोभिः प्रकीर्तिताः ।
 कुलाचारप्रभेदेन विसमन्वयचलामवन् ॥”

चित्रगुप्तदेवके आठ महाशय पुत्र हुवे थे ।
 कश्यपने उनका जातकर्म किया । उनमें एक एकसे
 फिर बहुवंश (गोत्र) उत्पन्न हुवे । उनके मध्य
 २१ वंश ही प्रधान माने जाते हैं । उक्त एकविंशति
 वंशों में सूर्यध्वज, चन्द्रहास, चन्द्रार्ध, चन्द्रदेहक, रवि-
 दास, रविरत्न, रविधीर और गौडक कुलपति गिने गए ।
 उनका सन्ततिवर्ग देशनामसे भी आख्यात है ।
 सूर्यध्वजसे घोष, चन्द्रहाससे वसु, रविरत्नसे गुह, चन्द्र-
 देहसे मित्र, चन्द्रार्धसे करण, रविदाससे दत्त और गौडसे
 मृत्युञ्जयकी उत्पत्ति है । फिर करणसे नाग, नाथ
 एवं दास और मृत्युञ्जयसे देव, सेन, पालित तथा
 सिंह नामक प्रसिद्ध पद्धतिकारकोंने जन्मलाभ किया ।
 मृत्युञ्जयके वंशमें नित्यानन्द नामक एक नृपेश्वर
 आविर्भूत हुवे थे । उन्हींके वंशसे ८७ घर कायस्थ
 निकले । उनमें ७२ घर कुलाचारके प्रभेदसे ‘अचला’
 कहलाते हैं ।

उत्तरराष्ट्रीय कायस्थकारिकामें जिस प्रकार
 चित्रगुप्तसे विभिन्न शाखाके कायस्थोंकी उत्पत्ति
 वर्णित हुयी है, चित्रगुप्तको पूजा और व्रतकथाके मध्य
 भी उसी प्रकार शोकश्लोको देख पडो है—

“चित्रगुप्तान्धे नागाः मृत्यु तान् कथयामि वै ।
 गाढाख्या मापु शार्येण महकरणसेनका ॥
 अहिहाताः श्रीवासवया शोकसेनास्येव च ।
 कुलाः सर्वशास्त्रेषु अम्बहाया नराधिप ॥”

उक्त शोक कुलग्न्यके अनुरूप होते भी इस विषयमें
 वीरतर मतभेद विद्यमान है । बङ्गालके किसी किसी

कुलग्न्यमें सेनक वा सेनीको चित्रगुप्तका भ्राता और
 चित्रगुप्तव्रतकथा तथा पश्चिमाञ्चलके कायस्थकुल-
 परिचय-ग्रन्थसमूहमें उनको चित्रगुप्तका पुत्र बताया
 है । प्राचीन पुराणमें चित्रगुप्तका भ्रातृ-परिचय न
 रहने और अहल्याकामधेनुधृत यमसंहिता तथा युक्त-
 प्रदेशीय कायस्थोंके कुलग्न्यसमूहमें चित्रगुप्तसे
 विभिन्न श्रेणीके कायस्थोंकी उत्पत्ति विवृत होने पर
 हमने प्राचीन मतके अनुसार सेनी वा सेनकको चित्र-
 गुप्तका पुत्र ही माना है । युक्तप्रदेशमें विभिन्न श्रेणीके
 जो सकल कायस्थ मिलते, उनके मध्य श्रीवास्तव,
 शकसेन, करण, सूर्यध्वज, अम्बष्ठ, रामधाना और
 गौड कई श्रेणीके कायस्थ बङ्गाल पहुँचे थे । इनके
 वंशधर विभिन्न स्थानमें इस समय विभिन्न श्रेणीभूक्त हो
 गये हैं । सुतरां कुलग्न्यके अनुसार वसु, घोष, मित्र,
 दत्त, सिंह प्रभृति उपाधिधारो कायस्थ भी युक्तप्रदेशीय
 श्रीवास्तव प्रभृति विभिन्न शाखाके ज्ञाति होते और
 युक्तप्रदेशके कायस्थोंको भाँति बङ्गालके घोष, वसु,
 मित्र प्रभृति विशुद्ध कायस्थवंशधर क्षत्रियवर्णके
 अन्तर्गत ठहरते हैं ।*

मिथिला ।

कर्णाटकवंशीय महाराज नान्यदेव ई० ११ शताब्दको
 मिथिला पदार्पण करते हुवे अपने साथ निज अमात्य
 कायस्थकुलभूषण श्रीधर तथा उनके १२ सम्बन्धिर्षोंको
 लाये थे । वह जब समस्त मिथिलाके अधिपति
 हुये, तब उनके सचिव श्रीधर और उक्त १२ कुटुम्बी
 अन्य उच्च पद पर नियुक्त किये गये और उन्हें
 खानेपीनेके लिये बहुतसे गांव मिले । उस समयसे
 उक्त कायस्थ मिथिलामें ही रहने लगे । उसके पीछे
 मन्त्रिष्वर श्रीधर महोदयने अपने बहुतेरे वन्धु-
 बान्धवोंको धीरे धीरे मिथिला बुलाया और उन्हें
 जीविका दिला करके मिथिलामें ही बसाया था ।
 कायस्थ चार धारको जा कर मिथिलामें बसे ।
 प्रथम बार (जैसा पहले लिख चुके हैं) श्रीधर और

* बङ्गके आतौय इतिहास “रामन्यकाण्ड” में बङ्गदेशीय कायस्थोंका
 आदिपरिचय और इतिहास द्रष्टव्य है ।

उनके १२ कुटुम्ब पढ़ते थे। फिर दूसरी बार बीच, तीसरी बार तीस बार चौथी बार पछी कायस्थोंकी मन्थने मियिका नही। नाराय—कुल ११३ कायस्थ मान्यदेवको समग्र मियिकामें जाकर रहे। अपने देगको न शीटने और मियिकामें भी निवास पढ़के ज्ञानिने वह 'अर्थकायस्थ' नामसे परिचित हुये। रामा मान्यदेवके समग्र राजा हरिसिंह देवने वह मित्रिकाय वह वर्षकी पछी बनायी, तब कायस्थोंके अर्थको विवेचना करके दुहावरके पीर एक पदातुपढ़के ज्ञानने उन्हें उ खेचियेमें विमल किया। मान्यदेवके साथ गये १३ कायस्थोंके अर्थचरो में पछीप्रहसके मध्य प्रथम अर्थोमें ज्ञान पाया था। द्वितीय अर्थोमें इन २० कायस्थोंके समग्र रहे जो त्रिद्वत राज्य मिलने पर दुभाये गये। फिर तीसरी बारकी गयी ३० कायस्थोंके अर्थक व्यतीक अर्थो पीर चौथी बारको पढ़के चरमिष्ट कायस्थवन्दान चतुर्थ अर्थोमुक्त हुये।

उक्त कायस्थ मियिकामें वस जाने पीछे अपने पृथक् प्रादयोकी भाति स्थानान्तरको नहीं गये। इनो जिये वह पुरानो मित्रिकाकी सीमाके बाहर नहीं मिलने पर्यात्तु हथोके भीतर रहते हैं।

मकाराज मान्यदेवके बरानिसे शिखर पीरनवार बरानिसे मध्य समय तक मित्रिकाके कायस्थ 'ठाकुर' कहलाने रहे। फिर जिकी पीरनवार भूदेव-अंशव तल मदानुमानको कायस्थों पीर ब्राह्मणोंकी पदवीका बाह्य पड़गत बना। इस बिधि उनो में मन्थीर बिचारावक जो हर कायस्थोंकी 'ठाकुर' पदवीको अपनेजानिक पदवियामें विमल किया। जो जिन विषयमें नियुक्त देय पड़ा वह उधी पदवीके विमुचित हुआ। कायस्थोंमें राजीवशीरी जोनेके महर्ष नामा प्रकारकी एक पदवियोंकी भीकार कर लिया।

प्राक्कलने मैमिल पञ्चियार कहा करने बि चर्चाटकरे मित्रिकाराठी जोने बारक मियिकाके कायस्थ अर्थकायस्थ कहलाने हैं। परन्तु हमें सम सामयिक मित्रिकाबिधि वा पत्रके एकके समर्जनका कोई प्रमाण नहीं मिला। उनटे, चर्चाटक नाम

देवके पदवामी पीर प्रथम मन्थो श्रीवर ठाकुर, जो अर्थपछी अर्थमें कुलीन अर्थकायस्थोंके मध्य सभसे बड़े समझे गये हैं अपने मित्रिकाबिधिमें 'चक्रब्रह्ममाण्ड' नामसे परिचित हुये हैं। दरमन्हा जिकीमें बरबदी परगनेके बीच पन्थाहाठाकी नामक एक पास है। उनमें ब्रह्मसादित्य मन्दिरके अ मा पथीमें एक टट्टे हुई विष्णुकी मूर्तिके पादगोठ पर मित्रिकापित मित्रासेय लकोके है—

"यो श्रीवन्दितोऽसौ ब्रह्मब्रह्मणः ।
 ननु श्रीवन्दितं त्रिच त्रितो श्रीवन्दितः ।
 मित्रिका तत्र नामक चक्रब्रह्ममाण्ड ।
 श्रीवन्दितोऽसौ श्रीवन्दितोऽसौ श्रीवन्दितः ॥"

'जिनको श्रीवन्दिते बिम्ब उच्छ्रित पर्यात्तु ज्ञान है जो पृथक् हृदयप्रतिको बराबर अर्थक कारनेयोग्य हैं पीर जो गुणरूप रजके समुद्र हैं, वही श्रीमान् मान्य पति विद्यो जो। उनमें मान्यदेवके मन्थो ब्रह्मपत्रका चरित्र सर्वस्वरूप श्रीवरने उक्त श्रीवर नामक श्रीमान् देवमूर्ति प्रतिष्ठित की है।

समसामयिक मित्रिकाबिधिमें श्रीवर ठाकुर 'चक्र ब्रह्ममाण्ड' लिखे गये हैं। ऐसी पत्रकारिने मित्रिके वह कायस्थ चरित्र पीर वज्रासी रहे। गोडके शिलबंदीय चर्चाट-चरित्र थे और मान्यदेव उनोके भाति थे। राकुदेवमें गङ्गातीर चर्चाटका एक प्रथम उपनिवेश रहा। उधरतः उधी स्थानके मान्य देव और श्रीवर ठाकुर अपने प्राणोय ज्ञान से करके मियिका जोतनेको चांगे बड़े। ब्रह्मणके उत्तरराष्ट्रीय कायस्थोंके प्राचीन कुलपत्रमें उत्तरराष्ट्रीय कायस्थोंके पूर्वपुत्र 'श्रीवर्धन समन्त', 'श्रीवर्धन म अंशोक्त' और 'श्रीवर्धन कुलानुद' कहलाये हैं। ब्रह्मदेवके पत्रमें वक्त प्राचीन कुलपत्रोका प्रमाण उक्त हा चुका है। मालूम पड़ता कि राष्ट्रीय कायस्थोंके बादपुत्रको भाति श्रीवरदास और उनके कुटुम्भो 'अचक्रब्रह्म' नामसे मैमिक समाजमें परिचित हुये हैं। ब्रह्मणक कायस्थोंकी भाति मैमिक कायस्थ समाजमें श्री दास, दास, देव, बरठ, मित्र, मित्रक, काम, श्रीवरी, इह इत्यादि पदवी

प्रचलित हैं। उनका कर्मकाण्ड मैथिल ब्राह्मणों के ही सदृश होता है। किन्तु विवाह, आश्रादिकर्म मित्रता देख पड़ती है। मिथिल कायस्थों में प्राजापत्य-विवाह करते हैं।

उद्देश।

उद्देशिके कारण अपनेको विशुद्ध कायस्थ और चित्रगुप्तके वंशधर बताते हैं। इस बातके समझनेका कोई प्रकृत उपाय नहीं—वह किस समय और किस प्रकार जा कर उद्देशिकमें रहे। पुरीकी श्रीमन्दिरस्थ मादलापट्टी और अन्यान्य विवरणसे समझ पड़ता कि उन्होंने मगधसे गङ्गवंशीय राजाओंके अभ्युदयसे बहुतपूर्व उद्देशिका जा कर पूर्वतन राजाओंके अधीन कर्म स्वीकार किया था। गङ्गवंशीय राजाओंके पूर्व-वर्ती कटक, सम्बलपुर प्रभृति स्थानोंसे प्राविष्कृत सोमवंशीय राजाओंके समय उत्कीर्ण ताम्रशासनसे समझते कि कलिङ्गाधिपति जनमेजय, ययाति, महाभयगुप्त प्रभृति राजाओंके अधीन कायस्थ महा-सान्धिविप्रद्विकका कार्य करते थे। उनका 'घोष' 'दत्त' इत्यादि उपाधि था।* उक्त सकल उपाधि मागध वा विहारि कायस्थोंमें नहीं मिलते। किन्तु बङ्गीय कायस्थोंके मध्य वह सकल उपाधि प्रचलित हैं। इससे समझ सकते कि बङ्गदेशसे ही जा कर करणिक कायस्थ उद्देशिकमें बसे थे। आजकल विशुद्ध करण भी अपनेको बङ्गालका ही कायस्थ बताते हैं। बलाल-सेनके समय कौलीन्य-प्रथा ग्रहण न करनेसे उन्हें देश छोड़ उद्देशिका जाना पडा। किन्तु हम पहले ही लिख चुके हैं कि बलालसेनसे बहुत पूर्व उद्देशिकमें 'घोष' और 'दत्त' उपाधिधारी कायस्थ विद्यमान थे।

करण कहते कि सबसे पहले उनके टाई घर रहे। सम्भवतः उनके कथनका उद्देश यह है कि सर्व-प्रथम उनकी संख्या प्रति अल्पमात्र रही। उक्त टाई घरोंमें एकने 'भाठगड़'का वर्तमान राजवंश स्थापन किया था। वह पूर्वतन उत्कल-राजके विवर्ता (व्यवहर्ता-मन्त्री) रहे। दूसरा घर

पुरी जिलामें खुर्दाके राजाका दीवान है। अन्यान्य करण अवशिष्ट प्राधे घरमें समझे जाते हैं। इस समय तक भाठगड़के राजाका 'विवर्तापट्टनायक' उपाधि विद्यमान है। करण खर, पुर और व्याज-भेदसे अपनेको तीन श्रेणीयोंमें विभक्त करते हैं। उपर्युक्त भाठगड़-राजवंशीय 'खर' खुर्दाके दीवान्-वंशीय 'पुर' और अन्यान्य अपनेको 'व्याज' श्रेणीका कायस्थ कहते हैं। प्रथमोक्त दो श्रेणी द्वितीय श्रेणीसे अपनेको विशेष कुलीन प्रकाश करती हैं। उन्हें उत्कल-प्रचलित सामाजिक रीतिके अनुसार ब्राह्मणोंसे नीचे और खण्डायतोंसे ऊपर मर्यादा मिलती है।

सम्प्रति करण कायस्थ कटक, पुरी एवं बालेश्वर तीन जिलों, समस्त गड़जात महालों और गङ्गाम तथा सम्बलपुर प्रभृति स्थानोंमें वास करते हैं। मित्र मित्र स्थानोंमें अवस्थिति करनेसे उनका आचार-व्यवहार तथा रीति-नीति भी बदल गई है। पुरी तथा कटक पञ्चलके करणोंसे भद्रख एवं बालेश्वर पञ्चलके करणोंका विवाह-सम्बन्ध नहीं होता। पुरी और खुर्दा पञ्चलके करण अपनेको सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। उत्कलीय करण महान्ति, दास, नायक, मन्त्र, पट्टनायक, कानूनगो और सेनापति प्रभृति उपाधि-भूषित हैं। उनमें कानूनगो और पट्टनायक उपाधि विशेष-सम्मानसूचक होते हैं।

उत्कलीय करणोंमें कोई चैतन्यभक्त और कोई जगन्नाथके भतिवड़ी सम्प्रदाय-भुक्त हैं। चैतन्य-देवके उद्देशिका जानसे आज तक उनमें अपनेक वेष्णव कवियोंने जन्मग्रहण किया है। उनके मध्य कविवर 'बलराम दास' देशविख्यात हैं। उन्होंने उत्कल पद्यसमन्वित अनेक पौराणिक ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। उद्देशिके बहुतसे स्थानोंमें गृही करण वैष्णवोंका एक सम्प्रदाय है। उनमें कोई गौड़ीय, कोई भतिवड़ी और कोई रामानन्दी श्रेणीके भक्तगंत है। उनका विवाह उही श्रेणी किंवा कभी कभी करणोंके साथ हुआ करता है। वह मत्स्यमांस नहीं खाते।

* Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. XLVI. Pt. I. p. 177.

मध्यप्रदेश ।

मध्यप्रदेशके पूर्वतन पश्चिमाधी कायक पपनेको 'मायक कायक' और चिह्नगुप्तके सन्तान बताते हैं। सुसहमान नवाबीके आमननका मध्यप्रदेशके पश्चिमाय ब्राह्मणोंमें देय होइ दिया था। उक्त समय सुसहमानोंमें कायकोंको पारसो भाषामें पारदर्मी, कार्यकुशल और चतुर देख नामा खानोंपर कानूनगोईका पद प्रदान किया। उनमें जामिमिमान वा कुसुस्कार नहीं, प्रायः सब लोग निच पट सञ्चते हैं। वह कहा करते हैं—'पसरो को लट्टिके पाव साय कायको को भी लट्टि हुई है। बिजातानि लिखने पढ़नेके निचे दो कायकोंको बनाया है।' एसीमे मध्यप्रदेशके पति साम्राज्य कायक भी बिबोके परिवारक जममें नहीं बसे। दाहल जममें पति हीय काब जमभा जाता है। वह पयना परिचय मसिबोयो पक्षिके नामके दिया करते हैं। १०म वा ११म वर्षके मध्य ही गुजका मोखी सम्पन्न होता है। यतके उद्योग वह हादय दिन मात्र प्रयोग प्रचय करती हैं। उनको एक थाया निजामके राज्यमें जाकर रहने खनी है। वहाँ उनमें हिन्दू और सुसहमान राजाको पश्चिमाधी पपनी कायदत्ताके गुपने बितनी को कामीर और जनाम पाया है।

पयना विभिन्नी ।

मन्द्राक प्रान्तमें भी चिह्नगुप्त और चन्द्रवेनीय प्रसु समय यैबोके कायको का वात है। उनका याचार-व्यवहार और पशुहानादि पश्चिमाधर महा राष्ट्रीय कायको-वेसा है। महाराष्ट्रकी मति मन्द्राकके ब्राह्मणोंमें भी पनिक बार काबलीके साथ होजाहोई की है। बिन्दु महाराष्ट्र देयमें ब्राह्मणोंके पश्चिमाधी कोइकस ब्राह्मणोंको भी क्विचा हुई बी, तेक ब्राह्मणोंको वह सुविधा कम न पयो। जहाँ विद्वानाधिकार साधुवाचार्य प्रकृतिवा कषकाज है, वहाँ दाहम्यवर्द्धने कायको को दिवादिके मन्त्र गिना। विद्वय ह्यविद्ध ब्राह्मण

कनका पोरोहिज्ज करती है। हाइय वर्षके पूर्व ही मुन्द्राकमें कायको का उपनयन सम्पन्न होता है। पितामाता भूमन् निचट भाखीयके मरनेके १२ दिन साथ प्रयोग प्रचय करती हैं।

पाण्ड्य राजाओंके समय मन्द्राकके कायक सिंहासनीय यके और सिंहसराय पराजम बाइ प्रभृतिसे उन्हें महाधामिनिचिह्निक पद मिली है।

मन्द्राकके कायक 'कायक' नामसे परिचित हैं। पात्र भी वह नाम खानोंमें कुरुकरवी वा कानूनगोईके पद पर प्रतिष्ठित हैं। वह पपनेको पश्चिम वर्षान्तगत बताया करते हैं। कुचकोयम् प्रकृति कई खानोंमें कायक मठाज्य भी है। यहाँ तक कि पंथके पश्चिमाधी राजकायमें वह ब्राह्मणोंके महाप्रतिदम्बी बन गये हैं।

गुजरात ।

काबलीको १२ जेचिको से बिचक तोन काकीक, माधर और मटनगर गुजरातमें मिलती है। गुजरातके कुररी हिन्दुओंसे पयना सम्राज ह्यक रक्षती भी उनमें परकार आदान प्रदान और पागाहार प्रकृति नहीं।

काकीक कायक प्रधानतः य्वातमें पाये जाते हैं। कहते हैं—काठियावाड़के बाबा नवरमें प्राय ६० १४म मताम्बको कायक जाकर बसे है। (पयनम्, १११४) बिन्दु दायक गुजरातमें खनीमें प्राय ६० १६म मताम्बका पश्चिमाधर किया जब गुजरात मुनकसाभ्राण्यमें मिल गया। प सम्नाट पक्षकरके प्रबन्धानुसार सूरतकी प्रतिष्ठा

"It is not irrelevant, however, to state here that the whole of the third class that of the writers, have a distinct strain of Kshatriya blood, not only in this (Madras) Presidency but in Upper India, where they are stronger in number as well as in influence" Census Report of British India, 1891 Vol. III, p. 201.

• Wilson's Madras Collection, p. 815.

‡ Wilson's Census Vol. I, p. 64

‡ पयनेमें पनकीक मन्थार केा मन्थर पन्थर पीटी पीटीका पन्थर पन्थर है।

† कहते हैं—कुचकोय पन्थर पन्थर पन्थर पीटी पीटीका पन्थर पन्थर है। (Malabar's Central India Vol. 1) p. 165.

वही थी। राजकीय लेखक (सुतसही) नगर और निकटस्थ जिल्लों के शासक रहे। वह गुजरातवाले सुवेदारके अधीन न थे, दिल्लीकी राजसभासे सीधा सम्बन्ध रखते थे। सूरतके अट्टार्डस विभागोंकी मासगुजारी वही वसूल करते थे। १८८६ ई० तक अंगरेजी गांवोंमें और १८८५ ई० तक वहोदाके २८ गांवोंमें प्रधानतः कायस्थ ही मजुमदार रहे। उनका आकार-प्रकार ब्राह्मणोंसे मिलता है।

गुजराती कायस्थोंकी निराली बैठक मेलकशास्त्रा मकान (गृह) है। वहा समवयस्क लोग सन्ध्याको जा कर मिलते, हुक्का पीते, धार्मिक गीत सुनते या सुनाते और आमोद-प्रमोद करते हैं। उन्हें गानिका बड़ा शौक है और उनमें कुछ अच्छे अभिनेता भी हैं। प्रत्येक कुटुम्बकी एक अघिछात्री देवी होती है। श्रीदीच्य ब्राह्मण पौरोहित्य करते हैं। अपने धार्मिक प्रधानों महाराष्ट्रोंके अतिरिक्त, जिन्हें विवाहके समय बुलाते हैं, वाल्मीक कायस्थ ब्राह्मणोंके प्रति विशेष सम्मान प्रदर्शन नहीं करते। दूसरे वैष्णवोंकी अपेक्षा महाराष्ट्रोंसे भी वह न्यून भेदभाव रखते हैं।

माथुर कायस्थ अहमदाबाद, वहोदा, दमोई, सूरत, राघनपुर और नडिआदमें होते हैं। १५७२-१७५० ई० को मुगल-सुवेदारोंके साथ वह लेखक और दुभासियेकी भांति गुजरात गये थे।

५० वा ६० वर्ष हुवे माथुर मांस भोजन करते थे। किन्तु अब वह निरामिषभोजी हैं। चैत्र और आश्विन मास पूजाके समय माथुर मास और देशी सुरा देवीको समर्पण किया करते थे। किन्तु गुजरातके ब्राह्मणों और वैश्योंसे घनिष्ठ सम्बन्ध होने पर उन्होंने अपनी वह रीति छोड़ दी है। अब मांसके बदले श्वेत कुष्माण्ड और सुराके स्थानमें शरबत चढ़ाते हैं।

माथुरोंमें कोई रामानुजी, कोई बल्लभाचारी और कोई शैव हैं। प्रत्येक भवममें एक कुसुदेवी काला, दुर्गा वा अम्बा रहती है। माथुरोंके पूज्यदेव लालजी - (वाचरूप कृष्ण), गणपति वा महादेव हैं। स्त्री-पुरुष दोनों शिव, विष्णु और माताके मन्दिर दर्शन

करनेको जाते हैं। संस्कारादिके समय कुलगुरु पौरोहित्य करते, जो श्रीदीच्य, योमाली वा पारागर ब्राह्मण रहते हैं।

साधारण हिन्दू पर्वोंके अतिरिक्त माथुरोंमें दूसरे भी कई पुण्यदिन होते हैं। वह कार्तिक शुक्ला और चैत्र शुक्ला द्वितीयाके दिन चित्रगुप्त पूजन और भगिनी-कर्तृक प्रसुत खाद्य भोजन करते हैं।

भटनागर कायस्थ अहमदाबाद, वहोदा और अल्प-संख्यक सूरतमें देख पडते हैं। वाल्मीक और माथुर कायस्थोंकी भांति वह भी गुजरातको उत्तर-भारतसे गये, जहां आज भी उनकी संख्या अधिक है। भटनागर दूसरे कायस्थोंकी भांति अपनीकी चित्रगुप्तका वंशधर बताते हैं। पद्मपुराणमें लिखा है कि चित्रगुप्तके १२ पुत्रोंमें एक पुत्र भट नामक साधुके साथ श्रीनगर संस्थापन करने भेजे गये थे, पीछे वही श्रीनगरके शासक हुवे। उन्हींसे भटनागर नाम निकला है। उनमें व्यास और दास दो श्रेणी हैं। इन दोनों श्रेणियोंमें व्यास जंचे समझे जाते हैं। पहले वह दासोंके हाथका बना भोजन ग्रहण न करते थे। व्यास दासोंकी कन्या ले लेते, परन्तु अपनी कन्या उन्हें कभी नहीं देते। आकृति, परिच्छेद (पोशाक), भाषा, खाद्य, गृह और उपजीविकामें भटनागर, वाल्मीकी और माथुरोंसे मिलते हैं। वह बल्लभाचार्य सम्प्रदायभुक्त हैं। दशहरा और कार्तिक शुक्ला द्वितीया उनका विशेष पुण्याह है। उस दिन चित्रगुप्तके सम्मानार्थ एक गूढ छन्द लिखा और तलवारके साथ पूजा जाता है। उनका आचार-श्रवहार वाल्मीकीकी अपेक्षा माथुरोंसे अधिक मिलता है। भटनागरोंका पौरोहित्य श्रीगोड ब्राह्मण करते हैं। उनमें कोई चौधरी या मुखिया नहीं होता।

वम्बई-प्रान्त।

वम्बई प्रदेशमें चान्द्रसेनी प्रभु, ध्रुव प्रभु, दमन प्रभु और ब्रह्मचरित्र्य श्रेणीके कायस्थ रहते हैं।

दाक्षिणात्यमें बीस हजारके अधिक चान्द्रसेनी प्रभुओंका वास है। उनके मध्य वम्बई-प्रान्तके

अन्तर्गत कोइल प्रदेसमें जो धीन अधिक देय पड़ते हैं। फिर बाबा और लुकाबा जिकारमें भी अधिकार्य चन्द्रसैनी प्रभु पाये जाते हैं। किन्तु उक्त दोनों जिकारमें भी वह वारस इकारते कम न होती। चाच बन्धन, बंजीरा, पूना, विताता और चम्पान्य स्थानमें भी उनका वार है।

चन्द्रसैनी प्रभु कायस्थ पशोष्माके अग्रिपराबा चन्द्रसैनकी उत्पत्ति जिनका दावा करते हैं। चन्द्रपुरावके ऐक्यामाजाज्यमें लिखा है—“परपुरामने अग्रिय-संहार की अपनी प्रतिज्ञा पूर्य करनेके लिये सड़काहुँन और राबा चन्द्रसैनको मार डाला। परन्तु जिनोने दुना, चन्द्रसैनकी मज्जियोने हारण्य अग्रिका पात्रय शिया या और वह गर्भवती रह्यो। परपुराम अपनी प्रतिज्ञा पावन करनेको उक्त अग्रिके निबट जा कर उपस्थित हुये। जायने परपुरामको धादर सल्लार कर कहा जा—‘भाय अपने धाममनका अभिवाय वतलायिये। आपका अभिवाय निबय पूर्व किया जायिमा।’ परपुरामने उत्तर दिया कि वह चन्द्रसैनकी मज्जियोको चोत्रमें है। अग्रि अधिकतम उक्त मज्जिकाको ले पाये। परपुरामने अपनी उक्तकी उपलक्ष्यमें पसय जो अग्रिको मु डमना कर देने कहा या। अग्रिके अमरुत बाबब माता। परपुराम उन्हें रस यार्त पर उक्त मुद्र देनेको प्रस्तुत हुये कि वडे और उक्तके सन्तानको शेषक बनाया जाता जेनिब नहीं। बाबबका नाम धीम राब रखा गया। उर्धो धीमराबके पुत्र विद्यनाथ महादेव मातु तथा लक्ष्मीहर और उनके बंधुअ ‘कायस्थ-प्रभु’ नामके परिचित हुये।”

पञ्चले सुसलमानि कायस्थोंको वर्तमें लगाया या। पूनामें सुसलमानो नगर सुबारके निबट, बंजीराको राजपुरी, यागा जिकेको बत्तरधोमा पर, दामन, बड़ोदा और बन्धारमें कायस्थोके उपनिवेश स्थापित हुये। दामनबाई इबयो राजाके एक कायस्थ प्रभु प्रधान मन्त्री रहे। मायबहाडके प्रधान मन्त्री रावकी अयाकी भी कायस्थोके एक सुहोबब थे। बन्धारके दो कायस्थ यागा जिकेमें काकर फेब पड़े

हैं। विशाबी (१६२०-१६३० ई०) कायस्थ प्रभुसैनि बहुत मोत रहते थे। समय-समय पर सतारा, कोरहापुर, नागपुर और बड़ोदाकी पदासतमें कायस्थोने बड़ा प्राभाव पाया। पूनाके राब बहापुर रामचन्द्र सहायाम सुसले कयनासुधार यियाजोने एक बार राजस्थ विमानके अपने समस्त ब्राह्मण निधान करके उनके स्थान पर कायस्थ प्रभुसैनीको रखा था। मोरपन्त विक्रले और नौकपन्त अपने दो ब्राह्मण सभ्यतिदाताकोके आपत्ति करने पर मिकजोने कहा—‘अरय रक्षिये कि बिना विहाइ समस्त सुसलमानो स्थान, जो ब्राह्मणोंके अधिकारमें थे छोड़ दिये गये हैं। परन्तु प्रभुसैनि अधिकतम स्थान जेनेमें बड़ो सुसलिन पड़ोयो। उनमें एक रामपुरी पात्र भी नहीं की जा सकी है।’

बन्धर प्राकिके चन्द्रसैनी प्रभु ब्राह्मणोंके पीछे जो सामाजिक पासन पाते और अपनीको अग्रिय बताते हैं। उनमें २३ गोत्र और ३२ कपाधि हैं।

उक्त कायस्थ-प्रभुको का पाचार व्यबहार, भावगठन और परिष्कृहादि सम्पूर्ण कोइलक ब्राह्मणो जेहा होता है। वह देखनेमें सुन्दर एवं परिष्कृत रहते और मद्रक पर बड़ा तथा अल्प पर अग्रोपवीत रहते हैं। उक्त कायस्थ प्रभु यज्ञ, अभ्ययन और दान त्रिविध वैदिक कर्मके अधिकारी हैं। * दयम नयेके पूर्व वह पुत्रादिको उपनयन दिया करते हैं। अपनयनके समय यथाविधि ब्राह्मण पात्रित होता है। ऐतिहासिक आतकर्म नामकरक, कर्बुदिक दन्तोद्दम, बूडाकरय, निष्कामक चौमन्तोपवन, विहाइ, नर्मी बान, अन्तोडि प्रकृति नबल संस्कार यथाविधि किये जाते हैं। विधवा विहाइ उनमें प्रचलित नहीं। विहाइ और खाइ पर वह समताते भी अधिक धय करनेमें कुच्छित नहीं होते। उनके मध्य भागवत और वैष्णव मांस भोजनसे दूर रहते हैं। घात अपनीको ‘द्वैतपुत्र’ कहते और मद्यमांस पचय करते हैं। देयक ब्राह्मण ही उनके गुरु-सुपेक्षित हैं।

* Sherring's Tribes and Castes, Vol. II p. 182 and Arthur Steel's Law and Customs of Hindu Castes, p. 84.

कायस्थप्रभुओंमें जातशौच और मृताशौच १२ दिन रहता है। त्रयोदश दिवस मृतोद्देशसे आच किया जाता है। पेशवाओंके प्राधान्यकाल उनके जातिकुटुम्बवाले कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंने कायस्थ प्रभुओं पर घघेष्ट अत्याचार किया। उस समय वैदिक कर्म सम्पादनको ब्राह्मण पुरोहित न मिलनेसे कोई कोई अपने आप पौरोहित्य और होमादि वैदिक कर्म कर लेते थे। आज भी किसी किसीने उक्त वृत्ति नहीं छोड़ी। * यहा तक कि ब्राह्मणोंके उक्त प्रभावकाल जिन्होंने स्वधर्मरक्षाके लिये गुजरात, कच्छ प्रभृति दूर देशोंमें जा कर भाग्य लिया और उपयुक्त पुरोहितके अभावमें बाध्य हो अशस्त्रीय याजनकार्य ग्रहण किया था, आज भी उनके वंशधर पुरोहित, लेखक और शस्त्रजीवी बने हैं। † इसमें सन्देह नहीं कि ब्राह्मणोंके पीढनसे व्यथित और हताश हो कर ही कायस्थ प्रभु वैसा कार्य करने पर बाध्य हुये थे। फिर उनके किसी किसी वंशधरने उक्त उच्च अधिकार परित्याग करना उचित न समझा।

दाक्षिणात्यके प्रभुओंमें किसीकी अवस्था मन्द नहीं। दाक्षिणात्यमें वह आज भी देशपाण्डेय तथा कुलकर्णी बने हैं और महाराष्ट्रनृप-प्रदत्त जागीर भोग करते हैं।

कोङ्कणके अन्तर्गत दमन नामक स्थानमें जो चान्द्रसेनीय प्रभु रहते, उन्हें और पत्तनप्रभुवाले चन्द्रवंशीय कामपतिके दमन नामक सन्तानके वंशधरोंको 'दमनप्रभु' कहते हैं। उनका आचार व्यवहार और संस्कारादि समस्त चान्द्रसेनीय प्रभुओंसे मिलता है। दमनश्रेणीमें चान्द्रसेनीय और पाठारीय उभय श्रेणियोंका मिलन देख पडता है।

चेउल, बसई, कुलावा, बस्वई, थाना, पूना प्रभृति जिल्लाओंमें पत्तन-प्रभुओंका वास है। वह संख्यामें

अति अल्प है। उनकी अल्प संख्याका कारण क्या है? कोई कोई समझता कि सुसलमानोंके आधिपत्यकाल उनमें अनेक चान्द्रसेनीय प्रभुओंके साथ मिल गये थे। किन्तु आजकल पत्तनप्रभु चान्द्रसेनीय प्रभुओंका कोई सम्बन्ध स्वीकार नहीं करते। यह अपनेको विशुद्ध क्षत्रिय और चान्द्रसेनीयोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ वतसाते है। पेशवा अथवा कोङ्कणस्थ ब्राह्मणवंशीय प्रतिनिधियोंसे सतारमें जिस समय चिटनवीसोंका दारुण विवाद चलता था, उसी समय अधिकांश पत्तनप्रभु ब्राह्मणोंके अत्याचारसे बचनेको स्वतन्त्र हो गये। फिर भी जो चान्द्रसेनीयोंके साथ गाठ मिलता और कुटुम्बिताके सूत्रमें भावद्ध रहे, वह स्वतन्त्र हो न सके। उनके वंशधर आज भी चान्द्रसेनीयोंके मध्य 'गाठने' उपाधि भोग करते हैं। यहां तक कि वह पत्तन श्रेणीसे पृथक् हो गये हैं।

पत्तनप्रभुओंकी माटभापा अनहसतवाड़ा पत्तन (पाटन) के राजपूतोंकी भाषासे मिलती है। इस लिये बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि उक्त राजपूतोंसे ही पत्तनप्रभुओंका उद्भव और पाटन नगरसे उनका नामकरण हुआ होगा। †

कोङ्कणस्थ ब्राह्मणों द्वारा प्रकृत क्षत्रिय स्वीकार न किये जाते भी वह वरावर यजन, अध्ययन एवं दान त्रिविध द्विजोचित कर्म सम्पादन और चान्द्रसेनीय कायस्थोंकी भांति सकल संस्कार पालन करते हैं। पत्तनप्रभु दशम वर्ष पुत्रको उपनयन देते और अशौचमें १२ दिन मात्र लेते हैं। आज भी कोङ्कणके नाना स्थानोंमें प्रभुश्रीग बहुतसी जागीर रखते और बड़े बड़े पद भोग करते हैं। †

महाराष्ट्रदेशमें भुवप्रभु नामक एक श्रेणीके कायस्थ देख पडते हैं। वह अपनेको पुराणवर्णित उत्तानपादराजपुत्र भुवका वंशधर कहते और पत्तन-प्रभुओंका एकश्रेणीभुक्त समझते हैं। उनके प्रधान

* "It is certain that some have aspired to the priesthood, an office everywhere carefully retained by the Brahmans, and so to whisper the sacred formula, perform sacrificial rites, and to officiate at the Homa, or burnt-offering." (Sherring's Tribes and Castes, Vol II)

† Indian Antiquary, Vol V. p 171

* Bombay Gazetteer, Vol XVIII Pt I p 185.

† पत्तनप्रभुओंके वर्तमान आचार-व्यवहार सम्बन्धका विस्तृत विवरण Bombay Gazetteer, Vol. XVIII, pt. I (Poona), p. 193-255 और हिन्दी विश्वकोशके 'पत्तनप्रभु' शब्दमें द्रष्टव्य है।

अभि कहा करते हैं—'पहले हम लोगोंके साथ पत्तनप्रभुको वा विवाह सम्बन्ध प्रचलित था।' अर्थात् उन्होंने पत्तनप्रभुवांसे मिलनेको कहा जो। पत्तनप्रभुकोने कहे अज्ञातोपकी भांति जोकार करते भी समाजमें प्रचल्य किया न था। उनका आचार व्यवहार और गठनादि पत्तनप्रभुको ही भांति लगता है। उनकी स्थिति भी मन्द नहीं। वह अतिदीर्घित संस्कारादि सम्पादन करते और ब्राह्मण व्यतीत परपत्र सङ्कल भातिकी अपेक्षा अपनेको बड़े समझते हैं। ब्राह्मणकी छोड़ दूसरी किसी भातिके हाथ ब्रह्मसमु पाकार नहीं करते। अष्टमई दशम वर्षके मध्य वह मुणको उपनयन देते हैं। हाठम दिन सूतायीच पहच किया जाता है। फिर त्रयोदश दिवस श्रुतके उद्येय आर किया सम्पन्न होता है। उपनयन, विवाह और आठ तीनों संस्कार महा समारोह और बहु व्ययके किये जाते हैं। विधवा-विवाह वा बहुविवाह उनके मध्य प्रचलित नहीं।*

सिन्धु, गुजरात और महाराष्ट्रमें ब्राह्मणप्रिय नामक आयस्य रहते हैं। सद्गाहिकछत्रमें पूर्वर्धमीय और चन्द्रर्धमीय प्रभु ही ब्राह्मणप्रिय नामके बर्णित हुये हैं। अथिक मध्य है कि पञ्चपति एवं कामपतिके अन्तानोंमें जो पैठनपत्तन प्रहवा अण्डक बाहुपादनमें रहते उन्हें "पत्तनप्रभु" और गुजरात, सिन्धु तथा कर्नाट प्रधति आनमिं जो रहते उन्हें "ब्राह्मणप्रिय" कहते हैं। कर्नाट और सिन्धु प्रदेशमें एक ब्राह्मणप्रिय किसी समय पति प्रकक पड़ गये थे। सिन्धु और कच्छ प्रदेशमें उन्होंने बहुकाल राजस्य किया। कच्छमें बहुकाल ब्राह्मणप्रियवांका वास है। वहां ब्राह्मणप्रिय कहा करते हैं—'परधरासकी परय आरथि जो पतिय आकरथा कर पडे थे, हम उनकी र्धयाकर हैं। सिन्धुप्रदेशमें हमारे पूर्वपुत्रवर्षेनि बहु काल राजस्य किया। विदेशी वरं भोगोंके हाथ

राज्यभक्त और विताङ्कित, जो उन्होंने विद्वन्नाथ देवीका आचर्य किया था। उन्हें देवीने दया करके उनकी बितने ही परिचार प्रदान किये।' * मन्वं-शियुमें जोकार किया है कि काठियावाड़ और कच्छ-प्रदेशमें शान्तिस्थापन तथा हृदिय यासलके प्रचारकास उक्त ब्राह्मणप्रिय र्धमीय सुन्दरको गिवाज्जोने कर्मक बाकर प्रभुतिको यथैह साहाय्य दिया था। पियवाकोके समय कोई कोई प्रभु जा कर उनसे मिल गये। जहां प्रभु आयस्योंका वास अथिच और ब्राह्मणप्रियोंको संख्या पच है, वहां उपपद्येकीके मध्य विवाह-सम्बन्ध हा जाता है।

बहुते दशमवर्षके मध्य वह पुत्रका उपनयन करते हैं। उनके विवाहका आचारादि वासिचात्सके ब्राह्मणकी भांति है। आन्वीय और अथिच्छके मरने पर दस दिनमात्र पर्योच पहच करके पीके आह-भोगादि करते हैं। अथिचांय अर्धमें ब्राह्मणप्रिय भतिभौपी और अथिचका वर्म पचाते हैं। वहाँ वहाँ उन्हें दोरोहिज करती भी देखा जाता है।

ब्राह्मणप्रिय देवर्धमें अथिचांय गुजराता ब्राह्मणों-केके होते हैं। मकक ही सुको, परिष्कत और पिधित हैं।

अवस्यक।

भारतवर्धमें अर्धैत बितने ही उपकायस्य मिलते हैं। आयस्यकीं शूद्रबन्धाके परब संतोममें उक्त मकक उपकायस्योंको उत्पत्ति है। उनके साथ प्रकत कायस्योंका कोई सामाजिक संघर नहीं। फिर भी अनेक उपकायस्य कायस्योंके निन्दावाद और मीच जातिल प्रतिपादन करनेकी चेष्टामें लग रहते हैं। उनको परया दिख कर वे अन्धवतः भोगमन वर्म यासलका वचन मठित और अमकाकर द्वारा सहर कायस्योंको व्यवसा निपिचक हुये है। माझेनी पालीचना करनेके समय पड़ेगा—भारतवर्धमें प्रकत कायस्य-समाजके हाथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं।

* गुजरातीके अन्वये वचु, वाच्य अन्वय-अपराधिका विरलच Bombay Gazetteer Vol. XVIII, pt. L. p. 185-192 में परया है।

* India Antiquary, Vol. V p. 171.

कायस्था (सं० स्त्री०) कायः तिष्ठति भनया, काय-स्था-
क । १ हरीतकी, डड । २ आमसकी, भावला ।
३ काकोली । ४ स्यूलैसा, बडी इलायची । ५ सूझेसा,
छोटी इलायची । ६ तुचसीवृक्ष । ७ सिन्दुवारवृक्ष,
संभालका पेड़ । ८ कायस्थ-स्त्रीजाति ।

कायस्थादिधूपन (सं० स्त्री०) धूपनविशेष, एक वफारा ।
हरीतकी, रासा, कटुकी, गुडूची, गुग्गुलु, चोरक
नामक गन्धद्रव्य, वाय्वाशक, वचा तथा कुछ बराबर
बराबर छाल वफारा लेनेसे शीतञ्चर छूट जाता है ।
फिर उक्त कल्ककी यवचार, लवण तथा काष्ठीकके साथ
यथाविधि पकाने और शरीरमें लगानेसे भी शीतञ्चर
शान्त होता है । (भावप्रकाश)

कायस्थाली (सं० स्त्री०) रक्तपाटल वृक्ष, लाल फूलका
एक पेड़ ।

कायस्थिका (सं० स्त्री०) काकोली ।

कायस्थैर्य (सं० स्त्री०) कायस्थ स्थैर्यम्, ६-तत् ।
१ रसायन औषधादि द्वारा शरीरकी स्थिरता, सुकव्वी
दवा खानेसे जिम्नकी मजबूती ।

काया (हिं० स्त्री०) शरीर, जिम्न ।

कायाकल्प (हिं० पु०) कायस्थैर्य, दवाके जोरसे
पुराने जिम्नकी नया बनानेकी तरकीब ।

कायाकायसम्बन्धसंयम (सं० पु०) काय और आकाशके
सम्बन्धका संयम, जिम्न और आसमानके लगावका
जवत् । इससे आकाशमें सोग उड़ सकते हैं ।

“कायाकाययोः सम्बन्धसंयमात्

उड्गुवसनापत्ते राकायगमनम् ।” (पातञ्जलम्)

कायान्नि (सं० पु०) कायस्थितो अग्निः, मध्यपदलो० ।
पाचकाग्नि, हज्म करनेकी ताकत ।

कायापटल (हिं० स्त्री०) १ कायपरिवर्तन, जिम्नकी
तबदीली । २ घोर परिवर्तन, बडा डेरफेर ।

कायिक (सं० त्रि०) कायेन निष्पादितः निर्बृत्तो वा,
काय-टक् । १ शरीर द्वारा निष्पादित, जिम्नसे किया
हुवा । २ शरीर द्वारा उत्पन्न, जिम्नसे निकला हुवा ।
३ शरीर सम्बन्धीय, जिसमानी ।

कायिका (सं० स्त्री०) कायेन कायिकव्यापारेण
निर्बृत्ता, काय-टक् । वृषभ प्रभृतिके कायिक परिश्रमसे

निष्पादित वृषि, बेल बगैरइकी मेहनतसे बदा किया
जानेवाला सूट ।

“दीर्घावाद्यसंयुता कायिका ससुदायता ।” (व्यास)

कायोटज (सं० पु०) पुत्रविशेष, एक बेटा । प्राजापत्य
विवाहसे उत्पन्न होनेवाले पुत्रको कायोटज कहते हैं ।
कायोत्सर्ग (सं० पु०) जैन अर्हत्की एक मूर्ति ।
यह वीतरागावस्थामें खड़ा रहता है ।

कार (सं० पु०) कृ-वञ् । १ वध, कृत् । २ निश्चय,
यकीन । (कं सुष्ठं ऋच्छति अनेन, क-ऋ-घञ्)
३ स्वामी, मानिक । ४ तुषारपर्वत, बरफका पहाड़ ।
५ करने या बनानेवाला । कोई कर्मपद पूर्व रहनेसे
'कार' शब्द कर्ता अर्थमें आता है, जैसे—स्वर्णकार,
कुम्भकार, कर्मकार इत्यादि । ६ क्रिया, काम । यौगिक
अर्थमें ही इसका प्रयोग पडता है, जैसे—उपकार,
चमत्कार । ७ अक्षरकी बतानेवाला । यह भी यौगिक
अर्थमें ही प्रयुक्त होता है, जैसे—अकार, ककार
इत्यादि । ८ पूजाका उपकरण, वस्ति ।

कार (फ्रा० पु०) कार्य, काम ।

कारक (सं० स्त्री०) क्रियाभिरन्वितं भाव्यमते करोति
क्रियां निर्धर्तयति, कृ कर्तरि खुल् । १ यमानो,
कटेया । २ वदर, वेर । ३ वर्षोपलोद्भव जल, भोलिका
पानी । ४ अवस्थाविशेष, हासत (Case) । क्रियाके
साथ सम्बन्धविशिष्ट अथवा क्रिया निष्पादकको
कारक कहते हैं । वैयाकरणमूषणके मतमें
क्रियाजनक शक्तिविशिष्टमात्र कारकपदवाच्य है ।
द्रव्यादिमें उक्त शक्ति रहना असम्भव है । फिर भी
शक्ति और शक्तिमान्का अमेद मानके द्रव्यादिमें
कारकत्वका व्यवहार होता है । कारक शब्दका
क्रियानिष्पादक अर्थ लगानेसे सकल कारक कर्तृकारक
ही जाते हैं । किन्तु व्यापारके मेदानुसार उनका
करणादि भेद मान लेना पडता है । मञ्जूषामें
कारकका भेद लिखा है,—

“कर्तुः कारकात्परिवर्तनव्यापारः । करपक्ष क्रियाजनकव्यवहित-
व्यापारः । क्रियाफलनिर्देशव्यवस्थाव्यापार्य कर्मणः ; कर्तृभ्रमंवावहित-
क्रियाधारव्यापारो भविकरत्तस्य । ईरसाधुमत्यादि व्यापारः सम्प्रदानस्य ।
भवविभावोपगमव्यापारो इपादानमेति ।”

पन्थ कारकके प्रवर्तनकारीको कर्तृकारक, जिया निष्पादनके विषयमें प्रति निश्चयपूर्ती कारणको कारण, जियाके उचित व्यापारविधिहको कर्म, कर्मकर्म ज्ञातीत अपर जियाकारकको कारण (जियाके आधार) को अधिकारक प्रेरक अनुमति प्रकृति व्यापारविधिहको सम्प्रदान और अधिक भावज्ञान विधिहको प्रपादान कहते हैं।

कारक एक प्रकारका है—कर्ता, कर्म, कारण, सम्प्रदान, प्रपादान 'एक अधिकारक। पश्चिमि ज्ञेयमें कर्मकारकका लक्षण है,—कर्मक कर्ता। वा १।१११५। कर्तात् जियामें ज्ञातकारको प्रकृत्यापर विवक्षित कारणक कर्ता कहता है। एक जोमेके कर्तामें प्रथमा और अनुष्ठ रश्मिमे कर्ताया विमलि नवती है। उसको जोड़ पन्थमे प्रथमा विमलि पाती है। यत्क—
 कर्मिपरिचर्येतिपरिचर्येतापरकर्मिपरिचर्येता। वा १।१११६। प्राति पक्षि पर्येमात्र, विष्णुमात्र, परिवापमात्र और संक्षामात्रमें प्रथमा विमलि होती है। भूयते—कर्मोपे वा १।१११७। पन्थको जिस शब्दके पदमें सम्प्रयोग बनया जाता, वह सम्प्रयोग कहता है। उनमें भी प्रथमा विमलि ही कहती है। कर्मकारकके लीला। वा १।१११८। अनुष्ठ कर्मकारक और कारणकारकमें कर्ताया विमलि पाती है।

कर्मका लक्षण है,—कर्तृत्विकर्मकर्म। वा १।१११९। कर्तात् कर्ता जियाके जिस ईक्षिततम पदार्थको जेना चाहता, उसोका नाम कर्म है। कर्मकर्म कर्मोपे। वा १।११२०। फिर जिया द्वारा ईक्षित पदार्थको प्राति जोड़े जेगोक्षित पदार्थ निष्पन्न होते मो कर्मको कर्मसंज्ञा पड़ती है। कर्मोपे वा १।११२१। प्रपादानादि द्वारा पवित्रचित कारण कर्मसंज्ञक होता है। पवित्रचित कर्मकर्मकर्मकर्मकर्मकर्मकर्मकर्म। वा १।११२२। प्रति बुद्धि और प्रकृत्यपान पर्यमें पवित्रचित कर्मका कर्ता विवक्षितकारकमें कर्म कहता है। कर्मोपे वा १।११२३। इ और एक चातुके पवित्रचितकारकका कर्ता विवक्षितकारकमें विवक्षये कर्मसंज्ञक होता है। कर्मोपे वा १।११२४। पक्षि पूर्वक मो, का और काव चातुके योगमें अधिकारकके कर्मसंज्ञा

होती है। कर्मोपे वा १।११२५। जमि और मो पूर्वक विष्णु चातुके योगमें मो अधिकारकको कर्म कहते हैं। जियो जियो कर्ममें जमिपार कर्मसंज्ञा एक विवि विवक्षय भागा गया है। कर्ता—
 कर्मोपे वा १।११२६। कर्मोपे वा १।११२७। उद्य, अनुष्ठ, पक्षि और पक्ष पूर्वक कर्म चातुको कर्मसंज्ञा है। कर्मोपे वा १।११२८। उपसर्गविधिह युक्त और हुक चातुके प्रयोगमें जिसके प्रति ज्ञोव पाता, वह कर्म कहता है।

कर्म तीन प्रकारका है—निष्ठ, विचार्य और प्राण्य। कर्मकारक एक जोमेके प्रथमा और अनुष्ठ कर्ममें द्वितीया विमलि लगती है। कर्मोपे वा १।११२९। अनुष्ठ कर्ममें द्वितीया विमलि पाती है। कर्मको जोड़ पन्थमे कर्मोंमें मो द्वितीया विमलि पड़ती है। कर्ता—कर्मोपे वा १।११३०। पन्थका और पन्थके शब्दके योगमें द्वितीया विमलि लगती है। कर्मोपे वा १।११३१। कर्म और प्रवचनीय संज्ञाविधिह शब्दके योगमें द्वितीया विमलि कर्ताया है। कर्मोपे वा १।११३२। कर्मोपे वा १।११३३। कर्मकारक एवं प्रवचनक शब्दके साथ युक्त, जिया और प्रवचन निरन्तर सम्बन्ध सम्बन्ध पड़नेसे मो द्वितीया पाती है।

कारकका लक्षण है—कारककर्म कारणम्। वा १।११३४। जियासिद्धि विषयमें जो प्रधान उपकारक होता, उसोको कारण का है। कर्मोपे वा १।११३५। द्विष्णु चातुके साथ कारणको कर्म और कारण सम्य संज्ञा होती है। कर्मोपे वा १।११३६। अनुष्ठ कर्मकारक और कारणके कर्ताया विमलि लगती है। कर्मको जोड़ पन्थ कर्मोंमें मो कर्ताया विमलि पाती है। कर्ता,—कर्मोपे वा १।११३७। पक्ष्यासिद्धि पक्ष्यासिद्धि काव और पक्ष्यासिद्धि शब्दका निरन्तर सम्बन्ध होने पर कर्ताया विमलि लगती है। कर्मोपे वा १।११३८। कर्ताय शब्दके योगसे प्रथमान पक्ष्यासिद्धि कर्ताया विमलि होती है। कर्ताय शब्दके विवक्षा रहते मो कर्ताया विमलि कर्ताया है। कर्म, कर्ताय और कर्म कर्ताय शब्द है। कर्मोपे वा १।११३९।

पा १।१।१०। जिस विकृत अङ्ग द्वारा शरीरीका विकार देख पड़ता, उसी अङ्गविशेषमें तृतीयाका प्रयोग चलता है। इत्यङ्गुलकचर्च। पा १।१।११। जिस चिह्न द्वारा कोई रूपान्तर लक्षित होता, उसमें तृतीया विभक्तिका प्रयोग पड़ता है। म'मोन्वतरस्यां कर्मणि। पा १।१।१२। संपूर्वक आ धातुके योगमें विकल्पसे तृतीया होती है। इती। पा १।१।१३। फलसाधनयोग्य पदार्थमें तृतीया आती है।

सम्प्रदानका लक्षण है—कर्मणा यमभिधेति स सम्प्रदानम्। पा १।१।१४। जिसके उद्देशसे दानकार्य सम्पादित होता, उसीकी सम्प्रदान मंज्ञा है। इच्छांता प्रीयमाण। पा १।१।१५। रुचि अर्थबोधक धातुके प्रयोगमें प्रीयमाण अर्थात् प्रीतिवालीकी सम्प्रदान मंज्ञा होती है। शण्ड्, च्यागर्वा प्रीयमाणम्। पा १।१।१६। ज्ञाघ, ङ, स्या और शप् धातुके प्रयोगमें उनके अर्थ अनुभवकारककी सम्प्रदान मंज्ञा पड़ती है। धारेरुत्तमर्त्। पा १।१।१७। लिजस्त घृ धातुके प्रयोगमें उत्तमर्गकी सम्प्रदान मंज्ञा होती है। स्युङ्गोच्छित्तम्। पा १।१।१८। स्युङ्ग धातुके प्रयोगमें अभीष्ट पदार्थकी सम्प्रदान मंज्ञा है। कुषट्ठेय्यांमृयाणां च प्रति कोपः। पा १।१।१९। क्रोध, अपकार, ईर्ष्या और असूया अर्थके प्रयोगमें जिसके प्रति क्रोध आता, वही सम्प्रदान कहता है। किन्तु उपसर्गविशिष्ट होनेसे उसे कर्म कहते हैं। राधीचोर्द्वय विप्रश्च। पा १।१।२०। राघ और ईक्ष धातुके प्रयोगमें जिसके सम्बन्ध पर शमाशुभ प्रश्न किया जाता, वही सम्प्रदान कहता है। प्रत्यात्मां न्यु प्रथं कर्ता। पा १।१।२१। प्रति और आङ् पूर्वक न्यु धातुके प्रयोगमें पूर्ववर्ती प्रवर्तन व्यापारका जो कर्ता रहता, उसका नाम सम्प्रदान पड़ता है। अनुप्रतिग्यन्च। पा १।१।२२। अनु और प्रति पूर्वक गृ धातुके प्रयोगमें प्रवर्तन-व्यापारकी कर्ताकी सम्प्रदान मंज्ञा होती है। परिक्रम्ये सम्प्रदानमन्वतरस्याम्। पा १।१।२३। जिसके द्वारा नियत कासके लिये अधिकार सधता, विकल्पसे उसका सम्प्रदान नाम पड़ता है। अनुपूर्णे सम्प्रदाने। पा १।१।२४। सम्प्रदान अर्थमें चतुर्थी विभक्ति होती है। अन्यान्य स्थलमें भी चतुर्थी विभक्तिका विधान है, यथा—क्रियासोपपद्य च कर्मणि स्यादिति। पा १।१।२५। क्रिया-

वाचक उपपदविशिष्ट अप्रयुक्त तुमन् अर्थके कर्ममें चतुर्थी चलती है। तुमर्थं मावचचनात्। पा १।१।२६। तुमर्थ प्रयोगमें और भाववचनार्थमें विहित प्रत्ययके प्रयोगमें चतुर्थी आती है। नमः नमि सादा स्वधात् उपयोगाच्च। पा १।१।२७। नमि, स्वाहा, स्वधा, पलं और वपट् शब्दके योगमें चतुर्थी लगती है। मन्वकर्म च्छनादने विभाषाऽप्राप्तिः। पा १।१।२८। मन धातुके अनादर अर्थ गम्यमानमें प्राणिव्रतीत अन्य कर्म पद पर विकल्पसे चतुर्थी विभक्ति नगति है। फिर विकल्प पक्षमें द्वितीया विभक्ति आती है। नम्यं कर्मणि द्वितीया-चतुर्थी चेटापामनचर्चि। पा १।१।२९। गत्वर्थ धातुके कायकृत वरापार अर्थमें अथ भिन्न कर्मस्यन पर द्वितीया और चतुर्थी विभक्ति होती हैं। उसको छोड़ तादर्थ्य अर्थ, कृप धातुके अर्थ, सम्प्रदान अर्थ, उत्पातके द्वारा प्राप्त विषय और हित शब्दके योगमें भी चतुर्थी विभक्ति लगती है।

अपादानका लक्षण है,—प्रु म्मसायेऽपादानम्। पा १।१।३०। विशेष विषयमें अवधीभूत कारककी अपादान मंज्ञा होती है। नीतापांता मयदेष्ट। पा १।१।३१। भयार्थ और रणार्थ धातुके प्रयोगमें भयहेतुकी अपादान मंज्ञा ठहरती है। पराङ्गरेमीत्। पा १।१।३२। परा पूर्वक लि धातुके प्रयोगमें असङ्ग अर्थकी अपादान मंज्ञा है। वारपायांतामीषित्तम्। पा १।१।३३। वारणाथं धातुके प्रयोगमें ऐंसित विषयकी अपादान मंज्ञा लगती है। चत्तर्षीयिना-दनेननिच्छति। पा १।१।३४। व्यवधान रहते जिसके द्वारा अपने अदर्शनकी इच्छा की जाती, उसकी अपादान मंज्ञा आती है। चाक्यातीपयोने। पा १।१।३५। यद्यारीति अध्वयन अर्थमें जो वक्ता रहता, उसका नाम अपादान पड़ता है। अजिक्ठुः प्रकृतिः। पा १।१।३६। जन धातुके प्रयोगमें उत्पत्तिकारणकी अपादान मंज्ञा होती है। ध्व, प्रमन् पा १।१।३७। प्रपूर्वक भू धातुके प्रयोगमें उत्पत्ति कारणकी अपादान मंज्ञा है। अपादाने पचमी। पा १।१।३८। अपादान कारकमें पचमी विभक्ति लगती है। उसको छोड़ अन्य स्थलोंमें भी पचमी विभक्ति होती है। यथा—चन्वासादिवरते दिक् मन्वाच्चारपदाजादि युक्ते। पा १।१।३९। अन्य, आरात्, इतर, ऋते, दिक्, अक्षूत्तर, आङ्

पातञ्जल-दर्शनमें कारण नौ प्रकारसे विभक्त है,—

“उत्पत्तिश्चिन्मिव्यञ्जिविकारप्रथयाद्यतः ।
वियोगान्तरधृतयः कारणं नवधा स्मृतम् ॥”

(पातञ्जल २।२८ सूत्रमात्र)

कारण नौ प्रकारका है—उत्पत्ति, स्थिति, अभिव्यक्ति (प्रकाश), विकार, ज्ञान, प्राप्ति, विच्छेद, अन्यत्व और धारण। कार्यके भेदसे उक्त नवविध कारणकी विभिन्नता देख पड़ती है। यथा—उत्पत्ति ज्ञानका कारण मन, शरीरकी स्मृतिका कारण आहार, रूपकी अभिव्यक्तिका कारण आलोक, पचनीय वस्तुके विकारका कारण अग्नि, अग्निके प्रत्यय (ज्ञान) का कारण घूमज्ञान और विकारकी प्राप्तिका कारण योगाङ्गानुष्ठान है।

योगाङ्गका अनुष्ठान ही अशुद्धिके वियोगका कारण, वस्तुकारी सुवर्णकार कुण्डलरूप सुवर्णका अन्यत्व कारण और ईश्वर इस जगत् तथा इन्द्रिय-समूह शरीरकी धृतिका कारण है।

चार्वाकोंके कथनानुसार कारण नामका कोई पदार्थ नहीं होता। कारणके सम्बन्ध व्यतिरेक ही सब पदार्थ उत्पन्न होते हैं। वस्तुतः उसकी बात असंगत है। यदि कारणका अस्तित्व न रहते भी कार्यकी उत्पत्ति चलती, तो कार्यकी सर्वदा विद्यमानता उपलब्धि हो सकती है। जिस प्रकार सृष्टिकादि समुदय मिलनेसे घट बनता, उसी प्रकार उसके पूर्व भी घट बन सकता है। फिर कारणका अस्तित्व न माननेसे परधिस-गत संशयादि दूर करनेके मनसे शब्दका प्रयोगादि भी निष्फल हो जायेगा। जिस वस्तुके न रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता लाभ करनेमें कठिनता उठते किंवा जिस वस्तुके रहनेसे जिस वस्तुकी विद्यमानता पाते, पण्डित उस वस्तुकी उसी वस्तुका कारण बताते हैं। सृष्टिकाका अभाव होनेसे घटकी विद्यमानता नहीं और सृष्टिका रहनेसे घटकी विद्यमानता होती है। उसीसे सृष्टिका घटका कारण ठहरती है। कारण न रहनेसे सब वस्तु नित्य हो सकते हैं। उसीसे चार्वाकोंको भी कारण

नामक पदार्थ अवश्य मानना चाहिये। कथाद् प्रकृति दार्शनिक परमाणुकी सावयव जगत्का उपादान (समवायि-कारण) बताते हैं। उनके मतमें परमाणु सकल परस्पर संयुक्त होनेसे एक एक महदवयवी उत्पन्न होता है। किन्तु वैदान्तिक उसे नहीं मानते और कथादके मत पर दीप लगाते हैं—निरवयव परमाणुमें कभी ऐकदेशिक संयोग नहीं हो सकता। जिस वस्तुका कोई अवयव नहीं, उसका एकदेश होना असम्भव है। सुतरां उसमें आरोप्यावृत्ति (ऐकदेशिक) संयोग कैसे लग सकता है। उक्त सिद्धान्त ठहर जानेसे परमाणुके संयोगका होना असम्भव है। फिर परस्पर संयुक्त परमाणुसे महदवयवी कार्यकी उत्पत्ति भी नहीं हो सकती। सुतरां कार्य समुदय अज्ञान द्वारा परब्रह्ममें कल्पित-जैसा मानना पड़ेगा। रज्जुमें सर्पकी भांति ब्रह्ममें भी अज्ञान द्वारा कार्य-समूहकी कल्पना की जाता है। रज्जुविषयक ज्ञान द्वारा अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे जैसे कल्पित सर्प देख नहीं पड़ता, वैसे ही ब्रह्मज्ञानसे तदीय अज्ञानकी निवृत्ति होनेसे समुदय जगत्का प्रपञ्च मिटा करता है। जगत्की कल्पनामें ब्रह्म अविष्ठान है। उसीसे वैदान्तिक ब्रह्मकी जगत्का उपादान (समवायो) बताते हैं।

सांख्यके मतमें सत्व-रजः-तमोगुणात्मिका प्रकृति ही मूल कारण है। उसमें भी वैदान्तिकोंके कथनानुसार चेतनका साहाय्य न मिलने पर अचेतन प्रकृतिसे कैसे कार्यकी उत्पत्ति हो सकती है। सुतरां सांख्यवादियोंका प्रकृति-कारणवाद भ्रममूलक अनुभूत होता है।

नैयायिक पारिमाण्य (अणुपरिमाण) को कारण नहीं मानते। उनके मतानुसार परिमाणमात्र स्वसमान जातीय समूहक परिमाणका कारण है। अर्थात् जिस परिमाणसे जा परिमाण उपजिगा, वही उत्पन्न परिमाण कारणोभूत परिमाणसे उत्कृष्टतर निकलेगा। जैसे तन्तुपरिमाणसे समुत्पन्न वस्त्रपरिमाण तन्तुपरिमाणकी अपेक्षा उत्कृष्टतर होता है। अणुपरिमाणको किसी परिमाणका कारण मानने पर

अधुपरिमाचते उत्पन्न परिमाच -अधुपरिमाचको
 अपेक्षा छोटा कन प्रकृता है। जैसे मण्डू परिमाच
 अथ परिमाचकारचोभूत परिमाचको अपेक्षा मण्डुतर
 रवत्त, वैसे ही अधुपरिमाचकन्य परिमाच मी
 अधुतर उचरता है।

साधारण और असाधारण भेदही आरव्य को
 प्रकारका होता है। ईश्वरीश्ला, काक, पाङ्कज, उद्योग
 और प्राग्भाव कई साधारण वर्णात् उत्पन्न कार्यही
 आरव्य है। उसीसे उर्ध्व साधारण आरव्य कहते हैं।
 फिर जो विश्विय वारोही आरव्य देखाते, वह असा
 धारव्य आरव्य कहते हैं। जैसे पाङ्कजकी प्रति
 पाम्बोध है। पाङ्कजोय शिबल पाङ्कजकी उत्पत्तिसे
 ही कारण है, अण्डजकी उत्पत्तिसे नहीं। सुतरां
 वज्र बीज वज्र कुचके असाधारण आरव्य सिद्ध हुये।

- २ साधन, नसीबा। यह नैयायिकोंका मत है।
- ३ अर्थ, काम। ४ आरव्य, आरव्यवार्त्। ५ अथ अण्डज।
- ६ पादि, सूत्र, गुरु, अङ्ग। ७ प्रसाच अधुत।
- ८ अन्द्रिय। ९ धरोर, निष्क। १० ईत, अण्डज।
- ११ अङ्ग, मण्डुत्त। १२ अन्तरिक्षिय, कोई वाता।
- १३ मध्यपानविधिय, एक अण्डजकोर। तास्मिन्
 तन्मातुषार पूजादि अर मध्यपान करते हैं। उक्तका
 नाम आरव्य है। १४ आणक, वातय। १५ वायुविधिय,
 कोई वाता। १६ मानविधिय, किसी निष्कका माता।
- १७ विष्णु। १८ मित्र।

आरव्यक (सं० लो०) आरव्यीय, आरव्य कार्यं कम् ।
 आरव्य सबव। यह अण्ड योनिक पदके अन्तर्ग
 थाता है।

आरव्यकारव्य (सं० लो०) आरव्यज आरव्यम् ६ तत् ।
 १ आरव्यका आरव्य सबव उत्सु सबवः। यह मी पांच
 प्रकारके अण्ड्यासिद्धमें पड़ता है। जैसे पुत्रके अण्ड
 विश्वमें इसका पितामह है। पुत्रके अण्डका आरव्य
 पिता और पिताके अण्डका आरव्य पितामह होता
 है।—सुतरां पितामह आरव्यका आरव्य उचरते मी
 पुत्रके प्रति अण्ड्यासिद्ध है। २ परमियर। ३ प्रयोजक,
 अंभविधाता।

"अण्डजकालक अण्डजवर्त्तनी लोकोत्थम् अण्डज" (५४०)

आरव्यमत (सं० लि०) आरव्यं मण्डुति प्राप्नोति, आरव्य-
 मम-अ। आरव्यक, सबव पर लुगवर्त्तित या मोक्ष, पु।
 आरव्यगुच (सं० पु०) आरव्यस्य गुचः, ६ तत् ।
 अण्डान आरव्यका गुच, उचरता इत्यर्थः। यही
 आणके गुचका उत्पादक है,—

"आणकस्य आण्डव्यगतस्ये" (५४१)

आरव्यका गुच ही कार्यके गुचको अण्ड्य करता
 है। जैसे कप आरव्यका गुच अण्ड्य प्रभृति वर्षे अण्ड-
 कप कार्यका मी अण्ड अण्ड्यादि अण्ड उत्पादन
 करता है।

आरव्यगुचपूर्वकत्त (सं० लो०) आरव्यगुचः पूर्वे यज
 तज्ज मारः, अ। आरव्यको गुचविग्रहितता, सबवके
 अण्ड रक्षिको वाक्यतः।

आरव्यगुचोत्पन्नगुचत्त (सं० लो०) आरव्यगुचिन उत्पन्नो
 यो गुचः तज्ज भावः, अ। आरव्यके गुचके निकसे
 गुचका अर्थ सबवके अण्डसे पैदा अण्डका काम।
 आणयाजमें इसका अण्ड अण्ड प्रकार विद्विष्ट है,—

"आणवत्तमप्यतिगण्डकनरीउचरकजोडगुचमण्यदि। एषकव का-
 यस्मिन्नि काण्डकन्यका य का कयिष्याउचरकविषये अण्डवत्तमण्यम् ।"

आरव्यगुचोद्भव (सं० पु०) आरव्यगुचिन उद्भवो यज्ज,
 बहुव्री०। अण्डान आरव्यके गुचके उत्पन्न एक गुच।

आरव्यगुचोद्भवगुच (सं० पु०) आरव्यगुचोद्भववाती
 गुचावति, अर्भवा०। आरव्यगुचकात् गुच, सबवके
 अण्डके निकसा अण्ड। भावापरिच्छेदमें आरव्यके
 गुचके निकसे गुच सिद्धे हैं—अण्ड, रत, मण्ड-
 अण्डान अण्ड्यं, उचरता, अण्ड अण्ड, गुचत्त एकत्त,
 उचरत्त, परिमाच और जितिकरणय संधार।

आरव्यकत्त (सं० लो०) आरव्यकयं ककम्। ब्रह्माण्डकी
 सृष्टिका आरव्यकण्डय अण्ड, दुनियाकी पैदा अर्भवाका
 पानी। अण्डयान्ने ब्रह्माण्डकी सृष्टिके पूर्व शिबल अण्ड
 बनाया था। फिर उसमें शिबल अण्डके ब्रह्माण्डकी
 सृष्टिकी।

"अण्ड अण्डयोरी यज्ज यीजताकण्यम्" (५४१)

आरव्यता (सं० लो०) आरव्यज भावः, आरव्य तत् ।
 ईतता, तदर्थोय, आरव्यका अर्थः।

कारणत्व (सं० स्त्री०) कारण-त्व । हेतुता, तसबीब,
कारणका धर्म ।

“कारणत्वं भवेत्यल ।” (भाषापरिच्छेद)

कारणध्वंस (सं० पु०) कारणस्य ध्वंसः, ६-तत् ।
कारणका नाश, सबवका ज़वाल । समवायी और
असमवायी कारणका ध्वंस होनेसे कार्य भी मिट
जाता है, परन्तु निमित्त कारणके ध्वंससे कार्यध्वंस
नहीं आता ।

कारणध्वंसक (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति,
कारण-ध्वंस-युक्त्वा । कारणध्वंसकारक, सबवका
मिटानेवाला ।

कारणध्वंसी (सं० त्रि०) कारणं ध्वंसते नाशयति,
कारण-ध्वंस-यिनि । कारणनाशक, सबवको बरबाद
करनेवाला ।

कारणनाश (सं० पु०) कारणस्य नाशः, ६-तत् ।
कारणका विनाश, सबवकी बरबादी ।

कारणनाशक (सं० त्रि०) : कारणस्य नाशकः, कारण-
नाश-यिच्-युक्त्वा । कारणको नाश करनेवाला, जो
सबावको मिटाता हो ।

कारणभूत (सं० त्रि०) कारणं भूयते येन, कारण-भू-त्वा ।
कारणस्वरूप, वायस बना हुआ ।

कारणमात्रा (सं० स्त्री०) अलङ्कारशास्त्रोक्त एक धर्या-
सङ्कार ।

“परं परं प्रति यदा पूर्वपूर्वस्य हेतुता ।

तदाकारणमात्रा स्यात्—” (साहित्यदर्पण)

‘पर पर के प्रति होत जइ पूर्व पूर्व को हेत ।

कारणमात्रा नाम तइ अतुर सुपखित हेत ॥’

पूर्व पूर्व वाक्य अपने पर परवर्ती वाक्यका हेतु
होनेसे कारणमात्रा अलङ्कार लगता है । जैसे—!

“सुतं ज्ञतपियां सङ्गात् जायते विनयः सुतात् ।

शोकानुरागो विनयस्य किं शोकानुरागतः ॥”

‘पखितको सवसङ्ग बिधी श्रुतिमानको होत प्रभाव अपारा ॥’

मानसो लो अमिमान मिटे घर आवति मानि अपने क प्रभारा ॥

राम जकीन सुमानिके भावत शोकनकी अनुराग पसारा ।

शोकनके अनुरागको होत कथा न कही मरलियः संभारा ॥१४’ :

यहां पखितका सङ्ग, भाषाज्ञान, विनय और

शोकानुराग यथाक्रम अपने पर पर वाक्यका कारण
रहनेसे कारणमात्रा अलङ्कार होता है ।

कारणवादी (सं० पु०) कारणं वदति, कारण-वद्-यिनि ।
१ सकल विषयमें कारणको स्त्रीकार करनेवाला, जो
सब बातोंमें सबवका मानता हो । २ मुद्दे, गिफायत
करनेवाला ।

कारणवारि (सं० स्त्री०) कारणस्वरूपं वारि, मध्व-
पदमो० । ब्रह्माण्डकी सृष्टिका कारणस्वरूप एकार्णव
जल, असली पानी ।

कारणविहीन (सं० त्रि०) कारणरहित, बेसबब ।

कारणशरीर (सं० स्त्री०) कारणं अविद्या मेघ शरीरम्,
कर्मधा० । सत्वप्रधान अज्ञान, इसके रहनेकी जगह ।
सृष्टिकाल पर जो ओवगत अज्ञान अङ्कारादि
शरीरोत्पादक पदार्थके संस्कारभावमें अवगिष्ट रहता,
वेदान्तमतसे उसीका नाम ‘कारणशरीर’ पडता है ।
इसका संस्कृत पर्याय—आनन्दमय कोप और
सृष्टि है ।

कारणा (सं० स्त्री०) कारणति हिंसयति, छ-श्चिच्-
युच्-टाप् । आसन्नो दुष् । पा ३।१।०। १ यातना,
तकलीफ । २ गाढ़ वेदना, गहरा दर्द । ३ नरक-
यन्त्रणा, दोज़खकी तकलीफ ।

कारणान्वित (सं० त्रि०) हेतुयुक्त, सबव रखनेवाला ।
कारणभाव (सं० पु०) कारणस्य अभावः, ६-तत् ।
कारणका अभाव, सबवकी अटममौजूदगी ।

कारणिक (सं० त्रि०) कारणैः कारणैर्वा चरति, कारण-
वा कारण-ठक् । चरति । पा ३।३।०। १ परीक्षक, जांच
करनेवाला । (कारणस्य इदम्, कारण-ठक् चिठ् वा)
२ कारणसम्बन्धीय ।

कारणोत्तर (सं० स्त्री०) कारणेन उत्तरम्, ३ तत् ।
असामान्य उत्तर, खास बहस । विचारस्वरूपमें
वादीकी बात सख मानते भी जो उत्तर प्रतिकूल
कारण देखा कर दिया जाता, वही ‘कारणोत्तर’
कहाता है । इसका संस्कृत नामान्तर प्रत्यवस्कन्दन
है । कारणोत्तर तीन प्रकारका होता है—बलवत्,
तुल्यबल और दुर्बल । बलवत् यथा,—‘बाइबिल में
आपसे सी रुपये कर्ज लिये थे, किन्तु आपको बह दे

दिये।' तुल्यवच यथा,—'वादीनि कथा—मैं पुत्रवातु
 क्रमवै इव कुमोन्को दक्षव करी पायां हं, इव विपै
 वच मीरो है।' प्रतिवादीनि उत्तर दिवा,—'मैं मी
 पुत्रवातुक्रमवै इव कुमोन्को दक्षव करी पाया हं
 इव विपै यव मीरो है। पुत्रवच यथा,—'वादीनि कथा—
 मैं यव कुमोन् पुत्रवातुक्रमवै दक्षव करी पाया हं इव
 विपै यव मीरो है। प्रतिवादीनि उत्तर दिवा,—'मैं दय
 वचैवै यव कुमोन् दक्षव करी पाया हं, इव विपै
 यव मीरो है।' (अवगतवच)

आरक्षोपाधि (सं० पु०) ईश्वर ।

आरक्षव (सं० पु०) आरक्ष्यं वाति पववा आरक्ष्य
 इदं आरक्ष्यं तदाकारं वाति, आरक्ष्य-वा-व । अर्थः-
 वचः । वा १५५ । १ ईश्वरिण्य, कोरै वतव । २ शोच
 वरव कृष्यवर्ष पची, लम्बे पेरवाकी काकी
 दरवाकी विदिया ।

आरक्ष्यवती (सं० स्त्री०) आरक्ष्यव ईश्वरिण्यः पट्टि
 पयाम्, आरक्ष्यव मतुप-कोप् मय्य वः । नदीविमिव
 एक दया । इवमै ईश्वर वृत्त रचते है ।

आरक्ष्यवृद्ध (सं० पु०) १ कोरै शोच । २ शोचोका
 कोरै माय ।

आरक्षु (सं० पु०) टोंडा, एक कच्ची नली
 (Cartridge) । इवमै मोकी द्वारा पीर वाक्य मरते
 है । आरक्षुकी एक पोर डोपी लगती है ।

आरक्ष (सं० पु०) १ आरक्ष, लवव । (स्त्री०) २ कवच,
 रचम ।

आरक्षि (सं० स्त्री०) Cornice) प्राकार्योर्ष, बीका,
 र्धमनी कवर ।

आरक्षी (सं० पु०) १ ईश्वर, प्रेरक । २ मित्त,
 मीदिया ।

आरक्ष्य (सं० पु०) अरक्ष्यमय्य अरक्ष्यम्, अरक्ष्यम
 पव । १ अरक्ष्यम रावाके पुत्र कवीरिद्वि (अरक्ष्यमय्य
 योत्रापयम्) २ अरक्ष्यमके दीम मय्य । (स्त्री०)
 ३ नारीतीर्थ विमिव पीरतीका कोरै तीर्थ । महाभारतमै
 एक तीर्थकी कल्पति कथा लिखी है,—'वर्जुनको तीर्थ
 -क्षमवके सम्य तपस्विनेमि अय्यव, योमह, दीकोम,
 आरक्ष्यम पीर नारदाव पांच तीर्थ दिवाके है । वर्जुनमै

उन तीर्थकी अलगूय देव अविरोधि इववा आरक्ष
 पूवा । उनमै कथा कि उन पांचो तीर्थमै अरक्ष
 अन्तुका पयाम् उर वा, लकीके कोरै उनमै अतरता न
 रवा । अरक्षु न यव वाक्य पुनके एक तीर्थमै अतर पड़े ।
 अथो अमय अरक्षान्तुमै उनका पाददेय पकड़ा वा ।
 विन्तु वच लसरी न डरे । फिर अन्मै अरक्षयोनके
 कुषीरको तीरमै अचोअन विवा । अरक्ष कुषीर तीरमै
 ललित होति है अरक्षो नारीको मूर्ति बन मया ।
 अरक्षु नमै अरक्ष देव मितान्ता विवायवचार कपडे पूजा
 —अरक्ष बीन वा, अथो अरक्ष प्रचार कुषीरमूर्तिमै अरक्ष
 मय्य रचता वा । नारी अन्मै उत्तर देके अन्मै कि
 अरक्ष पयरा थीं । किलो अमय अरक्ष अयमो चार
 अरक्षयोके काव अन्नायव जातो थीं । राक्षमै अन्मै एक
 कपयान् ब्राह्मव जुनकको तपया करी दिवा । फिर
 यव उनको तपया मङ्ग करनीको नाचने-गाने लयो ।
 ब्राह्मयमै अरक्षे क्रुध हो अमियाप दिया वा —'तुम
 पांचो अरक्षान्तु बन विरवाव अरक्षमै विवरव करो ।'
 अन्मै अरक्ष अमियाप पुनके रोते रोते अन्मै अमा
 यामो । अन्मै कथा अरक्ष अरक्ष कुषीरकपडे किलो
 पुत्रवको पकड़ेंमै, तमो यापतुव हो अयमै पूर्ष अरक्षो
 पनुवेमो । फिर अरक्ष विन अन्नाययोमै अरक्षान्तुकपडे
 रक्षेंमै, अरक्ष नारीतीर्थ नामके पवित्र तीर्थको अन्नाति-
 काम करेती । ब्राह्मयके एक वाक्यके अरक्षिद्वि
 पाण्डवा हो अरक्ष विन्ता करती थीं—'अन्मै कुषीरकप
 आरक्ष कर कथा अरक्षान्ता करना पड़ेम, अरक्ष
 सुत्रिआरक्ष पुत्रवका दर्शन मिक्षिगा । अथो अमय
 देवर्षि नारदमै अरक्ष पट्ट व अरक्ष पांचो अन्ता उनको
 बतवै कथा या कि अम दिगमै हो अरक्षु न अरक्ष पट्टव
 उनको सुत्र कर देमै । अथो पायाके अरक्ष अरक्ष अरक्ष
 एक अन्नाययमै रचतो थीं । फिर नारीमै अरक्ष,
 अथो अरक्षु नमै अरक्षयके अन्मै सुत्रि पावो, वेके हो
 अरक्ष उनको चारो अरक्षोको भी अरक्षयपूर्वक सुत्र
 करके अरक्षत करतै । अरक्षु नमै अरक्षयार अरक्ष अरक्ष
 इरै चार तीर्थके अरक्षयोको सुत्र दिवा ।

(अरक्ष, अर्थ ११० व०)

आरक्ष्यमो (सं० पु०) अरक्ष्य अरक्ष्यं तं अरक्षि,

कारष्वा-इनि पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कांस्यकार, कसेरा। २ धातुपरीचक, मादनयात जाननेवाला।

कारपचन (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। यह यमुनाके निकट अवस्थित है।

कारपरदाज (फ्रा० वि०) कर्मचारी, कारगुजार।

कारपरदाजी (फ्रा० स्त्री०) कार्यकी सखासना, कारगुजारी।

कारबन (अ० पु० Carbon) अद्भार, कोयला। यह एक भौतिक पदार्थ है। प्रकृतपदमें कारबन कोई धातु नहीं। सम्पूर्ण सकरण मित्यणमें यह अधिकांश पाया जाता है। कारबन दहनशील है। यह दग्ध काष्ठका अधोभाग बनाता और खनिज अद्भारमें बहुत रजग जाता है। अपनी विशुद्ध स्फटिकरूप घनीभूत स्थितिमें कारबन हीरा होता है। एक परिमाणशील स्फटिकमें यह समग्र विदित पदार्थसे कठिन है। कारबन सीसेमें अधिक पड़च जाता, चट्टु देखाता और पत्राकार पाता है। पाक्विजनके साथ मिलने पर यह कारबोनिक एसिड (कोयलेका तेजाव) और कारबोनिक ओक्साइड (कोयलेका लुब्धलुवाव) बनाता है। हाइड्रोजन (पानीकी हवा) के साथ इसका संयोग लगने पर कई पानीकी हवायें तैयार होती हैं। उनमें प्रकाश करनेकी एक असाधारण गैस (वायु) है।

कारबोनिक (अं० वि० Carbonic) अद्भारसम्बन्धीय, कोयलेके सुताक्षिक। कोयलेके तेजावकी कारबोनिक एसिड (Carbonic-acid) और कोयलेके तेजावकी हवाकी कारबोनिक एसिड, गैस (Carbonic-acid-gas) कहते हैं।

कारबोलिक (अं० वि० Carbolic) १ अद्भारके सर्ज-रससे सम्बन्ध रखनेवाला, जो अक्षकतरेसे सरोकार रखता हो। (पु०) २ पदार्थविशेष, एक चीज। यह अक्षकतरेसे निकलता है। कारबोलिक फोडा फुनसी और खुजलीकी कीड़े मार देता है। इससे तेल और सावुन भी बनाते हैं।

कारबोलिक एसिड (अ० पु० Carbolic acid) तैल-मय द्रवविशेष, एक तैलिया अक्षक। यह वर्षाविहीन

रहता और खाया जानेसे सुखमें जलन उत्पन्न करता है। कारबोलिक एसिड अक्षकतरेसे बनाया जाता है।

कारभ (सं० त्रि०) करभस्य इदम्, करभ-अण्। १ इन्दिशावक-सम्बन्धीय, हाथीके बच्चेके सुताक्षिक। २ उद्भसम्बन्धीय, कंटसे सरोकार रखनेवाला।

कारभ (कंटका) दुग्ध रुक्ष, उष्णवीर्य, किष्कित् लवण एवं स्वादुरस, सप्त और शोथ, गुल्म, उदर, अर्श, कुष्ठ, कृमि तथा विपरीगनाशक है। कंटके दूधका दही ईपत् चाररस, गुरु, भेदकारक, पाकमें कटुरस और वायु, अर्श, कृमि तथा उदररोग पर हितकारक होता है। कारभ छत पाकमें कटुरस, अग्निदीपक और कफ, वायु, कुष्ठ, गुल्म, उदर, शोथ, कृमि तथा विपरीगनाशक है। उद्भका मूल शोथ, कुष्ठ, उदर, उष्माद, वायु, कृमि और अर्शनाशक होता है। (सप्त)

कारभू (सं० स्त्री०) कर एष कारः तस्य भूः, इ-तत्। करको भूमि, सगानकी जमीन्। जिस भूमि पर राजकर लगता, उसका नाम 'कारभू' पड़ता है।

कारमिहिका (सं० स्त्री०) कारं जनसम्बन्ध मेहति, कार-मिह-क स्तार्थे कन्-टाप् अत इत्वं यद्वा कारस्व तुपारग्रेलस्य मिहिका मोहार एव, उपमि०। कपूर्, कपूर।

कारम्भा (सं० स्त्री०) कु ईपत् रम्भा इव, कोः कादिभ्यः। मियद्गु, एक खुशबूदार वेल।

कारयत् (सं० त्रि०) करनेकी शक्ति वा अधिकार देनेवाला, जो कराता हो।

कारयमाण (सं० त्रि०) नियत कार्य करनेवाला, हुक्म बजानेवाला।

कारयितव्य (सं० त्रि०) कृ-षिच्-तव्य। करानेके उपयुक्त, जो कराने लायक हो।

कारयितव्यदत्त (सं० त्रि०) क्रिया जाने लायक, काम करनेमें होशियार।

कारयिता (सं० त्रि०) कारयति, कृ-षिच्-ट्च्। करानेवाला, दूसरेकी काममें लगानेवाला।

कारयिष्णु (सं० त्रि०) कृ-षिच्-इष्णुच्। कारयिता, करानेवाला।

काररवाड़ (ज्वां प्रो०) १ काय, काम । २ कर्मक्षता, कामका बनाना । ३ प्रबल, तदवीर ।

कारर (६० पु०) का प्रति रवो यत्न कुम्भितो रवो यत्न वा, बहुशो० । काय शोभा ।

काररको (सं० प्रो०) कारा इतस्ततो विचिता बहो यत्ना, बहुशो० । १ पुत्र काररैकक लरेषी । यह तिष्ठ बन्ध, दीनग, पीर कष्ट, वात परोपक तथा रक्षदोष नाशक है । (चरनियत्) इसका पत्र हिम, मेदी, लड्डु तिष्ठ, वातन पीर वित्त रत्न कामका, पायु कष्ट, शैव तथा क्षमिको दूर करने-वाला होता है । (वर्णन) २ कट्टुशुद्धि, करेना ।

कारवा (ज्वां पु०) यात्रिणीका समूह, सुसाधिका कृष्ण । यह एक दिग्दि द्वादरे देयको जाता है । इसके ठहरनेको जगह 'कारवा मराय' कहानी है ।

कारवाड़—बम्बई प्रान्तके पन्नागत उत्तर कनाड़ेका प्रधान नगर । यह पचा० १४ ५० ४० पीर दिग्मा० ७४ १४ पु० पर अवस्थित है । कोकसंख्या साढ़े तीरह हजारके अधिक होगी । कारवाड़ एक बन्दर है । इस बन्दरके सामने उपसागरमें धनेज कोठे कोठे होय हैं । उन्हें कछरीको शौचालो कहते हैं । इनमें एकका नाम दिवमड़ है । दिवमड़में एक पानीक बरह बना है । समुद्रके १३० हाथ लंबे उसको धम्मिदिगा प्रकाशित होती है । यह पानीक १२ योथवे दिख पड़ता है । मरके दूध बहाव उन्न पानीक दिख प्रमथ प्रकते कि बन्दर दूर नहीं । तदनुसार लो पीर प्रहाव परिचालित होते हैं ।

कारवाड़के उपकुलके टारं शेष दक्षिण पश्चिम समुद्रके गर्भमें पश्चिमीय नामक एक छोटा होय है । उसमें पोतनोत्रिका उपनिवेश है । प्रति पक्ष दिन दूधे बह नगर बना था । पहली बर्षा शीतप्रभा रई । १८८२ ई० की कनाड़ेका उत्तरपक्षक बम्बई प्रान्तके पन्नागत हुआ । लो समयमें कारवाड़को उपनिवेश प्रारम्भ है । पाकबल उपको म्यनिष्ठ पकिटोंके प्रयोग ८ घाम है ।

सुराना कारवाड़ नये कारवाड़के टिड कोस पूर्व जाको नदीके तीर अवस्थित था । पहले बर्षा

वाचिबन्धा विरचय पादुमौर रहा पीर बस काम विरचपुरके पन्नागत था । कारवाड़के देवाई प्रवात्त खानिके तज्जानकायक विरचपुरके प्रधान कर्मचारी मति जाति है । १९१८ ई० की बर्षा पंमरीकोको कोट्टेन बन्धमोने वाचिबन्ध प्रारम्भ किया । उसके लोम बहुषो पक्षधर्मि प्रायः १० हजार लुनाके बगाके पक्षके पक्षके सुसहमानो कपड़े बनना रतनी करते थे । इसाबरी, दाकचीनो, शोठ पीर दहाको नामक नीले रंगका कपड़ बर्षाके बाहरभेजा जाता था । १९१९ ई० की मकाराहाविपति विवाजीने पहले पंमरीक विपिकोंसे (१९२०) ६० यत्न बधन किया । फिर १९०१ ई० की कारवाड़के पीकदारने पंमरीको को कोठे पर भावा मारा । दूसरे बन्दर लन्हीने नगरकनाबा था, किन्तु पंमरीको कारखानेको हाथ न सवाया । बर्ष पंमरीक पश्चिमविपिके प्रति यत्न भी लिया गया । लन्ही पीके विवाजीने भी पंमरीकोको सताया न था । किन्तु लानीय प्रभुकोके अत्याचारसे १९०९ ई० की पंमरीक पपनी कोठी बडा से गडे । तोन बय पीके फिर पंमरीकनि कोठी खोल कार्य प्रारम्भ किया । दो बर्ष पीके १९०४ ई० की एक विधम काष्ठ हुआ । विनायको कनाड़के विनायको नाविक किन्तुनके मदेयो शोरनी लगी । यह किन्तुनके सहा न गया । पंमरीकोको कोठे लन्हीको किन्तुनके चेडा को यो । उद्येय प्रतापकोके श्रेय माम शोठका पंमरीको म्यबनाय कारवाड़के लन्हीके सिधे शोचन्दाक विदेय चेडित हुये किन्तु लतकाय हो न सके । १९८० ई० की मकाराहोने कारवाड़में लूट-मार करके पंमरीकोका विदेय धनिए किया था । १९११ ई० की नगरका पुरातन दुर्ग गिरा सान्तावि पतिने सदाशिवमड़ नामक एक दुर्ग बनाया । फिर वह पंमरीको पर पन्नाचार करने लगी । लन्ही बहाव कर १९२० ई० की पंमरीकोमें पपनी कोठी लठा हासी । १९२० ई० की बर फिर का पड़ु है । किन्तु दो बर्ष पीके यो 'नीलनि रचतरो ना सदाशिवमड़ दखन किया था । लन्ही पीके कारवाड़का वाचिबन्ध पूर्वरीतिसे लन्ही हाको बसा गया । लोसे पंमरीकोने पपना कारवार लठा दिया था ।

कारवारि (सं० स्त्री०) करकालक, चोलेका पानी । यह विगद, गुरु, रुच, स्थिर, घन, कफकारक, वातन, अतिशीत और पित्तविनाशक होता है । (चिकित्सक)

कारवी (सं० स्त्री०) कारं श्रवति, क हिंसायां स्वार्थे णिच्-क्विप्-पञ्च-अण्-डोष् । १ मधुरिका, सोंफ । २ कृष्णजीरक, कालाजीरा । ३ तेजपत्र । ४ गुडत्वक् । ५ शताह्वा, सतावर । ६ अजमोटा । ७ चन्द्रशूर । ८ मेथिका, मेथी । ९ सूक्ष्म कृष्णजीरक, पतला काला जीरा । १० हिङ्गपत्ती । ११ छुद्रकारवेला, छोटी करेली । १२ स्त्रीजाति काक, मादा कौवा ।

कारवीर्य (सं० त्रि०) कारवीरेण निर्वृत्तः, करवीर-टञ् संख्यादित्वात् । करवीरसे उत्पन्न, कनेरसे निकला हुआ ।

कारवेक्ष (सं० पुं०-स्त्री०) कारेण वातगमनेन वेक्षति चनति, कार-वेक्ष अच् । १ स्वनामख्यात फलशाकसता, करेलीकी वेल । इसका संस्कृत पर्याय—कठिल है । भावप्रकाशके मतसे यह शीतल, भेदक, मधु, तिक्तारस, और च्चर, पित्त, कफ, रक्त, पाण्डु, मेह तथा कृमिरोगनाशक होता है । २ छुद्र कारवेक्ष, छोटा करेला । इसका संस्कृत पर्याय—कठिलक, सुशवी, सुपवी, कण्डुर, काण्डकटुक, सुकाण्ड, उग्रकाण्ड, कठिल, नासासंवेदन और पट्ट है । राजवल्लभके मतानुसार इसका पुष्प धारक और कृमि तथा पित्तरोगमें हितकारक है । फल रुचिकर और शुक्र, कफ तथा पित्तनाशक है । करेला देखो ।

कारवेक्षक (सं० पुं०-स्त्री०) कारवेक्ष एव स्वार्थे कन् । करेला ।

कारवेक्षिका (सं० स्त्री०) कारवेक्षक-टाप् अत इत्वम् । छुद्र कारवेक्ष, छोटा करेला ।

कारवेक्षी (सं० स्त्री०) कारवेक्ष प्रत्यर्थे ङीष् । छुद्र कारवेक्ष, करेली ।

कार्व्य (वै० त्रि०) कार् (गायक) सम्बन्धीय अघर्ष-वेदका एक मन्त्र । कषायभेद, एक काटा । कृष्णजीरक, कृष्ण, एरण्डमूल, जयन्ती, शुण्ठी, गुडूची, दशमूल, शटी, कर्कटशुद्धी, दुरानभा, भार्गी तथा पुनर्णवा भाठ भाठ रत्ति ३२ तोले गोमूत्रमें पकाने

और ८ तोले शीप रहते उतारनेसे यह तैयार होता है । इसका सेवन अभिन्यासचरमें रोगोक्ती लाभदायक है । (भैषज्यशास्त्र)

कारमाज (फ्रा० वि०) कार्य संभासनेवाला, जो विगहा काम बनाता हो ।

कारसाजी (फ्रा० स्त्री०) १ कार्यसम्पादन, कामका संभाल । २ छल, फुरेड, धोका ।

कारस्कर (सं० पुं०) कारं वधं करोति, छ-ट । श्व गण्डिण्याट्टोमेड । पा १।१।२० । १ कुपीलुष्ट, इसका संस्कृत पर्याय—किम्पाक, विपतिन्दु, करदुम, रम्यफल, कुशील और कालकूट है । राजनिघण्टुके मतसे यह कट्ट, तिक्तारस, उष्णवीर्य और कुष्ठ, वायु, रक्त, कण्डू, कफ, अर्श तथा व्रणनाशक है । २ वृषसामान्य ।

कारस्कराटिका (सं० स्त्री०) कारस्कर इव अटति, कारस्कर-अट्-खुल् टाप् अत इत्वम् । कर्णजस्त्रिका, कानसनाई ।

कारस्तानी (फ्रा० स्त्री०) १ प्रयत्न, तदवीर । २ छल, धोका ।

कारा (सं० स्त्री०) कीर्यते चिप्यते दण्डार्थं यस्याम् । क-अड्-गुणः दीर्घत्वं निपातनात् । अदमोऽणि गुफः । पा ०।१।११ । १ कारागार, कैदखाना । इसका संस्कृत पर्याय—बन्धनान्तय और वधाङ्क है । २ दूती । ३ वीणाका अधःस्थित धरु काष्ठ सितारके नोचिकी टेट्टी लकड़ी । ४ सुवर्णकारिका, सोनारिन । ५ बन्धन, कैदा । ७ पोड़ा, तकलीफ । ८ अष्ट, आभाज । ९ दुःख, दर्द ।

कारा (हिं० वि०) कृष्णवर्ण. काला ।

कारा—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेकी मिराथू तहसीलका एक नगर । वह अक्षां २५° ४१' ५५" तथा देशां ८१° २४' २१" पू० पर इलाहाबाद नगरसे २० कोस उत्तरपश्चिम गङ्गाकी दक्षिण दिक् पर्वस्थित है । लोकसंख्या षड् हजारसे अधिक है । युक्तप्रदेशके ६ प्रधान तार्थीमें एक यह भी है । वहां कालेखरव्या मन्दिर बना है । उसीसे उसका एक नाम काल नगर है । पुरातन ताम्रशासनमें कालखल नामसे

उसका उद्देश्य है। फिर उसकी सर्वोत्कृष्ट नगरभी कहते हैं। अथगानुसार विष्णुब्रह्मदेव स्थापित हो सतीदीवीके आरका एक रथम बर्हा गिरा था। सुचलमान परिवाराब्रह्म वरुन वसुताके पथमें उद्य तोर्यकी बात सिखी गयो है। पाबाद मायके लक्ष्य पथमें प्राय असाधिक लोग आरा का गङ्गाधाम करते हैं।

वहाँ एक प्रति पुरातन दुर्ग है। वरु ठीक गङ्गा पर अवस्थित है। पारसल उसका मन्दिरमा है। दुर्ग देव्य एव मन्दिरमें माय ३०० और १२० हाथ होमा। वसत् १०८३ विजयमायके (१०३३ ई०) राजा ययोपालकी कितनी भी सुद्रा मिकी है। सुतरा निर्देश्य करना दुःसाध्य है कि—दुर्ग फिर भी कितनी दिनका पुराता है। किसी किसीके अथगानु सार कथीके राजा जयचन्द्रने उरै बनाया था।

दुर्गमें निम्नभागके बाजार घाट पर एक मन्दिर देन पड़ता है। उसकी चारो ओर बहुतरप या दासान है। उसमें दुर्गकी मस्तकमूय एक मूर्ति पडो है। किसी स्थान पर एक मिवनिष्ठ और स्नानागारमें नदीकी मूर्ति है। सध्वरत सुचलमानोंने जो उस मन्दिरको बह दगा की होगी घाटके निकट एक झुप है। उसकी चारो ओर स्नानागार मीनार उठे है।

सुचलमानोंने भी बहुतसे इमारतें वहाँ देख पड़ती हैं। उनमें श्रीराका अवरध्यान, जामा मसजिद, देव सुस्तानका रोजा बगैरह प्रबान है। निकट जो दारागनरकी एक मसजिद और दो अवर स्थान अचदरिया गाँवके कुतुब खालमका हावा और शाहजादापुरके पञ्जादाद पान्की मसजिद भी देखने योग्य है।

पथमें उक्त नगर बहुत मसजिदानी और विष्णुन था। गङ्गाकी पवित्र दिक्ष उसकी लंबाई एक बीज और चौड़ाई पाच बीज रही। पुरातन नगरका मन्दाबर्दिय पात्र भी देन पड़ता है। पूर्व उक्त कान पर नुदमदेयका प्रबान नगर था। हिन्दु मन्दाट पक्षर इनाहादादकी प्रबान नगर उठा है नरै। उथीसे आराकी मसजिद नष्ट हुई।

आरा नगर सुचलमानोंने पथके रितिवाधिय बटनाशेके निये भी प्रसिद्ध है। पथके नगर पापक उद्-दीवाने कारिके पथके पथके भवन तोड़े थे। फिर उनीका सामान से बाहर नबावने लखनऊमें पपती इमारतें बनायीं।

आरामें बहिया अरबल बनता है। बर्हा नामा विध मन्दादि भी उत्पन्न होता है। आरिका आगक भी पुराव नहीं। पयोजा और पतेहपुरके साथ अथके काम्जु और और पनाजका आरवार चकता है।

आरामार (सं० ज्यो०) आरा एव आमार आराये बन्धनाव वा पागारम्। बन्धनपट्ट केदवाना।

आरागुप्त (सं० ज्यो०) आराया बन्धनागार गुप्त ३६, ०-तत्। आरावह केहो।

आरापट्ट (सं० ज्यो०) आरा एव पट्टे काराये बन्धनाव वा पट्टम्। आरागार, केदवाना, शिख।

आरायोला—विहार प्रान्तके पुरनिया जिलेका एक गाँव। वरु पचा० २३ २३ ३० प्रोर दिया० ८० ३० ३३ ५० पर अवस्थित है। उत्तरवर्द्धमें एक निकलनेसे पडसे कोम आरागोलकी राह की दार जिलिष्ठ जाति है। पात्रकल भी आरावयस्य और आरागोलके बीच अहाड्ड (श्रीमार) चकता है। हिन्दु आरागोलके सामने देन पड़ जातिसे बर्वाकास व्यतीत पारोहीको एक बीज दूर की उत्तार देते हैं। वहाँ एक बड़ा मिला जगता है। पडसे यही मिला मागल पुर बिलेके ओरपैती स्थानमें होता था। फिर कुछ समय तक मिला पुरनियामें रचत, १८५१ ई० के आरा गोलमें जमने जमा। वहाँ दरमहाके मजारारको कुछ बानुआमय मूमि पडो, जो मिलाका स्थान बने है। १० दिन प्रसवाम रचतो है। बिलने की दुकांने जमतो है। नामा प्रचारके ऐयमी खनी तथा सुतो बरु, मोहद्वय और प्रयोजनोप वसु विकसि है। नेदाकी सुरी, सुसानो, कुकरी, बैल, खबर जागु ओर टहू जाति है। मेलमें कोई तीस बालीम इजार जागु पाते होंगे।

आराधुनी (सं० ज्यो०) आरापथः मन्दस्य पाहुनी

उत्पादिका, ६-तत् । शब्दोत्पादक शब्द प्रभृति, एक वाजा ।

कारापथ (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क । इस देशके शासनकर्ता लक्ष्मणपुत्र श्रद्ध और चन्द्रकेतु थे ।

“अदं चन्द्रकेतुश्च लक्ष्मणोऽप्यात्मभयम् ।

शासनान् रघुनाथस्य चक्रौ कारापथेश्वरो ॥” (रघुवंश १५।१०)

कारापान्त (सं० पु०) कारां कारागारं पालयति रचति, कारा-पान्त-अच् । कारागार-रचक, कौद-खानिका मुहाफिज् ।

काराभू (सं० स्त्री०) कारायै बन्धनाय भूः स्थानम् । बन्धनस्थान, कौदकी जगह ।

कारायिका (सं० स्त्री०) कं जलं आराति विचरण-स्थानत्वेन गृह्णाति, क-आ-रा-खुल्-टाप् इत्वश्च । १ सारसी, मादा सारस । २ बलाका, मादा बगला ।

कारावर (सं० पु०) चर्मकार जातिविशेष, एक चमार निपादके औरस और वैदेही स्त्रीके गर्भसे यह जाति उत्पन्न है ।

“कारावरो निषादास्तु चर्मकारः प्रच्यते ।” (मनु १०।१६)

कारावास (सं० पु०) कारायां वासः, ७-तत् । कारा-गृहमें रह रहनेकी स्थिति, कौद ।

कारावैश्व (सं० स्त्री०) कारा एव काराय वा वैश्व गृहम् । कारागार, कौदखाना, जेल ।

काराष्ट्र (सं० पु०) १ कराष्ट्रदेशीय ब्राह्मण । २ कराष्ट्र देश । महाभारतमें यह करहाटक नामसे उल्लेख है । वर्तमान नाम कराहड़ है । कराष्ट्र देखो ।

कारि (सं० स्त्री०) क्रियते असां, क इच् । विमापास्याम-परिप्रश्नकोरिष्च । पा ३।३।१ । १ क्रिया, फल, काम । (त्रि०) करोति, क-इच् । कृषदोषां काव्यु । उप् ३।२८ । २ शिल्पी, कारीगर ।

कारिक (सं० स्त्री०) कारि स्वार्थं कन् । क्रिया, काम । कारिक (द्वि० स्त्री०) खरकूत, करघेजी एक चिकनी लकड़ी । यह तानेकी ठीक करती है ।

कारिक (अ० पु०) कुरकी करनिवाला ।

कारिकर (सं० त्रि०) कारिं क्रियां शिल्पकर्म इति यावत् करोति, कारि-कृ ट । शिल्पकारक, कारीगर ।

कारिकरी (सं० स्त्री०) कारिकर-डीप् । शिल्प-कारिणी, कारीगर औरत ।

कारिका (सं० स्त्री०) करोतीति, क-खुल्-टाप् अत इत्वम् । १ अभिनेत्री, नटिनी । २ क्रिया, काम । ३ विवरण, तफ्सील । ४ श्लोक, शेर । ५ शिल्प, कारीगरी । ६ यातना, तकलीफ़ । ७ वृद्धि, सूद । ८ कण्टकारी, कटैया । ९ बहु अर्थबोधक अल्प अक्षर, विशिष्ट कविता, एक गायत्री । इसमें थोड़ेसे बड़ा मतलब निकालते हैं । १० कर्वी, करनेवाली । ११ मर्यादा, हद । १२ एक सहीर्ष रागिणी ।

कारिकाल—करमण्डल उपकूलका फरासीसी उपनिवेश और नगर । तामिल भाषामें इसे ‘कारिखाल’ अर्थात् मछलाका नाला कहते हैं । इसके उत्तरपश्चिम एवं दक्षिण तञ्जौर राज्य और पूर्व बङ्गोपसागर है । कारिकाल प्रदेशमें कोई ११० ग्राम विद्यमान हैं । लोकासंख्या ८१ हजारसे अधिक है । कावेरी नदी पांच सुद हो कर वहांसे सागरमें जा गिरी है । उक्त प्रदेशके प्रधान नगरका भी नाम कारिकाल है । वह अक्षा० १०° ५५' १०" उ० और देशा० ७८° ५२' २०" पू० पर समुद्रसे कोई पौन कोस दूर अवस्थित है । सिंहलद्वीपके साथ कारिकालका बारहो मास चावलका वाणिज्य चलता है । उसको छोड़ आण्डामान द्वीप और फरासीके साथ भी वाणिज्य होता है । वहासे नाना स्थानोंकी भारतीय कुसी भेजी जाती है । कारिकाल बन्दरमें एक भालोकण्ड है । वह समुद्रसे २२ हाथ ऊपर स्थापित है ।

१७३६ ई० की फरासीसियोंने कारिकाल जा एक दुर्ग निर्माण किया था । अल्पकाल पीछे ही राजासे फरासीसियोंका विवाद उपस्थित हुआ । १७४४ ई० की ५ वीं अपरिलकी तञ्जौरराजने ससेन्य कारिकाल पर आक्रमण किया था । किन्तु १७४८ ई० की २१ वीं दिसम्बरकी उन्हीं कारिकाल और तत्संलग्न ८१ ग्राम फरासीसियोंके दे डाले । १७६० ई० की अंगरेज-सेनाने कारिकाल घेरा था । फरासीसियोंने दस दिन अनवरत युद्ध किया अंतमें ५ वीं अपरिलकी अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया । उसके पीछे फिर कारिकाल तीन बार अंगरेजोंके हाथ लगा । १८१७ ई० की १४ वीं जनवरीको उक्त स्थान सर्वदाके

निधि परासोमियोंको नौव दिया गया। पाक भी बड़ा परासोमियोंका पचिकार है। भारतमें उनका प्रधान काम मुन्दिषीरी है। उद्योगी गजपतरकी एक भागमें कारिकायका भागनकार्य निर्वाहित होता है। पाक भी बड़ा परासोमियोंकी साधारण तन्त्र प्रया प्रचलित है। म्युनिजिपाल कोन्सिलको छोड़ बड़ा एक दूसरी समा भी है। उद्ये लोकन कीचिम बरत है। उद्येमें नगरक प्रनिमपबिटीके पचिकार म्युतेत मूमने बिपमोंको भी पासोचना होती है। उद्येको छोड़ दूसरी भी एक समा है। उद्येका नाम जौनम जनरल (Consul General) है। मुन्दिषीरीमें उद्येका पचिकार होता है। उद्येमें भारतके प्रमोके परासोमोंके पचिकार आनके प्रतिनिधि सेके जाते हैं। प्रतिनिधि पचिकार प्रमोके निर्वाचित होते हैं। उद्येको छोड़ परासोमको शिनेट और डिप्यटी समामें एक एक भारतीय प्रतिनिधि रहता है। बड़े प्रतिनिधि भारतको प्रका शारा निर्वाचन होते हैं। कारिकायके पचिकार, पूत विभाग और शक्तिरकाके विभागमें एक एक बर्ता (Chief) रहता है। भारतीय पचिकार गवरनेमैण्डका भी एक पचिकार प्रतिनिधि कारि काममें निवास करता है।

कारिख (हिं० खी०) १ कामिमा प्यारो, कासापन। २ कचनम कात्रक। ३ कचक चन्ना। कारिखी (सं० खी०) करोति, कचिनि-काय। पचना कार्य निष्पादन करनीवाकी खी, जो पीरत पचना काम कर डालती हो। कारित (सं० खि०) कचिन् कर्मचिन्त। १ पच्य द्वारा सम्पादित कराया हुआ। (खी०) २ बिबा विधिय, सुताहो उल्-सुताहो। कारित (हिं० पु०) काटनेल। कारिता (सं० खी०) कारित डाय। पचिक कचि, प्यादा सु।

“कचिकेन क वा इति-दिना कचकीणिता।
 कचकचकचक चिन् कचकचकचक च कचिया इ” (पिता-शेड)
 पायत् कारुमें कचकी कचि जो पचिक सु देना
 कीकार करता, उद्येका नाम कारिता है।

कारिताय (सं० खि०) पचिकमें कारित, जिया रचने
 याना, कचिके पचोरीमें सुताहो-इल्-सुताहो रचि।
 कारी (सं० पु०) करोति कचिनि। कारक, कर्ता,
 करनीवाका। यह द्योमिक मन्दिषी पचिकमें पाता है।
 कारी (सं० खी०) कचिनि कचिनि कचिनि केव,
 कचिन् कचिन्। कचिनिमप्यात सुपचिकेव, एक पचि।
 यह कचिन्कारो पीर पाकसंकारी भेदके दो प्रकारकी
 होती है। इसका संकृत पर्याय—कारिका, कार्या,
 गिरिका पीर कचिन्कारिका है। राजनिष्पत्तिके मतमें
 यह कचिन्को एवं भेदके, पित्तनायक, पचिकरचक, मच
 रोयक, कचिकारक कचिन्कोचक पीर भारी होती है।
 कारी (जा० खि०) बातक, गहरा मर्मभेदी।
 कारी (हिं०) कचिन् कचिन्।
 कारीगर (जा० पु०) १ मिको कारीकरी करनीवाका,
 जो कचिके काम बनाता हो। (खि०) २ मिपुच,
 पुनरमन्ड।
 कारीकरी (जा० खी०) १ मिक, कचिके काम।
 २ रचना, बनावट।
 कारीकरी (हिं० खी०) कचिन्कोरक, कचिन्कोरी।
 कारीर (सं० खी०) करीरक पचिक, करीर पचि।
 पचिकमेंनीना। पचिकमेंनीना। १ करीर पचि, करीरका
 पचि। २ करीरपुच, करीरका पचि। करीरका
 पचि कट, पाहो, लच, कचिक, कचिककचि,
 कचिन् कचिके तका बातनायक है पीर पुच
 भेदी, कटक, कचिककचि, पित्तक, कचिक, कचिक,
 मच एवं पचिक होता है। (केचिककचिन्)
 (खि०) २ बंधाहुर निमित्त, बंधकी कचिके बना
 हुआ। ३ करीरकचिककचिक, करीरके कचिके पीरकार
 रचिकेवाका।
 कारीर (सं० खी०) कार (सं० कचिन् कचिन्, क
 चिन् कचिन्) कचिकके ईरयति, कार ईट् पचि-कील्।
 कचिके कचिके कचिके कचिके कचिके कचिके।
 कारीर (सं० खी०) करीरक पचिक, करीर पचि।
 १ कारीर, बंधकी कचिके वा कचिके। (खि०) २ करीर-
 कचिककचिके, करीरके कचिके करीरक रचिकेवाका।
 कारीर (सं० खी०) करीरक पचिक, करीर पचि।

१ करोषधम्बूह, कर्ष या गोवरका टेर। (त्रि०)
 २ करोषसे उत्पन्न होनेवाला जो गोवरसे निकला हो।
 कारौषि (सं० पु०) १ ध्यक्त्विशेष, कौर्षि शब्दम्।
 २ वंशविशेष, एक खान्दान या घराना।
 कार (सं० पु०) करोति, क्त-उष्। (कृषापाणिनिवदिमाध्यय-
 उट्ट। उट्ट१।) १ विश्वकर्मा, (भावे उष्) २ शिल्प,
 कारोगरी। ३ शिल्पी, दस्तकार। ४ कवि, गायर,
 वड़ाई करनेवाला (त्रि०) ५ वननिवासा। ६ भया
 यद्, स्त्रीफनाक।
 कारुक (सं० त्रि०) कारु स्वार्थे कन्। १ शिल्पी, काम
 वनानेवाला। (पु०) २ कर्मरङ्ग हस्त, कमरुष्का पेड़।
 कारुककर्म (सं० स्त्री०) मृपकार मर्म, ववर्चीपन।
 कारुचौर (सं० पु०) कारुणा शिल्पेन चौरयति, कारु-
 चुर-प्रच्। सन्विचौर, सेंध लगानेवाला चौर।
 कारुज (सं० पु०) कं कर्त्तुं कारुजति, का-आ-रुज क।
 १ करभ, हाथीका बन्धा। २ फेन, भाग। ३ क्लृप्त,
 चीटीका टीला। ४ नागकेशर। ५ गैरिक, नीरु।
 (कारुतो जायते, कारु-जन-उ) ६ शिल्पिनिर्मित चित्र,
 कारीगरकी बनायी तसवीर। ७ शरीरमें स्त्रः
 तिलकी भांति काला काना निकलनेवाला चिह्न।
 तिलकानक शब्दी।
 कारुणक (सं० त्रि०) करुणायां शौचमस्य, करुणा-
 ठक्। दयाल, मेहरबान्।
 कारुणिक (सं० स्त्री०) कारुण्ये स्वार्थे कन्-टाप्,
 ङ्लस्य। जलौका, लौक।
 कारुण्डी (सं० स्त्री०) कुत्सिता ईषत् वा रुण्डी मूर्ध्व-
 हीन इव कोः कादेशः। जलौका लौक।
 कारुण्य (सं० स्त्री०) कारुण्यस्य भावः करुणा एव वा,
 करुणा-प्यञ्। करुणा, मेहरबानी। स्वार्थं छोट
 दूधरेके दुःख निवारणकी इच्छाका नाम कारुण्य है।
 कारुण्यसागर (सं० पु०) च्चरतिसारका एक रस,
 बोखारके दस्तौकी एक दवा। पारिका भस्म (भस्म न
 मिननेसे शुद्ध पारा) १ तोला, गन्धक २ तोला तथा
 चम्प २ तोला सप्यपतलमें घोट और मृत्तराजके रसमें
 पिस प्रचर काल बालुका यन्त्र वा मृत्कपर्पटमें पकाते
 हैं। फिर यवचार, सर्जिचार, सोहागा, विट, सेस्त्र,

मौचर, सांभर, करकचलवण, त्रिकट्ट (मोठ, मिर्च,
 पीपल), चीतेनी जड, विप, जैरा और विडङ्ग सबका
 ५ तोला कल्प लाननेसे यह औषध बनता है।

(रसिद्धसारपंथ)

कारुप (सं० पु०) करुपस्य राजा। १ करुप देशके
 अधिपति, दन्तवक्र। (करुपोऽभिजन एवाम्) करुप-
 देशवासी। इस प्रथमें यह शब्द नित्य बहुवचनान्त
 रहता है। ३ मनुके पुत्र।

कारुपक (सं० त्रि०) कारुप-स्वार्थे कन्। १ करुप-
 देशवासी। (पु०) २ करुपदेशके राजा। सर कनिष्काम-
 के मतसे वर्तमान गाहावाद जिला ही प्राचीन करुप-
 देश है।

कारुन् (अ० पु०) १ हजूरत मूसके चचेरे भ्राता।
 यह बड़े धनी थे, परन्तु कभी खैरात न करते थे।
 इनके खजानेकी चावियां चाक्रीस खुद्दरो पर चनती
 थीं। (वि०) २ कृपण, गरीब अथवा धनराशिकी
 'कारुन्का खजाना' कहते हैं।

कारुनी (हिं० पु०) अश्वविशेष, किसी विष्मका घोडा।
 कारुरा (अ० पु०) १ कं कनी शोशी। इनमें रोगीका मूत्र
 रख वैद्यकी देखते हैं। २ मूत्र, पैगाव। ३ वारुटकी
 कुष्पी। यह जन्माकर शत्रुपर चलायी जाती है।

कारुप (सं० पु०) करुपस्य राजा, करुप-पण्। १ करुप
 देशके राजा। २ करुपदेशवासी। ३ एक जाति।
 ब्राह्म वैश्यकी सवर्ण स्त्रीसे यह जाति उत्पन्न हुयी है।

"वेद्यात् गु षायते प्राप्तात् सुधन्वाचार्य एव च।

कारुपय विशन्ना च रैव, सात्वत एव च॥" (मनु १०।१२)

कारुप्य (सं० पु०) करुपस्य राजा, करुप प्यञ्। १ करुपके
 राजा दन्तवक्र। (स्त्री०) २ नेत्रमल, सांखका मैल।
 कारेणव (सं० त्रि०) करेणोरिदम्, करेणु-अण्। इस्ति-
 सम्बन्धीय, हाथीसे सरोकार रखनेवाला। हथिनीका
 दूध ईषत् कषाययुक्त मधुर रस, बलकारक और
 गुरुपाक है। हाथीका दधि—कषाययुक्त मधुर रस और
 मन्मथकारक होता है। कारेणव-घृत मन्मथरोगक,
 तिष्ठरस, अग्निकर, मधु और कफ, कुष्ठ, विषरोग तथा
 क्षमिनागक है। मूत्र ईषत् तिलयुक्त लवणरस, मादक,
 वायुनाशक, पित्तवर्द्धक और तोषण है।

कारियुपाधि (सं० पु०) कारियुपासक पपत्यम्, कारियुपासक इत्य् । इष्टिप्राप्तकालात् पुत्र, महावतका कङ्कवा । कारि, कर्म इत्यो ।
 कारिक (सं० स्त्री०) १ कारिका, धारो । २ भूमिकी कारिका, सूर्यो की कारिका । ३ कासा काका ।
 कारोत्तर (सं० पु०) १ सुरा हाननेको साधो । २ सुरा मच्छ, मरावका भाग ।
 कारोत्तम (सं० पु०) कारिय सुरायामुत्तम उत्तम । सुरामच्छ मरावका भाग ।
 कारोत्तर (सं० पु०) कारिय सुरायामुत्तमियया उत्तरति, कार-उत्त् कृ पर । १ सुरामच्छ, मरावका भाग । २ रूप, सुधा । ३ रसादि निर्मित पात्र चिह्नम् ।
 कारोदार (धा० पु०) कामवात्र, सैव सेन ।
 कार्क (सं० पु० Clerk) एक इच्छको लक्ष, सिपी पीढ़को हार । इसका बाह पत्रमत्त कहु होता है । इसकी डाह बनाकर मोतमनें कमाते हैं । यह कोन पोर पोतनामनें पबित्र कल्प कोना है । इच्छ इ-पीठ तक बढ़ता है । लक्ष्मी सुखता २ इच्छ परमत्त रहती है । लक्ष उत्तर हींदी कार काह कर्ष पीछे फिर निवृत्त पातो है । हथ काई छिद्र ही र्क्ष होता है ।
 कार्कंड (सं० पु०) कर्कंडइय, कर्कंडीक ।
 कार्कंडक, कर्कंड इत्यो ।
 कार्कंडिलव (सं० स्त्री०) कर्कंडीना निवासोऽय, कर्कंड-पद्म् । कोष । का० पु० । कर्कंडु पसीका निवास लक्ष, एषा चिह्निको रहने की जगह ।
 कार्ष (सं० स्त्री०) कर्षपय इदम्, लक्ष पद्म् । १ कर्षपयि कर्मभ्यो, एक चिह्निके सरोदार रक्षनेवाका । २ कर्मिभ्यो, कौटुके ताहुक रक्षने वाका । ३ कर्षक बाहुविद्यैव कर्मभ्यो, कर्मिकी बिपी कर्षी करोकार रक्षनेवाका । (पु०) इ वन कुहट, बंगलो सुरगा ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्ष्ण्यना विहार पवयवी वा, कर्ष्ण्य पद्म् । कर्मिभ्यो का० पु० । कर्ष्ण्य कर्मभ्यो, कर्ष्ण्येव सरोदार रक्षनेवाका ।

कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो इदम्, कर्मभ्यो-इत् । कर्मभ्यो का० पु० । कर्मभ्यो कर्मभ्यो, गिरगिरी ताहुक रक्षनेवाका ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो इदम्, कर्मभ्यो-इत् । कर्मभ्यो कर्मभ्यो, गिरगिरी सरोदार रक्षनेवाका ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो भाग, कर्मभ्यो-इत् । १ कर्मभ्यो, कर्ष्ण्यो । २ कर्मिभ्यो, कर्मिभ्यो । ३ कर्मिभ्यो, कर्मिभ्यो ।
 कार्ष्ण्य (सं० पु०) कर्मभ्यो, एक पद्म् ।
 कार्ष्ण्य (सं० पु०) कार्ष्ण्य पपत्तं सुमान्, कर्मभ्यो इत् । कार्ष्ण्ये सुत् ।
 कार्ष्ण्य (सं० पु०) कर्मभ्यो विज्ञापितानाम् पुत्र । कार्ष्ण्ये सुत् ।
 कार्ष्णी (सं० स्त्री०) निवृत्ता पादाकार ।
 “कर्मभ्यो कर्मभ्यो कर्मभ्यो कर्मभ्यो”
 कार्ष्णी (सं० स्त्री०) कर्म कर्मभ्यो स एव कर्म इत् । येत पपत्तम्, कर्मभ्यो कौटुके मादिम् ।
 कार्ड (सं० पु० Card) १ कर्मपत्र, मोटा कागज । २ कर्मो दिष्टी । एक चिह्न काता है । ३ ताग, पत्ता ।
 कार्ष्ण्य (सं० पु०) कर्मभ्यो सुमान्, कर्म पद्म् । १ कर्मभ्यो सुत्, कर्मभ्यो । (स्त्री०) २ कर्मभ्यो, कर्मभ्यो । (स्त्री०) ३ कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो ताहुक रक्षनेवाका ।
 कार्ष्ण्य (सं० पु०) कर्मभ्यो पपत्तं सुमान्, कर्मभ्यो इत् । कर्मभ्यो कर्मभ्यो । कर्मभ्यो सुत्, मरावका कङ्कवा ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो इदम्, कर्मभ्यो इत् । कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो ।
 कार्ष्ण्य (सं० स्त्री०) कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो, कर्मभ्यो कर्मभ्यो ।

अण् स्याद्यै कन् । १ कर्णाट देगवासी । (त्रि०)
२ कर्णाट देशसम्बन्धीय ।

कार्णाटभाषा (सं० स्त्री०) कार्णाटात् कर्णाट-
देशीयानां भाषा, इ-तत् । कर्णाटदेशीयानां भाषा,
एक बोली ।

कार्णायनि (सं० त्रि०) कर्णनि निर्द्दिष्टम्, कर्ण-पिबत् ।

कार्णिक (सं० त्रि०) कर्ण-पिबत् विधानस्य विकल्पत्वात्

इत् । १ कर्ण द्वारा निष्पादित । २ कर्ण सम्बन्धीय ।

कार्णिक (सं० त्रि०) कर्णस्य इदम्, कर्ण-टञ् ।

कर्णसम्बन्धीय ।

कार्त (सं० त्रि०) कृतस्य इदम् । १ कृतप्रत्ययमे

सम्बन्ध रखनेवाला । (स्त्री०) कृतमेव स्वार्थे ञच् ।

२ सत्वयुग । कृतः कृतप्रत्ययस्य व्याख्यातो ग्रन्थः,

कृत-अण् । ३ कृतप्रत्ययकी व्याख्याका एक ग्रन्थ ।

(पु०) ४ धर्मनेत्रके पुत्र ।

कार्तकीजपादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त एक

गण । इन्द्र समासयुक्त इम गणके सफल शब्दके पूर्व-

पदमें प्रकृतिस्वर लगता है । कार्तकीजपादि पा १।१।१०।

गण यथा—कार्तकीजपौ, भावर्णिमाष्टकेयाः, भवन्त्य

श्मकाः, पैलश्यापण्येयाः, कपिश्यापण्येयाः, शैतिकाक्ष-

पाद्याल्लेयाः, कटुकवाधूलीयाः, शाकलस्तनवाः, शाकल-

शणकाः, शणकवाभवाः, भार्वाभिमोहकाः, कुन्ति-

सुराद्याः, तण्डवतण्डाः, अविमत्तकामविदाः, वास्र

वगानद्वायनाः, वाभ्रवदानच्युताः, कठकानापाः, कठ-

कौद्युमाः, कौद्युमसौकाषाः, स्त्रीकुमारम्, सौद्युत-

पार्थवाः, जराभृत्य, वाघ्यानुवाक्ये ।

कार्तवीर्य (वै० स्त्री०) सामभेद ।

कार्तवीर्य (सं० पु०) कृतमेव कार्तः कार्तवासी युगसेति

कर्मधा० । सत्वयुग ।

कार्तवीर्य (सं० पु०) कृतवीर्यस्य अपत्यं पुमान्, कृत-

वीर्य अण् । १ चन्द्रवंशीय कृतवीर्य राजाके पुत्र ।

उनका नामान्तर हैइय, दीःसहस्रभृत् और अर्जुन

है । मद्रिफतौपुरी कार्तवीर्यकी राजधानी थी ।

उन्हींसे हार निगडवत् हुये । पीछे रावणके पितामह

पुत्रभ्रातृ सुनिने जाकर छुड़ा दिया । कार्तवीर्य जम-

दन्निके प्राथममे सबका धेनु सुरा लाये थे । उन्हींमे

जमदग्निके पुत्र परशुरामने उन्हे मार डाला । (भाष,

पृ० १५१ ५०) २ कौटिल्यके राजा । इनका दूसरा

नाम दुभौम था ।

कार्तवीर्यदीप (सं० पु०) कार्तवीर्यद्वारा दीयमानो

दीपः, मध्यपदनोपौ कर्मधा० । कार्तवीर्यके उद्देशसे

प्रदत्तदीप, जो टोया कार्तवीर्यके लिये दिया जाता हो ।

उज्जयिनरेत्तरनखमें उक्त दीप देनेकी विधि लिखी है ।

यथा—किमो गृह स्वानयो गामयमे नोप उमके मध्य-

खन्दमें धिन्दुयुक्त द्विवीणमण्डप वनात्वा चाह्वये ।

मण्डनकी वदितिके कुट्टम एवं रक्तवन्दन मियित

तण्डन द्वारा पट्टनीन पीर मण्डनके मध्यदेशमें नून-

मन्त्र लिपिते है । मन्त्रके ऊपर छतृपूर्ण प्रदीप रख

मण्डल्य करनेकी विधि है । मन्त्र+मन्त्र यह है—

“कार्तवीर्यं मद्रिफतौ मन्त्रानामुपमद्र ।
यद्वाप दीपं मद्रिफतौ मद्रिफतौ मद्रिफतौ ।
स्वमेव दीपदानेन कार्तवीर्यस्य दीपदानम् ॥”

शुभफलकी कामगासे दीपदानकाल एक प्रदीप

पश्चिमदक्षिण स्थापन करना चाहिये । फिर अभिचार

कार्तमें तीन प्रदीप दक्षिण, उत्तर एवं पश्चिममुख और

नष्ट वस्तु प्राप्तिकी कामना पर पश्चिमे ततोधिक त्रियम

संख्यक प्रदीप रखते हैं । चतुर्वर्गका फल पानेकी

एक शत दीप और मारणके कार्यमें एक सहस्र वा

दश सहस्र दीपका दान विधेय है । चाटो, ताँबा,

लोहा, मश्रो, गह्वं, उडद और सूंगके चूर्णसे सब दीप

बनाया पठते हैं । स्वर्ण द्वारा प्रस्तुत करने पर कार्य

सिद्धि होती है । रोप्यका दीप देनेसे जगत् बशीभूत

धर्मता है। पद्यवा शब्द वस्तुका समान्य शोभने परस्य
 कार्योनि विरल तान्त्र द्वारा दोषपात्र निर्माप करति है।
 उक्त दोषन कार्यानुधार एव, तीन एवं या सात
 बलिवां कथती है। परस्य कार्योनि परस्य शौर मङ्ग
 कार्योनि पश्चिम स परस्य बलिवां कालनेहो विधि है।
 कार्तिकीचतने सविह, दोहो, मान, कुमुभो, काती शौर
 रंम रंको बलिवां कलाओ जातो है। परमाभने कबल
 सकिट सुनको बलिवांये काम बजाती है।

कार्तिकीके लिये इस प्रकार दोषदानकी विधि
 दीख ज्ञत. सम्ये व हो सञ्ज्ञता है— ने उस प्रकार कीं
 कराए है। कार्तिकीय द्वातायेके दोम शाम कर
 पञ्चश बजावतार एउने अष्टपञ्चक कर बेमो उपा
 समान्के योग्य हुये है। इनके भ्रानने बजावतारखडा
 उल्लेख मिलता है। यथा—

“ब्रह्मणं ब्रह्म बलिवांयेकशोरीं व निहो
 इजानां ब्रह्मवर्षेण व ब्रह्मराजिं हुंकारम् ।
 सर्वं ब्रह्मवत्पत्न्या बलिवांयेकशोरीं वरे
 यत्सु कल्पवरीन्दरपात्रवन्दः शोभतीतीतीं वन्दे ॥”

शारतीयोर्वारि (सं० पु०) शारतीयोर्वर्य परि गट,
 इ तत्। कार्तिकीयके मङ्ग परगुराम। कार्तिकीयेने
 कामदम्बिके पापमणे कीमकेतुकी गुराका ज्ञा। इतोये
 कामदम्बिके पुत्र परगुरामने इनको मार ज्ञाका।

शारतैम (सं० ति०) शारतैमण्य इहम्, शारतैम-पञ्।
 शारतैमपञ्चभ्योय।

शारतैमर (सं० ज्यो०) शारतैमरे तदाप्य शारतैमिमेपि
 मर्षं पञ्चवा ज्ञता पठितां करार येन स शारतैमः
 सामभारवञ्च तच्छे इतिवालेन देयम् शारतैमर पञ्।
 इति। पृ० ३५२२। १ अर्थ, योमा। “ब्रह्मवर्षेक-
 शारतैमरः” (मत्त ११२) १ सुप्त रूपक, ब्रह्मा।

शारतैमिञ्च (सं० पु०) शारतैम वैशि, शारतैम-उञ्।
 ब्रह्मवर्षेण दत्ताञ्च ३५। पृ० ३५२२। ज्योतिर्विदुः, मङ्गलो,
 शोमहार बला दीमिनामा।

शारतैमिञ्चि (सं० पु०) शारतैम पपमम् शारतैमिञ्च
 यलोप। पञ्च इत्यन्त। गमा ११६। शारतैमि पौर।

शारतैमि (सं० पु०) शारतैमि शोभापञ्च।
 शारतैमि (सं० पु०) शारतैमि नपञ्चगुणा पौर्णमासो

यत्त माये, शारतैमि पञ्। १ वेमाशादि इहममासके
 मङ्ग सप्तम मास, कार्तिक, उसका स एहत्त पर्याय—
 माहुव, अर्थ, कार्तिकिक पौर कोतुद है। बह चान्द्र
 पौर शौर भेदने दो प्रकारका होता है। फिर चान्द्र
 कार्तिक भी मुख्य पौर मीच सेदके विविध है। सूर्य
 तुषारागि पर जार्मिये मङ्ग प्रतिपद्ये पारम्य कर
 परमावस्था पर्यन्त निरन्धे मुख्य चान्द्रकार्तिक पौर
 पूर्व कल्प प्रतिपद्ये पूर्वमा पर्यन्त मीच चान्द्रकार्तिक
 होता है। फिर सूर्यके तुषारागि पर अवलान करते
 पौर कार्तिक मास लिखा जाता है।

“शौचदिको शैवेयवाराण्यं ब्रह्मवर्षेः
 मन्वेर्यं ब्रह्मवर्षात्तथाप्यं ब्रह्म वन्दे ॥” (मत्त)

पूर्वमा शारतैमपञ्चमे निरन्धे मारण की कसवा
 नाम कार्तिकमास पड़ा है। शारतैम बह पुत्रमास
 माना गया है। इसीके उक्त मासके पारितोषिक मर्म
 विषासु पश्चिमोका कार्तिक पुराचर्म इह प्रकार लखा
 गया है—

कार्तिकर्षे मङ्गल प्रति मत्स्य नामोद्धान कर प्रातः
 ज्ञान करमा विधेय है। निज शौरको कियो प्रकार
 व्याजपदा करनेकी इच्छा न रखनेवासे शोभोको
 कार्तिकर्षे पञ्चम प्रातःज्ञान करना चाहिये। पञ्चम
 उक्त मास उक्त समय पर ज्ञान करनेके सबको काल्प
 काम होता है। अमपिपाशादि मजानिवालोको निज
 लिखित सङ्ख्ये पौर मङ्ग पङ्क ज्ञान करना चाहिये।

ब्रह्मवर्षा—

शौ कल्पवृक्षं वचं शारतैमिञ्चमि ननुवन्ने वतुचमिवात्मन एव-
 पतिवर्षादिं बालु कल्पं वतुचमिवाः शोचतुचदिकेनां शौचदिकेनिकात्
 मङ्गलात् वरं करिष्ये।

जन्म मङ्ग—

“शौ चारतैमिञ्चं कार्तिकीये जन्म-जन्तुं करारिम् ।
 शौचं पर दीये कमीकर ज्ञा कर ॥”

उक्त मास मङ्गल निमासुखको विष्णुपद वा
 पाशापादिने इत तीहादि द्वारा प्रक्षेप देना कर्ष्य
 है। प्रक्षेप देते समय निजलिखित मङ्ग पङ्का
 पढ़ता है—

“शौ शारतैमपञ्च वन्दे तुषारा शौचम इह ।
 शौरिं वै शारतैमि नमः शारतैम २२६ ॥”

प्रदोष प्रदानसे विशेष फल कामना करनेवालोंको दीपदानके पूर्व स्नानवत् सद्बल्य कर और तदनन्तर मन्त्रपत्र दीप देना चाहिये।

कार्तिक मासमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी अर्थात् भूतचतुर्दशीके दिन स्नानान्तर यमतर्पण कर निम्नलिखित मन्त्र पाठपूर्वक मस्तकोपरि अपामार्ग हुमाना पड़ता है,—

“जीतभीषसमायुक्तमकण्टकदलान्निगः।

हर दापसपामारं वाप्यमाणं पुनः पुनः ॥”

उस दिन लोकाचारके हेतु चतुर्दश शाक भोजन करना विधेय है। शास्त्रोक्त शाकोंके नाम हैं—घोस, केसुक, वासुक, सर्पप, कान, निम्ब, जयन्ती, शालिन्धो, हिलमोचिका, पटोच, पितपापरा, गुडूची, भयटानी और सुपिनु। किन्तु जोग उक्त शाक संग्रह न कर जो पाते वही खा जाते हैं।

अनन्तर अमावस्याके दिन बालक, आतुर और बृद्ध व्यतिरेक सबको दिवाभोजन निषिद्ध है। उस दिन पायंघ आद्य कर प्रदोषकालमें पिष्टगणके उद्देशे चक्कादान करना चाहिये। किसी कारण आद्य न करते भी चक्कादान देना पड़ता है। फिर प्रदोषकालमें लक्ष्मी, नारायण और कुबेरकी पूजा करना आस्तिक धार्मिकोंका कर्तव्य है।

अनन्तर प्रभात अर्थात् प्रतिपत् तिथिकी अक्ष-क्रीड़ादि करना चाहिये। द्यूतक्रीडा शास्त्रनिषिद्ध होते भी उस दिन समस्त वर्षका शुभाशुभ जाननेकी बहुत आवश्यक है। उस क्रीडामें जीतनेवालाका संवत्सर शुभ और हारनेवालेका संवत्सर अशुभ होता है। केवल उसी दिन क्रीड़ा करनेका कारण है—

“धी यो यादगमायेन तिष्ठत्यसौ युधिष्ठिर।

इयं देव्यादिना तेन तस्य वर्षं प्रयाति हि ॥”

जो व्यक्ति जिस भाग अर्थात् आनन्द वा असुखसे उस दिन काल बिताता, उसका संवत्सर उसी भावसे चला जाता है। अतएव उस विषयमें सबको सचेष्ट रहना आवश्यक है, किन्तमें उक्त दिवस मनोसुखसे भतिवाहित किया जा सके।

अनन्तर द्वितीया तिथि अर्थात् भ्रातृद्वितीयाके दिन दीर्घजीवनकी कामनासे भगिनीके ज्ञायका भोजन करना विधेय है। उस दिन स्व स्व भगिनीको वस्त्रान्तरादि द्वारा सम्मान कर और उसके ज्ञायका बना सादर एवं आनन्दपूर्वक भोजन करना बहुत आवश्यक है। भोजनके समय यमराज, चित्रगुप्त, यमदूत और यमुनाकी पूजा कर निम्नलिखित मन्त्रपाठ पठ गण्य पढ़ण कर खाना चाहिये। कनिष्ठ भगिनो होनेसे इस प्रकार मन्त्र पढ़तो है,—

“भाग्यपातुजातां सुकृष्ण मरुमिदं यमम्।

मोक्षये यमराजस्य यमुनाया विमेषत- ॥”

भगिनो ज्येष्ठा रहनेसे “भ्रातृद्वितीया”के स्थानमें “भ्रातृद्वितीया” कह कर गण्य प्रदान करना चाहिये।

एतद्व्यतीत कार्तिक मासमें शुक्लपक्षकी नवमी तिथिकी सोमवारके दिन वेलायुगकी उत्पत्ति होती है। उसीसे यह दिन प्रतिगय पुण्याह माना गया है। फिर कार्तिक मासके शुक्लपक्षकी एकादशसे पूर्णिमा पर्यन्त पञ्चतिथिकी वक्रपक्ष कहते हैं। शास्त्रके कथनानुसार उन तिथियोंमें वक्र भी मत्स्य भक्षण नहीं करते। अतएव वक्रपक्षमें किसीकी सांसादि खाना विधेय नहीं। एतद्व्यतीत भूतचतुर्दशीके पीछे अमावस्याको कालीपूजा, शुक्ल नवमीकी जगन्मायी पूजा और सक्रान्तिके दिन कार्तिक पूजा होती है। पूजाकी पहति नामाविध है। उसीसे यहां उसका कोई उल्लेख नहीं किया गया।

गोष्ठोप्रदोषके मतसे कार्तिक मासमें जन्मलेनेवाले बुद्धविशारद, व्यवसायपटु, नामाविध शिल्पशास्त्रवित्, सुवन्ना और अतिशय सुन्दराकृति होते हैं।

गरुडपुराणके मतानुसार कार्तिक मासमें विष्णुके जिये तुलसीदान कर्तव्य है। उससे अयुत गोदानका फल मिलता है। ब्रह्मपुराणके मतसे देवगृह, आकाश और मण्डपमें हस्तादि द्वारा दीपदान करना चाहिये। उससे अक्षयपुण्य होता है। ब्रह्मपुराणके मतानुसार उस मासमें हविष्यान्न खानेसे विष्णुका पद मिलता है। इविष्य द्रव्य यह है,—प्रखिन्न हैमन्तिक घान्य,

सुह, तिल, घन, खवाय, कटुवाय, नीशरवाय
 वास्तुक, चिमसोचिया याक कामयाक, मूलक,
 सेखर एवं समुद्रकरय, गंधरुचि मय्युक्त,
 मखन न निहाना बुरा दुग्ध, पनस, आम,
 बरोतको तिमित्री, खोरक, नागरक विषयो, कदमो,
 लवनी पांचना इत्यु धोर गुड। पलेनपक्ष द्रव्य द्वारा
 इविष्यायको व्यवस्था है। काशीबपुराणके मरुध मखय,
 मूलं घोर पन्थान्द मखन कस्तुका मांष पाना निविह
 है। कौबि बेंदा कररुधि कस्तुकास्तुल बलना पडता
 है। महाभारतमें मो सर्वमांष परिख्यागवा विधान
 है। ब्रह्मपुराणके मरुध खोस, पटोस, कदम्ब घोर
 मय्यको मोचन करना निविह है। फिर कांछपातमें
 भी खाना न खादिये। कार्तिक मासमें जो उद्यान
 पहाडयो जोनो है। उस दिन हरि मया ख्या
 करती है। मनुष्योंको पयानिपय उपवास कर जो
 इतिकी पचेना करना पड़ती है। पुराणके मतानुसार
 कार्तिक मासमें ब्रह्म मय बायें दुर्गामिनि पुष्य मिलता
 है। फिर उक्त बायें प्रतिपालन न कररुधि नरवादि
 विविध पातनायें उठाना पड़ती है।

२ वर्ष विधिय खोई मास। कृत्तिका वा रोहिणो
 नक्षत्रमें सुहृदयतिना उदय वा पक्ष जोनेहै कार्तिक
 वर्ष कह्यता है। १ कार्तिकेय।

“इति मास इतिपत्त कार्तिकेयप्रमाणम्।

कर्त्तिकेयप्रमाणम् इतिपत्तम्” (ब्रह्मसंहिता ५)

३ नरवादि विविधपातनायें खोई संभवकार।
 ४ बम्बई प्रदेशको एक कार्तिक। एक कार्तिकी कोन
 मेह पादि पयणोंको मार कर जनका मांष भेषमें
 है। कर्माईका काम कररुधि जे गांरुके बाहर इरते है
 घोर हिन्दू इन कार्तिकी कोनोंको नहीं छुने।

कार्तिकमहिमा (सं० पु०) कार्तिकपक्ष महिमा
 माहात्म्यम् इत्यम्। १ कार्तिक मासका माहात्म्य।
 २ कार्तिकेय देवका माहात्म्य।

कार्तिकमाहात्म्य (सं० कौ०) पद्मपुराणका एक
 अध्याय।

कार्तिकव्रत (सं० कौ०) कार्तिकी व्रतम् व्रतम्,

मध्ययदमो०। कार्तिक मासमें बिया जानेवाला
 मातृप्राणादि नियम।

कार्तिकेयमहि (सं० पु०) कार्तिकेय परिवर्ण मानि.,
 मध्ययदमो०। कार्तिक मासमें पलनेवाला बान्ध,
 कृत्तिका वान।

कार्तिकविद्यालय (सं० पु०) कार्तिकी पार्वमाता
 पत्थान् माथे, कार्तिक-ठक। १ कार्तिक मास
 कृत्तिकाका मङ्गला। २ कार्तिकीपुत्र पय, जिस
 पयशरुमें कृत्तिकी पड़े। ३ कार्तिक नामक एक
 वर्ष।

कार्तिकी (सं० कौ०) कार्तिकेय इत्यन् कार्तिक
 पय इत्येव। १ देवगति विधि। बीरगी इति।
 २ नवपञ्चिकाकी लवलीस एक देवी। ३ कृत्तिका
 नक्षत्रपुत्र पूर्वमा, कृत्तिकी। कार्तिकीको ब्रह्मावर्त
 (विदूर)में मन्नासानका बड़ा मिला जगता है।

कार्तिकेय (सं० पु०) कृत्तिका नामपर्व पाष्य
 खेन इति श्लेष, कृत्तिका-इत्य। कौनो काल १०११।२।
 गियपुत्र। पार्वतीके माक मैली नमय शिवका बीर्य
 भूमि पर मिरा जा। भूमिमें पवित्रमें घोर चम्पिने
 फिर मरयनमें लसे निधेय जिहा। इहाके कृत्तिका
 गवने छपे उठा पाना पोमा। (ब्रह्मसंहिता ५)

कृत्तिकेयमें कार्तिकेयमें पुनर्गौर पम्बिपुत्रकपति
 प्रकपहय किया जा। कमी समय पन्निडे बीर्य घोर
 गद्वाके ममें लकटा उख बुरा। कर्मके वीर्य उलटिजा
 यवने इन्के प्रतिपालन किया। अशिवायपक्षे स्नानपात्र
 काम जनके उख मुष इत्यत्र हुये है। फिर कृत्तिका
 गवके प्रतिपालन जोनेसे जो बह कार्तिकेय नामसे
 विख्यात हुये है। (पल्लव)

कमय कर्षोका एक जो कारक समझा जाता है।
 दुर्गाल तारकापुरके उत्पौडगरी देव बहुत अतिव्यथा
 हो गये है। बहु बेटांमें भी एक बचुरको मार न
 सके। फिर लक्ष्मी ब्रह्मदेव जाकर उसकी निचलका
 उगय पूजा। ब्रह्मदेव इन्के महादेवका ज्ञान
 तोड़नेका कहा था। तद्दुमार लक्ष्मी कन्दर्पके
 साहाय्यने महादेवका ज्ञान मङ्ग किया। कन्दर्पका
 विह महादेवने पाषण्ड पार्वतीके प्रति सामिन्नाय इति

हाली थी। उससे प्रथम कार्तिकीयका जन्म हुआ। फिर उन्होंने देवीके सेनापति वन तारकासुरकी मार डाला। दूसरे कल्पमें भी उसी प्रकार तारकासुरका उत्पीडन बटने पर ब्रह्माने देवीसे अग्नि की आराधना करनीको कहा था। तदनुसार उन्होंने अग्नि की मन्तुट किया। अग्नि शक्तरूप धारण कर यतिगोपनमें महादेवकी समीप पहुँचे थे। किन्तु महादेव सब भेद समझ गये। उन्हींसे सुरत विघ्न समझ झूठ हो उन्होंने स्वजितवीर्य अग्नि पर फेंका था। अग्नि गड्ढा तीव्र धारण कर न सके। फिर उन्होंने उसे गङ्गासे डाल दिया। उसीसे कार्तिकीयने द्वितीय वार जन्म लिया था। उनका नामास्तर—महासेन, शरजम्हा, पहानन, पाठतीनन्दन, स्कन्द, सेनानी, अग्निभू, गुह, वाहुलेय, तारकजित्, विशाख, शिखिवाहन, पाण्डुराशु, शक्तिधर, कुमार, क्रीडारण, आग्नेय, देवकीति, अनमेय, मयूरकेतु, धर्मात्मा, भूतिग, महिपादन, कामजित्, कामद, दाम्, सत्यवाक, भुयनेश्वर, शिशु, शोभ, शुचि, चण्ड, दीप्तवण, शुभानन, पमोत्र, अनव, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दोसग्रन्थि, प्रशान्तात्मा, भद्रजित्, कूटमोहन, पठोप्रिय, पवित्र, माह्यत्सन, कन्याहर्ता, विभक्त, स्वाह्य, देवतीसुत, प्रभु, नेता, नैगनेय, सुदुखर, सुव्रत, लम्बित, बालक्रीडनप्रिय, खचारी, ब्रह्माधारी, शूर, शरवणेश्वर, शिखामित्रप्रिय, प्रियज, गाङ्ग, स्वामी, द्वादशशोचन, देवसेनाप्रिय, वासुदेवप्रिय, देवसेनापति, बालचय, कृकवाकुध्वज, महाबाहु, युद्धरत्न, शिखिध्वज, पाषकात्मज, रुद्रसूनु, पटंगिरा और दितिजान्तक है।

कार्तिकीयदेवका ध्यान इस प्रकार है,—

“कार्तिकीयं महाभागं मयूरीपरि रच्यितम् ।
तप्तकासनवर्षामं शक्तिहस्तं वरप्रदम् ॥
विभुजं द्रवुङ्गलारं गानाद्वहारम्भूषितम् ।
मसन्नवदनं देव सर्वेशमाद्यमाद्यतम् ॥”

महाभाग कार्तिकीय मयूर पर अवस्थित है। उनका वर्ण तप्त स्वर्णकी भांति चमकता है। शक्ति हाथमें दिये हैं। वह वर देनेवाले हैं। मूर्ति विभुज है। शत्रुका नाश करते हैं। नागा पक्षकार विभूषित

है। मुख प्रसन्न है। समुदाय सेना चारो ओर खड़ी है। (कार्तिकपूजाग्रहति)

अनेकीके शिखासानुसार कार्तिकीयका विवाह नहीं हुआ। वह चिरकाल अविवाहित अवस्थामें है। किन्तु वह भ्रमसात है। उनकी पत्नी देवसेना है। देवसेनाको ही हम पठो कहते हैं। सम्भवतः पठोको पत्नी माननेसे ही अनेक हिन्दू पुत्रकी कामनामें कार्तिकीयका व्रत किया करते हैं। देवसेनाके प्रसन्न और बाह्यादि कार्तिकीयके समान है। साकंठेय-पुराणमें वर्णित है,—

“कीमारी शक्तिस्तु व मयूरीपरि रच्यिता ।

यं तु मयापार्यां तव पत्न्या गृह्यन्ति ॥”

कुमारगण्डि कार्तिकीय सट्टम मूर्ति धारण और शक्ति प्रदण कर मयूरवाहनपरि आरोहणपूर्वक देवोंमें युद्ध करने पायो।

कार्तिकीयपुर—युक्त प्रदेशमें कुमायूं जिलेके मध्य टानपुर परगनेकी हजूर नामक तहसीलका एक नगर। आजकल उसे वैद्यनाथ वा वेङ्गनाथ कहते हैं। वह अक्षा० २६° ५४' २४" उ० और देगा० ७६° ३६' २८" पू० पर अवस्थित है। वहाँ रांघुना नामक एक पुरातन दुर्ग है। उसमें एक कालीमन्दिर बना है। दूसरे ओर ईश्वर पुगतन मन्दिर पडे है। किन्तु उनमें छोटी मूर्ति नहीं, उनमें आजकल शम्भादि रखा जाता है। चीन-परिव्राजक युपनचूयाङ्गकी वर्णनाके अनुसार ई० १७वें शताब्दमें वहाँ शीव धर्म प्रचलित था। मन्दिरकी दीवारमें एक स्थानपर बुद्धदेवकी मूर्ति आज भी देख पडती है। उदयपान देवकी खोदित प्रस्तरलिपिके दो खण्ड वहाँ वर्तमान है। उस पर क्रमागत जन पङ्क्तिसे अक्षर मिट गये हैं। वहाँ ११२४ शकमें इन्द्रदेवद्वारा प्रदत्त एकखण्ड ताम्रलिपि आज भी पडी है। उसमें नीचे १४२१ शक लिखा है और गणेशकी एक मूर्ति है। उस मूर्तिके नीचे ११२५ और १२४४ शक भी बना है।

कार्तिकीयप्रसू (सं० स्त्री०) कार्तिकीय प्रसूते या, कार्तिकीय-प्रसू-क्षिप्। दुर्गा, पार्वती। पार्वतीमें शिववीर्य पड़ते देवीने विघ्न डाला था। उसीसे वह

टकी रहती है। फूटनेके समय टका पंग फैल जाता है। हलमें खतम्य फूस फूटते ही कपास बीना जाता है। नहीं तो धूप या भीसमें वह बिगड़ जाता है। कार्पासके पृष्ठसे बीज निकाल लेना पड़ता है।

स्थानभेदसे कार्पास बीजके बीनेका समय निर्दिष्ट है। प्रायः पाश्चिम और कार्तिक मास ही वपनका उत्तम समय है। ग्नाक गोबर या शीरे पधवा तीनोंके एकत्र जनमें गन्ना उममें बीज भिगो देते हैं। एक दिन भिगोनेके पीछे बीज सससे निकाल कर कुछ देर धूपमें सुखाते हैं। अधिक शुष्क करना भी निषिद्ध है। उसके पीछे अच्छी ज़ोती जमीनमें एक या डेढ़ हाथके अन्तर ४५ अंगुलि परिमाण गत खोद ३४ बीज हान जपरसे कुछ मट्टी ढटा देते हैं। पन्प दिनमें ही अहर फूट जाता है। अहरोंमें जो उत्कृष्ट होते, उनमें शेषल दी उमी स्थान पर रात्र दूधसे निखाल कर स्थानान्तरमें लगाये जाते हैं। पौडा निकलने पर निरर्थक ब्रह्म नष्ट करना पड़ता है। कार्पासका बीज फेंक देनेकी चीज नहीं। उसकी खलीसे अच्छी खाद बनती है। फिर बिनौना खिलानेमें गाय-मैस दूध भी बहुत देती है। किसी जमीनमें बगवद २१ वर्ष कार्पास उपजनेसे फिर उसमें अच्छी उपज नहीं होती। किन्तु बिनौसेकी खली खाद में तरह डालनेसे जमीनकी उर्वरतामल्लि कुछ बनी रहती है। कपासकी जमीनमें सब तरहकी खली खादकी भांति पड़ती है। खलीकी अच्छी तरह धर कर उसमें सूखी मट्टी थराबर मिला एक सप्ताह रख छोड़ना चाहिये। फिर उसे खेतमें डालनेसे अच्छा लाभ होता है। प्रायः प्रति बीघे मन या आधमन रूई उपजती है। किन्तु विरोध यत्र करने पर एक वाघमें छह मन तक कपास निकल सकती है।

हिन्दुस्थानमें ज़ाखों बीघे कपास बोयी जाती है। प्रति वर्ष उसकी बढ़ती जाती है। नमं और मनुष्य दो तरहकी कपास यहां उपजती है। इलाहाबादकी राधिया कुछ अच्छी होती है। कुमायूं और गढ़ वालमें पहाडी कपास लगायी जाती है। कानपुरके सरकारी खेतोंमें १८८२-८२ ई० को अमेरिकाकी

कपास बोयी गयी थी। फल अच्छा निकला। ध्यानसे पोती करने पर हिन्दुस्थानमें अमेरिकाकी कपास खूब उपज सकती है।

कपास खरीफकी फसल है। वर्षा आरम्भ होनेसे पहले ही जमीनको मीच कर कपास बो देते हैं। अक्तोबरमें जनवरी मास तक फसल तैयार होती है। किन्तु नमं और राधिया कपास अपरम और मडं तक कोई ग्यारह महीने खड़ी रहती है। जमीनमें खाद देना पड़ती है।

प्रायः कपासके साथ अडहर बो देते हैं। उससे कपासका धूप और भीस नहीं मरता। फिर कपासमें तिल, लहसु और मूंग भी डाल देते हैं। कपासके किनारे किनारे एरण्ड और पटसनकी गोद रहती है।

कपास बीनेके दोमास वाटही फलने लगती है। जनवरी मासतक उसे बीना करते हैं। पाना पहनेसे कपास मारी जाती है। अच्छे खेत तीन या चार दिन पीछे बीने जाते हैं। बिनाई सवेरेसे दोपहर तक होती है। कारण उस समय भीसकी तरो रहनेसे कपास निकालनेमें असुविधा नहीं पड़ती। जोरसे कपास निकालनेपर रूई खराब हो जाती है। प्रायः स्त्रियां कपास बीनती हैं, उन्हें अपनी अपनी दिनी कपासका ८ वां भाग या कुछ हीनाधिक मजदूरीको तौर पर मिलता है।

अरबीमें कपास शीट कर रुंदसे बिनौसेकी प्रसंग करते हैं। अमेरिकाके दक्षिण राज्योंमें भी ऐसी ही अरखिया चलती है। परन्तु आजकल कनौसे भी बिनौसे निकाले जाते हैं।

पानी मरा रहनेसे कपासकी बडी हानि पहुँचती है। इसी लिये कपासके खेतमें पानी ठहरने नहीं देते। फलियां खुद जाने पर भी हलटिसे पपार चलि जाती है। क्योंकि पानीमें भील जानेसे रंग बिगड़ जाता है। और सूख सड़ने लगता है। कपासके पालके पड़नेसे भी हानि पहुँचती है। कीडा और सूँडी लगनेसे भी कपासका सत्तानाग हो जाता है। प्रायः हिन्दुस्थानके खेतोंमें कपास बहुत कम उपजती है।

कमो कमी तो हयकका खचं मी वसुल नहीं होता ।
केचिन पयस पोर बनारसको तरय हयस पयसो
रहती है ।

बहु तथा बिहार देसके निम्नलिखित ज्ञाननिं
खिल बिषय समय हयस जयसि पोर बिष बिष समय
बपास बीनती है इकको ताखिका नीचे लिखे
प्रकार है—

	बीनिका समय	बीनिका समय
कटक	ज्येष्ठ, कार्तिक	आश्विन, फेस
बहुपाम	वेसाख, ज्येष्ठ	पयसायक, पीप
हरमहा	कार्तिक, ज्येष्ठ	भाद्र
	पाषाण्ड	चैत्र, वेसाख
मानभूम	ज्येष्ठ, पाषाण्ड,	पयसायक, पीप
	पयसायक, पीप	चैत्र, वेसाख
भिकिनोपुर	ज्येष्ठ, पाषाण्ड,	आश्विन, चैत्र
	कार्तिक	वेसाख, ज्येष्ठ
शोडारडामा	कार्तिक	वेसाख, ज्येष्ठ
	पाषाण्ड	पयसायक, पीप
सारन	पाषाण्ड	वेसाख, ज्येष्ठ
	साह	साह, आश्विन

बहुदेस पोर बिहारके मध्य कटक, बहुपाम,
हरमहा, भिकिनोपुर, मानभूम शोडारडामा, सारन
त्रिपुरा, ककपाईयोडो प्रकृति ज्ञाननिं की पबिष
परिसापके बपास उपजती है । पठना पचकनिं
निर्घं याकी रंगकी बपास होती है । यम्याक देसके
बोन लडे खडका बपास कहति है । पोर लपेह
कगसको हदश । सारनमें भागबद, मोचरी, पतुरा,
कोकता प्रकृति नामकी बपास उपजती है । यहाके
पचकनिं बडोय, राडो तोपार रन तीन प्रकारकी
बपास, हरमहा पचकनिं कोकटी मेरा पोर भागसा
यक तीन प्रकारकी बपास प्रकृतित है । कटकको पोर
पयसायक पोर हयसिया प्रसिद है ।

भारतमें बपासकी खपन पकरी बिबलय बी ।
पाजकस कत्यक कार्याकहा पबिकाय पाचर भीक

दिया जाता है । बाहर मीमी जानेवालो बपासके पनेक
नाम हैं । नीचे उनमें कुछ लिखित बिबरण दिया गया
है । रंगरैक सहाजनेके हयस बी बपासको रफतनी
होती है । पत बिनने बी रंगरैकी नाम लिखे हैं ।

बयोरा—बडोद, कच्छ पोर काठिकाबाडके रफतनी
होती है । बह सावनगणे, मोबाटे, बादबाहरी,
बोरम्पाववाकी, बैराबको, कच्छी पादि कई प्रकारको
रहती है ।

बहाली—बहाल, पञ्जाब, कुडप्रदेस, पयपूताना
पौर मध्यभारतमें उपजती है ।

पमराबती—कै मी कई मेद है ।

जानदेयो—जानदेसमें पातो है ।

बमरा—बहार प्रदेशमें होती है ।

बिषाबती ज्ञानदेयो—पमराबती प्रकृति ज्ञानोके
पातो है ।

बिहारनस—मन्द्राक, निजामराज्य पौर पबिष
भारतको बपास है ।

बारबाडो—बारबाड, बिजयपुर पौर दक्षिण
महाराष्ट्रमें उपजती है ।

कुमता—बिजयपुर, इकमान, कोलापुर पौर
दक्षिण महाराष्ट्र प्रदेशकी बपास है ।

मडोकी—बडोद, मडोच पौर लुरत प्रदेशके
प्राठ जाती है ।

मोहनको—बास रनकी होती है । बह
मन्द्राकके पयसायक हयसा जिके, मैबूर पौर मोदाबरी
प्रदेशमें लत्यक जाती है ।

मिनबकी—मिनबकी, कोदेम्बूर, लखौर प्रकृति
ज्ञानके पातो है ।

शौगनबाडो—मध्यप्रदेशमें उपजती पौर बन्दईके
रफतनी होती है ।

दिव्यी—सिन्धुप्रदेशमें पेदा जाती है ।

पासामो—पासाममें लत्यक होती है ।

कार्यासके पयसायक प्रकार मेद हैं । फिर मिष मिष
ज्ञाननिं मिष मिष प्रकारके लत्यादन करनेकी रीति
पौर पयसाकी बचित होती है ।

कार्यासका जगा जितना बी बडा रहिगा, जतना

हो दृढ़ निकलेगा। फिर वह जितना ही परिष्कृत होगा, उतना ही चक्का ट टूटरेगा।

इस बातका निर्णय करना सरल नहीं—भारतवासी कवसे रुईका व्यवहार करते हैं। क्योंकि वेटमें भी उसका विवरण है,—

“मूषी न गिद्या व्यदनि माष्य; स्रोतारं ते शतक्रतो विषं मे शय्य रोदो ॥” (ऋक्संहिता १।१०४।८)

मृषिक जिस प्रकार सूत्र काट घिगाडता है, है शतक्रतो! आपके स्तोता हम लोगोंकी दुःख भी उसी प्रकार दंगन कर सताता है।

साधने अपने भाष्यमें लिखा है कि भातका साड़ रहनेसे तन्तुवायके सूत्रकी मूसा प्रीतिपूर्वक खाता है। सुतरां यह स्वच्छन्द अनुमान कर सकते हैं कि उस समय कार्पाससे वस्त्रवयनकी प्रणाली आविष्कृत हुई थी। वयन देखो।

सूत्रकी साड़ लगा कठिन करनेको व्यवस्था भी उस समय प्रचलित थी। वैसा न हानिसे मृषिकका उसके ऊपर उतना लाभ कैसे होता।

शात्रजायन-श्रीतसूत्र, ८।४ और शात्रजायन-श्रीत सूत्र १।१।१ प्रथम वैदिक सूत्रमें कार्पास शब्दका स्पष्ट उल्लेख है।

कार्पासके व्यवहारकी कथा मनुसंहितामें भी देख पड़ती है,—

“कार्पाससुपवीरं प्राप्तिप्रयोगैर्हंसं विहम् ॥” (मनु, २।४४)

ब्राह्मणका उपवीतसूत्र कार्पासके सूत्रसे प्रस्तुत होना आवश्यक है। उसीसे सम्भवतः मन्दिर और मठके निकट कार्पास वृक्ष रहता है।

“न कर्मास्थि न तुपान् शीर्षं नापुत्रिणीविपुः” (मनु, ४।७०)

मनुके मतमें मूलाके बीज, तुप मरुतल द्रव्योंपर आरोहण करना न चाहिये।

“कार्पासश्रीतश्रीपानां हिमफे कणकस्य च।

पक्षिमश्रीपश्रीपानाव रक्षाये न चर्षं परः ॥” (मनु, ११।१२८)

याज्ञवल्करसंहितामें इसप्रकार विधि है

“श्रीषं कार्पासश्रीविके।

“मूषो तु विपना सता ॥” (१।१८१)

“कड़े पीछे १०

“के ऊपर १०

“स १५७१ है।

“तन्तुवायो दगपने दयादिकपदाविक्रम् ।

अतोऽन्यथा वर्तमानो दायो धान्यकं दमम् ॥” (मनु ८।१८०)

तन्तुवाय स्टहस्यमें बुननेको १० पल मृत लेकर उसे साँड़ देनेके कारण ११ पल मृत देगा। यदि उससे न्यून देगा, तो (राजकर्तृक) द्वादश पण टगड़ हीगा

भारतमें बहुकालसे प्रचलित होते भी पायात्य देशमें कार्पासका व्यवहार वैसा न था। अच्छी प्रकार समझा जाता है कि भारतसे पश्चिममें क्रमशः फैल कर कार्पास व्यवहृत हुवा है।

सम्भवतः अरबी भाषाके “कतान” शब्दसे ही युरोपके इतालियोंने “कतोन” फ्रांसीसियोंने “कोतान” और अंगरेजोंने “काटन” शब्द पाया होगा। किन्तु यह निःसन्देह है कि फारसीका “कुरपाश” शब्द संस्कृतके कार्पास शब्दका अपभ्रंश है।

ग्रीक “करपसन्” शब्दसे पाट या सनका बोध होता है। ग्रीक भौगोलिक हिरोदोतासने भारतके कार्पासविषय पर अपनी पुस्तकमें इसप्रकार लिखा है,—

“वहाँ वन्य वृक्षके फलसे एक प्रकारका रूया निकलता है। सौन्दर्यमें वह मेपके लोमसे भी उत्कृष्ट होता है। भारतवासी उससे परिधेय वस्त्र बनाते हैं”।

विशोफ्राएस नामक किसी दूसरे भौगोलिकने भी वृक्ष देख कार्पासकी वर्णना लिखी है। अलेक्सेन्दरको नीयनाके अध्यक्ष नियाकासने भारतवासियोंके परिधेयका उल्लेख इसप्रकार किया है,—

“वह पेड़के रूयेका वस्त्र बनाकर पहनते हैं। उससे पदका मध्यदेश पर्यन्त ग्राहृत रहता है। फिर स्कन्ध देशमें एक बहर और मस्तकपर एका उष्णीष रहते हैं। यही उनका समस्त परिधेय है।” दो सहस्र वर्ष अतीत हो गये, किन्तु भारतवासियोंका परिधेय आज भी वही है। ई० प्रथम शताब्दमें फोर्ड ग्रीक भ्रमणकारी अरबउपसागरसे भारतवर्षके भडौंच नगरमें वाणिज्य करने गये थे।

वह अपने पुस्तकमें लिखते हैं कि अरब भारतवर्षसे कार्पास ले जाकर लोहित सागरके उपकूल पर अदुलो नामक स्थानमें व्यवसाय करते थे। क्रमशः वहाँसे भारतके पातिपाक, अरियक और बारिगाजा (आधुनिक भडौंच) नगरके साथ वाणिज्य स्थापित हुआ।

भंडोंसे वे सब कार्पासवस्त्र भेजा जाता था। पश्चिम भारतके मनुब्रिया (प्राकृतिक मसलौपत्तन) नामक स्थानमें उल्लू छ कार्पासवस्त्र प्रस्तुत जाना था। इसीसे मसलिन शब्द बना है। इन्हींका मसलिन उस समय भी सर्वाधिक उल्लू छ विना जाता था। मन्नाके कृष्णमें प्रस्तुत चीनीकामे इस्त्रको चौब माहितिक बखर्त है। चारो दिना भारतके कार्पासवस्त्रका पादर देख पड़ता था। क्रमशः परबसे पूर्वदिक् पारख घोर पश्चिमदिक् पीछ तन्ना रोमका कार्पासवस्त्र भेजा जाने लगा। पर इस घोर बिहीने लख न किया—क्या पदार्थ है। बरू पड़न पर ही लोग रक्षे। किन्तु क्रम क्रमसे तूनको लवि पर भी लख पड़ा था। तूको लवि घोर घोर भारतके पारख, पारखसे परब, परबसे मिहर घोर मिहरसे पच्छोबाके मसमान तथा पश्चिम भागमें छेकनें लयी। पारखसे तुरख घोर पच्छे घरोपके दक्षिण विभागमें कार्पासके इस्त्रको लवि लयी लो। फिर यूरोपीय कार्पासका तूकसे बामन तन बनाने लगी।

चीनके सब भारतका बरू कासे वाचिष्य बसता है। किन्तु चीनमें उस समय भी कार्पासवस्त्रको लविही कोरे सिद्धा न लयी लयी। ई० ५ठे शताब्दीको छोटी नामक सखाटने कार्पासवस्त्रका एक परिच्छेद उपलब्ध नमें पाया था। यह इसका बरू थापूर करते थे। ७वें शताब्दी चीनके लुना—किन्तु प्रचारके इस्त्रके कार्पास निकलता है। बहुत मोमामय चीनके चीना कार्पासके इस्त्रको ब्यापनमें लकने लगी। किन्तु लियोने नियमावृत्तार लवि न लयी। यह लालि रचयसीक लियोने है, यहसा लियोने प्रचारका परिवर्तन करना था नूनन सामयी चीना नहीं लालते, सुतरां चीनमें इस्त्रका बहुत समब लख पादर न लुना। क्रमशः बरू भी लखकी लवि बदन लगी। पात्र लख चीना कार्पासका पादर समस्त गये हैं। का छोटे का बड़े समी चीना कार्पासके बरूका व्यवहार करते हैं। यह समझा जाता है कि कार्पास भारतके निरुक्त यूरोप घोर पच्छोबा पड़ू था है। किन्तु अमेरिकामें लो कार्पास इस्त्र देख पड़ता है। लोसबसेन वाचिष्यार करी समय अमेरिकामें

कार्पासका व्यवहार पाया जा। चीन लख पड़ता है— भारतके लख अमेरिका मया या अमेरिकामें लामान लपना पड़ना अमेरिकाके लोनोंमें लन लपना गुण पड़ने, बिद्या था। लम्बनत पश्चिम पशुमान ही ठीक है।

अपने व्यवहारके समय सुशुभमार्गमें कार्पासको व्यवहार प्रचारके लक्ष्यमें चारो दिक् ज्ञान पैलाया था। लयो ज्ञान इटली घोर ल्णमें छेक गया। क्रमशः पोसन्दात्र लय कार्पासके लख प्रस्तुत करने लगी। पर ऐजॉन देख लने लन टूकोका पादर करना लीया जा; फिर लख पोसन्दात्रके पशुकरवमें कार्पासके बखालि बनाने लगी। ई० १५वें शताब्दी लिय भागमें अमेरिकामें तुर्बिष्णामके कार्पास मगाना पारख बिद्या।

१५०० ई०में ईट इण्डिया लम्बनमें लानो एन्डिका विषये भारतमें वाचिष्य करनेको पशुमति पायी ली। भारतके पब्यान्व ल्णके लय इस्त्रके लो कार्पास घोर कार्पासनिर्मित लख मेजा लाने लमा।

लालिषाटसे कार्पास लख पानिके लारख लख लख लाम के लिको पड़ू मया। कार्पासवस्त्रार लगयो लानिषाको लय लिको पिप्पड़ू लशतो ली।

कार्पासवस्त्रको लोटका विभावतमें लख समय बड़ा समान्दर रखा। लमान्दर दीका बड़ा लि विभावतके लोनोंमें इस्त्रके लख लने लख लोडू कार्पासके लखका लो व्यवहार पारख बिद्या था।

विभावतके लख लालि लख घोर लुकाका प्रमेय लयलम्बने ल ली। लनके लिबट लली लख लो। सुतरां लख लखने लगी,— “क्या लकीं पेड़ पर लख लीतो है। लयोको लोकर लमाने देयको लन लिकाडू लको” १५७५ ई० में प्रथम इस्त्रके ल्णमें लयावस्त्रका लख बना था। १५७८ ई० में लिलावतके लयलविहीने देयके लोनोंमें लिबट लुन्क प्रभाव लनेके लिये एक सुल्लक लिलाका। सुल्लकका लाम “The ancient Trades decayed and repaired again” ला। लखलतोय क्रमशः लकने लगा। लयलमेल्ख लिर लिर रल न लको, १७०० ई० में एक लानु लना था। लयके लयावृत्तार अपने लार्ण्यय प्रबोलनके लिये लयोत्

अगमोपयोग या गृहस्थित द्रव्यादिके लिये कपासकी छोटका कपडा खरीदनेसे क्रोता या विक्रोताको २०० पाउण्ड या २०००) ६० तुर्माना देना पड़ता था। किन्तु कार्पासके ऊपर लोगोंका इतना प्रेम रखा कि गोपनमें उसका व्यवहार चलने लगा। क्रमशः इङ्ग्लैण्डमें भारतीय वस्त्रपर छोटकी मोहर लगी और भारतके बने दोनों वस्त्रोंके प्रचारसे जनका आदर घटा था। फिर दत्ती बनानेके लिये कार्पासकी भांति दूसरी सामग्री नहीं मिलती। उसका साधारणको प्रयोजन भी पड़ता है। अन्ततः उसके लिये भी कार्पासका प्रयोजन हुआ। कानूनने उसे रोकना चाहा न था। पार्लियामेण्टमें इस सम्बन्ध पर बहुत तर्क चला कि भारतीय कार्पास इङ्ग्लैण्डके जनका अनिष्टसाधन करता है। १६२३ ई०की ८ वीं मार्चको पार्लियामेण्टने घोर-तर तर्क वितर्क कर स्थिर किया कि प्रति वर्ष एकले कार्पासके लिये ही ८ लाख रुपया विस्त्रायतसे बाहर जाता है। वैसा अर्थनाय जातीय स्वार्थके लिये विशेष अनिष्टकर है। इतिहासकी वही कथा आजकल भारतमें प्रतिफलित है। मन साहब ईष्ट इण्डिया कम्पनीके एक डिरेक्टर थे। उन्होंने १६२१ ई० को हिस्साव लगा कर देखा कि उस वर्ष ५०००० खण्ड कार्पास वस्त्र विस्त्रायत गया था। एक खण्ड खरीद जहाजसे लेजाने पर साठे तीन रुपया खर्च पड़ता, जो विस्त्रायतमें १०) ६० की विक्रता था। उससे लाभ यथेष्ट रहा, कम्पनी उतना लाभ छोड़नेको प्रस्तुत न थी। आसन्नकी साथ २ लाभका भाग भी बढ़ने लगा। १७०८ ई० को प्रसिद्ध पण्डित डिफो साहबने वीकली रिव्यू (Weekly Review) नामक पत्रमें लिखा था,—“भारतके साथ यह वाणिज्य बढ़नेसे जनका कारवार आधा विगड गया। इङ्ग्लैण्डके अधिवासियोंका अर्धश जन्मकी भांति अन्नहीन हुआ”

१७२० ई० में दूसरा कानून निकला। उससे क्या इङ्ग्लैण्ड, क्या स्काटलैण्ड क्या आयरलैण्ड कहीं भी कोई व्यक्ति किसी प्रकारका कार्पासवस्त्र अङ्गपर परिधान कर न सकता था। कार्पासवस्त्र पहननेसे ५०) ६० तुर्मानाकी सजा थी। फिर विज्ञाना, तकिया

परदा या किसी दूसरे काममें सूती कपडा लगानेसे २००) ६० तुर्माना देना पड़ता था। किन्तु कानून बननेसे ही क्या हुआ, इङ्ग्लैण्डीय मस्जिदोंकी टाँटि कार्पासकी और जा चुकी थी वेगभूयाका कानून उनके हाथमें था। १७३६ ई०में कानूनकी कठोरता लोगोंको घटाना पड़ी। पीछे कानून निकला था—“कपासके कपडेका ताना पाट (जिनन) के सूत्रका रहनेसे इङ्ग्लैण्डमें कोई भी इच्छा करनेसे उसे बना सकेगा।” उसके पीछे ३५ वर्षके बीचमें वाट आर्कैराइट प्रभृति साहबोंने तरह तरहकी कलें निकालीं उनमें बहुविध सुलभ मूल्यसे उन्नत वस्त्र बनने लगा। १७७४ ई० में इङ्ग्लैण्डमें कार्पासवस्त्र प्रस्तुत करनेके लिये व्यवस्था भी हुयी थी। फिर कलके कारखानोंमें वस्त्रव्ययनको कपासकी रूईका प्रयोजन पडा। उसीसे भारतके सर्वनाशका सूत्रपात हुआ था। भारतसे कार्पास वस्त्रके बदले कपासको रूई इङ्ग्लैण्ड जाने लगी। कलके कारखानोंमें अधिक रूईकी जरूरत थी। भारतकी रूईके साथ साथ अमेरिकाकी रूई भी वहां पहुंचने लगी। १८ वें शताब्दके शेष और १९ वें शताब्दके आदिमें अमेरिकाकी रूई मंगायी गयी। उससे पहले अमेरिकाकी रूई इङ्ग्लैण्ड जाती न थी। क्रमशः वह अधिक परिमाणमें वहां पहुंचने लगी।

ईष्ट इण्डिया कम्पनी भारतसे अधिक परिमाणमें रूई भेजना चाहती थी। किन्तु अमेरिकाकी रूई प्रेषणाकृत उत्कृष्ट थी। उसीसे उसका आदर भी अधिक रहा। १७८८ ई० की कोर्ट आफ डिरेक्टरने भारतके गवर्नर-जेनरलको उत्सृष्ट रूई भेजनेके लिये पत्र लिखा था। उससे समझ पडा कि इङ्ग्लैण्डके बाजारमें अमेरिकाकी रूईके साथ भारतीय रूईकी विलक्षण प्रतिद्वन्द्विता लगी थी। उस दन्दमें कभी भारत और कभी अमेरिकाने जय लाभ किया। किन्तु अमेरिकाकी लंबे घागेवाली रूईका आदर और भारतकी छोटे घागेवाली रूईका अनादर क्रमशः होने लगा। फिर भारतीय रूईमें मिश्र-वट रहनेसे अनादर अधिक बढ़ गया। किन्तु अङ्गरेज भारतमें अमेरिकाकी भांति अच्छी रूई

पदा करमोंको विधिय वैशित हुये। भारतमें छवि एवं पुष्य समितिसे मन्त्री घोर बहुतसे दूधरे लोगोंने लपके विधि बड़ी चेष्टा की थी। १८३० ई०में बसबलो के निकट पावाडा नामक स्थानमें १०० बीघे जमीन की कपासकी खेती कराओ गयो। तीन वर्ष पीछे देखने पर कोई विधिय फल न निकला। लखीके बह परिवारक हुयो। १८३८ ई० में पमेरिकासे बीज पीर लये गये इसीके साथ दग पारदर्मी लोग भारत बुलाये गये। उनसे तीन बम्बई, तीन मद्रास और चार पादमी कृषाक में रहे। बहुत चेष्टा करके भी मिकको कोई ज्ञातो फल न मिला। फिर पमेरिकाकी दुईका बीज भारतके कप-कोंकी दिया गया। १८३३ ई० को पमेरिकामें युद्ध लया जा। उसमें वहाँकी दुई बाहर जान लयो। अंगरेज भारतमें पमेरिकाको प्राति दुई वेदा करमोंकी विधिय चेष्टा करके ली। भारतकी दुई भी पुन लयो यी। १८३० ई० से पचसी वर्षतौन करोड़की कपास बिलायत जाती थी। किन्तु १८६६ ई० को १० करोड़को दुई भारतसे बिलायत भेजी गयो। १८८० ई० को पमेरिका विरुद्ध मिटा जा। लखीके साथ भारतीय दुईको रचतनी भी बट लयो। १९ वर्ष ८ करोड़ बपेसि भी कामको दुई की रचतनी हुयो।

१८६९ ई० में एक बम्बई प्रदेश घोर एक मन्त्र प्रदेशमें जाटन बमियनर निवृत्त हुवा जा। लखी वर्ष बम्बेया दुईको मिलावट निवारण करमोंको कामन बना। मिककी विदेशीय बीज छोड मन्त्र द्वारा देशीय कार्यासको कपति करमोंकी चेष्टा हुयो। वह चेष्टा कुछ कुछ फलवती हुई थी। पाक भी बिलायतमें भारतकी दुईका बहिष्कार है। गोपे ताबिका हो जाती है कि १८०० ई० को इङ्ग्लैण्डमें बिब बिप देशके जितने दुईको गठि पङ्गु थीं।

पमेरिकासे १६६३ ई० भारतसे १०६३ ई०, ब्रिजिजसे ३०३० ई० मिसरसे २१८८ ई०, चीर बह पच्छीम दीपसुखसे ११३१ ई० गठि। भारतको दुईका घेर पीछे इङ्ग प्यारक जाना मूल पङ्गु था।

घट जाती मो पाककल इङ्ग्लैण्डमें भारतकी दुईका बहुत पादर है। इङ्ग्लैण्डकी छोड़ भारतका दुई

पन्थाय देशोंमें भी भेजी जाती है। १८८८-८९ ई०को इङ्ग्लैण्ड १० लाख, रटाको ० लाख पङ्गुया ० लाख, वेनजियन ८ लाख फ्रांस १ लाख, चीन १ लाख, जर्मनी १ लाख ८० हजार घोर कप सेट साथको दुई भारतसे पङ्गु की थी। घटपुम्बतोत इङ्ग्लैण्डके पन्थाय देशोंमें लये ली जाती है। चीनमें सर्वत्र कार्यास लपजता है। फिर भी वहाँ भारतीय दुईकी लफरत पङ्गुकी है। किन्तु यूरोपमें महाकमर हो जानेसे भारतको दुईकी काम रचतनी होती है। दूधरे महाका गांधीने भारतमें बीज साथ करके बकानिवा प्रादेय दिया है, लखीके दुईका बाहर निवृत्तना पत्र लोग पङ्गु नहीं समझते।

बाहर भेजनेके लिये दुईकी गांठ बांधना बहुतो है। फिर पाने जानमें बहाककी सुबिधा पनुबिधा भी देखते हैं। निवृत्त चेष्टा होती रचती है—बहाककी छोड़ो कमजमें केरी न्यादा मास भर दिया जाय। बहाकके कामानुसार बिरावा भी ठहरता है। मङ्ग-जनोंकी बिराया देना पङ्गुता है। सुतरां समझनेकी चेष्टा की जाती है—पल फलमें जितना पबिब मास लड लखिना। लखी लखेसे दुईकी गांठ बटाने घोर लसमें न्यादा मास लखानेकी चेष्टा हुवा करतो है।

दुईके परिमाणातुसार गठि बटती बङ्गुती है। फिर बहाकके लिये दुईकी गांठ बहुत बटा दी जाती है। लसमें भारतमें बिलायती कार्यासकल प्रसुत हुयो है। लस कलको संख्या दिन दिन बङ्गु रही है। १८८८ ई० को भारतमें लोई ठाई ली वेसी कले ली।

भारतकी दुई इङ्ग्लैण्ड जाती है लसके बहुतसी कसोंमें लस देयका पयोजन ललित होता है। फिर इङ्ग्लैण्ड देशके प्रयोजनसे पबिब कार्यासकल प्रसुत कर लखता है। मिककी बसका बसादि भारत भी भेजा जाता है। वह भारतमें पाकर लपता है। कामय भेनपेहरकी कसोंमें भारतीय कार्यासके लिये पङ्गुबा पनुबकल जनि लता है। वह इङ्ग्लैण्डसे भारतको भेजा जाता है। सामान्य लोय कल्य मूल्यमें लखे लखीके लखेकार करते हैं। लखीके भारतीय लखुबावाका लखेदाय लोय लोनीकी लखेजाने कापङ्गु है। लखेदाय

मात्रमें प्रतिबन्धना रहती है। विनायतमें मजदूरी ज्यादा और भारतमें कम पड़ती है। फिर भारतमें रुई विनायत ले जाने और घड़ा कपडा बनाकर भारत पधुचानेमें भी खर्च लगता है। भारतमें यन्त्र दुननेकी कल खड़ी करनेसे यह व्यय निवारित हो सकता है। इसी विवेचनार्थ इङ्ग्लैण्डके भोगोंने घड़ा या कल खोलनेकी व्यवस्था की है। इससे समझ पडा कि इङ्ग्लैण्डसे कल लाने और समके चलानेमें अन्ततः इङ्ग्लैण्डकी कलसे भारतकी कलमें बहुत अधिक व्यय लगा था, किन्तु उसके पीछे दूसरी सम सुविधा रहीं। १८५१ को एक समिति बनी थी। १८५४ ई० की प्रथमतः बम्बईमें कपड़ेकी धन्त रुची। उस समयमें अंगरेज व्यवसायी क्रमशः कर्जोंकी संख्या बढ़ा रहे हैं। आजकल बम्बई, इन्दौर, जयलपुर, हींगनघाट, नागपुर और द्वावाद, हैदराबाद, कानपुर, भागल, कलकत्ता, मद्रास, देसायी, पालिकट, कीयलपुर तूंतकूडी, त्रिनवली, त्रियांर, मद्रास और पुदिचेरीमें कपड़ेकी कलें चलती हैं। उनमें कहीं सूत काता और कहीं कपडा बुना जाता है। प्रतिवयं लाखों मन रुई खर्च होती है। हजारों पुरुष, स्त्रियां, बालक और बालिकाये कामपर नियुक्त हैं।

कार्पास हलने रुई संग्रह कर परिष्कार की जाती है। रुईमें बीच बीच बहुतसे बीज लगे रहते हैं। उन्हें निदान डालना आवश्यक है। इसीसे किसी समतल गद्दार खण्ड वा समतल स्थान पर रुई फैला देते हैं। उसपर एक हाथ लंबा लोहदण्ड रखा जाता है। फिर उसपर खड़े हो कर पैरसे मांडते हैं। उससे बीज नीचे गिरने पर ऊपर साफ रुई रह जाती है। रुई साफ करनेकी चरखी भी होती है। उसमें मोड़े या लकड़ीके दो गोल छण्डे बराबर बराबर लगे रहते हैं। फिर घुमानेसे यह दोनों संलग्न भावमें घुमने लगते हैं। दाहने हाथसे सुठिया पकड चरखी चलायी और बायें हाथसे उर्हीं मिली हुए छण्डोंमें रुई लगायी जाती है। ऐसा करनेसे नीचेकी चार बीज गिरती और आगे साफ रुईके गाले पड़ते हैं। अमेरि-

कामें इसके लिए मजिन नामक एक प्रकारकी कल भी बनी है। फिर किसी यन्त्रमें भरनेके लिए उक्त रुई विश्चारीने साफ की जाती है। उसका नाम धगुपी और कमान भी है। उसमें तांतका एक त्रिंवा रोटा चटा रहता है। सामने छंद रख कमानकी बायें हाथसे पकड़ते हैं। फिर रोटा रुई पर जमाया और समया एक छोटे मोटे छण्डेमें आघात लगाया जाता है। इसमें रुई पृथक् मान होती है।

पहले हिन्दुस्थानमें रुई हाथसे साफ की जाती थी। यह काम पायः शिथी हो करभी थी। रुई साफ होनेपर चरखेमें सूत कातते थे। पहले हिन्दुस्थानमें घर घर चरखा चलता था। गृहस्थ-रमणी गृहस्थालीका काम निवटा अथकागरे नमन घरके पा बैठ सूत कातती थीं। तद्दुषे पर सुतरी पाठी या पोमो जमा रहती थी। यन्त्रवयन तन्तुवाय भोगीका कार्य था। यह गृहस्थोंके घरसे बांरी पगोद ले जाती थी। तन्तुवायकी मियां पायनका मांडू लगा सूतकी दृष्ट बनती थी। उसका नाम घोर है। तन्तुवाय उन सूतकी तांतपर चटा पल्लयधन करते थे। पात्र भी पैसा हो होता है। पहले देगके सब भोगका यन्त्र ऐसे ही बनता था। हिन्दुस्थानमें स्थान स्थानपर सुन्दर सुन्दर कार्पास यन्त्र बनते थे, जिन्हें सिद्देगोय धनिक, समादरसे मोन ले घनोपार्जन करते थे। टांसेमें सर्पिंसा उत्कृष्ट यन्त्र प्रस्तुत होता था। देमा मूछ यन्त्र कहीं देख पड़ता न था। नीचे उनके कुछ नाम लिखते हैं,—

१ मजलन—प्राधरोयान्, तगजी, व, मलमल— सर्पिंसा उत्कृष्ट है। शवनम, खामा, भीना, सरकार भासी, महाजन और तेरिन्दम हिताय अेषीमें परिगणित है। वाफता,—यथा हम्माम, डिमटो, गाम, जद्दखल स और गुनूधन्द लतीय अेषीमें है।

२ डारिया—डोराकाट, मसकिन (वारिक वस्त) रासकोट डालान, पादगाहदार, कुन्दोदार, कामुजो, कसापात।

३ चारखाना—छोट मसकिन छह प्रकारकी थी।

यथा—मन्दनगङ्गा, घनारवाणा, कञ्जतरण्योप, मञ्जुत, बकाहा और कुँडिकार ।

४ ब्राह्मणानो—पञ्चरेत्र रमणी मेनमुद्य यद्वती यि । साधारण यच्च वृष्टेशार होमी मी । यथा—हवरन वृष्टी, मन्मथ दुबनीमान मिन, तिरवा । एतद्व्य तौत डारिणी चोती, घोड़नी और छाड़ो चिर प्रविष्ट है ।

एतन्नि तन्वायोनि दिवावा और दिवाते मी है—दरैवा बागा जितना बारीक बन सज्जता और जन जातीने क्रीमा जमटा कपडा गुना का म जाता है । इससे लम्बन्में एक गज्य है । यह मान खपर निखे नामोको पदते ही समझ पठती है कि लुननमान बाह्यगोडे समय उन बज्जोका विगिय पादर रडा । कहते हैं कि औरइसीबकी एक जन्वा उनसे निभट उच्च टाकेसे बज्ज पचनकर एहू ची हो । यितानि बसे मरवांता ही कि बज्ज कल्पाचीन है । उत्तरमें जग्यानि बजा ठि उनने मान तरडका कपडा पचना था । नवाक थनीबर्नी खान्के समक किमी गुनाइमें एक बीवा कपडा चासपर लुनानिकी बाधा का । बज्जकी गाय बजां काम चरने जयी । चापने कपड़ेको चास समझ बजा गिया । सूखनाका इससे अधिक परिचय दूधरा क्या हो सजा है । उच्च सूख बज्ज प्रस्तुत करनीमें बजा समय जगता है । २० चाप लम्बा और २ चाप चौड़ा बेसा कपडा तुननिमें ३।६ माघ बीत जाये हैं । तिसपर भी योइसे समझ तुननेका बीह नहीं बैठना । बजांकाय जो बेसि कार्पासबज्जके तुननेका उत्तम समय है । उच्चका मूख गोन चार हो कपड़ेके बस नहीं जयता । जो जिवां बेसा सूख चल सातती यो उनमें पनेक न रहाँ दो एक काम मो बनी हैं । चाक उन बज्जोका बिलकुल पादर नहीं जाता । फिर पाया भी नहीं बनी उनका पादर बीना । पाचकत विनाजती बरुषि कपड़ेसे देय भर गवा है । लीभाय्य समधि पाच मो देसके कुछ बीन देगीय टापास बज्ज पचनेसे हैं । उच्चोके किन्दुखानमें म्वात खान पर सेयी कपडा घोड़ा बहुत बनता जाता है । किन्तु

एत इहलेखसे धाता है । पइसे रत देयमें बज्ज बनाकर बिदेग ऐत्रती यि । चात्रकव विवै करेकी रचनती होनी है । हुतरां बज्जबज्ज करमिगकोमिं पनेक भज्जोन और जग्याबज्जवाय पावित है ।

पाचाममें पाच मी देया कार्पासके देयी बज्ज प्रस्तुत होता है । जिवां ही एत जातती और कपडा तुनती है । किन्तु बजां मी विजायती बज्जका पादर जमगा बड रहा है । पाचामिणीके बज्जतसे कपड़े कपासमें बनते हैं ।

सुखप्रदेयके सिक्कराबाद और तुनन्दयहरमें बज्ज बारीक कपडा तैयार होता है । इससे बिगारे करीबी मोट जगती है । दुपडे और पवहीमें हीबरीकी गोटन पबिच ब्यवहार है । सिक्कराबादके दुपडे बट्टा पच्छे होते हैं । पाचमगडका बना बारीक कपडा जियामें बहुत खपता है । एबबका भरवती, मज्जमक, पजी और तारम्ह मूख वज्ज प्रविष्ट है । रापबरीकी कि चर नामक खान, बायी और येनाबादके टाईमें पलिचमज्जारी मूख बज्ज प्रस्तुत होता है । किन्तु एबबके पचःपतनसे उच्च काइकायें मो बिगड़ गवा है । रामपुरका कार्पासनिर्मित खीसा कलकत्तेको प्रदूर्यनीमें सुरक्षत हुआ था । सुरादाबाद, प्रतापगढ़, बानपुर, ललितपुर, माइपुर, मिर्छोडी, पचोमक, झांकोई पन्थयेंत मज्ज, चात्रमगडके पन्थयेंत मज्ज, सज्जलपुर, मिरठ और पागटा पचसमें मानाबिबि कार्पासबज्ज बनता है । उच्चमें जितना जो पाच भी बिदेग मिका जाता है । एतद्व्यगीत गाऊक, मबी और चोती जोड़ा सुखप्रदेयके प्रायः सबक खानोंमें प्रस्तुत होता है । देयके पाचाम्ब बीन पबिचकाय बज्जो बज्ज ब्यवहार करती है ।

पञ्चावप्रदेयके पूर्व एक प्रकारके मज्जनिनके हुन्दर पगड़ी बनती यी । बज्ज वज्ज पात्रकक देख नहीं पड़ता । जीविदारपुर, बिरवा वालम्बर, कोबियाला, माइपुर, शुबदानपुर और पट्टिकाक्षीमें पगड़ीका कपडा बनता है किन्तु बज्ज पूर्वको भांति उच्च ए नहीं होता । रीजतकर्म तबीब नामक एक प्रकारका पविजाकत कल्हूट मलबिन बनाया जाता है । माचम्बरमें घाट नामक मारकागकी भांति मोटा कपडा होता है ।

उसपर एक प्रकारका कारुकायं रहता है। वह गुगुन पत्तीकी आंखके आदर्श पर बना जाता है, इसे "गुगुन-चश्म" कहते हैं। आजकल इस शिल्पका लोप हो रहा है।

अब तो केवल खेस, लंगो एवं सूमी नामक बारीक वस्त्र और दुसूतो, गाढा तथा गजी नामक मोटा कपड़ा ही देख पड़ता है। राजपूतानमें भी गीर्वाण चार प्रकारका वस्त्र बनता है। ग्वालियरके चाँटेरो नामक स्थानमें उल्कृष्ट मसलिन तैयार होता है। इन्दौरका मसलिन भी बहुत खराब नहीं रहता। देवास राज्यके भन्तगंत सारंगपुरमें धोती, साडी और पगडी प्रसृत होती है।

मध्यप्रदेशके नागपुर, भण्डारा और चाँदा जिलेमें आज भी सूत्र सूत कतता और उससे वस्त्र बनता है। १८६७ ई० की चाँदा प्रदेशमें एक प्रदर्शनी हुई। उसमें हाथका बना सूत देखाया गया था। वह सूत इतना बारीक रहा कि सिर्फ़ आध सेर सूत ५८ कोष लंबा निकला। नागपुरमें रुईका पेंच खुल जानेसे उक्त शिल्पका बहुत गौरव घट गया है। किन्तु पेंचका सूत आज भी उतना उत्कृष्ट नहीं होता। उससे कुछ कुछ गीरव हुआ है। देशी वस्त्र अधिक दिन टिकता है। इसीसे वहाँके गरीब लोग विनायतीसे देशी वस्त्रका आदर अधिक करते हैं। होशंगाबादमें देशी वस्त्रका व्यवसाय बढ़ रहा है।

दाक्षिणात्यके हैदराबाद अखिल पर रायचूर जिलेमें खाकी रंगका मोटा कपड़ा और नन्देर जिलेमें बारीक मसलिन तैयार होता है। मन्ड्राज प्रांतके अरनी नामक स्थानका बारीक मसलिन अति उत्कृष्ट रहता है।

वस्वई प्रदेशमें विन्नायती वस्त्रका विशेष आदर बढ़ते भी गांव गांवमें रुईका देशी मोटा कपड़ा बनता है। सामान्य लोग मोटो साड़ी और पगड़ीका विशेष आदर करते हैं।

अनेक स्थानमें रुईके सूतमें रेशम या ऊन मिला तरफ तरफका कपड़ा बनाते हैं। कहीं कहीं रुईके कपड़ेमें रेशमी क्रिनारालगाया जाता है। फिर कहीं रेशमी वेस बूटे, जरीके वेसबूटे और सूईका काम

बनते हैं। उसके अनेक नाम हैं—कारचीवी, कनाइचू, विकन, कामदानो और जामदानो। जामदानो—करना, गोहेदार, बूटोदार, और तिरछा पाटि कट्टे प्रकारको होती है।

फुमदार रुईके नागाविध वस्त्र कनकत्तेके निकट बनाये जाते हैं। उनकी विप्री हथड़ेके बाजारमें अधिक होते हैं।

रुईके वस्त्रपर तरफ तरफका रंग चटाया जाता है। उसपर छाप भी कई प्रकारको लगनी है।

रुईका कपड़ा पण्डे अगरेज कारी कटमें ले जाते थे। उसीसे उन्होंने उसकी कैलिको (Calico) नामसे अभिहित किया है। रंग देनेको कैलिको-डाइंग (Calico-dying) और छाप मार छींट बनानेको कैलिको-प्रिण्टिंग (Calico-printing) कहते हैं। इसी किसी कपड़ेपर सुनहलो छाप पड़ती है। छाप लगानेसे तरफ तरफकी छींट बनती है। छींटके कपड़ेसे रजार्ड, तकियेका गोलाफ, तोमज, पलंगगोय, जाजिम, गामियाना वगैरह तैयार होते हैं। रंगदार कपड़ेमें धान बहुत अच्छी रहती है। फिर छापदार कपड़ेमें चुनरीका प्रचार अधिक है। इस देशमें रजक ही रुईका कपड़ा धोते हैं।

विनायती पेंचके प्रभावसे देशस्य कार्पास-शिल्प क्रमशः लुप्त हो रहा है। मन्नावना ऐसी होने लगी है—जो शिल्प है वह भी काम पाकर न रहेगा। पहले कार्पासवस्त्र देशके प्रयोजनमें लग उद्भूत होनेपर विदेश भेजा जाना था। अब वह समय नहीं रहा। आजकल शिल्पी अस्वहीन हो गये हैं।

भावप्रकाशके मतमें कार्पासवस्त्र—लघु, पंचत् उष्ण-वीर्य, मधुररस और वायुनाशक हैं। उसका पत्र—वायुनाशक, रक्तकारक और मूत्रवर्धक होता है। रोज—स्तन्य-दुग्धवर्धक, शुक्रवर्धक, सिग्ध कफकारक और गुह है।

(वि०) कार्पासस्य विकारः अवयवा वा, कर्पासी-प्रण। विश्वामिहोऽ८। पा ४१।२६। २ कार्पासजात, कपासो, कपासका बना हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—काल और वादर है।

“एकं वस्त्रमकार्पासनामिकं सृष्टं चाजिनं।” (भारत १।१०।२४)

कार्पासक (सं० पु० श्लो०) कार्पास खासं कम् ।
कार्पास इत्य, कर्पासका पेह । इमका संस्कृत पठाय—
कार्पास, कार्पासो, तुष्यद्वेरी चौर समुद्रात्ता है ।

कार्पासको (सं० श्लो०) कार्पासो, कर्पास ।
कार्पासतेक (सं० श्लो०) नाडीद्वयका तेकद्वियेय कर्पासका
सिद्ध । त्रिकुवा तैल ३ मारायक, कज १६ मारायक चौर
कार्पासमूल तथा हरिद्राका कच्छ १ मारायक धसाविष
पकान्ति यद्द हिल बनता है । (रत्नकर)

कार्पासधेनु (सं० श्लो०) कार्पासवस्त्रनिर्मिता धेनुः,
सन्धपदलोपी कर्मधा० । दानके द्विये कार्पासनिर्मित
धेनु, कर्पासको मास । बराहपुराणमें बरुई दानका
विधि बहो है । यथा,—“विपुवर्सात्ताको, वृगतन्धके
दिन थीर पङ्कपोडा, पुष्पद्रव्यम एवं चरिह कर्पासादि
धमद्रुम पङ्कके पवित्र देवानाम यज्जवा विद्युध मीचाराय
कसपर मोमय द्वारा दानदान लोपना चाहिये ।
पिर कसके कपर कुय तिल जोका देते हैं । कपके
पीले कस म्यानेके मध्यस्थले धेनु ख्यापनकर बज,
माका, कनुसेयन, मेवेय चौर बृप होयादिये पूजा करना
चाहिये । पनकर कुयबहु दानमज्ज पङ्क चरुके पाय
कार्पासधेनु विधानिका देनी पङ्कती है । बह ३ मार
बज्ज द्वारा निर्मित होमेके कसम, २ मार बज्ज द्वारा
निर्मित होमेके मज्जम, चौर १ मार बज्ज द्वारा निर्मित
चरुके पचम मिनी खातो है । कज परिभाषके
चतुर्मा ध द्वारा बना बनाना पङ्कता है । पिर कार्पास
धेनुके कसम दना नामाविष पङ्क द्वारा, हुर रीय्य
द्वारा चौर मुद्र कर्पासद्वारा निर्माय करते हैं । इसका
सर्मस्यत्र विविध रसने पूर्व किया जाता है । इम
प्रकार कर्पासिध धेनु दान करनेके पन्तिम समय
रन्नुकोक मिलता है ।”

कार्पासामिका (सं० श्लो०) कार्पासज्ज नासिका इव,
उपमि० । तङ्क, तक्का, तक्का ।

कार्पासपर्वत (सं० पु०) कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत,
सन्धप० । दानके निर्मित कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत
कुरेक मयङ्केका पङ्कङ्क । ब्रह्माण्डपुराणमें उचडे दानका
विधानादि इव प्रकार निपा है,—“द्विसलय प्रकृति
पवित्र स्नानका विषयय गोमयके सोय लवणर कुय

धीर तिष्ठ पेका देना चाहिये । पिर कसके मध्य
दशमें कार्पासवस्त्रनिर्मित पर्वत ख्यापना कर कर्पासिध
पुत्रा समानान्त कुयबहु मन्धपाठपूर्वक विज्ञातिका
दान करती है । उक्त कार्पासवस्त्रारामि विद्यति भार
होमेके उत्तम, इय भार होमेके मज्जम चौर पङ्क मार
होमेके पचम पिना जाता है । कसमें विविध कस्य
प्रकृति चौर नामाविध चोपधि तथा रस मन्धिविह
करते हैं । कार्पासपर्वत चारो दिक् कर्के मिषर,
विविध रज्ज चौर नामाप्रकार मन्धमोप्युक्त चार
कुवाचम ख्यापन कर दान करनेका विधि है । इस
प्रकार दान करनेके सोय इय लवण, होता है ।”

कार्पासधेनुजिह (सं० श्लो०) कार्पासवस्त्रेण निर्भूतः,
कार्पासवस्त्रेण ठक् द्विपङ्कतिः । कार्पासके धेनु द्वारा
निर्मित, कर्पासके धेनुका बना हुआ ।

कार्पासामि (सं० श्लो०) कार्पासामां पक्षि, ६ तत् ।
कार्पासवीज विनोका ।

कार्पासिक (सं० श्लो०) कार्पासज्जकार्पास, कार्पास-उक् ।
कार्पास द्वारा निर्मित, कर्पासका बना-हुवा ।

कार्पासिका (सं० श्लो०) कार्पासो ख्याः कम् टाप्
पूर्वेकः । कार्पासो, कर्पास ।

कार्पासो (सं० श्लो०) कार्पासकालिकात् लोप ।
रज्जकार्पासवस्त्र, काल कर्पास । इयका संस्कृत पर्याय—
बहारा, तुष्यद्वेरी, समुद्रान्ता, मारिचो, चम्पा, तुका,
गुङ्क तुष्यद्वेरिका मन्धका, विद्रु थीर चारु है ।
कामे (सं० श्लो०) कर्मसु घोके पङ्क कायादिलात् पाः,
निपातनात् सात् । १ पङ्कको पाकाहा जोङ्क कर्म-
करनेवाला, जो मतीका मिनकेको पाहिय म रज्ज काम
करता हो । २ कर्मयोग, कामकायो ।

कामेश, कर्पास देवी ।

कामेश (सं० श्लो०) कर्म एव, कर्म खासं-पञ् ।
बहुवचन कर्मेश्वर । प १५११ १ मूलकर्म, काहु,
दोना । चोपवादिके मूलके लो मालम, क्काटन,
मारण, बगीकरय प्रकृति कार्य किया जाता, बही
सामंय कङ्कता है । २ मन्धतन्नादि चोप । (श्लो०)
कसवाकालेन पश्यन्, कर्मसु पञ् । १ कर्मद्वय,
काममें होयियार ।

कर्मण्यत् (सं० स्त्री०) जादू, टोना, मॉन्डिनी ।
कर्मण्येयक (सं० पु०—स्त्री०) जनपट विगेष, एक वसती ।

कर्मणोन्माद (सं० पु०) उन्माद विगेष, एक पागल-पम । यह रोग मन्त्रोपधिके प्रयोगसे हो जाता है । इसमें स्कन्ध एवं मस्तक गुरु लगता, नासिका, चक्षु, हस्त तथा पदमें दुःख घटता, वीर्य घटता और रोगी दुर्बल पडता है । फिर शरीरमें कोंडे सूई जैसे सुभाया करता है ।

कर्मना (त्रि०) कान्च देवी ।
कर्मरौ (सं० स्त्री०) वंशरोषणा, वंशलोचन ।

कर्मर (सं० पु०) कर्मर एव, कर्मर स्वार्थे ञप् ।
१ कर्मकार, लोहार । (कर्मरस्य ञपत्यम्)
२ कर्मकारका पुत्र, लोहारका लडका ।
कर्मरक (सं० स्त्री०) कर्मरेण कृतम्, कर्मर-दुत्र ।
प्रथादिशो दुप् । पा ३।१।२८ । कर्मकारकृत कार्यं, लोहारका बनाया काम ।

कर्मर्यं (सं० पु०) कर्मरस्य ञपत्यम्, कर्मर-व्यप् ।
१ कर्मकारका पुत्र, लोहारका लडका । (त्रि०)
कर्मकारस्य इदम् । २ कर्मकारसम्बन्धीय, लोहारसे सराकार रखनेवाला ।

कर्मर्यार्थणि (सं० पु०) कर्मरस्य ञपत्यम्, कर्मर-क्तिष् निपातनात् कर्मर्यार्थेभ्यः । कौण्य कान्वांवा-व । पा ३।१।१३ । कर्मकारका पुत्र, लोहारका लडका ।
कर्मिक (सं० त्रि०) कर्मणा द्विकर्मणा निर्हृत्तः ।
१ कर्ममें नियुक्त, काममें लगा हुआ । २ निर्मित, बनाया हुआ । ३ नाना वर्षके सूत्र द्वारा चित्रित किया हुआ, जिसमें रङ्ग रङ्गा सूत्र लगे । (स्त्री०)
४ वस्त्र विगेष, एक कपड़ा । इसमें नानावर्णके सूत्रसे ब्रह्म खंदिनादि चिह्न बनाये जाते हैं । (सिमाचरा)
“कर्मिके रोमरुहे च विभद्भागदयो मतः ।” (याज्ञवल्क्य ३।१८१)

कर्मिक्य (सं० स्त्री०) कर्मिकस्य भावः, कामिक-यक् । पदल पुगेतिदिशो यक् । पा ३।१।२८ । कर्मशीलता, परिश्रम, दीङ् धूप, मेहनत ।

कर्मिक (सं० स्त्री०) कर्मण प्रभवति, कर्मण-उकच् ।
कर्मिक कर्मन् । पा ३।१।११ । १ धनुः, कमान् । २ एक पौजार ।

यह धनुषके आकारका होता है । (पु०) कर्मिक-धनुः साध्यत्वेन प्रक्यप्य, कर्मिक-अच् । वंग, वाम । ४ श्वेत खदिर, सफेद खैर । ५ द्विजलसुव्र, एक पेड़ । ६ महाविष्य, वकायन । ७ चोखोनी । ८ साधवीलता । ९ सेप प्रभृतिके मध्य नवम राशि । १० रुद्र धुननेका यन्त्र । (त्रि०) ११ कार्यक्षम, कामकाजी । १२ श्वेतखदिरसम्बन्धीय, सफेद खैरसे सरोकार रखनेवाला ।

कर्मिकभृत् (सं० त्रि०) कर्मिकं विभक्तिं, कर्मिक-भृ-क्तिप् । धनुर्धारी, कमान् बांधनेवाला ।

कर्मिकासन (सं० स्त्री०) आसन विगेष, एक बैठक । पद्मासन लगा दक्षिण हस्त द्वारा वामपदकी और वाम हस्त द्वारा दक्षिण पदकी दो मङ्गलि पकड़े रहनेसे कर्मिकासन होता है । (रुद्रगमन)

कर्मिकी (सं० त्रि) कर्मिकं प्रप्यास्ति, कर्मिक-इति । धनुर्धारी, कमान् बांधनेवाला ।

कार्यं (सं० स्त्री०) क्रियते यद् तत्, क-एत्त्वात् ततो वृद्धिः । १ कर्म, काम । इमीको मध्य कर इती प्रवर्तित होता है । २ कर्तव्य, फर्ज । ३ हेतु, सबब । ४ प्रयोजन, मतलब । ५ ऋणादिका विवाद, कर्ज वगैरहका भगडा ।

“नीतुगदनीतु नर्त्तकादे राजा माप्य पुरवः” (मनु० ४२)
‘कार्यं आनादित्तिवदम् ।’ (इत्युक्)

६ अपूर्व । ७ उत्कृष्ट । ८ व्याकरणीक आदेगप्रत्यय । ९ आरोग्य, तनदुखमती । १० व्यापार, धन्या । ११ ज्योतिषशास्त्रोक्त जन्म नक्षत्रमें दगम स्थान । (त्रि०)
११ करने योग्य, किया जानैशाना । १२ लगाया या चढाया जानैशाना ।

कार्यकर (सं० त्रि०) कार्यं करोति, कार्य-कृ-ट । कार्यं निर्वाह करनेवाला, जो काम चलाता हो । कार्यकर्ता (सं० पु०) कार्यं करोति, कार्य-कृ-टच् । कार्यकारक, काम करनेवाला शख्स ।

कार्यकारक (सं० पु०) कार्य-कृ-ग्वन् । कार्य-कर्ता, काम करनेवाला शख्स ।

कार्यकारण (सं० स्त्री०) कार्यं च कारणश्च द्वयोः समाहारः । निलित कार्यं और कारण, नतीजा और सबब ।

कार्यभ्रष्ट (सं० त्रि०) कार्यात् भ्रष्टः, ५-तत् । कार्य-
भ्रष्ट, कामसे कृटा हुआ ।

कार्यवन्ता (सं० स्त्री०) कार्यवती भावः, कार्यवत्-तल् ।
कार्यविशिष्टता, कामसे लगे रहनेकी ज्ञानत ।

कार्यवत्त्व (सं० स्त्री०) कार्यवत्-त्व । कार्यवन्ता, काम-
काक्षीपन ।

कार्यवश (सं० पु०) कार्यस्य वशः दश्रयता । १ कार्यका
अनुरोध, कामकी मातहतता । (त्रि०) २ कार्यके
वशीभूत, कामके मातहत ।

कार्यवस्तु (सं० स्त्री०) कार्यार्थं वस्तु, मध्यपदलो० ।
कार्यनिष्पादनके लिये आवश्यक द्रव्य, काम करनेकी
जरूरी चीज ।

कार्यवान् (सं० पु०) कार्यमभ्यास्ति, कार्य-मत्तुप-
स्य वः । कार्यविशिष्ट, काममें लगा हुआ ।

कार्यविपत्ति (सं० स्त्री०) कार्येषु विपत्तिः, ७-तत् ।
कार्यके सम्पादनमें उपस्थित होनेवाली विपद्, जो
आप्त काम करनेमें पड़ जाती हो ।

कार्यशब्दिक (सं० त्रि०) कार्यः शब्द इत्याह, कार्य-
शब्द-ठक् । नैयायिक विशेष, एक मन्तिकी । यह
शब्दकी कार्य अर्थात् अनित्य मानते हैं । इसीसे इनका
यह नाम पड़ा है ।

कार्यशेष (सं० पु०) कार्यस्य शेषः, ६-तत् । १ आरब्ध
कार्यकी निष्पत्ति, शुरू किये हुए कामका श्रांतिमा ।
२ कार्यका अवशिष्ट अंश, कामका बाकी छिन्ना ।

कार्यसन्देह (सं० पु०) कार्ये कार्यस्य निष्पत्ति-
विषये सन्देहः, ७-तत् । कार्यकी निष्पत्तिमें अनिश्च
यता, कामके पूरा होनेमें शक ।

कार्यसम (सं० पु०) न्यायके मतानुसार चतुर्थश्रुति
जातिके अन्तर्गत एक जाति । लक्षण इस प्रकार है,—
“प्रयत्नकार्यानेकत्वात् कार्यसमः ।” (व्याकरण, ५।१।१०)

प्रयत्न सम्पादनीय वस्तु अनेक हैं । उसीसे कार्य-
सम नामक कार्य विशेष जाति होती है । जैसे—

“शब्दोऽनित्यः प्रयत्नान्तरीयकत्वात् इत्यादि ।”

मीमांसक शब्दको-नित्य मानते हैं । उसीसे उनके
मतमें शब्दकी उत्पत्ति नहीं होती । किन्तु किसी
वस्तुमें आघात लगने पर उस आघातसे शब्द प्रकाश-

मात्र पाता है । नैयायिक उस घातकी स्वीकार नहीं
करते । उनके यथमानुसार अनित्य होनेसे शब्दकी
उत्पत्ति होती है । अनित्यताके मध्यममें वह उक्त
'शब्दोऽनित्यः प्रयत्नान्तरीयकत्वात्' अनुमान वाक्य की
हा प्रमाण समझते हैं । मीमांसक उक्त अनुमान
वाक्यमें यों आपत्ति लगाते हैं,—‘इमं अनुमानमे
शब्दकी अनित्यता सिद्ध हो नहीं सकती । क्यों कि
प्रयत्नसम्पादनाय वस्तु अनेक है । अर्थात् नित्य और
जन्य सकल वस्तु प्रयत्न द्वारा आव्यनाम करते हैं ।
सर्वदा एक भावमें अवस्थित रहते भी प्रयत्नद्वारा
नित्य वस्तुकी उपलब्धि हो सकती है । जैसे यत्नपूर्वक
वस्तु उठा कर फेंक देनेसे वस्तुद्वारा अनित्यताकी
स्थिति स्थिर होना कठिन है । उसी दोषकी वह
“कार्यात्म” वा “कार्यविशेष” जाति कहते हैं ।

काय सम प्रभृति जातिसमूह दोषदाताके स्वपक्षको
क्षतिकारक हैं । उसीमें वह “अमदुत्तर” और “नव्या-
घातक” उत्तर नामसे अभिहित होते हैं । आदि देखो ।

कार्यसागर (सं० पु०) गुत्त कार्य, बड़ा काम ।

कार्यसाधक (सं० त्रि०) कार्य साधयति, कार्य-साध-
ण्च्-णवुल् । कार्यसम्पादक, काम पूरा करनेवाला ।

कार्यसाधन (सं० स्त्री०) कार्यस्य साधनं निष्पादनम्,
६-तत् । कार्यसिद्धि, कामयाबी । २ कार्यनिष्पादन
करनेका उपाय, काम पूरा करनेकी तरकीब ।

कार्यसिद्धि (सं० स्त्री०) कार्यस्य सिद्धिः ६-तत् ।
१ कर्तव्य कामकी निष्पत्ति, कामयाबी । २ अभीष्ट-
सिद्धि ।

“दिवं ब्रह्मपि चाभिहितगुणा शब्दो इत्यामे मयम् ।” (तिमिरध)

३ ज्योतिषोक्त एक सूत्रम ।

कार्यस्थान (सं० स्त्री०) कार्यस्य स्थानम् ६-तत् । १ कार्य
निष्पादन करनेका स्थान, कामकी जगह ।

कार्या (सं० स्त्री०) क्त-खत् टाप् । कारीहृत्, एकपेड़ ।

कार्यहन्ता (सं० त्रि०) कार्यं विनाश करनेवाला, जो
काम बिगाड़ता हो ।

कार्याकार्यविचार (सं० पु०) कार्येषु प्रकार्येषु तयोः
विचारः ६-तत् । कर्तव्य और अकर्तव्यका विचार,
करने और न करने लायक कामका स्वाह ।

कार्यालय (सं० लि०) कार्ये कार्यकारि पत्रम्' यम
मर्त् ० तत् । कार्ये कार्ये प्रपारग, जो काम करके
कार्य न हो ।

कार्याधिकारी (सं० पु०) पदाधिकारी, पदधर, कामका
इत्यादिधार रखनेवाला ।

कार्याधिप (सं० पु०) कार्ये अधिप, १ तत् ।
१ कार्यधिप, कामका मालिक । २ ज्योतिषीय कार्य
(दशम) स्थानका अधीश्वर ।

कार्याधीन (सं० पु०) कार्ये अधीन' अधिपति,
१ तत् । कार्ये अधिप, कामका मालिक ।

कार्याध्यक्ष (सं० पु०) कार्ये अध्यक्ष, १ तत् । तथा
वहायक, पदधर, कामका मालिक ।

कार्याधुरीण (सं० पु०) कार्ये अधुरीणः १ तत् ।

कार्येकी पदग्रहणकर्ताका स्थान कामका तबाला ।

कार्यान्त (सं० पु०) कार्ये अन्त, १ तत् । कार्येका
शेष कामका शान्तिमा ।

कार्योत्तर (सं० पु०) कार्ये उत्तरं कार्ये मन्त्रव्ययकादि
यत् नमाम । पद्य कार्ये, कुरमा काम ।

कार्योन्मित (सं० लि०) कार्ये कार्येन परिश्रितं कुत्र
१-तत् । १ कार्येन, काममें लगा हुआ । २ कार्येबोधक
पदका प्रतिपाद्य पर रखनेवाला ।

कार्योन्नि (सं० पु०) कार्येणानर, कामका डेर ।

कार्योत्थ (सं० पु०) कार्ये उत्थ पारथ, १ तत् ।
कार्येका प्रथम अनुष्ठान, कामका धामात् ।

कार्योत्थ (सं० पु०) १ कार्येका प्रयोग, कामका
मतत्व । २ प्रयोग, मतत्व । ३ कार्येमात कोनिका
पारिदेन कामपारिदेनी परी । (पद्य०) ४ कार्येके
हिये, कामके वास्ते ।

कार्योत्थिदि (सं० पु०) कार्ये उत्थ कार्येप्रयोगनप
विदि, १ तत् । इहेत्यदिदि, मतत्व पर 'पारिदेको
ज्ञानत ।

कार्योत्थी (सं० लि०) कार्ये उत्थी प्राची १ तत् । १
कार्येकरनेको प्रायेणकारे, उन्नेद्वार (परीवार, मुख
इसेको पारको करनेवाला ।

कार्योत्थ (सं० पु०) कार्ये उत्थ ज्ञान, करवाणा, कामको
जगह ।

कार्ये (सं० लि०) कार्ये कुत् । १ कार्येविदि, काम
काओ २ सुखमा नकुनिका ।

कार्ये (सं० लि०) कार्ये उत्थ कार्ये-रति । १ कार्ये
युक्त, कामकाओ । २ कार्येप्राची, उत्थेद्वार । ३ कार्ये
कुत् मयत् रखनेवाला । ४ सुखमा नकुनिका ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ, कामको देखमान ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् तथाप्रपारकेन
सम्पादक १ तत् । कार्ये उत्थ, कामका मालिक ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् । एक
कार्येकुत्कता, कामको बराबरी । तथाप्रपारके
प्रकारको मन्त्रिते यह भी एक उक्ति मानो गयी है ।

कार्ये (सं० लि०) कार्ये कार्येसम्पादने उत्थ १
० तत् । कार्येनिर्वाहमें पद्य, खुनोके कामकरनेवाला ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

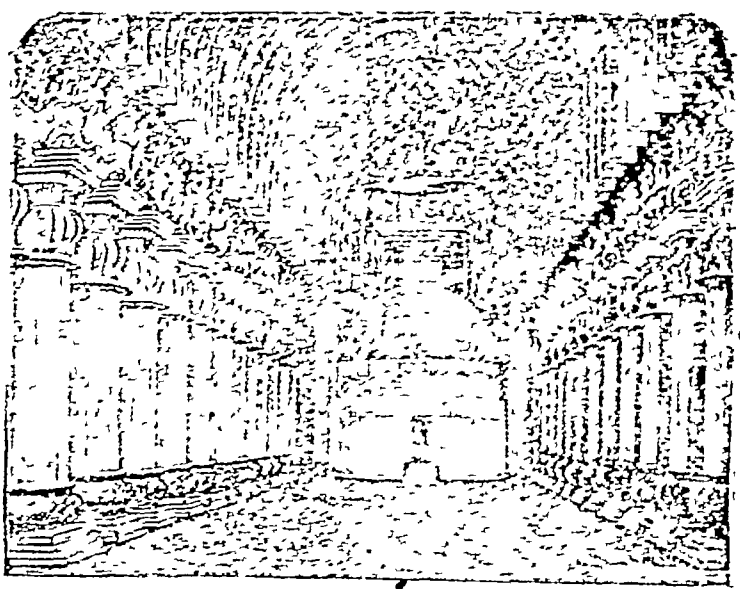
कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

कार्ये (सं० पु०) कार्ये उत्थ १ तत् ।

मिलती है। गुहाके मध्य ख (शशि) सिंहद्वार है। सिंह-
 द्वारकी दोनों दिक् दो स्तम्भोंके दोनिका अनुमान दिया
 जाता है। किन्तु आजकल उनमें एकमात्र वर्तमान
 है। इसके निगय करनेका उपाय नहीं—दूसरे स्तम्भके
 स्थानमें एक छोटा प्रस्तर-मन्दिर बना या प्रथवा एक ही
 स्तम्भ बराबर रहा। स्तम्भ गोलाकार है। उस पर ३३
 डालू पत्त बने हैं। वह भूमिसे समभावेमें ऊपर उठा
 है। स्तम्भके उपरि भागमें कारनिष्ठ या बगर है
 बगरके ऊपर चारों ओर चार सिंहमूर्ति खोदित हैं।
 किसी किसीके अनुमानमें उल्ल चारों मूर्तियां एक चक्र
 घारण करती थीं। सिंहद्वार पार होते ही दूसरा एक
 द्वार मिलता है। उसका विन्तार प्रायः ३४ हाथ लोंगा।
 उसके दोनों पाश्वर्क दो स्तम्भ हैं। दोनों स्तम्भ अष्टकोण

वा अष्टपलविगिष्ट हैं। उनमें नीचे या ऊपर कोई
 कार्ककार्य देख नहीं पडता। फिर भी उपरिभागपर
 दोनों स्तम्भोंमें दो प्रगण्य प्रस्तरफलक लगे हैं। उसके
 पीछे फिर कुछ ऊपर भी और एक कंगनी है। उसमें
 चार स्तम्भाकृति कुछ नीचे उतर गयी हैं। उसके अन-
 न्तर कुछ आगे बढने पर मन्दिरमें प्रवेग करनेकी तीन
 द्वार हैं। उनमें कई उम्मुक्त हैं, किसी प्रकारके कपाट
 नहीं लगे। तीनों द्वार एक कतारमें प्राचीरवत् प्रस्तर-
 खण्डसे संलग्न हैं। उल्ल प्राचीर द्वारके मस्तक पर्यन्त
 समतल भावमें अवस्थित है। उसके उपरिभागमें
 गून्च है। उमी स्थानमें पानोक (रोगनी) मन्दिरमें
 पहुंचता है। गून्चके ऊपर बड़ी मेहराव है। मेहराव
 मन्दिरके प्रवेशद्वारके त्रिप पर्यन्त विस्तृत है। उल्ल



कालि ।

द्वार पार होनेसे अखन्तरकी अपूर्व शोभा देख कर
 सममें एक अपूर्व भावका उदय होता है। कैसी मित्य
 सातुरी! क्या असम्भव परिचम! दोनों पाश्वर्कपर दो
 बरामदे दोनों ओर चले गये हैं। मध्यस्थलमें नाव्य-
 मन्दिरका मण्डप है। प्रवेशद्वारकी अपरदिक् गुम्बज-
 कैसा चैत्यका स्थान है। द्वारमें प्रवेशकर देखते हैं कि

कतार बकतार स्तम्भ श्रेणी दोनों पाश्वर्क टण्डायमान
 है। दोनों पाश्वर्कके स्तम्भोंके पीछे दोनों ओर बरामदा
 है, बरामदेके मध्यस्थलकी मन्दिरमें पानेके लिये दोनों
 पाश्वर्कके स्तम्भोंके मध्य स्थान विद्यमान है। भूमिके मध्य
 स्थलसे मेहरावके मध्य स्थान तक नापने पर सम्भवतः
 तीस हाथ अन्तर निकलेगा। एक ही स्तम्भकी

वर्षमा चरता पचन्वय ई पचन्वो वर्षमा कोन चर
 वक्षता ई। क्वाभी कागोरो ई। तन्मगामे क्वाभ्य
 इति चार पचन्व ई। इनको सत्य ई छोरे छोरे चरता
 गयो ई। तन्मि कुञ्ज मोन्नाति ई। तन्मि चरत पच
 पच ई। एकोवर सन्धोच मन्नाच ई। तन्वर कगो
 वयो ई। कसो पर दासो दिव् च्छिन्नु त ई। च्छि
 पृहवर च्छो हो मानव च्छो हो मानवो च्छो एच
 मानव चौर च्छो एच मानवोको मूर्ति ई। स्याच च्च
 पार जोति वर एच गुल्पर च्छो पाञ्जनि देव पक्षो ।
 तन्मि च्छरिमानमि "न" इच विन्वको भति एच
 पदाच चौर उमवर एच वय ई। पाञ्जवन
 उच उतका कुञ्च च्च टूट मवा ई। गुल्पर
 पचाङ्गामे पचपचविमिह इमरे नान स्याच ई
 तन्को वनाचट कोनो कादो ई विमिय गवाङ्गुञ्च
 नहो। मन्दिरे दारदेमि उच सन्धोचि मुनदेय
 पर्यन्त च्छ ज्ञाय पन्तर होनो। प्रक्षमि दानो दिव्
 सन्धोचा सन्ध्याम चाके सोनच रैठया।
 वरामदावोका परितर च्छिचञ्जत छोटा ई।
 ६ चायथै पचिच नहो। उच च्छो मिहराचि वीक्षे चो
 काठको च्छिचो मिहराचि स सत्य ई। च्छिचोको
 कतार रंथी ई। च्छ मिहराचो एच चोसि वूनरो
 चौर तन्च चको गयो ई। च्छिचो हमारे चरको तरच
 चरन भाचमि पचक्षित नहो। च्छ च्छ भाचपर मिह
 राचि मिन चरन भाचपर म्भ्यमि पचक्षित ई। तन्का
 कोई पाचार देव नहो पङ्कता। पाञ्जवन कोई निर्वय
 चर नहो सञ्जता—चेथे च्छ चप प्रचार सत्य वृई ई।
 न देवमे पर वर्षमाये इह मन्दिरेका सोन्वर् केमे
 च्छमुन चो चञ्जता ई। कोन च्छ सञ्जता—च्छ च्छेय
 क्षिती दिग्गवा पुराना ई। काचरके मि च्छाच्यर
 कोई च्छोदिन च्छवर देव पङ्की ई। कोमोके च्छाना
 चार महाकाच भूति वा देवमूर्तिमे च्छ च्छर च्छोहाये
 थि। पाचाञ्ज मन्मि मूर्ति राञ्चा ई० मन्नाचमे ७८ च्छ
 वृं राञ्जल च्छरि थि। तन्मि को पूव मन्दिरेका
 चरना पचन्वय नहो।

चायंकेय (५० पु०) चायंकेय पुत्र. ६ तन् ।
 उच । उचक सुनिचि पुत्र ।

चायंकेयपुत्र (म० पु०) चायंकेय पुत्र. ६ तन् ।
 उचक च्छेके दोदिव यह एच पाच यये ।
 चायंन (५० सि०) कुञ्जाविमिट, मोतिपाचन ।
 चायंन (म० सि०) क्वागोरेटन् लवानु पच ।
 क्वागानुसम्भोच, पाचययो, यमो ।
 चायंरोच (म० सि०) क्वागोच निरुत्तन्, क्वाग
 च्च । क्वागय दारा निच्यन ।
 चायंरो (स० स०) चाय राति च्छय च्छो निनु
 मथि मन्निन्ना च्छोय । १ चायमारो । २ चायचो ।
 ३ क्वागेवना ।
 चाय्यर्च (म० पु०) गाभ्यारोच्य, एच पङ् ।
 चाय्य (स० पु०) उच सार्थे च्छन । १ च्छर्च,
 च्छर् । २ गाभ्यारोच्य । ३ नकुचच्य, सुगटका
 थि । ४ च्छुद्रच्य । ५ मानच्य । ६ चाच्य ।
 (को) उचय्य भाच, उच च्छन । च्छर्चिच्य च्छ ।
 च्छर्चिच्य । ७ उच्यत, च्छम्भारो, दुहराचन । ८ उच
 ताराय च्छम्भारोको बीमारो । इम रामका च्छाच—
 चाग, च्छाचमान, क्वाचन च्छिचामन, चोच थिग, मिद
 विनिच्य मिन्नाग च्छरि, मिन्ना च्छाच्य, भाचन को
 च्छरना भी त चौर च्छादिका च्छन ई। (चुचरच्य)
 चायंहरमोच (स० पु०) उचताचा एच चोच,
 च्छम्भारोको च्छोई दरा। च्छेत्तपुनका, दन्तोमुच,
 पाचयन्नामूक च्छिचका, च्छिचट, च्छिम च्छ
 म्भो तथा च्छेत्तथिचका च्छाचर च्छाचर चौर च्छ
 च्छाचर कोच भीमराचि च्छमि च्छेत्तमे यह चोच
 चरता ई। (१५५५५५५५५५)
 चायं (स० सि०) उचि मोत्तमच्य च्छिच । च्छि
 च्छे । च्छर्चिच्य । उचि च्छेत्तकारक, चाञ्ज का, च्छिचान ।
 चायक (स० पु०) चायं चायं च्छु च्छवा च्छर्चिच्य
 च्छु । च्छेत्तथिच्य । च्छ २ । च्छ । च्छुच्य च्छिचर ।
 चायचिच (स० पु० को०) चायं च्छ च्छेत्त वा चायच
 च्छेत्तको च्छ च्छर्चिच्य च्छ । १ चायच च्छ, १६
 कोचो च्छ रतो । २ च्छेत्तमच्य १६ माच । च्छ
 सोना तोचनेको १६ माचि च्छो तोचनेको १६ च्छ
 चौर तौचा तोचनेको ८० रतोका च्छता ई । ३ च्छ
 दोचन, चाग च्छो । ४ च्छच्य, च्छिचान ।

कार्यापणक (सं० पु० क्लो०) कार्यापण स्वार्थे कन् ।
कार्यापण, एक नोल ।

कार्यापणार (सं० त्रि०) एक कार्यापणके मूल्यगता,
जिसमें कर्मसे कम १६ कोड़िया लगे ।

कार्यापणिक (सं० त्रि०) कार्यापणेन प्राहार्यम्, कार्या-
पण टिटन् । कार्यापणारप्रतिषः पा ३ । १ । २५ (कारिक)
कार्यापण द्वारा प्राहाणयाम्य, १६ कोडीमें भ्रानवाना ।

कार्पि (सं० पु०) कर्पति, कर्प. स्वार्थे इञ् । १ अग्नि,
आग । (क्ली) २ आकर्षण, कर्मिणः । ३ वर्षण, जा-
ताई । (त्रि०) ३ कृषक खेत जो निवाना । ४ अन्त-
र्गत मसनाशक, भोतररी मेल कुडानेवासा ।

कार्पिक (सं० पु०) कर्प स्वार्थे ठक् । १ कार्यापण,
१६ कोडीका एक रिक्का । (कर्पः शीलमस्य) २ कृषक,
किमान । (त्रि०) कर्पस्य अयम् । ३ वर्षपरि-
मित, सोनह मानिषान्ता । ४ वर्ष परिमित मूल्य द्वारा
कृत्य किया हुआ, जो १६ कोडीमें खरीदा गया है ।

कार्पिक (सं० त्रि०) कृषक, किमान ।

कार्पिक (सं० त्रि०) कृषकस्य भावः कृष-शब्च् । कृषता,
जाताई ।

कार्पिक (सं० त्रि०) कृषकस्य इदम् कृष-शब्च् ।
१ कृषकस्य सम्बन्धेय, काले हिरनवाना । २ कृषक-
यन सम्बन्धेय । (कृष्या देवता अस्य) ३ कृषकभक्त ।
(क्लो०) ४ कृषकस्य वर्म, काले हिरनका चमडा ।
(पु०) ५ कृषकस्य मृग, काला हिरन ।

कार्पिक (सं० स्त्री०) कृषु शतावरी, कोटी सतावर ।

कार्पिकजिनि (सं० पु०) कृष्याजिनस्य ऋषेरपत्यम्
कृष्या जिन-इञ् । १ कृष्याजिन मुनिके पुत्र । २ आचार्य
विशेष, एक उस्ताद । ३ जनेक विज्ञानविद्, कोई मुह-
क़ि क, मीमांसाम्ब, ब्रह्मसूत्र और काल्ययनयोनसूत्रने
इनका नाम मिलना है । ४ कोई स्मृतिशास्त्रविद् ;
टैलीनसि, हेमाद्रि, माधवाचार्य रघुनन्दन प्रभृति
कार्पिक पण्डितोंने इनका मत उद्धृत किया है ।

कार्पिकयन (सं० पु०) कृष्यस्य व्यासस्य गोत्रात्पत्यम् कृष्य
कम् । १ आसर्वगके ब्राह्मण । २ वाग्विष्ठ, वाग्विष्ठग्रंथी ।

कार्पिकयम (सं० क्लो०) कृष्यस्य अयसो विकारः कृष्य-
यस-अण् । १ कृष्य लोहनिः त द्रव्य, काले लोहिकौ

वनो इयौ चीज । २ लोह, लोहा । (त्रि०) ३ कृष्य
लोह निमित्त, काले लोहेका बना हुआ ।

कार्पिक (सं० पु०) कृष्यस्य अपत्यम् कृष्य-इञ् । १ काम-
देव । २ गन्धर्वविशेष । ३ व्यासके पुत्र शुक्रदेव ।
४ प्रद्यम्न ।

कार्पिक (सं० स्त्री०) कार्पिक-डीप् । शतावरी, सतावर ।

कार्पिक (सं० क्लो०) कृष्यस्य भावः कृष्य-शब्च् । कृष्य-
वर्णता, स्याही कालापन ।

कार्पिकयम (सं० त्रि०) १ कृष्यायसनिमित्त, काले
लोहेका बना । लोह, लोहा ।

कार्पिक (सं० क्लो०) कर्पति अथ, कृष स्वार्थे णिच्
आधारि मनिन् । १ युद्ध, लडाई । भावे मनिन् ।
२ कर्पण, जोताई ।

कार्पिक (सं० स्त्री०) कार्पिक कर्पणं राति ददाति,
कार्पिक-रा-डीप् । शीपर्णी वृक्ष ।

कार्पिक (सं० पु०) कार्पिक्य विकारः, कार्पिकी-यत् ।
शीपर्णीवृक्षका अययव ।

कार्पिकयम (सं० त्रि०) शीपर्णी वृक्ष द्वारा निर्मित ।
कार्पिक्य शब्च् शब्च् ।

कार्पिक (सं० पु०) कृषक स्वार्थे ण् । ग्रासहृष ।

कार्पिक (सं० क्लो०) शान्त वृक्षका वन ।

कार्पिक (सं० पु०) १ सर्जितक, धूनेका पेड । २ कृष्य-
सार मृग, काला हिरन ।

काल (सं० क्लो०) कु ईपत् कृष्यत्वं जाति पृथ्वाति,
कु-ला-क, कोः कादेशः यदा धातुषु कुत्सितरूपतया
रुहति, कु-प्रल्-प्रच् कोः कादेशः । १ लोह, लोहा ।

२ कल्लोन, शीतलचौनी । ३ कालीयक नामक गन्धद्रव्य
विशेष, एक खुसबूदार चीज । (त्रि०) कृष्य वर्ष-
विशिष्ट, काला । (पु०) ५ कृष्यवर्ण, काला रंग ।

६ मृत्, मीत । ७ महाकाल । ८ अग्निग्रह । ९ कासमर्द
वृक्ष, कसौदेका पेड । १० रक्तचित्रक, लाल चौता । ११

धूरा, राल, लोवान । १२ कौकिल, कौयल । १३ शिव ।
१४ विष्णु । १५ पर्वतविशेष, कोई पहाड़ । कलयति

प्रायुः कल-णिच् पचाद्यच् ततोऽण् यदा कलयति
सर्वाणि मृतानि, कल-णिच् अच्-अण् । १६ समय,

वक्त । इसका अर्थ संस्कृत नाम टिट और पनेहा है ।

काण्डमें व्याप्त, परिमाण दृष्टव्य संयोग और विभाग
 पांच गुण होते हैं। साय ४५ विभाग तोन प्रकार है,—
 भूत, भविष्यत् और वर्तमान। भोतमानका ही ही भूत
 बनन जानेको वर्तमान और जानेवाले नम्य हो भवि
 ष्यत् कहते हैं। किसी किसी शास्त्रमें जानके कई
 साधारण विभाग हैं। जन्म कीतिवशात् छ विभागोंको
 ही हम संज्ञा गिना करते हैं। एतद्विषय चातुर्वेदादि
 शास्त्रमें भी जानका विभाग निर्दिष्ट है। सुप्त-संज्ञिता
 में कहा है, कि ज्ञान नित्य पद है। समका पाटि
 मध्य और विभाग नहीं होता। दृष्टिको मतिहै पशु
 पार जानको निमित्त जाना, जका सुप्त, चक्षुरा।
 पद्य मान, अतु पयन सबत्पर और सुषुप्ति संज्ञित
 है। अथु बर्ष बर्षा में ओ समय लगता जसका नाम
 निर्दिष्ट पड़ता है। १५ निमित्तको अथु १० काठ भी
 कहा, २० कलाका सुप्त, १० मुहूर्तका चक्षुरा, १५
 अज्ञानका पद्य १ पद्यका माय २ मानका अतु ३
 अतुका पवन २ पयनका वस्तु और १२ वस्तुका
 द्रव मानते हैं।

आयुष्य मतमें काण्ड विष्णु, पद्मात् पपरिष्कृत्य
 परिमाणविशिष्ट और ज्योत्स्न ४५ ख नहल प्राणका
 कारण एक पदार्थ है। वह पशुभान द्वारा सिद्ध होता
 है। पशुत्त्व इष्टित अथवाहमि काण्डको एकमात्र उच
 योमी है। जान न रहनेसे वही अथवाह विद्या का
 पक्षता कि वह पशुत्त्व, वह वर्तमान और वह भवि
 ष्यत् का। कोई कोई देवायुष्य जान और विक्रम
 ईश्वरके परिमाण कहते हैं। आयुष्य मतमें अष्टकाण्ड
 और महाकाण्ड दोषसे जान का प्रचारका है। अष्ट
 काण्डों का नाम अष्टकाण्ड है, फिर विष्णु और
 प्रकृत्यासमें भी विभक्त न जानिवासे जानको महाकाण्ड
 कहते हैं। अथ, दण्ड पक्ष, विषय, दिन, मास और
 वस्तु। इष्टित अथवाहमि अष्टकाण्ड ही कारण होता
 है। काण्ड सुप्तके परिष्कृत्य पद्मात् गमन द्वारा हम
 मात्र और दिन प्रथम अथवाह कहते हैं। महाकाण्ड
 में व्याप्त परिमाण दृष्टव्य संयोग और विभाग
 पांच गुण हैं। काण्डोंके वैदिकिक रूप पदार्थ मानका
 अष्टकाण्ड बताते हैं। अष्टकाण्डका पद नाम

जानो-पत्रि है। जानोपात्रि चार प्रकारका होता है।
 १म जानोपात्रि द्विवाचनित विभागको प्रागभाव
 विशिष्ट किया है। जैसे हो मनुष्य ज्ञानमें विद्यात्रय
 अथवा ज्ञानसे परचय हो वह दोनों बंध जाते और
 विभागके प्रागभावका विनाश करते हैं। उसके पीछे
 पद्य किसे देवादिहै साय उसके संयोग और प्राण
 भावका नाम जाता है। पीछे किया भी नष्ट हो जाती
 है। इस स्थान पर यही देखाते हैं—विषय समय किया
 अथवा द्रव्यो उभी समय वह विभाग प्रागभावविशिष्ट
 बन गयो। सुतरां अल्पतिहाय वह किया प्रथम
 जानोपात्रि है। पूर्वसंयोगविशिष्ट विभाग २य जानो
 पात्रि कहलाता है। जैसे पूर्वाह्न अथवाह किया अथवा
 जोमेके परचय विभागको अल्पति द्रव्यो। किन्तु यह
 समय संयोग बना रहा। उसके दूसरे अथवाह विभक्त
 जा कहिया। सुतरां विभागको अल्पतिके समय
 विभाग पूर्वसंयोगविशिष्ट रहा है। पूर्वसंयोग नाम
 विशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव ३य जानोपात्रि
 होता है। पूर्वाह्न अथवाह पूर्वसंयोगके नाम समय
 परवर्ती संयोगका प्रागभाव है, सुतरां पूर्ववर्ती संयोगके
 नामविशिष्ट परवर्ती संयोगका प्रागभाव उस समय
 ३य जानोपात्रि कहलाता है। अथवा संयोगविशिष्ट
 किया अथं जानोपात्रि है। पूर्वाह्न अथवाह अथ
 उत्तर संयोग करीना, तब किया उत्तर संयोगविशिष्ट
 जानिसे अथं जानोपात्रि बनेगा।

पदार्थविष्टमें जान ही सबस्येष्ट कहा गया है,—

- “वायो च यद्वि चरति; चरन्त्यो चरती कृतिर्यः।
- इत्योचति चरती चरित्तत्त्व चरता इत्यपि विद्या ॥१॥
- वायो चरित्तत्त्व चरति अथि कृते।
- वायो च विद्या चरति वायो चरित्तत्त्व ॥२॥
- वायो चरन् ॥३॥ वायो चरति नाम चरतिर्यम्।
- वायो चरन् ॥४॥ वायो चरति नाम चरतिर्यम् ॥५॥

(पद्य चरित्तत्त्व, १२ काण्ड, ११ सूत्र)

- “वायो चरन् चरित्तत्त्व इतिवा नामविद्यम्।
- वायो चरन् चरित्तत्त्व वायो चरन् चरित्तत्त्व ॥६॥
- वायो चरन् ॥ ७॥ चरित्तत्त्व वायो चरित्तत्त्व ॥८॥
- वायो चरन् ॥ ९॥ चरित्तत्त्व वायो चरित्तत्त्व ॥१०॥
- वायो चरित्तत्त्व चरित्तत्त्व वायो चरित्तत्त्व ॥११॥

स्रग्नाच्छपुराणमें भी लिखा है,—

“यत्न, श्रेता, हापर और कलि चारो कालके सुख हैं। सत्य युग चार जिह्वाविशिष्ट श्वेतवर्ण, श्रेता त्रिजिह्वाविशिष्ट रक्तवर्ण, हापर युग द्विजिह्वा विशिष्ट रक्त पिङ्गलवर्ण एवं भयहर ; और कलि—पुनः पुनः लिङ्गमान एकजिह्वायुक्त रक्तचक्षुर्विशिष्ट क्षणवर्ण होता है। स्रग्ना, विष्णु और यज्ञ तीनों वानके क्षणाक्षरूप हैं। समुदाय चराचरमें कालके लिये असाध्य कुह भी नहीं। काल ही सर्वभूत सृष्ट कर फिर क्रमगः संहार करता है।”

(स्रग्नाच्छपुराण, ११ पं०)

कालक (सं० स्त्री०) काल स्वार्थे कन् यद्वा कल्पयति मोटयति रक्तताम्, कस्य-पिच्-रुक्त् । १ कालशाक, नारी। कालशाक देखो। २ यकत्, गुरदा। (पु०) ३ चतुक्, हंसनी। ४ अलगर्ट सर्प, पानोका एक हांप। ५ राक्षसविशेष, एक भादमखोर। ६ चक्षुक्ता इष्य अंश, कांखकी पुतली। ७ वीजगणितोक्त अष्टाक रागिकी एक संज्ञा। ८ जनपदविशेष, एक बसती। पतञ्जलिके महाभाष्य मतसे उक्त स्थान प्राचीन आर्यावर्तको पूर्वसीमा था। (न २३१० महाम ८) ९ कीर्ति प्रसिद्ध जैनसूरि। वह महावीरनिर्वाणके ४३५ वर्ष पीछे जीवित थे। किसीके मतानुसार उन्होंने पर्युषणापर्व बटला था। कालक ही गर्दाभिषेकके ध्वंसके कारण थे। १० कीर्ति जैनसिद्ध। पहले भाद्र-पदकी शुक्लपक्षमीको पर्युषणापर्व होता था। अनेक लोगके मतमें उन्होंने महावीर-निर्वाणके ८८३ वर्ष पीछे अर्थात् ५२३ विक्रम संवत्को पञ्चमीसे चतुर्थी-तिथिमें पर्वदिन स्थिर किया था। इनकेही मतानुसार श्वेताम्बर जैन पर्युषण पर्व मानते हैं। परन्तु दिगम्बर जैन अब भी वही महावीर स्वामी द्वारा उपदिष्ट शुक्ल पंचमीवो ही पर्व प्रारंभ करते हैं। (त्रि०) ११ काल-वर्णयुक्त, काला। १२ अनित्य वर्णविशिष्ट, वस्त्र रंगवाला। १३ रक्तवर्ण, सुर्ख, लाल।

कालकट्ट (सं० पु०) गिहोद्य फलवृक्ष, गिहोटका पेड़।

कालकचु (सं० स्त्री०) काला क्षणवर्ण कचुः कर्मधा० । कचुभेद, कालो घुरया।

कालकचर्ण (सं० स्त्री०) पूर्ण त्रिशीप, एक बुझनी। गृध्रमू, यक्षचार, पाठा, व्याप, रसाञ्जन, तैजोह्वा, त्रिफला, शिवक और गृध्र लोह बराबर बराबर कूट पीम चौटके साथ सुखमें रखनेसे दन्त, सुख तथा गलरोग विनष्ट होता है। (रक्तपादिः)

कालकञ्ज (सं० स्त्री०) काल क्षणवर्ण कक्षम्, कर्मधा० । १ नोमपद्म, काशा कांवल। (पु०) २ कीर्ति दानव।

कालकट्टट्ट (सं० पु०) कालरुगः कट्टट्ट, मध्य-पटलापी कर्मधा० । शिव, महादेव।

“देवको पदको तापी खनी कालकट्टट्ट ।” (भारत, पदुमाग्न १० पं०)

कालकण्ठक (सं० त्रि०) कालः क्षणवर्णः कण्ठको इष्य, बहुव्री० । क्षणवर्णकण्ठकयुक्त, वाक्ते-कांटे-वाला। (पु०) कालकण्ठ देखो।

कालकण्ठकरस (सं० पु०) रसविशेष, एक दवा। चोरकमस १ भाग, पारद २ भाग, अभ्र ३ भाग, स्वर्ण ४ भाग, ताम्र ५ भाग, और तोष्य लौहकिष्ट ६ भाग अक्षयगमें ३ दिन मर्दन करते हैं। फिर यक्षचार, सर्पिंशार, सोहागा, और पक्ष लत्रण उक्त मर्दन द्रव्यके समान डाल १ तोन दिन निर्गुणिक्रमके रसमें रगडा जाता है। सुखने पर चूर्ण बना अष्टमांग दिपचर्ण एवं सोहागेका फला मिला कर १ दिन निवृत्ते रसमें घोटनेसे यह औषध प्रसुप्त होता है। मात्रा २ गुञ्जा है। आर्द्र कके रसमें यह खाया जाता है। इसके सेवनसे वातरोग चारोग्य होता है।

(रसिन्द्रचिन्तामणि ८ पं०)

कालकण्ठ (सं० पु०) कालः क्षणवर्णः कण्ठो यष्य, बहुव्री० । १ शिव, महादेव। २ पीतमाल लक्ष, असने-का पेड़। ३ मयूर, मार। ४ खञ्जलपत्ती, खुडरेचा। ५ कलविद्ध, चिहा। ६ जल-कुहूट, सुरगात्री। ७ कासमर्दत्रिच, कसींदी। ८ अश्वकाक, अंधा कौवा।

कालकण्ठक (सं० पु०) कालः क्षणः कण्ठोऽस्य काल-कण्ठक क् कालकण्ठ स्वार्थे कन् वा। १ दात्यक

पयो, एक विडिया । २ पौननामपुत्र, पञ्चमिका पीड ।
 कासकन्द (स० पु०) महाकन्द, बड़ा कन्दा ।
 कासकन्दक (स० पु०) काका कन्द इव कापति
 प्रकाशते, कास कन्द के तट्टा काक कन्दसर्वे कन्दानि
 कन्दपतया कन्दैः, कास कदि-पच क्वापे कन् । कससप
 पतिहा दाय ।
 कासकम्ब (स० पु०) तमासका पीड ।
 कासकम्बा (स० स्त्री०) कसा सुडापा ।
 कासकसुपुण्ड (स० पु०) सुडपुण्य, सुपुण्डाटकिखा
 काने कसका वनपलाप टाक ।
 कासकस्य (स० पु०) काना कस्य ।
 कासकरक (ल० स्त्री०) समपका स्त्रिकरकस्य, बडका
 ठडगाव ।
 कासकविंका (स० स्त्री०) कासक कविंका दय, इव
 मित मया० । पचक्यो, बडकिचयो ।
 कासकर्षी (स० स्त्री०) कास कर्षीट्या, कास कर्ष
 पच डीप । पचक्यो, बडकिचयो । पचको रेकी ।
 कासकर्म (स० स्त्री०) कास पचिकारि कर्म
 कर्मका० । १ पचिकारक काव सुतरे पैदा करति
 धाना काम ।
 "केन रचित्तल भवत कासकर्मका" पचक्य ६।०१
 २ पच्य मोग ।
 कासकसाय (स० पु०) कास कस्यवर्ष कसाय,
 कर्मका० । १ कस्यकसाय, पचा मटर । २ कासा
 कस्य ।
 कासकस्य (स० स्त्री०) ईपू ममान कास कास-
 कस्य । यमसुपु, मोगकी बरायो कर्मेकाका ।
 कासकवि (स० पु०) पच्य पचय ।
 कासकस्योप (स० पु०) कासको सुदी यत्र देमी तत्र
 मक, कासक कस्य-का । कासकविमस्य पच क्येपि ।
 कासकस्यु (स० स्त्री०) कस्यो सुच विरिय पच पीड ।
 इडका बीर मलकर सुचनेपे कस्यु को तरड
 मरकता है ।
 कासका (स० स्त्री०) कास एव क्वापे कन् टाप् ।
 १ कासकेपनामक पसुरीगी माता । २ पचिकरिय,
 पच विडिया । ३ टसमाता । ४ बेखानरकी कस्या ।

कासकास (स० पु०) पसुरविशेष एक कासक ।
 कासकास्य (स० पु०) १ विद्वेक कासकिसुपुण्य पचमेद,
 कासि निम मूका एक कासकर । २ रागिसेद ।
 कासकार (स० स्त्री०) समय बनानेकाका, ओ बल पैदा
 करता हा ।
 कासकारित (स० स्त्री०) समयपर सिवा दुबा, ओ
 बडकी बना हो ।
 कसिकानु (स० पु०) क्वादूपचको सिनाका एक
 पचियति । इमे रामने माग या । (पचक्य)
 कासकास (स० पु०) कास कस्यपति जोदयति,
 कास किय-कस पच । १ परकीयत्र २ मन्दाव मटेकस
 टाडडरका निचटपने एक प्राचीन तीर्थस्नान ।
 कासकोति (स० पु०) एक राका, यत्र पसुर
 सुपचने समान पी ।
 कासकील (स० पु०) कानं प्रहतकानोपयुक्त सुप
 मकारिके कोचयति पाडुकोति, कास-कोस-पच ।
 कोबाहन, बडा । किमी प्रमडुके समय कोबाहन
 ठठनेपे बड प्रसुत्र दव जाता पीर 'कासकोन'
 कडकागा है ।
 कासकस्य (स० पु०) कासि कासकसिवा परकीयरेक
 सुपुण्डने पयो, कास कस्य कर्मवि चम । यम ।
 कासकस्य (स० स्त्री०) कासात् कस्यपत्रतात् कस्यने,
 कास कस्य कर्मविन । पार्वतीप कसिवाकियेप,
 बडक पडाडुकी मही । पचुप हैकी ।
 कासकस्य (स० पु० स्त्री०) कासकस्योः कूट दून इव
 कसिमि० यहा कासं मियमपि कूटयति पचस दयति,
 कासकस्य पच् । १ विपयामास्य, मामूकी कसर ।
 २ बीर, यून क्वाको । ३ बस्यनाम, कस्यनाग ।
 ४ कास, कोबा । ५ मियिवियेप, एक पडाडु । यत्र
 बतमान कासोतकस्य मदीके निचट पचकियति है ।
 " कस्यक रचित्तलं तु कस्येन कस्यकस्य ।
 कसं कस्यकी कसा कासकस्यकीकस्य " (पचक्य १५ २६)
 १ क्वाकर विपचियेप कासा कस्यनाग । देवाकुर
 सुडके समय सुपुण्डानो नामक कोरि पसुर दिवसपदा
 माग मका ता । इडके रकडे पायल सुचको मति एक
 सुच कस्यप दुबा । पयो सुचके मियोरका नाम कास

कूट टिप है। यह विष शूद्रैव, कौटुण्यं चौर मन्य
पर्वतमे होता है। कानकूटको अधिभन करनेके नित्ये
प्रथम ३ दिन गोमूत्रमें भिगोकर रखते हैं। फिर
सर्पपतन्त्रने लोणं वस्त्रवण्ण भिगो कुछ दिन बांधकर
रखनेपर यह शुद्ध होता है। कानकूट प्राणनाथक,
सर्वशरीरश्यापो, अग्निगुणधनुन, श्रीजः, रुखा, सन्धि-
दंघका शैघिल कारक, रंयुक्त द्रव्यका गुणघादक और
सुहृन्नाशक है। किन्तु विद्युदि होनसे कालकूटके उष्ण
सकल गुण घट जाते हैं। ऐसे भयङ्कर गुण रखते भी
युक्तियुक्त रूपसे प्रयोग करनेपर यह रसायन औरवायु,
श्लेष्मा तथा सन्निपात दीपनायक है। (माधवकार)
७ मूत्रभेद, एक छह। इसका हृद्य भोगियाकी तरह
रहता और सिक्रिम तथा भोटदेशमें मिलता है। इस
पर दृद्र द्रुद्र गोलाकार निष्ठ होते हैं।

कालकूटक (सं० पु० क्ली०) क्षामस्य कूटमिव कायति
प्रकाशते, काल-कूट कै-क। १ वारस्कर वृक्ष, कुचिलेका
पिड़। २ कारस्कर फन, कुचिला। ३ शिघ, महादेव।

“रतो दुर्धमं पत्तरचे। कालकूटम्।

स्विं प्रवे पणामास भोनसे निशंभया ३” महाभारत १। ११८ ५०

कालकूटदट (सं० पु०) कानः काशध्वंः कूटदटः
कर्मधा०। कालकूटदट, महादेव।

कालकूटरजोद्धप (सं० पु०) राल।

कालकूटि (सं० त्रि०) कलकूटे भवः, कलकूट-इत्।
साधनायकप्रथमपत्रककूटपत्रकादिम्। पा ४। १। १०१। कलकूट-
जान, कलकूट सुक्त्रमें पैदा होनेवाला।

कालकृत (सं० पु०) कालं करोति उदयास्ताभ्यां
कालस्य दण्डादि परिमाणं करोति इत्यर्थः, काल क-
क्लिप् तुगागमः। १ सूर्य, आफनाव। २ परमेश्वर।
कालकृत (सं० पु०) कालेन परमेश्वरेण कृतः सृष्टः यथा
कालं कालपरिमाणं कृतः कर्ता काल-क कर्तरि क।
१ सूर्य, सूरज। २ पापविशेष, एक गुनाह। इसके
मिटानेका काल निर्दिष्ट होता है। (त्रि०) ३ काल-
जान, वक्त्रसे पैदा। ४ निर्दिष्ट, सुकरर। ५ कुछ समयके
लिये रखा हुआ।

कालवेतु (सं० पु०) एक देवोभक्त। इन्द्रपुत्र
नीलाश्वर महादेवके अभिगापसे धर्मकेतु नामक

व्याधके पुत्र हुये थे। उस समय उनका नाम कालवेतु
पडा था। (कविप्रहस चली)

कालवेद्य (सं० पु०) कालकाया प्रपत्यम्, कालभाटम्।
एक दानव। हवासुरके मनेपर कालकेय समुद्रमें
रहते और रात्रिकालकी गुप्तभावसे देवगणका अनिष्ट
साधन करते। फिर देवगणने उन्हें कितनीहीकी
मार डाला। अविष्ट कापकेय हरिश्चपुरमें जाकर
ठहरे। पीछे अर्जुनने उन्हें भी निहत किया।
(हरिश्च १०१-१०५ ५०)

कालकेगी (सं० स्त्री०) कानः केग इय पवादिर्गम्याः
वानकेग डीम्। १ नीली, छोटीनील। २ कालकेगयुक्त
स्त्री, काले वान्नीशाली औरत। ३ काल देवी।

कालकोटि (सं० स्त्री०) देगविगेष, एक सुक्त्र।

कालकोठ (सं० पु०) कन्दगाक विगेष, तरकातीका एव
डला, इसे प्रायः लोग मनमारू कहते हैं।

कालकोठरो (त्रि० स्त्री०) कारागारका स्थान विगेष,
कैदखानेकी एक जगह। यह सहोण और अन्धकार-
मय होता है। इसमें अलग रहनेवाले कंठो रखे जाते
हैं। २ कलकूतेके फोर्टविनिघमकी एक जगह। इसमें
मिराजुहोमाने कितने ही अंगरेजोंकी कैद किया था।

कालक्रम (सं० पु०) समयका प्रवाह, वहकी चाल।

कालक्रिया (सं० स्त्री०) काले यथाकाले निष्पन्ना अनु-
ष्ठिता वा क्रिया, मध्यपदनो०। १ यथाकाल सम्पादित
कार्य, वक्त्रसे किया हुआ काम। २ अर्धदेहिक कार्य।
३ कालनिर्देश, वक्त्रका ठहराव। ४ सूर्यसिद्धान्तका
एक अध्याय।

कालक्रीतक (सं० क्ली०) नानीहच, नीनका पिड़।

कालक्षेप (सं० पु०) कालस्य क्षेपः क्ष-तम्। १ समयका
अतिघाहन, वक्त्रकी बरबादी। २ कर्तव्य कार्यके
समयका लक्षण, देर।

“उत्पन्नामि द्रुतमग्नि रुपे कृतमिधार्धे विद्यायोः।

कालक्षेपं बहुमनुभो पन्ते पन्ते ते ३” (मिषट्ट ११)

कालक्षेपण (सं० क्ली०) कालस्य क्षेपणं अतिघाहनम्,
क्ष-तम्। कालक्षेप, वक्त्रका गुज़ार।

कालखण्ड (सं० पु०) १ दानवविगेष। २ यज्ञत्,
कलेजा।

काशपञ्चम (स० स्त्री०) काशिन काशान्तरिक पञ्चमि
 विज्ञप्ति मयति वाच कश्चि-न्। यज्ञत् कश्चिः।
 काशपण्ड (स० स्त्री०) काशं कल्पयन् पण्डं मासि
 पण्डम्, कर्मणा०। १ यज्ञत् कश्चिः। २ काशपति-
 पादक एव पण्ड। ३ यज्ञत्प्रोगभेद कश्चिःश्री एव
 बीमारी।

काशयज्ञा (स० स्त्री०) काशी कल्पयन् गङ्गा यज्ञायत्
 पवित्रकारिणी कर्मणा। १ यमुना नदी। २ विंशक
 की एव नदी।

काशपण्डना (स० स्त्री०) नदीदिग्घ, एव दद्या।
 काशकन इति काशोपण्डक कश्चिः ई।

काशगण्डेत (सि० पु०) सप विमेष, काशि गण्डेवाका
 साय।

काशगन्ध (स० पु०) काश कल्पयन् गन्धं मन्थयत्
 द्रव्यम् कर्मणा०। १ काका भयुव नामक पीपय।
 २ वाचसिय बोधा काशापन। ३ काका चन्दन।
 ४ सप विमेष, विधी विज्ञप्ति साय।

काशगति (स० स्त्री०) समयका प्रवाह, वक्तव्यो
 वात्।

काशपन्थि (स० पु०) काशप्य पन्थिरि, कपमित
 समा०। बहुर, कात्, वक्तव्यो यात्।

काशदान (स० पु०) काशप्य दानान्तरक दाय,, इत्।
 सत्य मोत, वक्तव्यो कौर।

काशकट (स० पु०) एव काशकट। जलमिश्रकश्चि सप
 दक्षिणं एव भी पीरोद्वय काय पर नियुक्त वि।
 (नरक, पदि ११५०)

काशवातो (स० स्त्रि) काशि यथाकाशि वातयति नाय-
 यति विनि। यथावात विनायकारक कश्चि मारने
 वात्।

काशदूत (स० पु०) कुत्सितोपि चलदूतः, को
 काटय। सुवच सुचो, धानासुचो। २ काशमर्द,
 कर्मोः।

काशकण्ड (स० स्त्री) काशप्य काशमयेपण्डमित्,
 इत्। १ काशप्य कण्ड कण्डा पण्डया या विर।
 कण्डो मांति इक्षिं भी निमि नामि धोर पगादि
 मयति कश्चित् ई। कण्डपुराचरि मतामुधार दिवा

भागका पूर्वाङ्क, मन्वाङ्क एव पपराङ्क तीन पंच तीनों
 नामि, कश्चिपर परिवत्पर मयति पांच पर धर्मात्
 यनाका धोर इरो यत्त काशकण्डे निमि पर्यात्
 मान्यभाग ई। दिवादि काशावयव नियत कण्डो
 मांति समता ई। इवोधि काशकण्डे पांच कपमित
 दृषा ई। इदुत्तमि सिद्धते ई कि निमिनादि युग पर्यन्त
 धानावयव नियत सममिदि कण्ड भोग काशकण्ड कडा
 करते ई। २ क्पातिवक्त विमेष। ३ राया लोमोः
 विमेषयद कण्ड कर्मोः एव कण्ड। ४ ईको इ दानके
 क्विरे रोप्यनिमित्त एव कण्ड। यह कण्ड दान कर्मदि
 पपयत्तुका मय कर्तो रवता। ५ दण्ड विमेष।
 ६ मोटपकलित एव काशकण्डय कण्ड। (पु०) क पण्ड
 विमेष, एव कश्चिवार।

काशविम्वह (स० पु०) काशं विम्वयति विचारयति,
 काशविम्वि कश्। क्कोतिविद, मन्मो, समकवी
 विचारनीवाला।

काशकण्ड (स० स्त्री०) काशप्य क्कोर्मांरकं विज्ञम्,
 मन्थर०। मन्थुत्रापठ कश्चि विमेष, मोतकी पञ्चानत।
 कायोक्कर्म इडक कर्त कश्चि सिद्धे ई,—“विम्वे
 दश्चि मासापुटके एव पञ्चोपायकाक निश्चाय चलता,
 यह तीन वर्षमें पचय्य मरता ई। प्दि हो दा पञ्चो
 राय या तीन पञ्चाराय चलनेदि ईड कर्त तक पाहु
 काक रहता ई। नासापुटकय परिष्कार कर बाहु
 यदि सुकधि पाता जाता, तो मनुष्य तीन दिनमात्र
 जीवित देखाता ई। इवो प्रभार स्य सप्तम रामिक
 धोर कम्प जन्मनघटन कर्मसे पचकात् मन्थु पाता
 ई। पचकात् विधी व्यञ्जिको को मयति कण्ड वा
 विज्ञकचर्को मांति सममता, कश्चो यो वर्षमें मरता
 ई। मन मूत्र धोर एव पचया मन मूत्र धोर सुत
 (पण्डार) एव साय निरमिदि एव कश्चिमात्र पाहु
 काक रहता ई। को व्यञ्जि पाकाममें इन्द्रनीचवर्
 सप सकल सञ्चार करति देखाता, कश्च कश्च माय
 कोताभावता ई। फिर परिष्कार दिवकको पूर्वाको
 विपरीत दिक् मन्थार द्वारा जोडने पर यदि जलमें
 इन्द्रज्यु दिक् पडता, तो भी मनुष्य कश्च मावर्ने मरता
 ई। पचयो विज्ञ, नासिकाका पचमाय, म्थुदयवा

मध्यस्थल और निद्राप्रति: देख न पड़नेसे अल्प दिनमें ही मृत्यु होता है। नीलादि वण वा चन्द्रादिरस चन्द्राभावात् अतुमव करन पथात् वस्तुना प्रकृत वर्ण होइ अन्वर्ष देख पडने और वस्तुना प्रकृत रसादान वा अन्य आस्वाद मिननेसे ६ मासके मध्य मृत्यु प्राणता है। कण्ठ, श्रोत्र, जिह्वा और तनु प्रकृति स्थान निरन्तर सूखनेसे ६ मासमें मनुष्य मरता है। जिसवा दन्त, नख और नेत्रकोण नीलवर्ण सगता, उसका भी आयुःकाल ६ मासमें अधिक नहीं चलता। दैत्यजानमें मध्य और श्रेय सप्य होके जानिसे ५ मासमें मृत्यु होता है। स्नानके पीछे प्रथम ही जिसका वक्षःस्थल और हस्तपद सूख जाय, वह व्यक्ति ३ मास मात्र जीवित रहता है। घृनि और कर्दमके मध्य जिसका पटविच्छिन्न खण्डरूपमें उभरता, वह ५ मासके मध्य मरता है। देह नियन्त्र रहने भी जिसकी छाया हिलनी हुनती, उसको विधित्वास्था ४ मास तक चन्ती है। जिस व्यक्ति को प्रतिदिनमें घटना सुडुट और मन्त्रकादि देख नहीं पड़ता, वह उसी मास चम दसता है। बुद्धि भ्रान्त होन, वाक्य गिर जाना और रातको इन्द्रधनु, दो चन्द्र इधग आकाश नक्षत्रसूच, दिव्यभागमें दो सूर्य, आकाशमें नक्षत्रसमूह, चारोदिक् एक ही समय इन्द्रधनु, दिशाव-मृत्य, एवं वृष वा पर्वत पर रन्ध्र देखाना सब आशु मृत्युके लक्षण हैं। इनमें एक भी उपस्थित होनेसे एक मासके मध्य मृत्यु पाता है। हस्त द्वारा कर्ण आवरित कर वो व्यक्ति किसी प्रकार शब्द सुन नहीं सवता, उसका जीवन जैसे-तैसे चलता है। सूक्ष्म व्यक्ति हठात् कृष्ण प्रथवा कृष्ण व्यक्ति हठात् स्थूल ही जानिसे एक मासके मध्य मृत्यु पाता है। अर्धनी छ या दक्षिणादिक् अवस्थित होनेसे पाँच दिनमें पक्षत्व सिद्धता है। जो व्यक्ति स्वप्नमें अपनेको पिशाच, असुर, काक, भूत, त्रेत, कुङ्कुर, गदप्रो, श्यामल, गर्दभ, शूकर, शरभ, एट्ट, वानर, श्वेनपक्षी, अश्वतर वा हक प्रकृति जन्तु द्वारा मक्षण वा आकर्षण किये जाते देख पाता, वह एक वर्ष पीछे मर जाता है। स्वप्नमें अपना शरीर गन्ध शून्य और रक्तवस्त्र द्वारा भूषित देखनेसे ८ मासके मध्य

मृत्यु होता है। धूम्रगण्डि, वल्मीक, दूष प्रथवा दण्ड पर आरोहण करते देख ६ मासमें मनुष्य प्राण छोड़ता है। फिर स्वप्नमें गर्दभ आरोहण कर भूषित शरीर दक्षिणादिक् जानि प्रथवा अपना मस्तक किया शरीर शुक काष्ठ एवं लण्युक्त देख पानिसे भी आयुःकाल ६ मास रहता है। स्वप्नमें कृष्णरस पडने और मौड-दण्ड लिये कृष्णरूपको स्मरण खडा देखनेसे ३ मासके मध्य मनुष्य मर जाता है। स्वप्नमें अतिशय-वर्ण कुमायौ आनिद्रन करनेसे एक मासके मध्य मृत्यु प्राणता है। स्वप्नमें वानर पर चढ़ पूर्वदिक् गमन करते देखनेसे ५ दिनमें यमलोक यात्रा होती है। कृष्ण व्यक्ति हठात् दाता और दाता व्यक्ति हठात् कृष्ण हो जाना भी मृत्युका एक लक्षण है।

(रामोवच, ४१ ५०)

आयुर्वेदगण्डने भी मृत्युके नानाप्रकार लक्षण निर्दिष्ट हैं। इनमें सुप्तमें—शरीरका आचार व्यवहार स्वाभाविक अपने प्रकारण विज्ञत हो जाना संचे-पमें मृत्युवा लक्षण कहा जाता है। जो व्यक्ति किसी प्रकारका शब्द न होते भी दिश्य शब्द सुनता और इनीपकार जिसे समुद्र मेघ प्रकृतिका शब्द न निकलते भी दिश्य शब्दसमूह सुन पडता एवं शब्द हते जो नहीं सुनता प्रथवा अन्य शब्दकी भाँति उसे समझता अर्थात् विकल्पाकारक शब्दसे सन्तुष्ट तथा सुगन्धसे असन्तुष्ट रहता; उसका मृत्यु अतिशय निकट था पडुंघता है। शीतल द्रव्य चण्य एवं उष्ण द्रव्य शीतल लगने, शीतपीडित होते खण्डसमूहमें कष्ट पडने प्रथवा अत्यन्त उष्ण-गात्र रहते शीतसे कंपने, प्रशार वा अइच्छेदन कर-नेसे किसी प्रकार वेदना न मालूम पडने, शरीरपर धूलि पडने, शरीरका वर्ण बदलने, वा नर्व शरीरमें मूत्र कैसा पदार्थ निकलने, स्नानके पीछे अनु-लेपनादि मात्रमें लगते, नीन मलिका या जुटने और अवस्थात् सुगन्धि वातकर निकल चलनेसे भी मनुष्य मृत्युप्राप्त माना जाता है। रससमूह जो व्यक्ति विपरीत भावसे आस्वादन करता और यथा-युक्त रससमूह जिसके लिये द्रव्यवि कारक तथा

पयवास्तु रससमूह दोषघातिकाकारक एवं पञ्चि
 इतिकारक रक्ता बह अथ दिन पीने ही बल
 वसता है। हृगन्धि द्रव्य दुर्गन्ध केसा लगने पयवा
 विकल्प किन्ही बन्धुका गन्ध मात्स्य न पड़नेके
 शत्रु पापघ्न समस्त आयोग। योग, कथ्य कालको
 पयवा एवं दिक् प्रकृति विपरीत भावमें पयुमय
 करने, दिवाभागेमें हृदय ज्योतिष पटाके प्रकल्पित
 तथा रात्रिको सूर्यकिरण दिनको चन्द्रकिरण, मेष
 शून्य समयमें विद्युत्, विद्युत्के बजपात, निर्मल
 पाकाय पयवा मासाद् प्रकृति स्थानमें मेष, वायु
 एवं पाकायकी मूर्ति पृथिवीको ध्रुव, मोक्षार
 पयवा ब्रह्मादि द्वारा पयनेको पावरित, सोहनम्
 चकी प्रकल्पित पयवा ब्रह्मावित देखेया, वर
 बहुत दिन नहीं लीयेगा। फिर पाकायमें नच
 मेषि नाच पक्यती, ब्रह्म एवं पाकायपट्टा, और
 ज्योत्स्ना, हर्षण तथा कथ्य लक्षमें पयवा प्रतिबिम्ब
 न देख सकनेवाला पयवा बिजत पकाइकीन पय
 मायी किंवा कुङ्कुम, काक कड, पट्ट, प्रेत, पञ्च
 राक्षस विमाच, बर्ष, इष्टो वा मृतके प्रतिबिम्बकी
 भाति देखनेवाला भी योग ही मरता है। प्रक
 लितका बर्ष मयूरबर्षकी भाति देखने पयवा पञ्चि
 में सम न देख पड़नेके लक्षणका कथ्य समझा
 जाता है। पतुमिय गरीरके पयपयका सुझाय
 कथ्यबर्ष, कथ्याय पयवर्ष पयवर्षकी पयव
 र्भता, फिर पदांकी पखिरता, पखिर पवा
 पंकी खिरता, इहमृष्टकी सुदता, सुद वस्तुका
 इहस, दीर्घ डल, डस दीर्घ, जि सरबमें पतुवस्तु
 वस्तुका निःसरक जि सरबमें पतुवस्तु वस्तुका पनि'
 वरक, पयव्यात् गरीरकी योगकता कथ्यता
 दिग्भता, रुचता मृष्यता विषर्भता, वा पयवसता,
 पट्ट विधिवका लक्ष्यान्धि पतन, उत्प्रेय, चक्र
 पाना, निर्गत 'जोना, प्रविष्ट 'जोना, गुहल वा
 पट्टकी उत्पत्ति, पयव्यात् रजवर्षका विगाङ्ग,
 गिराधमूहका प्रकाय, नगाट वा नासिकापर विडुका
 की उत्पत्ति प्रातःकाल कलाटी समं तिष्ठकता,
 मेषरोग स्वतोत्त चक्षुषे सर्वदा पयु निर्गत 'जोना,

मरुतकमें गोमय चूर्णकी भाति चूर्णपटाघकी उत्पत्ति,
 मोहन न धरनेपर भी मरुमूलादिकी इधि, मोहन
 करनेपर भी मरुमूलाका विनाय पौर दन्ता, सुष,
 नच तथा पयवाय पयवयोमें विषकं पुष्पा प्रापु
 मर्व मात्स्य पड़नेके योग शून्य पाता है।"

खचित कथ्य जोरोग वा रोगो समयके शून्य-
 कथ्य माने यो है। निम्नलिखित कथ्य कथ्य
 शेषन रोगके है—"पतनमूल, हृदय एवं बर्षी-
 देममें शून्य करने, गरीरका मन्त्रसल चर्चात्
 क्षतो पीठ पौर कसर सूनि, इष्टपद प्यनि,
 पयवा मन्त्रदेय सुधनि और हाथ पाव सुकने,
 किंवा चर्चाय सुधनि और चर्चाय सुधने और सर
 नट, चौच, विषक वा विज्ञत पड़नेके पवित्रक्य शत्रु
 होता है। मज, कथ एवं सुझका कर्तमें इहना,
 पट्टी मिय वा विज्ञतकप टिक् पड़ना, किमोका
 तेकतुङ्ग मात्स्य होना दुबल स्वस्तिकी पयचि तथा
 पतिपार रोम कयना काधरोगीका कथ्यात्तर होना
 चौच व्यञ्जिका पयन एवं पयचिरोमहुह होना
 और फेद, पूर तथा रज्जुमियत वसन करना समी
 शून्यकथ्य है। एष ही समय शून्य एवं सरमङ्ग
 रोगके पीड़ित जामि चष्ट, पद तथा सुषदेयमें
 योग ठठने, चौच रहने पाहारमें बर्ष न कपकनी,
 पिपिउका, कथ्य इष्ट तथा पट्ट यिबिल पड़ने
 क्यरवुक्त कास रोग लगने क्यरवासरोग रहते
 पूर्वाञ्जका सुझकथ्य पयव्याङ्गमें वसन करने और
 पयव पयव्यामि विरेचन होनेपर व्यासरोग उत्पन्न
 होकर रोगीको मार जाकता है। जागककी भाति
 पार्तनादकर मूमितक पर निरनेवासे, यिधित पय
 कोय तथा कथ्य वा नट विडु रकनेवासे यात्र
 शेषन करनेपर हृदयका कथको प्रथम सुधानिकी
 यति रकनेवासे, लोडुकाय लोडुका काठके काठपर
 पाकात कगानेवासे पयवा नचद्वारा कथ्य दिन कर
 नेवासे पयरोठ काठनेवासे, कतरोठ पाठनेवासे,
 कर्ष वा शेष पकड़ खीचनेवासे पौर शेषता, मात्स्य,
 सुद, सुष्ट एवं विबिम्बकी होय रकनेवासेका भी
 शून्य पति पापक होता है। जियके कथ्यवाकीन

ग्रह वक्रगामो वा मन्दस्थानगत ही जन्मनक्षत्र की सताने, जिसकी होरा, उल्का तथा अग्नि-द्वारा अभिभूत होती, जिसके गृह, द्वार, शय्या, आसन, यान, वाहन, मणि, रत्न प्रभृति सकल उपकरण कुलक्षणयुक्त होती, उसे अचिरात् मरते देखते हैं। शरीरको प्रभा श्याम, लोहित, नील वा पीत वर्ण पड़ते मृत्यु निकटवर्ती समझा जाता है। जिसकी काम्ति और लज्जा विनष्ट देख पड़ती, अकस्मात् जिसके शरीरमें तेज, भोज, क्षति तथा प्रभा उपस्थित होती, जिसका ओष्ठ लटकने लगता, जिसका उत्तरोष्ठ ऊर्ध्वगत होता अथवा जिसके उभय ओष्ठ जामनकी भांति काले पड़ जाते, उसका जीवन अतिदुर्लभ है। सकल दन्त रक्तवर्ण श्यामवर्ण वा खड्गनवर्ण होने, जिह्वा कृष्णवर्ण, स्तम्भ, अवलिप्त, शोथयुक्त वा कर्कश लगने, नासिका कुटिल फटीफटी तथा शृङ्खल पड़ने, स्वर अधिक प्रकाशित अथवा बह हो जाने, चक्षुर्दृश्य सङ्कुचित, स्तम्भ, रक्तवर्ण अथवा अशुभरङ्गने, केश अपने आप उलझने, अङ्गुलि रुकने और सकल अक्षिपद्म गिरनेसे अविलम्ब मृत्यु होता है। जो मुखमें खाद्यवस्तु डालनेसे निगल नहीं सकता, जो अपना मस्तक धारण करनेमें असमर्थ रहता, जो एकाग्र दृष्टिकी भांति एक विषयमें चक्षु सन्निवेश करता अथवा सुग्वचित्त वनता, वह अवश्य मरता है। बलवान् वा दुर्बल व्यक्तिका बारबार मोड़में पड़ना भी मृत्यु लक्षण समझा जाता है। जो व्यक्ति सर्वदा उत्थान होकर सोता, पदद्वय विक्षेप वा प्रसारण करता, जिसका हस्त, पद एवं निश्वास शीतल पड़ जाता, जिसका श्वास छिन्न रहता और निःश्वास काकोच्छ्वासकी भांति लगता, वह अधिक दिन नहीं चलता। अविरत सोने, एकवारभी निद्रा भङ्ग न होने अथवा एकवारभी निद्रा न पड़ने, वीरनेकी चेष्टा करनेमें मूर्च्छा आने, सर्वदा उद्गार देखाने, प्रेतके साथ वतलाने, विषाक्त न होने भी रोमकूपद्वारा रक्त निकलने और वाताढीला हृदयमें चटनेसे मृत्यु निकट आ पङ्चता है। किसी रोगके उपद्रव व्यतीत केषल शोथरोग (पुरुषके पदहयमें, स्त्रीके मुखदेशमें और पुरुष-स्त्री

दोनोंके गुह्यदेशमें) लगनेसे ही प्राण विनिष्ट हो जाता है। श्वास अथवा कास रोगमें अतिभार, ज्वर, हिक्का, वमन, अण्डकोप एवं निद्रामें शोथ प्रभृति उपद्रव उठनेसे मृत्यु आता है। बलवान् रोगी भी खेद, दाह, हिक्का और श्वास प्रभृति उपद्रव-युक्त होनेसे नहीं बच सकता। जिस व्यक्तिकी जिह्वा श्यामवर्ण बन जाती, वामपक्ष कोटरगत होता, मुखसे प्रतिगन्ध निकलता, अशुभे सुगन्धमण्डल भर जाता, पदहयमें घर्म (पसीना) आता, चक्षु पाकुल पड़ता शरीरके सकल गुरु अवयव हटात् पतले पड़ जाते, जो पद, मस्त्य, वसा, तैल और हृत्का गन्ध अशुभ बन कर नहीं सकता, मस्तकके जूँपा जिसके ललाटपर विचरण करते, जिसके हाथसे प्रदान करनेपर काक खाद्य नहीं खाते, जिसकी किसी विषयमें सन्तुष्टि नहीं आती, उसका मृत्यु अति आसन्न है। शीघ्र व्यक्तिकी लुघा लघ्ना रुचिकारक एवं हितजनक मिष्टान्न पान-द्वारा निवारित न होने और एक ही काल आमोशय रोगमें शिरःशूल तथा दारुण कोष्ठशूल उठनेसे लोमोका अचिरात् मृत्यु होता है।”

(सङ्घत मृत्युस्थान १०, ११, १२ पं०)

कालचोदित (सं० त्रि०) कालेन चोदितः प्रेरितः इ-तत् । यथाकाल विना चेष्टाके उपस्थित, मौतका भेजा हुआ, जिसे समय या मृत्यु भेजे ।

कालचोदितकर्मा (सं० त्रि०) भाग्यके प्रभावसे कर्म-करनेवाला, जो किस्मतके जोरसे काम करता हो ।

कालजानि (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया । अन्नाईकुरी और दीमा नामक दो नदियाँ भूटानके पर्वतसे निकल जनपाईगोडी जिलेमें पलीपुर नामक स्थान पर आ मिली हैं। इसी सङ्गमपर उक्त दोनी नदियोंका नाम 'कालजानि' पडा है। यह नदी प्रागि चल कोचविहार राज्यकी पूर्व और पङ्चोची और रङ्ग-पुरके निकट रघुक नामक नदीमें जा गिरी है।

कालजुवारी (हिं० पु०) प्रसिद्ध धूतकार, नामी लूवा-वान, जो खूब लूवा खेलता हो।

कालजोषक (सं० त्रि०) काले यथाकाले जुषते भोजनादि इति शेषः, काल-जुष्-गवुन् । १ यथा समय

कालत्रयदर्शी (सं० पु०) कालत्रयं पश्यति प्रत्यक्षवत् अवलोकयति, कालत्रय-दृश्य-णिनि । प्रत्यक्षकी भांति कालत्रयके विषयको अवलोकन करनेवाला, जो तीनों जमानिका हाल देखता हो ।

कालत्रयवेदी (सं० त्रि०) कालत्रयं वेत्ति, कालत्रय-विद-णिनि । त्रिकालका विषय जाननेवाला, जो तीनों जमानिके हालसे वाकिफ हो ।

कालदण्ड (सं० पु०) कालप्रापको दण्डः, मध्य-पदलो० । १ ज्योतिषोक्त वारादि योगविशेष । (काले यथाकाले प्राप्तो दण्डः, ७ तत्) २ यथासमय प्राप्त-दण्ड, वक्तृसे मिली हुई सजा । (कालस्य दण्डः, ६ तत्) ३ मृत्युदण्ड, मौतका चपेटा ।

कालदन्तक (सं० पु०) कालो दन्तोऽस्य, काल-दन्त-कप् । १ सर्पविशेष, एक सर्प । यह सर्प वासुकि वंशजात रक्षा और जनमेजयके यज्ञमें मारा गया । (त्रि०) २ कृष्णवर्ण दन्तयुक्त, काले दातवाला ।

कालदमनी (सं० स्त्री०) काल मृत्युं दमयति नाशयति काल दम-ल्य-ङीप् । मृत्यु निवारिणी दुर्गा ।

कालदाना—कुर्दिस्थानके इकहरी जिलेका एक ईसायी सम्प्रदाय । इन्ही लोगोंके मुँहसे सुना जाता है कि सेण्ट टामस और उनके ७० शिष्योंमें २ लोगोंने मिलकर कालदानियोंको ईसायी बनाया था । यह पपर जातिसे घृष्टकर रह आज भी स्वाधीन भावमें वास करते हैं । कालदानी प्रजातन्त्रप्रिय हैं । पूँसे यह लोग कालदी (Kaldi or Chaldee) कहते हैं । ईसायी होते समय इन्होंने जिस भावमें नूतन धर्म ग्रहण किया, आज भी उसी प्रकार उसे मानते हैं । कालदानियोंके प्रत्येक ग्राममें एक सामान्य गिरजा रहता है । प्रति रविवारको स्त्री पुरुष एकत्र हो उपासना और उपहारदि दान करते हैं । यह लोग प्रायः उपवासी रहते हैं । इनके याजक निरामिषाशी होते हैं । यह सदा युद्धके लिये प्रस्तुत रहते हैं । केवल शत्रु ही नहीं—निरीह आगन्तुकके ऊपर भी प्रत्याचार किया जाता है । वाम और टसर ऋतके मध्य पूर्वमें शामदिया जिलेतक कालदानी प्रदेश विस्तृत है । इस प्रदेशमें धान्यचेत्नादि प्रल्प है । किन्तु पार्वत्य भूमिकी कमी नहीं है ।

कालदोला (सं० स्त्री०) नोली घुच, नौकाका पेड ।

कालधर्म (सं० पु०) कालस्य धर्मः, ६-तत् । १ मृत्यु-मौत, समयका काम । २ समयका स्वभाव, वक्तकी हाल । शीत शीष्मादि ऋतुके अनुसार शीतलता और उष्णतादि जो उपजता, उसीका नाम कालधर्म पडता है । ३ समयानुसार व्यवहार, वक्तका चलन ।

कालधर्मा (सं० पु०) कालस्य धर्म इव धर्मोऽस्य, काल-धर्म-अनिच् । मृत्यु, मौत ।

कालधारणा (सं० स्त्री०) कालस्य धारणा निश्चयावगतिः ६-तत् । १ समयनिर्धारण, वक्तका ठहराव । २ कालको अवस्थाका ज्ञान, वक्तकी हालतका ज्ञान ।

कालनगर—युक्तप्रान्तके इलाहाबाद जिलेका एक नगर, यह इलाहाबाद शहरसे २० कोस उत्तर-पश्चिम, गङ्गाके दक्षिणतीर अक्षा० २५° ४१' ५५" उ० और देशा० ८१° २४' २१" पू० पर अवस्थित है । आजकल इसे करा कहते हैं । यहा कालेश्वरका एक मन्दिर है । इसीसे इसको कालनगर कहते हैं ।

कालनर (सं० पु०) १ अनुवंशीय एक राजा ।

“पनीः समानरयत्” परेद्युय वदं वृताः ।

समानरयत् कालनर, इत्ययत्तमुतः यम, (भागवत ८.१३)

(कालः कालचक्रं राशिक्रममित्यर्थः नर इव मेपादि)

२ हादश राशिका मस्तकादि प्रवयवयुक्त पुरुष ।

कालना—बङ्गालके वर्मान जिलेका एक महकुमा । यह अक्षा० २३° ७' एवं २३° ३५' ४५" उ० और देशा० ८७° ५६' तथा ८८° २७' ४५" पू० के मध्य अवस्थित है । लोकसंख्या कोइ टाई लाख होगी । कालना महकुमामें ७०१ ग्राम विद्यमान हैं । पहले कालना पूर्वखली और मन्नेश्वर तीन स्वतन्त्र धाने थे । १८६१ ई०को वध तीनों कालना महकुमामें मिला दिये गये । इस विभागके लिये एक दीवानी और दो फौजदारों अदाकते हैं । इस विभागका प्रधान नगर भी कालना है । वह गङ्गाके दक्षिणकूल अक्षा० २३° १३' २०" उ० और देशा० ८८° २४' ३०" पू० पर अवस्थित है । लोक संख्या प्रायः डेढ हजार है । पहले लोग अधिक रहते थे । किन्तु स्वभावतः मलेरिया ज्वरसे आवादी घट गये हैं । कालना एक प्रधान वाणिज्यस्थान है । वहाँसे रेल-

को राट द्रुपदादि कलकत्तो भेजनेमें जितना खय पहना
 नदीकी राट हममें पख लगता है । उन्ही नावपर
 लटकार हो बहाये द्रुपदादि कलकत्तो पाते हैं ।
 उनको पदादि पात्र भी ड्राम न होनेका यही कारण
 है । दीनाजपुर पीर रङ्गपुरी बर्षा भावन जाता है ।
 १८११ ई० को बर्षमानके महराराजे ब्रह्मरुद्र बहादुरने
 कामनामें बर्षमान पर्यन्त एक पच्छी सङ्कट यनवा हो
 यो । उनमें ४ कोमके पत्तार पर एक एक तानाव
 पीर काकईगना बना है । बह महराराजे गङ्गाकानको
 बुबिबाके लिये तैयार किया गया था । मुसलमानोंके
 शासनकाल बर्षा एक सुर्ग रहा । उसका मन्नाबरोप
 पात्र भी भायीसीके तौर देखापहना है । दो पुगानो
 टुटो मसजिदे भी बर्षा मङ्गाके तौर बर्षमानरात्रके
 मन्तम १०८ विषमन्दिर पञ्चाग्य देवदेवीके मन्दिर,
 पतिविद्याका पीर समाधिस्थान हैं । समाधिस्थानमें
 पूजन शम्भोका पश्चिमपुत्र रचित है । राजमन्त
 पति मनोरम स्थान है । बर्षाका वापार बहुत बडा
 है । सप्तसाधिक दण्डनिर्मित घट्ट देव पड़ते हैं ।

शालनाम (सं० पु०) शालनामको नाम, मध्य
 पदकी० । १ नियत मूल्यकर सर्ववियेय, खाना
 भाव । इसके खाटनेमें नियत मूल्य होता है । २ नाग
 खातिको एक खेची ।
 शालनामिनी (सं० स्त्री) नियत मूल्य कारिको
 सर्विकी खाकी भागिन ।
 शालनाम (सं० पु०) शालनाम नामक नाग,
 १ तत् । १ महादेव ।

“शालनाम नामक चरान्तरका व” (अथ, अथ १८८ व)
 २ खाताप यन्तुर्देमकारो नामक पन्थकार । ३ शाल
 भेज ।

शालनाम (सं० पु०) शाल नामिरीय, शाल
 नामि संघात पत् । १ हिरण्यक चहरका कोई पुत्र ।
 (अथ १८८) २ हिरण्यकमिपुत्रका एक लङ्का ।
 शालनिधि (सं० पु०) शिव महादेव ।
 शालनिधोग (सं० पु०) शालनिधुको नियोग, शालनाम
 नियोगी वा । १ देवकी पात्रा । २ शालनाम नियोग,
 बहका भावदा ।

शालनिधुपथ (सं० पु०) शालनाम निधुपथ निर्धारणम्,
 १-तत् । मन्थका निधुपथरथ, बहका ठहराव ।

शालनिर्वाह (सं० पु०) शालनाम निर्वाह निधुपथम्
 १ तत् । १ समयका निर्धारण बहका ठहराव ।
 २ भावकाचार्यपथीत शालनामवरीय नामक एक पन्थ ।
 शालनियोग (सं० पु०) शाल नामक भाववर्षो नियोग
 कर्मका० । गुण्य तु गुण्य ।

शालनिर्वाह (सं० पु०) शालनाम निर्वाह पतिवाहन ।
 समयका पतिवाहन, बहका निराह ।

शालनिगा (सं० स्त्री०) १ दीवमासिकाको रात्रि,
 दीवसीको रात । २ भयहर रात्रि पंचमे रात ।

शालनेत्र (सं० त्रि०) शाल मन्त्राद्यक लक्ष्यवर्ष
 वा निर्ध मूल्य बहुरी० । १ मन्त्राद्यकपुत्र निवविद्युट,
 पांचोमि मीतकी पक्षामत रखनेवाला । २ लक्ष्यवर्ष
 बहुरिद्युट, बालो पांशुराता ।

शालनेमि (सं० पु०) शालनाम मन्त्रोर्मिरीर तपमि० ।
 १ राक्षस विदेव, लङ्काविपति राक्षसामातुल । मञ्जि
 दीनके पाषातसे बध्मक पाहत हुये थे । इनमान् इनके
 लिये चौपव कानि गन्धमादन गये, उधर शालनेमि
 रावकसे चर्चराज्य मिकनेका प्रकीर्णन या लङ्काप्रवेश
 इनमान्को विनह करने पड़ बा था । पहा कुषीरा
 दारा विनाग सावनेके लक्ष्यसे उसने इनमान्को
 कीयक लक्षम कियो सरोवरमें भद्दामि भेज दिया । कलने
 प्रवेश करनी ही कुषीरामे इनमान्पर पात्रमच किया,
 किन्तु उनोंने उसे मार डाला । इनमान्के हाथ मारो
 बानि पर बह पक्षिभाषके छूट गयो । हमो समय उसने
 छतप्र हृदयमे इनमान्को शालनेमिकी कपटताको
 बात बतायी थी । फिर लक्ष्मिने पात्रम लह हो
 शालनेमिकी मार डाला । (इतिश्री रामायण)

२ दानवकियेय, कोई राक्षस । रव दानवका
 द्यादि रम प्रकार बन्धित है,—यह दानव हिरण्य-
 कमिपुत्रका पुत्र था । शरीर मन्दारपर्वतको भाति
 हृत्तु म्हेतवर्ष रहा । यह कल्प पीर यह मुच थे ।
 क्षेय ब्रह्मवर्ष रहे । इन्द्र, हरित्तरवर्ष वा । दन्त बहि
 भांम पर्यन्त बिसृत थे । शालनेमिने क्षीय प्रतापके

वल देवगणकी हरा स्वर्ग अधिकार किया। फिर काल-
नेमिने स्त्रीय देह चार भागमें बांट देवगणकी भांति
काय संसुटाय चलाया था। विष्णुके हाथ मारे जाने
पर कालनेमि परजन्ममें कंस रूपमें प्रादुर्भूत हुआ।

(हरिवंश ४६-५१ प०)

३ मालव देशीय कोई ब्राह्मण कुमार। इनके पिताका
नाम यज्ञसोम था। पिताके मरने पर इन्होंने स्त्रीय
स्नानके साथ पाटलिपुत्र पहुंच देवशर्मा नामक किसी
ब्राह्मणमें विद्या पढ़ी। ब्राह्मणने उक्त दोनों भ्रातावोंको
अपनी दो कन्याये दी थीं। किसी समय कालनेमिने
प्रतिवेशियोंको घमास्य देह इर्ष्यापरायण चित्तसे
लक्ष्मीकी आराधना की। लक्ष्मीने आराधनामें
सन्तुष्ट हो इन्हें विपुल धन और चक्रवर्ती पुत्र लाभका
वर दिया था। किन्तु इर्ष्यापरवश ही आराधना
करनेके कारण उन्होंने अभिगाप लेकर कहा था,—
'तुम चौरकी भांति मरोगी' कालक्रमसे ब्राह्मणको धन
सुत्तादि प्राप्त हो गया। किन्तु पुत्रशत्रु राजाने
इन्हें चौरकी भांति मार डाला। (क्याप्तित्सागर)

कालनेमिरिपु (सं० पु०) कालनेमिः रिपुः, ६-तत्।

१ कालनेमिके शत्रु विष्णु। २ हूमान्।

कालनेमिहा (सं० पु०) कालनेमिं हतवान्, कालनेमि
हन्-क्षिप्। १ विष्णु। २ हूमान्।

कालनेमी (सं० पु०) कालस्थेव नेमिरस्त्रस्य, काल-
नेमि-इनि। कालनेमि, एक असुर।

कालनेम्यरि (सं० पु०) कालनेमेः अरिः शत्रु, ६-तत्।
१ विष्णु। २ हूमान्।

कालपक्ष (सं० त्रि०) काले यथाकाले पक्षः, ७-तत्।
यथासमय पक्ष अपने आय वस्तु पर पकनेवाला।

कालपट्टो (हि० स्त्री०) भराव, टूँसठाँस। जहाजकी
दृष्टमें सन वगैरह भरनेको 'कालपट्टी' कहते हैं।
यह गम्ह पातंगोज 'कालाफटो'का अपभ्रंश है।

कालपत्री (सं० स्त्री०) तालागपत्र।

कालपय (सं० पु०) विष्णुमित्रके एक पुत्र।

(भारत, पृ० १० प०)

कालपरिवास (सं० पु०) ईपत् कालका ठहराव,
घोड वल्लकेलिये ठहरनेका काम।

कालपर्ण (सं० पु०) कालं क्षणं पर्णं पत्रं यस्य, बहुव्री।
तगरहृत्।

कालपर्णिका, कालपर्ण देखो।

कालपर्णी (सं० स्त्री०) कालं क्षणं पर्णमस्याः। १ कृष्ण
तुलसी वृक्ष, काली तुलसी। २ श्यामालता,
काली वेल।

कालपर्यय (सं० पु०) कालस्य पर्ययं वैपरोत्यम्, ६-तत्।
कालकी विपरीत गति, वक्तका उलटफेर। शुभदायक
कालकी अशुभदायकता और अशुभदायक कालकी
शुभदायकता 'कालपर्यय' कहलाती है।

“मित्रश्रीका यथा राजन् रोपमासाय निर्गता।

मबलि पुरपथात्र नाविकाः कालपर्यये ॥” (महाभारत विवाह ७०प०)

कालपर्वत (सं० पु०) त्रिकूटके निकटका एक पर्वत।

“त्रिकूटं समतिक्रम्य काशपर्वतं तत्र च।

ददगं महाराषाडं गभीरोदं महोदधिम्” (महाभारत, वन २०६प०)

कालपात्रिक (सं० पु०) भिच्छुभेद, किसी किस्मके फकीर।
यव कृष्ण वर्ण पात्र हाथमें ले भिक्षा मांगते हैं।

कालपालक (सं० स्त्री०) कालं क्षण्यषणं पालयति
धारयति, काल-पाल-पबुल्। कंठुष्टमृत्तिका, एक मट्टी।
कंठुष्ट देखो।

कालपाश (सं० पु०) कालस्य पाशः रज्जुरिव कालस्य
मृत्योर्यमस्य वा पाशः। १ समयका बन्धन रज्जुवत् आवद्ध-
कारक अपरिवर्तनीय नियम, वक्तकी केद। समयके
इस नियम द्वारा भूत आवद्ध हो किसी प्रकार अन्वया
कर नहीं सकते। २ यमपाश, मौतका फन्दा। यथा
समय इसी पाशरूप नियममें आवद्ध हो लोगोंकी
यमालय जाना पड़ता है। ३ मृत्युपाश, फाँसी।

कालपाशिक (सं० पु०) कालपाशस्य नेता, कालपाश-
ठक्। हाथसे मारनेवाला, जसाद, फाँसी देनेवाला।

कालपीलु (सं० पु०) कालः क्षण्यषणं पीलुः, कर्मधा०।
क्षण्यवर्ण पीलु, स्याह आवनस, काला तेंदू।

कालपीलुक (सं० पु०) कालपीलु स्वार्थे कन्।

कालपीलु देखो।

कालपुच्छ (सं० पु०) कालः पुच्छोऽप्य, बहुव्री०।

१ मृगविशेष, एक जानवर। सुथतने इस मृगकी
कुलचर जन्तुके अलभूत कहा है। कुलचर देखो
२ क्षण्यचटक, कासा चिडा।

कालपुष्पक, बर्तनक ईकी।

कालपुष्प (स० पु०) काल का कालक पुष्प एक उपनि०। १ यमसहाय। रामचन्द्रको सीताके चपलानमें देवताके आदेशमें यह इनको समामि पवुनि से। फिर इनोंने रामचन्द्रको निष्कल ज्ञानपर कयनो पत्रबनमें निबुद्ध किया। उसी समय शारदा पुत्रांकारि-पत्नियोंके लक्षण बड़ा गये से। रामचन्द्रने अपनी प्रतिष्ठाके अनुसार लक्षणका परिष्कार किया। उसी मोक्षके लक्षणके सहायनमें अपना प्राण छोडा था। फिर रामादि पर त्रैल ज्ञानात्मिनी भी लक्ष्मीप्रकार कीका परिष्कार कर दी। (रामायण)

२ पुष्पकी भाति पाकार विशिष्ट, आदेशोभीमी एक शकल। यह मनुष्यका समाप्तम गचना करनेके लिये कल्पनाय प्रवृत्ति दादय रागि ज्ञान कल्पित पुष्पकी भाति बनाया जाता है। इस आकृतिमें प्रष्ट आदि समुदाय एक प्रकृत विहित कर समाप्तम निर्दिष्ट होता है। इससे अनुसार लक्ष पुष्पके भी लक्षो लक्षो पक्षमें समाप्तम पडा करता है।

(शकल)

३ कालकपिण्डकी एक भूर्ति। यह दाग करनेके लिये पुष्पके बनाया जाता है। मरिचकपुराणमें लिखा है कि लक्ष्म, मध्यम एक पत्रम नियमके अनुसार लक्ष भूर्ति एक घन, पञ्चायत वा पञ्चविंशति निम्न सुवर्णके बनायेका विधि है। उसके दक्षिण इष्टमें स्वर्ग, वाम इष्टमें मांसपिण्ड, कुक्षकमें अनाहुसुम, परिष्कारमें रत्नवस्त्र और मण्डपमें पुष्पमाका तथा यहमाका रखी है। फिर चतुर्दशो वा चतुर्विंशति पत्रिक दिन फिर कर दयाविधान पूजापूर्वक दक्षिणा एक पलहारादिके साथ वह माण्यको दिया जाता है। कम हानके पक्षमें व्याजिन्य मृत्तमय छूटा है। फिर हानकारो विपुत्र दिग्दर्शना पञ्चकारो और समुदाय विपुत्रम्य भी सक्तता है। पत्नीको दयासमय देह त्याग करनेपर सुवर्णकोभेदपूर्वक परम पर मिळता है। पुष्पपक्षके पीछे वह पत्रि भास्मिक और राजा हो कथ्य होता है। ४ लक्षवर्ण पुष्प, काला आदेशी।

कालपुष्प (स० ली०) काल लक्ष्य पुष्प यक्ष, बहुरो०। कालपुष्प मटरका पेड। कथन ईकी।

कालपुष्प (स० पु०) काल लक्षवर्णः पूजा गुणाब्ज, कर्मका०। १ लक्षवर्ण मुखाक, कालो सुदारो। २ सावा रक्ष लक्ष, भाम्नी लीन।

कालपुष्प (स० ली०) काल लक्ष्य पुष्प यक्ष बहुरो०। १ कर्मका बहुरो। २ बहुरोमाय, कौडी कमान्। (पु०) ३ सूर्यविद्येय, एक चिरम। ४ बक्षपयो, बुरोमार।

कालपिण्डिका (सं० ली०) १ मन्त्रिणा, मन्त्रोड। २ लक्ष्य-लीन काला कोरा। ३ श्यामानता, कालो वैन।

कालपेयो (स० ली०) श्यामानता, कालो वैन।

कालपीयो (स० ली०) पिबन्ते इयो, विष् कर्मवि लक्ष्, कालयात्री देवकेति, कालपीय-लीन। श्यामानता, कालो वैन। इनका संकल तपठार—कालपीयो, महा श्यामा सुमद्रा, उत्पलधारिका, शीर्षमुखा, पालिन्दो थीर मधुरविहवा है। कालपेयो ईकी।

कालप्रजा—जातिविषय, एक कोम। कई लक्षवर्ण जाति इयो नामके पुकारो कालो है। भारतवासी पञ्चमसाठ नामक पर्वतके निम्नपदिमें इसका वास था। आजकल इस जातिके लोग पहाडि जा सुरतमें रहे हैं। यह लक्षवर्ण लक्ष पक्षक इङ्काय थीर चतुर्वर्णके व्यवहारमें सिमरिष्ठ होती हैं। वनमें पय मारना इनका प्रधान काय है। लक्षि करना यह नहीं जानते थीर सामान्य मण्डे भी अपनेको परिहृत मानते हैं। इनके मन्दिर या पुरोहित कौडी नहीं। यह लक्षो लक्ष का मण्डरलक्षको पूजते हैं। इनको पुत्रेकका बड़ा मय रहता है। किसी समान, वेध वा लक्ष्मुठके मरने पर यह मयसे देय कांड भन जाते हैं।

कालप्रभात (सं० ली०) काल लक्ष्य प्रभात यक्ष, बहुरो०। १ धरदु चतु। २ पलिकधारक प्रभात कुरा दिन।

कालप्रभेद (सं० पु०) पक्षप्रभेद, पियाबको एक बीमारो। इष्टमें लक्षवर्ण मूत्र कतरता है।

कालपकड़ (सं० लि०) कालेन प्रकड़ परिपक्ष। यथा काल उत्पन्न, बहति निष्कला बृवा।

कालप्रवृत्ति (सं० ली०) कालक्य प्रवृत्ति पारक्य, इ-तत्। पक्षकालके व्यवहारका पारक्य। लक्ष-

नगरीमें चैत्र मासकी शुक्ल-प्रतिपत् तिथि तथा रवि वारको सूर्य उदयके पीछे दिन, मास, वर्ष प्रभृति खण्डकी प्रवृत्ति पड़ी है। (विज्ञानगिरीमणि।)

कालप्रियनाथ—एक देवमूर्ति। वराहपुराणमें सूर्यकी एक मूर्तिका नाम 'कालप्रिय' लिखा है। यमुनाके दक्षिणस्थ प्रदेशमें सूर्यदेवकी यह मूर्ति पूजा जाती है। कालप्रियरूपसे सूर्यदेवका स्थापित किया हुआ शिवलिङ्ग 'कालप्रियनाथ' कहलाता है। भवभूतिके 'मालतीमाधवका' प्रारम्भ पढनेसे समझ पडता है, कि कालप्रियनाथके उक्तव उपलक्षमें प्रथम मालतीमाधव अभिनीत हुआ। मालतीमाधवकी दुर्गमार्थबोधिनी गान्धी टीकामें मानाङ्गने इनके सम्बन्धपर कौड़े बात नहीं लिखी। किन्तु जगद्वरने 'मालतीमाधव-टीका'में इन्हें तद्देशका प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध देव माना है। नहीं कह सकते—पाजकल कालप्रिय-नाथ कहा है ?

कालप्रिया (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असगन्ध ।

कालवालन (सं० स्त्री०) कवच, वस्त्र ।

कालवलप्रवृत्त (सं० स्त्री०) आधिदैविक रागमात्र, वक्तके जोरसे होनेवाली बीमारी। शीत, उष्ण, वात, वर्षा आदिके कारण लगनेवाले रोग भी दो प्रकारके होते हैं—व्यापन्नतुंक्त और अव्यापन्नतुंक्त। (सद्युत २७ ५०)

कालवज्र (हिं० पु०) पुरानी परतौ, बहुत दिन जोती-बोयी न जानेवाली जमीन् ।

कालवाल (सं० पु०) कंकुष्ठ, एक मट्टी ।

कालवालक, कालवाल देखो ।

कालवृत्त (हिं० पु०) १ धैना, कच्चा भराव। इससे सेह-राव घनाते हैं। २ काठका एक सांचा। इस पर त्रिसार जूता सीते हैं। ३ यन्त्र विशेष, एक औजार। इससे रस्सी बटते हैं। यह काठका फंदा होता है। इसमें रस्सी डाननेके कई छेद रहते हैं। छेदमें डालकर बटनेसे रस्सी बराबर उतरती, मोटी या पतल नहीं पडती।

कालवैलिये (हिं० पु०) एक जाति। इसे सपेरी भी कहते हैं। सांप आदि विषैले जन्तुओंको पकडकर यह खेव दिखलाती है। यही इसकी जीविका है।

कालभक्त (सं० पु०) महादेव, शिव ।

कालभण्डो (सं० स्त्री०) श्वेतगुञ्जा, सफेद बुँवची ।

कालभाण्डिका (सं० स्त्री०) कालभायै कृष्णप्रभायै अण्डति, काल-भा-पडि-गुवुन्-टाए इत्थ। मञ्जिठा, मंजोठ। इसका काय और निर्याम प्रभृति रत्नवर्ण आते भी प्रथमतः कृष्णावर्ण देवाना है। मन्दिषा देवो कालमृत् (सं० पु०) कालं विभक्तिं धारयति, काल-मृत् क्तिप्। सूर्य, आफूताव, समयको धारण करनेवाला सूरज ।

कालभैरव (सं० पु०) कालम्य भैरवं भयं यस्मात् काल-भौरु-भण्। काशीय शिवके अंगजात एक भैरव। शिवतत्त्व न समझनेवाले ब्रह्माका पञ्चम मस्तक काटनेको महादेवद्वारा यह आविर्भूत हुये। काशीमें रहनेवाले दुष्कर्मकारीको दण्ड देना हो इनका प्रधान कार्य है। ब्रह्मा भी कन्यागमनका पाप कर काशी पहुंचे थे। इसीसे शिवकी आज्ञा पाकर कालभैरवने उनका पञ्चम मस्तक काट डाला। (काशीवर्ण) भारतके नाना स्थानोंमें कालभैरवकी मूर्ति पूजा जाती है।

कालम (अ० पु०—Column) १ पदभाग, कोठा। २ सैन्धुभाग, पांत। ३ स्तम्भ, खम्भा।

कालमरिच (सं० स्त्री०) कालं मरिचम्। कृष्णवर्ण मरिच, काली मिर्च।

कालमल्लिका (सं० स्त्री०) कृष्णाजंक, काली तुलसी।

कालमल्ली, कालमल्लिका देखो।

कालमसौ (सं० स्त्री०) काली मसौव, पुँवझाव। काली नदी, एक दरया।

कालमहिमा (सं० पु०) कालम्य महिमा माहात्म्यम्, इत्तत्। १ समयका माहात्म्य, वक्तकी शान्। २ समयकी शक्ति, वक्तकी ताकत।

कालमाधवीय (सं० पु०) माधवस्य माधवाचार्यस्य श्रयम्, माधव-वृ, कालप्रतिपादको माधवीयः माधवज्ञतो ग्रंथः, मध्यपदलो०। माधवाचार्यप्रणीत कालज्ञान-बोधक एक सृतिग्रन्थ।

कालमान (सं० पु०) कालो मन्यते जनैरिति शेषः, काल-मन-घञ्। १ कृष्णपत्र चूद्र तुलसी। २ कृष्ण-

मञ्जिटा, बरई। (श्री०) काव्यस्य मासं परिमापम् ।

१ कालटा परिमास बरई तौत ।

कालमानस, बलवत्त ईशो ।

कालमास बलवत्त ईशो ।

काव्यमारिय (सं० पु०) हृदयस्य तप्यन्तीय भास्य, बहोपत्तीको शीराई ।

काव्यमास (सं० पु०) काव्यस्य हृदयस्य मासं यच्च श्योऽप्य, बहोपत्ती । कल्पवृक्षस्य, कालो तुलसी ।

काव्यमानस बलवत्त ईशो ।

काव्यमाना (सं० श्री०) कल्पवृक्षं काली तुलसी ।

काव्यसुख (सं० पु०) काव्यं सुखं यच्च, बहोपत्ती ।

काव्यसुखं शान्तं विमिय, काव्ये सुखं एकं बन्दर ।

(शान्तं ११ ५४ ५) । (वि०) २ कल्पवृक्षं सुखं वा पयमानसुखं, बलवत्तु वा ।

काव्यसुख्य बलवत्त ईशो ।

काव्यसुख्य (सं० पु०) काव्यो सुख्य इव काव्यति

प्रकाशते, काव्य-सुख्ये च । १ कल्पवृक्षसुख्य, मोक्षा । २ कल्पवृक्षसुख्य, काव्ये सुख्यो मोक्षा ।

काव्यमूर्ति (सं० श्री०) काव्यस्य मूर्तिः, २ तत् । १ यम

मूर्तिः । २ कल्पवृक्षस्य मूर्तिः । ३ काव्ययम ।

काव्यमूल (सं० पु०) काव्यं मूलं यच्च बहोपत्ती । इह

विद्वज्ज, काव्यं नीत । निवृत्त ईशो ।

काव्यमेष (सं० पु०) १ सुदं हृदयविमिय, एकं छोटा

पेठ । एकं पञ्चमत्तं तिष्ठति होता है । इति मन्त्रातीता

पौर मन्त्रातीता मो बहोपत्ती है । एकं पञ्चमत्तं मन्त्रातीता

पञ्चमि मिलती है । एकं मीपतिं चयता चक सयता

है । एतन्न वेद्य इतको चयतामन्त्रं बहोपत्ती है ।

२ श्री विद्यात तामिल कवि । द्वाविडके लोग

एकै 'काव्य' मन्त्रं कहते हैं । कविता विदुष एवंपञ्चमि

परिपूष है । पञ्चमत्तं योच दार्यमूलक है । एकं दो

दिनमें एक काव्य लिख सकती है । काव्यमेष मन्त्रातीता

है । एकं पञ्चमत्तं मन्त्रातीता भौविन ये । ठोच नहो कवा

वा सयता—इतशा प्रकृत नाम क्या क्या ।

काव्यमेषका (सं० श्री०) काव्यो मित्तने काव्योऽप्य

इति काव्यं कवेरिति शेषः काव्यं मिय ह्येयं अन् टाप

अप्यचः मञ्जिटा, मञ्जोठ ।

काव्यमेषो बलवत्त ईशो ।

काव्यमेषका (सं० श्री०) काव्यं मियति कवेरिति काव्य-

अप्यचः काव्यं मिय चप्यं ह्येयं अन् टाप अत्यन्त

च । १ मन्त्रातीता, काव्यो कवेरिति । २ मञ्जिटा,

मञ्जोठ । ३ कल्पवृक्षस्य, काव्यो शीरा । ४ विद्वता

कवेरिति । ५ काव्यो । ६ कविता, इतदी । ७ मन्त्र-

अतीता, कवेरिति शीरा । ८ मन्त्रातीता ।

काव्यमेषो बलवत्त ईशो ।

काव्यमेषो (सं० पु०) मिश्रणं विमिय कविताको एक

शीरायो ।

काव्ययम (सं० पु०) यमनाका एक पञ्चमत्तं । मन्त्रा

टीके मियमानुवार माय्यं कविताको माय्यं मन्त्रं

इतशा कवा कवा । एकं कविता मन्त्रातीताको

इति काव्योच्यते इति कवेरिति मन्त्रं कविताको

नामकं स्थानं दाह्यं कवा कवेरिति मन्त्रं मन्त्रं

पौर मियम पञ्चमत्तं मन्त्रं कवेरिति मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं मन्त्रं

कालयुक्त (सं० पु०) कालिन युक्तः, ३-तत् । १ प्रभवादि
षष्टि संवत्सरके अन्तर्गत ५२वां संवत्सर । (त्रि०)
२ अपरिवर्तनीय कालनियमयुक्त, वृहत्के द्वाघट्टेसे
मिला हुआ । ३ मृत्युयुक्त, मौतसे मिला हुआ ।

कालयोग (सं० पु०) कालस्य योगः संयोगः, ६-तत् ।

१ समयज्ञासम्बन्ध, वस्तुका सिलसिला ।

“महा कालयोगेन प्रकृति याचतेऽर्चवः ।” (भारत, वन, १० ५०)

२ ज्योतिष-शास्त्रोक्त कालरूप एक योग ।

कालयोगी (सं० पु०) काल एव योगः अस्यास्ति,
कालयोग-इति । शिव ।

“कालयोगी कदापि न सर्वकामयतुष्ये ।” (भारत, अशु, १० ५०)

(त्रि०) २ कालसम्बन्धीय, वस्तुके सुताक्षिक ।

कालयोधी (सं० पु०) काले यथाकाले योषः युद्धं कर्तव्य-
त्वेन अस्यास्ति, काल-योष-इति । यथासमय युद्ध
करनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुस वस्तु पर लडता है ।

कालर (अं० पु० Collar) प्रैवेय, पट्टा, कुरते वा
कमीचमें गलेकी चारो ओर लगनेवाली ठठी हुयी पट्टी ।

कालरात्रि (त्रि०) कालरात्रि देखो ।

कालरात्रि (सं० स्त्री०) कालरूपा सृष्टिसंहारभूता
रात्रिः, मध्यप० । १ प्रलयरात्रि, कयामतकी रात ।

ब्रह्माको रात्रिको कालरात्रि कहते हैं । उस समय
समुद्रय संसार विनष्ट हो जाता है । केषलमात्र
नारायण एकार्णवमें सोया करते हैं । इसीसे उस
समयका नाम कालरात्रि है । २ मृत्यु सूचक रात्रि,
मौतकी रात । अपने वा आत्मीय व्यक्तिके मृत्युकी
रात्रि कालरात्रि कहाती है । ३ भयानक रात्रि,
स्त्रीफनाक रात । ४ ज्योतिषशास्त्रसे क्रियाके अयोग्य
रात्रि विशेष, खराब रात । उसमें समस्त रात्रिको
८ भाग करनेका नियम है । फिर वारके अनुसार
प्रतिदिन आठ भागमें एक भाग कालरात्रि माना
जाता है । यथा—रविवारके रात्रिका षष्ठ भाग
अर्थात् २० दण्डके पीछे ४ दण्ड, सोमवारके चतुर्थ-

भाग अर्थात् १२ दण्डके पीछे ४ दण्ड, मङ्गलवारके
द्वितीय भाग अर्थात् ४ दण्ड, बुधवारको सप्तम भाग
अर्थात् २४ दण्डके पीछे ४ दण्ड, वृहस्पतिवारके
पञ्चम भाग अर्थात् १६ दण्डके पीछे ४ दण्ड, शुक्र-

वारके तृतीय भाग अर्थात् ८ दण्डके पीछे ४ दण्ड
श्रीर शनिवारको प्रथम एवं शेष भाग अर्थात् प्रथम
४ दण्ड और शेषको ४ दण्ड कालरात्रि होती है ।
वह समुदाय कार्यारम्भमें परित्याज्य है । साधारणतः
रात्रिपरिमाण ३२ दण्ड लगा यष्ट हिमात्र लिखा
गया है । किन्तु रात्रिपरिमाण घटने बढ़नेसे भी
८में भाग कर उक्त नियमानुसार कालरात्रि मानो
जाती है ।

“रवौ षष्ठं विधौ वेद कुत्रवारं द्वितीयकम् ।

बुधे सप्त गुरौ पच धनुवारं तृतीयकम् ।

मनावायं तथा शुकं रावो काल विवर्जयेत् ॥” (दीपिका)

५ दुर्गा देवीकी एक मूर्ति ।

“कालरात्रिर्नारात्रिर्नैमिषरात्रिय दारुणा ।” (माण्डूकेयपु०, ८२ ५०)

६ दुर्गाकी काकरात्रि मूर्तिका प्रतिपादक एक मन्त्र ।

७ दीपान्विता अभावप्या, दिवाली ।

“दीपावली तु या प्रोक्ता काकरात्रिश्च सा मता ।” (चाण्ड)

८ यमको भगिनी । बड़ी सर्वप्राणीका विनाश करती है ।

९ भीमरथी, अत्यन्त बड़ावस्था । मनुष्यके आयुमें
७७वें वर्ष पर ७वें मासके ७वें दिन पहनेवाली रात
कालरात्रि कहलाती है । उसके पीछे मनुष्य नित्य-
नैमित्तिक कर्मसे छुटकारा पाता है ।

कालरुद्र (सं० पु०) कालः कालरूपः सर्वसंहारको
रुद्रः, कर्मधा० । कासाग्निरूप एक रुद्र ।

“येषु न कालरुद्रस्य नामाश्रीगतसदृशः ।

विविधवर्णविशाला कुतले शिखरत ॥” (शिवोप०)

कालरूप (सं० त्रि०) प्रशस्तः कालः, काल-रूपम् ।

प्रमंथायां दपप् । पा ३।१।११ । १ अत्यन्त क्षणवर्ष, निहायत
काला । २ कालसदृश, मौत-जैसा । ३ क्षणवर्ष,
काला ।

कालरूपधृक् (सं० पु०) कालरूपं धृषति धारयति,
कालरूप-धृप्-क्षिप् । १ यम । २ मृत्यु, मौत ।

कालम् (सं० त्रि०) कालः कालकं चिह्नमेदः अस्यस्य,
काल-लच् । सिध्मादिभ्य । पा ३।१।२० । कालचिह्नयुक्त,
काले दागवाला ।

काललवण (सं० स्त्री०) कालं क्षणवर्षं लवणम्,
कर्मधा० । १ चिटलवण, कालानमक । भावप्रकाशके
मतमें वह अग्निदीप्तिकारक, लघु, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य,

रुच, वृत्तिकारक अवापी और विरह, पानाह विरह, अदयवेदना मरीरको रुचता तथा मूल मागव है। २ आचरवच, सींररनीन।

खालसोचन (सं० पु०) एक दानव।

"अन्तो बरकी मनी अचरव चालनीरुच" (इतिर म, २७ प)

खालसोच (सं० स्त्री०) खालच तत् सोइधेति, अर्मांवा०। तोच्य सोइ, तोचा सोइ। इसका सखत पर्याय लख्या यस इत्य, तोच्य और खालायस है। भीरुकी।

खालवह (सं० पु०) सुपरिमिय, एक झाड़। कोम इसे खालियाकड़ा कहते हैं।

खालवदन (सं० पु०) १ टेलुगुविशेष। (त्रि०) २ अरब वर्ष सुखसुख, आसे मजवाला।

खालवसन (सं० स्त्री०) अक्षयति उपसुनक्ति विषयम्, एक विष्-पन् खालज खायज बहर्न आवरक वा १ तत्। बर्न अचर, खिरर, बरुतर।

खालवन्धि (सं० पु०) बर्नाके पाईमें बात प्रभृतिके अणमनार्थं बन्धि, शुद्ध बरसातमें सपाईके बापी समायी जानेवाली विरकारी। यह पक्षइयविह होता है। पक्षसे एक खेइवन्धि समता है। उससे पीछे एक निकइवन्धि जगती है। पुन खेइवन्धि जगया जाता है। उससे पीछे निकइवन्धि चलता है। इसी प्रकार हादय बन्धि अन्तर प्रमसे सजा अन्तमें तीन खेइवन्धि दिखे हैं। (२२८)

खालवाच—पश्चात् प्रदेशके एक जिलेका एक नगर। यह पचा० १२ १० १० ४० और देसा० ०१ १३ १० पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या इह हजारके कुछ अधिक है। यह पक्षसे १२ कोस दूर सिन्धु नदीके मूल पर एक लवणका प्रदेय है। खालवाच नगर उसी पर्यंतके मातये संख्य है। यह पर्यंत लवण मय है। पक्ष कुछ काट कर कुछमें पीस लेमिसे ही उत्तम लवण बन जाता है। यहां मारीनामक खानमें लवण खोद कर निकाला जाता है। रागि रागि लवण कट जाती भी पर्यंत कुछ चटता मारूम नहीं पड़ता। सिन्धुनदीके सुना नाचा एक मान्वा नदी है। उससे पश्चिमभागमें एक खानपर इह लवणपात है। उसकी बाईं ओर नमकका गुदाम है।

यहां लवण विद्यता है। पर्यंतमें लवणका एक एक पक्षर खर्चों सेकु पीर खर्चों १२ हाथ तक प्रमथ है। यहां १२ मन लवण काट लेमिमें सिंधी एक रूपया देना पड़ता है। गुदाममें जानेसे मूख अधिक खयता है। निकट ही दूसरा पहाड़ भी है। उसमें खिटकरी मरी है। यहां खिटकरी माड़े तीन रूपये मन बिकती है। फालवाच नगरमें मोड़को पच्छी पीले बनती है। यहां स्पुनिसियाकित्ठी, आचरवकला चौपवालय सराय और बियालय बर्तमान है।

खालवाचल (सं० वि०) आचरवोवच, बह बताने-वाला।

खालवाची (सं० वि०) समय बतानेवाका, जो वत्र भी बताता हो।

खालवान् (सं० त्रि०) आच लख्यवर्षं पक्ष्यस्त आच मतुम् मय व। अख्यवर्षंविगिह, आसे रंयवाका।

खालवानर (सं० पु०) अख्यसुख वानर, आसे सुंइ वाका नन्दर।

खालवार—बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत खाडिवाशाह प्रदेशका एक नगर। यह नवनगरसे १३ कोस दूविच पूर्व अवस्थित है। खालवार नामक राजसुबिमानका एक मजब भी है। खालवार नगर कसीबा प्रधान स्थान है। नगर प्राचीर विहित है। लोकसंख्या इह हजारके कम है। १८८८ ई० को दुर्मिचके समय यहां खोई १०० लोग मरे थे। बालाबाठो खातिको बसती पास हो है। प्रवादासुदार बाला नामक किसी राजपूतने यहां का काठो खातिको किसी रमणोका पापिपहच किया था। उसी परिचयके उससे बाला काठो कोय उत्पन्न हुई। अतवर्षपूर्व खालवारमें एक प्रकारका पत्रको नामक कार्यालय बनता था। देगल राजा उसका बड़ा जमादर करती थे। किन्तु आजबन वह देख नहीं पड़ता।

खालवाहन (सं० पु०) महिय, मेवा।

खालविहम (सं० पु०) खालज समन्व धमपय या विहमः १ तत्। १ यमका विहम। २ मूलका विहम, मीतको नागत। ३ समयका विहम, बहको ताकत। खालविध्वंसन (सं० पु०) १ वेद्यर रसविशेष, एक दवा

शुद्ध पारद, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र और हरिताल, समभाग मर्दनकर पाण्ड और आमय रोग नष्ट हो जाता है।

(रसरदाहर)

(स्त्री०) कालस्य विध्वंसनम् । २ समयनाग, वक्रकी वरवादी ।

कालविध्वंसनरस, कायविध्वंस देखो ।

कालविध्वंसी (सं० स्त्री) कालं विध्वंसयति नाशयति, काल-वि ध्वंस-णिच्-णिनि । समयनागक, वक्र वरवाद करनेवाला ।

कालविपाक (सं० पु०) समयकी परिपक्वता, वक्र पूरा होनेकी मियाद ।

कालविप्रकर्ष (सं० पु०) कालस्य विप्रकर्षः दूरत्वम्, इ-तत् । समयकी दूरता, वक्रका बटाव ।

कालविपायिका (सं० स्त्री०) काकीली और चीर काकीली ।

कालवीजक (सं० पु०) महानिम्ब, वही नीम ।

कालवृक्ष, कायहन देखो ।

कालवृद्धि (सं० स्त्री) वृद्धिविग्रेष, एक सूद । प्रति-दिवस वा प्रति मासके हिंसावसे जो वृद्धि बढ़कर द्विगुण हो जाती, वही कालवृद्धि कहती है ।

“वृद्धिः कायवृद्धिः कारिता कारिका च वा ।” (मनु, ८। १११)

कालवृन्त (सं० पु०) कालं वृन्तं यस्य, बहुव्री० । कुलत्प, कुलवी ।

कालवृन्ता, कायवृन्ता देखो ।

कालवृन्ताक (सं० पु०) पेटिका, एक पेड़ ।

कालवृन्तिका (सं० स्त्री०) कालं वृन्तं यस्याः काल-वृन्त-डीप् स्वार्थे कन्-टाप्, ईकारस्य झलत्वम् । रक्तपाटन-वृक्ष । २ पेटिका पिटारी ।

कालवृन्ती (सं० स्त्री०) कालवृन्त-डीप् । पाटलावृक्ष, एक पेड़ ।

कालवेग (सं० पु०) नागविग्रेष, कोई नाग । वह वासुकिके पुत्र थे ।

कालवेद्या (सं० स्त्री०) कालस्य वेद्या, इ-तत् । १ समस्त दिवारात्रिके मध्य क्रियाका प्रयोग्य समयविग्रेष, तमाम-दिन और रातके बीच काम न करने लायक वक्र । दिनमान और रात्रिकाल उभयमें प्रत्येकको ८ आठ

भागमें बाँट वाकके अनुसार एक वा दो भाग काल-वेद्या मानते हैं । रविवारको दिनका पञ्चम पधं रात्रिका षष्ठ, सोमवारको दिनका द्वितीय तथा रात्रिका चतुर्थ, मङ्गलवारको दिनका षष्ठ एवं रात्रिकी सप्तम, बुधवारको दिनका तृतीय तथा रात्रिका सप्तम, वृहस्पतिवारको दिनका सप्तम एवं रात्रिका पञ्चम, शुकको दिनका चतुर्थ तथा रात्रिका तृतीय और शनिवारको दिनरात्रि उभयका प्रथम एवं षष्ठम भाग कालवेद्या है । (ज्योतिषदीपिका)

कालव्यापी (सं० त्रि०) कालं व्याप्नोति काल-वि-प्राप-णिनि । एकरूप बहुदिन स्याथी, एक ही तरह बहुत दिन चलनेवाला ।

कालगम्बर (सं० पु०) एक दानव ।

कालगाक (सं० स्त्री) कालं क्षणं ग्राहकम्, कर्मधा० । १ शाकविग्रेष, करेसु, पटुषा । उसका संस्कृत पर्याय—नाहिक, आहगाक और कालक है । भावप्रकाशके मतसे वह सारक, रुचिकारक, शीतल, पवित्र, वायु एवं वक्रवर्धक और कफ, शोथ तथा रक्त-पित्तनाशक है । २ तिष्ठपूर्तिका । ३ कुलत्प, कुलवी । ४ गर-पुङ्गा, सरफोका । ५ तुलसी वृक्ष ।

कालशानि (सं० पु०) कालः क्षणः शानिः धान्य-विग्रेषः, कर्मधा० । क्षणशानि, काला धान, उस धान्यका चावल और भूसी दोनों काले होते हैं । सुन्धतके मतानुसार वह कपाय, मधुररस, मधुरपाक, शीतवीर्य प्रत्य अभियन्दी, मनवृद्धकाक, लघु और यष्टिक धान्यके तुल्य गुणयुक्त है ।

कालशिरा (सं० स्त्री०) काला क्षणवर्णा शिरा, कर्मधा० । क्षणवर्ण शिरा, काली रंग ।

कालशुद्धि (सं० स्त्री०) कालस्य शुद्धिः इ-तत् । शुद्धकाल, पाक वक्र । जिस समय समुदाय शुभ कर्म सम्पादन कर सकते, उसे कालशुद्धि कहते हैं ।

कालशेय (सं० स्त्री०) कलश्यां भवम्, कलशो-टक् । १ पादजलसे त्रिभाग दक्खित तक, एक हिस्से पानी और तीन हिस्से टहीका बना मट्टा । २ आल, हरताल । कालशैल (सं० पु०) कालः क्षणवर्णः शैलः, कर्मधा० । पर्वतविग्रेष, एक पहाड़ ।

अथोपनिषत्सु विदितं न तत्र धरतः ।

अथोपनिषत्सु विदितं न तत्र धरतः" (भाष्य, पृ. १९८५)

काव्यसंशोधन (सं० पु०) काव्यस्य संशोधनः, इति । १ चिर-
कालं पद्यरचना, यदीया मोक्षदमी । २ बौद्धं समयया
पतिपादनं, यत्ने बह्वका गुणवत् ।

काव्यसङ्घर्षा (सं० जी०) काव्येण सङ्घर्षते अती
काल-सम-ज्ञाप-कर्मणि कर्म । नववर्षेण कर्म, नौ
पारुषी नववर्षो ।

"चरन्तीं वरुणं वन्या विरतिं च वरुणोः ।

विदितं च विदितं च वरुणोः नो वासिवा ।

सुवर्णवर्णवर्णो च वरुणो नो वना वरुणः ।

वदन्तिविन्विनी वाक्यं चरुवर्णो च वृद्धिवा ।

वदन्तिः वाक्यवर्णो वदन्तिवदन्तिवा ।

पद्यस्ये नो वदन्ती वाक्यं च वरुणोः ।

वदन्तिं नो वदन्तिं वदन्तिं वदन्तिं वा ।

वे वदन्ति पद्यवर्णो वरुणो वदन्ति वदन्ति" (चरुवर्ण)

पद्यस्यस्यमिं कुमारोके बह्वन्तम पद्युसार नामकात्
सिद्धं निर्दिष्टं है । यथा एष वर्णं वदन्तिः सन्त्या, हो
वर्णोके सरस्वती तीन वर्णोके त्रिमूर्ति चार वर्णोके
आजिवा, पांच वर्णोके सुमना, षड् वर्णोके समा, सात
वर्णोके मानिने, आठ वर्णोके सुखिवा, नौ वर्णोके
काव्यसङ्घर्षो, दश वर्णोके चण्डार, प्यारड वर्णोके
ब्रह्मार्थी, बारड वर्णोके भैरवी, सिरड वर्णोके महाकाव्यी,
बीडड वर्णोके मेठनायिका, पण्डड वर्णोके चोमरा,
धीर सावड वर्णोके कुमारो पद्यदा नामये परिहित
होती है ।

काव्यसङ्घर्ष (सं० त्रि०) १ समवायुसङ्घर्ष बह्वि सुपायिक ।
२ सुखसुख मीनके बराबर ।

काव्यसम्पत् (सं० त्रि०) काव्येण काव्ये वा सम्पत्सु ।
१ कालं बह्वं च सम्पादितं बह्वका क्रिया इवा ।
२ यथाज्ञानं निष्पन्नं, नो बह्वं परं वना हो ।

काव्यसर्प (सं० पु०) काव्यं स्रष्टुं सर्पं, कर्मधा० ।
स्रष्टुं सर्पं, काव्यं मां । (Colaber mag) स्रष्टुं वा
स्रष्टुं च पणोय—स्रष्टुं च पणोय इति । बह्वं पणोय
स्रष्टुं च पणोय इति । स्रष्टुं वा सर्पं प्रतिग्रहं चिह्नं
स्रष्टुं च पणोय पौर मद्यकर्मिं पद्यपरं पद्यचिह्नं देव
पद्यता है । अमानं चिह्नोर्निं वां वाच्यं चरता

है । विन्दु बहो बहो काव्यसर्पं नोकाव्यसर्पं नो
रहता देव पद्यता है । पद्यस्य सर्पोके पणोया
स्रष्टुं चिह्नं प्रतिग्रहं चिह्नं होता है । यदि काव्यं
पद्यस्य चरता, तो काव्यसर्पं बह्वं पूरतस दीडडड
हृदि वसता है । विन्दुकाव्यसर्पं स्रष्टुं वाच्यं मां
है । सर्पोके समय वाच्यं चरते विन्दुं चरता चरता
पद्यता है । विन्दु सौम्यायकी बात है किसे प्रकारका
पद्यस्य चरता न चरते बह्वं चरता चरता है । पद्यस्य
स्रष्टुं चरते ही काव्यसर्पं पूर चट जाता है । विन्दु
बह्वं देवयोयते स्रष्टुं चरता किसेका वेर पद्य जाता तो बह्वं
स्रष्टुं हो स्रष्टुं चरता चरता है ।

काव्यसार (सं० जी०) काव्यः सारो वध्य, बहुवो० ।
१ योत चम्पल । चरुवर्ण वीवी । २ स्रष्टुंसार नामकं मुग-
विन्दु, काव्यं चरता । ३ स्रष्टुंसार, काव्यं चरता ।
४ तिस्रुख । ५ चरितास । ६ काव्यो तुल्यो ।

चरुवर्ण वीवी ।

काव्यसाङ्घ (सं० जी०) काव्येण समानं साङ्घो वध्य,
बहुवो० । १ नरकविन्दुयं चोई साङ्घ । पुत्र विन्दुय
वा काव्यस्य वध्यं चरते उक्तं नरकविं वद्यते है ।

"वी वयु वा चरुं इति विन्दुयं चरता ।

वयुं वा वीव्युवर्णं च चरुं च वयुवर्णः ।

चरुवर्णो वयुवर्णो विन्दुयं चरता ।

चरुं चरुं इति वयुवर्णः चरुवर्णः" (भाष्य, पृ. १९८५)

काव्यसि—सुखं प्रदेयको आनसि तद्वसोवकी प्रधान
नगरी । बह्वं पद्या० १० १२ २० ३० पौर दिसा०
७० १३ २३ ५० परं पद्यसिद्धि है । दिव्यसुखे पास
बह्वं यमुना पौर तमसा नवो मिसो है सदीके प्रति
निष्पत्तं काव्यसि नगरी वधी है । नगरी प्रति पुरातन है ।
बह्वं एष पद्यर स्रष्टुं परं पणोय वाच्यो मिलाके
चोदित है ।

काव्यसि (सं० पु०) नोपि सुपद्यस्यो मिसा, बह्वानके
मद्यस्यका मिसा ।

काव्यसूत्र (सं० जी०) वेदिकं सूत्रविधेयं वेदका एष
सूत्र । स्रष्टुं काव्यो वचनं चो मयी है ।

काव्यसूत्र (सं० जी०) काव्यस्य वचनं सूत्रमिति वचनं
सुवृत्त्यात् इति । १ नरकविन्दुयं, चोई स्रष्टुं ।
उक्तं नरक प्रतस ताव्यमय है । मद्युचितामं बह्वं पद्य

विंशति महानरकांके अन्तर्निविष्ट लिख्वा है। ब्रह्महत्या, शास्त्रके आचारका त्याग, कृपण राजाका दानग्रहण, आदिमें भोजन कर शूद्रको उच्छिष्ट दान प्रश्रुति पाप करनेसे उक्त महानरक भोगना पड़ते हैं। २ सृष्टिकारक सृष्ट, भार डालनेवाला डोरा।

“वदितोष्यं तया यकः कालसूत्रे न लिखितः” (भारत, वनपर्व)

३ फांसीको रस्सी।

कालसूत्रक, कालसूत्र देखो।

कालसूय (सं० क्रो०) सृष्ट्युत्पन्नक सूर्य, मौतका सूत्र। वह कल्याणतरे समय निकलता है।

कालसेन (सं० पु०) एक डोम। इसने राजा हरिचन्द्रको क्रय किया था।

कालस्कन्ध (सं० पु०) कालः कृष्णः स्कन्धो यस्य, बहुव्री०। १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। वह मधुर, वल्य, हृद्य, गुरु, घातुवृद्धिकर, शोथ और अम, दाह, कफ, पित्तशोथ, विस्फोट एवं पित्तनाशक है। (वैद्यक-निबन्ध) २ विट्प्रदिर। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़। ४ जीवश्दुम, दुपहरियाका पेड़। ५ तमानपत्र-वृक्ष, तेजपातका पेड़। ६ कालसान, काला ताड़। ७ समयका अंग विशेष, वक्त्रका एक टुकड़ा।

कालस्कार (सं० पु०) १ तिन्दुक वृक्ष, तेंदूका पेड़। २ तमानवृक्ष, तमानका पेड़।

कालस्थानी (सं० स्त्री०) पाटल वृक्ष, एक पेड़।

कालस्वरूप (सं० त्रि०) कालेन सृष्टुना स्वरूपः सदृशः, इतत्। सृष्ट्युत्पत्त्य, मौतके बराबर।

कालहर (सं० पु०) कालं सृष्ट्युं हरति, काल-हृ-टच्। १ शिव, महादेव। २ कामरूपान्तर्गत शिवलिङ्ग विशेष, कामरूपका एक शिवलिङ्ग।

“तस्मात् पूर्वं सद्रूपान् पर्वतस्य विकीपकः।

यव कालहरी नाम शिवलिङ्गं स्थापयितम् ॥” (कालिकापु०, ७८-७९)

(त्रि०) ३ समयके पक्ष, वक्त्र, विगाडनेवाला।

कालहन्दो (करोट)—मध्यप्रदेशके सम्बलपुर जिलेको एक जमोन्दारी। वह अक्षा० १८° ५' उ० और देशा० २०° ३०' पू०में अवस्थित है। उससे उत्तर पाटना विभाग, पूर्व एवं दक्षिणभागमें जयपुर जमोन्दारी तथा मन्द्राजका विशाखपत्तन जिला, पश्चिम विन्दरा

नयागढ और खरियार प्रदेश है। लोकसंख्या प्रायः साठे तीन हजार है। कालहन्दो प्रदेश पश्चिमघाटमें पथ्यवहित पश्चिम दिक् पडता है।

कालहन्दोमें इन्द्रयतो नदी उद्भूत हो गोदावरीसे जा मिली है। हृत्तो और रेत नाम्नी दूसरी भी दो स्तोत्रधृतो उक्त प्रदेशमें निकल तेज नदमें गिरी है। फिर तेज, सान और रावण तीन नदो एकत्र हो उत्तरको बहती हुवी उहीसाकी महानदीमें पतित होती है। चारो और दसो प्रकार नदो और घाट पर्वत निकट रहनेसे कालहन्दोमें पानी बहुत पड़ता है। इसीमें उक्त स्थानकी भूमि विशेष उर्वरा है। उत्तर-पश्चिम भागमें सानवनको लकड़ी उपजती है। चावल, दाल, पनमो, जख, रुई, ज्वार और गेहूं बहुत होता है। स्थान स्थान पर सप्ताहमें एक बार बाजार लगता है। प्रधान नगर मवानोपत्तनका बाजार हो सर्वापेक्षा बडा है। कालहन्दोका जनवायु श्रुति उत्तम है।

कालहन्दीमें एक राजाका अधिकार है। वह अंगरेजोंको कर देते हैं। राजा प्रतापदेवको दिल्लीके दरवारमें “राजा बहादुर” उपाधि और अपने सम्मानार्थ ८ तोपोंकी सन्नामी मिली थी। १८८१ ई० को उनका मृत्यु हुआ। १८८४ ई० को उनके दत्तकपुत्र राजा रघुशियोर देव राज्यके अधिकारी बने थे। किन्तु उनके अप्राप्तवयस्क होनेसे राज्यका भार रानी पर पडा था। बालक राजा जवलपुरके राजकुमार कालेजमें पढनेको वैठाये गये। उक्त घटनाके पीछे ही कन्व लोगोंने विद्रोही ही कुलता नामक ७०।८० हिन्दुओंको मार कर उनके ग्राम लूटे थे। व्यापार गुरुतर देख अंगरेजोंने अपनी पुलिससेना भेज विद्रोहको दमन किया। बलावा करनेवाले लोगोंके सरदारोंको फांसी दी गयी। उसी दिनसे उक्त प्रदेशका शासनकार्य गवरनमेण्टने अपने हाथमें ले रखा है। कालहस्ती—मन्द्राज प्रेसिडेन्सीको एक जमोन्दारी। उसका कुछ अंश आर्काट और कुछ अंश नेन्नोर जिलेमें अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः डेढ लाख है। ई० १५वें शताब्दीको वैष्णवमताय किष्की पालिगारने

विजयनगरके राजाके कहे पाया था। पहले
 आलहाबादी पूर्वमें मन्नाब एवं काञ्चीपुर और दक्षिणमें
 बन्दीबास तक विस्तृत थी। पौरमेंसीवकी दो बड़े
 सनदमें देखते हैं कि आलहाबादीके पालिकाएँ उस समय
 ५ हजार सन्धि पचिनाएक थी। १०८२ ई० को बह
 प गरीजोंके हाथ लगी। १८०२ ई०को गवर्नमेंण्टने
 कसबा बिरखायी प्रबन्ध किया था। जमीन्दारके
 बंधनको एक प्यारिषको प गरीजोंने राजा और सी०
 एस० चार्ल्स (O. S. I.) का उपाधि दिया है।
 देगकी प्रसक्तका धाका शिक्षा प्रजा जमीन्दारकी
 देगी है। आलहाबादीके अस्तित्वा रहकर पौर वास्तुका
 सिद्धि है। ताम्र पौर बीड बड़ा मिलता है।
 यौगिका कारखाना भी लुका है।

उक्त जमीन्दारके प्रधान नगर आलहाबादी वा
 यौगिककी है। वह पचा० १३ ई० २' ३०" पौर
 देग० ०८ ई० २८' २०" पू० पर सुबर्बसुखी नदीके तीर
 मन्नाब रीककी उत्तर पश्चिम यात्राके सिपति देगनके
 पतिनिष्ठ पवस्थित है। चौबर्षदिया प्राय दस
 हजार है। नगरमें जमीन्दारका बासप्रबन्ध बना है।
 बड़ा एक मस्जिदें भी रहता है। बाजार बहुत बड़ा
 है। निबटख पाममें इत्तम बख प्रसुत होता है।

आलहाबादी एक तीर्थक्षेत्र है। बड़ा पमिक देव-
 मन्दिर विद्यमान है। उनमें शिवमन्दिर ही प्रधान
 है। दक्षिणके धार्मिक ब्राह्मण आलहाबादीको द्वितीय
 बारापको बताते हैं। उक्त मन्दिर विमान नगरके
 नैर्धुत कोषमें पर्यंतके निम्नभाग पर पवस्थित है।
 आलहाबादीके साक्षात्कर्म निष्ठा है,—“ब्रह्मनि तपम्बा
 कर्मेको लोकास पर्यंतके मुञ्जका एकाय यज्ञ साकर
 रखा या। उषोके उषका नाम दक्षिणलोकास है।
 ब्रह्मनि ज्येष्ठ वस मन्दिरका मूल स्थापन किया है।”
 चौक राजा और विजयनगरके ब्राह्मणायनी उषका
 पवगावर प ग बनबा दिया। महादेवकी बायुमूर्ति
 बड़ा विराजित है। अजनातुत्तर एक सर्व पार एक
 हस्तो समय महादेवकी पूजा करते थे। सर्व पपमें
 मन्तकका मधि महादेव पर बड़ाता और हस्तो
 अस्त्रामिषेक समता था। सिरी दिन हस्तोके

पमिषेकनका उत्त सर्वके हू मया। उसने ब्रह्म ही
 हस्तोके हस्तमें दात मारा था। हस्तोने भी मियकी
 आत्माके पक्षिर ही सर्वको धात्रात किया। सर्वको
 दोनोने पचत्व पाया था। जो परममन्त्रोको वेसो
 पवस्था टेक महादेवने कहे फिर जीवनपदान किया।
 फिर कर्माने उमवको बिराहारीय बनानिके लिये
 उनके नाम पर पपमें मन्दिरका भी नाम “आल
 हस्तो” रख दिया। (आल पर्याप्तु सर्व पौर हस्तो
 पर्याप्तु हावो दोनो मिबकर आलहाबादी मन्त बना है।)
 तीर्थमाहात्म्यके मतसे कथापन नामक किसी प्यारने
 महादेवका पनुपह नाम किया। वह पवतके क्षपर
 रहता था। किन्तु पाशर करनिके पूष प्याव पवतके
 बतरता और पाशरके ब्रह्म महादेवका पर्येककर ज्ये
 प्रसाद पश्य करता था। कुछ दिन पोत्रे ब्रह्मके मनमें
 पाया कि महादेवका एक पचु नष्ट हो गया। लवो
 बारापके वसने पपना एक पचु नाव महादेवके नष्ट
 पचुपर लगा दिया। फिर कुछ आल उर्ये देख पड़ा
 कि देवदेवका ब्रह्मरा पचु भी बिगड़ा था। उषोके वसने
 पपना दूसरा पचु भी निबाब महादेवके पचु पर लगा
 दिया। उष समय प्यारने पपना एक पेर महादेवके
 पचुके निबट रखा था। बड़ीसे पाब भी महादेवके
 पचुमें वसबा पदविष्ट देव पड़ता है। देवादिदेवने
 उष पाचोकासुत्रि प्रदान की। महादेवके निबट
 कसका एक अतन्त्र सिद्ध विद्यमान है। महादेवके
 साम वसकी भी पूजा होती है। मन्दिरके प्रथमक्षेत्र
 पर हस्तो, सर्व पौर अर्चनामिको मूर्ति बनो है।
 दूसरे क्षेत्रमें महादेवकी भी मूर्ति देख पड़ती, उसके
 आलहाबादीकी मूर्ति अतन्त्र लगती है। आलहाबादीकी
 मूर्तिका नाम बायुमूर्ति है। साधारणत गोबाबा
 दृष्टके तुल्य होती है। किन्तु उक्त बायुमूर्ति पतुकीव
 है। मन्दिरमें किसी पौर वास्तुके प्रथमका पच नहीं,
 किन्तु सिद्धके मन्तकपर को दोष नष्टबता, वह सर्वदा
 पल्य हिला करता है। पृथके पाम्पन्तरमें पम्यान्त्र
 पमिक दोष है। किन्तु दूसरा कोई उष प्रकार नहीं
 हिलाता। उषारत उषोके इत्त सिद्ध “बायुविज्ञ”
 कहलाता है। महादेवके पाब पार्वतो देवो भी है।

कालहस्तीमें उन्हें ज्ञानप्रसन्ना कहते हैं। कथनानुसार भगवान्‌न उन्हें किसी समय अभिशाप दिया था। उसीसे उन्होंने नरयोनि पायी। उन्होंने तपस्याके बल मानवदेहमें महादेवकी रिभाया था। महादेवने उन्हें मुक्ति दे ज्ञानप्रसन्ना नामसे अभिहित किया। तपस्याके समय दुर्गा नाम्नी कोई नारी पार्वतीकी सह-गामिनी बनी थीं। महादेवके प्रसादसे उन्होंने भी देवत्वलाभ किया; उसीसे स्वतन्त्र मन्दिरमें दुर्गा देवी पूजो जाती है। भूत लगने या अपुत्रक रहनेसे ज्ञानप्रसन्ना देवीके सम्मुख भोग कपड़ों अधो-मुख लेट स्त्रियां देवीका ध्यान करती है, उसका नाम प्राणाधारव्रत है। जो जितनी देर ध्यान कर सकती, उसको वासना भी उसी प्रकार फलवती होती है।

शिवमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पाश्र्वमें भगवान्‌ मणिकुण्डेश्वर स्वामीका मन्दिर है। किसी नारीने उक्त स्थान पर महादेवकी तपस्या की थी। महादेवने प्रसन्न हो उसके कर्णमें तारक मन्त्र प्रदान किया। उससे उसकी मुक्ति हो गयी उसीसे सुसुपुं लोगोंको ले जाकर वहा दक्षिण पाश्र्वपर सुला देते हैं। कालहस्तोके लोगोंको विश्वास है कि मृत्युकालमें पाश्र्व बदल ऊपर कर्ण रख वामपाश्र्व लेटनेसे दक्षिण कर्णसे आत्मा निकलता और मृत व्यक्ति चिरानन्द भोग करता है। मणिकुण्डेश्वरमन्दिरसे दक्षिण पर्वतके पाददेशमें ब्रह्माका मन्दिर है। उसके ऊपर नानाविध मूर्ति खोदित है। स्थानीय तीर्थमाहात्म्यके मतानुसार ब्रह्माने वहीं बैठकर तपस्या की थी। उक्त मन्दिरसे दक्षिण पर्वतकी उपत्यकामें एक प्रशस्त पुष्करिणी है। उसकी चारा और पत्थरसे घाट बंधे हैं। पुष्करणीके निम्न भ्रह्मा स्वामीकी मूर्ति है। उसीसे उक्त स्थान भ्रह्माज मुक्तिका आश्रम कहाता है। माघमासकी वहाँ १० दिन महोत्सव होता है। उसमें बहुतसे लोग द्रव्य हो जाते हैं।

कालह न (सं० स्त्री०) कालस्य हानिः, ३-तत् ।
१ मयकृति, बेफायदा बहकी वरवादी । २ समयका प्रसाद, बहकी तल्ली ।

कालहीन (सं० पु०) कालिन कृष्यवर्णन हीनः, ३-तत् ।
लोभवृत्त, मोधका पेड । लोभ देको ।

कालहोरा (सं० स्त्री०) काले कालभेदे होरा, ७-तत् ।
एक दिवारात्रिमें उदित हादय लग्नका अर्धांश ।
२ टाइं दण्ड परिमित काल, एक घंटे समय ।

३ सिन्धुप्रदेशका एक सुसज्जमान राजवंश ।
१७४० ई०को उक्त वंशका राजत्व आरम्भ हुआ था। कालहोरा और तालपुरवंश ही सिन्धुका शेष स्वाधीन वंश रहा। उनमें प्रथमवंशीय अपनेको पारस्यके अज्यासियोंका वंशीय और श्रेयोक्त धर्मप्रचारक मुहम्मदका वंशोद्भव बताते हैं। किन्तु वस्तुतः वंशवाले बालूचिस्तानके लोग हैं।

मुहम्मद कालहोराने रिन्द नामक किसी बालूचिके साहाय्यसे पंवारवंशीय राजपूत राजाको मार सिंहासन पर अधिकार किया था। खोदावादमें उनकी कबर है। कबरके सामने कई गदा लटका करती है। लोगोंके कथनानुसार उन्होंने मृत्युकालको उस प्रकार गदा लटकानेका आदेश इसलिये दिया, जिसमें लोग देखते रहें कि उन्होंने कैसी सुगमतासे सिन्धु जीता था।

काला (सं० स्त्री०) कालः वर्णः अस्त्राभ्याः, काल-
पशं आदित्वात् अच्-टाप् । १ नीलनी, नीलिका पेड ।
२ कालत्रिहत् । ३ त्रिहत् । ४ पिप्पली, पीपल ।
५ नागवला । ६ मञ्जिष्ठा, मंजीठ । ७ सुद्र क्षय्यजीरक,
काली जोरी । ८ अहिंसा । ९ अश्वगन्धा, असगंध ।
१० पाटला । ११ दक्षको एक कन्या ।

“अदितिर्दित्तिर्भुः काष्ठा दगायुः सिंङ्किता तथा ।” (भारत १।६२ च)

काला (हिं० वि०) १ क्षय्य, स्याह, काजल या कोयले-
के रंग जैसा । २ कलुषित, बुरा, खराब । ३ प्रचण्ड,
जोरदार । (पु०) कालसर्प, काला सांप ।

कालांग (सं० पु०) कालरूपो ऽंशः । अहणका दर्शनो-
पयोगी अंगविशेष, ग्रहण देखने लायक एक हिस्सा ।
कालाकान्द (हिं० पु०) धान्य विशेष, किसी किसका
धान । यह अयहायण मासमें काटा जाता है। इसका
चावल सैकड़ों वर्ष रखते भी नहीं विगडता ।

कालाकलूटा (हिं० वि०) अत्यन्त क्षय्यवर्ण, निहायत

स्वाङ्क, बहुत बाला। प्रायः यह शब्द मानव व्यवहारमें प्रयुक्त जाता है।

आनाहट (सं० वि०) आसिग यन्मुना भाहटः, इ-तत् ।
 १ यन्मुकत्वं पाहट, भौतके पक्षिमें पड़ा हुआ।
 २ समय द्वारा धामौत, यन्मुके निबन्धा हुआ।

आनाचरिष (सं० पु०) आसि यन्वायोषवासि चरषर्
 षैति, आन चरष ठक् । विद्यार्त्ति, तासिच रष, ठेक
 पठ पर पठुर्निबाना।

आनाचरी, कलाचरिष ईकी।

आनागह, कलाचर ईकी।

आनायाहा (वि० पु०) आनी घोर मोटो लख
 बा। बायुह (सं० स्त्री०) कासं ह्यय्य चगुह, कर्मबा० ।
 ह्यय्य चगुह, आना चयर । चयनर ईकी।

“ चयने शोच्यते च तस्मिन् शब्दं चोचिरे चतः ।

वदन्तान्तस्यं शब्दं च यन्तुवर्त्तते । ” (रघ० १। ५१)

आनागेडा, कलाचर ईकी।

आनाम्नि (सं० पु०) आना सर्वस्य हारका चम्नि,
 कर्मबा० । १ प्रकाम्नि, कदामतको भाग ।
 २ प्रकाम्निसे चिन्ताता रह । ३ पञ्चमुख बह्राच ।
 चक्र बह्राच आनाम्निबहुरको प्रतिभाय है। उनीमें कसे
 मो आनाम्नि चरते हैं। रुन्दपुराकमें उषे सर्वपाप
 नाशक बताया है,—

“ नचरुह कर्म चतः कर्मनिर्माणं कालतः ।

चकालकर्मार्थं चकालकर्म च कर्मपातः ।

उपते सर्वकर्मैः चकालकर्म चकालकर्म ॥ ”

पञ्चमुख बह्राच आनाम्नि बहुरदेवकल्प है। उमे
 आनाम्नि मो कहते हैं। उक्त बह्राच चारच करनीसे
 चक्र-प्रायमम वा पमक मन्चके पापसे मुक्ति
 मिलती है।

आनाम्निमेरु (सं० पु०) ऊपरका एक रस, गुटार
 को छोड़ देना। १ माय पाद घोर १ यन्मुकको
 बलक बना गोसुरके हाथसे भावना देना चाहिये।
 लूक कामे पर उषे पोष कर चूर्णके बरगडर ताम्बचूर्ण,
 ताम्बचूर्णका चर्चाम विष, १ माय चिह्नक २ भाय
 हृक्षारभौक, ३ भाय चरिताक ३ भाय मन्चयिता, ३
 भाय उहच, ३ भाय चर्च, ३ भाय वेपाक, ३ भाय
 कच मासिक १ भाय कौह घोर १ भाय बहुर हाक

सबको पञ्चघोरसे मटन करनी है। फिर टयमूर
 घोर पञ्चमुखके हाथसे यवाकम एक प्रकर घोटकर
 चर्मे बराबर बटिका बनायी जानी है। (अत्रभाषावती)

आनाम्निरस (सं० पु०) मगन्दरका रस विरिय,
 पोषोदा अगहके नामोदार लखमको एक दवा। यह
 घुन मन्चक, घुननाग तुल्यक, भोरक घोर सैन्धव
 बराबर निष्ठा तथा बोघातकोसे द्रवमें पोष कर कमाने
 या फानेसे मगन्दर रोग नष्ट हो जाता है। (रघुनाथ)

आनाम्निबहुर (सं० पु०) आनाम्ने प्रकाम्ने चर्चि-
 ताता बहुर, मन्चय, आनाम्निरेव बहुरा वा, उपमि० ।
 १ प्रकाम्निसे चिन्ताउ-देवता बहुर। २ चक्र बहुरके
 कणसक एक चरवि। ३ यन्मुकद्वीय एक उपनिषद्।

आनाम्निबहुरस (सं० पु०) १ कुहाचिन्कारका एक
 रस, मोटकी एक दवा। मरिच, पन्ध एवं तीक्ष्ण
 मध्य मासिक घोर यन्मुकको यन्मुककोटकोसे कन्में
 हाक महीसे ऊपर जोष देते हैं; फिर भूक्षराय्य पुटमें
 एक दिन एका लघका चूर्ण बना लिया जाता है।
 उक्त चूर्णमें द्रव्यमाय विष निबामिसे चक्र पोषक प्रस्तुत
 होता है। मात्रा ३ मायमात्र है। उक्त आनाम्निबहुर
 रस द्रव्य हिनमें विषपंको नाश करता है। घनुपानमें
 विषको घोर मनु निबाना चाहिये। २ ऊपरसेका
 रसविष्य-बुहारको एक दवा। मरीच घोर यन्मुक तुल्य
 हाक पच पित्तमें भावना देना चाहिये। फिर भावूर,
 मन्ध, बाराह, चाय घोर मासिकको एकदिन भावना
 करती है। उक्त मायूपादि द्रव्योंको समस्त पयवा
 यष्टाउपपे मं पञ्च कर सकते हैं। गोक्षि २ रति मरक
 हाकनेसे आनाम्निबहुरस प्रस्तुत होता है। मात्रा दो
 गुण्णके बराबर कही है। क्षान पय है। (रघुनाथ)

आनाम्नि (सं० स्त्री०) कासं ह्यय्य चगुह् कर्मबा० ।
 १ ह्यय्यचर्चं देह, काना निष्ठा। आसक आसुपुदयक
 पञ्च इ-तत् । २ आसुपुदयका पञ्च । (वि०) बहुरो० ।
 ३ ह्यय्यचर्चं देहविमिष्ट, काने निष्ठावाला।

आनाचरी (वि० पु०) १ सुचतुर घोर, कुविद्या घोर।
 २ कापुबक, मराम पादमी।

आनाचामी (सं० स्त्री०) अणुघोरक, काना जोरा
 आनाचिग (सं० स्त्री०) आसक्य अणुपुगक चिन्तन,

६-तत् । १ कृष्णसार भृगुका चर्म, काली हिरनका चर्म। कालं प्रजिनं यत्र, वहुव्री० । २ कृष्णाजिन-प्रधान देगविशेष, काली हिरनके रङ्गनेका सुल्ल । कूर्म प्रवृत्ति पुराणके मतमें उक्त जनपद दक्षिण दिक्में अवस्थित है ।

कालाजीरा (हिं० पु०) १ काला जाजो, मीठा जीरा । २ धान्यविशेष, एक धान । शाकन्द देखो ।

कालाञ्जन (सं० स्त्री०) कालञ्च तत् अञ्जनञ्चेति, कर्मधा० । गाढ कृष्णवर्ण अञ्जन, खूब काला काजल ।

“न चक्षुः कालविशेषमुद्व्या

काशाञ्जनं मङ्गलमित्युपात्तम् ।” (कुमार ० । २०)

कालाञ्जनी (सं० स्त्री०) अञ्जते अन्वया अञ्जनी, अञ्ज-कारणे ल्युट्-ङीप् । काली कृष्णवर्णा अञ्जनी पुं वटुभावः, १ कृष्णकार्पासच्छुप, नरमा, वन कपास । उसका संस्कृत पर्याय—अञ्जनी, रेचनी, शिलाञ्जनी, नीलाञ्जनी, कृष्णामा, काली और कृष्णाञ्जनी है । वट कटु, उष्ण, अम्ल, आमकमिष्ठ, अपानावर्तशमन और जठरा-मयन्न होती है । (रागनिघण्टु)

२ नीली, नील ।

कालाढोकरा (हिं० पु०) हृत्विशेष, एक पेड़ । उसकी शाखाप्रशाखा नीचेकी झुक जाती हैं । शीत-कालकी पत्र ताम्रवर्ण धारण करते हैं । काष्ठ सुष्टु और ईपत् कृष्णवर्ण विशिष्ट रक्तवर्ण होता है । कालाढोकरा मानव, मध्यप्रदेश और राजपूतानेमें अधिक उपजता है ।

कालाण्डज (सं० पु०) कालः कृष्णवर्णः अण्डजः पक्षी । कौकिल, कोयल, काली चिडिया ।

कालातिक्रम (सं० पु०) कालस्य अतिक्रमः नष्टनम्, ६-तत् । समयनष्टन, वक्तु निकाल देनेका काम ।

कालातिपात (सं० पु०) कालस्य अतिपातः अतिवाह-नम्, ६-तत् । समयक्षेपण, वक्तुका निकाल ।

कालातिरेक (सं० पु०) कालस्य अतिरेकः अतिक्रमः ६-तत् । १ निर्दिष्ट समयका अतिक्रम, मकरर किये हुये वक्तुका टालमटोल । २ संवत्सरका अतिक्रम ।

“कालातिरेके रिपुषु प्रापञ्चिकं समाचरेत् ।” (भावविपलस)

कालातिल (हिं० पु०) कृष्णतिल, स्वाह तिल । कालातीत (सं० स्त्री०) कालस्य अतीतं अत्ययः, अति-दण् भावे क्त । १ कालातिक्रम, वक्तुका टाल जाना । “कालातीते इषा मन्वा वन्धुश्रीर्मे पुनं यथा ॥” (कामोदक) (त्रि०) अतीतः कालोऽप्य, निष्ठान्तत्वात् परनिपातः । २ विगत, गुजरा हुवा, जो अपना समय बिता चुका हो । (पु०) ३ न्यायशास्त्रके मतानुसार पञ्चविध हेत्वा-भासके पन्तर्गत हेत्वाभास विशेष, सुगानता, एक झूठी दलील । अतीतकाल शब्द द्वारा भी वह अभिहित होता है उसका न्यायसूत्रोक्त लक्षण इस प्रकार है,—

“काशय्यापदिष्टः कालातीतः ।” १ प० २ पा० १० सू० ४ ।

साधनकालके अभाव समय जो हेतु नगया जाता, वह कालातीत कहता है । अर्थात् जिसस्थानमें किसी पक्ष पर साध्यको अभावविषयक नियय ठहरता, उसी स्थानका हेतु कालातीत रहता है । यथा—“जलं बद्धिमत् जलत्वात् ।” अर्थात् जलमें प्राग है, क्योंकि वह जल है । यहां जलमें बद्धिके अभाव विषयका निययज्ञान है । सुतरां ‘जलत्व’ हेतु काला-तीत नामसे निर्दिष्ट होगा ।

कालातीत शब्दके बदले वाचित शब्दका प्रयोग भी न्यायशास्त्रके अनेक स्थानोंमें देख पड़ता है ।

कालात्मक (सं० स्त्री०) कालेन कालत्वभावेन कृत आत्मा यस्य, काल आत्मा-कन् । १ कालत्वभावज्ञात, वक्तु या कियत पर सुनहसिर ।

“शङ्कमा न्यायराशे र दिवि वा यदि वा सुवि ।

सर्वे कालात्मकाः सर्वे । कालात्मकमिदं जगत् ॥” (भारत, पनु० १ प०)

काल आत्मा अस्य । २ कालस्वरूप परमेश्वर ।

कालात्यय (सं० पु०) कालस्य अत्ययः अतिक्रमणम्, ६-तत् । कालक्षेपण, वक्तुकी वरवादी ।

कालात्ययापदिष्ट (सं० पु०) कालात्ययेन अपदिष्टः । शीतम-सूत्रोक्त हेत्वाभासविशेष, एक झूठी दलील ।

कालातीत देखो ।

• सिद्धके उपयोगी साध्यका साधारण पक्ष कहता है । उद्वे—“परंतो बद्धिमान् व मात्” अर्थात् पक्ष व बद्धिमान् है । इस स्थानपर पक्ष पक्ष, बद्धि साध्य और वक्तु हेतु है ।

† हेतु अर्थात् साध्य जिसे प्रतिपादन करते, उसे साध्य कहते हैं ।

काकादश (स० पु०) काक शून्यकर्मसंख्यादशकाल
 विधिवं पादस्यैतिह्येन काक-पा-इत्यस्य चिच् पाचारि
 पच् । १ ममयथा दपंच, वल्लका पारिमा ।
 २ अतिपञ्चविधिये ।
 काकादाता (ङि० पु०) १ कताविधिये, एक दिन । बहु
 षति मनोहर होता है । पुत्र्य भोजनार्थं रक्षते है । पुत्र्य
 पतित होनेपर पुत्र्य धाता त्रिमूर्ति कल्पवर्षं शीघ्र
 निष्ठाता है । निर्वास्य शीघ्रमें पड़ता है । बिन्दु शीघ्र
 शीघ्र निर्वास्य बहुत घोड़ी मात्रामें रोषन करते है ।
 २ उक्त कताका शीघ्र । बहु बहुत ऐवक होता है ।
 काकादिक (स० पु०) श्रेयाय मात्र ।
 काकाध्वस (स० पु०) काकानां कल्पकालानां प्रध्वस
 प्रवर्तकः, ६-तत् । १ सूर्य, सूरज ।
 "ब्रह्माध्वस इत्यन्वयो रिचवर्नां वनोत्पत्तिः" (भाष्य, १५, १५०)
 २ समुदायकाकप्रवर्तक परमेश्वर, वल्लका मासिक ।
 काकानर (सं० पु०) समानरथे एक पुत्र । कल्पन् ईश्वी ।
 काकानन (स० पु०) काकं सर्वसं हारकं पनक्त-
 कर्मकां । १ प्रसवाम्नि, ब्रह्मामनको पाद । २ रात्र
 विधिये, एक रात्र । समये पिताका नाम समानर
 या । (स्मृत्य ११५)
 काकाताग (ङि० पु०) १ काल सर्वं काका साप ।
 २ कुटिल मुख, टेढ़ा पादमौ ।
 काकानुनाटि (स० पु०) काक एव काक-प्रव्यक्तमवुर-
 तन् अनुनदति काक-पशु-नदयिनि । १ अमर,
 मीरा । २ चटक बिरिडा । ३ काकस्य पयोडा । ४ वन-
 कुट्ट, कर्मको कुरमा ।
 काकानुमावकता (स० श्लो०) काकं अनुभवति, काक
 पशु-भू-वृत्तक काकानुमावकत्वेन पाच, तन टाय ।
 ममय अनुभव करनेको शक्ति, जिन ताकतसे वह
 मायूम पड़े ।
 काकानुगारिका (स० श्लो०) कासेन हारकवर्षेण पशु
 कता गारिका, मध्यय० । १ हारक गारिका, काकी कता
 घर । २ तनरपादिक, तनरमूक । ३ शीतलो कटा ।
 काकानुगारक (स० पु०) कासं कल्पवर्षं मृगमर्द
 अनुगारति मन्थेन इति शेष, काक पशु-वृ-वदुन् ।
 १ तगर । २ पीतवन्दन । (त्रि०) समानुगारी,
 वल्लके सुपायिक ।

काकानुगारि (स० पु०) काक कल्पवर्षं मृगमर्द
 अनुगारति, काक पशु-वृ-वदुन् । १ मिमया हृष ।
 २ मृष्टिज, कूहा । ३ मंजत्र एव मृगमर्दार शीघ्र ।
 ४ पशुव, पगर ।
 काकानुगारिणी (स० श्लो०) १ विष्कीतगर । २ श्रेत
 गारिका, बभेद कतावर । ३ कल्पगारिका, काकी
 कतावर ।
 काकानुगारिका, कलागुदरिका श्वी ।
 काकानुगारी, कल्पगुदरिका श्वी ।
 काकानुसार्य (स० श्लो०) कासेन मृगमर्देन पशु
 सिद्धये, काक पशु-वृ-वदुन् । अरुणकानुसार्य । (१५)
 १ मंजत्र शीघ्रं मृगमर्दार शीघ्र । २ मिमया हृष ।
 ३ कल्पवन्दन । ४ पीतवन्दन । ५ तगरपादिका ।
 ६ तगर ।
 काकानुसार्यक (सं० श्लो०) काकानुसार्यं सर्वे कन् ।
 शेषक, एक मृगमर्दार शीघ्र ।
 काकानुसार्यी (सं० श्लो०) तगर ।
 काकानोन (ङि० पु०) काकस्यैव काका ममक ।
 काकान्नाक (स० पु०) काकस्य पादुः काकस्य पत्न्यक
 नामकः, ६ तत् । यम ।
 काकान्तकवम (सं० पु०) काकान्तकवाप्तौ यमवैति
 कर्मकां । १ काकु-काकविनायक यम । २ प्रसवहारक
 यम ।
 काकान्तकरन (सं० पु०) १ काकाविहारका रक्त
 विधिये, खासीको एक दवा । चिह्नक, मरीच, मिश्रक,
 टङ्कच शीघ्र गन्धक मममाम अम्बोरजा रक्त कास याम
 मात्र मर्दन करकेसे उक्त शीघ्रक पशुन होता है ।
 गुच्छामात्र काकान्तकरस विनामैथे काकरोम दस
 जाता है । २ यक्षप्रविहारका रक्तविधिये तपेदिहको
 एक दवा । शीघ्रमवो मृया अवरको हादस पङ्क
 बनाती है । फिर स्वर्णकाराशोके मम यक्षकव्याधि
 रमथे मर्दन कर याममात्र कश्चनसे छोट मोला बनाकर
 रन देना चाहिये । समये पीके पूर्वोक्त मृयादि शीघ्राई
 पारा शीघ्र मन्थक निगुंकोके रथसे पीक कर जानसे
 है । फिर मृयाको लोहकसे काकान्तक कर ककवन्ध-
 नि अथको यक्षता चाहिये । रथीमकार चङ्गपुट शीघ्र

होनेसे औपधकी उतार पीछ लेते हैं। पञ्च गुष्ठा-परिमित कालान्तरकरस खानेसे राज्यध्मा विनष्ट हो जाती है। अनुपान मृगाद्ववत् है। (रसरवाकर)

कालान्तर (सं० क्ली०) अन्वः कालः (मयुं नि० सं०)। १ अन्व समय, दूसरा वक्र। २ उत्पत्तिका परवर्ती काल, पैदायशके पीछिका वक्र। (त्रि०) ३ समयान्तर-स्यायो, दूसरे वक्रमें पडनेवाला।

कालान्तरघम (सं० त्रि०) कालान्तरको वचन कर सकनेवाला, जो देरका वक्त वरदाश कर सकता हो। कालान्तरप्राणहरमर्म (सं० क्ली०) १ मर्मस्थानविशेष, जिस्की एक नाजुक जगह। जहाँ आवात लगनेसे पचान्त वा मासान्तमें प्राण निकलते, उसे कालान्तर प्राणहरमर्म कहते हैं। वह तैतीस होते हैं। यथा—आठ वक्षमें (दो स्तनमूषमें, दो स्तनरोहितमें, दो अपपनापमें और दो अपस्तम्बमें), पांच सीमन्तमें, चार तल्लदयमें, चार क्षिप्रमें, चार इन्द्रवस्त्रमें, दो कटितरुणमें, दो पाश्वमें, दो वृहतीमें और दो नितम्बमें। (अधुत)

कालान्तरविप (सं० पु०) कालान्तरे दंगनात् अन्व-स्मिन् काले विपं यस्य, बहुव्री०। १ मृपिकादि जन्तु, चूहा वगैरह। २ लूतादि, मकड़ी वगैरह, जिन जन्तुवोंका विप पहले दष्ट स्थान पर मान्म न पड़ते भी पोछे देखा जाता, उन्हीका नाम कालान्तरविप आता है।

कालान्तरावृत्त (सं० त्रि०) कालान्तरे दीर्घसमयान्तरे प्रावृत्तं परावृत्तम्, ७-तत्। बहुकाल प्रत्यावृत्त, वक्रसे छिपाया गया।

कालान्तरावृत्ति (सं० स्त्री०) कालान्तरे प्रावृत्तिः प्रत्यावर्तनम्, ७-तत्। समयान्तरमें प्रत्यावर्तन, दूसरे वक्रकी वापसी।

कालाप (सं० पु०) कालः मृत्युः आप्यते यस्मात्, काल-आप-घञ्। १ सर्प-फण, सांपका फन। २ राजस। कलापं तन्नामकं व्याकरणं वेत्ति अधीते वा, कलाप-अण्। ३ कलापव्याकरणवेत्ता। ४ कलापव्याकरण अध्ययनकारी। ५ एक ऋषि, उनका नाम भराड्ड वा। वह शाक्यसुनिके अध्यापक रहे।

“उग्रसे वैजकीप कायापः षट् एव च।” (भारत १।१४)

कालापक (सं० क्ली०) कालापस्य कलापिना प्रोक्तस्य शास्त्राभेदस्य धर्म आम्नायो वा, ६-तत्। १ कलापि-शाखानुसारी एक शास्त्र। २ कलाप-व्याकरणवेत्ता।

“आपपकापक-दुर्भिनः।” (विद्योदताश्रितो)

कालापहाड (हि० पु०) अत्यन्त भयानक वस्तु, निहा-यत डरावनी चीज।

कालापहाड—१ जौनपुरवाले नवाब बहलोल लोदीके भागिनिय और उनके पुत्र वारवक्र शाहके सेनापति। वह एक विख्यात वीर थे। कहते हैं किसी समय वारवक्र शाहने दिल्लीके सुलतान सिकन्दर लोदीके विपक्ष युधयात्रा की थी। युध घोरतर हुआ। वटनाक्रमसे उस युधमें कालापहाड कैद किये और दिल्लीकी भेजे गये। सिकन्दरने देखा कि कालापहाड स्नान-सुख पदव्रजसे उनके सम्मुख जा रहे थे। उन्होंने अविनश्य अश्वसे उतर कालापहाडकी भालिङ्गन किया और कहा,—‘आप हमारे पित्रतुल्य हैं, हमें भी पुत्रतुल्य समझते रहिये। कालापहाड उस असम्भावित समादरको देख विस्मित हुये। उन्होंने सुलतानसे कहा, कि वह सुलतानके लिये जीवन पर्यन्त उत्सर्ग करनेको प्रस्तुत थे। फिर वह पहले जिनकी औरसे लड़ने चले थे, उनके ही विरुद्ध हो गये। वारवक्र शाहके सिपाही कालापहाडको आते देख भाग खड़े हुये।

‘तारीख-जहान-नादो’ नामक फारसी इतिहासमें लिखा है कि ४८८ हिजरीको (१४८३ ई०) सिकन्दरशाहने वारवक्रशाहको पकड़नेको लिये कालापहाडको अधधके अभिसुख भेजा था।

‘तारीख शेरशाही’ नामक सुसलमान इतिहासके मतानुसार कालापहाडकी सुलतान बहुलोलने अवध सरकार और दूसरे भी कई परगने जागीर दिये थे। मरनेके समय वह ३०० मन पक्का सोना और विस्तर रुहदार रुम्पत्ति छोड गये। उनकी एकमात्र कन्या फातिमा उत्तराधिकारिणी हुयी।

सुलतान इनाहिमलोदीके राजत्वकी शिपावस्यामें वह मर गये। युक्त प्रदेशमें कालापहाडका नाम विख्यात है। वह बड़े हिन्दूविद्वेषी और देवमूर्ति-धूर्णकारी थे।

२ सुमिदावाहके नवाव हाखरके एक सेनापति । उनका प्रकृत ना 'राज' था । कामरूप चञ्चलमें बह पोरासुठार, पोरासुठार, कामासुठान या कामयवन नामसे विख्यात हैं । बङ्गाल और उड़ीसमें जनपवादा मुबार कामापहाड़ पक्षसे ब्राह्मण थे । कर्मीनि जिसे नवाव काकाके देममें देस सुखमान बर्म पक्षसे बिया । किन्तु पञ्चबरनामि, तारोष दाखसे प्रकृति सुखमान इतिहासमें बह 'पञ्चगान' बताये गये हैं ।

शास्त्रापहाड़ पक्षसे बङ्गालके नवाव सुखीमान कुर्रामो और पीके हाखरके सेनापति बनि । उनको भति देवदेवो सुखमान बङ्गालमें कामो देख न पडा था । देवमन्दिर भङ्ग, देवमूर्ति चूर्ण और चमक प्रकार चिन्तुआको काष्णना करना हो उनके बीबनका प्रधान काम रथा ।

पूर्व कासाम, पश्चिम कायो और दक्षिण उड़ीसके मन्त्र उल समय चिन्तुवीके को विख्यात देवालय थे, बह शास्त्रापहाड़के हाथसे बच न सके । उनमें कोरे मन्त्र, कोरे चङ्गरीन और कोरे भूमिपात् हो मानो पध्यापि शास्त्रापहाड़का दाख्य चञ्चाचार तोयना करता है । पवाहासुधार शास्त्रापहाड़का नकारा बन्धी हो सकल देवमूर्ति काप उठती थीं ।

चीथेन्नको मावकी पञ्चोमि शिखा है (१४८२ मन्त्र),—"सुखन्देवके राखरके पन्तिमकाल शास्त्रापहाड़ कर्मीकेमि हुआ था । सुखन्देव बसके पराजित हुये । बसके पीके सुखन्देवके पुत्र गौडिजा-गोविन्दके राजा होने पर शास्त्रापहाड़ घुरो कूटने गया था । पञ्चोमि जगकाब देवकी मूर्ति बडा मठ पारोड्डमि बिया रथी । शास्त्रापहाड़को बह संवाद मिल गया । उसने पारोड्डमि जमकायदेवको मंगा और पम्बिसे जहा धमुदमि पेंच दिया । कल्याण, कल्याण कर्मि मन्त्र देवी । लडो पापसे शास्त्रापहाड़के हाथ पर बसे, जिधसे बह मरे थे ।" पञ्चबरनामिसे मतासुधार सुख सेनापति मुनीबखानुके दाखरको पक्षमें कटक पक्ष बनि पर शास्त्रापहाड़ और कई पक्षमान सरदारोंने काकसाण पबिकार बिया था । किन्तु पञ्चकाबके मध्य हो

शास्त्रापहाड़ कामोगुवाके तीर लुगब बिपाचियोंके साब मारे मये । तारोष-दाखसेके देखी ८८८ बिबरोको (१५८० ई०) बह घटना हुयो थी ।

शास्त्रापान (हि० पु०) हायका पुत्र रंम ।

शानायनो (हि० पु०) १ निर्वासन, बसावतनी, देगनिबाबा । २ शान्दासन निजोबार प्रकृति होय । ३ मध्य शराब ।

शानायोय (हि० बि०) कष्यबर्षबखान्कादिन, कासे कपड़े पहने हुवा ।

शासाबास (हि० पु०) बानिदेगल बिय, पयम, भांड ।

शानासुख (हि० बि०) चञ्चल कष्यबर्ष, निजायत काका ।

शासाब (सं० पु०) काक कष्यबर्ष पञ्च, कामका० । १ जससुख काबमिह, बरसनेबासा कासा बादल ।

२ कष्याब, काका बादल ।

शानाम (सं० पु०) पराड कपि । बह शान्क सुनिके चञ्चायक रहे ।

शासासुख (सं० पु०) देव पम्बदाविविध ।

शानामोड्डा (हि० पु०) विपुलक विरोध, एक बूच-रोमा पैदा । बह सीबिबासे मिखता थपनी बड़मि बिब रकता है ।

शानाम्ब (सं० पु०) काक पाखो यम, बङ्गरो० । दोप-बिरोध, एक टापू ।

"कल्प पम्ब पाम् नीर काकामोरेव ५ ।" (शक्ति १२१)

शासाक (सं० को०) सडू, सपू ।

शासावन (सं० सि०) कासीन निर्मुक्तम्, कास पक्ष । समबकात, बङ्गसे पैदा ।

शासाबनि (सं० पु०) शान्कसिके एक मिय ।

शानायनो (सं० को०) दुर्गा ।

शासायस (सं० को०) काकस तत् पयवेति, कास-पयम् टक् । चञ्चलक बरसा बडीब बरो । अ १ । १ । २० ।

१ कास कोड, कोरे कोडा । २ कोड, कोडा ।

पीर देवी ।

शासायसमय (सं० सि०) शासायस मबद । कास नीड निमित्त, तीडे कोरेका बना हुवा ।

कालावडक (सं० पु०) वृषविशेष, एक पेड़ ।
 कालावधि (सं० पु०) नियत समय, सुकरर वक्र ।
 कालाववाय (सं० पु०) समयके अन्तरालका अभाव,
 वक्र के वक्रफेवो अदम सौजूदगो ।
 कालाशुद्धि (सं० स्त्री०) कानस्य कर्मयोग्यसमयस्य
 अशुद्धिः, क्ष-तत् । ज्योतिषगान्धोक्त शुभकर्मका बाधक
 समय विशेष, रज्जु या नापाक रस्सका वक्र ।
 चक्रात् देखी ।
 कालाशोक (सं० पु०) बौद्धराज विशेष, बौद्धोंके एक
 राजा ।
 कालाशौच (म० स्त्री०) बालछापि अशौचम् मध्यप० ।
 पितामाता प्रभृति महाशुक्रका मृत्यु होनेसे एक
 वस्त्र पर्यन्त अशौच रहनेका विषय क्षुतिशास्त्रमें
 कथित है । उसीको कालाशौच कहते हैं । काला-
 शौचके समय कई कर्तव्योंके पालनका नियम
 निर्दिष्ट है ।
 कालासुखदास (हिं० पु०) अग्रहायण मासमें उत्पन्न
 होनेवाला धान्यविशेष, अग्रहणका एक धान ।
 कालासुहृत् (सं० पु०) असूत् प्राणान् हरति, असु-हृ-
 क्षिप असुहृत् प्राणनाशकः, कालसासी असुहृत् चेति,
 कर्मधा० । १ प्राणनाशक, जान् लेनेवाला । कालः
 भयानकः असुहृत् शत्रुः । २ भयहृर शत्रु, खतरनाक
 दुश्मन । कालस्य मृत्योः असुहृत् विनाशकः । ३ महा-
 देव, शिव ।
 कालास्त्र (सं० स्त्री०) सहातक वाणविशेष, जानसे
 मार डालनेवाला तीर ।
 कालास्यासी (सं० स्त्री०) १ पाटला वृक्ष । २ सुष्कक,
 मोखा ।
 कालाह (सं० पु०) १ काकतुण्डी, हुंघची । २ काक-
 तिन्दुक, कुचलेका पेड़ ।
 कालि (हिं० स्त्री० वि०) १ कस्य, गये टिन । २ आगामी
 दिवस, आनेवाले दिन । ३ शीघ्र, बल्द ।
 कालिक (सं० पु०) काले वर्षाकाले चरति, काल-ठञ्ज,
 के लक्षे अन्वति पर्याप्नोति वा, क-अन्त् वाहुलकात्
 इकन् । १ श्रौचपक्षी, किसी किसमका बगला । २ नाग-
 राज विशेष, नागोंके एक राजा । (स्त्री०) ३ क्षण

चन्दन । (वि०) ४ समयोचित, वक्रके सुवाफिक ।
 ५ कालमस्वभ्योय, वक्रके सुताक्षिक । ६ दौघकाल-
 स्याथी, बहुत टिन चननेवाला । इस अर्थमें 'कालिक'
 शब्द प्रायः समाससे लगता है । यथा मासकालिक,
 प्रकालिक इत्यादि ।
 कालिकता (सं० स्त्री०) समय, तिथि, ऋतु, वक्र,
 तारीख्, मौसम ।
 कालिकमस्वभ्य (सं० पु०) कालिकविशेषणता नाम-
 स्वरूप मन्त्रन्वविशेष, कालानुयायिक विभु भिन्न वस्तु
 प्रतियोगिक मस्वभ्य, वक्र का जोड़ । भिन्न कालस्थित
 वस्तुद्वयके साथ उक्त मस्वभ्य नहीं लगता । किसी
 किसी नैयायिकने कालिकमस्वभ्यको विभुप्रातियोगिक
 मस्वभ्य कहा है । विभु पदार्थ भी कालिकमस्वभ्यमें
 कालमें ही रहता है । महाकाल और कालोपाधि समु-
 दाय कालिकमस्वभ्यमें वस्तुका अधिकरण होता है ।
 कालिका (सं० स्त्री०) कालो वर्णाऽस्त्वय्याः, काल-
 ठन् टाप्, यद्वा काल-डीप् स्वायें कन्-टाप् ङस्त्वच् ।
 १ चण्डिका, काली । उनके नामकरण मस्वभ्य पर
 कालिकापुराणमें लिखा है,—“गुम्भ और निगुम्भ
 देवके उत्पीडनसे अत्यन्त पीड़ित हो इन्द्रादि देव
 हिमालय पर्वतमें गङ्गातीर्थके निकट पहुँच महामाया-
 का स्तव करने लगे । महामायाने उनके स्तवसे सन्तुष्ट
 हो मातङ्गस्त्रीरूपमें वहां पहुँच कर पूछा—“तुम
 लोग किसकी आराधनाके लिये इस मातङ्ग आश्रममें
 आये हो ?” देवीके पूछते ही उनके अङ्गसे एक देवी-
 मूर्तिने आविर्भूत हो कहा कि ‘देव शुम्भ और निशुम्भ
 देवके अत्याचारसे उत्पीड़ित हो उनके निधनके उद्देश्यसे
 महामायाकी आराधना करने आये हैं’ वह आविर्भूता
 देवी प्रथम क्षणवर्णा रहीं । क्षण कालके पंक्ति उन्होंने
 फिर गौरवर्णा धारण किया । किन्तु क्षणवर्णा प्रादुर्भूत
 होनेसे ही वह कालिका नामसे विख्यात हुईं । वह
 उग्र भयसे रक्षा करती हैं, उसीमें पण्डित उन्हें उग्र-
 तारा भी कहते हैं । उन्हेंके प्रथम बीजका नाम तन्द
 है । मन्त्रकर्म एकमात्र जटा रहनेसे उनका नाम
 एकजटा भी है । कालिकामूर्तिका ध्यान निम्ननिम्नित
 रीतिसे किया जाता है,—

ब्राह्मणको दे दिया। इसप्रकार इन्द्रके निकट भवधान्त हो ब्राह्मणने उद्वे अभिगाप किया था,—‘तुम विडाल-रूप ग्रहणकर अन्तर्ज जालिके गृहमें रहोगे।’ तदनुसार इन्द्र मार्जाररूपसे किमी व्याघ्रके घरमें रहने लगे। उधर शचीने इन्द्रका कीड़े अनुमत्यान न पा आहार निद्राको छोडा था। उन्हीं दिवसे उनका पता पृष्टा। देवीने ध्यानके बल इन्द्रको मार्जाररूप अवस्थित देख शचीसे उनकी मुक्तिके लिये उक्त गापदाता ब्राह्मणकी सेवा करनेकी कहा था। शचीने यथागति परिचर्या द्वारा ब्राह्मणको परितुष्ट किया। उन्हीं इन्द्रका पप-राघ मार्जना कर उनकी मुक्तिके लिये शचीसे कालिका व्रतका अनुष्ठान करनेकी कहा। इसी प्रकार कालिका-व्रतकी उत्पत्ति हुयो। उसके अनुष्ठानकी प्रणाली नीचे लिखी है—शुद्ध कालकी किमी कृष्ण-चतुर्दशीका सद्यत्प कर दूसरे दिन अमावस्याका अक्षय रात्रिभोजन, वाम हस्त द्वारा भोजन एवं मत्स्य, पिटृक, रक्तगाक और अन्न भोजन परित्याग कर ६२ सवथा स्त्रियोंको विनाना चाहिये। इसप्रकार कुछ दिन व्रत आचरण पीछे किसी शुद्ध मङ्गलवारशुद्ध अमावस्याको गृहके प्राङ्गणमें कदलीकागुहमें गृह बना उसमें कालिका-मूर्ति स्थापन की जाती है। फिर अपराह्न, सन्ध्या अथवा रात्रिकालकी यथाविधि पाय, अर्घ्य आचमनीय, गन्धपुष्प, धूप, टीप, तथा विविध दैव्य प्रसृति उप-करणसे देवीकी पूजा होती है। पूजा समाप्त होनेपर पिटृक, सिद्धान्त, व्यञ्जन प्रसृति बलि किसी वनके मध्य देना चाहिये। इसप्रकार कालिकाव्रत करनेसे सत्वर कार्य सिद्ध होती है।”

कालिकामुख (सं० पु०) कालिकाया सुखमिव सुखं यन्त्र, बहुज्ञो०। एक राक्षस। (रामाय १।२८ ५०)

कालिकाशाक (सं० पु०) कालशाक, नाडी।

कालिकाग्रम (सं० स्त्री०) कालिकाया आग्रमम्, इ-तत्। विषाशा नद्येतोरम्य एक तीर्थ। महाभारतमें लिखा है कि उक्त तीर्थमें तीन रात्रि ब्रह्मचारी और जितक्रीध रहने पर भवयन्त्रणामुक्ति मिलती है—

“कालिकाग्रममाग्य विषाशायां कृतोदयः।

इन्द्राणी निशक्रीधस्त्रिगत्र सुभते भवन्तः॥” (पारद, पृ. २३ ५०)

कालिकाम्बि (सं० स्त्री०) नेत्रास्थिविशेष, आंखको एक चूडी।

कालिकेय (सं० पु०) कोई असुर जाति। वह दक्षकी कन्या कालिकामे उत्पन्न है।

कालिव (हिं० स्त्री०) कालिका, प्याही, कालीछ। वह एक प्रकारकी बारीक बुकनी रहती है, जो धूयेके जमनेसे वस्तुओंमें लगती है।

कालिगञ्ज—१ बङ्गदेशीय यगोहर पञ्चनके बुकनी विभागका एक गण्ड ग्राम। वह अक्षा० २२° २७' १५" ८० और देशां० ८६° ४' ५०" में यमुना एव काकसिधानो नदीके सङ्गमस्थल पर अवस्थित है। लोकसंख्या साठे पांच हजारसे अधिक है। वहाँ अच्छा बाजार लगता और खूब वाणिज्य चलता है। जानवरोंके सौंगसे ढडी बनानेका एक कारखाना भी है। २ बङ्गालके रंगपुर जिलेका एक ग्राम। वह ब्रह्मपुत्रके तीरे अवस्थित है। आसाम पाने जानिवालोंके टोमर वहाँ लगते हैं।

कालिङ्ग (सं० स्त्री०) केन जलेन पालिङ्गप्रतिसौ, क-पालिङ्गि कर्मणि घञ्। १ तरन्वुजविशेष, किसी किष्किका तरवृज। उसका संस्कृत पर्याय—आनिन्दक, छान्डीज और फलवर्तल है। वह शातल, मसरोधक, मधुररस, पाकमें मधुर, गुरु, विटग्नि, अग्निपित्तकारक, कफ एवं शायुवर्धक और दृष्टिशक्ति, शुक्र तथा पित्त-नाशक होता है। पक्वफल पित्तहृदिकारक, उष्ण, धार और कफ ए वायुनाशक है। पत्र तप्त और रक्तस्यापक होता है। (पद्मपत्रविरच) (पु०) २ भूमि-कर्कार, एक कुम्हडा। ३ हस्ती, हाथी। ४ सर्प, साँप। ५ शौहविशेष, एक शौहा। ६ कूटल, एक पेड़। ७ इन्द्रयव। (त्रि०) ८ कलिङ्गदेशजात, कलिङ्ग सुक्लमें पटा हुआ। ९ कलिङ्गदेशके राजा।

“प्रतिपदाह कालिङ्गः तन्मध्ये गङ्गाधरः।

पदच्छेदोपर्नं गन्धु गिन्ध्यावर्षेण पर्वतः॥” (रघुव ४।६०)

कालिङ्गक, कालिङ्ग देखो।

कालिङ्गमान (सं० स्त्री०) कालिङ्गदेशप्रचलित मान-भेद, कलिङ्ग मूलकी तोल। यथा—१२ सर्पपका यव, २ यवकी गुञ्जा, ३ गुञ्जाका बल्ल। ८ या ७ गुञ्जाका माप, और ४ मायका माण होता है। (मातृप्रकाश)

शास्त्रिका (म० जी०) शास्त्रिक-शोध सभायां
 एक टाउ घत पत्रम् । मित्र, मिश्र ।

शास्त्रिको (म० जी०) शास्त्रिक-शोध । राजकर्मन्ते,
 किमो पत्राको कर्मन्ते । २ शास्त्रिकदेवोया श्री,
 शास्त्रिक मुक्तको पीरत । ३ एक नदी ।

शास्त्रिक (सं० पु० College) १ विद्यालय पाठशाला,
 बहा मठरथा । २ मर्म कथ सिधा दी ज्ञातो है ।

शास्त्रिक (सं० प०) पश्चिम, एक ककोर । ३ व
 सिद्धिमें शोभा है ।

शास्त्रिकार (शास्त्रिकार)—बृहद्रथेयके बांदा किमिका
 (बुद्धेयव्ययके पञ्चमार्ग) एक नगर । एक पचा०
 २३ १' ०" तथा देगा० ८० २१' ३५" पू० में बांदा
 नगर १३ कोय दक्षिण दिशायाचके पञ्चमार्ग एक
 शाखा पर्यंत पर अवस्थित है । पर्यंतका दूरता भी
 एक मील है । शिवपुरमें एक नगर स्थापित है ।
 शास्त्रिकार पाच कोय विस्तृत पीर चारो पीर प्राचो
 स्थित है । नगर सुमिथे ३३० हाय लंबा होगा ।
 मोक्षम ज्या ३ हजारमें बस है । तथाच ब्राह्मण कुल
 पत्रिक है काही लोग भी बस नहीं दीख पडते ।
 वहां पुनिमवा धाना, काक बंगला बाजार बिया
 भव पीर शीवशास्त्र विद्यमान है ।

शास्त्रिकार प्रति पुरावाके महातीर्थ माना जाता
 है । रामायण (उत्तरका० ३८ अ०), महाभारत (वन०
 ८३ अ०) हरिवंश (२१ अ०) पीर गण्ड, ब्राह्मण,
 स्कन्द पद्य प्रथम पुराणमें ब्रह्म महातीर्थका उल्लेख
 मिलता है ।

पद्मपुराणोय शास्त्रिकार भावार्थमें बिया है —

“ पर्वशीलनिरीय ननु कोर एक मीरनम् ।
 चतुर्वेदि विह्वलं सुमिथे विरचयन्ती ।
 इत्यादि स्थिति नली काकर स्थि अ नः ।
 इति स्थिति ननु इत्यर्थेन समस्तम् ।
 चतुर्वेदि अर्थे चोय नति ब्रह्मशास्त्रिकारिणः ” (१ म०)

श्री कोय विस्तृत एक क्षेत्र ही हमारा (शिवका)
 मन्दिर है । मिससकविप्रसुक्त वही शास्त्रिकार सुनि
 दायक कहता है । गुणाके पश्चिम मार्गमें शास्त्रिकार
 क्षेत्र अवस्थित है ।—शास्त्रिकारके—समान—प्रतिष्ठ—शिव
 भूमिपत्रमें दूधरा नहीं । वहां संकल “तीर्थका” एक
 पीर, प्रकृत पुष्प मिलता है ।

सुवहमान इतिहास लेखक परिसीके अठनासवार
 ई० ७६ मतायको विदार नामक किमी व्यक्ति शास्त्रि
 कार स्थापन किया था । सुवहमानोंके इतिहासमें
 लिखा कि गङ्गो पाहमय करनेको जति समय
 शास्त्रिकारके राजाके राजा अययानको साहाय्य
 दिया । १००८ ई० को सुवहयद मज्जनको नर इर्द
 बार भारत पाहमय बिहा, तब पालन्यायके राज
 विमाहासिमें एक बृह दूषा । उसमें शास्त्रिकारके
 राजा पालन्यायको पीरसे लड़े थे । १०२१ ई०को
 शास्त्रिकारराजने कबोत्रके राजाको पराजित किया ।
 १०२२ ई०को महमूद मज्जनको शास्त्रिकार पर कष्ट थे,
 किन्तु पालका सम्रि करके कोट गये । १२०२ ई०को
 महमूदकोरीके प्रतिनिधि कुतुब तुहोनेने शास्त्रिकार
 कोत वहां सम्रिद पादिको निर्माच कराया । पद्य
 दिनके मध्य ही एक विर हिन्दुओंके पत्रिकारने बला
 गया । १२५१ ई०को शास्त्रिक नगरत-कहीन सुवहयदने
 वसे अय किया था । किन्तु प्रद्वारविधिमें प्रमाथे
 माकम पडता है कि वसथे पीके विर शास्त्रिकार
 हिन्दुओंके हाथ लगा । १३३० ई० को अल्खाद् हुमा
 हुनेने शास्त्रिकार पाहमय कर १२ बरर कास जेरा
 छाया था । हुमासुन्के भारतये वसे जाने पर १३३५
 ई० को अल्खाद् शिरयाइने विर शास्त्रिकार पवतोच
 किया । २२ वीं मईको शिरयाइको तोपका गोला
 पहाइके अग बापस जा लनके वास्दकानिमें गिरा था ।
 उससे एक पत्रिकाय्य उपस्थित हुआ । शिरयाइ पास
 ही थे । वह उसी पत्रिकाय्यमें बस गये । उसीसे
 उनका मृत्यु भी हुआ । मृत्युपत्रका भीम करते ही
 उनको सबाद मिखा कि पुर्ण सुवहमानोंके हाथ लगा
 था । उन्होंने ईश्वरको अयादाद दिया और उसी समय
 उनका प्राचवाहू निकल गया । २३वीं मईको शिर-
 याइने पुत्र अनालपान् नवाबिहत शास्त्रिकारमें
 पिहवद पर पत्रियाइ दूये । १३७० ई० को एक एक
 कालक सरकारके पक्षीन किया गया । वसथे प्रीके
 शास्त्रिकार शेरवक राजाको आनोको मति अर्पित
 हुआ । कुछ दिन, पीके ब्रह्म ज्ञान बुद्धेयोंके हाथ लया
 था । इतिहास, इतिहास, इतिहास, वहां पत्रिकार एक

सुन्देना योर हवगानके मरने पर पन्नाके अधिपति हरदेवने उसे अधिकार किया।

पन्नाके राजधंगका बहुत दिन तक कालिञ्जर पर अधिकार रहा था। फिर कायमजी नामक किसी राजवंशीय पनुवरने कालिञ्जरको अपने अधिकारमें कर लिया। महाराष्ट्रके प्रधान्क समय बादेके नवाब अली वछादरने दो बखर काल कालिञ्जर पर रोध किया था। किन्तु उन्हें जयनाम न हुआ। समके पीछे वछ अंगरेजोंके अधिकारमें पहुँचा था। अङ्गरेजोंने कायमजीके वंगके किसी व्यक्ति पर उक्त स्थानका कलत्रमार डाल दिया। उनका नाम दरायु भिङ्ग था। उन्हें अङ्गरेजोंकी प्रथीमता न मानी। १८१२ ई०की अङ्गरेजोंने उन्हें देवानिके लिये सेना सङ्घ बनाने मार्टिण्डेनकी सेना था। उन्हें नगर आक्रमण किया, किन्तु अधिकार न मिला। प्रथीय दरायुभिङ्गने आत्मसमर्पण कर दिया। अङ्गरेजोंने उन्हें स्वानान्तरमें भूमि दे कालिञ्जरकी अपने अधिकारमें रखा। सिपाही विद्रोहके समय अल्पमंत्रक अङ्गरेज सेनाने दुर्गकी रक्षा की थी। १८८६ ई० की उक्त दुर्ग तोड डाला गया। कालिञ्जरका दुर्ग बहुत प्रसिद्ध था। आह्वानमें लोग गाया करते हैं,—

“हिला कालिञ्जरका मानत है, बेटह मंगे खानिञ्जर हारत।”

पहले कालिञ्जर चारो ओर प्राचीर-वेदित था। प्रवेशके लिये चार द्वार रहे। उनमें आजकल केवल तीन द्वेष पडते हैं। उनके नाम कामता फाटक, पन्नाफाटक और रियाफाटक हैं। पहले यहाँ एक सुदृढ दुर्ग था। आज भी उसका कुछ कुछ ध्वंसावशेष देख पडता है। उक्त दुर्ग बनानेके लिये पहाड़ खोद कर टेटी राह निकाली गयी थी। दुर्गमें प्रवेशके लिये सात द्वार हैं। उनमें आसम दरवाजा प्रथम है। उसे भीरगजैव वादगाहने बनयाया था। द्वारके ऊपर सुहृद्द मुराद द्वारा प्रदत्त १०८४ हिजरी (१६०३ ई०)की उत्कीर्ण शिलालिपि है। उससमय भीरंमजे, बने दुर्गकी मरम्मत करायी थी। उक्त द्वारसे काफिर-घाटकी राज द्वितीय द्वार गणेश फाटकमें जाता पडता है। उसके पाने चण्डी दरवाजा नामक तृतीय द्वार

है। वहाँ दो द्वार एकत्र जगे हैं। उसकी चारो ओर चार बुर्ज हैं। इसीसे उसको चौबुर्ज दावाजा कहते हैं। यहाँ ११८८, १०८२, १५८० और १६०० संवत्की खोदित शिलालिपि मिलती है। उक्त द्वारके पागवमें प्रस्तरकुण्ड है। उस पर एक शिलालिपि देखी है। आज भी समझ नहीं पडता यह किस अक्षरोंमें लिखी है। सुनरा यह भी किसीको मान्य नहीं समझें या मिया है? यह नामक किसी व्यक्तिने वहाँ एक गड बनाया था। उक्त पत्थर उमी गडका बंगसाव है। चतुर्थ द्वारका नाम बुधभट्ट है। उसे अरारोहण भी कहते हैं। यह बहुत ही दुर्गरोह है। यहाँ १५८८ विक्रम संवत्की (१५३१ ई०) एक शिलालिपि है। शिकट ही भैरवकुण्ड है। एक ऊँची राहमें उस कुण्ड पर जाना पडता है। कुण्ड प्रायः ८० हाथ लंबा और २० हाथ चौडा है। पहाड़के पत्थर काट कर कुण्ड बनाया गया है। उक्त स्थानसे प्रायः २० हाथ ऊँचे भैरवकी प्रकाण्ड मूर्ति है। मूर्तिके अधोभागमें पहाड़ काटकर एक गुहा बनायी गयी है। गुहाका तलभाग कुण्डके माघ समतल पडता है; सुनरा कुण्डका जन शौरम व्यतीत सकल समय गुहाके पश्चत्तर पर्यन्त फेला जाता है। यीमके समय गुहाका पश्चत्तर बहुत गोल रहता है। गुहाके भीतर खोदितलिपि देख पडती है। उसमें चारिवर्मदेव, योगामदेव, महिषा, यशोधन प्रभृति नाम उत्कीर्ण हैं। यशोधन नामके नीचे ११८२ संवत् लिखा है। गुहायों पर पर्वतमें यमणकी मूर्ति देख पडती है। भैरवकुण्डसे नीचे उत्तर कुछ दूर जाते ही हनुमान्-दरवाजा मिलता है। उसी स्थानपर हनुमान् कुण्ड है फिर पर्वतके गात्रमें हनुमान्की मूर्ति भी खोदित है। वहाँ अनेक प्रस्तरमूर्ति देख पडती हैं। किन्तु अधिकांश कालके प्रभावसे बिगड़ गयी हैं। उक्त स्थानसे चल कुछ ऊपर चटने पर काली, चण्डिका, शिव, पार्वती, गणेश, नन्दो और शिवलिंग की मूर्ति मिलती है।

* कालिञ्जरमाहात्म्यके मधे उक्त कुण्डका नाम शेषकुण्ड है—
“माण्डवं भैरव” इति कृता चैव प्रदक्षिणम्।
गोपाङ्गण्डके द्वारा उपरंभ न रिचि ३” (११९)

बनौ ज्ञान पर कीर्तिबर्मा पौर मदनबर्माका नाम
 योदित है। जन्मे पागे घोड़ी दूर चढते जा पठ द्वार
 नाक दरवाजा है। उसी ज्ञान पर बंदिनाई समयकी
 दीर्घ गिलाजिवि जगो है। द्वारकी पवित्र दिक्
 कक्षोर कुण्डके उपरि भागमें भैरवकी प्रबाण्ड मूर्ति है।
 दो छोटी मूर्ती हैं—दो भारवाचिवींछे पदम्ब
 पर भार है—जन्मपूर्व दो कक्षम है। फिर उसके पागि
 को मत्स्य द्वार नदर-दरवाजा है। उभे बड़ा दरवाजा
 भी कहते हैं। उक्त ज्ञान कीउत्तम सीतारामकी यथा
 मिलनो है। परंत नाट कर एक छोटा घट बनाया
 गया है। उस घटके पश्चिमतरमें एक चारपाई पौर
 ाबकोन। पथर पर खुदा है। प्रबादासुमार रामने सीता
 को लडामि सुहा बहो जा कर पालि मिटायो बी।
 उक्त घटको चम्पकराम्य गिलाजिवि पठनेमें मान्म
 पडता कि वह ई० चतुर्थ शताब्दीके उरद्वारा बनाया
 गया। पाण्डुकुण्ड योनाकार जन्माशय के उनका
 ज्ञान ८ जन्ममान है। उपर पडाडमि घबदा जन्
 टपका करता है। सीतायथा पार होनेमें पाताकगङ्गा
 को पठ है। कांभरप्रभावात्ममें उक्तका वाचनडा नाम
 बिधा है। पाताकगङ्गा एक गुहा है। जन्में जन्
 रहता है। वह २६ जन्म दीर्घ पौर २३ जन्म प्रयत्ना
 है। उनमें उत्तरना कुछ बठिन है। बदां भी ज्ञान
 ज्ञान पर योदितनाप बिद्यमान हैं। उनमें जहो
 १११८. जहो १११४ पौर जहो १६७० संवत् बिधा
 है। पाताकगङ्गाके पागि पाण्डुकुण्ड मिलता है। फिर
 सीतारामके निबट सीताकुण्ड है।० दुर्गेशकारमि
 जहमें उत्तरते हैं। उन कुण्डके उपरिभागमें एक मूर्ति
 है। वह जन्म पर भार ज्ञान कर बेडो है। नामने हो
 एक टीकरो है। उनमें १६७० संवत् योदित है।
 पाण्डुकुण्डकी उत्तरपूर्व दिक् एक निष्कामुमि है।
 उनमें एक जन्माशय भी बनाया गया है। जन्माशयकी

चारो पौर सोपानाशयो है। उसको "कुटिया तलाक"
 कहते हैं। उसके जन्मे जन्म रोग चले ही जाते
 हैं। काभरप्रभावात्ममें बहो इहयेक बना गया
 है। दुर्गको दक्षिणपूर्व दिक् एक फाटक है। जन्मा
 नाम पचादरवाजा या बंधकरदार है। पात्र जन्म वह
 बन्द है। उसके पास कामता पौर रेशा नामक दूनरी
 दो फाटक हैं। परंतके निष्कामागमें भी काशिपुर मगर
 विद्यमान हैं। उक्त द्वारके उभे भागमें पवेश करने है।
 पचाफाटकको उत्तर पौर माडाके गौषे एक कुण्ड है।
 जमि भैरवकुण्ड कहते हैं। कुण्डके उपर भरवकी
 प्रबाण्ड मूर्ति है। उन ज्ञानमें ११८२ संवत्की
 गिलाजिवि दिक् पडती है। पाण्डुकुण्डको उत्तर पूर्व
 दिक् पठ है। जममें कुहिसरोवरको जाते हैं। कुछ
 पागि बहनेपर "निहको गुहा" 'भनशान्मयथा' पौर
 'पानोका पदम' ज्ञान मिलते हैं।

काशिपेक वा विहकी गुहा एक ज्ञानविमेष है।
 बदां जोग प्रायचित्तादि करते हैं। रात्रा अटित-
 दिको एक संक्षुभ गिलाजिवि उभे स्थानमें मिलनो है।
 बदां भगवान् रामचन्द्र पौर सीताको प्रभूतरनिर्मित
 शब्दा है। पानोका पदाम' भी एक ज्ञान है। उक्त
 हाथके एक छिटे द्वारके उनमें प्रवेश करना पडता
 है। चार पक्षके उपर उसको बत पडो है। बदां
 पगवार नामक दूमरा ज्ञान भी है। पचाडूमि
 पक्षर खांद ज्ञान जन्मको पाजति बनायो गयो है।
 रघोषे उनको मृगचार कहते हैं। कहते हैं कि बिबी
 समय मात काविबुध गुहाको पापान माननेमें मापपट्ट
 हुए पि। प्रथम जहोंने टपार्थे जन्में ज्ञान हो जन्म
 निबा। फिर परब्रह्ममें वह काशिपुरके मृग बने।
 बृगब्रह्मके पीछे जहोंने ज्ञानाशयके लडादोपमें रात्र
 रंभ, मानशरोवरमें जंभ पौर कुहियेजमें प्राणच पी
 कक्षपडक बिधा। उसमें वह मुक्त हुए। काशिपुरकी
 जन्मूर्ति जहोको प्रतिष्ठित है। मृगचारमें भी एक

० "दिगुण" नामक जन्मकी जन्मकुण्डम् ।
 जन्मकी जन्मकुण्ड पर दक्षिण दिक्पथे ।
 उक्त दूनरी बदां पौर जहोके निष्काम ।
 लंके जहोके सीताके बंधनो निष्कामम् ।
 (काशिपुर, १४५)

० "दरक" नामक जन्म निष्कामकुण्डम् ।
 उक्त जन्म जन्मकुण्ड निष्कामकुण्डकी ।
 बदांके ज्ञान जहोके जन्म कुण्डकी निष्काम ।
 (काशिपुर, १४५)

सरोवर खोदा गया है। पहाडसे उसमें दिनरात वृंद वृंद पानी टपका करता है। कोटतीर्थमें उसमें जल जाता है।

दुर्गके मध्य कोटतीर्थ नामक एक सरोवर है। कालिध्वरमाहात्म्यमें वही कोटतीर्थ नामसे वर्णित है। कोटतीर्थमें स्नान करनेसे कोटि जन्मका पाप छूटता है। सरोवरमें उतरनेके लिये अप्रशस्त सोपानायनी है। किन्तु उसमें सकल समय जल नहीं रहता। कोई वही भारी दृष्टि ही जानिसे कुछ दिन जल देख पड़ता है। सरोवरकी चारो ओर नानाविध प्रस्तरखण्ड यशिन हैं। उनमें अनेक शिलालिपि उत्कीर्ण देख पड़ती हैं। लेख अनेक स्थानोंमें मिल गये। सुतरां आजतक उनका उद्धार नहीं हुआ। सरोवरके पार्श्वमें उपरिभागपर प्रस्तरभवन और अन्यान्य गृह बने हैं, वह अत्यन्त पुरातन समझ पड़ते हैं। स्नान स्नानपर मंस्कार भी किया गया है। वहां भी बहुविध पुरातन खोदित लिपि देख पड़ती हैं। कोटतीर्थमें परिमलकी बैठक और अमानसिंहका महल छोड दक्षिणपश्चिम नीलकण्ठ जानिका पथ है। पथमें एक फाटक बना है। फाटक पार होनेसे प्रकृतिकी अपूर्व शोभा देख पड़ती है। पर्वत उच्चसे असमतल है। विलकुल नीचेका झुक गया है। जहांतक दृष्टि जाती, वहांतक अपूर्व शोभा देखाती है। पहाडके नीचेसे वांटा नौगांवकी राह देखने पर मनमें आता, मानो उपथीतका गुच्छ पहा देखाता-है। अदूर ही श्यामल शस्यपूर्ण प्रशस्त भूखण्ड नील नभस्थलमें जाकर मिल गया है। बीच बीच छोटे छोटे पहाड़ हैं। कहीं निर्भरिणी और कहीं स्रोतस्वती सूर्यातपमें रौप्यमय ही भरभरा रही है। क्या ही सुन्दर प्रकृतिकी अपूर्व शोभा है। उपरि उन्नत फाटक पार होनेसे उस पथमें दमरा फाटक मिलता है। उससे आगे बढनेपर कवि तुलसीदास

और जैन तीर्थंदरकी प्रस्तरमूर्ति देख पड़ती है। वाम ओर पहाडमें दमरी कई मूर्ति हैं। श्याम स्नानपर शिलालिपि उत्कीर्ण है। सुमनमानके शासनसमय वहां एक गृह बना था। कनईका काम होनेसे अनेक लेख पट्टण हो गये हैं। कुछ दूर आगे जानिसे उटागदर, शिवनागर और तुङ्गभैरवकी मूर्ति है। वहा कई गुहा भी हैं। कई स्थानमें प्रस्तर पर कितना ही लिखा है। किन्तु उसका अल्प मात्र पटा गया है। कहीं "वेत सुदो ८, सन् ११८२ संयत् नरसिंह रत्नके पुत्रने यामदेवकी मूर्ति प्रतिष्ठित की है," कहीं "जेठ सुदो ८, ११८२ संयत् दीक्षित पृथोधर" और कहीं "श्रीकीर्तिवर्मा देव और मेमेश्वर देवगणका प्रणाम करती है" लिखा है। तुङ्गभैरवके एक स्थान पर "मदनवर्माके अनुवर मोहन, मोहनके पुत्र महाशायिक, उनके पुत्र वरराजने लक्ष्मीदेवीकी मूर्ति स्थापन की, कार्तिक सुदो मनोहर संयत् ११८८" लिखित है। समीपकार दमरा भी कितना ही लेख है। निकट ही नीलकण्ठका मन्दिर है। पहाडके नीचेमें उस मन्दिरकी अपूर्व शोभा देख पड़ती है। वहां एक गुहा है। गुहाके सम्मुख षटकोण प्राङ्गणकी चारो ओर प्रस्तरके स्तम्भ हैं। स्तम्भोंके निर्माण-कौशलमें अति चमत्कार दिखनाया गया है। उनके उपरिभागमें विष्णुकी एक चतुर्भुज मूर्ति स्थापित है। स्तम्भ षटकोण मण्डपकी षट दिक् अवस्थित हैं। नौगोंके कथनानुसार उपरि उपरि स्तम्भोंकी सात श्रेणी रहीं, किन्तु आजकल एक मात्र देख पड़ती है। उन्नत गुहाके अभ्यन्तरमें नीलकण्ठ महादेवकी मूर्ति है। गुहाके बाहर बहुविध शिल्पकार्य होनेका प्रमाण मिलता है। किन्तु वह समस्त चूनेके काममें छिप गया है। प्रवेशद्वारके पार्श्वमें हरपार्वती और गङ्गायमुनाकी मूर्ति है। शिवनिद्रा गाठ नीलवर्णके प्रस्तरसे निर्मित है। उसकी उन्नता तीन हस्त होगी। नीलकण्ठदेवके तीन चक्षु हैं। स्नान देखनेसे युगपत् भय और भङ्गिरसका उद्रेक ही उठता है। उन्नत नीलकण्ठ देव ही कालिध्वरके पश्चिष्ठा देवता हैं। कहनेकी आवश्यकता

* "नीलकण्ठो यत्र देवो भैरवा, कैलमायका।
कोटतीर्थं वृन्द तीर्थं सुकृद्वनं न संशयम् ॥
कोटतीर्थं जने खाला पुत्रयिला महाशिवम् ।
कोटोजन्माश्रितात् पौपान्मुच्यते नाव संशयम् ॥
कोटतीर्थं च संजाय प्रत्याश्रित्या नदन् प्रसूम् ॥"

नहीं—कितनी दूरसे जबारों क्षीम का आकर उनको पूजा करते हैं। नौलकण्ड मन्दिरकी साम पीर एक प्रमथस्त पय है। उसमें बहुतसख सिद्धमूर्ति प्रतिष्ठित है। वर एक नौलकण्डका मन्दिर घेर घपर दिक्को का निखला है। मन्दिरके दक्षिणके मध्य मध्य भूमिमें प्रमथकण्ड पर कितन ही लोच देख पड़ता है। फिर उसमें बहुत कुछ याज्ञिका द्वारा पोदित है। बाहर स्थान स्थान पर भगवान्की दम्य पबतार, ब्रह्मा, हरपांती प्रथतिथी परनेक मूर्ति सम्भाव्यार्थमें इतर उतर पड़ी हैं। नौलकण्डका मध्यव कोइमिथि एक कण्ड मिखता है। वर भी पडाक सीक कर बनाया गया है। उसका नाम सर्गा रोइवकुण्ड है। उसके दक्षिण पाय पर्वतके कोथमें प्रकाण्ड कात्मेरवकी मूर्ति है। वर कण्डके जन पर चढ़ी है। मूर्ति प्राय १६ इण्ड उख पीर ११ इण्ड प्रमथ है। नरसुखकी माना गमदेयमें दण्डुप्यमान है। सपके कण्डक है। इण्डमें सपके बलय पड़े हैं। सकेमें सपका डार है। पडादग इण्डमें पडादग पण्ड है। उख मयानक मूर्तिके पायमें कस पर नाकीकी एक मूर्ति चढ़ी है। जन पर उख पर्वतके पम्पनारमें उन दोनो मूर्तियोंको देखनेसे मनमें बुगपत् मन्त्रि पीर भयका सचार होता है। उख मूर्तिके पीरि ही दूखरो गुहा है। वहाँ कागा दुःखाप्य है। पक्षि उख मूर्तिके निष्पामयमें एक डार बा। उससे छिद्रगुहामें कोय जाति है। उष क्लानसे बिको सुरगकी राइ देपीय राण्यके मीतर पक्षु बते थि। य मरक रात्रप्रदवोंने वर राइ बन्द कर हो है। दुर्गकी उत्तरदिक् प्राकारसे बाहर पर्वतके मध्यदेगमें १० इण्ड दोर्ष पीर ६ इण्ड वर एक सुद्र पण्डमिरि है। उसमें भी सिद्धमूर्ति बतमान है। उसका नाम बालकाप्येडर है। उसके पायमें एक मारकाकी मूर्ति है। वर मार निसे चको जाती है। बर्षगीकी दानों पीर दो बलकी सहाजन है। उख भावकाइकके

बिन्नपर सुमर्षणोय रात्रप्रदत्त यिमानिपि जगो है। पर्वतके पायमें ममतन भूमि पर मा एव जगद बेको ही मूर्ति पीर बेसी ही यिमानिपि है। उष स्थानका नाम मरबन है। काब्रिधर पर्वतकी उत्तर पार भूमिमें ३० इण्ड इण्ड ऊपर गण्डामार नामक एक सरावर विद्यमान है। वर प्राय १०० इण्ड दोर्ष पीर ८० इण्ड प्रमथ है। उसकी तीन पीर सापाना बकी समान चकी सकी है। एक पीर उत्तरनेकी छोटी सिद्धो पीर चारो पीर र्क्षा बिनाथा है। सिनरि पर चकनीकी भी सापान बना है। वहाँ ८ इण्ड उष पनकादेवकी मूर्ति स्थि पड़ती है।

वहाँ दूमरी भी देखनेकी बहुत सीजे हैं। उनमें चण्डोमचण्ड विबबेस रविबेस प्रातगुवापिका वारायककुण्ड, चन्द्रबान पीर सौमिससेस प्रसिद्ध है।

पर्वतके पम्पिकोबमें पद्यापि श्रीरामका चरण विन्न बना है।

“विश्वीके शिरीरम पोत्तपरवरवम्” (बाल कर्मशास्त्रा ६१) काब्रिदास (४० पृ०) काका दास मंत्रायां कृष्ण । शासनके पनि प्रसिद्ध महाकवि। भोगोंकी विख्यास है कि बिन्नमाहिबकी समाधि नगरमें काब्रिदास में एकर कर है। उसके सत्यस्यपर नामा खानोंमें नामा प्रकार प्रवाट प्रबक्षित है। उनमें किम एक प्रवाट वरम मौके लिपेमें १०

बिसे बिदुकी कथ्यामि विद्यावमसे वरु पण्डिती की वर प्रतिया की थी—“बिस पण्डितमे वरम गाकाबमें डार लायेगे, उनीकी पपना पनि बनयेंगे। उनके पिता प्रतिष्ठाकी सुन एव एक कर वरु पण्डित लाये थि। बिन्दु कीर कथ्याके पराक्रम कर न लका। इष प्रकार वर वर पण्डित पावका

• इतिहासे इण्डोप्रकार काब्रिधर निधिपारावी है (Journal Asiatic Society of Bengal, Vol. XLVII. 1879 pt. I. p. 25) वही वरार दक्षिणदेशमें भी वर वरार है। (See Indian Antiquary 1875) नामा ज्यतीके वरर वरुके नाम न वरता है—वहाँ बिधी जगद पिताव सचिब वरु, वहाँ क्षीम मरारवि कनिराकी बरुदेव पीर एव वररवकी वरुनेमें कुडिब न पुडे; ईण्डुमें भी ईसा की वरार वररार है। (Marfa's Eastern India, III p. 512.)

अनुसन्धान लगा उनके पिता बहुत विरक्त हो गये। सुतरा किसी गोसूखे के साथ उस कन्याका विवाह करना एकान्त अभिप्रेत ठहरा। फिर वह चतुष्टिक ब्रह्मे सूखेकी दृष्टिसे लगे। किसी स्थान पर उन्होंने देखा एक व्याक्ति वृक्षमें आरोहण कर जिस गात्रा पर स्वयं बैठा, उसीका मूलदेश काटता था। वह उभर बहुत सन्तुष्ट हुये और सोच गये,—‘जो यह भी विवेचना नहीं कर सकता कि डाल कट जानेसे वह भी उससे साथ गिर पड़ेगा, उसमें अधिक सूखे जगत्में कहा मिलेगा। अतएव यह उपयुक्त पात्र है।’ सुतरा उन्होंने उसे कन्याके निकट ले जा कर उपस्थित किया। कन्याने उससे मौखिक प्रश्न न कर एक अद्भुतिका संकेत दिखाया। वरने सम्भवतः उसकी पपेसा वीरता प्रदर्शन करनेकी दो अद्भुति दिखा दीं। कन्याने फिर तीन अद्भुति देखायीं। उसके उत्तरमें वरने भी चार अद्भुति देखायी थीं। तब कन्याने उसे पांच अद्भुति देखायीं। वरने उन्हें प्रहारका संकेत समझ कन्याकी मृष्टिका संकेत किया था। वरका उद्देश्य कुछ भी हो सकता था। किन्तु कन्याने वह संकेत देख अपनेकी पराजित मान लिया; फिर प्रति आनन्दसे पिताने उसके कन्या सेप दी। विवाहके पीछे वासर-गृहमें स्वामी और स्त्रीने आराधन पारम्भ किया। स्वामीके मुखसे शान्त्यण्ड सुन वह चमत्कृत हुयो। फिर उन्होंने उसे अत्यन्त तिरस्कारके साथ गृहसे निकाला था। सूखे कालिदास स्त्रीके निकट उस प्रकार तिरस्कृत हो प्राणत्यागकी इच्छासे सरस्वतीकुण्डमें कूद पड़े। किन्तु उनका प्राण छूटा न था। सूखे कालिदास कवि कालिदास बन गये। सरस्वतीकुण्डके माहात्म्य अनुसार श्रवणाहन मात्रसे ही सरस्वतीने समीपस्थ हो बर दिया था। कालिदास बर पाते ही फिर स्त्रीके निकट जा पहुँचे। उन्होंने स्त्रीको गृहका भग्न बन्द करके देख द्वार खोलनेके लिये अनुरोध किया। स्त्री खर सुनते ही स्वामीका प्रत्यागमन समझ गयी थी। सुतरा उसने सहज ही द्वार न खोल प्रत्यागमनका कारण पूछा। कालिदासने

अर्थात् उन्हें कुछ श्वास तोर पर कहना है। स्त्रीने फिर पूछा—‘क्या विशेष कथन है?’ कालिदासने द्वारद्वय पर खड़े ही खड़े अग्नि, कश्चित् और वागविशेष: तीनों पदोंमें एक एक पद पहलने वोन तीन काव्य स्त्रीको सुना दिये। ‘वसिष्ठ’ पदके अनुसार ‘वस्युत्तरस्थां दिशि देवतात्मा’ प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर समदश सर्ग कुमारसम्भव, ‘कश्चित्’ पदके अनुसार ‘कश्चित् कान्ता-विरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः’ प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर मेघदूत और ‘वागविशेषः’ पदका वाक्य श्रष्ट पद्य पूर्वक ‘वागर्वाशिय मस्य श्लो’ प्रथम श्लोकसे आरम्भ कर रघुवंश उन्होंने प्रणयन किया। उन्होंने रघुवंश और कुमारसम्भव दो महाकाव्य, मेघदूत नाम खण्ड काव्य, अभिज्ञान गकुलना, विक्रमोर्वशी, मानविकान्तिमित्र तीन नाटक और गृह्यतिलक, नृत्यशोध, पुष्पवाण-विनाय, ऋतुसंहार प्रकृत ग्रन्थ बनाये हैं।

राजकल विगेष प्रमाण द्वारा प्रतिपन्न हुआ है— विक्रमादित्यके सभास्य जिन नवरत्नोंका नामांशेष मिलता, वह सब एक ही समयमें न रहे। गिनानिपि और प्राचीन ग्रन्थसे भी एकाधिक विक्रमादित्यका नाम निकला है। किन्तु यह निश्चय नहीं—कानसे विक्रमादित्यको समामे कालिदास थे? फिर उक्त ग्रन्थोंका हृन्दवन्धन, भाषा और कवितानैपुण्य देखते भी प्रथम छह ग्रन्थोंका छोड अपर पुस्तक महाकवि कालिदासके हस्तप्रसूत मालूम नहीं पड़ते। इनकी कारणोंसे केवल प्रवाद पर निर्भर कर कालिदासकी जीवनी लिखी जा नहीं सकती।

कालिदासकी जीवनी लिखना और प्रत्यकार समुद्रमें कूद पहना एक बात है। उनकी सम्यन्धमें विभिन्न लोगोंका विभिन्न मत मिलता है।

ब्रह्मविरचित भोजप्रबन्धके प्रमाणानुसार कालिदास उज्जयिनीनिवासी भोजराजके सभासद थे। उक्त भोजराजका राजत्वकाल ११०० ई० ठहरा है। (Journal Asiatique, Sept. 1844. p 250.)

भोजप्रबन्धमें कालिदासके समसामयिक कई पण्डितोंका नाम मिलता है। यथा—कपूर्, कनिष्ठ, कामदेव, कीकिल, गोपालदेव, तारिन्द्र, दामोदर,

ब्रह्मण्डल प्रसन्नराज्य-पञ्चकार, अथर्वेन वाचमनः, मन्वन्ति माण्डर मयूर, मन्तिनाथ, मन्थिखर, माथ, सुसुक्रन्ध, रामिखर प्रकृति। वेदान्ताचार्यद्वारा विष्णु गुणार्थे पठनेसे समझसे है—किसे समय काबिदास, जोहयं पौर मन्वन्ति भोत्रराज्यो समामि वर्तमान ये। किन्तु विषये प्रमाण मिले है कि उक्त सत्त्व पण्डित काबिदासके समयकाहीन न है।

अथर्व, गणप, मन्वन्ति इत्ये वी।

वाचमनका हयं चरित पठनेसे जो समझ सकते है कि काबिदास वाच पौर जोहयसे बहुतपूर्व विद्यमान थे। ज्योतिर्विदाभरथ नामक एक ज्योतिषपञ्च काबिदासका रचित माना जाता है। उसमें लिखा है,—“बन्धकारि, उगणक, चमरसिंह शत्रु शैतलमठ, चट्टकपूर काबिदास, कुचिप्यात बराहमिहिर पौर बरबन्धि विष्णुमठे लवणद्वीपे है। विष्णुमठे ८५ पाक श्रुतिपयिषि मार कबिद्युगमें पयना अम्ब बसाया। हमने (काबिदास) ३०५८ काबि मताब्दके वेगण्य मासमें १६ अम्बको रचना प्रारम्भ कर कार्तिकमासमें सम्पूर्ण किया।” फिर २०३ पाञ्चांगके ३५६ द्वाकमें कहा है,—“पात्र मो बाब्योब, गोऊ, पान्नु, माबब पौर शीराडू देगके लोग विप्यात बदाभ्यवर विष्णुमका गुण गरी है।”

पूर्वकथित भोजप्रबन्ध पौर ज्योतिर्विदाभरथको कसो प्रामाणिक पञ्च मान नहीं सकते। कारण १, इतिपूर्व लिख चुके है कि लबरक विभिन्न समयके लोग थे। २ रचनाप्रवासी पाकोबना करनेसे ज्योतिर्विदाभरथ काबिदासका चरनिष्ठन समझ नहीं पड़ता। ३ ज्योतिर्विदाभरथका शैलीक वर्षना पठनेसे अनुमान करती है कि उसके रचित होनेसे बहुत पूर्व विष्णुमादिख विद्यमान थे। फिर ज्योतिर्विदाभरथके समय विष्णुमाब्द पौर विष्णुममन्वन्थोय प्रवाद भी जारी पौर देखा था।

वर्मान पण्डित नासन्थि मतातुषार काबिदास ई० हितोय मताब्दको समुद्रगुप्तको समामि विद्यमान थे। ० विक्रमोत्तं पौर प्रिपुव साहबने लिखा है कि काबिदास प्रायः १३०० वर्ष पूर्व वर्तमान रहे। वर्मान पण्डित बेबरनी ई १५५६ वर्षे मताब्दके मन्थ काबिदासका पाविर्मावकाक निर्णय किया है। † जोहो लीकोबो साहबने काबिदासका ज्योतिषयम्ब पकड़ ठहराया है कि काबिदासको योग ज्योतिषयाखका ज्ञान था। उसके अनुसार वह ३१० ई० से पकड़के † लोग जा नहीं सकते। ज्योतिषी वेपं, माण्डराजी, मोचमुवर प्रकृतिके मतमें—काबिदासके पाविर्मावका काच ई० पठ मताब्द था ग।

हमारे रई देगोय पुरातन्त्रानुसन्धित्सुगर्भमें अक्षय कुमार दत्तके मतातुषार ई० ३४० मताब्दके मन्थमायके जोके पठ मताब्दके शेषभागके पकड़े पौर ऐतिहासिक रक्षप्रपथिताके मतमें ई० पठ मताब्दको काबिदास विद्यमान थे। प्रवागत देखती है कि पश्चिमोय पुरा विदोके मतमें काबिदास ई० पठ मताब्दके लोभ रहे। उनको सुझि यह है,—

उत्थपिनोरान हयं विष्णुमादिखने कबि माडगुप्तके प्रति सन्तुष्ट ही उन्हें आग्नीर राज्य प्रदान किया था। फिर राजा विष्णुमादिख द्वारा काबिदासको सर्वे राज्य दिया जानेका मो प्रवाद है। अथर्व पण्डितने राजतरङ्गिणीमें राजा माडगुप्तको कपि बनाया है। हयं चरितके प्रारम्भमें प्रवरदेन पौर काबिदासका इच्छ है। प्रवरदेनने शिलभूरा नदी पर एक कुडकत्तु धनु निर्माक कराया था। काबिदासने उसी धनुके अयवचर्भमें “शैतुकाव्य” रचना किया। शैतुपत्रन्थके टीकाकार रामदासने भी मतमें काबिदासने शैतुपत्रन्थ

Indische Alterthumskunde, II. p. 467, 1158-60.
 † Weber's Sanskrit Literature, p. 204
 ‡ Monatsberichte der Königlich Preussischen Akademie der Wissenschaften zu Berlin, 1873 p. 654-658

† Kera's Brihat Sankhā, p. 20 Bhan Daj in the Journal of the Bombay Branch Roy As. Soc, 1861, p. 18-20 207 200; Max Müller's India what can it teach us, p. 320

लिखा था। राजतरङ्गिणीके मतानुसार माण्डव्या और प्रवरसेन समकालीन थे। माण्डव्या प्रवरसेनको काश्मीर राज्य दे काशीवासी हुये। राघवभट्टने गङ्गान्तर्गामी टीकामें माण्डव्याचार्यके कतिपय अलङ्कार श्लोक उद्धृत किये हैं। वह पठनेमें प्रधान शक्ति देनाये समझ पड़ते और कालिदासके लेखनी-प्रसून कदनेमें भी अच्छे लगते हैं। प्रवरसेन तोरमाणके पुत्र थे। वज्रेश्वरकी कन्या चञ्जनाके गर्भमें उनका जन्म हुआ। पहले तोरमाणके भ्राता काश्मीरमें राजत्व करते थे। (उन्होंने तोरमाणको बन्दी बना दिया।) शिरष्य और तोरमाणके मरने पीछे प्रवरसेनकी प्रथम पत्निकार मिला न था। इस बात पर भगडा लगा—कौन राज्यका प्रकृत उत्तराधिकारी हो। उस समय उज्जयिनी-नाथ विक्रमादित्य (अपर नाम हर्ष) भारतवर्षके एकच्छत्र सम्राट्नीं थे। उन्होंने माण्डव्याके काश्मीरका राज्य प्रदान किया। उक्त माण्डव्या ही कालिदास थे। * माण्डव्याके मनेमें तोरमाण ५०० ई० और प्रवरसेन ५५० ई० का विद्यमान रहें।† सुतरा कालिदास और विक्रमादित्यका विद्यमान रहना उभो समयके मध्य सम्भव था।

नहीं समझते उक्त मनेमें कौन समीचीन है। माण्डव्या और कालिदास दोनोंके एक ही व्यक्ति मान नहीं सकते। प्रथमतः किसी प्राचीन पुस्तकमें माण्डव्या और कालिदास भिन्न व्यक्ति नहीं लिखे गये हैं। राजतरङ्गिणीमें कवि माण्डव्याके मन्वन्ध पर अनेक कथा लिखी हैं। किन्तु कनङ्गय पण्डितने उन्हें एक-वार भी कालिदास नहीं लिखा। जेम्स-विरचित औचित्यविचारचर्चा, सुभाषिनावली और शुकिकर्ण-सूत ग्रन्थमें कालिदास तथा माण्डव्याके भिन्न भिन्न श्लोक उद्धृत हुये हैं। उक्त पुस्तकसमूहसे भी माण्डव्या और कालिदास परस्पर भिन्न व्यक्ति समझ पड़ते हैं।

कर्पूरसम्पत्तीप्रणिता वासुदेवने प्रथमे ग्रन्थमें माण्डव्याके अलङ्कार-रचयिता बनाया है। सुन्दर मियका नायप्रदीप पठनेमें समझ सकते हैं कि माण्डव्याने भरत-प्रणीत नायगात्रकी विप्रति बनायी थी। उक्त प्रमाणोंसे माण्डव्या नामक एक मन्वन्ध करिजा होना स्पष्ट ही मालूम पड़ता है। अब देखना चाहिये—कालिदास, प्रवरसेन और हर्षविक्रमादित्यके सम-सामयिक थे या नहीं।

डाक्टर भास्कराजी प्रभृति पुराविद्वाने प्रधानतः हर्षचरितमें प्रवरसेन और कालिदासका उल्लेख देख उभयके समसामयिक ठहराया है। श्लोक यही हैं,—

“कीर्तिं प्रवरसेनस्य प्रथमा कृतुदो-
 माण्डव्यं परं पारं कालिदासं मनुष्यं * १५
 मन्वन्धरक नाम्नेण्डव्यं वंशुभुजिः।
 मयनादेदंशो मने माण्डव्यं कृतुदो-
 मनेतासु न रा कल्प कालिदासस्य मन्त्रिणु।
 मोदिसं धुरमादासु म करोषिव कावते १ १०.”

(किसी किसी मन्त्रित पुस्तकमें “मिसरं मुरंगम कालिदासस्य मन्त्रिणु” पाठ है।)

उपरि उक्त श्लोक द्वारा इसी विषयका परिषय मिलता कि प्रवरसेन और कालिदास दोनों प्रसिद्ध कवि थे। किन्तु स्पष्ट मालूम नहीं पड़ता—उभय समकालीन थे या नहीं। राजा रामदास विरचित राममेतुप्रदीप नामक “सेतुवन्ध” की व्याख्याकी प्रस्तावनामें लिखा है—

“इह तावत्पराशरजन्मभिमित मन्वन्धराभिवाच्यमादित्ये तावन्तो लिखितविषयकृद्गमदि” कालिदासमन्वन्धर मन्वन्धरस्य चिन्तितुः।”

राजा प्रवरसेनके निमित्त विक्रमादित्यकी आज्ञामें कालिदासने सेतुवन्ध नामक प्रवन्ध रचना किया।

राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि प्रवरसेनको काश्मीर-का राज्य मिलनेमें पहले ही हर्षविक्रमादित्यका मृत्यु हुआ था। † (राजतरङ्गिणी ३। १२२—१२०)

सुतरा विक्रमादित्यके आदेशमें प्रवरसेनके निमित्त कालिदास द्वारा प्राकृतभाषामें “सेतुवन्ध” का निर्या

* Dr Bhanu Dajl, Journal of the Royal Asiatic Society of Bombay, Vol VIII. p 244-50.

† Max Müller's India, what can it teach us, p. 316
 किन्तु निर्याचिते रास कोरमाण ५०० ई० के उक्त पूर्वश्लोक और उक्त पुत्र निर्याचिते ५२०-५३० ई० के पूर्वश्लोक समझ पड़ते हैं।
 (Fleet's Inscriptio-num Indicarum, Vol. III. p 10-11.)

* माण्डव्या, मन्वन्धर प्रभृति इस श्लोकको ही उद्धृत करते हैं।
 † “विक्रमादित्य मन्वन्धरस्य मन्त्रिणु भूयति।
 विक्रमादित्यमन्वन्धरस्य कालिदासस्य मन्त्रिणु”
 (राजतरङ्गिणी ३। १२०)

जाना अन्वयपर नहीं। रामदास ई० चौदह यत्नाम्
के भोग थे। रामदास ईश्वरी। उनसे पूर्ववर्ती कुम्भनाभने
पद्यों विरचित रासवचनको० टीकाको लूचनाने
लिखा है,—

“वीरवचनवचनम्, यत्र वचनम्, ईश्वरी वचनम् च वि० कुम्भनाभना ।
काबिदासे वचनवचनम् एवं वचने रचितवचनवचनम् ॥”

इस स्थानमें कुम्भनाभने रास प्रवरसेनको जो
‘शैतुवचन’ रचविला लिखा है।

श्रीबिम्बविचारवचन, सुनिश्चयवित प्रथमति पद्य
पद्यनेमि अमभने है कि प्रवरसेन एक प्रसिद्ध कवि थे।
वर्षवचनसे ही श्लोक मनोनिवेशपूर्वक पानाचना
करनेसे शोध होता कि वाचमहृते पूर्व रास प्रवरसेन
‘शैतुकाव्य’ और काबिदासने काव्य तथा नाटकको
रचनासे प्रसिद्धि पायी थी।

यद्यपि फिर जो यथा कि माहगुप्त और काबिदास
विभिन्न व्यक्ति थे। काबिदासने शैतुवचन बनाया न
था। इस पद्यमें भी कोई विमल प्रभाव नहीं कि यह
प्रवरसेन यादवा अथवा विष्णुसाहित्यके समकालीन थे।
वचन ईश्वरी वचनवचन ईश्वरी।

फिर काबिदास किस समय विद्यमान थे ?
याचमह वाचपति, अष्टमशतकका प्रथमाध्यायिका श्रीवर्ष,
सेनेन्द्र वामन, अथर्व प्रथमति पद्यके प्राचीन कवियोंमें
काबिदासका नामोद्धरण किया है। १३६ शककी
प्रदत्त श्रीकुम्भराज सुनिश्चयैके तास्वयाचमने भी
काबिदास और भारविदास नाम मिलता है —

“वैतनीश्वरीशक्तिवचन विनी विनीविना विनीश्वर ।
व विनीश्वर शक्तिवचनः शक्तिवचनवचनवचनवचनः ॥”

सुप्रसिद्ध कुम्भारिकमहृते तत्प्राक्त तत्प्राक्तवर्तिकमें
काबिदासके शकुन्तलावर्षित “सतां हि मन्दे वपदेतु”
वचनको उद्धृत किया है।

एतद्विषय मोटेश्वरीय “तेंगुर” पद्यमें काबिदासका
नाम और यद्य तथा वाचिहोपको कविभाषामें रसुवश
तथा कुम्भारिकवचन अथवा द्वादश पद्यता है। याचमह
पण्डितोंके मतमें हिन्दुवैतने ६०० ई० की उद्योग

का अर्थनिश्चय किया था। अतएव यह अन्वय
नहीं भासूय पद्यता कि हिन्दुवैतने यद्यपि कानेसे
पद्यके काबिदास विद्यमान थे।

किसी किसी पाद्यान्व और देशीय पुराविदके मतमें
काबिदासके पद्यमें जोरामाश्लेष कथा और अष्ट
याचमके ‘दीक मन्द’का उल्लेख है। दीकका जोर
याचम ई० तृतीय यत्नाम्को सम्बन्ध हुआ। अतएव
अष्ट यत्नाम्के वीरै भारतवासियोंके उक्त याचम पद्य
किया होगा।

किस याचममें कातक याचिक और विवाह
वध्यादि निदधित हुआ, बराहमिहिरने उसको जो
‘जोरामाच’ कहा है। प्राचीन पद्यमें ‘जोर’ मन्द
न देख पड़ते भी अष्ट याचमका प्रतिपाद्य कितना
ही मूल विषय रामावच, महाभारतादि पति-
प्राचीन पद्यमें विद्यत है। मोक्ष, जीव, अष्टम पद्यमें
वच ईश्वरी। अतएव यह अश्लीलार विद्या का नहीं
सकता कि जोरामाचका प्रतिपाद्य मूल तत्र
दीक जोरामाच बननेसे बहुत पद्यके भारतवासी
अमभने थे।

बराहमिहिरने उक्तवाच्योंके पद्यके जोरामाश्लेष
कितना ही विषय संयोज किया था। अतनिश्चय ईश्वरी;
इस यत्नाचार्य या पद्यके अर्थवचन ‘पद्यवचनविन्दु
पद्य’ ‘ताचिक याचम’, ‘नयनवचनवि’ ‘मोक्षराज
कातक’, ‘यत्नसार यत्नवचन’ ‘वमसाधन’, ‘अष्ट
वन्दिका ‘उद्योगवचनकाच’ ‘श्रीकातक’ प्रथमि कई
संस्कृत पद्य मिले हैं। बराहमिहिरने (उद्योगवचनमें)
महोत्पन्न शैववाच्य एवं मातेश्वरिणात्मविद्योवासे
विष्णुवाचने यत्नाचार्यके संस्कृत वचन उद्धृत किये
हैं। अतएव ‘रोमकविदास’ नामक ज्योतिष्याचम
संस्कृत भाषामें रचित प्राप्त होता है। याचम
संदिता जयनरस आनमाह्वर प्रथमति पद्यमें और
बराहमिहिर प्रथमति ज्योतिषिदोके वनाये पद्यके
रोमवाच्यके संस्कृत वचन उद्धृत किये हैं।

अपर उक्त प्रभाव द्वारा शोध होता भारतवर्षीय
ज्योतिषिदोके द्वारायाचमके किसी किसी विषयमें
संस्कृत भाषामें लिखित वचन एवं रोमवाच्यके पद्यके

• शैतुवचनका अर्थ अष्टम शतक का अष्टमशतक है ।
† Weber's Sanskrit Literature p. 208
Vol. IV 149

कालिदास नामके हिन्दीमें भी कई कवि हो गये हैं ।
उनकी कविता हृदयग्राही और मनोरञ्जक है ।

कालिदासकी रचानोचना ।

युवा कवि कालिदासकी अपनी उम्मेदवारी एक ऐसा देशमें करना पडी थी, जो सुन्दर और पर्वत, खाड़ी, मैदान तथा छोटी नदियोंसे परिपूर्ण था । कालिदास ब्राह्मण थे । इसी कारण वह युद्ध और राजनीतिसे अपनेको अलग रखते थे । हा, देशके साहित्यसे सम्बन्ध रखनेवाले युद्धविषयमें वह सम्मिलित थे । उन्हें क्या लिखना था ? पूर्णवस्था और प्रकृति दोनों ही सुन्दर होती हैं । प्रकृति पदार्थोंका वर्णन करना युवा कविके लिये सबसे अच्छी चीज है । कालिदासने अपनी उम्मेदवारी ऋतुसंहार लिखनेमें बितायी । वास्तवमें उन्हें ऋतुवर्णन लिखनेका प्रबोधन गिनाफलकीनि दिया था । कारण देशमें चारो ओर जो गिनाफलक मिलते थे, उनसे प्रत्येकमें ऋतुवर्णन वर्तमान था । उन्होंने अपने मनमें विचारा—यदि वह सम्पूर्ण ऋतुवर्णनका वर्णन एक साथ लिख सकते, तो देशका बड़ा उपकार करते । इसीसे कालिदासने ऋतुसंहार लिखनेका काम अपने हाथमें ले लिया । भाषा परिमार्जित नहीं है । उसमें पुनरुक्ति, ध्याकरण-लेखन प्रणाली और भाव सम्बन्धी त्रुटियां बहुत हैं । अंगरेजी कवि टामसनने “सिजन्स” नामक ऋतुवर्णनका एक ग्रन्थ लिखा है । उक्त ग्रन्थ ऐतिहासिक घटनाओंसे परिपूर्ण है । फिर स्थान स्थान पर टामसनने विभिन्न ऋतुवर्णनोंमें प्राचीन समयके दृश्य दिखानेकी चेष्टा की है । किन्तु कालिदासने अपने ग्रन्थ ऋतुसंहारमें कहीं इतिहासकी ओर ध्यान नहीं दिया है । उन्होंने ग्रीष्म ऋतुसे आरम्भ किया है । कारण उत्तर-भारतमें ज्योतिषी वर्षाऋतुसे ही वर्षारम्भ करते हैं । यद्यपि उनकी प्रतिभा कवित्वपूर्ण और कुशाग्र थी, तथापि पूर्णरूपसे परिमार्जित न थी, स्त्रीत्व वा प्रकृति का सौन्दर्य उन्होंने भली भाँति नहीं बताया । परन्तु उनका हृदय बहुत सुलबुला था । जहाँ दूसरे क्रुद्ध नहीं देखते, वहाँ उन्हें सुपमा देख पडती है । गहरी दृष्टिका पहला भड़कौडा, घास और धूल सबको बहा

ले जाता है । कालिदासने उस चालको कविकी दृष्टिसे देखा है । नाने घूम घूम कर बहते हैं । कालिदासने उनकी मां प जैसा चाल बड़े ध्यानसे देखा है, जो नेटकीको उरा देता है । एक बात पकी है । कालिदासकी पादि कविताका अनोखापन यह है कि उन्होंने स्त्रीसे अधिक प्रकृतिकी प्रशंसा की है ।

फिर उन्होंने अपने देशके पुराण पढ़े, गिना समझ की और अपना ध्यान रङ्गमञ्चपर लगा दिया । उगका दूसरा ग्रन्थ देशहितैयितापूर्ण एक नाटक है । विदिगा मालवका एक भाग है । कालिदासके प्रथम ऐतिहासिक ग्रन्थमें विदिगाका इतिहास परिपूर्ण है । मालवमें प्रागे वह भ्रमणको न गये थे । उन्होंने पग्निमित्रका इतिहास लिखा और नायिकाका नाम मालविका रखा है । उक्त नका प्रद्योतवंग पतित हो गया था । मालवदेश मगधमें मिना लिया गया था । उसी समय पग्निमित्र ब्राह्मणके पाषीन विदिगा राज्य स्थापनका वर्णन कर उन्होंने मालवके लोगको प्रसन्न करनेकी चेष्टा की है । वास्तवमें पगोकके वीरराज्यका पतन और ब्राह्मणसाम्राज्यका अभ्युदय युवा कवि कालिदासके लिये एक अच्छा विषय बन गया । इस ग्रन्थमें भी कालिदासने प्रकृतिके सौन्दर्यको अधिक अपनाया है । उन्होंने प्रायः इसप्रकारके वाक्य लिखे हैं । ‘फूलदार पेड़ोंकी डालियोंका हिलना क्लृप्तना देख माचनेवाली लडकियां लज्जामें आ जाते हैं ।’ पनन्तर उनके भ्रमणकी परिधीमा बटती और “मेवदूत” में वह मालवसे प्रागे निकलते हैं । मालवकी पूर्व सीमासे वह उसकी चारो ओर घूमते, कई प्रायश्चक्र स्थान देख भास पूर्वमें वह फिर उसमें पहुँचते और उत्तरमें उससे बहुत प्रागे निकल चलते हैं । किन्तु उनको प्रीति अभी मानसिक है, वह अभी प्रकृतिकी बहुत प्रशंसा करते हैं । किन्तु उनकी भाषा बहुत परिमार्जित हो गयी है । और उनकी लेखनप्रणाली बहुत अधिक चित्तको आकर्षण कर लेती है ।

उनकी कविताका भाव सदस्य जाता है । वस्तुओं और मानुषिक लालसाओंका वह अधिक विचार करते और मनुष्यके दुःखोंपर ध्यान नहीं देते । वह

पपने भावकोंके लिये वेद टटरी और बिट्टी दिव्य वा पार्श्वदिव्य पुस्तकोंके पपने पत्रका भावक सुनते हैं। उनका दूसरा नाटक विज्ञानोपदेशी है। उससे इन्हें प्रथिमोक्षे बदनकर पाकाय पर पशु च मये है। किन्तु इनका प्यार पपने ब्रह्माण्ड के चौर प्रकृतिसे प्रयसा करना उनमें पपनी कम नहीं पडा है।

उनको कविता पर दूसरा परिवर्तन पड़ता है। वेदोंके बह प्रसव नहीं होते। बह पबिच गूढत चौर पबिच ज्ञापविहीन थे। इसलिये बह वेदोंको छोड़ देना चाहते हैं। बह पपनी उपपत्तानमें प्रजाप कोकरी चौर देवमत पबलम्बन करती है। पब बह चाहते हैं कि पपनी देवको उचित प्रयसा करें। उन्होंने पबिचो चौर पापुके प्रत्येक प्रथको मनो मति समझ बूझ लिया है। पब उन्हें पाकायको चौर ध्यान देना है। शिवदूतमें जहाँ उन्होंने पपनी कविता समाप्त की थी, वहाँसे बह प्रारम्भ करते हैं। इन्हें इन्द्रपुरीसे ब्रह्मकोक चौर ब्रह्मकोकसे शिवकोक को पशु पता है। उन्होंने कामदेवके मध्य होनेको बात बिच सोन्दर्यका पच्छा वर्णन किया है। उससे दोहे इनको मीति पारकोन्दिक हो गयी है।

पार्श्वतो विषये मिथना चाहती हैं, शरीरसे नहीं—
पाकायै। देमके इतिहासमें ऐसी मीतिका भाव पपात पा। इसी पबोबिच मीतिके पचारे काबि बलने पपने ब्रह्मदेवका गुणनाम किया है।

पक्षी उन्होंने पृथिव्य चौर पौष्टि पारकोन्दिक विषय लिखे हैं। पक्षीका बात तो पाचारण की। उसका नेतिक उद्देश्य सम्येहपूर्वक था। फिर इनकी दूसरी बात लोगोंकी समझमें पाती न थी। इसलिये उन्होंने पपनी उपायकामें मानुषिक चौर देगी भावोंके मिसानिको पैदा कर दो पत्र लिखे, जिनको प्रयसा समप जगत् सुख-कल्पये करता है। उनका यजुन्तका नाटक पृथिव्य चौर पारकोन्दिक भावोंका मिश्रण है। यजुन्तका पृथिवी चौर स्वयं देगोसे सम्यक रहती है। कुमारसन्ध्या चौर यजुन्तकामें उनका जो सोन्दर्य विचार बहुत बरस मया है। कुमारसन्धयमें कामदेव महादेवका ध्यान दिना न सब चौर पार्श्वतोके पौष्टि काकर लिप रहें। इससे यही भाव निश्चलता है कि

मौलिक सोन्दर्य दिव्य भावोंके सामने तुच्छ है। यजुन्तकामें जो वह स्वयंसे बह ज्ञानमें पशु च मये हैं, जहाँ पबिचोको कामिनो का नहीं सजती।

परन्तु उनका पलितम चौर विगाह प्रत्य रसुर्वय है। जहाँमें उन्होंने ईश्वरके पबतारोका वर्णन किया है। इसमें काबिदासने बाबोबिसे सामना किया है। किन्तु काबिदास उनसे बहुत पानी निकल मये हैं। बाबोबिने केवल रामका ही वर्णन किया है। परन्तु काबिदासने उनसे पूवपुत्रयो का भी वर्णन कर कई दिव्य गुणोंका परिचय दिया है। दसोपमें पबोमता, रसुमें यज्ञ, पत्रमें प्रेम, इयारयमें राबोचित गुण चौर राममें उन्नत समप दिव्य गुणोंका पूरा पामास पाया जाता है। इसी स्वयंसे काबिदासके समप पय लिखि मये हैं। उनसे देवनेमि माझूम जाता है कि, काबि दासने पपने विचार जोरे चारे बकाये हैं। पछत पदार्थोंके वरनसे पारम्भ कर उन्होंने पबतारो का पकृप चौर ईश्वर तथा मनुष्यका सम्यक दिवा दिया है।

पब यह विषय विचारतां हैं—खा उन्नत सातो पुष्टक एकदोम बकारके लिखे हैं। इसमें सम्येह नहीं कि—रसुर्वय चौर कुमारसन्धय एक ही कविसे बनये हैं। कारण उन्नत दोनों पुष्टकोंको रचना मिथतो सुनती है। फिर यजुन्तका भी उन्नत दोनों पुष्टकों के रचयिताको ही लिखी है। कारण एकका लक्ष्य भाव पूरमें बड़ा दिवा मया है। निष्कर्मोपदेशीके भी उद्यं पम्पायका भाव शिवदूत चौर कुमारसन्धयमें विद्यमान है। अतुर्वचर चौर मासबिबाबिभिमिने सम्यकमें समाकोचको का मत नहीं मिलता। परन्तु प्यामपूर्वक विज्ञानोपदेशी, यजुन्तका चौर मास बिबाबिमिच पक्षमेंसे तोनो पक्षोंके भाव मिथते चौर तोनो गुण एक ही पबकारके लिखि मासम पड़ती हैं। जोगाका यह कहना कि मासबिबाबिमिच लिखी दूसरे कविता निजा है, बिलकुल झूठ है। कारण काबिदासके मनो का पैदा पशुवरण सूधरा बस समय कर न सजता था।

जिन्हें जोग काबिदासका पशुवरण समझते, बह

रामकी युवावस्थाके लिये ग्रन्थ है। पीछे कालिदासने अपने भावाँ और विचारोंको अधिक सुधारा है। ऋतुमंजारकी भी बहुतसो बातें कालिदासके दूमरे ग्रन्थमें मिलती है। ऋतुमंजारमें उम्मेदशर कविने भारतके एक एक भागका वर्णन किया है। दूमरे ग्रन्थमें वह उससे बहुत आगे बढ गये हैं। परन्तु ऋतुमंजारमें उन्होंने जिस भावका बीज डाला, यही दूमरे ग्रन्थमें हल बन गया है। इस बातका ध्यान रखना चाहिये कि कालिदास ऋतुवर्णन करने पर बडा प्रेम रखते थे।

मेघदूतमें वर्षा, शकुन्तलामें शीघ्र, विक्रमोर्वशीमें गीत, कुमारसम्भारमें वसन्त, मालविकाग्निमित्रमें राजाद्यानको वसन्त और रघुवंशमें पट्टऋतुवर्णन विद्यमान हैं। किन्तु ऋतुमंजारमें अर्वागट समग्र श्रंखलाके वर्णनका बीज विद्यमान है। इसमें यह विषय अस्मिन्व है कि उक्त सातो ग्रंथ कालिदासके ही बनाये हैं।

कालिदासक (सं० पु०) कालिदास चार्थे कन् । कालिदास, भारतके महाकवि ।

कालिदास त्रिवेदी—एक विख्यात हिन्दुस्थानी कवि। दार्शनिकत्वके गोलकुण्डमें अवस्थित करते समय कालिदास त्रिवेदी औरगजिष वाटगाहके पास रहते थे उसके पीछे वह जम्बू प्रदेशमें रघुवंशीय योगजित्मिंह नामक राजाके निकट चले गये। उनके पास रह उन्होंने 'वधुविनोद' बनाया था। १४२३ से १७१८ ई० तक जिन कवियोंने जन्म लिया, उनमें २१२ कविधार्कि १००० इन्द् एकत्र कर कालिदासने एक कविता-संग्रह प्रणयन किया। उक्त पुस्तकका नाम 'कालिदाससहजारा' है। कालिदाससहजारा पुस्तकको विशेष सुख्याति है। उनके पुत्र उदयनाथ त्रिवेदी और पौत्र दूनह त्रिवेदी दोनों ही श्रंथकार रहे।

कालिन्दी (सं० स्त्री०) कालः शिरः अघट्टाहतया अथवा कालः प्राकाशस्यः पुरुषाकारो लुब्धकः मन्त्रकृतत्वेन अस्त्राभ्याः, काल-इन लोप । १ आद्रा नक्षत्र । काल-यति प्रेरयति, कल-गिच्-णिनि । २ प्रेरणकारिणी, मेरुनेवान्नी ।

कालिन्दी (सं० स्त्री०) कालिं कलराशि टटानि, कालिदा-क पृषादरादित्वात् सुम् । कालिन्दी, तरवृज, कलादा ।

कालिन्दीक (सं० स्त्री०) कालिन्दी स्त्रार्थे कन् । तरवृज, कर्जीदा ।

कालिन्दीका, कालिन्दी श्यो ।

कालिन्दी (सं० स्त्री०) कालिन्दात् कालिन्दाव्य-पर्वतात् तत्तन्निष्कटदेशाद्वा जाता निःसृता या, कालिन्दी-ग्रन् लोप । १ यमुना नदी । २ न्योक्तश्याकी एक स्त्री । ३ पश्चिमकी स्त्री और मगरकी माता । ४ अरुण त्रिशत्, निमोत । ५ ज्येनकिण्वि, एक शोपधो । ६ कैरि अमुरकन्या । ७ एक राशिणी ।

कालिन्दी—उद्यानेका एक वैष्णव सम्प्रदाय। कालिन्दी प्रायः कैरी-वमार नोष जाति छोते हैं। वह कौशोन वगेरह पड़ने घरमें भी रहते हैं। विवाह आदि स्वजातिमें ही होना है। उक्त सम्प्रदाय कैरीवमार प्रकृति नौव जानिका गुरु है। वह शक्री न जना मृति नामें गाड देते हैं। फिर नो दिन अगौव माम टगम दिवम याद कर शूड जैते हैं। कालिन्दीयोंके मठ पृथक् पृथक् हैं, महन्तीके गिथ अपने अपने मठमें अलग रहा करते हैं।

कालिन्दी—एक गाखा नदी। बद्रदेशके सुनना जिनमें यमुना नाम्नी नदी प्रवाहित है। कालिन्दी उन्नीकी गाखा नदी है। यह वसन्तपुरके निकट यमुनाने अलग हों सुन्दरवनमें रायमङ्गल नामक स्थान पर जा गिरी है। कालिन्दी सुगभीर है। कलकत्तेसे बडी बडी नौकायें उक्त नदीपथसे पूर्वाभिमुख गमन करती हैं।

कालिन्दीकपण (सं० पु०) कालिन्दी कर्पति कालिन्दी-कप कर्तरि न्यु यद्वा कर्पतीति कर्पणः, कालिन्द्याः कर्पणः, इ-तत् । वनदेव । वनदेवके कालिन्दीकर्पणकी कथा हरिवंशमें इस प्रकार लिखी है,—किसो समय वनदेवने स्नान करनेके लिये यमुना नदीको बुनाया था। किन्तु वह स्त्रीस्वभावसुलभ भीरुतावगतः उनके समीप उपस्थित न हुयो। वनदेव यमुनाके उस व्यवहार पर बहत विगडे थे। फिर वह अपने अस्त्र जलसे उन्हें आश्रयण कर हन्दावन लेगये । (हरिवंश, १०२ प०)

कालिन्दोभेदन (सं० पु०) कालिन्दी भिनन्ति, कालिन्दी-भिद् कर्तरि ल्यु, कालिन्द्या भेदनो वा । बलराम ।

३ शान्तनु राजाकी स्त्री । ४ भीमसेनकी एक पत्नी ।
 ५ अग्निशिखा विगेष, प्रागकी एक स्त्री । ६ रात्रि,
 रात । ७ त्रिहृत्, निरात । ८ निन्दा, वदन-सी ।
 ९ नूतन मेवसमूह, घटा । १० मसी, स्याही । ११ कृष्य-
 वर्ष स्त्री, काली शीरत । १२ कृष्यवर्ण, काञ्चरंग । १३
 चीरकौट, मठे का कोडा । १४ नीना, नील । १५ पाटन ।
 १६ मञ्जुटा, मंजीठ । १७ कृष्यवेत, काञ्चा वेत । १८
 कृष्य कार्पास, काली कपास । [१९ कृष्यवीरक, काञ्चा-
 शीरा । २० पूथीका । २१ कृष्य त्रिहृत्, कान्हा
 निरात । २२ ह्यिकाली, विष्णुवा । २३ कण्टकपाली ।
 काली (म० स्त्री०) कार्तव्य गिवध्न पत्नी-डीप् ।
 कालिका देवीके लनाटमे प्राविर्भूता एक देवी । चण्ड
 वधके समय असुरोंसे लड़ते रहते क्रोध भरमें भगवतो-
 मुख कृष्यवर्ष हो गया था । फिर उनके लनाट देगमे
 करान्धवदना प्रसिद्धि प्राप्त प्राप्ति कालिका
 देवीका आविर्भाव हुआ । (मरुतदेव०, ८०।३)

कालिकापुराणमें उनका रूपादि इस प्रकार वर्णित
 है,—“नीलोत्पलकी भांति श्यामवर्ण है । चार हस्त
 हैं । दक्षिण हस्तद्वयमें खट्वाङ्ग एवं चन्द्रशंख और
 वाम हस्तद्वयमें चर्म तथा पाग है । गलेमें सुष्टमाला
 पडी है । परिधानमें व्याघ्रचर्म विराजित है । अद्भुत
 क्रम है । दन्त दीर्घ है । लोलजिह्वा अति भयङ्कर
 देख पडती है । चक्षु आरक्त हैं । काली भोम नाद
 कर रही हैं । वाहन कवच है । मुख विस्तृत और
 कर्ण स्थूल हैं । उरु देवी तारा और चामुण्डा नामसे
 भी प्रसिद्ध होती हैं । उनकी आठ योगिनियोंके
 नाम हैं,—विपुला, भीषणा, चण्डी, कर्त्री, हंती,
 विधावका, करान्धा, और शूलिनी । उरु योगिनी भी
 देवीके साथ पूजित और अनुष्ठान होती हैं । यावतीव
 देवीगणमें उन्हींकी पूजा करनेसे सर्व कामना सिद्धि
 मिलती है ।” (वाटिका० १० प०) काली दश महा-
 विद्याओंके मध्य प्रथम महाविद्या है । यथा -

“काली दश महाविद्या योऽपि सुवर्णयुगे ।
 भैरवो द्विजमना च विद्या धामावको तदा ॥
 वरुणा विद्विद्या च नादरी भस्मकालिका ।
 एषा दशमहाविद्या विद्विद्याः प्रहोर्तिदा ॥” (तन्त्रसार)

काली, तारा, षोडशो, सुवर्णेश्वरी, भैरवा, क्रियमस्ता,
 धूमावती, वगना, मातङ्गी और कमला दश मूर्तिका
 नाम महाविद्या है । उन्हें सिद्धविद्या भी कहते हैं ।
 सतीने दस्युघ्नमें जाते समय बार बार गिवधे अनुमति
 मांगी थी । किन्तु महादेवने उन्हें किसी प्रकार अनुमति
 न दी । उसीसे सतीने उरु दशमूर्ति बना और गिवकी
 उरा अनुमति ग्रहण की । दशमहाविद्या देखो ।

काली मूर्ति का ध्यान इस प्रकार है,—

“करावदनां चोरां सुहृदीनां चतुर्भुजां ।
 कालिकां दक्षिणां दक्षिणां सुगन्धाम्भविप्रियाम् ॥
 सदाविद्यया चिन्तां सुगन्धाम्भविप्रियाम् ॥
 चर्मं वरुणं च दक्षिणोर्ध्वं चण्डिकां ॥
 मरुतिघ्नमां श्यामां तथा शैव टिन्त्रयोगीम् ॥
 कण्ठायसुत्रमुखां चैव चन्द्रशंखचिन्ताम् ॥
 कर्पासवर्णां दीपतां चतुष्पादशालां ॥
 शीरं चोरां करान्धवां शीरं चण्डिकां ॥
 दक्षिणां करमं चोरां चण्डिकां चण्डिकां ॥
 सुहृदयसुहृदयं धामाविकुं रितामनाम् ॥
 शीरं चोरां महागौरीं श्यामाम्भविप्रियां ॥
 कालिकां सुगन्धाम्भविप्रियां चण्डिकां ॥
 दक्षिणां दक्षिणाम्भविप्रियां चण्डिकां ॥
 वरुणवदनां देवकौटकीं चण्डिकां ॥
 विधाविकां श्यामां चण्डिकां चण्डिकां ॥
 महाशक्तिं च चर्मं विदोहरातामुराम् ॥
 सुहृदयसुहृदयं चोरां करान्धवां चण्डिकां ॥
 एव चण्डिकां चण्डिकां चण्डिकां चण्डिकां ॥” (तन्त्रसार)

काली करान्धवदना, भयङ्करी, सुहृदीनी, चतुर्भुज-
 विगिष्टा और सुगन्धाम्भविप्रिया है । उनके प्रधोवाम
 हस्तमें मद्यः कर्तित सुगुण एवं ऊर्ध्व वाम हस्तमें खड्ग
 और ऊर्ध्व दक्षिण हस्तमें प्रथम चिह्न तथा प्रधो
 दक्षिण हस्तमें वरदान मङ्गिमा है । वह महाभैरवकी
 भांति श्यामवर्णा उलङ्घिनी है । उनके कण्ठदेगमें
 सुष्टमाला है । उससे रहधारा विगलित हो रही है ।
 कर्णद्वयमें कर्णभूषणके स्थान पर दो गव लम्बित हैं ।
 वह भीमदग्ना, करान्धवुत्री, पौनोव्रतस्तनी, श्रवण-
 चन्द्रसमूहनिर्मित मेवलाधारिणी और हास्यमुखी
 है । उभय श्रोत्रप्रान्तमें रहधारा गलित होती है ।
 उसीसे उन्हें स्फुरितमुखी भी कहते हैं । काली भयङ्कर

गण्डकारिणो, भयहृत्सूति, अजयानवासिनी, बह्व
 सुख्योचनसहबिम्बिता कराकटन्ता दक्षिणाङ्ग्यापि
 सुकृषिप्रयागकुटा, शरद्विमहाद्वये हृदयक्षिता मय
 ह्रस्वशब्दकारिषिवागवपरिषिद्धिता महाकासके साय
 विपरीत सङ्गमं पावना पीर सुखप्रसरदना है ।
 इषीप्रकार सहं कामार्थसिद्धिदायिनी काकोको चिन्ता
 करना चाहिये ।

महाकाको, हसिवाकाको भद्रकाको, अजयान
 काको, गुणकाको पीर रसाकाको प्रथति नामानुसार
 काकोमूर्तिंके विविध भेद है । देवो मूलप्रकृति है ।
 कल्पवृद्धि पीर सुखम मानकोंके उपासना कार्यमें
 सुविधा करनेके लिये तन्त्रादि शास्त्रमें बह प्रकृतिके
 काको, तारा प्रकृति नाम पीर रूप कथित हुये हैं ।
 महानिर्वाणतन्त्रमें सो रिया हो लिखा है,—

“कलत्रकला चकारे इव कथितं विदे ।

इत्येकमुपरायं वय ईषट् इत्येकं इत्येकम् ॥”

(कलत्ररत्न ११ उक्त)

उपासकोंके कार्यके लिये जो गुणलियानुसार
 देवीका रूप कथित होता है ।

पाप मलिकी प्रमाण मूर्ति काको है । शास्त्रमें
 प्राय इय चानि सोन उक्त मूर्तिंके उपासक है । भय
 बनीको जितनी मूर्ति है उनमें कृपा पीर काको
 मूर्तिंका बहुत प्रकार है । उदाहरण ही निर्यय करना
 दुःसाध्य है—कितने समयके उक्त मूर्तिंको कल्पना की
 गयी है । अनेक पाशात्र पण्डितों पीर तन्त्राचार्यकी
 प्राय विद्वानोंके कल्पनानुसार काकोको मूर्तिं हिन्दूतों
 की मीलित न हो, बह भारतके पादिम अधिवासी
 पराशरोंकी देवदेवीके अङ्गभूत हुये । नहीं समझ
 पड़ता देवो कल्पनामें कोई प्रक है ना नहीं । कारण
 परमेश्वरके प्राचीन पुराणोंमें भगवतीको उक्त मूर्तिंका
 बचन मिलता है । फिर भी इतना मानना पड़ेगा
 कि तास्त्रिक रूपमें जो उक्त मूर्तिंको उपासनाका
 नामाधिक विधि नियम बना पीर बना है । तत्र
 को बात छोड़ जायि बह उक्तना चाहिये—पुराणादि
 में भगवतीका काकोमूर्तिंकी उत्पत्ति, पूजा, ध्यान
 इत्यादिके सम्बन्धमें क्या विवरण मिलता है ।

पुराणोंमें मार्कण्डेय पुराण उपेक्षाकृत प्राचीन
 गिना जाता है । जिस देवीमाहात्म्यके पठन या सुनने
 से इन्द्रके ऐश्वर्यं तुल्य ऐश्वर्यं भाग किया जाता बह
 चण्डी नामक चर्चुं गुणक भी मार्कण्डेयपुराणके
 ही पद्यगत पाता है । काकिका मूर्तिंकी उत्पत्ति
 क्या चण्डीमें दो ध्यान पर कही है । प्रथम,—
 मविवाचुरके बह पीडे देवता शुभ—निशुभके पत्न्या
 चारसे उत्पन्नित हो देवीना स्तव करती है । उनी
 प्रथम भगवतीने काङ्गोबनमें ध्यानार्थ जानेके ब्रह्म
 बनेके निकट उपस्थित हो पूजा या—‘तुम यहाँ क्यों
 पाये हो, देवताने के उक्त प्रश्नका उत्तर देतेके पदसे
 ही भयवतीके शरीरके शिवा पम्ब्रजामें निकल कर कहा
 ‘देवपतिवर्षकं निराकृत पीर तवीय ध्याता
 निशुभकण्डकं पराजित ही देवता हमारा स्तव करती
 है । पम्ब्रिका भगवतीके शरीरकोपमे निकली हों ।
 इषीसे बह कोविडो नामके विख्यात कृपा पीर जिना
 बलपर रहने लगी । कोविडोको उत्पत्तिके पीछे
 भगवतीने भी शीघ्र गौरवर्षं होइ लक्ष्यवर्षं चारय
 किया था । इषीसे बह भी काकिका * कक्षावीं पीर
 जिमाचलर ही रहने लगी । उक्त काल पर
 चण्डीमें नहीं किया उन कालिकाका क्या रूप था ?
 फिर इतने काल पर चण्डीमें काको मूर्तिंकी कथा
 इस प्रकार निकी है—कोविडोक पुत्रारके मरणके
 शिवापति पूर्यलोचन भयोमृत हुये । फिर श्वापते
 पण्डसुख नामक को प्रकण्ड शिवापति बह शैव दे
 कोविडोको पकड़नेके लिये भेदि । पण्डसुख शैवबल
 परिहृत हो महादर्यसे देवीके निकट शिवाचन पर
 उपस्थित हुये । देवीने उनका दर्प देख ईदम् श्वाप
 माक किया था । पण्डसुख पण्डुवती हो उक्त पकड़ने
 को घायी बडे । पाप जाने पर देवीने महाकीर्तने
 बनकी पीर देखा था । जोबदे उनका सुखमण्डल
 काला पड़ गया । फिर इनको खुकुटिकुटिह * कक्षा
 से पति शीघ्र पक देवी निकली हों । फिर बह पण्डु

* मार्कण्डेय पुराण—इत्येकमुपरायं, ११—उक्त उक्त ।

पर टूट प्रहार करने लगीं। वही देवी काली० हैं।

• उनका रूप चण्डीमें इस प्रकार बताया है,—

“अग्ने करालवदना विविधमालासिपागिली ।
विचित्रवस्त्राश्रया न(मालासिपागिली) ।
सोपिचर्मपरीश्रया यकर्मसामिनेरवा ।
सतिविन्नासदरा क्रिद्वालयननोपया ।
विलसा रक्तप्रभा मादापूरितदिष्टमया ॥

काली—हरानयटना (लखिसमुण्डहस्ता), अशि-
पागधारिणी विचित्रवस्त्राश्रया, नरमुण्डमाला
शोभिता, व्याघ्रचर्मपरिधाना, शुक्रमांसा, अति-
भयानक मूर्ति, अतिविन्त, नमुखमण्डना, लोन-
रमना, शोपणा, गाटरक्तनयना और घुड़ार गध्वे
दिङ्मण्डल-परिपूर्णकारिणी हैं। कालीने युद्धमें चण्ड-
मुण्डकी मार कौपिकीकी उनके दोनों मुण्ड उपहार
दे कहा था—‘हमने चण्डमुण्ड नामक दो महापशु
मारि हैं, अब युद्ध यज्ञमें शुभ-निशुभको तुम संहार
करो।’ कौपिकीने हंस कर कहा,—‘चण्डमुण्डकी तुमने
मारि है। इसीमे तुम्हारा नाम चामुण्डा विख्यात
होगा।’

प्रायः जो काली वा श्यामा मूर्ति देव पडती उस-
के साथ उक्त मूर्ति की सम्पूर्ण एकता नहीं लगती।
फिर भी कुछ माटग्र देव पडता है।

रक्तवीजकं बधसमय उन्हीं कालीने लिद्धा निकाल
और तदुपरि रक्तवीजका शरीर विनिर्गत समस्त रक्त
लाज, पान किया था। कौपिकीके अस्त्रप्रहारमे
रक्तवीज दिनट हुआ।

चण्डीमें कार्त्तिकापूजाका कोई विधान नहीं मिलता
शुभनिशुभके बध पीछे देवीने देवताओंमे जो पूजा-
पहति कही वह शारदीय महापूजाकी कथा थी।

देवीभागवतके प्रथम स्कन्धमें २३ अध्याय पर कौपिकी
की उत्पत्तिके पीछे पावनेका शरीर कृष्णवर्ण पडने
पर कालिका नामसे प्रसिद्ध होनेकी कथा लिखी है।
किन्तु उनका नाम कालिकात्रि बताया गया है।
चण्डीकथित उक्त कालिकाका कोई कार्य नहीं मिलता,
किन्तु देवी भागवत में लिखा कि घृस्वनीचर्मसे उनका

घोर संग्राम हुआ था। फिर युद्धके पीछे उन्हींके घुड़ार-
से वह विनष्ट हो गया। वह बराबर कौपिकीके
पार्श्वमें उपस्थित रहीं। देवीभागवतमें भी चण्डमुण्ड-
वधके समय कौपिकीके कपानमे व्याघ्रचर्मस्वरा,
क्रूरा, गजचर्मसिरीया, मुण्डमानाधरा, घोरा, शुष्क-
धापीममोदरा, खड्गपाशधरा, अतिभीषण, खट्वाङ्ग
धारिणी, विस्तीर्णवदना और लोलकिद्धा कालीकी
उत्पत्ति कहा है। वही काली चामुण्डा नामसे
विख्यात हुयीं। उन्हींने रक्तवीजका रुधिर पीया था।
पतञ्जल अथान्य पुराणोंमें भी काली, भद्रकाली,
महाकाली, इत्यादि नाम आये हैं। किन्तु उत्पत्तिके
सम्बन्धमें कोई विरोध विवरण नहीं मिलता।

शक्तिप्रधान कालीकी पूजा, ध्यान, कवचादि एवं तान्त्रिक रहस्यादि “श्यामा”
ग्रन्थमें और अथान्य विषय “दुर्गा” ग्रन्थमें देखो।

कालीमूर्तिके रूप विचार कर देखनेमें समझ
सकते कि वह महाकालिका प्रणयिनी हैं, अनन्तकाल-
रूपी शिव पदनलमें टलित हो रहे हैं। सर्वध्वंसकारिणी
शक्तिज्ञापक अशि चार्थमें है। भूत, वर्तमान और
भविष्यत् कालवाचक दिनयन हैं। इत्यादि।

(गणेशनकी कथा श्यामा ग्रन्थमें देखो)

कालीअंछी (हिं० स्त्री०) वृहत् चुपविशेष, एक बड़ी
भांडा। उसके वृत्तमें मरन कणटक निकलते हैं।
पद प्रायः १२। १३ अङ्गुलि दीर्घ लगते हैं। उनका
प्रान्तभाग दन्तुर रहता है। पुण्य पाटलवर्ण होते हैं।
कालीअंछीके रक्तवर्ण फल पकनेमें कालि पड जाते
हैं, मिठा पंजाब और गुजरातके भारतवर्षमें समग्र
स्थानोंपर उक्त वृत्त मिलता है। उसे पुष्पके लिये
लगते हैं।

कालीक (मं० पु०) के कर्त्तव्य अल्लति पर्याप्तोति प्रभवति
इत्यर्थः, क-कर्म-इकन पृथोदरादित्वात् दीर्घः। कौष, ५,
यय, शिषी विश्वका अगला।

कालीघटा (मं० स्त्री०) क्षणवर्ण नूतन मेघधरोणी,
घटता हुआ काला वादल।

कालीघाट—एक पीठस्थान। यह कलकत्तेके दक्षिण-
प्रान्तमें प्राचीन मन्नाके कछार पर अक्षा० २२° ३१’
३०” उ० और देशा० ८८° २३’ पू० पर अवस्थित है।

बड़े बरक रक्ता बानी कपरसे गोबेको कटवता है ।
रंग विरंगबे लगी बानिमें छोड़ दिजे जाती हैं । तामोके
बिनाये कट बानिसे काशीन कपड़ेदार मासूम पडता
है । कमका काशीन प्रसिद्ध है । भारतमें भी भाँसी नगर
में भी पच्छे पच्छे काशीन बनते हैं । बादशाह एक
बदन कतर भारतमें इपके व्यवहाय हो लसेजना दो हो ।
काशीमन्त्र (सं० श्लो०) काशीनम मावः, काशीन-ल ।
काकहतिल, बरक पर काश्रिरो ।

काशी नदी—ब्रह्म प्रान्तकी एक नदी । बरक सुब्रह्मण्य
नगरका गङ्गाकी बरकेके पूर्वभाग सराय नामक खान-
के बालुका सुपके निकट निकली है । उत्पत्तिखानसे
कुछ दूर तक लजे मागन बहते हैं । मागन चरकित
भाबके बरक सुब्रह्मण्यहरके पास जा बड़ी नदी बन गयो
है । फिर काशी नदी सुरजाके निकट दक्षिण-पूर्वामि
सुय चल बरकोरमें गङ्गाके जा मिळी है । सुब्रह्मण्यहरमें
लस पर एक पडापुल बना है । सिवा लसके गढ़
सुब्रह्मण्य बानिकी राह एक गुलाबटोमें और तीन पनी
गढ़ बिनिमें भी लसके पुल देख पड़ते हैं । लजे पूर्व
काशी नदी बहति है । बरक टेलमें १३३ कोष है ।
लसको छोड़ एक पश्चिम बानी नदी भी है । बरक
शिवाबिब परबतके निकल सडारनपुर और सुब्रह्मण्य
नगरके बहतो हुयो हिन्दन नदीमें जा गिरो है ।
सडारनका खान पचा० २६ १८ ल० और दिसा० ७००
३० पू० पर चरकित है । पश्चिम काशी नदीका
टैम्प ३३ कोष होमा ।

काशीपुराय (सं० श्लो०) एक कपडुराय । लसमें काशो-
बिबयक विवरपादि बरित है ।

काशीमन्त्र—कककता-भोज्याकोके एक विख्यात
कमोन्डार । कनका लस सिद्धबंशमें हुवा या । लसके
पपितामह यान्तिराम सुरसिदाबाद और पटनाके
दीवान् है । काशीमन्त्रके पिताका नाम प्राचक्षय था ।

बरक लक्ष्मण, बंभला और चंगरेको भावामि बहुत
निपुण है । लसमें मूल संख्यत मजामारतको बंभकामि
पनुबाद करा विनामूल बितरण बिबा, बिलके बडा
बग हुवा । लसमें कपरमित्त परबे लया और लस पडा
या । लसमें दानयोकेताका भी बडा गुण रका ।

काशीप्रवाद—१ कोई पन्धकार । लसमें काशी
तच्छुवादिन्मू और मक्तिपूती नामक दो पंख ल
पन्ध बनते थे । २ सारथपद नामक वेधक पन्धकार ।
काशीपुत्रिया—पश्चिमिये, बिसेो बिषयाका बकमुल ।
काशीवाकवी—मजामारतके धाराप्रदेशका एक सुद
राज्य । कोई मूरवा लसके पश्चिमारे है । बरमपुर पर
गनिके रचपाविबकको लजे बारा दरवारके १३०० ब०
मिलता है । लस परगनेमें ३ गांव सोफरी है ।
राजम मति लजे प्रति बरम ३०० ब० देना पड़ता
है । वोबानिरेके भी १० ग्राम लसके लक्ष्याबानिमें है ।
लसके बिजे लजे शिबिया मजाराके ११८ ब०
मिलता है । सुदयोके साय लस सबक विपटोकी जो
सिवा पट्टे हुयो, लसमें चंगरेक बानिन् है ।

काशीन (सं० श्लो०) लताविधिय एक वेल । बरक
एक लक्ष्मणता है । लसके पत्र २ । ३ बरक दोबं
बोते हैं । प्लासु न-वेज मास पखोमें ईपल कटितुबक
पुद पुद पुप मिबलते है । वेमाप ल्केल मास पत्र
लसकेका समय है । काशीन लस-भारत, मज
भारत और प्लासु मप्रति देगमें लसक होती है ।

काशीमिठी (सं० श्लो०) बिबकभृतिका बिमिद,
बिबको मडो । बरक बरक बोनेके काम धाती है ।
काशीमिच (सं० श्लो०) मरिच गोकमिच । बरक लजे
मोठे दोने प्रकारके मसाकेमें पड़ती है । लसकेको ।

काशीमिर्जा—एक हिन्दुजानी वेधक कपि । कप्यागन्ध
प्लासके बनये रायबानरोडन रायकप्यद्रुम नामक
पत्रमें कनको बरिता लक्ष्मण हुयो है ।

काशीसुजा—दाधिबान्यबासी पत्रमदाबाद बिदरके
ब्राह्मणबंशीय शिव राजा । १३२० ई० को लसके
मको पमीर बरदीने लजे दूरीमूत कर लजे राज्य
पश्चिमारे बिबा था ।

काशीय (सं० श्लो०) काकल लक्ष्मणके लजेद्रु, काक
बानि भर्ष वा काक-क । उदाहः । का १ । २ । १३३ । लक्ष्म
चन्द । ३ नामविधिय, एक लजे । बरककेको ।

काशीयक (सं० श्लो०) काशीय लार्थ-कन्, काशीयमि
कापति वा काशीय-के क । १ योतवक लुगमि काक
बिमेय बिबो कप्यडा पुग्यद्वार पोका सुकम्बर ।

इसका संस्कृत पर्याय—जायक, कालानुसार्थ, कालिय, वर्षक और कान्तिदायक है। २ कृष्णचन्दन, काला चन्दन। उसे संस्कृतमें कालीय, कालिक और हरि-प्रिय भी कहते हैं। (पु०) इदारुहरिद्राविशेष, एक दारु-हस्तदी। ४ शैलज नामक गन्धद्रव्य। ५ कालिय नाम।

कालीयका (सं० स्त्री०) दारु हरिद्रा, दारु हस्तदी।

कालीयकचोद (सं० पु०) कुद्दुम, रोरी।

कालीयागुरु (सं० स्त्री०) कृष्णगुरु-काला अमर।

कालोरसा (सं० स्त्री०) कदली छल, केलीका पेड़।

कालीधर (हिं० स्त्री०) लताविशेष, एक वन। एक

सिक्किम, आसाम, ब्रह्म आदि देशोंमें उत्पन्न होती है।

पत्रकसे नीलवर्णक निकलता है।

कालीशङ्कर भट्टाचार्य—एक प्रसिद्ध नैयायिक। उन्होंने जगदीश एवं मथुरानाथविरचित नव्य न्यायग्रन्थसमूह पर कौटपत्र तथा टीकाकी लिखा है। आजकल कालीशङ्करके निम्नलिखित ग्रंथ मिलते हैं, अनुमान-जागदीशकौटोड, अनुमितिकौटोड, अनुमानमाथुरीकौटोड, अवच्छेदकत्वनिरुक्तिकौटोड, असिद्धसिद्धान्तग्रन्थकौटोड, असिद्धपूर्वपक्षकौटोड, उदाहरणलक्षणकौटोड, उपनयनकौटोड, उपाधिपूर्वकौटोड, उपाधिसिद्धान्तग्रन्थकौटोड, कूटघटितलक्षणकौटोड, कूटाघटितलक्षणकौटोड, तृतीयमिश्रलक्षणकौटोड, पक्षतापूर्वपक्षग्रन्थकौटोड, पक्षतासिद्धान्तग्रन्थकौटोड, पक्षलक्षणकौटोड, परामर्शपूर्वपक्षग्रन्थकौटोड, पुच्छलक्षणकौटोड, परामर्शसिद्धान्तग्रन्थकौटोड, प्रतिज्ञालक्षणकौटोड, प्रथमचक्रवर्तिलक्षणकौटोड, प्रथमनिरयलक्षणकौटोड, वादसिद्धान्तग्रन्थकौटोड, विशयनिरुक्तिकौटोड, सत्प्रतिपक्षसिद्धान्तकौटोड, सव्यभिचारपूर्वपक्षग्रन्थकौटोड, सामान्यनिरुक्तिकौटोड, सिद्धव्याप्तिकौटोड, जागदीशकौटोडटीका, तर्कग्रन्थटीका, माथुरीटीका।

कालीशीतला (हिं० स्त्री०) शीतला रोगविशेष, किसी किस्मकी चूचक। उसमें कृष्णवर्णव्रण निकलते, जो रोगीको बहुत खुजलाते हैं।

कालीसिन्धु—मध्यप्रदेशकी एक नदी। यह विन्ध्य पर्वतसे निकल आदगांवके निकट चम्बलमें गिरी है।

कालीहर (हिं० स्त्री०) छुद्र हरीतकी, छोटी हर।

कालुघोष—एक ब्रह्माभी वीर, उन्होंने भरतपुर अध-

रोधके समय अंगरेजोंको फौज घटत मारो जाने पर जेठरलकी पोगाऊ पणन यह क्रिया था। समरमें विजयी होनेपर सरकारने उन्हें २००००) २० पुरस्कार दिया। यह अति धार्मिक, दयानु, उदार और वीर थे।

कालुराय—ब्रह्मानके एक ग्रास्य देवता। ब्रह्मालमें कालुराय और दक्षिणराय दो ग्रास्यदेवता पूजे जाते हैं। यह धनदेवता हैं। धनके निकट राह किनारे पेड़की जड़में मृगमय देहशून्य मनुष्य मस्तक प्रतिष्ठित कर उनकी प्रतिमा स्थापना की जाती है। उस प्रतिमाके निकट मृगमय व्याघ्र और कुम्भोरकी मूर्ति भी रहती है। पूजामें छाग और हंस धनि देते हैं।

रायमन् और दक्षिणराय देवता।

कालुष्य (सं० स्त्री०) कलुषण्य भावः, कलुष-घञ्। १ कलुषता, मैल। २ अशुभति, निपाक।

कालू (हिं० स्त्री०) मत्स्यविशेष, सीपकी मछली, जोना कौडा।

कालुषु—ब्रह्मालको तैली जाती। इस जातिमें कुछ लोग विद्वान भी हैं। साधु, सेठ आदि जातिके उपाधि होते हैं। कोई इन्हें अविद्य, कोई वंश और कोई हीन शूद्र कहता है। आचार विचार अच्छा है।

कालुतर (सं० त्रि०) कलुतरै तन्नामकदेशविशेषे भवः, कलुतर-अण्। एषादिभ्यः पाठः। १। २। ३। कलुतर देश जात, कलुतरके सुनालिक।

कालुपन्थी—एक धार्मिक सम्प्रदाय। एक समय काल नामक कोई कहार रहा। उसने अपना पन्थ बनाया था, जिसका नाम कालुपन्थ पड़ा। कालुपन्थके अनुयायी हो कालुपन्थी कहलते हैं। इस पन्थमें प्रायः चमार, सेनी, गडरिये आदि पाये जाते हैं। युक्त प्रदेशके मिरठ जिलेमें ३ लाख कालुपन्थी रहते हैं।

कालिज (सं० त्रि०) नियत समय पर उत्पन्न वा उत्पादित, ठीक यज्ञ पर पैदा होने वा क्रिया जानेवाला।

कालिज (अ० पु०) कालिज देवी।

कालिय (सं० स्त्री०) कं सुखं आलियं आदियं यस्मात्, इडुव्री०। १ कालीयक काष्ठ, एक पौली खुयवृदार लकड़ी। २ कुद्दुम, रोरी। वलायै रक्षाधारिख्ये हितम्

ठक । १ पक्षत् दिव । ३ कृष्णचन्दन, काशला चन्दक ।
१ हरिचन्दन । (पु०) काकाया पपकाम । १ देव्य
विशिय एक दानव । ७ दाहहरिद्र, दारुचमरी ।
८ कुङ्कुम, कुसा । ९ कामला रोममिद पांखकी एक
बोमारो । १० नीलकमल । ११ मिष्टानमतु ।

शास्त्रेयक, कल्लव ईली :

शास्त्रेय (६० पु०) काकप ईश्वर प्रवर्तक, १ तत् ।
१ सूर्य, सूरज । २ मित्र । ३ मकारवर्ष । ३ अनेक
पक्षिहार ।

शास्त्रेय (६० पु०) काकप ईश्वर १ तत् । १ सूर्य,
पावताव । २ मित्र । ३ मकारवर्ष । ३ वनभूमि
विशिय, एक अंनमी जमीन । बह पक्षावने पूर्वायमे
विमानय पर अवस्थित है । उसीके मन्त्र चम्पलीका
मानवम और यमुनासे दो बड़े नामोंका मूत्र
विद्यमान है ।

शास्त्रेय (सं० श्लो०) कामपशौक ।

शास्त्रेय (सं० श्लो०) सुरामण्ड मरावका भाग ।

शास्त्रेयदित (सं० श्लो०) यथासमयज्ञान, बह्वपर
पेदा विद्या अग्निबाबा ।

शास्त्रेयक (सं० श्लो०) एक तोष ।

"शास्त्रेयक मन्त्रिण" तथा "शास्त्रेयकम्" (भाष्य १२५)

शास्त्रेयदो (सं० पु०) अनेक बौद्ध । बह शास्त्रमुनि
मिष्य है ।

शास्त्रेयसूत्र (सं० श्लो०) शास्त्रे यथाकाले उपसृष्टः,
०-तत् । यथाकाले यथाकाले बहूनि शास्त्रक ।

शास्त्रेयवि (सं० पु०) निमित्त लक्षणा । भूद्वर्तनं प्रकृति
व्यञ्जकालको शास्त्रेयवि कहते हैं । वन ईली ।

शास्त्रेय (सं० श्लो०) शास्त्रे यथाकाले ज्ञान, ०-तत् ।
उपसृष्ट समयमें बचन विद्या बृहद, शो-बह पर बोया
गया हो ।

शास्त्रेय (सं० पु०) १ शोचकाक, बड़ा शोच । २ त्रिप-
मिद एक अक्षर ।

शास्त्रेय— बम्बई प्रांतीय शोमाक्षित पांखमहन त्रिषिका
एक विमान । उसके उत्तर दिशा, पूव बाङ्गिया और
दक्षिण तथा पश्चिम बङ्गोदा है । उक्त विमानके उत्तर
दिशा मन्त्र शोमा और दक्षिण परद नामी नदी

प्रवाहित है । शास्त्रेय नामक दूसरा विमान भी उसके
पाय एकत्र अवस्थित है । दोनों विमानोंके बिच्ये चार
कोनदारी पदाकतें खोर हो घामि हैं । खानिया
नामक एक कातीय बम्बईको मासगुडारी देता खोर
पुष्पिका कार्य कर लेता है ।

२ उक्त शास्त्रेय विमानका प्रधान नगर । बह
पचा० २२ ३० उ० और देश ०३ ११ पू०
पर अवस्थित है । उक्त खानके पश्चिमाय पश्चिमाभी
कुम्हो है । शोचसंख्या प्रायः चार हजार है ।

३ बम्बई प्रेसिडेन्सीके शोमाक्षित बङ्गोदा राज्यका
एक उपविभाग । शोचसंख्या ८९ हजारके पश्चिम है ।
राजपूताना मानवा ऐसके उत्तरे भीतर बसा गया है ।

४ बङ्गोदा राज्यके शास्त्रेय उपविभागका प्रधान
नगर । बह पचा० २३ १३ ३३ उ० और देश ०
०२ ३३ पू० पर अवस्थित है । शोचसंख्या पांच
हजारके कुल कम है । यहां एक हाकन गना एक
खान खोर एक हाकन बना है । राजपूताना मानवा
ऐसके एक देशम भी विद्यमान है ।

शास्त्रेय (सं० श्लो०) १ कृष्णवर्ष खारी, कामापन ।
२ बुर्योको काश्चि । ३ काता जाना ।

शास्त्र (सं० पु०) कल्पे बिचो मन्त्र, कल्प पक्ष, वन मन्त्र ।
१०२२१ । १ हरिद्राविशिय बिचो किष्क को जलही ।
२ मन्त्रघटी । ३ व्याजमन्त्र, वाचका मन्त्र । (श्लो०)
३ कल्पकमन्त्रीय ।

शास्त्रक, वन ईली ।

शास्त्रेयिक (सं० श्लो०) कल्पनाया पावता, कल्पना ठक ।
कल्पनाज्ञान, चन्द्राक्षे निकला बृवा । २ कल्पित, माना
बृवा । शिषो बसुमें चन्द्र बसुके पारोपको कल्पना
कहते हैं । उसो प्रकारके पारोपित बसुका नाम
शास्त्रेयिक वा कल्पित है ।

शास्त्रेयिकता (सं० श्लो०) शास्त्रेयिक्य भाषा, शास्त्र
निश्चलसूटाप । १ कल्पनाज्ञानतत्त्व । २ कल्पितत्व ।

शास्त्रेयिकी (सं० श्लो०) शास्त्रेयिक श्लोप । १ कल्पना
जाता । २ कल्पितता ।

शास्त्रेयव (सं० श्लो०) कल्पसूत्रं कल्पे पक्षीते वा, कल्प
सूत्र इत्यन्तं निदिधे पक्ष । १ कल्पसूत्रवेता । २ कल्प
सूत्र पक्ष्यनकारो ।

कालिय—वंदालके चौबीस परगनेका एक ग्राम । वह कलकत्तेसे २४ कोस दक्षिण गङ्गाके दाहिने कूल पर अवस्थित है । वहाँ वाणिज्य बहुत होता है । समुद्रसे कलकत्ते जाते समय जहाज वहाँ सहज उतारते हैं । कालियक (स० त्रि०) वस्वग्रन्थे उक्तः, कल्प-ठञ् । वेदाङ्ग वस्वग्रन्थोक्त विधानादि ।

कालपी (कालपी) युक्तप्रदेशके जालौन जिलेकी कालपी तहसीलका प्रधान नगर । वह अक्षा० २६° ७' ४८" ४०' और देशा० ७८° ४७' २२" पू० पर जालौन नगरसे १३ कोस पूर्व अवस्थित है । पुरानी कालपीके अग्निक्षोपमें नयी कालपी बनी है । नगर यमुना नदीके तीरे पर्वतके मध्य वशा है । ऐतिहासिक फरिश्ताके मतानुसार ख्रिष्टीय ३३०—४०० गताब्दके मध्य कन्नौजके वासुदेवने कालपीको स्थापन किया था । किन्तु स्थानीय लोग कहते कि कालियदेव राजा उसके स्थापयिता थे । ११८६ ई० को सुहम्मद घोरीके प्रतिनिधि कुतुबउद्-दीनने उसे जय किया । १४०० ई० को कालपी सुहम्मदखान्को दी गयी । जौनपुरके शरकीवंशीय सुसलमान नवाबोंने इब्राहिम नामक किसी नृपतिने अधिकार करनेकी शर्तिमात्र उत्सुक हो पश्चादश गताब्दके प्रारम्भमें दो बार कालपी नगर आक्रमण किया था । किन्तु वह दोनोबार व्यर्थ मनी-रथ हो लौट गये । १४३५ ई० को मालवराज हाशङ्गने आक्रमण कर कालपीको अधिकार किया । १४४२ ई० को शरकी वंशीय महमूद खानने हाशङ्गसे कहना मेला कि उन्होंने कालपीमें जिस प्रतिनिधिकी रखा, वह सुसलमान धर्मके निषिद्ध आचरणमें लगा था । महमूदने उस प्रतिनिधिकी शास्ति देनेके लिये हाशङ्गसे अनुमति ली । तदनुसार महमूद शास्ति देनेके वहाने स्वयं कालपी अधिकार कर बैठे । शरकी वंशीय शेष राजा सुलतान हुसेनके साथ १४७७ ई० को दिल्लीके सम्राट्का एक युद्ध हुआ था । उसमें हुसनके हार जाने पर कालपी नगर शरकी वंशके हाथसे निकल दिल्ली सम्राट्के अधिकारमें गया । फिर सम्राट् इब्राहीमके समय १५१८ ई० को जलाल खान् जौनपुरके शासनकर्ता बनकर और कुछ दिन

पेछे कालपीमें स्वयं स्वाधीन राजा हो ससेन्य आगरे सम्राट्का आक्रमण करने चले । अन्तकी वह हार कर लौट भागे । किन्तु गोंडजातीय राजाने उन्हें पकड़ इब्राहीमको सौंपा था । उसके पीछे मुगल सम्राटोंके शासनकाल कालपीमें अनेक घटनायें हुईं । प्रकवर ग्राहकी टफसाल कालपीमें ही थी । वहाँ ताम्रमुद्रा (पैस) प्रस्तुत होती थी । महाराष्ट्रने कालपीको अपना अड्डा बनाया । १८०३ ई० को नाना गोविन्द रावने कालपीको अधिकार किया था । किन्तु उसी वर्ष दिसम्बर मास वह अंगरेजोंके हाथमें चली गयी । फिर कम्यनीने राजा हिम्मत बहादुरको जो राज्य दिया, कालपी नगर उसीके मध्य पडा था । किन्तु अन्य दिनोंमें ही उक्त राजाके मर जानेसे १८०४ ई० को कालपीमें फिर अङ्गरेजोंका अधिकार हो गया । उसके पीछे एक बार गोविन्दरावकी अङ्गरेजोंने कालपी सौंप दी । किन्तु उन्होंने उसके बदले दूसरे दो स्थान ले लिये, जिससे कालपी अङ्गरेजोंके ही हाथ रह गयी । बल्लभके समय भांसीकी रानी, रायसाहब और वादेके नवाबने वहाँ प्रायः १२००० विद्रोही सेनादल समवेत किया था । अङ्गरेज सेनापति सर ह्यूजेने समैन्य प्रतिकूल यात्रा कर कालपीमें उन्हें हरा दिया ।

यमुना नदी पर कालपीके पुरातन दुर्गका भग्नावशेष देख पडता है । दुर्गका अधिकांश यमुनाके गर्भमें है । नदीसे दुर्गमें जानेका पथ नहीं । दुर्गमें महाराष्ट्रोंके शासन कालकी कई इमारतें देखनेको मिलती हैं । पश्चिममें बहुतसी कबरों और मसजिदोंके चिह्न विद्यमान हैं । उनके वायुकोणमें प्रभावतीका मन्दिर है । वहाँ एक बड़ा बाजार लगता है । वर्षाकालको उस बाजारमें बौद्ध और हिन्दुओंके शासनकालकी मुद्रा विकती है । पुरातन हर्म्योदिके मध्य मदार साहबकी कन्न, गफूरकी कन्न, चोरवीवीकी कन्न, बहादुर शहीदकी कन्न, और चौरासी गुम्बज देखने लायक हैं । फिर दूसरी एक कन्न पर प्रकाण्ड सिंहामूर्ति है । उपरि उक्त स्थानोंमें चौरासी गुम्बज नामक हर्म्य सर्वापेक्षा प्रधान है । उस गुम्बजमें पत्थर और चूनेका बहुत अच्छा काम बना है । उसमें अनेक प्रकारके बेलबूटे

भटे है। जोदोष गौरीके समय बिसवखारकी इम्प्रे-
प्रवाही प्रपन्नित थी, उसी मठके पास खानगी की
जमारतकी भी बराबरी देख पड़ती है। मुख्य सम-
वस्तुकोष है। उसकी एक दिख, बाहरी पोरके नाउने
पर ८२ हाथ दीर्घ पोर ३२ हाथ रुक होगी। मोतरका
खान खरबकी विघात जेधा है। एक पत्र पोर पाठ
पाठके विघातके सब ६४ फुल्ल है। म्दर्योंपर दोनों
पोर ३८ ३८ कर ८८ मिटरगामें लगे हैं। खत चारो
पोर समतल है। मध्यकर्ममें मुख्य बन है। चारो
कोष पर चार छाटे छोटे दूमरे मुख्य देकनेमें बहुत
सुन्दर है। उसकी पोर इच्छियात खरनेके मर्ममें एक
प्रकारका अपूर्व भाव उदय होता है। डीक निर्धन
धिया का नहीं सजना-सजना चौरासो मुख्य नाम कर्तो
पड़ा ? मध्यकर्म चारोस मुख्यकर्म चौरासो मुख्य नाम
पड़ गया जेसा। बड़ पापुलिक नगरकी पश्चिमदिक्
है। नूतन नगरकी पश्चिमदिक् मधियगण्ड पोर तार
नामगण्ड है। बड़ा विनयक व्यवसाय होता है।
योशाकार नामक खानमें सन् १८२२ डिगरोकी एक
शिक्रास्तिथि देख पड़ती है। जिर वही मसीके प्रवेश
द्वार पर सन् १०८२ डिगरोकी पौर ग्रैक पत्रद्वय
मजुरके रूपपर सम्राट् चोरइसिकके राजकालके शाहम
बर्मकी एक खिपि पद्यापि विद्यमान है।

राजा बोरबकने काश्यी नगरमें श्री जन्म लिया
था। बड़ जातिके साध्याके। पड़ने इनका नाम मसैय
दास था। बोरबक सम्राट् पत्रबरेके दक्षिण जन्म थी।

काश्यीकी कोकसंख्या प्रायःक प्रायः सारे पौदड
जकार होगी। बर्माकासकी भांसी पौर खानपुर जामिके
निये पक्षके समुदा पर मोहा वा शितु बनता था।
बहुतमे जेनेके घाट भी हैं। तर्रई जमीरपुर गाँव,
खालीन पौर भांसी जामिके निये कई उत्तम पत्र
कासवीसे निकली हैं। बड़ाने कई, पौर पनात्र खान
पुर मिर्जापुर पौर खानबते मीका जाता है। नदीके
राइ भी पर्मिक पक्ष इत्यथावे जाते हैं। खानवीमें
बड़ियाँ मिलनी बनती है। कायजहा कारखाना भी
है। काश्यीका कायत्र बहुत पच्छा होता है। पड़ने
काश्यीका कायत्र सुप्रसिद्ध था।

खानपुरके बर्मरकी घंटे इच्छिवन विनिनसुका
रेशमे कासवी चोकरगयी है। खानपी जेघन भी है।
बसुनापर पक्षा सुन बधा है।

काश्यीमें एक प्रतिरिक्त सचकारी कमिश्नर
रहता है। कई परधानमें, मुक्तिपसे जाने, पौरबनासय
पोर विद्यालय भी हैं।

काश्यक—बोनतातापामो इच्छितकीकी एक याथा
काश्यक पवनेके वसोड कहते हैं। बड़ जमर, ताम्र, ताम्र,
शिवद पौर तारवित चार जातियोके मज्ज बन्धुतामें
पावक हैं। १६०२ ई० के उम्होने बसत्रान जो राज्य
स्थापन किया था। प्रायः एक यताम् कान उनका
राज्य बना। शेषके काश्यक चीनायोके पञ्चोन जो
गये। तुर्की जमीमत्र (बर्मात् पक्षात् परिमत्र) वा
महामोय चीनदेशक (पश्चिम) पक्षका मङ्गोवीय
काश्यक (बर्मात् पुर्कोन्व शीम) बन्देके समके नामको
उत्पत्ति है। दुयेन बंयका पञ्चापतन चीनेके एक इन
मीको मरके इच्छिव गया पौर शिकनर उद पर्यन्त
पेक पड़ा। उसी बंयके कुछ बंयकर १६०२ ई० के
महाकहके चीन देशके छोटे थे। काश्यक पौर उत्र
बक शीम एक मूल जातिसे उत्पन्न हैं। खानपरिबर्तन
खरनेके बड़ काश्यक बजाव पौर खरबिन जातिके
साथ एक प्रकार मिस मये हैं। बड़ चार पक्षान
याथामें विभक्त हैं। बधा—१ खासकैट वा शिवद—
बड़ युद्ध व्यवसायो हैं। उनको संख्या प्राय ६०००
है। बड़ शिकनर उदके निकट रहते हैं। जिर उनमें
कुछ शीम पधियासक कसकी इच्छिव नदीके तीर काकर
बसे हैं। शेषके इनकी हितोय याथा बन्देके मिस
मयो है। उत्र जातीय दूसरा इन तुरागीय रूपके पक्षा
खान जिकेमें रहता है। २ जमर—बोन राज्यके पश्चिम
सुहरिया राज्यमें उनका वासखान है। उसीके नाम
से बड़ ख्यात भी हो गये हैं। इनकी संख्या प्राय
२००० है। ३ उद्रेट ताम्र वा डीमह। बड़ सुहरिया
कोइ तुरागीय रूपकी इन पौर दक्षिण नदीके तीर वा
थर रहे हैं। उनको संख्या प्राय १३००० है। बड़
पत्रबक इन बजाकेके साथ प्रायः मिस मये हैं।
४ ताम्र—बड़ १६१० ई० के सुहरिया कोइ बधा

नदी तीर रहने लगे। उन्हें आज भी लोग "बल्गावामी" काण्यक कहते हैं।

काल्यक भिन्न दूसरी किसी मद्रोनीय वा तुर्क जातिके तुर्कस्थानवासियोंकी आकृति प्रकृतिसे उनका पूर्ण सौसादृश्य नहीं पड़ता। त्रयोदश गतवर्ष पूर्व जरनाण्डमने छूण जातिकी वर्णना की थी। उसमें साय काल्यकीका ही सम्पूर्ण सादृश्य देखा जाता है। किसी समय छण दक्षिण युरोपमें फैल गये थे।

काल्यक—खर्वकाय, धिम्भूत म्कन्ध, दीर्घ मस्तक, रूपाभ गात्रवर्ण (नातिकृष्णवर्ण), अर्धमुदिननेत्र, सरल निम्नमुख-नासिक, प्रशस्तनासारन्ध्र और कुञ्चित एवं ऊर्ध्वकेश होते हैं। वह सुगन्ध और मधु-लौकीकी मूल जाति गिने जाते हैं। काल्यक भ्रमण-शील, अन्नपृष्ठवासी और बहुरी ही युद्धप्रिय है। वह साधारणतः यवके मत्त पानीमें घोल कर खाते और कुमिय नामक एक प्रकार पानीय (चोटकीके महे दुग्धसे प्रस्तुत) पीते हैं। १८२८ ई० के रुसस्य काल्य-कांकी गिजाके लिये विशालय प्रतिष्ठित हुये थे। उन विशालयोंकी गिजासे वह सभ्य और गिजित और ईसाई बन रहे हैं। किन्तु पतेक काल्यक आज भी बौद्ध ही हैं।

काल्य (सं० स्त्री०) कान्यमेव स्वार्थे षण्, कलघति चेटां वा, कलि-यक् प्रज्ञादित्वात् षण् । १ प्रत्यूष, सवेरा। (त्रि०) २ प्रातःशान कर्तव्य, सवेरे किया जानेवाना।

“प्रमति काल्यमुप्याय चर्क मीदानमुत्तमम् ।” (रामायण, १।३३)

काल्यक (सं० पु०) काले साधुः काल-यत् स्वार्थे क्न् । आसहरिद्रा, कञ्ची हलदी।

काल्या (सं० स्त्री०) कालः प्राप्नो ऽस्याः, काल-यत् टाप् । १ गर्भयच्छणप्राप्तकाल रजस्रला गी, उठी हुयी गाय, उपका अपर संस्कृत नाम उपसृष्टी है। २ प्रतिवत्सर प्रसवगौना गी, हर साल व्यानेशानी गाय।

काल्यायक (सं० स्त्री०) कल्याणस्य भावः, कल्याण वुच् । इन्द्रमोहादिभ्यः पा १।१।११। कल्याणता, भलाईका भाव।

काष्ठाग्निनेय (सं० पु०) कल्याण्योपपत्यं कल्याणी

ठक् इतडादेमद्य । कल्याणदीनाम्निष्, पा १।१।१। १२१।

१ कल्याणोके पुत्र। (त्रि०) २ कल्याणसे उत्पन्न।

काल्यानीकृत (वै० द्वि०) गंजा किया हुआ।

“काल्याणीकृता एव तदिं प्रविष्टाश्च मोरस्य चामुं कल्पयत ।”

(अष्ट०।१।२)

कालि (द्वि०) कल्पकी।

काव (सं० स्त्री०) कविदेवता ऽप्य, कवि-षण् । साम-विशेष। उसके देवता कवि हैं।

कावचिण (सं० स्त्री०) कवचिनां मसूहः, कवचिन्-ठञ् ।

ठक् कवचिण्य। पा १।१।११। १ वर्महारी योद्धगण, सिरह वस्त्रतर पहने हुये लोगोंका गिरोह। (त्रि०) २ कवच-मन्त्रस्वीय, वस्त्रतरके मुताधिक।

कावट (सं० पु०) कर्षट, १०० गादीका परगना या जिला।

कावडा—मद्रानसे रहनेवाली एक जाति। कावडा वीरी करनेवाले कहते हैं। परन्तु उममें बहुतसे लोग खेती आदिके सहारे भी जीविका उपार्जन करते हैं।

कावर (द्वि० पु०) १ अश्वविशेष, एक छोटा बरछा। वह जहाजकी गलछीमें बांध कर रखा जाता है। कावरसे हवेल आदिको मारते हैं।

कावरी (द्वि० स्त्री०) सुही, रस्मीका फंटा। वह दो टोनी रन्धियां बंटनेसे बनती है। जहाजमें उसमें चीरें बांधी जाती हैं।

कावक (सं० पु०) १ पेशक, पक्षु। (त्रि०) २ भयानक, श्लोफनाक। ३ श्लोभक, जोड़का गुनाम।

कावली (द्वि० स्त्री०) मत्स्यविशेष, किसी किस्रकी मछली यह दक्षिणकाल्यकी नदीमें देख पड़ती है।

कावप (सं० स्त्री०) सामविशेष।

कावपेय (सं० पु०) यक्षुर्वेदके मय ऋषि।

कावा (फा० पु०) चक्राकार भ्रमण, चक्र, भांडार। घोडेके गलेकी रस्मी पकड एव आदमी खडा हो जाता और उसे काटनेके लिये अपनी चारो ओर घुमाता है। उसीको प्रायः नाका कहते हैं।

कावाद (सं० पु०) कु कुम्भितः ईपत् वा वारः, कोः काटिशः। वाक्यके द्वारा पकड, जवानी भगडा, चिक्चिक।

कावार (सं० स्त्री०) कं कर्षं काहकोति, क पा- ड
पञ्च । ग्रीवाल, वीवार ।

कावारी (सं० स्त्री०) कावार झील । यथादिच्छम,
वासको बनी जतरो । समवा संकलत पर्याय—जङ्गम
कुटी यो। अमत् कुटी ।

काविराज (सं० स्त्री०) ज्योतिर्विषय एक नगर ।
जर्म ८+ १२+८ पञ्च होते हैं ।

वावी (सं० स्त्री०) कविरियम् कवि-व्यङ्-कोन्-पको ।
अप्यत्पत्नी ज्योः वा १। १। १२। कविराज्यस्योपा, वावारी
ताड्यु रक्षितवाणी ।

काहक (सं० पु०) कुम्भिको इव इव, ईयत् इव
इव वा, को कायेयः । १ कुडुड, सुरमा । २ पक्षवाच
नकवा । ३ पीतमन्त्रक पको, पीको पीटीको विडिवा ।

कावेर (सं० स्त्री०) कव्य सूर्यप्लेव पा ईयत् वेरं
पञ्च पञ्च क्वीतिर्मयत्वात् । कुडम रोरी ।

कावेरक (सं० पु०) उरत नामिनि मोत्रापत् ।

कावेरिका (सं० स्त्री०) कावेरी कावेरी जन्-टाप
ईकारपञ्च प्रकलम् । कावेरी नदी ।

कावेरी (सं० स्त्री०) कं कवसिच वेरं यरीरमजा,
कवेर पञ्च । कवेरः। वा १। १। १२ । १ दक्षिणापञ्चको
एक महानदी दक्षिणतया एक बहा दरावा । स
पचा १२ २३ ३० तथा दिया ०३ ३३ ५० पर

कुलग राज्यमें पवित्रवाटके ब्रह्मविरिधि निकल दक्षिण
पूर्वाभिमुख मङ्गिर धविज्जवा पतिशम कर मन्दाक
प्रदेशके मन्धरे बज्रपसावरमें जा मिली है । कुलग
राज्यमें कावेरीको गति पति ब्रह्मवापक है ।
गर्म प्रसारक है । समय तीरनामा इससमाबोध है ।
बहनुर, कुम्भकोल, कवादि, सुत्तिसुत विडिजीन
थोर सुवचंभती नामी कई जनको यात्रागदी हैं ।

कावेरी नदी मङ्गिर राज्यमें पश्च परिदरसे
प्रवेश कर एकवारगो हो १०० गजसे ३०० पत्र
तक जेन गयी है । वहाँ येती वारीके निचे जसके
कई नाले हैं । नालेके बीच बीच बाँध भी बनी
हैं । उनमें बड़ा नामा प्रायः १६ कोष विस्तृत है ।

कावेरीके मध्य पुष्पाभीर्ष विषममुद्ग, चौरङ्गपत्तन
थोर चौरट्ट् वीय विद्यमान है । विषममुद्गके समीप

कावेरी प्रयात है । प्रायः १३० हाय कवेरिसे एक नोबे
को डतरता है । वहाँ इन्द्र मनोमुग्धकर है । विष
ममुद्गसे कावेरीके पपर पार पपत्त हिन्दू रात्रापीके
बनयि हो सुदृष्ट प्रसारित है । वाबो वहाँ येतुने
विषममुद्गके बर्गनको जाते हैं ।

मङ्गिरुमें कावेरीको कई यात्रा है । यथा—
ईमवती कष्पबनोर्ष, कोचपावने, सिंया पञ्चवती,
सुवचंभती वा होसु, होना । वहाँ तक्षोर थोर विषना-
पञ्चोके पमिसुख कई नाले निकल गये हैं । इनमें
कासिकम (कोनद्व) नामक नावा हो प्रचल है ।

मन्दाक विमानमें कावेरीको निम्नलिखित कई
यात्रा हैं—मवानो, नोबेन, धमरावती ।

पमायच, महाभारत प्रकृति प्राचीन पञ्चमें
कावेरी पुष्पातोवा मानो बनी है । हरिचंभके मता
जुधर बुधनायके गाउसे गङ्गाने यरीरार्थमायसे
बुधनायकी कथा वन कथपदक बिवा या । उर्कोवा
नाम कावेरी है । ब्रह्म, मुनिने उगडा पादि-
पदक बिवा । कावेरीके हो बर्गसे ब्रह्मके पुत्र
नामक एक कामिच पुत्रने जन्म लिया । (वत् १४, ५५)
यरीरावनायके कथ लेनेके कारण कावेरी
'पञ्चगङ्गा' नामसे ज्ञात हुयी है । मन्दपुराणोप
कावेरीमाहात्म्यमें लिखा है—

"ब्रह्मतनवा विष्णु माया वा कोऽभ्युद्वाने विताके
प्रादेशके कावेरी नामक क्विरी मुनिको कथा हो कथ
पदक बिवा या । फिर कावेरी मुनिके पानन्दवर्धन
थोर मानवमन्त्रके पावसीपनको बह नदीकपसे प्रवाहित
हुयी ।"

तलकावेरी थोर भागमण्डक नामक प्रथम बहम
खान पर पति प्राचीन दिवमन्दिर है । कार्तिक
माघ सवस्त सवक तीर्थयात्री ब्रह्म मन्दिर दर्शन थोर
कावेरी घलिकमें स्नान करनेकी जाते हैं । दक्षिण
पक्षके कोप कावेरीको "दक्षिणगङ्गा" कहते हैं ।

चिन्मुजानमें जिस प्रकार मिठावान् हिन्दू गङ्गा
स्नान काल महापञ्च पाठ करते हैंके ही टाङ्कपात्रके
हीम कावेरी नदने "कावेरीपूजा" पठत हैं ।

कावेरी-प्रवाहित प्रदेशमें 'पञ्चाकोडम' वा कावेरी

वाले ब्राह्मणोंका वास है। वही ब्राह्मण अम्बा वा कावेरीदेवीका पौरोहित्य करते हैं। वह सकल शायान्धोजी है। अपरापर कीडग ब्राह्मणोंके साथ उनके विवाहका आदान प्रदान नहीं होता।

कावेरीके प्रथम तरङ्गसे देश और शस्त्रकी बचानेके लिये माना खानेमें हिन्दू राजावोंके बनाये पत्थरके बाध मौजूद है। उनमें श्रीरङ्गके निकट प्रधान बाध है। वह एक पत्थरसे बनाया गया है। बाँध १०४० फीट दीर्घ और ४० से ६० फीट तक विस्तृत है। पृष्टीय ४ घं गताब्दसे पहले वह प्रसृत हुआ था। किन्तु आज भी उसे पुराना कह नहीं सकते।

पूजा कान्तको गङ्गा प्रभृति तीर्थ आवाहन करनेके मण्डलें कावेरी नदीका नाम अन्तर्निषिष्ट है,—

“इति च वदन्ते देव नोऽपरि सरथति।

मन्दे हिन्दु कालेति कल्पेऽपि सन्निधि इह ॥” (तीर्थवाहन स्म)

जावेरीका जन स्वादु, अमरुत, मधु, दीपन, दद्रु, कुष्ठघन और मेघा बुद्धि एवं रुचिप्रद है। (राजनिघण्टु)

कुक्षितं अपचितं नरीरं यस्याः। २ घेष्ठा, रण्डौ।
३ हरिद्रा हन्दी।

काव्य (सं० क्ली०) कवेरिदम्, कवेः क्रमं भावो वा, लक्ष्मि-पञ्च । १ कथिताप्रत्य, गायरांकी किताव । २ कुगन, जेम, खुगडानी । ३ बुद्धिमत्ता, अक्लमन्दो । ४ रमयुक्त वाक्य, सीठी बोली ।

“काव्य फलस्यैव इति च ब्रह्मण्डिदि प्रियतरवतये।

सद्यःपरनिष्ठसदे कामास मिततयोपदेशदुके ॥” (काव्यप्रकाश)

यगः, अर्थ, व्यवहारज्ञान, अमङ्गलविनाश, सद्यः धरम निवृत्ति और कान्ता सकलके उपयुक्त उपदेश प्रयोगके निमित्त ही काव्य है।

“चतुरंगकल्पप्रति युवाद्यन्वयिगमयि ।

काव्यादेव यतयो न तन्वद्यन्वयि निवृत्तते ॥” (साहित्यदर्पण)

काव्यमें अत्य बुद्धि ब्यक्ति भी अनायास धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप चतुर्वर्ग फल पाते हैं। अत एव काव्यज्ञा स्वरूप निरूपण करते हैं।

“यान् रमात्मकं वाक्यं शेषान्त्यापकायकाः ।

शक्यं चैतव, प्रोवा मुपाट्टकारोतयः ॥” (साहित्यदर्पण)

रमात्मक वाक्य ही काव्य है। दोष उसका भय रूपके होता है गुण, अलङ्कार और रीतिसे काव्यका उत्कर्ष बढ़ता है।

“कामन्दकिने पञ्चमकवाच्यं काव्यम् ॥” (रमगङ्गापर)

जिस वाक्यद्वारा मनमें विगिय आनन्द आता, वही काव्य कहाना है।

“कविशब्द निमित्तं काव्यम्। सा च मनोहरवस्तुकारकारिणी रचना ॥” (कोट्टम)

मनोहर एवं चमत्कारकारिणी रचनाविगिष्ट कविशब्द द्वारा जो बनता, उसे ही विद्वान् काव्य कहते हैं।

प्रथमतः वह उत्तम, मध्यम और अधम भेदमें तीन प्रकारका होता है। यथा—ध्वनि, गुणीभूतव्यङ्ग्य और चित्रकाव्य।

अतिगद्य व्यङ्ग्यार्थ एवं वाच्यार्थ अपेक्षा ध्वनि अधिक रहनेसे उत्तम, गुणीभूत व्यङ्ग्य अगनेसे मध्यम और शब्दचित्र तथा वाच्यचित्र चटने एवं व्यंग्यार्थ-शून्य पठनेसे अधम काव्य कहाता है।

उक्त काव्य प्रकारान्तरसे द्विविध है—महाकाव्य और मृग्यकाव्य। महाकाव्यमें सर्गवन्धन आयेगा और एक देवता अथवा सद्बर्गजात धीरोदात्त गुण-युक्त एक चतुरिय किंवा एकधंशीय सत्कुलजात बहुतर राजाकी नायक बनाया जायेगा। मृद्गार, वीर और शान्तके मध्य एक रस उसका अङ्गीभूत होगा। समस्त रस एवं समस्त नाटकसन्धि, इतिवृत्त अथवा अन्य सज्जनाश्रित चरित्र उभके अङ्ग हैं। महाकाव्यके वर्ग चार हैं। उनमें एक फल है। प्रथम नमस्कार, आशीर्वाद, वस्तुनिर्देश, खलनिन्दा अथवा सज्जन गुणानुकीर्तन करेगी। सर्गके प्रथम एकविध वृत्तछन्दः हाग और सर्गके शेषभागमें अन्यविध वृत्त द्वारा रचना की जायगी। इस प्रकारके आठ सर्गें लग सकेंगे, जो न बहुत अल्प और न बहुत दीर्घ रहें। किसी किसीके कथनानुसार नाना वृत्तछन्दः द्वारा सर्गरचना भी हो सकती है। उनमें प्रति सर्गके अन्तपर भावी सर्गकी कथा-सूचना रहेगी। सन्यास, सूर्य, चन्द्र, रात्रि, प्रदीप, अन्धकार, दिवस, प्रातः, मध्याह्न मृगया, पर्वत,

वृत्त, वन, सामर, सन्धीय, विप्रसक्त, सुमि, खर्च, पुर, यत्न, रत्नप्रदाय, विवाह, मन्त्र, पुत्रप्रसादि महाकाव्य-का वर्णनीय विषय है। उस प्रकारको यथायोग्य स्थानमें उचितरित्त खरना पड़ेगा।

माहात्म्यत् काव्यमें दो प्रकारके मीट होती हैं। इन्द्र और काव्य। जो काव्य अमितयत्ने उपबोतो रहते, उनके इन्द्रकाव्य कहते हैं। यथा—नाटकादि। फिर जो काव्य वेदवत् व्यवहारे उपयोगी पाये जायें, वह काव्य कहते हैं। इन्द्रकाव्य—नाटक, प्रकरण, भाष्य व्यायोग, समसंसार, हिन्द, ईश्वर्युग पद्य, योगी और प्रकृत मेहेदि इग प्रकार है। काव्यकाव्य यथावत्मेहेदि विहित होता है। यथाकाव्यके दो भेद हैं—महाकाव्य और अष्टकाव्य। महाकाव्य से कहा और पाप्या-विद्या भेदके दो प्रकारका होता है। वक्तो कीइ चम्पू, विहद और अरुणक नामक तीन प्रकारका काव्यकाव्य मिलता है। (वर्णनरत्न)

याय सुसुदाय काव्य प्रतिबन्धसुखकर, मनो मुक्तकर और रसप्रसादाय होती हैं; रसोपे काव्य या कोचना करनियर पद्य किसे याव्यकी पानोचनका दृष्ट्या नहीं चलती। जिसे इन्द्र कविने कहा है—

“कामेन रचये मन्त्रं काव्यं वीरिन रचये।
बोलेन कोपिकावेन श्रीनिवासेन सुतयम् ॥”

काव्यके नीतयाज्ञ उद्योतके काव्य, श्रीविवासे उद्योत और सुसुदाये श्रीविलास विनय ही जाता है। काव्यकाव्य, परमरत्नरत्न काव्य बन्धकता, काव्यकाम धेनु, नीतमङ्गलविरचित काव्यकीतुक्त, काव्यकीतुदो, काव्य कीतुम, कविचन्द्र एवं विद्यानिधिपुत्र भायवागीय विरचित काव्यकामिका, रत्नपात्र, राजचक्रामणि दीपित, और श्रीनिवासे दीपितरत्न काव्यदर्पण काव्यचन्द्र और योगिन्द्रविरत काव्यदीपिका, बनिब विरचित काव्यनिर्णय काव्यपरिच्छेद मारुतीकवि, विष्णुनाथ महाकाव्य और मन्थट मङ्गल काव्यप्रकाश, राजानक यानन्दकविज्ञत काव्यप्रकाशनिदर्शन, गानिन्द महत्त काव्यप्रदीप, योगिवासरचित काव्य मारुतध्व इण्ठी तथा श्रीमन्मन्विरत काव्यादर्प वागमहर्षा काव्यानुमासल और काव्यानुहार, जिन-

सेनाचार्यकी परलंकारचिन्तामणि, वद्वटका काव्यानुहार, कुम्भकवागम्य, साहित्यदर्पण प्रथमि परलंकार-पत्रमें काव्यका लक्षणादि और विद्वत्त विवरण कियेवत् हुवा है।

(पु०) कवे धनोरपय्य सुमान्, कवि-प्य यन्त्वा। इ मुक्ताधार्य कयना। पारसिकोपे प्राचीन पद्यका पत्रमें यथाचार्य 'खलठम्' नामके कवित हुये हैं। ४ तामसमन्वनीय एक अयि।

“कोपिकाव्य काव्यकेनीतिवत्तयम्।
वीरय वना मन्त्रं वन वन वीरयत् ३। (मार्तण्डेय ११। ३८)
(हि०) इ कवि वा अयिने गुण रचनेयाका जिसमें यापरकी सिपत रहे। १ कविता मन्त्रयोह, यापरके सुताहिब।

काव्यकी (सं० पु०) काव्यय वीर इव। १ पन्थ रचित काव्य, ययना वतकानिवाका को मूर्धुरकी वनायी यापरो ययनी वताता हो। २ चम्पूरु।

काव्यता (सं० श्री०) काव्यय माव काव्य-तत्त। काव्यका लक्षणादि, यापरो वतनेको यत्त। काव्यदेरी (सं० श्री०) काव्योरोराश्री विमेष, काव्योरोको एक रामो। उन्में काव्यदेरीकर नामक विषयिज्ञ कापन किया या। (राजलीयो २। ११)

काव्यमीमांसक (सं० पु०) काव्यय काव्ययाज्ञक मीमांसक, १ तत्। काव्ययाज्ञका मीमांसाकारक, इवम यज्ञाहतका उत्ताइ।

काव्यरचित (सं० हि०) काव्यय रसं वेत्ति, काव्य-रस ठक्। काव्यरचित रसका अनुमनकारी, यावरीका योकोन।

काव्यलिङ्ग (सं० ज्ञो०) पर्यायवाचकविषय। उक्तका साहित्यदर्पणको उक्तय हस प्रकार है,—
“श्रीनिवासेनायं काव्यलिङ्गनाम् ॥”

शुतुका वाक् शोः पदायत्त पर्यात् वाक् वा पदायत्तका शेतु रचनेके काव्यलिङ्ग पत्रहार होता है। यथा—

“वलय वलयकवनि कविने मन् कविनीयं
नेरं रचनीयं किं वन मुक्ताधार्युकारी मनी।
श्रीनि मन्वनायु वरिष्ठाएव पयव वा वना-
कान्ताय कविनी (मन्वनी के देवेन व चम्पूर ॥”

हे प्रिये ! तुम्हारे चक्षु भी कान्तिके सदृश कान्तियुत पद्म जलमग्न हुआ है। तुम्हारे मुखके तुल्य चन्द्र मेघ द्वारा आवरित हुआ है एवं तुम्हारे गमनके अनुकारी गतिविशिष्ट राजहंस भी देखल्यगी हुये हैं। सुतर्ग वस्तु विशेषमें तुम्हारा सादृश्य देख कर जो हम मन्तुष्ट होंगे, विधाता उसे भी सह नहीं सकते।

इस स्थलपर ग्रेष वाक्यके प्रतिपूर्व तीनों वाक्य हेतु हुये हैं। इसीसे वह काव्यनिर्द्ग प्रसङ्ग है।

पदार्थगत काव्यनिर्द्ग इस प्रकार होता है,—

“सदाजिगामिभिर्गन्धलोपटनपदितान्।

न धने विरसा गदा भूमिगमिया इर ॥”

कोई किसी राजाको लक्ष्य कर कहता है, हे राजन् ! तुम्हारे घोटकसमूहकात्क उल्लिखित धूमिराशि द्वारा गङ्गा पहिन्न हो गयी हैं। इसीसे महादेव उन्हें अधिक मार वहनके भयसे मस्तकपर धारण नहीं करते।

यहां परार्थश्लोकके प्रति पूर्वार्ध श्लोकका पद कारण है। इसीसे वह भी काव्यनिर्द्ग अत्रद्वार होता है।

काव्यशास्त्र (सं० श्लो०) काव्यं शास्त्रमिव उपदेशकत्वात् खावरूप शास्त्र, काव्यसे बहुविध हितोपदेश मिनता है। इसीसे काव्यको भी शास्त्र कहा करते हैं,—

“काव्यशास्त्रविनोदेन काव्यो गच्छति धीमताम्।” (छन्द)

काव्यसुधा (सं० श्लो०) काव्यं सुधा अमृतमिव, उपमि० । काव्यरूप अमृत। काव्य अर्थसुखकर होता है। इसीसे उसकी तुलना अमृतसे करते हैं।

काव्यहास्य (सं० श्लो०) काव्येन काव्यव्यवहारेण दर्शनेन वा हास्यं यत्, बहुश्री० । प्रहसन, नकल। अधिकांश स्थानपर हास्यरसका वर्णन रहनेसे उसे सुन या उसका अभिनय देखे अतिरिक्त हास्य करना पडता है। प्रहसन देखो।

काव्या (सं० श्लो०) कव स्तुतिगाने वाद्युक्तत्वात् ख्यत्-टाप् । १ बुद्धि, प्रकृत। २ पतना। वह मायाविनी विविध स्तुतिवाक्य एवं वेशविन्यास द्वारा नारियोंको मग्न कर उनसे शिशुग्रहणपूर्वक मार डालती थी। अन्तकी क्षयने उसका विनाश साधन किया। पतना शब्द काव्यायन (सं० पु०) काव्यम्य शुक्राचार्यम्य गोत्रापत्यम् काव्य-फक्। शुक्राचार्यके पुत्र प्रभृति वंशधर।

काव्यार्थापत्ति (सं० श्लो०) अर्थापत्ति नामक अत्रद्वार। काग (सं० पु०-श्लो०) कागते दीप्यते, काग-पचाशच् । १ दण्डविशेष, कास। (Saccharum spontaneum) उसका संस्कृत पर्याय-इक्षुगन्धा, पोटागल, काम, कागी, काशा, वायसेक्षु, काण्डेक्षु, अमरपुष्पक, कासक, वनहासक इच्छारि, काकेक्षु, इक्षुर, इक्षुकाण्ड, शारद, मिनपुष्पक, नाट्य, दर्भपत्र, लेखन, काण्डकाण्डक, शौर कच्छ-नकारक है। भावप्रकाशके मतमें काग मधुर एवं तिक्त-रस, पाकमें मधुर, गीतल शौर भेदकारक है। उससे मूत्र-स्राच्छ, अश्वरी, दाह, रक्तदोष, ज्वर और पित्तसे उत्पन्न रोग नष्ट हो जाता है। राजनिघण्टु, शौर शब्दरत्नावली ने उसे रुचि, दमि, वल एवं शक्तकारक और अन्ति तथा कफनाशक एवं क्षयकण्डुकारी निम्ना है।

हिन्दुस्थानमें काशकी कांस, कगर, कोस, कुम या कास, बङ्गालमें खागरा, युक्तप्रदेशमें कांभी, अवधमें रर, कुमायमें भांस, पंजाबमें मरकर, राजपूतानामें कागी, सिन्धुमें खान, मध्यप्रदेशमें पदर, मारवाडमें कगर, तेलगुमें रेक्षुगदि, और ब्रह्ममें घेतकियाकिन कहते हैं। वह मोटी और वारही महीने रहनेव ली घास है। काशकी जड़ें दूरतक रेंगते चली जाती हैं। भारतमें वह बहुत मिनता है। फिर हिमालयमें काग ६००० फीट ऊपर तक पाया जाता है। भूमि की प्रकृतिके अनुसार उसकी उच्चतामें भी भेद पडता है। भीगी नीची जमीन् काशका घर है। यहां उसकी फूलती हुयी डालिया १२ फीट तक बढती हैं। वर्षा ऋतु समाप्त होते ही काग फूलता है। हिन्दीके महाकवि तुलसीदासजीने लिखा है,—

“कभी काश सकल मति छाये। ननु वर्षा ऋतु प्रकट हुं टायो ॥”

काशकी जड़ बहुत सूटत लगती है। उसे खेतोंसे निकालना कुछ सरल नहीं। कहने हैं कुछ टिनोमें वह प्राप ही प्राप नष्ट हो जाता है।

काश अधिकतर छानी छपरके काम आता है। उससे रस्सियां और चटाइया भी तैयार होती हैं।

काशकी भैंस बडे चाबसे खाती है। नया काश हाथियोंको भी खिलाया जाता है। भंग जिलेमें वह बहुत होता है। रोहतक जिलेमें घोड़ोंको काग

पीतविद्योवनाहत तिक्ताम्ल चरान्मय ।
 कृषी धूमायन तृपादाशुभ्राक्षिधमा ॥
 प्रतप्त काशमादय श्रीसिंधीष प पट्टति ।
 अ प साग विमस छट निद्योवति च पैतिके ॥" (चरक)

कटुरस, उष्णद्रव्य, अस्तपाकद्रव्य, अस्तरस एवं चार
 द्रव्य भोजन प्रो र क्रोध, अग्नि वा रौद्रताप प्रभृति
 कारणसे पित्त कुपित हो अन्यान्य दीपकी भो कुपित
 कर देनेसे पित्तजकासकी उत्पत्ति होती है । उसमें
 दीर्घ चक्षु पीतवर्ण पड जाते हैं । मुखका आस्ताद
 तिक्त रहता है । स्वर भद्र होता है । वज्रःस्थलसे
 धूम निर्गमकी भांति यातना उठती है । तृष्णा
 लगती है । दाह बढ़ता है । अरुचि मालूम पडती
 है । भ्रम हो जाता है । खासनेके समय मानो
 चक्षुसे ज्योतिः निकलता है । फिर पित्तमिथित
 पीतवर्ण श्लेष्मा गिरता है ।

"दुर्लभित्तिमधुराश्रितधूमविक्षिप्तिते" ।
 वज्र श्रेणान्ति रक्षा कफलासमुत्पद्येत् ॥
 मन्दाश्रित्वाक्षिप्तद्विपोदमोदने ग्गरोरवे ।
 शोमधर्माशामाधुर्लक्ष्य सदशैर्दुर्लक्ष्यम् ।
 बहुल मधु, र श्रिग्धं घन शीतत् कफं तथा ।
 कासमाशो छरग्वत् सप्युर्लभित्ति मन्तते ॥ (चरक)

गुरुपाक द्रव्य, क्लेदकर द्रव्य, क्षिग्ध एवं मधुर
 भोजन तथा दिषानिद्रा, अव्यायाम प्रभृति कारणसे
 श्लेष्मा द्रव वायुका पथ रोकता है । उसीसे श्लेष्मज
 कासकी उत्पत्ति होती है । कफज कासमें अग्नि-
 मान्य, अरुचि, वमन, पीनस रोग और उत्कलेश वटता
 है । शरीरमें भार बोध होता है । रोम हर्षित
 रहते हैं । मुखमें मिष्ट आस्ताद मालूम पडता है ।
 शरीर अरुमन्न हो जाता है । फिर कासके साथ
 मधुर रसयुक्त, सिग्ध और घन कफ बहु परिमाणमें
 निकलता है । वज्रःस्थल कफसे पूर्ण समझ पडता है ।
 खासनेमें कोई वेदना मालूम नहीं पडती ।

"अतिश्रवायामाश्रितुहाश्रमिधुरे" ।
 कृष्णो र वस वायुर्लक्ष्योत्ता कासमात्रहेत् ॥
 स पुषं कासते गुण तत, शीतेत् समोदितम् ।
 कष्टे न कष्टताऽप्यत्र विरुधेनेव चोरसा ॥
 श्लेष्मिस्त्रि तौष्णामिच्छयमानेन श्रुतिना ।

दुर्लभ्ययं न गृहीत भं दपोदाभितादिना :
 पर्वभे दस्वरशामदवावेर्लक्ष्योक्तिः ।
 पारावत इवाशुभ्रत् कासभे गात् ज्योतिश्च ॥" (चरक)

प्रतिरिक्त मैथुन, भारवहन, पथपर्यटन, युद्ध, वेगवान्
 अथवा हस्तीकी पकड उसके वेगरोध प्रभृति कार्य-
 द्वारा रुद्ध भोजनकारो व्यक्तिका वज्रःस्थल आहत
 होनेसे वायु कुपित हो क्षतज कास उत्पाटन करता
 है । उक्त रोगमें प्रथमतः रोगीको सूखी खांसी आती
 है । पीछे कासके साथ रक्त निकलता है । तद्विषय कण्ठ
 और वज्रःस्थलमें वेदना उठती है । विशेषतः वज्रः-
 स्थलमें सूखीवेधकी भांति यातना होती है । शून,
 मन्ताप, मन्त्रिस्थानमें वेदना, ज्वर, श्वास, तृष्णा, स्वर-
 भेद और पारावतके कृजनकी भांति शब्द प्रकाश
 पाता है ।

"विषमभावात्प्रभोज्यातिष्णसादृशे मन्त्रिद्वान् ।
 हृदिनां च चर्मा शून्यो म्पान्द्रो यथो मया ॥
 कुपिता चक्षु कास तुर्लक्ष्यं इत्ययमद्रम् ।
 दुर्लक्ष्यं इति रक्तं शोभेत् पूर्ण पर कष्टम् ॥
 कासमादय उदरं श्यामवर्णं स मन्तते ।
 पक्ष्याट्टपगीरातो वहातो दुर्लक्ष्यं कष्टम् ॥
 प्रसन्न शिग्धवदन, शोमहृत् शून्योचन ।
 पापिनादतयो उज्जो घटावातमध्यकः ॥
 ज्वरो मिश्राहृतिस्तस्य पात्रं कश्चीन्मोक्षिदिषि ।
 भिन्नस पातवर्षत्तं स्वभेदोऽभिनिमित्तत ।
 हृदये हृदय कास, शोधानां देहनामन ।
 माषो वलवता वा सान्ना यावन्नेषं हतौद्रित ॥
 नवी कदाचिन् दिष्टेतामेतो पादशुचिगिरतो ।
 स्यविरापां जराहाण सर्वां याप्य, प्रकीर्तित ॥" (चरक)

विषमभाव अर्थात् न्यूनाधिकरूप भोजन, अनभ्यस्त
 द्रव्य भोजन, अत्यन्त मैथुन, वेगवान् अथवा प्रभृतिके
 वेग संरोध आदि दुष्कार कार्य और घृणा तथा गोरु-
 वगतः अग्नि दूषित होनेसे वात, पित्त एवं कफ तीनों
 दीप कुपित हो क्षयज कास उत्पादन करते हैं । उक्त
 रोगमें देह क्षीण हो जाता है । हरित्त्वर्ण वा रक्तवर्ण
 दुर्लक्ष्ययुक्त और पूयकी भांति कफ निकलता है ।
 खासनेके समय बोध होता, मानो हृदयस्थान गिर
 पडता है । समय समय अकस्मात् उष्णस्पर्श वा शीत

अर्थात् यातना मा म जोतो है। बहू भोजन करने से रोमी दुबल और कम रहता है। मूत्र प्रसव और क्षिप्र तथा पशु प्रियदर्शन समता है। ज्वर एवं पतन सहस्र पत्र जाता है। हृत्वा और विषा पश्चिम परिभाषित होता है। त्रिदोष वा त्रिदोषके कारण ज्वर, पाण्डेय देना पीनस और पश्चिमा प्रादर्य होता है। कभी पतना और कभी कठिन मज निरस्तता है। अरमेद पकारण हुआ करता है।

उक्त पांच प्रकारके आसमें वातज, पित्तज और कफज पात्र है। अतः वायु अभावतः पाण्डेय होता है। किन्तु अयन आस बहुत दुर्बल और शीघ्र पश्चिमे निधे प्राचघातक है। अत्र कल्पान् पश्चिमे अयन आस उत्पन्न होती जो बिबिक्ता अरमेसे माघ मी हुआ करता है।

पतकिंज करानास नामक एक प्रकार कास होता है। वह अभावत भी पाण्डेय है।

रुच्य अक्षिमे वासुत्रय आसमें प्रथमतः वायु नामक द्रव्य समूह द्वारा सिद्ध बन्धि, चौर, मूत्र एवं मांस रसादिसे साय क्षिप्रव पित्र द्रव्य दिन ३ ब्रह्म दिनगात्र पचनेके, स्नेहाम्बु, स्नेह परिषिद्ध और सिन्धु स्नेह प्रदान करना चाहिये। उससे यौके अन्त्यान्ध पीय यदि अत्रहार करना पड़ता है। मजबूत रहनेसे बन्धिबर्मे, अर्थात् जोमेसे भोजनके पूर्व हृतवान, पित्त एवं कफसङ्गुक्त वातज आसमें स्नेह विरिधन देना पड़ता है।

वित्तत्रय आसके साथ अयना नियम अनुसार रहनेसे बलकारक कृतवान द्वारा, किवा महमज्ज मन्धरोपक एवं यक्षिमसुके क्षाय जल द्वारा पचका मुनिजुषाच्छरत तथा रक्षुसेके साथ यक्षिमसु और महमज्जके अक्षयान द्वारा प्रथमतः बलन कराते हैं। बलनद्वारा दोष निःकारित होनेपर भोजन और मज्जर रससुक्ष्म पित्रादि पित्ताना चाहिये। इससे यौके अन्त्यान्ध पीयका अत्रहार कर्तव्य है। किन्तु अयना पदुपन्ध अत्र रहनेसे बलन न करा मज्जरसके साथ त्रिपुण्ड्र चूर्ण द्वारा विरिधन कराना चाहिये। अत्र रहनेसे तित्त रजविमिद्ध द्रव्यसे साय त्रिपुण्ड्र चूर्णका प्रयोग पात्र

अत्र है। अत्र पतना रहनेसे विन्मूत्र एवं मोतस मोन्त्यादि और अत्र चल रहनेसे रुच्य तथा मोतस मोन्त्यादि अत्रहार कराना चाहिये।

अयन आसमें रोगीको मज्जान् रहनेसे प्रथमतः बलन करा शुद्ध करना उचित है। इससे यौके अट्टरक शुद्ध, रुच्य और उक्त यथागु सति धवन करा अन्त्यान्ध पीय अत्रहार कराना चाहिये।

अयन आसमें प्रथमतः शरीर तुष्टिकारक और अग्निदीप्तिकारक द्रव्यादि खिलाते हैं। दोष पश्चिम रहनेसे स्नेह द्रव्यके साथ मज्जर विरिधन देना उचित है। उससे यौके अन्त्यान्ध पीय अत्रहार कराना चाहिये।

विवन श्लोमाक माधारी, पाटका एवं गन्धिकारी पञ्चमूल, पचका आसपर्वी चक्रमर्द, इहती, कण्ठकारी तथा गोचुर पञ्चमूलका क्षाय प्रसुन करा विष्यनिचूर्ण प्रथेयके साथ पान करनेसे वातज कायका अपयम होता है ॥ १ ॥

वायुनामका, इहती, कण्ठकारी वासुत्रयक धार द्राचा समुदायका क्षाय मर्दरा तथा मज्जर सिक्ताकर पीनेसे वित्तत्रय आय प्रथमित होता है ॥ २ ॥

कुष्ठ, कटुपक श्राद्धपट्टिका, मूष्ठी और विष्य कोका क्षाय पान करनेसे अग्निज आस दब जाता है। तत्रिज आस और अयोवेदना मी निराकृत होती है ॥ ३ ॥

देवज आसके साथ पाण्डेय देना अत्र और अत्र रोग रहनेसे विष्य श्लोमाक, माधारी, पाटका, पश्चि कारी, मज्जपर्वी, चक्रमर्द, इहती, कण्ठकारी, तथा गोचुर पञ्चमूलका क्षाय विष्यको चूर्णके साथ पान करना चाहिये ॥ ४ ॥

अट्टक, गन्धक श्राद्धपट्टिका सुष्ठा बना, तथा इरीतकी ककटमूत्री, शिल्पायना, मूष्ठी और देवदास सक्क द्रव्याका क्षाय मज्जर एवं विद्रुके साथ पीनेसे वातज अत्रहारक अत्र निवारित होता है । तत्रिज कण्ठरोग अयोय, मूत्र आस, शिवा पीर अत्रादि उपद्रवकी मी यान्ति देव पड़ती है ॥ ५ ॥

कण्ठकारिका क्षाय विष्यकोचूर्णके साथ पान करनेसे सक्क आसका अपयम होता है ॥ ६ ॥
तामीयादि चूर्ण मरिचादि सममकरचूर्ण

प्रसूति चूर्णं श्रौषधसमूह सर्वविध कासरोगनिवारक है । (चक्रवर्त)

बृहत् रसेन्द्रगुडिका, अमृतार्णवरस, पित्तकासान्तरस, काससंहारभैरव, लक्ष्मीविलासरस, सर्वेश्वररस, नृहाराभ, सार्धभौम, तद्वशानन्दरस, महोदधिरस, जयागुडिका, विजयगुडिका, स्वच्छन्दभैरव, रसगुडिका, रसेन्द्रगुडिका, पुरन्दरवटी, कामान्तकरस, कामकुठार, चन्द्रान्तलीह, चन्द्रामृतरस, अमृतमञ्जरी, कासान्तक, बृहत्सुहृगाराभ और नित्योदयरस प्रसूति श्रौषध समूह कासरोगीकी विशेष प्रवस्था विवेचना कर प्रयोग करना पड़ता है । (रसेन्द्रवासंरह)

पशोकबीज, अपामार्ग, विडङ्ग, सौवीराञ्जन, यमकाष्ठ और विट् लवणका चूर्ण घृतमें मिला रोगीके वसासुधार यथामात्रा लेहन करनेसे कासरोग प्रगमित होता है । उक्त अवलेह खानेके पीछे किञ्चित् द्वागदुग्ध पीना चाहिये । १ ।

विडङ्ग, गुण्ठी, रास्ना, पिप्पली, हिङ्गु, सैन्धव लवण, ब्राह्मणयष्टिका और यवहार समुदायका चूर्ण घृतके साथ यथामात्रा अवलेहन करनेसे कफसंयुक्त घात कास एवं खास, डिक्का तथा अग्निमान्द्य रोग अच्छा हो जाता है । २ ।

दुरान्भा, गुण्ठी, शठी, द्राक्षा, शर्करा और कर्कट-शुद्धीचूर्ण तैलके साथ अवलेहन करनेसे वातज कास थला जाता है । ३ ।

दुरालभा, पिप्पली, सुम्हा, ब्राह्मणयष्टिका, कर्कट-शुद्धी और गुण्ठीका चूर्ण, अथवा पिप्पली तथा गुण्ठीका चूर्ण; किंवा ब्राह्मणयष्टिका एवं गुण्ठीका चूर्ण सुरातन गुड और तैलके साथ अवलेहन करनेसे वातज कास छूट जाता है । ४ ।

शौषधीनी, आमलकी, मधु, द्राक्षा, चन्दन और नील सन्धुक पुष्प सकल द्रव्यका अवलेह कफसंयुक्त पक्ताशर्मे हितकर है । ५ ।

उक्त अवलेह घृतके साथ चाटनेसे वायुसंयुक्त पित्तकाश निवारित होता है । ६ ।

५० किसमिस, ३० पिप्पली और पाच पाव शर्करा सकल द्रव्यका अवलेह बना सबके साथ लेहन करनेसे

वायुसंयुक्त कासरोग अच्छा हो जाता है । ७ ।

दानचीनी, इनायवी, मोठ, पीपल, मिर्च, किशमिश, पिपरामूल, कुठ, नील, मोया, गडो, रास्ना, आमलकी एवं हरीतकीका चूर्ण चीनी और मधुके साथ लेहन करनेसे कास तथा हृद्रोग प्रगमित होता है । ८ ।

पीपल, पिपरामूल, मोठ और दन्निग; अथवा मयूर एवं कुङ्कुटपुच्छकी भूषा तथा यवहार, किंवा महाकाज (इन्द्रवारुणी) पिप्पलीमूल और त्रिपुटा चूर्ण मधुके साथ लेहन करनेसे कफज कास दब जाता है । ९ ।

देवदार, शठी, रास्ना, कर्कटशुद्धी एवं दुरालभा, अथवा पिप्पली, गुण्ठी, सुम्हा, हरीतकी, आमलकी तथा शर्करा, किंवा खदिवा (खान), शर्करा, घृत, कर्कटशुद्धी और आमलकी मधु एवं तैलके साथ लेहन करनेसे वायुसंयुक्त कफज कास निवारित होता है । १० । (वासन्त चिकित्सा १०-२०)

चित्रकमूल, पिप्पलीमूल, गुण्ठी, पिप्पली, मरिच, सुम्हा, दुरालभा, शठी, कुठ, विहकणी, तुलसी, यथा, ब्राह्मणयष्टिका, गुलेचीन, रास्ना और कर्कटशुद्धी प्रत्येकका चूर्ण २ तोला, कण्टकारी ६ और ३२ सेर जलमें काय कर ८ सेर रहने पर फान कर कायमें गुड २० सेर तथा घृत २ सेर एकत्र पाक करना चाहिये । गाढ़ा पद जाने पर उसमें बंशनीचनचूर्ण पाच सेर एवं पिप्पलीचूर्ण पाच सेर डालते हैं । यह अवलेह व्यवहार करनेसे कास, हृद्रोग और गुल्मरोग अच्छा हो जाता है । (चक्रवर्तिका १८-२०)

सैन्धवलवण एवं पिप्पलीचूर्ण ईषदुष्य जलके साथ किंवा गुण्ठीचूर्ण तथा शर्करा अधिको मलाईके साथ सेवन करनेसे कासरोग पारोग्य होता है । १-२

वेरकी गुठलीकी मोंगी दहोकी मलाईके पिप्पलीका वस्त घृतमें तप्त कर सैन्धव लवणके साथ सेवन करनेसे भी कासरोग छूट जाता है । ३-४ ।

अदरकका रस २ तोला किञ्चित् मधुके साथ पानी करनेसे श्लेष्मकास, खास, प्रतिशयाय और कफकी शान्ति होती है । ५ ।

हृदयकासमें पित्त, कफ और धातु सकल चीण चीनेसे कर्कटशृङ्गी, वाय्यालका एवं चक्रमर्दके कटक और दुग्धके साथ यथानियम घृत पाक कर सेवन कराना चाहिये । कासरोगमें सूत्रकी विवर्णता रहने श्रयवा कटसे सूत्र निकलनेपर भूमिकुष्माण्ड वा कटस्त्र और तालगन्धके साथ घृत वा दुग्धपाक कर पिलाते हैं ।

निह, गुह्य, कटी एवं वंचण (कूलेके जोड) में सूत्रग और वेदना रहनेसे लघु घृतमण्ड श्रयवा मिश्रित घृत तथा तैलकी पिचकारी नगाना चाहिये ।

इलायची, दालचीनी और तेजपातका चूर्ण एक एक तोला, पपीलका चूर्ण ४ तोला तथा शङ्कर, किशकिग, माजूफन और पिण्डखजूर आठ आठ तोला सकल द्रव्यसे मधुके साथ वटिका बना सेवन करनेमें रक्तपित्त श्वास काम प्रभृति निवारित होता है ।

(चारमद्र० नि० १ प्र०)

कासरोगके कारण मस्तकमें वेदना, नासा एवं मुखसे जलस्राव, हृदयमें भारबोध प्रभृति उपद्रव रहने पर धूमपान कराना पडता है । उक्त धूम मुखसे खींच फिर मुख द्वारा ही निकालते हैं । इस रोगमें शिरो-विरेचक धूमपान कराने पर एक शराव (कटाहाकार पात्र) में शौषध रख उसमें भाग लगा दूसरे छेदवाने शरावसे टाक सन्धिस्यक्त लेपन कर देना चाहिये । फिर एक छिद्रमें नल द्वारा धूमपान किया जाता है ।

मनःशिला, हरिताल, यष्टिमधु, जटामांसी, मुस्ता और इङ्गदीफल सकल द्रव्यका धूमपान करनेसे वक्षःस्थित श्लेष्म विच्छिन्न हो जाते सर्वविधि कासरोग दूरता है । इस धूमपानके पीछे ईपदुष्या दुग्ध गुडके साथ पीना चाहिये ।

पुण्डरीयक, यष्टिमधु, वण्टारिषा, मनःशिला, मरीच, पिप्पली, द्राक्षा, एला, और तुलसीमञ्जरी पौष एक टुङ्गसे पटवस्त्रमें लगा उसको घृतप्लत करते हैं । इस वस्त्रखण्डसे बत्ती बना उसका धूमपान करनेसे भी कासरोगमें विशेष उपकार होता है । इस धूमपानके पीछे दुग्ध वा गुडका शरवत पीते हैं । मनःशिला, इलायची, मरीच, यवचार, रसाज्जन, नागरमोथा,

वंशका नीस, वेणामूल, हरिताल, पतसीवीज, लाचा और गन्धलण सकल द्रव्य पूर्वकी भांति पटवस्त्रमें लगा उक्त नियमसे ही धूमपान करना चाहिये ।

इङ्गदीत्वक, कण्टकारी, वृहती, तालमूली, मनःशिला, कार्पासवीज और शश्वगन्धा सकल द्रव्य पूर्वकी भांति नियमसे पटवस्त्रमें लगा धूमपान करना पडता है ।

कासरोगीका चतदोप मिटने किन्तु कफ बढनेसे यदि वक्षःस्थल और मस्तकमें कुठाराघातकी भांति वेदना रहे, तो निम्न लिखित धूमपान कर्तव्य है,—

शश्वगन्धा, अनन्तमूल, वाय्यालका और चक्रमर्द सकल द्रव्य पेपण कर पटवस्त्रमें लेपन करना चाहिये, फिर इस वस्त्रसे बत्ती बना उसका धूमपान करना पडता है, इस धूमपानके पीछे जीवनीयघृत पीते हैं ।

मनःशिला, पलाग, वनयमानी, धंशलोचन और शृङ्गीकी पूर्ववत् बत्ती बना धूमपान करना चाहिये । इस धूमपानके पीछे शङ्करका पना, गुडका शरवत या कण्ठका रस पीते हैं ।

मनःशिला और वटकी कच्ची जटा पेपण कर पूर्वकी भांति पटवस्त्रमें लेपन करना चाहिये । फिर उसमें घृत डाल उसकी बत्तीका धूमपान करते हैं । इस धूमपानके पीछे तित्तिरिमांसका रस (शोरवा) पीना चाहिये । खेट, विरेचन, वमन, धूमपान, समभाव भोजन, शान्तिगण्डुल, गेहूं, श्यामाढणका चावन, यव, कौर्दावान कौच (आत्मगुप्ता), मायकलाय, मुह्र एवं कुन्तलकचायका यूप; श्रास्य, जनचर, अनूप तथा धन्व देश जात मास, मद्य, पुरातन घृत, छागदुग्ध, छागघृत, वधुवाका शाक, काकमाची शाक, बंगन, कच्चीमूली, कण्टकारी, काली कसौंदी, जीवन्ती तथा सुषेणाशाक, द्राक्षा, कुन्दरू, मातुलुङ्ग, पट्टममूल, वासक, छोटी इलायची, गोमूत्र, लहसुन, हरीतकी, सोंठ, पीपल, मरीच, लस्य जल, मधु, खीन, दिवानिद्रा और लघु श्रद्धपान कासरोगमें हितकर है ।

तैलादि सनेह द्रव्य, दुग्ध इक्षुरस, तथा गुडजात

करता है। वृक्षका मूलदेश कठोर पडता है। शिखा अंशयुक्त रहती है। पत्र चद्र और सलीर्ण होते हैं। कलियां छोटी, चौड़ी और अधिक फली लगती है। काशमर्दको एक भांडी समझना चाहिये। वर्षा-कालको वह घासफूसमें स्वयं उपजता और अग्रहायण मास पुष्य निकलता है।

वैद्यक मतसे काशमर्द, रोचक, बलकारक, विपन्न, रक्तदोष निवारक, मधुर, वातत्रेपनाशक, पाचक, कुष्ठविशोधक, पिच्छ, घ्राहक, नष्ट और उत्कृष्ट कामध है।

हकीमीके मतानुसार मिर्चके साथ उसकी शिखा पोस कर खिलानेसे सर्पदंष्ट्र व्यक्ति आरोग्य होता है। अन्धनके साथ काशमर्द बांट कर लगानेसे दाद मिट जाता है।

कोई कोई उसका पत्र प्रखनके साथ व्यवहार करते हैं। काशमर्दका पत्र सुखा उसकी बुकनी मधुमें मिला कर दाद वा अन्यान्य घत पर लगायी जाती है। बहुमूलरोगमें उसकी काल जलमें पका पिलाते है। कसौटीको पत्तियां पशु और मनुष्य दोनों खाते हैं। उबालनेसे उसका दुर्गन्ध निकल जाता है। काशमर्दन (सं० पु०) काशं नृदनाति, काश-नृद कर्तरि ल्यु०। काशमर्द, कसौटी।

काशय (सं० पु०) काशिराजके पुत्र।

“काशेसु काशयो राजन्।” (हरिवंश, १९५०)

काशा (सं० स्त्री०) काशते इति, काश-प्रच्-टाप्।

काश दृष्य, कांस। काश देखो।

काशाख्यलि (सं० स्त्री०) कुस्विता शाख्यलिः, कोः का-

देशः। कूटशाख्यली, एक रेशमी रूईका पेड़।

काशि (सं० स्त्री०) काश-इन्। १ काशी, बनारस।

(पु०) २ काशीनगरोपलक्षित देशविशेष।

“यत कर्षं कनपदाभिषेध गदतो मम।

कोषा मद्रा कलिद्राय काशयोऽपरकाशय ॥” (भारत, ६।२।४१)

३ सुष्टि, सूँठ। ४ सूर्य। सूर्योत्तके एक पुत्र। यह

धम्मन्तरिके पितामह थे। (त्रि०) ५ प्रकाशित, जाहिर।

काशिक (सं० त्रि०) काशेरिदं, काशिषु भवो वा,

काशि-ष्ठञ् जिट् वा। १ काशिसम्बन्धीय, बनारसके सुताजिक। २ काशिजात, बनारसका पैदा।

काशिकन्या (सं० स्त्री०) काशिवासिनी कन्या मध्यप०।

१ काशिवासिनी कुमारी, काशीमें रहनेवाली लडकी।

याशीतीर्थमें काशीकन्याओंको पूजने और खिलानेका

विधि है। २ काशिराजकन्या, काशीके राजाकी लडकी।

काशिकच्छ (सं० स्त्री०) काशीका उत्तम मूल, काशीकी

वटिया रूई।

काशिका (सं० स्त्री०) काशि स्वार्थे कन्-टाप्, यहा

काशयति प्रकाशयति ज्ञानं भक्तानाम् काश-णिच्-

ग्वुन्-टाप्। इत्वम्। १ काशी, बनारस। २ मनको

निवृत्ति देनेवाली परमशान्ति लाभकारिणी तीर्थ-

श्रेष्ठ मणिकर्णिका और ज्ञानप्रवाह रूप निर्मल गङ्गा-

विशिष्ट अपनी बुद्धि।

“मनोनिवृत्तिः परमोपगमिः सा तीर्थं चर्वा मणिकर्णिका च।

ज्ञानप्रवाहा विमला दि गङ्गा सा काशिकाऽहं निजम्, धदप ॥”

३ जयादित्य और वामनकृत पाणिनिकी एक हृत्ति।

काशिकाप्रिय (सं० पु०) काशिका प्रिया यस्य, काशि-

कायाः प्रियो वा। काशिराज टिवोदास।

काशिकाहृत्ति (सं० स्त्री०) पाणिनि-व्याकरणकी

व्याख्याका एक ग्रन्थ। किमीके मतानुसार जयादित्यने

प्रथम ४ अध्याय और वामनने शेष ४ अध्याय बनाये

है। फिर किसी किसी प्राचीन हस्तलिपिपर

प्रथम ४ अध्यायकी पुष्पिकामें ‘वामन-काशिका’ लिखा

है। किसी किसी हस्तलिपिकी समाप्ति-पुष्पिकामें

“परमोपाध्यायवामनकृतायां काशिकायां हृत्तौ” लिखा

देख पड़ता है।

भट्टोजिदोहित, रायमुकुट, माधवाचार्य प्रभृति

वैयाकरणोंने काशिकासे जो विस्तर प्रमाण उठाये

जनमें भी वही गड़बड़ है। अमरकोशमें ‘गर्करा’

शब्द साधनेके समय रायमुकुटने जयादित्यके नामसे

(पा २।१०५ सूत्रको) काशिकाहृत्ति उद्धृत को है।

फिर ‘पाण्डुर’ शब्द साधने समय ‘नागाञ्च’ वार्तिक-

सूत्रमें (पा ५।२।१०७) भाषाहृत्तिकारके प्रवादसे

उन्होंने जयादित्यका पक्ष समर्थन किया है।

भट्टोजिदीहितने पा ५।४।४३ सूत्रके हृत्तिकान

जयादित्यका पौर पा ० । १ । २० सूत्रके इतिहास
 वामनका मत पक्षय क्रिया है । उसीप्रकार रावसुकुटनी
 'पञ्चरत्न' ग्रन्थ ग्रहणे काठ पा ८ । ३ । ३८ सूत्र
 का वामनकाशिका इतिहास की है । माधवाचार्यने
 बाहुइतिमीं जयादित्य और वामनका मत पक्षय
 क्रिया है । तत्त्ववैयक उक्त जयादित्यका मत पा
 १ । २ । १८ सूत्रकी और वामनका मत पा ८ । १ । १०
 सूत्रकी काशिकासिं देख पड़ता है ।

इसलिसे महोद्विदोहित, रायसुकुट एव माधवा
 चार्यकी मतमें ३ है १ पञ्चाय पर्यन्त जयादित्य पौर
 ० से ८ पञ्चाय पर्यन्त वामनवद्वैत विरचित है ।

रात्रतरङ्गिणीमें जयादित्य काशमीरके एक विद्यो
 काण्ठी राजा और वामन चर्कीके मन्त्री बनाने गये हैं ।

"द्वैतान्तप्रामाण्य कायचर" पृ. १०१ ।
 "मन्त्रवैत विचर" मन्त्रवैत प्रामाण्य ३ ३२५ ।
 श्रीरविशारदादिपीठात्मकार व. पा. प. १ ।
 इषे वर वती इति व. जयादित्यविरचितः ३ ३२८ ।
 पञ्चरात्र काशिकावर्तन व. श्रीराम चर्की ।
 लोहानुसुवदत्तव्य सुविचार मन्त्रवैतः ३ ३२९ ।
 व. दानीरत्नप्रामाण्य इतिपीठात्मकारवत् ३ ३८१ ।
 श्रीराम चर्कीवत् ३ ३८२ ।
 पञ्चरात्र काशिकावर्तन व. श्रीराम चर्की ।
 पञ्चरात्र काशिकावर्तन व. श्रीराम चर्की । ३ ३८३ ।"

(३४ पृष्ठ)

राजा जयादित्यने नाना देशसे षोडश पण्डितोंको
 महाभाष्यके संप्रदर्शन कराया । उनोंने ग्रन्थप्राप्ति
 औरकाशीके निश्चय ० ध्याकरण पड़ा था । उच्चिन्न
 प्रधान पण्डित और उद्भट्टमठ इनके सम्रापण्डित रहे ।
 उन्होंने 'कुडिनीमत'-प्रथिता दामोदरसुतको प्रधान
 मन्त्रिण प्रदान किया । मनोरथ, गङ्गदत्त, चटक,
 सन्धिमान् प्रभृति कवि इनही समा उक्तक करती
 थे । वामन प्रवृत्ति पण्डित इनके प्रमाख रङ्ग ।

माधवप्रकार जयादीउने ६६० गणकी सि हासना
 रोडक किया था । चर्की और चरक पक्ष की ।

पञ्चायक मोक्षभूषणके मतमें—'काशिकाकार
 जयादित्य एक अतन्त्र काष्ठ रङ्ग की काशमीरका

जयादित्यके पूर्व विद्यमान थे । चीनपरिव्राजक इत्
 मिहूने ६८० ई० (६१२ गण) को चीन भाषाके
 'दक्षिणसमुद्रयात्रा' पुस्तकमें जयादित्य विरचित 'इति
 सूत्र का उल्लेख किया है । यदि इत्सिंहका विवरण
 पकत निश्चय तो ६६० ई० से पूर्व वापिनिह
 तिहार जयादित्य मरे थे ।"

नि शब्दे व विद्यास नहीं आता ठर सक्त पर चीन-
 परिव्राजकका विवरण काचितक सत्य और उनका
 प्रकृत वाचिभावकाय का वा । इचकारके अन्तमें राम
 तरङ्गिणी विरचित कृता पर निर्भर करनेमें निताम्न
 पञ्चाय समझ पड़ता है । फिर भी यदि काशमीरका
 जयादीउने काशिकाहति को निष्ठा था, तो काह्वय
 पण्डितमें उनका कोई उल्लेख क्यों नहीं किया ?
 सदाकत राव्यामिनिष्ठ होमिष्ठ पक्षसे हीवनकासको
 जयादित्यने काशिकाहति बनायी होयी । कारण राजा
 होमिष्ठ पूर्व जयादित्यके सम्बन्धमें काह्वयने कोई बात
 नहीं लिखी । जयादित्य अर्थ पक्ष देयाकरक और महा
 पण्डित थे । उनोंने समय महाभाष्यका पुनसंहार
 पाचित हुआ । वामन उनके एक सचिव थे । उसी समय
 जयितादित्य प्रमाख अन्तर्गत पुत्र चैकराकने वाक्य-
 पदोद्धारिता बनायी । जयादित्यके समयका काशमीर इति-
 हास पठनेसे समझ पड़ता कि वास्तविक उनके
 वाक्यकाय पाचिनिष्ठावरण विधिप पाठत हुआ था ।

जयादित्यने काशिकाहतिके प्रथम १ पञ्चाय
 लिखे थे । दोहे उसके मन्त्री वामनने पञ्चगिष्ठ ३
 पञ्चाय लिख पत्र सत्य है क्रिया ।

काशिकाहतिप्रकाशक पण्डित वामनचर्कीने लिखा
 है—'काशिकाके रचयिता सेन वा बौद्ध थे । इसीसे
 पञ्चरात्रकी भांति काशिकाके प्रारम्भमें महाभाषणक
 क्रिया नहीं गया । काशिकाकारने पञ्चरात्र अन्तमें
 पाचिनिष्ठाका परिवर्तन किया है । यदि वह ब्राह्मण
 रहते तो कभी ऐसा कर न सकते । पा १ । १ । १६ ।
 सूत्रके नीचे बाहुका धामनेपक्षपर सन्धान पक्षमें—
 काशिकाकारने 'वाचिनिष्ठाके पक्षान् कोकायत

• श्रीरामचर्की वरुणकी ३४ पृष्ठ हीचाकार है ।

कृष्णक मन्मानिते' प्रथं प्रगाया है । इस स्थानपर (दानगास्त्रीके मतमें) चार्वं (चार्वाक ?) लोकायत कृष्णक मन्मानित बुद्ध हैं । धर्मानुरागो स्वधर्म-प्रतिपाद्य प्रत्यक्षे प्रमाण उद्धृत करते हैं, वृष्ट वभी चार्वाकमतपर नहीं चलते ।”

कागिकाप्रकाशकका मत युक्तिमद्गत समझ नहीं पड़ता । कागिकाकारने अनेक स्थानमें ब्राह्मण-शास्त्रसे प्रमाण मद्गृह किया है । विशेष एक स्थानपर 'चर्व' और 'लोकायत' शब्दका उल्लेख देख प्रतिवार जो जैन वा बौद्ध वैश्वे कह सकते हैं । पारिणि, कदरणि, जराह और लोकायत म्द देखो । अथादित्य एक परम धार्मिक हिन्दू रहे । राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि उन्होंने विष्णुस्तेय नामक एक विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठित किया था । नकल देखो । कागिकाश्रुतिकी विभिन्न समयमें रचित इडे ट का मिलती हैं उनमें निम्नलिखित टीका प्रसिद्ध हैं—उपमन्युविरचित 'तत्त्वविमर्शिनी', जिनेन्द्र-दुर्धिवरचित 'कागिकाश्रुतिविवरणपञ्चिका', मेखे व-रचितज्ञान 'तत्त्वपदीप', हरदत्तरचित 'पदमञ्जरी' इत्यादि ।

- कागिखगड (० ली०) स्कन्दपुराणका एक भाग ।
- कागिनगर (सं० ली०) कागिरेव नगरम् । कागी, बनारस सिटी ।
- कागिनाथ (सं० पु०) कागी: कागीतीर्थस्य नगरस्य वा नाथः, इ-तम् । १ महादेव । २ कागीके राजा दिवोदास प्रभृति ।
- कागिप (सं० पु०) कागि कागीपुरी कागिदेग' वा पाति रक्षति, कागि-वा-क । १ महादेव । २ कागीके राजा ।
- कागिपति (सं० पु०) कागि: पति, इ-तम् । १ महा-देव । २ कागीके राजा । दिवोदास, धन्वन्तरि प्रभृति कागीके राजा । धन्वन्तरिने कई वैश्वकप्रत्य वनावे हैं । यह आयुर्वेदको शिक्षा भी देते थे ।

कागिपुर (कागीपुर)—युद्धप्रदेगका एक नगर । वृष्ट प्रस्था० २८° २३' ३०" और टेगा० ७४° ५८' ५८" पू० पर सुराटावाट नगरसे २५ कोस दूर अवस्थित है । कागिपुरमें तहसील भी है, जो जैनीशास्र जिन्हेमें लगती है । उमरी पार्वत्यभूमि प्राट्ट और अधिराग जङ्गलसे भरी है । मध्य मध्य लणपुर्ण प्रगन्ता भूखण्ड है । स्थान स्थान पर गस्यादि भी उत्पन्न होता है । तहसीलका परिमाण १८८ वर्गमील है । किन्तु उसमें ८८ मील परिमित भूखण्डपर गण्य उपजता है । लोक-संख्या प्रायः ७५ हजार है । तहसीलमें १ फौजदारी अदालत और २ थाने हैं । कागिपुर नगर प्राचीन कालमें प्रसिद्ध है । उसका भग्नावशेष स्थान स्थान पर निकला है । लोकसंख्या प्रायः २५ हजार है । जैनी-तानमें कागिपुर २२ कोस पड़ता है । वृष्ट एक महा-तीर्थ माना जाता है । १६३८ और १६७८ ई०के बीच कागीनाथ अधिकारी नामक किमो व्यक्तिने उक्त नगर स्थापन किया था । उर्दूके नामसे नगर भी कागिपुर कहाता है । पड़ने वहाँ ४ ग्राम रहे । उन्हीसे एकमें छल्लयिनो देवीका मन्दिर है । वर्तमान कागिपुरमें प्राथ कोस पूर्व छल्लयिनोका पुरातन दुर्ग था । चीन-परि-ब्राजकके म्रमण-हचान्तमें गोविग्नन नगरको कथाका उल्लेख है । प्रद्यतत्वविस् कनिष्ठम साहसके अनुमानसे वृष्ट कागिपुरमें ही अवस्थित था । आज भी वहाँ स्थान स्थान पर उपवन और सरोवर देख पड़ते हैं । एक सरोवरका नाम द्रोणसागर है । मन्त्रय है कि उसे द्रोणाचार्यके शिष्य पाण्डवन खोदा होगा । यह समचतुष्कीर्ण है । एक एक ओर ४ मी हाथ दीर्घ निकलेगा । बदरिकाश्रम तीर्थको जानिवाले उक्त सरो-वरमें स्नान कर प्रागे बैठते हैं । सरोवरके कुल पर अनेक सर्तीस्थान देख पड़ते हैं । फिर उमके पश्चिम कुल पर कई छोटे छोटे मन्दिर हैं । दुर्ग बहुत बड़ी बड़ी ईंटोंका बना है । ईंटे १५ इंच लम्बी, १८ इंच चौड़ी और २५ इंच मोटी हैं । प्रति प्राचीन कालमें वैभो ईंटे बनती थीं, आजकल कहीं देख नहीं पड़तीं । दुर्ग पार्वस्य भूमिसे प्रायः २० हाथ ऊंचे प्राचीर द्वारा वेष्टित है । आजकल

* "इति नन्दे कथानोके, प्रथाइय मितां विष्णुम् ।
 कथाय देया मूला' कथेक च मतां मः ।
 राणा मरणापरकृष्ट विष्णुसहस्रनाम् ।"
 (रासत्ररङ्गिणी, ४ । ४८२, ४८३)

दुर्गका अन्तर्गत स्थित है। पूर्वदिक् पश्चिम तोन तरफ धार है। उत्तरपश्चिम और दक्षिणपश्चिम दोनों दिक् दो ब्यावर दो प्रवेशद्वारका बिक्रम वर्तमान है। दुर्गके ३०० हाथ पूर्व ब्यावारीको या ब्रह्म विनो देवीका मन्दिर है। छोटे छोटे मन्दिरमें नाम नाथ मूर्तिधर, सुन्दरधर, और यज्ञधरको मूर्ति हैं। यह प्राकृतिक बमरु पर्वत है। पुरातन मन्दिर प्रायः मूर्तिका स्तूप पर निर्मित हैं। उत्तर प्रकारके पत्थर स्तूप हैं। उनमें दुर्गको उत्तर दिक् प्राचीनकी और एक प्रकाण्ड स्तूप देख पड़ता है। उसे शीव 'श्रीमकी महा' कहते हैं। ब्यावारीको मन्दिरको पूर्वदिक् का स्तूप 'रामगिर कोर्ग' का शीव' कहता है।

पश्चात्तय घन्टाघड़ी शीव नाम मन्दिराम नामक एक शक्ति कागिपुरके शासनकर्ता रहे। जयों समय उन्होंने आशोकनाथा पवनमन्थन किया। उनके यह पुत्र शिवनाथके राजसूयका कागिपुर शंभरीको पश्चिमकी गया। शंभरीका नाम कागिपुरके राजाको मन्दिरेकी धर्मता प्रदान कर रखे है।

कागिपुरमें एक दातपथ विरिष्णाय है। यह शूलका मोटा कण्टा बनता है, जो ब्यावारीमें काठर बिकता है।

कागिपुर—ब्रह्मके १३ पारमनीका एक मण्डपाम। यह मागीरको ही तोर बन्धनको निवृत्त पदस्थित है। कागिपुरमें गोशालीकी बनानेका एक परकारी कारखाना है। इनको पर्वतमण्डला तथा बिन्नेरकोका मन्दिर भी कहा जाता है।

कागिपुरी (सं० श्री०) कागिरीश्वरी मन्थप० कागो बानारस। (भाग ५३० १५५)

कागिप्रसाद शोक—अनकालके एक विद्वान् पत्रकार। उनके पिताका निवृत्तप्राय और पितामहका नाम तुलसीराम था। ईदहण्डिया बन्धनीके पक्षीन कर्ताको यह तुलसीरामने प्रकृत पद्यं उपाजन किया।

१८०८ ई० को १ वीं पद्यमण्डको उन्होंने कल्प दिया था। १२ वर्षके बयनमें उनकी पद्यपरिचय प्राप्त हुआ। १८२१ ई० को यह रिम्पू काशीमें पढ़ने गये। विष्णु १ वर्षके मध्य ही उन्होंने पद्यो दीयता प्राप्त

की थी। १८२० ई० का उन्होंने एक शंभरीको पद्य लिखा "The young poet's first attempt" फिर भारत-इतिहास (History of British India.) को उन्होंने बहुत पद्यो समालोचना पढ़ाईकोमें बनायी थी। यह गवरलण्ड मन्त्र और पत्रिकादिक् बरनबर्न प्रकाशित हुयो।

काशीर छोड़ समसामयिक पत्रमें पढ़ाईको पद्य विष्णुने की। उनकी देख पढ़ाईर कोम भी सुख हो जाते थे। १८२५ और १८३० ई० के मध्य ही उन्होंने पश्चिम पद्य बनाये। उनके "Hindu Festivals" नामक पढ़ाईको काथ्यमें बगवरा, भूषेको भांडी, ब्रह्मांडको दुर्गापूजा, कोशगर-पुर्विभा, श्यामापूजा, कांतिकपूजा रामदास शोपण्णो रोमबाला और पद्यपद्योयादिका इतिहास तथा उत्तर वर्तित है। ब्रह्मण रिवाजमनने उनकी बहुत प्रशंसा की है। पर्वण्ड पत्रिका नामक किसे पढ़ाईरने "Vistas from India and China." नामक पुस्तकमें कागि प्रसादको पढ़ाईको भी बत कर कवि बताया है।

वर्षमें उन्होंने निम्नलिखित पुस्तक बनाये हैं,—

- 1 Memory of Indian Dynasties containing (a) The Scandiah of Gwalior (b) King of Lucknow (c) The Holkar of Indore. (d) The Nawab of Hyrabad (e) The Gakwar of Baroda (f) The Bhandah of Nagpore. (g) The Nawab of Bhopal.

2. Sketches of Ranjeet Singh.
- 3 " of King of Oudh.
4. On Bengali poetry
- 5 On Bengali works and writers.
6. The Vinon—a tale (उपन्यास)

१८३१। ३६ ई० को उन्होंने " The Hindu Intelligencer " नामक एक बड़ा मासिक पत्र प्रकाशित किया था। यह शब्द इसके अन्तर्गतको और सम्पादन रहे। १२ वर्ष तक यह पत्र निवृत्तता रहा किन्तु १८३८ ई० को बन्धने कारण संवाद-पत्रके विरुद्ध कानून बनानेके बन्द हो गया।

काशिराज साधारण छिनकर कार्यमें भी सम्मिलित होते थे। वह पानरैरी मजिस्ट्रेट और म्युनिसिपालिटीके "जष्टिम ग्रव टी पीस" रहे। १८०३ ई० की ११वीं नवम्बरकी काशिराजका मृत्यु हुआ। काशिराज (सं० पु०) १ काशीके राजा। २ धन्वन्तरि। काशिरामदेव—एक बङ्गाली ग्रन्थकार। उन्होंने बङ्गना पृथ्वीमें महाभारत बनाया है। वह देव वा दास उपाधिधारी कायस्थ थे। उनके पिताका नाम कमलान्त रहा। वह इन्द्राणी प्रान्तके सिद्धग्राममें रहते थे। उनके ग्रंथका रचना-प्रणालीमें समझ पडना कि उन्होंने किसी परिचित या कथक्रमे पुरु पुरु महाभारत लिखा है। कहते हैं १०७५ मनुमें वह जोवित थे। उनको जीवनीका विशेष विवरण विदित नहीं। २ तिथितत्वके एक टीकाकार।

काशिराज (सं० त्रि०) १ कागदणमय, कांससे भरा हुआ। २ काशनिर्मित, कांसका बना हुआ।

काशिराज (सं० त्रि०) काश वाहुनकात् ईष्यत्। प्रकाशगोष्ठा। (भाष्यत, ४। १०। ६०)

काशी (सं० स्त्री०) भारतवर्षके मध्य हिन्दुओंका सर्वप्रधान तीर्थ। उसका संस्कृत पर्याय—वाराणसी, तीर्थरात्री, तपस्वली, काशिका, काशि, पविमुक्त, पानन्दवन, पानन्दकानन, अपुनर्भवभूमि, सद्गावास, महाज्ञान और स्वर्गपुरी है। उक्त नामोंके मध्य काशी, पविमुक्त और वाराणसी ही समधिक प्राचीन है। हिन्दुमें प्रायः बनारस कहते हैं।

शब्द—शिवपुराणोंके मतानुसार—

"कर्मणा कर्षणात् सा वै काशीति परिक्रमते।" (शालव चिन्ता, ४८। ४६)

वहाँ जीव शुभाशुभ कर्मसमुदाय क्षयकर सुक्ति पानमें समर्थ होती है, इसीसे उसका नाम काशी है। स्कन्दपुराणीय काशीखंडके मतमें—

"काशयेत्त यतो श्रीसिद्धनाथो यमोत्तर।

यतो नामा परं चान्दु काशीति प्रथित विभो ॥" (१६। ६०)

उसी वाक्यका अगोचर परम ज्योतिः उक्त क्षेत्रमें प्रकाशमान होनेसे काशी नाम विख्यात हुआ है।

लिङ्गपुराणमें लिखा है,—

"विमुक्तं न मया यदादृतीवाते वा कदाचन।

नन चेतमिदं तदादविमुक्तमिति ज्ञातम् ॥" (२१। ४५)

वह स्थानसे हमसे कभी विमुक्त नहीं अर्थात् हमने उसे न कभी छोड़ा न छोड़ते और न छोड़ेंगे। इसीसे वह पविमुक्त नामसे विख्यात है।

मत्स्यपुराणके मतमें—

"यव मन्त्रिभ्यो गिर्यगविसुक्ते निरन्तरम्।

तत्त्वेव न मया मुत्तमविमुक्तं ततः ज्ञातम् ॥" (१८१। १५)

पविमुक्तक्षेत्रमें हमारा निरन्तर मन्त्रिध्व है। उस क्षेत्रको हम कभी परित्याग नहीं करते। इसीसे वह पविमुक्त नामसे विख्यात हुआ है।

कूर्मपुराणमें कहा है,—

"भूर्भोगे नैव संवत्सरोत्तरे ममानन्दम्।

चदिमुक्ता न परानि मुक्ता परानि चेतया।

अज्ञानमेतद्विद्यमानमविमुक्तमिति ज्ञातम् ॥" (१०। २६००)

पन्तरोत्तमें अवस्थित हमारा पानथ स्वरूप वह क्षेत्र भूर्भोगेके साथ कभी संलग्न नहीं। इसीसे वह पविमुक्त है अर्थात् संसार मायावह जीव उसे कभी देख नहीं सकते। किन्तु संसारके बन्धनसे विमुक्त महात्मा केवल मानव-चक्षुसे उसे देख सकते हैं। इसीसे वह पविमुक्तनामसे प्रसिद्ध है।

काशीमें प्रवाद है कि वरणा नरामक कोई राजा वहाँ राजत्व करते थे। उन्हींके मामानुसार काशीका नाम वाराणसी पडा है।

सुराणम्—शुक्लयजुर्वेदीय गतपथब्राह्मण और कौषीतकी-ब्राह्मणोपनिषद्में सर्वप्रथम 'काशी' शब्दका उल्लेख देखा पडता है। (१) अति प्राचीन समयमें काशी एक विस्तृत जनपद और पवित्र यज्ञभूमि कहकर परिचित थी। कौषीतकी उप०, २। १। १। १ श्लो।

रामायणके समय भी काशी एक विस्तीर्ण जनपद थी। (क्विचिद्भाग०, ४०। २१) उस समय रमणीय तोरण और प्राकारपरिशोभित प्रधान नगरी वाराणसी

• मन्वन्तरपुराणीय ब्राह्मण्य नामक अतिप्राचीन ग्रन्थमें भी काशी-पति वरनारका विवरण मिलता है। (मन्वन्तरब्राह्मण्य ३३। १०६—१२६ श्लोक) किन्तु उस ग्रन्थमें वरनारसे वाराणसी होनेकी कदा गतो लिखी। उन्होंने काशीपुरीमें 'वाराणसी' नामको एक ईकोमूर्ति प्रतिष्ठा की थी, जयापि वह मूर्ति काशीमें विराज करती है।

(१) "पतः काशीः ज्योतिः दणम्" ११। ५। ४। १८।

"यज्ञं काशीनां मरतं सात्तामिव" गतपथब्राह्मण, ११। ५। ४। ११।

आयोराज्यको राजधानी थी। (१) प्रतिष्ठान (प्रवास) पर्यन्त काशी जनपदके पश्चिम में था। (२)

प्राकृतक काशी अजमेरी की वर्तमान वाराणसी का बजारस नामक नगरवा बीच होता है। किन्तु पूर्वोक्त प्राचीन गांधारि द्वारा प्रभावित होता कि पक्षी बड़ नगर उड़दायतन था। बौद्धपरिभाषक प्राकृतिक यानके पञ्चपाठके समझ पड़ता कि ई० पश्चिम यताम् को काशी एक विष्टीक जनपद थी वाराणसी उसका प्रधान नगर कहलाता था।*

किन्तु प्रकृति प्राचीन पुराणमें वर्तमान काशी "काशीपुरी" और "वाराणसी" नामसे परिचित हुई थी है। (विष्णु पुराण ३। २०। १८-२१)

पुराणादिमें काशीपुराको सीमा और परिमाण ब्रह्मसंहार लिखित हुआ है—

"विश्वोत्पत्तु इत्येव पूर्वोत्थितम् च मत् ।
पूर्वोत्थितोत्थीकं इत्येव वक्षिणीचण्डम् ॥
वत्सा वि नदी वारस्य वारस्य चरती तु वी ।
वीचपक्षिचकारस्य वर वैराज्यसिद्धे ॥"

(लघुपुराण १२। ६१-६२)

बड़ क्षेत्र पूर्वपश्चिम दो योजन पायल और उत्तर दक्षिण पार्श्व दोयोजन विस्तृत है। बड़ वरसा नदीके मुख्य नदी पर्यन्त और भौद्यवर्षिकबन्धे पारस्य कर पार्श्वपरके लिखत पर्यन्त अवस्थित है।

विर वसके प्राग्—

"विश्वोत्पत्तुत्थीकं च इत्येव" इत्येव पश्चिमम् ।
वत्सा वीचपक्षिचकारस्य वर वैराज्यसिद्धे ॥
वाराणसी नदी वारस्य वारस्य चरती तु वी ॥

(१२०। १८-२०)

मिथपुराणको सप्तकुमारार्चितामें कहा है—

"वैराज्यसिद्धे च वारसा च वत्सा ।
वत्सा न नदी वत्सा वत्सा वत्सा ॥" (१२। १११)

वरसा और गङ्गादि (पश्चिम) नामों से नदी उस क्षेत्रको पश्चिम नगर आश्रयसे मिल गयी है।

मिथपुराणको प्राणसंहितामें लिखा है—

"वत्सा वत्सा" वर वैराज्यसिद्धे इत्येव ॥" (१८। २०)

नामपुराणमें बताया है—

"दो वी वत्सावत्सा इत्येव वरवत्सा वत्सा ।
वत्सा वत्सा विष्णु वत्सावत्सा विष्णु ॥
वत्सावत्सावत्सा विष्णुता वत्सावत्सा ।
विष्णुता वत्सावत्सा वत्सा वत्सावत्सा ॥
वत्सावत्सा विष्णुता वत्सावत्सा वत्सावत्सा ।
वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा ॥
वत्सावत्सा वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा ॥
वत्सावत्सा वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा ॥
वत्सावत्सा वत्सा वत्सा वत्सा वत्सा ॥

(१। १४-१५)

इस पवित्र ब्रह्माण्डके मध्य प्रयागमें हमारे (विष्णु के) चंद्राग्रत पश्चिम पुरुष योगदायी नामसे निरन्तर बाल करती है। उसमें दक्षिण पश्चिमे सर्व पाप प्रमाथिनी यमहारी वत्सा और वाम पश्चिमे पवित्र नामों विष्णुता द्वितीय नदी निःसृत हुई है। बड़ समय नदी को ब्रह्मय पूजनीया है। इनके मध्यप्राथमिक योगदायी महादेवका सर्व पापनाशन विनीतके मध्य सर्वसेठ तीर्थस्यपुत्र सेन है। बुद्धिवात मोक्षदायिनी पुष्करमयी वाराणसी नदी के अग्रतमें विराजित है। वेसा अज्ञान पाशाघ्न, पाताल वा भूमण्डल सर्वों मिल नहीं सकता।

(१) "विष्णु वत्सा वत्सा वत्सावत्सावत्सा ।
वत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ।
वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ।
वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ।
वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ॥"

(२) "वत्सा वत्सा वत्सा वत्सावत्सावत्सा ।
विष्णु वत्सा वत्सा वत्सावत्सावत्सा ॥
वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ।
वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा वत्सावत्सा ॥"

(३) "वत्सावत्सा वत्सावत्सा ॥ १८-१९"
वत्सावत्सा वत्सावत्सा ॥ १९ वत्सा वत्सा वत्सा ।
• Po-Kwo-Ki, Ch. XXXIV, translated by Lal-
Dey, p. 210.

काशीखण्डमें कहा है—

“कश्चि वरणा यत्र चेतःपादवी वृत्तिः ॥

वाराणसीति विख्याता तदारण्य महासुते ।

वदन् वरणायाश्च सङ्गं प्रायः काशिका ॥” (१० । १८-१०)

सत्ययुगमें जिस दिन काशीचित्र रक्षा करनेके लिये अग्नि और वरणा नदी निकली, हे सुनि ! उसी दिनसे काशिका वरणा और अग्नि नदीका मङ्गल नाम कर 'वाराणसी' नामसे विख्यात हुयो है ।

किसी किसी पाश्चात्य पुराविदके मतमें वरणा और अग्निके मध्य रहनेसे ही काशीपुरी वाराणसी नामसे प्रथित हुयी है । किन्तु यह मत नितान्त आधुनिक है* । किन्तु हमारे विवेचनमें काशी नितान्त आधुनिक नहीं ठहरती । पुराणकी कथा क्रोड उपनिषद्की बात मानते भी एक पौराणिक मत समझिके प्राचीन समझ पडता है । यथा,—

“यत्र हि जलो प्रादेव नृदमसादिषु सृष्टकारकं इन्द्र व्याचष्टे, धेनासावस-
तो मृदा बीजो मरुति, तदाऽग्निमुत्तमेषु निव्रजेत ; अविमुक्तं न विमुच्येत्
एवमेवेतद् व्याचरन्त्यः । भोऽग्निमुक्तं क्विन् प्रतिष्ठित इति । वरणायां
नाम्ना च मध्ये प्रतिष्ठित इति । वा वै वरणा का च मागोति । सर्वाग्निद्रिय-
कृत्वा दीवान् वायवतीति तैम वरणा व्रततीति । सर्वाग्निद्रियकृतान्
पापान् नामयतीति तैम नामो मयतीति ।” (काशीपुराणविद १-२)

इस स्थानपर जन्तुके मरण काल रुद्र “तारकवज्र” नाम कीर्तन करते हैं । जिस हेतु उसके द्वारा जीव असृतत्व लाभकर मोक्ष प्राप्त होता है । अतएव इस अविमुक्तचेष्टमें वाम करना एकान्त कर्तव्य है ; अविमुक्तको कभी छोड़ना न चाहिये । हे वाचवस्त्र ! हमने जो कहा, उसे सत्य समझियेगा । वह अविमुक्त क्षेत्र कहां प्रतिष्ठित है ? वह वरणा और नागी टो नदीके मध्य अवस्थित है । किसीकी वरणा और किसी को नागी कहते हैं ? समस्त इन्द्रियकृत दोषरागि निवारण करनेवालीको “वरणा” और समस्त इन्द्रिय-कृत पाप नाशकरनेवालीको “नागी” वदते हैं ।

[जावाकटोपिकामें नारायणने विद्या है—

“एतद् वरणायां नाम्ना चिति ददा म्नाम् —

‘वमो वरणायां मध्ये पथको गं महरम् ।

ममा मरपमिच्छति वा कदा इतरे जनाः ।’

वरणायासीगन्दी, प्रसिद्धिनिमित्तं पृथ्वति ।”

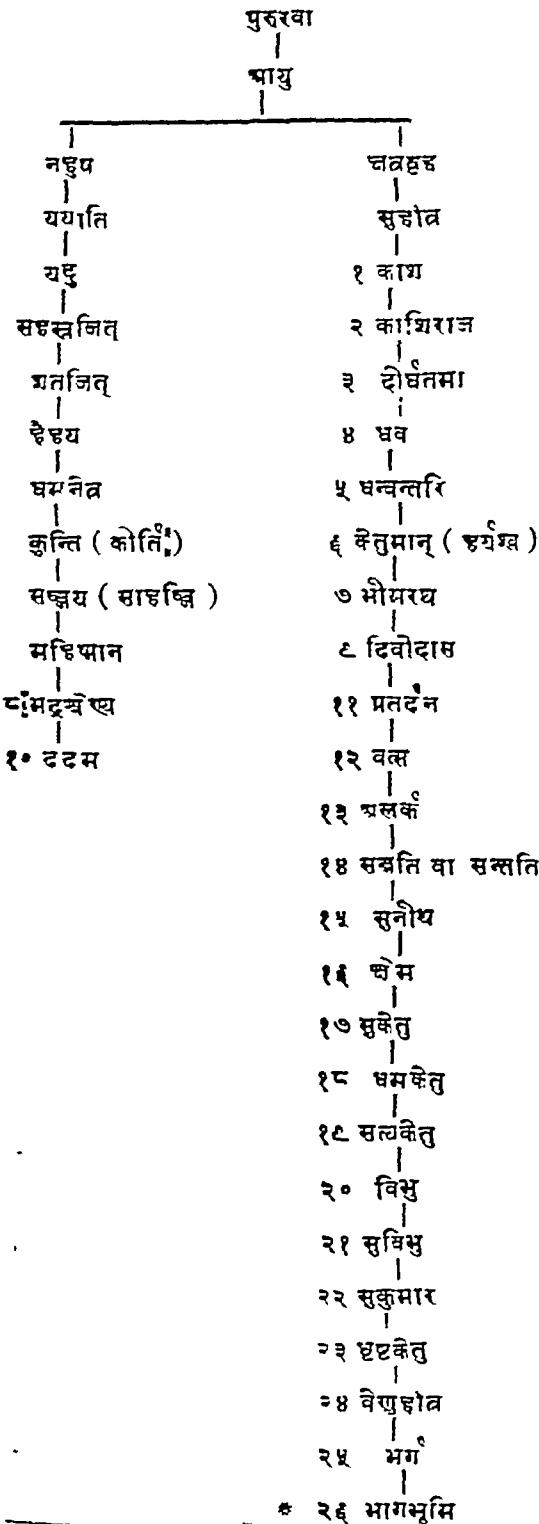
बाहोंके आधिपत्यकाल शाक्यसिंहने उक्त वाराणसी प्रदेशके अन्तर्गत ऋषिपत्तन मृगदाय नामक स्थानमें जाकर धर्मोपदेश प्रदान किया था । (अग्निविमर २५ प०) यहाँ तक कि ख्रिष्टीय पठ गताब्दके गेय भाग चीन-परिव्राजक युयनचुयाङ्ग जब वाराणसीमें वीथ तीर्थ दर्शनको गये, तब वाराणसी-राज्य प्रायः ३३३ कोस (४००० नि) और वाराणसी नगरी छेड़ कोस (१८-१८ नि) दीर्घ तथा प्रायः पाधकीप (५ । ६ नि) विस्तृत थी ।

अब वर वादगाढ़के समय बनारस एक स्वतन्त्र सरकार रहा । प्राईनअकबरीमें लिखा है—“बनारस सरकारका परिमाण ३६८६० बीघा है । ८ मइल इस सरकारके अधीन हैं । प्रधान स्थान अफराद, बनारस नगर और उसका सज्जित स्थान बियानिमी, पन्डरडा, कसवार, कतेहर, हरह्या हैं ।”

आजकल भी बनारस एक स्वतन्त्र विभाग है । यह युक्तप्रदेशवाले षाटके अधीन है । एक कमिगनर उसपर तत्त्वावधान रखते हैं । भूमिका परिमाण १८३३० वर्ग-मीन है । आजमगढ़, मिर्जापुर, बनारस, गाजीपुर, गोरखपुर, वसती और बलिया जिला उस विभागके अन्तर्गत हैं । उनमें बनारस जिला ८८८ वर्ग मीन विस्तृत है । उक्त जिलेकी उत्तरसीमा गाजीपुर तथा जौनपुर, पूर्व शाहाबाद और दक्षिण एवं पश्चिम मिर्जापुर है । प्रधान नगर बनारस (काशीपुरी) है । आजकल उसका आयतन ३४८८ एकर मात्र है । वह अक्षा० २५° १८ ३१' उ० अर देशा० ८३° १' ४" पू० पर अवस्थित है । उक्त नगर हिन्दू जातिके निकट सुपवित्र महापुण्य-प्रद काशीतीर्थ नामसे परिचित है । युक्तप्रदेशमें बनारस सबसे बड़ा शहर है । अक्षय-रुहेलखण्ड रेलवेका टेशन बना है ।

* Rev. Staring's Sacred City of the Hindus, intro by F. Hall, p XVIII; Fürher's Archaeological Survey Repts; N W. P. Vol. II, p 156.

* अंग परिव्राजकोक दो-दो-जि-म-वाराणसी है । See Beal's Records of the Western Countries, Vol. II, p. 44 n.



ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है कि काशवंशीय २४ राजाओंने राजत्व किया था * किन्तु इसका कोई विवरण नहीं मिलता भागभूमिके पीछे कौन राजा हुआ।

बुहदेवके समय वाराणसीमें देवदत्त नामक एक राजा रहें।

सम्भवतः बौद्धधर्म बढने पर काशीराज्य मगध-राजके हाथ लगा।

ब्रह्माण्डपुराणमें भी बताया है—

“कटावि शक्यत मासा प्राथीता, पथ ते सुता।

इत्ता तेषां यथा मृत्युष शियमती भविष्यति।

वाराणस्यां सुर म्याप्य प्राप्स्यति गिरिब्रजम्।”

(उभेदशतपाठ १८ प०)

अनन्तर प्रद्योतवंशीय पञ्चपुत्र एक सौ षड्तीम वर्ष राजत्व करेंगे। उसके पीछे शिशुनाग इनका निखिल यशः हरण पूर्वक राजा होंगे। वह वाराणसी राज्यमें स्वीय पुत्रको संस्थापित कर (मगध-राज्यस्थित) गिरिब्रजको चले जायेंगे।

बौद्ध ग्रन्थमें काशीराज ब्रह्मदत्तका इनाम मिलता है। किन्तु यह मालूम करनेका उपाय नहीं कि स समय उन्होंने राजत्व किया था। मगधराजगणके अधःपतनकाल काशीराज्य गुप्तराजगणके अधीन हुआ। उस राजवंशके मध्य केषल वान्वादित्यके पुत्र इकटादित्यका नाम मिलता है। * अनुमान ई० सप्तम शताब्दको वह काशीके राजासन पर चारुद्वय है। उससे पीछे काशी सम्भवतः कनौजराजके शासनाधीन हुयी। ई० दशम शताब्दकी कलचुरि और पाल-वंशीयोंने मिल कर कनौजराज्य आक्रमण किया था। उस समय काशीराज गौडवाले पालवंशीय राजाके अधिकारभुक्त हुआ। काशीके पालवंशीय राजा सभी बौद्धधर्मवलम्बी थे। उनमें गौडाधिप महीपाल ही काशीके ३यम पालवंशीय राजा रहें होंगे। वाराणसीके निकटवर्ती सारनाथमें महीपाल

* “काशे याम्पु पशुभिर्जटावि शतं तु शुक्याः ॥”

(मत्स्य २०२। १४)

+ Fleet's Inscriptions of the Early Gupta Kings, p 246.

* काशीमें राजत्व करनेवाले राजाओंके पूर्व १। २ इत्यादि सख्या दी गयी है।

राजकी १०१३ विक्रम संवत् (१०२६ ई०)को प्रदत्त एक शिलालिपि मिली है । १० मन्वीपानके पीछे उसके पुत्र खिरपाल चौर बलवन्तसिंह (१०८३ ई० तक) राज्यका भी नामो बोध पानीके पत्रिधारमें रही । ११८४ ई० को कनौजराज जयचन्द्रके पराभूत होने पर महापुरुष गोगोमें बाराबलीके पश्चिमुख यात्रा की । उन्होंने प्रायः सप्तश्राद्ध चिन्मूर्तिपर तोड़ डाली ।

पकवर बादगाहके समय सिर्वा चीन बिनौच बनारसके पीछदार थे । उस समय कायो राजाकावाट लुकेके पचीन थे । पीरबुद्धिने बाराबली बलन पर मुहम्मदाबाद नाम रखा था । उसके परवर्ती सुसभ मान थकी पीर पचके महाबकी सनदेमें बाराबली का नाम मुहम्मदाबाद मिलता है ।

ई० समस्य प्रतापके शीव भाग पकवकी लुईदारी पचीनरुचि से धारापनी एक लतव्य राज्य लुहणानीको दिहोके बादगाह मुहम्मद मार्चने चिन्मूर्तिके पत्रि-स्थान बाराबलीको चिन्मूर्तिकाकोके चो पचीन रखना चाहा था । इसीके पनुसार वर्षोंमें १०३० ई० को बाराबलीसे पांच बीघ दक्षिण पश्चिम गङ्गापुर ग्राम के जमीन्दार मनधारासको 'राजा' उपाधि प्रदान किया । उनके पुत्र बलवन्त सिंह १०४ ई० को पिछ राज्यके पत्रिधारी ही मुहम्मदमि वागपचोके पिंघारन पर बैठे थे । १०४८ ई० को मुहम्मद यात्र सर गये । उनके पुत्र पचमहमादने सखर बङ्गकी बजोरका पद पीर पचके प्रदेश दिया था । उसी समय बाराबली पचके लुईके पन्तर्वत हुये । बलवन्त पर सखर जङ्गी हथि पडा को । उन्होंने बलवन्तका परिचय पचके पचीन क्षिप्तो सामान्य जमीन्दारकी भांति देनकी बिटा को । इस समय बलवन्तने पचनी आशोभता सचामिके लिये पछि चमताके पाच नाचम बिखाया था । १०३३ ई० का मखदङ्गुलके मरन पर उनके पुत्र युत्रा-उद्द दोचा लुईदार हुये । उनकी से विनाके पनुसारी बल बलवन्तकी पदमर्षादा पच करन की निर्वप बिटा चलाकी थी । उसी समय बलवन्तने

महाबके बाराबलपदपी राज्य रचा करनिके लिये राम नमरमें एक सुदृढ दुर्ग बनाया । उसके पीछे पाठम गौर बादगाहके राजल बाल उनके पुत्र मुहम्मदपकी पिदोही को पचके लुईदारके मिल गये । उस समय मोरनापर गङ्गालके नवाव थे । मुहम्मदपको पीर युत्रा उद्द दोचाने मोरनापरकी पदपुन कर गङ्गाल पत्रिधार करनिके लिये पटनाके पश्चिमुख यात्रा की । १०३८ ई० को मोरनापर पङ्क्रेको चन्दके साहाय्य से पटनाके क्षेत्रमें उपस्थित हुये । सुदुरे वय युत्रा उद्द दोचाने फिर बङ्ग विजयला उद्योग लगाया था । उस समय मोरनापरने बलवन्तसिंहके सहायता मांगी । राजा बलवन्तसिंहने सेव्य द्वारा उन्हें पछि सहायता दी थी । फिर गङ्गालके नवाव पीर बलवन्तसिंहको सखि हो गये । उसी सखिके पनुसार बङ्गुलर बल वन्त सिंहकी आशोभता सचामिको विपदुवाच मदद करन पर प्रतिपुन हुये । १०६४ ई० को २६ वीं दिग्भरको दिशके बादगाह यात्र पानमने ईष्ट इच्छिदा कम्पनीको बाराबली राज्य प्रदान किया था । युत्रा-उद्द दोचाके चन्मि होने पर १०६६ ई० का ईष्ट इच्छिदा कम्पनीके बाराबली राज्य पचके नवाव को सौंप दिया । उसी समय बलवन्तसिंह इन्द्रिय गवरसिंघके मित्रराजा बङ्गुलरकी सखि । सौचमें युत्रा उद्द दोचाने बलवन्तसिंहका हतसर्वक करनकी बिटा की थी । किन्तु ईष्ट इच्छिदा कम्पनीके बलवन्तसिंहका पच सेने पर उनको पाया पूर्ण न हुये । १०७० ई० को २३ वीं पमपत्रकी बलवन्तसिंहका जगबाध हुआ । उसके पीछे उनकी एक पत्रिदा रमचोके समकाल पितसिंहने राजसिंह हासन पत्रिधार किया । १०७३ ई० को इटीं सितम्बरकी पचके महाबने पितसिंहका एक मन्द री थी । १०७३ ई० की २३ वीं मईके वागपचो इन्द्रिय गवरसिंघके पचीन हुये । उसके पनुसार १०७३ ई० को १३ वीं मईको पितसिंहने इन्द्रिय गवरसिंघने फिर एक मन्द पाके । उसी मन्द युगेपमें बाराबलीके विग्रह हो गया । मन्दके

अनुसार युद्धव्यनिर्वाहार्थं गवर्नर जनरल वारन
 हेडिक्वार्टरने चेतुसिंहसे उनके देय वायिक करको छोड
 ५ लाख रुपया अतिक्रमागा । प्रथम चेतुसिंहने ५
 लाख रुपया दिया था । द्वितीय वर्ष इसी प्रकार ५
 लाख टेनिका समय आने पर चेतुसिंहने वृटिन गव-
 रनेगएसे कुछ मोहनत मांगी । उसने वारन हेडिक्वार्टर
 उनसे कुछ ही समय कागी जा पहुंचे । चेतुसिंह
 निरुपय ही आत्मरक्षाार्थं राजधानी छोड भाग गये ।
 (१८१० ई० की खालियरमें उनका मृत्यु हुआ ।)
 चेतुसिंहके भाग जाने पर बलवन्तसिंहको कन्याने
 वारन हेडिक्वार्टरसे कहला भेजा कि वह बलवन्तसिंह-
 की एक मात्र कन्या है और उसका पुत्र (बलवन्तका
 दौहित्र) महोपनारायण ही राज्यका प्रकृत उत्तराधि-
 कारी है । हेडिक्वार्टरने महोपनारायणको वाराणसीका
 प्रकृत राजा बना दिया । १७८१ ई० की १४वीं सित-
 म्बरकी महोपनारायणने वृटिश गवर्नेगएसे वाराणसी
 जमीन्दारीकी सनद पायी थी । राजा महोपनारायणके
 स्वर्गवादी होने पर महाराज उदितनारायणने पिट-
 सिंहासन लाभ किया । १८३५ ई० की उदितनारायण
 भी स्वर्गगामी हुये । उनके भ्रातृपुत्र ईश्वरीप्रसाद-
 नारायण राजा बने थे । वह एक कवि और गिस्ती रहे ।
 उनके स्वच्छन्दनिर्मित विविध छस्तिदन्तके कारकाये
 रामनगरके राजभवनमें विद्यमान हैं । १८८८ ई० की
 उन्होंने परलोक गमन किया । आजकल उनके पुत्र
 राजा प्रभुनारायण सिंह वाराणसीकी जमीन्दारीका
 स्वत्व भोग करते हैं ।

तीर्थविवरण ।

काशी वा वाराणसी नगरी बहुत प्राचीन
 कालसे हिन्दुओंका प्रतिपवित्र तीर्थ कही जाती है ।
 महाभारतमें लिखा है,—

“वाराणसी वा हृषभवाहन महादेवका अर्चन
 और कपिलाश्रममें स्नान करनेसे राजस्य यज्ञका फल
 मिलता है । उसके पीछे अविमुक्तमोक्ष पहुंच देवादि-
 देव महादेवका दयन करनेसे ब्रह्महत्याजनित पाप
 छूट जाना और ब्रह्म प्राणत्याग करनेसे मोक्ष पाता
 है ।” (२७११ पर, ८३ १० ।) महाभारतके उक्त विवरण
 पाठसे वाराणसी और अविमुक्त दी श्रान्ध परस्पर

निकटवर्ती तीर्थ समझ पड़ते हैं । गिव, मन्त्र, कुंभ
 गण्ड और निद्र प्रभृति पुराणिके मतमें काशीका ही
 अपर नाम अविमुक्त है । किन्तु महाभारतमें दो स्वतंत्र
 तीर्थ कहनेका कारण क्या है ? काशीपण्डमें विश्वे-
 श्वर और अविमुक्तेश्वर नामक स्वतन्त्र गिषनिद्रका
 विवरण दिया है । सम्भवतः अविमुक्तेश्वर सिद्धके
 विराज करनेका स्थान ही अविमुक्ततीर्थ नामने रखा
 था । वस्तुतः अविमुक्ततीर्थ वाराणसीके ही अन्तर्गत है ।

हरिवंशमें महादेवके वाराणसीगमनका विषय
 इस प्रकार लिखा गया है—

“राजपि दिवोदास महासन्निहिगानी वाराणसी
 नगरी पाकर सुखसे ब्रह्म रहने लगे । उस समय देवा-
 दितिव दारपरिग्रह कर ब्रह्मरानयमें वास करते थे ।
 महादेवके आज्ञानुसार उनसे पारिपट नाना उपायसे
 भगवती पार्वतीकी रिक्ताने लगे । देवी पार्वती बहुत
 ही सुखी हुयीं । किन्तु उनकी जननी मेनका भी अच्छा
 न लगा । वह अनेक समय उभयकी निन्दा कर कहती
 थीं—‘पार्वति ! तुम्हारे स्वामी पारिपटगणके सहित
 विचार-अचार-भ्रष्ट और दरिद्र हैं । उनमें कुछ भी
 गोमता देख नहीं पड़ती ।’ एक दिन स्वामीको निन्दा
 सुन देवी पार्वती स्त्रीस्वभाववशतः क्रुद्ध हो गयीं । किन्तु
 उस समय मातासे मनका भाव छिपा रूपा इस पड़ों ।
 फिर उन्होंने महादेवके पास जाकर विषय बदनसे
 कहा था—‘देव ! अब इस यहाँ न रहेंगी । हमें अपने
 भवन में चलिये ।’ उस समय महादेवने एक वारी
 सकल लोककी निरीक्षण किया । अश्वमेधकी पृथिवी
 पर ही वासस्थान निर्यय कर सिद्धदेव वाराणसी
 नगरीको चुना था । किन्तु उसे दिवोदास द्वारा अधि-
 क्षत होय उदाने स्त्रीय पारिपट निकुम्भसे कहा—
 ‘वत्स ! वाराणसीपुरी जाकर कीर्णत क्रमसे जनशून्य
 करो । किन्तु मायवान ! महाराज दिवोदास प्रति
 पराक्रान्त है ।’

“निकुम्भने वाराणसी नगर जा कण्डुक नामक
 किसी नापितको स्वप्नमें दर्शन दे कहा था—‘देखो !
 तुम इस नगरीके प्रान्त भागमें कोई स्थान निर्दिष्ट कर
 हमारी प्रतिभूर्ति स्थापन करो । हम तुम्हारा मन्त्र

करेगी। रात्रिबोधमें उक्त अक्षर देख उठने दृष्टी दिन मशारात्र दिवोदासको नव इत्यात्वा वा सुभाया। फिर उठने नगरके द्वारपर निकुञ्जको मूर्ति स्थापन कर उक्त विषय नगरको चारोदिक् स्थापना किया फिर महा समारोहसे मन्वपति निकुञ्जको पूजा होने लगी। गन्धर्व पुताधीको पुत्र, चणर्वीको जन पादुपार्थीको पादु, यहाँ तक कि लोभोको सुह माया परदान देते थे। किसी समय दिवोदासके आदेशसे मन्वियो ध्रुवया ने विविध उपचारसे मन्वपतिको पूजा और चतमें पुत्र कामका कर माया। इनके बार बार आकर यथावधि धर्मना पूर्वक पुत्र कामना करती थी निकुञ्जमें लीप पमिष्ट सिद्धिके निमित्त बरदान न दिया। इस प्रकार दौर्घकाय निकल गया। निकुञ्जके पाचरचर्ध द्विवः काम विगड़े और कहने लगी—'यह भूत हमारे जो सिंहासपर रहता है। नामरिक्तोंपर मन्वुष्ट जो मत मत कर देता, किन्तु किनलिते हमसे सुख फिर लेता है ? हममें स्थाप हो मन्वियोद्वारा पुत्र मार्चना किया, किन्तु, पाचर्यं। उक्तहने हमको कर प्रदान न किया। अतएव अब इसको पूजा विधि नहो। विधीयत' हमारे पश्चिमाक्षे फिर वह किसी प्रकार पूजा न पायगा। हम दुरात्माको क्षानमन्त्र कर देंगे।' ऐसा ही फिर कर राजा दिवोदासने मन्वपतिका वह क्षान तोड़ बाधा। निकुञ्जमें पायतन टूटा देख राजाको पमि धम्यात किया—'तुमने निरपराध हमारा क्षान नष्ट किया है। इसलिये तुम्हारे यह सुरा निषध अभी शून्य हो जायेगा।' निकुञ्ज उक्त प्रकार पमियाप दे महादेवके निषध पशुंय पये। उच्चर निकुञ्जके पमि यापसे बाराचको जनशून्य हुये। दिवोदासने गोमती तीर राजधानी बनायी थी। फिर महादेव उचो शून्य बाराचको नगरोमें पायाप निर्माण कर देवोके प्राय परम सुखके विचार करनी लगे। किन्तु वह स्थान देवो को प्रोतिकर न हुआ। पन्वियको उक्तने महादेवके कहा 'रत्न (अनशून्य) पुरीमें हम रह नहीं सकते, महादेवने उत्तर दिया—'एक स्थानकी हम नहीं छोड़ेंगे। यह हमारा पवित्रुस्थान है। हम नहीं दृष्टो अवध नहीं जायेंगे। तुम्हारे दृष्ट्या रहे, पको

शायी। किपुत्रात्वा महादेवने कर्ष बाराचकोको पमि सुक्त कहा है। इसीसे वह पवित्रुक्त नामसे विख्यात हुयो है। बाराचको इसी प्रकार पमिगत हो पवित्रुक्त कहलायो। वहाँ सर्वदेवनामस्मृण मन्वेक्षर सख, प्रेता और हापर तीन दुर्गमें देवोके प्राय परम सुखके बाध करती है। अस्त्रिभुव पानिये वह पन्वकिंत हो जाती है। किन्तु महादेव उचको परिष्कार नहीं करती।

शायीचण्डमें विद्या है—'देवदेव महादेव ब्रह्माके प्राक् प्रतिपालनको शायो लोड मन्वरपक्ष पर आ कर रही है। महादेवके गमन करने पर समष्ट देव भी मन्वर पक्ष पर उपस्थित हुये। महादेव वहाँ आकर द्रव्य हो न सके, उनके मनमें शायोका विरह भङ्ग न उठा। इस समय बाराचको महाप्राक् दिवोदास को रामनामो बी। तपस्याके बन्धने उचोने समष्ट देवनाचका रूप कारक किया था। इसलिये देव उनको स्तुति और मजना करती थी। पसुर भी सर्वदा उनके मूर्धन लय रहते थे। इनके समान कामिक रूप उच समय कोरे न था। दिवोदासका ही अपर नाम रिपु शय था।'

'मन्वरपक्षपर महादेवने शायोका विरह उपस्थित होनेपर देखा कि राजा दिवोदासको किसी प्रकार निष्काश न सकनेसे बाराचको काम होता न था। प्रथम उन्होंने ६३ योगिनीको शायी भिक्षा था। योगिनी शायो आकर परमार्थिक दिवोदासको अक्षरमन्तुत कर न सकीं। सुतरां उनके शायो कामिका उच्छेद पर परत हुआ। वह मन्विकर्षिकाको सन्मुख रख शायोमें रहने लगीं। कुछ दिन पौतने पर महादेवने देखा कि योगिनी छोटी न थीं। फिर उन्होंने पम्पना बन्ध प्थित हो सृष्ट्या सेना। सूर्य शायो आकर कामिक

* महाप्राक्पक्षके पन्वियनामने महादेवके नाराचकी स्थापनका विरह लोभ रही न बाराचिका है किन्तु दुरात्मानने उक्त नगरीय पन्विय वीर्य के उच्चर मन्वपति विरह विरह देखा पन्विय है।

शायीचण्डमें ६३ ६५ पक्ष लगे मन्व विधीयत' देवको पन्विय क्या सिद्धी है।

‡ यह क्षान नामक पौध हीमिने हा पक्ष कहलाय है।

दिवोदासका कोई छिद्र निकाल न सके। वहाँ वह काशीकी मायासे विमुग्ध हो रहने लगे। योगिनोगणकी भांति सूर्य भी लौटे न थे। उस समय महादेवने अपने गणधरकी पूर्वकी भांति उपदेश देकर काशी सेवा। वह भी वहाँ जाकर काशीकी विमोहिनी शक्ति से विमुग्ध हो गये पार योगिनोगणकी भांति दिवोदासका अनिष्ट साधन कर न सके। इधर महादेवने उनका कोई संवाद न पा त्रिगोपनः काशीके विरहसे अस्थिर हो गणेशकी प्रेरण किया। गणपतिने चांगी ज हृष देवज्ञका वेष बनाया था। फिर वह काशीवासीकी भाग्यलिपि गणनाकर सबको विस्मयाभिभूत करने और यह कहते धूमने लगे कि काशीमें रहनेमें लोगों को घोर अनिष्ट भेजना पड़ेगा। हृष देवज्ञकी बातसे काशीवासियोंको भय हुआ। फिर बहुतसे लोग काशी छोड़ने लगे। क्रमशः हृष देवज्ञकी अद्भुत गणना कथा दिवोदासके अन्तःपुरमें पहुँची थी। इसी प्रकार गणपतिने राजाके अन्तःपुरमें प्रवेग लाभ किया। फिर वह भाग्यगणना द्वारा राजमहिन्नाके हृदयमें विश्वास उपकाने लगे। कपटी देवज्ञने राजीगणके मध्य क्रमशः महासम्मान लाभ किया था। राजमहिन्ना असाक्षात्में राजासे उनके गुणकी बहुविध प्रशंसा करने लगे। किसी दिन राजाने हृष देवज्ञकी बोना बहुतसी बातें पूछी थीं। देवज्ञहृषी गणपतिने नानाप्रकारसे राजाकी मनोसुग्ध कर कहा—'महाराज। उत्तर देशसे एक ब्राह्मण आपके निकट आवेंगे। वह जो कहें, आप उसे सर्वतोभावसे पालन करें। इससे आपके सकल विषय सिद्ध होंगे।'

“इधर मंदरासीन महादेवने गणनायका विलम्ब देख विष्णुके प्रति साग्रह दृष्टिनिक्षेप किया था। फि उन्होंने पनेक कथा उपदेश कर उनसे कहा—‘हृषी विष्णो। देखो अन्यान्य व्यक्तिकी भांति तुम भी काशीमें आचरण न करना।’ विष्णु यद्योचित उत्तर दे हृष्ट मनसे काशीकी चलते हुये।

विष्णुने लक्ष्मीके साथ काशी जा काशिसियोंको मायासे विमुग्ध किया था। उसमें अचिन्तांग लीग स्वधर्मच्युत होने लगे। दूसरे देवज्ञकी उपदेशसे रिपु

त्रय दिवोदासको संसार-वैराग्य उपस्थित हुआ। वह उस ब्राह्मणकी प्रतीक्षा करने लगे। अष्टादश दिवस विष्णु ब्राह्मणके वेशमें दिवोदासके समीप उपस्थित हुये। महाराज दिवोदासने अभिप्रेत ब्राह्मणके दर्शनसे परम आनन्द लाभ किया था। उन्होंने ब्राह्मणधरकी सखीधन कर कहा—‘हे द्विजोत्तम! बहुदिन राज्य-भारके वहनमें हम क्लान्त हो गये हैं। हमारे मनमें संसारवैराग्य उद्भूत हुआ है। आज आप हममें जो कहेंगे, हम सभी करेंगे।’ ब्राह्मणरुगी विष्णुने राजाकी नाना प्रकार उपदेश दे कहा—‘महाराज! यही एक वटा दीप है कि आपने विश्वनाथकी काशीसे दूर कर दिया है। यदि हम महापापकी शान्ति चाहें, तो आप काशीमें शिवनिद्रा प्रतिष्ठा करें। एक शिव-निद्राकी प्रतिष्ठामें सहस्र अणुगण विनष्ट होते हैं। महाराज दिवोदासने ज्येष्ठ पुत्र ममभ्रातृकी राज्यमें अभिषिक्त कर संसारका संस्त्रय छोड़ा था। उन्होंने विष्णुके आदेशानुसार गद्दाके पश्चिम तटपर एक शिवालक धनश उसमें दिवोदासेश्वर नामक शिवनिद्रा प्रतिष्ठा किया। सप्त दिवस शिवदृशपरिवेष्टित ज्योतिर्मय रथ आकर उपस्थित हुआ। महाराज रिपुत्रय उस पर बैठ स्वर्गको चले गये। इसी प्रकार महात्मा दिवोदासका निर्वाण हुआ। उसके पीछे महादेव देवी पार्वतीके साथ फिर अपने प्रियसेव काशी-धाममें पहुँच गये।’

काशीखण्डके विवरण पाठमें ऐसा अनुमान किया जाता है कि प्रथमतः वहाँ ब्राह्मणधर्म प्रवल था। उसके पीछे बुद्धदेवके प्रभुदय और बौद्ध राजाओंके आधिपत्यप्रभावसे वाराणसीसे हिन्दूधर्म एक वारगी ही विलुप्त हो गया, यहाँ तक कि वाराणसी धाम बौद्ध-तीर्थ कहलाने लगा। अथर्ववेदकी राजा रिपुत्रयके राजत्वकाल शाक, जैव, सौर, गणपत्य और वैष्णव क्रमशः प्रवल पड़ गये। वैष्णव द्वारा काशीमें बौद्धधर्म अथवा बौद्ध-आधिपत्य तिरोहित हुआ था। यह विषय प्रसङ्ग क्रमसे काशीखण्डमें लिखा कि काशिराज रिपुत्रय दिवोदासके समय काशीमें बौद्धधर्म प्रवल है। यथा—

१. विष्णु शीतलं सर्व विनाश कोपितः मरुत् ।
 अतोऽनृपराजं तं श्रीकृष्णविजो मीरुत् ॥ १ ॥
 श्री हरिनाम्निका नामा विष्णोः सुमनसि ॥—
 मया शीतलं पुत्राणां पुत्रवर्धितं च शीतलं ।
 मित्रं विष्णुवर्धितं तं महाविजयसुखम् ॥ २ ॥
 मया विनाशकोऽपि यः इत्तं वयात्पदा ।
 वयात्पदासुखीयं मया च तं मयात्पदा ॥ ३ ॥
 अन्वयिष्यः संशयः अहं वयात्पदा ॥
 अहं वयात्पदासुखीयं मयात्पदा ॥ ४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥
 अहं वयात्पदासुखीयं मयात्पदा ॥ ५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ११ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ २९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ३९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ४९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ५९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ६९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ७९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ८९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९० ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९१ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९२ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९३ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९४ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९५ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९६ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९७ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९८ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ ९९ ॥
 महाविजयसुखीयं मयात्पदा ॥ १०० ॥

(पंतीकण्ड १५५)

मगवान् शोपतिने परममोहन शोगत (बौद्ध) रूप
 और कपटी देवोमि श्री इसी समय परम मनोहर
 परित्राजिका रूप भारत सिधा । पुष्पकोति नामक
 बौद्ध परित्राजक रूपवारी मगवान् अपने मिय सिध
 विनयमूयक विनयकोतिंको मन्मोहन कर इस प्रकार
 सिध बर्ग आया करनी क्री— दे विनयकोतिं । तुमने
 बनातन तमं विनयक जो बहुत मय्य सिटी, हम
 अमिय प्रकाशने सनका सतर देते हैं । तुम सुना । यह
 संसार पलादि है । इसका कोई कर्ता नहीं । यह

अर्थ अत्यन्त और विभीन होता है । ब्रह्मादि स्वयं पर्यन्त
 जितनी देवी हैं, एव पश्चितोय पाप्मा जो इन मगवा
 ईश्वर है । इससे अत्यन्त पन्थ किमो अज्ञाता पश्चित
 समस्त नहीं पड़ता । हमारा यह देव केते आत्मरय
 विभीन होता, वेवे ही ब्रह्मादि विगणवरी मगव पर्यंत
 सबक प्रापियोका देव क प्र निर्दिष्ट आत्मके अनुसार
 विनय पाता है । विचारपूर्वक देखनेसे शौरमगवके
 देवमें परस्पर निमो प्रकार आनाबिना नहीं पाता ।
 आरय मगव मगवेदमें आहार निह्ना और मय मम
 मावने विद्यमान है । हमें त्रिन प्रकार मरक मय
 रचना, समी प्रकार ब्रह्मादि कोट पयन सबक देव
 शोको मरना पड़ता है । बुद्धपूर्वक विचार करनेसे यह
 सिद्ध होता, कि सबक प्राची ममान हैं । सुगरा बहो
 करना चाहिये त्रिनमें किमो प्रकार प्राविर्जिंसा न
 हो । पूर्वतन पश्चितोने कहा है—“पश्चिता परम धर्म
 है ।” इसी कारण मरकमोत पुष्पको जो कमी प्रावि
 र्जिंसा करना न चाहिये । र्जिंसाकारो भोयक मरकमें
 गमन करती है । पश्चितक आदि धर्म पाती है । कुछ
 भोय करती करती देव विगणनका नाम जो परम मोच
 है । एतद्विषय पन्थ कोई मोच नहीं होता । वास्तविके
 साय पश्चितक जे मगवा पसुच्छेद होने पर विद्यानका
 नाम जो यथाच मोच है । तत्त्वज्ञानो अज्ञि रिया जो
 निश्चय करती है । सिद्धवादी यह प्रामाणिक श्रुति श्रोतंन
 करती है— समस्त श्रुतगपकी र्जिंसा करना न चाहिये
 र्जिंसावर्तक कोई श्रुति प्रामाणिक नहीं । पश्चितो
 मोयमें पश्यवत्ता करना चाहिये ब्रह्मादि जो श्रुति है,
 वह केवल पमाश्रुतोंको आत्मि बहानेको है । विद्यान्
 पश्चित इसका प्रमापको भाति शोकार नहीं करते ।
 रत्यादि ।

कायोच्छर्म कायोवाप्याको मोहित करनिके
 निये विरुद्धे शीघ्ररूप परिपयका कथा किमो रहते
 धनुन हममें कोई मन्द्देह नहीं कि वह उदय बर्तना
 मात्र है । उक्त प्रत्यावने इतना जो अनुमित होता
 किमो ममयमें कायोमें बौद्धमार्गव्यवधि प्रवक जो
 हिन्दूधर्मको प्रमाणता को को । मन्धवतः रिपुस्य
 दिवोदास भो प्रथम बौद्ध रहें । कायोच्छर्म सिद्धा है,—

“इतिविद्यासह राजद्रमुपास्ता स्वमेधैः ३२० ॥
वदं पतस्तद्विषयं मुगभासोऽपि दुर्लभम् ॥”

असुर यह कह कर उनका (राजा रिपुञ्जय टिवो-
दासका) स्तव करते थे, ‘आपके राज्यमें देव लोग रह
नहीं सकते। सुतरां हम सब स्वविभवके अनुसार आप-
की सेवा करेंगे।’

उक्त श्लोकसे यही अनुमित होता कि असुर अर्थात्
देवविद्देषी सर्वदा रिपुञ्जयके निश्ट रहते और देव
अर्थात् देवभक्त ब्राह्मणादि उनके राज्यमें काम देख
पडते थे। सम्भवतः हिन्दू धर्मके पुनरुत्थान समय
काशीमें उक्त वीरराजा ही राजत्व करते थे और
पीछे वही ब्राह्मणकर्तृक हिन्दूधर्ममें दीक्षित हुये।
उन्हींके समयमें पवित्र वाराणसी धाममें फिर देव-
मन्दिर और देवमूर्तिकी स्थापना होने लगी। विष्णु-
पुराणमें भी एक स्थान पर लिखा है कि विष्णुने एक
वार अक्षर द्वारा वाराणसीको दग्ध किया था।

(विष्णुपुराण ५ अं. ३३ अ०)

वाराणसीमें एक काल बौद्धधर्म प्रबल होनेके
अद्यापि अनेक निदर्शन मिलते हैं। वाराणसीका पार्श्व-
वर्ती सारनाथ बौद्धोंका एक पवित्र तीर्थस्थान कह-
नाता है। ई० चतुर्थ शताब्दकी चीन-परिव्राजक फा-
हियान और षष्ठ शताब्दके शेष भाग युञ्जय बुयाङ्ग
उक्त सारनाथ गये थे। उस समय भी वहाँ अनेक वाह-
कीर्तियाँ थीं। उनका ध्वंसावशेष अद्यापि वर्तमान है।
साक्ष्य देखो। काशीपुरीमें भी बौद्ध-कीर्तियोंका यत्-
सामान्य ध्वंसावशेष देख पडता है।

यह निर्णय करना कठिन है—किसी समय
काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरभ्युदय हुआ। ई० षष्ठ
शताब्दके शेष भाग चीन-परिव्राजक युञ्जय बुया-
ङ्गके जाते समय काशीमें हिन्दूधर्म प्रबल था। उन्हीं
ने वाराणसीधाममें शताधिक देवमन्दिर और प्रायः
दश सहस्र देव उपासक देखे थे।* श्रीचैत्रकी मादला-
पञ्चीके मत में उक्तनराज ययातिकेगरोने ८६६ गक
को भुवनेश्वरका विख्यात शिवमन्दिर निर्माण कराया

था। भुवनेश्वर वाराणसीके अनुकरण पर बना है।
एकच देखो। सुतरां यह पशुचर्य ही स्वीकार करना पडेगा
कि उससे भी बड़ने काशीमें हिन्दूधर्मका पुनरुत्थान
हुआ।

पतञ्जलिके महाभाष्यमें वाराणसीका उल्लेख है
और इसका भी प्रमाण मिलता कि उस समय यहाँ
शिवोपासना भी प्रचलित थी। पतञ्जल देखो। सम्भवतः बौद्ध-
राज अशोकके मरने पर और महाभाष्य बनते समय
वाराणसीमें हिन्दूधर्म फिर बढने लगा था।

हिन्दूधर्मके निकट कागोकी अपेक्षा पवित्र तीर्थ
जगत्में दूसरा नहीं। प्राधान्य सुनि श्रुति उक्त सुक्ति-
धाम काशीका साहाय्य मुक्तकण्ठमें कीर्तन कर गये हैं।

सत्यपुराण निर्देश करता है—

“इदं गुह्यतमं चैव” मया सागण्यमी कृतम्।

सर्वेषामिव मृतानां हेतुर्नोत्पद्य सर्वदा ॥” (१८५१४०)

हमारा यह वाराणसी चैत्र सर्वदा गुह्यतम है।
यह नियत ही सम्स्त जीवगणके मोक्ष लाभका हेतु है।

“विषयासक्तचित्तोऽपि स्वल्पधर्मरतिर्नरः ५०१ ॥

इह चैवै मृतः शोषि संसारं न पुनर्निन्देत् ॥”

धर्मके प्रति अनुराग परित्याग कर इन्द्रियभोग्य
विषय एकान्त आसक्त चित्त होते भी यदि कोई वारा-
णसी क्षेत्रमें मरता, तो उसे संसारमें प्रवेश करना नहीं
पडता और अवश्य मोक्ष मिलता है।

“आविष्कृतस्य कथितं मया ते गुह्यतमम् ॥ ५१ ॥

अतः परतरं नास्ति सिद्धिगुह्यं महेश्वरि ॥”

हे देवि। महेश्वरी। हमने तुमसे अविष्कृतक्षेत्रका
अतिगुह्य गुह्य विषय कीर्तन किया है। फलतः इसको
अपेक्षा सिद्धि विषयमें उत्कृष्टतर विषय संसारमें
दूसरा नहीं।

“यकामो वा सकामो वा ऋषि तिष्ठन् यतीऽपि वा।

अविष्कृतैः त्यजन् प्राणान् मम लोके महीयते ॥” (१८५१२२)

अकाम हो या सकाम हो अथवा तिर्यग्योनिजात
ही हो, अविष्कृतक्षेत्रमें प्राणत्याग करनेसे वह निश्चय
हमारे लोकमें (शिवलोकमें) पूजा पाता है।

* यह सम्भव सागण्यमें २००० मात्र बौद्ध थे।

शिवपुराणको ज्ञानसंज्ञितार्थं निश्चय है—

“नक्षत्रोत्पत्तिं नरं चामृतं शिवस्य सुवचनम् ।” (३८।२१)

त्रिसुवचनके मध्य पञ्चश्लोको (वाराचली)-को प्रथमा वल्लु उतर श्लोकगतमें पद्य कोई नहीं ।

“वर्मकोटिनिवृत्तं नम मोक्षोटीनिवचनम् ।

शिवोटीनिवचनमिदं त्रिसुवचनम् ।” (३ । ११)

उक्त को जेहे वर्मको उपनिवृत्त पर्याप्त उक्त उतम रहस्य और शक्ति की जेहे मोक्षका गुह्यतम विषय है जेहे की प्रथिसुक्त शिवको मुख भाग देव्य पर तोर्बका उक्त उतम रहस्य समझती है ।

शिवपुराणमें निश्चय है —

“त्रिसुवचनं च सुवचनं च सुवचनं ॥ ३८ ॥

अनन्तं च शिवस्य च न चन्द्र शक्तिं च ।

एव चन्द्रस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ३९ ॥

अथैव चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४० ॥

इत्यत्रात्मनि शिवोत्पत्तिरुक्तानि चन्द्रस्य ॥ ४१ ॥

सुवचनं चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४२ ॥

शिवस्यैवैवैव चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४३ ॥

पञ्चसुवचनो शिवो चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४४ ॥

एव चन्द्रस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४५ ॥

इति शिवस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४६ ॥

इत्यत्रात्मनि शिवोत्पत्तिरुक्तानि चन्द्रस्य ॥ ४७ ॥

सुवचनं चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४८ ॥” (२१-२७)

हे पद्यासि ! त्रिसुवचन, सुवचन, गङ्गाहार और पुण्ड्रक सखल तोर्बमें ज्ञान प्रसवा प्रवक्ष्यानपूर्वक शिवा करदेषी कीव मोक्ष नहीं पाठि शिवस्य प्रथिसुवचनमें प्रवक्ष्य पा जाति है । सुतरां एवमें सम्यक् नहीं सि प्रथिसुक्त जेह चेतनम् है । हमारी प्रथिहात्मके वाराच प्रयाग और काशीमें मोक्ष नाम होता है । काशी तोर्बजेठ प्रयागके मो चेतनम् है । सुवचन प्रमथ शिवा समपंचपूर्वक हमारे वाराचको शिवकी की शिवा करदेषी नयेवज्ञ पाया है । हमारे मध्य परापरके पुत्र भोगिप्रवर महातया शक्तिवर व्यासदेव वैदिकभाग कर्ता और वैदिकस्योदाके प्रवक्तृ जगि । वर सुनिवर भी वाराचकोमें श्री परमानन्दने प्रवक्ष्यान करेगी । प्रथिक्त ज्ञा कहे— देवविगणके वाच ज्ञाना, विषय,

विद्यावर देवराज इन्द्र और पद्मान्ध महात्मा देव सभी काशीमें हमारी उपासना शिवा करते हैं ।

श्रुमपुराणमें कहा है,—

“ज्ञानव्यक्तिरिदानीं उत्तमप्रथिक्तम् ।

शक्तिरिति- १. ३४ चन्द्रसुवचनं चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ३९ ॥

अथैव चन्द्रस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४० ॥

इति शिवस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४१ ॥

इत्यत्रात्मनि शिवोत्पत्तिरुक्तानि चन्द्रस्य ॥ ४२ ॥

सुवचनं चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४३ ॥

शिवस्यैवैवैव चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४४ ॥

पञ्चसुवचनो शिवो चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४५ ॥

एव चन्द्रस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४६ ॥

इति शिवस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४७ ॥” (२१-२७)

हे सुकीर्तन ! परमानन्द नाम की वासना कर ज्ञान और ज्ञानमें निविष्टचित्त को प्रति पाठि, प्रथिसुक्तमें एत प्यक्ति मो चको प्रति पा जाति है । शिव शिव सखल काश्यप्रति ज्ञानोको कहा कहा करते, इन समस्त ज्ञानोको प्रथिवा वाराचकी चेतनमा और श्रुमहात्मिनी है । काशीमें प्राच परिक्षानके प्रमथ साध्या ईश्वर महादेव च्, नामि और उदवमें तारक ब्रह्म नाम श्रोतन करते हैं । पादिशक्ति मध्यकी शक्ति वाराचकोमें मो प्रथिसुक्तके प्रवक्षित है । वरवा और प्रसि दो नदीके मध्यक्षेत्रमें वाराचको हुये प्रतिष्ठित है । वाराचकीके पुत्र ज्ञान प्रवक्ष्यान न है, न हुई और न बोनी ।

काशीक्षेत्रमें कथित हुआ है —

“प्रथिसुक्तस्यैवैवैव चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ३९ ॥

अथैव चन्द्रस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४० ॥

इति शिवस्यैवैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४१ ॥

इत्यत्रात्मनि शिवोत्पत्तिरुक्तानि चन्द्रस्य ॥ ४२ ॥

सुवचनं चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४३ ॥

शिवस्यैवैवैव चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४४ ॥

पञ्चसुवचनो शिवो चन्द्रस्यैव चन्द्र शक्तिं च ॥ ४५ ॥” (२१-२७)

जहाँ विद्येश्वर वास करते वर महादेव प्रथिसुक्त प्रथिवा मनोरम और महादेवक वरु एव ब्रह्माक्षमोक्षके मध्य नहीं नहीं । वर शिव वरु ज्ञान परिमित है । प्रमथ काशको एकार्थकवा वर

अवस्थित है। वह चूड़ा समेत ३४ इन्च उंच है।

ठीक समझ नहीं पड़ता—किम महात्माने उक्त मन्दिर बनवाया है। महाराज रणजीव सिंहने मन्दिर की मेहराब, चूड़ा और समुदाय कलसके तांबेपर सोना मटवा दिया है। सूर्यालोकमें दूरसे दर्शनकरने पर उसकी अपूर्व शोभामें नयन जल उठते हैं। स्वर्ण-कजल चूड़ा पर त्रिशूल है। उभोके पार्श्वमें पताका रहती है।

विश्वेश्वर मन्दिरकी मेहराबके नीचे ८ बड़े घण्टे लटकते हैं। उनमें बड़ा घण्टा नेपालके राजाका दिया है। मन्दिरके उत्तर विश्वेश्वरकी सभा है। उस स्थान पर अनेक देवमूर्ति विराज करती हैं। उक्त पवित्र देवालयमें प्रवेग करनसे मनमें अद्भुत रमका आविर्भाव होता है। आप देखेंगे कि भारतवर्षके सकल स्थानीय एवं सर्व जातीय हिन्दू भक्तिभावसे विश्वेश्वरके पवित्र लिङ्गदर्शनकी उपस्थित हैं। भक्तोंके मुखसे निःसृत 'हर हर हर वंशम विश्वेश्वर' के रवसे मन्दिर प्रतिध्वनित होते हैं। कोई हाथ जोड़ देवादि-देव महादेवकी पूजा करता, कोई उदात्तादि स्वरसे वेद पढ़ता और कोई सुमधुर स्वरसे शिवस्तोत्र गान कर भक्तके हृदयमें विशुद्ध आनन्द भरता है। धन्य ! भारतवर्षके नाना स्थानोंकी आवाज-वृद्ध-वनिताका समावेश। वैसा दृश्य किसी दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता ! भक्त हिन्दुओं की प्रकृत छवि अद्यापि विश्वेश्वरगृहमें प्रकाशमान है ! जिस समय विश्वेश्वर की सन्ध्या आरती होती और जिस समय वेदध्वनिसे हृदय हिलने लगता, उस समयका दृश्य कैसा अपारिधि रहता है।

विश्वेश्वर मन्दिरसे अनतिदूर 'ज्ञानवापा' नामक पवित्र कूप है। शिवपुराणमें उक्त कूप "वापीजल" नामसे वर्णित हुआ है। * काशीखण्डमें लिखा है—

"पवित्रो अरं ईष संसारीवभोचनम् ।
वापीमन्त्रं तव्य देवदेव्य सन्निधौ ॥
स्पर्शं वादृश्यात् तव्य कृतार्था मानवा सुवि ।
दुर्घं मन्यु कृषी दिव्येसम्पन्नं इत्यतोपमम् ॥
तारयं सर्वकलनां कालावापय नाशनम् ।"

(शिवपुराण, सप्तमस्कन्धसंहिता, ४१।२(—१८)

"रुद्ररूपी ईशानने त्रिशूल द्वारा स्थानीय भूमि खनन कर एक कूप निर्माण किया था। उस कुण्डमें पृथिवी अपेक्षा दशगुण जल निकला और उस जलमें भूमण्डल प्राप्त हुआ। उस समय रुद्रमूर्ति ईशानदेवन सहस्र कलस जल भर ज्योतिर्मय विश्वेश्वररूपी महालिङ्ग को स्नान कराया था। भगवान् विश्वेश्वरने रुद्रके प्रति प्रसन्न हो निम्ननिवृत्त वर दिया—जो शिव गच्छेका अर्थ विचारते, वह उसका अर्थ "ज्ञान" वतनाते हैं। वही ज्ञान हमारी महिमासे यहा जलरूपमें द्रवोभूत हुआ है। इसनिये यह तीर्थ "ज्ञानोद" नामसे विख्यात होगा। * इस तीर्थ स्पर्श करनेसे सद्भाव द्रवोभूत होते हैं। फिर इसके स्पर्श और आचमनसे प्रशस्तेव नया राजसूय यज्ञका फल मिलता है। इसका नाम शिवतीर्थ है। फिर वही तीर्थ शुभज्ञानतीर्थ तारकतीर्थ और प्रकृत मोक्षतीर्थ भी कहता है। इस तीर्थके जलसे शिवलिङ्गको स्नान कराने पर सर्वतीर्थका फल लाभ होता है। ज्ञानस्वरूप हमी यहां द्रवमूर्ति बन जीवगणकी जड़ता विनाश और ज्ञान उपदेश करते हैं।"

(काशीखण्ड, ११ प०)

काशीखण्डके अन्यस्थलमें कहा है—"दण्डनायक उस ज्ञानवापीका जल दुर्हत्तगणसे बचाते और सुभ्रम तथा विभ्रम नामक गणहय दुर्हत्तगणकी भ्रान्ति उपजाते हैं। महादेवकी षट् मूर्तिका जो विषय कहा, उक्त ज्ञानदायिनी ज्ञानवापी उन्हीं षट् मूर्तिमें अन्यतम जलमयी मूर्ति है। (११ प०)

प्रवादानुसार कालापहाड़के काशीको सकल देव-मन्दिर तोड़ने जाते समय विश्वेश्वर उक्त ज्ञानवापीके मध्य छिपे थे। आज भी सहस्र सहस्र यात्री वहां देवकी पूजा करने जाते हैं।

ज्ञानवापी पर एक कुश् कंची छत है। वह छत पत्थरके ४० खंभों पर खड़ी है। उसका गठन शक्ति सुन्दर है। १८२८ ई० की ग्वालियर महाराज दौलत

* "शिव ज्ञानमिति द्रवुः शिवगच्छार्थवितरका ।
तत्र ज्ञानं द्रवोभूतमिदं न महिमोदयाम् ॥
अतो ज्ञानोदनामैतयोर्थं वैशोकविविधुतम् ।"

(काशीखण्ड, १०-११-११)

राज में बियाहो बिबहा पत्नी बजाबाईनी लमि बनवा दिया था ।

प्रान्तवापीके पूर्वमें पान-राजपटल पांच हाथ लची एक हृषभमूर्ति है । उसी स्थानपर है टराबाटकी रामीका मन्दिर बना है । निरुट हो बहुमति पवित्र स्थान सो है

वहाँ लड़े होकर उत्तर-पश्चिमदिक् छट्टिपात करनी है प्रथम ही ४० इच्छ उच्च प्रादिविखेखरका' मन्दिर नयनमोचर होता है । उसमें अदूर कागोसर्वेंट' नामक पवित्र रूप है । पनेक जीर्णोक्ति विद्यामातुमार लो हूब कर उच्च सर्वेंट कसोचं को सकला, उनको पनकन नहीं मिलता । उसी बड़े खरीने मध्यमें दो एक क्वकि हब मारी थी । इनोई गवरलमिप्यने रूपका मूक बन्द कर दिया है । उनके पीछे कागोसर्वेंटके पण्डोका विस्तर पायेटन होता है । थान कक प्रति सोमवारको एक बार लपका मय खोला जाता है ।

शनेदरीखरके निष्ठत पक्षपूर्वा देवीका मन्दिर है । हिन्दुओंके विद्यामातुकार काशीमें कोई पनाहार नहीं रहता । वह अथदायिनीदेवी एक दे हीन दरिद्र सब का दुःख दूर करती है । अथपूर्वा मन्दिर जानिके एक में अथप्य हीन दरिद्र मिनायं भेठे रहते हैं । मन्दिर के निचा लक्ष्मण एक सुडी मटर टेनेकी प्रया है । वहाँ सबके मिचा मिचती है । अथपूर्वाका मन्दिर प्राय २०० वर्ष पक्षसे पुनाके महाारपुरात्रने बनवाया था । मन्दिरका नामा रजविमूषका लोकोत्पमोचिनी एक पूर्वाकी पवित्र मूर्ति देख दरोकका मन प्रकृत मोचित होता है । मन्दिरको एक धीर ससाख्योजित रजोपरि लुण्ठेककी मूर्ति विराज करती है । एतद्विष मीरो गह्वर, मधिय धीर बहुमानकी मूर्ति प्रदक प्रवक स्थानमें प्रतिष्ठित है ।

शनेदरीखरमन्दिरके दक्षिण शनेखरका सुद्ध मन्दिर है । कागोसर्वणके मतमें—पुत्राकानका अष्टुन म्दन श्यने लषी स्थान पर विषविज प्रतिष्ठा कर बिखे खरीनी चाराबना की थी । कल सुद्धपतिष्ठित शनेखरको पुत्रा करनेमें मानव पुत्रवान्, सोमाय्यगाने धीर परम सुषो होता है । शनेखरका भद्र शकभोकरमें बास करता है " ४ (१८५)

विखेखर मन्दिरके प्राय पक्ष लोय उत्तर काक-मेरवका मन्दिर है । कागोसर्वणमें सिखा है—"महादेक-ने ब्रह्माका गव खर्ब करनीके बिद्ये पयने कोपथे एक मेरवपुत्रक बनाया था । वही पुत्रक काकमेरव है । पूर्व को ब्रह्माके पक्षमुख रहै । काकमेरवने लमका पक्षय मर्याक हियन बिद्या । काकमेरव दल ब्रह्महत्याके पाप पयनयनको आपासिबकन पचसम्बन कर ब्रह्माका वही कपाक हायमें से प्रबिनी पर भूमने लयि । लनेनि बहु तोर्ब पर्येटन किये थे । किन्तु वह कपाक नहीं बिसुक्त न हुआ । का पापयै । काशीमें परिय करती लो काकमेरवके हाथके वह कपाक गिर पड़ा । ब्रह्महत्या मी अथके मन्त्र बिनह हुयी । बिस स्थान पर कपाक गिरा था वही स्थान कपाकमोचन तीर्थके नामके विख्यात हुआ (इन्द्रगण १७१०) इसके पीछे काकमेरवके कपाकमोचन तीर्थको अथप्य एक भद्रगवका पाप दूर करनीके सिधे वसी स्थान पर अथस्थान बिद्या । पय हायक मासको लप्याहमोको अथवाच कर काकमेरवके निष्ठत रातको कामनेके महापाप दूर होता है । काक मेरवकी पूजा करनीके मनस्थामना सिद्ध होती है ।"

(कमीक ११००)

काकमेरव का मेरवनाथको वर्तमान मूर्ति प्रस्तरमें गठित रूप्याम बोर नीलवर्ण है । लसके दोनो चहु रीयासय तथा पश्चिमान ककमय है । पार्श्वमें लमके सुद्ध रकी मूर्ति है । मेरवनाथका मन्दिर देखने पाय्य है । मंदिरगात्र विविध वर्णसे पनकृत एवं दिवनीकाके बिजित है । विविधता प्रवेगहारके कामपाय्य दगावतार को पतिहृद्धरमूर्ति पश्चित है । मन्दिरको चोपटमें दोनो पार्श्वे हारणलेश्वरको मूर्ति दण्डायमान है ।

काकमेरवका वर्तमान मन्दिर प्राय १२५ वर्ष पूर्व पुनाके बाजीरावने बनवाया था । मन्दिरके बहिर्भागमें मेरवनाथको पूजन मूर्ति रखी है । मन्दिरमें महादेव, मधिय धीर लुण्ठनायकको मूर्ति विराज करती है । काशीमें शीतला देवीके ३ मन्दिर है । उनमें एक मेरव-

विद्या (आ. १११) पौन ३-३५५ (१७१०)ने एक टप पर सिद्धा कर है ।

नाथ मन्दिरके निकट है। उक्त शोतला मन्दिरमें सप्त-
भगिनीकी मूर्ति है।

कानभैरवसे अनतिदूर दण्डपाणिका मन्दिर है।
क शीखण्डके मतमें—“हरिकेग नामक एक यक्ष थे
वाल्मिकालमें ही उनके हृदयमें शिवभक्ति उद्दीपित
हुयी। वह सोते समय सर्वदा महादेवकी विभूति देखते थे।
वाल्मिककाल ही वह षट्छ परित्याग कर वाराणसी गये
और शिव तपस्थलमें प्रवृत्त हुये। बहुत काल पीछे
महादेवने सन्तुष्ट हो उन्हें यह वर दिया था—“हे यक्ष !
तुम हमारे अत्यन्त प्रिय हो। तुम इस क्षेत्रके दण्ड-
धर हो। आजसे तुम इस काशीके दुष्टशासक और
शिवपालक बन कर अवस्थान करो। तुम दण्डपाणिके
नामसे प्रसिद्ध होगे। हमारे संभ्रम और उद्वेग
नामक गणद्वय सर्वदा तुम्हारे अनुगामी होकर रहेंगे।
काशीवासियोंका अन्तिमकाल उपस्थित होनेसे तुम
उनके गलेमें सुनील रेखा, हस्तमें सर्प बलय, भालमें
शोचन, परिधानमें कृत्तिवास, मस्तकमें पिङ्गलवर्ण
कटा, सर्वाङ्गमें विभूति, कपालमें चन्द्रकला और
बाह्यार्थ हृषभ प्रदान करोगे। तुम्हीं वाशीवासियोंके
अन्नदाता, प्राणदाता, ज्ञानदाता और माजदाता होगे।
तदवधि दण्डपाणि महादेवके पादेशसे सम्यक् रूप वारा-
णसी शासन करते हैं। काशीमें दण्डपाणिकी पूजा
न करनेसे किसीको कैसे सुख मिलता है ?”

(काशोपण्य २ प०)

दण्डपाणिकी मूर्ति प्रायः ३ हस्त उच्च है। प्रति
रवि और मङ्गलवारको यात्री दण्डपाणिकी पूजा
करते हैं।

दण्डपाणि और भैरवनाथ मन्दिरके बीचोबीच
नवग्रहका मन्दिर है। वहाँ रवि, सोम, मङ्गल, बुध,
बृहस्पति, शक्र, शनि, राहु और केतुकी मूर्ति पूजा
जाती है।

कालभैरवसे अनतिदूर कालोदक वा कालकूप
है। उस तीर्थमें ज्ञान करनेसे पित्रगणका उद्धार होता
है। (काशोपण्य २१।१८) उक्त कूप इस भावसे अद-

स्थित है कि मध्याह्नके समय सू्यरश्मि ठीक उसके जन
पर पड़ता है उस समय अनेक लोग अदृष्ट परीचार्य
कालकूप दर्शन करने जाते हैं। काशीवासियोंके
विश्वासानुसार मध्याह्न काल जो व्यक्ति कूपके जलमें
पानी प्रतिमूर्ति देख नहीं सकता, वह ६ मासके
मध्य नियम मरता है। कालोदकके निकट ही महा-
काल और पक्ष पाण्डवर्षी मूर्ति है।

कालोदकसे अनतिदूर बृहकालेश्वरका वर्तमान
मन्दिर है। काशीखण्डके मतानुसार—“दक्षिण देशके
मन्दिर्वर्धन नामक ग्राममें बृहकाल राजा रहे। उन्होंने
सहधर्मियोंके साथ काशी जा एक प्रसाद बनाया
और उसमें शिवलिङ्ग स्थापन कराया। वही प्रसादि
शिवलिङ्ग बृहकालेश्वर नामसे ख्यात है। बृहकाले-
श्वर महादेवकी सेवा करनेसे दरिद्रता, उपसर्ग, रोग
पाप किंवा पापजनित फलभोग निवारित होता है।

(काशोपण्य २४ प०)

बृहकालेश्वरका मन्दिर अति प्राचीन है।
अनेकोंके मतानुसार काशीमें प्राजकाल जितने शिवा-
लय देख पड़ते, उन सबसे उक्त मन्दिर पुरातन मन्दिर है।

बृहकालेश्वरके मन्दिर मध्य दक्षेश्वर नामक स्व-
तन्त्र शिवलिङ्ग विद्यमान है। उक्त मन्दिरका छोड
दक्षिणभागमें ‘अल्पमूर्तेश्वर’ शिवलिङ्ग है। भक्तके
विश्वासानुसार अल्पमूर्तेश्वरलिङ्ग अस्यायु मानवकी
दीर्घायु प्रदान करता है। इसीसे विस्तार तीर्थयात्री
उक्त लिङ्ग दर्शन आर अर्चन करने जाते हैं।

किसी समय बृहकालेश्वरके दक्षिण पुराण-प्रसिद्ध
कृत्तिवासेश्वरका मन्दिर था। काशीखण्डमें लिखा है—
“महादेव द्वारा निहत होनेपर गङ्गासुरका शरीर उक्त
स्थानपर शिवलिङ्गरूपमें परिणत हुआ। शिवके गङ्गा-
सुरकी कृत्ति अर्थात् चर्म परिधान करनेसे ही उक्त
लिङ्ग कृत्तिवासेश्वर कहलाता है। वह लिङ्ग काशीस्थ
सकल लिङ्गसे श्रेष्ठ है। उत्तमरूपसे सप्तकोटि महासूद्रो
जप करनेसे जो फल मिलता, काशीमें कृत्तिवासेश्वरकी
पूजा करनेसे बड़ो प्राप्त हो सकता है।” (काशोपण्य २८ प०)

* काशीवासियोंके विश्वासानुसार कालभैरव ही पञ्चमी वारा-
णसीके शासनकर्ता या कीर्तव्य है।

* शिवपुराणमें भी बृहकालेश्वरका नाम मिलता है। (शिवपुराण,
आनन्दविता ५०।६१)

उन्होंने शिरःकम्पन किया था। उसमें उनके कर्णसे मणिभूषण प्रभुके आगे गिर पड़ा। मणि पतित होनेके स्थान पर ही मणिकर्णिका है।

“मानि गङ्गासमं तीर्थं वाराणस्यां विग्रेयत।

तत्रापि मणिकर्णिकां तीर्थं विद्वेश्वरप्रियम् ॥” (सौरपुराण ४। ८)

गङ्गासम तीर्थं नहीं। विग्रेयतः वाराणसीमें विश्वेश्वरप्रिय मणिकर्णिकाके तुल्य तीर्थं दूररे स्थान पर देख नहीं पड़ता।

“संसारिचिन्तामणिरथ यस्मात् त तारकं सञ्जकर्णिकायाम्।

शिवोऽभिषेचे सच्चरणात्मकाले तदगोप्यतेऽगौ मणिकर्णिकेति ॥

सुमिलच्छ्रीमहापेठमणिकर्णिकामुद्रायाः।

कर्णिकेयं ततः प्राङ्मुख्यं जना मणिकर्णिकाम् ॥”

(काशीखण्ड ७। ७६-८०)

संसारी जीवोंके चिन्तामणि विश्वनाथ अन्तिमकाल साधुवोंके कर्णमें तारकब्रह्म उपदेश किया करते हैं। इसीसे उसका नाम मणिकर्णिका है। अथवा वह स्थान सुमिलच्छ्रीके महापीठका मणिकर्णिका और उनके चरणकमलका कर्णिका स्वरूप है। इसीसे मानव उसे ‘मणिकर्णिका’ कहते हैं।

“लक्ष्मणाय तपसो महीपचयदग्नात्।

बन्धव्यादोषितो भौविराद्ययवभूषणः ॥

तदाप्नोन्नतं कर्णात् पपात मणिकर्णिका।

मणिमि खचित्ता रम्या ततोऽनु मणिकर्णिका ॥

चक्रपुष्करिणी तीर्थं पुराख्यातमिदं यमम्।

तथा चरेष खननाच्छदचक्रगदाधर ॥

सप्त कर्णात् पपातेऽथ यदा च मणिकर्णिका।

तदा प्रवृत्ति लोकेऽत्र ख्यातात् मणिकर्णिका ॥”

(काशीखण्ड २६। ६२-६५)

महादेवने कहा है—‘हे विष्णो! तुम्हारी महातपस्या देख हमने विस्मयसे मन्त्रक हिलाया था। उसमें हमारे कर्णसे विचित्र मणिसमूहखचित मणिकर्णिका नामक कर्णभूषण यहाँ गिर पड़ा इसीसे इस स्थानका नाम मणिकर्णिका है। तुम्हारे चक्रद्वारा खनन करनेसे यह पवित्र तीर्थ पड़ले चक्रपुष्करिणी कहाता था पीछे हमारी मणिकर्णिका गिरनेसे यह मणिकर्णिका नामसे ख्यात हुआ।

काशीमाहात्म्यमें लिखा है—कापिल वा सांख्ययोग अथवा बहुत ब्रतद्वारा जो गति नहीं मिलती, सोमभूमि मणिकर्णिका मानवगणको घनायास वही गति प्रदान करती है। ब्रह्मचारी भी अन्तिम काल सुक्तिके लिये मणिकर्णिकाका आश्रय ग्रहण करते हैं। वास्तविक महत् महत् यात्री मणिकर्णिकाका वारि स्पर्श करने आते हैं।

मणिकर्णिकाके घाट पर विष्णुकी ‘चरणपादुका’ है। प्रवाद है—यह भगवान् विष्णुने महादेवका आराधन किया था। एक विस्तृत मर्मर पत्थर पर पदतलकी भाँति दो चिह्न हैं। वह प्राय डेढ़ हाथ विस्तृत हैं। कार्तिक मास नाना स्थानोंसे यात्री उस चरणपादुकाकी पूजा करने आते हैं। वरणामङ्गलके निकट भी उसी प्रकार पादुकाके चिह्न है। मणिकर्णिका घाट पर अनतिदूर सिद्धविनायकका प्राचीन मन्दिर है। उस मन्दिरमें सिद्धविनायक व्यतीत सिद्ध और बुद्धि देवीकी भी मूर्ति है।

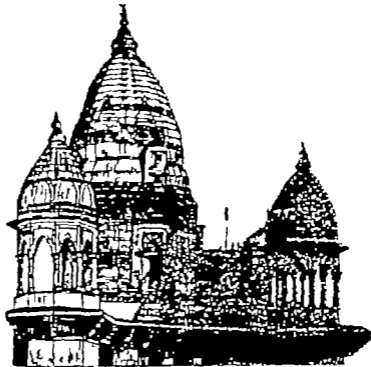
सिद्धविनायकके निकट चमेठीके राजा द्वारा प्रतिष्ठित एक सुन्दर देवालय है। मणिकर्णिकाके समीप संधिया और नागपुरके राजाका वंधाया मनोहर घाट वर्तमान है।

मणिकर्णिकाके विस्तृत सामने तारकेश्वरका मन्दिर है। सौरपुराणमें लिखा है—

“अन्तिमकाल तारकेश्वर काशीवासियोंको तारकब्रह्मका ज्ञान प्रदान करने हैं।” (१८) गङ्गाके पश्चिम घाटपर दिवोदासेश्वरका मन्दिर है। काशीखण्डके मतसे काशीपति रिपुञ्जय दिवोदासने वहाँ एक शिवालय बनाया और उसमें दिवोदासेश्वर नाम शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा कराया था। वह स्थान ‘भूपालश्री’ तीर्थ नामसे विख्यात है (५०११-१२)। वर्तमान मन्दिर बहुत अधिक दिनका प्राचीन समझ नहीं पड़ता। मन्दिरमें दिवोदासेश्वर लिङ्ग व्यतीत ‘धिंशवाहुक’ नामको एक देवमूर्ति है, उसके २० हाथ हैं। मन्दिरकी प्रदक्षिणाके मध्य धर्मरूप नामक एक पवित्र तीर्थ है। किसी किसी पुगावटके मतानुसार पड़ले वर वौहोंका तीर्थ था, पीछे हिन्दुवाका बन गया। काशीखण्डके मतमें

ब्रह्मज्ञान पर विस्तारान्तरमें ही विद्वान्मनुष्यो ब्रह्मपद
 सिद्धता है। (कौटिल्य ११ पं०) द्विबोदाशैश्वर्यमन्दिरको
 छोड़ कुछ भागो बरुमें पर पार्थिव विद्याकाशी देवी
 का मन्दिर नयनमोहर होता है। (कौटिल्य ११, १०२)
 विद्याकाशी मन्दिरके पीछे मौरघाट पर किस

सिद्धि वार पनेक मन्दिर देख पड़ते हैं। वहीं लक्षिता
 देवीके मन्दिर निकट अक्षयायी विष्णुमन्दिर और राज-
 ब्रह्म देवानय है। मङ्गाबचने उक्त लक्षक मन्दिरका
 इत्य प्रति सुन्दर समता है।
 वाराणसीके उत्तर-पश्चिम कोर्णमें नागकूप नामक



ब्रह्मज्ञान विष्णुमन्दिर।

तोर्ण है। पाचकक ब्रह्मज्ञान नामकृष्ण मण्डला कह
 जाता है। यह पंच वाराणसीका प्राचीन भाग समझ
 पड़ता है। प्राय २३५ वर्ष पूर्व बिचो राजानि कक
 रूपको विस्तार अन्तमें पुनः अक्षर कर पञ्चरके रंका
 दिया था। ककको सिद्धी पर एक ज्ञानमें ३ नागमूर्ति
 और पपर ज्ञानमें एक सिक्किङ्ग देखते हैं। वहाँ नाग
 और नागेश्वरमिथको पूजा होती है।

नागकूपके पीड़ी दूर काशीखरी देवीका मन्दिर है।
 ककको देवी मूर्ति अष्टबातुनिर्मित है। गिर पर लक्ष्म
 सुन्दर मोमित है। काशीखरी देवी बिचोपरि पवकित
 है। मन्दिर मी देखने योग्य है। उरुके वरामदेमें
 नागपर्व देखेकोकी मूर्ति विगत है। मन्दिरके एक

कोर्णमें पनेको राजवदता पञ्चरको एक सिद्धमूर्ति है।
 पतञ्जिक राम, लक्ष्मण, शोता मधुति और नवपञ्चकी
 मूर्ति मी हैं।

बागोखरीमन्दिरके निकट जो अक्षरदेवताका
 और सिद्धेश्वरका मन्दिर है। जनेक सोमके विद्यासातु
 सार अक्षरदेवता महादेवकी पूजा करनीसे सर्वमकार
 अक्षर निवारित होता है। नमी प्रकार सिद्धेश्वर
 मानवकी सम्पत्तामना सिद्ध करते है।

उक्त मन्दिरमें बिलानेपुष्पा तथा कादकार्य पच्छा है।
 वाराणसीमें द्वापारमेवघाट मी एक महातोर्ण है।
 वहाँ गत गत मन्दिर बने हैं।

“साहाय्य प्राप्य राजर्षिर्दिवोदासस्य पद्मसुः ।

इयाञ्च दशभिः काश्यामश्वमेधैः कशासत्वे ॥

तीर्थं दशाश्वमेधाख्यं प्रथितं ऋणतोतले । . .

पुनः रुद्रसरो नाम ततीर्थं रुद्रसरोरुप ।

दशाश्वमेधिकं पराज्जातं विधिपरिग्रहात् ॥”

(काशीखण्ड १२ । ११-१८)

ब्रह्माने राजर्षिं दिवोदासके सहायसे काशीमें दश
अश्वमेध यज्ञ किये थे । तदवधि उनके यज्ञ करनेका
स्थान दशाश्वमेधतीर्थ नामसे जगत्से विख्यात हुआ ।
पुराकालको उक्त तीर्थ रुद्रसरोवर कहाता था । ब्रह्माके
यज्ञावधि उसका नाम दशाश्वमेध पड़ गया ।

दशाश्वमेधमें ब्रह्माने दशाश्वमेधेश्वर नामक शिव-
लिङ्ग स्थापन किया था ।

“तत्र स्थात्वा महाभाग भवन्ति श्रीरक्षा नराः ।

दशाश्वमेधनां फलं तत्र प्राप्नोति मानवः ॥

(मत्स्यपुराण, १८१ । ०१)

उस (दशाश्वमेध) तीर्थमें स्नान करनेसे मानव
रोगशून्य होते और दश अश्वमेधका फल भोगते हैं ।

काशीखण्डमें लिखा है कि दशाश्वमेधतीर्थमें
केवल मात्र तीन आहुति प्रदान करनेसे अग्निहोत्रयाग-
का फल मिलता है । (काशीखण्ड ११ । १०८)

अद्यापि दशाश्वमेधेश्वर और ब्रह्मेश्वर नामक
शिवमन्दिर बना है । काशीखण्डके मतमें उक्त उभय
लिङ्ग ब्रह्माने प्रतिष्ठित किये थे । प्रथम लिङ्ग कृष्य
पापाणमय और प्रायः ४ हाथ उच्च है । सम्मुख एक
घुड़दाकार द्वयम मूर्ति है । काशीमाहात्म्यके मता-
नुसार दशाश्वमेधमें स्नान कर दशाश्वमेधेश्वरके दर्शन
करने पर मानव समस्त पातकसे मुक्ति पाता है ।
च्येष्ठ मासकी प्रतिपद और दशहराकी विस्तर तीर्थ-
यात्री एकत्र होते हैं । काशीखण्डके मतानुसार उक्त
उभय दिन दशाश्वमेधमें स्नान करनेसे आजन्मकृत
अथवा दशजन्मार्जित पाप कट जाता है । ब्रह्मेश्वरलिङ्ग
दर्शन करनेसे भी मानव ब्रह्मलोक पाता है ।

दशाश्वमेध-मन्दिरके निकट ही ‘रुद्रसरो’ नामक
तीर्थ है । काशीखण्डके कथनानुसार उक्त तीर्थमें स्नान
करनेसे जन्मद्वयकृत पाप विनष्ट होता है ।

दशाश्वमेध-घाटमें दशहरेश्वर प्रसृति अनेक देव-

मन्दिर हैं । एक ही साथ कतार कतार उतने अधिक
मन्दिर काशीमें अन्य किसी स्थान पर देख नहीं पड़ते ।

दशाश्वमेधघाटके उत्तर मानमन्दिरघाटके निकट
दानश्वेश्वर, सोमेश्वर, विष्णु, गीतला, वाराही देवी
प्रभृतिके मन्दिर बने हैं ।

वाराणसीसे पश्चिम नगरसीमाके बाहर पिशाच-
मोचन तीर्थ है । वहाँ एक प्राचीन स्थान है । कर्म-
पुराणमें भी उसका उल्लेख है । (पुराण, ११ । २) प्रायः
काशीयात्री मात्र उक्त तीर्थके दर्शनको जाते हैं ।

काशीमाहात्म्यमें कहा है :— किसी समय एक
पिशाच बलपूर्वक काशी पहुँचा था । अपरापर देवता
उसकी गति रोक न सके । शेषकी कालभैरवने युद्ध
कर पिशाचका मस्तक हिरण्य कर डाला । फिर
भैरवनाथ पिशाचका मुण्ड ले विश्वेश्वरके निकट सप-
स्थित हुये । देहदान होते भी पिशाचकी जीवनशक्ति
वा वाक्शक्ति गयी न थी । उसने विश्वेश्वरसे प्रार्थना
की कि वह काशीसे हटाया न जाय । आशुतोषने उस
की प्रार्थना, प्रायश्चित्त की । पिशाचने अवशेषकी फिर कहा
‘हे विश्वेश्वर ! आप अनुमति दें जिसमें गयायात्री
विना मुझे प्रथम दर्शन किये गया यात्रा न कर सकें ।’
विश्वेश्वरने वही अनुमति दे डाली । तदनुसार अनेक
यात्री प्रथम पिशाचमोचनका दर्शन कर पश्चात् गया
जाते हैं । कालभैरवने उस तीर्थमें पिशाचका मुण्ड
फेंका था । इसीसे उसका नाम पिशाचमोचन पड़ गया ।
वहाँ प्रतिवर्ष कई मेले होते हैं । उनमें ‘लोटाभण्डा’
मेला प्रधान है ।

पिशाचमोचन घाट कुछ मीराबाई और कुछ गो-
पालदास साधुके द्वारा पत्थरसे बंधाया गया । घाटका
दक्षिण प्रायः तीस गत वर्ष पूर्व राजा शिवशम्भर और
उत्तर अंग प्रायः गताधिक वर्ष पूर्व राजा मूरसोहरने
बनवाया था ।

पिशाचमोचनकी पूर्व और दो मन्दिर हैं । उनमें
एक मीराबाईका प्रतिष्ठित है । मन्दिरकी चारो दिक्
अनेक देवमूर्ति हैं । कहीं शिव, कहीं उन्हींके पार्श्वमें
पिशाचका छिन्न मुण्ड, कहीं विष्णु-लक्ष्मी, सूर्य, गणेश,
हनूमन् प्रभृतिकी मूर्ति शोभा पाती हैं ।

उपरोक्त श्यामी सूर्यकुण्ड या साम्नादित्य है। श्यामी सूर्यकुण्ड में बसित है—विष्णोश्चरणी पश्चिमदिक् नाम्ना यतो-नन्दन । साम्नादि पादित्य देवकी उपासना की थी। यह श्यामीके पश्चिमपक्षे कुष्ठरोगाञ्जना रूपि। उक्त दाक्ष्य व्याधिसे मुक्ति लानके लिये यह श्यामीके या एक कुण्ड निर्माण पूर्वक सूर्यको पारासना कर मापसे कूटे। साम्नाप्रतिष्ठित साम्नादित्य नामक सूर्य-विग्रह मङ्गलगणकी सर्वप्रकार सम्बद्ध प्रदान करता है। साम्नादित्यकी सेवा करनेसे जो कमी बिधवा नहीं होती। माघ मासमें रविवार पर यज्ञप्रसप्तमीका साम्ना कुण्डकी वास्तिरक याज्ञा पड़ती है। उक्तदिन साम्नाकुण्ड में स्नान कर साम्नादित्यकी पूजनसे उररुद्ध रोगभी माना जाता है।”

श्यामीसूर्यकुण्ड नामक श्यामीसूर्यकुण्ड है। सूर्यकुण्डके बन्धुपुत्र एक सुद्ध मन्दिरमें पहाड़ मेरवकी मूर्ति है।—दिग्विधेयो धोरहृदोवर्धन नव मूर्ति पञ्चशोभ नरुहाकी थी।

उसी पक्षमें शुकेश्वरका मन्दिर है। श्यामीसूर्यकुण्डके मतमें शुकेश्वर नव शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया था। शाराश्वकी एवशानमण्डलमें विष्णुपात यामि-श्वरका मन्दिर है। उक्त मन्दिरकी चारों ओर प्राचीर है। मन्दिरमें पनेक देवमूर्ति प्रतिष्ठित हुये हैं। मन्दिरकी शारोवरी पश्ची ओर देवकी योग्य है।

एवशानमण्डल मण्डलके अधिष्ठित श्यामीपुत्र मण्डलमें श्यामी देवीका मन्दिर बना है। वही श्यामीकी पश्चि-लाती देवी है। श्यामी देवीके मन्दिरके पश्चिमदिक् सप्टम अर्ध तासाह है। श्यामीसूर्यकुण्डके मतमें उक्त 'बण्डाअर्धकुण्ड' कहते हैं। उक्त अर्धके निकट चिन्नबण्डेश्वरी विराज करती है। अर्धके तीर सप्टमअर्ध नामक मण्डलके प्रतिष्ठित सप्टमअर्धेश्वर नामक शिवलिङ्ग है।

(श्यामीसूर्य ३१ : १२-१७)

बण्डाअर्ध कुण्डके तीर शिद्व्यामिश्वरका मन्दिर है। उक्त मन्दिरमें शिद्व्यामिश्वरकी मूर्ति धोर तदुप्रतिष्ठित शिद्व्यामिश्वरका शिवमण्डल है। श्याम मासमें बण्डा अर्धकुण्ड धोर तद्विकटक मन्दिरके दर्शनको विद्वार तीर्थयात्री वर्ति है।

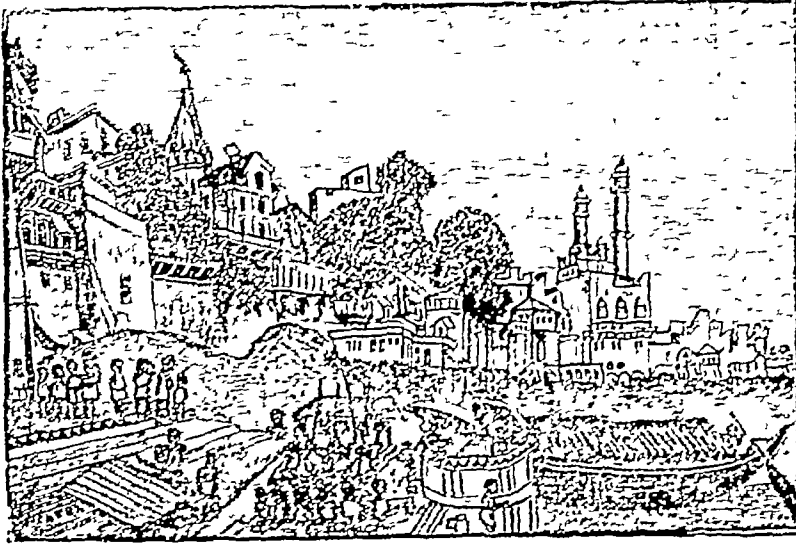
श्यामीदेवीके मन्दिरके कुछ उत्तर मृतमेरव या विरम मेरवका मन्दिर है। मृतमेरवका मूर्ति पञ्चतुत है। वहां पपरापरदेवमूर्ति भी हैं। उनमें पश्चत्य उक्त के प्रकाशके उदित उदत्त शिवलिङ्ग शो प्रधान है।

उसी मण्डलमें शारमण्डल धोर अगवायदेवका मन्दिर है। एक स्थानमें दोमतोकी प्रस्तारमूर्ति है। उक्तमें पतिका सहममन किया था। सवका स्त्री का कर उक्त दो मनी मूर्तिकी पूजा करती है। वहां हुसरो भी पनेक पञ्चशोभ पावाचमूर्ति है। कानवय पपरा सुयममान कत्याकनसे उक्त मण्डल देवमूर्तिकी बंधी सुदं-या हुयो है। वहां प्राचीन शिवमनेपुत्र देव चमत्कृत शोना पड़ता है।

शाराश्वकी मण्डलमें चिन्मोचनका प्राचीन मन्दिर है। श्यामीसाक्षात्कारमें लिखा है—“शिव समय शिव ध्यानमें निमग्न रह, शिव्य प्रसन्न सख्य पुण्यसे उनको पूजा करती से। एक दिन शिव्य शिवपूजामें निरत रहे। उही समय शिवने उनका एक पूजक उठा रखा। उक्तके पीछे शिव्यने पुण्याशक्ति देनेके समय एक एक कर ८८८ पूज देयोहोयसे चर्चक किये। शिवकी उक्तमें देखा कि एक फूल न था। शिबर्तक शिवसूत्र होकर पश्चिमकी मगवतने पपना एक निरुद्धमल उदर्य किया। अगवाक देवपर वह मंत्र पढ़ते औ शिवकी तौन शिव शो मये धीर, वह शिवाचन.. नामसे विष्णुपात हुये।”

चिन्मोचनका वर्तमान मन्दिर पूजाके नायुकाशाने बनबाहा था मन्दिर बहुत प्राचीन नहीं। शिन्तु तत्-स्थानीय उक्त देवमूर्तिके प्राकृतिकदर्शनमें वह पश्चिम प्राचीन—अथा समस्त पड़ता है। श्यामीसूर्यकुण्डके मतमें तुत्तर—“शिवसुवन्दक मण्डल शाराश्वकी पुरो शो सर्वोपेथा भेद है। उक्त शाराश्वकीके प्रथमैदवर लिङ्ग धोर उक्तमें शो उक्त चिन्मोचन लिङ्ग उक्त है। मण्डलमें कनिकाकसे शि-मोचनकी मदिमा किया रकी है। (श्यामीसूर्य २०:११:१८)

मन्दिरकी क्षीमामें प्रथम अग्ने पर विविध दिग्-होके मूर्ति दर्शनमें नयन धोर मन पाहट होना है। वहां हुसरी मा सुद्ध सुद्ध मन्दिर है। मनेत्र प्राव १ १० वां २० के पश्चिम शिव धोर निरुद्धकी मन्दिमूर्ति



अग्नितीर्थ—शग्नीश्वर घाट ।

देखते हैं। दक्षिणभागमें देवसभा है वही विख्यात कोटिलिङ्गेश्वरमूर्ति वर्तमान है। वहाँ लिङ्ग २ इन्द्र पञ्च है। लिङ्गका अङ्ग इस प्रकार गठित है कि देखते ही गत गत शिवलिङ्गका एकत्र अधिष्ठान समझ पड़ता है। मन्दिरके दक्षिण भागमें राजा बनार प्रतिष्ठित वाराणसी देवीकी मूर्ति है। एतद्भिन्न इधर उधर गणेश, सूर्य, शीतला, हनूमान् प्रभृतिकी मूर्ति भी दृष्टिगोचर होती हैं।

त्रिलोचन मन्दिरके द्वार समुख युग्ममन्दिर है। वहाँ बाहरसे भीतर तक असंख्य देवमूर्ति विराज करती हैं। उनका दृश्य देखते ही विस्मित होना पड़ता है।

त्रिलोचन मन्दिरका वरामदा लाल रंगके षाठ स्तंभोंपर स्थापित है। उसका पटल (छत) विविध चित्रसे चित्रित है। वरामदामें बड़ी घण्टालटकती है। प्रवेशद्वारके पाशुवन्देयमें वृहत् खेत प्रस्तरकी एक छषभमूर्ति है। वहाँ गणेशादि देवमूर्ति व्यतीत सिख शुभ नामकशाहकी प्रतिमा अस्ति है। वहाँ नरक और मृत्यु नदीका दृश्य बहुत अनोखा है। वहाँ इस बातका सुन्दर चित्र देख पड़ता—पापी मानवगण किस प्रकार दण्ड पाता और काल नदीके परवार जानेकी कैसे व्याकुल होता है। उक्त मन्दिरकी छीट

कुछ दूर पर त्रिलोचनघाट है। वहाँ भी शिल्प और कारुण्य शोभित सुन्दर देवानयन वना है। उक्त सकल देवालयके बाहर भीतर चारोदिक अनेक शिवलिङ्ग रखे हैं।

त्रिलोचनघाटका प्राचीन नाम पिम्पिलतीर्थ है। काशीखण्डमें कहा है—गङ्गाके सहित मिलित ही सरस्वती, यमुना और नर्मदा वहाँ हास्य करती हैं। उसी पिलपिशा तीर्थमें जो व्यक्ति स्नानकर पिच्छादादि करता, उसकी फिर गयामें जानका का प्रयोजन पड़ता है। पिलपिशातीर्थमें स्नानान्त पिच्छप्रदान कर त्रिपिष्टपिङ्ग दर्शन करनेसे कोटितीर्थ दर्शनका फल लाभ होता है। सरस्वती, यमुना और नर्मदा तीन पापविनाशिनी त्रिलोचनकी दक्षिणदिक् त्रिपिष्टपिङ्गकी स्नान करानेके नियम समवेत दृश्ये हैं। उक्त नदीत्रयने अपने अपने नामसे एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा किया है। त्रिपिष्टपकी दक्षिणदिक् सरस्वती श्वर, पश्चिमदिक् यमुनेश्वर और पूर्वदिक् सुखपद नर्मदेश्वर हैं। उक्त तीन लिङ्गके दर्शनसे महापुण्य मिलती है। (काशीखण्ड ५०।५-११)

अद्यापि त्रिलोचनके निकट त्रिलोचनघाटमें उक्त सकल प्रतिमा विराज करती हैं।

मङ्गलागौरीके दक्षिण चारघाट है। उसके प्राची

रामघाट पड़ता है। वहाँ भी विन्दर दिवालय है। राम घाटके दक्षिण ओर मन्दिरघाट है। वहाँ ओर मन्दिरमें पादरत्नार्च प्रथमि तिनमूर्ति है। उक्त दक्षिण प्राचीन चम्बितोर्ण (वतमान चम्बोखारघाट) है। चम्बितोर्ण के तीर चम्बोखार मन्दिर अतीत दूर है माँ चम्बेक दिवालय है।

त्रिमोचनघाटके निकट चादि महादेवका एक अत्यन्त मन्दिर है। उक्त मन्दिरमें प्राचीन ध्यानासन देख पड़ता है। महादानुषार उक्त ध्यानासन पर बैठ बैठ ध्यान बैठपाठ करने से। वहाँ पावाचमयी पादोत्तोरको प्रतिमा है। पूर्वतल पादोत्तोरको मन्दिर बिलिख हो गया था। योरको नामक एक विद्यालय गुजराती ब्राह्मणमें जामोचनघट धानुपूर्वक पठ प्राचीन देवमूर्ति पीर तीर्थ मन्त्रको उद्धार करनेकी सिद्धा लगायो। चम्बोमें प्राचीन पादोत्तोरको प्रतिमाका धनुसध्यान न पा लखके ध्यानमें वतमान प्रतिमा प्रतिष्ठा की है।

पञ्चनद्याघाटका अपर नाम पञ्चनद का चर्मनद तीर्थ है। जामोचनघटके मतमें—“चर्मनदमें पूतपापा विरथा, घरछतो, नङ्गा पीर उमुना पांच नदी जाकर मिली है। जमीने जमका नाम पञ्चनद है। राजसुय पीर पदपमिबके चरधरकी पपीता पञ्चनदतीर्थमें स्नान करनेमें शतगुण अधिक फल प्राप्त होता है।” (चम्बोचन ३८। १११-११२)

पञ्चनद केवल यज्ञानदा इष्ट होती है। माघ-रव विवाहमें पनुषार दूसरी चारो नदी भूमिके मन्त्र चम्बोचलिका बहती है।

वहाँ मङ्गनामोरी पीर विन्दुमाधवका मन्दिर है। जामोचनघटके अथमाधुमार—पञ्चनदतीर्थमें स्नान कर विन्दुमाधवकी दयान करनेमें मनुष्य फिर जमी मर्ष हाथयन्त्रका भोग नहीं करता। जमी मन्त्र मङ्गना मोरीकी चर्मना करनेमें बन्धा छोड़ो भो पुत्र काम कर सकतो है। (चम्बोचन ३८। ११२-११६)

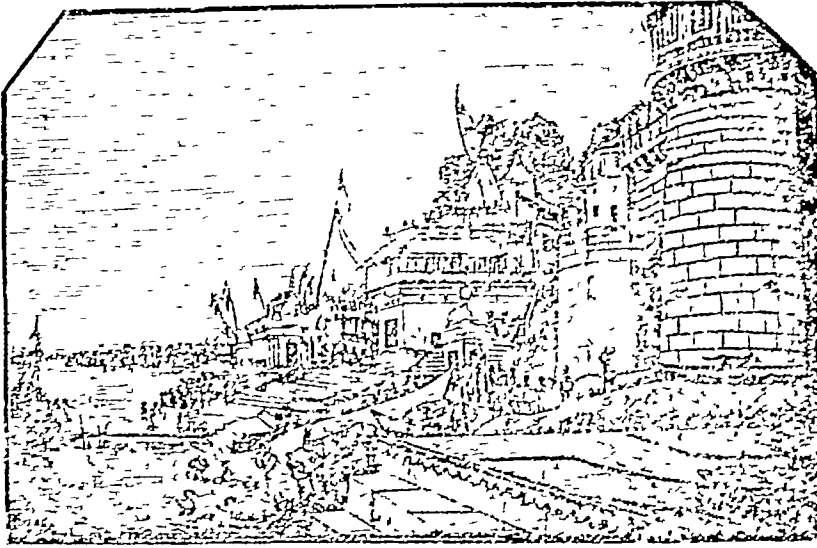
जमी स्नान पर चिन्दुविधो पीरज्जनेने पुरातन विन्दुमाधवका मन्दिर चम्बे करा चिन्दुदेवालयको कहता चम्बे करनेके निधि बहुत अर्थो मोलारसे सजो एक बड़ी मन्त्रिद बनायो थी।

त्रिमोचनघाटके पश्चिम कामोचन पश्चिम प्राचीन मिश्रितकालके पनीक मन्दिर है। उक्त प्रायः सत्सक मन्दिर का वर्षे जातिन पीर सुद सुद बड़ा है। जामोचनघटके मतमें—देव कामोचन साधुगणकी कामना पूर्ण करती है। मन्त्रार्चन पूर्ण करनेके लिये भगवान् सिद्धमें मौन रूप है। जमीने सखीन नाम पड़ा है।

(चम्बोचन ११। १११-११२)

उक्तके निकट प्राचीन मन्त्रोद्धारो तीर्थ था। मिश्र-पुराणादिमें उक्त प्राचीन तीर्थका उल्लेख है। जामोचनघटके मतानुसार मन्त्रोद्धारो तीर्थमें स्नान करनेमें मानव फिर गमकल्पका भोग नहीं करता। उक्त तीर्थका पादक कक्ष चिन्मार्ज नहीं मिलता। प्राय ८० वर्षे पूर्ण जियो साधनमें उलका मोद कर दिया जा। पक्षिबर्हा प्रनेक तीर्थघाटो स्नान करन जाये से। जिनु तीर्थ कोपके साथ जातिबोको मण्डा मो हट सखी है।

जामोचि बगलको-टोमामि सेदारिखरका मन्दिर है। जामोचनघटमें सेदारिखरको अत्यन्त लम्बक परबिखा है—“उत्तरजिमीमें बसिष्ठ नामक एक ब्राह्मणतनत्र रहे। वह जिमानयण सेदारिखरके बड़ेमसे यात्रा कर जामो पहुंचे। वहाँ जम्बोने प्रतिष्ठा की तो— इस वर्ष तक जोरि रहेगी प्रति चैत्रमास सेदारिखरके दर्शनकी यात्रा करेगी। फिर जम्बोने ३१ बार सेदारिखर दर्शन किया। बहुकाल पर बसिष्ठने पूर्ववत् सेदारिखरके दर्शनार्थ सहाय किया, जिनु पति एक एक सत्रपर पश्यने जम्बे जाने मना किया। तथापि उक्त उच्छाह दूर न जा। जम्बोने फिर किया कि राजमें मरना भी पञ्चन परन्तु सेदारिखरके दर्शनको पश्यन चम्बोमें। जन्मि वाच-रचसे सेदारिखरके अग्रमें दर्शन दे कहा जा—“इस तुम्हारे अपर ननुष्ट हुये हैं। वर मांगो। ब्राह्मण कहने लगा—“यदि पाप हमारे अपर प्रसन्न हुये है, तो जिमानयणे पाकर वहाँ पश्यान कोजिये। भगवान्ने मन्त्रके प्रति चम्बुष्ट की पपनी कन्यामात्र जिमनेने रण उक्त ज्ञान पर जाकर चम्बुर्ण माधके दरपापञ्चदमें पश्यान किया। जिमानयणकी पपीता जामोमें सेदारिखरका दर्शन करनेमें शत गुणा अधिक फल मिलता है। जिमानयणकी मति जामोमें भो मोरो



पोपला घाट ।

कुण्ड, हंसतीर्थ और गङ्गा आदि वर्तमान हैं। पुरा-
काल गौरीने उक्त महाझटमें स्नान किया था। उसी
से "गौरीकुण्ड" नाम विख्यात हुआ। उसका अपर
नाम मानसतीर्थ है। केदारकुण्डमें स्नान करनेवाले
को केदारेश्वर मुक्ति प्रदान करते हैं।

(काशोधरण, ७० प०)

चार छोटे छोटे मन्दिरोंके मध्यस्थलमें गङ्गातीर
पर केदारेश्वरका वृहत्तमन्दिर अवस्थित है। मन्दिर-
का वरामदा लाल और सफेद है। अनेक देवमूर्ति
शोभा पा रही हैं। अनेक मूर्ति ऐसे सुन्दर भावसे
बनी, कि देखनेमें जाती जैसी मालूम पड़ती हैं। केदा-
रेश्वरकी मूर्ति व्यतीत वहां अन्नपूर्णा, लक्ष्मीनारायण,
मलेश, भैरवनाथ प्रभृतिकी प्रतिमा भी हैं। मन्दिरके
पूर्व प्राचीरसे गङ्गातीर अवधि पत्थरका घाट बंधा है।
घाटकी सिंहीके एकपाश्वर्यमें एक वृहत् कूप है। काशी-
खण्डमें उसका नाम हरपापझट वा गौरीकुण्ड लिखा है
केदारेश्वर मन्दिरसे उत्तर-पश्चिम थोड़ी दूर मान
सिंहउल्हात मानमरीचर नामक गम्भीर जलाशय है।
उसकी चारों ओर प्रायः ५० मठ बने हैं। वहां राम
लक्ष्मणका मन्दिर ही प्रधान है। उस मन्दिरकी सीमा-
में एक स्थान पर दत्तात्रेयकी प्रतिमा है। एतद्भिन्न
उक्त स्थान पर प्रायः सहस्राधिक देवप्रतिमा देख

पड़ती हैं। अनतिदूर मानसिंह-प्रतिष्ठित मानेश्वर
नामक शिवलिङ्गका मन्दिर भी है।

मानेश्वरके पश्चिम तिलभाण्डेश्वरका मन्दिर बना
है। तिलभाण्डेश्वरकी प्रतिमा ३ हाथ ऊंची किन्तु
१० हाथ चौड़ी है। साधारणके विश्वासानुसार उक्त
प्रतिमा प्रत्यक्ष तिल परिमाण बटती है। इसीसे उस-
को तिलभाण्डेश्वर कहते हैं। वृहत् मन्दिर भी देखने-
की चीज है। मन्दिरका कोई कोई अंग प्रति प्राचीन
है। सुना जाता है कि चार सौ वर्ष पूर्व किसी राजाने
उसे निर्माण कराया था। मन्दिरके निकट इधर उधर
असंख्य देवप्रतिमा हैं। एक स्थान पर 'हस्तपद एवं'
शिरः शोभित एक वृहत् लयावर्ण शिवप्रतिमा है।
काशीमें सर्वत्र शिवलिङ्ग विद्यमान हैं। किन्तु वैसी
बड़ी प्रतिमा एक भी देख नहीं पड़ती। एक समय
उसके मन्दिर और वरामदेमें अच्छा शिल्पकार्य था
हूत और कारनिसमें भी अनेक प्रतिमा अस्तित्व में थीं।
आजकल कालवश वैसा दृश्य नहीं रहा।

तिलभाण्डेश्वरके निकट एक स्थानमें अश्वत्थ वृक्ष-
के तल पर एक भग्न प्रस्तरप्रतिमा रखी है। अनेक
लोग उसे बौद्ध प्रतिमा अनुमान करते हैं। उसका
नाम घोरभद्र है। उस प्रतिमामें शिल्पनपुष्पका जैसा
परिचय मिलता, वैसा दूसरीमें देख नहीं पड़ता।

इयमप्रभिव पीर कदारनाथके मन्त्र चनेक खानो पर कई दिक्कनको सोके हैं उनमें पाण्डुनिक होवे भी खनीक पायतोव देवप्रतिष्ठित लङ्कहत् दुनासीश्वर नामक विभक्तिकु पीर बनना मन्दिर चङ्गेखयोग्य है।

संख्या कर नहीं सरी कायोमि बितनी पूरती ठेक प्रतिमाये है। मङ्गाके तीर प्रति घाटमें देवानव संक पड़ती है। उनमें चम्पेश्वरके दक्षिण एवं चक्र पुष्करिणीके उत्तर सङ्गाघाट, यमेश्वरघाट, घोषका घाट और शोमठ लङ्गेक पाय है।

गङ्गाके तीर जोकीघाट पर कर्केश्वरका मन्दिर है। उसके निकट विष्णु कागप्रतिमा बिराज करती है।

गङ्गाके तीरके पूरवे एक दोना दीव पड़ती है। दोकार्क नाम इयमुना दुर्गाको मूर्ति है। वह क्या जो सुन्दर और खेसो सुसजित है।

कायोको दुर्गाकाओ प्रति पवित्र है। कायोखण्ड पाठसे समझती कि वहां दुर्गामूर्ति बहुत दिनसे प्रतिष्ठित है। वहांमान दुर्गामन्दिर रानी मन्त्रीके व्यवस्था बना वा। मन्दिरका बरामदा उक्त समयमें प्रवेशद्वारका बनाया है।

दुर्गाकाङ्गीकी बनना दीव पाचर्यमें पागना पड़ता है। इसकी चौरी संख्या नहीं देव विदेगसे बितने लोक्याओ जाती है। प्रत्यक्ष मानो देवके मन्दिरमें मङ्गेश्वर है। प्रत्यक्ष देवी पार्वतीको दीनिधि निमित्त जानबलि होता है। प्रति मङ्गेश्वरको देवके कई एक भिखा जयता है। प्रतिवर्त आवक मासमें मङ्गेश्वरको बड़ा भिखा होता है। इसकी संख्या नहीं—उक्त समय बितने तीर्थयात्री वहां जाते हैं ?

मन्दिरका बाह्यभाग पीर विष्णुमण्डप पर्यन्तकी मोक्ष है। वहां भिखावाराजप्रद एक बड़ी खण्डा मट जाती है। दुर्गाकाङ्गीको प्राचीरभीमाके मन्त्र पवित्र दुर्गाकुण्ड है। दुर्गाकुण्डके पूर्व जोको दूर कुक्षीजतलाक है। उक्त जलायग भी रानी भवानीको खोति है।

उसी मङ्गलमें पवित्र नानाकुण्ड है। मङ्गल पुराण (१८३। ६३), कूर्मपुराण (३३। १०) पीर कायोखण्डमें उक्त पवित्र तीर्थका/माहात्म्य खोति'त हुआ है। कायोखण्डमें कहा है—

“कायोधि वर्यंनष्टे सूर्यका मन पतिगव कोच हुआ वा। उसीके सूर्यका नाम कोकार्क पड़ गया।

“दक्षिणदिक् पक्षिसङ्गमके निकट कोकार्क (सूर्यमूर्ति) पवजित है। वह सूर्यदा कायोवासीका मङ्गल बिधा करती है। पचपादक मासके रविवारका कोकार्कको वार्तिकी यात्रा खानेसे मानव पापमुक्त होता है। कोकार्कमङ्गलमें स्नान करनेसे पनलाखानके किये सत् कर्म सिद्ध हो जाता है।” (कायोखण्ड १८। १०२)

रानी पचख्याबाई, पचतराय पीर मिबिखाचिपनि भोवाक कुण्डका स्नान करामा वा।

कोकार्क कुण्डकी चारो पार मथियादि नानाविध देवमूर्ति है। कुण्डके दक्षिण तीर मङ्गेश्वरका मन्दिर बना है। मङ्गेश्वरका मङ्गल भी प्रति हङ्गु है।

पुष्पखाम वाराचधामे बहुत प्राचीन पीर प्राचीन देवमूर्ति एवं पवित्र तीर्थ है। कायोखण्डमें कायोख प्राचीन तीर्थका विवरण इस प्रकार दिया है—

“उमय्य जगत्के मन्त्र वाराचको पुरी प्रति पवित्र ज्ञान है। उसके भी मध्य गङ्गा पीर पक्षिसङ्गम प्रति गव पवित्रतर है। पक्षिसङ्गमसे इयपीवतीके पक्षि तर पुष्करप्रद है। वहां विष्णु इयपीव रूपमें पवज्ञान करती है। उक्त इयपीवतीके भी मङ्गलके पवित्र पुष्करप्रद है। वहां स्नान करनेसे मङ्गलका फल मिलता है। मङ्गलके भी वाराचतीर्थ पुष्पदायक है। वहां कोकारका देवकी पूजा करनेसे फिर कथ्य हीना नहीं पड़ता।

“दिलीपेश्वर महादेवके निकट दिलापती है। वह कोकारका तीर्थके खेडतर है। सपरेश्वरके निकट सगरतीर्थ है। वह दिलीपतीर्थके भी खेडतर है। पचपाय तीर्थ, मनीद्वितीर्थ, कापेश्वरके पीरतीर्थ, केशरी श्वरके निकट जंनतीर्थ, ब्रह्मवर्णके मङ्गलतीर्थ, गोव्यात्रेश्वर तीर्थ, मायाखरीके सुत्रुण्डतीर्थ, पक्षिपीव करके निकट पूरुतीर्थ, परशुरामतीर्थ, वनमङ्गलतीर्थ इतने निकट दिरोदासतीर्थ, मानोरकोतीर्थ मानोरको लटपर निष्पक्षि य करनिकुके निकट इरवापतीर्थ उमके/धामे इयाम् क-

“नानाक लक्ष्मीके व पीरु २३११८८८ ।
पीर कीर्णके इयाका बाबा बना विरलन ३” (कायोखण्ड १८। १०२)

तीर्थ, वन्देतीर्थ (यहाँ देवोंने दैत्यगणकुट्टक बन्दी होने पर भगवतीका स्तव किया था), प्रयागतीर्थ, लौणीवराहतीर्थ, कालेश्वरतीर्थ, अशोकतीर्थ, शकतीर्थ, भवानौतीर्थ, सीसेग्रके पुरोभागमें अवस्थित प्रभासतीर्थ, गरुडतीर्थ, ब्रह्मेश्वरके पुरोभागमें ब्रह्मतीर्थ, हृदाकतीर्थ, विधितीर्थ, नृसिंहतीर्थ चित्रगघीश्वरतीर्थ, धर्मेश्वरके निकट धर्मतीर्थ, विशालाक्षी देवीके निकट विशालतीर्थ, जरासन्धेश्वरके निकट जारासिन्धेश्वरतीर्थ, लसितादेवीके निकट लसितातीर्थ गौतमतीर्थ, गङ्गाकेशवतीर्थ, अगस्त्यतीर्थ, योगिनोतीर्थ, तिसम्भ्रातीर्थ, नर्मदातीर्थ, अरुन्धतीतीर्थ, वशिष्ठतीर्थ, मारकण्डेयतीर्थ, खुरकतंरितीर्थ, भागीरथतीर्थ और वीरेश्वरके निकट वीरतीर्थ, उत्तरोत्तर अष्ट और अधिपुण्यप्रद है ।" (काशीखण्ड ८५ अष्टाध)

“एतद्भिन्न पादोदकतीर्थ, क्षीराखितीर्थ, शङ्खतीर्थ, चक्रतीर्थ, गटातीर्थ, पद्मतीर्थ, महामन्त्रीतीर्थ, गारुत्मतीर्थ, नारदतीर्थ, प्रह्लादतीर्थ, अन्तरीपतीर्थ, आदित्यकेशवतीर्थ, दत्तात्रेयतीर्थ, भार्गवतीर्थ, वामनतीर्थ, नरनारायणतीर्थ, विदारनरसिंहतीर्थ, यश्वराहतीर्थ, गोपोगोविन्दतीर्थ, शेषतीर्थ, शङ्खमाधवतीर्थ, नीलशैवतीर्थ, उद्दालकतीर्थ, सांख्यतीर्थ, स्वर्नतीर्थ, महिषासुरतीर्थ, वाणतीर्थ, गोपतारेश्वरतीर्थ, हरिण्यगभतीर्थ, प्रणवतीर्थ, पिशाङ्गलातोद्य, नागेश्वरतीर्थ, कर्णादित्यतीर्थ, भैरवतीर्थ, खर्वनृसिंहतीर्थ, ज्ञानतीर्थ, मङ्गलतीर्थ, मयूखमासितीर्थ, मखतीर्थ, विन्दुतीर्थ, पिप्पलादतीर्थ, ताम्रवाराहतीर्थ, कालगङ्गातीर्थ, इन्द्रद्युम्नतीर्थ, रामतीर्थ, ऐस्लाकतीर्थ, सरुतीर्थ, मैत्रावरुणतीर्थ, अग्नितीर्थ, अङ्गारतीर्थ, कससतीर्थ, चन्द्रतीर्थ, विष्णेशतीर्थ, हरिसिन्दरीतीर्थ, पर्वततीर्थ, कञ्चलाश्वरतीर्थ, सारस्वतीतीर्थ, उमातीर्थ, रुद्रावासतारकतीर्थ, दृष्टितीर्थ, ईशानतीर्थ, नन्दितीर्थ, (काशीखण्ड ८४ अ०) मन्दाकिनतीर्थ, दुर्वासतीर्थ, ऋणभोजनतीर्थ, वेतरणीतीर्थ, धृष्टकतीर्थ, मिनकाकुण्ड, सब शोकाकुण्ड, ऐरावतकुण्ड, गन्धर्वकुण्ड, अप्सराकुण्ड, हृषिकेशतीर्थ, यक्षिणीकुण्ड, लक्ष्मीतीर्थ, पिठकुण्ड, ध्रुवतीर्थ, मानससरोवर, वासुकीकुण्ड, जानकीकुण्ड, प्रभृतितीर्थ पुण्यप्रद है । (काशीखण्ड ६४ अ०)

उक्त तीर्थमें कई आजकल विलुप्त हो गये हैं ।

आजकल काशीमें जितने देवालय देख पडते, उनमें निम्नलिखित स्थान प्रधान ठहरते हैं—विश्वेश्वर, अन्नपूर्णा, गनयेश्वर, आदिविश्वेश्वर, धोटीश्वर, ब्रह्मेश्वर, अगस्त्येश्वर, तिमभाण्डेश्वर, कुक्कुटेश्वर, सङ्गमेश्वर, स्वप्नेश्वर, उन्मत्तेश्वर, केदारेश्वर, रसगानेश्वर, पापभक्षेश्वर, मध्यमेश्वर, रत्नेश्वर, माहेश्वर, बृहन्नागेश्वर, अल्पमृत्युक्षेत्रेश्वर, यादवेश्वर, मित्रेश्वर, जम्बूकेश्वर, कण्डूकेश्वर, जंगीप्येश्वर, व्याघ्रेश्वर, च्येष्टेश्वर, व्यासेश्वर, शौरेश्वर, कपर्दीश्वर, घैयनाथ, हारकानाथेश्वर, त्रिलोचनेश्वर, कामेश्वर, प्रह्लादेश्वर, वरणासङ्गमेश्वर, आदिकेश्वर, शूलतटेश्वर, तारकेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर, आत्मवोरेश्वर, हृदयतोश्वर, वासुकीश्वर, हरिसिन्दरीश्वर, नागेश्वर, अन्नोश्वर, उपशान्तीश्वर, व्यष्टटेश्वर, गभर्तेश्वर, अमृतेश्वर, दुर्गा, सिद्धेश्वरी, सद्गुटादेवी, विन्दुवासिनो, राजराजेश्वरी, धूपचण्डी, कल्याणो, पुष्कर, जगन्नाथ, विन्दुमाधव, मन्मो, वाराही, ललिता, गौतला, वागीश्वरी, दृष्टिराज, वृद्धगणेश, कालभैरव, वटकभैरव, टण्डपाणि, साक्षि, विनायक, दुर्गाविनायक, अर्कविनायक, चिन्तामणि, विनायक, सप्तवर्षविनायक, सिद्धविनायक, दुग्धविनायक, धर्मविनायक, रेणुकादेवी, चौसठयोगिनो, हनुमान्, वशिष्ठ और वामदेव ।

उक्त देव और देवालय व्यतीत टूटने भी गत गत लिङ्ग एवं देवमूर्तिका विवरण काशीखण्डमें वर्णित हुआ है । किन्तु आजकल उसकी अधिकांशका सम्मान नहीं मिलता । मालूम पडता है कि सुयत्नमान उत्प्रेतनसे अनेक देवालय और लिङ्ग विलुप्त हो गये हैं ।

काशीखण्ड तीर्थविवरणके अन्तर्में पवित्रश्लोपनिषत्, षष्ठापुराण (१८०—१८६ अ०), कूर्मपुराण (१०—११ अ०), अथर्वपुराण (११२ अ०), लिङ्गपुराण (२२ अ०), शिवपुराणमें ज्ञानदिता (४२-५१ अ०), विदेश्यसंहिता (१० अ०), उन्नत् कुमार संहिता (४१ ४५ अ०) विष्णुपुराण (५१ १४ अ०) नीलपुराण (१-८ अ०), पद्मपुराणमें काशीमाहात्म्य, वायुपुराणमें वामदेवकाननमाहात्म्य, स्कान्दमें विश्वपुरोमाहात्म्य १० काशीखण्ड, ब्रह्मवैवर्तमें काशीखण्ड, नारायण भद्रकृत त्रिचलसेतु, महो-जीविरचित त्रिमयुजोमेतुसारस्य चर, रघुचरित काशीमाहात्म्य, रघुनाथदास विरचित काशीमाहात्म्यकौमुदी, नन्दविद्यनिविरचित काशीप्रकाश और कृपा-राजका काशीमाहात्म्यचर इत्येवम् ।

काव्योसे अपूर वर्तमान रामनगरमें व्याप्तकाव्यो है ।
 हिन्दूधर्मके विद्यासाधुसार वेधे काव्योमें भरनेसे मानव
 सिद्धत्व पाता वेधे ही व्यासकाव्योमें शरीर छोड़नेसे
 गर्दम बन जाता है । इसीसे पनेक लोग व्यासकाव्योमें
 मरना नहीं चाहते ।

काव्योस्यार्थं लिखा है—“ वेदव्यास विष्णुनि
 विष्णोररथो यथार महिमा सुत काव्योमि वास करणे
 नी । वर्षा बह व्यासासन पर बैठ प्रव्यह सिद्धवर्गको
 काव्योमहिमा सुनाते थे । किसी दिन महादेवने वेद
 व्यासको परोचा सीनेके लिङ्गे मन्मथोको मुखावर आवेय
 दिवा—पद्यपूर्व । पात्र दिशा कोत्रिये लिखने वेद
 व्यासको बोई निचा न दे । सुतरां सप्त दिन वेदव्यास
 को किसीमि निचा मिथो न थो । बह नामा स्नान
 भूम वेदव्यासने देना किसीमि निचा दो न थो तब
 उन्हेनि पतियव सुव ही काव्योवासीको पमियाप
 दिया—‘यज्ञके पवित्राथो सुखिके सर्वसे निचा नही देत
 पतएव इस काव्योमि जे पुत्रवो विद्या, त्रैपुत्रव सन शीर
 त्र पुत्रवो सुखि न होयो ।’ इसप्रकार पमियाप से
 उन्हेनि पात्रावकी शीर मनीपुत्रवसे पांच ठठान्कर
 देखा कि सर्वदेव पश्याचरको जाते थे । उससमय क्या
 करते । सोमसे निचापात्र दूर खेह व्यासदेव पात्रमकी
 शीर पपसर हुये । बह गृह जाते जाते एकके सन्धुक्त
 पत्र के ही थे कि मन्मथोमि माहत्त जोषियेही शरपर
 पड़े होकर कहा—‘ हे ममवन् । हमारे पति बिना
 पतियि-सम्भार बिदे भोजन करना अनुचित समझते
 है । यह तत्र हमें छोड़े नहीं मिला । इसलिये पाप
 पतियि हो ।’ वेदव्यास जबके करते समिव पतियि
 हुये । उस समय मन्मथोमि नामा प्रकृतमें उनसे पूजा
 या—‘ जो व्यक्तिये अपने दुर्माखण्डमसे क्षार्ककाम
 कर न सकेने पर शोभनें माप देता, बह माप बिस्को
 लगता है ?’ वेदव्यासने उत्तर दिया—‘ बह माप उस
 पवित्रेयक मापदाताके ही पति होता है ।’ फिर गृह
 नामो भगवान् विष्णोररथे कहा—‘ जो व्यक्तिये काव्योको
 मन्त्रि द्विप नहीं सकता, बडे इस स्नानमें पाप जगता
 है । तुम अब हम स्नानमें रहनेके योग्य नहीं शीर ही
 वेधे वाहर निष्कल जाते ।’ बह बात सुन व्यासने

जापते जापते शरीरका शरव ले कहा या कि ‘प्रति
 पटमो शीर चतुर्दशो तिथिको उन्हे बह सेवनें प्रवेय
 करनेको अनुमति मिले ।’ टेकोके चतुर्दशे महादेवने
 वही शीरार कर लिया । इसी समयसे व्यास सेतके
 वाहर रथ दिवारानि काव्योको निरोधय शीर प्रति
 पटमो तथा चतुर्दशो तिथोको सेवनें प्रवेय करते
 है ।’ माशारथ शोगीके विद्यासाधुसार रामनगरमें
 पात्र मो व्यासदेव पनेका करते है । उन्हेनि शोगीको
 सुखिके विधे बर्षा एव तोय वनाया था । मात्र मात्र
 हम तोयमें स्नान करनेसे मानव कामो गर्दम बन्य
 नहीं पाता । नामा स्नानसे याथो उस तोयमें स्नान
 करने आते है ।

रामनगरके दुर्गमथ्य नदीको शीर कामिराजप्रति
 छित वेदव्यासका मन्दिर बना है ।

व्यासकाव्योम कामिराज-प्रतिष्ठित पन्थ मी पनेक
 देवालय शीर देवप्रतिमा है । उनको मठन प्रथाको
 हिन्दू शिल्पको परिचायक है ।

रामनगर—सुव्यासम वाराणसी हिन्दूधर्मका प्रधान
 तीर्थ है सर्वो हिन्दु उसमें व्यासदेव शान्तियवाहके
 मी देखने योग्य पनेक वस्तु है । जन्में पम्परपति मान-
 सिंघ प्रतिष्ठित मानमन्दिर अदेयो क्या बिदेमो प्रधान २
 ज्योतिर्विदुमात्रको पवकोहन करना चाहिये । बह
 मानमन्दिर मी इस बातका एक परिचायक है । किसी
 काल हिन्दूधर्म ज्योतिर्विद्यामें बर्षा तक उत्कर्ष
 प्राप्त किया था । पम्परराजर्षीय सर्वार्थ जयसिंह
 ने मानमन्दिरके मध्य नवव्राह्मिको गति ठहरानेको
 को सकल यत्न प्रयुक्त कराये उन्हे टेप चमल्य त
 जोना पड़ता है । दिल्लीयार सुव्यास मात्रको अनुमति-
 से नाचक्रिक गति प्रसुद्धय रथ करनेकेलिये जयसिंहने
 प्राचीन पार्वी ज्योतिर्वेद साहाय्यके ‘जयप्रकाश’ ‘राम
 यन्त्र’ शीर ‘सम्पाटयन्त्र’ नामसे तीन यन्त्र उद्भावनकिये
 थे । शिबोक्त यन्त्रका व्याख्यान पापः १२ ज्ञाय होगा ।
 रात्रा उक्त यन्त्रके बस पात्राव-ज्योतिर्विदु विद्याकांठ,
 टकमि प्रथमि प्रदयित बुद्धिधर्ममें जन्म प्रदयैव कर सके
 एतद्विषय जयसिंहके पाविष्य त मितियन्त्र, चक्रयन्त्र
 प्रकृति दूसरे मी कई यन्त्र मानमन्दिरके मध्य विद्य
 मान है । जयसिंह ही ।

१६०० ई० को मानमन्दिर मानसिंह कर्टक निर्मित हुआ था। किन्तु उसमें स्थान स्थान पर प्रस्तरकी भग्नावस्था देख शिल्पशास्त्रविद् स्वीकार करते हैं कि उसका कोई कोई अंग अधिक प्राचीन है। मानमंदिरका शिल्पनैपुण्य उच्चैःश्रेष्ठयोग्य है। उसमें सुन्दर वातायनकी गठण प्रणाली पर्यवेक्षण करनेमें निर्माताकी सुख्याति विना किये कैसे रह सकती है ? आजकल वैसा बड़ा वातायन बहुत कम देख पड़ता है।

प्राचीन अथवा उत्तर-पश्चिम कोण पर प्रलीपुर मस्जिदमें बकरियाकुण्ड है। काशीकुण्डमें बड़ बकरी वा छागकुण्ड नामसे वर्णित हुआ है। कुण्ड दैर्घ्यमें ३६६ हाथ और प्रस्थमें १८३ हाथ है। कुण्डके उत्तर-पार्श्व एक ऊचा टीला पड़ा है। उस पर प्रस्तरक मस्त प्रतिमा और मठके कलस प्रभृति मिलते हैं। बड़ सब बौद्ध मठके ध्वंसावशेष समझ पड़ते हैं। कुण्डकी पूर्व और भी दृष्टकका एक वृहत् स्तूप है। स्तूपके पुरव योगिवीर नामक स्थान है। वहाँ किसी योगीने सगरीर समाधि लाभ किया है। कुण्डके दक्षिण-पश्चिम एक दरगाह या मुसलमानोंका मजनालय है। वह भी किसी प्राचीन मठकी भित्ति पर स्थापित है। दरगाहके पूर्व (२५ × १३ हाथ) तीन पक्की पाषाणस्तम्भ पर स्थापित एक सुदृ मस्जिद है। वह मस्जिद भी बहुत पुरानी है। उसकी गठनप्रणाली देख अनेक लोगोंने स्थिर किया है कि पीछे बड़ बौद्धोंकी रही। प्राधुनिक समयमें उसे मुसलमानोंने अपनी मस्जिद बना लिया है। उसमें ७७७ हिजरी (१३७५ ई०) की खोदित फिरोजशाहकी शिलालिपि है। उसके निकट बौद्ध चैत्य भी दृष्ट होता है। अनेक लोग स्वीकार करते कि एक काल बकरियाकुण्डके पार्श्वमें बौद्ध-देवालय था।*

राजघाटके दुर्गमें भी बौद्ध-विहारका निदर्शन मिलता है। उस भग्नावशेष विहारका शिल्पनैपुण्य प्रशंसनीय है। उसका कारुकाय और भास्करकाय

सांकेतिक बौद्ध स्तूपसे मिलता है। वह विहार भी मुसलमानोंके हाथसे बचा न था।

राजघाट दुर्गके उत्तर कक्षस्थान, वरणाश्रमके प्रथमपुर मस्जिद, वाराणसीके तेलियाने, लाटभैरव नामके रास्ते, बत्तीम खंभे, प्रटाई कंगूरेकी मस्जिद और वरणाके पूर्व पार्श्व पंचक्रोशो राहके पास सोना तलावके निकट राज भी बौद्ध-चैत्य, विहार, स्तूप एवं प्रतिमाका भग्नावशेष देख पड़ता है।

अनेक लोग अनुमान करते कि भैरवकी लाट बौद्ध-राज अगोकने प्रतिष्ठित की थी।

व्यवसाय—ऐसा नहीं कि काशीकेवल पुस्तकालय ही है। वहाँ नानादेशीय लोगोंका समागम रहनेमें व्यवसाय भी अच्छा चलता है। काशीमें चीनी, नील और गोरिका व्यवसाय प्रधान है। जौनपुर, बस्ती, गोगुरपुर प्रभृति स्थानोंका सकल प्रकार उत्पन्न पद्यादि वहाँ पानीत और विक्रीत होता है। काशीके रेशमी कपड़े, गाल, जर दोजी, हीरा जवाहरात, और शिल्पनोंमें प्रसिद्ध हैं। प्रधान प्रधान सभी हिन्दूराजावोंके वहाँ भवन अथवा हस्त हैं। हिन्दूराजा काशीमें भवन बना सकनेसे अपनीको धन्य समझते और समय समय पर बड़ बड़ा सपरिवार जा अवस्थिति करते हैं। सुतरां काशीमें राजभोगका भी अभाव नहीं। वहाँ दुर्ग, वारीक, विष्णुविद्यालय, अनेक अन्यान्य विद्यालय, रेलवे स्टेशन, डाकघर, प्रदानत और विस्तार चतुष्पाठी विद्यमान हैं। पहले नाना स्थानसे हिन काशी वेद पढ़ने जाते थे। आज कल भी लोग जाते हैं सही, किन्तु पूर्वकी भांति यत्र सब देख नहीं पड़ता। फिर भी अद्यापि वाराणसीधाम शास्त्र-चर्चाके लिये प्रसिद्ध है। कुछ दिन हुये हिन्दुओंने काशीमें अपना बनारस विश्वविद्यालय खोला है। फिर काशीका "राज" नामक दैनिक समाचार-पत्र हिन्दुओंमें बहुत प्रचलानि चलता है। बनारस देखो।

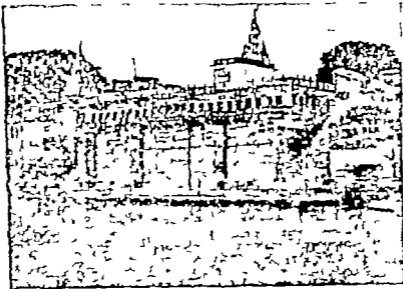
काशी जैनियोंका भी पवित्र तीर्थ है। चौथे कालकी प्रादिमें भगवान् ऋषभदेवने यह नगर वसाया था। सर्वप्रथम यहाँके राजा अकंपन हुये। इनने अपनी पुत्री सुचीचनाका स्वयंवर कर बड़ा यश प्राप्त किया था। यहाँ सातवे तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ और तीसरे तीर्थ-

* Sherring's Sacred City of the Hindus, p 279-287, J. A. S. Bengal, XXXV. p 59 87, Furber's Archaeological Survey Lists N W P. Vol. 1 p 199-202

खर श्रीपालनाथका साथ नृपा था। भद्रेगोष्टाट
 पीर मेन्पुरामें होना तोयेकरोंको परबपादुका
 तथा विद्याल मंदिर है। भद्रेगोष्टाटका मन्दिर पारा-
 निवासी समोदार प्रमुखात्मकोवा बनवाया नृपा है।
 गंगाजीके किनारे यह विद्याल मन्दिर पति मनोहर
 पीर सुदृष्ट है। नीचे पडा घाट बना है, यह प्रमुखाट

के नामसे बोला जाता है। वर्षा दिग्बर केर्नाको तरप
 से 'आशाद जेन महाविद्यालय नामक एक लक्षकेपो
 खा संस्कृत विद्यालय है। इनमें बिना मुख विद्या
 दो जाती है। इन बोर्नोंको सहायतासे ही इतना सब
 काम चलता है।

इसके समीपही नाम देहोकासजीका बनाया नृपा



श्रीवादाय वि० जैन महाविद्यालय ।

सूत्रा जैन-मंदिर है। यह भी गंगा किनारे पति इन्द्र
 पीर विद्याल है। यहांसे 'वाहिवा' नामक एक सामा-
 जिक पत्र निकलता है। इसके बिना मेसुपुरामें हो
 पीर मेहागिन पर एक जैन मंदिर तथा विद्याल बर्म
 माहा है। जैनियोंकी संख्या अल्प रहते भी यहां
 मंदिर काफी हैं। सुनई इसकी महबुमें एक जैन
 मंदिरमें स्थापितकी मूर्ति है। प्रायः हरसाथ याको
 दर्शनके लिये पाया करते हैं। इसी प्रकार इवेताम्बर
 केनेके मंदिर पीर हमशाना भी धर्मिक हैं।

१ चित्तगाल । ३ सुपुत्रा नाकी । (काशीनगरिच ३)

४ काशी देवोकी मूर्ति ।

"निर्देश मार्ग दुर्गि इवकारणिक मीरम् ।

एव कभी इता एता मरुतो बचवर्षिचम् ॥"

चलाने कीव । ३ सुदृष्ट नामक कीटा नाम । ४

सुतो । (निरव) (सि०) ० काशरोगी, काशीका
 बीमार ।

काशीतरवट (हि० पु०) काशीका करवट तोर्बे ।
 वर्षा पुराने समय कीग चारैसे पीर जनि पर पपनी
 मुक्ति समझते थे । पाक सब सरकारने ठीक बंद कर
 दिया है ।

काशीकावहा—बम्बईके बारहो पीर शानापुरकी एक
 जाति । काशीकापदी काम मीय मांगते चूमा करते
 पीर बता नहीं लक्ष्मी—उनका पादि निवास-जहां
 था । यह धायपमें सेनगु पीर सूत्रोके साथ दूरी
 फूटी मराठी बोलते हैं । भोग मांगनेके पतिरिक्त
 काशीकापदी यशोपवीत, ब्रह्माचकी भासा, सर्वेय बादि
 कोटे मोटे वस्तु भी गेब लेते हैं । हिन्दू देवदेवी इनकी
 माया हैं ।

काशीदास—युम्पककोहुयो बंदोबन्दके रचयिता जैनकवि ।
 काशीनाथ (सं० पु०) काशया नाथ, ४-तम् । १ मिष ।

“कालं निरुद्धतो ज्ञाता काशीनाथं समाश्रीयेत्” (काशीमठ)

२ काशीके राजा । ३ एक वैद्यक ग्रंथकार । किसी किसी इस्लामिपिमें काशीराम, तथा काशीराम नामान्तर देख पड़ता है । उन्होंने अजीर्णमञ्जरी, ‘काशीनाथी’ रसकरपलता और शाङ्गधर-संहिताकी ‘गूढार्थदीपिका’ नाम्नी टीका प्रणयन की है । ४ तैत्तिरीयसंहिताकी ‘गूढार्थदीपिका’ नाम्नी टीका प्रणयन की है । ५ अमरकोषकी ‘काशीनाथ’ नाम्नी टीकाके कर्ता । ६ सारस्वत-व्याकरणभाष्यकार और किराताजुनीय टीकाकार । ७ ज्योतिःसंग्रह नामका ग्रंथकार । ८ प्रक्रियासार और शिशुबोधव्याकरण-रचयिता । ९ श्रीमन्नोष, मननचन्द्रिका, प्रश्नदीपिका प्रभृति ग्रंथकार । १० यदुवंग-काव्यप्रणेता । ११ रामचरित-महाकाव्यरचयिता । १२ वेदान्त-परिभाषारचयिता । १३ वैराग्यपञ्चाशीति नामक वेदान्तिक ग्रंथकार । १४ शिवभक्तिसुधारण प्रणेता । १५ आहकल्पग्रन्थकार । १६ संवत्सर-प्रकरण नामक ज्योतिषग्रन्थकार । १७ संचिन्तका-दस्वरी-रचयिता । १८ सूत्रपादवेदान्त-रचयिता । १९ अन्नस्यकेपुत्र और यज्ञेश्वरके स्नातुपुत्र, उन्होंने धर्मसिन्धु-सार, प्रायश्चित्तेन्दुशेखर, और वेदस्तुतिटीकाकी रचना किया है । १७८१ ई० की उक्त काशीनाथ वर्तमान थे । काशीनाथ—नैनीताल जिलेके काशीपुर परगनेके एक भूतपूर्व शासक । ई० १६ वीं या १७ वीं शताब्दीमें बड़े विद्यामान थे । काशीनाथके ही नाम पर काशी-पुर परगनेका नामकरण हुआ है ।

काशीनाथ दीक्षित—१ सदाशिव दीक्षितके पुत्र । उन्होंने प्रयोगरत्न, रुद्रपद्धति, लक्ष्मीमपद्धति, आइप्रयोगपद्धति एवं कात्यायनीय ज्योतिष्टोमपद्धति की टीकाका प्रणयन किया है । २ पद्मपञ्चाशिका नाम्नी ज्योतिषग्रन्थकार । काशीनाथभट्ट—जयराम भट्टके पुत्र और अन्नस्यभट्टके शिष्य । उन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ रचना किये हैं । उनमें निम्नलिखित ग्रन्थ मिसते हैं—कौलगणमर्दन, शुभपूजाक्रम, चण्डीपूजासंयन, मन्त्रचन्द्रिका, मन्त्र-प्रदीप, गणेशचन्द्रीपिका, ज्ञानार्णवतन्त्र की गूढार्थादर्श,

नामका टीका, चण्डीमाहात्म्याटीका, त्रिकुटारश्म्यटीका, दक्षिणाचारदीपिका, पटार्थादर्श-शुक्लचन्द्रोदयटीका, पुरश्चरणदीपिका, बटकार्चनदीपिका, मन्त्रमहोदधिकी ‘मन्त्रमहोदधि-पटार्थादर्श’ टीका और शारदातिलक-टीका । २ महर्तमुक्तावली ज्योतिषग्रन्थरचयिता । ३ सर-पिण्डियम जोन्सके एक शास्त्रविद् पसिह पण्डित और शब्द-सन्दर्भसिन्धु नामक संस्कृत ग्रंथकार काशीनाथ मिश्र—वैदिकी-परिणय नामक संस्कृत काव्य-रचयिता ।

याशीयात्रा (सं० स्त्री०) काशी काशीस्थतीर्थसमूह यात्रा-तत् । काशीस्थ तीर्थसमूह दर्शनार्थ गमन यात्री जिस प्रकार काशीयात्रा करते उसके नियम काशीगुरुद्वारा निर्दिष्ट है । प्रथम यात्रियोंको मधुसूक्त-पुष्करिणीके जलमें स्नान कर देव, पिता, ब्राह्मण और अर्थिगणको लक्ष करना चाहिये । पीछे आदित्य, सूर्य-देवी, दण्डवाणि और महेश्वरको प्रणाम कर दुर्गिराज जाते हैं । फिर ज्ञानवापीके जलमें स्नान कर नन्दि-केश्वरको पूजन करते हैं । उसके पीछे तारकेश्वर और महाकालेश्वरकी पूजा कर फिर दण्डवाणिकी पूजते हैं । उक्तप्रकारका यात्राका नाम पञ्चतीर्थ-यात्रा है । उसके पीछे वैश्वेश्वरी यात्रा करना चाहिये । यात्री प्रतिपत्से चतुर्दशी भयवा प्रति चतुर्दशीको हिमस-भायतनी यात्रा करते हैं । मत्स्योदरीमें स्नान कर प्रथम प्रणवेश्वर, तत्पर त्रिविष्टप, फिर महादेव, उसके पीछे यथाक्रम कृत्तिवास, रत्नेश्वर, चन्द्रेश्वर, केदारेश्वर, धर्मेश्वर, वीरेश्वर, कामेश्वर, विश्वकर्मेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर, अत्रिसुहृदेश्वर और शेषको विश्वेश्वर दर्शन कर पूजादि करना चाहिये । जो व्यक्ति काशीमें रह इसप्रकार यात्रा नहीं करता, उसको नाना विघ्न लगता है । विघ्नशान्तिके लिये अष्टायतनी नाम्नी दूसरी यात्रा करना चाहिये । उसमें यथाक्रम दक्षेश्वर, पार्वतीश्वर, पशुपतीश्वर, गङ्गेश्वर, नर्मदेश्वर, गभस्ती-श्वर, सतीश्वर, और तारकेश्वर दर्शन करते हैं । यह यात्रा अष्टमी तिथिको कर्तव्य है । काशीवासियोंको एक दूसरी भी यात्रा करना चाहिये । प्रथम वर्षणमें नहा शैले-श्वर दर्शन करते हैं । फिर वर्षणासङ्गमें नहा सङ्गेश्वरको

दर्शन कर जाकीन तोरमें नडा स्वर्णेश्वर दर्शन करते हैं। तदनन्तर मन्दाकिनी-तीर्थमें नडा मन्थेश्वर दर्शन करना चाहिये। फिर हिरण्यगर्भतीर्थमें स्नान कर हिरण्यगर्भेश्वर दर्शन करती हैं। फिर मन्थिबर्षिकामें स्नान कर ईशानेश्वर दर्शन करना चाहिये। अनन्तर यथाक्रम मोदेष-तीर्थमें नडा मोदेषेश्वर, काविलकुटमें स्नान कर उपमन्थ, उपमान-रूपमें नडा उपमान शिव, पञ्चभुजा कुटमें स्नान कर ज्योतिषेश्वर, चतुर्भुज रूपमें नडा महादेव, कापीश्वर सम्यं एवं शुक्लरूपमें स्नान कर शुक्लेश्वर, बण्डवाततीर्थमें स्नान कर श्यामेश्वर और शोणककुटमें नडा शोणकेश्वर तथा कम्बुश्वर तिडकी पूजा करती हैं।

दुधरी एकादश्यातमी नामी यात्रा भी है। इसमें निम्ने प्रथम पत्नीप्रभुपुत्रमें स्नान कर पत्नीश्वर दर्शन फिर यथाक्रम चर्मेश्वर, नकुलेश्वर, पावकेश्वर, भार्गवेश्वर, काङ्गेश्वर, त्रिपुराश्व, मन्मन्मन्मन्मन्मन्, प्रीतिकेश्वर, महालक्ष्मीश्वर, और तिष्यपेश्वर दर्शन करते हैं। यह यात्रा कर मानव दुःख पाता है।

शुक्लपक्षकी इतीषाया करना चाहिये। प्रथम मोदेषतीर्थमें स्नान कर मुक्तनिर्मलिकामें जाते हैं। उसमें पीछे यथाक्रम ज्योतिषापीमें स्नान एवं ज्योतिष-गौरी पूजा, शानकापीमें स्नान तथा सोमाश्व योरीकी पूजा, शृङ्गारतीर्थमें स्नान एवं शृङ्गारयोरीकी पूजा, विद्यालमङ्गलमें स्नान तथा विद्यालक्ष्मीकी पूजा, कलिततीर्थमें स्नान एवं कलितदेवीकी पूजा, महातीर्थमें स्नान तथा महातीर्थदेवीकी पूजा, और विन्दु तीर्थमें स्नान एवं महाकाशीकी पूजा करते हैं। इसके मन्दाकिनी जाना चाहिये। रवीका नाम गौरी यात्रा है। प्रति चतुर्थीको मईमयात्रा, महालक्ष्मीकी भैरवयात्रा, रविवार पक्षवा पछी वा उत्तमोत्तुष्ट रवि बारकी धूमयात्रा, पञ्चमी वा नवमीको चण्डावात्रा और प्रतिदिन पन्नाष्ट्र जयात्रा करना चाहिये। पन्नाष्ट्र जयात्रा इस प्रकार होती है—मन्थिबर्षिकामें स्नान कर मन्थिबर्षिकेश्वरको पूजते हैं। उसके पीछे यथाक्रम कम्बुशिव, पञ्चतेश्वर काङ्गेश्वर, पर्वतेश्वर, महाशिव, कलितदेवी, महालक्ष्मीश्वर सोमनाथ बाराहेश्वर

मन्थेश्वर, पद्मेश्वर, कर्मपेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, वेद्यनाथ, इन्द्रेश्वर, गोबर्षेश्वर, हाटेश्वर, पञ्जिदेव तद्गर्भमें शोभेश्वर, भारतभूतेश्वर, विद्वान्तेश्वर, विश्वेश्वर, पद्मपतीश्वर, वितामेश्वर, कलेश्वर, चन्द्रेश्वर, शैलेश्वर, विष्णेश्वर, पद्मेश्वर, मतीश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, विन्तामन्थिनाथ, सर्वविघ्नहारी वेनाविनाथ, शशि, कामदेव, सोमाविनाथ कम्बेश्वर, त्रिसन्धेश्वर, विद्याकापी, चर्मेश्वर, विष्णुवाङ्क, प्रायाविनाथ, इन्द्रादित्य, चतुर्भुजेश्वर, शङ्खेश्वर, मन्मन्मन्मन्मन्, ईशानेश्वर, चण्डी चण्डीका, भवानो गङ्गा, दुष्टि राज, रामराजेश्वर, काङ्गेश्वर, नकुलेश्वर, परागेश्वर, परशुमेश्वर, प्रतिपदेश्वर, निष्णान्तेश्वर, मार्कण्डेयेश्वर, पञ्चेश्वर और मन्थेश्वरकी पूजा कर ज्ञानवापीमें नहाना चाहिये। इसमें पीछे मन्थिकेश्वर, शार्वेश्वर, महाकाशेश्वर, इक्ष्वाकि मन्थेश्वर, मोक्षेश्वर, शौरभद्रेश्वर पश्चिमुखेश्वर, और पञ्चविनाथको प्रणाम कर विष्णेश्वरकी यज्ञ करती हैं। यहाँ निकलखिन्नमक्ष उच्चारण किया जाता है—

“अथर्वं च करं च वनपत्ता म्ना इवा।

वनमन्थिनाथ वपुः शोभामन्ता विदुः १” (१ । ४४)

बोको या बहुत जितनी बकी मीने यह पन्नाष्ट्र ज यात्राकी है। एतद्वारा मन्थेश्वर मेरे प्रति प्रीत हो।

मन्थिके पाठान्त अथ काच सुखिमण्डपमें विश्राम कर निष्पाप हो कर जाना चाहिये।

(चण्डीपञ्च, १ । ५)

काशीपञ्च (सं० ह्री०) काष्ठां रश्मिन्, ६-तम् । १ काशीवाषिठीका कर्तव्य पाचारविशेष । २ काशी-माहात्म्य ।

काशीराम (सं० पु०) काष्ठां काशीपदेयञ्च राजा, काशी राजन् उच । एताश्च शक्तिपञ्च । च ११२२ । १ द्विवेदास । २ काशीका कीर्ति पश्चिपति । ३ विश्विन्दाकीमुदी-प्रथेता । (महाभारतपुराण) ४ शौरिंहिके विता विद्वन्म नामक ज्योतिष्यकार ।

काशीराम—रश्मिपदेयनिष्पत्त, नामक वैद्यक कोवहार । २१२ (वाचस्पति)—राधाव्रजमेंसे मुक्त और रामहृदयके प्रिय । इन्हीं रश्मिपदके भ्यतितलकी टोका बनाई

हैं। इसमें उदाहृतत्व, एकादशोत्तत्त्व, तिघितत्व, दाय-
तत्व, प्रायश्चित्तत्व, मन्मसाप्तत्व, शुद्धितत्व, और
आहतत्वकी टीका भी मिलती हैं।

काशीराव—तुकाजीराव हीनकारके एक लडके। यह
दुर्बलहृद्दयके मनुष्य थे। इनके भाई मल्हाररावने
१७६७ ई० को पिताके मरनेपर इन्दौरके सिद्दासन
पर अधिकार करना चाहा था। काशीरावने दौसतराव
सेधियामे निवेदन किया। उन्होंने मल्हाररावकी
आक्रमण कर मार डाला। परन्तु यशवन्तराव इस
विषयसे निकल भागे। १७६८ ई०को उन्होंने अमीर
खान्के साहाय्यसे काशीरावको सेनाको पराजय
किया।

काशीराव (सं० लो०) कुत्सितं ईषत् काशीरावमिव, कोः
कादेशः। १ उपधातुविशेष, कसीस (Sulphate of
iron.) इसका संस्कृत पर्याय धातुकाशीराव, कासीस,
धातुकासीस, खेचर, धातुखेचर, केसर, हंसनोमश,
शीघन, पांशुकाशीराव और शुभ्र। यह धातुका-
शीराव और पुष्पकाशीरावके भेदसे दो प्रकारका
होता है। फिर इनमें भी धातुकाशीराव हरित् और
सोहित भेदसे और पुष्पकाशीराव श्वेत और कृष्ण
भेदसे दो दो प्रकारका होता है। भावप्रकाशके मतमें
यह रक्त, तिक्त, कषायरसविशिष्ट, उष्णवीर्य, वात-
रूपनाशक, वैशका उपकारक, पांखोंकी खुजली,
विषदोष, मूत्रकृच्छ्र, अश्वरी और श्वित्ररोगनाशक है।
यह मृगराजके रंसमें भिगोकर शोषा जाता है।
(हिमकन्दकी) २ (पु०) काश्याः ईशः, इ-तत्।
महादेव। ३ काशीदेशके राजा।

काशीरावत्रितय (सं० लो०) काशीरावधातु, काशीरावपुष्प
और काशीराव।

काशीरावत्येत (सं० लो०) तैजविशेष, एक तैज।
काशीराव, अश्वगन्धा, लोभ्र और गजपिप्पलीकी तैजमें
पाक करनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। इसके
लगानेसे स्त्रोत्ररोग निरोग हो जाता है। इसमें कल्कका
पादांश तैज पड़ता है। (चक्रपाणिदत्त)

काशीराव (सं० पु०) काश्या ईश्वरः, इ-तत्। १ महा-
देव। २ काशीदेशके राजा। ३ अर्थमञ्जरी नामक

न्याय-ग्रन्थकार। ४ (भट्टाचार्य)—सुप्रसिद्धाकरणा
नुसार धातुपाठ, भूरिप्रयोगगण्टोका, मुग्धबोधोक्तोका
और मुग्धबोधपरिगिट प्रभृति ग्रन्थकार। ५ (शर्मा)
वनश्यामके पुत्र और रावव पण्डितके पोत्र। उन्होंने
१७३६ ई०को ज्ञानानृत नामक एक संस्कृत व्याका-
रणकी रचना की थी।

काशीरावभूत (सं० पु०) पारद, पारा।

काशू (सं० स्त्री०) कग-णिच्-ङ। १ शक्तिनामक
पत्र, बरछी, भाना। २ विफलवाक्य, वैफायदा वात।
३ बुद्धि, अज्ञ। ४ रोग, बीमारी।

काशूकार (सं० पु०) काशूं विफलवाचं करोति,
काशू-क-प्रण्। सुवाकप्रज्ञ, सुपारीका पेड।

काशूतरी (सं० स्त्री०) काशूनामक चूड़ पत्र, छोटो
बरछी।

काशीराव (सं० पु०) काशीरावः, काशी-टक्; काश्याः काशि-
टपतेः गोत्रापत्यं वा। १ काशीराजवंशीय। काशीके
प्रथम राजा काशीराजवंशीय। (त्रि०) २ काशीदेशजात।
काशीराव (सं० स्त्री०) काशीराव-डीप्। काशीराजकन्या।

“मरत खनु काशीराववंशमे सार्वभौमम्” (भारत चादि २५ पं०)

काशी (फा० स्त्री०) कृषि, खेतीका एक एक। उसके
अनुसार जमीन्दारका कुछ वार्षिक लगान देकर
किसान उसकी जमीन जोत वो सकता है।

काशीकार (फा० पु०) कृषक, किसान, खेतिहर।
२ कृषकविशेष, किसी किसानका किसान। वह जमी-
न्दारको कुछ वार्षिक कर दे उसकी जमीन पर कृषि
करनेका स्वत्व पाता है।

काशीकार पांच प्रकारके हैं—गरहसुऐयन, दखी-
नकार, गेर दखीनकार, साकितुली मालकियत और
शिकमी। गरहसुऐयन सदा एक हो समान कर देते
हैं। उनकी भूमिपर कर नहीं बट सकता। फिर
उनकी भूमि वेदखन भी नहीं होती। १२ वर्ष तक
लगातार वही जमीन जोतनेसे काशीकारको दखीन-
कारी स्वत्व मिल जाता है। फिर उसे कोई वेदखन
कर नहीं सकता। गेर दखीनकार १० वर्षतक कोई
जमीन जोत वो नहीं सकते। किसी जमीन पर पहले
जमीन्दारकी भांति सीर करनेवाले किसान साकितुल

मासकवित्त बचाव है। गिकमी दूसरे आशुतकारो
जमीन की कुछ समय तक जोतते जोते हैं।

आशुतकारो (सं० जो०) १ क्षयि, द्विती विधानो।
२ छपकप्रस, आशुतकारोका हल। ३ भूमिबिभेय,
एक जमीन। उस पर छपकको क्षयि करनीका लज
रहता है।

आशुतकारो (सं० जो०) कायते काग वनिपु रवागतादेग
होय प्रयोदरादिवागु बज मल्लम्। १ गंधारी हल,
अमारका पिक (Gmelina arborea) हलका संस्कृत
पर्याय—वाशुतारी, मद्रपर्णी, शीपर्णी, मधुपर्णिका,
आशुतारी, जोरा, आशुतरो पोटरोविषो, छपकप्रस,
महुरसा, पीर महाकुसुमिका है। भावप्रसायशे मतमें
बड़ महर, कपाय एवं तिन्न रस लक्ष्मीय, शुब, पल्लि
दोतिकारक परिपाचक मित्त और अम, शोष
अथवा आममूल, पत्र, विषदोय, दाह तथा ज्वरना
शक है। आशुतारीका फल शरीरबर्धक मज्जरर्षक, शुब
क्षीयकारक, रसायन, कपाय एवं पचकरस, शोथक,
क्षिप्त और वायु, पित्त, लक्ष्मीय, रक्तदोय, चतुरोम,
मूलाबाह, दाह तथा वातरक्तोमनायक होता है।

द्विन्द्वेभे उभे कुम्हार गुम्हार, मसहार, संमार
खरमर, अमार, कुमार, गंधारी, निबल, शिवन, गामारी
या अंधारी, अंगनामि गुमाग, उडियामि गंधरी, जोकरमें
अधमर, लन्वाजोमि अधमार, पासामीमि जोमारी, निवा
जोमि संवरि, शेषजोमि मंजो, अशारोमि गुमाई, गारोमि
जोशको बल, जोडोमि कुरपे अंधारीमि गु हार, अशारोमि
शिवन, कुरकुमि आशुतार, मन्वप्रदोयमि गुंमर, बन्व-
यामि शिवन, तामिलमि गुनुदुटेकु, तेलुगुमि गुमरटेक,
अशारीमि कुम्भि, मज्जरमि कुबकु, मधोमि रमनो, अशोमि
धमनई पीर विंजजोमि पतदेव्यात कहते हैं।

आशुतारीका हल हलपु पार पतनमोम होता है
जमी जमी बड़ ६० चौट तक लंबा हो जाता है।
आशुतारी भारतवर्ष, ब्रह्मदेश तथा आन्ध्रप्रदेश
अथ वराह होती है। आशुतारी मास फल तिष्ठकता है।
आशुतारी बर्ष मन्व पोताम रहता है। बड़ बहुत बलका
पीर बड़ा होता है; इकोषे सके जगनाकार्यमें व्यपहार
करते हैं। इससे तक्षुषे लघुपीरका जोषठ, नावकी

बल, पाककोका जता आदि बनता है। येमासपत्तनमें
प्राचौरको मिति पीर बर्षमें प्रदेयमें हल काय, गण्ड,
याग तथा पाकजोमि लभता है। उस पर रजु पच्छा
थाता पीर तरह तरहका पसबाह बनाया जाता है।

सन्वस आशुतारी काठके मज्जर पीर पचको बर्ष
को मिति व्यपहार करते हैं।

आशुतारीका फल गौड पीर दूसरे पहाडी जोग
जाते हैं। पत्तियां पशुजोको खिलायो जाती हैं। अिरल
पीर दूसरे अंगको जानवर इन्के बने पावते धारी हैं।

आशुतारीका मूल शोषधमें पडता है। दगमूलमें
इसका भी प्रयोग होता है। आशुतारीके पेडमें रियमने
जोड़े पाके जाते हैं।

२ कयिचक्राया, आका दाम्। ३ अंगनामि,
अशुतारी। ४ पुच्छरमूल। ५ गंधारी छल।

आशुतारीक (सं० जो०) माशुतारीक मन्वा संभा
रीके फलका गुदा।

आशुतारी (सं० पु० जो०) आशुतारीति मन्वोऽशुतार, का
शुतारी-य, यथा आशुतरो ज्ञां बन्म। माशुतारी, गंधारी।
आशुतारीकलहाय (सं० पु०) गंधारीककलहाय
गंधारी फलका कांटा।

आशुतारी (सं० जो०) अशुतारीको हल, जोटो गंधा-
रीका पेड।

आशुतारीकपर्विका, अशुतारीकी।

आशुतारी (सं० जो०) आशुतारी आशुतारी वा मन्व आशुतारी
वा आशुतारी पच। अशुतारीक। प० १२। १११। १ कुठ
मिद, पुच्छरमूल। २ कुकुम्, शिवर। ३ अशुतारी
सुख। ४ जोशाना। ५ आशुतारीका निवासो। (मि०)
६ आशुतारीजान, अशुतारीमें लपकने या जोमिबाका।
(पु०) ७ माशुतारीहल, गंधारीका पिक।

आशुतारी—भारतवर्षके उत्तर-पश्चिम जोषका अर्धतर
देय, एक सुख। वर्तमान आशुतारीका पचा० १२
१० से १६ १८ २० पीर देमा० ७३ २६ से ८०
१० पू० पर पचकता है। इसका वर्तमान भूमिका
परिमात्र प्राय ८०८०० वर्गमील है। जोषधप्या
अंगनाम १८ काज जोमो। जिसमें पुषध नाटे पंजुह
काज पीर जियां साठे रीरह जाप जमी।

वर्तमान सीमा—उत्तर सीमा हिमालय पर्वतके अन्तर्गत काराकोरम श्रेणी और काश्मीरके ही अधीनस्थ कई अर्ध स्वाधीन छुट्टा राज्य हैं। दक्षिणकी और पंजाब के अन्तर्गत झेनम, गुजरात और खालकोट प्रभृति हैं। पश्चिम सीमा पर हजारा प्रदेश और रावलपिण्डी है। पूर्वमें तिब्बतका राज्य लगा है।

प्रदेश विभाग—काश्मीर राज्यमें आजकल जम्मू, काश्मीर उपत्यका, नटाप, वलतीस्तान, भद्रवार, क्षणवार, दर्दीस्तान, ले, तिलैल, सुरू, जाल्दार, रूपसु, पुञ्च और दूमरे भी कई छुट्टा छुट्टा विभाग हैं।

भूमिभाग—साधारणतः देखनेपर काश्मीर राज्य पर्वत-वेष्टित वितस्ताकी भववाहिका समझ पड़ता है। मध्य स्थानमें वितस्ता नदी शायदा प्रशाखा फेला बराहमूल गिरिवर्त्मसे पंजाब प्रदेशमें प्रवेश करती है। वितस्ता तीरवर्ती निम्न उपजाऊ भूमिकी छोड़ एक उत्तम भूमि पर्वतमूलसे समतल भूमिकी और विस्तृत है। उसे कपेरास या उदारस कहते हैं। उक्त सकल भूमिका मैदान प्रायः छद्मिद्राण्यौ-शरीर जात और बालुका तथा कर्दम मिश्रित है। उक्त सकल उपजाऊ भूमि-खण्डके मध्य प्रायः १०० से ३०० फीट गभीर नदीपथ है। साधारणतः उपजाऊ भूमिका एक और पर्वत-माला रहते भी किसी किसी स्थानपर चारो ओर निम्न-भूमि ही है। उक्त सकल भूखण्डमें ऊपि होती है। किन्तु जलकी सुविधा अधिक नहीं। वृष्टि न होनेसे नाली बना नदीसे जल लाना पड़ता है। पर्वतमूलकी ढालू भूमिमें चारणस्थान और देवदारुवन इत्यादि वर्तमान हैं। काश्मीरके दक्षिणांशमें ही लोग अधिक रहते हैं। क्षणगङ्गा उपत्यकाके निम्नांग और सिन्धु भववाहिकामें वितस्ता तथा चन्द्रभागाकी भववाहिकाकी स्वतन्त्र करनेवाली तुपाराहत पर्वतमालाकी चतुःपार्श्वस्थ भूमिमें भी लोगोंका अधिकतर वास है। उक्त प्रदेशकी पर्वतमाला देवदारुके वनसे आच्छादित है। मध्य मध्य ऊपिके लिये उपयुक्त भूमि भी है। नदी-तीर श्यामल शम्यक्षेत्रसे परिपूर्ण है। प्रत्येक ग्राममें सुन्दर सुन्दर पथ विद्यमान हैं।

पर्वतमाला—काश्मीरकी चतुर्दिक्स्थ पर्वतमालाके

शिखरका उपरिभाग तुपारमण्डित देख पड़ता है। वल्लरके मध्य प्रायः ८ मास काल बरफ चटा रहता है। उत्तर पश्चिम प्रान्तमें बियाकी नामक तुपाराहत क्षेत्र प्रायः ३५ मील विस्तृत है। पञ्जाल पर्वतमालाके मध्य सर्वाच्च शिखरका नाम सूली है। वह १४८५२ फीट उच्च है। भाहेरटाटोपा शिखरकी उच्चता १३०४२ फीट है। उत्तर दिक् हरमुख पर्वत १६०१५ फीट ऊँचा है। काश्मीर उपत्यकाके प्रान्त-में नङ्ग पर्वत वा टयरसूर समुद्रपृष्ठसे २६६२६ फीट उच्च चटा है। उक्त पर्वत काश्मीर उपत्यका और सिन्धु नदीके मध्य अवस्थित है। उसीके निकट शेर और मेर नामक दूमरे दो शिखर हैं। उनमें प्रथम २३३१० और द्वितीय २३२५० फीट उच्च है। दिक्के अनुसार उनके भिन्न भिन्न नाम हैं। पूर्वमें तुपाराहत पञ्जाल पर्वत, दक्षिणमें फतेपञ्जाल एवं बनिहान प्रदेशका पञ्जाल पश्चिममें पीरपञ्जाल और उत्तर-पश्चिममें हरमुख तथा सोनामार्ग पर्वत कहते हैं।

दक्षिणदिक्में पर्वतमाला निम्न होनेसे गोभा इस ओर प्रति सुन्दर है। उत्तरदिक् अपेक्षाकृत वन्य होते भी सोन्दर्यपूर्ण है। इधर पत्युञ्च पर्वतमाला, विस्तृत तुपारक्षेत्र, पर्वतावरोधी छुट्टा तथा हह्वु नदी स्रोत और मध्य मध्य जलप्रपात दृष्टिगोचर होते हैं। इस अञ्चलमें कोई शिखर २००० फाटसे कम ऊँचा नहीं। काराकोरम पर्वतमालामें एक शिखर प्रायः २८२५० फीट ऊँच है।

युरोपके भ्रमणकारा काश्मीरके उक्त सकल पर्वतोंमें भ्रमण कर गोभाका वर्णन कर गये हैं। उन्होंने लिखा है कि वैसी गोभाधार प्राकृतिक हवि जगत्के दूसरे किसी स्थानमें सम्भवतः देख नहीं पड़ती। उक्त शैलशिखरके तलसे जितने ही ऊर्ध्व गमन करते, उतने ही ऋतुमेद तथा तदुपयोगो उद्भिद्, शस्य और फलमूल आदि देख पड़ते हैं। फिर कहीं उक्त सकलका एकत्र समावेश है। उन पर्वतोंमें निरीह पार्वत्य लोग रहते हैं।

मार्ग वा सेव—पीरपञ्जालकी अपेक्षा निम्नतर पर्वतके कई शिखरदेश अधिक विस्तृत हैं। उन सकल स्थानोंमें

सुन्दर एवं मनोहर नामावलीके मुख्य घोर सुदृश्य एक उत्पन्न होते हैं। उन्हीं सकल स्थानोंको मार्वे वा पेश कहते हैं। गुप्तमार्व घोर सोनामार्व प्रकृति कई क्षेत्र प्रति सुन्दर हैं। एक सकल स्थानोंमें सोनाबाबकी भुम्बुकी भुम्बु टट्टू सोई बरा करती है। सोनामार्व नामक स्थानमें यात्रक तथा भाद्र मास ईश्वरी बड़े पादमियों घोर सुरोपीयोको आकर रहना बहुत पक्का करता है।

१०—काश्मीर राज्यकी प्रधान नदी बितस्ता है। काश्मीर उपत्यकाकी पूरव-दक्षिण सीमामें यह उत्पन्न हुयी है। पश्चात् ईकी।

पश्चिमोक्के मतमें बितस्ताका उत्पत्तिजान पञ्चतक फिर नहीं हुआ। पंजरेक कहते हैं कि पर्वत, ब्रिज घोर सुन्दरम् माथी तीन भिन्न भिन्न शुद्ध नद्योके समान नद्ये बितस्ता उत्पन्न हुयी है। उसकी पश्चिम याया घोर उपनदी है। सुसमान भौगोलिक कहते हैं कि काश्मीर उपत्यकाकी पूर्वदिक् सुपमिन्न नीरनाम नद्य है प्रायः पश्चिमोक्त दूर तीन तक विद्यमान है। एक तोनी एक परकार हाइय पश्चिम दूरवर्ती है। सुसमान एक परिमिति पर्वतो पश्चिमोक्के पश्चिमामें तर्जनीके पश्चिमामें पर्वत स्थानको बालिष्ठ वा बिता कहते हैं। उसीके उत्तरका नाम भी बालिष्ठ या बिता है। फिर उसीके निर्गत बलकीत बितस्ता कहलाता है। एक तोनी जलोको जलधारा जलमय जितनी ही नीचे उतरी नीरनाम पश्चिमनाम, पश्चिमनाम कुबुरनाम, बाधनाम प्रकृति एक पश्चिमनाम जलप्रवाह निकल कर निकलनेके उसको पश्चिमवर्ति हुयी है।

बितस्तामें प्रथम उत्तर पूर्वमुख दिक्दूर चल कर उत्तर प्रदेशमें प्रवेश किया है। उसकी ओई उसमें दक्षिण बाहिनी को पश्चिम प्रायमें बरामूना नामक जलपहलें मध्य भौयक शिखर उपत्यकाको छोडा है। उपत्यकाके मध्य बितस्ताका पश्चिम प्रयाग माव है। किन्तु उपत्यकाके बाहर उत्तरका शिखर भौयक शिखर सेही को प्रवाहनी मूर्ति है। उत्तर पूर्वसे इसप्रामाणादके निम्नट विद्यार, पूर्वसे गादीपुरके समुच्च सिन्धुनदी घोर हीपुर नगर के निम्नट पोहचनदी बितस्तामें पश्चिम तौर मिली है।

फिर पूर्व तौर सुरदामके निम्नट नरामविवाङ्गा एक रामजुयात (रामजुत) घोर योनमरके निम्नट दूर गङ्गा बितस्तामें मिल गयी है। तिसेक उपत्यकामें शिखर नामक स्थानपर उत्पन्नहुना गाथी एक मध्यविष नदी निकली है। जम्बुगङ्गा पश्चिमतर बतर मुख्य पश्चिम-दिक्को आकर ठठात् दक्षिणको घूम सुसफुम्पराबादके बितस्तामें मिल गयी है। बर्दान उपत्यकाके माव बर्दान नदी प्रवाहित हो दक्षिणमुख उत्पन्नवार (बट बयाङ्क) नामक स्थानपर जम्बुमामामें जा मिली है। माव बर्दान, जम्बुवार घोर मङ्गवार नामक स्थानद्वयके मध्य में जा जम्बुके पश्चात् मिली है। एक सकल नदीको मध्य एकमात्र बितस्तामें ही नीचाहिका यातायात होता है। उसमें भी ६० मीलके पश्चिम दूर तक नौका चल नहीं सकती।

११—उपत्यकाके मध्य बितस्ता पर २३ सेतु हैं। शि-को शिग कहक कहते हैं। समस्त शि-तु देवदाव काठ के बने हैं।

पश्चिम उत्तरमें फिर डोरीके शि-तु भी है। जिस स्थान में बङ्गूर विष्णु शि-तुका प्रयोजन पड़ा नहीं हो। का शि-तु बना है। वह ही प्रकारका होता है—बिका घोर झूना। सोचने वा देखनेमें झूना बहुत भवानक धमक पड़ता है। किन्तु वास्तविक मयका कोई कारण नहीं बड़ी सरकारी निरापद कलक ऊपर यातायात होता है। मान पश्चिम भी एक पारसे एक पार, एक पारसे एक पार पहुंचाया जाता है।

१२—योनमर घोर तश्चिबटवर्ती प्रदेशमें कई गाथी हैं। उसी जल पर लकोकवा उकारउद है। उसी के मध्यसे बितस्ता प्रवाहित है। एक उदको पार करना कोई सीधी बात नहीं। इसीके शीपुर घोर योनमरके मध्य एक नामा निकलान नामनामनकी सुविधा भी मयी है। ऐसीके सुमीके सिधे भी यथैव गासे निवास गये हैं। उनमें शीपुर त्रिषेबा गाङ्कल घोर इसप्रामाणादका जेयो तथा निबर गाथा प्रधान है।

१३—काश्मीरमें उद वरीट हैं। उपत्यका घोर पार्श्व प्रदेशके नामा स्थानमें उद एक पड़ते हैं। उप-

त्वकामे निम्ननिखित ४ छट प्रधान है—१म डल वा नागरिक छद। वह भी यौनगरके उत्तरपूर्व कोणमें पर्वक्रीश दूर अवस्थित है। उसका दैर्घ्य ५ मील है। श्रुंठ कोल नामक नाने द्वारा वह वितस्तामें मिला है। यौनगर राजभवनके विलकुल सामने वह नाना जा छदमें मिल गया है।

२रा अक्षार छद है। वह यौनगरके उत्तर अवस्थित है। नालसर खाससे वह जलके साथ संयुक्त है। नालसर नाना गादीपुरके पास सिन्धुनदसे जा मिला है।

३रा मानसवल छद है। स्वल्पमें वह यौनगरसे ५ कोस और जलपथमें ८ कोस दूर वितस्ताके दक्षिण तीर अवस्थित है। काश्मीरमें उसके तुल्य रमणीय छद दूसरा नहीं। उसका दैर्घ्य तीन मील और विस्तार डेढ़ मील है। मानसवल बहुत गभीर है। रुद्रण और विष्णुने पवित्र मानसछदके नामसे उसका उल्लेख किया है।

४र्थे अक्षार छद है। वह यौनगरके उत्तर पश्चिम स्थानपथसे ११ कोस और जलपथमें १५कोस दूर अवस्थित है। काश्मीर राज्यमें वही सर्वापेक्षा बृहत् छद है। उत्तर दक्षिण दन्दनको छोड़ उसका दैर्घ्य डेढ़ मील और दन्दन समेत १० मील है। परिधि ३०मील पडता है। गम्भोरता वृद्धय और स्थान स्थान पर ११हाथ भी है। पूर्वदिक्की वितस्ता नदी उक्त छदके मध्य प्रवाहित है। पार्वत्य छदोंकी भांति उसमें भी हठात् भीषण बाढ घट जाती है। राजतरङ्गिणीमें उसका नाम "महापद्म" लिखा है। वहा महापद्मनागका वास था। पार्वत्य छदके मध्य पीरपञ्चालका कंसनाग, सिदार उपत्यकाका जेपनाग और हरमुखका गङ्गावलनाग तथा सर्वलनाग प्रधान है।

५क—काश्मीरकी पर्वतमालामें उसका अभाव नहीं। प्रायः सकल स्थानमें पर्वतगात्र भेदकर उक्त निकल पडा है। उक्त सकल उक्त अनेक अलौकिक घटनाओंमें परिपूर्ण है। उनमें वारनाग, अनन्तनाग, वायन, अच्छावल, कुकुटनाग और विततिश्वर अति रमणीय तथा कौतूहलजनक है।

खनिज—काश्मीरमें प्रायः सर्वस्थान पर लौह मिलता है। किन्तु उत्कृष्ट न हीनेमें उसकी तोपें कम बनती हैं। कुटिहर जिलेमें हरपतनार ग्रामके निकट ताम्र पाया जाता है। प्राचीन काल उक्त स्थान पर खनिजा कार्य चलता था, किन्तु बहु दिनमें बन्द हो गया। पीरपञ्चालमें काला सीसा (जिस धातुसे पेन्सिल बनती है) मिलता है। जम्बूपर्वतमें पत्थरका कोयला तथा सुर्मा और दाम नदीकी एक उपनदीमें गिगर वा गिग्री नामक स्वर्णरेणु पाते हैं। वितस्ता नदीतीर टङ्गट नामक स्थानके प्रविशामी स्वर्णरेणु उधार करती हैं। चन्द्रमागाके तीर स्वर्ण एवं रोप्यमिश्रित उपलब्ध गच्छ मिलते हैं। गंधकका उत्स यद्येष्ट है। कठिन गंधक भी स्थान स्थानपर पाया जाता है। काश्मीरकी उपत्यका गंधकप्रधान उत्सपूर्ण हैं। उसीसे यहाँ मध्य मध्य भूमिकम्पका भीषण उत्पात हो जाता है। १८८५ ई० की भूमिकम्पसे काश्मीर राज्यके अनेक मनुष्य मरे और गृहादि गिरे थे।

पथपथे—काश्मीरमें भूक की संख्या बहुत है। पिद्मल और रत्नधर्मके भूक ही वहा अधिक हैं। वह उद्विग्नभोजी हैं, मांस अल्प परिमाणमें खाते और हिंस्रस्वभाव नहीं देखते। काला भूक अन्य भूकसे पाकारमें अद्भुत होते भी अपेक्षाकृत हिंस्र है। चीते सवत्र हैं। तिल्लेख प्रदेशमें श्वेतश्वात्र देख पडते हैं। वारहसिंगा छिरन पश्चाल पर्वतमालाके उत्त अंगमें मिलता है। हिन्दू और मुसलमान दोनों उसका मांस खाते हैं। हिमाचलका सांवर हरिण कृष्णशर प्रदेशस्य पश्चाल गिरिमें रहता है। चीत्कारकारी हरिण पश्चाल पर्वत माहाके दक्षिण और पश्चिम डालू प्रदेशमें होता है। कृष्णगङ्गा तथा वितस्ताकी मध्यवर्ती गिरियोंसे वरामूना पथके बाहर पीर पञ्चाल पर्यन्त एक प्रकार बृहत्काय छागल मिलता है। उसे मारखार (सर्पभुक्) कहते हैं कस्तूरी चूग काश्मीरमें सर्वत्र है। बुसेकोइ और घर नामक दो जातीय पार्वत्य छागल पश्चाल पर्वतमें देख पडता है। भेड़िया, लोमडी, गौदड और बन्दर यद्येष्ट है। टूम नामक एक जातीय वानर कृष्णगङ्गा उपत्यकामें अधिक मिलता है। वह प्रधा-

नता: पिङ्गल पक्षोष्ठा शिखार है। उड्डिमान पक्षक मदी-
में होती है। उनका चर्म बहुतम्य विचलता है। जष्य
वार प्रदेममें प्वावी (गलबो, कार पुमत) रहती है।
सरीसृप बहुत देख नहीं पड़ता। विद्याक सर्प बहुत
बल है। शिबल मध्य मध्य को एक मोड़ देखनेमें पा
जाती है।

शिखर, वात्र, भोल, गकुनि प्रधति मानाद्यो पक्षी
यद्येष्ट है। सुनाम, कडिअ कोबिका, कोपल, मेना
प्रधति सबक प्रकारके तोरि, पीर कठकोड काश्मीर
में बहुत है। जलधर पक्षी माना प्रकार है। बड़ पवि
काय यारत् पीर मोतकाबको उत्तरदि काश्मीर जाते
पीर बलन्तके पूर्व खोड पाते है। बुकबुक, भारस पीर
बगसे (बक) सर्वथा देख पड़ते है। काश्मीरके काक
कुछ खेतवर्ष है। उनका सर बहुत लक्ष्य
नहीं होता। मोसकल सर्वाङ्गति पीर जष्यवर्ष है।
उनका दुग्ध प्रति सुडिअर होता है। काश्मीरमें
मच्छर, मच्छी पीर पिष्णुका बड़ा उपद्रव है। फिर
काकच पीर भाद्र मासमें बड़ बहुत बड़ जाता है।

जल धर जीर-काश्मीरको भूमि प्रति सर्वथा है।
जिस जिस क्षममें बरफ नहीं गिरता, वहाँ भी क्षमात्र
जात मरुतूत पच्छरोड पीर वादास काको उपजता है।
पारन (देवदाह, बोड) पक्ष इच्छे भाति उत्तमा
इद नहीं होता। किन्तु काश्मीरके कहींके पड़ पीर
मोकादि प्रधुत करते है। इसका काह तेवात्र कोनेके
काक से जासिमें व्यवहृत होता है। पयिज रातको ठस
को छोटी छोटी काठिका जका पार्थक्य प्रदेममें मयाक
का काम लिखानती है। देवदाह मास प्रधति बड़
मूक काठके पीड यद्येष्ट है। काश्मीरके वाहर उच्च
काह मैत्रनेका नियिष है। पान्य प्रधान प्याय है।
काश्मीरमें भारतवर्षका लकल प्रकार शण पीर माक
उत्पन्न होता है। बेगल खान पीर शुकावी उत्तरता
है। पक्षमें शैव, नासपाती, बिडो विनाम कोतरलक,
गोमा, बम्बू, मरुतूत, पंगूर, पच्छरोड, बादास
पाङ्क प्रधति कई प्रकारके सुष्णायु फल उत्पन्न होत
है। बादास पार प्रकारका हुँडोता है। जलमें एकका
दिलका कागजको भांति पतका रहता है इधेके उडे

कागजो बदास कहने है। यह जलमें प्रति सुष्णायु
लयता है। पंगूर १८ प्रकारका होता है। जलमें
बाइको पीर सुष्णी प्रति उच्छूड निवसता है। पपनि
देमके कुम्हड़े पीर बड़को तरङ्ग काश्मीरमें प्रति होना
वक्त कोनाके श्री प्राङ्गचर्म पंगूरके मापि बडे रहते है।
पंगूर पबिअतर मनुए पीर सुष्णायु कोनेके काश्मीर
यके कर कहने है—“यदि ईश्वरके सुख होता तो हम
उधे प्वागोए रोडे पीर पंगूर खिटा उच्छूड कर
पवते।” जपिअल द्रव्यके मध्य काश्मीरका कुहुम
(शिबर काकराण) प्रति उच्छूड होता है। बड़ा
वधेष्ट उत्पन्न कोनेके कुहुमका नाम को ‘काश्मीर’ है।

उत्पन्न-काश्मीरका मनुपरिवर्तन बहुत सुन्दर
है। जलवायु प्राकृतिक योमा पीर पृष्टि एवं पृष्टिअर
इत्यादिके बिठे काश्मीर मूर्धन्य कहता है। बलन्ता-
गममें बर बरफ गहने समता तत्र योमाका पार
नहीं पड़ता। मोतके तुपारमञ्जित इत्यादि तुपार
बरफ कोङ्क पद्मसुकुलये मृपित हो जाते है। जिस
पीर बच्च पुमाएथे जनी पीर देखिये कि पद्मसूय
तबवर पुष्यपरिच्छदके प्यात्रत है। (काश्मीरमें पक्षी
फूल खिलता, फूल सुख जानेके पत्ता निवसता है।)
फिर कितने दिन मियिर नहीं पड़ता उत्तमे दिन
नवकुहुमित पन्नवा नवपङ्कित इच्छकाएथे बसन्त
बिराज करता पर्यान्तु जमायके कातिक पर्यन्त सात
मास बसन्तका पबिअर रहता है। यीतकालमें जिस
परिमाथके बरफ गिर जाता, उधेके पनुसार मोक्ष वा
बिचल्यके बसन्त पाता है। योतमें पक्ष्य बरफ गिरने
के चेतमासके पूर्व हो बड़ गल चुकता पीर बसन्तका
समामम जगता है। फिर यदि पबिअ बरफ पड़ता
तो समस्त चेतमाथ गहा करता है। सुतरां येमाथ
मास बसन्तागम होता है। कहते है कि एक समक
कहाँगार बादमाथ कार्यासुरोबडे बसन्तके पारम्भमें
काश्मीर का न सके। सुतरां उन्हीं काश्मीरके चर्म
चारिबोंको निख दिया—“दिसा कोत्रिये जिसमें बसन्त

• काश्मीरके पठोको किन्तो सर्वथा बरने काश्मिरक जलके पक्षी
रना नहीं पड़ते। किन्तु सर्वके पक्ष्य तत्र जलन बननेमें बरफे पुष्य
जलन पीर नहीं होता।

राज हमारे आगमकी प्रतीक्षा करते रहें और हमारे पङ्चनेसे पहिले देख न पड़ें।" सुचतुर कर्मचारियोंने उनका उद्देश्य समझ चारी पाखंडके पर्वतोंसे वरफ मंगा वादशाहकी क्रीडाका कानन टांक रखा था। सुतरा अन्त वसन्तका कार्य आरम्भ होते भी वादशाहके काननमें उसका प्रभाव न पडा। अन्तकी जहांगीरके पङ्चने पर वरफ हटानेसे क्रीडाकाननमें वसन्त झलक उठा था।

काश्मीरमें नाना वर्णके मनोरम सुगन्ध पुष्प यथेष्ट हैं। सर्व प्रथम हरिद्राम शुक्लवर्णका वेदमुष्क फूल खिलता है। जिस ओर देखिये, उसी ओर पुष्पका आन्तरण लगा हुआ मालूम पड़ेगा। काश्मीरमें फूलके गुलटखेके सिधे विविध प्रकार पुष्प आहरणका कष्ट नहीं उठाते। सन्मुख जहां चाहते वहींसे दो एक हाथ जमीनके बीच प्रायः ७।८ प्रकारके फूल पा जाते हैं। वैशाखमासके मध्यकाल वादाम फूलनेसे फिर एक नयी शोभा उमड़ पडती है। वह काश्मीरियोंके सडे आनन्दका समय है। धनी, निधन, युवा, हृद, सब लोग हजार दास्तानका पिंडड़ा हाथमें उठा हरि-पर्वत नामक स्थानकी जाते और वादाम पेड़की शाखा में पिंडड़ेको लटकवा उष्णीष (तहो) खोल देते हैं। हजारदास्तान् वसन्तवायु लगनेसे नाचते नाचते सुललित स्वरमें गाता रहता है। काश्मीरी भी भक्तिसूचक विभुगुण गान कर इतस्ततः घूमते हैं। छ्येठ मासमें चमेनी फूलती है। उसका वर्ण आकाशकी भांति होता है। सुतरां काश्मीरी उसे "हि आसमान्" कहते हैं उक्त पुष्प वसन्तकी विदाईका फूल है। उसके खिलने से ही वसन्तकी शोभा समाप्त हो जाती है। वैशाख कीतने पर चमेनी खिलनेसे पहिले पीछे कालानुसार क्रमशः फूल भरने और नवपल्लव निकलने लगते हैं। आधाट मास फल प्राता है। शस्य परिपूर्ण हो जाता है। काश्मीरमें शीषका लेश नहीं। जब शीषके प्रभावसे हिन्दुस्थानमें जा घबराने लगता, तब वहा गात्र पर एक परिधि वस्त्र रखना और रातकी रजाई ओढना पडता है।

आवर्षके प्रथम रोद्ध कुछ बदता है। किन्तु उसमें

कभी लोग विवश नहीं होते। वही गर्मी पङ्चनेसे शीघ्र स्वल्प हृष्टि हो जाती है। फिर पर्वतादि शीतलता धारण करते हैं। आश्चर्य नियम। वहां आवर्षमें मूषक धार हृष्टि नहीं होती। शीतकालमें वरफ गिरनेके समय झड लगती है। उसी समय शिलाहृष्टि भी होती है। संवत्सरमें १८। २० इन्हसे अधिक पानी नहीं वरसता। आश्विनमें फल काम पकता है। कार्तिकमें शीत आरम्भ होता है। हल सकल पत्रहीन हो जाते हैं। उसी समय यौनगरसे ६ कोस दूर पादपुर क्षेत्रमें जाफरान (केसर) उत्पन्न होती है। वही काश्मीरके प्रति बत्तरकी श्रेय शोभा है। किसी फारसी कवितामें उक्त विषय भली भांति वर्णित हुआ है। यथा जाफरान खिलकर सबसे कहती है कि तुम काश्मीरका पथ छोड हिन्दुस्थानका पथ पकडो, यहांकी शोभा पूरी हो गयी। शीतकालकी आते देख काश्मीरी आश्चर्य संग्रह करते हैं। उस समय वह समुदाय शाक (कद्दूतक) सुखाकर रख छोडते हैं। किसीके बरामदे किसीके जंगले और किसीकी नावमें सूत्र ग्रथित मिर्चोंकी वही वही माला सूखा करती हैं। उन्हें देख कर समझते कि दुःसह ऋतुकी आते विचार काश्मीरी भी उपयुक्त आयोजन लगा रखते हैं। २०००० फीट ऊंचे काश्मीरमें चिरतुषार विराजित है। कार्तिक मास आते ही नीचे पार्वत्य स्थानमें वरफ गिरने लगती है। किन्तु वह कार्तिकमें जमती नहीं, गल जाती है। पौष माससे नियमानुसार वरफका जमना शुरू होता है। वरफसे चतुर्दिक् रौप्यमण्डित हो जाती हैं। उक्त दृश्य देखनेमें भी बहुत रमणीय लगता है। किन्तु उस समय काश्मीरमें रहना बहु कष्टसाध्य हो जाता है। काश्मीरपति महाराज रणवीरसिंहके सुविज्ञ मन्त्री (१८८५ ई०) दिवान् कृपारामने स्वप्रणोत काश्मीर-इतिहासमें उक्त तुषारपातके सम्बन्धपर लिखा है—'पौरपर्वतपर जो सुदृढ़ सुदृढ श्वेतवर्ण कर्षिका पड़ी है, वह वरफ नहीं, आकाशने काश्मीरके सुखमें अन्ततमात्र दान किया है।'

वास्तविक वहां तुषारपातसे जीवन संशय होता है। उसमें विधाताकी असीम करुणासे जिस प्रकार जीव

अमृत बचता, बह प्रयुक्त विवगना ही एक ठहरता है। शीतवाकर्म एकदण्डके बिचे भी तुपायवात बियाम नहीं होता। उस पर मध्य मध्य भद्र पीर प्रबल छटि पड़ती है। फिर भयङ्कर शिवावात भी होता है। कभी कभी एकादि कमसे एक मासके मध्य सुयंका इयंन नहीं मिनता। नदी ऊदादि कम जाते हैं। कभी कभी कलसौ वा अन्य पात्रादिका एक कम जानिसे पानी या कम जैनिसे नहीं मिलता। काश्मीर कभी बिलकल समझ सकते पीर सतक ही कुछ पूर्वसे घटादिके मध्य दिवाराति पम्बि प्रकथित रण किसी प्रकार अन्तरका पीर छोटादि निवारण करते हैं। शीत काम पड़नेसे आवास इव-बनिता सबसोम धातोपर पगरदिसे भी एक बरोसो व्यवहार करते हैं। बरोसो मसालेको ईडो जेना पम्बि रखनेको अत्यन्त पात्र है। बह चारो पीर बसको खपाकसे जुगो रहती है। उसमें पम्बिहाक धातोपर अपकृषे मीनर कटका दते हैं। इसीसे काश्मीरिदोके बच-खरममें कबनिके दाम देख पड़ते हैं। बर्षे मिरनेके कुछ दिन पक्षी मिथिर पड़ता है। उस समय प्रातःकाळ बीच होता मानो रातको बिघोने चारो पीर जूना बिहा दिया है। बर्षे मिरनेके पक्षी शीत पति पसदा हो जाता है। किन्तु बच पड़ जानिसे एक शैलके मध्य भी कुछ रम शोबता मानूम पड़ती है। अर पबिब बर्षे मिरती तब तब प्रातःकाळ कठ कर देखनेसे चारो पीर चांदो खेरी भलक बठतो है। पर्वत, निम्बलइव जता, सुष्प, पृष्ठ, हत, शोका, लघुमोच मूमि, एक प्राङ्गण समी मानो रीष्पमप्युत्त हो जाता है। बरको इतसे शोमि का नल जेके बर्षेके नल कटका करते हैं।

शीतकालमें चाब पीर मांस ही काश्मीरवाशिषियोंका प्रधान प्याय है। शीतवाकर्म को बिलक बर्षे प्रकारके कलकर पक्षी मिलते हैं। बिघो बिघो दिन कुछ परि प्यार होनिसे काश्मीरी अखायण पर आ पक्षी मार जात है। उस समय मृक्षान बिब कोई माक नहीं मिनता। काश्मीरी उन्ने 'नदक' कहते पीर शीतवाकर्म रांभ कर चकते हैं।

जान है तो काश्मीर ही है! नदीका जल, ऊदका जल इतना अल्प रहता कि दम हाथ भीचे मजसोका खिच प्यह देख पड़ता है। कम लेना अल्प वेसा ही सुनातु मो है। ठरसोका जल तो मैदव्यगुपबिधिष्ट है। किसी किसी उन्नेमें बिलक काम करनेसे ही कुछ पर्यन्त पातोय हो जाता है। उस इतना शीतन है कि ज्येष्ठ पाण्डू मास पीते भी दांत हिल उठता है। काश्मीर के भीम खड्गमें भी समझ नहीं सकते पीष वा कृति किसी कहते हैं? बाबु पति निर्मल, शीतल पीर व्यास्यहार है। किसी कहने लहा है—यदि कोई टम्ब जैव भी काश्मीर पाके, तो बह जौबित ही जाके, वहां तक कि पम्बिदग्ध पक्षी भी पचने पर पाके पीर पाकायमें उठता देनाके। बाष्पविक एक सुष्पने बह नहीं सकते काश्मीरके जलवायुमें बितने गुण हैं। काश्मीरीके रचनेके घटादि खाठसे निर्मित होत हैं। काश्मीरी भाषामें उन्ने "नडो" कहते हैं। वहा पाप' मूमिबन्ध होते हैं। इसीसे सब जोग कबडोके पर बनते हैं।

किसी किसी घरकी मिति प्रस्तर वा रहक निर्मित होती है। किन्तु पबिर्काममें नीव समती है। बर्षेके दिवसे सब मसानोंको कत दोनो पीर डामू रहती है। कत पर पक्षके तस्ती पीर पाके सुर्वप्रक बिहा मडोसे तोव दिसे हैं। बसलकाल कब मडो पर खच कमजानिसे कत पूरी हो जातो है। उस प्रकारको कत देखनेमें बहुत सुन्दर होती है। घर हितकसे पक्ष-तल पर्यन्त बनता है, बह पाइरीकी मयनको भांति दिख पड़ता है। बिडकीके बिवाके दो प्रष्प (दुतरफा) होती हैं। बरिदमेंसे कगाटमें नाशा प्रकार काहकाव पीर सुद्र सुद्र बिद्र रहती है। शीतके समय उत बिद्र कामसे बन्द कर दिधि जाते हैं। उससे बिम रहता, किन्तु पानोच पड़ना करता है। प्रष्पके भवनमें एक 'जोपारी' (जुवांजय) रहती है। बिना कनके शीत कालमें काम करना पसाल है। किसी किसी घर पिमिपत बनियोको घटाबिबाके सब निम्ब लकमें इष्पाम पमात्त लष्प खानागार होता है। उसमें किसी दिक्कन वायु सुनने नहीं पाता। वहां कष्पताका तार

अन्तर-अगस्तमें यदि बिलक व्याप्य हर कोई

करते मो देमाधिकार करन सकते थे। शिवकी प्रक-
 वरके अधिकार करने पर जहाँगीरने परामर्शकर मुह-
 -लीकी बख्तपूर्वक खीरिया धारण कराया। प्रथम प्रथम
 बख्त उन्नत शिव बिना मुह धारण करने पर औद्यत हुये
 न थे। किन्तु शिवकी कर्मोनि उसे औद्यत किया। पत
 एव मुह पणिकेदके साथ कर्मोने मुहपोषित साधक
 मो खो दिया है।

बाबत-अपगत-काशीरकी बहुत परिस्थान रहते हैं।
 उनका बख्तादि यात्रा पीर बाघम ह साक्षात् नरक
 केका देख पड़ता है। शीतकी छोड़ देते मो पण्य
 किसी समय बख्त बख्तादि नहीं होते। क्या खो क्या
 मुहब समी प्रकाश कर्मनि नन्द को खान करते हैं।
 सुतरां खानके समय भी गात्रावरणको उल्लस नहीं
 कराते। इधोनि बसपर इतना देन कम जाता कि
 यद्यार्थ मुहको केनिसे मेल निकलता पीर भाङ्गनिसे
 पिच्छ तथा बिलरका डेर नमता है। यह पण्य यज्ञ-
 भन्तर पीर प्राङ्गनिसे मलमूल न्यान करते हैं। शीत
 काकर्म करते बाहर निकलना दुःसाध होने पर बख-
 -रिया करते हैं। किन्तु पण्यप्रकाशसे पण्य समय भी
 बख्त उन्नत न्यनहार छोड़ नहीं सकते। नोकाशय इधोनि
 नरक बन जाता है। शीतगर, जन्म प्रधति रामबानो
 मे मो रिसा को ज्ञान था। धिर भी पाककल राज
 निवमसे बहुत कुछ परिष्कृत हुआ है। राजबर्मचारी,
 बिदेमी पीर पर्यटक (पञ्चात् काशीरकी शिव दूधरे
 समी) दसोथे को बाघय छोड़ नहीतौर ह्वासाटिकासे
 रहते हैं।

काशीरकी बड़े भयङ्कर होते हैं। किसीके साथ
 किसीका बिनाइ उपस्थित होनिपर समस्त दिनपनि
 आत्म कथने बख्त रहते हैं। धिर, पण्य, पण्यसे
 समय पण्य पण्य पण्य चतुर पर टोखरी, शीबा, सो
 रहते हैं। मुहरे दिन प्राङ्गनिसे समय बहो, टोखरी
 खोल नये सखे भयङ्करा किया करते हैं। इधो प्रकाश
 एक दिन नहीं कई दिन भयङ्करा बनता है। शीतगरके
 मोथे बिलम्बा कुलपण्यका है। जिस समय, इस पार
 के मोम डम पारके मोथे भयङ्करते, उन, समय बहा
 कोरुल मान्म होता है। इस प्रकारका भयङ्करा, नरनेके

समय पण्य एक दूधरेके उद्देश्य नानाविध कुमित केत
 खेतते हैं। बख्तसे पादमोयोके देखनि पोष्य नहीं होता।
 समयकेको कला वा पण्यमही मो खीर भसा पादमी
 देख या सुन नहीं सकता। साधारणत काशीरकी
 बिलयो, सिद्धमयो पीर परोपकारी होते हैं।

बख्त शीनी विला पाहार करते हैं। पण्य पीर मन्त्र
 उनका निम्न साध है। इतत पण्यकी पणिया बड़ा
 सूखा मान, नमक मिर्च मिखा चरपरा कड़म गाक,
 कुछ मन्त्रकी पीर एक प्यासा चाय काशीरकीके निम्ने
 पति इतत भोजन है। इसविधि को मन्त्रोनिसे हा
 रूपये कमाता उसका भी समय सुखसे मूढ जाता है।

चाय बख्त निम्न पीते हैं। नम्य पीर चाय पामन्तु
 कके निम्ने पण्यमनाको सामपी है। चाय ब्रह्मनिसे
 यन्त्रको "ब्रह्मावाट" कहते हैं। यह देखनिसे डीनके
 योगि केका होता है। नमावाटकी उन्नता १४ रस
 होती है उसका आस डार रस बैठता है। पण्यन्तर
 दोहरा होता है। मन्त्रकर्म पण्य कयागा पड़ता
 है। इसके बाहर बाह्य ठाकनिसे विधे डो डी-ब्रह्मा
 नम कया रहता है। पण्यकी चारो पीर पाखी जगह
 में पानी भर देते हैं। पानी गर्म होनिसे चाय काखी
 जाती है। बख्त मोठी पीर नमकीन चाय पीते हैं।
 पूरुतामन्त्र तिम्नोके चार नयचक्षण्य न्यनहार
 करते हैं। इन्हे दो प्रकारकी चाय पण्यो है—पण्य
 की "हरती" पीर नाहाखकी "सजा"। जको जानेपूर
 बख्त समाष्ट कमी नहीं छोड़ते।

पिण्ड—काशीरकी पिण्डविधामें निपुण हैं। काशीर-
 रका पुयागा जगत् विख्यात है। शीतगरके निबट
 नीमिरा नामक खानमें कायक बनता है। यह सुधि
 जय पार पारकेपिच्छको मति ह्वा होता है। राजकीय
 व्यवहारके बिजे सुबर्णमण्डित बाह्यकार्यविधि एक
 प्रकारका जति मनोहर कायक तैयार होता है।
 काशीरके ब्रह्मा इधे कायकके वाह्यकार्यविधि
 कर्मदान, समूह, विद्या, रक्षायो प्रधति सुवन
 विख्यात हैं। शीने बदीका नाम भी बख्त खूब करती
 हैं। गहनिका केना पिकदार नमुना विद्या जाता, बख-
 -रैकाके (पण्ये कमी न बनाते भी या बनातेका

कीशल न जानते भी) प्रविकल काश्मीरियों के हाथसे बनकर निकल जाता है।

भाषा—काश्मीरकी प्रकृत भाषाका नाम “कासुर” है। वह संस्कृतका कुछ कुछ अपभ्रंश है। उस भाषा में अक्षर नहीं। सुतरां उसमें लिखित पुस्तकादिका भी अभाव है। देवनागरके टूटे फूटे शरदा अक्षर संस्कृत पुस्तकादि लिखनेमें व्यवहृत होते हैं उनमें कासुर भाषाके उच्चारणानुसार सकल कथा लिखी नहीं जा सकती। उनका “वृक्षव” (वृक्षा) और “वृक्षकिया” (वृक्ष ले कि ना) प्रयोग देख कासुर भाषा ठाट् हिन्दी जैसी समझ पड़ती है। वह प्रत्येक कथामें “दापाश्व” (कहते हैं) शब्द व्यवहार करते हैं। फिर प्रत्येक क्रियाके अन्तमें “च” लगा देते हैं। कासुर भाषामें सेकड़े पीछे २५ संस्कृत, ४० फारसी, १५ हिन्दी, १० अरबी और कई पहाड़ी वा तिब्बती शब्द रहते हैं।

काश्मीरके नाना स्थानोंमें प्रायः १२ विभिन्न भाषा प्रचलित हैं। पुश्त और जम्मु जिलेमें डोग तथा चिब्बनी भाषा व्यवहृत होती है। वह हिन्दी भाषासे अधिक घृष्टक नहीं। पार्वत्य प्रदेशमें ५ विभिन्न भाषा चलती हैं। काश्मीर उपत्यकामें कासुर भाषाका प्रचार है। लदाख, बलतीस्तान, चम्पा प्रभृति स्थानोंमें दो प्रकारकी तिब्बतीय भाषा और उत्तर-पश्चिममें चार प्रकारकी दरद भाषा बोली जाती है। बलवेरुनकी वर्णमालासे समझ पड़ता कि ई० एकादश शताब्दकी काश्मीरमें “सिंहमाटका” नामक अक्षरोंका प्रचार था।

शिव—राजकीय और दैविक समुदाय कार्य फारसी भाषामें सम्पन्न होते हैं। इससे प्रायः अनेक लोग फारसी पढ़ते हैं। काश्मीरी पण्डित संस्कृतकी शिक्षा ग्रहण करते हैं उसमें अनेक पण्डित विशेष व्युत्पन्न हैं। ज्योतिषशास्त्रमें भी बहुतसे लोगोंको अधिक अभिज्ञता है। काश्मीर महाराजकी यज्ञसे अनेक संस्कृत पाठशाला स्थापित है।

धर्म—काश्मीरके प्रायः सकल हिन्दू शाक्त हैं। सब लोग रीतके अनुसार पूजा और स्तवादि पाठ करते हैं। जो स्नान वा पूजादि नहीं करते, वह भी (हिन्दू बालक, स्त्री सब) प्रातःकाल उठते ही कपालसे पूर्व

दिनका तिलक छोटा केसरका दोर्घ और स्थूल नया तिलक लगा लेते हैं। प्रतिदिन प्रातःकाल केवल एकवार तिलक धारण करते हैं। तिलक लगानेसे उनके कपालमें एक चिह्न पड़ जाता है। ब्राह्मण रीत्यनुसार घेदपाठ करते हैं।

किसी समय काश्मीरमें भो बौद्धधर्म विशेष प्रचल था। आज भी नाना स्थानोंमें बौद्धमठ और विद्या-गटिका भग्नावशेष दृष्ट होता है। काश्मीरमें अनेक बौद्ध पण्डितोंने जन्म ग्रहण किया है। स्थान स्थानमें आज भी बौद्धधर्म प्रचल है।

सुमलमानोंमें सुन्नी और शीया दो विभाग हैं। सुन्नियोंकी संख्या अधिक है। १८७२ ई० के शेषकी एकवार किसी मसजिदके प्राचीर पर दोनों दलोंमें विवाद बढा था। सुन्नियोंने शियावांका गुहादि जला, द्रव्यादि लूट और रमणीकुलका सतीत्व मिटा राज्यके मध्य सहायिप्रवृत्त मचा दिया। शेषको महाराजके कीशलसे सब शान्त हो गया।

पुराण—पाश्चात्य पुराविदके मतमें “कश्यपमीर”-से ‘कश्मीर’ नाम बना है। राजतरङ्गिणीमें लिखा है—

“पुरा सतीसरः कस्तारणात् प्रथित भूमन् ।

उषी हिमाद्रेरर्षीभिः पूर्णां मन्वन्तरापि पट् ॥

अथ वैश्वतोषे ऽपिन् प्राप्ते मन्वन्तरे सरान् ।

दृष्टिपोद्भद्राद्वाराभीभवतार्थं प्रजापतञ्ज ॥

कश्यपेन तदन्तःस्य धातयित्वा जनीद्वम् ।

जिनमे तत् सरो भूमौ कश्मीरा इति मण्डलम् ॥” (१। २१—२०)

पुराकाल सतीसरः कस्तारणसे भूमिमें परिणत हुआ। हिमाद्रिगर्भमें छह मन्वन्तर पर्यन्त जलपूर्ण रहा [उषी सतीसरसे जनीद्वका (असुरका) वास था।] वैश्वन्तर मन्वन्तर उपस्थित होने पर प्रजापति-ने कश्यप, दृष्टिण, अपेन्द्र और रुद्र प्रभृति देवगण अव-तारित कर उनके द्वारा जनीद्वको विनाश किया था। उषी सरोवर भूमिसे कश्मीर मण्डल स्थापित हुआ।

नीलमतपुराणके मतमें प्रजापति कश्यप ही ब्रह्मा थे। उन्होंने शिव्य और शिवके सहायतामें जनीद्वको मार सतीसरसे काश्मीर राज्य स्थापन किया। प्रथम नागराज नील काश्मीरका पालन करते थे।

काश्मीर प्रति पुराहासके प्राये जातिवा बीजादेश
है। चारै बीजा। शाहायन-ब्राह्मणमें लिखा है।

‘पय्यान्वित्तु जो उत्तरदिक् समन्विते। पय्या
कस्ति जो बाल है। उत्तरदिक्में जो बाब्य पद्मान
जोसा भौतित्तु है। कोम भी उत्तरदिक्में भावा कोजमें
जाति है। यिसा प्रवाद है—जो बांग उत्तरदिक्में प्राति
है, सब जोग यह यह उनका (उपदेश) सुननीको
इच्छा करते हैं जि बहुत बोल रहें हैं। बारह उत्तर
दिक् बाब्यकी दिक्को भाति प्वात है।’^१

बिनावकमहर्षि शाहायनभाष्यमें लिखा है—
‘काश्मीरमें सरस्वती भौतित्तु रहा करते है।
(सरस्वती जो बाग है) सरस्वतीके प्रसादनामको
जोग उत्तरदिक् प्राति है।’^२

बिनावकमहर्षी उक्तिसे समझ पाते हैं प्रति पुरा
हास जोग उत्तरदिक् भावा प्रौढति जाते थे। तथा
वतः इसीसे काश्मीरका चपर नाम सरस्वती का शाब्दा
देश है।^३

महाभारतके समय भी काश्मीर एक तोर्षके समान
प्रसिद्ध था। वथा—

‘काश्मीरके पञ्चक वरुन वचकम् ॥
विश्वामित्रिके वृष्टाये सर्वपापशोभकम् ॥ ८
वच काष्ठा लो नुं राक्षसैः कथं वचम् ॥’ ११ (२५ २२ २०)
सर्वपापविनाशका उन्धे व वरुन वरुन ॥’ ११ (२५ २२ २०)

काश्मीर देशमें तत्कालनामका मदन है। वहाँ
वित्पुत्रा नामक सर्वपापनाशन एक तोर्ष है।
इसमें ज्ञात... करनेसे नर काजयेपयानका फल प्राति
पौर सर्वपापके छूट जाति है। सुतार विद्युत् जो जामिसे
उन्धे परममति मिलती है।

* ‘वयान्वित्तुवतोपे त्विं प्रयत्नम् । कन् नै क्वात्तुर्भिः । तन्वत्
दीप्तुं त्विं वृष्टात्तय ननुपते । कश्चै च वच कश्चि वरुं विविदन् ।
दी वा क्त नमन्वति वच वा इच्छते इति वाच । वरा वि नानी विच
वचसा ।’ (० : ६)

† ‘वरावत्तय वरुनोपे काश्मीर वरुनोपे नैः । वरुनोपेवै वैरुनोपे
वृष्टे । वरुं विविच वरुनोपेवत्तय वरुनोपे ।’

‡ वरुनोपेमें वरीवा वरुनोपे वै काश्मीरका चपर नाम प्राता
रुच है।

वच समय काश्मीर चोटकके विधि प्रसिद्ध था।
प्राक्काल यह चोटक ‘गुट’ कहता है।

वर्तमान काश्मीर राज्यका ‘कम्पू’ भी महाभारतके
समय प्रसिद्ध तोर्ष जैसा विख्यात था।

‘कम्पूवर्षे वरुनोपे वरुनोपेवत्तय ।
वरुनोपेवत्तयि वरुनोपेवत्तय ॥’ १ (२५ २२ २)

देवता, जदवि पौर पिङ्गकक विपेवित कम्पूमार्ग
नामक तोर्षमें जातिसे चरुमन्त्रका एक मिलता पौर
समस्त कामना परिपूर्व हुआ करते हैं।

काश्मीरका परिचय

इतिथमें काश्मीरपति गोनर्तका नाम मिलता है।
राक्षतरङ्गिचौमि कञ्जपने उन्धेको प्रथम राजा जेसा
लिखा है। राक्षतरङ्गिचौमि स्थान खान पर ‘गोनर्त’
पौर ‘गोनर्त’ नाम प्राया है। काश्मीरके राजावर्षि
गोन गोनर्तका नाम मिलनेसे प्रथम गोनर्त ‘गोनर्त’
प्रथम जेसे प्रतिष्ठित हुआ है।

राक्षतरङ्गिचौमि मतमें प्रथम गोनर्त कलिबुधसे
पक्षी काश्मीरके सिंहासन पर प्रतिष्ठित है। इसीसे
यह बुद्धिहरान्तिके समग्रामविच ठहरती है। बारह
कल्पिप्रसिद्ध होनेसे बुद्धिहरादिने ज्योरोषच बिहा
वा। गोनर्त मगधराज जराशंखके बन्धु रहें। उनका
राज्य नृपाके उत्पत्तिस्थान जेवान उन्धेके मुक्त हैय
पर्यन्त विद्युत्त वा। जराशंखने जब मगधराये यदुर्बन्धी-
योको ममाया, तब पाहन जो गोनर्तने एक एक
सेन्धके मात्र जराशंखको बाहाय्य पर्यवाया वा। फिर
उन्धेसे यमुनातौर गिविर स्थापन कर पश्चिमदिक्को
यदुर्बन्धीकोका पलायनपथ रोक दिवा। युद्धकाल
काल्यसे कञ्ज जराशंख हारे थे। कियु गोनर्तके बकराम-
के युद्ध कर विपक्ष सेन्धका विध्वंस करते मी बहुस्य
पर्यन्त जाय पराजय गिविर न हुआ। पक्षीवको यह
बकरामके पक्षाघातके मारी मये ॥

काश्मीरके उन्धेवत्तय । (वरुनोपे, विद्युत्)
† इतिथमें लिखा है कि काश्मीरका जेनर्षके काश्मीरकी काशाव
दिवा पौर कन्वा मन्त्रके प्रतिष्ठित वरुनोपेवत्तय वरुनोपेवत्तय
वा। वथा— गोनोपेवत्तय वरुनोपेवत्तय ।
वृष्टेवत्तयवत्तय वरुनोपेवत्तय ॥

प्रथम गोनन्दके मरने पर तत्पुत्र दामोदर काश्मीरके राजा हुये। वह बहुत ब्रह्महारी थे। सुतरा पिताके मरनेके राज्य पाकर भी दामोदर सुखी न हुये। राजतरङ्गिणीके मतमें उनके राजत्वकाल किमी गांधार राजकुमारीके स्वयम्बरोपलक्ष क्षण-वनराम बुलाये गये थे। दामोदरने यह बात सुन स्थिर किया कि पिछ्लहन्ताके प्राणवधवा वह सुयोग था, वंसा सुयोग त्याग करना उचित न रहा। इसी विवेचनामें उन्होंने महत् सेन्धुदलके साथ पश्चिमघ्य क्षण-वनरामका आक्रमण किया। युद्धमें क्षणके चक्रावातसे दामोदर मारि गये।

महाभारतके पाठसे समझ पडता कि राजसूय-यज्ञकाल अर्जुनने काश्मीर लय किया था।

दामोदरके मृत्युकाल उनकी महिषी यगोमती गर्भिणी थीं। त्रीकण्यके आदेशानुसार वही सिंहासन पर बैठ गयीं। स्त्रीके राजा होनेकी बात सुन प्रधान अमात्यने आपत्ति डाली था। त्रीकण्यने उन्हें उत्तर दिया—

“काश्मीर पावकी तब राजा को इरांग”।

मायसे दो स टुडोपि विट्टया मृतिनिष्पत्ता” (राजतरङ्गिणी)

एते राज्य च राजाभी वधवत्का मशरया।

तममदुस्तरामस्य विदिवन्ती कुमार्देनम् ॥” (हरिश्च ८१ प०)

जरासन्धके प्रथमवार मयूराक्रमणकी वर्षनामें उन झाक निरते थे।

उसके पीछे जिस समय हय वलराम गोमन्ध पर्यन्त पर रहे, उससमय भी जरसन्ध सकल निघराजके साथ मन्त्रे बध करके गये थे। जरासन्धके चक्र निघराजोंमें भी गोदृष्टका नाम निकलता है। यथा—

“मद्रः कनिष्ठाधिपतिरेकितानः स्याद्विच।

काश्मीरराजो गोनन्दः कुरुपाधिपतिज्ञया ॥

द्रुमः किम्बु रूपयेव पार्वतीयाद्य सायवा।

पर्वताम्बाय पार्य विप्रमारीइत्यन्वभी ॥” (परिवर्ग, ८८ प०)

इसके ममें इतना ही जिला है किन्तु, वनरामके ज्ञाप गोनन्दके मारि जानेकी वधा उन्हीं मन्त्री पायी।

• “ततः काश्मीरीकान् वीरान् अवियान् अत्रियर्षम”।

म्यधयस्त्रीहितसं व मण्डेदेगमिः सह ॥ १० ॥

सतस्त्रिगनां कोमोयं दार्याः काकनदानया।

अविया बहुवो राज्ञः पावर्तन्त सर्वः ॥ १८ ॥

अभिधारी ततो रत्यां विजिग्ये कुबनन्दः।

उरवावाविनसं व रोचमाप रयेऽग्रयत् ॥” १८ ॥

(महाभारत, समाप्त १० प०)

काश्मीरकी रमणी पार्वती और काश्मीरके राजा महादेवका अग्र है। दुःशील राजावोंसे भी पुण्यला-सेच्छु परिश्रुतीकी घृणा करना न चाहिये।

यथाकाल यगोमतीके गर्भमें सुमन्त्रणाक्रान्त बालकने जन्म लिया था। उसका नाम रय गोनन्द पडा। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्हींके समय भारतयुद्ध हुआ था। यह गिष्ट है। इसीसे कौरव पाण्डवमें किसीने उनको नहीं बुलाया।

उनके पीछे ३५ राजा हुये। किन्तु वह सभी पधर्म और दुर्दान्त थे। इससे किमी इतिहास वा शास्त्रादि में उनका नाम या विन्दुमाव भी विवरण नहीं मिलता।

फिर नव नामक एक राजा हुये। कहना कठिन है—वह प्रथम गोनन्दके वंशजात थे या नहीं। वह अनेक पार्श्ववर्ती राजावोंकी स्वयममें नाये। उन्होंने “लोलौर” नामसे एक नगर स्थापन किया था, किम्ब-दन्तीके अनुसार उसमें ८४ लाख पत्थरके मकान रहे। उन्होंने लोनारके अन्तर्गत लिवार नामक ग्राम ब्राह्मणोंको दिया था।

लवके पीछे उनके पुत्र कुयोग्य राजा बने। उन्होंने ब्राह्मणोंको कुरुक्षार नामक ग्राम दान किया था।

कुयोग्यके पीछे उनके पुत्र रवगुन्द्र नरपति हुये। वह अतिसाइसी, नागहेपी और धीरबुद्धि थे। उन्होंने खागिपुर और खुनसुप † नामक दो ग्राम संस्थापन किये।

• गोनमतपुराणमें भी इसी प्रकार लिखा है—

“दामोदरामिधनस्य सूनू राजामवत् सुधी. ॥.....

अद्योपमिभ्याम्बारात्रिये इदम् स्वयम्बर ॥

रवाइता समाश्रन् राजानो वीर्यशान्ति ॥

तवागमं समाकण्य वामुदेक म्दमन्त्रे।

अगाम माधवं धीम्बु चतुर्दशमन्त्रित ॥

याह्य वामुदेकस्य मरकेद सहामवत् ॥

तत स वामुदेकेन युजे न्यत्रिगान्तिः।

एतव वी’ तस्य पक्षे’ वामुदेकोऽप्यदेवयत् ॥

मवियत्पुत्रराषाय तस्य देसस्य गीरवात् ॥

तत’ सा सुपुत्रं पुत्र वान- गोमन्दसंज्ञितम् ॥

वाननाशात् पाण्डुसूतेर्नामीत कीररेण वा ॥”

† वर्तमान नाम लुदही या दक्षभङ्गीपाल है।

‡ खागिपुर वा रवगुन्द्रपुरका वर्तमान नाम काकपुर है। यह बहुत

जमीन्दारों की तत्पुत्र सुरन्दरी सिंहासनारोहण किया। सुरन्दरी साहसी, निर्मलचरित्र और बिनवोरी। उन्होंने दरद से गङ्गे निकट कौरव नामक नगर स्थापन और उसमें "नरैन्द्रमठ" नामक एक सुन्दर प्रसाद निर्मात्र किया। उसके कोरि सन्तान न था।

महाराज सुरन्दरी परकोष कानिसे गोचर नामक कोरि सिधवयोग राजा बनी। उन्होंने ब्राह्मणों को चण्डियाणा नामक ग्राम दिया था।

गोचरके पीछे तत्पुत्र सुवर्ष राज्यमिषिद्ध हुई। वह बड़े दानशील रहे। उन्होंने कुराव नामक स्थानमें सुवर्षमणि नामा स्थान कराया था।

सुवर्षके पीछे तत्पुत्र जनकने राज्य पाया। उन्होंने बिहार और काशीर नामक प्रपचार स्थापन किया था।

जनकके पीछे उनके पुत्र यशोवर्ष पर राज्यमार पड़ा। वह अवतमना और सम्राज्य नरवति थे। उन्होंने सम्राज्य और यशोवर्ष नामके दो प्रपचार स्थापन किये। वह निरुपस्थान रहे।

यशोवर्षके पीछे उनके पिद्व्यपुत्र यशुमिषीर प्रयोग राजा हुई। वह बौद्धधर्मप्रचारी थे। उन्होंने शुद्धसिद्ध और वितस्तात्र नामक स्थानमें धर्मक स्तूप निर्मात्र किये। वितस्तात्रपुरके पत्तारि धर्मरक्ष विहारमें प्रयोगने एक प्रति बड़ा खेच बनाया था। इसको बड़ा बिहीको देव न पड़ती को। प्राचीनयो नगरीके प्रयोग कर्षक स्थापित है। कहते हैं कि उनके

ममय प्राचीन खोनगरमें ६५ लाख सन्तान थे। उन्होंने योनिप्रयोगसे ७ मन्दिरों को चतुर्दिक्का प्रसवाय वृद्धिमाकार तोड़वा मूलन निर्मात्र करा दिया। फिर प्रयोगने याबिषय देवके मन्दिर-प्राङ्गणमें "प्रयोगेय" नामक एक प्रसाद भी बनाया था। इनके इव पयसमें ज्योती (प्रयोगे वा योगी) ने काश्मीर राज्य प्रधिकार किया। महाराज प्रयोगने यीव इग्यपर ईश्वरको प्रेषार्थ प्रपना काव दितया।

प्रयोगके पीछे तत्पुत्र जलोच राजा बनी। वह बड़े सिधमठ थे। उन्होंने पिद्व गृध्रीत बौद्धमत प्रचर नहीं किया। जलोचने मसुद्रतट पर्यन्त पीछे पड़ ज्योत्स यशुर्षको प्रेषार्थ निकाला था। यशुर्षका पराजय कर उन्होंने एक स्थल पर मिधावस्थान किया। वह स्थल "व्यवद्विष्य" नामसे प्रसिद्ध है। जलोचने वर्यायमाचारको पुन बनाया था। उनके समय काश्मीर राज्य जनकाम्यागो हो गया। उन्होंने राज कर्षको सुवर्षका स्थापन कर कोषाप्रच, प्रकाव वेनापति, भूत प्रवति कर्षचारियोंका एक संस्थापन किया। जलोचने वारवक नामक प्रचर और जनकी पत्नी ईशानदेवीने तोरवहार तथा प्रत्याव स्थानमें माइका मूर्तिको प्रतिष्ठा कर बड़ा सुपय पाया था। महाराज जलोचने सोदरतीर्थ भी प्रचारित हुआ। तीर्थ यात्री बड़ा और प्रत्याव जनक जाति रहे। सोदरतीर्थको नन्दोद्यमूर्तिको मति उन्होंने प्राचीन खोनगरमें ज्येष्ठ ब्रह्म नामक सिधबिद्व प्रतिष्ठा किया और तत्पुत्रक द्वित स्थानका नाम सोदरतीर्थ रख लिया। नन्दोद्येक को चतुर्दिक्का प्रभूर प्राचीर जमीने निर्मात्र कराया था। फिर जलोच द्वारा ही नन्दोद्येकमें सिधमूर्तिग सिद्ध स्थापित हुआ। मूर्तिग मन्दिरको देवसेवाके निधे उन्होंने यथैव प्रर्ष दिया था। कहा जाता है कि उन्होंने प्रथम एक बौद्धमठ तट किया था। इनके पीछे जलोचने

नदीय प्रभोर प्रकव-प्रवेशनाम है जो व दक्षिण प्रस्थित है। वहाँ प्राय ही प्राचीन ईश्वर और चतुर्दिक्का प्रभूर का है।

सुवर्ष (साम्प्रतिकी १२८) - विद्वयके विद्वयप्रचरिमें सुवर्ष नाम 'कीर्णक' नामके एक इग्य है। (सिधवाङ्गणिक १८५-१९१) कहका यह नाम नय बनवा है। व नयुव कीर्णक है की व कर्ण-सुवर्ष प्रस्थित है। इनके विद्व कर्ष ५२८००० और सुवर्षको १२५००० विद्वय है। सुवर्षके विद्व वियव नामक एक बड़ा नाम है। विद्वयके जलोच नाम 'प्रचर' सिद्धा है।

० 'कोवरी' - यह नाम कोवरीके सिद्ध है। इसका प्रथम न न सुवर्ष प्रस्थित था। वहाँत प्रायुव नामक प्रचर ही प्राचीन कोवरीको वरी है, वृ वा वर नदी मकव-प्रवेशनामके प्रत्यावके चर्षा सुवर्षके वरिष्ठ सिद्धा था।

सिध काश्मीर सिधबिद्व प्रचर, प्राचरक प्रचर नाम सिधवना है। यह विय नदीके काशीर प्रस्थान प्राचरके चर्षेयार और दक्षिणपूर्व प्रस्थित है।

१ प्राय ही कर्ण सुवर्षके ज्येष्ठ नामक सिधव और वर है वर वर ज्येष्ठ प्रस्थित ज्येष्ठ नामके प्राचरके चर्षा वर है।

एक वीहविहार निर्माण करा उसमें कल्यादेवीकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा किया और विहारका "कल्यात्रम" नाम रख दिया। चौरमोचनतीर्थमें महाराज जलोक और महिषी ईशानदेवीका मृत्यु हुआ।

महाराज जलोकके पश्चात् दामोदर (२५) राजा हुये। समझना कठिन है—वह अशोक वा गोधर-धंशमन्तृत थे या नहीं। दामोदर यद्येष्ट पर्यगामी और शिवभक्तिपरायण थे। उन्होंने दामोदरचूद नामक पुर स्थापन कर उसमें यज्ञगण द्वारा गुरुसेतु नामक सेतु निर्माण कराया था। वितस्ताके जलप्रपादनसे देगरघा-के लिये दामोदरने (यर्जाकी सहायतासे) पत्थरका बाध बंधाया। एक दिन वह आहके उपलक्ष स्नान करने जाते थे। उसी समय कई ब्राह्मणोंने मार्गमें उनसे अन्न मांगा। किन्तु दामोदर (२५) ने उनको प्रत्याख्यान किया था। उससे ब्राह्मणोंने उन्हें सर्प होनेकी शपथ दिया। किम्बदन्ती है कि गुरुसेतुके निकटस्थ जलाशयमें आज भी एक सर्प इतस्ततः घूमता फिरता है।

फिर काश्मीरके सिंहासन पर तीन तुर्क (तुर्क) नृपति बैठे थे। नहीं मालूम पडता उन्होंने कैसे राज्य स्थापन किया। उनका नाम हुष्क (हुविष्क), जुष्क और कनिष्क थे। कनिष्क देखो। तीनोंने अपने अपने नाम पर तीन स्वतन्त्र नगर स्थापित किये—हुष्कपुर, जुष्कपुर और कनिष्कपुर।* जुष्कने जयस्वामीपुर नामक दूसरा नगर भी स्थापन किया था। शुष्कलेख नामक स्थानमें उन्होंने अनेक मठ निर्माण कराये। उनके समय बौद्धधर्म अतिशय विस्तृत था। राजतरङ्गिणीके मतमें बुद्ध शक्यभिक्षुके समयमें उस काल पर्यन्त १५० वर्षर अतीत हुये थे। बोधिमत्व नागार्जुन नम समय ६ दिन काश्मीरमें उपस्थित रहे।

* हुष्कपुर, जुष्कपुर और कनिष्कपुरका वर्तमान नाम वषारुम 'उष्कर' 'जुष्कर' और 'कन्पुर' है। उष्कर—बोनपरिजातकोक 'हु-सि-किन्डी' है। वह वर्तमान वरामुलके पश्चात् वितस्ताके दक्षिणतीर अवस्थित है। काश्मीरी पण्डितोंको विश्वास है कि पूर्वकाल हुष्कपुर और वरामुल एक ही नगर था। हुष्कपुरमें काशिकाशलिटीकाकार त्रिनेत्रबुद्ध रहते थे।

हुष्कपुर वा जुष्कर वर्तमान राजधानीसे २ कोस उत्तर अवस्थित है।

उसके पीछे अभिमन्युने राज्य पाया। राजतरङ्गिणीमें इस बातका कुछ भी उल्लेख नहीं—वह कौन थे या कैसे राजा हुये। अभिमन्यु प्रजातगन्ध, नृपति थे। कण्ठकौत्स (कण्ठकौत्स) नामक ग्राम उन्होंने ब्राह्मणोंको दान किया। अभिमन्युने एक शिव-मन्दिर प्रतिष्ठा कर उसके गात्र पर अपना नाम खुदा दिया था। उन्होंने स्वनामसे अभिमन्युपुर स्थापन किया। उन्होंने समय चन्द्राचार्य प्रमुख वेद्याकरणिकने प्रतिप्रति पायी थी। उन्होंने अभिमन्यु के धादेगानु-सार उनके समयका इतिहास लिखा। उसी समय नागार्जुनके प्रधान बौद्धोंने प्रबल ही शिवोपासना और नानपुराणोक्त नागनिषमाटि विगाड अपना मत प्रचार किया था। नाग लोग उसमें विद्रोही हो काश्मीर ध्वंस करनेके उद्देश पूर्वतमे अस्त्र-शुभ्रान्ना डानने लगे और अनेक अस्त्र ले बौद्धोंको मारने पर नियुक्त हुये। महाराज अभिमन्यु उसके निवारणका कोई उपाय न कर सकने पर "दार्वाभिचार" नामक स्थानको चले गये। शिवकी कश्यपधंशीय चन्द्र-देव नामक एक ब्राह्मणने दैवसहायतासे नाग और यज्ञ विद्रोह मिटाया। महाराज अभिमन्युने ही पतञ्जलिका महाभाष्य प्रथम काश्मीरमें प्रचार किया था।

उसके पीछे गोनन्द (३५) सिंहासन पर बैठे। उल्लेख नहीं—वह कौन थे या किस प्रकार राज्याधि-कारी हुये। उन्होंने नीलपुराणानुसार नियमाटि स्थापन और दुष्ट बौद्धोंके प्रत्याचार निवारण किये। गोनन्द (३५)-ने राज्यमें सुव्यशान्ति और प्रजाके धनधान्य की वृद्धि की थी। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्होंने ३५ वर्ष राजत्व किया।

उसके पीछे तत्पुत्र विभीषण (१४) ५३ वर्ष ६ मास काल राजा रहे। फिर इन्द्रजित् राजा हुये और उनके बाद उनके पुत्र रावणने राजा की वटेश्वर शिव-लिङ्ग स्थापन किया था। वह शिवलिङ्ग कङ्कण परिणत-के समय पर्यन्त विद्यमान था। उस लिङ्गके गात्रमें विन्दु तथा सूत्रके समान चिह्न बने थे। महाराज वटे-श्वर देवके उद्देश अपना समस्त राज्य लगा दिया था।

इन्द्रजित् और रावच समयने ३३ वर्ष ६ मास राजत्व किया। रावचके पीछे तत्पुत्र (२५) विमोचकने ३३ वर्ष ६ मास राज्य चलाया था।

विमोचक (२५) के पीछे उनके पुत्र नर वा विचर राजा हुये। वह बड़े परिशिष्यक राजा थे। विमोचक प्रजाके लिये भी करते, उसीसे उनके नाम विगर्हण थे। कोई बौद्ध उनको मङ्गिकीको बना ही गया। महा राज विचरने कसो खोचमें सङ्घ सङ्घक बीच मठ ख स किये और वह सङ्घक खान ब्राह्मणोंको दे दिये। उन्होंने बितप्रातौर विचरपुर नामक एक नगर स्थापन किया था। महा गोमा और जनशान्धे परि पूर्व कोनेके आर्य पनेक जोम उस नूतन नगरमें जा कर रहने लगे।

विचरराजके पुत्र महायया सिध थे। उन्होंने ६० वर्ष राजत्व किया। फिर उनके पुत्र उत्पलाच राजा हुये। उत्पलाचके पीछे उनके पुत्र हिरण्वाच सिंहासन पर बैठे। उन्होंने अपने नाम पर "हिरण्यपुर" नगर स्थापित किया था। फिर यथाक्रम हिरण्यकुच और उनके पुत्र बहुकुचके काशीमेंका प्राधिपत्य पाया। बहुकुचके पुत्र मिहिरकुच रहे वह पतिव्रत निर्द्वेष और प्रजाप्रीहक थे। उन्होंने अपने नाम पर जोना नामक स्थान पर "मिहिरपुर" नगर पत्तन किया। सिधा इसके मिहिरकुचने ब्राह्मणों को सङ्घक प्राप्त ब्रह्मोत्तर दे सोनकोरीमें मिहिरखर नामक मन्दिर बनाया और चन्द्रकुष्ठा नदीको मतिको भी बुसाया था। वह पसम्य दारु और माह (तिज्जतीय) जोर्मों पर बजा ही पशुपद रखते थे। मिहिरकुचके पीछे उनके पुत्र बजने सिंहासन नाम किया। उनके द्वारा सचकोश नगर स्थापित हुआ। उन्होंने वहीं मन्दिर भी प्रतिष्ठा किया था। बजके पीछे क्षमाश्रयने पितृभक्त, सधुभक्त, नर और पच राजा हुये। पचने विमुचाम और पचवाक नामक विहार (?) बनवाया था। पचके पीछे उनके पुत्र गोशादिकको सिंहासन सिना। उन्होंने सखीन, धामि, काहाविधाम, खन्दपुर ममाह और पाङ्गि पाम ब्राह्मणोंको दिया था। फिर गोशादिकने पाय-

देयके ब्राह्मण हुआ उनको गोशादिक गोशपाम दान किया। उन्होंने ज्येष्ठखर सिङ्गको प्रतिष्ठा भी की थी। ७ उनके सुगासनमें काशीमें मानी सम्बन्धुगका प्राधिपत्य हुआ।

गोशादिकके पीछे उनके पुत्र गोक्षर्पने राज्य पाया। उन्होंने गोक्षर्खर मन्दिर प्रतिष्ठा किया था। गोक्षर्पके पीछे उनके पुत्र नन्द्यादिक (चपर नाम सिङ्गिण) को विजयराज्य प्राप्त हुआ। उन्होंने कई मन्दिरों मूर्ति-खर नामक शिवलिङ्ग और पचविधो देवीमूर्तियोंको स्थापन किया। उनके पुत्र चपने कपेग नामक शिव मन्दिर और साङ्घकको प्रतिष्ठा को की। नन्द्यादिकके पीछे उनके पुत्र बुधिरि राजा हुये। उस समय संशियोंने बिहारी को बुधिरिखो पगविहा कुर्मों खेद कर रखा था। बुधिरिके खेद होने पर मन्थिवोंने प्रतापादिक नामक यक्षारि शिखमादिकके प्रातिको परिमित किया। उनके मरने पर कभीच और कबीकके पीछे तुष्नीने विजसिंहासन पाया। तुष्नीन और उनको शिवनमा मङ्गिकी द्वारा पनेक सत्कार्य हुये। उसमें तुष्नेखर नामक शिवमन्दिर और कतिन नगर स्थापन किया था। रागो वाकपुष्टामे कतीसुव और रासुव नामक दो पचहार दानमें दिजे और एक बड़ा भारी पचसम कुलवाया। उस समय काशीमें मयानक दुर्मिच पङ्क गया। दुर्मिचपीडित मनुष्य पच सर्ममें पान्च और पाहार पाते थे। पचसर्ममें जो रागो वाकपुष्टा पतिके साह मर गयीं। कयो सती मन्दि रमें खङ्गके समय तक साधारणको पचदान सिक्ता रहा। तुष्नीनके राज्यकाल चन्द्र नामक नाटककार विद्यमान थे।

इसके पीछे विजय नामक पचबर्षोप एक राजा हुये। उन्होंने विजयखर नामक शिवमन्दिरको चारो ओर नगर स्थापन किया था।

विजयके पीछे उनके पुत्र जयेश्वर नरपति बने। उन के मन्थिमति नामक पच महायज्ञक मन्थो थे। दिग्ग

* गोशादिक गोशपाम दान 'सचक' है। तत्पश्चात् पच पादकाल और बुधिरि नामक काल है। वह दोनों काल चन्द्रवाक 'चपर' और 'खेद' कर सम्बन्धित हैं।

श्रीर विद्याबुद्धि दर्शनसे भीत हो काश्मीरराजने उन्हे कैद किया। मन्त्री कैद किये जाते भी दुःखी न हुये वह सर्वदा शिवके प्रेममें आनन्दित रहते थे। १० वर इसी प्रकार वीत गये। अणुत्रक अवस्थामें जयेन्द्रका मृत्यु हुआ।

कुछदिन अराजकता रहने पीछे सन्धिमतने प्रायं राज नामग्रहण पूर्वक काश्मीरवासियोंके यत्नसे सिंहासन पाया था। उन्होंने अपनेक सत्कार्य किये प्रवाद है कि वह प्रत्यह सहस्र शिवलिङ्ग प्रतिष्ठा करते थे। ऐतिहासिक कालके समय तक उक्तसकल पाषाणमय शिवलिङ्ग विद्यमान रहे। (राजतरङ्गिणी १२१२) राजा सन्धिमतने शिवलिङ्गकी पूजाके व्ययनिर्वाहार्थ अपनेक पास दान किये थे। उन्होंने अपने नामपर सन्धीश्वर, गुरुके नामपर ईशान्वर और खेडा एवं भीमा^१ नामसे दूसरे भी कई सुवह्व देवालियोंकी प्रतिष्ठा की। उनके समय समस्त काश्मीर राज्य देवमन्दिर और प्रासादमण्डित हो गया। उन्होंने कुछदिन राज्यकर दृष्टदेवकी सेवामें समय अतिवाहित करनेके लिये राजसिंहासन छोड़ दिया।

इधर राजा युधिष्ठिरके पौत्रने गान्धारराज गोपादित्यका आश्रय लिया था। उनके मेघवाहन नामक एक पुत्र हुआ। उसने प्राग्ज्योतिषकी राजकन्याको स्वयम्बरमें पाया था। कामरूपकी राजकुमारीको लेकर लौटनेपर काश्मीरके मन्त्रियोंने उन्हे आह्वान किया। मन्त्रियोंके यत्नसे युधिष्ठिरका वंश फिर काश्मीरके राजासन पर अभिषिक्त हुआ। मेघवाहनने अभिषेक-दिवससे प्राणिविंशतारो कनेको आदेश निकाला था। उन्होंने अपने नामपर मेघमठ, युष्टग्राम और मेघवाहन नामक अग्रहार स्थापन किया। उनकी रानियोंने अपने अपने नामपर भिक्षुकींके रहनेको 'विहार' बनाये थे। उक्त विहारोंके नाम रहे—अमृत-

भवन, खादना, मम्मा और (यूकटयो-प्रतिष्ठित) मडवन विहार। रानी अमृतप्रभाके पिताके गुरुने मृगपा नी नामक नगरसे गमन कर लोमूनपा^२ नामक एक स्वतन्त्र स्तूप बनाया था। मेघवाहनके मानेपर उनके पुत्र अष्टमेन (अपर नाम प्रवसेन १म) राजा हुये। पितामताके बहुत कुछ बौद्धमतानुयायी होने भी उन्होंने अपने नामपर प्रवरेश्वर नामक देवमन्दिर प्रतिष्ठाकर देवसेवाके लिये विगतं राज्यदान किया था।

अष्टमेनके मरनेपर उनके पुत्र हिरण्यने, कनिष्ठ सहोदर तोरमाणके साहाय्यसे राज्य चलाया। पहले काश्मीरमें जो सुद्रा प्रचलित रहे, तोरमाण उसके बदले (किमीका अनिष्ट न कर) स्वनामाङ्कित स्वर्ण-मुद्रा (असुरी) प्रचार की। उक्त कार्यसे क्रुद्ध हो हिरण्यने उन्हे सन्तौक कारारुद्ध किया था। आरागारमें तोरमाणकी पत्नी गर्भवती हुयी और दगमास पूर्ण होने पर किमी उपायसे भाग गयी। उन्होंने एक कुम्भकारके गृहमें आश्रय लिया और वहां एक पुत्रका पसव किया। शेषको वह पुत्र बढ़ा हुआ, उसके मातुल (इच्छालुवंशीय) जयेन्द्र किमी प्रकार मन्थान या भगिनी और भागिनेयकी स्वराज्यमें ले गये। हिरण्यकुल ३२ वर्ष २ मास राजत्व कर निःसन्तान अवस्था पर कालयासमें पतित हुये।

उस समय उल्लयिनीमें हर्ष विक्रमादित्य राजत्व करते थे। राजतरङ्गिणीके मतसे उन्हे 'ने शको' और 'स्लेच्छी'को हराया रहा। उनकी सभामें कविवर माहगुप्त रहते थे। हर्षविक्रमने प्रथमतः कवि माहगुप्तका कोई सम्मान नहीं किया। माहगुप्त शयन स्वपनजागरणमें अनुचरकी भांति राजाके अनुगामी रहे। उनके रात्रिको निद्रित होनेपर रक्षिवर्गकी भांति कवि माहगुप्त भी शयनागारके द्वारपर जगा करते थे। यथाकाल राजाने समझा कि वेसे अमामान्य प्रतिभागानी पण्डितकी उपेक्षा करना अच्छा न था। उसी समय

^१सखते सुलेमान पर्वतपर सन्धीश्वर मन्दिरका समावेश विद्यमान है।

सन्धिमतके नामानुसार उक्त पर्वतका नाम 'सन्धिमान्' था। सुसन्मानोंके चमके बंदी 'सुलेमान' नाम रखे जाये।

^२वर्तमान इमल साबाके उत्तर-पूर्व १ कोस दूर भवतगामके पास सोमदीशका गुफामन्दिर दृष्ट होता है।

* सुदृष्ट राजतरङ्गिणीमें 'लोसागा' पाठ है। यह भवतगत समझकर हटा दिया गया है। (राजतरङ्गिणी १।१०)

नी शगरका वर्तमान नाम 'मि' है। वह खादना या मध्य निवृत्तमें अवस्थित है। मृगपा तिवृतीय शब्द है।

उन्हे खरब थाया कि काश्मीर राज्य बराबर रहा।
 उन्होंने मातृगुप्तको बुलाकर कहा था—“यह एक
 सेहर थाय काश्मीरके शासनकर्ताके निकट चले
 जायें। पबिमध्य रने जोनकर उमो न पठियेगा।”
 मातृगुप्त यथासमय काश्मीर पहुँचे। मन्त्रिमन्त्रोंने
 हर्षविक्रमादित्यका पत्र पा मातृगुप्तको काश्मीर राज्य
 पर अभिविज्ञ किया था। उस समय उन्होंने विक्रमा
 दित्यको गुप्तदाहिताको समझा और जानाविद्य उय
 दीकन तथा बनिगटि उज्जयिनीको भेज दिया।

राजा मातृगुप्तने करारकेमें पशुबन रोका था।
 उनको समझमें ‘इबयौबयव’ नामक काव्यप्रदीपा कवि
 बर मातृदिएष्टका पत्रखान रहा। राजा मातृगुप्तने
 “मातृगुप्तकासी” नामक विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठाकर देव
 देवाके निये विस्तर पर्व खव किया था। उनका राजत्व
 ४ वर्ष १ मास १ दिन रहा।

इस लोरमाके पुत्र प्रवरसेन (२५) ने बुना कि
 इनके पिछ पितामहके सिंहासनकी बिजो पूनरे ख्यजि
 ने पठिहार किया था। कुमार इस बातको सच न
 सके और काश्मीरको बल दिने। मंत्रीउनके साहाय्यार्थ
 उपासित हुये थे। प्रवरसेन काश्मीरको परब्रवा
 देव कहने लगे—“निरपराधी मातृगुप्तका क्या दोष है ?
 वर्तमान व्यवस्था करनेवाले विक्रमादित्यको ही हम
 इनका प्रतिफल देते हैं।” उससे पीछे केवलसंचद कर
 प्रवरसेनने विपत्त कीता, था। फिर उन्होंने हर्ष
 विक्रमके विरुद्ध उज्जयिनीके अभिसूच समन किया।
 पबिमध्य समाचार मिला कि हर्षविक्रमादित्यका
 मृत्यु हुआ था। उससे बड़ी धाया भायो मयी। कुमार
 प्रवरसेनने जानाहार छोड़ दिया। दिवाराकि शोमने
 योती थी।

कह मातृगुप्तको कवि कालिदास और हर्षविक्रम
 को संवात्स्यप्रतिष्ठाता शकारि विक्रमादित्य मान पनेक
 कोन महात्ममें पद गये हैं। मातृगुप्तके सम्बन्धपर
 कितनी ही कथा राजतरङ्गिणीमें मिलती है। उनको
 कविता, धार्मिकता और महापुत्रवताको बहूतने मुक्त
 रूपसे सराहा भी है। किन्तु उन्होंने मातृगुप्तको
 कपी कालिदासको मति नहीं किया। यदि मातृगुप्त

कालिदास होते तो प्रमंसा करने भी सक्षम उन्हें एक
 बार कालिदास न निष्क देते ? यथितव हैकी।

राजतरङ्गिणीमें हर्षविक्रमादित्यके प्रबन्धेय जय
 करनेको बात लिखी है। किन्तु क्या निश्चयता है कि
 कल शकदेवका जय संवात्स्यप्रतिष्ठाताके ही समय
 हुआ था ?

कुमार प्रवरसेन काश्मीर कीटकर राज्य करने
 लगे। उन्होंने काश्मीरके चतुःपार्श्वेय राज्य कीत
 लिये थे।

हर्षविक्रमादित्यके पुत्र उज्जयिनीराज प्रताप
 शील पयिकादित्यके प्रवरसेनके महात्म्य ७ बार जारते
 भी काश्मीरको धनोता न मानो। शेषको पदम
 वार दुर्धम जीवनसङ्घट देव खर्च ययोमृत हो गये।
 कञ्चुके कवनातुसार प्रतापशील शायद मठरको मति
 नाच और बोस सकसे थे। फिर प्रवरसेनने शायद
 लकीको देव बनवा जीवन बचा और उन्हें काशीन
 बना दिया। इसी प्रकार समस्त प्रतापान्वित राज्य
 कीत द्वितीय प्रवरसेन पितामहपुरमें रहने लगे।
 उन्होंने वितस्तातीर अपने नामपर मनोहर प्रवरपुर
 नामक नगर स्थापन और “जयकासी” नामके शिव
 विग्रह तथा देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया था। प्रवरसेन
 पुरके निकट विनासक मोमकासीका मन्दिर रहा।
 उन्होंने वितस्तापर सर्वप्रथम मोक्षित प्रलुन कराया था।
 इनके पुत्र बिजोने काश्मीरमें लीसेतु नहीं बनाया।
 कल मोक्षितके हरेय उन्होंने प्रसिद्ध शैतु काव्य वा ‘दया
 प्रबन्धप्रबन्ध’ प्रबन्धन किया था। उनके मातृगुप्त केन्द्र
 में ‘अधिभूविहार’ नामके शीवविहार बनाया। उनके
 मन्यो और सिंहाके शासनकर्ता मारकने ‘मीरक
 भवन’ नामक एक सङ्ग्रह मासाद निर्माच कराया था।
 महात्मान प्रवरसेनके लकाठमें स्वभावतः शुकविज्ञ
 पद्धित रहा। उनको मन्त्रियोका नाम रखपमा था।

प्रवरसेनके पीछे उनके पुत्र बुधितर (२५) राजा
 हुये। उन्होंने २१ वर्ष ३ मास राजत्व किया। उनके
 मन्यो जयेन्द्रपुत्र बभ्रेन्द्रने भवच्छेद नामक वेत्तादि
 पमाकी० शोधपान स्थापन किया था। कुमारसेन

* प्रवरसेनपुर—वर्तमान श्रीनगर पारवली है।

युधिष्ठिरके प्रधान मन्त्री रहे। उनकी महिषीका नाम पद्मावती था।

युधिष्ठिर (२५)-के मरने पर उनके पुत्र लक्ष्मण या नरेन्द्रादित्य सिंहासन पर बैठे। उनकी महिषीका नाम विमलप्रभा था। वज्रके दो पुत्र वज्र और कनक राजमन्त्री रहे। नरेन्द्रादित्यने नरेन्द्रधामी नामक शिवमन्दिर प्रतिष्ठा किया। उनका राज्यकाल १३ वत्सर था। उनने पुस्तकादि रचा करनेके लिये अपने नामपर एक भवन बना दिया।

नरेन्द्रादित्यके मरनेपर उनके कनिष्ठ भ्राता रणादित्य वा तुल्लीनको राज्य मिला। उनके कपाल पर शङ्खचिह्न रहा। रणादित्यकी पटरानीका नाम रणरम्भा था। कक्षणने लिखा है—देवी अमरवासिनी मनुष्य-देह धारण कर महारानी रणरम्भा बनी थीं। महाराजने दो मन्दिरोंमें हरि और हर मूर्तिको स्थापन किया। एतद्भिन्न उनने “रणस्वामी” और प्रद्युम्न पर्वत एवं सिंहरोक्सिका नामक स्थान पर पाशुपतमठ, रणपुरस्वामी नामक सूर्यमूर्ति तथा सेनमुखी देवीमूर्ति और उनकी पत्नी रणरम्भाने रणरम्भदेव नामक शिवलिङ्गकी प्रतिष्ठा की।^१ उनकी दूसरी महिषी अमृतप्रभाने रणेशके पार्श्वमें अमृतेश्वर नामक शिवलिङ्ग और मेघवाहन-पत्नीके नामानुसार निर्मित विहारमें बुद्धमूर्तिको स्थापन किया। महिषी रणरम्भाने रणादित्यकी छाट-केश्वर शिवका मन्त्र सिखाया था।

रणादित्यके समय ब्रह्म नामक किसी सिद्धपुरुषने रणरम्भादेवीके नियोगानुसार “ब्रह्मसत्तम” नामक देवताको स्थापन किया।

रणादित्यके पीछे उनके पुत्र विक्रमादित्यको राज्य मिला। उन्होंने विक्रमेश्वर नामक शिवकी स्थापन किया था। उनके दो मन्त्री रहे—ब्रह्मा और गलून। ब्रह्माने ब्रह्ममठ स्थापन और गुलूनकी पत्नी रत्नावलीने

एक विहार निर्माण किया। विक्रमादित्यका राजत्व-काल ४२ वर्ष रहा।

विक्रमादित्यके पीछे उनके कनिष्ठ भ्राता वालादित्य राजा बने। उन्होंने पूर्वसागर पर्यन्त राज्य फैलाया और वहाँ अयम्भुज जमाया था। फिर उन्होंने वज्राला (वज्राला ?) प्रदेश जीत वहाँ काश्मीरियोंके रहनेको कालम्बर नगर स्थापन किया। वालादित्यने मडर राज्यमें बदर नामक ग्राम बसाया ब्राह्मणोंको रहनेके लिये दिया था। उनकी प्रियतमा महिषीने सर्व-अमङ्गलहर विश्वेश्वर नामक शिवकी स्थापन किया। वालादित्यके खड्ग, शत्रुघ्न और मानव नामक तीन मन्त्री रहे। उन्होंने भी अनेक प्रासाद, मन्दिर और सेतु निर्माण कराये थे।

वालादित्यके अनङ्गलेखा नाम्नी एक कनया थी। वालादित्यने उसे अश्वघोषवंशीय दुर्लभवर्धन नामक एक सुपुरुष कायस्थ युवाके हाथ सम्प्रदान किया।^२

दुर्लभवर्धन स्त्रीय बुद्धिमत्ता और नस्त्रतासे अल्पदिन मध्य ही राज्यमें सब लोगोंके प्रिय बन गये। बुद्धिका पाशुर्य देख वालादित्यने उनका नाम ‘प्रज्ञादित्य’ रखा था। अनङ्गलेखा किन्तु मातापिताके आदरसे गर्वित ही स्वामीकी पनादर करती।

१७ वर्ष ४ मास राजत्व कर वालादित्यके स्वर्ग-लाभ करने पर तृतीय गौतमका वंश भी श्लोप हो गया। मन्त्री खड्गने उस समय सुविहान् देव कायस्थ दुर्लभवर्धनको राज्याभिषिक्त किया।

अनङ्गलेखाने अनङ्गभवन नामक एक विहार बनाया था। किसी ज्योतिषने महर्षण नामक राजकुमारको अत्यायु बताया। उसीसे महाराज दुर्लभवर्धनने विशेष-कोट पर्वत पर पुत्रके कल्याण उद्दग चन्द्रग्राम नामक गाँव ब्राह्मणोंको दान कर पुत्र द्वारा महर्षणस्वामी नामक शिवकी स्थापन कराया था। फिर उन्होंने यौन-गरमें दुर्लभस्वामो नामक विष्णुमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। १६ वत्सर राजत्वके पीछे दुर्लभवर्धनको स्वर्ग लाभ हुआ।

* वर्धमन पाण्ड्य ग्राममें नरेन्द्रस्वामीका मन्दिर मन्दिर देख पड़ता है।

† वर्धमान इक्ष्वाकुनामके पूर्व २ कोश दूर सातम नामक स्थानके शहर प्राकमें सातस्य नामक सूर्य-मन्दिर है। उसी रणादित्यने ही प्रतिष्ठा किया था उक्त सूर्यमन्दिरके देना पाण्ड्य रणस्वामी और अमृतेश्वर शिवलिङ्ग आज भी विद्यमान है।

* कश्मिरमें दुर्लभवर्धन और उनके उत्तर पुरुषमें कर्कोटनागवंशीय लिखा है।

दुर्धमवर्धनके राजत्वकाच चीन परिहासक बुधन-
बुयाङ्ग खाम्बोर मये धे । उनको बर्धनाथे धमम
पहता कि उस समय खाम्बोरराज्य १०० बोर (७०००
लि)-धे भी अधिक विस्तृत था १० बर जयन्द्रविहारमें
राजमातुव कर्त्तव्य पाइत हुये धे ।^१

दुर्धमवर्धनके पोछे उनके पुत्र दुर्धमकने खाम्बोरका
राजत्व पाया । कबोने मातामहके नामातुसार प्रतापा
दिश्य नाम रचय किया था ।

प्रतापादिश्यके प्रतापपुर स्थापन करनि पर चमेक
कने बचिक् जाबर बर्हा रहने कने । उनमें राचित-
बाघी मोच नामक बचिकने मोचमठस्थापन कर
रोचितक प्रदीयवाघी ब्राह्मणको नामाच दान किया
था । इस दानके अनुसार ही महाराज प्रतापादिश्यने
बचिकको निमन्त्रण दे अपन कर बुनाया । पामोद
पाइवाइधे बचिक एक रात राजमठमें रहे । प्रत-
पान महाराजके पूजा—'को, रात सुखी तो कटो १'
बचिकने उत्तर दिया—'को पालोक जनता था, कने
मत्ता पकड़ लिया ।' फिर प्रतापादिश्य भी निमन्त्रित
हुये । कबोने बचिकके कर लाकर देखा कि एक मचि-
के पालोकधे बचिक का मठन पालोकित था । महा
राज बर देख विस्मित हो मये और बचिकके पापक
धे २१ दिन बर्हा रहे ।

इकर बचिकको एक मचको नरेन्द्रप्रभाको देख
राज मोहित हुये । नरेन्द्रप्रभा भी राजा पर मुग्ध
हुयो धे । प्रतापादिश्य बर मये, किन्तु नर्तकीको भूक
न कने । परम्परामें बचिकने समयरा इत्यान्त सुन
बचिकने नरेन्द्रप्रभाको राजाके निबट भेजा और कबोने
भी कने रच लिया । उसके बरधे चन्द्रापीड़, तारा
पीड़ और अविमुखापीड़ नामक तीन महानुभव मद्
मुचमाघी मुनेने कथ पाच किया था । बर विष्ट
मातामह कनेके रीतिके अनुसार यथासम ब्रह्मादिश्य
ब्रह्मादिश्य और कलितादिश्य नामधे विद्यमान हुये । १०
बर्धे राजत्व कर प्रतापादिश्यने म्नाको समन किया ।

प्रतापादिश्यके मरने पर कनेके पुत्र ब्रह्मादिश्य (ब्रह्म-
पीड़) राजा हुये । कबोने त्रिमुनखामो नामधे
नारायणमूर्तिको स्थापन किया । उनको पयो प्रकाशा
ने प्रकाशिका विहार, राजगुह मिशिरदतने कबोर
खामो नामक विष्ट और मयराज्य कलितकने 'कलि-
तखामो' नामक देवताको प्रतिष्ठा की । ब्रह्मादिश्य
तारापीड़कनेके निबुद्ध किने ब्राह्मणके अमिचार
कायधार। कल्पसुखमें पतित हुये । २१ महानुभव
सुपतिने ८ वष ८ मास राजत्व किया ।

उनके पोछे कोपनखामाच तारापीड़ (ब्रह्मादिश्य)
बिंहासन पर बैठे । बर मय दुमन कर प्रतने यथित
हुये कि पलको देवताकोके साच भी बर्हा करने
कने । देवमहिमा प्रचार करनेगले ब्राह्मणको राजा
याहि देते धे । बर ४ वषर २४ दिन राजत्व कर
किने ब्राह्मणको अमिचारदिया धारा पचकको प्राप्त
हुये ।

तारापीड़के पोछे कनेका कनिष्ठ बर्धोर अविमु
खापीड़ (कलितादिश्य) राजा हुये । बर पतिपराकांत
नरपति रहे । उनका राजत्वकाच कबल देय बीतनेमें
ही बीत गया ।

पहले १८ मचो राज्यके प्रधान प्रधान कार्य
कचाले धे । कलितादिश्यने उक्त १८ पदोको बटा
क बर १ पद रच कोके—प्रधान यातिरचक, प्रधान
सेनाध्यक्ष, प्रधान पञ्चाध्यक्ष, प्रधान कोषाध्यक्ष और
प्रधान विचारपति । कुने कलितादिश्यने कबोके
राजाको इराधा था । (कान्तकृष्ण राज्य उर समय
यमुनातीरधे बसिका नदी तब विस्तृत था ।) उर
समय यमोवर्माको समाने कबिबर बाधपति और
मभमूर्ति विद्यमान धे । बर कलितादिश्यके साक
खाम्बोर चले मये । उसके पोछे कलितादिश्यने कबिङ्ग
पीड़, दक्षिणामिसुख कर्त्तक प्रकृति खान कय किये ।
इहा नाको एक कर्त्तको सुन्दरो उर समय दादिशाकने
काम्बाध्य कचालो की । बर भी यमोभूत हो मये ।
भारतके समस्त प्रधान खान वीत कलितादिश्यने
कम्बोक प्रथमवहना रमबीमहाङ्गक मूखार, मोट और
दरद प्रकृति देय कय किये । फिर खाम्बोरमें पञ्च

^१ Beal's Records of Western Conquest, Vol. I 148.

^२ Le Vie de Honan Thesag per Stanislas Jalleo, p.

काश्मीर भीर लोहर प्रदेश सैन्यको पुरस्कारमें दिया। उनने जितने देश जीते थे, उनके प्रत्येक राज्यमें जय स्तम्भ स्थापित किया। उनने सुनिश्चितपुर, दर्पितपुर, परिहासपुर और फलपुर नगर निर्माण करा नाना प्रकार वासभवन और प्रमोदभवन सजाये थे। दिग्विजयकाल राजप्रतिनिधिने ललितादित्यके नामानुसुसार 'ललितादित्यपुर'* नगर स्थापन कराया। किन्तु उससे ललितादित्य उन पर अपसन्न हुवे। ललितादित्यने अनेक देवमन्दिर, देवमूर्ति और बौद्धस्तूप बनाये थे। उनने ललितापुरमें सूर्यमूर्ति, दुष्कपुरमें मुहाम्नामी, परिहासपुरमें परिहासकेशव नाम्नी (८४ ताले) सोनेकी विष्णुमूर्ति, पापाणमय स्वर्णनख-शोभित महावाराहमूर्ति, गोवर्धनधर और बुद्धमूर्ति की प्रतिष्ठा किया। उनकी महिषी कमलावतीने कमलाकेशव, प्रधान मन्त्री मित्रशर्माने मित्रेश्वर नामक शिवलिङ्ग और सामन्तराज कय्यने श्योकय्यस्वामी नाम्नी विष्णुमूर्ति तथा 'कय्यविहार' नामक एक विहारकी स्थापना की। उसी विहारमें रह सर्वज्ञमित्र नामक किसी बौद्धने योगबलसे बुद्धपद पाया था। उनके चहुन नामक किसी दृमरे मन्त्रोने चहुनविहार तथा रूप और सोनेकी बौद्ध प्रतिमाकी प्रतिष्ठा किया। चक्रमर्दिका नाम्नी ललितादित्यकी एक प्रियतमाने चक्रपुर नामक नगर बसाया था।

ललितादित्य परिहासपुरमें अनाथाश्रम स्थापन कर नित्य लाख लोगोंके भोजनोपयोगी पात्र और खाद्यका संस्थान कर देते थे। फिर उनने मरुभूमिमें एक नगर बना आन्त पिपासितोंके जलपानकी सुविधा लगायी।

ललितादित्यने परिहासकेशव मन्दिरके पार्श्व पर स्वतन्त्र रौप्यमन्दिरमें रामस्वामी नामक विष्णुमूर्ति और महिषी चक्रमर्दिकाने चक्रेश्वरके पार्श्व पर लक्ष्मणस्वामी नामक दूसरी विष्णुमूर्ति को स्थापित किया। कछ्छणने लिखा है—किसी समय गौडराज ललितादित्यके निकट उद्यम्यन हुये थे।

ललितादित्यने उनसे कहा कि श्रीपरिहासकेशवके अनुग्रहसे उनने उनका प्राणमात्र बचा दिया था। उसके पोछे विगामी नामक स्थानपर किसी नरहन्ता द्वारा उनने उनको मरवा डाला। उस समय गौडराज अति पराक्रान्त था। गौडके कितने ही राज-भक्त वीर काश्मीरराजके उक्त दुष्कार्यका प्रतिशोध लेनेकी यागमें मरसूनी दर्शनके कालसे काश्मीर पहुँच किसी दिन श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर लूटनेकी अपसर हुवे। ललितादित्य उस समय वहाँ न रहे। गौड-वीरोंके मन्दिर आक्रमण करनेका सन्धान पा ब्राह्मणोंने मोम कवाट बन्द कर दिये। विदेशियोंने पार्श्ववर्ती रामस्वामीके रौप्यमय मन्दिरको ही श्रीपरिहासकेशवका मन्दिर समझ ध्वंस और देवमूर्ति को विचूर्ण किया था। इसी समय काश्मीरी सैन्य पहुँच गया और उस मुट्टिमय गौडीय सेनासे युद्ध होने लगा। सभी राजभक्त गौडवासियोंने एक एक कर प्राणदान किया। अन्य राजभक्ति। गौडीयोंका किसी समय उतना साहस, उतना प्रध्यवसाय था। रामस्वामीके मन्दिरका भग्नावशेष मूमण्डलमें गौडवासियोंकी विपुल यशोराशिकी घोषणा करता है।*

ललितादित्यने शेष प्रथस्थामें फिर उत्तरापथकी युद्धयात्रा की थी। उसी युद्धयात्रामें उनका मृत्यु हुवा।

ललितादित्यके दो पुत्र थे—कुवलयपीड (कुवलयदित्य) और वज्रापीड (वज्रादित्य), महिषी कमलादेशीके गभजात ज्येष्ठ कुवलयदित्यकी राज्य मिला। वह अतिशय दानशील थे। कुछदिन भ्रातृ विद्रोहमें उनके राज्यमें महा विशृङ्खला रही। शेषकी कुवलयपीडका जय हुवा और वज्रापीडकी ज्येष्ठका अधीनत्व स्वीकार करना पडा। कुछ दिन पीछे कोई मत्री विद्रोही ही उनके प्राण लेने पर उद्यत हुवे। महाराज कुवलयदित्यने उक्त विषयका संवाद पा मन्त्रीकी दलबन्धके साथ मारनेके लिये संकल्प किया था। किन्तु शेषकी वच यह सोच राज्य परित्याग कर प्रप्रव्या अवलम्बनपूर्वक प्लक्षपञ्चरण नामक स्थानमें रहने

* ललितादित्यपुरका वर्तमान नाम ललापुर है। आजकल यह सामान्य नाममात्र है। ललापुर मुदकोई डेढ़ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है।

* 'अथापि दृश्यते श्व' रामस्वामिपुराणप्रदम्।

ब्रह्मार्थ गौडराजकी सनाथ' यमसा पुन ॥' (११५५५५५, ११५५)

कनी कि मनुष्यका शीघ्र चक्षुषिणी पीर पाउडा
यादा ७२ दीघर की है । उनसे केवल २ वर्ष १३
दिन राजत्व दिया । उनके बानप्रस्थ परब्रह्मण्डल
पर दिग्दर्शी मित्रवर्माने मञ्जोड बनमें कुछ डाय
कोड दिया था ।

हृष्यादित्यके पीछे ब्यादित्य मित्राङ्गन पर बैठे
उन्को मङ्गिरी ब्रह्मर्षिदेवर्षि नामसे कथ्य दिया था ।
कोड उम्हें ब्रह्मिदक वा नभितादित्य भा कहते थे ।
बह निहुर देवस्वापहारी (परिशेषपुरादिकी चनेक
पैवीलार कथ्यति उद्गमि होतकी डी), पतिवध पन्था
चारी, श्रीविनाशी पीर क्षेत्रज्ञावागी थे । पतिमात्र
श्रीसशोमर्षि पल वध्यासोमथि उनका मृत्यु हुआ ।
उनसे ० वर्ष राजत्व किया था ।

ब्रह्मादित्यके पीछे उनके पुत्र हृष्यापीड राजा
हुये । उनको माताका नाम मञ्जरिका था । उनमें
३ वर्ष १ मास राजत्व किया ।

हृष्यापीडके पीछे उनको विमाता मञ्ज्याधि नाम
जात बंधामपीडने राज्य पाया । उनका राजत्वकाल
० वर्ष रहा ।

धामपीडके मरने पर क्योत वा द्वितीय नभिता-
दित्य (ब्रह्मादित्य)-के कनिष्ठ पुत्र कयापीड मित्राङ्गन
पर बैठे । उनसे प्रयागमें वा ८८८८८ पाय ब्राह्मणकी
दान किये थे । बह दानके पीछे कयापीडने वयाममें
पानाममें एक कथा बनाया पीर तयपर निष्कल्पित
विषय श्रीदाया-ना हमारी मांति ब्राह्मणों को नक पाय
इय काल पर दे बर्षगा बह हमारे इव कथ्यको मानी
तोड कहीना । ७२७७ ईकी ।

द्वि कयापीड गीउके पत्न्यमंत पोण्ड बर्षममें तय
भ्यित हुये । वहां उनमें गीउरात्र कथ्यकी कथा
बन्धाददेवी पीर देवमतकी समजाका पाचिपदक
दिया । प्रयागमनकाल राक्षस बह बानभुज होत
वहांवा पतिप्रसोहर मित्राङ्गन गठा में मये ।
काम्बोजम उपभ्यत की कयापीडने सुना कि उनके
पुत्र प्रानक कथ्यने राज्य च बकार किया था । उनसे
राज्यादर्षि निदे सुड बोधका की । पुण्डरीक नामक
वाममें दुड हुआ । वयमें ७७७ मारे मये । ७७७ ईकी ।

कयापीडने राज्यादार कर यान्ति को व्यापन दिया ।
मङ्गिरी बन्धाददेवीने पुण्डरीककी दुडमूर्तिमें बन्धा-
पुर नामक नगर बनाया था । प्रयागीडने अर्ध
मञ्जुपुर नामक नगर पीर वयमें धैर्यमूर्तिकी
व्यापन किया । कथ्यकाने भी कथ्यना नामक नगर बनाया ।
बह समय काम्बोजमें विद्याचर्चा बहुत थी । राजा
कयापीडने पतञ्जलिके महाभाष्य पीर अरविन काविका
कविका प्रचार किया । (उनमें कथ्य पीर नामक
पण्डितके पास व्याकरण पढ़ा था ।) कड्टमङ्ग, दामो
दरगुप्त मनोरथ, मङ्गदत्त बटक पीर कथ्यमान
नामक कवि उनको वाममें विद्यामान थे । कड्टमङ्ग
ममावपिठ रहे । उम्हें प्रतिदिन कथ्य अर्धमुद्रा
(चमर्षी) मिलती थीं । दामोदरगुप्त प्रजापमन्थो
पीर कवि एव ब्रह्माकार्य नामक उनके पन्थातम
मन्थो रहे ।

कयापीडने पीछे कथ्यपुर प्रभृति दुमरे भी कई
नगर कथ्यदेशी नाथी देशोत्रतिमा, राम कथ्यक था
दिके मूर्ति पीर पनक्यादी विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा
किया । कथ्य जाता है कि विष्णुके ध्वजमें ब्रह्मकेहित
हागवनीपुरी निर्माप करनेकी याटेम दिया था ।
कयापीडन देना को एक नगर निर्माप कराया । बह
कड्कके समय पन्थकर अथपुर्वके नामसे विख्यात था ।

बह व्यापन में कथ्यदत्त नामक कियो कर्मचारिने
एक बौद्धमठ पीर प्रवराशोहर प्रसोदके कामाता
थापने पाचियर नामक एक मिश्रिन्धु व्यापन किया ।
उत्तक एक कयापीड दिग्ब्रकाप विमानय पर
बहे थे । वहां उनमें विनयादित्य नाम कथ्यपुत्र क
पूर्व दिक्की विनयादित्यपुर नामक नगर व्यापन
किया । उनसे कथ्य व्यापनका पूर्वदिक् मीमवेनराज्य
पीर विनागराज्य नामा कोयनने भीत लिया ।

उत्तके पाठे कयापीडने श्रीराज्य ग्रीत कथ्यका मित्रा
बन पाचिहार किया । उनमें मुहादि कथ्यके कविचारके
"बनम क" नामके मेवकममिन्धावागी कीपागा
निकाया था । कयापीडने कर्मगर्भन पर एक नगर पतिना
पाचिन्धार कर राज्य कथ्यनगपुर्वके उत्तके मुख्य
वयमें न मपर एहानयतकीटि अरभुडीका प्रदान

कराया। जेव दशाधी वृद्ध कायस्थ मन्त्रियोंके परा-
मर्शसे युद्धमानसा छोड़ रमणो-विनाशमें मन ही गये
और ब्राह्मणवर्गमें नृत्यमुष्णमें पतित हुये। उनही
जननी चमूतप्रधानी पुत्रको महतिर्क निधे चमूतकेगण-
नामसे हरिभूतिकी प्रतिष्ठा किया।

जयापोडके पीछे उनके पुत्र मन्जितापोड महिर्षी
दुर्गाके प्रयत्नसे राजा हुये। यह वृद्ध कामान्त रहे।
उनने ब्राह्मणोंमें सुवर्णपार्श्व, जनपूर और लोचनोत्त
नामक तीन स्थान लीग निधे। उनका राजत्वकाय
हाटग वर्षमात्र था।

मन्जितापोडके पीछे उनके धैमात्रेय (गौडराज-
कुमारी कल्याणदेवीके गर्भजात) मंग्यामपोड (२५) ने
पृथिव्यापीड नाम प्रदण कर मात वर्ष राज्य दिया।

मंग्यामपोडके पीछे मन्जितापोडके शिशुपुत्र हृदयति
वा विष्णुजयापोड राजा हुये। उनने मन्जितापोडके
पौरस और जयादेवी नामसे रमणोके गर्भमें जन्म
लिया था। जयादेवी चतुर्वध्यामी कल्याणकी कन्या
रहीं। रूप देय मन्जितापोड उन्हें हरण कर ले गये थे।

राजा वासक होनेसे पद्म, उत्पलक चल्याप, मग्न्य पौ-
धर्म नामक मातुल राज्यका रक्षणविषय करने लगे।
वह भी मग्न्यप्रथमक थे। मर्येणो होने पद्म प्रधान
कर्मचारीका पद ग्रहण किया और सबने जयादेवीके
पाटेशानुसार काम निग। जयादेवीने जयेग्नर देय
ताकी प्रतिष्ठा किया था। वासक हृदयति वा विष्णु
जयापोड १२ वर्ष राज्य कर मातुलकी चक्रात्मने

चमिधार क्रिया पर नृत्यके मुष्णमें पतित हुये।

उसी समय राज्यमें विग्रहना पड़ गयी। जयादेवी-
के भ्रातृपक्षके प्रपना प्रताप चक्षुण रावनेके निधे
भागिनैयकी मार डाला। फिर किमोकी नाममात्रका
राजा बनानेके निधे यह घूमने लगे। किन्तु भाइयोंमें
इस बात पर मतभेद हो गया,—किमकी राजा बनाना
चाहिये। उसी समय जयापोडके दृष्टरे धैमात्रेय भ्राता
(रानी मेघावलीके गर्भजात) त्रिभुवनपोडके वंशीयो-
में सर्वाधिकार बंधीवैष्ट होनेमें उत्तराधिकार-पुत्रमें
राज्य पानेके अधिकारा थे। किन्तु पद्मभ्राताके एक
मत न होनेसे जयादेवीके साहाय्य उत्पलनें चक्र त्रिभु-

वनपोडके पुत्र चक्रितापीडकी राज्य शीव दिया।

चक्रितापोड राजा होनेपर भ्रातृपक्षका समाप्त
भाषमें मग्न्यप्रकरण न मके थे। उसने पद्म गहयद्द पद्-
गया। पद्मने चल्याप करने पर चार भाई भिदने लगे।
जो दया ही, चक्र पापी लोमोने देगमें अनेक मग्न्यार्थ
किये थे। उत्पलनें उत्पलपुर नामक नगर तथा चल्याप-
चामी नामक देवता, पद्मने पद्मपुरक नामक नगर पद्म
पद्मचामी देवता, पद्मश्री पद्मो गुणदेवीने विजयनगर
नामक स्थान तथा पद्मपुरमें एक एक देवता, धर्मने
धर्मचामी नामक देवता, कल्याणधर्मने कल्याणधामः
नामक विष्णुमूर्ति और मग्न्यने मग्न्यधामी नामक
देवताकी स्थापन किया। काशीपोड ८८ श्रीकल्याणकी
राजा हृदयतिना नृत्य हुवा। हृदयतिने पीछे उनके
मातुलनें १२ वर्ष चक्षुण प्रतापमें राज्य चलाया था।
उनके पीछे उत्पलनें मग्न्यका विषय दृष्ट हुवा। उस
भयानक युद्धमें मग्न्यराजिने विरम्यागा चक्रपवाह हक
गया था। कवि गहक- पद्मने "भुवन,भुदय" काव्यमें
चक्र गृहका विनिय विवरण निघा है। युद्धमें मग्न्यके
पुत्र यमोवर्माने जय प्राप्तकर चक्रितापोडकी राज्यभूमि
और मंग्यामपोडके पुत्र चक्रितापोडकी राज्यभूमि किया।

चक्रितापोड राजा हो हुये, किन्तु उत्पलनें मरने पर
उनके पुत्र सुषरमाने प्रतिगोध ले यमोवर्माको हराया
और चक्रितापोडकी राज्यभूमि कर चक्रितापोडके पुत्र
उत्पलपोडकी राज्यका अधिपति बनाया।

उत्पलपोडने राजत्वकाक मान्दिविदाहिक रखने
पछे धर्मचामी हो रजचामी नामक देवताको स्थापन
किया और विमलाग नामक स्थानके जमोन्दार
लीग और दार्पाभिहारके विहारपति राजाकी भाति
स्थापित बन गये।

उसी समयमें कायस्थ दुर्लभवर्धनका वंश लोच होने
लगा। सुषरवर्मा जिन समय सिंहासन पर बैठनेका
दायोजन करते थे, उसी समय उनके यन्त्र युष्कने
उद्धार डाला। शूर नामक प्रधान मन्त्रिने काशीपोड
११ लोकिद्यादकी उत्पलपोडकी राज्यभूमि कर

* पद्मपुरका वर्तमान नाम पावपुर है। यह राजधानी काशीके
१ कोस उत्तर पूर्व दिशा में है।

नामातुभार गोदावपुर नामक नगर, गोदावमत नामक मठ पीर भोपावकीयव देवताको स्थापन किया। फिर मन्त्रियो लम्बे एक प्रस्ताव दिया। किन्तु भूमिष्ठ होते ही यह सर नडा। सुगन्धाने एकाङ्गोको सहायता से दो वर्ष तक राज्य किया था। एकाङ्गवातोव मना पति पीर तन्वी ज्ञातीय मन्त्री रहे। सुगन्धाने मग कड पा कर किसी उपबुद्ध मन्त्रिके द्वारा राज्यमार ज्ञानने के लिये मन्त्रियोको पात्रनिर्वाचनाठं प्रादेश दिया था। शीघ्रमे पञ्चमिषर्माका बंध भोप जोमिभ सर्गानर्भ ज्ञात सुवर्माके पुत्र निर्मितवर्माको रामी सुगन्धाने मनोमोत किया। निर्मितवर्मा दिनको सोते पीर रात को जागते थे। तन्त्रियोने शमीसे उमका पत्र म किया। भोपावक प्रमाकरके दुग्धवहारसे को राजवर्माचारी विरह एवं भेडित रहे, जमने उस समय सुयोग देव रामी सुगन्धाको राज्यमे निष्काल बाहर किया। यह पुष्पपुरमे जा कर रहने लगीं। किन्तु एकाङ्ग पक्ष दिनके पीछे को जन्हे फिर राज्य देनेके लिये मुकामि भवे से। कारभोरीक ८८ लौकिक चम्बुको उक्त बटना हुआ। तन्त्रियोने सुगन्धाके प्रायमनको वार्ता सुन निर्मितवर्माके दशम वर्षीय पुत्र पार्थको राजा बनाने के अभिप्रायसे पञ्चमवर्ष रामी सुगन्धाके सेव्यवर्षके लड लियो पुरातन जनशुभ्य विचारमे ८० लौकिक चम्बुको रामीको मार काया। फिर पार्थ राजा हुई। पञ्चम यसेव्हाचारी पिता उनके रक्षक बने थे। तन्त्रियोके मध्य मी जमम प्रावमिच्छेद पड़ गया। पपरा पर पयोग राजा काबोन जोमि लयी। मीव नामक मन्त्रीके ज्ञानानेने ज्येष्ठ यद्दवर्षनके पयोग दड सुगन्धा दिवने बन्धुता जोड मीतर ही मीतर राज्यके लोपा गारको बूटा था। जनहीमे श्रीमैदवर्षन नामक विष्णुकी मूर्तिको स्थापन किया।

उसके पीछे ८१ लौकिक चम्बुको राज्यमे भोवक सुर्मिष पडा था। एक तो पराजक राज्य पीर दूसरे सुर्मिष। सुतरां राज्य सम्पूर्ण विष्णु पक्ष हो गया। तन्त्री राज्यके मध्य लवर्षे जयर रहे। यह निर्मितवर्मा पीर पार्थ जमयके मध्य पपनी सुविधाके पशुगार जमी दडको पीर जमी जमको सिंहासन पर बैठे।

जय राजक करने लगी। सुगन्धादिभ्य निर्मितवर्माको पन्त्रियोने रासकोका खेकते थे। यह समी पपनी पपनी पुवको राजा बनानेके लिये सुगन्धादिभ्यको प्रयुक्त बन रक्त देने पीर पपना पपना देव देवने लवो। मन्त्री मीदके पुत्रोने राज्यमे प्राचाव्य कामकी प्रायासे भगिनो सुगावतीके मात्र निर्मितवर्माका विवाह कर दिया। किन्तु पञ्चमती मो पन्तपुरमे पशु च उपजियो का पबानुभरच कर सुगन्धादिभ्यको पयोग बन गयीं। ८७ लौकिक चम्बुको निर्मितवर्माका पुत्र हुआ। एकाङ्गोने उस समय तक प्रकाय कर निर्मितवर्माको बन्धवदेवोमन्त्रीको पन्त्रीके गर्भजात चम्बुवर्माको राजा बना दिया। इयत्त राजाका रचपाथिदक करने लयी। ९० वर्ष उसी प्रकार बीते थे। ८८ लौकिक चम्बुमे मन्त्रियोने चम्बुवर्माको बडा सुगावतीके गर्भजात मूरवर्माको राज्य लीया। किन्तु उनके मातुल जनसे पशुहून न रहे। उनमे पञ्चाव्य तन्त्रियकि मित्र पीर पार्थसे बडु पयं जम्बोच से मामिनेयको राजच्युत कर पार्थको राजा बनाया। उस समय पार्थ याव्यवती नामको किसी वैश्याकी प्रवयिनो बीनेसे सर्वदा अपने निकट रखते थे। उनको याव्यवतीने याव्येवारी नामक देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। ९१व लौकिकचम्बुके चम्बुवर्माने इस समयको रीतिके पशुसार तन्त्रियोको जम्बोच (सुष रिगवत) से राज्य पाया था। किन्तु मित्रुंविता बच उनमे मीदवर्माके पुत्रीको पवित्र जमना दे डाको। ज्येष्ठे लम्बुने पपने ३ नाम पर नाता ज्ञान पविचार किये। उनके राजवर्षमे मीदवर्माके ज्येष्ठपुत्र यद्दवर्षन प्रधान प्राङ्ग विवाह पीर मन्धुवर्षन पञ्चम मन्त्री थे। ज्येष्ठे वर्ष तन्त्रियोको प्रतिशुभ लम्बोवका बपया हुआ न सकनी पर चम्बुवर्माने भयसे मङ्कर नामक ज्ञान से पलावन किया। उस समय यद्दवर्षनमे राजा होनको प्रायासे मन्धुवर्षनको पञ्चव्यादि करनेके लिये तन्त्रियोके निकट मीत्रा था। मन्धुमे जाकर ज्येष्ठ ज्ञानाको बात न कह पपने जो लिये प्रवच्य कर किया। इकर चम्बुवर्माने कोठक नामक ज्ञानवासी कामरजाताय सरदार संघामसे मिन लके पञ्चयता करनेके लिये प्रतिशुभ कराया था। संघामने

नामानुसार गोपालपुर नामक नगर, गोपालमठ नामक मठ और गोपालकीयय देवताकी स्थापन किया। फिर मन्दिरी नामके एक भक्तान हुआ। किन्तु भूमिद्व होवे जो वह मर गया। सुगन्धाने एबाङ्गोंकी सहायता से दो वर्ष तक राज्य किया था। पञ्जाबराज्योय सेना पति और तन्नी ज्ञानीय मन्त्री रहे। सुगन्धाने मग कट पा कर बिनी उपकुल ध्यतिके द्वारा राज्यमार ज्ञानके लिये मन्त्रियोंकी पात्रनिर्वाचनार्थ पादेय टिका था। शिपदे पञ्चतन्त्रवर्माका रथ जोप होमिसे मर्गमर्ग ज्ञान सुखवर्माके पुत्र निर्जितवर्माको रानी सुगन्धाने मनीमोत किया। निर्जितवर्मा दिनको सोरी और रात को खाती से। तन्त्रिकोंने रथीसे उतखा पच न लिया। गोपालका प्रमाकरके सुखवर्माके ली राजकर्मचारी विरह एवं पीडित रहे, इनने उस समय सुयोग देख रानी सुगन्धाने राज्यके निहाल बाहर किया। वह पुष्पपुरमें जा कर रहने लगी। किन्तु पलाङ्ग भय दिगदे पोके जो उन्हें फिर राज्य देनेके लिये बुलाने लगे थे। काव्यमोरीक ८८ लौकिक पद्यको उल बटना हुई। तन्त्रियोंने सुगन्धाके धागमनको बातें सुन निर्जितवर्माके हृदय बर्षिय पुत्र पार्श्वकी राजा बनाने के अनिमावसे पञ्चमध्य रानी सुगन्धाके सेव्यरुके कह कियो पुरातन कनक्य विहारमें ८० लौकिक पद्यको रानीको मार डाला। फिर पार्श्व राजा हुई। पञ्चम यजेष्ठाचारी पिता कनके रक्षक बने थे। तन्त्रियोंके मध्य भी कनक्य पञ्चम्यके देव पङ्क मया। पपरा पर पद्योय राजा जाबोय होने लगी। मीर नामक मन्त्रीके धन्धानीने स्पेठ गहरवर्षनके पद्योय रह सुगन्धा दिवसे बन्धता जोड मोतर जो मोतर राष्ट्रके कोया गारको मूटा था। उनहीने श्रीमद्वर्षन नामक विष्णुकी मूर्तिका स्थापन किया।

उसके पीछे ८१ लौकिक पद्यको राष्ट्रमें मोवक सुमिंस पडा था। एक जो पञ्चमक राज्य और लूनर सुमिंस। सुतरां राज्य धम्पूरे किन्तु पंचे हो गया। तन्त्री राज्यके मध्य मयके स्वर रहे। वह निर्जितवर्मा और पार्श्व उमयके मध्य पपनी सुकिष्ठाके पञ्चुसार कमी हसकी और कमी उमकी सिंहासन पर बैठे।

अब राजत्व करने लगी। सुगन्धादिव्य निर्जितवर्माकी पत्नियोंमें रासबीका श्रेष्ठते थे। वह सभी अपने अपने पुत्रको राजा बनानेके लिये सुगन्धादिव्यको प्रभुर बन रख देने और अपना अपना देह देने लगीं। मन्त्री मीरके पुत्रोंने राज्यमें प्राधान्य कामको पायासे मगिनी सुयावनीके पात्र निर्जितवर्माका विवाह कर दिया। किन्तु सुयावती भी पञ्चपुरमें पङ्क च सपत्नियों का पञ्चानुरच कर सुगन्धादिव्यकी पद्योय बन गयीं। ८० लौकिक पद्यको निर्जितवर्माका मूळ हुआ। एबाङ्गोंने उस समय बल प्रकाश कर निर्जितवर्माको बन्धदेवताको पङ्कोके मन्त्रजात पञ्चवर्माको राजा बना दिया। बन्धन राजाका रथपायिक करने लगी। १० वर्ष उषो प्रभार होते थे। ८२ लौकिक पद्यमें मन्त्रिकों ने पञ्चवर्माको हटा सुयावतीके मन्त्रजात मूवर्माको राज्य किया। किन्तु उनके मातुल कनके पञ्चमूल न रहे। इनने पञ्चम्य तन्त्रियके मिन और पार्श्वके मङ्क पञ्च कञ्चोच से मगिनेवकी राजपुत्र कर पार्श्वकी राजा बनाया। उस समय पार्श्व मन्त्रवर्माकी लक्ष्मीके श्रेष्ठको प्रपयिनी होनेसे सर्वदा अपने निकट रखते थे। उन्हीं मन्त्रवर्माके शास्त्रेच्छरी नामक देवीमूर्तिको प्रतिष्ठा किया। ११५ लौकिकपद्यको पञ्चवर्माने कथ समयकी रीतिके पञ्चुसार तन्त्रियोंकी कञ्चोच (बंस रिघवत) दे राज्य पाया था। किन्तु निरुद्धिता बम उनने मीरवर्माके पुत्रोंको पवित्र समता से डाला। उषोके उन्हीने पपने ३ नाम पर नामा स्थापन पविचार किये। उनके राज्यमें मीरवर्माके कोरपुत्र गहरवर्षन प्रधान पाङ्क विवाह और मञ्चुवर्षन प्रधान मन्त्री थे। उषो वर्ष तन्त्रियोंको प्रतिशुत कञ्चोचका पपया बुलान न सकने पर पञ्चवर्माने मयसे मङ्क नामक स्थापनी पलावन किया। उस समय गहरवर्षनने राजा होनेकी पायासे मञ्चुवर्षनको प्रचन्धाट करके किये तन्त्रियोंके निकट भेजा था। मञ्चुर्षि काकर करेह भ्रान्तकी बात न कह अपने जो किये प्रकथ कर लिया। हार पञ्चवर्माने कोरक नामक स्थापनीका स्थापनासे सरदार संघामसे मिन उषे पञ्चायता करनेके लिये प्रतिशुत कराया था। संघामने

द्वितीया पद्मपुर नामक स्थान पर भीषण युद्धमें हरा चक्रवर्माको राजप सौंपा । युद्धमें चक्रवर्माके हाथ गह्वरवर्मा मारि गये । फिर शम्भुवर्धन सैन्य संग्रह करने लगे । किन्तु एकाद्रोके युद्धमें योग देनेसे चक्रवर्मा अपनायास सिंहासन पर बैठे थे । भूमट नामक किसी सेनानौने शम्भुवर्धनको पकड़ राजाके समक्ष काट डाला ।

चक्रवर्माने राजा हो बहुत कुछ शान्ति स्थापन की थी । उसी समय रङ्ग नामक कोई विदेशी डोस्र गायक तिलोत्तमा जैसी सुन्दरी संसी और नागनता नाम्नी दो कन्या के राजमहामें गाने गया । दोनों सुन्दरियोंके रूपमें मोहित हो राजाने उन्हें ग्रहण किया था । इसी प्रधान राज्ञी हुईं । उसी सम्पर्कमें शिक्षित हो डोस्र राजपमें प्रधान बन गये । फिर डोस्रोंके कारण राजपमें भयानक अत्याचार होने लगा । चक्रवर्माने शैव लोगोंके लिये चक्रमठ प्रतिष्ठा किया था । उसका निर्माण शीघ्र होते न होते अन्तःपुरमें १६ लौकिकाष्टके समय डामरोने राजाको मार डाला ।

उसके पीछे शर्बट और अन्यान्य संलोने पार्श्वपुत्र उन्मत्तावन्तिको राजा बनाया था । वह अत्यन्त अत्याचारी रहे । उन्होने पितामाता एवं शिशु स्त्राता भगिनी आदिको कई दिन बनाहार रख नाना यंत्रणा प्रदानपूर्वक काट डाला । प्रभागुप्त, शर्बट, छोज, कुमुद पत्न्याकर और प्रभागुप्तके पुत्र देवगुप्त उन्मत्तावन्तिके प्रिय और समधर्मा मंत्री थे । रङ्ग नामक कोई प्रतिशय साहसी वीरपुरुष सेनापति रहे । उनने हामर सरदारके घरके पास पद्मवनमें रङ्गश्रीदेवीको अविष्टित देखे बिलकुल उसी घाटमें पर रङ्गजाया नाम्नी देवीको प्रतिष्ठा किया । काश्मीरीय १५५ लौकिकाष्टकी उन्मत्तावन्तिने पञ्चत्व पाया ।

उसके पीछे राजान्तःपुरकी रमणियोंके चक्रान्तसे अज्ञातकुलशील कोई शिशु राजा हुवे । लोग उन्हें राजपुत्र शूरवर्मा कहते थे । कम्पनराज कमलवर्धन उस समय उच्छृङ्खल डामरोको शासन कर महेश नामक स्थानमें रहते थे । उनने यह सुनते ही समैन्य राजधानीकी आक्रमण किया कि शिशुराज जयस्त्रामी-

के दर्शनको गये थे । तब, एकाद्रि प्रभृति सकल सेनपट्टेवग हार गया । उसके पीछे उनने ब्राह्मणोंको बुना उपयुक्त राजनिर्वाचनका आदेश दिया था । उनने सोचा कि वही राजा बनाये जायगे । किन्तु ब्राह्मणोंने लोकनिर्वाचनमें प्रवृत्त हो देखा कि उत्पलका वंशिय कोई न था । पिशाचकपूरके वीरदेव-पुत्र कामदेव मेरुवर्धनने घरमें शिलकता करते थे । उनके पुत्र प्रभाकर शद्वरवर्माके कोपाध्यक्ष रहे । उनने सुगन्धाके साथ तंत्रियोंके युद्धमें प्राणत्याग किया । प्रभाकरके पुत्र यगस्कार राजपकी दुःखस्या देख स्त्रीय वन्धु फाला, नकके राजपमें जा पहुँचे । वह किसी दिन स्वप्न देख स्वराजपकी लौटे थे । ब्राह्मणोंने उन्हें देखते ही राजपटमें वरण किया ।

कल्पपालके वंशमें स्त्रियों, मंत्रियों और अज्ञातकुलशील बानकोंको छोड़ ८ राजा हुवे । काश्मीर राजप उक्त वंशके इत्त ८४ वर्ष ४ मास रहा ।

यगस्कार राजा हो कर सुख-शान्तिसे सुविचारपूर्वक राजत्व करने लगे । उनमें भी एक टोप था । वह लला नाम्नी किसी नौचक्रातोय भट्टा रमणीको प्राणकी अपेक्षा भी अधिक चाहते थे । उन्होंने उसीको पत्नियों प्रधानमें बनाया । यगस्कारसे स्वपुत्र मंधामदेवकी छोड़ दिया था । चवगोपकी वह उदरपीडासे आक्रान्त हुवे और स्त्रीय पित्र्यपुत्र रामदेवके बेटे वर्णटकी राज्यमें अभिषिक्त कर चल बसे । किन्तु वर्णटने पीहित पित्र्यका कोई संवाद न लिया और अपना समय नवराज्यके आमोदमें लगा दिया था । यगस्कार भ्रातृपुत्रके उस व्यवहारसे समाहित हुवे । उनने मृत्युकाल संग्रामदेवकी राज्य दे स्त्रप्रतिष्ठित यगस्कार स्वामी नामक अर्धनिर्मित देवालयमें कान्यापन किया था । उसी मन्दिरमें पद्मगुप्त प्रभृति कई लोगोंने धनरत्न दास दानी हरण कर उन्हें एकाकी छोड़ दिया । २४ लौकिकाष्टकी माद्रङ्गप्यटतोयाको राजा तीन दिन अचिकित्सा और असहाय रह मृत्युके मुखमें पडे । महिषी वैलोक्यदेवीने महगमन किया था ।

उसके पीछे पद्मगुप्त, भूमट प्रभृतिने शिशु संग्रामको

राजा हर उसकी पितामहोको प्रतिमाविधा बनाया । (पेर तिरके रहनेसे कोन उन्ने बन्नाहोर्षपाम कहते से) बाल पाकर पर्यगुप्तने इहा राजमाता तथा बन्धु पांच सहकारियोंको बन्धु किया था । फिर बन्धु राज्यके प्रधान बन बैठे, किन्तु राजा गिय संघाम हो रहे । एका द्रौंके मससे जडात् बन्धु उन्ने मार न सके से । मीकको बिमो दिन सन्धुदक्षके साथ रातके समय राजधानी पर आक्रमण किया । राजमन्त्र मंत्री रामवर्षन बिलट हो गये । पर्यगुप्त बिलम्ब न कर कमी समय सिंहासन पर बैठे से । विनाशित स्थिति महीको माका पकड उन्ने भूमिपर निघेय किया । पर्यगुप्तने ठठ बिमो भूधरी पदमं का बन्नाहोर्षपामको मार डाला ।

२३ लोकिबान्धके फागुन मासको लक्ष्मणमीको पर्यगुप्त राजा बूधे । बन्धु विद्योत्पर्वतके पाखंडवर्ती बन पदराज द्विज परमिनके पीर संघामगुप्तके पुत्र से । पर्यगुप्तने स्वयं मन्दिरके निकट पर्यगुप्तेश्वर नामके देवताको प्रतिष्ठा किया । फिर यद्यक्षरको किसी पत्नीके रूपमें सुन्ध हो उन्ने यद्यक्षर आमोका मन्दिर मन्थु कर दिया । मन्दिर शिव कोने पर राजमन्त्रियों पापोके जायमें न जानेके अज्ञेयता पर बढे । पर्यगुप्त मो जकोहर रोमके पोहित हो इरैखरीके मन्दिरमें रह ३६ लोकिबान्धके भाद्रमासको लक्ष्मणमीको मार मये ।

पर्यगुप्तके पत्नि कनके पुत्र सेमगुप्तको राज्य मिला । बन्धु मो पतिभय घुरापायी पीर बान्धु पत्नीचारी से । फाल्गुन पीर बिन्दु रंगीय बामनादि उन्ने मरुंदा पापमें बन्नाह देते से । दूतकीडा, रमकी पीर मधु को कमी कीहते न से । कमी समय पदपक्षके मंत्री फाल्गुनमने फाल्गुनमासी नामक देवताको प्रतिष्ठा किया । बन्धुनराज बन्धु रहने फिर कामर घुर दारको मार डालनेके लिये जयेन्द्रविहारमें पन्थि लगाया था । कामर भरदार उसमें द्विसे से । रहने पतनोत्प प बिहारके बुधमूर्तिको निवास लिया पीर उन्ने प्रप्रादिसे पकड पाखंड राजके नामसे सेममीरोय्यर देवताको प्रतिष्ठित किया । मोहरदुर्मके राजनकर्ता सिंहराजने पत्नीया दिहाको सेमगुप्तके

माथ ब्याहा था । दिहाके मातामह माकी रहे । उन्ने सेमगुप्तके बन से मोमन्थिय देवताको पतिष्ठा किया । दारपति फाल्गुनमासा बन्धुकेसा सेमगुप्तको दूधरी मन्थियो थी ।

सेमगुप्त भयमाशिय से । बन्धु मिन्धारके लिये दामो दारपन, लज्जान पीर मिन्धिम पन्थि प्थानमें पर्यहा बूमा करसे से । उल्कातुल्यो-भूगवामि उन्को बड़ा भामोद मिनता था । ३३ लोकिबान्धके पीवमासको लक्ष्मणमीको राजके समय बन्धु मिन्धार करसे गये से । बन्धु किसी उल्कातुल्यके सुन्धमें प्रप्रासित उल्का टंख मयसे उन्को कृतामय प्थर बड़ा पीर उसी प्थामे उन्का काम बूना । पदपक्ष पुरके निकट बराहमन्दिरमें रहने लगे से । इस प्थानमें उन्ने सेममठ पीर लोचण्ड नामके २ मन्दिर बनाये । फिर उसी मासके यक्षपक्षको उन्का मन्थु बूना । कनके ८ बन्धु रात्रत्य किया था ।

सेमगुप्तके दोसे कनके गियपुत्र द्वितीय पन्थिमन्थु मन्थियो दिहाके लज्जाबामने राजा बूधे उसी बन्धु तडेभर बाजारके निकट भयानक पन्थिदाह पारण्यकोनेपर वर्षनजामोके मन्दिरके सिन्धुकीके पाखंडपरन्थ समस्त प्थान बन्ध मया । सेमगुप्तके मरनेपर पन्थान्य राजो उन्ने माथ मर मिटे । सेमक दिहा नरनाहनके पन्थुरोष पीर रहके यज्ञसे सन्धुयता न बूधे । बन्धु पन्थुचिमती रहते । कनके राजाको पन्थेदिक्किया शिव होते न होते फाल्गुनादि मन्थिकोने सिन्धुविहा करनेको विहा लगायी । सिन्धु शिवकी बिहोच पाप ही बन्धु हो मया । फाल्गुन राजधानी छोड़ पन्थेन्द्र नामक प्थानमें जा रहे । पर्यगुप्तने राजा होते समय भूमट पीर लोच नामक मन्थोके साथ पपनी हो लक्ष्मणोका विहाह कर दिया था । कनके मन्थिमा पीर पाटल नामक २ पुत्र बूधे । उस समय उन्ने भी राज्यकोमसे द्विमकादि मन्थियोंके साथ योगदान किया था । मन्थियों दिहाके बन्धु बाल पुन कनको राजमासादसे निवास दिया । मन्थिमाने कौय प्थर मन्थिमेनका पान्थ किया था । परिहासपुरसे द्विपन्थ सुकुल एवं परामन्थ पीर ललितदिम्पपुरके पन्थताकरके पुत्र उदयगुप्त तथा

यशोधर उनमें जा मिले। एकमात्र मंत्री नरवाहन महिषी दिहाके पक्षमें रहे। महिषीने शेषकी ललित-दित्वपुरके ब्राह्मणोंके साहाय्यसे सन्धिकर और यशोधरका कम्पन प्रदेश टे आशुविपदसे मुक्ति पायी श्रवणेश्वरी महिमा अभिचारक्रियासे मारे गये। उसके पोछे कम्पनराज यशोधरसे साक्षीराज धक्कनका युद्ध हुआ। रक्षादिके परामर्शसे दिहाने दोष विवेचना पूर्वक यशोधरको कम्पनसे निकालना चाहा था। इरा मत्त, शम्भर प्रभृतिने पूर्व सन्धिकी कथा स्मरण कर ससैन्य शूरमठके निकट राजसैन्यपर आक्रमण किया। मिहदारपर एकाङ्ग सैन्यदल दुर्भेद्य प्राचीरकी भांति खड़ा हो खड्गने लगा, किन्तु पराजित होते होते राजकुलमण्डके ससैन्य युद्धमें पङ्च योग देनेसे राजसैन्य जीत गया। युद्धमें हिम्यक मरे और शम्भर, मुकुल, उदयगुप्त तथा यशोधर वन्दी हुवे। इरामत्तने गया-यात्री काश्मीरीयोंसे गयानी जो कर लेते थे उसे निवारण किया। रानीने उनको गलेसे पत्थर बांध वितस्तामें डुबा दिया। श्रवणेश्वरीको वह मंत्री नरवाहन के परामर्शसे निरापद राजप्रशासन करने लगे। नरवाहन राजानक पद पर अघिष्ठित हुवे। रानी नरवाहनको सम्पूर्ण हिताकाही समझ सर्वापेक्षा आदर करती थीं। किसी धूर्त कीपाध्यक्षने उसे मर्द न मकने पर कौशल्ये अभयके मध्य मनोमालिन्य बटा दिया। क्रमशः दिन दिन महिषी नरवाहनको प्राकाश्य रूपसे अपमान और घृणा करने लगीं। नरवाहनने शेषकी घबड़ा करे आत्महत्या कर डाली। उसी समयसे रानी की निष्ठुरता बढ़ी थी। वह डामर सरदारकी सपरिवार मार डालने पर प्रवृत्त हुयीं। मंत्री फाल्गुनकी फिर कार्यभार मिला था। इधर कार्तिक मासकी शुक्ल तृतीयाको (४८ लौकिकाब्द) महाराज अभिमन्युने यक्षारोगसे परलोक गमन किया।

उसके पोछे दिहाके अधीन उनके शिशु पौत्र (अभिमन्युके पुत्र) नन्दिगुप्त राजा हुवे। उसवार पुत्र-शोकसे रानी चैती थीं। वह फिर प्रजाके हितकर कार्यमें रत हुयीं। उन्होंने अभिमन्युपुर नगर, अभिमन्युस्वामी देवता, अपने नामसे दिहापुर नगर और

दिहास्वामी देवताको स्थापन किया था। उसके बाद दिहाने स्वामीकी स्वर्गकामनासे कङ्कणपुर नगर और "दिहास्वामी" नामक श्वेतप्रद्वारकी विष्णुमूर्तिकी प्रतिष्ठा की। उन्होंने लोहरवासियों और काश्मीरी-योंके सुविधार्थ एक पान्यनिवास और प्रिष्ठनामसे एक ब्राह्मणवास एवं मिहस्वामी नामक देवताको स्थापन किया। वितस्ता और मिन्धुके मङ्गमखन पर दिहाने दूसरे भी कई देवता स्थापन किये थे। उन्होंने सब मिलाकर ६४ देवमूर्ति स्थापन की थीं। उनकी बला नाम्नी वैश्विकजातीय किशो टामोने बलामठ नामक मठ स्थापन किया। एक वर्ष पोछे राज्ञी दिहाका गोक दूर हुआ। वह फिर कुकर्ममें लग गयीं। उस वार उनने अग्रहायण मास (४९ लौकिकाब्द) अभिचारक्रियाके साहाय्यसे अपने शिशुपौत्र नन्दिगुप्तको मार उसके सहोदर त्रिभुवनगुप्तको राजा बनाया था। किन्तु २ वर्ष पोछे अग्रहायण मास ही दिहाने उनको भी मार डाला। त्रिभुवनगुप्तके पोछे उनके दूसरे सहोदर भीमगुप्त राजा हुवे। किन्तु वह भी राक्षसी पितामहोके हाथ (५६ लौकिकाब्दकी) मारे गये। उसी बीच मंत्रिपर फाल्गुन भी विनष्ट हुवे।

भीमगुप्तके बाद दिहा प्रकाश्य रूपसे सिंहासन पर बैठ गयीं। उनकी कुप्रवृत्तिके साधनमें सञ्चत न होनेसे अनेक व्यक्ति विनष्ट हुवे। शेषकी उनके प्रिय उपपति तुह मंत्री बने थे। तुह स्वीय भ्रातृपक्षके मिला राज्य हरणकी चेष्टामें धूमने लगे। राज्ञी दिहाके भ्रातृपुत्र विग्रहराज तुहकी मार डालना चाहते थे। दिहाने वह बात समझ पर्येवलसे विग्रहराजको देगसे निकाला, कर्दमराजका मारा और तुहके इच्छानुसार रक्तके पुत्र सुसचणादि मंत्रियोंकी भी राजसमासे दूरीभूत किया। मंत्री फाल्गुनके मरनेपर राजपुरी-राजविद्रोही हो गये। तुहने उनको भी जीत 'राजपुरीराज' और डामरराज्य तथा कम्पन जयकर 'कम्पन-राज' उपाधि ग्रहण किया था। उसके बाद दिहाने स्वीय भ्राता उदयराजके पुत्र संशामराजको युवराज बनाया। शेषको (८९ अब्द) भाङ्की शुक्लप्रदमीके दिन दिहा मर गयीं।

इस प्रकार अष्टमवर्षको दस अक्षय्यो ने राजा बन
 १३ वय और २३ दिन राज्य किया ।
 संध्यामराज समापतिके नामसे सिंहासन पर बैठे
 थे । वह अश्वीर और प्रतापवाको राजा रहे । उनसे
 समझ से तुह महाप्रतापवाको थे । सुतरां राज्यके
 पन्थायप्रधान प्रधान मंत्री और सर्वकारी तुहका प्रताप
 जय करकेके लिये बिहोही को मरी किन्तु बिहोहिदोम
 पनीक अलि विनष्ट हुई । तुह सेवको मद्रेश्वर नामक
 किसी कायकका साहाय्य से विपदमें पहुँचे । जहाँ
 समय तुहपरराज हमीरने साहोराज्य प्राप्तमच किया ।
 तिसोचनपाक साहोने आश्वीरराजसे साहाय्य माँगा
 था । तुह सप्रेम साहो राज्य का पहुँचे । मुझमें विपद
 पराजित हो भागा था । किन्तु तुहने तिसोचनके
 कथनानुसार पवतपार्श्वमें विधिर स्थापन न किया ।
 उसीसे नूतन तुहपरसेवने का पर्वतपार्श्वमें आश्वीरी
 सेव्यको सिद्ध भिन्न कर दिया । तुह मान कर राजकी
 सौटे दी । तिसोचनने उद्दिष्ट नामक ज्वालमें पायय
 लिया । साहो राज्य चिरदिनके लिये हमीरके अधिकार
 में बना गया । तुहके पुत्र अन्वपसिंह गर्वित और
 विनामोर रहे । उसी समय विपदराज गोपनोच एक
 द्वारा तुहवचके लिये स्वाताको पुनः २ पशुरीच करने
 गी । राजा समापति किन्तु ठठान् वह कार्य कर
 न सके । अद्यपिमें दबाव पड़नेसे किमी दिन मन्थका
 का परामर्श करनेके जन्मने जनेमें मन्थवर्षमें तुहको
 तुनाया था । वृद्धमें प्रिय करती हो गकरक और
 पन्थान्य पशुपर तुहपर टूट पड़े । तुहके विनष्ट होने
 पर उनके पुत्र से पकड़ करभार डाले गये । ठठ प्रतपार्श्व
 पीछे तुहके स्वाता नाम कथनराज बने थे । अन्वपको छो
 नागके साक अष्टाचारमें रत हुई । विधिअसिंह और
 आदसिंह नामक अष्टवर्षसे दो पुत्रोंमें एक एक माताक
 साथ राजपुरीको पन्थापन किया था । तुहके मरनेके
 पीछे दरद, कामर और दिविर किहोको जी गये । समा
 पतिके जय और प्रासाद का मन्दिरादि बनाया न था ।
 उनको कल्या मोडिजाने एक पत्नी और एक माता
 तिसोत्तमाके नामसे मन्दिर प्रतिष्ठा किया । मद्रेश्वर
 ने भी एक मठ बनाया था । शीसेवा नाथी मडिनी

जवाहर नामक (सुमन्विसिंहके वीरय और अय-
 लकीके गर्भसे उत्पन्न) तुहके किमी आतुपुत्रके साक
 अष्टा हो गये । इ लोकिनाम्नको १ को भावाङ्कको
 राजा समापतिके परमोच समन किया ।
 समापतिके पीछे उनके पुत्र शीसेवाके समजात
 हरिराज राजा हुई । वह पति सुवीच प्रसारणक
 राजा थे । हरिराज २२ दिन मात्र राज्य कर एक
 पड़मीको बानवासमें पड़े । वहदे है कि शीसेवा
 पुत्रके निकट श्लोक अष्टाचारके लिये तिरस्कृत हुई
 को । उसीने पमिवारद्वारा उन्हीं उनको मार
 डाला ।
 उनके पीछे शीसेवाने जय राजक करनेको पमि
 सेलका पाशोत्रन बनाया था । उसी समय हरिराजव
 कासीपुत्र सायने एकान्त्रोमि सिन हरिराजके अनिष्ट
 पनन्तदेवका राजा बना दिया । वह विपदराज गिय
 आतुपुत्रका राजा हरक करनेके लिये सोहरके इहम्
 सेव से आश्वीरमें प्रिय कर शीठिकामन्दिरमें रहने
 गी । शीसेवाने संवाद पानेपर एक एक सेव्य सेज
 मन्थन बिहोहिदोका विनाय किया था । लपके पीछे
 वय गण होनेसे पनन्तदेवके साहोराजपुत्र भिन्न
 पात्र बन गये । ज्वेठ इहूपान इन्धुदन तथा कावक
 गचको प्रतिपादन करते और राजाको पापातसुखकर
 मन्थका देते थे । जनेमें आश्वीरराज इन्धुचन्द्रको
 पतिरूपवतो रूप था कन्या पायामतोके साक पयमा
 और इसको अनिहा सुयमतोके साथ पनन्तदेवका
 विवाह किया । शीसेवाने उही समय अपने सामी
 और पुत्र (हरिराज) को जयकामनासे दो मन्दिर
 बनवाये थे । अन्धनराज तिसुपन कामरोंसे सिन
 बिहोही हुई । किर उन्हीं आश्वीर प्राप्तमच किया ।
 एकान्त्रोके साहाय्यसे पनन्तदेवने जन्म बिहोच दबावा
 और तिसुपनको मनावा था । उससे पीछे पनन्तदेवने
 श्रीय मियपात्र जद्वाराजको शीपाय्यन बनाया । किन्तु
 उन्हीं इहुराजको प्रतिपात्त देव सिंधासे पदस्नात-
 पूर्वक पात्र अष्टेश्वर, दरद और कामर भोगीसे सिन
 दरदराजके सेनापतिजने आश्वीर प्राप्तमच किया था ।
 इहुराज और पनन्तदेव एकत्र सेव्य से औरसुठ

नामक स्थानपर युद्धार्थं उपस्थित हुवे । दूसरे दिन प्रातःकाल युद्धारम्भ होना ठहर गया । उसी बीच दरद-राजने श्रीडापिण्डारक नामक नागरके पालयमें उत्थात मचाया था । उसीमें नागोंने समझा कि युद्ध चारम्भ हो गया । फिर नाग भी जा पड़े थे । त्रेपको वाम्बविक काश्मीरके सैन्यमें युद्ध होने लगा । युद्धमें श्लेष्मराज पौर दरदराज मारे गये । दृष्टगमने मुकट-मण्डित दरदराजका मस्तक पनक्तदेवकी उपहार दिया था । उद्यनधम्म नामक दरदराजके भ्राताने फिर पश्चिमाचारक्रियाके माहाय्यमें दृष्टवान् पौर उनके भ्राताकी की विमट क्रिया । उसके पीछे रानी सूर्यमती या सुभटाने वितस्तापीर सुभटासठ नामक शिवमन्दिर बनाया । उसी मन्दिरके निकट रानीने स्वीय कनिष्ठ महीदेव प्रागावन्द्य वा कल्लनके नामसे एक धाम भी स्थापन किया था । एतद्विषय उन्होंने स्वामीके नाममें पमरीगर, ज्येष्ठभ्राता शिवनके नाममें विजयेश्वर पौर विशूल, वाणसिद्ध प्रभृति शिव पथं मन्दिरकी प्रतिष्ठा की । कुछदिन पीछे उनके गर्भजात शिशुमन्तान राज राजका भृत्य हुआ । फिर राजा पौर रानी दोनों राजभवन छोड़ मदासिध-मन्दिरके निकट रहने लगे । उसी समयमें चिर दिनके लिये काश्मीरका पुरातन राजप्रासाद परिवर्त्य हुआ । कारण तत्परवर्ती राजा भी बहू मन्दिरके निकट ही जाकर रहे थे । उसी समय बहूक नामक एक दैगिक भाँड़ने राजाका बड़ा प्रियपात्र होनेसे यथेष्ट धनरत्न नाम किया । यद्वांतक कि उससे राजकोष शून्य प्रायः हो गया । रानी सूर्यमतीने बहू वात देख राजकोषकी अपनी हाथमें ले अपरिमित व्यय निवारण किया था । विगतदैगौय केशव ब्राह्मण उस समय प्रधान मन्त्री रहे । गौरीग-विदगालय नामक म्यानमें भूति नामक एक वैश्य थे । उनके तीन पुत्र रहे—हनुधर, यज्ञ पौर वराह । हनुधर रानी सूर्यमतीके अनुग्रहसे प्रधान मन्त्री बन गये । उन्होंने मन्त्री ही राज्यमें अनेक यथ अनुष्ठान किये । हनुधरने वितस्ता श्रीर सिन्धुके सङ्गम-स्थल पर एक सूर्य-मन्दिर भी निर्माण कराया था । उनके कनिष्ठ भ्राता वराहके पुत्र विष्णु प्रतिशय पौर

थे । उन्होंने डामरों पौर खर्गोंकी यगीभूत क्रिया, किन्तु पत्रगुहमें अर्थ प्राप्त हो दिया । कुछ दिन पीछे स्त्रीके कर्णमें पनक्तदेवने स्वयं सिंहासन छोड़ पत्रगुह कल्प या द्वितीय रणादित्यकी राजा बनाया । मन्त्री हनुधरने उस प्रस्तावमें बाधा डाली थी, किन्तु राजाने उनकी न सुनी । त्रेपमें उद्भूत गुदा रणादित्य पिताकी पौर उसकी पत्नी रानी सूर्यमतीका मदपा हो रणाट करके लगी । रणादित्य स्वयं राजाके ही देमा मद्यात प्राप्त, पिताकी भी देमाही करनेका पाटन सुनाते थे । उस समय राजा पौर रानी समय की देतय्य हुआ । हनुधरने योग्यपुत्र पौर राज्य-भार हर राजाकी भौंठा था । उद्भूत रणादित्य नाम-मातकी राजा रह गये । उसी समय विपदराजके पुत्र चित्तिराजने राजा पनक्तके निकट जाकर कहा था—“हमारि भिन्नपुत्र भुवनराज पौर पौर मोक्षने हमें राज्यमें निकाल दिया है । विपदराज जिन साधुकी समादर करते थे, उन्होंने उनके नामके कुछ धाम उनके गर्भमें यज्ञोपवीत डाला है । पनक्त हम उनका मुग्न न देखेंगे । हम चापके शिष्ट पौरकी अपने राज्यका उत्तराधिकारी बनते हैं । चाप हम राज्यका भार सहन कोजिये ।” यह कहा कुछ चित्ति-धरने सक्तधरमें रह विष्णुसेवासे जीवनयापन किया । राजा पनक्तने तन्वद्वारा नामक स्वीय पित्रपुत्रकी चित्तिराजके राज्यमें पौरके पक्ष पर शासनकर्ता बनाया । उसी समय जिन्दुराज नामक किसी अज्ञाने उच्छुद्धत डामर पौर दरद मोगीको दमन किया था । राजाने उसे कम्पनराजका राजा बना दिया । उसके बाद हनुधर मर गये । उन्होंने मरते समय कहा था—“महा-राज ! कम्पनपति जिन्दुराज पौर कोषाध्यक्ष नागके पुत्र जयानन्दसे सावधान रहियेगा । इठात् परराज्यपर आक्रमण करना भी अच्छा नहीं ।” उक्त परामर्शके अनुसार पनक्तने सुविधा देव जिन्दुराजकी कारावह किया । काल पाकर जयानन्द पौर साहीराजपुत्र विष्णुपित्यराज तथा पाज नाममात्र राजा रणादित्य-की उच्चत कुपथमें लगाने लगे । उसी समय उनके देवो-पम गुरु पमरकण्ठके मरजानेसे उनके हतभाग्य पुत्र

प्रमोदकण्ठ गुद हूये । मञ्जी वल्लभरके एक दुर्लभ पुत्र
 कनक मिथुरोके मिरोमणि धि । बह बलपूर्वक प्रबाओ
 रमणियो ओ धृष्टके अपनि दुहमें पकड़ ली जाते थे ।
 जसो प्रबाउ उक्त दुनो बहियो का साथ पाकर रखादित्त
 यसारोति नरकके पक पर पदमर हूये । उन्को मि भी
 गुक प्रमोदकण्ठको मति ज्ञाय मयिने कसबा पौर
 कथा नामाका सतीत्त्व बरच किया था । छह राजा पौर
 रामेनि बह संवाद सुन स्वपान पर बरबात बर राज्य
 परित्वागपूर्वक भिर्जनमें रहने लगे । लमय' प्रजाओ
 श्रीपुत्रके साथ घरमें रहना पसन्धत हो गया । बिषो
 दिन रखादित्त जिन्दुआबहा पुत्रबन्धुपर पालक हो
 रात्रिके समय बसके घरमें बुन गये । शिवको चण्डा
 को के ब्राह्म प्रहारित हो मृतप्राय' पनन्वामें पपना
 परिचय दे बह भाग मये थे । हहराज पनन्वदेव उक्त
 समय पुत्रको हु झाका बरमहाय उपक्षिप्त देख ११
 लोबिकाब्दको विजयबेज नामक स्थानमें देवबेबासि
 बालयापन करनि लगे । तन्वहराज सर्व्वर्मा पौर
 कामरराज पौरने इनका पनुगमन किया । उसके
 बाद रखादित्त आबोन हो गये । फिर उन्को मि जिन्दु
 रात्रको श्रीभोगता दे विजयपेय पर बूढ़ पितासे कहनि
 भेबा था । राज्ञी स्वयंमतीने पुत्रको दुर्बलिये उन्के
 भक्त भा किया । भास्वदमसे रखादित्त उक्त भक्त भासि
 निरम्न हूये किन्तु इनके दुर्लभहार न मये । पयशिय
 को बृहराज पनन्वदेवने पौहित प्रजा पौर पनुवर-
 गके कर्षय बाबरी कर्षेजित हो पुत्रके हाथसे
 राज्यभार निष्कारनेका पायोजन लगाया था । बहर
 राज्ञी स्वयंमतीने श्रीय वीर कर्षको बुबा भेजा । स्वयं
 काकर पितामह पितामहके बरचमें प्रबिपात किया ।
 छठ संवाद पा कसस पौर रखादित्त मीत हूये । उनने
 पिता माताके निकट हुन भेज कुछ पखिर मुनि
 काश्य की ली । राज्ञीके पनुरोचसे बूढ़ पनन्व राज्यकी
 जीटे किन्तु ही भास राज्यमें रह उन्को मि देबा
 लि गुणवर पुत्र कर्षे जसो बनायेथी । बह पबिजन्व
 राज्य छोड जयेगड मन्दिरमें रहने लगे । रखादित्तने
 रात्रिकान पम्नि जगा बर देवालय बना दाना ।
 पम्निदाजमें बहराज रामो पौर पनुवरजके परिहित

बन मात्र व्यतीत सब कुछ बल गया । राज्ञी पम्निमें
 बनने जाती थीं । किन्तु तन्वहके पुत्रोने कर्षे मिबा
 रच किया । शिवकी बूढ़ राजा पौर रामो लोगो पनु
 चरो के साथ घनागत सेह नदी पार हो बिषो पौर
 बर हिसे । कर्षोने एक मन्त्रियसिद्ध तहराजके
 हाथ बैच सत्तर लख मुद्रा संपद किया । पौर बनमें
 कुटीर बना पपना छेरा दान दिया । देवमन्दिरको
 बन जानेपर महाराजने फिर बनबाना चाहा था ।
 किन्तु रखादित्तने नियन्त्रर भेजा पौर कर्षे पर्व्वोक्त
 नामक स्थान पनेजानेको कहा । राज्ञी स्वयंमतीने
 भी स्वामोने बची करनीको पनुरोच किया था । किन्तु
 हहराज छहकादि देवन्दान छोडनेसे जातर हूये ।
 जसो वान पर श्रीपुत्रदमें बनक पड़ गया । हहराजने
 श्रीके कर्षेय बाबसे पौर श्रीवराय मूनारोचकी
 मति योपनमें पपनि तसवार मो क ली । पनके रक्त
 को बारा बची थी । राज्ञीने कहा कि उन्के रक्षातिघार
 बुबा था । दाहरी भोगोने जमीपर विद्याम किया ।
 शिवको विजयेयदेवके सन्तुष्ट काश्रीरीय १० लोबि
 काब्दमें बार्तिकी पूर्व्वमाके दिन महाराज पनन्व-
 टेवने दृढबोह छोड दिबा । रामीने चितारोचका
 उद्योग लगाया था । कनस संवाद मिन्नि पर पनेन्व
 काकर उपक्षिप्त हूये । किन्तु कई पनुचरोकी मिबा
 प्ररोकनामें भातासे न मिले । रामो कर्षो पनुचरोको
 माप दे चित्त पर बड़ मयीं ।

पितामहोका बलरक्त मिन्नेके स्वयंम पितासे बिबाह
 बनाया था । रखादित्त का कसस छठ समय निर्जन
 रहि । सुतरा बनवान् पुत्रको बह वीयनने पपनि
 मयमें जाये । बिबाताको मजिमा पाचयथे भरी है ।
 उषी समयने महाराज स्वयंम सत्त्वक बननन्वन किया,
 किन्तु एकवारगो हो बह पपना ज्ञानाव छोड न लके
 धि । कर्षोने लमय' जिपुरेखरका कसमन्दिर बनावा
 पौर बनरीखर एष पनन्वोयः नामक देवताको स्थापन
 किया । बह तुदन्वदेवोय कई बुनकी बरप बर जाये
 धि । छह बरपमें भी इनके ७० नामोने रह्यै । जिन वि-
 श्वरमन्दिरको कर्षनि कहाया, उधे फिर न बनया
 था । किन्तु देवमूर्तिके अपर कर्षेजित चटाया मदा ।

उसके पीछे राजपुरीके राजा सहाजपाल मर गये। उनके पुत्र संग्रामपाल राजा बने थे। किन्तु उनके पहिले मदनपालने राज्य आक्रमण करनेकी चेष्टा लगायी। संग्रामने स्त्रीय कानिष्ठा भगिनी और यश-राजकी काशमीर भेज साहाय्य मांगा था। जयानन्द डठात् मर गये। मृत्यु काल जयानन्दने बिलुकु सखन्ध-में राजाकी सतर्क किया था। राजाने बिलुकी धनी और क्षमताशाली देख कुछ न कहा। बिलु राजाके मनोभङ्गका कारण देख सतर्क होनेके लिये विदेशको चलते हुवे, किन्तु अल्प दिनके ही मध्य मर गये। जयानन्दके मरने पर जिन्दुराज भी चलते बने। उसी प्रकार सती सूर्यमतीका श्राप फला था। जयानन्दके पीछे उनके वंशीय घामन प्रधान मन्त्री हुवे। राजा कलसने उस समय भवन्तिस्वामी देवताके कई देवांतर ग्राम छीन कलसगंज नामक घनागार स्थापन किया था। उसके पीछे मदनपालने द्वितीय बार राजपुरीमें विद्रोह उपस्थित किया। काशमीरराजने बप्पट नामक सेनापतिसे उन्हें पकड मंगाया था। उसी समय वारहदेवके भ्राता कन्दर्प द्वारपति हुवे और मदनपाल कम्पनापति बने। फिर राजा कलसने नील पुर-नरेश्वर कीर्तिराजकी कन्या भुवनमतीसे विवाह किया था। ६३ बौककाण्डकी वडपुरके राजा कीर्ति, चम्पाके राजा आसट, बल्लापुरके राजा कलस, राजपुरीके राजा संग्राम, लोहरराज उत्कर्ष, उरशाराज सङ्गत, कान्दके राजा गभीरसिंह और काष्ठवाटके राजा उषमराज काशमीरमें जा उपस्थित हुवे। कन्दर्पने उसके पीछे स्वापिक नामक दुर्ग जीता था। राजा कलस नृत्यगीतके वडे मज्ञ रहे। उन्होंने जयधनके निकट तीन पंक्ति देवमन्दिर और कलसपुर नामक नगरकी स्थापन किया था। उसी समय युवराज हर्षने नाना देशकी भाषा और सर्वशास्त्रकी गिज्ञा पायी। वह सहापण्डित और कथित्वसम्पन्न होनेसे सबके अत्यन्त प्रिय पात्र बन गये। वह वडे दानशील रहे। घमें और विश्वावट नामक दो मन्त्रियोंने अनेक दिन चेष्टा करने पर उक्त हर्षको भी पिताके विरुद्ध उत्तेजित किया था। उन्होंने विश्वावटके परामर्शानुसार किसी दिन पिताको

विनाश करनेके अभिप्रायसे अपने आलयमें बुलाया। शेष ही विश्वावटने ही राजा कलससे सब भेद बताया था। युवराज उक्त वृत्तान्त सुन उस दिन पिताके पास न गये। उसके पीछे हर्ष भी मन्त्र पड़े थे। किन्तु उभय पक्षके दूतोंकी गडबडमें सदाशिव एवं सूर्यमती गौरीग-मन्दिरके निकट ६४ लौकिकाण्डकी पीप मासको शुक्ल पष्ठीके दिन पितापुत्रका एक युद्ध हो गया। युद्धमें हर्ष बन्दो हुवे। हर्षको बन्दो होते सुन रानी भुवनमतीने आत्महत्या को थी। हर्ष वंधे पड़े रहे। उनके प्रिय भ्राता प्रयाग साथ ही थे। तुलसीकी पौत्री सुगला हर्षको एक पत्नी रहों। उनके रूपमें बह राजा कलस मोहित हो गये। दुष्टा सुगलाने भी श्वशुरकी प्रेमार्थिनी हो स्वामीकी मन्त्री नोनकके साहाय्यसे विष दिलवा दिया, किन्तु प्रयागने भेद भाव समझ हर्षको बह खिलाया न था।

पापीको पापेच्छा न घटी। राजा कलसने फिर दुष्कार्य श्रावण किया था। उन्होंने सूर्यदेवकी ताम्ब-मूर्ति मन्दिरसे निकाल कर फेंक दी। सन्तानहीनका विषयादि राजाको प्राप्य मान वह अनेकोंके सन्तान मारने लगे। क्रमशः उनके भीषण प्रमेह रोग हुआ और नाकसे रक्त बह चला। उस समय पुत्रके हाथ राज्य दान करनेके लिये उन्होंने लोहरसे उत्कर्षको बुलाया था। शेषको मृत्यु काल समस्त धनरत्न वितरण कर मार्तण्डके सूर्यमन्दिरमें रहनेकी वह चले गये। मरनेके समय उन्होंने हर्षको देखना चाहा था। किन्तु उत्कर्षके लोगोंने उन्हें जाने न दिया। वह वांछकर अलग रखे गये थे। उत्कर्षको बुलाकर कलसने कहा "दोनो भाई राज्य दो भागमें बाट लो" किन्तु समस्त कथा स्पष्ट कहते न कहते उनका वांछ रुका था। ४८ वर्षके वयसमें ६५ लौकिकाण्डकी अग्रहायण मासकी शुक्ल-पष्ठीके दिन महाराज कलसने पञ्चत्व पाया। मम्मनिका प्रभृति ६ रानी और जयामती नाम्नी कोई प्रेयसा सञ्चरता हुवीं।

उत्कर्ष राजसिंहासन पर बैठे थे। हर्ष बन्दो हो रहे। पद्मश्री नाम्नी राज्ञीके गर्भजात विक्रमसङ्ग प्रभृति भ्रातावर्गके साथ उसी समय उत्कर्षका मनोविवाद

उपस्थित हुआ। तिस दिन महाराज कमलसे रात्र
 चानोडो जग्य किया। उनी दिन उत्सवके जोधोमि जय
 देवकी किमी धनम्य ध्यानमें बांध दिया था। दूसरे
 दिन उनीमि पितानके मरने दौर उत्सवके राजा बनने
 का संवाद सुना। पितानके उत्सवसे उनका हृदय बहुत
 खराया और पत्नीर हो उनीमि रोग मचाया था।
 उनी समय उत्सवके पायामास मङ्गल नगरमें प्रथम
 कर उनके निष्कट जोमोको क्षेत्र उन्हें खान बननेका
 अनुशेष किया। जब देवने मोधा सभारत उत्सव
 उन्हें राजा बनानेवासी थे। किन्तु पनेक चय बीन गया
 उसका खोई सचय दल न पड़ा। पत्नीको उनीमि
 अर्थ पादमी क्षेत्र कहनाया था—“यदि पाप पाई
 तो हमें राज्यके निष्काय झाड़ दें और नहीं तो यदि
 हमें राज्यमें हो रखना चाहें तो हमारा प्राय राज्य
 हमें दे दें।” उत्सव भी उन्हें राज्य लौपनीकी पाया
 दे दिया मानस्य करने लगी।

उत्सवमें राजा जो राज्यके प्रायनाटिका खोई
 प्रथम बांधा न था। वह बेवकल रनी येहामें लग मये
 कौसी जोधमि बन बटेगा। उनीमि उन पर सब लोग
 विरह हुये। सुबुधि मन्त्री जयदेवकी राज्य देनेका
 परामर्श करते थे। उधर अयराज और विजयमहकी
 उनका मानिक प्राय रीतिके अनुसार न मिला।
 विजयमहने श्रीर राजकी शोटीका उकीन कहाया
 था। उषो समय जयदेवने विजयमहके पपनी सुझि
 की बात बताई। विजयमह और अयराजने स्पेड
 भ्रान्तिके शिथि दुःखित हो येवक पचपूर्वक राजधानी
 को पाकस्य किया था। उधर नोनक प्रथमि
 सुमन्त्रिणीके परामर्शके उत्सवके उपदेवकी मारनेके किन्हे
 बाराबारमें कई सैनिक भेजे थे। उनीमि वहां पड़ू च
 जयदेवके भोजनमें मुग्ध हो पचाससम्पन किया।
 उधके पीछे उत्सवमें गूर नामक मन्त्रीके हाथ रात्र
 देवकी प्रतिभू स्वरूप पचप्रापक पङ्कुरी न भेज म्यम
 काममि सुझिप्रापक पङ्कुरी भेज दी थी। जयदेव
 सुझ जोमिपर उत्सवमें जा कर मिले। उठ समय भी
 विजयमहने नगरके बाहर सुड हो रहा था। उत्सवके
 अनुशेषके जयदेव बुध निवारक करने लगे। विजय-

महने स्पेडकी सुझ देव पातन्दरी उत्सुक हो बुध
 रोक दिया। जयमि फिर उत्सवके निष्कट जानकी
 मामादमें प्रथम किया था। किन्तु मन्त्री विजयमहने
 उन्हें रोककर कहा—“क्या जान बुध कर बैठो
 देगेमें इनवाति है ? राजमासादमें जाकर एव
 बारमो जो सिंहासन पचिजार कौजिय।” उझ
 अथा कह विजयसिंह उन्हें भेकर राजमासादके
 मध्य सिंहासनद्वयमें उपस्थित हुये। फिर उनीमि जय
 देवकी सिंहासन पर बैठे पचास्य सुबुधि मन्त्रियोंको
 मनाद दिया था। उनीमि बाहर जयदेवके पचिषक-
 का पायोजन किया। उधर विजयसिंहने अर्थ का
 उत्सवको पचरिभेदित किरी घरमें रख डोड़ा। विजय-
 मह मवाद पाकर पङ्कुरी थे। नव भूपति जयदेव
 नमने कहने लगी “माई ! तुम्हारे उद्योगके ही हमने
 प्राय पाया और राज्य भी पाया है।” विजयमह
 मवादके जमि सुग्ध हो गये।

बाराबारमें नोनकने उत्सवके मिन उन्हें कौध परा-
 मर्शके कायंकारनेकी अनुशेष किया था। उत्सव-
 में अनुशेषके मन्त्रद्वय पच्य किमी स्पेडमें प्रथम
 कर पाकस्यको। पचत्रा पार कप्या नामको दो
 प्रेषयोने उनके वाय घमन किया था। अहर परंतमि
 उनको दूसरी भा कई प्रियतमा उझ संवाद सुनकर
 चितापर चडगयीं। पर दिनमें गबहाड हुआ। बिचि-
 टन २२ वर्ष वयसमें २३ दिन राजत्व कर उत्सव पर
 नोनको बली गयी।

दूसरे दिन जयदेवने नोनक, विजयार, मह प्रथम-
 ककस प्रथमिको बुला बाराबारमें डाहा था। उनको
 बन्दी करनेके पीछे राज्यमें उषो दिन मामो मानिक
 स्थापित हो गयी। विजयमह जयदेवके दक्षिणद्वय
 हुये। मन्त्र्य दारपति, मठन कम्यनपति, कचपुत्र
 उय प्रधानमन्त्री और सुबुधि अनिहम्नाता अयराज
 राजानुचाराध्यक बने थे। प्रथम पौर बनवादि चमा
 प्रायका करनेमें पूरपदपर निवृत्त हुये। केवल नोनक
 को सकल दुबटनाका मूल समझ पायी दो गयी।
 कुछ दिन पीछे दुटने परामर्गमें पङ्कुरी विजयमहने
 राज्य हरक करनेकी पायादि दद देवके कामरा का

साहाय्य लिया और शोत बीतते ही युद्धकी गमन किया था। किन्तु पश्चिमध्य गन्तित तृपारसे आच्छन्न हो स्वयं उन्हेंने अपना प्राण छोडा।

हर्षने फिर सकल बाधा विपट्टसे मुक्त हो राज्यकी चर्यातिमें मन लगाया था। उन्होंने काश्मीरमें परिच्छदादिका-उत्कर्ष वाधन और कर्णाटी मुद्राके आकारमें मुद्राका प्रचार किया। वह पण्डित-प्रतिपालक रहे। कलसके राजत्वकाल विज्ञान नामक किसी पण्डितने काश्मीर छोड कर्णाट राज्यमें जाकर महा सम्मान और विद्यापति उपाधि पाया था। वह हर्षको गुणावनी सुन शेषकी सहाय्य हुवे। हर्षने काश्मीरकी राजधानी मुद्रेश्य वस्तुसमूहसे मजायी थी। उन्होंने एक प्रमोद उद्यान निर्माण करा उसमें पम्पा नामक सरोवर खुदाया और नाना देशविदेशके पत्नी संग्रह कर उसमें प्रतिपालनका प्रदन्ध लगाया। उनकी पत्नी साधो राजकुमारी वसन्तलेश्वाने राजधानी और त्रिपुरेश्वर में मठादि बनाये थे।

हर्षके समय भुवनराजने लोहर अधिकार करनेको चेष्टा लगायी। यह सैन्य ले कोटा पहुँचे थे। किन्तु हारपति कन्दर्पके आगमनकी वार्ता सुन भुवनराज युद्धमें विरत हो गये। उसीसमय राजपुरीके राजा संग्राम विगडे थे। कन्दर्प उस समय भी कोटामें ससैन्य उपास्थित थे। हर्षदेवने उसीसे दण्डनायकको सैन्य दे भेजा था, किन्तु वह भी लोहरके पधसे जाते जाते कोटामें सरोवरकी शोभा देख कर कुछ दिन वहाँ ठहर गये। कन्दर्प अपने विलम्बके लिये हर्षदेवके कोपभाजन हुवे। पीछे हर्षका अभिप्राय समझ उन्होंने प्रतिज्ञा की थी—“हम राजपुरी जोतकर ही अन्न ग्रहण करेंगे।” दण्डनायकके सैन्यदलसे कुलराज नामक किसी सेनानीने उनका अनुगमन किया। ३०० मात्र सैन्य ले कन्दर्प विपन्नके ३० हजार सैन्य से युद्धमें प्रवृत्त हुवे। ३ पहर युद्ध होने पीछे राजपुरी हारे थे। कन्दर्पने उम युद्धमें अग्निमय नाराचास्त्र व्यवहार किया। उसके पीछे दण्डनायक युद्धस्थलपर जा विपन्न पक्षका हतसैन्य देख भयभीत हो गये। जयौ कन्दर्पने हँसकर उन्हें अभय दान दिया था। एक मास-

के मध्य कन्दर्प काश्मीरकी लौटे। हर्षदेवने आनन्दमें मिंहासनमें उठ कन्दर्पकी सम्बंधना की थी। दुष्ट मन्त्री कन्दर्पका वह सम्मान देख मिंहासनसे जल उठे। कन्दर्प उसके पीछे परिहासपुरके शासनकर्ता हुवे। कुपरासर्गसे हर्षदेवने उसी समय कन्दर्पको हारपतिके पदसे हटा लोहरराज पदपर बैठाया था। कन्दर्प मन्तुष्टचित्त वहाँ चले गये। मन्त्रियोंने देखा कि कन्दर्पने राजाके विरुद्ध कुछ कहा न था। उसीसे उन्होंने राजाको बताया कि कन्दर्पजाते समय उत्कर्षके पुत्रद्वयको अपने साथ ले गये थे। वह इनको ले कर स्वाधीन हो जाना चाहते थे हर्षदेवने हठात् उम भिष्यावाक्य पर विश्वासकर अभिघर और पट्टकी भेज दिया। कन्दर्प उक्त संवाद सुनकर समीहित हुवे। किसी दिन वह चोपर खेल्न रहे थे। उसी समय अभिघर पहुँच उन्हें वाधनेपर उद्यत हुवे। किन्तु वीर कन्दर्पके दृढ़ रूपमें पकड़ते ही उनका हाथ टूट गया अभिघरने पनायन किया था। पट्टेफिर अग्रसर हुवे। कन्दर्पने कहा—“आप राजाके शास्त्रोय हैं। हम आपके विरुद्ध कुछ करना नहीं चाहते। आप दुर्ग अधिकार कीलिये। हम चलते हैं।” कन्दर्प काशी चले गये। कन्दर्पके चले जाने पर अन्यान्य मन्त्रियोंमें गरुड पड गया। राज्यमें विशङ्कना लगी थी। धर्मजयराजकी उत्तेजित कर स्वयं राज्याधिकारकी चेष्टा करने लगे। जयराज कलसके औरसजात तो थे, किन्तु विश्वागर्भजात होनेसे धर्मजके परामर्शमें हर्षदेवकी मारदानने पर स्वीकृत हो गये। प्रयाग नामक मृत्युके नाना कौशलसे राजाकी सब बात मालूम हो गयी। वह जयराजकी मार धर्मजके उच्छेदका उपाय ढूँढने लगे। शेषमें उन्होंने कलसराजके द्वारा उन्हें हन्धयुद्धमें विनाशकर उनके रिहण और सङ्घर्ष नामक पुत्रद्वयको अपने अधीन रखा। दृढ़ प्रवृत्ति धर्मजके आतुष्य और उत्कर्ष एवं विजयमल्लके पुत्र हर्षदेवकलक गोपनमें निहत हुवे।

हलघरके पीछे लोहरके परामर्षसे हर्षदेवका मस्तिष्क विगडा था। वह एक एक कर देवमन्दिर नष्टने लगे। केवल राजधानी, शीरणस्वामी और

अप्यं पुत्र करकेको बन् दिया । मन्त्रियोंने परामर्श दिया कि आनेके पक्षमें मोत्रदेव (इषंदेवके श्वेतपुत्र) को दुर्गमें उदयपुत्र रक्षियोंके हाथ से मना कथित था । वही किया भी गया । अथपि पुत्र राजाको विपत्तता रखती थे, तथापि उच्चकने पिता मन्त्र राजा इषंदेवके यथोभूत रहे । किन्तु इषंदेवने प्रजा कुक्षामें पक्ष सर्वाय बनना भवन प्राप्त कर लिया था । मन्त्रने कथित था । मन्त्राल मेत्र राजाको अश्वमेधा को । किन्तु राजाने यात न हो उनको सुवाहं बुझाया था । मन्त्रदेव उक्त समय देवदेवतामें रहे । वह उसी क्षणमें पति मेत्रर निजान पडे । उक्त युद्धमें मन्त्र उदयराज, रमावट तथा विजय नामक ब्राह्मणदेव पौरुष श्रोत्रक चार सत्त्वक निहत हुये । पन्नापुरमें राक्षी कुक्षुमसिन्हा, राजवधू पाममती तथा सरना (सङ्घक और रङ्गकको पत्नी), राक्षी मन्दा (इक्षक और सुक्षकको मत्ता) और चण्डा नाकी धात्रीने वितापर चङ्ग श्रौतन विमलन किया ।

पिता मरनेके दूमरे दिन सुक्षकने बङ्गिपुरमें विजय सेन पर्यन्त पबिहार किया था । युद्धमें अश्वनापति चन्द्र राज पणोदमज और काचरमज मारे गये । उनके बाद सुक्षक प्रमथ* सुवर्षमानुर और शूरवर कोन राजधानी कां ुच्ये । इषंदेव उक्त समय राजधानी छोड़ उच्चकने बङ्गने गये थे । उसीके सुक्षकने पन्नाबाग राजधानीको चण्डगत किया । मोत्रदेव राजधानी प्राप्ताना होने का समाचार सुन कर उर्य मंथ्य भी लङ्कारमें प्रवृत्त हुये । उक्त लङ्कारमें मोत्रने जय पा सुक्षकको राजधानीके निजान दिया था । अश्वदिन बाद ही मोत्रदेवने सुना कि उच्चक सधैः अश्वपित्त हुए थे ।

इतर राजा इषंदेवने अश्वमेधा नदीके तीर काकर देवा कि उकीका निमित्त नौसेतु कीकर विपत्ती साह-जान रक्षा करती थे । उतर उच्चकने राजधानीको पबि-कार किया था । इषंदेव सोहरके पमिहृक चले । पक्षमें पनुचर बनके छोड़ कर पन्नक हो गये । शिवको कोरे पक्ष मन्त्रो पाम्बोय अजग और ही पक्ष पनुचर काय से इषंदेव कोहर पङ्क्ति थे । अथिकने पाम्बय देना पाडा किन्तु राजाने कोकार न लिया । उसी समय राजाके अघर पुत्र भी विद्रोही हो गये और

उनको काङ्ग इतर इतर पक्ष दिया । जब इषंदेव प्रोचिकदेवके मन्दिरेके निजट पङ्क्ति, तब उक्तका कनिष्ठ श्यागा मसुराम जानीको कण भाग गये । इक्षक मायकने भी राजाका साथ छोडा था । उनके साथ पबिसे बन्ध प्रयाग रहे । इषंदेव फिर क्ता करती । प्रोचकरकायि जिये निजटवर्ती अमगान परष्प के मन्त्र सोमेश्वर मन्दिरेके निजट गिय नामक विषो तपशीके कुटीरमें बन्धने पाम्बय किया था ।

उतर मोत्रदेव राज्यमें भागे थे । इक्षिकर्ष नामक स्थानमें वह २ । ३ पाखागोही पनुचरोके साथ पङ्क्ति । वहां वह विद्रोही इक्षकर्षक पाक्षागत हुये और पुत्र में अपने मातृकपुत्र पङ्क्तिके साथ मारे गये ।

यथाक्रम उच्चकके साथ सुक्षक मिले थे । उच्चकने सुना कि इष देवने विज्वरनमें शान किया था । उनने इषंदेवको शेर करकेके लिये कामरतोका बनाया था । लक्ष्मीने बहु पनुचरनाथे राजाको पङ्क्ति किया । पुरिकु माच महाजनाथे इषंदेवने पनिकोका मारा था । शिव को कई कोनोंने मिन कर उन पर पक्षाघात किया । पक्ष साम्बय शृवाक कुक्षुरको मति काकपाधर्म पतित हुये । यथासमय इषंदेवका सुपुत्र उच्चकके निजट लाया गया था । उच्चक भूम कर उक्त पौर शिव न सके उक्तने पञ्चेद्विजिया करनेका पारिष्य भी दिया न था । शिवो काटुरियाने उनके देहला लण्डा किया ।

इषंदेवके पथीन वितनमोती १०० तुक्षक घोडा रहे । उक्त समय तुक्षक मन्त्रा प्रतापधानी और विद्वान् राज्यके पथीश्वर हो गये थे । यथा तब कि इष के पम्पाचारसे काश्मीरको बहुतपती प्रजा श्वेत्पथेयमें काकर रहने लगी ।

उदयराजके बर्गमें ६ राजाकोने ८० वर्ष ११ मास २३ दिन राज्य किया था ।

महाराज इषंदेवके पीछे उच्चक राजा हुये । सुक्षक ने पौरुषमें राज्यके मन्त्र पम्पाचार पारष्प किया था । कामरराज्यमें उक्तका पम्पाचार पबिष न चका । उसी में इक्षिक उच्चकको कामर राज्य कनानिका परामर्श दिया था । उनने उक्तका कार्यमें परिपत्त न किया लही किन्तु श्याकके पम्पाचारसे राज्य पबिष देव उनको

लोहर राज्य देकर वहाँ पहुँचाया था। सुस्मन धनरत्न हय हस्ती, अस्त्र-शस्त्र और उत्कर्षके पुत्र प्रतापकी साथ ले चल दिये। कनक उसी स्थानमें बन्दी थे। पश्चिमध्य वह भाग खड़े हुये और काशी जाकर गङ्गा जनमें डूब मरे। उधर जनकचन्द्र राज्यमें ऐसा कार्य करने लगे, कि वही सबके ऊपर समझ पड़े उच्चन नाममात्रको राजा रह गये।

उरगागज अभयकी कन्या विभवमती हर्षदेवके पुत्र भोजदेवकी पत्नी थीं। भोजदेवके अनेक सन्तान होकर मर गये, केवल २ वर्षके कोई पुत्र जोधित रहे उनका नाम भिष्माचार था। जनकचन्द्रके अनुरोध और कुछ कुछ दयाके परवश उच्चलने उस शिशुको बिनाग न किया। उस समय समझ पडा जनकचन्द्र जिन-भावसे कार्य करते, उससे वह स्वयं राजा होनेकी आशा रखते था उक्त शिशुको राजा बनाना चाहते थे। उच्चलने शेषमें जनकचन्द्रको भी हारपतिके पदपर अभिषिक्त कर राज्यसे दूर भेज दिया। भीमदेव उससे चिढ़े थे। शेषकी जनकचन्द्रने भीमदेवका युद्ध होने लगा। संग्राममें कालपाग नामक भीमदेवके किसी सेनानीके हाथ जनकचन्द्र मारत और भीमदेवके हाथ निहत हुवे। गगा और सड्ड नामक जनकके दो भ्राता भी मारत हो लोहरको भगे थे। संग्रामस्थलमें उच्चल ससेन्य उपस्थित रहे। उनने कोई पक्ष लिया न था। कारण जनककी क्षमताको खर्च करना उनकी भी ईप्सित रहा। शेषकी उच्चल क्रमगः राज्यमें शान्ति स्थापन कर मडरराज्य चले गये। वहाँ उनने विद्रोही डामरोंके प्रधान कालिय प्रभृति और हमारराजको मारा था। फिर देशको शासन कर उच्चलने प्रस्थान किया। गगा उसी समयसे उनके प्रियपात्र बन गये।

उच्चलने दग्धावशिष्ट नन्दीक्षेत्र नगरके चक्रधर, योगेश और स्वयम्भू मन्दिरको पुनर्निर्माण कराया। हर्षदेव कर्ष्क औपरिहासके शवसूतिं विनष्ट हुयी थी। उच्चलने उसे फिर प्रतिष्ठा किया। त्रिभुवनस्वामीके मन्दिर और तत्संलग्न शुक्लवली प्रासादकी भी हर्षदेवने हतथी कर डाला था। उच्चलने उसे फिर पूर्वकी भांति धनगाभी और सौन्दर्यपूर्ण कर दिया।

जयपीड कन्नोजसे जो सिंहासन लाये थे, उच्चलने राजधानी अधिकार करते समय वह कुछ कुछ जल गया। उनने फिर उसे नूतन निर्माण कराया था।

उच्चलने कायस्थोंका अत्याचार देख सर्वथा समझ कायस्थोंको राजकाजसे अलग कर दिया। जोष्टधरादि दुष्ट कायस्थोंकी ययारीति शान्ति मिली थी। कम्पनापतिके दंगक महाप्रतापशालो होनेसे उच्चलके क्रोधभाजन बने और विपनाटाको भाग जाते भी खुशों द्वारा विनष्ट हुवे। हारपति रक्षक उसी दापसे विजयक्षेत्रको निजाने गये और उच्चलकी टी हुयी सामान्य मंत्र्यक मुद्रासे जीविका चलाने लगे। माणिक्य, तिनक, जनक प्रभृति वीर भी उसी प्रकार देशसे निकाले गये थे। फिर सड्डके पुत्र रड्ड, कुड्ड और व्यड्ड मन्त्री हुवे। यम, ऐन, अभय और वाण प्रभृति अपरिचित व्यक्तियोंने हारपति प्रादि उच्चपद पाये थे। हह कन्दर्प भी कार्यग्रहणाद्ये आहूत हुवे। किन्तु उच्चलको मति विगडी देख वह न गये।

उधर सुस्मनने लोहरमें रह राज्य लोभसे उच्चलके विरुद्ध अस्त्रधारण किया था। वराहवार्त नामक स्थानमें दोनों भ्राताधर्मोंमें प्रथम लडाई हुई। सुस्मल पराजित हो लोहरको भगे थे। उच्चलको किन्तु संवाद मिला कि सुस्मल दूसरे दिन लौटनेवाले रहे। उसीसे गगाचन्द्रके साथ एक दल सैन्य भेजा गया। पश्चिमध्य सुस्मलसे लडाई होने लगी। लडाईमें सुस्मलके अच्छे अच्छे योधा निहत हुवे। शेषकी उच्चलने भी क्रमराज्य पर्यन्त भ्राताका अनुसरण किया था। सेल्यपुरकी लडाईमें हार सुस्मल लोहरके पार्वत्य पथसे स्वरराज्यको लौट गये। उच्चलने सेल्यपुरके डामरराज लोट्टकको मार डाला। कारण उनने स्वरराज्यसे सुस्मलकी भागने में सहायता की थी। उच्चल भ्रातृस्रेहमें पड लोहर पर्यन्त सुस्मलके पीछे न गये।

उधर भीमदेव राजाने कलशके एक सन्तान भोजको सिंहासन पर बैठा दरदराज जगददनको साहाय्यार्थ बुलाया था। दर्शनपालके भ्राता सच्चपालभी हर्षदेव-पुत्र सङ्घणसे मिल गये। दरदराज राहमें उच्चलसे लड़नेके लिये उनकी ओर बढ़े थे। किन्तु उच्चलने उन्हें

बन्धुमादये प्रहय कर मिह लयामे स्वराज्यको भौटा टिया। सङ्घरामो टरटगुहके माह चली गयी। भोजराज्य होर अरिमेयाका मनी छी। किन्तु पश्चिमय बह वल्ले मये कङ्गे टव्व भौ भानि शान्ति मिलौ छी। देशेवरके पुत्र विह्वने छामरौके भावाखन राज्यनामको बिहा लगाय, किन्तु इनके कुह बन न पडा। सामन्त नामन बिनी अरि अरिभक्तानि अपनेको प्रसन्ना पत्र बतार राज्य दामेको बिहा भौ छी। एतेक मिहोच राजाबनि भौ समथी नाराज्य करना चाहा। किन्तु राजबन्धुन भौयलने पकड समथी नाक बाट छानी।

बस समय मिहावार (भोजरके पत्र) किजोर पवण्यापक छे। उहबने सुना कि बह राजो अवमनी पर पामर छी। समथी बनको बिनाय करनेने पाछा निबन्धो। खानभोन समको बिनप्राप्ति छरकोतमे फेर टिया। माखइमसे बह बिनी ब्राह्मण द्वारा रचित हुने। माधोराजकथा टिया उर मराह पर मिहा चारको अपने हर से मयी। फिर उननेगिरावटरगुनेके जिडे उनको मानवराज्य भेज टिया। मानवराजने परिचय पा मिहाचारको सहना मिडना और पडना निबन्धना सिखाया जा।

इसी समय उहबने पिता और समिभोके नाम पर एक एक मठ स्थापन किया। राजी अवमनोने भोएक मठ और एक बिहार बनवाया जा। समथे बाद बहल समराजके बहटबन नामक तोपको दुर्गन करने मये। पश्चिमय चल्ताइ हस्तुयोंने इनको ब्राह्मण बिबा जा। साबने पश्चिम चलुन न रकनेसे बह मागने पर बाह्य हुने। शिवको बनमध्य दिक्कम चोनेसे इनने छने लंयलने प्रीय किया। उबर नयरम पनाड पडुवा कि बहलको चल्ताकोने मार डाला जा। कामदेव रंशोय रकडे जाता नगराज्य कुह नयरमें शान्ति स्थापन कर राज्यकाभाय परामश करने मरी। कावल्को परामशे कुहइन को राजा बननको बिहा बनयो भौ। किन्तु उहसक अतिर रकनेका प बाद चुन बह उनको मार डालनेको चिन्तामे पड गये। उबर उहबने बिनी कारक बहमतो पर बिरह को बतुलाको राजकथा बिब्लनासे बिबाइ कर लिया जा।

इसी समय राजपुरोके राजा न पामसिइ मर गये। इनके पुत्र भोमपान ज्येष्ठको बन्दी बना राजा हुये। इसलिये उहब जूइ हो लहुने चले छी। बिगनु भोमपानका राज्यासन और प्रशान्तिता ऐक इनने उनके नाक लौठ कन्धाका विवाइ कर दिया। फिर उहबने भोगमैन पर बिरह को उनको पदच्युत किया जा। समथे बाद भोगमैन एवं रकड और अरु तवा मरह कर भोगाने मिनकर उहबको मार डालनेके जिडे चल्ताका को बना दिया। राजा बिनी रातको प्रियतमा बिब्लनासे कर जाते छे। इसी समय सखन सुयंतोने मिनकर बनपर पाहामय बिबा और टप टंठरि पकड चना मूमिपर उनको गिरा दिया। शिवको मरहके पञ्जाताने नम्रोरिय ८० मीबिक्ताम् पौव मापको यज्ञपत्रोके दिन ३१ वर्षके वयसमें महराज उहल इहकोबने चम बने।

रकड रकड बसेबर समी रातको मिहापन पर डेठे छे। इसीमे इनके बन्धु समसे लड पड़े। लड लड सुह जोनि पर रकड मारि गये। रकडने यज्ञपत्र उपाधि चारबकर पलको एक पहर और एक दिन राजस किया जा। उसके बाद गर्मचम्ने बिद्वोचियोमें बिनीको मार किरीको पकड और बिनीको रियसे निकाह डपूइ मिटाया। राजी बिब्लना चिता पर चढ गयीं।

सबने गर्मकी राजा बनना चाहा जा। किन्तु मगने पवनी चोरने उहबके मिह पुत्रको राज्य देनेका प्रस्ताव किया। महराजके धोरस और राजो खेताके गर्मके सङ्घ लोठन एवं रङ्गन नामक तीन पुत्रीने बन्ध लिया जा। उनमें सङ्घ पक्षी हो मर गये। महराज (रकड)के मयसे लोठन और सङ्घने नवमठमें पान्धय किया जा। बिद्वोच मिटने पर तन्दिहोंने कर्क गर्मके निकट ले जाकर उपस्थित किया। गर्मने सङ्घ का राजा बनाया जा। इनके बाद गर्मने सुधयके निकट पूत भिजा। बह काठमौरके पश्चिमय चले छी। किन्तु पश्चिमय सङ्घके राजा जोनेका संवाद मिला। सुधय उह समय राजभोमसे काठवाट पडुछे छी। गर्म भी समथे चले गये। मोगमैन और चल्ताका नि सुधयके साथ याग दिया जा। किन्तु मोगमैन पधमें

उसके बाद मन्त्रि हुये। जिसीदिन राजा ज्ञानागा रमें उनको ज्ञानि श्रेष्ठ विनये थे। उनमें उनको तत्काल निरक्षर कर बन्धो बनाया। बन्ध्याच विदेश प्रथमि मयंके पुत्र शौर उनको पत्नी मन्नादेवो सब सोम पकड़े मये। ३ मास पीछे (८३ बौबिकान्दको मर्गादि राजाके पादेयसे निहत हुये।

फिर मन्नादेव, सुभौहर, विजय प्रथमि सबके मिल कर मिशाधारका पत्र परमेश्वरन पूर्वक सुस्वयम्के साथ बिरहपुर शौर मरानरिदु स्नान पर भङ कर राजधानीमें प्रथम बिठा। राज्य मिशाधारके परिचारकमें गया था। राजा सुस्तनमें परमिय (८६ बौबिकान्द) को पचहावस मास बन्धनराज्यमें पाचय किया। तिसबसिंहने समस्त पचमान मूल उन्हें पकड़े रखा था। तिसब केस्य संघ कर फिर बुढका उपयोग बनाने लगी। उधर नवराज्यकी बन्ध्याके साथ मिशाधारका विवाह हो गया। उसके बाद मिशाधार राजसिंहासन पर बैठे।

कुछ दिन बाद मिलने हो सुस्वयम्के विरह पामि विरहको भेजा था। पचौस, बिठोला शौर सदाशिव नामक खानमें बुढ हुआ। विरहके पराजित होने पर सुस्तनने मन्पुं जबजाम किया था। मिशाधार भाग गये। किन्तु पचास दिन बाद सुभौहर शौर मिशाधार मिल बितपयेदमें जय पा राजधानीके पमिसुख पचहर हुये।

उसके बाद ज्ञानागानोंमें बुढ हुआ। मिशाधार या सुस्वयम् कोई मन्पुं जय पा न सका। सुस्वयम्के पतुपकिति कास ज्ञानर राजधानीमें ज्ञाना-स्थानों पर पाक लगाने लगे। बितपयेके समय पारभितने काठ निर्मित कर रहे, प्राङ सभी जल गये। 'निरौह प्रजा राजधानी छोड़ मरने लगी। सुस्तन राजधानीको छोड़े। उसी समय उत्पल ब्याघ्र प्रथमि साजिय कर राजाके माचलायको चेठा करनी लगी। सुस्वयम्के जन 'का पामास पाया किन्तु बिन्हास पाया न था। जिसी दिन वह ज्ञानागारमें गया रहने लगे। उसी समय उत्पल शौर ब्याघ्रने आकर देखा कि राजाका कोई रहस्य न था। जयलने दार बन्द कर दिया। सुस्वयम् जनका

खाण देव "राजदोह" कह कर पिन्हा ठठे। विन्तु उनके लोच्य पाषातमें महाराज बिरदिनके निन्दे निद्रित हुये। जनरा बिन्हामन्नाच मिशाधारके पाष भेजा गया। राजपूत सिंहरदेवको ठठ व वाद मिशा जा। सिंहरदेव राजा बने। उन्होंने मन्त्रियोंके परामर्श से राजधानी सुस्तन रहनेको चागे शौर पचरी बेटाये ये। दूसरे दिन मन्नाङ्क कास मिशाधारने बनेस्य नगर में प्रवेग किया। उसी समय मयंपुत्र पचबन्ध विचार संन्य से राजासे जा मिले। शौरतर बुढ हुआ था। मिशाधारने गढ़बड़ देव राजधानीको परित्याग किया। उसके बाद विजयसेव प्रथमि कई स्थानों पर शौरतर लड़ाई हुई। किन्तु मिशाधारको मनस्वान्तना सिद्ध न हुई।

सुस्वयम्के पुत्र जयसिंहने राजा हो राज्यभोगिनीको शौर इष्टियात तो किया किन्तु प्रतीहार पर राज्य का प्रभान मार डाल दिया। प्रतीहारने गान्धि ध्यापन के लिये राजबिहोदिकोंने सन्धि ली थी। जयसिंह पनीक कीर्ति कर गये। उनके समय काङ्क पश्चिमने राजतरङ्गिको नामक संस्रान इतिहास प्रचयन किया।

जयसिंहने राजा हो २२ वष राजत्वके बाद ३० बौबिकान्दको पक्षुचको हाथ हाइयोके दिन परभोड कमन किया। वह नियत प्रभागपत्रे इतिहासमें तत्पर रहे। उसके बाद जयसिंहके पुत्र परमा युक्त जामोरके बि हासन पर बैठे। उन्होंने पचके पत्नी दशपादि काय पन्निहाय पुत्रक क्षिमी न किसी प्रकार लोच बनडोव मरनेको चेष्टा की थी। पचमीन को उनके भूत मन्त्रियोंने बालककी मर्ति उन्हें सुस्तना शौर मय दिना समस्त जन पचहरक किया। वह ८ वष ६ मास १० दिन राजत्व कर ३० बौबिकान्द को कासघातमें पतित हुये। परमायुक्तके बाद उनके पुत्र बतिदेवने राजा हो ७ वषर राजत्व किया बति देवके मरने पर बोप्यदेवकी राजसि हासन मिना जा। उन्होंने ८ वष ३ मास २३ दिन राजत्व किया। वह सुभौके परामर्श रहे। फिर उनके सनिह आता जहादेव राजा हुये। उन्होंने १८ वष १६ दिन

राजत्व किया था। वह भी प्रतिशय मूर्ख रहे। छुछ और भीम नामक २ धूर्त ब्राह्मण उनको बहुत प्रिय थे। फिर उनके पुत्र जगदेवने राज्य पा १४ वर्ष ३ दिन राजत्व किया। वह विनयी और प्रजाप्रिय थे उनने स्त्रीय राज्यके मध्य सुश्रवस्थाका स्थापन और राज्यका समस्त गण्य उद्धार किया। राघन नामक उन के सर्वगुणाकर मन्त्री रहे। उनके मन्त्रवलयसे राजाने समस्त शत्रुवर्गका विनाश किया महागज जगदेवने रक्तपरम घर्षेश्वरका प्रासाद बनाया था। द्वारपति पद्मने उन्हें गुप्त भावसे विष दे कर मार डाला। जगदेवके मरनेके पीछे उनके पुत्र राजदेवने राजा हो २३ वर्ष ३ मास २७ दिन राज्य शासन किया। उनने विद्वेषातक पद्मके भयसे काठवाट नामक स्थान पर मङ्गल दुर्गमें आश्रय लिया था। द्वारपतिने जाकर उन्हें चारों ओरसे वेष्टित किया। द्वारपति प्रसन्न हो लड रहे थे। उसी समय किमी चण्डालने उन्हें मार डाला। राजदेवने शत्रुको विनाश कर स्त्रीय प्रजापुञ्जकी वंशीय निहतसाध किया।

उसके पीछे उनके पुत्र संग्रामदेव सिंहासन पर बैठे थे। उन्होंने १६ वर्ष १० दिन राजत्व किया। संग्रामदेवने विजयेश्वर नामक स्थानमें गोब्राह्मणगणके निमित्त २१ उत्तम छत्रशाला बनायी। वह सर्वदा प्रजागणके मङ्गल साधनको व्यस्त रहते थे। कछप वंशीय राजादोंने उन्हें मार डाला।

संग्रामदेवके मरनेके पीछे उनके पुत्र रामदेव राजा हुवे। उन्होंने स्त्रीय प्रभूत शौर्यवलयसे समस्त पिष्टशत्रुवर्गको विनाश किया। रामदेवने लेदरीके दक्षिण पार सङ्गर नामक स्थानमें खनामचिह्नित दुर्ग बनाया और उत्पलपुरके विष्णुका जीर्ण एवं भग्नदशापन्न प्रासाद उत्तमरूपसे सुधरवाया था। उन्होंने २१ वर्ष १ मास १३ दिन राजत्व किया। चन्दनवृक्षपर पुष्पकी भांति विघाताने उन्हें पुत्र दिया न था। उनने भिषायकपुरस्थित किमी ब्राह्मणके लक्ष्मण नामक पुत्रको गोद ले काशमीर राज्यपर अभिषिक्त किया। उनको समुद्रामात्री महिषाने वितस्ताने नदीके तीरदेश पर समुद्रामठ बनाया था।

रामदेवके पीछे लक्ष्मणदेव राजा हुवे। उनके राजत्व

काल शत्रुघोने राज्यमें विषम उत्पात आरम्भ किया था। महिलानाम्नी उनकी पापपरिग्रह्या महिषीने स्त्रीय शत्रुनिर्मित मठके पार्श्वदेशमें एक नूतन मठ बनवाया। लक्ष्मणदेव १३ वत्सर ३ मास १२ दिन राजत्व कर तुरुष्कराज कज्जनके हाथ मारे गये।

लक्ष्मणदेवके परलोक गमन करने पर अन्य वंशजात मोतिविगारद लेदरीनाथक सिंहादेवने काशमीर राज्यके राजा हो १४ वत्सर ५ मास २७ दिन राजत्व किया। उनने गुरुके माघ मिल ध्यानोद्धार नामक स्थानमें नृसिंहादेवका मन्दिर बनाया था। उनके मन्त्रीपदेषा गुरुका नाम गङ्गराम्नी रहा। राजाने उनको यष्टादश मठका ऐश्वर्य दक्षिणास्वरूप देकर पूजा था। किन्तु गेपकी सिंहादेव चाम्बिकाबुद्धि और विनयादि विसर्जन कर भगिनीके साथ आसक्त हुवे। उनके भगिनीपतिने हलपूर्वक उनको मार डाला।

पनन्तर उनके स्त्राता सुहादेव राजा हुवे। उनके निकट वृत्तनाम करनेको दिग दिगन्तरसे अनेक ब्राह्मणादि प्रजाने जाकर आश्रय लिया था। वह पञ्चगहर देशमें पार्श्वकी भांति पूजित हुवे। उनके पुत्र वम्बुवाहनने गभरपुर स्थापन किया था। उनका राज्य १८ वर्ष ३ मास २५ दिन रहा।

सुहादेवके मरने पर खेच्छुराज हनचने जाकर उनका राज्य नाश किया था। दानशील भोट्यशोद्धव (तिब्बत देशवासी) रिक्षण काशमीरराजके सिंहासन पर बैठ गये। वह इन्द्रतुल्य पराक्रमशाली रहे। उनके शासनकाल प्रजाकुलकी सन्तोषवृद्धि और उन्नति साधित हुयो। उनने ३ वर्ष २ मास १८ दिन राजत्व कर ८८ लौकिकाब्दकी परलोक गमन किया था। फिर उनकी पत्नीने ४ मास तक मन्त्रीके साथ राज्य किया। उनने काशमीरमण्डलमें कीटा खनन किया था। उसी समय सिंहादेवके ज्ञाति उद्यानदेवने राज्यपद आकाङ्क्षा कर राज्य पा १५ वर्ष १ मास १० दिन शासन किया था। उनके गतास होनेपर कीटादेवी ६ मास १५ दिन रानी रह्यो।

उसके बाद शाहमोर नामक मन्त्रीने अन्यान्य मन्त्रियों और विप्रोंके साहाय्यसे सपुत्रा राजीको मार स्वयं

राज्यमाप्त किया। उसी समयसे काशीर राजा सुसलमान शाहको भी बंधीन हो गया। शाहमीर समय उद्दौल नामसे विख्यात रहे। पञ्चगङ्ग देवघात १८ सुसलमान काशीर देखिके सिंहासन पर बैठे। उनमें ताहराह कुतुबशाह समय उद्दौल काशीरके प्रथम मुसलमान राजा से बह प्रतिग्रह बलमागो रहे। उनमें मिश्रपमहोको मार बलपूर्वक राजा किया था। मसल उद्दौलको मरनेपर उनसे पुत्र प्रमयिहने भाग्य ज्ञापाया। उनसे १ वर्ष १० मास राज्य कि। पननार उनसे कनिष्ठ भ्राता यसा उद्दौल राजा हुई उनसे ११ बरस ११ मास १५ दिन सुनिग्रमि प्रजापालन किया पननार उनसे पुत्र गहा उद्दौल दिन विजयी राजा हुये। उनसे २० वर्ष राज्यःपुनपूर्वक बमसु राजाको भी माघ प्रतिग्रहाको प्रकाय किया था। फिर उनसे कनिष्ठ भ्राता कुतुब उद्दौल १५ वर्ष ३ मास ३ दिन तक राजा रहे। कुतुब उद्दौलके बाद बसके पुत्र सिहन्दरने २२ वष ८ मास ६ दिन राज्य किया। उनको बहुराज संकत मुसल पन्तिमें येक बका जाले थे। सिहन्दरके मरने पर उनसे पुत्र पसी शाहने राजा हो ६ वर्ष ८ मास राज्य किया। पसी शाहके बाद प्रजादिने पुञ्जबसे उनके लडोदर प्रकाशक बिज लक्ष्मीय-दौलको राजा मिल गया।

बह प्रतिग्रह विद्योत्साही रहे। अपने निगट बिद्योके हृदयपादिषो कविता यथाकोई लक्ष्य ह मित्य ब्यक्ति करनीके बह बहावीन्य पुरस्कार देते थे। सिन्धु और हिन्दुवाङ्गि देय बबबर नकोमि विविध मिश्रसमन्वित एक यन्त्रागार निर्माच कराया। उनसे पादम खान् हाजीखान् और बरहमखान् नामक तीन पुत्र हुए। हाजीखान्से बरहमखान् लड पड़े थे। उसमें हाजीखान् जीत गये। बिज बल-पच-दौलने राज्यका बहुविध मङ्गलकर कार्यसाधनकर ३२ वष राज्य मामनपूर्वक मरोर जोड़ा था। उनसे बाद हाजी खान् राजा हुए। उनमें उत्तरपर "कैदरशाही" नाम पहित कराया था। रिशेतर नामक कोई नापित राजा को पञ्जल मिय रहा। बह मन्ना को प्रजाको प्रतिग्रह बह होता और राजाका सुकामसे फाव दौल दु ली

प्रजाके लक्ष्य लेता था। हाजी खान्से जौय बरसेपारो और मसी प्रकृतिको प्रवर्तनाथे हिजोको सताया और अपनी पित्रप्रकृत्यभक्ति ब्राह्मणोको दूर भगाया। उनसे १ वर्ष २ मास राज्य किया।

बाद उनसे पुत्र बसलगाह राजा हुए। उनसे दिहामठके निगट मनोहर राजबागो बनायो गी। वहाँ उनको मानने एक बरसेयाता मी निर्माच करायो। राजा बसल खान्ने पनेक मसजिद बरसेवास प्रकृति बनाये थे। यकला नकोमि मठ, अथहार दान देव मन्दिरनिर्माच पतिबिपूजा पादि उष्णाय द्वारा अपनी राजसम्पत्तिना ज्ञापय सम्पादन किया। वह पनेक मङ्गल पट समकृते थे। बसल संज्ञितयाक्षर मी रहे। बह लपे लसम लपमे राम पाहाय कर सकृते थे। बनेके समय प्रजाने सुखमें आसातिपात किया। पितृय बहरामखान् राज्यकामको पालनमें बसलसे लड़कर हारे थे। उनसे ६० खीबिखान्को पेत्रमास १२ वर्ष ३ दिन राज्य मोमके बाद प्राय त्याग किया।

बसलके बाद उनके पुत्र सुबखद माघ काशीरका राज्यनाम कर २ वर्ष ७ मास राजा रहे। उनका राजा मंत्रियोको कुछ पमिसन्धिसे जोल उठा था। वह सेबहकयोवोके दीक्षित रहे। लसीसे सेपदोमि उनसे राज्यमें प्राबन्ध पाया था। सुबखदके समय मन्ने और नेयदोका महाबिप्लव उपकृत हुआ। बाद उनके पित्रय पतेहमाहने काशीरका सिंहासन पारोहय किया। उनके समय प्रजाने लक्ष्मीरित और उवादादिपादि बिभूवित थे। सुबखे समय बिताया था। वह ८ वर्ष १ मास शासन कर राजाबह हुए। उनके कोरे संश्रुवैयीय व्यसनयूय सीमराजानक नामक बिनको मन्ने रहे। बिन्दु उनमें मोर मीकके पादेबसे ब्राह्मणोंसे पूवप्रदल मन्त्र मूमि चीन देवा ब्यक्तिम यत्नोको प्रवान बनाया था।

पननार सुबखदशाहने पुनर्बार काशीरके राजा हो ११ वर्ष १० मास १० दिन शासन कराया। उनके समय बच्छमहादि मन्नेदोमि सीमराजानकबदर्थक बिभुत बिन्दु बिबीका पुनबहार किया था। बिन्दु पाका मोर पचमहने यह बह कर निर्मेतादि ब्राह्म-

धो'को मरवा डाला—“हे विप्र लोगो! इस कनिष्ठुग में तुम्हारा ब्रह्मतेज कहां है? वा आचार हो कहां है?” उसी समय सुहृद्मद् गाहकी फतेहशाहका सत्युमवाद मिला था। उनके समय अन्य किसी चक्रवर्ती राजा गजपति मिहन्दरने काश्मीरराजा आक्रमण किया, किन्तु सुहृद्मद्ने उनको हरा दिया। फिर फतेहशाह के पुत्र खान् पितृव्य राजा पुनः पानिकी आगामे काश्मीर पहुँचे। उनने सुहृद्मद्की राजाश्रय किया था। उसके काश्मिरचक्रने राजाश्रीमन्नी काश्मीरका राजा बनाया। उसी समय काश्मीरराजमें तुरुष्क राजका विषम उपद्रव उठा था। प्रथम मार्गेश्वर अष्ट-रने सुगलराज वावरकी निकट गमनपूर्वक काश्मीर राजा जीतनेके लिये सैन्य मांगा। वावरने उसको एक सहस्र सैनिक दिये थे। अष्ट-रने फतेहशाहके पुत्र नालुकखान्को आगे रख गिरिद्वसे काश्मीर राज्यमें प्रवेश किया। उनने तुरुष्क सैन्य द्वारा काश्मीर जात नालुकशाहको राजा बना दिया।

फिर सुहृद्मद् गाहके नोहरका राजा होने पर तुरुष्क-सैन्य अपने स्थानको चला गया। नालुक शाहने १ वर्ष राज्य कर सुहृद्मद्से र्थीवराज्य पाया था। ५ वर्ष पीछे पुनर्वा सुहृद्मद् राज्यपर अभिपिक्त हुवे, उसके पीछे वावर मर गये। उनके कामरान् और हुमायूँ नामक पुत्रद्वयने काश्मीरराज्य नाम किया। कुछ दिन पीछे महरम नामक सेनापति बहुतर सैन्य ले काश्मीर जीतने गये थे। पौरगणने भयसे पार्वत्य प्रदेशको पलायनपूर्वक गुहादिमें आश्रय लिया। उस समय पुरीको शून्य देख सुगलोंने राजधानीके सकल गृहादि जला दिये और सहस्र सहस्र व्यक्तियोंके प्राण विनाश किये। फिर काश्मीरमें काशगरोका उपद्रव उठा था। उससे तुरकोने बहु ग्राम नगरादि जना डाले और धन रत्न एवं रमणीय रत्न ग्रहणपूर्वक स्वदेश की चले गये। उसके पीछे काश्मीरराज्यमें भयानक दुर्मिच पड़ा था। सुहृद्मद्शाहने फिर ५ वर्ष राज्य कर कलेश्वर परित्याग किया।

अन्तर उनके पुत्र गम्भशाह राजा हुवे। उनके समय काश्मिरचक्रपति काश्मीर आक्रमण करने जैन-

पुरसे चल पडे। बाद सन्धिसूत्रमे युद्ध बन्द हो गया। गम्भशाहके बाद उनके भ्राता इम्मा इम शाह राजा हुवे। उधर सुगल सेनानी गालुकशाह पापण्ड देग जीतने सैन्य सृष्ट चले गये। नालुकशाहके राजत्वकाल काश्मीरकी प्रजाने सुख स्वच्छन्दमे दिन यापन और समस्त वैदिक क्रिया कलाप निर्विघ्न निर्वाह किया था। उनके समय ग्राम विभाग पर क्रमेवारिगमें विरोध हो गया। उसी विरोधमे मिर्जा हैदर और दौलतखान् लडने लगे। एक मास लडाईं होनेके पीछे दौलत (गालीखान्) जात थे। उसके पीछे उन्होंने राज्यगमन किया। उनके समय काश्मीरमें भयङ्कर भूमिकम्प हुवा था। उनमे अनेक स्थान विषय-युक्त हो गये। किसी दिन दौलतखान्ने तुलमुत्त स्थान पर अभिमन्यु नामक महातया साधुके निकट जाकर पूछा था—“हमारा राज्य किस प्रकार विस्तृत होगा?” उस पर साधुने उत्तर दिया—“ब्राह्मणसे वार्षिक कर न लेने पर तुम्हारी प्रभोष्ट सिद्धि होगी।” यह सुनकर दौलतने कहा था—“हम स्नेच्छ हा कर प्रापको प्राप्तमे किस प्रकार ब्राह्मणोंका कर निवारण करेंगे?” उस पर साधुने काधाविष्ट हो गाप दिया—“अल्पदिन-के मध्य ही तुम्हारी राजयो विगड जायेगी।” उसीसे दौलतकी राजसम्पत्ति विनष्ट हो गयी। उसके पीछे हजीव नामक किसी व्यक्तिके एक मास राजत्व करने पर गालीखान्ने राज्य ग्रहण किया था। किसी दिन उनने गणकोंमे पूछा—“हमारे राज्यमें भूमिकम्पादि दुर्निमित्त क्यों होते हैं?” उनने उत्तर दिया—“आपके राज्यमें कोई घोरतर लडाईं होगी।” कुछ दिन पीछे मिर्जा हैदरके सेनानी हहत् सैन्यदन ले काश्मीर जा पहुँचे। गालीशाहने ससैन्य राजविर नामक स्थानमें जा युद्ध घोषणा की थी। उस लडाईंमें हैदरके सेनानी गालीशाहका सागरसदृश सेनासमूह देख भयसे भाग गये। उसके पीछे गालीशाहसे चक लोगोका युद्ध हुवा। उसमें उनने हमेचकको मार जय पाया था।

सुगलराज शाह अष्ट-र मालीके बहुतर सैन्यके साथ काश्मीर जय करनेकी उपस्थित होने पर दौलत

सहजो विभाके समभिवाहार परिवाधपुरके निवृत्त
 लड़ाई करेको सख्युखीन हुये। पोरतर लड़ाई हुई
 थी। उसमें मुनबाराजको बहुतथो सेना मारी गयो।
 वह अपने प्यानको मरी से। शीघ्रत प्रतिपद्य निहर
 रहे। किसी दिन एक बोरानिके पपराधमें उनमें एक
 बालकके दोनों हाथ काट जाने से। फिर उनके प्रताप
 यानो पुत्रमें मातुलके प्रति कोई पन्थाचार श्रिया ना।
 दौलतमें लमे मो मार डाला। उनके राज्दमें १८ मन्त्री
 रहे। पबरीपत्रो बह गणित कुहरोगसे पाल्कालत हुये।
 उनमें बहकोकर्म मरकपय्याका मोम पक्षत्व पाया ना।

दौलतके बाद उनके भ्राता हुसैनखान् राज्दनाम
 किया। वह दाता पोर प्रकाररक्षक थे। खान् जमान्
 नामक मन्त्रीने उन्हें हटा कर्य कोठे दिन राज्य किया।
 वह प्रति दिन सौ लोकोको बह करता था। यहाँ तक
 कि दिलावरखान् द्वारा उनमें अपने पुत्रको सौ मरवा
 डाला। हुसैनखान्ने फिर जाकर मन्त्रिको मारा ना।
 पीछे पपकार रोमसे हुसैनखान्का पन्थु, हुआ। उनमें
 ७ वर्ष राज्य किया था।

फिर उनके भ्राता पनोखान् राजा हुये। वह प्रजा
 को सुखी करन पर तत्पर रहे। उही समय पोर दुर्मिच
 पड़ गया। ८ वर्षके राज्य बाद पनोखान् मरी थे।

पनोखान्के बाद उनके पुत्र यूसुफयाहने राज्य
 पड़क किया। किन्तु उनके पिदय पन्थुखान्की
 बियो दूतसे कहला भेजा था—“भ्राताके मरने पर
 भ्राता ही राज्यपद पाता है। पाप को राज्यकामको
 पामा करति है।” सिबन्दरपुरमें पन्थुख पोर यूसुफ
 को लड़ाई हुई। पन्थुखने प्राक्स्थान किया था। उनके
 बाद सुवारखान् दूहकसे लड़ने लगे। यूसुफके पैना
 पति सुबन्दखान् उन लड़ाईमें मारी गये। उसके बाद
 सुवारखान् काश्मीरके राजा हुये। यूसुफने पकवर
 बादशाहके निवृत्त दिखो ना पाचाप्य मोंवा ना। उनी
 समय बर्कोम सुबन्दखान्को हरा कोहर बहको
 काश्मीरका राज्य दे डाला। बूहपमें पकवरके निवृत्त
 से कोट वितपापिदित अख्दुर धाममें पबखाल किया
 था। कोहरबह उनके लड़ने लगे। बह लड़ाईमें काहर
 पकके मन्त्री पन्थुखमोर मारी गये। फिर यूसुफने

काश्मीरका सिंहासन बाया था। उध समय कोहरखान्
 ने याकूबका मरक लिया। किन्तु याकूबने उबिया देल
 उनके पोर बहके मारनेके मंत्र पाड डाले। फिर कैद
 बरके साथ याकूबका बुह हुआ। उनमें चार कैद
 पडकर बादशाहके पाम भाग गये। यूसुफने काश्मीर
 कोन बहुत सपठाकनसह अपने पुत्रको मन्थाट पक
 बरके निवृत्त भेजा ना। पकवरने यूसुफके भेजे कव-
 ठीकन पापि मो काश्मीरके कयका अभिनाम न छोड़ा।
 उनमें मगवान्बाह सेनापतिको काश्मीर भेजा ना।
 बुदुल मगवान्दानको वृहतर बनरख लपहार दे पक-
 बरके घरवागत हुये। कुछ दिन राज्य कर वह पक
 बर मन्थाटके सेवासमें लमे गये। फिर उनके पुत्र याकूब
 ने काश्मीरका राज्य किया। उध समय यूसुफबह
 पन्थुख लह को याकूबसे लड़े थे किन्तु गीपको हार
 गये।

फिर पन्थाट पकवरको काश्मीर विषयको का हा
 बयो थी। उन्होंने बहुतर सेन्थके साथ काश्मिपखान्के
 पखोन २२शेनाप्यय काश्मीर भेजे। काश्मिपखान्के
 पावमनको वात सुन याकूबन पन्थापन किया था।
 उनका सेन्थ लकक जिब निब ह्यो गया। फिर शम्भ
 बरने पक संखक सेन्थ से काश्मिपने लड़ाई की।
 किन्तु सुगन कोपि थे। कैदरबह काश्मिपखान्को कापि
 दिखे गये। उसीके लोर्गने बनका पच पबकखन किया।
 काश्मिपखान्ने कैदरबहके साथ अपनेक अश्रिबोको
 देल कर पकड़ा था। उनसे काश्मीरको बहुतथो प्रजा
 मयथे बनको मार गयो। उनमें एक जान मिसि थे।
 लड़ाई करनेको क्षतसहका जो प्रजा याकूबखान्को
 ले गयो। काश्मिपने मोमारखान्को याकूबके विषयभेजा
 ना। याकूबने सदायिपपुरमें मोमारखान्को सेना पर
 पाल्काम किया। काश्मिपखान्ने काश्मीरका बहुतर
 सेन्थ देल काप्राटह क्षित कैदरबहका मार डाला।
 इसके बाद काश्मिप पोर याकूबको लड़ाई हुई। किन्तु
 कय पराजय समझ न पडा। याकूब काठनाट लमे
 गये। उध समय याकूबके पिता यूसुफ पोर पन्थुख
 प्रवान अजिन सन्थके निदे प्राबेना को। काश्मिपने
 यूसुफ प्रपति अजिनको पकवरके पाठ भेजा था। पक-
 बरने उन्हें लमारसे किया।

वही समय काश्मीरमें तुषारपात आरम्भ हुआ। याकूबने नसैन्ध काठवाटसे निकल सुगलसेनाको आ आक्रमण किया था। ३ मास तक लड़ाई चली। कामिनखान्को पराजितपाय सुन अकबरने यूसुफखान्को काश्मीर जीतनेके लिये आदेश किया था। यूसुफ खान्ने जाकर याकूबका पगाजय किया। वह फिर अकबरके निकट नाँट गये। १८५६ ई० की काश्मीर अकबरके हाथ नगा। उस समय अकबर काश्मीर देखने लाहौरसे चले थे। काश्मीरमें उपस्थित होने पर याकूब उनके गरणगत रहे। अकबरने उन्हें राजा मानसिद्धके अधीन सेनाध्यक्ष बनाया था। फिर वह यूसुफखान्को काश्मीरका शासनकार्य सौंप देगास्त की चले गये। यूसुफ काश्मीरराज्यका शासन करने लगे। किसी कारण यूसुफ अकबरके विरागभाजन हुए थे। अकबरने यूसुफके प्रति क्रुद्ध हो काजी अलाको काश्मीरके शासन कार्यमें नियुक्त किया। काजी अलाके काश्मीरकीपना समस्त धन व्यय कर डालने से सुगलनेमें परस्पर विरोध उपस्थित हुआ। उसमें मिर्जा यादगारने काश्मीरियोंसे भिन्न काजी अलाके साथ लड़ाई की। काजी अला हार कर पर्वत पर भाग गये और वहीं चले बसे।

पुनन्तर मिर्जा यादगारने काश्मीरके शासनकर्ता हो अकबरकी अधीनना मानो न था। अकबरने जेख फरीदकी ससैन्ध काश्मीर भेज दिया। शूरपुरमें मिर्जा यादगार अपने अनुचरोंके ही हाथों मारे गये। जेख फरीदके शासनकाल अकबर फिर काश्मीर पहुँचे थे। उस वार उन्होंने अनेक सत्कार्य किये। उन्होंने सुना कि ब्राह्मण स्नेच्छराजसे देशान्तरको जाते थे। उसीसे प्रथम अकबरने चक्रवर्गियांसे वार्षिक कर लेना निषेध किया। फिर उन्होंने टिंडोरा पिटाया था—“काश्मीरका जो व्यक्ति ब्राह्मणोंकी पूजा करेगा उसको तत्क्षण पारितोषिक मिलेगा। यहां जो ब्राह्मणोंसे कर लेगा, उसका घर उस समय गिरा दिया जावेगा। फिर ब्राह्मण उन्हें दानगोर्हा देने लगे। अकबरके कोई रामदास वसैन्धारी काश्मीरवासी ब्राह्मणोंका नियत उपकार करते थे। वह ब्राह्मणोंको देखते ही स्वंपरीय

दे देते रहते। उन्हें कुछ भी भूमिमान न था। प्रवाट है कि उन्होंने प्रत्येक ब्राह्मणके घर सौ सौ रुपये और एक एक अशरफी बाँटो दी। अकबर भी काश्मीरों ब्राह्मणोंको विशेष रूपसे परिहृत रखते थे। किसी दिन उन्होंने महस्र खर्चमुद्रा दरिद्र ब्राह्मणोंको दे डालीं।

अकबरने यूसुफखान्को पुनर्वा काश्मीरका शासन-कलत्वभार सौंप लौटाया था। वह प्रजाका कोई अनित न कर राज्यगमन चलाने लगे। कुछ दिन पीछे यूसुफखान्के अकबरके साथ साधनार्थ चले जानेसे उनके पुत्र मिर्जानशरर काश्मीरके शासनकर्ता हुये। उन्होंने निम्नलिखित आदेश निकाला था—“जो व्यक्ति काश्मीर-निवासियोंको सतायेगा, वह तत्क्षण अपने अपराधका फल पायेगा।” मिर्जानशररके ८ वर्ष शासन करने पर अकबरने पहली प्रशासकखान् और उसके पीछे अहमदखान् तथा सुनतान मुहम्मद कुली खान्को काश्मीरका शासनभार प्रदान किया। उनने काश्मीर जा दुर्नीतिको पकड़ा था। उसी समय अकबरके आदेशमे उक्त दोनो शासनकर्ताओंने प्रवरपुरके निकट एक प्रगनामकादुर्ग और शारिका पर्वतके पास नग नामक नगर निर्माण कराया। वर्तमान श्रीनगर जैन-उन्न-आध्दोम निर्मित पुरातन नगरीके सन्निधानमें ही बना था। किसी दिन मध्याह्न कालको पुरातन नगरी अकस्मात् जनने लगी। दो महस्र गृहसम्पन्नित उक्त नगरी अत्यन्त इसके मध्य ही भस्मावशेष हुयीं। उस समय नवोन नगरी सपत्नी विनाशसे प्रियतमा रमणीकी भाँति फूल कर खानन्द प्रकाश करने लगी।

काश्मीर अकबरके पुत्र जहांगीरका अतिप्रिय स्थान था। वह प्रियतमा नूरजहान्के साथ संवदा वहाँ बसन्तलोला करते थे। काश्मीरमें अद्यापि नूरजहान्के खोला-उद्यान और मनोरम प्रासादका भग्नावशेष देख पड़ता है।

जयतक दिल्लीके सुगल वादशाहोंका प्रभाव अस्तुष्ट था, तवतक काश्मीरराज्य उनके अधीन रहा। उस समय कोई शासनकर्ता दिल्लीके अधीन राजकार्य

निर्वाह करता था। १०१२ ई० की पठान घोर पराक्रम साह्य दुशानेने काशीर राज्य जीता था। फिर कुछ काबलतक पठाना का प्रभाव रहा। १८१८ ई० की महा राज रणत्रयो सिंघने काशीर अधिकार लिया। उस समय सिखराजके पक्षीत कोई शासनकर्ता नेता जाता थीर काशीरका शासन काम चलाता था। १८३३ ई० की जन्म, सादर थीर बसतिस्थानके साह्य काशीरभूमि गुजरासिंहको मिल गयी। १८३६ ई० की घोषासन युद्धके बाद गुजरासिंहने ७५ लाख रुपये से चंगरीका सि काशीरराज्य प्राप्त किया था। गुजरासिंह चंगरीका गवरनमेंपुष्के एक मित्र राजा बनी। युद्धकाय बह चंगरीका गवरनमेंपुष्के साहाय्य करने पर बाध्य थी। किन्तु बह फ्रांसिस मावसे सिन्धू राजनीतिके अनुसार राज्य करती थी। युवा विधवा। १८५८ ई० का गुजरासिंह के मरने पर उनके पुत्र रणवीर सिंह राजा हुए। उनमें १८८२ ई० की चंगरीका सरकारसे २१ लो पी की सहाय्ये 'इंस्टीट्यूटोनापलिस' थीर 'महाराजोका मन्डिर' पाया था १८८५ ई० की जन्म नगरमें रणवीरसिंह मर गये। फिर उनके शेरद्वारा प्रतापसिंहने सिंहासन काम किया। उनको सभामें इंडिय रौलडपुष्के पुत्र मये।

प्रतापसिंहको इंडिय गवरनमेंपुष्के को पस चाई तथाकि परंपराके सिद्धे 'महाराज' पद थीर येइ सहायको सूच्य २१ लोपीकी सहाय्य प्रदान की है। काशीरराज महाराजने भारतीयोंको प्रतिबध एक छोड़ा, २१ लो पीर थीर थीर परम्पराके काशीरी दुशासि कर फाट्य देती थी। पर काशीरराज सम्पूर्ण रूपसे इंडिय सरकारके पक्षीत है।

बहुतमें कोडिक भंवरत् ६२८में कोडिक चंवरत् ६३१ तक चर्बीत् प्रथम गोनम्ने सेइर बहादिरक तक जिस राजावोंके नामका उल्लेख किया है। उनमें परम्परा काशीरके सिंहासनपर पारोक्षिक कर राज्य किया था। ऐना निम्नम्के उन नामों का कीर्ति सूचक विद्ध थीर कि सर्वतिसीके प्राप्त होता है। परन्तु उनके नामोंकी सूची जिस क्रममें उल्लिखित है बह ठीक वेधो की है बलमें पूरा पूरा उल्टे है थीर उनके नाम पर तो निबध है कि—उन नामों का शासनकाल परम्परा की

कुछ नगत है। हां। अर्थात्क मंघे पाती बहादुरने की कुछ विद्या है बह परम्परा ठीक है थीर इसादिये इतिहासवेत्ता इस प्रकारके वास्तविक आसामुसार इतिहास परम्परा करती है।

काशीरके राजा की तालिका ।

राजशासन	वर्षोंकेसमय	राजधानी
गोनम् १म (बहुतके मरने ६११ मज्जम तथा ६१८ कीर्तिक)	१११	चंगरी
राजीर १म	१११	चंगरी
राजीर २म	१११	चंगरी
राजीर ३म	१११	चंगरी
राजीर ४म	१११	चंगरी
राजीर ५म	१११	चंगरी
राजीर ६म	१११	चंगरी
राजीर ७म	१११	चंगरी
राजीर ८म	१११	चंगरी
राजीर ९म	१११	चंगरी
राजीर १०म	१११	चंगरी
राजीर ११म	१११	चंगरी
राजीर १२म	१११	चंगरी
राजीर १३म	१११	चंगरी
राजीर १४म	१११	चंगरी
राजीर १५म	१११	चंगरी
राजीर १६म	१११	चंगरी
राजीर १७म	१११	चंगरी
राजीर १८म	१११	चंगरी
राजीर १९म	१११	चंगरी
राजीर २०म	१११	चंगरी

(११ राजाकी तालिका बह है)

१११
की
१११-१८०

राजा	वर्षोंकेसमय	राजधानी
गोनम् १म	१११-१११	चंगरी
राजीर १म	१११-१११	चंगरी
राजीर २म	१११-१११	चंगरी
राजीर ३म	१११-१११	चंगरी
राजीर ४म	१११-१११	चंगरी
राजीर ५म	१११-१११	चंगरी
राजीर ६म	१११-१११	चंगरी
राजीर ७म	१११-१११	चंगरी
राजीर ८म	१११-१११	चंगरी
राजीर ९म	१११-१११	चंगरी
राजीर १०म	१११-१११	चंगरी
राजीर ११म	१११-१११	चंगरी
राजीर १२म	१११-१११	चंगरी
राजीर १३म	१११-१११	चंगरी
राजीर १४म	१११-१११	चंगरी
राजीर १५म	१११-१११	चंगरी
राजीर १६म	१११-१११	चंगरी
राजीर १७म	१११-१११	चंगरी
राजीर १८म	१११-१११	चंगरी
राजीर १९म	१११-१११	चंगरी
राजीर २०म	१११-१११	चंगरी

बह लोपी राजा १० वर्ष मज्जमकी नियमन है। चंगरी की। १११-१८०
१११-१८० थीर लोपी नियमके अनुसार बह है १११-१८० नियमन है

मिहिरकुल वा मिहोडिहा	१२०२-८-०	...	वर्ष
वक	१४४२-४-०	...६१	तिरह दिन
चलितम्	१५०४-४-१३
वसुनम्	१५१५-४-१३	...४९	वर्ष २ मास
सर १४	१५८०-६-१३
पच	१६४०-६-१३
गोपादित्य	१७००-६-१३	...	वर्ष ६ दिन
जोहल	१८६०-६-१८	...	वर्ष १२ मास
मरेन्द्र वा सिद्धिन्द	१८८५-४-१८	...	१६ १/२ मास १० दिन
पुष्यभिर	१८६१-८-२८	...	वर्ष १ मास १ दिन

विक्रमादित्य-प्रतिषेध ।

प्रतापादित्य (प्रथम)	१८८६-१-०	श्री ०	१२ वर्ष
श्री ०	१८९०-०-०	...	३९ "
तुलोम (प्रथम)	१८६०-०-०	...	३६ "
विश्व (पद्म व म)	१८८६-०-०	...	८ "
अग्नि	१९०८-३-०	...	१० "
सन्निवृत्ति वा फाईराज	१९०१-०-०	...	४० "

गोमन्थ व (३ वार)

मिचवादन	१०८८-०-०	श्री ०	३४ वर्ष
प्रवरसेन प्रथम वा तुंगीम	११२९-०-०	...	३० वर्ष
द्विज्य चौर तोरमाध	११५२-१-०	...	३० वर्ष २ मास
मानगुप्त (पद्म व म)	११८२-२-०	...	४ १/२ मास १ दिन
प्रवरसेन २य	११८६-१-१	...	६० "
पुष्यभिर २य	१२०६-१-१	...	६८ वर्ष ३ मास
मरेन्द्र वा मरुप	१२२६-२-१	...	१२ "
रघुनादित्य वा तुंगान २य	१२८८-२-१	...	२०० "

* ६० ६८ शतकमें विद्यमान थे ।

† राजतरङ्गिणीमें लिखा है—

“ब्रह्म प्रतापादित्याख्यासो गनीय दिग्गमरात् ।..

विक्रमादित्यममृतुं प्रातिरक्षाम्यपिचते ।

शकारिविक्रमादित्य इति सम्प्रसमाश्रिते ॥” (२ । ४—६)

उक्त श्लोक हारा संज्ञानुसिद्धता शकारि विक्रमादित्यके ओर प्रतापादित्यका गण्यत्व स्पष्ट साक्षात् प्रकृत है । किन्तु ब्रह्मणसे वागमोर्के राजाओंका सम्बन्ध जिस प्रकार स्थिर किया है, उसमें प्रतापादित्य १६८ ख० पूर्वान्त अर्थात् सप्त प्रतिष्ठावासे ११२ वर्ष पूर्वके लोग समझ सकते हैं ।
 † राजतरङ्गिणीमें लिखा है कि रघुनादित्यने १०० वर्ष राजत किया था—
 “एवं स सुप्रसिद्धता एव वर्षशतमपम् ।

निर्वाणशार्ङ्गान्ध्रैः उपसाधित्यमसाधन् ॥” (१ । ४०२)

किन्तु एक व्यक्तिके शिष्यरूपमें दीर्घकालपर्यन्त राजत करना क्या सम्भव

विक्रमादित्य	१५४२-२-१	...	४३ वर्ष
बानादित्य	१६४१-२-२	...	६६ १/२ मास

कायपट वा कार्कोट व म ।

दुर्लभवर्धन वा प्रतापादित्य	१८०५-१-११	श्री ०	३६ वर्ष
दुर्लभ क वा प्रतापादित्य २य	१६१०-१-०-१	...	४३ "
च टांगोट वा वचादित्य	१८६१-१-०-१	...	८ १/२ मास
तागापाद व, उदयादित्य	१०५२-६-२	...	४ १/२ वर्ष ११ दिन
सुजापोट वा लज्जितादित्य	१०८६-१-०५	...	३६ १/२ मास १० दिन
कुन्तलापोट	१८५२-१-६	...	१ वर्ष १५ दिन
वचादित्य वा लज्जितादित्य २य	१८२६-२-०१	...	४ १/२
पुष्यभिर	१८९१-२-२१	...	४ १/२ मास
संदास पोह (प्रथम)	१८२५-२-२१	...	० दिन

ई ? सामूहिक । ई. क. ब्रह्मणसे (१८५२-२-२१) परवर्ती राजवर्षके कायपाल सन्धे में दिये और मूल्य प्रमाण दिये था । उनके पूर्ववर्ती राजवर्षका यथासंभव वरवर्ष माने जाने की प्रकृत सम्बन्धके निरूपण सम्बन्धमें बहू कोरें विगत प्रमाण व ब्रह्मणसे के कोरें सम्बन्धन विक्रमादित्य प्राति व जाय प्रमाणके पूर्ववर्ती राजा पुष्यभिरका गण्यत्व ब्रह्मणसे निरूपण किया न गया । किन्तु प्रतापादित्य गण्य विक्रमादित्यके पूर्ववर्ती होने की उक्त ही गण्यने पूर्ववर्ती विक्रमणसे । उक्त कथनसे ब्रह्मणसे की ३०० वर्ष रघुनादित्यके गण्यत्वका सत्यता ज्ञाने है, इसीसे विक्रमणसे बहू प्रतापादित्य पूर्ववर्ती राजवर्षके राजत्वमें लक्ष्य लावेने । इस शीतसे गण्यता करने पर शकारि विक्रमादित्य और उनके प्रातिवर्ती प्रतापादित्यका प्रथम समय निरूपित हो सकता है । ब्रह्मणसे के स. में रघुनादित्य की उक्त पुत्र विक्रमादित्यने ४२ वर्ष राजत किया था किन्तु उक्त दीर्घकालके राजत्वका विवरण ब्रह्मणसे २ श्लोकों में ही कर दिया है । उसमें पद्यमें जिन जिन राजाओंमें दीर्घकाल राजत किया ब्रह्मणसे उनके कथनमें बहुत कुछ लिखा है । किन्तु उनके सम्बन्धमें बहू नहीं लाये गये ? अधिक यही सम्बन्ध पर है कि पितापुत्र सम्यक् ४२ वर्ष राजत किया था ।

* चीन इतिहासमें इनका समय ई० ६२० से लेकर ६४८के बीच बताया गया है । इनका परिचय तु-हो-प ग नामे दिया गया है ।

† चीन इतिहासमें इनका नाम चै-नो-दी-नि-मि-वा है । चीन उन्हींमें सातवीं तरफ ई० में चीन-सम्राटके पास पर्य लौंगिके विरुद्ध युद्ध करनेमें सहायता मांगनेके लिये दूत भेजा था ।

‡ चीन इतिहासमें 'तु-नो-पि' नामसे इनका उल्लेख है । ई. स. ७३६के ७४०के बीच लक्ष्मणसोमनाथके साथ युद्ध करनेके लिये चीनो भेजा गी मई ७वीं, उसी समय सुजापोहने चीन-सम्राटके पास दूत भेजा था ।
 Vide Kalhan's Chronicle of the Kings of Kashmir, by M. A. Stein, Vol. I (intro. p. 67.)

मुहम्मद नासुखशाह (रिहोदवार)	११ वर्ष ८ मास
रकाराह (रिहोदवार)	१ वर्ष ४ मास
मिर्जा हैदरशाह	१४१२ ई० १० वर्ष
सुल्तान नासुख शाह (वलीदवार)	१० मास
इमाम	१० वर्ष ६ मास
इमाम	
एकीक	
नामीशाह	
इसिन खान	१५१३ ई० ० वर्ष
अमीरशाह खान	८ वर्ष
सुमुख शाह	१५८० " १ वर्ष १० दिन
शेखर सुवारक	१ मास २५ दिन
सोहर खान	१ वर्ष ० मास
सुदुख शाह (रिहोदवार)	५ वर्ष ३ मास
मासुखशाह	१ वर्ष
दिहोदार सुल्तानशाह के अधीन १५८६ ई० से १७५१ ई०	
अहमद खान	१७५२ "
अहमद खान के अधीन	१७५१ " से १८०० ई०
अहमद खान के अधीन	१८०६ "
अहमद खान के अधीन	१८०७ " १५ वर्ष
अहमद खान के अधीन	१८०८ " १७ वर्ष
अहमद खान के अधीन	१८०९ "

प्राचीन मन्दिर और जलमय—तुषारमय त्रैलोक्यवेदित काश्मीरमें भी बहुतसी पुरानी चीजें देखने लायक हैं। इतिहास पढ़नेसे समझते हैं कि काश्मीरके प्रायः सकल हिन्दूराजाओंके द्वारा अथवा उनके राजत्वमें अथवा व्यक्तिवर्द्धक नामा स्थानोंमें सुसज्ज मस्जिदें देख-सूनिं एवं देवमन्दिर प्रतिष्ठित किये थे। आन्वय उनमें अधिकांश दिगड गये। फिर भी उनकी संख्या बहुत कम नहीं। आज भी जौनगर, पारद्वयन, अवन्तिपुर, तख्त सुलेमान, पामपुर, पत्तन, लैदरो, काकपुर, बराह मूल, यमपुर, भवानीयार, वर्षकोटरी, भीमज, पायच, मातैण्ड, नतापुर, मानसवल, नारायणतान, फतेह-गड, तैकम, दुषनमा, बज्रासके निकट, नैसहरा, तथा हरीका मध्यवर्ती दिमम नामक स्थान और खुनमोके अनेक प्राचीन देवालये भग्न वा अमग्न अवस्थामें पड़े हैं। उन प्राचीन मन्दिरोंका हिस्सेदुख देखनेसे समझत होता पड़ता है। हिमानीगड्ढरके मध्य जग पर पाषाणमय देवमन्दिर दर्शन करनेसे किसी बहुत

रसका आविर्भाव होता और निर्माताको सुसज्ज धन-वाद देनेके लिये की चाहता है। प्राचीन भारत-वासियोंकी गिम्पविद्याका परिचय काश्मीरमें उचित मिश्रता है। अनेक प्राचीन देवस्थान पुस्तकीर्यकी भांति प्रसिद्ध हैं। वरपत्रे देरकी वाटकर असंख्य तीर्थ-यात्री उक्त सकल प्राचीन पुस्तकीर्य दर्शन करने जाते हैं। अमग्न देवी।

एन्ड्रियस काश्मीरके अनेक तीर्थोंमें आज भी बहुत नैसर्गिक व्यापार सञ्चित हुआ करता है। उनको दर्शन करनेसे जगत्सटाकी प्रणार महिमा हृदयद्रम होती है। भारतके प्रायः सभी देशोंमें तीर्थ हैं। उनमें जो बहुत व्यापार देखा जाता, उसमें अधिकांश अनेकोंकी धारणामें कृत्रिम कहता है। किन्तु काश्मीरमें ऐसे अनेक तीर्थ हैं, जिनके नैसर्गिक व्यापारको देख कर कभी कृत्रिम कह नहीं सकते। यहाँ हम दो एक तीर्थोंकी बात कहेंगे।

सोमनाथी—जौनगरसे उत्तर ७ दण्डे नायकी राह पर एक झुट्ट होय है। उसमें एक कुण्ड विद्यमान है। इसीको धीरभवानी कहते हैं। वहाँ लोग धीर वा पायसाससे देवी भवानीकी पूजा करते हैं। उक्त कुण्डका जन कमी जान, कमी हरा, कमी गुलाबी नामा वगैर आकार धारण करता है। वैसा कौं होता है ? कोई वैज्ञानिक उसका प्रकृत कारण ठहरा नहीं सकता है।

बुधरोप—जौनगरके दक्षिण माचिहामा नामका परगना है। उस परगनेमें कोई अतिहृत्त लज्जामय है उसके जलपर बड़े बड़े भूमिखण्ड पड़ते हैं। उन भूखण्डों पर पैठ पत्ते लगे हैं। पशु भी चलनेके लिये उनपर घूमा करते हैं। बड़ा ही आश्चर्य है। अधिक वायु चलनेसे उक्त भूखण्ड हवादिके साथ घूमने लग जाते हैं।

* Asiatic Journal Vol XVII pt. II p 241 247, Vol. XXV. pt. 1 (1866) p. 91-123, Bühler's Sanskrit Mss in Kashmir (1877) p. 4-16 प्रभति यन्त्रिं काश्मीर के प्राचीन देवमन्दिरका विवरण मिलता है।

इसका नाम—काश्मीरके दक्षिण मार्गमें देवसर पर
 मनीके बीच वासुकिनागकुण्ड है। उससे प्राय १०
 कोस दूर पौर्यत्राणके दूरमें पाण्ड्यवंश गुलाबमय कुण्ड
 पड़ता है। पाण्ड्यका विषय है कि वह दोनो कुण्ड
 से एकमें जल रहने पर दूसरा सूख जाता है। उसी
 प्रकार प्रत्येकमें एक एक मास जल रहता है।

शाला—शोनवरके दक्षिण छेल् परमागमें शतशाला
 प्राय है। उक्त प्रायमें बटागङ्गा नामक कोई कुण्ड है।
 वह संवत्सर सूख रहता है। शिवन माइमासको
 यक्षाहमी तिथिको उक्त मुमिमें जल का प्रकल्पान्
 उसको परिपूर्ण कर देता है। उनोप्रकार काश्मीरमें
 निम्न कई भङ्गुन नैसर्गिक खाण्ड होते हैं। सामान्य
 मानव उनको पकृत तत्वके निबंधमें पचम है।

शक्ति—काश्मीरमें नागा कालिका वास है। उनमें
 माचौन पश्चिमासी ब्राह्मण हैं। वितनी ही ब्राह्मणो न
 सुसंखमान वर्म पश्य कर लिया है। काश्मीरका वर्त-
 मान राजपरिवार क्षामरायाप्रपुत्र कालिभुज है। क्षोत्रा
 क्षोम जम्बू उपजाकामें पश्चिम देख पड़ते हैं। इस प्राति
 के प्राय सकल जंबोके हिन्दू होते हैं।

पश्चिमार्थमें सिन्धुप्रवाहित गिरिप्रदेश पश्चि
 कुञ्जा तथा दक्षा प्राति पौर दक्षिणार्थ एवं हिन्दमके
 पश्चिम मध्यर, सुन्दर, खतौर, पवन, जम्बू प्रकृति
 कोयोंका वाह है। पूर्वार्थमें कादक और सकलित्याग
 प्रवाहनाः मोट प्राति रहती है। जम्बूमें क्षोम भिन्न,
 हिन्दूपहाड़ी, गडडी, बाबाव प्रकृति मिलते हैं। उत्तरार्
 र्थमें प्रायः सर्वत्र जम्बा पौर दक्ष प्राति देख पड़ती है।

काश्मीरके जम्बूमें निम्न निम्न मानव वर्गकी निम्न विधि
 इतक इतक है—
 १. इन्द्र 'रवि'। २. काश्मीरकी, जेवनाप्रद गणना
 दीनप्रकोर कैलप्रवाहकी, शम्भुप्रद राजमन्त्रिका, काश्मीरका
 काश्मीरकोरके दक्ष कोरके इन्द्रो, नरभिर-जम्बू पश्चर उपजाका
 पश्चिमका पश्चिमका जम्बू, नर-उड-दीनका कोरके वास-दीनका
 उड-वादी, जम्बूका काश्मीर, उरका वासने, Melleon's Nat-
 ional States, Moorcroft's Travels, Forsyth's Journal, Vol
 II, Baron Hugel's Travels in Kashmir, Vigne's Tra-
 vels, Cunnigham's Ancient Geography of India; Drew-
 son's Jammu and Kashmir; Schoenberg's Travels in
 Kashmir; Bellier's Kashmir etc.

(सि०) इ काश्मीरदेशवासो, काश्मीरका रक्षनीवाला।
 काश्मीरक (सं० सि०) काश्मीर मन्, काश्मीर बुद्ध।
 १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरमें पैदा होनेवाला। (पु०)
 २ काश्मीरदेशवासो, काश्मीरका वासिन्दा। ३ काश्मीर
 देशका राजा।

काश्मीरक (सं० खी०) काश्मीर कावरी काश्मीर जल-ज।
 जम्बू नक्षत्र; १। २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०। ११। १२।
 १ कुठमेर, एक दवा। २ दुष्करभूज। ३ पतिविद्या।
 काश्मीरकक्ष (सं० खी०) काश्मीरक क्षय पक्ष, रक्षणी।
 कुठम कापरान कैसर।

काश्मीरका (सं० खी०) पतिविद्या, पत्नीस।
 काश्मीरकोरक (सं० खी०) काश्मीरक, सफ़िद बीरा।
 काश्मीरपुष्य (सं० खी०) माथारो इव मथारोका पैड़।
 काश्मीरा (सं० खी०) काश्मीर मन् काश्मीर-पुष्प-टाप।
 जम्बू; १। २। ३। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०। ११। १२।
 १ पतिविद्या पत्नीस। २ क्षयित
 द्राका, काका द्राक। ३ खल पक्षिनी।

काश्मीरा (सं० पु०) १ पश्चिमिष, कोई कण्डा। यह
 माटे जलके नैगार होता है। २ किसी विद्याका रंगुर।
 काश्मीरक (सं० सि०) काश्मीर मन्, काश्मीर-उड।
 काश्मीरदेशीय, कश्मीरमें पैदा होनेवाला।

काश्मीरो—काश्मीर देशको भाषा। यह किसी पय-
 र्थय भाष से उत्पन्न हुई है। इससे पहले पिथाको
 प्राकृत भाषा थी। वर्तमानको काश्मीरी भाषा उसका
 दूसरा सफलरूप है। इसको बोधव्यवासी दयकाण्डसे
 उत्पन्न मनुष्य हैं।

काश्मीरो (सं० खी०) काश्मीर-कोष। माथारो इव,
 माथारोका पैड़। २ क्षयितजगनामि, काको कष्टरो।
 काश्मीरो (सं० सि०) १ काश्मीरदेश-सम्बन्धीय,
 काश्मीर रक्ष ताजुक रक्षनीवाला। २ काश्मीरदेशवासो,
 काश्मीरका वासिन्दा। (पु०) ३ रवरका पैड़।
 ४ काश्मीरका ब्राह्मण। काश्मीरमें नागा धर्मों पर

विदेशीय क्षोम देख पड़ते ही पुरातन हिन्दू पश्चिमासीमान
 नामके परिचित हैं। भारतवर्षमें नागा धर्मो
 प्रवेश रहता है, वह काश्मीरियोंमें देख नहीं
 पड़ता। 'काश्मीरक' का 'काश्मीर'
 'काश्मीर' है। पति पूर्ववाकसे काश्मीर

ब्राह्मणभूमि होती भी प्राचीन ग्रन्थमें इसका उल्लेख मिलता कि भारतके नाना ध्यानोंसे जा कर ब्राह्मण काश्मीरमें बसे थे। कहतकी राजतरङ्गिणीमें गान्धार, कान्यकुब्ज, तैलङ्ग, गौड प्रभृति स्थानोंसे ब्राह्मणोंके जानिकी कथा कही है।

आजकल सब काश्मीरी ब्राह्मण एक समाजभूत हैं। सभी परस्पर अन्न ग्रहण और अव्यापनादि किया करते हैं। किन्तु उनके समाजमें सबके साथ योनि सम्बन्ध नहीं चलता। आचार-श्रवणार भारतके अन्न ब्राह्मणोंकी भांति है। फिर भी देशमेंसे कुछ पार्थक्य पड़ गया है। वह यथाकाल उपनयन ग्रहण करते हैं। समय उत्तीर्ण होने पर यथानियम प्रायश्चित्त भी किया जाता है। प्रायश्चित्त न करनेसे राजद्वारमें दण्डनीय होती है। हिन्दुस्थानमें ब्राह्मणमन्तान जैसे उपनयनके ५० दिन पीछे मिथुना खीन रखते, काश्मीरमें वैशे नहीं करते। वह दीक्षाके पीछे आजीवन वामस्कन्ध पर यज्ञोपवीत और टर्जिणहस्तमें कुगकी मिथुला रखते हैं। उनके द्वारा वेदीका कर्मकाण्ड तथा नियम पालन किये जाते हैं। फिर भी बहुतेरे शास्त्रचर्चा छोड़ देते हैं। कितने ही अंगरेजी फारसी पढ़ नाना उपायोंसे जीविका चलाते हैं। काश्मीरी ब्राह्मणोंमें कुछ व्यतिक्रम देख पड़ता है।

वह प्रायः सभी शैव हैं। वामाचार शास्त्र बहुत अल्प दृष्ट होते हैं। पहले अनेक शैव, बौद्ध और भागवत वैष्णव थे। आजकल प्रायः तीन प्रकारके काश्मीरी ब्राह्मण देख पड़ते हैं—१म श्रेणीके ब्राह्मण 'पण्डित' नामसे प्रसिद्ध हैं। वह केवल शास्त्रचर्चामें अग्निष्टोम याग तथा आवादि कर्मकाण्ड द्वारा एवं राजवृत्ति-भोगसे कान्तकी निकालते हैं। २य 'राजधान' हैं। वही प्रधान राजकर्मचारी और व्यवसायी होते हैं। वे संछत भाषा क्रीड फारसी पढ़ते हैं। ३य वाच-भट्ट होते हैं। वह लेखक, पुजारी और तीर्थस्थानमें परदेका काम करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण २य श्रेणीके पद धालोंसे मन ही मन घृणा करते और कर्मदान कदेखनेकी ठीक नहीं समझते। पण्डित और वाचभट्ट ही मध्य जगत्तादि पालन करते हैं। १म श्रेणीके ब्राह्मण किसी पद

काश्मीरमें पञ्च धर्माधिकार पर नियुक्त होते हैं।

काश्मीरी ब्राह्मण सभी वेद पाठ किया करते हैं। कोई कोई अपनेको चतुर्वेदी बतलाते हैं। किन्तु वह वाकशाखाभुक्त हैं।

गोत्र—१म पण्डितश्रेणीके मध्य १ कापिष्ठल, २ शैशिक, ३ भारद्वाज, ४ उपमन्यु, ५ दत्तात्रेय, ६ गार्ग्य और ७ भार्गव गोत्र है।

२य-राजधानोंमें गीतम, लौगाचि और दत्तात्रेय गोत्र होता है।

३य-वाचभट्टोंमें विश्वामित्र और काश्यपगोत्र प्रचलित है।

श्रेष्ठ प्रत्यह वेदीका विधि और समय समय पर सोमशस्त्रके क्रियाकाण्डानुसार तान्त्रिक पूजादि सम्पन्न करते हैं।

काश्मीर्य (सं० त्रि०) काश्मीर-ख्य । १ काश्मीरदेशीय, काश्मीरवाला । (लो०) २ कुहूम, जाफरान्, केसर । काश्य (सं० लो०) कुक्षितं पश्यं यस्मात्, बहुलौ० । १ मध्य शराव । (पु०) २ काशिराजविशेष, काश्रीका कोई राजा । (भारत ११२०१ । ४६१)

काश्यक (सं० पु०) काश्य स्वार्थे संज्ञायां वां कन् । राजविशेष, कोई राजा ।

काश्यप (सं० पु०) काश्यपस्य गोत्रापत्यम्, काश्यप-अण् । १ कणाद सुनि, २ र्गविशेष, कोई चिरन । ३ मत्स्य विशेष, एक मछली । ४ गोत्रविशेष । ५ काश्यप प्रव-रान्तर्गत एक सुनि । ६ अरुणका नामान्तर । ७ ब्राह्मण-विशेष । काश्यप ब्राह्मण विषयविद्यामें पारदर्शी रहे । महाभारतमें उनका विवरण इस प्रकार लिखा गया है—“जिस समय राजा परोक्षित सप्ताह मध्य सपेदष्ट होनेको ऋषियष्टक अभिगत हुवे, उसी समय काश्यप ब्राह्मण उनको वचानके लिये गये। पथिमध्य तक्षकको वह मिले थे। तक्षकने चिकित्साशक्ति देखनेको सम्मुख कोई वटवृक्ष दर्शन द्वारा भस्मीभूत कर उन्हें जीवित करनेको कहा। उन्होंने स्वीय विद्यावत्तसे तत्क्षण वह वृक्ष पुनर्जीवित कर दिया। उसको देख तक्षकने सोचा, वह लोग अवश्य परीक्षितको फिर जिला सकेगे। सुतरां उन्होंने ब्राह्मणोंको प्रचुर धनादि दे राजाके पास जानेसे रोक लिया।” (भारत आदि ४२ अध्याय)

कास (सं० पु०) कासते शब्दायते अनेन, कास-घञ् ।
 १ रोगविशेष, खाँसी । बाणेश्वर ।
 २ शोभास्त्रनवृष । ३ कामदण्ड, एक घास । ४ कफ ।
 (वि०) ५ छिंसक, खंखार ।
 कामकष्ट (सं० पु०) कामहेतुः कन्दः, मध्यपदलो० ।
 कामातुः, कन्दः ।
 कामन्दर (सं० वि०) कामं करोति, काम-ह्य प्रच् ।
 यामरोगोत्पादक, खाँसी पैदा करनेवाला ।
 कामघ्न (सं० वि०) काम-घ्नन्टक् । १ कामरोग-
 नाशक, खाँसी मिटानेवाला । (पु०) २ विभीषणहृत्,
 हरिश्चापिठ । ३ काममर्द, कर्मोदो । ४ कण्टकारी,
 कटैया । ५ मोटकविशेष, एक मड्डू । वह हरीतकी,
 पिप्पली, गुण्डी, मरिच और गुडके योगसे बनता और
 कामरोगको नाश करता है ।
 कामघ्नधूम (सं० पु०) पञ्चविध धूमगानान्यतम धूम,
 पीनेसे खाँसीको मिटानेवाला एक धुवाँ । वह हृद्यतो,
 घण्टकारी, त्रिकटु, काममर्द, हिरण्य, इन्द्रदीत्वक् और
 मनःशिला जलानेसे निकलता है । उक्त सकल द्रव्योंका
 क्लृप्त बना लेना चाहिये । (सुदन्त)
 कामघ्नो (सं० स्त्री०) कामघ्न हीप् । १ कण्टकारी, कटैया
 २ मार्गी ।
 कामजित् (सं० स्त्री०) कामं जयति, कास जि-क्षिप्
 तुमागमय । १ मार्गी, ब्राह्मणवृष्टिका । (वि०)
 २ कामरोगनाशक, खाँसी मिटानेवाला ।
 कामनाशिका (सं० स्त्री०) १ पक्षवृष्टिवृत् । २ कर्कट-
 यज्ञो, ककशासीगी ।
 कामनाशिनो (सं० स्त्री०) कामं नाशयति, कास-नाश-
 विष्-निनि-डोप् । कर्कटयज्ञो, ककशासीगी ।
 कामनी (सं० स्त्री०) वृषविशेष, एक पौधा । (Ci-
 clostium Intybu-) यह भारतके उत्तरांच, चीन,
 पाश्चिमी पार इन्डिजमें उगती है । कामनी याक
 केवल भारतमें ही नहीं, बल्कि बहुत दिन
 युरोप में भी खाते हैं । रोमिट, इन्डि प्रभृति
 देशों में आसानीसे पाए जाते हैं ।
 कामनी (सं० स्त्री०) कामं यति नाशयति कास-दो-क-
 षोप् । कामका एक प्रकार ।

शीतल और पिस्तनाशक है । उसका मूल लवण,
 बलकर और ज्वरहर होता है ।

पश्चिमकी कासनीका जो आदर विशेष है । वह
 पञ्जाब तथा काश्मीरसे उत्तर साइबेरिया, समस्त युरोप
 और अफ्रीका में भी बहुत उत्पन्न होती है । युरोपीय
 उसका शाक बड़े आदरसे खाते और मूलको बुरानी
 बना कहवाके साथ पी जाते हैं । भारतमें उसका
 वेशा प्रचार नहीं । युरोपकी भांति भारतमें उसकी
 कृषिमें यत्न भी कम करते हैं । पञ्जाबकी काङ्गडा
 उपत्यका में उसके बीजका सामान्य यत्न देख पड़ता है ।
 उक्त सामान्य वृक्षसे जिस विशेष लाभकी सम्भावना है,
 उसे बहुतसे लोग नहीं समझते । प्रकृति इङ्गलैण्डमें
 ही प्रति वर्ष लाखों रुपयेकी कासनी विकती है । वह
 बलकारक, क्षिप्रकर और शीतल होता है । कासनी-
 का बीज रजानिःसारक है । बीजका चूर्ण पैत्तिक-
 वमननिवारक और सर्वज्वरहर होता है । कासनी-
 का मूल खानेमें कटु लगता है । श्रौषधादिमें वही
 व्यवहार किया जाता है । युरोपमें कहवाके बदले, कुछ
 लोग कासनीके मूलका चूर्ण सिद्ध कर सेवन करते हैं ।
 मूलमें प्रायः चौथाई भाग शर्करा डाल जलमें सड़ा
 यथानियम निचोड़ लेनेसे उक्त छ तीव्र सुरा बन जाती
 है । कासनी अल्प परिश्रम करनेसे बहुत उत्पन्न हो
 सकती है । उसमें लाभकी भी अधिक सम्भावना है ।

वह हाथ डेढ़ हाथ ऊँची होती है । कासनी देखने-
 में बहुत हरीभरी मालूम पड़ती है । पत्तियाँ छोटी
 छोटी रहती और पालकीसे मिलती जुनती हैं । डण्ड-
 लमें तीन तीन चार चार अङ्गुलीके अंतर पर ग्रंथित
 होती है । उसीमें नीलवर्ण पुष्पके गुच्छ निकलते हैं । फूल
 गिर जानेसे बीज आते हैं । कासनीका मूल लण्डन
 और बीज समस्त अंग श्रौषधमें व्यवहृत होता है ।
 हिन्दुस्थानमें कासनी ठण्डाईमें डालकर पी जाती है ।
 २ कासनीका बीज ३ वर्णकविशेष, एक रंग । वह
 नीला और कासनीके फूल जंघा होता है । ४ नीलवर्ण-
 कपोल, नीला कवूतर ।

कासन्दी (सं० स्त्री०) कामं यति नाशयति कास-दो-क-
 षोप् । कामका एक प्रकार ।

कासन्दोषटिका (सं० स्त्री०) १ कासप्र शोधक, खाँसी मिटानेवाली दवा । २ एक प्रकार कीबीड़ी । रात्रबहम के मत्तानुमार वष ऋषिहराक, पन्निवशक, बाहु एवं मम पशुकोमक और वातद्वेषत्र रोचनायक होती है । कासदीहित (सं० स्त्री०) कासिन कासरोगिय पीडित, ३ तत् । कासरोगी खाँसीका बीमार, जिसकी खाँसी पाती हो ।

कासमक्ष (सं० पु०) पटोल, परबल ।

कासमट्ट (सं० पु०) कास चटुनाति कास चटु पत्त । बर्नन्वा ५।२।२।१। फनामख्यात पत्रमाक्षविधिय, कभीदा ।

कासमट्टका पक्ष्मरसमें प्रयोग करी है वष पन्नि दीपल और झाडु होता है । (पक्ष्मरस) कासमट्ट तिन्न, उष्य मधुर कषयनाशक पञ्जीरुद्र, कासपित्तक और कष्टनाशन है । (पक्ष्मरस) कासमट्टका धर्ष-पाकमें कटु, हृष्य, उष्य कषु और श्वास, कास तथा परबलिय है । पुष्य श्वास-कासप्र तथा वातविनाशन होता है । (पक्ष्मरस)

२ शिगदारविधिय, कभीदी । ३ पटोल, परबल । ४ कासप्र शोधक, खाँसीकी मिटानेवाली दवा ।

कासमट्टक, वायवर्देकी

कासमट्टकपत्र (सं० स्त्री०) कासमट्टकदल, कभीदेका पत्ता ।

कासमट्टक, वायवर्देकी ।

कासमट्टन (सं० पु०) कास चटुनाति कास चटु कर्तारि क्त् । पटोल परबल ।

कासमट्टिका (सं० स्त्री०) कासमट्ट, कभीदा ।

कासर (सं० पु०) की जड़े कासरति, क पा सु पक्ष । मज्जिय, भेना बनि पञ्चिज समय तस जन्ममें रचना पञ्चा लगता है । (हिं० स्त्री०) २ कानीमिड । दमक पिटके राँसे भाव होती है ।

कासरोग (सं० पु०) श्वासविधिय, खाँसीकी बीमारी । कल ईकां ।

कासलक्ष्मोविनाम—बैद्यकीय शोधकविधिय खाँसीकी बीड़ी दवा । इड भोज चम, नाश्र कल्प पाद दन्धक, हरिताम मम गिना और चपर प्रत्येक एक

एक पक्के दिनारसे एकत्र मिलाया जाइये । फिर कियारात्रके रस तथा कुम्हल्य कनापके हाथमें तीन दिन भावना दे उषमें दवायका, जायपन्न, तिजवान, भौन, पञ्चावादन, जोरा, जिबट, मिषकवा तगरवाटुका मुक-खक और बंधकीवन प्रत्येक दा दो तोना हावते है । रंत की कियारात्रके रस और कुम्हल्य कनापके हाथमें जपेट कचक प्रमाच बटिका बना ली जाते है । पशुपान शीतल जल है । मक्ष्य मांस दुग्ध और सिग्ध पाहार पक्ष होता है । माकाधकी छोड़ देना जाइये । उन्न शोधक शिवन करनैके कास यक्षा, श्वास क्दर, पाण्णरोग शीक, शूल, पर्य प्रकृति रोग श्वास होती है । फिर कास लक्ष्मोविनाम कबर्षेक और उष्या तथा परबलि नायक भो है । (शेकरवाकरे)

कासलगाडू—तेलडू म्र-पक्ष जानिका ६ ठाँ मीद । ऐसे शरीरोपध्यायने यह मीद कासी पी ।

कासल श्वासेर (सं० पु०) वैद्यकीय कासरोगका शोधकविधिय, खाँसीकी एक दवा । पादक, मन्धक, ताम्ब, गजमध, शोशनीकी फूलो, नीह मरिच, कुट, ताकोयपत्र जातोपक सक्क प्रत्येकका चुर्ष दो दो तोने एकत्र मिला मिडपर्वी, कियारात्र, निर्मण्ठी, कासमज्जिका, द्रोणपुत्री, माककी, शोचसुन्दर, भार्नी, शरीतकी तथा बाधाके रसके घोंटना जाइये । पक्ष गुषाके समान बटिका शिवन करनैके कासरोग दूर होता है । (शेकरवाकरे)

कासहरवर्ग (सं० पु०) कासरोगनाशक दम द्रव्य मन्धूक, खाँसीकी बीमारी दूर करनेवाली दम शोकोका कुषीरा । इसमें श्रावा, पमया, पामनक, विषको, दुरालभा, मुड्गा कष्टकारो, हथोर, पुननवा और तमाकका हावते है । (चरक)

कासहाहाव (सं० पु०) कष्टकारोहत विषकीचूर्ष कुक कासहर काय कानीका कोरि काठा । वष कष्ट कारोषे बनता और उषमें दिव्योदूर्ष वजता है । २ पूसपान विधिय । उषमें पूसकी नाडी १६ पक्षकी रहनी है । पूस द्रव्यको चटु कीवर्षमें बनाना जाइये ।

कासनाशक (सं० पु०) कासविनाशक रसविधिय खाँसीकी एक दवा । पादक, मन्धक, कुडविष शान-

पर्णी और धान्यक प्रत्येकका चूर्ण समभाग तथा सध्वं-
चूर्ण सम मरीचचूर्ण डाल चार गुप्ताके तुल्य मधुके
साथ सेवन करनेसे कासरोग प्रारोग्य होता है।

(रसेन्द्रसारचंयन)

कासार (सं० पु०) कास-प्रारन्, कस्य जनस्य आसारो
यत्न। तुषागदयत्। ७७ २। १२६। १ हृत् सरोधर, वडा
तालाव। २ दण्डकजातीय कन्दोविशेष। उक्त कन्दमें
२० रगण रहते हैं। ३ स्वनामख्यात पक्कानविशेष,
एक मिटाई। मापकल्याणी (उडद), शृङ्गाटक
(सिंघाहा), कसर, शालूक प्रभृति द्रव्य घेषण कर
चतुर्भोग खण्ड बनाना पड़ते हैं। उसके पीछे उक्त
खण्डोंको तप्त घतमें भून चीनीको घाशनीमें डालते हैं।
कामार—रुचिकारक और अधिक रुच तथा पिच्छिल
न होनेवाला है। वह वमनेच्छा, कफ और पित्तको
नाश करता है। (भावप्रकाश)

कासारि (सं० पु०) कासस्य परिः नाशकः, क्ष-तत्।
कासमर्द, कसौंदा।

कासालु (सं० पु०) कासजनक शालुः, मध्यपदलो०।
कीदृशदेशप्रसिद्ध शालुविशेष। उसका संज्ञात
पर्याय—कासकन्द, कन्दालु, शालुक, शालु, विशाल-
पत्र और प्रवाण है। राजनिघण्टुके मतसे वह मधुर-
रस, उष्णवीर्य, शिरासंशोधक, अग्निकारक और कण्डु,
वायु, श्लेष्मरोग तथा अरुचिनाशक होता है।

कासिका (सं० स्त्री०) १ कफ, खासी। २ धनसुक्त, जङ्गली
मोठ।

कासिद (अ० पु०) पत्रवाहक, हरकारा।

कासिप—राजपूतोंकी एक जाति। कासिप लोग युक्त-
प्रदेशमें रहते हैं। अपने गोत्रसे वह कशपवंशीय
अत्रिय हैं। परन्तु बहुतसे लोग उन्हें अत्रिय नहीं
मानते।

कासिम—वसराके शासनकर्ता हजाजके भ्रातृपुत्र।
खुरीय अष्टम शताब्दकी भारतललनाके रूपकी तथा
तुर्कशासन खलीफाके अन्तःपुरमें निकली थी। खलीफा-
को लोभ लग गया। शस्त्रधारी परब उनकी मनसुष्टि
के लिये अर्पणपातमें चल दिये। सिन्धुप्रदेशके देवना
नामक बन्दरमें भारतवासियोंने अरबी पीतको प्राक-

मण किया था। उक्त घटनाका समाचार खलीफाको
मिला। अरबीकी मानरजाके लिये विंगतिवर्षीय सुह-
म्नद कासिम ३०० अश्वारोही और १००० पदातिके
साथ भेजे गये। युवकने विपुल साइसमे देवलबन्दर
प्राक्रमण किया। उस समय समस्त सिन्धुप्रदेश मुन-
तान सह हिन्दू राजा डाहिरके अधीन था। महाराज
डाहिर राज्यभी रक्षाके लिये कासिमसे बहुत लड़।
वह स्वयं हाथी पर चढ़ रणमें गये थे। घटनाक्रमसे
सुमनमानोंके फेंके अग्निगोलक द्वारा उनका हस्तो
पाहत हुआ और प्रवन्त वेगसे अश्वारोहीके साथ नदीके
खरस्रोतमें गिर पडा। हिन्दुओंका सैन्य राजा भी वह
श्रवस्था देख भागा था। वीर कासिम उस समय
सुविधा देव अपने मुष्टिभेद्य सैन्यमे डाहिरसे सागर
सदृश विपुल वाहिनो विदग्धित करने लगे। शन शत
ब्राह्मण और राजपुत सुगन्तमानोंके हाथ निहत्त हुये।
दुर्भाग्य क्रमसे हिन्दूराजने वाहनसह कालका प्रातिय
स्वीकार किया था।

कासिम देवलचेत्र परित्याग कर ब्राह्मणावादके
अभिमुख अग्रसर हुये। राजभक्त ब्राह्मण और राजपुत
डाहिरकी भाकस्त्रिक विपद् देख घबरा गये थे।
सुतरां सामर्थ्य रहते भी किसीने राजधानीको रक्षा-
के लिये विशेष यत्न न किया।

सुहम्नद कासिमने ब्राह्मणावाद नगरमें जाकर
देखा कि एक और गगनस्पर्शी प्रज्वलित चिता
सज्जित रही और दूसरी ओर महाराज डाहिरकी
वीर महिषी ससैन्य विपक्षके गतिरोधार्य उपस्थित
थीं! हिन्दू वीरबाला अनेक चेष्टा करने पर भी राज्य
बचा न सकीं। उन्होंने देखा कि भीरु ब्राह्मणोंकी देखा
देखी उनका राजपूत सैन्य भी पृष्ठ प्रदर्शन करता था।
उस समय पतिके मानकी रक्षाको सतीने सपत्नी और
पुरमहिलाधगके साथ उसी ज्वलत् चितापर आरोहण
किया। कासिम अनेक उपायोंके पीछे दो राजकन्याओं
को बन्दी बना स्वदेश लौट गये। तुर्कशासन खलीफाने
हामसकासकी सभामें उक्त दोनों राजकन्याओंका बुलाया
था। ज्येष्ठा कन्या सभामें जाकर राने लगी। खलीफाने
रानेका कारण पूछा था। राजवाजाने उत्तर दिया—

“मैं पापके पयोग्य हूँ। कासिमने मेरा ब्रह्म विगाड़ डाला है।” यह बात सुनते ही लड़कीयाने पादेय निकाला था,—“शौहर हो उम दुहल कासिमको पान कीव कर यहाँ ले पाओ।” पादेय पानित हुआ। कासिमका देखे राजसभामें जाया गया था। राज कमाने ईमकर कहा—“मेरी मनछटासना सिव दुबो मिन को दाम कमाया, प्रकृत पलम कासिम ठसका पाव न बा। तिसने मेरा विखर्यंय नाय दिया, लसोबे मिन बरका जुका दिया।”

०१४ ई की सुहृद कासिम मर गये।

कासिम—१ काफलासना पञ्चरो नामक पन्थके एक विता। इस पुस्तकमें दोस्त मुहम्मद ज़ानुबि पुत्र पक बर ज़ानुबि विप्रबका बर्खन है। इधे कासिमने १८४४ ई० को सम्पूर्ण किया था। पुस्तक पद्यात्मक है। अंगरेजोके आबुल मुबका विषय मो इममें उल्लिखित है। पामरेने रचनेमें शीम इन्हें कासिम पकबराबादो कहते हैं। २ इमोम मोर सुदरत इहाका उपनाम। उमाने एक लजकिरा (कविता का जोवनइत्ताल) लिखा था।

कासिम पन्थोकान् (मोर)—बहालवानि नवाब मोर आफर पन्थोकान्क नामाना। साधारणत इन्हें शीम मोरकासिम कहते थे। १७६० ई० को पञ्चरोको ने इन्हें खसूरके पदपर प्रतिष्ठित किया। कारक इन्हें बहालको पार्षिक पबका मसो मति विदित रहे। किन्तु पौके हिन पौके ही इको ने सुहरेमें वा निवास किया और अंगरेजोको बहालके निवासनेका बोडा ठठा किया। मोरकासिमको अमरेजाके राजनातिक पत्रिकार और अयसायिक प्रसारको इति पन्थोकेगगे को। १७६४ ई० को २रो पयसुको बदयनासे पर मुह हुआ। लममें इनको मीना करे को। फिर यह बहालके सि हासनसे जतारे गये। नवाब आफर पन्थोको पुनः पयना पद प्राप्त हुआ। मोरकासिम यह दाम देव पायक बन गये थे। इका ने सुहरेसे माग पटनेमत्रा पायक किया और बहाके बमस्त अंगरेजो का बध करनेका पादय दिया। इस समय बाटे बड़े

सब सिवाकर १५० अंगरेज रहे। इधो पन्थोबरको सोम्बर नामक किसी जर्मनको पाछासे सबके सब मारे गये। पन्थोबर माममें ही अंगरेजोने सुहरे पत्रिकार किया था। फिर इठो नवम्बरको पटने पर पायमप पडा। मोरकासिम पयगो फोख और दोहन से लयनल हो भाये थे। १७६४ ई० को ३धो पन्थोबरको बखरमें को मुह हुआ, लममें सुभा ठड-टोका को फोत्रको मेमर कारनाकने पूर्णपणे बरा दिहा। इधरे हो दिन मुगल बाहयाह माघ पायम अंगरेजो से पा मिले। फिर अंगरेजो कीव पयवको पायमप करनेके निधे जनी यो। मोरकासिमको कूट सेते मो लखनलके नवाबने अमरेजाके हाथ छोडना न चाहा। मोरकासिम फिर इहेसकपड हा भरी और बहा पायमपे रहते लगे। इनके पास कुछ बहामूल्य रत्न और मित्र बच गये थे। किन्तु पयने कपट प्रबन्ध बकारक इन्हें बहासे मो मान मोहादके रानाके पास जाकर रहना पडा। कुछबने पौके फिर यह मोबपुट गये और बहामें दिहा पहुँच १७७४ ई०को माघ पायमके मोकर बने। १७७७ ई० का इनका मृत्यु हुआ। इको ३ माघ बहालको सुबेदारो मितो यो।

कासिम पन्थोकान् नवाब—रामपुरवासे नवाबके चाचा। १८६८ ई० को यह बरेलोकमें रहते थे। १८६८ ई० को २२ वीं दिसम्बरको ही इनकी दुबिताका बध हुआ।

कासिम कादरो मेख—एक सुलसमान साधु। इन्हें नाम माघ कासिम चुनेमानो भी कहते थे। खजुनार में बनी है। इनके पुत्र शिख कबोर १६४४ ई० को लकोरमें मरे और मडे थे। साधारणतः शीव बर्ह बानापीर कहते रहे। माघ कासिम सुबेमानोके मख बरेका अय कररचित भूमि और माघ रोकोना पिन ग्रामसे बचता है।

कासिम कादो मौलाना—एक खेबद। इनका यवाचित नाम लत्रम इव-दोन् चीर लपकि अयुव कासिम रहा। यह अठदुल रचमान्जामीक मिथ है। इको ने हिरात से बाहयाह हुमायूक आता मिर्जा बामरान्क पाव

मस्केको यात्रा की। फिर १५५० ई० को उनके मरने पर यह बादशाह अकबरके समय भारत पाये थे। इन्होंने बहुत समय तक अलीकुली खान्के भ्राता वहादुर खान्के साथ काशीमें निवास किया और उनके मरने पर वहांसे लौट आगरामें डेरा डाल दिया। १५८० ई० की १७ वीं अप्रैलको आगरामें ही इनका मृत्यु हुआ।

कासिम खान्-१ बङ्गालके कोई नवाब। इस्लामखान् के मरने पर जहांगीरने कासिमखान्को बङ्गालका सूबेदार बनाकर भेजा था। उस समय निम्नवर्द्धमें मग लोगोंका उत्पात रहा। वह दौरात्म्य निवारण कर न सके। उसीसे पदच्युत होने पर १६१८ ई० को दिल्लीको भेजे गये।

२ मीरजाफरके भाई। शीराज-उद्-दौलाके समय कासिमखान् राजमहलके एक सेनाध्यक्ष रहे। शीराज-उद्-दौलाने अंगरेजोंके भयसे जब राजधानी छोड़ दाना-शाह नामक सुसज्जमान फकीरका आश्रय लिया, तब कासिमखान्ने खबर पाते ही गुप्तभाषसे जाकर नवाबकी बांध लिया और मीरजाफरके पास भेज दिया। शीराज-उद्-दौला और मीरजाफर देखे।

कासिम खान् जहीनी-बङ्गालके कोई सुसज्जमान नवाब फिदाखान्के मरने पर दिल्लीखान् शाहजहान्ने १६२७ ई० कासिमको बङ्गालकी सूबेदारी दी थी। वह धर्मभीरु, साहसी, वीर और सुकवि रहे। उनके समय पोर्तगोज बङ्गालमें प्राधान्य लाभ करते थे। कासिमने शाहजहान्की अनुमति ले १६३२ ई० को हुगलीमें उन्हें आक्रमण किया। ३ मास अशरोषके पीछे पोर्तगोजोंने हुगली छोड़ा थी। प्रायः सहस्राधिक पोर्तगोज मारे और चार हजार पकड़े गये थे। उस समय अनेक पोर्तगोज-रमणों गाहजहान्के अन्तःपुर-शोभार्थ दिल्लीको प्रेरित हुए। पोर्तगोज देखे। हुगली जयक अल्पकाल पीछे टाकानगरमें कासिम मर गये।

कासिम खान् जहीनी नवाब—बादशाह जहांगीर और शाह-जहांगीको सभाके एक सभासद। इनके अधिकारमें ५००० सवार रहे। यह सज्जवारके अधिवासी थे। मनीषा विगमसे इनका विवाह हुआ। वह नूरज

हांकी भगिनी रहें। इसीसे कभी कभी सभासद इन्हें जंसीमें कासिम खान् मनीषा कहते थे। यह एक दीवान्के ग्रन्थकार रहे। उपनाम कासिम था। १६२८ ई० की इन्हें शाहजहांगीरके समय फिदाई खान्के स्थान पर बङ्गालको सूबेदारी मिली। इन्होंने थोड़े १०००० पोर्तगोजोंको मार और वाकीको भगा हुगली अधिकार किया। इस घटनाके ३ दिन पीछे १६३१ ई० की इनका मृत्यु हुआ। इन्होंने आगरामें २० बीघे भूमि पर एक हड़त् भवन बनाया और १० बीघे भूमि पर एक उद्यान लगाया था। किन्तु प्रथम उद्यान कोई चिह्न देख नहीं पड़ता।

कासिम खान् शैख—इस्लाम खान्के भ्राता। इनका निवासस्थान फतेपुर सीकरी और उपाधि सुहृदगिम खान् रहा। बादशाह जहांगीरके समय इन्हें ४०००० सवारोंपर अधिकार मिला था। १६१३ ई० की भाईके मरने पर जहांगीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बनाया। इन्होंने आसाम आक्रमण किया था। किन्तु आसामियोंने रातको घावा कर इनको बहुतसो फौज मार डाली थी। इसीसे यह दिल्ली वापस बुलाये गये। फिर इनका मृत्यु हुआ।

कासिम वरीद शाह १—दक्षिणमें वरीदशाहीवंशके प्रतिष्ठाता। यह एक तुर्को या जार्जिय गुलाम रहे। घोर घोर ये दक्षिणके २५ वर्षोंमें शाह नवाबके वजोर हुवे और अपने प्रभावसे राज्यके प्रभु बन गये। फिर १४८२ ई० की इन्होंने आदिल शाह, निलाम शाह और इसाद शाहके परामर्शानुसार अपनेकी स्वतन्त्र बनाया तथा अपने नामका सिक्का चलाया। नवाबको केवल अहमदाबाद बौदरका नगर और दुर्ग मिला था। १२ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका १५०४ ई० की मृत्यु हुआ। फिर इनके पुत्र अमोर वरीदने राज्यका उत्तराधिकार पाया था। इन्होंने अपना वैभव खूब बढ़ाया और महम्मद शाहको अपने पितासे भी अधिक नीचा देखाया। इस वंशके जिन सात पुरुषोंने अहमदाबाद बौदरका राज्य चहाया, उनका नाम नीचे लिखे अनुसार है —

कासिम बरोद १म	१८८२ ई०
पमोर बरोद	१९०४ "
पमो बरोद (प्रथम नवाब)	१९४२ "
इलाहीम बरोदशाह	१९४२ "
कासिम बरोद शाह २य	१९४८ "
पमो बरोद शाह २य	१९०२ "
पमोर बरोद शाह २य	१९०८ "

कासिम बरोद शाह २य—पञ्चमटाबाद बोरके एक नवाब। १९४८ ई० को इन्हें अपने प्यारा ईलाहीम बरोदशाहका जलराधिकार मिला था। किन्तु १९०२ ई०को १ वर्ष राज्य करनेके पीछे इनका मृत्यु हुआ। फिर इनके पुत्र २य मोर्जा पमो बरोदमें राज्य पाया था। उन्होने २० वय राज्य चलाया। १९०८ ई०को २य पमोर बरोदमें इन्हें मार राज्य अधिकार किया। यह अपने बंशके अन्तिम नवाब थे।

कासिमबाजार—बगालके मुर्शिदाबाद जिलेका एक पुराना शहर। यह पचा २४ ° ४०' ०" उत्तरी दिशा ८८° १०' ५०" पूर्वादि तट पर अवस्थित है। ई० १८ म अलाहको बड़ा पोर्तगोत्रों, पारसीसों और अंगरेजों को रोठी थी। ईयमका बड़ा व्यापार होता था। आज कम बह बात नहीं। कासिमबाजारमें कई बड़े बड़े जमोन्दार रहते हैं।

कासियारि—बङ्गालका एक प्राचीन ग्राम। यह मैदानी पुरी प्रायः १०० मीच दूर दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। वहाँ अपने प्राचीन कीर्तियोंके सम्भाव्यत्व पड़े हैं। उनमें हुदय्दर दुर्गाका पश्चिम-पश्चिम भाग भी बहुत कम बियाड़ा है। यह राज्यके बाहुका प्रसारके बना है। हुदय्दर दुर्गा प्रायः १० फीट लंबा है। प्राचीनके बगलमें चार मीठराबोंका बरामदा है। पश्चिम की पूर्वदिक्के प्राग्भागमें शिवमन्दिर बना है। उच्च मन्दिरके अन्तर्गतमें किसी रूपमें शिवलिंग प्रतिष्ठित है। दोष मन्दिरके सामने पश्चिम प्राग्भागमें एक मसजिद है। वहाँ लक्ष्मीया भाषामें खोदित शिलालिपि मिली है। उसमें पाठके प्रथम पङ्क्ति है कि श्रीगणेशके राजत्व काल सुषण्ड तादरने यह मसजिद बनवायी थी, ११०२ हिजरीकी वषका निर्मांककाय मीच हुआ।

पूर्वदिक् एक नमीर दीर्घिका (लसेवा) है। लक्ष्मीयानुक्त कहते हैं। यह लुप्त लुप्तपौरि परिपूर्ण है। वहाँ सुगन्धका नामको एक वृक्ष (गांभ) है। उनमें सुगन्ध द्वारा निर्मित पनेत्र मसजिदें और इमारतें खड़ी हैं। सुगन्धके ग्रामनकाल कासिमबादि ग्राम उपर कासिमबादि केन्द्रकाल और तद्वतीनदारीका नहर बनाया था। किसी मसजिदमें पमो भाषामें खोदित एक प्रस्तरलिपि है। उसमें भी मान्य पङ्क्ति है कि यह श्रीगणेशके समय बना हो। अत्र मान्यके मध्य किसी स्थान पर एक सुगन्धमान खोदको पत्तर मूर्तिका मध्यकल्प पड़ा है। उसके गात्रमें पारवो भाषा में खोदित एक शिलालिपि है। वहाँमें भी श्रीगणेशके नामको प्रथम मिलता है।

कासियारिसे कुछ दक्षिण सुगन्धमारी ग्राम है। सुगन्धमानेने सर्वप्रथम हुदय्दरके हिन्दुओंका बड़ा मन्दिरादि अक्षर बनके स्थानमें मसजिद बनवायी थी। फिर मसजिदमें सुगन्धमारीको सुगन्धमानोंको पराजय किया। अक्षरत उच्च पराजयके पीछे जो सुगन्धमारी नाम पड़ा गया।

हुदय्दरके सम्बन्धमें ज्ञानीय प्रवाद इस प्रकार है— बङ्गोसके देवराजर्षीय महाराज कपिलेश्वरने यह मन्दिर बनवाया था। फिर वहाँमें इसमें जयनेश्वर नामक शिवलिंग स्थापन किया। कहते हैं यह स्नान पक्षी बननेके विदा था। हुदय्दरका बहरही थी। उस समय वहाँ बाबरक नामक कोई राजा रहे। बाबरक नामके जो सम्रतः बाबूमि परमना कहाया है। उनके पत्निक सुगन्धतो याये थीं। उनकी शिकर कोई रथक प्रतिदिन सुषण्डेशके पश्चिम तोर चराने जाता था। कुछ दिन पीछे एक गावका दुग्ध प्रसूय बटने लगा। राजाने इनकर सोचा अक्षरतः रथक सुषा हार जोमियर बनमें दुग्धकर पो जाता होगा। उन्होंने किसीदिन रथकोको सुषा विस्तर तिरफकार किया था। रथक सुषा तिरफकार जो दुग्ध दिन दुग्ध बटनका पता सिनेके बिये लक्षी गावके पीछे पीछे फिरता रहा। गावने बनमें जाकर प्रथम पिट पर चान काको फिर

वह नदी पार हो पूर्वमुख एक वनमें चली गयी। रक्तकने पहुँच उसका अनुसरण किया था। कुछ दूर जाकर उसने देखा कि गाय शिवलिङ्ग पर दुग्धधारा छोड़ती थी। उसने उसी दिन घर जा राजासे उक्त घटना बता दी। वाघराजने फिर वह बात महाराज कपिलेश्वरसे कही। कपिलेश्वरने उस शिवलिङ्ग पर कुसुम्वरकामन्दिर बनवाया और गगनेश्वर लिङ्गका नाम रखाया। उन्होंने योगेश्वरकुण्ड भी खनन कराया था। सुसप्तमानोंके समय अब्दुल समद नामक किसी प्रसिद्ध सुसप्तमान फकीरने वलपूर्वक उक्त मन्दिर अधिकार और उसमें गोहत्या कर मन्दिरकी पवित्रता विगाड डाली थी। फिर उन्होंने शिवलिङ्गको स्थानान्तरित कर चत्वरक मध्य तीन मसजिदें बनायीं। कहते हैं कि गोरक्षसे मन्दिर कलङ्कित होने पर महादेवकी लिङ्गमूर्ति अन्तर्हित हो एगरा नामक स्थानमें प्रकाशित हुये थे। फकीरके पहुँचनेसे पहले 'गाजिया महाराज' नामक कोई महन्त महादेवके पूजक रहे। 'पिण्ठियाबुड़ो' नाम्नी उनके कोई भैरवी थी। लोगोंके कथनानुसार महादेवके अन्तर्हित होने पर महन्त और उनको भैरवी दोनों ऐश्वर्यात्मिक वस्त्र सूपमें बैठ आकाशपथसे पूर्वमुख उड़े चले जाते थे। किन्तु पश्चिमध्य भैरवी किसी जलपूर्ण स्थान पर गिर पड़ी। उसीसे गाजिया महाराजकी भी उतरना पडा। उनके उतरनेका स्थान "कुन्दासनि" ग्राम कहाता है। उस ग्राममें आज भी महन्त और भैरवीकी मूर्ति स्थापित है। महन्तमूर्तिकी पूजा होती है। कास्तकमसे उक्त स्थान घने जंगलसे भर गया है। वहाँ कोई सहज ही घुस नहीं सकता। वंगाली सन् १२३१ को वनमाछी पण्डा नामक किसी व्यक्तिने मेदिनीपुर कलकटरके प्रादेशसे जंगल कटाया और कूपके मध्य दो खण्ड महादेवकी भग्न लिङ्गमूर्तिकी पाया था।

कुसुम्वरमन्दिरमें आज भी अनेक मूर्तियां अक्षुण्ण भावसे दण्डायमान हैं। उक्त प्रस्तरमन्दिर देखनेमें अतिमनोरम है। वह २०० हाथ लम्बा और १५० हाथ चौड़ा है। मन्दिरकी पश्चिम दीवारमें उडिया भाषाकी एक शिलालिपि विद्यमान है। किन्तु उसके

प्रायः समस्त अक्षर बिगड़ गये हैं। सुनरां इस समय तक उसका पाठोद्धार नहीं हुआ। प्रवाद है कि सुसप्तमानोंने वह शिलालिपि विगाड डाली है।

कासी (सं० त्रि०) कामी इत्यास्ति, काम-इति। कास-रोगविशिष्ट, खांसोका बीमार। (हि०) कागे देखो।

कामीभूतिका (सं० स्त्री०) मोराट्टभूतिका, एक मटी।

कासोस (सं० स्त्री०) कासीं सुदृकामं स्यति नाश-यति, कासी-सो-क। १ उपधातुविशेष, कासीस। २ मात्तिक सुराविशेष, एक शराब। ३ तुल्यक, तूतिया। कासोस भस्मघट्टय, किञ्चित् भस्म और लवणरस होता है। (उत्प०)

कासीसहय (सं० स्त्री०) धातु कासीस और पुष्यजा-सीस। पुष्य कासीस किञ्चित् पीत और तुपर रस होता है। (उत्प०)

कासुन्द (सं० पु०) कासमर्द, कर्षोऽऽ।

कासुम्भी (सं० पु०) कौसुम्भीशानि, एक धान।

कासुर (सं० पु०) महिष, भैंसा।

कासू (सं० स्त्री०) कश्चिन्नु कुस्तिन शब्दं गच्छति, कश्-ज्, प्रथोदरादित्वात् शस्य सत्वम्। पितृकामिष्यर्हः। उ०। १। ००। एक विकलवाक्य, उलटी बात। २ शक्ति-अस्त्र, बरछो भाला। ३ दोसि, चमक। ४ भाषा, जवान्। ५ रोग, बीमारी। ६ बुद्धि, समझ।

कासुरी (सं० स्त्री०) इत्था कासूः, कांश्-एरच्। काश्-गोचोर्त्वात् एरच्। वा५। १। २०। का प्रभन्-प्रस्त्र, छोटी बरछो।

कासृति (सं० स्त्री०) कुस्तिता सृतिः सरणम्, कीः का-देयः। कुस्तिन गमन, खराब चाल।

कासेच्छ (सं० पु०) इत्थ काशच्छण, छोटा कास।

कासाली (सं० स्त्री०) प्रतिबला, एक वृत्ती।

कास्तान्द, कासमर्द देखो।

कास्टिक (सं० पु० Caustic) जारक, तेजाब। इसके पडनेसे चर्म जल जाता या भावल उभर जाता है।

कास्त—महाराष्ट्रकी एक ब्राह्मण जाति। कास्त लोग खेतौशरीका काम करते और अधिकतर पूना तथा खानदेशमें रहते हैं। दूसरे ब्राह्मणोंमें उनका पद

सामान्य समझा जाता है। वह बहुत कम लिखते पठते और बेश्वाह भ्रम पर चमते हैं। कहते हैं उनको रसतिवा कुछ ठिकाना नहीं। सूखे पूनाके ब्राह्मण काशीकी शूद्र समझते हैं। येमवा सरकारकी पाशाही इन्हें पात्र तक दानपुत्र नहीं मिलता।

काशीर (स० छी०) ईपत्तोर पञ्चाष्टि कोः काशिय निपातनात् सुट् च । अतोऽन्त्ये नरे । स ६ । १ । ५१ ।
१ ईपत्तोरसुत्र नवरथियेव । २ तीक्ष्णोद्, तीक्ष्णोद्वा ।

काशय (स० पु०) काशयं एयोदरादिस्तात् यष्य ष । गाशायो, मशायो ।

काः कश्चिः ।

काह (चिं० छि० बि०) क्वा, कोन चीत्र ।

काहना (स० खो०) काहना एयोदरादिस्तात् सज्ज क । काहना भाव, एक बाबा ।

काहल (स० छी०) कुक्षितं पक्षर्यं इलं वाक्च ध्वनि र्वा इलं बहुव्री० । १ पक्षर्यं वाक्च, समझते न धान वाली बात । (पु०) २ कुहूट, सुरगा । ३ बिहाल विनाश । ४ मन्दभाष, कोई पाशाह । ५ इहत् उडा, बडा ठाल । उनका अपर स स्मृत नाम मजानाद है । (बि०) ६ यन्त्र सुधा । ७ विद्या, उडा । ८ सुरा ।

काहना (स० खी०) कुक्षितं इति मय्यं करोति, कु इल पञ्-टाप, को काशिय । १ काशयन्त्रियेव, एक बाबा । २ पक्षरीयियेव, कोई परी ।

काहनापुत्र (स० पु०) काहनाकृतिरिव पुत्र्यस्य । अतोऽहूपूर इच, अहिह बपूरीका पिङ्ग ।

काहल (स० पु०) कं सुखं पाहलति ददाति, क पा इह्लम् । महाईव ।

"तन्कोऽह्वय ईव वास्ति-वर्तमान ।" (मत्, ५३० १०)

काहली (स० खी०) कं सुखं पाहलति ददाति, क पा इह्लम् डोप् । १ सुवती, अवाग पीरत । (पु०) २ क्षीय श्रविका नाम । ३ एक कोटी जाति । यह लहीसाकी तरफ पार जाती है ।

काशावाह (स० छी०) पातोमि कोनिवावा गङ्गबङ्ग मय्य ।

काहार (काहार) कातिवियेव, एक भीम । कश्चयं

पिताके पीरस पीर निष्क जातोव माताके यर्मके कहारोको उत्पति है। इनकी प्रधान लपयौबिवा खेतो करने, पानकी ठोमि बहुको से जाने, मझको पकड़ने पीर लीकरी करनेसे चमते हैं। काहारका मामा निष्क व्ययचारदि साधारण हिन्दुको को मति है। वह अपनेको बरासम्बका रंगोद्भव मानते हैं। उनमें एक पञ्चत प्रवाद प्रचलित है। काहार कहते हैं कि गिरि-एक पहाडमें ममभरात्रका एक लपवन रहा। बिन्दु पतिव्रतिमें वह मष्ट हो गया। कुछ बाल पोछे ममभ-रात्रि फिर लपवन मराना चाहा बा। तन्काने शोचका को 'को व्यक्ति एक रात्रिके मध्य हमारा लपवन गङ्गा जलसे पूज कर लहेया उसे हम अपने कन्या पीर पाका राज्य दान करेंगे।' काहारोमें इस समय चन्द्रा पत् नामक कोई प्रधान व्यक्ति रहा। वह रात्रकन्या पीर राज्यके कोमसे उक्त कार्य करनी पर लीकृत हुआ। उसने पसुरबाच नामक एक बडा 'बाच बाबा बा। फिर चन्द्रावत्नी बावनगङ्गाका जल से जाकर अपने पशोमल काहारोके माहात्म्यसे उक्त बलद्वारा लपतका लपवन पूर्य कर दिया। उक्त मगभरात्रने देखा कि चन्द्रावत् मोक्ष हो लपवनको जलसे भर उनको कन्या पीर पचं राज्य की खेनेपाका बा। उस समय तन्काने चन्द्रावत्को कन्या देना अनुचित समझ एक भीमल उद्भावन किया बा। उनको पाशाये प्रभात कोनेके पूर्व हो काक बोचने कया। काहारोमें देखा कि प्रमात हुआ बा, बिन्दु उनका कार्य पचता रहा। फिर मगभ रात्रके मयसे व्यथा हो भागने लगी। जिसके हाथमें बांस रहा, वह काहार हो गया। फिर रक्षो रक्षने वाली मयदिया ब्राह्मण बने से। बिन्दु मयसमें यह बात नहीं मिलती, काहारोकी सातुह पीर रात्रवार माया कहति निष्कको है। पक्षीयको मगभरात्रने सन्तुष्ट हो लखे प्रायः मारे तोन येर काव्य प्रथति मय्य दिया बा।

काहार काति विविध मायामें विमल है—रामको मुडिया भीमर यमवार मङ्गुल, तुङ्गा ममदिया प्रथति। काहारके कबनाहुवार प्रथम कोई लंको विभाग न रहा। पक्षी वह नया जिसके रमचपुर नामक स्थानमें बसते थे। काहारोकी कातिके प्रधान

व्यक्तिने दो विवाह किये । किन्तु पत्नीद्वयके मध्य नित्य विवाट होता था । उसीसे उन्होंने दोनों एक पत्नीको यशपुर भेज दिया । यशपुर जानिधानी पत्नीसे यशवार और दूसरीसे रवानो दृष्टे हैं । सन्तान परगनेके रवानियोंमें नाम और कश्यप नामसे दो श्रेणी देख पड़ती हैं । काहार ऊर्ध्वतन सात पुरुषोंका सम्पर्क देख विवाह करते हैं । विवाहप्रथा साधारण हिन्दुओंके समान है । काहारोंकी स्त्रियां विग्रेय अग्रप्राध होने से पञ्चायतके अनुमतिक्रमसे पतिको छोड़ फिर विवाह कर सकती है । उनकी पञ्चायत अधिक जमता रखती है । उसे कोई प्रमान्य समझ नहीं सकता । धर्म मन्थनमें काहार शैव, गान्ध और गणपत्य है । उनमें वैष्णव बहुत अल्प होते हैं । वह अन्यान्य देवताओंकी भी उपासना करते हैं । काहारोंमें नोकरी करनेवाले अन्यान्य श्रेणीकी अपेक्षा सामाजिक सम्मानमें श्रेष्ठ हैं ।

युक्तप्रदेशके काहार द्विजातिके घर पानी भरते विवाहादि अवसरोंमें अन्यान्य कार्य भी यथायोग्य करते हैं । वृष्टि होने पर वह तानाओंमें बेल डाल देते हैं । शरत्कृतुमें मिंवाडा नगनेसे उसे कच्चा-पक्का बेच पपनी जीविका चलाते हैं । डोली ले जानेका कार्य भी उन्हींके जिम्मे है ।

काहारक (सं० पु०) कुक्षितं गिविकाटिवहनरूपनोव-
हृत्तिमवलम्ब्य आहरति जीवनप्राप्ता निर्वाहयति, कु
भा-हृ-श्वल्, कोः काटेगः । गिविकादि वाहक जाति-
विशेष, काहार ।

“तथा गन्धिका बोरा, कुक्कोपजीविहा ।

आवा काहाराका पुटा ह्यस्य स वाहयति च ॥”

(केमिनिसाधे पा० १० अ०)

काहि (हि० सर्व०) किमन्ने, किसे ।

काहिन (प्र० वि०) १ अलस, सुस्त । २ रुग्ण, बीमार ;

३ दुर्बल, कमजोर । ४ लज्ज, दुबला ।

काहिली (अ० स्त्री०) आनस्य, सुस्ती ।

काही (सं० स्त्री०) केन वायुना आहन्यते क-आ-हन-
उ-डीप् । कुटल हस, कुटकीका पेट ।

काही (हि० वि०) १ नील हरित्, कासा-हरा घासके

रंगवाना । (पु०) २ वर्णकविशेष, कोई रंग । वृ
नील-हरित् रहता और नील, इनदो तथा फिटकरी
मिलानेसे बनता है ।

काहु, काह श्लो ।

काह (हि० सर्व०) किमो ।

काह (फा० पु०) सनाद, खम । काहको बड़नामें
काह, सनाद, तामिलमें गलातु, तेलगुमें काव और
मिंहलीमें सनट कहते हैं । (Lactuca Scariola)
काह पश्चिम हिमालयमें मरीसे कुनावर तक सान
हजारसे दश हजार फीट ऊंचे उत्पन्न होता है । वह
पश्चिम तिब्बतमें भी मिलता है । उसमें कुछ कुछ काटि
रहते हैं । फिर साईवेरियासे काह अद्दरेनो द्वीपों और
कनारोज तक चला गया है ।

यह गोभीकी मांतिका पैदा है । पत्र दीर्घ और
कोमल होते हैं । शीतकालको भारतके उद्यानोंमें
उसे शाककी भांति बोते हैं ।

काहके बोजमें खच्छ, मधुर और स्फटिकप्रभ तैल
निकलता है । गत १८६४ ई० को पञ्जावप्रदेशमें नोके
समय लाहौरमें उसका नमूना दिखाया गया था ।

काह शीतल और क्षान्तिनागक है । भारतका
काह ईशानके काहमें अच्छा होता है । किन्तु भारतके
श्रीपधालयोंमें उसका व्यवहार कम है । काह युरो-
पीयोके काम आता है । खृष्टीय संवत्में प्रायः ४००
वर्ष पूर्व वह ईरानकी दादशाहोंके भोजनमें श्ववृत्त
होता था । भारतीय काह नहीं खाते ।

अक्कोवरसे फरवरी मासतक काह उत्पन्न होता
है । गोभीकी भांति उसमें भी एक डण्डल निकलता,
जो ऊपरकी रहता है । उसीमें फूल और बीज आते
हैं । काहकी अफीम अच्छी नहीं होती ।

काहजी (सं० पु०) ज्योतिषग्रन्थ-रचयिता महादेवके
पिता

काहृत—मैसूर प्रदेशकी एक कृषक-जाति । इसकी
संख्या दश हजारके करीब है ।

काह्य (सं० पु०) कह्यम्य अपत्यम्, कह्य-अण्य
मिगदिकोऽप । पा ४ । १ । ११२ । कह्यके पुत्र ।

काहे (हि० क्रि०) क्यों, क्या बात है ।

काशोढ़ (सं० पु०) काशोड़व्य चपलम्, काशोड़ पत्र । काशोड़वंशीय ।

कि (हिं० कि० वि०) १ केषि, किस प्रकार, क्या । (पत्र) २ संयोगक शब्द । ३ पदवा, या ।

कि (सं० पद्य०) १ का जिज्ञासुबोधक शब्द । २ भाष्यं वा विषयबोधक शब्द । ३ निवृत्तवाचक शब्द । ४ वितर्क । ५ निम्न ।

किंगरई (हिं० खो०) इंसबिरीय, एक वीटा । बह आनर्बतीयो मिनतो पीर बंतीयो रहती है । किंगरईके नीचे ०।० इव नंदि होती हैं । पत्तोंका टेप्य चौवार्द इव है । पापाइ आनच मास लमई फून पानि हैं । पुष्य प्रथम रत्नवर्ण रहति, किन्तु पयात् खेतवर्ण पारच करति हैं । पत्र पीर बीज पीपवर्षे प्यरहत होता है । लकड़ीके कोयलीके बाहुद बनतो है । किंगरई भारतवर्षमें सर्वत्र मिलतो है ।

किंगरिया—एक लोच प्राणि । इसका पीसा मीष मांसका है । सुप्तमहेच्छेके पूर्विय माममें दंत जातिके लोग बिरिय तथा पाये जाते हैं ।

किंगरो (हिं० खो०) पाद्यबिरिय एक वाजा । यह छोटे चिहरी या डारमी—मैसी होती है । गट पीर होगी किंगरो बजा कर मोक्ष माया करति हैं ।

किंगोरा (हिं० पु०) जूषबिरिय, एक झाड़ी । यह ३।३ हाथ ऊँचा पीर बंतीया होता है । किंगोरा मूमि पर दूर तक नहीं फेलाता, सोबा छपर कठता है । पत्र ३।३ रंगुलि दीर्घ रहति हैं । लकड़े मान्ना भागमें दूर दूर दांत होती हैं । किंगोरेमें सुदृष्ट पुष्य पीर भाज या कालो कालो पनिया पातो हैं । पनि खो खो लोच जाया करते हैं । किंगोरामें हाव चक्रीका माति सुच होता है । उषे बिलमारा पीर बिजा सो कहति हैं ।

किंहरगाईन (सं० पु०) गिष्ठा-प्रवासीबिरिय, लानीम ली एक तरबीव । इसे किमो लमई विद्वान्ने निकाना था । उसमें बानकीके बिद्ये लयाममें एक पाठमाथा खोली । लमई पनिक प्रकारकी पीसो नामको एकवट पी, जिसमें बह चक्री पयरा पादिमें चक्काउके पाव पाव पपनेमनकी भी बहना सके । किंहरगाईन

पत्र पनेक सेमोंमें चम गया है । उसके द्वारा बाल लोको बिलविभिन्न बाहलखण्डे सिधा दी जातो है । बानपुर बिलीके मसबानपुरनिबासी पण्डित योरोमहूर महने हिन्दोका बहुत पच्छा किंहरगाईन बनाया है । बिंदु (सं० जि०) किं इच्छति, किं वेदिधवात् क्यप च । किमिच्छ, क्या चाहनेवाला ।

किंराजम् (सं० पु०) क कुक्षितो राजा किम्-राजम् निम्नार्थत्वात् न टप्य । कुक्षित राजा खराब बादमाह । (जि) २ निम्नित राजकुम्, सुई बादमाहवाला ।

किंसाह (सं० पु०) किं किञ्चित् कुक्षितं वा मुखाति, किम्-श-सुद्, विगतोः शिवाः इत् । १। १। १ ग्रन्थशुभ, पनात्रका रिया । २ वाच, तीर । ३ कदुपयो एक बिद्धिया । ४ रोटक, रोटी ।

किंशुक (सं० पु०) किं किञ्चित् शुक्लं शुक्लवर्ण बिरिय इव लपमि० । पनामयुक्त, ठाक या टेल्का पीड़ । किंशुकका पुष्य पाहति पीर बर्बबिपयमें शुचपयोके चक्षु सेवा होता है । उसी हेतु किंशुक नाम पड़ा । इसका संकृत पर्याय—पलाय पर्ब, यक्षिय रत्नपुष्य, चारलेठ, वातहर, ब्रह्मरुच पीर समिहर है । (पापरवाम) क्य ईकी । २ मन्दीहय । ३ पुराकोल बनतीह ।

“एतल विचरने इव इतरवच न ।” (चिडुगाव ३८ । ६९)

किंशुबचार (सं० पु०) पनामयुक्त, ठाकवा लमव । किंशुबतेम (सं० खो०) पनामयुक्तेम, ठाकवा तेव । बह पित्तप्रक्षीय होता है ।

किंशुका (सं० खो०) १ पनामयुक्त डाकवा पीड़ । २ ज्वातिपयो, रत्नमोत । ३ मन्दीहय ।

किंशुकादिगच (सं० पु०) किंशुक प्रकृति सुवमसुद्, डाक वगैरच चोलीका जखीरा । जयमें निम्नलिखित द्रव्य बनिमित्त हैं—किंशुक काश्मरी, बिज्ज पत्रि मज्ज, बिष्णुट खोबाब, घानपर्वा, सिंहपुच्छिहय, जिंरा, पाटका, कण्ठफारो, मुहती पीर बिज्ज ।

(रक्षेववार-वच)

किंशुवच (सं० पु०) किंशुक निपातान्तात् साधु । १ चर्षितार्थवसाय बड़ा डाक । २ लोचकण्ठ पयो ।

किंशुलुकागिरि (सं० पु०) किंशुलुकप्रधानो गिरिः
भ्रकारस्य दीर्घत्वम् । इत्यन्यो मन्त्रायां कोटरकिङ्करोऽयम् ।
प १।१।२१०। बहुसंख्यक पलागृहचविगिट पवत,
टाकके बहुतसे पेड रसुनेवाना पहाड ।

किंशुलुकादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त शब्दगण
विशेष, लफर्जीका एक जखोरा । उममें निम्नलिखित
शब्द आते हैं— किंशुलुक, शाख, नड, भञ्जन, भञ्जन,
लोहित और कुहूट ।

विंस (सं० द्वि०) किं कुम्भितं स्यति क्तिन्ति, किम्
सो-क । कुम्भित छेदनकारी, खराव घाटनेवाला ।

किंसिखि (सं० पु०) कः कुम्भितः सखा । कुम्भित सखा,
बुरा दोस्त ।

“म किं सखा सख म गानि योऽपिपम् ?” (किण्वत्प्रयोग)

किंसाह, निशार देखो ।

किंस्वित् (म० अर्थ०) १ प्रत्यार्थबोधक शब्द ।
० सन्देहवाचक शब्द ।

किक (अ० स्त्री० = Kick) पदाघात, पैरकी ठोकर,
नात ।

किकारी—एक शूद्र जाति । इस जातिके लोग डलिया
टोकरी आदि बनाकर आजोबिका चलाते हैं ।

किकि (म० पु०) कक-इन् पृषोदरादित्वात् षट्-
रिच्त्वम् । १ चापपची २ नौलकण्ठ । २ नारिकेल,
नारियल ।

किकिदिव (सं० पु०) किकि इति अर्थशब्देन
दायति क्रीडति, किकि-दिव्-क । चापपची, नौल-
कण्ठ । इसका पर्याय—खर्णचातक, चाप, चास,
किकिदिव, किकीदिव, किकीदिव, किकिदोव,
किकिदिव और खर्णचूड है ।

किकिदोषिति (सं० पु०) कुहूट, सुरगा ।

किकियाना (हिं० स्त्री०) १ कोसाहन करना, गोर
मचाना, चिहाना । २ रोदन करना, रोना । ३ कों
करना, दबना ।

किकिर (सं० पु०) १ कोकिल, कोयल । २ पची,
चिडिया । ३ अश्व, बांछा ।

किकिरा (वे० अर्थ०) क्त भवत्ये कर्मणि क पृषोदरा

दित्वात् साधुः । खण्ड खण्ड करके, टुकड़े टुकड़े
चडा कर ।

किकी, किकि देखो ।

किकीदिव, किनिदिव देखो ।

किकीदिव, किनिदिव देखो ।

किकीदोव, किकिदिव देखो ।

किकीरी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा ।

किकिट वै० द्वि०) कुम्भित, खराव ।

“किट्टिशाभेय के पया परको रफने ।”

(वैजयोप-प्रस्ता, ३।४।१।१।)

किकिग (म० पु०) १ केशादिद्रु कोटविशेष, वानवर्ग
रह उडानेवाला एक कीडा । केग, रोम, नख, टन्त
आदि खानेवाले कोठेको किकिग कहते हैं । (यक्ष) ।
२ मामदारण रोग, चमडा उडानेवालो बीमारी ।
सका रोगमें बरुण-पत्र जनसे पीस घृत मिजा मन्ते
और सगति है । फिर गोमय रगडनेसे भी उपकार
होता है । (मेघनरकण्टो)

किकिम, किदिम देखो ।

किकिसाद (सं० पु०) राजिमत् सर्पविशेष, एक सर्प ।
किकिसाट राजिमान् सर्पोंके अन्तर्भूत है । मध्यवयम-
को उसका विष प्रति प्रखर रहता है । किकिसादके
दंगनमें त्वगादिकी शुक्लता, गीतञ्जर, रोमहर्ष,
स्राव्यता, दृष्टस्याममें शोथ, सुप्त नासिका द्वारा कफ-
स्राव, वमन, चक्षुहयमें निरन्तर कण्डू, कण्डूद्वेषमें
सूजन, सुषुंरगच्छ, निःश्वास भ्रवरोध, अन्धकारमें प्रवेश
करनेकी भांति अनुभव और अन्यान्य कफजन्य वेदना
होती है । विरोगे अर्थमें किकिसादि देखो ।

किक्कस (सं० पु०) दले हुये प्रनाजका दाना ।

किखि (सं० स्त्री०) खदति हिनस्ति, निपातनात्
साधुः । १ लघुशृगाल, मोमडो । (पु०) २ वानर, बन्दर ।

किङ्गो (म० स्त्री०) किङ्खित् कण्ठति, किम्-कण-
इन्-ङीप् । छोटे छोटे घुंघरू ।

किङ्कर (सं० द्वि०) किङ्खित् करोति, किम्-क-ट । दास,
नोकर ।

किङ्करगोविन्द—बुन्देलखण्डके पधियासी एक कवि ।
इसका जन्म १७५३ ई०में हुआ था और शान्तिरसमें
कविता करते थे ।

किङ्करसैन—एक बंधानो चायक । दिव्योवादि मुयक
 सखाट नवापुर प्राचके समय ठनके पुन पात्रिम् उग्र
 याम् नवान् विहार इवोमादि नात्रिम पीय दोषान्
 रणे । तयो समय वृषभोति एक जैन-उद्द होन पीत्रदार
 यी । पात्रिमके माय जैन-उद्द होनको जमीति न
 रको ठसोधि तन्ने पदव्यान होना पडा । पात्रिमनि
 पयनि पितवान् बाभौविको वृषभकोका पीत्रदार बनावा
 था । पदव्यान पीत्रदार जन उद्द-होनके पबोन
 किङ्करसैन पैयकार रणे । बह पति चतुर पीर कार्य
 दण धी । तेन उद्द होनको जन पर प्रीति तो रणे
 किन्तु बह किङ्करसैन पर पूर्ण विद्यास न रकते धी ।
 कारण किङ्करसैनको बुद्धि पीर जमनाको ठह समय
 कोई राजपुत्रप पाता न था । जैन-उद्द होनके निचय
 दिया कि बाभौविकके पुरुषनि हो नह उन्ने पीत्रदारो-
 का कामजपत्र तमभा दिव्यो वसे काटोधि । किन्तु
 पानिनि विचरन्ने देव जैन-उद्द-होनके उन्ने पयना उद्दे
 वता मोक्ष जमनेको पनुरोव किया था । बाभौविक मी
 किङ्करसैनको जानति पीर तनपर विद्यास भी रकते धी ।
 उन्नेनि जैन-उद्द-होनको बहका मीत्रा कि किङ्करसैनको
 कागजपत्र बना बह दिव्यो का सकति धी । जैन-उद्द
 होनके पयनि मनमें सोचा—किङ्करसैन किनी समय
 हमारे हो पबोनस्य कर्मचारी रणे । तनको कामजपत्र
 समझा देनेको बात बह बाभौविकने हमारा पयमान
 किया है । बह विवेचनाये उन्ने नि कागज पत्र जोड़े
 न धी । बाभौविकने तको सुत्रपर जैन-उद्द-होनके बुद्धि
 दे दिया । परावर्तानिके निचय बह हुआ । परावो-
 पिको पीर पोसन्नाकांनि जैन-उद्द-होनका एक लिया
 था । बाभौविकने दिनपत् नामक किनो पत्रिके
 पबोन नवावका सैन्ध भेजा था । किन्तु जैन उद्द होनके
 सन्धिका प्रस्ताव बर दिनपत्के पास पादमो पुरुषाया ।
 तसके पदु बते हो पचानक या पूर्वके किनो पदुवन्ना
 मुधार परावोमो तोपका एक गोला दिनपत्संघके
 बाहर लमा था । सेनाप्यच तत दार्मिके नवावको पीत्रमि
 नहबह पदु गयो । जैन-उद्द होन उमो वृषभमि किङ्कर
 सैनको हो नाथ नि दिव्यो वसे गये । बहा पदु बते हो
 बह मर गये । किङ्करसैन स्वदेमको बाटे पार निर्भोद-

पित्त सुरगिदावाट बाहर नवावके मिसि । नवाव उन्ने
 जैन-उद्द होनका पादमो समझ कृप हो गये किन्तु
 कम क्लोवको द्विग मुकने मोठी मोठी वार्ति बहने
 गयी । फिर उन्ना ने किङ्करसैनको हो वृषभकोके कर
 लंपावकपद पर वेठाया था । एक वर्ष पोखे नवा-
 वने उमके विभाव तबब लिया । किङ्करसैन विद्याव
 लभभाने सुरगिदावाट गये धी । कागजपत्रको फट
 बना नवावने उन्ने कैद किया था । खेटजानेनि उन्ने
 मैनका कृप नमक डालकर खानेको दिया जाता था ।
 १००८ ई. के पोखे किनो समय किङ्करसैनने पर
 मोक्ष गमन किया । तनका घर सखावना परावर्तानिके
 रथा । परावर्तानिका एक स्थान पात्र मो किङ्करसैनका
 गड लडाता है ।

किङ्को (सं० खी०) किङ्कर-कोट् । दासो, उद्दसुरे ।
 किङ्कतंथ्य (सं० जि०) क्या ; करना उचित नोन फर्र
 यात्रिव ।

किङ्कतंथ्यता (सं० खी०) किङ्कतंथ्यपत्र माय किङ्कतंथ्य-
 तत् । क्या करना पदु गा बेसो चिन्ता ।

किङ्कतंथ्यविमूढ (सं० जि०) किङ्कतंथ्ये कर्तव्यतानिचये
 विमूढः ०-तत् । कर्तव्यनिचय करनेको समयमें जो
 पयना फर्र ठहरा न सकता हो ।

किङ्किव (सं० पु०) सात्वतर्षभोत्र कोट्ट राजा ।
 "वचनान्त निर्वोधिः किङ्किवोत्तरीय व ।" (मनुष्य)

किङ्किपी (सं० खी०) किमपि किङ्किहा लक्षति किम्-
 कच-नन्-कोप इवोदराकित्यात् साह । १ कडिदेयका
 पामरचवियेय कमरका एक नहना, बरचनो ।
 तकका लक्षत पयाव—पुत्रवपिडका, बहचो, किङ्कि-
 चिका, किङ्किचि, सुद्रवप्यी प्रतिधरा, किङ्किवोका,
 बहचिका, सुद्रिका पीर बर्तरी है । २ पञ्जरसमुद्र
 द्वाचाविमिय, एक पहा रंगुर । ३ हचविमिय एक पिक ।
 ४ देवोस्तुतिविमिय । ५ विबहान हय, बैयो । ६ बुवाप
 विमिय, बहाईका एक उचियार । (पयन १। २० वने)
 किङ्किवोका (सं० खी०) किङ्किवो स्वार्ये बन् टाप ।
 पुद्रवपिडका, बरचनो ।

किङ्किवोकाचम (सं० पु० खी०) एक तोर्ष । बह तोर्षनि
 रचनेने परत्रय पयरोनाक मितता है ।
 (मनुष्य, १५ १२ व)

किङ्किणीकी (सं० त्रि०) किङ्किणीति कृत्वा कायति गय्दायते, किङ्किणी-का-कः, किङ्किणीकः क्षुद्रवृष्टि का स अस्यास्ति, किङ्किणीक-इनि । क्षुद्रवृष्टिकायुक्त, करघनीवाला ।

किङ्किणीतैल (द्विष्टत्)—द्वैद्यकीकृत किमी किञ्चिका तैल । उक्त तैलके व्यवहारसे छानमें सन सन गच्छ-का होना, काल बहना, वधिरता, शिरारोग, चक्षुरोग, वृष्टरोध और मन्वास्तम्भादि मिट जाना है । प्रसून करनेका नियम यह है—कायके लिये घाटित्वभक्ता की २ सेर चार उच्च १६ सेर ए फत्र पका ४ सेर रहने-से छतार लेना चाहिये । भूँटि, कालधुस्तूर और निगुण्डी प्रत्येक २ सेर परिमाण और समनियममें फिर तीन प्रकारका काय बनाते हैं । कल्कायें ४ सेर सर्पपतैल, घटिमधु, पिप्पली, सुन्ता, गन्धक, कुष्ठ, दुरालभा, कर्कटचूर्ण, आदित्वभक्तावोज, धुस्तूरबोज, राक्षा, मधुरिका, भूटिकासूल, ईशनाइनका सूल, विपमाधुक, मञ्जिष्ठा और सहोत्रनकी छान प्रत्येक ४ तोला डाल कर पकाना चाहिये ।

किङ्किनि (सं० पु०) किङ्किने शब्दः ।

किङ्किनी (सं० स्त्री०) १ विकटतृण, वैची । २ आस्त-द्राघा, खट्टा अंगूर ।

किङ्किर (सं० स्त्री०) किं कुक्षितं मदवारि किरति विजि-पति, किम्-हा-क । १ हस्तिकुम्भ, हाथीका मत्स्या । (पु०) २ हृदय कृष्यमक्षिका, भौरा । ३ कीकिल, कायल । ४ घोटक, घोडा । ५ कामट्टेव । ६ रक्तवर्ण, लालरग । (त्रि०) ७ रक्तवर्णविगिष्ट, सुखे लाल ।

किङ्किरा (सं० स्त्री०) किं कुक्षितं यथा तथा किरति शरी-रात् निःसरति, किम्-क-क-टाप् । १ रक्त, खून, लहू । २ विकटतृण, वैचीका पेड ।

किङ्किराट (सं० पु०) १ वधूरक वृक्ष, बवूनका पेड किङ्किराट शील, मेदक, आडक और कफ, कुष्ठ, क्षमि एवं विपनागक हाता है । (वैद्यकविषय)

किङ्किरान (सं० पु०) किङ्किरं रक्तवर्णत्वं प्रसति पुष्य-काले विस्तारयति, किङ्किर-अत-अण् । १ अशोक वृक्ष । २ इन्दुर्व । ३ शुकपत्नी, तोता । ४ नीकिष्ठ, कोयल । ५ अष्टकपीतपुष्पाख्य भग्योक्षुप, एक लाल

भाडो कटमैया । ६ पुष्यविशेष, एक फूल । उभका संस्कृत पर्याय—ह्रिमगौर, पीतक, पीतभद्रक, विप्रलोभी, पीतान्नान और पट्टपदानन्द है । राजनिघण्टुके मतमें किङ्किरात कपाय एवं तिष्ठरस, उष्यवीर्य, अग्निदीपक और कफ, वायु, कण्ठ, शोथ, रक्त तथा त्वक्-दोषनाशक है । फिर भावप्रकाशमें उभे विपासा, दाह, शोथ, वमि और क्षमिनागक भी कहा है ।

किङ्किरान (सं० पु०) किङ्किराय रक्तत्वाय प्रसति पर्याप्नोति, किङ्किर-अल्-अच् । वधूरवृक्ष, बवूनका पेड ।

किङ्किरो (सं० पु०) किङ्किरं रक्तवर्णफलं अत्यश्मिन्, किङ्किर-इनि । विकटतृण, वैची ।

किङ्किर (सं० अर्थ०) किं च किल च, इन्द्रः । १ क्रोध से । २ अशुद्धसे ।

किङ्किनाम (सं० पु०) अशोकवृक्ष ।

किङ्किण (सं० त्रि०) किं कियत्परिमाणं सणमत्र, बहुव्री० । कितने समयजात, कितने जगमें सम्पन्न, कितनी देरमें बना हुआ ।

किङ्किव (सं० त्रि०) किं किन्नामधेयं गोत्रमस्य, बहुव्री० । कोन गोत्रीय, किस वंशजात, किस गोत्र या वंशवाला ।

किञ्चकिच (हिं० स्त्री०) १ निरयक वादविवाद, झूठा झगड़ा । २ वाक् युद्ध, तकरार ।

किञ्चकिचाना (हिं० स्त्री०) १ क्रोधके कारण दस्तवर्षण करना, दांत पीसना । २ पूर्ण बलप्रयोग करना, पुरी ताकत लगाना । ३ क्रुद्ध होना, गुस्सा पाना ।

किञ्चकिचाष्ट (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, दांत पिसाई ।

किञ्चकिची (हिं० स्त्री०) क्रोध, गुस्सा, किञ्चकिचाष्ट ।

किञ्चकिच (हिं० वि०) १ क्रमरहित, वैमिलसिन्हा । २ अस्पष्ट, जो साफ न हो ।

किञ्चडाना (हिं० स्त्री०) आंखमें कीचड़ आना, आंख उठना ।

किञ्चगपिचर, किञ्चरकिचर, किञ्चविच शब्दः ।

किञ्च (सं० अर्थ०) किम् च च च इत्येव इन्द्रः । १ आर-भसे, शुरूमें । २ समुच्चय पर, जखीमें । ३ साकल्यमें । ४ सम्भवतः, गालिवन् । ५ मेदपूर्वक, बंटवारसे ।

किञ्चन (सं० पु०) किम-चन्-अच् । १ इन्द्रिय

पञ्चम, बड़ा काव्य । (पञ्च०) २ कोई चमिर्दिष्ट वस्तु या चीज । ३ पत्य, बोझ । ४ अनाकथ्य ।

किञ्चनक (सं० पु०) नागराजविधिव, नागो के एक राजा ।

किञ्चिञ्चोरितपत्रिका (सं० स्त्री०) याकठचविधिव, पत्राक्षी ।

किञ्चित् (सं० पञ्च०) किम् च किन् च इवोद्देश्यम् । १ पत्य, काम, बोझ । इयथा संस्कृत पर्याय—ईपत् मन्नात् पीर अनाकथ्यम् ।

“चरुमिवादिचिरिच एवमन्नात्” (उभयतन्त्र)

२ कोई चमिर्दिष्ट वस्तु । (वि०) ३ चतुर्थांश, चौथाई ।

किञ्चित्कर (सं० त्रि०) किञ्चिदपि करोति किञ्चित्करः । पत्यकर्याकारक बोझा काम करनेवाला ।

किञ्चित्पाणि (सं० पु०) अपमितमान, दो तोसेको तोह ।

किञ्चिदुष्य (सं० त्रि०) किञ्चित् ईपत् तथ्यम् कर्मका० । ईपत् तथ्य बोझा गर्मे । कर्मका संस्कृत पर्याय—कोष्य पीर करोष्यम् ।

किञ्चिद्वृत् (सं० त्रि०) किञ्चित् पत्यपरिमात्रं व्यंज्यं यत्न बहुव्री० । पत्य व्यंज, कुछ काम ।

किञ्चिप्यात्र (सं० त्रि०) किञ्चित् पत्या मात्रा यत्न, बहुव्री० । पत्यपरिमित बोझासा ।

किञ्चिनिच (सं० पु०) किञ्चित् शुद्धम्यति, किम् शुद्धप (सोमपात्) इः रुद्रायां बन् इवोदरादित्वात् घाङ् । मण्डूपद, किंशुवा ।

किञ्चिदुच (सं० पु०) किञ्चित् शुद्धम्यति, किम् शुद्धम्य शु रुद्रायां बन् । मण्डूपद, किंशुवा । उसका संस्कृत पर्याय—मद्योन्मत्ता, मण्डूपद, मण्डूपकी मूर्च्छता पीर लुप्त है ।

किञ्चुनक, विच निच ईको ।

किञ्चुन्दम् (सं० त्रि०) किञ्च विद्वत्ता पयब्रज्जन करने वाला ।

किञ्च (सं० स्त्री०) किञ्चित् जन्म अथ, प्रयोदरादित्वात् च कोप । १ किञ्चरुत्त कर्मका रिया । २ घृवाक, कामकला लपटी । ३ मानकेयारपुत्र्य ।

किञ्चुय (सं० स्त्री०) किञ्चित् अय्य यत्न, बहुव्री० । तोर्यविधिव । उक्त तोर्यमिं ज्ञान करनेसे अपरिमित अपका पत्र मिसता है । (अन्तर ५५ ५५)

किञ्चत (सं० पु०) किञ्चित् कर्त्त यत्न, बहुव्री० । १ पद्यकेयार कामकला रिया । २ किञ्चरुत्तमात् ।

किञ्चरुत्त (सं० पु० स्त्री०) किञ्चित् अकति पयवारयति, किम्-अथ बाहुनकात् च । १ नागकेयारपुत्र्य । २ नाग केयारुत्त । ३ पद्यकेयार, कामकला रिया । बड़ बीज कोपरी चारो पीर विहित रचना है । उसका संस्कृत पर्याय—मकरन्द, शिथार पद्यकेयार, किञ्च पीतपराय, पुष्ट पीर चाम्येयका है । वाचनिचपट्ट के मतमें बड़ मधुर एवं कटुरम इक शीतल कश्चित्कारक पीर विक्त टप्या हाइ तथा सुष्यमकनायक है । फिर मावप्रकायमें किञ्चरुत्तको कथ्य, रसाङ्ग, विच पीर गोपरोयनायक कहा है ।

किञ्चरुत्तो (सं० त्रि०) किञ्चरुत्तोऽप्यादि किञ्चरुत्त इति शिथारकुञ्ज, रियेदार ।

“किञ्चरुत्तो री वाचिर्वाचकनायकम्” (शिथारनामा १ : ११)

किञ्चरुत्तुच (सं० स्त्री०) कञ्चुत्त एक पहाड़ी मठो ।

किटिचिट (हिं० पु०) वादविवाद, भ्रगडा भ्रंभट ।

किटकिटागा (हिं० स्त्री०) १ दन्तचर्चक करना, हात पोचना किचकिचाना । २ दातो के नीचे बहूत पड़ना ।

किटकिना (हिं० पु०) १ कोई इय्यावेज । उमके द्वारा ठेकेदार अपना ठेका अपने पीरके लुप्टी अनामियोके नाम कर देता है । २ अन्वविधिव एक ठप्या । किट किनि पर सोनार सोना चर्दोके पत्रो या तारोको पीट कर बैनबूटे बनाते हैं ।

किटकिनादार (हिं० पु०) ठेकेदारके ठेके पर कोई चीज देनेवाला यादमी ।

किटकिरा किटकिना ईको ।

किटि (सं० पु०) चेटति घम्न् प्रतिवैगल गच्छति, मलादौर्त्त उदिय्य गच्छति वा किट् मता इन् रगुण-पात् किञ्च । १ वनशूकर, बड़का लूहर । २ वाराहो-काट् ।

किटिदृष्टा (सं० स्त्री०) शूकरदृष्ट, सूपरवी डाढ़ ।

किटिभ (सं० पु०) किटिरिव भानि, किटि-भा-क ।
 १ केशकीट, जूं । २ कुष्ठरोगभेद, किमी किस्मका कोट ।
 (स्त्री०) ३ तुल्यक, तूतिया ।

किटिभकुष्ठ (सं० पु०) कुष्ठरोगभेद, किमी किस्मका
 कोट । उसमें चर्म शुष्क सगुनी भानि क्षण्यवर्ण और
 कठोर पड जाता है ।

किटिम (सं० स्त्री०) १ कुष्ठकुष्ठभेद, किमी किस्मका
 हलका कोट । अत्यन्त कष्ट विगिष्ट एवं स्याययुक्त
 स्निग्ध क्षण्यवर्ण गोलाकार घनमन्त्रिषिट पिडका
 विगिष्टको किटिभकृष्ट कहते हैं । कृष्ट श्लो । काष्ठीकके
 साथ क्षण्यमन्सुककी गिखा पीस कर लगानेसे उक्त
 रोग अच्छा हो जाता है ।

किटिमूलक (सं० पु०) वाराहीकन्द, शूकरकन्द ।
 किटिनाभ, किटिपृष्ठ श्लो ।

किटी, किटि श्लो ।

किट्ट (सं० स्त्री०) क्कटिति लोहादि घात्वययात् निर्गच्छति
 किट्टक्त भागमगाक्षस्य अनित्यत्वात् नेट् । १ लौह
 आदि वातुका मैल, लोहे आदिका मोरवा । शतवर्ष-
 का उत्तम, अगोति वर्षका मध्यम और पष्टि वर्षका
 पधम होता है । उससे हीन किट्ट विपतुल्य है । उस-
 में लौहका ही गुण रहता है । (भाष्यभाग) किट्टका
 शोधन इस प्रकार है—किट्टको विभोतक काष्ठके
 अग्निसे जला जव अग्निवर्ण हो जाये, तब गोमूत्रमें
 बुझा लेना चाहिये । इस प्रकार उसे ७ बार शोधन
 करते हैं । फिर किट्टको चूर्ण कर त्रिफलाके द्विगुण
 काधमें पकाते हैं । उसे मधुके साथ सेवन करने पर
 पाण्डुरोग शारीर्य होता है । किट्ट मधुर, कटु, उष्ण,
 और कृमि, वात, शूल, मेह, गुल्म, एवं शोफघ्न है ।
 (राजनिवृत्) २ पुरीष, मेला । ३ कण्ठमल, खूंट ।
 ४ शुक, वीर्य । ५ तेजमल, काट, कीट ।

किट्टक, किट्ट श्लो ।

किट्टवर्जित (सं० स्त्री०) किट्टेन सलेन वर्जितम्, श-तत् ।
 १ शुकघातु । शुक श्लो । (त्रि०) २ मनशून्य, निर्मल,
 साफ, जो मेला न हो ।

किट्टाल (सं० पु०) किट्टेन सलेन अचलति पर्याप्नोति,
 किट्ट-अल्-अच् । १ लौहगूथ, लोहेका मोरवा ।

२ ताम्रकलश, तांबेका घडा । (स्त्री०) ३ ताम्र,
 तावा । ४ मंडूर ।

किट्टिम (सं० स्त्री०) द्रवद्रव्यविगिप, एक रकीक चीज ।
 किट्टकना (हिं० क्रि०) चम टैना, गिम्मकना ।

किट्टकिट्टाना (हिं० क्रि०) किट्टकिट्टाना, टांत
 पीमना ।

किण (सं० पु०) कण गनी अच् पृषोढगादित्वात् अत
 इत्वम् । १ मांसपत्रिय, गोश की गांड । २ घृण, घुन ।

“यस्योत्पयं दस्योपरेरपि सदा पृष्टे न नात, किणः ।”
 (मण्डकटिब भाटक)

३ इल्ल, जख । ४ करोर, करोन । ५ क्रोगाट्ट । ६ मयितो-
 परिस्व फेनाम वध्त्, मयी हुडे चीज पर भाग कैमो
 चीज । ७ शोनिकन्दरोग, एक बीमारी । ८ वर्षणज
 चिह्न, रगडका निगान् । ९ शुष्क वणचिन्ह, सूखे जखुम-
 का निगान ।

किणवान् (सं० पु०) किणोऽप्याप्ति, किण-मतुप् मस्य
 वः । किणविगिट, मसूत, कडा ।

किणालात (सं० पु०) इन्द्रका नामान्तर ।

किणि (सं० स्त्री०) किणाय तन्निहतये प्रभवति,
 किण वाहुलकात् इन् । अपामार्ग, लटजोरा ।
 अपामार्ग श्लो ।

किणिष्ठि, किणि श्लो ।

किणिही (सं० स्त्री०) किणः अस्यस्य, किण इनिः
 किणिनो व्रणान् इन्ति, किणिन्-इन्-ड-हीप् । १ अपा-
 मार्ग, लटजोरा । २ क्षण्यकटमीडध, एक पेड ।
 ३ श्वेतगोकर्षी ।

किण्व (सं० पु०-स्त्री०) कण-कन् बहुलवचनात् इत्वम् ।
 अण्वविगिटकयोवादि। अण्व् । १११ । १ सुरावीज, शरावका
 नशा बटानिवाली एक चीज । २ पाप, गुनाह ।

किण्वक, किण्व श्लो ।

किण्वमूलक (सं० पु०) वकुलहृद्य, मौनसिरीका पेड ।
 निखो (सं० पु०) १ अख, घोडा । (वि०) २ पापयुक्त,
 गुनाहगार ।

कित (सं० पु०) सुनिविरीप ।

कित (हिं० क्रि० वि०) १ कुव, कहां । २ किस ओर,
 किधर ।

कितक (हिं० क्रि० वि०) कियत्, कितना ।

कितना (हि० वि०) कितन, किम कुदर । २ पचिक
केवा । यह मण्ड कितानिगीपके मीति मी स्वयङ्गत
होता है ।

कितव (म० पु०) कितं वायति कितन वाति वा
कित व-क । १ पागाकीडक, किमागवात्र कुवरी
२ हुप्रापुस वगुंरुवा पीड । ३ मल, मलवाला पादमी
४ वक्षक, काडिवात्र । ५ भूत ठम । ६ वल, नामाकून
७ मोीचना नामक गन्धद्रव्य । ८ घालवण गण्ड
बल पु बुदार वात्र ।

कितवात्र (म० पु०) हुप्रा वपुस, वगुंरुवा पीड ।
कित (प० पु०) १ काठ काट कतः श्यात २ उड,
वाक । ३ मण्या, पट्ट । ४ विद्यारम ग मतवका
दिप्या । ५ प्राङ्गव सुनाग, अमानुषा टकड़ा ।

कितव (प० स्त्री०) १ पुस्तक, पत्र । २ बहोखाता
रत्रिटर ।

कितवो (प० वि०) पुस्तकाकार कितव केना
यवा पुस्तक पाठ करकेसिने कितवो कोड़ा
कहते हैं ।

कितिक विना हैकी ।

कितिक, विना हैकी ।

कितो, विना हैकी ।

कितार, विना हैकी ।

किति (हि० स्त्री०) कीर्ति नामधरी ।

कितुर—वैतनाम बिलेका पुराना शहर । यह पचा १५
१५ स० देसा ७४ इट० पु० पर सामगाँवके दक्षिण
१४ मील चलकर पवर्षत है । लोकसंख्या ७५०००
काग मग है । यहां म्बून पाठ पापिस और सामवार
तथा वृद्धसतिवारकी बाजार चलता है ।

कितारा, कना हैकी ।

कितर (हि० स्त्री० वि०) कुत्र कहाँ, किम और ।

कितो (हि० प०) पचवा या ता ।

कित (हि० म०) १ 'कित' का बहुवचन । (हि
ि०) २ कदा नहीं । ३ पचव्य वैदक । (पु०)
४ वर्षेचक्रक रमहका दग ।

कितका (हि० पु०) कवि० चनाकका टकड़ा ।

कितका (हि० वि०) क मनुष्य, किरा ।

कितकर—एक जाति । युक्तपदेगर्म दम जातिके कामोकी
संख्या पचिक पाई कामो है । ये पग्नेको सजिय
बननाम हैं परंतु और जग हईं पजिय नहीं
मानते ।

कितक (म० स्त्री०) हुसका पम्परस्य बखन, पीठ
की भीतरी छाल ।

कितानो (हि० स्त्री०) पक्षीविशेष एक चिड़िया ।
वृक्ष पत्ता मगवर्षके निकट रहता है । हमका वक्ष
चरिह^१ और शिर तथा कण्ठ अंतर्गर्भ होता है ।
पत्ता टेलका समय मई और सितम्बर मासका मध्य
भाग है ।

कितार कितार हैकी ।

कितारदार (हि० वि०) कितारिष का, कितमि और रई ।

कितारिष (हि० पु०) एक और । यह दूरोक तानकी
कीनी तपक जगता है । कितारिष इरोके ताने-कानेके
कुछ ज्यादा मोटा रहता और तानकी बचानेअनिधि
जगता है ।

कितारा (प० पु०) तीर कुत्र प्रस्तामय ।

कितारी (हि० स्त्री०) १ गोड, काँपवा । २ सुनहला
या लपकला गाँडा ।

कितो (म० स्त्री०) कुस हूचतो, काँडे कटेवा ।

कितानु (म० पु०) कि कृशिता ततुरव्य, बहुश्री० ।
सर्पनाम मखडा ।

कितानाम् (म० प०) इरभियाप्रतिगयेन किं कृशिन
रुचर्षे, किम तमप पासुः । दो कृशित ह्यप्यो कि मख
पतिशय कृशिन बटगर ।

कित (म० प०) कित तु व इवोइ^१न^२ । पामु,
मिजिन, पववाक्याका सहोचरोबक । २ पूर्वशाक्याका
विश्वोचक, वरनु, बलिह । ३ शिर क्या ।

कितक (म० पु०) प्योतिपयाकीक वशादि पकादग
करक न चलाने पत्र करव । कितक करवमें
क्या मनेके मनुष्यका मित्र एवं पमिज और धम
तवा पचर्ममें कोई भेटवण नहीं रहता । शिर
वच पच और विचारकाय शिव जाना है । (भीरुपदे)

कितन (म० पु०) मधामारनाक लोचबिरीय किन्दन
तर्षेयं तिहमस्य पदान कानये मनुष्य समया कच

से कूट परम गति पाता है । (भाषा, वन० २१ ५०) ।
किन्दम (सं० पु०) ऋषिचिन्मै । किन्दम ऋषि नृग-
रूप धारणकर नृगरूपधरिणी स्त्रीके साथ किसी
काल विहार करते थे । उसी समय महारान पाण्डु ने
उन्हें मार डाला । उसीने किन्दमने पाण्डुको प्रति-
गाप दिया था—'तुम भी सङ्गमकालमें मरोगे ।'

(भाषा, चाटि० ११८ ५०) ।

किन्दमं (सं० पु०) कोई ऋषि ।

किन्दान (सं० स्त्री०) किञ्चित्पि दानं आवश्यकं यच्च,
वहन्ने० । मरकतोद्येस्य तीर्थाविशेष । किन्दान तोयमें
स्नान करनेके उपरिमित दानका फल मिलता है ।

(भाषा, वन २१ ५०) ।

किन्दास (सं० पु०) कः कुक्षितो दामः, कर्मधा० ।
निन्दित दाम, खराब नौकर ।

किन्दी (सं० पु०) घोटक, घोड़ा ।

किन्दुविल्व (सं० पु० स्त्री०) राटदेशीय एक ग्राम ।
किन्दुविल्व अजयनदीके तीरे अवस्थित है । उसे
केन्दुविल्व, केन्दुविल्ल और केन्दुविल भी कहते हैं ।
प्रसिद्ध वैष्णव कवि जयदेव गोस्वामीने उक्त ग्राममें
कन्यशरण किया था । यहाँ प्रति वर्ष माघ मासकी
'जयदेवका मेला' लगता है । राजकल इस केन्दुविल
कहते हैं । जयदेव देखो ।

किन्देवत (सं० त्रि०) का देवताऽस्य, किम्-देवता-
श्च । १ किस देवताका उपासक, किस देवताकी पूजा
करनेवाला । २ किस देवतासम्बन्धीय ।

किन्देवत्व (सं० त्रि०) किन्देवतस्य भावः, किन्दे-
वतत्वम् । किन्देवतका धर्म ।

किन्धी (सं० पु०) किं कुक्षिता धीः बुद्धिरस्यस्य,
किम्-धी इति । अश्व, घोड़ा ।

किन्नर (सं० पु०) किं कुक्षितो नरः, कर्मधा० ।
१ देश्योनिविशेष, एक प्रकारके देव । किन्नरका मुख
अश्वकी भांति रहता, किन्तु अन्यान्य समस्त अवयव
मनुष्यतुल्य देख पड़ता है । उसका संस्कृत पर्याय—
किम्बुरुप, सुरङ्गवदन, मयू, अश्वसुख, गीतमोदी और
हरिणमतेक है । किन्नर अतिशय सङ्गीतपटु होता
है । तुम्बुरु प्रभृति स्वर्गांगक भी उक्त-जातिके ही हैं ।
२ वर्षविशेष । ३ कोई धीव-उपासक ।

किन्नर (हिं० पु०) १ वादविवाद, भगडा । २ नखरा ।
३ वधाना ।

किन्नरकण्ठरस—वैद्यकीय औषधविशेष, एक टवा ।
पारद, गन्धाक, अभ्र, मृगमांसिक एवं लौह प्रत्येक
२ तैला, वैश्रान्त ४ मापा, स्वर्ण २ मापा तथा रौप्य
१ तोला सबकी वाजक, ज्ञानाण्यष्टिका, हहती, कण्ठ-
कार्गी, आर्द्रक और राष्ट्रीके रसमें मिला पृथक् पृथक्
भायना देना चाहिए । फिर २ रत्ती की बराबर घटिका
बना छायामें सूखा देनेमें उक्त औषध प्रस्तुत जाता है ।
किन्नरकण्ठरस छोड़े दिन नियमित व्यवहार करनेसे
किन्नरकी भांति कण्ठपर बलता और रसरस, काम,
ज्ञान, एवं कफज तथा वातश्लेष्मज रोग मिटता है ।

किन्नरवर्ष (सं० पु०) वर्षविशेष, एक सुक्त । किन्नर-
वर्ष हिमालय पर्वतके उत्तरभागमें अवस्थित है ।

किन्नरी (सं० स्त्री०) किन्नर-डीप् । किन्नर जातीय स्त्री ।

'जीमन्ति च रश्मि भस्मापा बरन्ति ।

यथा हेमामयटादि रश्मि, किन्नरीगवा, १'

(भाषा, ५ । ११ । ४८)

किन्नरीयोगा (सं० स्त्री०) किसी प्रकारका धोपायन्त्र ।
पूर्वकालकी उक्त ग्रन्थ नारियमके त्र्योपदेशे बनता
था । आज प्रत्येक पश्चिमिदेशके अण्ड या रजतादि
धातु द्वारा भी प्रस्तुत करते हैं । वह कच्छपीवीणाकी
अपेक्षा आकारमें कुछ छोटी है । किन्नरी-जातीय बोणा
हो पहले यह दियोंने 'किन्नर' और दृनानियोंमें
'शम्बुका' नामसे विख्यात थी । वह दो प्रकारकी
होती है—लक्ष्मी और हहती । हहतीमें तीन तुम्बु
लगती हैं ।

किन्नरेश (सं० पु०) किन्नराणां ईशो राजा । किन्नर-
राज कुवेर । काशीखण्डमें लिखा है—कुवेरने महा-
तपस्याके बल महादेवके निकट गुह्यक, यज्ञ, किन्नर
प्रभृतिके आधिपत्य और धनेश्वरत्वका वर पाया था ।
(काशीखण्ड, १२ ५०)

किन्नरेश्वर (सं० पु०) किन्नराणां ईश्वरः, इ-तत् ।
कुवेर । कश्चिरे देखो ।

किन्नामधेय (सं० त्रि०) किं नामधेयस्य, बहुव्री० ।
किन्नामविशिष्ट, किस नामवाला ।

विज्ञाना (स० वि०) किं नाम पद्य, बहुव्री० ।

विज्ञानपद ईकी ।

विज्ञानिमत (स० वि०) किं निमित्त कारण पद्य बहुव्री० । किञ्च कारण, किञ्च विद्ये ।

विज्ञु (सं० पद्य०) किं च तु च इति ईन्द्र । १ प्रथम स्त्री, ष्या । २ वितर्क, मापद । ३ साहज्य, जये । ४ खान कर्त्ता कर्त्ता । ५ कारण, स्त्रीकार केषे ।

विद्य (सं० पु०) मन्त्र ज्ञानविद्य, मेखिका एक ऋषिः । इति ईकी ।

विद्यापत (सं० स्त्री०) १ पञ्चम इति का भाव, कापी इति का इत्यतः । २ मितव्ययिता, कामपथी ।

विद्यायती (सं० वि०) मितव्ययी, कामपथी, संमन कर चर्त्तनेवाहा ।

विद्यार्थ (वि० स्त्री०) पश्चिमदिक्, मगरिकी मित्त ।

विद्यता (सं० पु०) १ पश्चिमदिक् मगरिकी मित्त । सुमन्मान् लोको पीर सुख रथ मन्त्रा पदार्थे ई । २ मन्त्रा ।

विद्यता पालम (सं० पु०) १ ईश्वर, सबदा माणिक । २ मन्त्राद् वाह्याह ।

विद्यतागाह (सं० पु०) विता, वाहिर, वाप ।

विद्यतागाही, विज्ञानपद ईकी ।

विद्यतागुमा (सं० पु०) पश्चिमदिक्, एक पौजार । विद्य तागुमा पश्चिमदिक् लो बहुता ई । परव माणिक उक्त यन्त्रको व्यवहार करती ई । उक्त एक सुई दिनी समती का पश्चिम पोरकी हो अपना सुख रक्ती ई ।

विम् (सं० पद्य०) हु बाहुलभात् विम् । १ लुम् । निम्दा, लो लो । २ वितर्क, बीनसा । ३ निषिद्ध, नही । ४ मन्त्र कर्त्ता ष्या ।

विम् (सं० वि०) १ आय । २ वितर्क । ३ निम्दा । ४ मन्त्र ।

विमदि (सं० पद्य०) विं च पदि च इति ईन्द्र । १ कोर्त्त मी । २ पश्चिमदिक् लो कर कर बताया न जानि याता ।

“समन्त्रोर्त्तौ इति विमदि करनी विज्ञानः
 कर्त्तारं विमदि करनी ईन्द्र ईन्द्र । (मन्त्रान् १ च)

विमरिक् (वि० पु०) पश्चिमदिक्, विमो विज्ञाना

वपडा । विमरिक् विद्वक्, येन तथा सूत्र रहता पीर करती बनता ई । विम्नु पात्र कर नाम लये लई मे मो बना लेते ई । उक्त मन्त्र पंगरीत्रीके लेम्बिक् (Combrck) का पद्यार्थ ई ।

विमर्त्त (सं० पद्य०) किं पद्ये प्रयोगार्त्त पद्य, बहुव्री० । विमि कारण, विमि विद्ये ष्या ।

विमकार (सं० वि०) किं कोट्टम पाशापोट्टम, बहु व्री० । किञ्च प्रकार पाचारविमिद्ध कोमो सुत्त यत्त याता ।

विमप्य (सं० वि०) का पाप्या पद्य, बहुव्री० । ष्या नामविमिद्ध, विम नामयाता ।

विमङ्ग (वि० पु०) विमार्त्त ।

विमाम (वि० पु०) विमाम लमो एक मर्त्त । विमाम मन्त्रको तरव माठा बनाया जाता ई ।

विमाम्ना (सं० पु०) सुतकोट्टाप्य, सुवा विमि- को मण ।

विमारवाक् (सं० वि०) सुतकोट्टक सुवारी सुवा सुतकोट्टा ।

विमारोवापी (सं० स्त्री०) सुतकोट्टा, सुविका विम ।

विमाम (सं० पु०) १ रीति, ईम । २ मन्त्रिका तात्रा र्त्त ।

विमि (वि० वि० वि०) विमि रीतिये, स्त्रीकार, केषे ।

“विमि कर इ तुल कर्त्तारपद्य” (लुकीदाव)

विमिच्छत्र (सं० पु०) विमिच्छतीति मन्त्रेन दानार्त्त कायति मन्त्रावर्त्त इव इति ईन्द्रादिच्छात् वाङ् । १ मन्त्र- विद्य । उक्त मन्त्र करनीके समय प्राणियोसे पूजना पद्यता ई वक्त्ता वाहते ई । फिर वक्त्ता को मांगती, वक्त्ता मन्त्र- कारी कर्त्ते देते ई । मन्त्रोद्योगपुराणके विद्या ई— मन्त्रावर्त्त करनीके पुत्र पयोचित्ति किसी कर्त्तारकी उपस्थित हो मन्त्रावर्त्तको वक्त्ता करनी पर लयात ई । उक्त समय समाके समस्त राजापौत्रे वक्त्ताके विद्वक् पद्य कारण किया । मन्त्रावर्त्त पयोचित्ति पद्यते बाहुल्यके पक्षे ही उक्त समस्त राजापौत्रोको इति दिवा था । परन्तु राजापौत्रे निरस्त न हो सुद्धमे पन्थाय पद्य कर पयोचित्त्त को परामित कर दिया । पयोचित्त्त उक्त पद्यार अपमानित हो कर्मो विवाह न करनी का

प्रतिज्ञा की। और अपने पिताके बहुत समझाने पर भी उस प्रतिज्ञाको तोडा न था। किन्तु उद्योपित माता के आदेशानुसार किम्बिक्रक व्रतके समय अशोचितने उद्देशःस्वरसे घोषणा की था—“हमारा धन पर अधि-
कार नहीं है, अतएव यह हमारे गरीब द्वारा कोई प्रयोजन सिद्ध करना चाहता हो तो इस उमकी इच्छा पूर्ण कर देंगे।” उस समय पिता क्रमशः अपने निकट उपस्थित हो कहा “वत् ! हमें पौत्रके सम्पत्ता दर्शन करा दो।” अशोचितने अपने पिताकी उक्त प्रार्थना परिवर्तन करनेकी बहुतमी चेष्टा की, परन्तु कृतार्थ न हो सके। सुतरां विवाह करनेके लिये बाध्य हो उन्हीं उमो राजकन्याका पाणिग्रहण किया था।”
(वि०) २ क्या चाहनेवाला।

“एते सोमेन्द्रादेरभ्येयव किमिदिके।”

महा पृथा नमस्कारेः रघुपतिवत्पुत्रे ॥ (भारत, पृष्ठ १२५०)

किमीटो (दे० पु०) किम्बिक्रानामिति चरति, अमि-
दानीम-इति वृषोदरादित्वात् साधुः । १ अथ क्या करेगे सोचते विचारण करनेवाला खल व्यक्ति, अथ क्या करेगे खयाल कर घूमनेवाला बदमाश । २ प्रेत यैर्णीवशेष ।

“इये धत्तमवारं किमीटिने।” (अ०, ०। १००। २)

“किमीटिने किमिदानीमिति चरते पिशकाय।” (माय०)

किमु (स० अ०) किम् च उ च, इन्द्रः । १ कदाचित्, गायद, सम्भावना । २ क्या, किसालये, वितकं । ३ विमर्ष । ४ क्या, क्यों, प्रश्न । ५ नहीं, निषेध । ६ छी छी, निन्दा ।

किमुत (स० अ०) किम् च उ च, इन्द्रः । १ क्यों, क्या, प्रश्न । २ यद्यपि, क्योंकि, वितक । ३ अथवा, या, -वि-त्य । ४ अतिशय, बहुत, ज्यादा ।

किमेदि—मन्द्राजप्रदेशके गंजाम जिलेकी पश्चिम भागस्थ एक जमीन्दारी। उक्त जमीन्दारी तीन भागमें विभक्त है—परलाकिमेदि, बोडाकिमेदि वा विजयनगरम और त्रिन्नकिमेदि वा प्रतःपगिरि । किमेदि एक क्रांटा सा पार्वतीय राज्य है ; उसमें चारों ओर पर्वत विस्तृत तथा उर्वर उपत्यका और नदी, नाला एवं बागें हैं । प्रचुर शस्य उत्पन्न होने भी उक्त स्थान स्वास्थ्यकर नहीं ।

किमेदि जमिन्दारी पहले जगन्नाथवाने राजाधीन अधीन थी । उन्हींके वंशीय राजपूर्वसिसे उत्तराधिकार न पाने पर किमीने किमेदि और किमीने इच्छापुर राज्यका विजयनगर अधिकार किया। आज भी किमेदिराज्य उक्त वंशीय नारायणटामके उत्तर-पुरुषके अधीन है। प्रजा यहाँके राजाको देवतुल्य भक्ति करती है ।

किम्पच (स० त्रि०) किं कुत्सितं केषलं स्त्रीदरप्रणयैव पचति, किम्-पच्-पच् । कृपण, वंजूस, अपने ही लिये एकाने और दूसरेको न खिलानेवाला ।

किम्पचान (स० त्रि०) किं कुत्सितं कस्मैचिदपि न दत्त्वा केषलं स्त्रीदरप्रणयैव पचति, किम्-पच्-चानक किम्पश्चक्षो ।

किम्पराक्रम (स० त्रि०) किं कीदृशः पराक्रमोऽप्य, बहुव्री० । १ किम् प्रकारका विक्रमशाली, कैसा ताकत-वर । किं कुत्सितः पराक्रमोऽप्य । २ निन्दित पराक्रम-शाली, खराब ताकत रखनेवाला । ३ हीनबल, कमजोर । किम्परिमाण (स० त्रि०) किं परिमाणमप्य, बहुव्री० । कितना परिमाणविशेष, कितनी शक्तिदारवाला ।

किम्पर्यन्त (स० त्रि० वि०) कितनी दूर पर्यन्त, कहां तक ।

किम्पाक (स० त्रि०) किं कथमपि पाकः शिवाप्रकारो यप्य, बहुव्री० । १ स्यादशमित, मार्के हुकम पर चलने-वाला । (पु०) किं कुत्सितः पाकः परिमाणो यप्य, बहुव्री० । २ सहाकासलता, लाल इन्द्रायण ।

महाकाल देखो

“न मुभा वृजते शोषान् किम्पाकमिव भस्वन् ॥”

(रामायण, २। ६६। ६)

३ विपतिन्दुकहच, कुचिनेका पेड । ४ रोग, बीमारी । ५ छत्र, बुखार । ६ स्यादिनिर्गम । (को०) ७ महाकाल फल ।

किम्पूना (स० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया ।

(भाग, २। ३०१)

किम्पुरुप (स० पु०) किं कुत्सितः पुरुष कर्मधा० । १ त्रिन्नर । त्रिन्नर देखो । २ लोकविशेष, कोई लोग । किम्पुरुप और किम्पुरुपी पर्वतके निकट वनमें घर

वमाकर रइतो धीर प्रक मूल तदा पत्र आकर
शौकिका निर्वाह करती है। (राकार, वमा ८८ वर्त)

१ अम्बु होयाधिपति चम्बोहके एक पुत्र । विचित्रम्.
१:१। (८) ४ अम्बुहोपके नवपण्ड मन्त्र विमासय
धीर किमदुहके शौचका एक देज वा दिग।

"अ चोत्तमं धीर वदन्तिव शौचम् ।

इदं विन्य वनायाव इत्युक्ते च उचिष्यते ॥"

(भाष, वमा, १८। १)

४ कुक्षितपुत्रय पुराण आदमो।

किम्बुहयाधिप (स० पु०) किम्बुहयान् अधिपति
वन्ति, किम्बुहय अधि-या क। कुक्षि, किम्बुहयो या
किशरोके राजा।

"अनन्त वनाम्बो वचः विन्य वयन्ति ॥" (हरिश्च)

किम्बुहयैश्वर (स पु०) किम्बुहयस्य किम्बुहयाधी
ना ईश्वर, इ तत् । १ किम्बुहयवर्षसे राजा । २ कुक्षि ।
किम्बुहय (स० श्लो०) किम्बुहयनामक वर्षबिरीच,
एक सुख ।

किम्बुहार (स० अम्ब०) कि कौट्य प्रकारोऽग्निम्
कमचि । १ किस प्रकार, कौसे । २ किम उषायसे, किस
तदनर्चसे।

किम्बमाध (स० शि०) कि कौट्य प्रमाशोऽप्य, बहुशो० ।
किस प्रकार प्रमावविगिट, कौसे पसरवाला।

किम्बस (स० शि०) कि कौट्य ब्रह्म अम्ब, बहुशो० ।
किम प्रकार शैवविगिट कौसे प्रीज या ताकत
रचनेवाला।

किश्वरा (स० श्लो०) किश्चित् विमति, किम्बुध अक्-
टाप । श्लो नामक गन्धद्रव्य, एक कूयबूहार शौज।

किश्चूत (स० शि०) कि कौट्य भूतम् कमशा० ।
किस प्रकारका, कौसा।

किष्पव (स० शि०) कि क्खपयम्, किम-मब्द। किम-
मक, किम तरइका।

किम्बान् (स शि०) किमपि अस्मात् किम्बु-मत्तय
मन्त्र वा । १ किश्चित् विगिट, कुख रचनेवाका।
२ किम्बुगिट, क्या रचनेवाका।

किम्बदन्ति (स० श्लो०) किम्बु वदन्तिव । जगन्मृति,
प्रवाद, पदवाह।

किम्बदन्तो (स० श्लो०) किम्बु-वद् किष्-शोप् । जग-
न्मृति, पदवाह। मन्त्र जो या पदमन्त्र बहुतसे शोग जो
वात विग्रामपूर्वक वतार्ति रचने, श्लोको किम्बदन्तो
कइते है।

"अत्र किम्बो किम्बदन्तो ववाह इषी वानरार्ति वपतिवा मन्त्र
पचो वदुपकते ।" (शौचश्रीरव)

किम्बा (स० अम्ब०) कि अ या अ, इम्बा । पदवा,
या तो किम्बा। किम्बाका संस्कृत पर्याय—सताहो-
यदि वा यदा धीर मेति है।

किम्बट (स० शि०) कि मेति किम्बु-विद् शिप ।
किस विषयमें परिग्रह, क्या ज्ञाननिवाला।

किम्बोयं (स० शि०) कि कौट्यं बोयंमन्त्र, बहुशो० ।
किस प्रकारका ब्रह्मशास्त्री कौसा ताकतवर।

किम्ब्यापार (स० शि०) कि कौट्यो व्यापारोऽप्य
बहुशो० । १ किस प्रकारका व्यापारविगिट कौसे
काममें क्या हुआ। (पु०) कौट्यो व्यापारः, कर्मशा० ।
२ किस प्रकारका काम कौसा काम।

किष्पत् (स० शि०) कि परिमापमन्त्र किम्बु वत्तुप्
वप्य च किम्बु कि पादेयम्। किम्बुना शौ ॥ वा १।
१।० । क्या परिमापविगिट, किस मित्रदारवाका,
दितना।

"अनन्तपि विरदिषवइतु पाया ॥" (शौचश्रीरव)

किशतो (स० श्लो०) किष्पत्-श्लोप् । कितलो।

"किशतो वरि पचिषावर्त वपति वा किन्तीतिव व लयात् ॥"

(कैष, ४ व व)

किष्पुत्वाच (स० पु०) किष्पान् किम्बुरिमिता कामः,
कमशा० । १ क्या परिमित काम, कितना बह।
२ किष्पुत्वाच, कौशा समय।

किष्पदेति (स० श्लो०) इशोग कौशिय।

किष्पूर (स० शि०) कि परिमित दूरं प्यवधानम्
कमशा० । कितनी दूर।

किष्प्यात् (स० शि०) कि परिमिता मात्रा पप्य
बहुशो० । क्या मात्राविगिट कित मित्रदारवाका।

किष्प्यन्व (स० शि०) कि परिमितं मूष्यमप्य
बहुशो० । क्या मूष्यविगिट, किस कौमत्तवाका।

किष्पारो (शि० श्लो०) १ शैज वा उष्यामिं पप्य अन्व

अन्तर पर दो सूक्ष्म मोड़ोंके मध्यकी भूमि। कियारोमें वीज बोते या पीट्टे लगाते हैं। २ क्षेत्रविभागविशेष, स्वितका एक हिस्सा। ३ क्षेत्रका वह भाग जो सन्न सिद्धनके निमित्त बरहो या नानियोंके मध्य फावड़ेमें सेंड लगाकर बनती है। ४ हृत्त कटाहविशेष, कोरें बड़ा कडाह। उसमें समुद्रका चारजन लवण नीचे बैठानेकी भरा जाता है। ५ चारपाई, खाट। उक्त अर्थमें कियारी शब्द स्पर्णकार व्यवहार करती है। ६ चौका, भोजनका विभिन्न स्थान।

क्रियाह (स० पु०) क्रियान् रत्नवर्णा हयः, पृषोदरा-दित्वात् साधुः। १ रत्नवर्णाश्व, सुखं या ज्ञान घोडा। २ शृगाल, गौदह।

क्रियूल—१ जनपदविशेष, एक वसती। लक्ष्मीनाराय रेनवेके ठीक दक्षिण या केवल नदीतीर क्रियूल एक क्षुद्र ग्राम है। किसी समय यह समृद्ध बौद्धनगर था। किन्तुके मतमें क्रियूल ही युष्मन्-पुत्राङ्गके उल्लिखित 'लो-इन्-नि-लो'का अंग है। उक्त ग्रामके पश्चिम-दिशामें 'मंसारपुत्रुर' नामक एक वावडी है और उस वावडीकी उत्तरदिशामें फिर एक वावडी है। इस द्वितीय पुष्करिणीके तीर पर किसी बौद्ध-मन्दिरका भित्तिभाग और कुछ बौद्ध युषावोंकी प्रतिष्ठाति पडी है। ग्रामके मध्य एक स्थान पर पद्मपाणि बोधिसत्वकी पापाणमूर्ति है। फिर स्थानीय जमीन्दारोंके उद्यानमें भी उन्हींकी एक क्षुद्रकाय प्रतिमा विद्यमान है। क्रियूलसे ईयत् दक्षिण 'कोवय' नामक ग्राम है। उक्त ग्रामकी वसति प्राधुनिक होत भी स्थान बहुत प्राचीन है। वहां प्राचीन कीर्तिका भग्नावशेष यथेष्ट देख पड़ता है। ग्रामके मध्य वानकक्रोड़ा पठो वा भवानीकी मूर्ति और मन्दिर है। कोवयमें पञ्चध्यानी बुद्धकी एक मूर्ति मिली है। क्रियूल ग्रामके अपर पार क्रियूल नदीके पूर्वतीर ३० फीटका एक भग्न इष्टक-स्तूप है। उसे 'विदीवन स्तूप' कहते हैं। गंवार लोग स्तूपकी सामान्यतः 'गड़' कहते हैं। उक्त स्तूपके पश्चिम १५० से १६० फीट पर्यन्त विस्तृत किसी मठका भग्नावशेष देख पड़ता है। प्रत्नसत्ववित् कनिंगहाम साहबकी उक्त स्तूपके शीर्ष देशपर ६ फीट गभीर

गद्दरके मध्य प्रस्तरका एक भग्नप्राय खोल और बुद्ध-मूर्ति मिली। बुद्धमूर्तिको मस्तक टूट गया था। कनिंगहामने खोलने पर उक्त खोलके भीतर एक सुवर्णका डिब्बा और उसके भीतर एक चांदीका टिब्बा पाया। उक्त टिब्बेके मध्य एक इरिदियम-स्फटिक-माना, एक खण्ड अस्थि और एक मगुप्यदन्त था। स्तूपके गात्रमें द्रव्य रखनेके कई खाले बने हैं। उक्त पात्रोंसे प्रायः २००, ३०० छाप भरी लापके पत्र मिले हैं। उक्त छापें चार प्रकारकी हैं। वही छापें २ श्व लंबी हैं। उनमेंसे कईमें बुद्धमूर्ति, स्तूपकी आकृति और नानाविध विषय मुद्रित था। किन्तु प्रायः ३ भाग छापें योषकालमें गलकर अस्पष्ट हो गयी हैं। कई छापोंसे स्थिर हुआ है कि उक्त स्तूप ईशवीय ८ स० १० म गताब्दके मध्यकाल बना था। यहाँ किसी मठके कनगमें पित्तलनिर्मित ४ बुद्धिमूर्ति रहीं। इनका कुछ भी नहीं बिकडा है। २ ईष्ट इण्डियन रेनवेका एक जंकगन टेशन।

किर (स० पु०) किरति विक्षिपति मलोपक्षितस्त्रलं इति शेषः, छ-क। १ शूकर, सूत्र। २ प्रान्तभाग, सहन। (वि०) ३ जेपणकारी, फेंकनेवाला किरंटा (हि० पु०) निम्नश्रेणीका संसार्, केरानी, छोटा किरटान। किरंटा अंगरेजीके क्रिश्चियन (Christian) शब्दका प्रथम अंग है।

किरक (स० पु०) किरति निखति, छ-खुल्। १ लेखक, कातिव, लिखनेवाला। किर क्षुद्रार्थकन्। २ शूकरगावक, सूत्रका वस्त्रा या छौना।

किरका (हि० पु०) क्षुद्र खण्ड, कंकड, किरकिरी, छोटा टुकडा।

किरकिटी (हि० स्त्री०) धूलि वा लणका कण, गर्द या तिनकेका छोटा टुकडा। किरकिटी चक्षुमें पडनेसे पीड़ा उत्पन्न करती है।

किरकिन (हि० पु०) चर्मविशेष, किसी किच्छका चमड़ा। किरकिन घोड़े या गधेके दानादार चमड़ेको कहते हैं।

किरकिरा (हि० वि०) १ कंकरीला, जिसमें जोटे छोटे कंकड रहे। २ बुरा, खराब।

किरकिराना (किं० सि०) १ घोडा सरना दुपाना ।
२ पच्छिम न कसना, गुवा मारुम पकना । ३ बिट-
बिडाना दांत घोसना ।

किरकिराइट (किं० खी०) १ चक्षुषोद्वास्त्रिय, पांख
का टट । किरकिराइट पांखसि गर्द या तिमलेका
छोटा टुकडा पद कानिसि घोसो है । २ दांतके मोषि
कबड पकसिको घावाड । ३ कंठकोघावन ।

किरकिरो (किं० खी०) किरकिटी, गर्द या तिमले-
का छोटा टुकडा । २ पपमान, वैदकतो, बेडो ।

किरकिच (किं० पु०) १ लक्ष्मण गिरवान् मिरमित ।
(खी०) २ शरीरल बाबुबिय, एक हवा । किर
किच होक बातो है ।

किरकिवा (किं० पु०) पक्षियिय एक चिडिया ।
किरकिवा पाकागरी टूट मझको पाखमच सरता है ।
किरकी (किं० खी०) पलहार-बियेय एक गडना ।
किरकी (खाइकी) पूनि जिलेकी हबेकी तखसीलका एक
कहना । बर पचा १८ १७ ३० पीर देया ०३ ११
पू० पर पवजित है । बरसि ११३ मोन हयिचपूर्व पीर
पूनि ३ मोल लहर पहिम यह पकता है । मोकसक्या
प्यारह हजारके करीब है । हुवाछ तयार करनेका
यहां बहुत बडा कारखाना है ।

किरक (किं० खी०) १ पक्षियिय, एक हयियार ।
किरक सीवी लसवार बेसो रहतो है । उषि पपमागकी
पीर मोषि मोक देति है । २ पच्छियिय मोकदार
टुकडा ।

किरचिया (किं० पु०) पक्षियिय, एक चिडिया ।
किरचिया बयसेके छोटा होता है । कसके पक्षिको
भिडो गुनहको रहतो है ।

किरचो (किं० खी०) १ बिसी बिषका मुलापम रसम ।
किरचो रंधाकसि उपकतो है । २ रसमको कब्बो ।

किरटा (स० खी०) कुचुपबौत्र कुचुमका बौत्र ।

किरप (स० पु०) कौरलो बिचप्यन्ते रश्मतीप्यात्,
ल क्यु । ३ शरणावधिपयः कु । व १५२ । १ स्यं, पूरज ।
बीरसि परित बिप्यते पयो । २ सूर्यरश्मि, सूर्यको
किरच । ३ चन्द्ररश्मि चांदको किरच । ४ रश्मिरश्मि,
अवाहिरको किरच । किरपका म स्तत पर्याय—पक्ष

मगूख चंगु नमस्ति, घृषि, कप्यि मातु, खर,
मरौचि, दोबितिमिट, घुति कामा, विमा, प्रमा,
हक, हचि, मा, हचि दौंस रयिम, प्रमोषु मच,
व्यातिः मचः रोचि, घोषि, त्रिया, घृष्टि, प्रभाग,
प्रातप योत पाद चानोक वरु, कवि, भास घर्म
कोक पचि, बीच डित, काम, बच, शुष, सिज पीर
योत्र है ।

“ बरप निरुपनिचमपुदेरन
किरचपदीरिपीरैरवदः शीरः ” (१४ ३ । ७)

किरपतम्—भाववाचार्थे अपने सचैटलस यहसि इन
नामके एक शेरतलका उल्लेख किया है ।

किरचमय (स० पि०) किरच मयट । १ किरचसक्य ।
२ किरचविगिट ।

किरचमाको (स० पु०) किरचानी माका पक्ष्य,
किरचमाना हनि । सयं पापताड ।

किरचावको (स० पु०) किरचानी चावकी खेचो । किरच
खेचो, किरकोकी कहतार । १ किरचावकी नामके संस्कृत
भाषामि बहुतसे पत्र है । उनमि लहनाचार्य-विर-
चित वैशेषिकसूत्रके प्रथमपादको व्याख्या मूक्य है ।
किर हयके खपर भी बहुतसी टोका है । बेनि-उद्यमान
कत किरचावकीमास्तर, बरमानकत दुसकिरचा
पकीप्रकाय चंद्रियपरमारतोकत दुसकिरचावकी
गुणकिरचक मडाटेककत गुणकिरचावकोरसमार
राममडकत गुणरुचक, बरदराज पीर कककत टोका
पादि । किरचावकीको उन टीकाचो पर मो पीर
बहुतसे विवरण उपलब्ध होसि है । उनमि कुडके
नाम से है—मिचमगौरयकत किरचावकोप्रकायप्रका-
शिका, बद्रथाववाचकतिहकत रघुनाथीय द्रव्यकिरचावकी
परीच, भावबदेककत गुणरुचकप्रकाय, रघुनाथकत गुण
प्रकायविगिति, मयरागायकत गुणप्रकायदोबिति पीर
गुणप्रकायदोबितिसंखयो नाथो विगितिटोका । इनके
पिना बद्रमहाचार्यकत गुणप्रकायविगिति भावप्रकाशिका,
रामकथ्यमडाचार्यविरचित गुणप्रकायविगितिप्रकाशिका
पीर बयरागमडाचार्यविरचित दोबितिप्रकाशिका मो
प्रचलित है ।

३ दादाभाई विरचित सूर्यसिद्धांतटोका । ४ मयधर
कत एक अलंकार निरूपक पद्य ।

किरातादि (सं० पु०) वातपित्तज्वरका कषायविशेष, बुखारका एक काटा । किराततिक्त, अमृता, द्राक्षा, आमनकी और गठीका क्लाय बना गुहके साथ पीने पर वातपित्तज्वर छूट जाता है । इसकी चतुर्भद्रक भी कहते हैं । (भावप्रकाश) फिर किरातादि—किरातक, महानिम्ब, कुसुम्बु, गतावरी, पटोल, चन्दन, पद्म, शाकली और छदुस्वरीजटासे भी बनता है । (रत्नचन्द्रिका) अन्य किरातादि—किरात, नागर, सुस्त्रा और गुडूचीके योगसे बनाया जाता है । वातज्वरमें किरात, सुस्त्रा, गुलेचोन, वाना, हृहती, कण्टकारी, गोक्षुर, शालपर्णी, पृश्निपर्णी और शण्ठी प्रत्येक १६ रत्ती ३२ तोले जलमें पकाकर ८ तोले रहनेसे पीते हैं । कण्ठकुष्ठ सन्निपातमें चिरायिता, कटुकी, पिप्पली, कुटज, कण्टकारी, गठी, विभीतक, देवदारु, हरीतकी, मरिच, सुस्त्रा, कटुफल, अतिविषा, आमलकी, पुष्करमूल, चित्रक, कर्कटशृङ्गी, और वासकका २ तोले क्लाय बना आघ तोला शण्ठीचूर्ण डालकर पीनेसे लाभ पहुँचता है ।

किरातादिचूर्ण (सं० स्त्री०) चूर्णविशेष, एक शफूप । चिरायिता, त्रिहता, वाय्यालक, पिप्पली, विडङ्ग, कटुकी और शण्ठी सबका सम भागसे चूर्ण बना मधुके साथ सेवन करने पर दुर्जलदोषज्वर शांत हो जाता है । (भावप्रकाश)

किरातादितैल (सं० स्त्री०) तैलविशेष, एक तैल । सूक्ष्मित कटुतैल ४ शरावक, दहीकी मलाई ४ शरावक, काष्ठीक ४ शरावक तथा किराततिक्त क्लाय ४ शरावक एक साथ पकाने और उसमें मूर्धामूल, लाजा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मञ्जिष्ठा, इन्द्रवारुणी, कुष्ठ, वालक, रास्त्रा, गजपिप्पली, त्रिकटु पाठा, इन्द्रियव, सेन्धव, सचक्रलवण, विट्लवण, वासात्वक, श्वेताक-मूत्रक, श्यामालता, देवदारु और महाकासफलका मिलित १ शरावक कल्क मिला पकानेसे उक्त तैल प्रस्तुत होता है । किरातादितैल लगानेसे नाना ज्वर पारोग्य होते हैं ।

हृहत् किरातादितैल ३६ प्रकार बनाया जाता है—कटुतैल ८ सेर, चिरायतेका क्लाय १०३ सेर,

मूर्धामूलका क्लाय ८ सेर, लाजाका क्लाय ८ सेर, काष्ठीक ८ सेर और दहीकी मलाई ८ सेर ३४ सेर जलमें पका १६ सेर चवगिष्ठ रखना चाहिये । फिर चिरायता, गजपिप्पली, रास्त्रा, कुष्ठ लाजा, इन्द्रवारुणी-मूल, मञ्जिष्ठा, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, मूर्धामूल, शठो-मधु, सुस्त्रा, पुनर्नवा, सेन्धव, जटामांठी, हृहती, विट्-लवण, वालक, शतमूली, रक्तचन्दन, कटुकी, अश्वगन्धा, गतपुष्पा, रेणुक, देवदारु, वेणामूल, पद्मकाष्ठ, धान्यक, पिप्पली, वचा, गठी, त्रिफला, यमान्ठी, वनयमान्ठी, कर्कटशृङ्गी, गोक्षुर, शालपर्णी, चक्रमर्द, दन्तीमूल, विडङ्ग, जीरक, कालजीरक, महानिम्बत्वक, हवुगा, यक्षार और शण्ठी प्रत्येक ४ तोला परिमाणसे बल्काय डाल तैल प्रस्तुत करते हैं । उक्त तैल लगानेसे सकल प्रकार विषमज्वर, श्लेष्माज्वर, शोथयुक्त ज्वर एवं प्रसेहज्वर मिटता और पग्नि, वल एवं दीर्घ बढ़ता है ।

किराताचूर्णीय (सं० स्त्री०) किरातय अर्चुनय तयो हं क्षमघिहृत्य छतम्, किरात-अर्चुन छ । भारविक्व वि प्रणीत एक महाकाव्य । साधारणतः जोग उक्त काव्यकी 'भारवि' कहा करते हैं । दुर्योधनके साथ द्यूतक्रीडामें पराजित हो युधिष्ठिर प्रभृति पञ्चभ्राता वनमें रहते थे । उसी समय व्यासदेव उनके निकट जाकर उपस्थित हुये । पाण्डवकी दुर्योधनके पक्षकी अपेक्षा अधिक बलशाली बनानेके लिये उन्होंने अर्चुनकी परामर्श दिया—'तुम तपस्या द्वारा देवगणके निकट प्रसन्न ग्रहण करो ।' तदनुसार अर्चुन हिमालयपर्वके निकट प्रथम इन्द्रकी तपस्या की थी । इन्द्रने उससे परितुष्ट हो अर्चुनकी शिवकी तपस्या करनेके लिये उपदेश दिया । फिर वह महादेवकी ही तपस्या करने लगे । महादेव उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हुये थे । किन्तु वे अर्चुनकी वीरताकी परीक्षाके लिये किरातके देशमें एक प्रकारण वराहके पीछे पीछे बड़ा जाकर उपस्थित हुये । वराहने निकट पहुंचते ही अर्चुनकी आक्रमण किया था । सुतरां उन्हें भी उसके प्रति वाण चनाना पड़ा । किरातवेगी महादेवने भी अर्चुनके वाणपातके साथ अपर वाण निक्षेप किया था । उभयके

दिल्ल (सं० चम्प०) दिल्ल व । १ वास्तवमें, दरहबोवत
पसल्लम । २ पक्षात्, पानो । ३ सम्भवतः माक्षिकम्
मायद ।

“इदं विवक्ष्यमानं लीलात्” सुवचनम् वास्तविकं व रथति ।”

(वाङ्मय, १ व)

दिल्ल (हि० खी०) १ हर्षध्वनि, सुयोकी पावाज ।
२ प्रसन्नता सुयो । (पा०) ३ दशविधिय, बिषी
दिल्लका मरकट । दिल्लका कलम मरणा है ।

दिल्लका (हि० खी०) हर्षध्वनि करना, सुयोकी
पावाज निहासना दिल्लकारना ।

दिल्लकार (हि० खी०) हर्षध्वनि, सुयोकी पावाज ।
दिल्लकार गंधोर तथा पप्पड रहती थीर पालम्प एवं
लम्बाइके समय मुकषी निकलती है ।

दिल्लकारना, दिल्लका देखा ।

दिल्लकारी, दिल्लका देखा ।

दिल्लकचित्त (सं० खी०) दिल्ल पनोकेन कि ईयत् पित
रचितम्, ३ तत् । शूद्रारमात्रकम् शिवाविधिय, एक
पदा । “दिल्लकचित्तमित्थमप्युपनिषत्तमस्य ।”

वाक्य चित्तकिल्लकचित्तमित्थमस्य ।”

(वाचिसर्व, १।१०२)

दिल्लकायके समानमधि पतिमात्र इह हो लयो
नायकधि खी इन्द्रकाज, रोदन, मय, श्लोच थीर खानि
प्रपृष्टि मित्रहृदधि की मावप्रकाय करती है, लयोको
दिल्लकचित्त कहती है ।

“अथी नीर विद्यामे परं इत्यर्थोदित्तचित्तं विव ।

ल्लकचित्तं वर शोभती अन्वयान्तरित्तचित्तं वर ।”

(११२, ११ वर्य)

दिल्लकित्त (सं० पु०) १ मरुदिव । २ मगरविशेष कोर
मघर ।

दिल्लकित्ता (सं० खी०) दिल्ल क पकारे वीप्याया वा
दिल्लम् टाप । १ हर्षध्वनि, दिल्लकार । २ बीरका सिंह
नाद, ललकार । ३ दिव्यलयप्रकाशोद्भव इन्द्रकेसके
पन्तगत सरस्वती थीर काकिन्दी मदीका मज्जवती
कोर लपद, बंगालको एक बंधो । पक्कका देखा ।

दिल्लकित्ता (हि० खी०) १ पवित्रियेय, एक बिल्हिया ।

दिल्लकित्ता छोटी रहती थीर मज्जवी काकर पपना

पिट भरती है । वह मज्जवतीको देख पागोके लपद
१० ज्ञाय लपि बड़ा करती है । धात लगी हो दिल्ल
दिल्लका मज्जवी पर एकाएक टूट ली पक्क कर ले
जाती है । (पु०) २ सुसुद्रका एक भाग । दिल्लकित्ति
काकी लहरे भवानक ग्रन्थ करती है ।

दिल्लकित्ता (हि० खी०) १ हर्षध्वनि करना, दिल्ल
करना । २ कोडाकल करना, गोर मराना । ३ बाद
विवाद लपाना, भगडा ठठाना । ४ सुखखाना ।
५ श्लोच करना ।

दिल्लकित्ताइट (हि० खी०) १ हर्षध्वनि, दिल्लकार ।
२ कच्छ, सुखमी । ३ श्लोच, सुखा । ४ बादविवाद,
भगडा ।

दिल्लकी (हि० खी०) वन्दविधिय, एक पोजार ।
बढ़रं दिल्लकोट नापके सुधाधिक लकड़ीपर बिज
लपाने है ।

दिल्लकेवा (हि० पु०) १ रोगविधिय, एक बीमारी ।
दिल्लकेसेमि पपुकोके सुरोमें बीडे पड जाते है ।
२ हर्षध्वनिकारी, दिल्लकार लपानेवाना ।

दिल्लटा (हि० पु०) कच्छविशेष बिषी दिल्लका
टोकरा । दिल्लटा ऐसी मुक्ति बनाया जाता है कि
लसमें रहने हुयो बीडका भार डोनेबासीके बंधो पर हा
पाता है ।

दिल्लना (हि० खी०) १ कोडा खाना, पमिमस्मित
खोना । २ बरसि काया खाना तापेकारीमें पाना ।

दिल्लनी (हि० खी०) कोरविधिय, एक बीड़ा । दिल्लनी
माघ, बैस, मैस, कुसे बिन्नी बरोरज जानवरो के बिपटो
रहती थीर इनका रत्न पान कर पपना मरीर पोषक
करती है । लठी बिन्नी थीर दिल्लनी मी कहते है ।

दिल्लपादिका (सं० खी०) सुद्रनकापुका, छोटी लाल
भंती ।

दिल्लकित्ताना (हि० खी०) सुखसुखाना, बीरे नीरे
पक्कना पिरना ।

दिल्लमी (हि० पु०) लोहाका पक्कादाम, कडालका
पिठका बिष्ठा । २ द्विविधकी दिव्य के मस्तकका
बादखान ।

दिल्लमोरा (हि० पु०) दाबइतिहाविधिय, बिषी

किन्नकी दाहहस्ती । किनमोराकी भाडियां हिमालय पर कांभी फेन जाती है ।

किन्दाक (हिं० पु०) अन्नविशेष, एक काबुली घोंडा ।

किन्दा (हिं० पु०) बड़ा फावड़ा । छोटे किन्दाके किन्दा कहते हैं ।

किन्दाई (हिं० स्त्री०) पांचा, नकडोकी फरुई ।

किन्दाईने सुखी घास या पयाल बटोरते हैं ।

किन्दान (हिं० क्रि०) १ कौल लगवाना । २ अभिमान्न कराना, जाहूसे बंधाना ।

किन्दावारी (हिं० स्त्री०) बन्ना, पतवार ।

किन्दाविष (हिं० पु०) किस्विष, पाप, इजाब ।

किन्दा (हिं० पु०) फाक, आमका तेलमें रखा हुवा अचार ।

किला (अ० पु०) दुर्ग, गड, बचावकी जगह ।

किलाट (सं० पु०) गोपित और पिण्ड, छेना । किलाट गुत्त, लतिकारक, शुक्रवर्धक, पुष्टिकारक, वायुनाशक और दासाग्नि एवं निद्राशून्य व्यक्तिके लिये हितकारक है । फिर यह प्रलेपजनक, रुचिकारक और पित्त, विट्रिधि, मुखशोथ, लप्सा, दाह, रक्तपित्त तथा ज्वरनाशक भी होता है । (चरक) उसके बनानेकी प्रणाली इसप्रकार कही है—दूध वा घनके संयोगसे दुग्धको विहृतकर गम करते हैं । फिर बन्धने निचोड उसका पानी निकालना पड़ता है । किलाट कई प्रकारका होता है—पीयूष, मोरट और औरगाक ।

किलाटक (सं० पु०) किलाट एव स्वार्थे कन् । छेना, पटे हुये दूधका मावा । नष्ट पक्षदुग्धके पिण्डको किलाटक कहते हैं । जो दुग्ध अपक्व रहते हैं फट जाता, वही औरगाक कहाता है । (भावप्रकाश)

किलाटी (सं० पु०) किलदासी भाटी चैति, कर्मधा० । दहा किले अटति, किल पट्ट-णिनि । १ बंध, बांध । २ परम्परा, बेटका पेट ।

किलाटी (सं० स्त्री०) किलाट हाप । दुग्धविहृति, कृषिका, छेना ।

किलात (सं० पु०) किलं पन्नति, किल-अत् अण् । १ अटतिविशेष । २ रासविशेष । (वि०) ३ वासन्त, अन्न, बोना, बाँटा ।

किलाना, किलवाण इन्ही ।

किलावन्दी (फा० स्त्रा०) १ दुर्गनिर्माण, किलेकी बधाई । २ व्यूहरचना, फौजको तरतीबसे खड़ा करनेका काम । ३ अंतरजमें वादगाइको किना बांधकर उसके भीतर रखनेकी चाल ।

किलाल (सं० स्त्री०) गोमूत्र, गायका पैगाव ।

किलावा (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, एक औजार ।

किलावा सोनारोंके काम आता है । २ हाथीके गलेका एक रस्सा । किलावेमें पैर डाल महावत हाथीको हांकता है ।

किनास (सं० स्त्री०) किलं वर्णं अस्थिति क्षिपति विहृतिं कराति इति यावत्, किल-अस-अण् । छुद्रकुष्ठरोग-भेद, किसे किन्नका हलका काढ़ । मिथ्या वचन, क्षतघ्नता, देवनिन्दा, गुरुजनके अपमान, पापकार्य, पूर्वजन्मके कर्मफल और विरुद्ध अन्नपानादिके सेवनसे उक्त रोग उत्पन्न होता है । (चरक)

वात, पित्त और श्लेष्मिसे किनास रोग भी तीन प्रकारका होता है । उसमें वायुजन्य किनास अरुणवर्ण, कर्कश और स्थान स्थान पर गालाकार होता है । पित्तजन्य किनास ताम्रवर्ण, पद्मत्र तुल्य और दाह-विशिष्ट होता है । श्लेष्मज किनास श्वेतवर्ण, स्निग्ध, घन और कण्डूयुक्त रहता है । उक्त त्रिदोषजन्य किनास यथाक्रम रक्त, मांस और मूत्रसे उत्पन्न होता है । किन्तु सृष्टत ऋषिने उसे केवलमात्र त्वग्गत बताया है । वायुजन्य किनासको अपेक्षा श्लेष्मजन्य किनास कष्टसाध्य है । उसके उपरिस्थ लाम रक्तवर्ण वा श्वेतवर्ण न होने, परस्पर प्रथक् रहने, पल्पदिनजात ठहरने और अग्निमें न जलनेसे किनास आरोग्य हो जाता, नतुवा असाध्य देखाता है । (वाग्भट)

चिकित्सा—कुष्ठ, तमालपत्र, मरिच, मनःशिला और हरिकारीयोंको समभाग तैलके साथ ताम्रपात्रमें ७ दिन घूबसे उत्तम करते हैं । फिर उक्त तैल किनासके स्थान पर लगाकर आरोग्यता प्राप्त होता है ।

मूलोकी बीज, मोमराजीबीज, लाघा, गोरोचना, मौवोराखन, रसाखन, पिप्पली और कालसीइच्छुर्ण एकत्र पीसकर प्रक्षेप चटानेसे किनास रोग दूर हो जाता है ।

इरोतकीकी एक बत्ती बना थापतुपके पर पीर
बल्लकके रसको भावना देते हैं। जिर बटके लूके
दूसरो भावना दे लके ताभ्रप्रदोषमें लनामा पड़ता है।
उसको मसोकी पदक कर पुनर्वाट इरोतकीके लामकी
भावना जगाते हैं। पन्थको लक्ष मसो बटुल नमें मिला
पचिकतर मर्टन करकेके किनास रोग पारोग्य
होता है। (हरर)

किनास (सं० पु०) किनास जति किनास-जन्डक।
कर्कोटक काकरोस। किनासपत्रा संकृत पर्याय-
काकोट, तिन्नपत्र पीर सुगन्धक है। कर्कोटक रोको।

किनासनायन (सं० शि०) किनास नामयति किनास
नम् पिच थ। किनासरीमनायन।

किनासो (सं० वि०) किनास पञ्चाष्ट किनास हनि।
किनासरोगबुद्ध, कोको।

किलि (सं० पय०) कष्टशूलित, किलिहार।
किलि (पा० श्लो०) किलि रोको।

किलिच (सं० श्लो०) किलिच पमेन किलि हनि, किलि
चिनोति, किलि बि-इ प्रयोदहारदित्वात् घाठ। सुप्र
काड, पतका लक्षता।

किलिचन (स० पु०) १ राक, भूना। २ मोमभेद, एक
मङ्गको।

किलिच (स० पु०) किलिच जायते किलि जन्ड
शुम् प्रयोदहारदित्वात् घाठ। १ सुप्रकाड, पतका
लक्षता। २ बीरचादि कट, चटाई। ३ परदा। किलि
किलि प्दान पर किलिच कोरकिलि भी देख पड़ता है।

किलिच (सं० पु०) किलिच शार्धे कन्। १ कट,
चटाई। २ ज्ञायादि निर्मित रण्ड, एक रण्डो। किलि
चकके प्रायादि रण्डके मरार (कोठी) को रण्डन
करते हैं।

किलिच (सं० पु०) लोप्यागवियेय, वेदासथी मोड़,
काकाको एक जगह। किलिच काकाका कट पिचका
दिम्ना है, जहाँ काको तख्त सुद्धकर मिलते हैं।

किलिचकिलि (स० पु० श्लो०) नगरवियेय, किलि
गहरका नाम।

किलिम (स० श्लो०) किलि हसन्। १ देवदाह डय।
२ भूना।

किनापा (सं० पु०) भगवियेय किलि किनापा कां।
किलोवा जङ्गलमें दिगू पीर मर्तवागके वनमध्य लटक
होता है। कट १० से १२० चोट तक लम्बा पीर ३ से
८ इंच तक मोटा रहता है। लवका वर्ष भूषण होता
है। लसके मात्रके मण्डल बनाये जाते हैं।

किलोस (सं०) कटन रोको।

किलीमी, किली रोको।

किलो (स० पु०) चोटक, कोड़ा।

किलो—भानदेय किलीका एक माय। यहाँके राजा
भीन है, जिसे दत्तकपुत्र लेनेका अधिकार नहीं।

किल्लत (स० श्लो०) १ म्मता, कमी। २ लहोच,
तमी। ३ पड़पन।

किल्ला (सं० पु०) १ म्म, चटा, कोब। २ जतिकी
मिच। किल्ला जतिके बोधमें गाड़ा जाता है। ३ नवीन
याबा, मङ्गुर,।

किल्लाया किलिचका रोको।

किलो (सं० श्लो०) १ कोर, मिच, पूटो। २ किलो,
मिटकिलो। ३ सुठिया या दप्ता। किलो हुमाके
कन या येच कलमें लगता है। ४ कुड़की।

किलिसेतर (कतापू) बैनगाँवकिलिसेकी पदरखमी पीर विम
दिखानेवाको जाति। यह सर्वांगीर, किलोदी पारस
मठ, गोबाब पीर पचमीमें मिलते हैं। किलिसेतर
मराठों जैसे ही होते पीर कोन्हापुर या मराठेके पाये
लम्ब पठते हैं। प्रम्बेक परिवारमें १ कुता २ बा
३ मे स २ या ३ माय पीर ३ या ३ बकैर रहते
हैं। पुत्र्य लच्छ, सुबै, मके, मितप्ययो पीर दान्त
होते हैं। यह म्मल्लाहापर बने पाण्डवों पीर बीर-
गोके बिन्न रातको दिखा कौबिका निर्वाह करते हैं।
एक मनुष्य बिचके गोके दोपक सेधर बैठता पीर
दूसरा पीर उसकी बटना समझता है। जियां बाबा
मत्राया करतो हैं। यह प्रदर्शन रातको ८ या १०
बजेके पारथ हो ३ या ० लप्टे चमता है। जियां
मोदकेका काम पण्डा करतो हैं। कण्डायोका किनाह
३ या ३ पीर बाबकीका १० पीर १२ वर्षके बोच
होता है। इनमें बिबवा-विवाह प्रचलित है। यहकी
धमादि दिया जाता है। निधन होते मी यह किलोके
पत्नी नहीं।

किशोरसिंह—कोटासक माधवलि इन्हें जानिठ पुत्र ।
 १६५८ ई०को लखनऊक पास धोरहजेबक विरह सुब
 करमिं यइ धोरहपुके पाइठ हुवे धि. परम्तु पीडे पच्छे
 को गये । एगोनि १६७०म १६८६ ई० तक राजत्व
 किया । यह धोरहजीबक बहुत चतुर रीनापति धि धोर
 परकाटकं चवरोवमिं मारि गये ।

किशोरपुर—हिन्दोक एक कवि । इनका जन्म १००४४-
 को हुआ । इनकी बहुतसे कव्यय बनाने हैं । सरदार
 कवि धोर हरिचन्द्रने इनको कविता बहुत को है ।
 किशोरिका (स० स्त्री०) किशोरी स्त्रीके कम् टाप् ईका
 रण प्रकृतत्व । किशोरी, स्वारहये १३ वर्ष तकको
 स्त्री ।

किशोरो (सं० स्त्री०) किशोर स्त्री । किशोरिका स्त्री ।
 किश (धा० स्त्री०) १ यतरणके जेनमिं बादमाइका
 किशो मोहकेको मारमिं जानिको पाव ।

किशवार (हिं० पुं०) पटवारीका एक भागज । किशवार
 में जेतका लम्बर रकबा बगेरइ लिखा रहता है ।

किशो (धा० स्त्री०) १ मौका, गाव । २ पाजबिब, बिसो
 किष्मको याको या तमयती । किशोमें कोई उप
 डोबन रक कर दिया जाता है । ३ यतरंजका जाबो,
 मोहरा ।

किशोतुमा (धा० वि०) मोबासइय गाव जेमा ।

किष्किय (सं० पुं०) कि किं दवालि, किम्बू वा क पूवख
 किमी मनोप सुद पल्लव । १ महिसुरदेगोय एक
 पक्षत । २ उन्न पक्षतको गुहा ।

किष्किया (सं० स्त्री०) लक्ष्मि देवा ।

किष्कियाकाण्ड (स० स्त्री०) रामायणका एक काण्ड ।
 किष्कियाकाण्डमें सुषोयाहिने रामका मिलना धोर
 बालिवक प्रकृति विषय बखित है ।

किष्कियो (सं० स्त्री०) किष्किय स्त्री । किष्किय
 पर्यंतको गुहा ।

किष्किय (स० पुं०) किष्किय स्त्रीके कम् टाप् । किष्किय
 पर्यंतको गुहा । किष्कियामिं जो बालि राजाका राज
 बानी रही । पीडे राममिं बालिको मार उन्न क्पान
 सुषोयका प्रदान किया ।

किष्किया (सं० स्त्री०) किष्किय-टाप् । किष्किय
 पर्यंतको गुहा । किष्कियामिं जो बालि राजाका राज
 बानी रही । पीडे राममिं बालिको मार उन्न क्पान
 सुषोयका प्रदान किया ।

किष्कियाकाण्ड, विचित्रकाण्ड देवी ।
 किष्किय्याविप (सं० पुं०) किष्कियाया पविप,
 इ-गत् । १ किष्कियाके राजा बालि । २ सुषोय ।

किष्क (सं० पुं०-स्त्री०) के कु पारस्करादित् त् वृट
 पल्लव निपातनात् साङ् । १ हादयामुन परिमाप,
 १२ पङ्कजको नाप । २ वृष्ण, हाव । ३ बितस, विला ।
 ४ प्रकोठ । ५ मावइय । ६ बंध, बांस । ७ इन्दुमिद
 किमी बियाको लख । (कि०) ८ कुक्षित, खराव ।

किष्कपर्वा (सं० पुं०) किष्कमिंत पक्ष बन्ध, बहुवी० ।
 १ इण्ड, लख । २ बंध, बांस । ३ मन, एक चास ।

किष् (स० धा०) कर्ता, करनेवाला ।
 "चरं वीरीयं विष वज्रम वन्यं च वृत्तं वन्यमि ईद ।"
 (अथ १ १११ १)

किष् (हिं० सर्व०) "कोन" का रूपान्तर । विमद्वि
 कमनेसे "कोन"-का 'किष्' का जाता है । 'किष्'
 में ही जगानेक दोनाकी मिलाकर 'किमी' को
 जाता है ।

किष् (स० पुं०) सर्वक एक यजुषर ।
 किष्कनई (हिं० स्त्री०) लपि, जेती, बिपानका काम ।

किष्कत (स० पुं०) न्यायित, जूनविधिये मारिका एक
 कथा । किष्कतमें उपद्रा, कबो पादि रहते है ।

किष्कमी (हिं० पुं०) कसबो यमत्रोबो, मजदूर ।

किष्क (स० पुं० स्त्री०) किष्कित् धरति, किष्क य कम्
 पक्ष प्रपादरादित्वात् साङ् । सुगन्धिहृष्यविधिये एक
 सुयवृद्धर चीज ।

किष्किक (स० स्त्री०) किष्कं पक्ष पक्ष, बहुवी,
 किष्क इन् । किष्क नामक सुगन्धि द्रव्य विज्ञता ।

किष्कल किष्क देवा ।
 किष्कलित (स० वि०) किष्कल्य सुष्कालमप्य किष्क
 लय-रतय । नूतनपत्रबिभागइ, नये पक्षाभासा ।

किष्कल (हिं० पुं०) १ इयक येतिहर । २ नाई बारी
 बगेरइके कसालका चर ।

किष्काना (हिं० स्त्री०) १ लपिधम, येतीका काम ।
 (वि०) २ कपवमन्त्रोप, येतीक सुनः इव ।

किष्को (हिं० सर्व०) 'कोई' का रूपान्तर ।
 विमद्वि कमनेसे 'कोई' का 'किष्को' का जाता है ।
 किष्क किष्को देवा ।

किस्त (अ० स्त्री०) १ ऋण चुकानेकी एक रीति, कर्ज देनेका कोई तरीका। किस्तमें एक साथ न दे ऋण नियत समय थोड़ा थोड़ा चुकाया जाता है। २ निश्चित समय पर दिया जानेवाला ऋणका एक अंश, सुकरर वस्तु पर अदा होनेवाला कर्जका हिस्सा। ३ ऋण प्रतिशोधका, निश्चित समय, कर्ज अदा करनेका सुकरर वस्तु।

किस्तबन्दी (फा० स्त्री०) अंशगः ऋण प्रतिशोध करनेका नियम, थोड़ा थोड़ा कर्ज अदा करनेका कायदा।

किस्तवार (फा० स्त्री० वि०) १ किस्तके नियमानुसार, किस्तके तौर पर। २ प्रत्येक किस्त पर, हरेक किस्तके वस्तु।

किस्त (अ० स्त्री०) १ प्रकार, तरह। २ रीति, चाल। किस्तत (अ० स्त्री०) १ भाग्य, नसीब, तकदीर। २ कमिशनरी, प्रान्तका बड़ा विभाग। किस्ततमें कई जिले सगते, जो कमिशनरके अधीन रहते हैं।

किस्ततवर (फा० वि०) भाग्यशाली, तकदीरी।

किस्ता (अ० पु०) १ कथा, कहानी। २ समाचार, हाल। ३ विषय कागड, भगडा।

किस्तकन (हि० पु०) पक्षिविशेष, एक चिडिया।

की (हिं० पत्वय) १ 'का'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—उमकी भाषा। 'की' सम्बन्ध ईकारकका चिह्न है। (स्त्री०) २ 'किया'का स्त्रीलिङ्ग। यथा—रामने रुपमें बड़ी वीरता की। (अष्ट्य०) ३ क्या। ४ अथवा, या तो।

कीक (हिं० स्त्री०) १ चीतकार, शोर, हल्ला। २ वानररव, बन्दरकी आवाज।

कीकट (सं० पु०) की शनेर्द्धतं वा कटति गच्छति, कीकट-अच्। १ घोटक, घोडा। २ देशविशेष, कोई सुक्त। कीकट मगधका वेदोक्त नाम है।

“चरपाट्टिं समारम्भ गृहकृतान्कं दिव।

तावत् कीकटदेशः स्यात् तदन्तर्गम्यो भवेत् ॥” (शतसप्ततन्त्र)

चरपाट्टि (उग्रा)से गृहकृत (गिरी) पर्वत पर्यन्त कीकटदेश है। मगधदेश उसीके पन्तर्भूत है। ३ कीकटदेशज भ्रष्ट, मगधका घोडा। ४ सड्डट-पुत्र-विशेष। (मत्स्य, १६४) ५ अनार्य जातिविशेष, एक कौम। ६ ऋषभके एक पुत्र। (त्रि०) ७ निर्धम, गरीब। ८ कृपण, बखील, कंजूस।

कीकटक, कोकट देखा।

कीकटी (सं० पु०) वन्यवराह, जंगली सूअर।

कीकना (हिं० स्त्री०) चोत्कार करणा, क्रियाना।

कीकर (सं० पु०-स्त्री०) ग्रामविशेष, एक गांव।

कीकर (हिं० पु०) बवूरहृत्, बवूनका पेड़।

कीकरी (हिं० स्त्री०) १ बवूरभेद, किसी किस्तका बवून।

कीकरीके पत्रक बहुत सूक्ष्म होते हैं। २ किसी किस्तका टुकटाकार। कीकरीमें कपडा जतरकर एहरदार या कंगूरेदार बनते हैं।

कीकश (सं० पु०-स्त्री०) कीति कयति शब्दायते, कीकश-अच्। १ चण्डाल, हत्यारा। (महाभारत, ३४०) २ कृमिजाति, कौड़ा मकाडा। ३ अस्थि, हड्डी।

कीकस (सं० पु०-स्त्री०) की कुक्षितं यथास्यात्तथा कसति गच्छति, कीकस-अच्। १ कीटजाति, कौडा मकाडा। की कुक्षितेन रक्षादिना कसति इत्ययत्। २ अस्थि, हड्डी। (त्रि०) ३ कर्कश, कडा।

कीकसमुख (सं० पु०) कीकशं चक्षुरूपं अस्थि लुखेऽस्य, बहुव्री०। पक्षी, विडिया।

कीकसाम्य, कोकसप देखा।

कीकसेखर (सं० पु०) कोकसाया ईखरः, इ-तत्। शिव।

कीका (हिं० पु०) कीकट, घोडा।

कीकि (सं० पु०) कीति शब्दं कायति, कीकै टाहुल, कात् डि। चापपक्षी, नीलकण्ठ।

कीच (हिं० स्त्री०) कर्दम, कोवड।

कीचक (सं० पु०) चीकयति शब्दायते चीक-वृत्।

चापकविर्णयत्। उच् ५। १६। १ वंशभेद, किसी किस्तका वास, वायुष्मर्गसे कीचक शब्द करता है। २ रन्ध्रवंश, छेददार वास। ३ वाचसविशेष। ४ दैत्यविशेष।

५ नल, एक चास है। छत्रविशेष, कोई पेड़। ७ विराट-राजाके श्यालक और सेनापति! कीचकके पिताका नाम केकयराज था। द्रौपदीके प्रति प्रत्याघार करनेकी इच्छा रखनेसे भीमसेनने उन्हे मार डाला। महाभारतमें उनकी मृत्यु कथा इसप्रकार लिखी है—“पद्मपाण्डवके प्रजात-वासका समय उपस्थित होनेपर वह छद्मवेशसे विराट-राज्य पहुँचे और छद्मवेशसे ही विविध कार्योंमें नियुक्त

शौ रक्षणी कर्म। उसी समय शौचक वैरिण्यो-रूपिणी श्रौपदीको दृष्ट प्रत्यक्ष आमातं हृषी थीर पन्थ बिस्वी प्रकार धर्मोड निराश्रय न सकनपर ब्रह्माकार कर्मि पर पुन नये। फिर लक्ष्मिनि मगिनीके धनुरोध बिबा वि बह श्रौपदीको कर्मि सर भेज दी। मगिनीने सुरा रंगा निसे ब्रह्मनि श्रौपदीको शौचकके गृह पदु थापा बा। कर्मि उपस्थित होती ही शौचक उनको पात्रमय कार्फके सिधे उपपन्न हूये। किन्तु बह लीलापूर्वक बहसि दौड कर रामसभाको मान गयो थीर उनके हाथ न ननों। पीके भोमसेनसे परामर्शकर श्रौपदीने शौचकको सङ्केतकाल नायक्यामार्गि मुखाया बा। लक्ष्मि धनुषार बह बहा आकर उपस्थित हूये। परन्तु भोमसेन उक्त स्थानपर पङ्कति हो नारीधर्मि बैठे थे। शौचकको देखते हो मार डाला। (भाष्य, श्रौत, १२ न) केन हरिर्भमपुराचर्मि इत्यथो कथा इत् माति बिषो है— जिष समग्र शौचक श्रौपदी पर पाठक हो संकेत काल पर पदु था तो उसे कर्णवैयो भोमसेनने बहुत मारा थीर कथा याचना करते पर छोड़ दिया। इसके बाद शिवसेने पित्रक हो लसने एक दिगम्बर केन मुनिसे शोभा ले तप बिबा एव सोर तपधरच द्वारा कर्म नष्टकर मुक्ति पाई।

शौचकर्मिन् (स० पु०) शौचक पितवान्, शौचक वि धतीति क्तिप्। भोमसेन।

शौचकनिसूदन, शौचकनि देवी।

शौचकर्मिन्, शौचकर्मिन् देवी।

शौचकवच (सं० पु०) शौचकवच पत्र मारचम्, इ-तत्।

१ शौचकवचा वच। शौचकवच वच विनाशकथा बर्चितो यम, बहुव्री०। २ शौचकवचके विवरणका मुद्राच।

शौचकाश्रय (स० पु०) १ रम्य रंग दिग्दार बांध। २ मन्, एक शास्त्र।

शौचक (दि० पु०) कर्म, शौच। २ चक्षुमय, पांशुका मेल।

शौच (वे० पु०) कर्ष जाता: श्रौपदीपद्विजात् साहृ। अदुत, पत्नीया। "क म्भी क्यो पामो धी स शीथी विरचन्तः। (अ० ४। १२। २) 'शौच कर्मव्युत्पत्त' (भाष्य)

शौट (स० पु०) शौट-पत्र। १ सुहृदोवभेद, शौडा, मन्त्रोडा। शौट बहुविध थीर नाग प्रकार होता है। सुतरां उसे निर्दम कर नहीं सकते। सुयुग्मे कई शौटोंके दमनसे उत्पन्न रोगोंको बिबिधासि सिधे सर्प समूहके शय मन्, मूत्र एवं शय पूति तथा पण्य जात कई शौटोंको प्रकृति, इयनमन् रोग थीर उन को बिबिधासा निर्दम बिबा है। उक्त पशुस शौटोंके मध्य कुछ बाहुप्रकृति, कुछ विपप्रकृति, कुछ पंच प्रकृति थीर कुछ सिद्धोवप्रकृति होते हैं। सर्वापिशा सिद्धोवप्रकृति शौट को भयकर होता है।

सुशोभण सुचिद्वैरी, शूरो, भतकुशोरक सधि टिङ्ग, शम्भिलामा, चिचिटिङ्ग मयरिक, पावर्तक, करन्ध, सारिका, सुकभेदन, मरायकुट्टं धमोराको, पक्ष, शिवशौचक, यतवाहु थीर रञ्जराजि—१८ प्रकार के शौट बाहुप्रकृति होती है। उनके दमन करनेसे बाहुमन् रोग उत्पन्न होता है।

शौचिप्रदाक, कर्णमय, परटो, पचठयिक, विना सिका कर्णशिका, विन्दुन, क्षमर, बाण्णो पिचिट, कुष्ठी, बर्षाशौट पाकमयस्र कण्यतुष्ट परिमेदक, पक्षशौट, द्रुमुमिक, मञ्जर, यतपचिक, पक्षानक, गर्द मी, श्लोत क्षमिपरारि थीर लक्ष्मणक—१४ प्रकारके शौट पित्तप्रकृति होती है। उनके दमनसे पित्तमन् रोग उठता है।

विन्धकर, पक्षशय, पक्षकण्य शौचिक, सीरियक, प्रचलक मन्म, बिटिम सुबोमुका, कण्यगावा कयाय कालिक शौटमदमक थीर शौटक—११ प्रकारके शौट पंचप्रकृति है। उनके दमनसे पंचकण्य रोग जन जाता है।

सुशीतल, बिचिलक ताकक वाहक, शौडा-गारी, क्षमिकर, मण्डकपुष्पक सुडनाम, सर्पयिक धवल्लुको यम्भु थीर चम्बिकौट—१२ प्रकारके शौट सचिपात प्रकृति हैं। उनके दमन करनेसे सर्प दमनका भाति तोष यातना उठनी थीर साविपातिक रोग समूहकी उत्पत्ति होती है। कल शौटोंके आठनेसे दृष्टद्वारा धार वा चम्बिकौटकी भाति चिद्रुस्र बन जाता थीर रक्त पीत, श्लेत्त वा पक्षकवर्ष दिघाता है।

ज्वर, अङ्गमर्द, रोमाञ्च, वमन, प्रतीसार, लप्था, दाह, मोह, जुम्हा, कम्प, श्वास, ह्रिका, शीत, पिडकानिर्गम, शोथ, ग्रन्थि, चकता, दट्ट, कर्णका, धीसर्प, किटिम प्रभृति रोग भी उनके काटनेसे होती है। एतदप्यतोत दूमरे भी कई कोट और उनके दंगनके चिन्हादि सन्धुतसे उपादृष्ट है। यथा—

त्रिदण्डक, कुण्ठी, हस्तिवज्र और अपराजित—चार प्रकारके कोटोंका नाम कर्णभ है। उनके काटनेसे तीव्रवेदना, शोथ, अङ्गमर्द एवं गात्रगौरव आता और दृष्टस्यान काला पड जाता है। प्रतिसूर्य, पिङ्गभास्व, बह्वर्ण, महाशिरा और निरुधम—पाच प्रकारके कोट गौधेरक कटाती हैं। उनके दंगनसे यातना आवेग, विविधरोग और भयङ्कर ग्रन्थि निकलती है। गलगोनी, श्वेतलक्षणा, रक्तराजौ, रक्तमण्डना, सर्वश्वेता और सर्पपिका छह प्रकारके कोटोंमें सर्पपिका व्यतीत अन्य पाच प्रकारके कोटोंके दंगनसे दाह, शोथ और क्लोट आता है। फिर सर्पपिकाके काटनेसे हृदययोद्धा और अतिसार रोग उपजता है। कर्कशस्पर्श, विचित्रवर्ण और क्षण्य, पीत, श्वेत, कपिल तथा अग्निवर्ण भेदसे शतपदी कोट ८ प्रकारका होता है। उसके दंगनसे दृष्टस्यान पर शोथ एवं वेदना और हृदयमें दाह उठता है। विगोपतः श्वेतवर्ण और अग्निवर्ण शतपदीके काटनेसे दाह, मूर्च्छा और श्वेतवर्ण पिडका उत्पन्न होती है। क्षण्यसार, कुहक, हरित, रक्त एवं यववर्ण और मृकुटो तथा काटिक नाम भेदसे मण्डूक (मंडक) ८ प्रकारका है। उसमें क्षण्य रहता है। दंगन करनेसे दृष्टस्यान खुजलाने लगता और मुख निकल पडता है। विगोपतः मृकुटो और कोटिक मण्डूकके काटनेसे हाफिका मित्र दाह, वमन और अत्यन्त मूर्च्छा आया करती है।

विखम्बर नामक कोटके दंगनसे दृष्टस्यान पर सर्पवका भाति छुट्ट छुट्ट पिङ्गका पडती और शीतज्वर आता है।

अह्निगुडक नामक कोटके काटनेसे सूई चुभनेकी भांति पोडा, दाह, कण्डू, शोथ और मोह होता है।

कण्डूमक नामक कोटके काटनेसे अङ्ग पीतवर्ण

पड जाता और वमन, प्रतीसार तथा ज्वररोगसे मृत्यु आता है।

शुकवृन्त प्रभृति कोटके काटनेसे कण्डू होती शरीर में चकत्त और दृष्टस्यानमें शूक भी दिखाई देता है।

पिपैलिका छह प्रकारकी होती है। यथा—स्यन्-गोपै, सम्याहिका, ब्राह्मणिका, अंगुलिका, कपिलिका और चित्रवर्णा। उसके काटनेसे दृष्टस्यान पर शोथ और अग्निस्पर्शकी भांति दाह हुवा करता है।

कान्तारिका, क्षण्य, पिङ्गलिका, मधुनिका, कापायी और स्यलिका नामभेदसे मल्लिका भी छह प्रकारकी होती है। उसके काटनेसे दृष्टस्यान पर दाह और शोथ उठता है। स्यलिका और कपायीके काटनेसे उच्च उपद्रवके साथ माय पिडका भी पड जाती है।

मशक पांच प्रकार है—मासुद्र, परिमण्डली, हस्तिमशक, क्षण्य और पार्वतीय। उसके काटनेसे दृष्टस्यान पर शोथ और अत्यन्त कण्डू होती है। किन्तु पार्वतीय मशकके काटनेसे प्राणनाशक कोटदंगनसे जो समस्त लक्षण कहे गये हैं, वह समस्त देख पडते हैं। उक्त स्यान पर नख द्वारा छिन्न होनेसे अत्यन्त पिडका पड जाती और वह पक आती है।

हृषिक कोट मन्द, मध्य और महाविष भेदसे तीन प्रकारका होता है। पूति गोमयसे जो मक्षक हृषिक उपजते, वह मन्दविष रहते हैं। काठ और इटकसे जन्म लेनेवाले मध्यविष होते हैं। फिर पूतिसर्पदेह और विषसे जो उपजते, उन् महाविष कहते हैं।

क्षण्य, श्वाद, चित्र, पाण्डु, गोमूत्र, कर्कश, सिग्ध, क्षण्य, श्वेत, रक्त एवं हरितवर्ण और रक्तलोमयुक्त हृषिक मन्दविष होता है। उसके काटनेसे वेदना, कम्प, गात्रस्तम्भ, दृष्टस्यानमें क्षण्यवर्ण, रक्तस्राव तथा शोथ, ज्वर एवं हस्तपादादिमें दंगन करनेसे यातना और वेगकी क्रमशः ऊर्ध्वगति देख पडती है।

रक्तवर्ण एवं पीतवर्ण, किन्तु उदरदेश कपिलवर्ण और सर्व शरीर धूस्रवर्ण हृषिक मध्यविष है। उसके शरीरका परिमाण ३ पर्व होता है। उसको उत्पत्ति सर्पकी पूति, मल मूत्र और अण्डसे है। उसके काटनेसे जिह्वा पर शोथ, कण्डूनालीमें भुक्त द्रव्यका अवरोध और अत्यन्त मूर्च्छा आती है।

खेतवर्ष, चित्रवर्ष, श्यामवर्ष, रजाम, रत्नखेत, रजोदर, न-सोदर, वीतरज, नौकवीत, रत्नगोल, नौकपुष्प एवं रत्नपिण्डवर्ष प्रकृति बच सुख और परिमार्चमें एक पक्ष, एक वर्षकी अपेक्षा भी कुछ घटती है। पृथिवीवर्ष समझ महाविष तथा पाचनायक है। पृथिवीवर्ष का सर्पदंत शक्ति के उदय उत्पत्ता जन्म है। इसके बाद जेथे सप्तपिण्डी भाति विषवैद्यको प्रकृति स्वाद, ज्वर, दाह ज्वर और शरीरका क्षुद्रपक्षी रज्जुस्वयं शरीरपर प्रायः झूट जाता है।

सुप्तुतकी मर्तमें—किसी समय राजा विद्यामिचन पतिव्रती कामधेयु चपहरणको भी। उससे वह पञ्चम कुपित हुई। उसी समय उनसे कलाटदेमथे पति-विजयी श्वेदविन्दु निबन्धा जा। वह द्विप क्षत्रमें गिर पड़ा। उससे जूता (मन्त्री) नामक बीट उत्पन्न हुआ। पाचार, वर्ष और प्रकृतिमें देमथे मानाविष जूता श्वेदस्य श्वेदप्रकारमें विभक्त किया गया है। तब प्रकारको जूताका विष मयानक है। उसमें पाठ प्रकारको जूता कहलाय और पाठ प्रकारको एकवारना जो पचाय निर्दिष्ट हुआ है। तिमरुणा, श्वेता कपिना, पोतिका, चानविषा, मृगविषा, रज्जा और श्वेता जूताका विष कहलाय है। उसके रंगम करनेसे यिरीरोग, कण्डू, दृष्टान पर श्वेता और नातप्रोचिक रोग समूहको उत्पत्ति होती है। सोर्बिका, कामवर्षा काशिनो, एषोपदी, कण्डू, पन्थिवर्षा, काकाप्या और मासा गुणा—पाठ प्रकारको जूताका विष पचाय है। इसका रंगम दर दृष्टानमें रज्जु निबन्धता, दृष्टान बड़ता और ज्वर, दाह, पतिसार प्रकृति त्रिदोषगत रोग, विविध विकृता, मात्रमें बड़ा बड़ा बजता और रज्जुवर्ष पचता श्यामवर्ष एवं कण्डू पचता योव हुआ करता है। रंगमगतोत भी उक्त प्रकारको जूताको काक, नखा घात, कृष्णघात, मूत्र, रज्जु, मन्त्र और रज्जुवर्षमम मा विष पतित जाना पड़ता है। साक्षात् विषके कण्डू एकस्वामन्वया, पञ्चमूलकोट और पञ्च वेदना होती है। नखाघातके विषके योव एवं कण्डूका विष बड़ता और मनुष्य पचक रहता है। कृष्णघातके विषके दृष्टान ज्वर, अठिन एवं निबन्ध पड़ जाता और शरीरमें

एकस्वामन्वयो मण्डल निबन्धा जाता है। मूत्र शरीरके दृष्टानमान मन्त्रमें जगता और कण्डूका मण्डल कण्डूवर्ष तथा प्रायमाग रज्जुवर्ष दिव पड़ता है। रज्जु, मन्त्र एवं इन्द्रिणीके पक्षमें पञ्चपिण्डु पक्षको भाति पाण्डुवर्ष श्वेदवर्ष रहता है। जूताका विषो प्रकार विष-वर्ष एक ही बारमें समस्त प्रभावित नहीं होता। रंगके पोषे पक्षी दिन पचकवर्ष और कण्डू विविध पचक बजती हमरा करती हैं। सुन्दरी दिन जन मण्डलको मन्त्रमाग निबन्ध और चतुर्दिग्ज्जा प्राय भाग पच रहता है। तीसरे दिन विषका उत्पन्न दिव पड़ता है। चतुर्थ दिन शरीरका विष कुपित होता है। पञ्चम दिन विषकोपसे रोगसमूह उत्पन्न जाता है। यह दिन विष सर्वशरीरमें ज्वर विषीवर्षमें मर्मस्वाम समूहको पाचय करता है। छठम दिन विषप्रतोप बड़ता बड़ जाता है। तीसरे वा प्रकृति विष जोमथे उसी दिन शरीरका प्राय विनष्ट होता है। मन्त्रम विषविषिष्ट जूताके रंगममें समस्त दिवसके पोषे और मन्त्र विषसुप्त सुनके रंगममें एक पचकाय मन्त्र पच पा सकता है।

निबन्धा—उपविष कोटोके काटनेसे सर्पदंशनको भाति जो विकृता करण पड़ती है। श्वेद, प्रसव और जल शैवादि उत्पन्न कर श्वेदकार करना चाहिये। दृष्टान पक्ष या मङ्ग जामे और मूर्च्छादि उपहन बड़ पानिके वमन निरेचनादि रंगममन कायं और विनायक क्रिया अनुदायके काम होता है। उक्त कण्डू उपहनमें यिरीर, कुटको, कुट बन्धा, हरिद्रा, सेन्धुवर्ष, मन्त्रदुग्ध, मन्त्रा बन्धा, मन्त्रदुग्ध, मन्त्रो, विषको और श्वेदवर्षा पुकटिस वायना चाहिये। पचका प्रथम मानपर्षीवर्ष कर उसका श्वेद जयाना कथित है। विन्दु इविक रंगममें कण्डू पतितकर है। त्रिकण्डूके विषमें कुट, पपह मिन्त्रुशर, बन्धा विलसुन्ध, निबन्धको, सुपटिका, कण्डू, हरिद्रा और दाहहरिद्राका प्रयोगदि दिनकर है। गन्धोको (उपविषीवर्ष)के विषमें कण्डू वरिद्रा, पपह मिन्त्रुशर, कुट और पचायशरीरके उपकार होता है। यतुदी (मानकज्जा)के विष पर कुट, तमर पाटुका, मोमाचन, पञ्चकाक, हरिद्रा और दाहहरिद्रा

पानोमें पीस कर प्रलेप लगाना चाहिये। सकल प्रकार मण्डूक-विष, मेघशृङ्गी, वचा, विडकपर्णी, स्थानवेतस, मञ्जिष्ठा और वालकके प्रयोगसे नष्ट हो जाता है। विश्वम्भर कीटके काटनेसे दवा, चङ्गमन्धा, पौनवाद्यान्लक्षा, श्वेतवाद्यान्लक्षा, छुद्रचक्रमर्द और गालपर्णी प्रयोग करना चाहिये। अर्द्धशुक्रा कीटके दंशन करनेसे शिरीष, तगरपादुका, कुष्ठ, हरिद्रा, दाह-हरिद्रा, गालपर्णी, सुद्वर्णी और माधपर्णी हितकर है। दण्डमूत्राके काट खानेसे रात्रिकालकी शीतल क्रियासमूह करना पड़ता है। कारण दिनकी सूर्यरश्मि द्वारा विष अधिक प्रकुपित होनेसे शीतल क्रियासे कोई फल नहीं मिलता। शूकहन्त (भांभा) के विषमें लक्षा मिन्धुवार, कुष्ठ और अपामार्ग प्रयोग करते हैं। अथवा क्षणवह्नीककी मट्टी सृङ्गराजकी रसमें पीस कर प्रलेप चढाना चाहिये। पिपीलिका, मञ्जिका और मशक दंशन पर क्षणवह्नीककी मट्टी गोमूत्रके साथ पीस कर प्रलेप देते हैं। प्रतिसूर्यक (गुह्वरा)-के दंशन करने पर सर्पदंशनकी भांति चिकित्सा करना पड़ती है।

दण्डविष और मध्विष वृश्चिकके दंशनमें सर्पदंशन की भांति चिकित्सा कर्तव्य है। मन्धविष वृश्चिकके काट खानेसे चक्रतेज अथवा विदार्याटि गण्योक्त द्रव्य समूहके साथ सुसिद्ध लष्ण जलका सेक देना चाहिये। अथवा विषम द्रव्यसमूहके पुनटिमसे खोद लगा दृष्टस्थान पर हरिद्रा, सैन्धव, त्रिकटु, शिरापञ्चोज और शिरीष पुष्पके चूर्ण द्वारा घर्षण करते हैं। तुलसीकी मञ्जरी, विनोरा और गोमूत्रके साथ पीसकर प्रलेप करनेसे भी वृश्चिकके विषकी शान्ति होती है। उक्त विषमें ईष-दुष्ण गोमयका प्रलेप और खोद हितकर है।

कृष्णमपुष्प तथा लोड्रव प्रत्येक १ भाग और हरिद्रा २ भाग घृतमें मिला गुह्यदेशमें घृष प्रदान करनेसे वृश्चिकविष सत्तर निवारित होता है।

लूना (मकड़ी)-के विभागानुसार प्रत्येक जातीय लूनाविषमें पूर्वोक्त साधारण लक्षणकी अपेक्षा अनेक विभिन्न लक्षण देख पड़ते हैं।

त्रिमण्डना लूनाके दंशनादिसे दृष्टस्थान विदीर्ण

हो जाता है। उससे क्षणवर्ण रक्त बहता है। फिर वहिरता, चक्षुकी आविलता और चक्षुद्वयका दाह जाता है। उसमें प्रकमूल, हरिद्रा, नाकुलो और चक्रमर्दको अम्यद्ग, पान, अञ्जन और नस्यरूपसे प्रयोग करना चाहिये।

श्वेतालूनाके दंशन करनेसे श्वेतवर्ण और कण्डूयुक्त पिडका उत्पन्न होती है। दाह, सूच्छा, ज्वर, विसर्प, क्लेद और वेदना भी उठती है। उसपर चन्दन, राम्ना, एना, रेणुका, नल, अशोकत्वक्, कुष्ठ और चक्रमर्द—सकल द्रव्य प्रत्येक १ भाग एवं वेणामूल २ भाग एकत्र प्रलेपादिमें व्यवहार करना चाहिये।

कपिला लूनाके काटनेसे ताम्रवर्ण एवं एकस्थान स्थायी पिडका, मस्तक भार, दाह, अन्धकार दंशन और भ्रम होता है। उसमें पद्मकाष्ठ, कुष्ठ, एना, करञ्जत्वक्, अर्जुनत्वक्, गालपर्णी, प्रक, अपामार्ग, दूर्वा और ब्राह्मी—सकल द्रव्य हितकर है।

पौतिकालके काटनेसे पिडका, वमि, ज्वर एवं शूल आता और चक्षु रक्तवर्ण पड जाता है। उसपर कुष्ठ-त्वक्, वेणामूल, पद्मकेशर, पद्मकाष्ठ, अशोक, शिरीष, अपामार्ग, लहसोडा, कदम्ब और अर्जुनत्वक् उपकारक है।

चालविषाकी दंशनसे दृष्टस्थान पर रक्तवर्ण मण्डन (चकता), सर्पपकी भांति पिडका, तालुशोष और दाह होता है। उसपर प्रियंगु, वानक, कुष्ठ, वेणामूल एवं अशोक अथवा शतपुष्पा और अश्वत्थ तथा वटका अक्षुर एकत्र प्रयोग करनेसे उपकार पहुँचना है।

सूत्रविषके सर्गसे दृष्टस्थान सह जाता क्षण एवं रक्तवर्ण पिडका पड़ती और क्राम, श्वाण, वसन, सूच्छा, ज्वर तथा दाह होता है। उसपर मनःविना, हरिताल, यष्टिमधु, कुष्ठ, चन्दन, पद्मकाष्ठ और वेणामूल पीसकर मधुके साथ प्रलेप चढाना चाहिये।

रक्तलूना काट खानेसे दृष्टस्थानकी चतुर्दिक् रक्तवर्ण हो जाती है और पाण्डुरप की पिडका उठ पाती है। फिर क्लेद और दाह भी होता है। उस पर वासा, चन्दन, वेणामूल एवं पद्मकाष्ठ अथवा अर्जुन, लहसोडा तथा आम्वातकको त्वक्का प्रलेप लगाया जाता है।

कमनाके रङ्गनपर दृष्टस्थानमें विच्छिन्न एक शीतल रक्त निराला धोर कास तथा श्वासरोग उपजता है । उसमें रहसूनाको मति को बिबिधा करना चाहिये ।

लक्षाके रङ्गनपर दृष्टस्थानमें निहाको मति मन्त्रगुण रक्तवायु होना धोर स्वर, मूच्छा बमि, दाह, काम तथा श्वासरोग उठा करता है । उस पर एना, चक्रमर्द तथा चन्दन पत्रके १ भाग धोर मन्त्राहुको १ भाग एकत्र घेनय कर प्रक्षेप चठाने है ।

पानिचर्पाके रङ्गनमें पायल रक्तवायु होना धोर स्वर, श्वासन, चण्डू रोमचर्प, दाह तथा स्त्रोद उपजता है । उसपर क्षायाविषको मति बिबिधा करना पडती है ।

पल्लवमूक विषामल यष्टिमधु रक्तचन्दन, सीग म्बिजपुष्प पत्रकाष्ठ रोषानक धोर पञ्चखलक पूर्वोक्त समुदाय क्ताविषपर प्रयोग करतें हैं ।

धोरचर्पाके काटनेसे मन्त्रका मति मन्त्रगुण धोर किनमिय रक्षादिभाव होता है । फिर कास श्वाध, स्वर श्वाध धोर मूच्छादिगम भी उबा बैठता है । कामचर्पाके रङ्गनमें चण्ड पडना प्रति रक्तवायु होता धोर दाह, मूच्छा, चतिघार, तथा शिरोरोग उपजता है ।

कानिमीके काटने पर दृष्टस्थान सूक्ष्म सूक्ष्म मिरा उठ पानिध उठ जाता धोर श्वाध, श्वाध, चन्धवार श्वाध तथा ताहुमाय उपा करता है ।

पक्षीपक्षीके रङ्गनमें क्षयनिसको मति बिबिध पडता धोर श्वाध, मूच्छा स्वर, बमि कास तथा श्वासरोग लयता है ।

काकापक्षीके काटनेसे दृष्टस्थान पाण्डु वा रक्तवर्ध पड जाता धोर उसमें चम्बल वैदना होती है ।

मातामुखाके रङ्गनमें दृष्टस्थानमें धूमको मति मन्त्र निष्कमता चम्बल वैदना जामे, बहुतया श्वाध उठ जाता धोर दाह मूच्छा तथा स्वर पाता है ।

उक्त नमस्त सताबोधे काटने को दृष्टस्थान उष्टिपत्र पत्र हास एकवारगो हो काट कर पम्पितत जम्बोठ त्रसाकामे त्रसाकामे पडता है । किन्तु मरमेकाममें काट पाते पचवा क्वादि उपद्रव बहु पानिध धोर फाड़

करना न चाहिये । उस पर मियंशु इष्टिग्रा कुट्ट, मन्त्रिहा धोर यष्टिमधु पोसकर मधु तथा सैन्धवचर्पाके साथ उसीय चठाने है । बटादि शौरोहचका श्वाय बना शीतल होनेपर दृष्टस्थान सेपन सिधा जामा है । फिर बमल विरेचन द्वारा मयाशन धोर जनीबा द्वारा रक्त मोचन कर पञ्चाम्ब विदग्ध प्रयोग करना चाहिये ।

मधवहार बोट रङ्गनमें मय तथा शोष पारोगय जामे पर निम्बपत्र त्रिहृत् दन्तो, कुसुमशङ्ख इष्टिदा, मधु सुग्गुण सैन्धव, सुरासोत्र धोर कपोलको बिहा हाग दूट (ईंख) निवास जानते है । (उष्टव)

शुरोपोय प्राचिनलविदुषे मतमें—बोट क्तावत मिराह झुकोन पम्बिजुक चूट जोक (Insects) है । उनके मन्त्रक बच, उष्टर, मन्त्रक पर दो चार्पेन्द्र धोर बचकोटरके इष्ट धेर होती है । पश्चिमाय क्ताके जामे बोटके पत्र रहती, किन्तु पति पक्षके हो दिव पडती है ।

यह प्रधानतः बोटप्रतिको १ चोभीमें भाग करतें है । १ म चोभीके बहुतये बोट क्ताके सूक्ष्म पर्यन्त क्तावत्तर पचन नहीं करतें । छोटे बड़े क्ताका गठन एक प्रकार जाता है । केवल बयाउडिके पतुहार देह काटा नका रहता है । पच नहीं होती । चण्ड पति सामान्य जतये । बोरे बोट चण्डकोन भी होता है ।

(Ametabola)



> शूब (कङ्कवान)
२, बोटको शिव पचला ।

> मधुच, २ बचकोटर (Thorax), ० उष्टर, ४ पचमूक १ पच ६ चार्पेन्द्र वा कोटरको सूड ।

य चोभीके बहुतये बड़े होती पर भी सम्पूर्ण क्तावत्तर नहीं पाते । यह प्रथम शूब (कङ्कवान) को मति दिव पडती है । पाकारमें भी कुछ पार्थक्य

रहता है। प्रायः पक्षमूल नहीं होते। पक्षमूलको वृद्ध कीपको भांति ही जाते पक्षया तृतीय पक्षया (Pupa) पाते हैं। उक्त पक्षयामें गति रहते भी कीट नहीं बनते फिरते। (Hemimetabola)

इयं श्रेणीके कीट मम्बू^० रुगान्तर प्राप्त होते हैं। शून्य, तृतीयवस्था और आयतन क्रमगः परिवर्तित ही नूतन आकार बन जाता है। (Holometabola)

एकलुण (जूं), पक्षीके गात्रका छमि, गतपटी (कानखजुरा) प्रकृति कीट प्रथम श्रेणीके पक्षयोंके हैं।

एन्द्रगोप (वीरवहृटी), आम्रछमि (पामका कीडा), भित्तिछमि (दोवारका कीडा, विनोहरी) चारकोट (खटमन), घुघुर (भोगर), तिलचट, पिणैलिका, गन्ध (टिट्टी) प्रकृति द्वितीय श्रेणीमें आते हैं।

मगक, मच्छिका, पिङ्गकपिया (गुलुवा) प्रकृति तृतीय श्रेणीके कीट हैं।

प्राणितत्वविद्ने उक्त तीन श्रेणियोंको फिर नाना शाखा प्रयाग्वार्षोमें विभक्त किया है। उन्होंने आजतक १२५६ प्रकारके कीटोंका सम्मान पाया है।

भारतवर्ष एवं पूर्व उपद्वीपदिकी भूमि जिस प्रकार उच्च तथा निम्न है और प्रत्येक स्थानमें शीत-तपका जैसा तारतम्य देख पड़ता, उससे उक्त सकल देशमें कीटोंकी नामाविध श्रेणी, जाति और प्रभेद मिलता है।

भारतीय कीटमसूहका जो विवरण देखनेमें आता, वह प्रायः एकरूप पाया जाता है। शीतमण्डल और सममण्डलमें समस्त कीटोंकी जो विभिन्न जाति और श्रेणी देख पड़ती, उसका गठन प्रभेद इतना मिश्रित रूपमा कि उनका प्रभेद निर्णय करना दुःसाध्य ठहरता है। हिमालयके स्थान स्थान, भारतके दक्षिणप्रान्त और भारतमहासागरीय कई द्वीपोंमें शीतमण्डलके कीटोंकी ही श्रेणी अधिक मिलती है। फिर नेपाल, दक्षिण मद्रिपुर, सिङ्गल, बम्बई प्रदेश, मद्रास, कलकत्ता, दक्षिणवङ्ग, सिंगापुर, जापान और यवद्वीपमें भी उक्त श्रेणीके कीटोंके अधिक रहनेको ही बात है।

इसी प्रकार एशियाके कीटसंस्थानमें अफ्रीकाका कीटसंस्थान मिलता है।

एशिया और अफ्रीकामें एक प्रातीय पिङ्गकपिया (गुलुवा) होती है। (Ateuchus sanctus)। उसे मिस्र देशीय अति पवित्र और सुलक्षण समझते हैं। (The sacred beetle of the Egyptians.) वह कहते कि उक्त कीट भूमिको उर्वरताका चिह्न स्वरूप है।

हिमालयके कीटराज्यमें यूरोप और एशियाका कीटगठन देख पड़ता है। फिर उसके उपत्यका प्रदेशमें दक्षिणायनकी श्रेणी ही अधिक मिलती है। वहां शीतमण्डलकी भांति बहुतसे चिंन्त्र (मांस खानेवाली) कीट भी होते हैं।

कीटोंके मध्य बहुतसे मनुष्यका जो उपकार होता, वह कहनेमें नहीं आता। कितने ही उसी प्रकार अनिष्टकारो भी हैं। फिर बहुतसे कीट सर्वत्र नाश कर देते हैं। कितने ही देखनेमें पति सुन्दर और कितने ही कौतूहलजनक हैं। फिर बहुतसे कीटोंका पाचार-ध्वजार और यामस्थानके निर्माणकी प्रयात्नी प्रारंभजनक होती है।

कीटके भी इन्द्रिय रहते हैं। कीटकी गर्मिणी होनेसे पुंकीट मर जाता और वह हिंस्रप्रसव कर मरती है। कीटोंके असंख्य सम्मान उत्पन्न होते हैं। जगदीश्वरके राज्यमें यदि सब कीटोंके लिये जीनिका नियम रहता, तो अकेली कीट श्रेणीका स्थान भरनेमें ही समय पृथिवीका प्रयोजन पड़ता। वर्षमें जिस प्रकार कीट संख्या बढ़ती, वह यदि काटमुक् पक्षी, पशु वा हचलतादि द्वारा विनष्ट न होती तो अनुमान किया जा नहीं सकता क्या ही जाता। यही नहीं कि केवल कीटभुक् पशुपक्षी ही विद्यमान हैं। अनेक कीट मनुष्यभोज्य भी हैं। यूनानी पहले टिट्टी खाते, जिसे न्यू साउथ वेल्सके पादिम अश्वय प्राज भी खाते हैं। इस्त्रियात नामक कोई ग्रन्थकार कहते हैं कि-सम्भवतः भारतमें भी कुछ लोग किसी किसी कीटसे हिंस्रसे सद्यप्रसूत शाक निकाल खा डालते हैं।

जासिकादापके काफिर बुगुण (Bugong Butt-

cellies) नामक एक चित्रपतङ्ग (तीतनी) पाहार करती है। चीनदेशके बड़े पादरक्षी रैयमका कोड़ा (रैयम निकाल करके पर गुटीके मध्य निकलनेवाला हरिद्राबर्णका मृतकोट) बनाते हैं। यद्योत्तरिपतङ्ग (बागकी पांखो) (Hawk moth) का सद्यकाल प्रायः भी चीनागोको प्रतिप्रिय है।

कीट कीटें प्रथम सन्धि वाङ्गनीके कीटका प्रायः बनाते हैं। ब्रह्मदेशीय कृषि पति उपदेश्य ज्ञान्य सम भरी है। जरीन सोम पायकोटकी मांति एक जातीय कीटप्रायः पाहार करती, जिसे मछोके लसमें भर कर रखते हैं।

मारविटन और मारतीटार कीय विप्लोनिवा मध्य करते हैं। इटोए दोमक का बनाते हैं। ब्राइटन प्रायःवने निजा है कि महाराष्ट्रदुर्गके समय देविद्याके मन्त्री सुरकोराव दुर्गनाथराय दोमक रोटीके प्राय निजा कर पाहार करती है।

साङ्गनिडबन्धे ज्ञान्य एक प्रकारके कीटकी रीच ताकी मांति मान्य करती और उसे प्रेगा-डेवरी (Pro-
gra Deori) कहते हैं। इन्दुप्रानो तुलसी लक्षके कीटकी मन्ति करती और विद्याव रखते कि उसे लक्ष रसाकरण्ड (चीनेके ताकोर)-में डाल करती है याव, बच्चा, रत्नरमन प्रथति दुःखाय रोग पारोप्य होते हैं। गाल (Galls) नामक कीटमें चीपय, बर्षक (रंग) और मयी (जाड़ी) बनती है। किरिम दाना (Cochineal) कोड़ेको सुखा लेनेके पन्था जाल रंग तैयार हो जाता है। यह एक साष्टमर्ममें रहते, तब जरादुर्गके मध्य एक माछोमें परकार विपट केते हैं। एक किरिमदानिके १०० प्रायः कीटें हैं। मध्यपमैरिकाके लनकी सर्वोत्कृष्ट अंशो इन्मिष्य भेजो गयी है। ओशानि ज्ञान्य कीटमें चीननाक, बटननाक द्विजनाक और साकडाई प्रथति लोच बनती है।

जात्यारिष प्रथति जातीय कीटमें प्रथम और चीप चादि प्रस्तुत होती हैं।

द्विजोकोरा (Chrysochros) नामक कोटके पचमूलकी पाहरोधे भारतमें एक प्रकार बड़िया

इरा रंग बनाया जाता है। इसे यहाँके युरोप भेजती है।

इस जातीय एक प्रकार कीटके पचमूलकी पाह रोधे ब्रह्मदेशीय श्री राट, कच्छी और भुवभुकी बनाती हैं। यह लाल इरी बूयकाइका रंग रखता है। फिर मानो कष पर चीनेका पानो चढ़ा रहता है। पायरपी देवर्ममें सम्युच लक्ष्यक मन्तिको मांति प्रमचतो है।

द्विजोके मध्य चरविद्या हडदाकार कीट यक्ष-
होपका विह्वलिया (Scarabeus Atlas, गुसुवा) है।

मचकीके बड़े बड़े प्राये पाहलन बहूतथे चीन पून और रैयम बनानेकी चेष्टा करते हैं। सुग्रीमें गङ्गातीर जाल और जामे रंगकी मचकीके बड़े बड़े जाले देवर्ममें पाते हैं।

विह्वलियाके पचमूलकी पाहरोधके लक्ष्य काट काट कर फ्लिवा टिकनिवा तैयार करती है। प्रवाह है कि इस कीट तिलपटके पकड कर गुसुवा बना जानता है। मद्यतः तिनपटा गुसुवाके लर जाता है।

बासा कोड़ा गिर्की नाकका विनाह होता है। गिराया मध्यका बच नष्ट कर धूलिमें निजाता है। गिरप्यार नामक कीट कबायका विषम मद्य है। कबाकी और भीमा कीट जालकी पाट जाता है। मीमोत्र तीन प्रकार कीट पक्षिमें पक्षि पाये जाते हैं।

पुवर नामाविष ज्ञान्य नष्ट करता है और पानकर दानापुरमें चषोमकी गेलोको नष्ट करता है। इरपो नीलका विनाहता है।

नामाविष पक्षीमें मी नामाविष कीट होते हैं। पाम प्रमकट रैगन करैला, ककड़ी प्रमति पक्षीमें कई तरहके कीटें रीच पाते हैं।

गुनरि मद्य सुनसुने मरे रहती है। बहर्ग दे जनकी पानेके पादमोको प्राय नहीं पातो।

१ मानचक्राति । १ लोडकट लोईको जंय । ३ विहा, लजिन । (सि०) ५ निहर रैरहम, मद्यत ।

शगुटके पीछे उनके कनिष्ठ उकिमाई राजा हुवे। उनके साथ चीनराजाका युद्ध छिड़ गया। युद्धसे उत्तर चीन उकिमाईके अधिकारमें चला गया और अपराधीके लिये शङ्ख सम्म्राट्की वार्षिक २५०००० चीनी रौप्य-सुद्धा कर देना पडा। उसी समय होयाई नदी उभय राज्यकी सीमा ठहराधी गयी। कीनराजधानी वेन-किङ्ग नगर (वर्तमान पिकिं)-में स्थापित हुयी। चीनकी राजधानी चिकियाङ्ग प्रदेशमें हङ्गचाङ्ग नगरकी बदल गयी। किन्तु उसी समय कीनसाम्राज्यके उत्तरांगमें सुगन्तातारोंने अपना अधिकार जमा लिया था।

शेषको सुगन्तीके हाथसे १२३४ ई० को उक्त वल-शाली राजवंश नष्ट हो गया।

कीना (फा० पु०) द्वेष, दुगुल, दुश्मनी।

कीनार (वै० पु०) १ क्षपक, किसान। २ अमलीबी, मजदूर। "कीनारिव खेद मामिदियामा।" (सप्त. १०। १०६। १०)

कीनाश (सं० पु०) क्षिप्रान्ति दिनन्ति क्षिप्र-कन् उपधाया ईत्वं लकारस्य लोपः नामागमस्य। क्षिप्ररोशेष-धायाः कन् लोपश्च लो गमश्च। उप् ५। ५६। १ यम। २ वानर-विशेष, किमो किष्मका वन्दर। ३ राक्षसविशेष। (त्रि०) ४ कृषक, किसान। ५ छुद्र, छोटा। ६ पशु-घातक, जानधरोको कत्तल करनेवाला। ७ लोभी, चालवी। ८ सुसहत्याकारी, छिपकर मार डालने-वाला।

कीप (हिं० स्त्री०) कीफ कुच्छी, एक चींगी। वङ्ग छोटे सुङ्गके पात्रमें तेल आदि बाहर न गिरनेके लिये लगायो जातो है।

कीमत (अ० पु०) मूल्य, दाम, किसी चीजके बदले विकने पर मिलनेवाला रूपया पैसा।

कीमती (अ० वि०) बहुमूल्य, महंगा।

कीमा (अ० पु०) मांसविशेष, किसी किष्मका गोशु। कीमा मांसकी बारीक काटनेसे बनता है।

कामिया (फा० स्त्री०) रसायन, रासायनिक क्रिया।

कीमियागर (फा० पु०) रसायन बनानेवाला, लो आदमी कामियागारीमें होशियार हो।

कीमियागरी (फा० स्त्री०) रसायन प्रस्तुत करनेकी विद्या।

कीमवत (अ० पु०) गर्दभ वा अश्वचर्म, गधे या घोड़ेका चमड़ा। कीमवत परा कीर दानेदार होता है। उसके जूते वस्त्रागमें पहने जाते हैं।

कीर (सं० स्त्री०) वीर्यवति वध्नाति शरीरम्, कीन-पशु नम्य इः। १ मास, गोशु। (पु०) इति पशुशब्द गच्छ' ईरयति, वी-इर कित्-पश्। २ शुकपक्षी, तोता, चूचा।

"अमनादिगमिचनोऽपि किं न मुग्धाप्यति कीरगोरित" (अथ, २। १)

३ काश्मीरदेश कीर काश्मीरवासी।

कीर—वाला शब्द।

कीरक (सं० पु०) कीर मंजारा कन्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। २ वीरसंन्यासी। ३ शुकपक्षी, तोता। ४ प्राप्ति, याप्त।

कीरनाम—कीर-कांगडाका निकट एक प्राचीन ग्राम। राजकन उभे वैद्यनाथ रहते हैं। वहां वैद्यनाथ और सिद्धनाथका मन्दिर बना है। ८०४ ई०को उक्त मन्दिर बनाया गया था। अनेकानेक नष्ट हो जानेसे १७८६ ई० को राजा संसारखांदने उभे परवर्तित और परिवर्धित कर दिया।

कीरट (सं० पु०) वरुणातु, रांगा।

कीरटा (सं० स्त्री०) कीरट देखो।

कीरतनूफना (सं० स्त्री०) तुलफहृष, कपासका पेड़।

कीरति, (हिं०) कीर्ति देखो।

कीरनासा (सं० पु०) शुकनासा, तोतेकी नाक।

कीरसणि (सं० पु०) घूम्याटपची, एक विडिया।

कीरवर्षक (सं० स्त्री०) कीरस्येव वर्षो यम्य, कीर-वर्ष-कप्। स्त्रीण्यक नामक सुगन्धि द्रव्यविशेष, एक खुगनु-टार चीज। स्त्रीयक देखो।

कीरशब्दा (सं० स्त्री०) ताक्षमेद। उसमें तीन भरे, एक खाली और फिर तीन भरे ताल पाते हैं।

कीराः (सं० पु०) क-ईर-णिच् घृपोदरादित्वान् साधुः। १ काश्मीरदेश। २ काश्मीरदेशीय व्यक्ति। उक्त शब्द नित्यबहुवचनान्त है।

कीरि (सं० पु०) कीर्यते विक्षिप्यते, कृ वाहुलकात् कि। १ खव, तारोफ।

“दीर्घा दीर्घवकीरिचम् । (अ० १११ । ८)

दीर्घा कीर्तिच १ (अ० १११)

(जि०) २ श्रुवादिभिं पात्रक, तारीक करमेमं
मगा हुआ ।

“नका इवा कीर्तिवा मन्मन्तः” (अ० १११)

कीर्तिवा सुन्दरुपिचरिं वता । (अ० १११)

१ श्रोता, तारीक करनेवाला ।

कीरिचोदन (सं० जि०) कीरीन् चोदयति प्रेरयति,
कीरि चूट बिच-कू । ध्वजकारकोका प्रेरक ।

“नकादी कीरिचोदनम्” (अ० १११ । ८)

“कीरीचो कीर्त्तवा कीर्त्तविक्रमम्” (अ० १११)

कीरी (जि० श्लो०) १ चोदविधिय, एक महीन कोड़ा ।
कीरा मीड़, को बरोरकवा काममें सुख दृष्ट पो जातो है ।
२ पिपेसिबा, चोदो । ३ बहलियेकी ओ । ४ मूख
कीट, बहुत बारीक कोड़ा ।

कीरिष्ट (सं० पु०) कीरिच यक्षय इट्, १ तत् । १
पात्रक, पात्रका पिड़ । २ पात्रोदय, पात्रोदका
दरपत । ३ एकमपूज । ४ निचय, कोमका पिड़ ।

कीर्त्त (सं० जि०) कीर्त्तयेति, कू कर्मणि क् ।
१ पात्रक, छडा हुआ । २ विचिमं खेडा हुआ ।
३ निहित, छिपा हुआ । ४ विंसित, मारा हुआ ।
५ पूष, मरा हुआ

कीर्त्तुय (सं० पु०) कीरिचोद, एक कता ।

कीर्त्त (सं० श्लो०) क माथि जिन्नु निपातनात् साङ् ।
१ पात्रादान, दहन, चोदना । २ विधिय खेडाव ।
३ छिडाकार्य, मार पोटा । ४ श्वाधि, मराव ।

कीर्त्तक (सं० जि०) कीर्त्तयति, कत् बिच्-स्तुत् ।
कीर्त्तन कारक, बयान् करनेवाला ।

कीर्त्तन (सं० श्लो०) कत् माथि क् ट । १ कर्त्त, बयान् ।
“एतां करोति कृती कर्त्तव्यं कीर्त्तनम्” (अ० १११ । ८)
२ कर्त्तप्रकार, मोहरतका इजहार । ३ गुणकन,
तारीकका बयान् । ४ कत्कोकारिपयक मङ्गीतविधिय ।
करीन् ईको ।

कीर्त्तिया (जि० पु०) कीर्त्तनकारक कत्कोका
धर्मश्री मजन मारिवाला ।

कीर्त्तनो (सं० श्लो०) कीर्त्तुय, मीसका पिड़ ।

कीर्त्तनीय (सं० जि०) कत् बिच् धनीय, यदा कीर्त्तने
गुणकनने साङ्, कीर्त्तन क् । १ कर्त्तनीय बयान्के
कारिब । २ मपनीय, गिना जानेवाला ।

कीर्त्तन्य (सं० जि०) कीर्त्तनात् साङ्, कीर्त्तन-यत् ।
कीर्त्तनके लपुङ्ग की माथि कर्त्तनिके नायक हो ।

कीर्त्ति (सं० श्लो०) कत् रन् इटादिय । इतिचरिचरिचि
दिचरिचिचय । अ० १११ । १ पुष्प, मगाव । २ धम,
मोहरत । कीर्त्तिका संकृत पर्याय—धम, समझ,
समाप्ता, समाप्ता समग्या पमिप्ता श्लोच धर्म
पौर कीर्त्तना है । कीर्त्त कीर्त्त यग पौर कीर्त्तनि यव
मेद बताते हैं—“एतां कर्त्तव्यं कीर्त्त दीर्त्तव्यं क्”

दानादि कायमे को सुप्पाति होतो बह कीर्त्त
कहातो है । फिर बीरत्वादिके प्रभावमे चोनेवालो
सुप्पातिको धम कहते हैं ।

बिचोके मतमें कीर्त्तित श्वाधिकी प्रमंसाका नाम
यग पौर श्रुत श्वाधिकी प्रमंसाका नाम कीर्त्ति है ।

किन्तु उक्त मत ठीक समझ नहीं पड़ता । धनेक
धनपर कीर्त्तित श्वाधिकी भी कीर्त्तिका कर्त्तन मिलता
है—“एत कीर्त्तितयोनिरेन पापुपनं क्वच” (अ० ११८)

१ मसाद लुयो । २ यन्ट, पत्रात्र । ३ दादि,
बमक । ४ माटकाविधिय । ५ विष्टार, खेडाव ।
८ कर्त्तन कीर्त्त । ८ श्रोताको मकीविधिय, कामकोका
एक चर्चो । १० पर्यायधर्मिद । लनमें १४ गुह
पौर १८ कर्त्तव्यं कर्त्तते हैं । ११ दयाचरो इतविधिय ।
उसके प्रबोध करधमें ३ कर्त्त पौर १ गुह कर्त्त ररती
हैं । १२ एकादयाचरो इतविधिय । बह इन्द्रव्याधि
संयोगमे कर्त्तय होता है । उसके प्रबम करधका पत्रना
पत्तर कर्त्त ररता है । शिव तोन करधमें पडैते गुह
पत्तर हो जमते हैं । १३ तानविधिय । १४ दककन्या
विधिय । बह कर्त्तकी पत्रो ररती ।

कीर्त्तिवर (सं० जि०) कीर्त्ति करोति कर्त्तयति, कीर्त्ति
क ट । कीर्त्तिकारक, मोहरत वेदा करनेवाला, बिचक
नामचरो ररि ।

कीर्त्तिचूट—बिचो पत्रतका नाम, एक पत्राङ् ।
(ईश्वरचिन्दा, १११)

कीर्त्तिचन्द्र—१ कर्त्तमानके कीर्त्त शब्दा । ()

२ कुमायूँके २ राजावोंका नाम। ताम्रशासन द्वारा समझते कि उक्त २ राजावोंमें एक १४२२ गक और दूसरा १७२७ गकको राजत्व करते थे।

कीर्ति (सं० वि०) कृत्-क। १ कथित, कहा हुआ।

२ ख्यात, मगहर। ३ निर्दिष्ट, ठहरा।

कीर्ति-तथ्य (सं० त्रि०) कृ-णिच्-तथ्य। कर्तन करनेके उपयुक्त, जिसकी तारीफ गायी जा सके।

कीर्ति-देव—१म वाराणसीके कोर्दे काटभराराजा, उनका अपर नाम कीर्तिवर्मा (२य) था। तैलके पुत्र। शिलालिपिसे समझ पड़ता कि उन्होंने १०६८से १०७७ ई० तक राजत्व किया था। वरु चोलुवरराज (पठ) विक्रमादित्यके मित्रराज रहे।

२य कीर्ति-देव चामुनादेवीके गर्भजात तथा तैलके पुत्र और दिग्विजयी कामदेवके भ्राता थे।

कीर्ति-धर (सं० त्रि०) कीर्ति धरति धारयति वा, कीर्ति-धृ-गच्। १ कीर्तिमान्, मगहर। (पु०) २ कोर्दे मल्ल-शास्त्ररचयिता। शाङ्गधरने उनके श्लोक रचूँत किये हैं।

कीर्ति-पाल—राजपूतानेके नादीनवाले एक चौहान-राज। गत १२ वीं शताब्दीके अन्तमें इन्होंने योधपुरके जालोर नगरको, परमारोंसे छीत अपनी राजधानी बनाया था।

कीर्ति-पुर—पार्वतीय प्राचीन नगरविशेष, एक पुराना पहाड़ी शहर। कीर्ति-पुर नेपालके अन्तर्गत पाटनसे छेड़ कोस पश्चिम चूड़ा गोलाकार पर्वत पर अवस्थित है। वरु चतुःपार्श्वस्थ समतल भूमिसे २०० फीट ऊंचा है। कीर्तिपुर प्राचीर द्वारा इस प्रकार दुर्भेद्यभावसे वेष्टित है, कि सहसा शत्रु आक्रमण कर नहीं सकता।

आज वरु वरु सामान्य नगर होते भी पूर्वकालको एक स्वाधीन राज्यकी राजधानी गिना जाता था। उसके पीछे कीर्ति-पुर पाटन राज्यके अधिकारमें आया था। पाटन राज्याधिकारसे पहले ही वरु चारो ओर दुर्गादि द्वारा सुरक्षित था। भग्न नगर-प्राचीरके स्थान स्थान पर उक्त प्राचीन दुर्गका मनावशेष देख पड़ता है। १७६५ ई० को राजा पृथ्वीनारायण प्रवेश हो गये

थे। उन्होंने अनेक कष्ट और छलबलसे ३ वर्ष पीछे कीर्तिपुरवासी दुर्धर्ष निवार लोगोंको हरा नगर अधिकार किया। तदवधि कीर्तिपुर उक्त राजवंशके ही अधिकारमें चला आता है।

कीर्तिपुर अधिकृत होनेके पीछे पृथ्वीनारायणके अधीनस्थ गोर्खा सिपाहियोंने माटकोडस्थ शिव और वायकर व्यतीत निवार जातीय दानक, युवक, वरु प्रभात सबकी माक काट डाली थी। उसी दिनसे कीर्तिपुरका दूसरा नाम 'नकटापुर' पड़ गया है।

कीर्तिपुरमें अब वरु पूर्वकी मूर्तों चमकती। किन्तु आज भी उस पूर्व गौरवका ज्ञान नहीं हुआ है। उक्त वीरलक्ष्मभूमिमें देखने योग्य अनेक प्राचीन मन्दिर हैं। उनमें कई भग्न और कई सम्पूर्ण हैं। नगरके उत्तरांगमें वाघभैरवका चौतला मन्दिर प्रधान है। १५१५ ई० को कीर्तिपुरके किसी राजकुमारने उसे बनाया था। मन्दिरके मध्य वाघकी एक रज्जी हुयी मूर्ति है। पदच्छिन्नाके निकट भैरवका एक अतन्त्र मन्दिर भी बना है। नेपालके पनेक तीर्थ वाघ भैरव दर्शन करने जाते हैं। नगरके उत्तर प्रान्तमें एक सुहृद् गणेश-मन्दिर है। जोपीयंगीय गिरस्ता निवारने १६६५ ई० को बना उसे प्रतिष्ठित किया था। उसके सम्मुख तोरण और मध्यस्थन गणनाथका चाराम है। उसकी दक्षिणदिक् मयूरोपरि कुमारो और वाम दिक् गण्डोपरि वैष्णवो है। कुमारोके पीछे वराह पर वाराही, वाराहोके पीछे शवोपरि चामुण्डा, वैष्णवीके पार्श्वमें ऐरावत पर इन्द्राणी और इन्द्राणीके पीछे सिंघ पर महालक्ष्मी विराजमान हैं। उक्त अष्ट नायिकाकी मूर्ति शोभा दे रही है। एतद्विषय सर्वापरि भैरवनाथ और कार्तिकेयकी मूर्ति है। नगरके दक्षिण पूर्वांगमें 'चिलनदेव' नामक एक बौद्ध मन्दिर विद्यमान है। यह भी देखनेयोग्य समझा जाता है। वहां प्रायः सकल बौद्ध देवमूर्ति, बौद्धधर्मके सकल चिह्न और यन्त्रादिकी प्रतिष्ठाति देखनेमें आती है। कीर्तिपुरमें पहले जो प्रसिद्ध राजसभाभवन था। आज कल उसका ध्वंसावशेष पड़ा है। उससे घोड़ी दूर पर १५५५ ई० को इष्टक द्वारा निर्मित किसी मन्दिरका भी ध्वंसा-

वर्षिक मिलता है। पहाड़ पर वेसा बृहन्न मन्दिर प्रायः
देख नहीं पड़ता।

१ प्राचीन घामबिरीय एक पुराना गांव। बड़
व्यंगदेशके चत्तार्यौत करदसि घाममे उत्तर पाबाबास
पर चबस्थित है। उधरे पाबमें ठण्डि चौर गङ्गा-
नदीका सङ्गम है। चन्द्रबर्षीय कौर्तिचन्द्र नामक
बिसे मण्डबेगने प्रतिष्ठानमे लाकर अपने नाम पर
बन्न घाम स्थापन किया था। (अभि ४८४७ १४१८१)
कौर्तिमाह (सं० पु०) कौर्ति मन्त्रते, कौर्ति-मन्त्र लि।
१ श्लोकाचार्य। (त्रि०) २ कौर्तिमुञ्ज, मयङ्कर।
कौर्तिमय (सं० बि०) कौर्ति-मयद्। कौर्तिमुञ्ज मय
ङ्कर।

कौर्तिमान् (सं० त्रि०) कौर्तिरम्भादि कौर्ति मरुप।
१ कौर्तिमुञ्ज मयङ्कर। (पु०) २ निम्बोदेवामर्मत
त्यादिविषय। (अष्टा. चतुष्पथ, १११५) ति० ६१६०। ३
समुद्रके ज्येष्ठपुत्र। (अमर ८. १४३३६)

कौर्तिरथ (सं० पु०) विदेहराज जनकवर्षीय प्रतो
त्याहराजके पुत्र। (अष्टाथ, ११०१८)

कौर्तिराज (सं० पु०) कोसलपुरके गिनाहारबर्षीय
एक राजा। बड़ १०१८ ई० से पड़से राजस्य करती से।
कौर्तिराज (सं० पु०) सिधिलाराज मजौब्रके पुत्र।

(अमर ४. १०१११)

कौर्तिबर्षेन (सं० पु०) कुभोजुबर्षेय एक चौबाराज।
बड़ कातिशेबदेवके उपापक से। (अमर ११०११)

कौर्तिबर्मा— १ शोल बोलुबर्षे राजाबोका नाम। १ म
कौर्तिबर्माका उपाधि सुविशेषज्ञम था बड़ पुलि
केयि-बन्नमके पुत्र रङ्गि। चर्नोनि रबसेममें मन्त्र,
मोय चौर बद्धभारमणके पराजय किया था। राज्य
बाल ४८८ मक रङ्गा। २ य कौर्तिबर्मा विजयमा
दिशके पुत्र से। कोसमहादेवके मर्मसे जनका कथ्य
हुवा। चर्नोनि पदवराजमणके कौता था। राज्यबाल
६३६ ६६८ मक रङ्गा। ३ य कौर्तिबर्मा भीमराजके
पुत्र से।

२ बमशानके दो बद्धभारमणके का नाम। उनमें
पहम गान्धिवर्माके पुत्र एक महामन्त्रसेगर रङ्गि।
द्वितीय तैजवर्षे पुत्र से। चतुर्दश शैबोके मर्मसे जनका

वस्य हुवा। राज्यबाल १०६८ १००० ई० था।
कौर्ति-१४ ६०।

३ चन्द्रबर्षेय (चंटेन)-बर्षीय कानक्यराजिप
विजयपालके पुत्र। चर्नोनि अपने प्रधान सेनापति
गोपालके साहाय्यसे चेटिराज कर्षेको पराजय किया
था। चमर्य पुनैकवन्ध चौर उसका चतुःपार्श्वमे स्थान
उनके अधिकारमुञ्ज रहा। चंटेनराजाको गिना
किये पड़नेसे ममन्न पड़ता कि कौर्तिबर्माने ११००
संवत् (१०१० ई०) से १११४ संवत् (१०८८ ई०)
पर्यन्त राज्य किया था। उनके श्वाताका नाम देववर्मा
रहा। कौर्तिबर्माको ममार्म प्रबोचचन्द्रोदय मयिता
विष्णुमत पण्डित ज्ञान्यमिच रहती से। सेनापति गोपाल
के पादेयसे चर्नोनि प्रबोचचन्द्रोदयनाटक बनाया। उन्न
थय पठनेसे जो माम्म पड़ता कि बड़ राजा कौर्ति
बर्माके यन्त्र चर्नोनि पड़वा था। राजा कौर्तिबर्माने
मजौबर्मा कौर्तिभारत नामक एक उद्यत् कथाय
सुदाया था। इनके पुत्र बोरवर सङ्गवर्षमा रङ्गि।
पिता चौर पुत्रके समयको पनेक गिनाकिये पावि
कृत हुये हैं।

कौर्तिमेव (सं० पु०) कौर्ति मेयो वन्ध, बहूमी०।
मरच मोत।

कौर्तिमाह—टङ्करी राज्यके एक राजा। १८८४ ई० को
सिंहासन पर बैठे से। चर्नोनि सेनाके महााराज जङ्ग
बहादुरको एक पीलीका पाविपक किया।

कौर्तिमन (सं० पु०) कौर्ति येनेव यण्ड, बहूमी०।
बाहकिके श्वातुपुत्र।

कौर्तिस्तथ (सं० पु०) कौर्तिस्वायक स्तथः, मध्यप
दनी०। कौर्तिविमके स्तथोप निर्मित स्तथः।

कौर्मा (सं० श्री) पविमिच, एक बहूमी०।

कोज (सं० पु०) किरते बहूमी०के चर्नोनि चर्नम चर्न
कोज चर्नोनि करके अधिकरके वा बहू। १ चर्न
गिया मण्ड। २ मङ्ग, मेष खटो पणै। ३ स्तथ
विनून् चर्मा। ४ निय बहूत शरीर उकडा।
५ कर्पीच कुडनी०। ६ कर्पीचका निचदेय, कुडनीका
निचका विष्णु। ७ मुद्रवर्षेविषय, चट्ट रङ्गनेशाना
चमक।

जो सूटगर्भं हस्त, पट और मस्तक ऊर्ध्व दिक्
षठा शङ्कुकी भाति योनिमुखको निरोधमें माता, वरु
कील कहता है। (प्रथम) ८ काष्ठफलक, लकड़ीका
पञ्चड। ९ मुद्यामाकी टर्ट करनेवाली पील। १० रति-
वन्धविशेष, एक डीना। ११ कुम्हारके चाककी खंटी।
१२ जातिके बीचकी खंटी। १३ भाला। १४ कुहनेकी
मार। १५ गिब।

कील (हिं० स्त्री०) कार्पासमेद, किसी किसमकी कपाम
कीलखुंगी या देवकपास कहाती और गारोकी पहा-
डियोंमें अधिक बोयी जाती है।

कीलक (सं० पु०) कीलति वन्धति अनेन, कोल करणे
षष् स्वार्थे कन्। १ मन्त्रविशेष, किसी किसमकी मेघ।
२ पशुवोके बांधनेका खंटी। ३ तन्त्रोक्त देवताविशेष।
(स्त्री०) ४ मन्त्रविशेष। ५ ज्योतिषशास्त्रोक्त प्रभवादि
६० वर्षोके अन्तर्गत एक वर्ष। उक्त वर्षमें यावतीय
शश्व उपजता और देशसमूहमें दुर्भिक्ष, अनाहृष्टि
तथा उपद्रवादि नष्ट हो मङ्गल हुवा करता है। ६ स्तव-
विशेष। सप्तशतीके पाठकार कीलकस्तव पढ़ना पडता
है। ७ केतुविशेष।

कीलकाख्य कौल देखो।

कीलन (सं० स्त्री०) कीलन्त्युट। १ वन्धन, बन्दिश।
२ तन्त्रमन्त्रविशेष।

“तत् सप्तः भवेत्तस्य कीलने परिमापितम्।” (कृतकारिपीतम्)

कीलना (हिं० स्त्री०) १ कील लगाना, मेख ठोकना।
२ कील देना, अभिमन्त्रित करना। ३ सर्पको बशमें
करना। ४ वशीभूस करना, तावेदार बना लेना।

कीलपादिका (सं० स्त्री०) हंसपादीक्षुप, एक
भाडी।

कीलमुद्रा (सं० स्त्री०) लिपिमेद, एक प्रकारके अक्षर।
उसके अक्षर कील-जैसे होते थे। उक्त लिपिके कर्ष लेख
इ० से कतिपय शताब्द पूर्व पारसिक देशमें मिले थे।

कीलगायी (सं० पु०) कुकुर, कृत्ता।

कीलसंस्मरणं (सं० पु०) कीलं संस्मृत्यति, कील-सं- स्मृश
अच्। तिन्दुकहृत्, तेंदूका पेड़।

कीला (सं० स्त्री०) कील टाप। १ कील, मेख। २ रति-
प्रहारविशेष। ३ रतिवन्धविशेष।

कीलाक्षर (सं० पु०) कोमलद्रा देखो।

कीलाट (सं० पु०) शोवितक्षीरपिण्ड।

कीलान (सं० स्त्री०) कीलं प्रन्निशिवां अन्ति वारयति,
कील-पल्-अण्। १ जल, पानी। २ रक्त, खून। ३
अमृत। ४ मधु, गृहद। ५ दग्ध, बांधा जानेवाला
जानवर। ६ वन्धननिवारक, बन्दिग क्रोडानेवाला।

“कञ्चं वदन्तीरगतं हतं पय, कीलान परिद्वन्द्वम्।” (शब्दचन्द्रः, १।२०)

‘कीलो वन्ध’ तमपति वारयति, कीलान सर्ववन्धनिवारकम्।’ (महाभर।

७ शब्दकीरस,।

कीलालज (सं० स्त्री०) कोलास्तात् जायते, कीलान-ज-न-
ड। मांस, गोश्व।

“पादो न धारयथावत् यावत् परिद्वन्द्वम्।

कीलालजं न यादंथ करिदे सामुद्रतम्॥” (भारत, वर)

कीलालधि (सं० पु०) कीलालं जलं धीयतेऽस्मिन्
कीलाल-धा-क्ति। समुद्र, वरु।

कीलालप (सं० पु०) कीलालं वधिरं पिबति, कीलाल
पा-क। १ राक्षस। २ जलाका, जोक।

कीलालपा (वै० पु०) कीलाल-पा-विष्। काष्ठा मन्-
दन्विषमिषय। पा १। २। १। १ अग्नि। २ यम।

कीलिका (सं० स्त्री०) नारचमेद, किसी किसमका
तौर। २ अस्त्रिमेद, किसी किसमकी हड्डो। कीलिका
ऋषभ एवं नाराच व्यतीत अन्य स्नायु द्वारा आवह
रहती है।

कीलित (सं० त्रि०) कोल्यतेऽस्तेति, कील कर्मणि क्।
१ वरु, बांधा हुवा।

“एषि कामगोचरदुतसमस्त पशुं न कोलितम्।”

(गोपगोविन्द, १२। १२)

२ कीलरूपमें परिणत, मेख बना हुवा। (स्त्री०)
भावे क्। ३ वन्धन, कैद।

कीलिया (हिं० पु०) परछा, पुरखोला, जो मोटक
वैनोंको हांक्रता हो।

कीली (हिं० स्त्री०) कीलविशेष, एक खंटी। वरु किसी
चक्रके मध्य लगायो जाति है। किन्ती पर ही चक्र
धूमता है।

कीवत् (वै० त्रि०) कियत्, प्रपादरादित्वात् साधुः। कुह,
योहा।

बीय (सं० पु०) बी इति मन्द् ईटे बी ईम्-क यदा
 कम्ब वायोरपम्बम्, क पत-द्वल् किं इनुमान् न ईमी
 यत् । वानर, बन्दर । बी पाश्यामे ईटे प्रमथति, क
 र्थम् ॥ १ सूयं, सूयम् ॥ १ पयो, विद्धिषा । (सि०)
 ४ नम्य रंगा ।

बीयपणं (सं० पु०) बीयं वानर तन्व बीयिष पणं
 पञ्चमन्व बहुभो० । पयामार्गं, लटभोरैवा पीड ।

बीयपर्णो (सं० स्त्री०) बीयपणं जाती लोप ।

बीयर्ष ईको ।

बीयपत्त (सं० स्त्री०) बबोत्त, मीतत्त बीनी ।

बीयरोमा (स० स्त्री०) बपिबन्धु, ईबाव ।

बीयाय—कान्तिविशेष एक बीय । बीयायो बी नातिव्य
 मी कथते ई । बह मोडारदागा, पबाम्, ययपुर
 थोर लरकुजा पथति आनामं रदते ई । वनके यत्त
 वनका बास थोर क्वि हो उनकी लपकोविद्या ई ।
 बीयाय बावथी लपायना करती ई । बह एने वनके
 रात्राको भाति पूत्रते ई । एतद्विष सूयं, मडादेव,
 मडोभुनिया, सिक्किया थोर मृत पिङ्गकचं उहैय मो
 पूजा को जानी ई । सिक्किया देवताके पानी जान
 थोर सूयं देवताके उहैय श्रेत ईन बलि देते ई ।
 उनके पाम्बदेवताका नाम दराई ई । उत्र पाम्बदेवके
 लानमं 'बामनो पाट' पन्ट्रोपाट' इत्यादि नामधेय
 कई पाट ई । बीयाय बीकजातिको भाति जाचती
 गाती ई । वनको खिया गोदना गोदानिषे बपने समान
 मं ईय थोर समानच्युत समझी जानी ई ।

बीय (सं० पु०) १ बीय, बराहुत्र, यर्मबी बीको ।
 २ बीय बन्दर ।

बीया (पा० पु०) येमी, जेव ।

बीय (सं० पु०) प्यव, स्मृति ।

"तिरो वी भोलाकी उबपती नमन्व ।" (बर १ १०५ ।)

हु (सं० पद्य०) हु हु । १ वाय इबाव, राम राम ।
 २ निन्दा, बी बी । ३ ईपत् घोडा । ४ निवारण, बूर
 दूर । ५ मन्द् बीर बीर । (सि०) ६ निन्दनीय, बट
 नाम ।

हु (स० स्त्री०) हु हु । प्रथिरी, जमोन् ।

हुपाया (सं० स्त्री०) हुपाया ना लकोदी ।

हु पर (सं०) हुपरैवा ।

हुपरपुरिया (सं० पु०) इरिद्रामेद, किमी बिजको
 इमदो । यह बटबके निबट कंपरपुर राज्यमें लपय
 जाता ई । ५ वर्ष पोडे उधे सेत्रमे पोदते ई । मूल
 थोर पय इहत् तमा दोषं होना ई । मेंसके गोबरको
 पाट देनिसे हु परपुरिया बहुत पनपता ई ।

हुपरविराट (सं० पु०) वाक्कविशेष, किमी बिजला
 बावक ।

हु परैटा (सं० पु०) हुमार छोटा कु बर ।

हु पा (सं० पु०) हुप, बाह कुवां ।

हु पाटा (सं० वि०) पबिवाहित शिवाहा बिमको
 पाटो न हुई हो ।

हु थपां (सं० स्त्री०) सुद कुत्र, छोटा कुवां ।

हु ई (सं० स्त्री०) १ सुत्र कुव छोटा कुवां । २ कुसु
 दिने ।

हु कुमपून (सं० पु०) पुष्पविशेष दुपहरियाका
 पत्त ।

हु हुमा (सं० पु०) लावका एक पोका गोला ।
 थोकोको लममें गुलाब हाक बर मारती ई ।

हु थो (सं०) उरवा ईको ।

हु ब (सं० पु०) हुव जतादि द्वारा पाच्छादित स्थान,
 पोडो थोर शेलोमि ठको हुई कमह । २ हापो दांग ।
 ३ दुयासेके कोनेका मूडा । ४ कोनिया, बडेरके कोने
 पर सिक्केशामो लपरैल या लपरको जावनको एक
 कबड्डी ।

हु बगनी (सं० स्त्री०) १ पादपलतादि द्वारा पाच्छा-
 दित पय पीदो थोर शेलोमि ठको हुई हाव । २ पय
 मन्ममार्गं, लहुकुवा ।

हुं हुं (सं० पु०) हुं पुर, विष्टोका भोंद । बह थोव
 थमं पडता थोर ल्कोममन्मो—शेवा रजता ई ।

हु बडा (सं० पु०) कान्तिविशेष, एक बीय । हु बडा
 तरकारी थोर पन बैचते ई । बह थवके मव सुमन
 मान ई ।

हु ना (सं० पु०) हुत्रा, पुरवा निबोर ।

हु ड (सं० पु०) हुन बरुमिसे पदुमबाको टेतकी
 गहरी लकोर ।

कुंडपुजी (हिं० स्त्री०) कुंडमुदनी, कुंडकी पुष्पा ।
वह क्षपकोका एक वापिकोव्व है । रबी वीयो जा
शुकने पर कुंडपुजी होती है ।

कुंडपुजी, इंग्रजी देखी ।

कुंडमुदनी, इंग्रजी देखी ।

कुंडरा (हिं० पु०) १ कुण्डल, मण्डलाकार रेखा ।
२ गेहूरी ।

कुंडरा (हिं० पु०) कुंडा, मटका ।

कुंडनिया (हिं० स्त्री०) कुन्दोविशेष, एक वृक्ष ।
वह दोहा और रोला कुन्दके योगसे बनती है । दोहका
प्रथम शब्द रोनाके अन्तमें और दोहाका अन्तिम शब्द
रोनाके आदिमें आता है । गिरिधरदासकी कुण्डनियां
प्रसिद्ध है ।

कुंडा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, एक वरतन । वह
मिट्टीका बनता और चौड़े मुंह गहरा रहता है ।
२ कोटा । उसमें सांकल मगा ताला डाला जाता है ।
३ हस्त नाशवविशेष, कुशुकीका एक पौध । नीचे गये
हुये पहलवान्के दाहने खड़े हो अपनी दाहनी टांग
उसकी गरदनमें बायीं ओरसे डाल उसकी दाहनी
बगलसे निकाली जाती है । फिर अपने बायें पैरके
घुटनेके भीतर मोजीको दबा उसके शिर पर बैठते और
बायें हाथसे उसका जांघिया खींच उसे चित करते हैं ।
४ निरकट, तावर डोल, जहाजके अगले मस्तूलका
चोथा हिस्सा ।

कुंडला (हिं० पु०) पात्रविशेष, मट्टीकी कुंडी या
पथरी । उसमें कलावत्तू बनानेवाले टिकुरियों पर
कलावत्तू लपेट कर रखते हैं ।

कुंडिया (हिं० स्त्री०) १ गर्तविशेष, एक चौखुंटा
गड्ढा । वह शेरके कारखानोंमें रहती है । कुंडिया
२ हाथ चौड़ी, ५ हाथ लंबी और १ हाथ गहरी
होती है । गोरा बनानेको उसमें नीला मिट्टी पानीके
माथ डालते हैं । २ पात्रविशेष, एक वरतन । उसमें
पीटनेके लिये वादला रखा जाता है । ३ पथरी, पत्थर
का कटोरी-जैसा छोटा बर्तन । ४ कठोली, काठका
वरतन ।

कुंडी (हिं० स्त्री०) पात्रविशेष, पत्थर या लकड़ीका

एक छोटा वरतन । वह कटोरी-जैसी बनती और
प्रायः खटो चीजे रखनेके काममें लगती है । २ अण्डोर
की कडी । ३ सांकल । ४ लंगरका बड़ा कड़ा । ५ सुरी
भँसा । उसके चूड़ वेष्टित रहते हैं ।

कुंडू (हिं० पु०) पल्लविशेष, एक चिडिया । उसका
रंग काला होता है । किन्तु कण्ठ तथा मुख श्वेत और
पुच्छ पीतवर्ण रहता है । उसका दैर्घ्य प्रायः ११ इंच
है । काश्मीरसे आसाम तक कुंडू पाया जाता है ।
उंसे कस्तूरा भी कहते हैं ।

कुंडवा (हिं० पु०) पात्रविशेष, मट्टीका सिकोरा या
पुरवा ।

कुंतनी (हिं० स्त्री०) मलिका मेद, एक छोटी मक्खी ।
उसके छत्तेमें 'डामर' नामका मोम होता है । कुंतनी-
के डंक नहीं रहता । भारतमें कई स्थानोंमें वह पायी
जाती है ।

कुंदन (हिं० पु०) १ स्वर्णपात्रविशेष, सोनका एक
पत्तर । वह बहुत अच्छे और साफ सोनेसे बनता है ।
कुंदन रख कर नगीना जड़ा जाता है । २ स्वर्ण,
खानिस सोना । (हिं०) ३ स्वच्छ, खानिस, चोखा ।

कुंदनसाज (हिं० पु०) १ स्वर्णपात्र प्रस्तुतकारक,
सोनका वारीक पत्थर बनानेवाला । २ जड़िया, नगीना
जड़नेवाला ।

कुंटना (हिं० पु०) वाजरेकी एक बीमारी ।

कुंदरू (हिं० स्त्री०) रत्नफला, एक वेल । उसे हिन्दु-
स्थानमें विष्णु या कुंदरूकी वेल, पंजाबमें घोला, बंगाल-
में तैलाकूचा, सिन्धुमें गोलाकू, गुजरातमें गलेदू, बम्बई-
में तेंदुनी, मारवाडमें जिददी, तामिसमें कोवई, तेलगु-
में दौद, मलयमें कवेल, कनारागमें तौदिवलि, अरबमें
कवार हिन्दो, ब्रह्ममें केनबंग और सिङ्गलमें कोवका
कहते हैं । (*Cephalandra indica*)

कुंदरू भारतवर्षमें साधारणतः पाये जाते हैं ।
फल चार-पाच अङ्गुलि प्रमाण दीर्घ होते हैं । कुंदरू
की तरकारी बनाकर खाते हैं । फल पकने पर अधिक
रसवर्ण हो जाता है । उससे कवि कुंदरूसे ओष्ठकी
उपमा देते हैं । पत्र चार-पांच अङ्गुलिप्रमाण दीर्घ
और पञ्चकोणविशिष्ट रहते हैं । पुष्प श्वेत आते हैं ।

बर्दे या तबोको पानोको भोरसे कु दफको रैन जगती है । बरुई छे कु दफ चार्नसे बुधि मारी जातो है । बहूमूल प्रसिद्धमे लसके मूलको बांट कर पीनेसे नाम होता है । कुदफके मूलका रस लसकर गोंद बन जाता है ।

कुंदला (हिं० पु०) मिथिलविशेष, जिसो बिज्जना जेमाया तर्बू ।

कुदा (हिं० पु०) १ लकड़ा, लकड़ोका मोटा टुकड़ा । २ निचटा, लकड़ोका एक टुकड़ा । लसपर मदार पिटाई वनेरह कोतो है । ३ बन्दूकका पिटाका हिष्ठा । बह तिकोबाकार रहता है । कुदामे को चोड़ा भोर लगी जगती है । ४ पपरकोषि पैर ठोकनेकी एक लकड़ी, काठ । ५ लुटि, मूठ, बेंड । ६ लकड़ोको बड़ी मोगरी । लसके रूपको पर कुदी को जाती है । (पु०) ७ पपमूल, जेना । ८ कुडोका कोई पेच । ९ काईको । ९ रद्दा, चट्टा, एक मार । १० माया खोबा ।

कुदा (हिं० स्त्री०) १ बगड़े को कुटाई । बह पुसे पोर रज पुसे कपडों पर तह करके को जाती है । कुदोमे कपडेको निकुडन पोर रधार मिटतो है । २ कडो मार ।

कुदोगर (हिं० पु०) कुदो जगनेवाला ।

कुदुर (च० पु०) निर्दोषविशेष, जिसो बिज्जना गोंद । बह सुगन्धि पोर पोतबर्ब होता है । कुदुर जिसे कोटोके पोदिश निकाला जाता है । बह योदा २ हाथ लबा रहता पोर परबर्ब यमल चादि पाबर्ब प्रदेशमें मिलता है । इसका फल तथा खोब कट जाता है । सुर्वेके बर्बराजि पर रहती गोंद निकालते है । इकोमोके मतानुसार बह वलवोयंबर्बक, हृष्य पोर रजसावनायक है ।

कुदेरना (हिं० लि०) खरोटना, जोनना ।

कुदेरा (हिं० पु०) कुमिरा, खरादो ।

कुदो (हिं०) कन्दोको ।

कुम्भनदाप—प्रसके एक बधि । बह पद वापके बधियाई एक कर्बि रके । कुम्भनदाप लयाभारके कल्पका उपायना जाने से ।

कुमिलना (हिं० लि०) ज्ञान पड़न, सुरम्भना ।

कुवर (हिं०) उमल रको ।

कुबलि (हिं० स्त्री०) राजकुमारी, बाह्याहली बेटो ।

“कुबलि लयीर विजयके कोरि बनि बनगीर ।
परपार विरिषि पद, रवेर न बडु बननेर ।” (टुकी)

कुडकुड (हिं० पु०) बहाम, बाधरान, बियर ।

कुपां (हिं०) पूरको ।

कुपाको (हिं० स्त्री०) चञ्जोतको एक जय । जसमें बराबर पोर खोडी दोनो जय रहती है ।

कुपार (हिं० पु०) पायिन मास ।

कुपाग (हिं० बि०) पायिनसम्बन्धीय ।

कुपार (हिं० पु) गतविशेष एक बडु । बह कुदीके बैठ जानेसे बनता है ।

कुपरा, कल्प रको ।

कुपमसुन—तिज्जतको एक पर्वतमाथा । बह लको कपराक मूलको कतर पोर परमियत है । तिज्जत वर्तो पबिबामो इमे विभिन्न नामसे परिहित करती है । यथा—बैसुर ताम, (तुपार पर्वत), कुनुड ताम (मिथपवन) सुपतान, खराकार कोरम (कल्पपर्वत) टसुन तुन (पवनाप पर्वत) पौर तियातगान (जगतीय पर्वत) । बह सप्तदशसे १३२११ फीट लबा है । जन्म परबला पर्यन्त उच्च पर्वतका नाम खरो-बैरकरति जिना है । वह प्राय १२२० मीथ विस्तृत पौर मन्थ परिभाषी कतर तथा दक्षिण पर बाहिक्काके मन्थस्रालमें दृष्टापमान है । दक्षिणकी परबाहिक्का सिन्धुनदादि एवं बाम्बु, (ब्रह्मपुत्र) पौर कतर परबाहिक्का गाबोसककी पार प्रवाहित है । उच्च पर्वतके गिरिबलसे दो तिज्जतको कतरयोमा पतिज्ज मन्थ करना पड़तो है । लसके मन्थकाकेमें छंट—जेषा प्रस्तारकर है । मरसर पौर पुडिङ्ग होनको मति एक प्रकारका बठिन एवं लक्ष्य पत्थर भो मिलता है ।

कुब (मं० लि०) कुब ल । १ समर्थ, ताबतबर । २ पदा करनेवाला, जा टेता हो । ३ ज्योकार करनेवाला, जो मानता हो । (पु०) ४ चक्रवाकपयो ।

कुबटी (हिं० स्त्री०) कार्यापदी, जिसे बिज्जको जपान । लसको कर्बे जाको गिसे मवेर कोतो है । बधि मोरखपुर, बयो प्रयति जिसेमें बोते है ।

कुकड़ना (हिं० क्लि०) सङ्कुचित होना, मिङ्कुडना ।

कुकड़धन्त (हिं० स्त्री०) वंडाल ।

कुकड़ो (हिं० स्त्री०) १ सुष्टा, अंटो, तकलेसे कात कर चतारा हुआ कच्चे सूतका लपेटा हुआ लच्छा । २ मदारका फल, अकौडेकी बीडी । ३ खुश्वड़ी ।

कुकड़ा (सं० स्त्री०) कु निन्दिता कथा, कर्मधा० ।
१ खराब बात ।

कुकनू (यू० पु०) पल्लिविधेय, एक चिडिया । कहते हैं कि वह पकेले ही उपजता और अपना लोडा नहीं रखता । कुकनू गानेमें बहुत निपुण होता है । उसके चंशुमें अनेक छिद्र रहते जिनसे विभिन्न स्वर निकलते हैं । उसके विलक्षण गानेसे अग्नि निर्गत होता है । पूर्ण युवा होनेपर कुकनू वर्षाऋतुमें नकडियां एकत्र कर उनपर बैठता और गाया करता है । फारसी में उसे "आतशजन" कहते हैं ।

कुकभ (सं० स्त्री०) कुक्केन आदानेन पानेन इत्यर्थः भाति, कुक-भा क । मध्य, शराव ।

कुकर (सं० त्रि०) कुक्षितः करो यस्य, बहुव्री० । कुक्षित इन्द्रविजिप, खराब हाथोवाला । उसका संस्कृत पर्याय—कुणि, कृणि और कोणि है ।

कुकर—श्रीवड नामक शिषसम्प्रदायी एक शाखा । गुजरातमें कोई दशनामी संन्यासी रहे । उन्हें गोरचनाथके अनुग्रहसे ब्रह्मगिरि नाम मिला । वही ब्रह्मगिरि श्रीवड सम्प्रदायके प्रवर्तक थे । श्रीवड शैव कहते कि गोरचनाथने ब्रह्मगिरिकी कानके सुंदरे (अलङ्कार) और कई चिह्न प्रदान किये । पीछे ब्रह्मगिरिने फिर वह गुदर, सुखर, रुखर, भूखर और कुकरकी पांच शिष्योंको दे डाले । तदनन्तर उन पाचों लोगोंने स्व स्व नाम पर एक एक दल बनाया था । उनके मध्य गुदर एक कानमें सुंदरा और दूसरे कानमें गोरचनाथका पदचिह्न एकदण्ड ताम्र पहनते हैं । सुखर और रुखर दोनों कानोंमें पीतलका सुंदरा धारण करते हैं । कानका सुंदरा देखनेसे ही श्रीवडके सम्प्रदायका पता लग जाता है । भूखर और कुकर दलकी संख्या अल्प है । प्रथम ३ दल अपने अपने भिन्नापात्रमें धूप नहीं सुन्नाते । किन्तु शेषोक्त २ दल उसे करते हैं ।

कुकर कालीश्री नामक नूतन ऋग्मय पाठमें भिन्ना मांगते और उसीमें पकाते खाते हैं । चप्पर नामक दलका भी नाम सुन पड़ता है । उक्त सब लोग शैव हैं । वह कभी अपना धर्म नहीं छोड़ते । प्रत्येक दलपति मठाध्यक्ष होता है ।

कुकरो (हिं० स्त्री०) १ सुरगी, जंगली सुरगी । २ पीढा, दर्द । ३ भिक्षु । ४ करोटि, खोपड़ी ।

कुकरौधा (हिं० पु०) कुकरुट्ट, एक छोटा पीदा । (Blumea Lacera) उसे हिन्दीमें ककरोंदा, कुकरुवन्दा या जंगली मूला, बंगनामें कुकरुशंगा, बम्बेयामें निन्दुटि, दक्षिणोंमें जंगली कासनी, तामिलमें कत्तुमुलांगि, तेलगुमें कारुपीगाकु, संस्कृतमें कुकरुट्ट, अरबीमें कमाफितूम, और ब्राह्मीमें मैयगान कहते हैं ।

कुकरौधा साधारणतः भारतके मैदानोंसे होता है । वह उत्तर-पश्चिम (हिमालय पर २००० फीट ऊंचे तक)-से त्रिवाङ्गर, सिंगापुर और सिङ्क तक पाया जाता है । पत्र बड़े होते हैं । उनमें एक प्रकारका गन्ध छूटता है । वर्षाऋतु बीतने पर आर्द्र स्थानोंमें प्रयवानानियोंके निकट कुकरौधा उगता है । उसके सुदीर्घ पत्रगन्था निकलनेसे छोटे पक्ष जाते हैं । शाखापत्र छुद्र छुद्र रोम द्वारा आच्छादित रहते हैं । शाय डेट हाथ बढ़ने पर मज्जरो आती है, उसमें जो बीज होते, वह जलमें डालनेसे फूटते हैं । कुकरौधा रक्तसाव रोकनेके लिये व्यवहार किया जाता है । ऐजिस काली मीचें मिलाकर उसे पिलाने पर उपकार एतद्वत्ता है । उसकी आंशु धोनेका अच्छा पानी तैयार होना है । कोड़नके लोग उसे मकड़ियों और कोड़ोंके भगानेमें व्यवहार करते हैं । कुकरौधिकी पत्तियोंसे तेल भी निकाल सकते हैं । कृमिरोगमें उससे पक्का रस निकाल कर पिनाया जाता है । नयीन मूलाकी सुखमें डाल लेनेसे खुशकी दूर होती है । उसे कङ्करसुत्ता भी कहते हैं ।

कुकर्म (सं० स्त्री०) कुक्षितं कर्म, कर्मधा० । १ लोकनिन्दित और शास्त्रनिन्दित कर्म, बुरा काम । (त्रि०) २ कुकर्मयुक्त, बुरा काम करनेवाला ।

कुकर्मकारी (सं० त्रि०) कुकर्म करोति, कु-कर्मन्-

ल विनि। कुक्षमं खरनेवाका, जो बुरा काम करता हो।
 कुक्षमंशाखी (म० द्वि०) कु क्षमंशा शास्त्रे, कु क्षमंशु
 शास्त्र-विनि। कुक्षमंशु जो बुरा काम करता हो।
 कुक्षमं (म० पु०) कुक्षित क्षमं यन् बहूमी० ।
 कुक्षित कार्यकारी बुरा काम खरनेवाका शब्दम।
 कुक्षमी (म० पु०) कु कुक्षित क्षमं कार्यक्षेप पश्यान्ति
 कु क्षमंशु-विनि। कुक्षित कार्यकारी, बुरा काम खरनेवाका।
 कुक्षावन् (प० श्लो०) विपन्न वीतन।

कुक्षावन्ती—एक विषयसम्प्रदाय। कुक्षिवाग्निने मारे
 तीन बीम दक्षिण-पूर्व भेदी नामक एक चन्द्र ग्रहण है।
 वहाँ रामनिव नामक किसी बड्डरने जन्म लिया था।
 वही रामनिव उक्त सम्प्रदायके प्रवर्तक बूढ़े। १८६५
 ई० की रामनिव विषय मेथमें खसं करते थे। पग
 रीको के बीचमने विष्णो का प्रभाव छुई होने पर लकी
 ने कुक्षिवाग्नि परिव्ताम खर निवसमेंके पुत्र बन्धार पर
 मन लगाया। पन्च दिनके मध्य ही क्षमोपदेशके कुक्षम
 पक्षर पक्षर स्थिति बनके मिय बनने लगे। यहाँ तक
 कि १८६० ई० तक लघाचिह्न भाग लनके अनुवर्तों हो
 गये थे। मन्थोधारवर्षे समय उक्त सम्प्रदायवासीके मुख्य
 धं कुक्षं 'कुक्षं' मन्त्र निकलता है। जन्मके लनका नाम
 'कुक्षावन्ती' है।

अपर निवसम्प्रदायको प्रति कुक्षा-गुर्वके श्री
 १० पाठेस है। लनमें पांच पात्रमोय पौर पांच निविह
 है। पात्र पादेशोको 'क्ष' चिह्न कहते हैं। यथा—बर्ह
 काह, कपल, ककती पौर क्षेम चर्यान् मोहमूषक,
 छोटा क्षिप्रिया, मोहाप्र, बिचपि पौर क्षेम। मेष
 पांचको नरमार (नरहन्ता खरनेवासी), कुटिखार
 (भूमपात्र खरनेवासी), निरकहा (सुपुत्र खरानि
 वामी), सुपत काहा (मुपिउतमप्रक रक्षनेवासी) पौर
 बीरमाधिया (कर्तारपुरवासी गुर्वके मिय) कहते हैं।
 प्रथम दो कार्य हैं पौर शेषोक्त तीन प्रकारके स्थितिपों के
 वन्धादान निविह है।

नामकशाहियो की प्रति कुक्षावन्ती मो कठिन नियम
 में बर है। जमो वक्त्रकार नि'द विष्णु पक्षर खरते
 हैं। बर शरपेकका कोई पत्र लकी करते। लनके कय
 भागुपर ओकाभासे बर देह छोड़ दिया तब वषाम

अथ मोह बर ह्यादेशको बसुधे पत्रप रचना हो
 पन्था है। लमि कोई देखने न पाये।

इतमें बिमोका पापपक्षान इच्छित होनेमें बडी
 पून पड़ते है। उह बडे लक्षणमें मिष्टाच पाते पौर
 पदने क्षमंका प्रतिपाद्य पत्र पवते जाते है। पक्ष
 होनेमें क्षिमोके निये मोक्ष लकी करते। उक्त समय
 १३ दिन दिवारत पत्र पाठ होता है। उसके पीछे
 जाति कुटम्ब लव मिनकर एक निन पात्रभात्रम पौर
 पामाद प्रमोद करनी है।

१८०१ ई० की विपनिव नामक क्षिमो कुक्षा
 दनप्रतिने ब्रह्म प्रकार खरने जा भोगोंको उत्तेजित
 किया था। क्षिमोके लनो पाकी दूमी। पीछे लनके देह
 का पन्थार बिधा गया। लनके पुत्रने मन्थाविष्ट देह
 का एक क्षिप्र विहार से काकर समाहित किया।
 कुक्षायं (म० श्लो०) कु कुक्षित कार्यन् यमंशा० ।
 मन्त्रकार्यं, बुरा काम।

कुक्षि—भारतको पूर्वशाखाक्षी एक जाति। पक्षा
 मधे मन्चिपुर पौर बह्राममे त्रिपुराके मन्थ पत्रम पौर
 लनमें कुक्षिभोगरहते हैं। छाबारपत्र: उन्ने खेट्टा
 कहते हैं। कुक्षि पनेकेयेविषोमें विमत्र हैं पुरातन कुक्षि,
 भनन कुक्षि पौर पन्थ योकीमूख कुक्षि। पुरातन कक्ष
 शिभिं की दूधरी कई माया है। लनके यत्नमें रहकूल
 पेशमा तथा वैच पौर पन्थाम्य क्षामोमें छोटी पादमीन
 रकुलङ्ग पुत्रम मन्थक, बीम खोहरम पौर लक्षम
 प्रथम है। नूतन कुक्षि त्रिपुरा पौर बह्राममे जा
 कर बराराक्षममें वास करती हैं। वहाँ उदन बह्राम
 मित्रसत पौर लक्षम माया मिलती है। त्रिपुराके
 पदाङ्गी पक्षलमें पामरई, पुर्वक, बलम् बापई पौर
 कोचक लवि पाये जाते है।

कपूरुके दक्षिण पात्रकन दुर्दामा खोङ्गनर कुक्षि
 काकर रहते हैं। इसके दक्षिण लक्ष लविवाह मित्र
 तथा एक बंदीय पन्थ मित्र मायाभुष ५८ गलि,
 मोति एवं लुछाई प्रशक्ति पराश्राम कुर्वीके) बर
 है। मन्चिपुर पौर लतर तथा दक्षिण बटारको बारा
 पौर श्री खोङ्गनई कविर्षोका रचना होता है। पात्र
 कन बर लक्ष मायाके मित्र को गये है। मन्चिपुरके

अतिनिकट अनन्त लम्फू नामक कुकियोंका एक दल रहता है। सिन्दु, शक्ति और लुसाई कुकि प्रति प्रबल और दुर्धर्म हैं। उनमें कोई लिखना पठना न जानते भी मरु लोग दन्तूक प्रभृति नामाप्रकार अस्त्रयस्त्र चला सकते हैं। निविड़ अरण्यवासो कुकि आज भी विध्वंस रहते हैं। किन्तु आसाम, ओड़ि प्रभृति कई स्थानों में अंगरेज गवर्नमेण्टके शासनसे उन्हींके कपडा पहनाना सीख लिया है।

कुकि लोग स्वभावतः वनशाली हैं। देवनेमें वह क्षणपुरवार्त्ता खनिया लोगोंसे मिलते जुनते हैं।

कुकि प्रति पक्षीमें प्रायः डेढ सौ दो सौके हिसाबसे रहते हैं। उनका घर ३४ हाथ मष्टी छोड़ माचे पर सांससे बनाया जाता है। पर्वतके उच्चस्थान पर तथा जलके निकट वह पक्षी निर्वाचन करने हैं।

नूतन कुकियोंके प्रत्येक दलमें राजा, मन्त्री प्रभृति पद विद्यमान है। दलपतिकी वह 'नाम' कहते हैं। सकल दलों पर फिर एक अधिपति रहते हैं। उन्हें कुकि 'प्रथम' कह कर पुकारते हैं। नूतन कुकि कहते हैं कि उन्हीं और मगोंने एक पिताके औरससे जन्म लिया है। उनके आदिपुरुषके २ स्त्री रहीं। प्रथमाके गर्भसे मगों और द्वितीयाके गर्भसे कुकियोंका जन्म हुआ। जन्म होनेके अल्प दिन पोछे ही कुकियोंको माता मर गयीं। विमाता उन्हें देख न सकती थीं। वह अपने पुत्रको कपड़े पहनातीं, किन्तु कुकिकी नंगा ही रहती थीं। इसीसे कुकि वनमें जाकर रहने लगे।

कुकियोंमें प्रत्येक गृहस्थ अपने परिवारको ले खतन्त्र गृहमें वास करता है। उनकी विधवाके लिये पक्षी घर रहता है। सब लोग मिल कर विधवाके रहनेको अन्न घर बना देते हैं। आजकल उनमें पुरुष बड़े बड़े कपड़े पहनते हैं। कोई एक वस्त्र पहन दूसरेको कमरमें बांधता, जिसका कुछ अंश लटका धारता है। स्त्रियोंने अब कुरतीमें वस्त्र टांकना सीखा है। विवाहित स्त्री वस्त्र खुला रखती, किन्तु अविवाहिता उसे टांक लेती हैं। स्त्रियोंकी केशोंकी चूडा बांधती हैं दूसरे पहण्डियोंको भाति कुकि भी गाव

नहीं धोते। १२१३ वर्ष वयस होते ही वह रात्रिकालको गृहमें नहीं रहते, प्रहरीगृहमें रात्रियापन करते हैं। उसके पीछे वयस होने पर विवाह किया जाता है। फिर कुकि घरमें रातको रह सकते हैं। विवाहित स्त्रिका मृत्यु, होनेसे उसके आश्रय कुटुम्बी सब एकत्र ही दुःख प्रकाश करते हैं। मृतदेहके वाम पात्र तरकारी, भात और उसके माथ एक कटहर या मष्टीका वरतन रख दिया जाता है।

कुकियोंकी घनसृष्टा नहीं होती। धनके लिये वह कभी लूटमार करना नहीं चाहते। फिर भी वह जो बौच बौच दलबद्ध हो निकटस्थ स्थान आक्रमण करते उसका अभिप्राय भिन्न रहते हैं। कुकियोंका कोई राजा वा दलपति मरनेसे उसके प्रेतात्माकी तुष्टिके लिये नरबलि आशय्यक होता है। उसीसे वह मध्य मध्य किसी स्थानको आक्रमण कर वहांसे कई अधिवासियोंको पकड़ लाते और उन्हे दुर्गम स्थानमें छिपाते हैं। प्रयोजन पड़नेसे उनमें एकको बलि दे पक्षीट सिद्ध करते हैं। किसी अपर असभ्य जातिके साथ विवाद बढ़ने पर यदि गव, गुप्तभावसे राजाको मार जाते, तो सब पार्वतीय कुकि एकत्र ही उसका प्रतिशोध लेनेकी चेष्टा करते हैं। वह आयोजन बहुत भयानक होता है। शत शत व्यक्तियोंके कार्यसाधन करने जा कालग्रासमें पड़ते भी कुकि पीछे नहीं हटते। यदि वह एक शत्रुको मार आते, तो फिर फूले नहीं समाते। उक्त नृत्यशक्तिगुण सुण्ड सम्मुख रख सब लोग पान भोजन और उच्चाससे नृत्य गीत किया करते हैं। पीछे वही सुण्ड खण्ड विखण्ड कर पर्वतपर दलपतियोंके निकट भेजा जाता है।

कुकि अन्नमणशील लोग हैं। वह अधिक काल एक स्थानमें वास नहीं करते। विजन कानन और दुर्गम पर्वतकी उपत्यकाभूमि उनका रम्यस्थान और क्षयिकायें उपजोविका है।

कुकियोंमें किसी किसीने हिन्दुधर्म ग्रहण किया है। अधिकांश लोग जड़ोपासक हैं।



